एस. एल. भैरप्पा

तंतु

मूळ कन्नड लेखक

एस. एल. भैरप्पा

अनुवाद

सौ. उमा कुलकर्णी

मौज प्रकाशन गृह

एस. एल. भैरप्पा

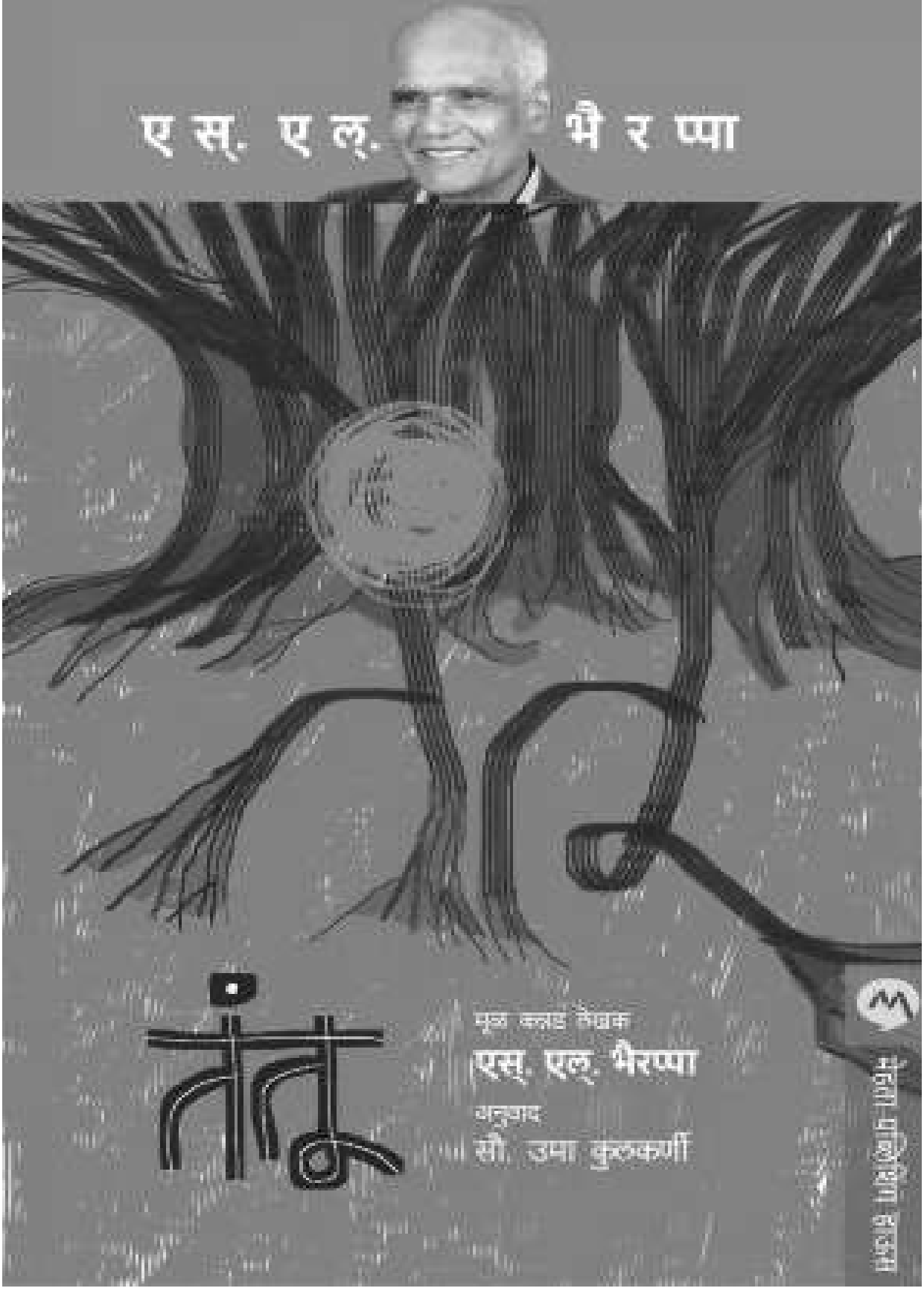

मूळ कन्नड लेखक

एस. एल. भैरप्पा

अनुवाद

सौ. उमा कुलकर्णी

मेहता पब्लिशिंग हाऊस

Table of Contents

घर
लेखक के बारे में
शीर्षक
प्रस्तावना
1
2
3
4
5
6
7
8
9
10
11
12
13
14
15
16
17
18
11
20
21
22
तीथ
2
25
26
27
अनुवादक

एस. एल. भैरप्पा

मूळ कन्नड लेखक

एस. एल. भैरप्पा

अनुवाद

सौ. उमा कुलकर्णी

मेहता पब्लिशिंग हाऊस

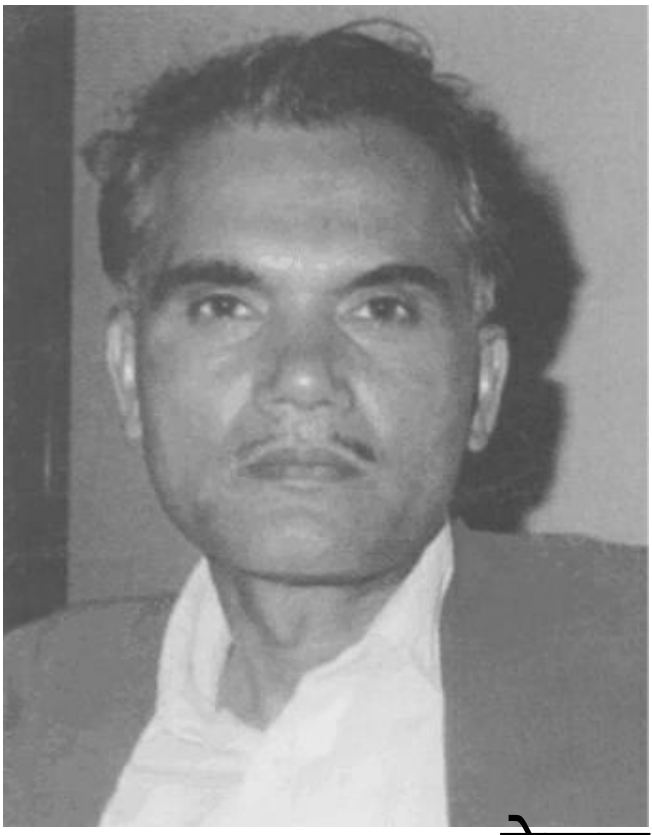

लेखक

डॉ. एस.एस. एल,एस. भैरप्पा

जन्म: 20 जुलाई, 1931

भैरप्पा ने तेरह वर्ष की कम उम्र में ही स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लिया। प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के बाद, उन्होंने अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी और आगे की शिक्षा के लिए मैसूर चले गए, जैसा कि उन्होंने अपनी आत्मकथा 'भित्ती' में लिखा है। वहां उन्होंने एक वर्ष तक आध्यात्मिक यात्रा की। इस यात्रा के दौरान, मुंबई में कुछ समय तक रेलवे कुली का काम करने के बाद, वे कुछ साधुओं के साथ आध्यात्मिक शांति की खोज में निकल पड़े। उनके साथ कुछ महीने बिताने के बाद, वे आगे की शिक्षा के लिए मैसूर लौट आए। उन्होंने महाराजा सयाजीराव बड़ौदा विश्वविद्यालय से दर्शनशास्त्र में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने हुबली कॉलेज, गुजरात के सरदार पटेल विश्वविद्यालय और दिल्ली के एनसीईआरटी में प्रोफेसर के रूप में कार्य किया और 1991 में मैसूर के क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय से सेवानिवृत्त हुए।

भैरप्पा ने 1958 में उपन्यास लिखना शुरू किया। उनका उपन्यास 'वंशवृक्ष' 1962 में प्रकाशित हुआ। तब से वे पिछले 40 वर्षों से लगातार लिख रहे हैं। वे 22 बहुचर्चित गंभीर उपन्यासों के लोकप्रिय लेखक हैं। 'अवरण' के चार वर्षों में 34 संस्करण प्रकाशित हुए, जिसे भारतीय उपन्यासों के लिए विश्व रिकॉर्ड माना जाता है। 1987 में 'वंशवृक्ष' का मराठी अनुवाद प्रकाशित हुआ। इसके बाद वे मराठी के भी प्रमुख लोकप्रिय उपन्यासकारों में से एक बन गए। अब तक उनके 12 उपन्यास और आत्मकथा का संस्कृत, अंग्रेजी और अन्य सभी भारतीय भाषाओं में व्यापक अनुवाद हो चुका है।

भैरप्पा को प्राप्त पुरस्कार – 1966: कन्नड़ साहित्य अकादमी पुरस्कार, 1975: साहित्य अकादमी पुरस्कार, 2005: पम्पा पुरस्कार, 2007: एनटीआर राष्ट्रीय

साहित्य पुरस्कार
उन्होंने 1999 में कनकपुर में आयोजित कन्नड़ साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया। 2007 में, उन्हें गुलबर्गा विश्वविद्यालय से मानद डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त हुई।
2011 में, उन्हें उनकी पुस्तक 'मंद्रा' के लिए 'के. के. बिल फाउंडेशन' से '20वां सरस्वती सम्मान' पुरस्कार प्राप्त हुआ।
उन्हें कोलकाता स्थित 'भारतीय भाषा परिषद' से भी पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

मूल कन्नड़ लेखक
डॉ. एस.एल. भैरप्पा
मराठी अनुवाद
उमा कुलकर्णी

मेहता पब्लिशिंग हाऊस

ई-पुस्तकों और लेआउट सहित सभी अधिकार सुरक्षित हैं। प्रकाशक और लाइसेंस धारक की पूर्व लिखित अनुमति के बिना इस प्रकाशन का कोई भी भाग किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम से पुनरुत्पादित, संग्रहीत या प्रसारित नहीं किया जा सकता है। कृपया मेहता पब्लिशिंग हाउस, 1941, मडीवाले कॉलोनी, सदाशिव पेठ, पुणे 411030 पर संपर्क करें। ✆ +91 020-24476924 / 24460313
ईमेल: info@mehtapublishinghouse.com
production@mehtapublishinghouse.com
sales@mehtapublishinghouse.com
वेबसाइट: www.mehtapublishinghouse.com
■ इस पुस्तक में व्यक्त किए गए विचार, घटनाएँ और विवरण लेखक के हैं और जरूरी नहीं कि वे प्रकाशक के विचारों को प्रतिबिंबित करते हों।
डॉ. एस. एल. भैरप्पा द्वारा रचित "सो मच"
फाइबर / अनुवादित उपन्यास
© एस. एल. भैरप्पा, 1007 उदयरवी रोड, कुवेम्पु नगर, मैसूर 570023।
उमा कुलकर्णी द्वारा मराठी में अनुवादित
अनुवादक: उमा वी. कुलकर्णी, 1098/11 'पार्थ हेरिटेज', मॉडल कॉलोनी, पुणे – 41101 ✆ 020-25659063

मराठी अनुवाद और प्रकाशन के अधिकार पुणे स्थित मेहता पाब्लिशिंग हाउस के पास हैं।
प्रकाशक: सुनील अनिल मेहता, मेहता पब्लिशिंग हाउस, 1941 सदाशिव पेठ, मडिवाले कॉलोनी, पुणे - 411 030
प्रिंटर: रेप्रो इंडिया लिमिटेड, मराठे उद्योग भवन, अप्पासाहेब मराठे मार्ग, प्रभादेवी, मुंबई - 400025।
होम पेज: चंद्रमोहन कुलकर्णी
प्रकाशन तिथि: फरवरी, 1997 / नवंबर, 2015 /
मार्च 2016 / पुनर्मुद्रण: अप्रैल 2017
कीमत : ` ७९५
पी बुक ISBN 9788171616671 ई बुक ISBN 9788184988987
ई-पुस्तकें यहां उपलब्ध हैं:
■ play.google.com/store/books ■ m.dailyhunt.in/Ebooks/marathi ■ www.amazon.in

प्रस्तावना

1947 में, तेरह वर्षीय भैरप्पा ने सुबह के जुलूसों में उत्साहपूर्वक भाग लिया था, छोटे-छोटे भाषण दिए थे, ट्रकों पर चढ़कर शराब के पीपों को तोड़ा था और यहाँ तक कि पुलिस की मार भी खाई थी। उन्होंने गांधीजी-नेहरू-बोस-चेंगलराय रेड्डी का उत्साहवर्धन किया था और एक स्वतंत्र भारत का सपना भी देखा था।
लेकिन 47 वर्षों के बाद स्वतंत्र भारत की प्रगति को देखते हुए, भैरप्पा की राय दिन-ब-दिन और अधिक निराशावादी होती गई।
यह उपन्यास, जो स्वतंत्र भारत के स्वतंत्र नागरिकों के दुख-दर्द की कहानी कहता है, इसी से रचा गया था।
एक उपन्यास में विशाल भारत की जटिलता को कलात्मक ढंग से किस हद तक चित्रित करना संभव है? यह उपन्यास निश्चित रूप से इस प्रश्न का उत्तर प्रदान करता है।
राजनीति के साथ-साथ - और उससे भी कहीं अधिक, यह उपन्यास, जो संगीत, शिक्षा, पत्रकारिता, व्यवसाय और उद्यमिता जैसे कई क्षेत्रों को समाहित करता है, पात्रों को अनुभव से सशक्त बनाता है, और समकालीन कथानक को एक कलात्मक स्तर पर ले जाता है, जबकि कथानक बैंगलोर-बसवनपुर-जोगीबेटा-मैसूर-दिल्ली-बनारस-पटना में घटित होता है, मेरा मानना है कि यह मराठी पाठक को एक अलग अनुभव प्रदान करेगा।
1994 में पणजी में आयोजित अखिल भारतीय मराठी साहित्य सम्मेलन के उद्घाटनकर्ता डॉ. भैरप्पा ने 'महाराष्ट्र टाइम्स' को दिए एक साक्षात्कार में इस उपन्यास का उल्लेख किया था, जिसके बाद से मराठी पाठकों ने समय-समय पर इस उपन्यास के प्रति जिज्ञासा व्यक्त की है। आशा है कि यह अनुवाद उनकी जिज्ञासा को संतुष्ट करेगा।
दरअसल, मेहता पब्लिशिंग हाउस और हिंदी प्रकाशकों ने कन्नड़ के साथ-साथ मराठी और हिंदी में भी इस उपन्यास को प्रकाशित करने की इच्छा जताई थी। लेकिन इतने बड़े उपन्यास के अनुवाद, छपाई आदि में लगने वाले समय को देखते हुए यह संभव नहीं हो पाया। वरना यह एक बहुत बड़ा प्रयास होता! मैं मेहता पब्लिशिंग हाउस के सुनील मेहता का आभारी हूं कि उन्होंने इतने बड़े उपन्यास को मराठी पाठकों के लिए उपलब्ध कराया। अनिल किनिकर ने भी इस पांडुलिपि को देखा है। मेरे पिछले सभी अनुवादों की तरह, इस बार भी विरुपाक्ष कुलकर्णी ने मेरी सहायता की है।

~

उमा बनाम कुलकर्णी

१

हालाँकि दरवाज़े की आवाज उसके कानों तक पहुँची, फिर भी रविंद्र ने अपना सिर नहीं उठाया, जो पालखीवाला के लेख 'केंद्र सरकार और राज्य सरकार: अंतर्संबंध और लोकतंत्र का पतन' में डूबा हुआ था। उसने अपनी आँखों के कोने से देखा कि समाचार संपादक कुट्टी आकर उसके सामने वाली मेज पर खड़ा हो गया है। उसने गौर किया कि टेलीप्रिंटर की आवाज, जो लेख में मग्न होने के कारण उसे सुनाई नहीं दे रही थी, वातावरण में इस तरह गूंज रही थी मानो उसके बिना अखबार, कार्यालय का कोई अस्तित्व ही न हो। रविंद्र को जब यह एहसास हुआ कि कुट्टी को भेजे बिना अगला लेख पढ़ना असंभव है, तो उसने अपना सिर उठाया।

कुट्टी ने टाइप किया हुआ अखबार रविंद्र के सामने रखते हुए कहा,

"सर, चन्नरायपट्टन तालुका में स्थित बसवनपुर, जहां होयसला मंदिर हैं, आपका ही गांव है, है ना? मुझे याद है आपने कुछ समय पहले इसके बारे में बताया था। इसीलिए मैं आपको दिखाने के लिए इसे लाया हूँ..."

कुट्टी कुर्सी पर बैठ गया। रविंद्र ने अखबार उठाया और अपने चश्मे का कोण ठीक करते हुए उसे पढ़ने लगा। यह उसके अखबार के हसन संवाददाता द्वारा भेजी गई एक रिपोर्ट थी, जिसमें तस्वीरें भी थीं। संवाददाता ने स्वयं उस स्थान का दौरा किया था। बसवनपुर मंदिर की प्रशंसा करते हुए उसने लिखा था:

हालेबिड और बेलूर में राजा के धन और श्रम का उपयोग करके मंदिर बनवाने के बाद, जोकनाचार्य ने अपने विशेष शिष्यों की सहायता से अपनी संतुष्टि के लिए इस मंदिर का निर्माण करवाया। यद्यपि आर्थिक तंगी के कारण मंदिर आकार में छोटा है, फिर भी विशेषज्ञों का मत है कि यहां की मूर्तियां कलात्मक दृष्टि से सर्वोच्च गुणवत्ता की हैं। गर्भगृह में चन्नकेसव और लक्ष्मी की मूर्तियां तथा मंदिर की बाहरी दीवारों पर सरस्वती, भैरव, नरसिम्हा, विश्वामित्र-मेनका, राम द्वारा शिव का धनुष तोड़ना और कृष्ण द्वारा कंस का वध करना, ये सभी मूर्तियाँ अत्यंत उच्च कोटि की प्रतीत होती हैं।

हाल ही में ग्रामीणों ने देखा कि यहाँ की सबसे सुंदर मूर्तियों में से एक, सरस्वती की मूर्ति चोरी हो गई है! जब हसन के संवाददाता ने स्वयं घटनास्थल का दौरा किया, तो खबर सच निकली।

जैसे ही संवाददाता को पता चला कि मंदिर की चाबी पुजारियों के पास है, उसने उनसे मुलाकात की। लगभग दस साल पहले, इन पुजारियों ने सरकार को पत्र लिखकर बताया था कि दरवाजा सड़ने के कारण टूट गया है। लेकिन पिछले दस वर्षों में कोई कार्रवाई नहीं हुई है। ऐसे में पुजारी सवाल उठाते हैं कि मवेशियों, कुत्तों और अन्य जानवरों का अड्डा बन चुके इस मंदिर की जिम्मेदारी पूरी तरह से उन पर कैसे आ जाती है?

पढ़ते-पढ़ते रविंद्र अतीत में खो गया। उसे याद आया कि जब वह अपनी पढ़ाई के लिए दादाजी के घर रहता था, तब हर शाम मंदिर जाया करता था... मंदिर का दरवाजा खुलते ही वह अंदर दौड़कर सरस्वती की मूर्ति को निहारता था... उसकी दादी उसे कितना प्यार करती थीं! वह कहती थीं,

"बच्चे में सरस्वती के लिए कितना जीवन है! केवल वही उससे प्रसन्न होंगी!"

क्या अज्जी और सरस्वती के चेहरों में बहुत समानता थी? सौम्य भाव, शांत और संतुष्ट आँखें, हलदी और केसरिया रंग, कानों में बालियाँ - एकमात्र अंतर यह था कि सरस्वती का चेहरा अज्जी जितना बूढ़ा नहीं दिखता था।

रविंद्र का ध्यान सामने वाली झोपड़ी की ओर गया। उसे अखबार देते हुए उसने कहा,

इसे पहले पन्ने की खबर बनाइए। 'एक अमूल्य माते की चोरी... क्या सरकार सो रही है?...' शीर्षक दीजिए। इसमें एक और पैराग्राफ जोड़िए – पांच फीट ऊंची, तीन फीट चौड़ी और कम से कम तीन टन वजनी मूर्ति को बिना वाहन के वहां से ले जाना असंभव है। इसमें अंतरराष्ट्रीय चोरों का हाथ जरूर है। विशेषज्ञों का मानना है कि इसमें ग्रामीणों का भी हाथ हो सकता है। इत्यादि।'
कुट्टी ने रविंद्र के शब्दों को लिख लिया।
रविंद्र ने आगे कहा,
"यही खबर मुंबई-अहमदाबाद-दिल्ली-भोपाल के संस्करणों में भी प्रकाशित हो।"
कुट्टी चली गई। लेकिन रविंद्र के मन में बसी सरस्वती की प्रतिमा जरा भी हिलने को तैयार नहीं थी। सरस्वती और अजी के चेहरे आपस में घुलमिल रहे थे। धीरे-धीरे अजी का चेहरा साफ़ दिखने लगा। हल्दी से दमकते उनके गाल, शरारतों के लिए डांट खाने पर भी शांत रहने वाली उनकी आँखें, एक हाथ से सख्त और दूसरे हाथ से गर्म बर्तनों के किनारे की ओर मुड़े हुए उनके हाथ, फूलों से सजे उनके हाथ, जूई और मोगरा की मालाओं से लिपटे उनके हाथ, गुनगुनाते उनके गाल, गायों के खुरों को रगड़ने से कोमल और चिकनी हो चुकी उनकी हथेलियाँ। उनके मन में कौंध गया कि वे उसी हाथ में हाथ डालकर मंदिर जा रहे हैं। न केवल उनके गाल, बल्कि हल्दी मलने से अजी के सुनहरे पैर और टांगें, जिन पर एक भी बाल या झुर्री नहीं थी...
आँखों ने लगाम खींची और पालकी के चारों ओर घूम गईं, फिर भी मन गाँव से लौटने को तैयार नहीं था। गाँव - हमारा गाँव - हमारे दादा-दादी का गाँव! हम इसे बी. के. रविंद्र कहते हैं, इसमें बीज बसवनपुर से ही तो है, है ना?
'अरे! यह तो बिलकुल समझ से परे है!' उसने खुद को चेतावनी दी। 'मैं कोई लेखक नहीं हूँ जो भावनाओं और सनक को समझ सकूँ – मैं तो एक पत्रकार हूँ!'
अगले दिन, लीना को दो घंटे का श्रुतलेख देने के बाद, उन्होंने उस दिन का अखबार विस्तार से पढ़ना शुरू किया। लेख में, राष्ट्र की संस्कृति के विनाश के साथ-साथ, कुट्टी ने दो-तीन सवाल भी उठाए थे जो उनके मन में थे। कुट्टी की प्रशंसा करते हुए, उनके मन में यह विचार आया: क्यों न हम इस संबंध में पुलिस महानिरीक्षक से बात करें? जी हां। इसके अलावा, हमें संस्कृति मंत्री से भी बात करनी चाहिए। यह मेरे गांव के लिए - गांव के मंदिर के लिए - करना ही होगा!
डिक्टेशन से दिमाग थक चुका था, इसलिए उसे कॉफी की तीव्र तलब लगी। उसे यह भी याद आया कि उसने काफी समय से सिगरेट नहीं पी थी। उसने घंटी बजाई और कॉफी मंगाई। लेकिन खून में कैफीन और निकोटीन का असर था, इसलिए उसने सोचा: किसी भी हालत में इस सरकार के बहुत करीब जाना ठीक नहीं है। हम पत्रकार हैं। हमारा एकमात्र काम खबरें प्रकाशित करना है।
उसने अपनी घड़ी देखी। अब बाकी उप-संपादकों के दिन की संपादकीय चर्चा के लिए आने का समय हो गया था।

■

ऑल इंडिया एडिटर्स एसोसिएशन के अध्यक्ष के शाम के भाषण और उसके बाद के रात्रिभोज को समाप्त करने के बाद जब वह घर लौटे तो रात के 11:30 बज रहे थे।
रवींद्र जानता था कि कांति से इस समय उठकर गैराज खोलने की उम्मीद करना अवास्तविक था। दिन भर घर से बाहर काम करने वाली महिलाओं की कहानी अलग होती है... लेकिन यह कहानी उन संभ्रांत महिलाओं की है जिनके घर में दो-चार नौकर होते हैं और जो अपना सारा समय घर पर ही बिताती हैं! न केवल शिक्षित महिलाएं, बल्कि शिक्षित पतियों की अर्ध-शिक्षित पत्नियां भी!
जैसे ही वह कार से बाहर निकला और गेट व गैराज का दरवाजा खोला, उसके मन में यह ख्याल आया – यह रात का समय है, भले ही दोपहर दो से चार बजे के बीच

नींद टूट जाए, इन घरवालों के चेहरे गांव की बूढ़ी औरतों जैसे हो जाते हैं। फिर उनके सिरदर्द... एस्पिरिन...
उसने गैराज बंद करके ताला लगा दिया। गेट बंद करने और घंटी बजाने के बाद भी, हमेशा की तरह कांता ने काफी देर तक दरवाजा नहीं खोला। उसने मुझे तीन-चार बार घंटी बजाने पर मजबूर कर दिया! वह अब सोई नहीं थी। हमेशा की तरह, वह टीवी पर फिल्म देख रही थी, उसके हाव-भाव और चेहरे से साफ पता चल रहा था। टीवी की आवाज अंदर भी सुनाई दे रही थी। अगर मैं जल्दी भी आ जाता, तो भी वह फिल्म खत्म होने तक जागती रहती।
"संपादक संघ के अध्यक्ष आ रहे हैं, आपने मुझे आज सुबह बताया था ना? खाना भी बाहर रखा है, तो-"
मुझे जाने दो! नाक क्यों खुजलाना? अपना मन बदलते हुए, वह अपने बेडरूम में गया और कपड़े बदलने लगा। जब वह बेडरूम के बगल वाले बाथरूम से लौटा, तो उसे लगातार जम्हाई आ रही थीं। उसने बेडरूम का दरवाजा बंद कर लिया ताकि टीवी की आवाज़ सुनाई न दे। मच्छरदानी को वहीं छोड़कर, वह बिस्तर पर लेट गया। जैसे ही उसने अपने पैर फैलाए, उसने मन ही मन फ़ैसला कर लिया - वह कल सुबह सात बजे से पहले नहीं उठना चाहता था। हालांकि उसने कहा था कि वह तुरंत सो जाएगा, लेकिन शाम को 'प्रेस की स्वतंत्रता पर हमले' के बारे में अपने भाषण में कही गई बातें उसके दिमाग में बार-बार आ रही थीं। आज हमने रात के खाने से पहले कुछ नहीं खाया। तो अब मेरा सिर क्यों सुन्न हो रहा है, क्या प्रेस की स्वतंत्रता का हनन हो रहा है? गाड़ी चलाते समय मेरी आँखों पर जो धुंध छाई हुई थी, वह अब पूरी तरह से छंट गई थी।
उन्होंने अपना मन बदल लिया।
उसी समय, हॉल में रखा टीवी अचानक बंद हो गया और उसके आसपास की खामोशी शिकायत करने लगी। शयनकक्ष के दरवाजे से अंदर आई कांति ने पूछा,
``नींद आ गयी? बिजली जला दूं?"
उसे अच्छी तरह पता होता है कि हम सो रहे हैं या नहीं!
उन्होंने कन्नड़ में ऐसे कहा जैसे नींद में बोल रहे हों।
``दीपक मत जलाओ..."
इसी तरह, कांति भी कन्नड़ परिवार से थीं। लेकिन जब उनका जन्म हुआ, तब आर. एस. मूर्ति दुर्गापुर में इंजीनियर थे। बाद में, भोपाल, कानपुर, बड़ौदा, कलकत्ता, दिल्ली जैसे विभिन्न प्रांतों में काम करते हुए, हिंदी ही उनकी एकमात्र संचार भाषा बने गई। घर पर उनके माता-पिता आपस में कन्नड़ में बात करते थे। वे उनसे भी कन्नड़ में ही बात करते थे। लेकिन उन्होंने हिंदी में जवाब देना शुरू कर दिया। बाद में उन्हें याद आया कि भले ही उनके माता-पिता काम के लिए दिल्ली में रहते थे, लेकिन वे बचपन से ही बसवनपुर में अपने दादा-दादी के साथ रहते थे और वहीं स्कूल जाते थे, इसलिए उन्हें घर पर अपने माता-पिता से कन्नड़ में बात करने की आदत थी। उन्हें आज भी बसवनपुर के स्कूल में सीखी हुई कई बातें याद हैं।
जब वह चार साल पहले बैंगलोर आया था, तो उसने कांति से कहा था,
"अब हम कर्नाटक आ गए हैं। अब कम से कम आपको घर पर कन्नड़ बोलनी चाहिए। इससे बच्चा कन्नड़ का आदी हो जाएगा।"
उसने यह बात हिंदी में कही थी।
क्यों? क्या बैंगलोर भारत से बाहर है? इसके अलावा, आप एक अंग्रेजी अखबार के संपादक हैं! क्या बैंगलोर सरकार आपके बेटे को नौकरी देगी? देश में केवल एक ही भाषा होनी चाहिए। नहीं तो देशभक्ति कैसे पैदा होगी? वास्तव में, आपको इस पर एक लंबा संपादकीय लिखना चाहिए!

वह हमेशा चुप रहता था क्योंकि वह जानता था कि उससे बहस करने से बेहतर है कि बात को वहीं छोड़ दिया जाए। बाद में तो उसने इस विषय को दोबारा उठाया ही नहीं। लेकिन जब दोस्त घर आते, तो वह उनसे कहती कि उसे कन्नड़ समझ नहीं आती, और वह हिंदी या अंग्रेजी बोलने लगती, या जानबूझकर कन्नड़ में बहुत सारे हिंदी शब्दों का इस्तेमाल करती और ऐसा दिखावा करती कि उसे कन्नड़ समझ नहीं आती, जिससे उसे चिढ़ होती थी।
उसके दोस्त और परिवार के लोग भी वैसे ही थे - काम के सिलसिले में पूरे भारत में घूमते रहते थे, केवल हिंदी और अंग्रेजी बोलते थे, या बैंगलोर में रहते थे और कन्नड़ धाराप्रवाह बोलते थे।
मच्छरदानी के दूसरी तरफ से अंदर घुसते हुए उसने हिंदी में कहा,
"आपके बेटे की रक्षा करना मेरे लिए नामुमकिन है! मुझे आज उसके स्कूल से फ़ोन आया था। अगर मैं जाकर जांच करूं, तो क्या आपको पता है प्रताप ने क्या किया है? उसने क्या किया होगा?"
हुम्म...
चौदह साल की अनूप। स्कूल में नियमित उपस्थिति न होना, शिक्षकों से झगड़ा करना, चार-छह बच्चों का गिरोह बनाकर स्कूल के नियमों को तोड़ना - कुल मिलाकर, वह सिरदर्द थी। और फिर एक और घटना घटी!
दिनभर के तनाव के बाद, आधी रात को उनकी बुद्धि इस मामले पर ध्यान देने से इनकार कर रही थी।
"कल बात करते हैं... साढ़े बारह बज चुके हैं..." उसने उसकी तरफ पीठ करके कहा।
"मैंने तुम्हें कल सुबह प्रधानाध्यापक के पास भेजने का वादा किया है। मुझे लगता है कि वह तभी सुनेंगे जब तुम उनसे मिलोगे। वरना, वह तुम्हें निकाल देंगे। मैं तुम्हें तबादला प्रमाणपत्र दे दूंगा... इसे किसी दूसरे स्कूल में भेज दो!" वे कह रहे थे! तीन अन्य लड़कों के साथ मिलकर उसने स्कूल के तकनीकी विभाग से बहुत सारा सामान चुरा लिया था! आरोप है कि उन्होंने इसे ब्रिगेड रोड की एक दुकान में बेच दिया! जब पुलिस ने दुकानदार को पकड़ा, तो उसने कहा कि उसने बच्चों से सामान खरीदा था। जब पुलिस उसे हर कक्षा में ले गई, तो उसने इन चारों को पहचान लिया।
वह ध्यान से उसकी बातें सुन रहा था।
जब हमने उन चारों को अलग-अलग रखा और उनसे और पूछताछ की, तो उन्होंने चोरी कबूल कर ली। अब हमें पता चला है कि पिछले तीन सालों से वे चारों पुस्तकालय से मोटी-मोटी किताबें चुराकर किताबों की दुकानों में बेच रहे थे। अब तो दुकान का मालिक भी उनका सरगना बन गया है! लोग कहते हैं कि हमारा राजकुमार ही सारी मुसीबतों का सरगना है!
सब कुछ सुनकर उनका पिता तुलय हृदय आहत हुआ। उन्हें पिछले तीन वर्षों से पता था कि चौदह वर्षीय अनूप कभी-कभी घर से पैसे चुराता था। शुरू में न तो उन्होंने और न ही कांति ने उसकी छोटी-मोटी चोरियों पर ध्यान दिया। कांति के पर्स में या अनूप की पैंट की जेब में पड़े खुले पैसे गिने नहीं जाते थे। लेकिन एक बार उसकी जेब से पचास रुपये का नोट गायब हो गया, तब जाकर शक पैदा हुआ। ऐसा ही तब हुआ जब कांति के पर्स में से बीस रुपये गायब पाए गए। सबसे पहले शक गृहिणी पर ही गया। कांति ने जैसे ही जवाब मांगा, कांति ने झगड़ा किया और काम पर आना बंद कर दिया। इस घटना से कांति की बहुत बदनामी हुई और कई दिनों तक उसे कोई दूसरी गृहिणी नहीं मिली। इसी वजह से अनूप भी कांति का संघर्ष देखता रहा। लेकिन एक शातिर चोर की तरह वह घर में चुपचाप घूमता रहा।

फिर एक दिन, कांति रसोई में काम कर रही थी। उसी समय, उसे शयनकक्ष की अलमारी की आवाज़ सुनाई दी, इसलिए कांति दौड़कर वहाँ गई और उसने अनूप को मासूम चेहरे के साथ देखा। उसने अपनी जेब में हाथ डाला और दो सौ रुपये पाए। उसने अभी तक अलमारी की चाबी भी नहीं लगाई थी। जब उससे इस बारे में पूछा गया, तो उसने बिना किसी अपराधबोध के जवाब दिया,
"अगर मैंने तुमसे कहा होता कि मैं ब्रिगेड रोड पर चिकन खाने जा रहा हूँ, तो क्या तुम मुझे पैसे देते?"
कांति चाहे खुद को कितना भी आधुनिक क्यों न कहती हो, लंबे समय तक मांस न खाने के बावजूद उसने अंडे तक नहीं छुए। उत्तर भारत के लोगों की तरह वह भी व्रत रखती थी। बाहर होने वाली कुछ खास पार्टियों को छोड़कर उसने कभी शराब भी नहीं पी। उसने जीवन भर मांस या मछली को हाथ भी नहीं लगाया था। घर के माहौल को देखते हुए ग्यारह-बारह साल का अनुप मुर्गी खाना कहां से सीखता?
उस समय उसने अनुपाल को पास बुलाया और उसे अहिंसा, पशुओं, बुद्ध-महावीर आदि के बारे में समझाया, लेकिन उसके चेहरे पर एक हलकी सी मुस्कान थी जिससे लग रहा था कि अनुपाल को कुछ भी समझ नहीं आ रहा है! साथ ही, ठुकराए जाने का गुस्सा भी उसके मन में था! और पूछताछ करने पर पता चला कि वह अपने दोस्तों जगदीश अरोरा, विपुल ज़वेरी और ओमप्रकाश सभरवाल के साथ होटल जा रहा था। ये तीनों व्यापारी माता-पिता के बच्चे थे। ये तीनों मनचाहा पैसा खर्च कर रहे थे। उनके घर पर चिकन-मटन-बिरयानी खरीदना और खाना भी उनका रिवाज था।
छी! हमने उसे उन अधिकारियों के बच्चों के लिए बने केंद्रीय स्कूल में भेज दिया जो अलग-अलग राज्यों से पलायन कर गए थे, यह हमारी बहुत बड़ी गलती थी! इस गाँव में आने के बाद भी हमें उसे ऐसे स्कूल में भेजना चाहिए था जहाँ हमारी संस्कृति और मूल्यों का समावेश हो। कांति ने मेरे इस विचार को पूरी तरह से खारिज कर दिया। "दस जगहों से प्रकाशित होने वाले अखबार में काम करने के लिए आपको देश के किसी भी कोने या महानगर में जाने के लिए तैयार रहना होगा। आप भी यह नौकरी छोड़कर कोई और अच्छी नौकरी कर सकते हैं। उसकी शिक्षा को लेकर इतना बड़ा मुद्दा क्यों बनाना?" उस समय मैंने भी कांति की बात मान ली थी। यह कुछ भी नहीं है! अनुप के खिलाफ आवश्यक कार्रवाई होनी चाहिए, जो अब बगल वाले कमरे में सो रहा है...
वह झटपट उठा। पलंग के पास बिछी रबर की चटाई पर कदम रखते हुए वह हॉल में आया। अंधेरे में उसने स्विच दबाकर वहां का लैंप जलाया और अनुप के कमरे की ओर चल पड़ा। अंदर जाकर उसने वहां का लैंप भी जला दिया।
प्रकाश का अनूप की नींद पर कोई असर नहीं पड़ा, जिसका आकर्षक चेहरा चौदह वर्ष की आयु में उसके पिता के आकार जितना बड़ा हो गया था।
उसके पीछे चल रहे कांति ने उसे बीच में रोकते हुए कहा,
"अब जब तुमने उसे जगा दिया है, तो तुम क्या करोगे?"
"तो फिर तुमने मुझे ये सब बातें इस समय क्यों बताईं, मेरी नींद क्यों खराब की?" उसने उसकी ओर मुड़ते हुए पूछा।
"तो फिर मैं कैसे सो पाता? दोनों माता-पिता को इन समस्याओं पर ध्यान देना चाहिए। अगर इतने छोटे बच्चे को अपराधी की तरह दंडित किया जाए, तो क्या उसमें सुधार आएगा?"
कांति हमेशा अपने पति को 'आप' कहकर संबोधित करती थी। शादी के तुरंत बाद ही उसने इस संबोधन के माध्यम से यह स्पष्ट कर दिया था कि 'हम दोनों एक ही स्तर पर हैं'। उसके पति ने भी कभी इस बात से इनकार नहीं किया था।
अब उसने उसे चेतावनी दी,
``अब तुम अपना मुंह बंद करो, देखो!"

फिर वहँ अनूप कें घर गया। अनूप कों छड़ों को पकड़कर हिलाते हुए वह चिल्लाया,
आहे! उठो... उठो, मैं मना करता हूँ! लोलटॉय खुशमिजाज़ बदमाश! बेशर्म! मैं कल प्रधानाध्यापक को बताऊँगा और तुम्हें पुलिस के हवाले कर दूँगा! तुम चोरी कर रहे हो!
उन्हें शर्मिंदगी महसूस हुई, जब उन्हें एहसास हुआ कि उनकी आवाज़ इरादे से ज़्यादा ऊंची हो गई थी। अगर उनके आस-पास सो रहे लोग उनकी चीखें सुनते तो क्या कहते? पिता और पुत्र ज़्यादातर अंग्रेज़ी में बात करते थे। उनकी यह उम्मीद भी नाकाम हो गई थी कि वे कम से कम अपने बेटे से कन्नड़ में बात कर पाएंगे। उन्हें लगा कि अगर उन्होंने अपने बेटे से हिंदी में बात करना शुरू किया तो यह उनकी पूरी तरह से हार होगी, इसलिए उन्होंने अंग्रेज़ी का सहारा लिया। इसके अलावा, उनके मन में यह तसल्ली भी थी कि वे एक अंग्रेज़ी पत्रकार हैं – अंग्रेज़ी विज्ञान और ज्ञान की अंतरराष्ट्रीय भाषा है, जो बाहरी दुनिया को देखने का एक ज़रिया है।
अनूप के चेहरे से यह स्पष्ट था कि वह जागा हुआ था और हमारी बातें सुन रहा था।
"क्यों? तुमने सुना नहीं? क्या तुम चोरी करके अपने परिवार की प्रतिष्ठा धूमिल कर रहे हो? क्या तुम्हें शर्म नहीं आती?"
वह भी वहीं खड़ा रहा, इस दृढ़ निश्चय के साथ कि जब तक उसे जवाब नहीं मिल जाता, वह वहां से नहीं जाएगा।
अनूप का चेहरा पीला पड़ गया था, फिर भी उसका आत्मविश्वास स्पष्ट रूप से झलक रहा था।
"बोलो! बोल रहे हो या नहीं...?" उसने लड़के की ओर हाथ उठाया।
अनुपना ने तिरस्कारपूर्ण स्वर में कहा,
"आपने मुझे जो जेब खर्च दिया है, वह मेरे लिए पर्याप्त नहीं है।"
"बस का किराया और टैक्सी का दैनिक किराया चुकाने के बाद जेब खर्च के तौर पर हर दिन दो रुपये से ज्यादा कौन देगा?"
"ब्रिगेड रोड तक बस का किराया सिर्फ दो रुपये है! चिकन का बिल कौन देगा?"
अनूप की अंग्रेजी पहले से बेहतर हो गई थी।
"लेकिन आपको चिकन की ज़रूरत क्यों है?"
मुझे यह पसंद है!
मैंने तुम्हें कितनी बार बताया है कि जानवरों को मारना पाप है - उनका भी जीवन हमारे जैसा ही है। भोजन के लिए जानवरों को मारना अनैतिक है। बुद्ध - महात्मा गांधी - सभी ने अहिंसा के बारे में यही कहा है।
वह पहले अनगिनत बार कही गई बात को दोहराते-दोहराते थक चुका था। फिर भी, वह बिना हिले-डुले अनूप के जवाब का इंतजार करता रहा।
कुछ देर की चुप्पी के बाद, अनूप ने एक बार फिर कहा, "मुझे चिकन पसंद है...", फिर वह बिस्तर पर गिर पड़ा, अपने सिर पर चादर ओढ़ ली और दूसरी तरफ मुड़ गया।
हालांकि उन्हें यह एहसास था कि यह भी निंदा का एक रूप है, रविंद्र ने कहा,
किसी व्यक्ति को केवल इसलिए कोई कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि उसे वह पसंद है। उसे यह भी सोचना चाहिए कि वह सही है या गलत। क्या उसे खाने के लिए उसे चुराना चाहिए, अगर वह उसे खाना चाहता है?
अनूप ने इस पर कुछ नहीं कहा। वह वहीं खड़ा रहा। कुछ देर बाद उसने फिर कहा,
"बोलिए, आपने यही कहा था ना? आप अपनी मनचाही चीज़ पाने के लिए, कुछ खाने के लिए भी चोरी करेंगे?"

उसने सो रहे अनूप की छड़ी छीन ली और उसे अपनी ओर खींच लिया। बिना आंखें खोले अनूप ने जवाब दिया,
"फिर आप भुगतान करें।"
उनकी आवाज दृढ़ थी।
उसे मुस्कुराने और उसे मुस्कुराने की तीव्र इच्छा हो रही थी, लेकिन उसने खुद को रोका और कहा,
मैं कल आपके स्कूल आऊंगा।
वह जल्दी से अपने कमरे की ओर चल पड़ा। कांति, जिसने अनूप के कमरे और हॉल की बत्तियाँ बंद कर दी थीं और मच्छरदानी से अंदर प्रवेश किया था, ने कहा, "अगर मैं उसे स्कूल आने के लिए कहूं, तो भी वह ज़रा भी नहीं डरता। मैंने उसे कितनी बार कहा है! कई बार तो मैं उसके स्कूल जाकर उसके शिक्षकों से बहस भी कर चुकी हूं। आज तो मैं उसके प्रधानाध्यापक से भी मिली। अगर मैं उसे बताऊँ कि मैं तुम्हारे प्रधानाध्यापक से मिलूँगी, तो क्या तुम जानते हो कि वह क्या कहेगा? "बताओ, मैं इस स्कूल से तंग आ गया हूं! उन प्रधानाध्यापकों को देखकर मुझे उलटी आने लगती है! वह क्या करेगा? बच्चों को पीटना तो गैरकानूनी है। तो क्या? वह उन्हें अपने सामने खड़ा करके उपदेश देगा, बस! पिता की तरह! वे उसे एक छोटा-मोटा कागज़ देकर भगा देंगे," उसने कहा। प्रधानाध्यापक ने तुम्हें कल सुबह दस बजे मिलने के लिए बुलाया है। जो चाहो करो! मैं बहुत चिंतित हूँ।
इतना कहकर उसकी आवाज़ धीमी हो गई। थोड़ी देर बाद, वह बिस्तर के दूसरी तरफ करवट बदल कर गहरी सांस ली और गहरी नींद में सो गई।
उसका मन एक प्रकार की असहाय अवस्था में डूबा हुआ था।
इस बच्चे को क्या करना चाहिए? इसे सही राह पर कैसे चलना चाहिए? उसकी बुद्धि बहरी थी। 'मुझे पसंद है, मैं खा लूँगा।' 'मुझे पसंद है' के अलावा, इस बच्चे के पास सही या गलत का कोई मापदंड नहीं था। इतना ही नहीं, उसे किसी चीज का डर भी नहीं था। 'मुझे चिकन पसंद है...अगर आप मुझे इसे खाने के लिए पैसे नहीं देंगे, तो मैं इसे चुरा लूँगा!' यही उसका सीधा जवाब था!
दिल्ली में रहते हुए उनके कानों में फुसफुसाहट के रूप में जो बात आई थी, वो उन्हें याद आई। वो कहते थे, देश की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के बेटे संजय भी ऐसे ही हैं! वो खुद कहते थे कि पूरब की ओर वो अपनी मां के इशारे पर उकसाते हैं! वो कहते थे कि पार्टी और देश चलाने वाली वो मां अंदर से बेबस हो गई हैं। शायद उन मां-बेटियों में हठधर्मिता एक आम गुण है। सत्ता को किसी भी तरह अपने हाथों में रखने के मामले में दोनों एक जैसी हैं। इसीलिए कभी-कभी मां को अपने बेटे पर गर्व महसूस होता है।
लेकिन मेरी भावनाएं, मेरे नैतिक मूल्य और मेरी निष्ठाएं अलग हैं। मैं उन्हें कैसे नकार सकता हूँ और एक ऐसे बच्चे को कैसे बर्दाश्त कर सकता हूँ जिसका स्वभाव चरमपंथी है और जो विपरीत दिशा में अग्रसर है?
उसके बाद वह करीब डेढ़ घंटे तक जागता रहा।

■

वह सुबह दस बजे प्रधानाध्यापक से मिलने गया। वहाँ के सचिव ने उसे प्रतीक्षालय में बैठाया और उससे कहा,
"महोदय! उनकी अचानक बैठक हो गई, इसलिए मुझे जाना पड़ा। मैं 10:30 बजे आऊंगा। कृपया बैठ जाइए।" और वह चला गया।
उसी सोफे पर दो और आदमी सिगरेट पीते बैठे थे। उनके चेहरे, उनकी टाई, उनके कपड़े, उनके चेहरे और ठुड्डी की बनावट, उनके बाल—सब कुछ देखकर यही लग रहा था कि वे उत्तर भारत से आए होंगे और यहां व्यापार कर रहे होंगे। चूंकि अनूप के बाकी तीन दोस्तों के घरों पर भी इसी तरह के संदेश भेजे गए थे, इसलिए उसने सोचा कि यह उनमें से दो का पिता ही होगा। उसके आने से पहले वे

आपस में बातचीत कर रहे होंगे, और उनके मोटे चेहरों से साफ था कि उसके आने से उनकी बातचीत में खलल पड़ गया था।
जैसा कि रविंद्र को उम्मीद थी, उनकी बातचीत फिर से शुरू हो गई। बातचीत की भाषा पंजाबी थी। दिल्ली में पले-बढ़े रविंद्र को पंजाबी समझ आती थी। लेकिन बिना दिखाए, वह सामने की सफेद दीवार को घूरता रहा।
अपने मोटे पेट पर खिंची हुई बाटिक शर्ट पहने हुए, उसने घड़ी की ओर देखा और कहा,
"आधे घंटे की देरी! लेकिन क्या वह सचमुच 10:30 बजे आएगा? दुकान खोलने का समय हो गया है! क्या प्रधानाध्यापक के पिता हमारे नुकसान की भरपाई करेंगे?"
दूसरे व्यक्ति ने, जिसने पजामा पहना हुआ था और गले में हाथ से बुनी हुई शॉल ओढ़ी हुई थी, कहा,
"बच्चे ऐसे व्यवहार करते थे मानो माता-पिता को सूचित करना उनका कर्तव्य हो। जब वे कार्यालय का नाम लेते, तो वे कहते, हमें उस समय आना होगा। जब वे कहते कि कोई ज़रूरी बैठक है, तो उन्हें भी जाना पड़ता था। इस बात पर बहस नहीं की जा सकती!" जब विपक्षी दल ने ये मुद्दे उठाए, तो उन्होंने बड़े गर्व से कहा, "आपका क्या जवाब है?"
और मैं कहती हूँ, ये कैसी बड़ी शिकायत है जिसे इतनी अहमियत दी जा रही है? बच्चों ने चार स्क्रूड्राइवर और चार काटने के औजार चुरा लिए, उदाहरण के लिए! मैंने कभी अपने बेटे को पैसों की कमी नहीं होने दी। हम इतनी मेहनत क्यों करते हैं? हम चाहते हैं कि हमारे बच्चे खुशी से बड़े हों, है ना? मैंने उससे कहा कि वह खूब खाए-पिए – जितना चाहे खर्च करे। मैंने उस पर थोड़ा दबाव डाला ताकि उसे समझ आ जाए और उसे कम उम्र में काम न करना पड़े – बस इतना ही। कोई विश्वास नहीं करेगा कि इतने सारे पैसे हाथ में होते हुए उसने चार बेकार चीजें चुराईं। और अगर उसने चोरी की भी है, तो उसने सिर्फ मजे के लिए की होगी, बस। चोरी किसे कहते हैं? प्रधानाध्यापक को बुलाइए। मैं उनसे चार विरोधाभासी सवाल पूछूंगी और उन्हें परेशान कर दूंगी। आपके स्कूल के प्रौद्योगिकी विभाग के प्रमुख के क्या कर्तव्य हैं? ये चीजें उनकी जानकारी के बिना विभाग से बाहर गईं, इसलिए उन्होंने अपना कर्तव्य नहीं निभाया! आपने उनके खिलाफ क्या कार्रवाई की? इसका क्या सबूत है? भले ही मेरे बेटे ने चोरी की हो, फिर भी वह आपके स्कूल का छात्र है, है ना? "जो लड़का आपके स्कूल में चार साल पढ़ा है, वह चोरी करता है, तो इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है? आपने उन चार सालों में मेरे बेटे को क्या सिखाया? हम आपको इतना पैसा क्यों दें? प्रधानाध्यापक इस बारे में क्या कहेंगे!" बाटिक शर्ट बेचने वाला दिल खोलकर हँसा, उसे पूरा यकीन था कि प्रधानाध्यापक अपने ही सवालों से शर्मिंदा हो जाएँगे।
"हमने स्कूल में अपना कर्तव्य निभाया है। अगर वे कहते हैं कि इतनी शिक्षा देने के बाद भी आपका बेटा चोरी करता है, तो इसका मतलब है कि चोरी उसके खून में है, आप क्या करेंगे?" चोगा और पायजामा पहने उस व्यक्ति ने फिर पूछा।
तो क्या मैं चोर हूँ? अगर वो इतना कहता है, तो सच है। अगर एक हफ्ते के अंदर उसकी नौकरी नहीं जाती, तो मैं अरोरा नहीं हूँ। मेरे चाचा केंद्र सरकार में उप मंत्री हैं। मेरे परदादा और उनके दादा रिश्तेदार हैं। शिक्षा मंत्रालय को बता दो कि उसकी नौकरी—ज्यादा दिन नहीं, आठ दिन में ही, लेकिन उसे निलंबित कर दिया जाएगा, ये पक्का है! मैं खुद हवाई जहाज से गया था और चाचा को चुनाव चंदे के लिए एक अटैची दिया था। क्या मज़ाक कर रहे हो! उसे इतनी हिम्मत कहाँ से मिलती है? लेकिन वो किस राज्य से है? चिट्ठी पर किसी बच्चे के हस्ताक्षर थे। यानी केरल से। अब मुझे सब समझ आ गया। शिक्षा, अनुशासन आदि देने वालों को ही सब कुछ समझा जाता है! अरे! अगर हम एक प्लेंच और एक स्पैनर ले जाते हैं, तो

उन्होंने इतना बड़ा मुद्दा बना दिया और हमें यहाँ बुला लिया! अगर हम ऐसा करते रहे, तो हमारे बच्चे कैसे बड़े होकर साहसी कैसे बनेंगे? वे व्यापार में कैसे उतरेंगे? फिर व्यापारिक साम्राज्य खड़ा करना तो बहुत मुश्किल होगा! हमारे कानून में चोरी शब्द की परिभाषा बदलनी चाहिए। अन्यथा, देश आगे नहीं बढ़ पाएगा! सच है या नहीं?
"विदेशियों ने ईस्ट इंडिया कंपनी के ज़रिए हमारे देश को लूटा। किसी ने उन्हें चोर नहीं कहा। अमेरिका घटिया दवाइयाँ और युद्धक विमान बेचकर पूरी दुनिया को लूटता है। किसी ने उन्हें चोर नहीं कहा। जापान बाज़ार में इलेक्ट्रॉनिक्स और ऑटोमोबाइल लाकर पूरी दुनिया को लूटता है..." जैसे ही वह बोल रहे थे, चोगे और पायजामे पहने एक व्यक्ति ने उन्हें बीच में ही रोक दिया।
मुकेश अरोरा ने शक्ति इलेक्ट्रिकल्स के माध्यम से कर्नाटक राज्य का सारा पैसा हड़प लिया।
इस पर दोनों जोर से हंस पड़े। अरोरा ने अपने दाहिने हाथ से ताली बजाई।
"अरे वाह!" उसने अपनी खुशी ज़ाहिर करते हुए कहा।
रवींद्र, जो असमंजस की स्थिति में वहाँ बैठा था, उसे केंद्र और राज्य के बीच संबंधों का एक और पहलू याद आया जिसके बारे में उसने कल लिखा था। फिलहाल, गड़बड़ करने की कोशिश कर रहे बच्चे का सवाल पीछे छूट गया।
प्रधानाध्यापक के सचिव एक और व्यक्ति को अंदर लाए। सोफे पर जगह न होने के कारण, वह सज्जन सामने रखी बेंत की कुर्सियों में से एक पर बैठ गए। अरोरा, जो काफी देर से लगातार बोल रहे थे, उन्हें देखकर खड़े हो गए।
“ओह जी हाँ! ज़वेरी साहब! हम पहले भी मिल चुके हैं। लेकिन आप म्या पालमरा को कैसे जानते हैं? मैं अरोरा स्थित शक्ति इलेक्ट्रिकल्स का इकलौता वितरक हूँ। उत्पादन संयंत्र फरीदाबाद में है। ये श्री सभरवाल हैं... विकास और निर्माण के क्षेत्र में...” इतना कहकर उन्होंने सभरवाल की ओर मुड़कर कहा, “ज़वेरी साहब को कौन नहीं जानता? सिर्फ बैंगलोर ही नहीं, बल्कि कर्नाटक का पूरा कपड़ा व्यवसाय उनके हाथों में है। बैंगलोर में उनकी आठ बहुमंज़िला इमारतें हैं। मुंबई में कपड़ा मिलें हैं! अब वे जापानी कंपनी नाकामुरा के सहयोग से यालहंक गाँव के पास एक स्कूटर फैक्ट्री शुरू कर रहे हैं।”
इस बात को लेकर कि इस बातूनी पंजाबी के साथ व्यापारिक मामलों पर चर्चा करना अनुचित होगा, ज़ावेरी ने अपनी जेब से एक सफेद रुमाल निकाला, अपने सोने के फ्रेम वाले चश्मे को पोंछा, उसे वापस लगाया और अपने सिर के ऊपर घूमते पंखे को देखने लगा।
लगभग पचास वर्ष का। दूधिया सफ़ेद धोती। खादी के कपड़े। उसी रंग की खादी की नेहरू कमीज। शरीर पर जंजीरों जैसी धन-दौलत का कोई निशान नहीं था। हाथ में चमड़े का थैला। अरोरा और सभरवाल के हाथों में कार की चाबियां थीं; लेकिन उनके पास भी नहीं थीं। आखिर उसकी क्या ज़रूरत थी, बताओ! बाहर कार में ड्राइवर बैठा था!
तीन-चार मिनट बाद प्रधानाध्यापक आए। उन्होंने उन चारों के सामने हाथ जोड़कर देरी के लिए क्षमा मांगी। फिर सभी अंदर चले गए।
लगभग पचास वर्ष के उस व्यक्ति के चेहरे और शरीर में केरल की विशिष्ट विशेषताएं थीं। घुंघराले बाल, चमकीली आंखें, गहरे रंग का सूट, गले में बंधी टाई। बैठते हुए उन्होंने उन चारों से सामने रखी लोहे की कुर्सियों पर बैठने का अनुरोध किया। फिर उन्होंने बोलना शुरू किया।
माफ़ कीजिए! लेकिन मुझे लगा कि आप सबको फ़ोन करके बताना ज़रूरी है, इसलिए मैंने आप सबको परेशान किया। चूंकि आप चारों ने मिलकर यह काम किया है, तो मुझे लगा कि अगर मैं आप चारों को एक साथ बुलाऊं तो शायद कुछ बात बन जाए। मैंने शिक्षा के क्षेत्र में कई साल बिताए हैं। मेरी नज़र में इसमें कुछ

भी नया नहीं है। जो भी करना हो, आपके सहयोग से ही करना चाहिए। खैर...आप चारों एक-दूसरे को जानते ही होंगे, है ना?
ज़वेरी ने रवींद्र की ओर हाथ हिलाते हुए कहा,
"हालांकि, इस सज्जन की पहचान नहीं हो पाई है।"
`हे मिस्टर बी. के. रवींद्र. `इंडियन ट्रिब्यून'चे बेंगळूर एडिशनचे रेसिडेंट एडिटर."
ज़वेरी खड़ा हुआ और उसने हाथ मिलाते हुए कहा,
वाह! आपसे मिलकर अच्छा लगा! इस समस्या से हमें बहुत फायदा हुआ, यानी हमें एक दूसरे को जानने का मौका मिला!
अरे वाह! हमें तो पहले पता ही नहीं था! आपके अखबार के मालिक, रांका जसवंत... वो तो हमारे करीबी हैं! पिछले महीने ही दिल्ली में एक पार्टी में उनसे मुलाकात हुई थी! क्या गजब का शख्स है! आठ पेग बीयर पिलाने के बावजूद भी वो बाहर नहीं निकले!
रविंद्र ने कुछ नहीं कहा। ज़ावेरी ने भी ऐसी गपशप में शामिल न होने का नाटक किया और प्रधानाध्यापक की ओर मुड़कर कहा,
"सब जानते हैं कि आपने संदेश क्यों भेजा। अगर आप सहमत हैं, तो मैं आपको इस संबंध में अपने विचार बताऊंगा। लेकिन चूंकि मुझे इस क्षेत्र में व्यापक अनुभव है, इसलिए मैं पहले ही बता देना चाहता हूं कि अंतिम निर्णय मेरा ही होगा।"
"कृपया! कृपया मुझे बताइए..." प्रधानाध्यापक ने सभी से बैठने का अनुरोध करते हुए कहा।
मैं पहले ही एक बात स्पष्ट कर देना चाहती हूँ। मैं अपने बच्चे को ज़्यादा पैसे नहीं देती। मेरा मानना है कि जो ज़िम्मेदारी नहीं समझते, उन्हें न तो पैसा मिलना चाहिए और न ही दौलत। अगर छोटे बच्चों के हाथों में ज़रूरत से ज़्यादा पैसा दे दिया जाए, तो उनके लिए गलत रास्ते पर जाना आसान हो जाता है। दिए गए पैसों का भी हिसाब रखना चाहिए और खुद के लिए भी जवाबदेही तय करनी चाहिए। बच्चे को खर्च का ब्योरा भी देना चाहिए, चाहे वो कुल मिलाकर ही क्यों न हो। मुझे लगता है कि हमारे बच्चों को चिकन खाने की आदत पड़ गई है। इसी वजह से वे चोरी कर रहे हैं। हो सकता है उन्होंने घर पर भी ऐसा किया हो, लेकिन हमें पता नहीं चला। भगवान की कृपा से मुझे पता चला है कि उन्होंने स्कूल में चोरी की है। मैं किसी के बच्चों को दोष नहीं देती। लेकिन हम शुद्ध शाकाहारी हैं। रिश्तेदार और दोस्तों के बीच भी ऐसी बातें नहीं होतीं। ऐसे माहौल में उसे चिकन की लत कैसे लग गई? कब लगी? कुल मिलाकर, चारों बच्चे चिकन खाने के लिए चोरी कर रहे हैं, यह साबित हो चुका है। अब मेरे बच्चे को इस संगत से बाहर निकालना ज़रूरी है। अगर स्कूल में ऐसा करना मुमकिन हो, तो ठीक है। अगर नहीं, तो उसे उसका टी.सी. दे दीजिए। मैं उसके लिए कोई दूसरा स्कूल ढूंढ लूंगी। अब, चोरी हुए सामान की कीमत क्या है? साथ ही, लाइब्रेरी से चोरी हुई किताबों की कीमत भी बताइए। मैं यह नहीं पूछूंगी कि इसमें मेरे बेटे का कितना हिस्सा है। कुल रकम - चाहे वह एक लाख ही क्यों न हो - मायने नहीं रखती। आप बताइए। जो हुआ उसके लिए मैं माफी भी मांगती हूं। अब से हम घर पर भी उस पर ज्यादा ध्यान देंगे।
प्रधानाध्यापक ध्यान से सुन रहे थे। ज़वेरी के बोलने के बाद भी उन्होंने तुरंत कुछ नहीं कहा। उनकी नज़र रवींद्र पर पड़ी। इसी क्षण अरोरा और सभरवाल ने अपने पैकेट से सिगरेट निकाली और उसे अपने मुंह में दबा लिया। दोनों ने सभरवाल की सिगरेट से अपनी-अपनी सिगरेट जलाई। धुआँ छोड़ते ही ज़वेरी खड़े हो गए और बोले,
"यह ज्ञान का मंदिर है। इस क्षेत्र में अनुशासन बनाए रखने के लिए, सभी को आपकी बात ध्यान से सुननी चाहिए। आप जो भी निर्णय लें, मुझे फोन पर बता

दीजिए, बात बन जाएगी। नमस्कार, रबींद्रभाइ, फिर मिलेंगे।" – और वह उठकर चले गए।
रविंद्र को एहसास हुआ कि प्रधानाध्यापक ने उनके धूम्रपान पर कोई आपत्ति नहीं जताई थी और वे चले गए थे। रविंद्र को भी धूम्रपान की आदत थी। लेकिन यह इतनी तीव्र नहीं थी कि निर्देश देते समय को छोड़कर, इसके बिना काम न चल सके। उसे यह भी एहसास हुआ कि हमारे यहाँ धूम्रपान करने की एक सीमा होती है, कि हम कहाँ धूम्रपान कर सकते हैं और कहाँ नहीं।
"अब हमें क्या करना चाहिए?" प्रधानाध्यापक ने बाकी तीनों की ओर हल्के से मुस्कुराते हुए कहा।
ज़वेरी के जाने के कारण के बारे में स्पष्टता की कमी से हैरान अरोरा ने कहा,
"बच्चों के हाथों ऐसा नहीं होना चाहिए था, लेकिन हो गया। हम क्या करें? जाने दो! अगर तुम्हारे बच्चों के हाथों ऐसा होता तो हम क्या करते? हम कुछ लाख रुपये दे देंगे, इसलिए हंगामा नहीं करेंगे। हमारी दुकान में जरूरत के हिसाब से सारे स्पैनर और काटने के औजार हैं। बच्चों की तरफ से हम आधे दर्जन भेज देंगे। फिर क्या बात है?"
"सही!" सभरवाल ने मंजूरी दे दी।
"हमारे स्कूल का एक अमेरिकी संगठन से संबंध है। उन्होंने हमें जो उपकरण दिए थे, वे चोरी के हैं। हमारे देश में तो वे दिखते भी नहीं। इसलिए उस दुकानदार ने उन्हें खरीदा! वरना कौन खरीदता?"
"अगर ऐसा है, तो उनकी कीमत का अनुमान लगाएं और चारों बच्चों के माता-पिता से उसका एक हिस्सा वसूल करें..." सभरवाल ने सुझाव दिया।
अरोरा ने कहा, "बिलकुल सही!"
"ऐसा होगा। आप अपने बच्चों को अलग-अलग स्कूलों में क्यों नहीं भेजते? क्योंकि यह सरकारी कर्मचारियों के बच्चों के लिए है जिनका तबादला एक राज्य से दूसरे राज्य में होता रहता है। आप इस गांव में व्यापार करते हुए बसे हुए हैं। ऊपर से आदेश आया है कि एडमिट कार्डों की जांच की जाए।"
अपनी आँखें झपकाते और होंठ काटते हुए अरोरा ने कहा,
प्रधानाध्यापक महोदय, मैं आपकी बात समझ गया। हम इस गाँव में बसे व्यापारी हैं। हमारे बंगले इसी गाँव में हैं, यह सच है! लेकिन फिर आपने आठ बहुमंजिला इमारतों के मालिक ज़वेरी के बेटे को अपने स्कूल में दाखिला कैसे दे दिया? आपने मेरे चाचा का नाम तो सुना ही होगा – लक्ष्मीकांत अरोरा। वे केंद्र में उपमंत्री हैं। इसमें कोई शक नहीं कि अगले फेरबदल में वे मंत्रिमंडल मंत्री बनेंगे। मैं उनसे पूछूंगा कि हमारे बच्चे इसी स्कूल में रहें या किसी दूसरे स्कूल में जाएँ! शिक्षा मंत्री से उनकी खास दोस्ती है। क्या इससे कुछ फ़ायदा होगा?
प्रधानाध्यापक का चेहरा भय से पीला पड़ गया। वे दोनों खड़े हो गए और
"ठीक है महोदय! आपने संदेश भेजा है, इसलिए हम समझ गए। और इसे देखिए। जैसा कि ज़ावेरी ने कहा, अंतिम निर्णय आपका है! ठीक है..." उसने कहा और हाथ में जलती हुई सिगरेट लिए चला गया।
अब तक रविंद्र भी एक निर्णय पर पहुँच चुका था। ज़ावेरी ने कहा कि उसे एहसास हुआ कि यह उसके बेटे पर भी लागू होता है।
कुछ क्षण खामोशी में बीत गए।
तब प्रधानाध्यापक ने कहा,
"देखिए महोदय! आप भी इतने बड़े अखबार में इतने महत्वपूर्ण पद पर हैं। अपने विषय को पढ़ाना तो आसान है, लेकिन प्रधानाध्यापक होना बहुत मुश्किल है! अब मैं यही करूंगा। मैं चारों लड़कों को अलग-अलग विभागों में रखूंगा। इससे उनके आपस में मिलने की संभावना कम हो जाएगी। मैं अन्य शिक्षकों से भी उन पर नजर रखने को कहूंगा। देखते हैं क्या होता है।"

यह देखकर कि फिलहाल मामला सुलझ गया है, रवींद्र ने पूछा,
"हम घर में भी पूरी तरह शाकाहारी हैं। मैंने अपने बेटे को कई बार अहिंसा और अन्य बातें समझाने की कोशिश की है। लेकिन उस पर कोई असर नहीं होता। उसे समझ ही नहीं आता कि क्या करना चाहिए।"
"महोदय, क्या मैं आपको बताऊँ? नैतिकता और सदाचार शाकाहार और मांसाहार पर निर्भर नहीं करते!"
यह महसूस करते हुए कि बच्चा स्वभाव से मांसाहारी था, रविंद्र ने विषय बदल दिया और खड़े होकर अगली बैठक में अन्य शिक्षकों के साथ अनूप के बारे में चर्चा करने की इच्छा व्यक्त की।
प्रधानाध्यापक उन्हें कार तक छोड़ने आए। रविंद्र ने गौर किया कि उन्हें यह विशेष सम्मान उनके प्रतिष्ठित पेशे के कारण मिल रहा है।

■

रवींद्र के मन में मांसाहार को लेकर कई तरह के मिश्रित विचार थे। वे जानते थे कि जानवरों में शाकाहारियों की संख्या सीमित है। साथ ही, यहां के बहुत कम धर्मों ने मांसाहार को वर्जित माना है। वैदिक धर्म भी मूलतः मांसाहारी था। यद्यपि बुद्ध जानवरों को अनावश्यक रूप से मारना वर्जित मानते थे, फिर भी उन्होंने मांसाहार का पालन किया। बुद्ध की मृत्यु भी दूषित मांस खाने के कारण हुई थी।
जैन धर्म में अहिंसा का कड़ाई से पालन किया जाता है। परिणामस्वरूप, ब्राह्मण समुदाय ने भी मांसाहार त्याग दिया। उन्होंने यज्ञों में पशु बलि देना भी बंद कर दिया। वहीं, जैन धर्म के अनुयायी देवताओं को पशु बलि देने की निंदा करते हुए इसे 'अप्रत्यक्ष हत्या' बताते हैं।
रवींद्र ने इस तरह की कई बातें पढ़ी थीं। उन्होंने यह भी देखा था कि नियमित मांसाहारी भी कुछ दिनों मांस नहीं खाते थे। उनके समय में, उनके मित्र मरियप्पा गौड़ा के घर पर, मांस बाहर आंगन में पकाया जाता था और बाकी खाना रसोई में बनता था। इससे पता चलता है कि मांसाहारियों की भी इस बारे में अलग सोच थी। इसी बात को ध्यान में रखते हुए महात्मा गांधी ने भी अपनी आचार संहिता में अहिंसा को स्थान दिया।
लेकिन आजादी के तुरंत बाद, उदाहरण के लिए, गांधी जी की हत्या कर दी गई। देश की खान-पान व्यवस्था में भी बदलाव आया। अब शाकाहारी और मांसाहारी होटलों की संख्या इतनी अधिक हो गई है कि अकेला शाकाहारी होटल ढूंढना मुश्किल हो गया है! और सभी जातियों के बच्चे इन होटलों में इसलिए जाते हैं ताकि वे पिछड़ेपन का एहसास न करें। शादी का फैसला करते समय भी यह एक महत्वपूर्ण शर्त है। पिछले साल गुजरात की अपनी यात्रा के दौरान उन्होंने यह देखा था। इसे क्षेत्र में भी, जहां समाज का अस्सी प्रतिशत हिस्सा शाकाहारी है, वहां केवल मांसाहारी होटल ही दिखाई देते थे।
इसी बीच, उसने सोचा, "क्या मैं ही अनूप के मांसाहार के प्रति अतिवादी रुख नहीं अपना रहा हूँ?" मैं इसे अतिवादी रुख कैसे कह सकता हूँ? जब मैं होटल में खाना खाता हूं, तो मैं भी अपनी शाकाहारी थाली अपने दोस्तों की मांसाहारी थाली के बगल में रख देता हूं। या फिर एक दोस्त और एक असली बच्चे के लिए यह अलग-अलग होता है?
इस संदर्भ में, उन्होंने दिल्ली में पढ़ाई के दौरान घटी एक घटना को याद किया। हालाँकि उन्हें फुटबॉल में नाम कमाने की प्रबल इच्छा थी, लेकिन उनमें पर्याप्त शारीरिक क्षमता नहीं थी। खेल शिक्षक ने पूछा,
आपकी जाति क्या है?
``ब्राह्मण."
``कश्मीरी हो या उत्तर प्रदेश से?"
``कर्नाटक ब्राह्मण।"

तो? क्या आप मांस खाते हैं?
``छेः! थूः!"
थू: तुम क्या कर रहे हो? ये हमारा खाना है। रोज़ एक थाली बिरयानी खाए बिना फुटबॉल खेलना नामुमकिन है! वरना, बच्चों की तरह बैडमिंटन खेलो।
उस उम्र में वह कितना गुस्से में रहता था! उसने तो यहाँ तक तय कर लिया था कि वह हर दिन बिरयानी खाएगा और एक बेहतर फुटबॉल खिलाड़ी बनेगा।
इसी तरह, घर से दूर अजमेर रोड के एक होटल में बैठकर मैंने बिरयानी मंगवाई! बिरयानी मेरे सामने आई और मेरा मन चावल और मांस के टुकड़ों को अलग-अलग समझने लगा। मुझे अपनी नानी के घर की गाय - सीताम्मा - याद आने लगी। उसकी प्यारी आँखें, मेरे पास आते ही उसका स्नेह से सूंघना, उसकी नम नाक का स्पर्श, उसके सींग - सब कितने सुंदर थे! उसने कभी किसी को मारा नहीं, कभी किसी को लात नहीं मारी।
उन्हें गौरी का त्योहार भली-भांति याद था। हरे रेशमी वस्त्र पहने, गालों पर हल्दी और माथे पर ढेर सारा केसर, कानों में हीरे की बालियां, दोनों नथुनों में मोती और झिलमिलाते गहने, गले में सोने का दुपट्टा, छोटी सी जूड़ी पर शेवंती की बड़ी चोटी! त्योहार के दिन सीताम्मा भी गालों पर हल्दी और माथे पर केसर लगाती थीं। गले में शेवंती की माला, सींगों पर गुजरा, नानी और सीताम्मा – सीताम्मा और नानी।
क्या तुमने सीताम्मा-अ-अज्जी की हत्या करके यह बिरयानी नहीं बनाई?
होटल मालिक ने रविंद्र को देखा, जो अपने सामने बिरयानी की थाली लिए रो रहा था। वह उसके पास गया और उससे पूछा। वह अजनबी से क्या कहता? लेकिन जब उसने बार-बार उसका हाथ पीछे करके पूछा, तो रविंद्र ने अपने मन की बात कह दी।
होटल मालिक ने पूछा,
उस गुरु का नाम क्या है?
``असुलम..."
अरे हाँ! क्या तुम किसी ब्राह्मण के बेटे को बहकाने की कोशिश कर रही हो? अरे, मेरा भाई पहलवान है! उसने पूरे पंजाब को जीत लिया है! वह अंडे या मांस नहीं खाता। उसने दूध, बादाम की खीर और पिस्ता खाकर ताकत हासिल की है! तुम भी ऐसा कर सकती हो। फुटबॉल क्या है! अरे, अगर तुम खाने वाली जाति में नहीं खाती हो, तो यह एक नेक काम है; और अगर तुम खाने वाली जाति में नहीं खाती हो, तो यह एक बड़ा पाप है!
पुण्य और पाप के विचार... आह, ये धारणाएँ बचपन से ही मन में घर कर जाती हैं। उसके बाद, ये बढ़ती जाती हैं, बस ज्ञान और अनुभव की बारीकियाँ ही रह जाती हैं। मेरी नानी के घर में मुझे जो संस्कृति मिली, वो अलग थी और अनुप जिस प्रभाव में पला-बढ़ा, वो भी अलग था! माँ, उनके पति, टीवी, सिनेमा, अरोरा-सभरल जैसे दोस्त...
अनुपवर के प्रति उनके हृदय में जो क्रोध था, वह शांत हो गया। हमें भी उन्हें धैर्यपूर्वक समझना चाहिए।

■

मूर्ति चोरी होने की खबर अखबारों में छपने के बावजूद सरकार की ओर से कोई कार्रवाई नहीं की गई, लेकिन आम पाठकों से इसे अच्छी प्रतिक्रिया मिली। कुछ चुनिंदा पत्रों को भी प्रकाशित किया गया।
हालांकि, रविंद्र को यह बात समझ में आई कि चोरी मंदिर के लकड़ी के दरवाज़े के क्षतिग्रस्त होने के कारण हुई थी। अगर हम दरवाजे की मरम्मत करवा दें, तो चोरी नहीं होगी और मंदिर में तोड़फोड़ भी नहीं होगी। हमें गांव जाना चाहिए, गांव के प्रतिष्ठित लोगों की बैठक बुलानी चाहिए, उन्हें मंदिर का सांस्कृतिक महत्व समझाना चाहिए, ताकि बाद में वे सभी मंदिर की रक्षा करें।

एक हफ्ते के भीतर ही यह विचार इतना प्रबल हो गया कि उसने तीन दिन की छुट्टी लेकर जाने का फैसला कर लिया। कार ले जाने में उसे कोई दिक्कत नहीं थी, लेकिन उतरने की जगह अभी तय नहीं हुई थी।
बसवनपुर जाने के दो रास्ते थे। एक रास्ता कुनिगल-हिरेसावाया मार्ग से भी जा सकता था। लेकिन चूंकि उन्हें पहले चन्नरायपटना-तिपट्टूर बस मिल गई थी, इसलिए उन्होंने उसी बस में सवार हो गए।
बेंगलोर-यशवंतपुर-नेलमांगल: दाईं ओर शिव गंगा पहाड़ियाँ, बाईं ओर फैले खेत, सड़क के दोनों ओर बरगद के पेड़।
जब हम गाँव पहुँचे, तो डाकघर में रुकें या होटल में? मैं दौड़कर अपने गाँव गया! लेकिन वहाँ रहने के लिए कोई घर नहीं था! दादी जा चुकी थीं। छह महीने बाद दादाजी भी चल बसे। जिन्होंने उनका जीवन देखा था, उन्हें इस बात पर कोई आश्चर्य नहीं हुआ।
मेरे दादाजी ने अपनी ज़मीन पर गाँव के लिए एक अस्पताल बनवाया था, और उस दिन हमारे घर पर पंचक्रोश के सभी नेताओं, अधिकारियों और अन्य गणमान्य व्यक्तियों के लिए एक भव्य भोज का आयोजन किया गया था। मुझे अच्छी तरह याद है कि मैं अपने माता-पिता के साथ इस विशेष समारोह में शामिल होने आया था। वहाँ मौजूद सभी लोग इस बात से बहुत प्रसन्न थे कि अप्पा दिल्ली में एक बड़े अधिकारी थे। पूरा गाँव उनकी इस प्रशंसा से अभिभूत था।
आज ऐसे गाँव में हमें कहाँ बसना चाहिए? उसने मना कर दिया, पर यह सोचकर उसे दुख हुआ। फिर उसे याद आया... दादाजी के मरने के बाद हम इस गाँव में कहाँ गए थे? अप्पा पहले दो बार यहाँ आ चुके थे और उन्होंने घर और खेत के लिए कुछ इंतज़ाम किए थे। एक बड़ा पुराना घर। उन्होंने दो मालिकों को उस घर में रहने के लिए कहा था और किराया देने के बजाय, उन्होंने तय किया था कि घर की मरम्मत और साल में एक बार सफेदी करना ही काफ़ी है। इसके अलावा और कुछ करना मुमकिन नहीं था। यह तय हुआ था कि खेतों और घरों में काम करने वाले किसानों को ज़मीन का एक हिस्सा दिया जाएगा और वे हर साल छह मन चावल, पाँच मन चना और दस हज़ार नारियल देंगे। यह उनकी कुल आमदनी का दो आना भी नहीं था।
दरअसल, अप्पा अपनी सारी संपत्ति किसी भी कीमत पर बेच सकते थे। लेकिन माता-पिता के चले जाने और स्वतंत्र होने के तुरंत बाद सब कुछ बेचना उन्हें ठीक नहीं लगा। इसके अलावा, उन्हें उस पैसे की ज़रूरत भी नहीं थी। शायद उनके पास इसके बारे में हर समय सोचने का समय भी नहीं होता। इसलिए, छुट्टी खत्म होते ही वे जल्दी से बेंगलोर गए और फिर दिल्ली वापस आ गए।
यहां किराया न देने वाले दोनों मालिकों ने न तो घर को रंगा और न ही ज़मीन को समतल किया। इसी वजह से ज़मीन खुदी हुई थी और कीचड़ का ढेर बन गई थी। घर समतल न होने के कारण मानसून के दौरान छत से रिसने वाला पानी दीवारों में जमा हो जाता था। यह सोचकर कि अगर ऐसा नहीं हुआ तो हमें इस साल के अंत तक यह गांव छोड़ना पड़ेगा, उन मालिकों ने घर में इस्तेमाल होने वाली लकड़ी को जलावन के रूप में इस्तेमाल करना शुरू कर दिया। न केवल खाना पकाने के लिए, बल्कि नहाने के लिए पानी गर्म करने के लिए भी! जब उनका तबादला हुआ, तो उन्होंने हमें चार लाइन का कार्ड तक नहीं दिया। अगले मानसून में, बारिश से भीगी हुई दीवारें बिना सहारे के ज़मीन पर गिर गईं! उसके बाद, ग्रामीणों ने एक-दूसरे की अनदेखी करते हुए, रातोंरात बची हुई कुछ बीम और खंभों को भी उखाड़ फेंका।
किसानों को दी गई ज़मीनों की कहानी कुछ और ही थी। उन्होंने तयशुदा रकम कभी नहीं चुकाई। दो-तीन साल बाद भी अप्पा गाँव जाकर कहते, "मैं क्या कहूँ? बारिश नहीं हो रही... पानी नहीं है, बुवाई का सारा पैसा भी बर्बाद हो गया! मैं क्या

कहूँ... साहब, अभी इतना ले लीजिएँ, बाकी बाद में दे दूंगा।" ऐसा कहकर वे सौ रुपये उनके चरणों में रखकर प्रणाम करते और कहते! बाद में देवराज अरसा ने एक कानून लाया, "किसान, उसकी ज़मीन।" उस समय इन लोगों ने खुद को यहाँ रैयत घोषित कर दिया। दिल्ली दरबार में उच्च पद पर आसीन अप्पा के लिए ज़मीन को बचाना नामुमकिन नहीं था। एक बार मैंने भी उनसे यही सवाल पूछा था। तब उन्होंने कहा था,
"जो मेहनती होता है वही मालिक होता है, मैं भी इससे सहमत हूँ!"
हमारे कैम्पन्ना और कपियप्पा अग्रिम रूप से कुछ भी देने में आनाकानी करते थे। कानून के आने के बाद क्या हुआ? किसानों में सत्य और न्याय कब से पूरी तरह नष्ट हो गए? स्वतंत्रता के बाद? या यह पहले से ही ऐसा था? किसानों के पसीने का शोषण हुआ है, यह सच है। लेकिन सभी शोषित लोगों को भावनात्मक बचकानेपन से यह कहते हुए देखना कि वे सच बोल रहे हैं, चक्कर आने जैसा लगता है!
लेकिन फिर उन्होंने शिकायत क्यों नहीं की? वे हर किसी से घृणा करते थे। यह अप्पा के स्वभाव की विशेषता थी। उन्होंने स्वयं अपने पूरे जीवन में कभी रिश्वत का एक पैसा भी नहीं लिया। उन्होंने अपना काम पूरी ईमानदारी से किया। यद्यपि उन्होंने ब्रिटिश शासन के दौरान अपना काम शुरू किया था, फिर भी महात्मा गांधी के प्रति उनके मन में अपार आदर था। 'स्वराज का अर्थ है स्वयं पर शासन करना। इसलिए, पहले स्वयं को अनुशासित करना आवश्यक है। चरित्र आवश्यक है। यदि नहीं, तो इन लोगों ने स्वराज कैसे प्राप्त किया?' वे कहा करते थे। 'जो लोग आशा और प्रलोभन, रिश्वत और जबरन वसूली, स्वार्थ और आत्म-प्रलोभन से जूझते हैं, उन्हें स्वतंत्रता कैसे दी जा सकती है? वे भारतीय स्वतंत्रता के योग्य बिलकुल नहीं हैं। किसी को उन्हें ऊपर से धक्का देना चाहिए। जैसे इंदिरा गांधी ने! यदि नहीं, तो उन्हें महात्मा गांधी की तरह नैतिक बल से प्रभुत्व स्थापित करना चाहिए! कुल मिलाकर क्या? वे अनुयायी बनने के योग्य हैं! यदि उन पर महात्मा गांधी का प्रभाव नहीं है, तो उनमें नैतिक रूप से कार्य करने की शक्ति नहीं होगी और यदि इंदिरा गांधी नहीं हैं, तो उनमें राष्ट्र का गौरव बढ़ाने की शक्ति नहीं होगी! क्या ऐसे लोगों के लिए कभी स्वतंत्रता प्राप्त करना संभव है?' वे कितनी उग्रता से बहस करते थे!
अप्पा के गुज़र जाने को छह साल हो गए हैं। अंत तक वे एक तरह से अलग-थलग ही रहे। क्या यह अलगाव बाहरी दुनिया के प्रति उनकी नफ़रत को ज़ाहिर करने का तरीका था? या फिर अहंकार का एक रूप? उनका स्वभाव तो शुरू से ही इतना कठोर था!
उसने खिड़की से बाहर देखा।
अब शिव गंगा का विशाल पर्वत दिखाई नहीं दे रहा था।
साठ वर्ष के, सफ़ेद बालों वाले, वे ऋषिकेश से नरेंद्रनगर जाने वाले रास्ते पर बने एक छोटे से कमरे में अकेले रहते थे। एक आदमी रोज़ वहाँ झाड़-पोछा करने, खाना बनाने और खाना लाने जाता था। वे बेंत की कुर्सी पर बैठकर मनचाही किताबें पढ़ते थे, सप्ताह में एक बार गाँव आकर किसी संन्यासी से अपनी परेशानी के बारे में पूछते और अपने संदेह दूर करते थे, वे दिल्ली से भौतिक विज्ञान की किताबें लाकर उन्हें देते थे। उनकी पेंशन हर महीने की पहली तारीख को ऋषिकेश के स्टेट बैंक में जमा होती थी। वे रोज़ाना अख़बार ज़रूर पढ़ते थे।
अप्पा को अकेले रहने से कभी ऊब नहीं होती थी। यहाँ तक कि जब अम्मा तीन महीने के लिए अपनी माँ के घर गई थीं, तब भी उन्होंने कभी शिकायत नहीं की।
जब मैं उनसे मिलने गया, तो मैंने पूछा,
"आप भगवा कफ़न क्यों नहीं पहनते?"
"मैं न तो साधु हूँ और न ही संन्यासी। पहले यह एक वनप्रस्थाश्रम जैसा था। मुझे बताओ, पत्नी के चले जाने के बाद और क्या बचता है?" उसने उत्तर दिया था।
"तो फिर आप सरकारी पेंशन क्यों लेते हैं?"

"मैं किसी और पर बोझ क्यों बनूं? मैंने पूरी जिंदगी सरकार के लिए अपनी पूरी क्षमता से काम किया है। बुढ़ापे में, वे मेरे खाने-पीने का ख्याल रख रहे हैं, बस इतना ही!"
वे अपने बुढ़ापे में अपने इकलौते बच्चे के साथ रहने, अपनी बहू द्वारा पकाए गए गर्म भोजन खाने और अपने पोते को बड़े होते हुए देखकर अपने बचपन को याद करने की इच्छा नहीं रखते थे।
एक दिन, बिना मेरे दरवाजे पर आए या मुझे कोई संदेश भेजे, उनकी मृत्यु हो गई। मैं उनकी बात ठीक से समझ भी नहीं पाई।
रविंद्र का मन कठोर हो गया। मेरे पिता के लिए इस तरह अपने अधिकार का दुरुपयोग करना और हमारे गांव के पास की जमीन को हाथ से जाने न देना कैसे संभव था?
कुनिगल पीछे रह गया। वही सवाल उसके मन में फिर से उठने लगा। क्या उसे चन्नरायपट्टन में रुकना चाहिए या सीधे अपने गाँव जाना चाहिए? बाद में उसने सोचा, यह इतना गंभीर सवाल नहीं है। पहले तो उसे चन्नरायपट्टन में ही रुकने का इंतज़ाम कर लेना चाहिए। अगर गाँव में कोई उसे बहुत ज़िद करे, तो वह चन्नरायपट्टन में अपने सहायक को साथ ले जा सकता है। इसमें इतनी गंभीरता से सोचने की क्या ज़रूरत है? बाद में उसे एहसास हुआ कि इतने दिनों बाद जब वह अपने गाँव जा रहा है, तो वहाँ कोई उसका स्वागत नहीं करेगा। वह इस मुद्दे को लेकर गंभीर हो गया था। एक पल के लिए उसे लगा कि उसने इतनी उत्सुकता से क्यों शुरुआत की! बेहतर होगा कि वह चन्नरायपट्टन में ही उतर जाए और उसी रास्ते से बेंगलुरु लौट जाए। गाँवों में कितनी ही नक्काशीदार मूर्तियाँ, खंभे और मेहराबें चोरी हो जाती हैं। मैं इस घटना को बेवजह इतना महत्व क्यों दे रहा था... मैंने ऐसा क्यों कहा, यह मेरी नानी का गाँव है - मेरे दादा का गाँव है! ज़मीन भले ही खो गई हो, घर भले ही जर्जर हो गया हो, लेकिन क्या वो गाँव का मंदिर जहाँ मैं बचपन में खेलता था, उसकी परछाई नहीं है? क्या तुम्हें वो बातें याद हैं जो तुम्हारी दादी ने तुम्हें बचपन में सुनाई थीं? मुझे तुम्हारे दादाजी के हाथ का तुम्हारी पीठ पर स्पर्श साफ़ याद है। और मेरे भाई-बहन जो मेरे पढ़ाई के समय मेरे साथ थे?
ओह, हाँ! क्या गाँव में इनमें से कोई रिश्तेदार नहीं है? आपको किसी के घर जाकर पूछताछ करनी चाहिए। फिर देखना आगे क्या होता है। अगर कोई आपको घर नहीं बुलाता, तो आप शाम को बस लेकर पैदल वापस आने के बारे में सोच सकते हैं। उस समय के दोस्त - मारियाप्पा गौड़ा, अनंत, चन्नावीरिया, उद्दुरप्पा, शिवन्ना, पंचकशुरी... ओह, वाह! अगर आप सोचें तो आपको कितने लोग याद हैं! वॉलीबॉल कोर्ट के दोस्त। कोई नहीं... स्कूल का सिपाही - चिन्नन्ना - अब बूढ़ा हो गया होगा - लेकिन वह ज़रूर ज़िंदा है! कृष्णा गौड़ा कितना शानदार खिलाड़ी था! अगर उसके सामने लालची बोरेगौड़ा भी होता - तो वह गेंद को बिना छुए ही सिर से मार देता। उनमें से कुछ, भले ही वे अकेले हों, आपसे ज़रूर मिलेंगे। आखिर में, जिस स्कूल में मैंने पढ़ाई की, भले ही मैं स्कूल के बरामदे में सोता था, फिर भी काम चल जाता था।
इस विचार के साथ ही, प्रश्न का समाधान प्रतीत हो गया।
चन्नरायपट्टना बस स्टैंड पर उतरकर बसवनपुर जाने वाली बस का इंतजार करते समय, मैंने देखा कि मेरे सामने खड़ा एक व्यक्ति कुछ देर तक मुझे घूरता रहा। थोड़ी देर बाद, वह सज्जन उसके पास गए और बोले,
नमस्कार! क्या आप बी.के. रविंद्र हैं? 'इंडियन ट्रिब्यून' के संपादक?
"हां," उसने उस व्यक्ति की ओर देखते हुए उत्तर दिया।
"क्या आप मुझे जानते हैं? तो मुझे मेरा नाम बताइए।"
उसने बहुत दिमाग लगाया, लेकिन उसे याद नहीं आया कि वह क्या था। पर उसे धुंधला-सा याद था कि उसने उसे कहीं देखा था... बहुत-बहुत पहले।

"जब मैं मॉडेल स्कूल में था, तब मेरा एक दोस्त था जिसका नाम राजशेखर था। याद है?"
"अरे, हमारी मुलाकात को तीस साल हो गए!" रविंद्र ने स्नेहपूर्वक उसका हाथ पकड़ते हुए ईमानदारी से कहा।
राजशेखर ने तुरंत अंग्रेजी में कहा,
मुझे पता है आप कहाँ हैं, क्या कर रहे हैं। इस साल आप बैंगलोर शाखा संपादकीय संघ के अध्यक्ष चुने गए हैं, है ना? मैं आपका अखबार रोज़ पढ़ता हूं। एक बात और सुनिए। अंग्रेज़ी अखबार के अलावा, मैं कन्नड़ अखबार को हाथ भी नहीं लगाता। क्योंकि मैं हाई स्कूलों में अंग्रेज़ी पढ़ाता हूँ। कन्नड़ अखबारों का कोई मानक नहीं है, महोदय! एक बार मैंने आपके अखबार में एक पत्र दिया था। वह छपा हुआ आया है। मैंने उसकी कटिंग संभाल कर रखी है। मैं आपको दिखाऊँगा। आप इस बस स्टॉप पर खड़े हैं, इसलिए मुझे लगता है कि आप अपने गाँव गए हैं! आइए, हमारे घर में ठहरिए। एक अलग कमरा है। चारपाई और मच्छरदानी भी है। मैंने हाल ही में घर बनवाया है। मेरे जीजाजी पीडब्ल्यूडी में इंजीनियर हैं। उन्होंने खुद ही घर का नक्शा बनाया था।
रवींद्र की समस्या हल हो गई है। इसके साथ ही एक बचपन के दोस्त से भी मुलाकात हुई। उनसे कुछ अन्य दोस्तों के बारे में भी जानकारी मिलेगी। इसके बाद उनमें से कुछ से अवश्य मुलाकात की जाएगी। इसके साथ ही, चार-छह और ग्रामीणों को शामिल करके मंदिर के लिए एक स्थानीय समिति का गठन किया जा सकता है।
रविंद्र के मन में विचारों का तांता लग गया।

■

अगले सोलह मील तक अपने दोस्त के बगल में बैठे हुए, रविंद्र ने उससे अनगिनत सवाल पूछे, जैसे, "आजकल फलां व्यक्ति कहां है... वह क्या करता है... अब वह कैसा है... क्या उसकी फलां समस्या हल हो गई है या नहीं?"
जब बस बासवनपुर बस स्टैंड पर रुकी तो रविंद्र आश्चर्यचकित रह गया।
बस स्टैंड से पूर्व दिशा में दो फर्लांग दूर एक गाँव था। बीचोंबीच सड़क के दोनों ओर बबूल और डहलिया के बड़े-बड़े पेड़ थे। बीचोंबीच बाईं ओर हमारा स्कूल था, जहाँ हम पढ़ते थे, माध्यमिक विद्यालय। उसके पीछे एक विशाल खेल का मैदान था। दाईं ओर खुला मैदान था। बाद में, वहाँ एक अस्पताल की इमारत बनी, जिसे मेरे दादाजी ने मुझे एक एकड़ ज़मीन देकर एक लाख रुपये की लागत से बनवाया था। सड़क के पास एक बाज़ार था। वहाँ बहुत सारे पेड़ थे। कुछ स्वादिष्ट जामुन के पेड़ भी थे। सोमवार को वहाँ बाज़ार लगता था। वहाँ के पेड़ों की छाया इतनी घनी और शांत थी कि अगर आप गाँव से आकर उस छाया में बैठते, तो आपको ऐसा लगता जैसे आप किसी सुनसान जंगल में आ गए हों।
अब रविंद्र ने देखा कि वहां के अधिकांश पेड़ काट दिए गए थे। सारे पेड़ जड़ से उखाड़कर वहाँ एक बिजली कॉलोनी बना दी गई थी। बस स्टैंड के दोनों ओर कागज़ की मदद से दस, पंद्रह, बीस, तीस होटल और नाई की दुकानें खड़ी कर दी गई थीं। सड़क के दोनों ओर के बड़े-बड़े पेड़ भी पूरी तरह नष्ट कर दिए गए थे।
दोस्त ने खुलासा किया,
"अगर घर के पास इतने बड़े पेड़ हों, तो उनकी जड़ें घर की नींव को छूकर उसे उखाड़ देंगी! इसीलिए पेड़ों को काटना ज़रूरी था। कुछ पेड़ों को तो जड़ों पर तेजाब डालकर जलाना भी पड़ा।"
राजशेखर की व्याख्या सुनते समय, वहाँ मौजूद हर घर से फिल्मी गाने ज़ोर-ज़ोर से सुनाई दे रहे थे। होटलों और नाई की दुकानों में लगे लाउडस्पीकरों से भी वही गाने बज रहे थे। उनके सामने की दुकानों से "शरण अय्यप्पा-अय्यप्पा अय्यप्पा-" के धार्मिक गीत बज रहे थे।

जैसे ही उसने दाईं ओर अपने दादा द्वारा निर्मित इमारत को देखा, वह सदमे से अपने कदम रोक बैठा।
उस समय योजना यह थी कि पूरे एक एकड़ ज़मीन के बीचोंबीच एक अस्पताल भवन बनाया जाए और उसके चारों ओर छाया देने के लिए बड़े-बड़े पेड़ लगाए जाएं। अब उस परिसर में दो इमारतें बन चुकी हैं। एक ग्रामीण बैंक की इमारत है और दूसरी राजस्व निरीक्षक का कार्यालय। अस्पताल आने वाले मरीज़ों और उनके परिजनों को यहाँ चैन की कोई जगह नहीं है! दूसरे ज़िलों के लोगों को यहाँ इमारतें बनाने की अनुमति किसने दी? स्वास्थ्य विभाग ने भी इस पर सहमति क्यों दी? मूल दानदाता की इच्छा का उल्लंघन करते हुए बैंक और राजस्व खाते के लिए ज़मीन देने का कानूनी या नैतिक अधिकार किसे है?
जब रवींद्र ने अपने बगल में खड़े राजशेखर से अपनी इच्छा व्यक्त की, तो सब कुछ सुनकर राजशेखर ने हैरानी से कहा,
"जी हाँ? यह ज़मीन आपके दादाजी ने दान में दी थी?"
"सिर्फ जमीन ही नहीं - क्या सामने वाली इमारत भी नहीं है? उन्होंने अस्पताल के लिए वह इमारत भी बनवाई थी, जिस पर एक लाख रुपये खर्च हुए थे..."
"क्या ऐसा है? लेकिन क्या इसका कोई सबूत है?"
“क्या आप मुझसे मज़ाक कर रहे हैं, या आपको सचमुच यह नहीं पता?” रविंद्र ने आश्चर्य से पूछा, “अरे, उस समय मंत्री जी भूमि पूजन के लिए आए थे। आजादी के बाद गांधी टोपी पहने मंत्री जी पहली बार गांव आए थे... उन्होंने उस कार्यक्रम का आयोजन बड़े धूमधाम से किया था... क्या आपको सच में याद नहीं है? जी हाँ... उधर दूसरी तरफ देखिए... काले संगमरमर पर सुनहरे अक्षरों में लिखा है कि मेरे दादाजी ने अपने माता-पिता कौशल्याम और सुब्बारामय्या की याद में, बसवनपुर के श्री वेंकटसुब्बय्या और उनके परिवार शांताम्मा की याद में, यह जमीन और इस पर एक लाख रुपये की लागत से बनी यह इमारत स्थानीय निधि अस्पताल के लिए दान की थी। इस पर तारीख भी खुदी हुई है...”
"क्या ऐसा है? चलो देखते हैं..." राजशेखर ने उस दिशा में कदम बढ़ाते हुए कहा।
ये तो हमारा दोस्त है, जो इसी गाँव में पला-बढ़ा है, शिक्षक बना है! क्या उसे गाँव से जुड़ी इतनी महत्वपूर्ण घटना के बारे में पता नहीं है? उस समय मंत्री जी ने भी अपने भाषण में कहा था... आगे चलकर इस पंचक्रोशी में इस अस्पताल को वेंकटसुब्बय्या अस्पताल के नाम से जाना जाना चाहिए। क्यों, कौन जाने, रविंद्र ने भी सोचा... अब तो इस अस्पताल को सुब्बय्या अस्पताल के नाम से ही जाना जाना चाहिए। और यहाँ देखो तो आम लोग तो दूर ही रहते हैं, सिर्फ राजशेखर जैसा गाँव का जानकार ही इस बात से अनजान है। इसका क्या मतलब है?
रविंद्र राजशेखर के पीछे-पीछे इमारत तक गया। सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद, उसके सामने काले फर्श पर सुनहरे अक्षरों में एक शिलालेख दिखाई दिया। यह सोचकर उसकी धड़कन तेज़ हो गई कि अब उसे अपने दादा-दादी और परदादा-परदादी के नाम दिखाई देंगे।
बड़ी उत्सुकता से उन्होंने उस पर लिखे अक्षर पढ़े। 'यह स्थानीय निधि अस्पताल भवन कर्नाटक राज्य के स्वास्थ्य मंत्री श्री रामेगौड़ा, जिले के लोकसभा सांसद श्री जे. पी. नरसिम्हा गौड़ा और तालुका के विधायक श्री हुलिकेरे शांतेगौड़ा की बसवनपुर यात्रा की स्मृति में जनता को समर्पित किया जा रहा है।' नीचे तिथि भी लिखी हुई थी।
रविंद्र का दिमाग कुछ देर के लिए सुन्न पड़ गया। उसे लगा जैसे पेट में सब कुछ बिखर जाएगा। राजशेखर की निगाहों से नज़रें मिलाने में उसे शर्मिंदगी महसूस हुई और उसका चेहरा लाल हो गया। राजशेखर घोड़े की तरह ज़ोर से हँसा।
"यह सब कब हुआ, राजशेखर?" रविंद्र ने पूछा, उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे।

"वहाँ तो तारीख भी लिखी हुई है... तुम खुद पढ़ लो!"
"यह किसने किया? क्या इन ग्रामीणों में कृतज्ञता की कोई भावना है?" दुखी रविंद्र ने पूछा।
"चलो पहले घर चलते हैं। एक कप कॉफ़ी पी लेते हैं। फिर मैं तुम्हें सब कुछ बताऊँगी। अगर तुम कभी वापस आए, तो बहुत बड़ी मुसीबत में पड़ जाओगे। सोचो हम जैसे गाँव में रहने वाले लोगों का क्या हाल होता होगा! चलो घर चलते हैं।"
रविंद्र को यह भी याद था कि राजशेखर का घर उसके घर के पीछे वाली गली में था। हालांकि, गांव के अंदर ज्यादा फर्क नहीं था। फर्क सिर्फ घरों की छतों में था। साधारण टाइलों की जगह मैंगलोर टाइलें दिखाई दे रही थीं। कुछ घरों पर सीमेंट की छतें और छज्जे भी नज़र आ रहे थे।
राजशेखर का घर सीमेंट का बना था। उनकी पत्नी तिप्तूर की रहने वाली थीं, जो उनकी दूर की रिश्तेदार थीं। उन्होंने बताया कि उनकी मां अभी जीवित हैं और उसी गांव में रहती हैं। लेकिन उनके पिता मल्लिकार्जुन का 15 साल पहले निधन हो गया था।
रवींद्र को ऊपर एक अलग कमरे में ले जाने के बाद, राजशेखर वहाँ बैठकर कॉफी और चाय पीते हुए बोले,
"वे इस बात पर अड़े हैं कि सब कुछ उन्हीं का होना चाहिए, न केवल पूरे तालुका में, बल्कि पूरे जिले में। वे इतने अहंकारी हैं कि जो कुछ भी हो, उनके नाम पर ही होना चाहिए!"
कॉफी और स्लश पीने के बाद रविंद्र को थोड़ा बेहतर महसूस हुआ। उसे समझ नहीं आया कि राजशेखर किसके बारे में बात कर रहा था। उसने पूछा,
कौन?
मुझे यह भी स्पष्ट करना होगा? उस जाति से जो शराब पीती है और मांस खाती है! आप कुछ भी कह लें, शाकाहारियों को मांसाहारियों जितना आनंद नहीं मिलता। उनमें अंधकार है! ये लोग तो काली जाति से हैं!
अब रवींद्र को थोड़ी और समझ आ गई थी। वह जानता था कि किसी भी वैज्ञानिक ने यह साबित नहीं किया था कि मांस खाने से तामसी (तमाशी) बढ़ती है। लेकिन अब राजशेखर उसके चेहरे को देख रहा था। उसने आगे कहा,
पूरे गांव को पता है कि अस्पताल तुम्हारे दादाजी के दान से बना है। तुम्हें क्या लगता है? क्या इन लोगों को यह बात नहीं पता? लेकिन क्या तुम जानते हो कि उस जाति के लोग क्या कहते हैं? उन्होंने गरीबों और जरूरतमंदों का शोषण करके यह दान दिया... इसमें खास क्या है? फिर हमें उनके नाम क्यों रखने चाहिए? हम अपनी जाति के उन विधायकों और सांसदों के नाम क्यों नहीं रखते जो जनता की सेवा करते हैं? तो पहला पत्थर हटाया गया और दूसरा - अब देखो, उसे बड़े धूमधाम से, घंटियों की गड़गड़ाहट के साथ, उसकी जगह पर स्थापित किया गया। हम सब - ब्राह्मण और लिंगायत - इतने लंबे समय से शिकायत करते आ रहे हैं, क्योंकि इतना अन्याय हुआ है! लेकिन हम क्या करेंगे? अब उनका समय आ गया है!
"इसका किसी ने विरोध क्यों नहीं किया?"
"उनका विरोध करना और गाँव में रहना नामुमकिन है! वे हमारे खेतों में एक भी केला नहीं छोड़ते! ऐसे समय में, आस-पास के गाँवों से भी उनकी जाति के लोग इकट्ठा हो जाते हैं! वे कटाई के दिनों में अपने मवेशियों को हमारे खेतों में छोड़ देते हैं। अगर हमने और विरोध किया, तो वे हत्या और खून-खराबा करने से भी नहीं हिचकिचाएंगे! क्या मैंने तुम्हें नहीं बताया था? जो लोग जीवित जानवरों को मारकर उनका मांस खाते हैं, उनके लिए किसी इंसान को मारना क्या खास है?"
लेकिन क्या सरकार और पुलिस जैसी कोई चीज नहीं होती?

``पुलेस? पुलेस तो विधायक को हो जाते के लोगों को मदद करती है! अरे, आप तो इतने बड़े अखबार के संपादक हैं! क्या आपको यह भी नहीं पता?"
उन्हें यह भी पता था कि बिहार-उत्तर प्रदेश में ऐसे मामले होते रहते हैं। पटना-लखनऊ क्षेत्र में पत्रकार के रूप में काम करते हुए उनके मन में भी कुछ सवाल थे। किसी भी खबर की रिपोर्टिंग करते समय, उसके पीछे जातिगत कारणों के बारे में अधिक जानकारी देना आवश्यक था। वहां पहले काम करने वाले पत्रकार ने इस जानकारी को पेशे के पहले पाठ के रूप में दिया था। उन्हें याद था कि वहां से जाते समय उन्होंने अगले पत्रकार को भी उतनी ही उत्साह से यही सलाह दी थी। अब अपने गांव में वही स्थिति देखकर उन्हें दुख हुआ। रवींद्र को यह भी एहसास हो गया था कि राजशेखर खुद भी उस स्थिति का हिस्सा था; और अब वह खुद को निर्दोष साबित करने की कोशिश कर रहा था।
शाम छह बजे छात्रों का एक समूह ट्यूशन के लिए राजशेखर के घर पहुँचा। इस वजह से राजशेखर को उनसे बात करने का समय नहीं मिला। लेकिन इस समूह के बाद, सात-आठ छात्रों का अगला समूह आया - रविंद्र यह कहते हुए जाने लगा कि वह इतने समय में गांव में टहल लेगा। चप्पल पहनते हुए बाहर जाते समय उसने चारों ओर नज़र घुमाई और छात्रों की संख्या का अनुमान लगाया। पच्चीस छात्र थे। अगले समूह में भी पच्चीस बच्चे होंगे। इसके अलावा, उसे पूरा यकीन था कि सुबह तक इनकी संख्या दो और बढ़ जाएगी।
अब उसे समझ नहीं आ रहा था कि किस दिशा में जाए। उसने कहा कि वह मंदिर जाना चाहता है, लेकिन अंधेरा हो रहा था। उसने मन ही मन सोचा, "क्यों न, कभी जाकर देख लें?" और मंदिर की ओर चल पड़ा।
वहां का वातावरण बिलकुल वैसा ही था जैसा उनके अखबार के हसन संवाददाता ने बताया था। हालाँकि उसके चारों ओर पत्थर की चारदीवारी थी, लेकिन कई बड़े पत्थर गायब थे। इसके अलावा, मंदिर का बाहरी द्वार भी गायब था। अंदर का द्वार भी नहीं था। मंदिर के प्रांगण में तीन गधे भावहीन होकर खड़े थे। प्रांगण में ज़मीन पर रखे पत्थर चोरी हो गए थे। वहाँ जंगली पौधे उग आए थे। लेकिन आवारा जानवरों के चंगुल में पड़ने से उन पौधों पर एक भी पत्ती नहीं बची थी। इस वजह से उनकी हालत गीली लकड़ियों के ढेर जैसी हो गई थी। क्या इस मंदिर में कोई पूजा-अर्चना हो रही है या नहीं? उन्हें संदेह हुआ।
उसने अंदर झाँका। अंदर मौजूद पक्षियों के पंखों की फड़फड़ाहट उसके कानों तक पहुंची। उनके द्वारा फैलाई गई गंदगी की दुर्गंध उसकी नाक में भर गई। अंदर अँधेरा था। हालाँकि गाँव में रोशनी थी, पर मंदिर तक नहीं पहुंची थी। संकेतों को देखकर उसे यकीन हो गया कि सुबह भले ही कोई दीपक जला रहा हो, शाम को कुछ नहीं होगा।
वह कुछ देर वहीं खड़ा रहा। एक बाज़ ने अपने पंख फड़फड़ाए और उसके सिर के ऊपर से उड़ गया। उसे लगा कि ऐसे समय में उसे चोट लग सकती है, इसलिए वह चला गया। उस दुर्गंधयुक्त वातावरण में कुछ देर रहने के बाद उसने अगली सुबह तड़के आने का फैसला किया। उसने बचपन में अक्सर सुना था कि मंदिर को इस तरह से बनाया गया है कि सूर्य की पहली किरणें देवता के चरणों पर पड़ती हैं। उस समय उसने इस मंदिर के वास्तुकार की प्रशंसा भी सुनी थी। वह अपने दादा-दादी के साथ सुबह-सुबह मंदिर गया था और उसने स्वयं उस प्रशंसा को देखा था। उस समय, पंचक्रोशी से ही नहीं, बल्कि मैसूर-बेंगलुरु-श्रीरंगम से भी बड़ी संख्या में भक्त इस प्रशंसा को देखने आते थे। क्यों, यह जुलाई, आषाढ़ या श्रावण का महीना है? क्यों नहीं? सुबह जाने में कोई हर्ज नहीं है जब सूर्य की किरणें कम से कम तेज हों। अगर हों भी तो, उस समय अचानक आकर आँखों पर हमला करने का कोई डर नहीं है।

यह सब तय करने के बाद भी, उसने एक बार फिर हिम्मत जुटाई और अंदर जाकर उस जगह को देखा जहाँ से सरस्वती की चोरी हुई मूर्ति रखी थी। अँधेरे में भी उसे एहसास हुआ कि वह जगह खाली थी। हे भगवान! यह हमारी गलती थी। हमें आते समय टॉर्च लानी चाहिए थी। लेकिन उसे कभी यह ख्याल नहीं आया था कि यहां ऐसी स्थिति होगी – फिर टॉर्च कहां से मिलती?
वहां से निकलने के बाद, मेरे मन में फिर से वही सवाल उठ खड़ा हुआ – अब कहां जाऊं? राजशेखर रात आठ बजे तक ट्यूशन में व्यस्त रहेगा।
वह कुछ क्षणों के लिए वहीं खड़ा रहा। पुरानी यादें उमड़ पड़ीं और उसने गौड़ बस्ती में स्थित बी. के. कृष्णगौड़ा के घर जाने का फैसला किया।
राजशेखर को पता चला था कि कृष्णगौड़ा मैसूर के एक कॉलेज में कन्नड़ के लेक्चरर थे। उन्होंने यह भी बताया था कि उन्होंने अपनी ज़मीन-जायदाद काफी बढ़ा ली थी। न केवल प्रमुख छुट्टियों के दौरान, बल्कि हर शनिवार और रविवार को भी वे मैसूर आते-जाते थे और सोमवार सुबह वापस चले जाते थे। इसके लिए उन्होंने एक मोटरसाइकिल रख रखी थी। उनका असली पता बसवनपुर था! उनका अस्थायी पता मैसूर था! राजशेखर ने बताया था कि वे गांव और आसपास के गांवों से नारियल खरीदते थे और फिर उन्हें ट्रक से शहर ले जाकर बेचते थे।
मुझे कृष्णा गौड़ा के घर का रास्ता भी अच्छी तरह याद था। हम साथ में वॉलीबॉल खेलते हुए खूब मजे करते थे। उसी समय, हम उनके या अपने बगीचे में जाकर सियार मारते और उनका पानी पीते थे। यह एक तरह की लड़ाई होती थी। एक बार में चार-पाँच सियार मारे जाते थे! हमारे बगीचे में चाहे कितने भी सियार मारे जाते, कोई सवाल ही नहीं उठता था। जब हम घर आकर कहते, "हमने इतने-इतने सियार मारे," तो मेरे दादा-दादी कहते, "हम पाँच-छह घर क्यों नहीं लाए?" लेकिन कृष्णा गौड़ा के बगीचे में हमें छुपकर सियार मारने पड़ते थे। अगर घर में किसी को पता चल जाता, तो उसके पिता उसे डांटते और कहते कि उसकी हड्डियाँ टूट जाएंगी। उनका सवाल होता, "क्या सियार को मारकर उसका पानी पीना समझदारी है?"
अब, यहाँ सियार का कोई बाग नहीं है। कहा जाता है कि यहाँ कृष्ण गौड़ा के बाग हैं। उनके मन में अपने बाग में जाकर खुद पेड़ पर चढ़कर सियारों को काटने की तीव्र इच्छा जागी। इसी उत्साह के साथ वे गौड़ा बस्ती की ओर पिछले रास्ते से चल पड़े।
अब कृष्णगौड़ा के घर पर मंगलूर की छतें दिखाई दे रही थीं। घर के चारों ओर एक ऊँचा परिसर था। परिसर में एक ट्रक खड़ा था। नौकर उसमें नारियल लाद रहे थे। परिसर की दीवार के सहारे एक बैड़ी एनफील्ड मोटरसाइकिल खड़ी थी। तो कृष्णगौड़ा घर में ही थे! वे ट्रक के लिए खुले गेट से अंदर गए और नारियल लाद रहे एक नौकर से पूछताछ की।
"क्या आप गौड़ा हैं?"
जैसे ही उसने उसे दिखाया, रविंद्र घर के बरामदे में चला गया। बरामदे में एक व्यक्ति अपने हाथ में नोटों का एक बड़ा बंडल लिए हुए था, कुछ नोट गिनकर दूसरे व्यक्ति को दे रहा था। फिर उस व्यक्ति ने कहा,
"अभी दस हज़ार ले लो। बाकी अगले हफ्ते..." उसने रवींद्र की ओर मुड़कर कहा। उसके चेहरे से साफ था कि वह उसे पहचानती नहीं थी।
रविंद्र ने कहा,
``मुझे पहचानो। इसका मतलब है कि मुझे ढेर सारा काम मिल जाएगा!"
कृष्णगौड़ा का चेहरा खुशी से चमक उठा, उन्हें यकीन हो गया कि जो व्यक्ति इतनी आत्मीयता से बात कर रहा है, वह उनका बचपन का दोस्त ही होगा। लेकिन उन्होंने उसे पहचाना नहीं। जैसे ही रविंद्र ने उनका नाम लिया, उनका चेहरा सागौन के पत्ते की तरह फट गया।

"अब मुझे सब समझ आ गया। क्या आप राजशेखरप्पा के घर नहीं आए थे?"
"रे, तुम्हें कैसे समझ आया?"
“यह बात याद रखना – बी.के. कृष्ण गौड़ा की जानकारी के बिना इस गाँव में एक मक्खी भी नहीं घुस सकती! वह गाँव से बाहर कदम नहीं रख सकती। लेकिन उन्होंने मुझे यह भी नहीं बताया कि उनका तुमसे संपर्क है। गुप्त पूजा! गुप्त जानकारी!” उन्होंने हंसते हुए कहा।
नहीं, महोदय! मैं चन्नरायपटना के बस स्टैंड पर इस गाँव आने के लिए खड़ा था। उन्होंने मुझे पहचान लिया। हम दोनों साथ-साथ गाँव आए। उन्होंने कहा, 'मेरे घर आकर ठहरिए।' हम चले गए। बस इतना ही।
"जो होना है होने दो, जो होना है होने दो! तुम अभी कहाँ हो? तुम क्या कर रहे हो?"
"वह बैंगलोर में रहते हैं। वह इंडियन ट्रिब्यून के संपादक हैं।"
“तो फिर सही बात है। वो अंग्रेज़ी के मीस्टर हैं, और आप अंग्रेज़ी अख़बार के संपादक हैं! इसीलिए तो वो दोनों इतने करीब हैं, मैं कहा करता था। मैं कन्नड़ का बेटा हूँ। मैं कन्नड़ पढ़ाता हूँ। मैं कन्नड़ के सिवा कुछ नहीं पढ़ता। तो फिर आप अख़बीर में हैं। आइए, अंदर आइए।” वह रविंद्र को अंदर बने सुसज्जित बैठक कक्ष में ले गए।
"क्या आप कॉफी पसंद करेंगे?"
"नहीं। यह बस यूं ही हो गया। अगर मैं इसे दोबारा लूं तो मुझे रात को नींद नहीं आएगी।"
क्यों नहीं! आप हम सभी से पुरानी यादों के साथ मिलने आए! मुझे बहुत खुशी है। गाड़ी आधे घंटे में भर जाएगी। मैं टक से चन्नारेपट्टन जाऊंगा और तुरंत वापस आ जाऊंगा। मैं तुरंत अपनी बाइक से वापस आऊंगा। लेकिन एक बात बताइए। इतने सालों बाद, आपको अचानक हमारी याद कैसे आ गई?
उसे उससे जिस भी विषय पर बात करनी थी, उसे अभी करनी होगी। अगर वह कल सुबह चला गया, तो वह दोबारा ऐसा नहीं कर पाएगा, रविंद्र ने यह बात उठाई।
"गांव के मंदिर से सरस्वती की मूर्ति चोरी हो गई थी, है ना? मैं गांव में आप जैसे लोगों से मिलने और बात करने आया हूं ताकि इस बारे में कुछ फैसला ले सकूं। चाहे मैं कुछ भी कर लूं, यह मेरा गृह नगर है। जब हम छोटे थे, तब हम इसी मंदिर में पूजा करते थे।"
"मूर्ति चोरी हो गई? आपको किसने बताया?"
` "यह खबर हमारे अखबार के पहले पन्ने पर छपी थी!"
"अगर यह खबर आपके अखबार के पहले पन्ने पर छपती, तो इसे कौन पढ़ता? मुझे इस खबर के बारे में पता नहीं है। इस गांव में किसी को भी नहीं पता। अगर मुझे पता भी होता, तो यह मेरे कानों तक नहीं पहुंचती।"
अरे वाह! अब मैं बता रही हूँ! मैं अभी मंदिर से आई हूँ। मूर्ति रखने की जगह खाली है। आपने कन्नड़ साहित्य पढ़ा है! अगर हमारी संस्कृति इस तरह नष्ट होने लगे तो आप जैसे पढ़े-लिखे व्यक्ति को दुख क्यों नहीं होगा? मैं बाहर किसी गाँव में ही रहूंगी।
"जी हां! हमारी संस्कृति की रक्षा करें! जब मैं एम.ए. कर रहा था, तब मैंने कर्नाटक संस्कृति के इतिहास पर एक शोध पत्र प्रस्तुत किया था। उसमें मैंने हमारे मंदिरों, शिलालेखों, मस्तिकललों और वीरगालों के बारे में जानकारी दी थी।"
इसीलिए मैं आपसे मिलने आया हूं। आइए गाँव वालों की एक समिति बनाएँ। चाहे कितनी भी मेहनत करनी पड़े, हमें चोरी हुई मूर्ति को ढूंढना ही होगा। इस बारे में गाँव में एक आंदोलन चलाया जाना चाहिए। फिर इसे तालुका-जिला स्तर पर उठाया जा सकता है। तब पुलिस को इसे नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए। इसे

कन्नड़ और अन्य समाचार पत्रों में प्रकाशित किया जाएगा, मैं स्वयं इस पर नज़र रखूंगा! यह एक पहलू है। दूसरा यह है कि मंदिर परिसर की दीवारों और दरवाजों की मरम्मत की जाए और दरवाजों को बंद किया जाए। इसके लिए गाँव वालों से आवश्यक धन जुटाया जाना चाहिए। मैं भी इसी गाँव का निवासी हूँ। इसलिए मैं भी अपनी क्षमता के अनुसार योगदान दूँगा।
"अधिकतम कितना...?" कृष्णगौड़ा ने तुरंत पूछा।
तो मान लीजिए, मैं आपकी पांच के बदले एक हजार दूंगा।
"ठीक है। आप समिति में किसे चाहते हैं?"
"हमें अपने गांव से चार पढ़े-लिखे लोगों को लेना चाहिए। मैं, तुम, राजशेखर। चलिए कुछ और नामों पर भी विचार कर लेते हैं।"
"राजशेखर? वाह वाह!" कृष्णगौड़ा ने मुस्कुराते हुए कहा, "सचमुच! राजशेखर क्यों नहीं? एक अंग्रेजी शिक्षक। मैं आपको अपने घर ले जाऊंगा और आपका भव्य आतिथ्य सत्कार करूंगा! आप उस गुरु की जाति से हैं जिन्होंने आठ सौ साल पहले जाति-विरोधी आंदोलन का नेतृत्व किया था!"
रविंद्र असमंजस में था। उसे समझ नहीं आ रहा था कि आठ सौ साल पहले दिवंगत हुए बसवेश्वर का जिक्र करके वह आज राजशेखर का विरोध क्यों कर रहा है। एक पल के लिए उसे लगा कि राजशेखर का नाम लेकर उसने गलती कर दी है। लेकिन बाद में उसने सोचा, चलो ठीक है, अब बस करो। अगर उसने गांव की सही स्थिति जाने बिना समिति बनाकर बेंगलुरु चला गया होता, तो समिति भी मुसीबत में पड़ जाती। उसने कहा,
"ग्रामीण राजनीति के बारे में मुझे क्या समझना चाहिए? आप मुझे इसे ठीक से समझाएं।"
"क्या इतने बड़े अखबार के संपादक को यह बात समझ नहीं आती? जब आप अंग्रेजी अखबार कहते हैं, तो क्या आप सिर्फ दिल्ली-लंदन-न्यूयॉर्क की खबरें ही देते हैं? क्या उन्हें अपनी मिट्टी और अपनी जड़ों के बारे में कुछ भी पता नहीं है?" कृष्णगौड़ा ने रविंद्र की व्यावसायिक कुशलता पर संदेह जताते हुए कहा।
रविंद्र के सिर में लगी नली कुछ हद तक रोशन हुई, लेकिन उससे स्पष्ट रोशनी नहीं मिली। उसने कहा,
"देखो, इस गाँव को छोड़े हुए बीस साल हो गए हैं। इससे पहले भी मैं यहाँ था, जब मैं मिडिल स्कूल में पढ़ता था। तुम और वो दोनों तब मेरे बच्चे थे। अब मुझे इसके बारे में क्या पता है? तुम ही मुझे समझाओ।"
मैंने कहा, रुको। ओह, सिद्धवा... मेरे लिए एक बर्तन कॉफी और एक जग लाओ। एक अच्छा लाल जग लाओ। एक चांदी के कप में पानी डालो और उसमें नींबू और चीनी मिलाकर लाओ।
``नहीं। और इसे गिलास में भी मत डालो। अगर इसमें चीनी या नींबू मिलाओगे तो इसका असली स्वाद ही खत्म हो जाएगा..." रविंद्र ने बीच में ही कहा।
कृष्ण गौड़ा का चेहरा खुशी से चमक उठा। उन्होंने सिद्धार्थ को पुकारते हुए कहा, "लाओ साहब।" फिर वे रवींद्र की ओर मुड़े और बोले,
“तुम सचमुच अभी भी इसी गाँव के हो, है ना? अब तो साबित हो गया। जब हम बच्चे थे, तब हम नारियल के पेड़ों पर चढ़ते थे... याद है? हम चार-पाँच सियार मार डालते थे।” कृष्णा गौड़ा के मन में बचपन की दोस्ती ताज़ा हो गई, “देखो रवि, कल दोपहर हमारे घर लंच पर आना। हम खूब बातें करेंगे।”
"वह आ रहा है!" रविंद्र ने जल्दी से कहा।
"क्या तुम बाकी बचा हुआ खाओगे या नहीं?"
नहीं।
आप अंग्रेजी अखबार के संपादक हैं और मांसाहारी नहीं खाते? फिर साइपक के साथ आप क्या करेंगे? हमारी महिलाएं समझती ही नहीं हैं! मांसाहारी खाए बिना

आप लोगों का आगे आना मुमकिन ही नहीं है। कृष्णा गौड़ा ने मुस्कुराते हुए अपने बत्तीस दांत दिखाए। रविंद्र ने इस पर कुछ नहीं कहा।
मैं तो बस मजाक कर रहा था, रे। मेरी पत्नी जैसी औरत तुम्हारा कोई गंदा काम नहीं करेगी। घर का बना घी... तुम खुद कल देख लोगे, मैं तुम्हें बताता हूँ! हम्म। मैं क्या कह रहा था?
``राजशेखरविषयी."
देखो। गलतफहमी मत पालिए। मैं आपको पहले ही बता रहा हूँ। हम बचपन से दोस्त हैं। इसमें कोई शक नहीं। यह भी मत सोचिए कि मैं गपशप कर रहा हूँ। मैं सच कह रहा हूँ। उसकी जाति क्या है? ये वही लोग हैं जो शंकर के अलावा किसी और की पूजा करने वालों को 'भाव' कहते हैं। आप मुझे चन्नाकेशव मंदिर के बारे में ये सब बता रहे हैं। आप मंदिर के गर्भगृह से विष्णु की मूर्ति क्यों नहीं निकाल लेते, जो पहले से ही ध्वस्त हो रहा है, और वहाँ एक शिवलिंग स्थापित कर देते?
"क्या आज भी कोई ऐसा करता है? बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में?" रविंद्र ने अविश्वास से पूछा।
"हमारा इतिहास पढ़ो। तब तुम्हें समझ आएगा। यहाँ की संस्कृति, कला और शिलालेखों का अध्ययन करने के बाद मेरी बात ध्यान से सुनो। इस गाँव का मूल नाम क्या था, मुझे बताओ?"
``नाम...बसावेनपुर..." रवीन्द्र लड़खड़ा गया।
मैं आपको शिलालेख दिखाऊंगा। इस गांव का मूल नाम चन्नापुर था। यानी चन्नाकेशवपुर। यही यहां के ग्राम देवता हैं। गांव के बीच में एक मंदिर है। विष्णु का मंदिर हमेशा से गांव में ही रहा है। शंकर का मंदिर गांव के बाहर, मुसाना के पास है! इसका मतलब है कि जाकनाचार्य के समय में गांव के सभी लोग विष्णु भक्त थे। सच है या झूठ? मुझे बताइए।
हां। यह देखना बुरा है।
आप क्या देखते हैं? ये सब ऐसे ही हुआ! चन्नापुर बसवनपुर कैसे बन गया? ये लिंगायत आंदोलन लोगों को धर्म परिवर्तन के लिए मजबूर करने वाला आंदोलन है। इन्होंने गाँव के कई लोगों का धर्म परिवर्तन कराया। इसका क्या नतीजा निकला? कौन जाने कि चन्नाकेशव धर्महीन लोगों के बीच रहेगा या चला जाएगा? ऐसे समय में सरस्वती की मूर्ति की चोरी, मुझे नहीं लगता कि ये कोई बहुत महत्वपूर्ण घटना है!
"तो क्या आपको लगता है कि अगर इस देवता की पूजा करने वाले लोगों की संख्या अधिक होती, तो इस मंदिर का यह हाल नहीं होता?"
``देखिए। अगर आप पूछताछ शुरू करेंगे तो मैं जवाब नहीं दूंगा। मैं आपको सच बता रहा हूं। चन्नापुर के बसवनपुर बनने का सटीक वर्ष रिकॉर्ड में दर्ज है। एक और बात सुनिए। आप यह भी जानते हैं कि यह गांव टिप्पुर और चन्नारेपट्टन तालुकों के बीच में है। क्या आप जानते हैं कि ये लोग किस बात से जूझ रहे हैं? इस गांव को कुछ करना चाहिए और चन्नारेपट्टन से टिप्पुर तालुका में शामिल होना चाहिए! जब तक यह इस तालुका में रहेगा, तब तक उनकी जाति का कोई विधायक और सांसद नहीं हो सकता! अगर वे उस तालुका में चले गए, तो इसका मतलब है उनके अपने प्रतिनिधि - उनके अपने चुनाव! आपको नहीं पता कि इसके लिए वे क्या-क्या साजिशें और चालें चल रहे हैं। इन सबका मार्गदर्शक एक ही अंग्रेजी शिक्षक है! सारी गड़बड़ राजशेखरप्पा के घर में चल रही है। चूंकि वह उनकी जाति का एक निजी जांच अधिकारी है, इसलिए उसका तबादला इस गांव में कर दिया गया है और वह ट्यूशन से पंद्रह हजार रुपये सालाना कमा रहा है!"
कॉफी और चाय आ गई। किसी ने यह भी घोषणा की कि ट्रक में सामान लादने का काम पूरा हो गया है। "तो कल ठीक 12:30 बजे यहाँ आ जाना," कृष्णा गौड़ा ने एक बार फिर कहा, उठे और एक ही किक से मोटरसाइकिल स्टार्ट कर दी।

■

सुबह नाश्ता करते समय, रविंद्र ने राजशेखर से फुसफुसाकर कहा कि वह दोपहर के भोजन के लिए घर नहीं आएगा। आगे कुछ पूछने से पहले ही राजशेखर ने जवाब दिया, "कृष्ण गौड़ा ने मुझे बुलाया है।" तब राजशेखर ने कहा,
"तुम्हारा पुराना दोस्त! जाओ और वापस आओ।"
कुछ समय बीत गया। राजशेखर ने सावधानी बरतने की चेतावनी दी।
वह तुम्हें मांस खाने के लिए मजबूर करेगा। सावधान रहना। क्या तुम जानते हो वह क्या करता है? वह कहता है कि यह स्वादिष्ट है, इससे ताकत मिलती है, वगैरह, और बहुत ज़िद करने के बाद भी वह तुम्हें खिला देता है। फिर वह सबको बताता फिरता है... कि ये उच्च जाति के लोग मांस खाने लगे हैं, इसलिए कीमतें बहुत बढ़ गई हैं। आज रविंद्र हमारे घर रात के खाने पर आया था। उसने जोर-जोर से आवाज करते हुए खाना खाया।
रविंद्र को यह स्पष्ट रूप से समझ नहीं आया कि राजशेखर उसे चेतावनी दे रहा था या कृष्णा गौड़ा के बारे में गपशप कर रहा था।
पौने छह बजे ट्यूशन के छात्र इकट्ठा हो गए। यह जानते हुए कि राजशेखर को सात से आठ और आठ से नौ बजे के बीच जल्दी होगी, रविंद्र हाथ में कैमरा लेकर मंदिर के लिए निकल पड़ा। हालाँकि उसके दादा-दादी का घर अब पूरी तरह से ध्वस्त हो चुका था, फिर भी उसे देखने की इच्छा प्रबल थी, लेकिन सुबह की धूप में मंदिर के भीतर का दृश्य देखने की इच्छा उससे भी अधिक प्रबल थी।
गांव की समग्र स्थिति को देखते हुए, उन्हें मंदिर के रखरखाव के लिए समिति गठित करने पर कोई भरोसा नहीं था, और न ही उन्हें यह विश्वास था कि ऐसी समिति अपना काम ईमानदारी से करेगी। उन्हें लगा कि बेंगलुरु के किसी संबंधित अधिकारी से संपर्क करके यह काम बेहतर तरीके से हो सकता है।
जब वह लगभग 7:15 बजे मंदिर के द्वार पर पहुँचा, तो उसने महसूस किया कि सूर्य की रोशनी का मंदिर में प्रवेश करना असंभव था। मंदिर के द्वार से आने वाली सूर्य की रोशनी पूरी तरह से अवरुद्ध हो जाती, क्योंकि उसके ठीक सामने एक तीन मंजिला सीमेंट की इमारत खड़ी थी। उस इमारत का अधिकांश भाग मंदिर के स्थान पर ही बना हुआ था।
सुबह ग्यारह बजे तक मंदिर के द्वार तक प्रकाश का पहुंचना संभव नहीं है। उसके बाद दोपहर का सूरज डूब जाता है, और अगर प्रकाश मंदिर तक पहुच भी जाए, तो वह अंदर तक नहीं पहुंच पाएगा।
यह किसका घर होना चाहिए? जब वह बच्चा था, तब वह इस मंदिर में खेलने आता था, उस समय यहाँ कहीं नंजप्पा शेट्टी का घर हुआ करता था। लेकिन उसने मंदिर की जगह पर कब्जा नहीं किया था। न ही उसमें इतना अहंकार था कि वह मंदिर से भी ऊंची इमारत बनवाए। अब उसका बेटा उदयर शेट्टी-रवींद्र उस इमारत के सामने गया और ऊपर देखा। उस पर 'मारवाड़ डिपार्टमेंटल स्टोर' का एक अंग्रेजी बोर्ड दिखाई दे रहा था। दूसरी जगह अंग्रेजी में झंवारलाल हरचंदमल का नाम लिखा हुआ था।
इमारत की चौड़ाई कम और ऊंचाई अधिक थी। छोटी सी जगह का भरपूर उपयोग किया गया था। इमारत का एक दरवाजा दुकान की तरह चौड़ा था और उस पर शटर लगे थे। वहीं दूसरी ओर का दरवाजा घर के दरवाजे की तरह अपेक्षाकृत संकरा था। वह मारवाड़ी शैली में घर बनाने का यह तरीका भी जानता था। इमारत लगभग चालीस फीट ऊंची थी।
जब वह देख रहा था, तभी एक नौकर आया और नीचे की दुकान का दरवाजा खोला। यह किराने का सामान, स्टेशनरी और अन्य दैनिक उपयोग की वस्तुओं की दुकान थी। बेंगलोर की किसी भी दुकान में मिलने वाली सभी चीजें यहाँ मौजूद थीं। नौकर ने दुकान का फर्श साफ किया और पंखे से धूल झाड़ने लगा। उसी समय

एक लड़का भी दुकान में दाखिल हुआ। उसके चेहरे से साफ था कि वह मारवाड़ी था। उसने रविंद्र से पूछा,
आप क्या चाहते हैं?
"कुछ नहीं। मैं बस डिपार्टमेंट स्टोर में उपलब्ध सामान देख रहा था..." उसने जवाब दिया।
"किस गाँव से?" लड़के ने पूछा।
"गांव?" रवींद्र ने कहा, यह सोचते हुए कि अगर उसने सच बताया तो वह यह पूछकर चुप्पी तोड़ देगा कि यह किस घर का है?
मैं गेस्ट हाउस आया हूँ... यहाँ कौन-कौन से विभाग हैं?
"भूतल पर किराने का सामान, पहली मंजिल पर कपड़े, दूसरी मंजिल पर प्लास्टिक, स्टील, पीतल, तांबा आदि के बर्तन..." उसने जवाब दिया।
और तीसरी मंजिल?
बंधक और विनिमय।
"तीसरी मंजिल का दरवाजा कब खुलेगा?"
"बगल का दरवाजा अभी खुलेगा। क्या आप कुछ लेन-देन करना चाहते हैं? या आप सिर्फ सवाल पूछ रहे हैं?"
उनके आखिरी सवाल ने रविंद्र का उत्साह ठंडा कर दिया। उसी समय मंदिर के बरामदे में किसी के बात करने की आवाज़ सुनाई दी। रविंद्र अंदर गए। मंदिर के बरामदे में ज़मीन पर बैठे बीस साल के दो युवक गरमागरम बहस कर रहे थे। दोनों ने पैंट, टी-शर्ट पहनी हुई थी और कलाई पर घड़ियाँ थीं।
रविंद्र को देखते ही उसने बोलना बंद कर दिया।
उसने उन दोनों से पूछा,
मैं यहाँ गाँव में एक मेहमान से मिलने आया हूँ। राजशेखरप्पा के घर। क्या सामने वाली मारवाड़ी दुकान पर सस्ता मिलेगा, या टिपटूर-चन्नारायपट्टन पर?
उनमें से एक ने कहा, "यह टिपटूर से सस्ता है। टिपटूर तो सामान भी ठीक से नहीं पहुंचाता।"
`तुम्हें क्या चाहिए? तस्करी का सामान? घड़ियाँ? जापानी पैंट? इस बैग में सब कुछ है, बागा! बैग में क्या है?"
"क्या इतने छोटे कस्बे में इतनी बड़ी दुकान ठीक से चल रही है?"
पावन, अगर सामान होगा तो व्यापार होगा! चाहे इस इलाके में किसी बीज की बड़ी खरीद हो, शादी हो या कोई बड़ा आयोजन, सबको फायदा होगा। अब तो कोई टिपटूर-चन्नारिपट्टन नहीं जाता! वहां का दुकानदार कहता है, "नकद डालो।" इस मारवाड़ी को नकद नहीं चाहिए! वो नकद के बदले सिर्फ नारियल और कोकोयम लेता है! अगर वो न मिले तो कागज पर लिखकर सामान दे देता है। बाद में, मौसम आने पर, नारियल और कोकोयम इकट्ठा कर लेता है। अगर आप रेट पूछेंगे तो वो टिपटूर का होगा। यहां चार मंजिला दुकान है और किले के पास नारियल और कोकोयम रखने के लिए एक बड़ा गोदाम भी लिया गया है!
रविंद्र को एहसास हुआ कि इस मारवाड़ी के हाथ में पंचक्रोशी के पचपन गांवों की आर्थिक नब्ज है।
"उसे यहां आए हुए कितने साल हो गए हैं?"
"कितना समय?" उसने अपने दोस्त की ओर मुड़कर पूछा। "दस या पंद्रह साल तो रहे ही होंगे, है ना?"
"सटीक रूप से कहें तो, ग्यारह या बारह साल हो गए हैं। यह इमारत सात साल पहले बनी थी।"
"अगर ऐसा है तो हमें यहां व्यापार करना चाहिए!" रविंद्र ने कहा, "हम मंदिर की जगह पर एक मारवाड़ी मकान बना रहे हैं... क्या यह सच है?"
"शायद! कौन जाने? गांव का मंदिर। कौन पूछेगा?"

"इसके अंदर कौन सा देवता है? चलो जाकर देखते हैं, क्या यह काम कर रहा है?"
"बौनों का मंदिर। बौनों का भी कोई देवता होगा! कौन सा, भाई?" उसने अपने दोस्त से पूछा।
कौन जाने! केशव देव होंगे या फिर रंगनाथ।
"मैं समझ गया..." रवींद्र ने मंदिर में प्रवेश करते हुए कहा।
उसे लगा कि अंदर अंधेरे में सांप और बिच्छू हो सकते हैं, इसलिए वह धीरे-धीरे और सावधानी से अंदर चला गया। अंदर का वातावरण अंधकारमय था। उसने चिल्लाया और ताली बजाई, और जब उसने पक्षियों के पंख फड़फड़ाने की आवाज़ सुनी, तो उनमें से कुछ उड़ गए।
कुछ समय बाद, उसकी आँखें अंदर के अँधेरे में अभ्यस्त हो गईं। गलती हो गई। उसे टार्च लानी चाहिए थी। लेकिन मुझे कैसे पता चलता कि मारवाड़ी दुकान मंदिर की धूप को रोक रही थी? अंदर की मंद रोशनी में, उसने अपनी आँखें गड़ाकर प्रत्येक मूर्ति को ध्यान से देखना शुरू किया।
नवरंग की दीवारों पर बने आलों में रखी विभिन्न मूर्तियाँ—जो छत से लटकती हुई प्रतीत होती थीं—दिखाई नहीं दे रही थीं। हालाँकि प्रकाश मंद था, फिर भी उस स्थान पर कुछ तो अवश्य दिखाई देता होगा। उन्हें स्पष्ट रूप से याद था कि उन्होंने बेलूर के चेन्नाकेशव मंदिर में उस स्थान पर पत्थर की बनी कन्याओं जैसी मूर्तियाँ देखी थीं। कितनी थीं? उन्हें ठीक से याद नहीं था? सात या आठ रही होंगी। अब उनमें से एक भी दिखाई नहीं दे रही थी। दीवारों के साथ लगी विभिन्न देवी-देवताओं की लगभग ढाई फुट ऊँची मूर्तियाँ वैसी ही थीं। सरस्वती, भैरव, नरसिम्हा, विश्वामित्र-मेनका, शिव का धनुष तोड़ने का प्रयास करते राम, तलवार लिए कृष्ण—बचपन में इन मूर्तियों को भी ठीक से नापा नहीं गया था, लेकिन जहाँ से मूर्तियों को उठाया गया था, वहाँ कोई खाली स्थान नहीं था।
अब उसकी नज़रें ज़्यादा सख़्त हो चुकी थीं। उसने कैमरे में रील डाली और यह सोचकर कि इसके बाद कुछ भी हुआ तो उसके पास सबूत होगा, हर मूर्ति की दो तस्वीरें खींचीं। फिर उसने खंभों की तस्वीरें लीं। उसने अंदर स्थित चन्नकेशव की मूर्ति की भी तस्वीरें लीं। वह बाहर आया और भरी हुई रील को करीने से डिब्बे में रख दिया और दूसरी रील डाली। उसने मंदिर की बाहरी दीवारों पर बनी मूर्तियों की अलग-अलग कोणों से तस्वीरें लीं।
तब तक सूरज निकल चुका था और मारवाड़ी इमारत की छाया मंदिर की चोटी पर पड़ रही थी। दुकान के सामने तीन बैलगाड़ियाँ खड़ी थीं। यह स्पष्ट था कि वे गाँव के व्यापारियों की थीं। मंदिर के बरामदे में सिगरेट पीते बैठे दो युवक जा चुके थे। वह भी वहाँ जाकर बैठ गया। ताज़ी सिगरेटों की राख के साथ-साथ कुछ पुरानी सिगरेटें भी थीं। जली हुई लकड़ियाँ भी बहुत थीं। भेड़-बकरियों की खालें चारों ओर बिखरी पड़ी थीं। उसने ये सब एक दिन पहले भी देखा था। एक-दो जगहों पर मानव मल भी दिखाई दिया।
रविंद्र कुछ पल उदास मन से वहीं बैठा रहा। उसके मन में सिगरेट पीने की तीव्र इच्छा जाग उठी। उसकी जेब में सिगरेट नहीं थी। उसे यह भी एहसास हुआ कि अगर होती भी तो वह मंदिर में उसे नहीं जलाता। कुछ ही क्षणों में यह इच्छा गायब हो गई। इतनी दूर रहते हुए क्या यहाँ कुछ करना सचमुच संभव है? वह चिंता से व्याकुल हो गया।
उसी समय एक और बैलगाड़ी मंदिर के द्वार पर आकर रुकी। बैलों को छोड़ते ही बैलगाड़ी चालक उन्हें मंदिर परिसर में ले आया और उनकी गाड़ी को गरुड़-खंब से बांध दिया। गाड़ी के रुकने से बैलों के शरीर ढीले पड़ गए थे, इसलिए उन्होंने खूब उलटी की और पतला गोबर भी इधर-उधर फेंक दिया ताकि वह सड़ जाए। बैलगाड़ी चालक ने गाड़ी बांधी और चला गया। रवींद्र ने वहां देखा। बाद में वह मंदिर के द्वार पर आया। मारवाड़ी दुकान में कारोबार ज़ोरों से बढ़ने लगा होगा।

उन्हें दृढ़ विश्वास था कि जब तक इस क्षेत्र का कोई प्रभावशाली व्यक्ति आगे नहीं आएगा, इस मंदिर की स्थिति में बदलाव आना असंभव है। लेकिन ऐसा व्यक्ति कौन था? यह मारवाड़ी इमारत जो मंदिर को ढके हुए थी – क्या मंदिर की जगह पर खड़ी इस इमारत को गिराकर मंदिर की ज़मीन को खाली कराना संभव नहीं था? अगर हम अदालत में जाकर दस्तावेज़ों के साथ दावा दायर करें तो क्या होगा? बाद में उन्हें दृढ़ विश्वास हुआ – इसका कोई फायदा नहीं है। तालुका अदालत से लेकर दिल्ली अदालत तक, यह मारवाड़ी कम से कम पचास साल तक इसके लिए लड़ता रहेगा, यह निश्चित है! इतने सालों तक कौन लड़ेगा? कौन बचेगा? अगर पुरातत्व अनुसंधान केंद्र इस पर ध्यान दे तो क्या होगा?
उसने कैमरे में दोबारा गोलियां भरीं और आसपास पड़े पत्थरों, चोरी हुई मूर्तियों के स्थानों, जमीन पर पड़ी बीड़ी और सिगरेट के टुकड़ों, जली हुई लकड़ियों, पशुओं के गोबर, गरुड़ स्तंभ से बंधे बैलों, उनके द्वारा फैलाई गई गंदगी, मंदिर के द्वार पर खड़े व्यापारियों के बैलगाड़ियों और सामने खड़ी तीन मंजिला मारवाड़ी इमारत की तस्वीरें खींचीं। इन सभी तस्वीरों के आधार पर वह अपने अखबार में एक लंबा लेख लिखता और देखता कि क्या वह उसके नौ अन्य शहरों में प्रकाशित होने वाले अखबारों में छपता है।
अब रविंद्र के विचारों को एक दिशा मिल गई। उन्हें यकीन हो गया कि इस गाँव के ग्रामीणों को जगाकर कुछ भी हासिल करना असंभव है। न केवल लंबे निबंध का शीर्षक, बल्कि लेख का पहला वाक्य भी उनके मन में आकार लेने लगा।

■

कुछ देर ऐसे ही बीत गई। फिर, कंधे पर एक छोटा पुराना तांबे का घड़ा और दाहिने हाथ में एक टोकरी लिए, लगभग पचहत्तर वर्ष का एक बूढ़ा व्यक्ति बड़ी मुश्किल से मंदिर के द्वार पर खड़ी बैलगाड़ी को पार करके अंदर आया। उसके घुटनों तक पहुँचने वाला पुराना पंच, कंधों पर लिपटा पुराना उत्तरीय, और कमर पर कसकर बंधा पंच—शायद घड़ा उठाते समय कमर को सहारा देने के लिए बंधा हुआ था। उसके माथे पर लाल निशान देखकर रवींद्र समझ गया कि यही इस मंदिर का पुजारी है। कमर पर बंधा पंच केवल कमर को सहारा देने के लिए नहीं बंधा होगा—उसे याद आया कि यह ईश्वर की आराधना और प्रार्थना करते समय विनम्रता व्यक्त करने का एक तरीका था।
गरुड़ स्तंभ से बंधे बैल और उसके गोबर को देखकर भी, वह जरा भी विचलित हुए बिना मंदिर में प्रवेश कर गया, मानो उसका उससे कोई संबंध ही न हो। रवींद्र ने देखा कि धूप से काली पड़ी उसकी पीठ गीली थी। क्या यह कलशी को कंधे पर उठाते समय गिरे पानी के कारण था, या पसीने के कारण? माथे से पसीने की धाराएँ बहते देख उसे यकीन हो गया कि यह पसीना ही होगा, पानी नहीं। वह अचानक प्रसन्न हो उठा!
अरे वाह! ये तो रामभट्ट हैं!
जब मैं छोटी थी, तब मैं भगवान की पूजा करती थी। मैं अपने बाएं हाथ में घंटी को लयबद्ध तरीके से बजाती थी और अपने दाहिने हाथ में लंबी, गोल मंगल रति को भगवान की मूर्ति के सामने धीरे-धीरे घुमाते हुए मंत्रों का जाप करती थी। उस समय मैं शाम को अपनी दादी के साथ आरती के लिए मंदिर जाया करती थी।
वह थोड़ा उत्तेजित होकर खड़ा हो गया। फिर उसने फैसला किया कि उन्हें बाकी की पूजा पूरी करने दे... और फिर आरती के दौरान अंदर जाकर उनसे सवाल करे।
अरे बाप रे! मंदिर का एक पुजारी है – मुझे उससे मिलना होगा – मुझे उसे इस समिति में शामिल करना होगा, यह बात मेरे दिमाग में पहले क्यों नहीं आई?
अब उसे रामभट्ट का घर साफ-साफ याद आ गया। रामभट्ट, उनकी पत्नी शेषम्मा, उनके साथ उनका बेटा अच्युत, अच्युत की बड़ी बहन लक्ष्मी, उनकी छोटी बहन

श्रीदेवी - ये सभी उसके दिमाग में आ गए।
उस समय, शेषम्मा अपनी दादी के खाली समय में उनके साथ खेल खेलने आती थी, अठारह हाथ लंबी पारंपरिक पोशाक पहनकर। खेल तो बस एक बहाना था। असल में, वह अपनी खुशियों और दुखों के बारे में बातें करने आती थी। दान-पुण्य पर दोनों का ही कोई ध्यान नहीं रहता था। कितने खेल पक रहे हैं या कितने पक चुके हैं, इस पर भी उनका कोई ध्यान नहीं रहता था। कभी-कभी बातें इतनी गरमा जाती थीं कि खेल वहीं रुक जाता था। कई दिनों तक एक भी खेल पूरा नहीं होता था। यह जानते हुए कि अगर हम घर पर होते तो पत्नियां आपस में खुलकर बात नहीं कर पातीं, मेरे दादाजी ऐसे समय में जल्दी से खेत के लिए निकल जाते थे। उस समय, मैं सचमुच शेषम्मा को दादी के खेल खेलकर हराना चाहता था। इसीलिए खेल बीच में ही रुक जाता था, या मैं गुस्से में आकर ऐसा करता था।
"दादी... दादी... आप क्या कर रही हैं? यह खेल खेलिए, यह खत्म हो जाएगा–"
मैंने दादी की गर्दन को खेल पर ध्यान केंद्रित करने के लिए मजबूर किया, लेकिन वह बार-बार कहती रहीं,
उन्होंने कहा, "चलिए थोड़ी देर आराम करते हैं। देखिए, वह कैसे अंदर आ रहा है! औरतें बातें कर रही हैं... आप यहाँ क्या कर रहे हैं? अपने दादाजी के साथ खेत पर क्यों नहीं गए?..."
कौन जाने अच्युत अब कहाँ है! लेकिन मुझे शेषाम्मा से मिलना ही होगा। वो सत्तर साल की होंगी। क्या वो ज़िंदा हैं? - हे भगवान, वो ज़िंदा हों - रविंद्र ने मन ही मन प्रार्थना की। हालाँकि वो उसकी दादी से छोटी थीं, लेकिन वही एक थीं जो उसे सीधे उसकी यादों तक ले जा सकती थीं।
मंदिर के अंदर झाड़ू लगाने की आवाज़ सुनाई दे रही थी। अंदर जमी गंदगी, पक्षियों की बीट, उनके घोंसलों से गिरी घास – क्या वे इस उम्र में यह सब साफ़ कर पाएंगे? उनकी कमर का क्या होगा! उन्होंने अपनी कमर पर एक रुमाल बांध रखा है, शायद इसी से इस बूढ़े सज्जन को सहारा मिल रहा है। पहले भी वे इसी तरह का रुमाल बांधते थे।
कुछ पल इसी तरह बीत गए।
मंदिर के गर्भगृह से घंटी की आवाज सुनाई दी। अगर आप ध्यान से सुनते, तो उस आवाज़ में "देवताओं के आगमन के लिए, देवताओं की यात्रा के लिए, देवताओं की यात्रा के लिए" जैसे मंत्र सुनाई देते।
आरंभ से ही रामभट्ट की वाणी ऊँची थी। उन्हें मंत्रों का उच्चारण इतनी ऊँची आवाज में करने की आदत थी कि सप्तलोक भी उन्हें सुन सकता था। यही उनकी वाणी का गुण था। उन्होंने कभी भी मंत्रों का उच्चारण जल्दबाजी में नहीं किया था – यहाँ तक कि कुछ मंत्रों को छोड़ भी दिया था। उन्होंने अनुभव किया था कि पूजा के दौरान उनकी दृष्टि, श्वास, वाणी, मन, स्पर्श सब पूजा में ही लीन हो जाते थे। अपने मंत्रों को सुनने की इच्छा से वे मंदिर गए और यद्यपि स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं दे रहा था, फिर भी उन्हें भगवान की मूर्ति दिखाई दी, और वे गर्भगृह के द्वार के सामने और नवरंग के निकट जमीन पर बैठ गए।
रामभट्ट की उपासना पहले की तरह ही भव्यता से चल रही थी। वे एक-एक करके फूल चढ़ा रहे थे और भगवान के सभी रूपों और अवतारों के नाम जप रहे थे। भगवान के प्रत्येक गुण और विशेषता का उल्लेख करते हुए, वे अपने हाथों को इस प्रकार हिला रहे थे मानो फूल चढ़ा रहे हों, जबकि उनके हाथों में फूल नहीं थे। वहां के मंद प्रकाश में भी यह स्पष्ट था कि वे बहुत कम फूल लाए थे।
उन्हें एहसास हुआ कि पूजा के बाद वे मंदिर में मंगला आरती जलाएंगे। रामभट्ट खड़े हो गए।
उन्होंने घंटी को अपने बाएं हाथ में लिया। वे खड़े हो गए। उन्होंने मौन रूप से आरती करना शुरू किया, घंटी को धीमी, लयबद्ध गति से बजाते हुए और आरती

ताम्हण को अपने दाहिने हाथ में स्थिर रखते हुए। यद्यपि उनके मुँख से निकलने वाले मंत्र, उनके बाएं हाथ में घंटी की लय और उनके दाहिने हाथ में आरती ताम्हण की गति पूरी तरह से स्वतंत्र थीं, फिर भी उनमें एक एकीकृत लय का अनुभव किया जा सकता था।
जैसे ही भीतर स्थित मुख्य देवता की आरती संपन्न हुई, रामभट्ट घंटी बजाते हुए उनके पास आए। नवरंग में स्थित अन्य देवताओं की मूर्तियों को आरती अर्पित करने के बाद, उन्होंने उनसे पूछा,
क्या आप मंगल रति मनाना चाहते हैं?
यह भावना स्पष्ट रूप से झलक रही थी कि यदि आप इसे लेना चाहते हैं, तो कोई समस्या नहीं है; और यदि आप इसे नहीं लेना चाहते हैं, तो कोई आपत्ति नहीं है।
आप क्या पूछ रहे हैं? पूजा के दौरान मंदिर आने वाले लोग मंगला आरती किए बिना कैसे रह सकते हैं?...
कोई बहस नहीं! अगर आप चाहें तो ले लीजिए... मुझे अभी पूजा पूरी करनी है।
रविंद्र ने झट से अपनी जेब में हाथ डाला, हाथ में मौजूद रुपये का सिक्का उसमें डाल दिया, और आरती के ऊपर तीन बार हाथ घुमाते हुए भगवान से हाथ मिला लिए।
रामभट्ट अंदर गए। गर्भगृह में मंत्रों की ध्वनि फिर से गूंज उठी। वे बाहर आए और अपने हाथ पर कन्हेरी का फूल रखा। उन्होंने उन्हें प्रसाद के रूप में तुलसी का पत्ता और केले का टुकड़ा भी दिया। फिर वे अंदर गए और देवता की परिक्रमा करते हुए 'मंत्रः क्रियाः भक्तिः जनार्दन' का उच्चारण किया और क्षमा मांगते हुए हाथ जोड़कर स्मरण किया। उन्होंने घंटी, ताम्हण, फूलदान आदि जो वे लाए थे, एक टोकरी में रख दिए। उन्होंने निरंजन की बाती को इस प्रकार रखा कि वह बुझे नहीं, वहाँ की पत्थर की पटिया पर। उन्होंने बचा हुआ तेल उस पर डाला और निरंजन को टोकरी में रखकर अपने बाएं हाथ में मूसल लेकर गर्भगृह से बाहर आ गए।
``पूजा करने के बाद तुरंत भाग नहीं जाना चाहिए... कुछ देर भगवान के चरणों में बैठना चाहिए..." रामभट्ट ने एक खंभे से टेक लगाते हुए कहा और रवींद्र से कहा, ``तुम भी बैठ जाओ। कुछ सवाल पूछ रहे थे ना?"
मैंने पूछा, 'पूजा के दौरान मंदिर आने वाले लोग मंगला आरती किए बिना कैसे जीवित रह पीएंगे?'
वो दिन बीत गए। अब, जो लोग मंदिर आते हैं, वे मूर्ति की सुंदरता देखने, शिलालेख पढ़ने या यह परखने आते हैं कि उन्हें मंदिर में प्रवेश मिलेगा या नहीं! वे इसलिए आते हैं क्योंकि उन्हें पुजारी के मंत्र सुनना अच्छा लगता है - चलो देखते हैं इसमें क्या मज़ा है। वे पूजा के समय मंदिर आते हैं, इसलिए वे अपने सामने मंगल रति लेकर कहते हैं, 'क्या आप हमारे चेहरे जलाने आए हैं?' हम कहते हैं, 'हम इसमें विश्वास नहीं करते।' वे कहते हैं, 'जल शुद्ध है, क्यों नहीं?... बीमार तो नहीं पड़ोगे ना?' वे पूछते हैं। बाद में क्यों परेशान होना, इसीलिए मैं पहले ही पूछ लेता हूँ-"
इतना कहकर वह चुप रहा।
कुछ क्षण खामोशी में बीत गए।
फिर उसने पूछा,
क्या आप मुझे पहचानते हैं?
``पहचान?-" वह अपनी सीट से थोड़ा आगे बढ़ा और कुछ देर तक उसे देखता रहा, फिर बोला, ``अब मैं भी बूढ़ा हो गया हूँ। मेरी याददाश्त भी कमजोर हो गई है! तुम बताओ... तुम कौन हो?"
मैं वेंकटसुब्बय्या का पोता हूँ..."

``वेंकटसुब्बय्या कौन है? हमारे गाँव से?..." वह पास आकर बोला, ``रवींद्र? भाई, तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया? तुम आजकल कहाँ थे? कितने दिनों बाद गाँव आए हो!" उसका चेहरा प्रशंसा से भरा हुआ था।
मैं कल शाम ही यहाँ पहुँचा हूँ...
"तुमने किस पर गुस्सा निकाला?"
``बी. एम. राजशेखरप्पा का घर."
"राजशेखर एक लिंगायत हैं... क्या वे मल्लिकार्जुन शेट्टी के पुत्र नहीं हैं?"
हां।
वे चुप रहे। रविंद्र को एहसास हुआ कि उन्हें यह बात पसंद नहीं आई कि वह दूसरी जाति के लोगों से बात कर रहा था। लेकिन थोड़ी देर बाद उसने कहा,
आप कहते हैं, इसमें कुछ गलत नहीं है! आजकल तो हर जाति के घरों में जवान-बूढ़े बच्चे खाते-पीते हैं। आप कहते हैं, उनकी शादियाँ भी बड़े शहरों में होती हैं! और हमने कहा था कि हम गाँव छोड़ देंगे, लेकिन हममें से कोई भी गाँव में नहीं रुका। स्कूल में दो शिक्षक हैं और अस्पताल में तीन कंपाउंडर हैं, बस! सब लोग चले गए, अलग-अलग गाँवों में अपने-अपने ठिकाने छोड़ते हुए। देखिए, मैं ही अकेली यहाँ रुकी हूँ! आप सीधे मेरे घर आकर पूछताछ क्यों नहीं की?
मैं आऊंगा! उसे क्या हुआ? क्या शेषम्मा ठीक है?
"नारायण के चरणों में चलने वाले ही सर्वश्रेष्ठ हैं..."
"ओह, हे भगवान!" रविंद्र ने हैरानी से कहा। अपनी दादी का प्रतिनिधित्व करने वाली शेषम्मा के निधन की खबर सुनकर उसका दिल दुख से भर गया। उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे।
रामभट्ट ने कहना शुरू किया,
पंद्रह साल बीत गए। उसने कभी बीमारी की शिकायत नहीं की, न ही रोई। बस यूं ही मैं मंदिर गई और घर लौट आई। खाना तैयार था। “मेरी आत्मा को अच्छा नहीं लग रहा... मैं बेचैन हूँ... मुझे नींद आ रही है... मुझे तीर्थ प्रसाद दो...” तो, हर दिन की तरह, वह अपनी हथेली में एक कटोरा लेकर तीर्थ प्रसाद लेकर आई। उसने तीन बार तीर्थ प्रसाद उंडेला। उसे लेकर उसने अपने हाथ सिर पर रखे और चटाई पर लेट गई। मैं डर के मारे चिनार के पेड़ के पत्तों पर फूँक मारने लगी। लेकिन आत्मा तो देह त्याग चुकी थी...
अच्युत कहाँ है?
हसने। वह बस कंडक्टर है। उसकी पत्नी रामनाथपुर की रहने वाली है। उसके दो बच्चे हैं... वह ठीक-ठाक है..."
"उसने गांव क्यों छोड़ा?"
“कौन जाने! लेकिन वो चला गया, बस बहुत हो गया,” उसने कहा! अब तो ज़मीन ही नहीं बची। आज के बच्चे भगवान की पूजा के इस पेशे को कैसे पसंद करेंगे? मैंने उसे सारे मंत्र सिखाए। लेकिन उसने कहा, सारे उस्ताद-पर्यवेक्षक-निरीक्षक मेरे साथ हैं! मैं घंटी बजाकर पेट भरने के बजाय सम्मान से चार पैसे कमाना ज़्यादा पसंद करूँगा! मुझे गुस्सा आया और मैंने उससे एक साल तक बात नहीं की! उस समय मैंने सोचा, हमारी कितनी पीढ़ियाँ किसी राजा द्वारा पूजा के लिए दान में दी गई ज़मीन से उगाए गए अनाज को खाकर पली-बढ़ी हैं... तो अच्युत ऐसा क्यों नहीं कर सकता? अच्युत भी पेट भरने के लिए कोई और काम कर लेगा! लेकिन क्या उसे ऐसा पुजारी नहीं मिलना चाहिए जो उतनी ही श्रद्धा से पूजा करता हो?
"तो यहाँ की ज़मीनों की देखभाल कौन करता है?"
``कौन सी भूमि?"
"समृद्धि की भूमि!"
"क्या तुम अखबार पढ़ते हो या नहीं, बेटा? उस समय यह सभी अखबारों में छपा था। फिर किसानों की कई पीढ़ियों ने उस जमीन पर कब्जा कर लिया और उसे

अपने नाम कर लिया।"
"ओह, हाँ!" रविंद्र ने गंभीरता से कहा, "अगर तुम भी उनके बीच रहते, तो तुम्हारी ज़मीनें नहीं छिनतीं!"
``गुस्सा मत करो; लेकिन सिर्फ अंग्रेजी सीखने से सब कुछ समझ में नहीं आ जाता, है ना!" उसकी आवाज़ में गुस्सा झलक रहा था। वह रुका और बोला, ``सोचो, मंदिर बनवाने के बाद उसे राजा ने हमारे पूर्वजों को पूजा-पाठ के लिए ज़मीन दी, कुछ को गड्ढे खुदवाने के लिए, और कुछ को ताश खेलने के लिए। उसके बाद कई राजा बदले - मुस्लिम राजा भी आए और चले गए। जब तक हम ईश्वर की पूजा करते हैं, हमें उस खेत की उपज खाने का अधिकार है। हमें उस ज़मीन को बेचने का कभी अधिकार नहीं था! समझे?..."
हां...
ओह! हमें तो पूजा-अर्चना का वरदान मिला है! क्या आप जानते हैं कि आगम शास्त्र के अनुसार पूजा-अर्चना करना कितना कठिन काम है? मैं स्वयं सुबह जल्दी उठकर तुलसी तोड़ती थी। फिर मंदिर जाती, पूरे मंदिर की सफाई करती, गंदगी हटाती, स्नान करती और फिर मंदिर जाकर पूजा करती, विष्णु सहस्रनाम का जाप करते हुए एक-एक फूल लेकर पूजा करती... फिर चाहे दिन कैसा भी हो, मैं पूजा-अर्चना और महा आरती पूरी करके दोपहर दो बजे तक घर लौट आती! घर आकर भोजन और वाम कुक्षी करती और शाम को फिर मंदिर चली जाती। इसके अलावा, पूजा के लिए वस्त्र, बत्ती, पुष्प बत्ती और अग्नि की बत्ती तैयार करना भी एक अलग काम है! यह सब शांतिपूर्वक करना होता है, इसीलिए तो दाता ने हमें ये जमीनें दी हैं? फिर हम खेती कब शुरू करेंगे?
उन्होंने बोलना बंद कर दिया।

मंदिर के भीतर सन्नाटा छा गया।
रविंद्र ने पूछा,
"आपने सरकार को तथ्यों की जानकारी क्यों नहीं दी?"
आप जानते हैं! सहायक आयुक्त, विधायक ने हर जगह प्रति दी थी। मैं मंत्री जी के पास भी गया था; लेकिन सिपाही ने मुझे अंदर नहीं जाने दिया। मैंने उन्हें भी एक प्रति दी। लेकिन ज़मीनें बची ही नहीं थीं। क्या आप जानते हैं कि अच्युत को सब कुछ बताने के बाद उन्होंने क्या कहा? उन्होंने कहा, अगर मैं आपकी बात सुनने के बाद भी यहाँ घंटी बजाता रहता, तो अब मेरा क्या हाल होता! आप चाहे जो भी सोचें, हम भी समय के चक्र को समझते हैं, अप्पा!..."
रविंद्र दुखी महसूस कर रहा था। यह सच है कि क्रांति की धारा में कई उपयोगी मूल्य अनिवार्य रूप से बह जाते हैं, लेकिन क्या सामाजिक क्रांति के दौरान थोड़ी सी सावधानी और बारीकियों पर ध्यान देकर इसे हासिल नहीं किया जा सकता था?
``ज़मीन छीनने के बाद सरकार ने कोई न कोई तनख्वाह तो तय की होगी, है ना?" ``तो! साढ़े सत्रह रुपये महीना! तालुका जाने का बस किराया, वहाँ के क्लर्कों को एक-एक रुपये की रिश्वत देने के बाद, दिनभर की मशक्कत के बाद मेरे पास साढ़े बारह रुपये बचते हैं। इसमें देवताओं के सामने फोड़ने के लिए तीन नारियल भी शामिल नहीं हैं! इसके अलावा, अगरबत्ती के लिए छह रुपये महीना! इस तरह दो-तीन साल की मशक्कत के बाद, कुल मिलाकर दो सौ सोलह रुपये हो जाते हैं। जब तक मुझे असल में पैसे मिलते हैं, तब तक छियासठ रुपये रिश्वत में खर्च हो जाते हैं! मैंने आज तक सरकार से एक रुपया भी नहीं लिया है। बड़े मंदिरों के पुजारी सरकार से शिकायत करते हैं – कम से कम हमें उतनी ही तनख्वाह तो दें जितनी सरकारी दफ्तरों में खरपतवार हटाने और शौचालय साफ करने वालों को मिलती है! नहीं तो, वे कहते हैं, हम हड़ताल पर चले जाएंगे! दूसरे शब्दों में, श्रद्धा से पूजा करने का क्या फायदा!"

तो अब आप क्या कर रहे हैं?
"अच्युत हर महीने पचास रुपये भेजता है। यह एकमुश्त भुगतान है। उसका अपना घर भी है। दरवाजे पर चार फूलों के पेड़ और एक तुलसी का पौधा है। वह मुख से सहस्र-पुष्पार्चना का मंत्र जपती है! लेकिन फूलों में पत्तियां नहीं होतीं!" उसने कहा।
उन्होंने वही बात दोबारा कही।
हम यहाँ बैठकर बातें कर रहे हैं! चलो, घर चलते हैं... कम से कम एक कप कॉफी तो पी लें..."
वह कुदाल और सरकंडों से भरी टोकरी लेकर चल पड़ा। उसने भी दरवाजे के पास रखी चप्पलें पहन लीं और निकल पड़ा। हालांकि, वह नंगे पैर आया था। सूर्य की चिलचिलाती गर्मी सहन न कर पाने के कारण गरुड़-कंब से बंधे दोनों बैल कूंब के चारों ओर घूम रहे थे। इस वजह से उनके पैरों के पास पड़ा पतला गोबर और मूत्र रौंदकर कुचल गया और उसकी दुर्गंध फैल गई। दुर्गंध उसकी नाक तक नहीं पहुंची, और इसी मनःस्थिति में रामभट दरवाजे पर खड़ी बैलगाड़ी को पार करके चल पड़ा।
इसे इसलिए छोड़ दिया गया था क्योंकि यह अपने आप में एक घर था। जब शेषम्मा जीवित थे, तब जिस चिकनी ज़मीन पर वे बिना चटाई या कंबल के बैठते और सोते थे, वह कई जगहों से फट गई थी। दीवारों के कोनों और छत की कड़ियों पर मकड़ी के जाले लटके हुए थे।
कॉफी बनाने के लिए रसोई में गए रामभट्ट ने उन्हें बैठने के लिए कहते हुए कहा, आप यहीं रुककर खाना खा सकते थे, कोई दिक्कत नहीं थी। अभी चावल बनने बाकी हैं। सिर्फ दाल पकी है। मैं पूजा तक कुछ नहीं खाऊँगी। आप रुकिए... मैं अभी चावल डाल देती हूँ..."
"नहीं। कृष्णा गौड़ा इंतज़ार करेंगे..." उन्होंने अपनी घड़ी देखते हुए कहा।
ग्यारह बजकर साढ़े बारह बज रहे थे। उसे लगा कि देर हो चुकी है, कोई बात नहीं, और वह छत से लटकी टोकरी में रखी पुरानी किताबों को देखने लगा। पुरानी पंचांग, मन्नतों की किताबें और विभिन्न अनुष्ठानों का विवरण देने वाली किताबें।
रामभट्ट दोनों हाथों में कॉफी के कप लिए बाहर आए। उन्होंने एक कप अपने सामने रखा और खुद भी एक खंभे से टेक लगाकर बैठ गए, उनका अपना कप भी उनके सामने था।
उन्होंने पूछा,
"यहाँ इतनी कठिनाइयों में रहने के बजाय, हसन, तुम अच्युत के साथ क्यों नहीं रह जाते?"
``मैंने भी यही सोचा था..." उसने अपनी आँखें बंद कर लीं और कप में रखी कॉफ़ी को दवा की तरह गले से नीचे उतारते हुए बोला, ``मैं वहाँ एक महीना रहने के बाद भी आया। वह भी अच्छी है, हाथ में स्वाद है - और वो दिल से काम करती है! लेकिन जब मैं खाने बैठा, तो मैंने सोचा, मैं यहाँ खा रहा हूँ और मंदिर के भगवान की कोई पूजा नहीं हो रही! मैं खाना कैसे निगल सकती हूँ? कितनी ही पीढ़ियाँ पूजा करके जीती आई हैं। अब कोई फल नहीं, तो मैंने पूजा छोड़ दी और चली गयी! इस विचार से मेरा मन भ्रमित हो गया और अगले भोजन में मुझे मल में सफेद कीड़े दिखने लगे - रात को मैं बिस्तर पर पीठ टिकाकर सोचता रहा कि क्या भगवान मुझसे पूछेंगे: क्या यही तुम्हारी भक्ति है? अंत में मुझे समझ आया... मैं अपने पूर्वजों से भी ज्यादा भाग्यशाली हूं, इसलिए मुझे बिना किसी फल के भगवान की पूजा करने का अवसर मिल रहा है! मैंने अच्युत को यह बताया और चला गया।"
उन्होंने कप को बिना हिलाए ही कॉफी पीना शुरू कर दिया। रविंद्र को याद आया कि उसके दादाजी के घर में भी इसी आकार के कप थे। लेकिन तब वे उनमें छाछ

पीते थे, कॉफी नहीं। अब रवींद्र को उस गर्म कप से कॉफी पीना मुश्किल लग रहा था।
उन्होंने कॉफी का एक घूंट लिया और कहा,
"क्या आपको पता है कि मंदिर में स्थित सरस्वती की मूर्ति चोरी हो गई थी?"
तो! उस दिन जब मैं आरती करने गई, सरस्वती माता प्रकट नहीं हुईं! मेरा हृदय बैठ गया! मैंने कहा, माँ, गाँव को क्रोधित मत करो! हालाँकि मंदिर पत्थर का बना है, लेकिन दरवाजा लकड़ी का है, है ना? कील ढीली हो गई थी... किसी ने उसे एक दिन उठा लिया और ले गया। उस समय, मैं गाँव के सभी बुजुर्गों से मिली और उनसे नया दरवाजा बनवाने का अनुरोध किया। सबने मुझे मना कर दिया। उन्होंने कहा, भगवान के नाम पर, तुम खो नहीं रही हो, है ना? अब तुम ही बनाओ, क्या करोगे! न दरवाजा है न ताली... तो क्या हुआ अगर कोई इसे चुरा न ले? लेकिन मुझे समझ नहीं आता... ये लोग पत्थर की मूर्तियाँ क्यों चुराते हैं? क्योंकि अगर ऐसी चुराई हुई मूर्ति स्थापित भी कर दी जाए, तो उससे कोई ऊर्जा उत्पन्न नहीं होती..."
"पूजा के लिए नहीं – पैसे के लिए! अमेरिका में लोग एक मूर्ति के लिए लाखों रुपये देते हैं!"
"पैसे के लिए? मैंने तुरंत पुलिस को सूचना दी और मूर्ति गायब हो जाने के बाद पुलिस आई। उन्होंने पहले कभी मूर्ति नहीं देखी थी। खाली जगह देखकर उन्होंने कहा, 'तुम चोर नहीं हो, ले जाओ! शैतान को देखो! अगर एक मुर्गी चोरी हो जाती है, तो यही चिकनजप्पा पूरे गांव पर कब्जा कर लेगा!' लेकिन उन्होंने तो यह भी नहीं देखा कि देवी गायब हो गई थी!"
रवींद्र ने घड़ी देखी - सवा बारह बज रहे थे। वह उठ खड़ा हुआ, उसे याद आया कि कृष्ण गौड़ा उसका इंतजार कर रहे होंगे।
उन्होंने यह भी कहा, "अगर तुमने खाना खा लिया होता तो बेहतर होता..."

■

अपनी चप्पलें पहनकर रविंद्र चल पड़ा। गौड़ा बस्ती को पीछे छोड़ते हुए दूसरी गली पार करके वह कृष्ण गौड़ा के विशाल परिसर में पहुँचा। दो-तीन नौकर दो-तीन हज़ार नारियलों के ढेर के सामने बैठे थे और उन्हें नुकीले औजारों से छील रहे थे। वहाँ मोटरसाइकिल या टुक का कोई नामोनिशान नहीं था।
जैसे ही उसने यह देखा, उनमें से एक ने कहा,
"गाड गांव में नहीं है।"
तुम कहाँ गए थे? कब गए थे?
"वे कल रात चले गए, वे वापस नहीं आए।"
उन्होंने मुझे 12:30 बजे आने को कहा था।
तो बैठ जाओ वरना तुम उदास हो जाओगे...
वह अंदर सोफे पर बैठ गया। वह मोटरसाइकिल की आवाज आने का इंतजार करने लगा। उसने कहा कि मोटरसाइकिल कल रात गई थी, लेकिन वापस नहीं आई। पता नहीं उस समय क्या काम हुआ होगा! उसे याद आया कि वह दिन भर मंदिर में, ओसारी में, रामभट्ट के घर में बैठ पाया था, लेकिन सुबह से वह किसी चीज का सहारा नहीं ले पा रहा था। वह अनजाने में सोफे पर पीछे की ओर झुक गया। उसे ऐसा लगा जैसे कॉफी पीने से उसकी आंखें भारी हो गई हों। उसने सोफे पर पैर फैलाए और आंखें बंद कर लीं। बाहर नारियल छिलने की आवाज सुनाई दे रही थी। तभी उसकी आंखें खुल गईं।
वह लगभग आधे घंटे सोया होगा। जब वह जागा, तो उसे बाहर से अभी भी सरसराहट की आवाज़ सुनाई दे रही थी। उसने अपनी घड़ी देखी, सवा एक बज रहा था। कृष्णगौड़ा अभी भी कहीं नज़र नहीं आ रहा था। कौन जाने वह किस काम से गया होगा! कौन जाने उसे मुझे रात के खाने पर बुलाने की याद भी नहीं रही! क्या उसने मुझे घर पर बताया है या नहीं? उसका परिवार यहाँ है या नहीं, कौन

जाने! वह कह रहा था कि उसकी पत्नी ठीक है, तो इस लिहाज़ से उसकी पत्नी यहाँ होगी।
उसे थोड़ा और इंतजार करना पड़ा, इसलिए वह बैठ गया। बाहर नारियल छीलने की आवाज बंद हो गई। जिस नौकर ने उसे अंदर बैठने के लिए कहा था, वह अंदर आया और बोला,
"मुझे नहीं लगता कि वे अब आएंगे। परिवार वाले मैसूर गए होंगे। तुम्हारा यहाँ इंतज़ार करने का कोई फायदा नहीं है। हम घर जाकर चावल खाने वाले हैं।"
उन्हें एहसास हुआ कि उन्हें उनसे कहना होगा, "हम खुद को यहीं बंद कर लेंगे - अब आप लोग यहां से चले जाओ।"
"गौड़ा की पत्नी घर पर नहीं है?"
"वे कहाँ हैं? वे मैसूर में हैं, है ना?"
रविंद्र ने एक पल सोचा। फिर उसने पूछा,
"जब गौड़ परिवार यहां आएगा, तो उनका पालन-पोषण और विकास कौन करेगा?"
"हाई, लिंगम्मा नाम की एक महिला। जब भी गौड़ आता है, वह आती है और कॉफी, नाश्ता और गेहूं की रोटी बनाती है।"
अब रविंद्र को और भी बातें याद आ गईं। कल उसने हमें रात के खाने पर बुलाया था और उसी मोटरसाइकिल पर चला गया था। अगर उसकी पत्नी यहाँ होती भी, तो उसे पता चलने का कोई तरीका नहीं था कि आज कोई रात के खाने पर आ रहा है।
रवींद्र को लगा कि उसके साथ अपमानजनक और तिरस्कारपूर्ण व्यवहार किया गया है। शायद यह कृष्ण गौड़ा का स्वभाव था, या फिर किसी वास्तविक घटना के कारण वह कुछ करने में असमर्थ था?
नौकर ने पूछा,
क्या? क्या कोई अत्यावश्यक काम है?
"जी हां। मैं कल रात आया था। मैंने तुम्हें दो-तीन बार बारह या साढ़े बारह बजे आने को कहा था। मैंने तुम्हें रात के खाने के लिए यहाँ बुलाया था।" उसने नौकर की प्रतिक्रिया देखते हुए पूछा।
"तो फिर हो गया, ले लो! अगर तुम उन पर भरोसा करते हो, तो मानो खुद खाकर खाओ! वे मुझे बीज बताते हैं... वे दो हज़ार नारियल छीलकर रात के खाने के लिए रखते हैं... वे मुझे स्वादिष्ट मटन खिलाते हैं। रात के खाने में तुम क्या मांगते हो! वे नारियल छीलकर ट्रक में लादकर गांव चले जाते हैं... यहाँ खाना बहुत कम मिलता है... वे हमें हमारी मजदूरी के बदले बीज दिए बिना ही चले जाते हैं... वे आठ दिन बाद बीज देते हैं और कहते हैं... ओह, मेरा दोस्त चला गया... मैं उसके अंतिम संस्कार में गया था!... कितने दोस्त ऐसे मर जाते हैं, भगवान का शुक्र है! उन्होंने तुम्हें भी बीज बताए थे, ले लो!"
रविंद्र को लगा कि अब वह कृष्णगौड़ा के स्वभाव को और भी स्पष्ट रूप से समझ पा रहा है। क्या वह शुरू से ही ऐसा है, या हाल ही में ऐसा हुआ है? यह सवाल उसके मन में अनसुलझा ही रह गया। बचपन में वह क्या समझता था? वॉलीबॉल खेलना, कुएँ से पानी पीना, बस इतना ही। वह एक कॉलेज में पढ़ाता है, ऐसा कह सकते हैं। लेकिन इस पेशे में उससे जो गुण अपेक्षित होते हैं, वे उसमें नहीं दिखते। लेकिन... लेकिन...
शायद आधुनिक शिक्षितों के बारे में मेरा ज्ञान अपर्याप्त है, या कौन जाने! वह बाहर आया और उसने अपनी चप्पलें पहन लीं।
अब तक उसे बहुत भूख लग चुकी थी। राजशेखर के घर पर खाना जरूर होगा। अगर कुछ नहीं तो कम से कम छाछ और रोटी तो मिल ही जाएगी। यही सोचकर वह वहाँ जाने के लिए चल पड़ा। पच्चीस कदम चलने के बाद उसके कदम

लड़खड़ा गए। उसे पूरी सच्चाई समझ आ गई थी कि वह इस पर चुप नहीं रह सकता। वह इस घटना को बेवजह महत्व देगा और उसकी पूरी जाति का मूल्यांकन करने लगेगा! इसलिए अभी वहाँ जाना ठीक नहीं था।
उसने अगले कोने पर एक छोटी सी दुकान से बिस्कुट का एक डिब्बा और दो केले खरीदे। उन्हें खाने के बाद उसे थोड़ा बेहतर महसूस हुआ। उसे इस पर दो सियार मिले, तो—
मैं बाग की ओर जाता। उस बाग या बगीचे में जहाँ लोग दिखते हों। मैं उनसे सीधे कहता, मुझे दो सियार चाहिए। कीमत बताओ, चाहे जो भी हो।
गाँव और आसपास की बस्तियों को पार करते हुए, उनके कदम उनके खेत के सामने आकर रुक गए। सामने का द्वार खुला था, लेकिन उस पर ताला नहीं लगा था। अंदर गायें, बैल और बछड़े चर रहे थे। उन्होंने द्वार खोला और अंदर प्रवेश किया।
वाह! मैंने इन नारियल के पेड़ों को बीस साल पहले देखा था। ये कितने ऊंचे हो गए हैं! जो पौधे मेरे बचपन में इतने छोटे थे, अब कितने बड़े हो गए हैं! सब कुछ बहुत अच्छे से रखा गया है!
वह आगे बढ़ते हुए चारों ओर देख रहा था। तभी किसी कोने से एक आवाज आई।
"तुम किस गाँव से हो? यहाँ क्यों आए हो?" कहीं और से आए एक चौदह या पंद्रह साल के लड़के ने पूछा।
"यह हमारा भी गाँव है। हम इस खेत के मूल मालिक हैं... हम खेत देखने आए थे। हमें दो सियार चाहिए थे। तुम्हारे पिता कहाँ हैं?"
"इसका असली मालिक कौन है?" लड़के ने आपत्ति जताते हुए पूछा।
यह बागान वेंकटसुब्बैया नाम के एक व्यक्ति के स्वामित्व में थी। मैं उनका पोता हूँ..."
लड़का रविंद्र को शक की निगाहों से देख रहा था। फिर कुछ सोचने के बाद वह तेजी से वहां से भाग गया।
मवेशी चर रहे थे। यह स्पष्ट था कि लड़का अपने पिता को बुलाने गया था।
रवींद्र बगीचे में टहलने गया। एक कलमीकृत आम गायब हो गया था। लेकिन बादामी आम बच गया। अरे, क्या यह चांद कटहल नहीं है? अगर कटहल खाना है तो चांद कटहल ही खाओ। किसी और तरह के कटहल को हाथ भी मत लगाओ।
तालाब के पास लगे दोनों चफा के पेड़ कितने सुंदर हो गए हैं! जैसे-जैसे पेड़ बूढ़े होते गए, फूलों की संख्या भी कम होती गई। उनमें से एक नाग चफा था और दूसरा सोन चफा! चफा ने कहा, "दादी की जान बचाओ!" वह चफा को भगवान की शरण में रखती थी। बाल कम होने के बावजूद, वह आठ-दस चफा के फूल एक साथ बांधकर अपने जूड़े में बांध लेती थी। कई बार मैं इन पेड़ों से फूल तोड़कर उसे देती थी। कई बार तो मैं फूलों को बांध भी देती थी। जब चफा उसे देखती तो उसका चेहरा खुशी से चमक उठता था।
रवींद्र झील के सामने खड़ा था।
उन्होंने तालाब की सीढ़ियों का ठीक से रखरखाव नहीं किया था। हर साल, मेरे दादाजी तालाब का सारा पानी निकाल देते थे, गाद हटाते थे और सीढ़ियों की दरारें साफ करते थे, जिससे पूरा तालाब चमकने लगता था। अगर आप तालाब में सिक्का फेंकते, तो आप बता सकते थे कि नीचे गिरने वाले सिक्के का ऊपरी हिस्सा मुहर है या कांटा। इसी तालाब में, जी हाँ, इसी तालाब में, मेरी दादी ने ऋषि पंचमी व्रत के दौरान कई बार स्नान किया था।
जी हाँ। उन्हें सब कुछ स्पष्ट रूप से याद था। अप्पा-अम्मा भी उस समय दिल्ली से आए थे। मैं उस समय यहीं था। माँ के भाई-बहन और कई अन्य रिश्तेदार यहां इकट्ठा हुए थे। गणेश चतुर्थी का दूसरा दिन था – यह घटना कितने साल पहले हुई थी? मैं लगभग दस साल का था – तो यह घटना लगभग तेंतीस साल पहले की है।

लगभग बावन या तिरपन वर्ष की एक दादी। यह प्रतिज्ञा उन्होंने मासिक धर्म पूरी तरह बंद होने के बाद ली थी – जब उन्हें पूरा यकीन हो गया था कि अब उन्हें गंदगी नहीं देखनी पड़ेगी। उनके चेहरे पर आनंद का कितना भाव था! गंदगी और मैल से पूरी तरह मुक्त होने का एहसास! प्रतिज्ञा के अनुसार, उन्हें पानी में अनगिनत बार डुबकी लगानी थी – उसी पानी में। जब वे ऐसा नहीं कर पाती थीं, तो कोई और – मैं, जिसने उस समय तैरना सीखा था – उनका हाथ पकड़ लेता था और दूसरे हाथ से उनकी नाक ढककर पानी में डुबकी लगाता था... एक-दो-तीन-चार गिनते हुए, पच्चीस-तीस डुबकी लगाने के बाद, वे गहरी सांस लेतीं और फिर डुबकी लगातीं – और इसी तरह – हर बार एक सौ आठ बार।
आज भी, सब कुछ याद करके मेरा हृदय उत्साह से भर उठता है। उस समय, मेरे दृष्टिकोण से इसका यही अर्थ था कि इसके बाद हर महीने दादी एक तरफ बैठ जाएंगी और दादाजी खाना बनाएंगे, यह सारी कठिनाई समाप्त हो जाएगी, बस यही मैंने सोचा था। अगले दिन, किसी संदर्भ में 'व्रत्वुदामणि' पढ़ते समय, कई बातों का अर्थ स्पष्ट हो गया। 'मुम देहे राजा संपर्क जनन-दोष परिहारार्थम्' का संकल्प लेने के बाद, पंचगव्य से स्वयं को शुद्ध करना चाहिए और यमुना नदी की पूजा करनी चाहिए, फिर कश्यप-भारद्वाज-विश्वामित्र-गौतम-जमदग्नि-वशिष्ठ-अगस्त्य और अरुंधती का एक-एक करके आह्वान करना चाहिए और प्रार्थना करनी चाहिए - क्योंकि ये सात ऋषि और अरुंधती स्वतंत्र, आत्मनिर्भर, स्वयं-सम्मोहित, धर्म के अनुयायी और संन्यास धर्म के प्रज्वलित हैं - ताकि हम उनके इन सभी गुणों को प्राप्त कर सकें, यह प्रार्थना इसी के लिए है!
फिर अर्शी पंचमी की कथा सुनाई गई। पूर्वाश्रम में विपत्ति उत्पन्न करने वाले व्रतासुर का वध करने के कारण देवेंद्र पर एक ब्राह्मण की हत्या का दोष लगा। देवेंद्र ने ब्रह्मा से प्रार्थना की कि वे इस दोष से मुक्ति दिलाएं। उस समय दयालु ब्रह्मा ने इंद्र से ब्राह्मण की हत्या का दोष हटाकर उसका एक भाग अग्नि की पहली ज्वाला में, एक भाग नदी में, एक भाग वृक्षों, पहाड़ों और नदियों में तथा चौथा भाग स्त्रियों में डाल दिया। अतः, यह दोष उन स्त्रियों पर लगा जो मासिक धर्म से गुजरती हैं। एक निश्चित आयु के बाद वे इससे मुक्त हो जाती हैं...। उनका मन अर्शी पंचमी की उपासना में लीन हो गया। कुंवारी रहना, प्रजनन के चक्र में सदा के लिए उलझ जाना - प्रकृति के आंतरिक प्रवाह में लीन हो जाना। इससे मुक्त होने के बाद, ऋषि के समान होना - स्वतंत्र होना - आत्मनिर्भर होना - एक स्त्री के दृष्टिकोण से यह कितनी अद्भुत मुक्ति का अनुभव है! प्रकृति के बंधनों से मुक्त होना, मातृत्व का अनुभव करेंगी!
ऐसा कहा जाता है कि अर्शी पंचमी व्रत लेने वाली महिला को अपने पति से संपर्क करने की सख्त मनाही होती है। ऐसा माना जाता है कि पति-पत्नी के बीच का स्वाभाविक और सहज संबंध समाप्त हो जाता है और केवल आध्यात्मिक और मनोवृत्ति से संबंधित संबंध ही शेष रह जाता है। इसलिए, ऐसा कहा जाता है कि कोई भी पत्नी अपने पति की अनुमति के बिना यह व्रत नहीं ले सकती।
मेरी नानी के अर्शी पंचमी व्रत के दौरान दादाजी कितने उत्साह से घर में इधर-उधर घूमते थे! जब नानी ठंडे पानी में डुबकी लगाती थीं और कमर तक गीले कपड़ों में पीनी में खड़ी होती थीं, तो दादाजी खुद उन्हें सूखा पंचा देते और डांटते हुए कहते, "जल्दी से बाल पोंछ लो, देखते हैं।" अर्शी पंचमी व्रत से पहले और बाद में दादाजी नानी से कितना प्यार करते थे! अब, तैंतीस साल बाद, रविंद्र को याद आया कि पुजारी ने उनसे कहा था कि जीवन के एक निश्चित स्तर पर सभी को यह व्रत, "ब्राह्मण-क्षत्रिय वैश्य शूद्र वादी" रखना चाहिए। उस समय, नानी ने अपने बाल पोंछने के बजाय मेरा सिर पोंछना शुरू कर दिया था और कहा था, "डॉक्टर ने एक सौ अस्सी-आठ लोगों को मार डाला है।" आज भी रविंद्र को याद है कि कैसे उनका स्पर्श मेरे बालों में जाता था और मेरी पीठ में झनझनाहट पैदा कर देता था।

रवींद्र के मन में इस झील में डुबकी लगाने की तीव्र इच्छा जागृत हुई। उस समय उसने अपनी दादी के लिए एक सौ आठ नहीं, बल्कि दो या तीन लोगों को मारा था!
उसने अपनी कमीज़, बनियान और पैंट उतार दी। अपने कैमरे को कपड़ों में लपेटकर वह धीरे-धीरे पानी में उतरने लगा। पैर, कुल्हे, घुटने, जांघें, कमर, नहीं। उस समय पानी उतना साफ नहीं था। उसे पूरे शरीर में खुज़ली होने लगी, लेकिन वह गोता लगाता रहा। एक-दो-तीन... अपनी बाहों, पैरों, कंधों, छाती को रगड़ते हुए, फिर से गोता लगाया।
उसने किसी को उसे पुकारते हुए सुना।
तुम कौन हो, बेटे? तुम किसे ढूंढ रहे हो? क्या हम रस्सियाँ तोड़ दें?
रवींद्र ने चालीस वर्ष के एक व्यक्ति को देखा, जिसने खाकी शॉर्ट्स और धुएँ के रंग की कमीज़ के ऊपर एक तह की हुई लुंगी पहनी हुई थी, और वह उससे सवाल पूछ रहा था। उसके एक हाथ में लाठी और दूसरे हाथ में कुल्हाड़ी थी। तालाब के चारों ओर दस-पंद्रह अन्य व्यक्ति युद्ध की मुद्रा में खड़े थे। उनमें से तीन-चार ने भी उसकी आवाज़ का साथ दिया।
रविंद्र को नहीं पता था कि उसने क्या गलती की है। लेकिन उसे यह भी एहसास था कि अगर उसका धैर्य टूट गया तो वह लड़ नहीं पाएगा। वह दृढ़ता से अपने कपड़ों की ओर बढ़ा और चालीस साल के उस आदमी से पूछा,
"अरे यार, ऐसा क्यों हुआ? तुम इतना क्यों चिल्ला रहे थे?"
इस प्रतिक्रिया से वह व्यक्ति बहुत भ्रमित हो गया। उसके बगल में घड़ी पहने हुए व्यक्ति ने कहा,
``पुराने मालिकों का पोता, मैं कहता हूँ! यही अब इस बागान का मालिक है! तुम अदालत में हाथापाई करने गए, लेकिन इसका कोई फायदा नहीं।"
मुझे दो सियार चाहिए थे। उन्हें बेच दो! भले ही कुछ रुपये ही खर्च हों, कोई बात नहीं।
उन्होंने इशारा करते हुए कहा,
"मेरी मां मुझे दो रुपये में मुर्गा देने के लिए सड़क पर लेटी हुई है!"
"तो मुझे तीन रुपये दो..." उसने अपनी कमीज उठाते हुए कहा और अपनी जेब से दस रुपये का नोट निकालकर अपने सामने पकड़ लिया।
अब उस आदमी के चेहरे से सारी उग्रता गायब हो गई थी और वह उलझन में दिख रहा था। उसने कुछ ज़्यादा ही माँग लिया था... उसने बेवजह बदतमीज़ी की थी, इसलिए वह थोड़ा शर्मिंदा लग रहा था।
रविंद्र ने चारों ओर देखा। बारह लोग हाथों में लाठियाँ लिए खड़े थे। उसी समय, वह लड़का जो सबसे पहले दौड़कर सबको खबर सुनाने गया था, वह भी दौड़कर उनके साथ शामिल हो गया।
रविंद्र ने दस रुपये का नोट अपनी जेब में रखा और सौ रुपये का नोट अपने सामने रखकर कहा,
ये लो—ये सौ रुपये हैं। हम चौदह लोग हैं, जिनमें तुम और मैं भी शामिल हैं। हममें से हर एक को दो सियार दो। कुल अट्ठाईस सियार—हर सियार के तीन रुपये, ठीक है? कुल चौरासी रुपये हुए। अगर तुम्हारे पास कुछ बचे हों, तो मुझे बाकी के चौदह रुपये दे दो—नहीं तो मैं तुम्हारे लिए रख लूँगा। चलो... अट्ठाईस सियार निकालो...!
किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा। उसने अपना सिर उठाया और चारों ओर सबकी ओर देखा। सबके चेहरों पर आश्चर्य और विस्मय स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था।
उन्होंने फिर कहा,
"इसे ले लो। इसे अपनी जेब में रख लो। मुझे प्यास लगी है..." उसने सौ रुपये का नोट अपनी जेब में रखते हुए कहा।

जिसकी जेब में नोट था, वह अब चुप रहा। उसके पड़ोसी ने कहा,
सोमन्ना... अम्मा को सियार नहीं चाहिए... अम्मा, बस हम सबको छह-छह रुपये दे दो!
"जो करना है करो--- मुझे प्यास लगी है... मुझे पानी पिलाओ।"
फिर उस आदमी ने लड़के से कहा,
अरे, वसंत! बैंगटॉयज़ क्या! देखो... इस कोने में पेड़ की दो शाखाएँ लाओ। चलो, वहाँ से।
खबर सुनाने के लिए दौड़ा लड़का फिर दौड़ पड़ा। रविंद्र ने भी अपने कपड़े पहन लिए। अपनी जेब में रखी कंघी से गीले बालों में कंघी करते हुए लड़का दो कटहल लेकर आया। जब सोमन्ना ने कहा, 'इन्हें दो-', तो उसने कटहलों को छीलकर उनका ऊपरी हिस्सा तोड़ दिया और रविंद्र को दे दिया। जब कटहल खाली हो गया, तो उसने कहा,
``सभी लोग एक तरफ हट जाइए... मैं एक तस्वीर खींचता हूँ..."
सोमन्ना ने उन लोगों को बुलाया जो फोटो खिंचवाने को लेकर बहस कर रहे थे, और कहा, "चलो दोस्तों।" सभी लोग आए और हाथों में लाठी और दरांती लेकर फोटो खिंचवाने के लिए खड़े हो गए।
फोटो खींचने के बाद, रविंद्र अपने गीले अंडरवियर को कसकर दबाते हुए वहां से चला गया। उसके पूरे शरीर में खुजली हो रही थी। उसे यह भी पता था कि उस पानी में नहाने की वजह से उसके शरीर में खुजली हो रही है।
जब वह बागान छोड़कर तटबंध से होते हुए गाँव लौट रहा था, तो उसके मन में घटी घटना का ख्याल आ रहा था। एक अजीब घटना – उसके मन में उस घटना का विश्लेषण चल रहा था। मैंने दिखा दिया कि बागान का वर्तमान मालिक सोमन्ना और उसके साथी नैतिक रूप से कितने नीच हैं – मैं जीत गया! मुझे ऐसा लगता है, मैं कहता हूँ! वे लोग ज़रूर सोच रहे होंगे, इस बामना को अपनी गलती का एहसास हो गया है... और कैसे वह डर गया और पैसे देने के बाद भाग गया!
अगर तुमने धोखे से हमारी ज़मीन छीन ली, तो भी तुम उस ज़मीन का रस पी सकते हो... मैंने उन्हें यह कहकर कुत्तों की तरह थूक निगलने पर मजबूर कर दिया कि मैं इसका भुगतान करूंगा... अब उन्हें और कितनी बेइज्ज़ती झेलनी पड़ेगी?
उन्हें मन ही मन यह अहसास हो गया था कि आज के बसवनपुर के रीति-रिवाजों और परंपराओं को एक ही परिकल्पना में समेटना असंभव है। यह सोचकर कि जब तक वे राजशेखर के घर जाकर साबुन से स्नान नहीं कर लेते, तब तक उनके पूरे शरीर में हो रही खुजली शांत नहीं होगी, वे तेज़ी से चलने लगे।

■

जब रविंद्र घर पहुंचा, तो राजशेखर स्कूल में था। नहाने के बाद वह बाहर आया और अपना सिर पोंछा। जब राजशेखर की मां, रुद्रम्मा ने पूछा,
"तुम ठंडे पानी से क्यों नहाए? अगर तुमने मुझे बताया होता, तो मैं पानी गर्म कर लेता!"
"कुछ नहीं... पानी गर्म था।"
चलिए खाना खाते हैं...
रात का खाना नहीं है।
"शर्म मत करो। राजन्ना ने मुझे बताया था। कृष्ण गौड़ा ने तुम्हें रात के खाने पर आने के लिए कहा था, लेकिन वो आए ही नहीं, तुम कह रहे हो! वे शर्माएंगे नहीं और कुछ कहेंगे भी नहीं। जब वे आएं तो तुम उन्हें रात के खाने पर बुला लेना..."
रविंद्र हैरान था। राजशेखर को यह सब कैसे पता चल गया? पत्रकार रविंद्र के लिए छोटी से छोटी घटना को देखकर भी खबर की तह तक पहुंचना कोई मुश्किल बात

नहीं थी। क्या ऐसा हो सकता है कि राजशेखर ने कृष्णगौड़ा की हर हरकत पर ध्यान ही न दिया हो?
जब वह विचारों में डूबा हुआ था, तभी रुद्रम्मा ने उसे फिर से बुलाया।
चलो... खाना खाने चलते हैं..."
इस बारे में और चर्चा करने की कोई आवश्यकता नहीं थी, इसलिए वह चुपचाप लकड़ी की मेज पर बैठ गया। जब वह खाना खा रहा था, रुद्रम्मा ने कहा,
"वो लोग तो बिल्कुल ऐसे ही हैं। अरे! चलो उन्हें बताते हैं कि हम इस गाँव में कैसे पहुँचे! उन्हें कुछ भी बताने का कोई फायदा नहीं है!"
वे क्या करते हैं?
"हमारी फसल इतनी अच्छी हुई थी कि हमें मवेशियों को चरने के लिए छोड़ना पड़ा... अगर धान की फसल होती थी, तो हमें यह सुनिश्चित करना पड़ता था कि रात भर में हमारे पशुशालाओं का पानी हमारे खेतों में न घुस जाए! इस गाँव में तुम्हारी जाति के छह परिवार थे। एक-एक करके, उन सभी ने अपने खेत, बाग, घर और सब कुछ बेच दिया और किसी न किसी शहर में जाकर बस गए। तुम्हें क्या लगता है कि वे सब क्यों चले गए? अब उन्होंने सभी ब्रह्मणों को भगा दिया है... अब वे हमें भी भगाने और हमारी ज़मीनें हड़पने की साज़िश रच रहे हैं!"
"लेकिन क्या इस गांव में आपकी जाति के लोग और अधिक नहीं हैं? इतनी बड़ी संख्या में लोगों के खिलाफ़ क्या किया जा सकता है?"
वे इस गाँव में तो हैं, लेकिन आस-पास के गाँवों में तो और भी ज़्यादा हैं! वे हल लेकर आते हैं! हमें किसी तरह उस गाँव में जाना होगा जहाँ हमारे लोग हैं। हमें टिपटूर जाना होगा और वहाँ हार माननी होगी, बस! अगर हम ज़मीन बेचने की बात कहें, तो वे सब मिलकर बहुत कम दाम माँगने लगते हैं!
रवींद्र ने इस पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दी; लेकिन उसने इस कथन की सत्यता की जांच करने का निर्णय लिया। भोजन के बाद, वह यह कहकर चला गया कि वह राजशेखर के स्कूल से लौटने पर वापस आएगा, और रामभट्टा के घर के बाहर इंतजार करने लगा।
जब वह उनके घर पहुंचा, तो रामभट्ट ने अपनी वामकुक्षी पूरी कर ली थी और उठकर बैठ गया था। उसे वापस देखकर उन्होंने उसका स्वागत किया।
``ये, ये..."
सामने वाली दीवार के सहारे बैठते हुए उसने पूछा,
मैं यहाँ इसलिए आया हूँ क्योंकि मुझे आपसे कुछ पूछना था। इस गाँव में छह ब्राह्मण परिवार थे, है ना? उन्होंने एक-एक करके अपने घर और खेत क्यों बेच दिए और गाँव छोड़कर चले गए? उनकी ज़मीनें किसे मिलीं?
``हर किसी की कहानी अलग होती है। हिरण्य कुएँ के पास रहता था, वह मानो इस कहावत को सच साबित करने के लिए ही बना था कि "ब्राह्मण भोजन प्रेमी होते हैं!" वह हर त्योहार और अवसर पर खास पकवान बनाता था, यानी उसे बनाना ही पड़ता था! उसने कर्ज लिया... ब्याज बढ़ता गया... उसने अपनी सबसे बड़ी बेटी की शादी के लिए एक बड़ा खेत गिरवी रख दिया... उसने फल सजाने के लिए एक और खेत गिरवी रख दिया... उस पर भी ब्याज बढ़ता गया... अपनी दूसरी बेटी की शादी के समय उसने एक और खेत पर कर्ज लिया। उन पर भी ब्याज बढ़ने लगा... होशाली के मारेनिंगेगौड़ा ने तब तक अपनी सांस रोके रखी जब तक ब्याज बहुत ज्यादा नहीं बढ़ गया और हिरण्य की तीसरी बेटी की शादी के समय उसने सब कुछ बहुत कम दाम में खरीद लिया और मामला खत्म कर दिया।"
``हिरन्नय्या का छोटा भाई नरसप्पा?"
"वह बहुत मेहनती था। लेकिन वह अपने आसपास के लोगों की शत्रुता सहन नहीं कर सका। शत्रुता इतनी बढ़ गई कि उसे लगा कि वह न तो इस गाँव को रखना चाहता है और न ही इस जमीन को।"

"किसने किया यह?"
लिंगायतों में, गुरुशांतया, जिनके खेत के आगे चन्नमल्लैया की ज़मीन थी। जब नरसप्पा ज़मीन बेचने को तैयार हुए, तो एक खरीदार ज़्यादा क़ीमत पर ज़मीन खरीदने को तैयार था; लेकिन इन दोनों ने ज़िद की, "देखो, यहाँ कौन कदम रख रहा है।" इस वजह से खरीदार भी बेबस हो गया। फिर उसने ज़मीन बहुत कम कीमत पर खरीदी और गाँव छोड़ना पड़ा। इसी तरह, कोपर्या के तीन लिंगायत, मल्लिकार्जुनैया, रेवन्ना और शिवरुद्रप्पा ने देखा कि नारायणप्पा को कोई नौकर नहीं मिल रहा है। जब कुछ नौकर वहाँ जाने लगे, तो उन्होंने ज़िद की, "अगर तुमने उसे बोने के खेत में काम करते देखा, तो तुम उसकी टाग तोड़ देंगे।" नतीजतन, उन्हें भी ज़मीन बेचनी पड़ी। आप अपने घर के बारे में तो जानते ही हैं। अग्रहारा में अन्नाया की ज़मीन - आप दोपहर के भोजन के लिए गए थे, है ना? उस कृष्ण गौड़ा के पिता - हाले गौड़ा ने भी कुछ ऐसा ही गड़बड़ किया था। बालिग हो चुके कृष्ण गौड़ा भी इसमें शामिल हुए। वेंकटरामय्या अपने सभी साथियों की हालत देखकर दुखी हुए और उन्होंने फैसला किया कि उनके लिए इस गाँव में रहना संभव नहीं है, बेहतर होगा कि वे सब कुछ बेचकर किसी बड़े गाँव में चले जाएँ। हसन गाँव का कोई व्यक्ति, चाहे वह बाएँ हाथ का हो या दाएँ हाथ का, कौन जाने... लेकिन आजकल उसे हरिजन कहते हैं, है ना? उनमें से एक धनी व्यक्ति था - वह ज़मीन खरीदने आया। सारा सौदा सुचारू रूप से हो गया। लेकिन इस गाँव के लिंगायतों और अन्य जातियों के लोगों ने, "हम अपने बीच हरिजन नहीं चाहते," कहकर उस व्यक्ति पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इतना दबाव डाला कि वह दिए गए हज़ार रुपये भी वापस माँगे बिना ही चला गया, वह फिर कभी नहीं लौटा।
"अब आपने उन लोगों के बारे में सच बता दिया है जिन्होंने अपनी जमीन खो दी - क्या वे सभी वास्तव में जमीन पर काम कर रहे थे? या वे मजदूरों पर निर्भर थे?"
“मजदूरों के बारे में... आप सही कह रहे हैं, वे...” उनके प्रश्न का लहजा समझते हुए उन्होंने कहा, “लेकिन इस गाँव में लिंगायत और अन्य उच्च जातियों के लोग खुद कहाँ खेती करते थे? अब वे कहाँ काम करते हैं? वे अपनी ही जाति के मजदूरों से भी कहते हैं... तुम दूसरी जातियों की ज़मीन पर क्यों काम करते हो? केवल अपनी ही जाति के लोगों के खेतों में काम करो! उन्होंने ऐसी स्थिति पैदा कर दी है कि उन्हें कोई मजदूर नहीं मिलेगा। अगर इस नज़रिए से देखें तो कोई भी मजदूर ब्राह्मणों की तरह अच्छा व्यवहार नहीं करता। लेकिन अगर जाति के नाम पर उनके सिर काट दिए जाएँ तो कौन कुछ करेगा? इसके अलावा, उन्होंने कहा कि वे जानते हैं कि ब्राह्मण हमेशा पीछे रह जाते हैं। इसीलिए उन्होंने ज़मीन छीन ली और ब्राह्मणों को गाँव से निकाल दिया।”
"इस मामले में लिंगायत लोगों की क्या स्थिति है?"
``लिंगायत?..." छत की ओर देखते हुए और कुछ देर सोचते हुए उन्होंने कहा, ``ब्राह्मणों की तुलना में वे अधिक साहसी हैं। उन्होंने ब्राह्मणों को गाँव से भगा दिया। लेकिन जब बाकी मांसाहारी लोग आते हैं, तो उनकी पूंछ अंदर चली जाती है! चाहे कुछ भी हो जाए, मांस खाने से खून-खराबे की घृणा का अनुभव होता है।"
तो क्या रामभट्ट मांसाहार का समर्थन कर रहे हैं? उन्हें संदेह था; लेकिन जैसे ही उन्हें संदर्भ याद आया, उन्हें स्पष्ट हो गया कि इसका वह अर्थ नहीं था। अचानक उन्हें अपने पुत्र अनुपची की याद आ गई। उस पुत्र का चरित्र कैसा होगा जो अभी-अभी मात्र इच्छावश कहता है, "मेरी इच्छा... मैं चिकन खाऊंगा"?
लेकिन इस प्रश्न को इस तरह सामान्यीकृत करना संभव नहीं है। भारत के बाहर इतनी विशाल दुनिया में (कुछ दुर्लभ अपवादों को छोड़कर) सभी लोग मांसाहारी हैं। उनमें भी सात्विक, राजस और तामसी लोग होते हैं, है ना?
रामभट्ट ने आगे कहा,

यह सब देखकर ऐसा लगता है... इस जीवन में भी कुत्ते-जैसी ही न्याय की प्रथा चलती है। मान लीजिए, एक कुत्ता अपने लिए जीता है। पड़ोसी का कुत्ता चुप नहीं रहता - वह गुर्राता है। उस समय, अगर यह कुत्ता भी गुर्राए और दिखाए कि "मैं तुमसे कम नहीं हूँ... मैं तुमसे ज़्यादा ज़ोर से गुर्राता हूँ... मैं तुमसे ज़्यादा भौंकता हूँ, मैं तुमसे ज़्यादा बेरहमी से काटता हूँ...", तो वह कुत्ता चुप रहता है। यहाँ तक कि वह इस कुत्ते से दोस्ती भी कर लेती है। ब्राह्मणों में ऐसी क्या बात है? वे गुर्राने में शर्म महसूस करते हैं, वे हमला करने से डरते हैं! तो फिर वे दुम दबाकर भागने के अलावा और क्या करेंगे? वे अब भी इसी तरह भाग रहे हैं।
रवींद्र भी रामभट्ट की तुलना को समझ गए। इसकी तुलना केवल ग्रामीण परिवेश से करना आवश्यक नहीं है – ऐसा ही परिवेश राजनीतिक दलों, हस्तशिल्प उद्योगों में भी देखने को मिलता है – वे भी इसे प्रतिदिन देख रहे थे कि कैसे बड़े कारखाने छोटे कारखानों को निगल जाते हैं। छोटे राष्ट्र बड़े राष्ट्रों द्वारा निगल लिए जाते हैं।
रामभट खड़ा हुआ और बोला,
"रुको, मैं तुम्हारे लिए कॉफ़ी लाता हूँ..."
सुबह की कॉफी याद करते हुए रविंद्र ने जवाब दिया,
"मैं नहीं चाहता। मैं दोपहर के बाद इसे नहीं लूंगा। मैं बाद में वापस आऊंगा..."
उसने कहा और उठ गया।

■

जब रविंद्र घर पहुंचा, तो राजशेखर घर आ चुका था। उसे देखकर राजशेखर के चेहरे पर मुस्कान आ गई। उसके चेहरे पर ऐसा भाव था मानो कह रहा हो, "मैं जानता हूं कि इस गांव में कौन किस लायक है।" लेकिन उसने इस विषय पर कोई बात नहीं की। इसके बजाय, उसने कहा,
"हमारे प्रधानाध्यापक आज शाम आपसे मिलने आ रहे हैं। आपको कल हमारे विद्यालय में आकर व्याख्यान देना चाहिए!...."
नहीं, महोदय! मैं किसी और काम से आया हूँ...
"यह आपका गृहनगर है! आप इतनी बड़ी जगह पर पहुँच गए हैं! क्या आपको अपने अनुभवों को साझा करके हमारे छात्रों को प्रेरित नहीं करना चाहिए?"
अंत में, जब प्रधानाध्यापक आए, तो उन्हें उनका निमंत्रण स्वीकार करना पड़ा।
कार्यक्रम दोपहर में था, इसलिए रविंद्र सुबह जल्दी उठा, खाना खाया और गांव में टहलने निकल गया। घर लौटकर खाना खाने के बाद उसने चैन की नींद ली और फिर राजशेखर के साथ स्कूल चला गया, जो उसे लेने आया था।
उसे याद आया... जब वह यहां पढ़ रहा था, तब कोई हाई स्कूल नहीं था। अगर होता, तो वह अपने दादा-दादी के साथ रहकर यहीं पढ़ पाता। बस स्टैंड की ओर जाते हुए, उसके दादा द्वारा बनवाए गए अस्पताल भवन के पास, कुछ दूरी पर एक हाई स्कूल की इमारत थी। हालाँकि कार्यक्रम छोटा था और केवल स्कूल तक ही सीमित था, फिर भी आसपास के गाँवों से सात-आठ बच्चे वहां दिखाई दिए। बच्चे आपस में फुसफुसा रहे थे। उनके चेहरों पर भाव था कि इस ऊब को सहने के बजाय उन्हें खेलने दिया जाता तो बेहतर होता।
प्रधानाध्यापक समारोह की अध्यक्षता कर रहे थे। रविंद्र उनके दाहिनी ओर बैठे थे। राजशेखर उनके बाईं ओर बैठे थे। अतिथियों का परिचय और स्वागत करना राजशेखर का कार्य था। उनके खड़े होते ही छात्रों की फुसफुसाहट बंद हो गई।
राजशेखर ने अंग्रेज़ी में बोलना शुरू किया। एक अंग्रेज़ी अख़बार के संपादक आए हुए थे, शायद इसलिए क्योंकि वे अंग्रेज़ी शिक्षक थे! अंग्रेज़ी में बोलने से व्यक्ति की महानता सिद्ध होती है, यह विश्वास उनके पूरे भाषण में स्पष्ट रूप से झलक रहा था। श्रोताओं को लगा कि उन्होंने अपना भाषण लिखकर सुनाया होगा। जब उन्हें आगे का भाग याद नहीं आया, तो वे एक पल के लिए पसीना बहाने लगे। उन्होंने झटपट अपनी जेब से एक नोट निकाला और अपना भाषण शब्द-दर-शब्द पढ़ना

शुरू कर दिया। उन्होंने जानबूझकर उन उपसर्गों पर ज़ोर दिया जो उन्होंने बच्चों को स्कूल में सिखाए थे, कुछ जगहों पर 'न केवल बल्कि' का प्रयोग किया, 'जहाँ तक मुझे पता है' आदि कहा, और बच्चों को रवींद्र की महानता से अवगत कराने की कोशिश की, जो 'एक अंग्रेज़ी अखबार के संपादक के पद तक पहुँच चुके थे', और अपनी महानता से भी। यह बताने के बाद कि कैसे 'ऐसा महान व्यक्ति' उनका मित्र था और कैसे वे उसके साथ वालीबॉल खेलते थे, उन्होंने बताया कि कैसे रवींद्र के दादाजी ने गाँव में अस्पताल बनाने के लिए ज़मीन और धन दान किया था। फिर उन्होंने कन्नड़ कहावत 'वाग उपकार जानत नाहि - प्रेते श्रृंगार जानत नाहि' को कन्नड़ में ही सुनाया और फिर उन्होंने विशेष रुचि के साथ बताया कि कैसे आज एक समुदाय के लोगों द्वारा वहां की नामपट्टिका को बदल दिया गया है।
राजशेखर अंग्रेज़ी में संघर्ष कर रहा था, वहीं रविंद्र अपने सामने बैठे बच्चों के चेहरों को निहार रहा था। क्या उसने अंग्रेज़ी शिक्षक होने के नाते कन्नड़ न बोलने की कसम खाई थी? या उसका मतलब यह था कि इस विद्यालय के सभी कार्यक्रम अंग्रेज़ी में ही होते हैं? अब उसे कौन सी भाषा बोलनी चाहिए? हाई स्कूल जाने के बाद से उसे कन्नड़ लिखने और बोलने की आदत नहीं रही थी। लेकिन अगर वह अंग्रेज़ी में बोलता, तो ये बच्चे कुछ भी नहीं समझ पाते। यह सोचकर कि अगर वह सरल, रोज़मर्रा की भाषा में कुछ बोलेगा, तो कम से कम बच्चे समझ तो जाएँगे, उसने अपनी बारी आते ही सरल कन्नड़ में बोलना शुरू कर दिया।
जैसे ही उन्होंने कन्नड़ में बोलना शुरू किया, बच्चों के चेहरे खुशी से चमक उठे। शुरुआत में, उन्होंने आठ-दस वाक्यों में अपने छात्र जीवन की कुछ यादें साझा कीं। फिर उन्होंने बताया कि वे अब इस गाँव में क्यों आए हैं। इस अवसर पर, उन्होंने गाँव के मंदिर का इतिहास, गाँव का इतिहास, मंदिर की वर्तमान स्थिति और इस प्रकार ऐसी संरचनाओं का देश की सांस्कृतिक धरोहर होने का विस्तृत वर्णन किया। उन्होंने बताया कि यहाँ की सरस्वती प्रतिमा चोरी हो गई थी। फिर उन्होंने विस्तार से एक उदाहरण दिया कि कैसे असवान बांध के निर्माण के कारण डूबने वाले एक प्राचीन मिस्र के मंदिर को अबू सिम्बल में स्थानांतरित किया गया था। अंत में, उन्होंने इस गाँव के भावी निवासियों, छात्रों और अन्य नागरिकों से इस मंदिर को भी बचाने का अनुरोध किया। हालांकि, उन्होंने अपने दादा द्वारा निर्मित अस्पताल के बारे में कुछ नहीं कहा।
राजशेखर इसलिए नाराज़ थे क्योंकि रविंद्र अंग्रेज़ी नहीं बोलते थे। उन्होंने तो यहाँ तक पूछ लिया,
"हमने आपको स्कूल में इसलिए बुलाया था क्योंकि आपकी अंग्रेजी सुनने से हमारे बेटे की अंग्रेजी सुधरेगी। आपने ऐसा व्यवहार क्यों किया?"
"बच्चों की बुद्धि का विकास करना आवश्यक है - भाषाई ज्ञान का नहीं! कोई भी देश किसी ऐसी भाषा पर निर्भर रहकर अपना विकास नहीं कर सकता जो उसकी अपनी न हो।"
राजशेखर की नज़र में, यह ज्ञान और विज्ञान की एक खिड़की थी, पूरी दुनिया के लिए संवाद की एक भाषा थी। उनकी बातें सुनते हुए रविंद्र ने सोचा, वाह! वही गुस्सा जो हमारा अखबार रोज़ भड़काता है, आज मुझे सुनने को मिल रहा है!
बहस बढ़ाकर मन में कड़वाहट क्यों पैदा करें, इसलिए रविंद्र ने बिना कुछ कहे धीरे से मुस्कुराते हुए कहा।
रात को बिस्तर पर लेटे-लेटे उन्हें एहसास हुआ कि इस गाँव में उनके पास कोई काम नहीं बचा है। अगली सुबह उन्हें बेंगलौर वापस जाना होगा। उनका अंतर्मन उन्हें बता रहा था कि मंदिर के रखरखाव के लिए समिति बनाना असंभव है। स्कूल में भाषण देने के बाद भी वहाँ जमा हुए सात-आठ लोगों में से किसी ने भी इस विषय को नहीं उठाया, यहाँ तक कि प्रधानाध्यापक ने मेरी प्रशंसा और धन्यवाद किया – उन्होंने भी हार मान ली – और बात यहीं खत्म हो गई।

वह इस निष्कर्ष पर पहुँच गया था कि यह झूठ था कि भले ही प्रत्येक जाति में प्रमुख व्यक्ति आपस में लड़ रहे हों, वे सब मंदिर की रक्षा के लिए एकजुट हो जाएँगे। इसके बजाय, हम बेंगलोर जाकर पुरातत्व विभाग या संस्कृति मंत्रालय से संपर्क कर मंदिर के द्वार और कुंडी की व्यवस्था कर सकते हैं। क्या रामुभट्ट अगले आठ या दस साल तक जीवित रहेंगे और भगवान की पूजा देख पाएंगे? उसके बाद? इस विचार ने उसके मन को दुखी कर दिया। इस विचार ने उसे कुछ देर तक जगाए रखा।
सुबह छह बजे कक्षा के बच्चे आ गए, आठ बजे दूसरी पंक्ति के बच्चे आए – रविंद्र नहा कर चुपचाप बरामदे में बैठा था। उसने आठ बजे राजशेखर के साथ नाश्ता करने का फैसला किया था। उसकी निगाहें सड़क पर वाहनों और सामने बने घरों की कतार पर टिकी थीं। अंदर, राजशेखर बच्चों को व्याकरण के अभ्यास करवा रहे थे। रेन और मार्टिन के सक्रिय और निष्क्रिय अभ्यास उनके कानों में गूंज रहे थे। एक ओर, उनका मन दुखी हो रहा था, यह सोचकर कि बच्चों की बढ़ती बुद्धि को इसमें उलझाना नहीं चाहिए।
अंग्रेज़ों के देश छोड़कर चले जाने के बाद से हम उनकी भाषा के सच्चे गुलाम बन गए हैं। हम आज भी एक राष्ट्र के रूप में स्वतंत्र रहने से डरते हैं! उसी समय उन्हें 'नः ही नः रक्षति धुक्कुंकर्णे' की पंक्ति याद आ गई। वे हंस पड़े।
उसी क्षण, गली से तीन आदमी आए और राजशेखर के घर के सामने खड़े हो गए। उनमें से एक ने उससे बात करना शुरू कर दिया।
"नमस्कार महोदय! मैंने कल स्कूल में आपका भाषण सुना। हम उसी विषय पर आपसे थोड़ी बात करने आए हैं। अरे मेरे दोस्त..."
"आओ...आओ!" उसने उन्हें आगे बैठने को कहा।
तीनों की उम्र बीस के आसपास थी। एक ने पैंट और कमीज़ पहनी हुई थी। दूसरे ने गंदा पजामा और धुएँ से धुएँ वाली कमीज़ पहनी हुई थी, जैसे कोई समाजवादी पार्टी का सदस्य हो। उसकी लंबी दाढ़ी थी और कंधों पर कपड़ा लटका हुआ था। तीसरा मुलयाली लुंगी और कमीज़ पहने हुए था। किसी की परवाह न करते हुए, वह उंगलियों में पकड़ी सिगरेट के लंबे कश ले रहा था।
उन तीनों के आराम से बैठ जाने के बाद, रविंद्र ने पूछा,
क्या आप हम तीनों को जानते हैं?
जिसने पहले बोलना शुरू किया था, उसने बोलना जारी रखा।
मेरा नाम मुदया है। उनका नाम देवप्पा है - वे चिक्करागी हैं। मैं इसी गांव का रहने वाला हूं। मैं हरिजन कालोनी में रहता हूं। वे दोनों मैसूर से आए हैं।
"तो आप एक दलित संगठन के कार्यकर्ता हैं..."
आप अखबार के संपादक हैं... आप बिलकुल सही हैं। कल मैं आपका भाषण सुनने आया था। मैंने अपने इन दोस्तों को भी इसके बारे में बताया था। उन्होंने कहा, चलो इनसे बात करते हैं। इसलिए मैं इन्हें यहां ले आया।
रविंद्र ने उन दोनों की ओर देखा।
समाजवादी के वेश में देवप्पा ने कहा,
"आपने हमारी परंपरा, हमारे गांव के मंदिर के बारे में भाषण दिया, इसीलिए वह ऐसा कह रहा था। आपको क्या लगता है कि चोरी हुई मूर्ति कहां ले जाई गई?"
मुझे लगता है कि अमेरिका में, संग्रहालयों में, निजी संग्राहकों में, चाहे जो भी कीमत हो, वे वस्तुओं को खरीदते हैं और अपने पास रखते हैं।
"तो फिर उन्हें इससे क्या फायदा होगा?"
"मैंने बहुत कुछ इकट्ठा किया है, बहुत ही शानदार! इसके अलावा, कुछ दिनों बाद इनकी कीमतें भी आसमान छू जाती हैं। उस देश में ऐसी वस्तुओं की कभी-कभार नीलामी होती है।"

"आपको क्या लगता है कि आज यहां सरस्वती की इस मूर्ति की कीमत कितनी होगी?"
मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता। लेकिन यह पांच लाख रुपये होगा - शायद दस लाख रुपये भी हो सकते हैं।
कुछ पल इसी तरह बीत गए।
रविंद्र उन्हें देख रहा था।
उनमें से एक ने कहा,
मैं आपको एक बात बता दूँ। आपको इसमें कुछ नया नहीं मिलेगा। क्योंकि उच्च जाति के लोग हमारे बारे में सब कुछ जानते थे! आपने यह मंदिर सिर्फ अपनी जाति के लोगों के लिए बनवाया था, है ना? आपकी जाति मुखिया है – सरकार चलाने वाले हाथ हैं – व्यापारी जांघें हैं – किसान पैर हैं – और हम? हम कुछ भी नहीं हैं! क्या आप कह रहे हैं कि कोई मूर्ति चोरी हो गई है? क्या हमारी जाति के लोगों ने कभी उस मूर्ति को सामने आने दिया? मदया ने जब हमें आपके भाषण के बारे में सब कुछ बताया, तो हम तीनों आज सुबह मंदिर गए। आपका मंदिर सड़ने लगा है। उसे देखकर हमें बहुत खुशी हुई! हम अंदर देखने नहीं गए। अंदर बदबू आ रही थी---! आप अखबार के संपादक हैं! मैं आपको बता दूँ, क्या आप ऐसी लेख लिखकर अपने अखबार में छापेंगे?
मुझे बताओ।
आप भली-भांति जानते हैं कि आपके धर्म ने हज़ारों वर्षों से हम पर अत्याचार किया है। इसी अन्याय के फलस्वरूप देश के हर कोने में मंदिर बनाए गए। अब आपके लोगों की उनमें रुचि खत्म हो गई है! अब रोने-धोने के बजाय, सभी मंदिरों की नीलामी करवाकर उन्हें अमेरिका को बेच दीजिए और आज़ाद हो जाइए! उनके पास पैसा है – वे उन्हें खरीदना चाहते हैं – वे तो सभी मंदिरों को ले जाने के लिए एक बड़ा जहाज़ भी बनवा लेंगे! उससे मिलने वाला पैसा हरिजन कल्याण कोष में डाल दीजिए। इससे आपको भी अपने पापों के धुलने का संतोष मिलेगा। चोरों के हाथों में पड़ने देने से बेहतर है कि आप ऐसा कर लें?
उन्हें यह भी पता था कि दलितों के बीच के चरमपंथी इसी तरह सोचते हैं। लेकिन एक ओर, उन्हें ऐसा महसूस हो रहा था मानो अपने गांव और अपने दादा-दादी की यादों के लिए कुछ करने की पहल करने पर उनका जीवन उनसे छीना जा रहा हो। उनमें क्या खराबी है? उस समय तो उन्हें मंदिर के आसपास घूमने की इजाज़त ही नहीं थी! अब तो उन्हें यह अधिकार मिल गया है... लेकिन अब तो कोई मंदिर चाहता ही नहीं! क्या यही रवैया है कि उन्हें भी शामिल किया जाए?
देवप्पा ने पूछा,
"मैंने सरस्वती प्रतिमा की चोरी के बाद आपके अखबार में छपा लंबा लेख भी पढ़ा है। जब मुझे पता चला कि आप स्वयं यहां आए थे, तो मुझे लगा कि मुझे आपको इसके बारे में बताना चाहिए, इसलिए मैं यहां आ गया।"
"तुम ये सब लिख लो... मुझे उम्मीद है कि मैं मशहूर हो जाऊँगा।"
"क्या आप गंभीर हैं?"
"यही हमारे व्यवसाय का मूलमंत्र है।"
अंग्रेजी में लिखना मुश्किल है; लेकिन..."
"आप इसे कन्नड़ में लिखिए... मैं इसका अंग्रेजी में अनुवाद कर दूंगा। लेकिन विचार स्पष्ट और शांत ढंग से व्यक्त होने चाहिए।"
उनका मन अंतर्मुखी था। यह सच है कि उनकी बातों में क्रोध झलकता है। लेकिन हमारे लोगों ने इतने बड़े समुदाय को बाहर रखकर इतना बड़ा मंदिर क्यों बनवाया? क्या उन्हें यह एहसास नहीं था कि पूरा समाज एक है? जब देश को आजादी मिली, सबको वोट देने का समान अधिकार मिला, तब यह अनकहा एहसास पैदा हुआ कि वे भी हमारे जैसे ही हैं और उसी से यह भावना उत्पन्न हुई

कि हम सब एक ही समुदाय के हैं? क्या यह कहना उचित है कि ये मंदिर और देवता सामाजिक भेदों की अभिव्यक्ति हैं - इनका कोई और अर्थ नहीं है? अगर हम इन सबको अंदर भी ले लें, तो क्या इनका अर्थ और समृद्धि बरकरार रह सकती है?
वह अमेरिका के प्रति क्रोध से भरा हुआ था, जिसने अपनी परंपरा के मूर्त रूपों को पैसे के लिए बेचने वालों के साथ मिलकर, पैसे की मदद से सब कुछ निगल लिया था।
गांवों में रहने वाले हरिजनों को ज़मीन का एक टुकड़ा भी नहीं मिला – और कानून लागू होने के बाद भी उन्हें कोई ज़मीन नहीं मिली। क्योंकि रबाना के अलावा वे कभी खेतों में बटाईदार नहीं थे। तीनों ने इस विषय पर काफी देर तक चर्चा की। अंत में, "हम आपसे बैंगलोर में मिलेंगे..." कहकर वे तीनों चले गए।
उनके जाने के बाद, रुद्रम्मा बाल्टी में पानी लेकर आई और बरामदे में जहाँ वे तीनों बैठे थे, वहाँ पानी छिड़कने लगी। तीन बार पानी छिड़कने के बाद, जब सारा पानी लट्ठे से बह गया, तो उसने एक बार फिर पानी छिड़का। उसकी हरकतों में घृणा साफ झलक रही थी। उनकी ओर मुड़कर उसने कहा,
"आप जो भी कहें... मुझे यह बिल्कुल बर्दाश्त नहीं है। जिन लोगों को गाँव से बाहर रखा जाना चाहिए, वे आराम से छाँव में पैर फैलाकर बैठे हैं। ज़माना बदल गया है... रहने दो, अगर आप उन्हें कॉफ़ी देते हैं, तो वे सीधे बर्तन से पी जाते हैं और बर्तन को वहीं छोड़ देते हैं! भले ही हम उनके साथ अच्छा व्यवहार करें, क्या उन्हें आकर अच्छा व्यवहार नहीं करना चाहिए?" उसने कहा और एक बाल्टी, एक तांबे का बर्तन और एक रेक लेकर अंदर चली गई।
कोई व्यक्ति अपने होठों से केतली को छुए बिना गर्म कॉफी कैसे पी सकता है? इस प्रश्न ने उन्हें अयंगरों की याद दिला दी, जो चमकदार चांदी के कप से गर्म कॉफी को बिना जीभ को कॉफी के संपर्क में लाए ही सीधे गले से नीचे उतार देते थे!
तभी कक्षा के बच्चे झुंड बनाकर बाहर आ गए। राजशेखर ने उन्हें अंदर खाने के लिए आमंत्रित किया। मिर्च से सजी नारियल की चटनी के साथ सफेद चावल की रोटी खाते हुए राजशेखर ने कहा,
"वे तीनों तुमसे बहस करने आए थे, है ना? उन्हें दूर रखना ही बेहतर है। वे हर बात पर मूर्खों की तरह बहस करते रहते हैं। वे तुमसे क्या पूछ रहे थे?"
रविंद्र ने संक्षेप में सारी घटना का विवरण दिया।
उन्हें जितना चाहे उतना दे दो! कोई संतुष्टि नहीं! उन्हें मुफ्त छात्रावास, मुफ्त किताबें, मुफ्त काम, मुफ्त पदोन्नति, मुफ्त घर दिए जा रहे हैं –! अब वे उनसे कह रहे हैं कि वे अपने मंदिर बेचकर हमें दे दें! उन्होंने वोटों के लिए उन्हें खूब लाड़-प्यार किया – अब वे मोटे हो गए हैं!
रविंद्र के लिए यह कोई नई बात नहीं थी। जिन लोगों को नौकरी नहीं मिलती... स्कूलों और कॉलेजों में दाखिला नहीं मिलता, वे हर दिन सुबह उठते ही अपना गुस्सा जाहिर करते हैं।
खाना खाने के बाद राजशेखर स्कूल चला गया। रविंद्र के पास भी करने को कुछ नहीं था। उसने अपने साथी को साथ लेकर बस स्टैंड जाने का फैसला किया और पहले चन्नारायणपट्टना या टिपटूर जाने वाली बस पकड़ने का सोचा - जो भी बस मिले - और वहाँ से बैंगलोर जाने वाली बस पकड़ने का।
मैं रामभट्टा के घर जाऊंगा। पहुंचते ही गांव जाऊंगा। रास्ते में स्कूल में राजशेखर से मिलूंगा और फिर आगे बढ़ूंगा..." इतना कहकर वह घर से निकल गया।
रामभट्ट स्नान करने की तैयारी कर रहे थे। यह देखकर उन्होंने कहा,
"आओ, आओ! अगर तुम मुझसे मिले हो, तो मैं तुम्हें कुछ बताना चाहता था। तुम आए हो - तुम्हारे पास जीने के लिए सौ साल हैं!"

वह दीवार के सहारे बिस्तर पर बैठ गया। सामने वाले खंभे से टेक लगाकर उसने कहा,
कुछ नहीं... इस गाँव में दो ब्राह्मण गुरु हैं। आपको पता ही होगा। जब आप भाषण देने गए थे, तो वे आपसे मिले होंगे। नागराज और व्यासराव। आप राजशेखर के घर गए थे... आपके दोस्त ने आपको बुलाया था... आप गए थे। इसमें कोई बुराई नहीं है। लेकिन इन दोनों से वह क्या कहता है, क्या आप जानते हैं? अगर कोई ब्राह्मण गाँव में आता है, तो आप उसे दो वक्त का खाना खिलाने के लायक भी नहीं समझते - दूसरी जाति के लोगों के प्रति उनका आतिथ्य सत्कार कितना कठोर है! ब्राह्मणों में इतनी उदारता नहीं होती - तो उसने मानो उन्हें नीचा दिखाया। वे दोनों कह रहे थे - अगर वह हमारे घर आया होता, तो क्या हम उसके लिए सब कुछ नहीं करते? एक तरफ तो वे सभा में अपने दोस्तों के सामने अपनी महानता का प्रदर्शन करते हैं! कल आप उस कृष्ण गौड़ा के घर गए थे, है ना? वह भी थोड़ा बदमाश है, इसलिए ऐसा मत सोचिए। आप शहर में रहते हैं - आपको नहीं पता कि गाँव में क्या चल रहा है। "हसन में हमारा अच्युत किसी के भी घर जाता है, कॉफ़ी पीता है और खाना खाता है। लेकिन यहाँ, वह किसी के घर से पानी की एक घूंट तक नहीं पीता। उसे यहाँ का माहौल पता है। अब से जब भी आप गाँव आएं, सीधे यहीं आइएगा। अगर आप मुझे पहले बता देंगे, तो मैं हसन से अपनी बहू को खाना बनाने के लिए बुला लूँगी।"
रविंद्र यह भी जानता था कि गाँव में अलग जाति के लोगों के घर खाना न खाने के कुछ नियम थे। लेकिन अब समय कितना बदल गया है! मैंने दिल्ली में पढ़ाई की है... काम के सिलसिले में कई गाँवों में गया हूँ। इसलिए मुझे बुरा लगने का तो सवाल ही नहीं उठता। लेकिन क्या राजशेखर, जो खुद को दोस्त कहता है, को यह कहना चाहिए?
रामभट्टू जो कह रहे हैं, वो सच है। वो अपनी मर्जी से बोलते हैं - पहले स्वागत करते हैं, फिर नाम! ये दोहरा मापदंड कब खत्म होगा?
उसने कुछ पल इस बारे में सोचा। फिर उसे वह काम याद आया जिसके लिए वह आया था। उसने कहा,
सरकार जरूरतमंद बुजुर्गों को हर महीने कुछ पैसे देती है। आपको भी यह पता होना चाहिए। जिस सरकार ने "जिसकी जमीन उसके पास है" वाला कानून लाया है, वही यह कार्यक्रम भी लाई है। आपने पूजा-पाठ के लिए सरकारी वेतन छोड़ दिया है, क्योंकि आपको इसकी जरूरत नहीं है। इस देश के एक बुजुर्ग नागरिक के रूप में, आपको यह पेंशन लेने का अधिकार है। मैं इस मामले में आपकी मदद करूंगा। मुझे लगता है कि वे आपको साठ रुपये प्रति माह देते हैं। तब आपको अच्युत पर भी निर्भर नहीं रहना पड़ेगा।
"जी हां, बिलकुल सही! हमारे गांव में कितने लोग इसे लेते हैं? यहां तक कि जिनके बच्चे और परिवार हैं वे भी इसे लेते हैं।"

"आपने आवेदन नहीं किया?"
"यह सच है कि अच्युत को थोड़ा-बहुत काम करना पड़ता है! लेकिन क्या अपने बुजुर्ग माता-पिता की देखभाल करना उसका कर्तव्य नहीं है? अगर मैं भी अनाथ होने का बहाना बनाकर सरकारी खजाने का इस्तेमाल करूंगी, तो मेरे बेटे का कल्याण सुनिश्चित नहीं होगा। इसीलिए मैंने आवेदन नहीं किया।"
उसने उनके चेहरों की ओर देखा। उनमें न तो गर्व का भाव था और न ही नैतिक श्रेष्ठता का।
मैंने मंदिर के लिए एक नया लकड़ी का दरवाजा बनवाने का सोचा है। मुझे लगता है कि यह काम पाँच हज़ार रुपये में हो जाएगा। मैं आपको चेक दे रहा हूँ। आप यह काम करवा दीजिए। अगर पैसे कम पड़ें तो मुझे लिख दीजिएगा। मैं भेज दूँगा।

मेरा बस यही इच्छा है कि मंदिर में कोई कुत्ता, सूअर या बकरा न आए। अगर कोई पूछे तो मेरा नाम मत बताना। मुझे मेरे दादा-दादी के नाम बता देना...
उसने अपनी चेकबुक निकाली और उसमें पैसे लिख दिए।
रामभट्ट का चेहरा चमक उठा। उन्होंने कहा,
"पुत्र! तुम सचमुच वेंकटसुब्बय्या और शांताम्मा के पोते कहलाने के योग्य हो, देखो!"
पांच मिनट बैठने के बाद, वह खड़ा हुआ और बोला,
आपको पूजा में देर हो जाएगी। मैं भी अब गांव के लिए निकल रहा हूँ..."
"इसी तरह समय-समय पर आते रहिएगा। जब नया गेट लगाया जाएगा, तब मैं आपको एक पत्र भेजूंगा। उस समय आप अपनी पत्नी और बच्चों के साथ आकर उसे स्वयं लगा लीजिएगा।"
रामभट्ट के घर से लौटते समय उन्हें याद आया कि वे कभी अपने घर गए ही नहीं थे। उन्हें याद क्यों नहीं आ रहा था? क्या उनका मन उस घर में जाने से कतरा रहा था जहाँ उनके दादा-दादी नहीं थे? सारी दीवारें और छत तो गायब ही हो गई होंगी, बस एक खाली जगह बची होगी। वहाँ देखने लायक क्या था? आखिर वे गाँव आए ही थे, तो उन्होंने सोचा कि कम से कम एक बार तो वहाँ जाना ही चाहिए।
लेकिन जब वह वहाँ पहुंचा, तो उसने देखा कि वहाँ केवल खाली जगह ही नहीं थी। उस जगह पर दो बिना रंगे, भद्दे ढंग से बने हुए शेड थे। उसने सामने गली में खेल रहे बच्चों में से एक से पूछा,
यह खलिहान किसका है, यार?
"यहाँ वाला शिंगरे गौड़ा से है और यहाँ वाला शिवरुद्र शेट्टी से है..." लड़के ने जवाब दिया।
तीस वर्षों में उस ज़मीन के बारे में कोई पूछताछ नहीं हुई... अगर यह जिम्मेदारी किसी और को नहीं सौंपी जाती, तो और क्या होता, आप पूछेंगे! अपनी गलती स्वीकार करने के बाद, उन्हें यह जानने की ज़रूरत महसूस नहीं हुई कि शिंग्रे गौड़ा और शिवरुद्र शेट्टी कौन थे। पूछताछ करने के बाद वे क्या कर सकते थे? वे जानते थे कि इतने वर्षों तक उन्हें नज़रअंदाज़ करने का अपराध उनकी ज़मीन पर कब्ज़ा करने वाले आक्रमणकारी के अपराध से भी बड़ा होगा। फिर भी, उन गौशालाओं का एक चक्कर लगाने के बाद, उनके पास करने के लिए केवल एक ही रास्ता बचा था, बैंगलोर जाना, उन्होंने कहा और राजशेखर के घर की ओर मुड़ गए।
बैंगलोर छोड़ते समय वह बहुत उत्साहित था। लेकिन अब वह पूरी तरह निराश हो चुका था। यहां आकर उसे क्या हासिल हुआ? अगर वह नहीं आता, तो कुछ भी गलत नहीं होता। इसके बाद उसने राजशेखर के घर पर खाना न खाने का फैसला किया, यहाँ तक कि एक गिलास पानी भी नहीं पिया। उसने अपने कमरे में जाकर कैमरा, तौलिया और कमरे में बिखरी हुई बाकी चीजें अपने अटैची बैग में पैक करने का फैसला किया, राजशेखर की माँ को अलविदा कहा और चला गया। क्या उसके जाने के बाद भी वह घर में पानी छिड़ककर उसे शुद्ध करेगी? उसने कुछ क्यों नहीं किया - उसे शिष्टाचार का उल्लंघन किए बिना ठीक से अलविदा कहना चाहिए था - स्कूल जाकर राजशेखर को अलविदा कहना चाहिए था और फिर बैंगलोर के लिए रवाना होना चाहिए था।
जब वह राजशेखर के घर पहुंचा, तो बाहर बरामदे में कोई बैठा था। उसे देखते ही वह खड़ा हो गया, जिससे उसे पता चला कि वह उसका इंतजार कर रहा था।
सांवला रंग, मोटे होंठ, घनी भौहें, मध्यम कद - उम्र पचास के आसपास - हमसे पांच-छह साल बड़े होंगे। हालाँकि उनका सिर संन्यासी की तरह पूरी तरह मुंडा हुआ था, फिर भी उन्होंने खादी के कपड़े पहने हुए थे। लुंगी और नेहरू शर्ट - सड़क के किनारे एक पुरानी साइकिल खड़ी थी।
उस व्यक्ति ने रविंद्र से पूछा,

क्या आप मुझे पहचानते हैं?
उस व्यक्ति के बोलने का तरीका, उसका रूप-रंग और कुल मिलाकर उसका हर भाव यह दर्शाता था कि वह बहुत शांत स्वभाव का था। जैसे ही उसने उनकी ओर देखा, उसकी यादों के द्वार खुलने लगे। उसने धीरे से मुस्कुराया, मानो यादों को ताज़ा करने के लिए। उसने सुझाव दिया,
``हम इसी गांव में मिले थे... जब तुम पढ़ाई कर रहे थे!"
मुझे याद नहीं है।
हम मेरे दादाजी के घर पर कई बार मिल चुके हैं...
मुझे अब भी याद नहीं है।
मैं तुम्हारे साथ पढ़ता था, इसलिए पुरानी बातें याद मत करो। मैं तुमसे पाँच साल आगे था। मैं मैसूर में पढ़ता था। जब तुम माध्यमिक विद्यालय में थे, मैं तुम्हारे घर पर रुका था और तुम्हें पूरी अंग्रेजी व्याकरण पढ़ाई थी... याद है?
धीरे-धीरे उसका चेहरा प्रसन्न हो गया और उसने कहा,
"...हम्म...हम्म... रुको, रुको, मुझे बाकी सब याद आ गया... लेकिन तुम्हारा नाम... मुझे तुम्हारा नाम याद नहीं आ रहा... उसके बाद हम कभी मिले ही नहीं... अब याद आया... दादी तुम्हें अन्नय्या कहकर बुलाती थीं, है ना?"
"बिलकुल!..." वे भी बहुत खुश हुए। उन्होंने उसके दोनों हाथों को कसकर पकड़ लिया और उसके कंधों पर हाथ रखकर उसे गले लगा लिया।
जब वे गले मिले, तो उसे और भी बातें याद आने लगीं।
“उस समय आपने इंटर पास किया था और बीएससी कर रहे थे, है ना? दादाजी ने मुझे व्याकरण पढ़ाने के लिए खास तौर पर आपको पत्र लिखा था! हाँ, सही कहा ना? कॉमनवेलथ इंग्लिश रीडर नाम की एक किताब थी। आपने उसके हर अध्याय के स्व-अध्ययन सामग्री को अच्छी तरह से समझ लिया था। आपने मुझे चार दिन और चार रातों तक उसका सार समझाया था!”
``मैंने वह रस पी लिया, तो आप अंग्रेजी अखबार के संपादक बन गए, है ना?” वह दिल खोलकर हँसे और आगे बोले, ``मुझे पता चला कि आप बेंगलोर में हैं। मैं आपसे काफ़ी समय से मिलने की योजना बना रहा था; लेकिन किसी न किसी कारणवश मैं इसे टालता रहा। परसों आपके अखबार में सरस्वती प्रतिमा की चोरी के बारे में एक बड़ा लेख छपा था। जब मैंने पहले पन्ने पर वह बड़ी खबर देखी, तो मुझे लगा कि उसे गाँव की बहुत याद आ रही होगी! कल मैंने यहां के स्कूल में आपके भाषण के बारे में सुना और मुझे रात नौ बजे खबर मिली। आज सुबह हम साइकिल लेकर निकल पड़े।"
"हैली कहाँ होगी? तुम क्या कर रहे हो?"
मैं वहीं रहता हूँ, चलो, मैं तुम्हें लेने आया हूँ। मैंने बाकी लोगों को भी बता दिया है, इसलिए मैं तुम्हें ज़रूर ले आऊँगा!
``कहाँ?"
यहां से टिपटूर जाने के रास्ते में बिदारली नाम का एक मोड़ है। अगर आप वहां से नीचे उतरकर बाईं ओर देखेंगे, तो आपको जोगीबेट नाम का एक ऊँचा पहाड़ दिखाई देगा। आप जहां भी देखेंगे, आपको नीला आसमान ही दिखाई देगा। इसके बगल वाली ढलान पर हलुकेरे नाम का एक गाँव है। हम वहां एक स्कूल चलाते हैं। स्कूल का मतलब है - रहना, खाना-पीना, आदि। हम इस बात का पूरा ध्यान रखते हैं कि इस स्कूल के साथ-साथ बच्चों को व्यावसायिक शिक्षा भी दी जाए। वहां पीयूसी तक शिक्षा दी जाती है। इसे विवेकानंद विद्याशाला कहते हैं। एम.ए., बी.एससी., बी.ई., एम.बी.बी.एस. तक की पढ़ाई कर चुके कई युवा यहां सेवा भाव से छात्रों को पढ़ाते हैं। उनमें से कुछ मेरी तरह तपस्वी हैं, जबकि कुछ सांसारिक लोग हैं।
रवींद्र उसकी बातें ध्यान से सुन रहा था। उसने कहा,

"चलो ना... मैं आ रहा हूँ..." उसने मना कर दिया, लेकिन वह असमंजस में था क्योंकि कार्यक्रम में समय-समय पर बदलाव करना पड़ता था।
"क्या यहाँ सारा काम हो गया? आप कब जा रहे हैं?"
"अभी इसी वक्त। अगर आप मुझसे नहीं मिले होते, तो मैं सीधे बस स्टैंड जाता, जो भी बस मिलती उसे पकड़ता और बेंगलोर के लिए निकल जाता।"
तो ऐसा करो... अभी 11:30 बजे एक बस है। उसे पकड़ो और बिदारली चौराहे पर उतर जाओ। तब तक मैं भी अपनी साइकिल से वहाँ पहुँच जाऊँगा। अगर मुझे थोड़ी देर भी हो जाए, तो तुम वहाँ इंतज़ार कर सकते हो। वहाँ से तुम्हें चार मील पैदल चलना होगा। क्या तुम पैदल चलोगे? नहीं तो, तुम बिदारली से कार ले सकते हो।
``चार मैलच् ना? सहज चालेन."
"तो चलिए। बिदारली फाटा यहां से चार मील दूर है," उसने अपनी साइकिल पर बैठते हुए कहा।
रवींद्र ऊपर गया। उसने अपना सारा सामान और कपड़े एक सूटकेस में पैक किए, नीचे आया और रुद्रम्मा को अलविदा कहकर चला गया। जब उसने कहा,
"तुम इंतज़ार करो। राजन्ना 1:30 बजे आएगा।"
"नहीं... मैं स्कूल जाऊंगी और उससे मिलूंगी और फिर आगे बढ़ूंगी।"
लेकिन आप खा सकते हैं...
नहीं। मैं हलुकेरे में दोपहर का भोजन करने जा रहा हूँ। क्या तुम यहाँ इंतज़ार नहीं कर रहे थे? मैं उनके साथ जा रहा हूँ। चलें? बस, लेट हो जाएगी। मैंने तुम्हें बहुत परेशान किया... शुक्र है..." यह कहते हुए वह वहाँ से चला गया।
राजशेखर ने स्कूल में कहा,
"आपको दो-चार दिन और रुकना चाहिए!"
``मैं फिर आऊंगा! अगर आप भी बेंगलोर आएं तो मुझसे मिले बिना मत जाना। घर आना... या ऑफिस आना। मेरा कार्ड संभाल कर रखना..." उन्होंने अपना कार्ड देते हुए कहा। उन्हें विदा करने आए राजशेखर ने उनसे कहा,
"अगर आप अभी जाएंगे तो आपको चन्नारायणपटना के लिए बस मिल जाएगी। वहां से आपको दस मिनट में सुकलेशपुर बेंगलोर एक्सप्रेस की बस मिल जाएगी।"
अब मैं हलुकेरे जा रहा हूँ। वहां से अन्नय्या नाम का एक आदमी आया था..."
``ओह! अन्ना गौड़ा? हलुमत के नेता? हलुकेरे का अर्थ है एक ही जाति के लोगों का गांव। क्या तुमने ध्यान दिया? हलुमतवाले मतलब धनगर-गौड़!..."
क्या आज भी भारत में किसी व्यक्ति की पहचान का वर्णन करते समय उसकी जाति का उल्लेख करना अनिवार्य है? यह राजशेखर तो ऐसा कभी नहीं कर पाएगा! रविंद्र को इस बारे में कुछ भी कहने का मन नहीं हुआ।
बस ग्यारह बजकर दस मिनट पर पहुंची।

■

जब रवींद्र वहाँ पहुँचा, तो अन्नाइया उसका इंतज़ार कर रहा था। उसकी साइकिल पास के एक पेड़ के नीचे खड़ी थी। वहीं पास की एक दुकान में एक कटहल दिखाई दिया। जैसे ही उसने दुकानदार को बताया, दुकानदार ने कटहल छीलकर उसे दे दिया। कटहल देखते ही रवींद्र खुश हो गया। एक के बाद एक दो कटहल का पानी पीकर उसका पेट भर गया। इसके बाद तीसरा कटहल खाना नामुमकिन था, इसलिए उसने कहते ही बचे हुए दो कटहल भी खा लिए। फिर उसने साइकिल से बंधी थैली से कुछ केले निकाले और कहा,
"इसे लो... खा लो। हमें चार मील चलना है...! तुम्हें धूप में चलने की आदत नहीं है। चलो गांव से एक छाता उधार ले लेते हैं।"
उसने अपना सामान साइकिल के कैरियर से बांध रखा था। धूप से बचने के लिए उसने अपने सिर पर एक छोटा सा स्कार्फ बांध रखा था। सड़क इतनी चौड़ी थी कि

जीप जैसी गाड़ी भी आसानी से चल सकती थी। वह साइकिल का हैंडल पकड़े हुए चलने लगा। साथ ही, उसने अपने बगल में एक छाता भी रख रखा था।
दो मील चलने के बाद चढ़ाई शुरू हुई। आसपास कोई जंगल न होते हुए भी, पेड़-पौधों और झाड़ियों के कारण ज़मीन हरी-भरी दिख रही थी। एक मील चढ़ने के बाद, दूर से जोगीगुड्ड पर्वत, जो एक चोटी की तरह लग रहा था, दिखाई देने लगा। यह वड्ड, पीपल, गोनी, बेर और कई अन्य प्रकार के पेड़ों से ढका हुआ था। आसमान की पृष्ठभूमि में इसका नीला रंग इसकी रहस्यमयता को और बढ़ा रहा था।
``सामने जो पहाड़ है – वो जोगिबेट है। अब हम उसके सामने खड़े हैं। पहाड़ के बाईं ओर... यानी, अगर हम दाईं ओर मुड़ें, तो हलुकेरे है। यानी, हम पहाड़ पर नहीं चढ़ रहे हैं। हम इस पहाड़ी पर चढ़ते हैं और दूसरी तरफ उतरते हैं। अब हम एक मील चल चुके हैं। तीन मील बाकी हैं –" उन्होंने कहा।
"चाहे कितनी भी दूर हो, मैं पैदल चलूंगा!" उसने असीम उत्साह के साथ कहा।
उन्हें कभी ऐसा महसूस नहीं हुआ कि वे कुब्बन पार्क, लालबाग या जयनगर की गलियों में घूम रहे हैं। उनके आसपास की हरियाली भी असली हरियाली जैसी नहीं लग रही थी। उन्हें हमेशा यह एहसास होता रहा कि वहाँ की शुद्ध प्राकृतिकता को मानवीय नियोजन ने दूषित कर दिया है। उन्हें लगा कि यही असली ज़मीन है - यही असली पर्यावरण है। उन्हें यहाँ और भी बड़े पेड़ लगाने की ज़रूरत थी! अगर सरकार इस पर ध्यान दे तो बहुत कुछ किया जा सकता है...
चलते-चलते उसे होश आया। उसने महसूस किया कि मैं अपने मन में सोच रही थी और अन्नय्या से बात नहीं कर रही थी। उसने पूछा,
"आपने अपनी शिक्षा कहां से प्राप्त की? आपको इस तरह का स्कूल शुरू करने का विचार कैसे आया?"
मैंने मैसूर से बीएससी की। वहीं से बीएड की और एक सरकारी स्कूल में नौकरी मिल गई। नौकरी के दौरान छुट्टी लेकर मैंने एमए किया। उस समय भी मेरे मन में यही बात आई थी! हमारे देश के छात्रों के लिए इस तरह की शिक्षा उचित नहीं है। भला यह कैसे हो सकती है? मैंने बहुत सोचा, और बचपन से ही विवेकानंद के प्रति मेरे मन में बहुत आदर था। उस समय मैं उनका साहित्य बहुत पढ़ता था। एमए पूरा करने के बाद मैंने गांधीजी का साहित्य भी पढ़ना शुरू किया। एमएड पूरा करने के बाद मुझे प्रधानाध्यापक बना दिया गया। मैंने मांड्या चिंतामणि और तुमकुर जैसे गांवों में भी प्रधानाध्यापक के रूप में काम किया। इन अनुभवों ने शिक्षा को लेकर मेरे मन में उठे संदेहों को दूर कर दिया। बच्चे शिक्षा तो पाते हैं... बाद में नौकरी के लिए भीख मांगते फिरते हैं! बच्चों को ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए जिससे वे अपने पैरों पर खड़े हो सकें। हमें ऐसे गुरुओं की आवश्यकता है जो उनके मन में आदर्शों का निर्माण करें। अगर शिक्षक खुद स्कूल के गलियारे में सिगरेट पीते हैं, तो बच्चों को सिगरेट न पीने के लिए कहने पर क्या होगा? अगर आदर्श, निष्ठा और उत्साह से भरे शिक्षक ही न हों, तो बच्चों को कौन पढ़ाएगा? शिक्षक ही स्कूल हैं – स्कूल शिक्षकों से बनते हैं! इसलिए, भले ही स्कूल की इमारत न हो, बच्चों को पेड़ के नीचे भी पढ़ाया जा सकता है – मुझे यह दृढ़ विश्वास था। क्या हमें पहले शिक्षकों के गुण और कमियों का परिचय नहीं कराना चाहिए और फिर उनकी नियुक्ति करनी चाहिए? यह सच नहीं है कि हर किसी में शिक्षा प्राप्त करने के गुण होते हैं। ज़्यादातर लोग इस पेशे में इसलिए आते हैं क्योंकि उन्हें कोई और नौकरी नहीं मिलती! ऐसे शिक्षकों के साथ कोई प्रधानाध्यापक स्कूल कैसे चला सकता है? मैंने उन्हें कितना भी समझाया, वे तीन साल रुकेंगे और फिर चले जाएंगे। इस सोच के साथ, शिक्षकों ने सुनने का नाटक किया। लेकिन उन्होंने मेरी बात को गंभीरता से नहीं लिया। तब मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अगर हम एक स्वतंत्र स्कूल स्थापित नहीं करते, तो हमारे मन में बसे

आदर्श पूरे नहीं हो सकते। मैं विभिन्न शिक्षक सभाओं में अपने विचार रखता रहा। मैं उन्हें लिखित रूप में भी व्यक्त करता रहा। इस तरह तीन साल बीत गए। चार-पाँच शिक्षक मुझसे खुलकर मिले। वे सभी छोटे बच्चे थे। ऐसे युवा जिनके दिलों में आदर्शों का प्रवाह था। हर कोई जीवन के अर्थ की तलाश में था। उनका कहना था कि कुछ किए बिना जीवन अर्थहीन है। उनमें से कुछ ने तो शादी करने और दुनिया में कदम रखने से भी इनकार कर दिया था..."
उसने बीच में ही पूछा,
"क्या आप शादीशुदा हैं?"
नहीं। मुझे गृहस्थ जीवन कभी आकर्षित नहीं किया। विवेकानंद की जीवनी और अन्य पुस्तकें पढ़ते समय ही मुझे यह आभास हो गया था कि मुझे उन्हीं की तरह जीवन जीना चाहिए।
"अगर मेरी शादी हो गई होती, तो इस तरह काम करना संभव नहीं होता..."
"तुम्हें ऐसी पत्नी ढूंढनी चाहिए जो ऐसा सोचती हो। वैसे भी, पत्नी और बच्चों ने कहा कि उनका पालन-पोषण करना उनकी जिम्मेदारी है! यहीं पर एक आदमी की सारी ताकत खत्म हो जाती है। मैंने भी इस बारे में सोचा था।"
"आपने इस स्कूल की शुरुआत कैसे की?"
हम—एक जैसी सोच वाले लोग—एक साथ आए और एक छोटे से गाँव में स्कूल शुरू करने का फ़ैसला किया। योजना यह थी कि मुख्य रूप से गाँव के ही लोगों को काम पर रखा जाए; सर्वांगीण शिक्षा के साथ-साथ—जिसमें बिज़नेस की समझ, प्रोफ़ेशनल स्किल्स और चरित्र निर्माण पर ध्यान दिया जाए—हम चाहते थे कि हमारे बच्चे पढ़ाई-लिखाई में भी अव्वल रहें और मेरिट लिस्ट में जगह बनाएँ। तब तक, मैंने अपनी सैलरी से चालीस हज़ार रुपये बचा लिए थे; यही हमारी शुरुआती पूँजी थी। अब, हमें एक बड़ी जगह की ज़रूरत थी। लेकिन वह हमें कैसे मिलती? हम कहाँ ढूँढ़ते? मैंने राजनीति से जुड़े चार-पाँच लोगों से इस बारे में बात की। मेरी बात सुनने के बाद, उन्होंने कहा, "सरकार लोगों की होती है; सरकार को ही ऐसी पहल करनी चाहिए। अगर आप सरकार पर निर्भर नहीं रहना चाहते, तो फ़ंड कौन देगा? यह सच है कि अंग्रेज़ों के ज़माने में गांधीजी ने सरकार पर निर्भरता के ख़िलाफ़ बात की थी। लेकिन अब जब सरकार हमारी अपनी है, तो पुरानी नाराज़गी क्यों पालना? इतने सारे लोग प्राइवेट स्कूल शुरू कर रहे हैं, है ना? आपको भी एक स्कूल शुरू करना चाहिए... हम पक्का करेंगे कि आपको ग्रांट मिले। हमें भी सरकार से कोई शिकायत नहीं है। लेकिन क्या गांधीजी ने खुद यह नहीं कहा था कि सरकारी दखल कम से कम होना चाहिए?" मैंने उन्हें यह समझाने की कोशिश की, लेकिन वे बात समझ नहीं पाए। उस समय, मेरा इस गाँव—हलुकेरे—में कुछ काम था। मैं परिवार में एक शादी के सिलसिले में यहाँ आया था। उन दिनों मैं तुमकूर में हेडमास्टर के तौर पर काम कर रहा था; मैंने अभी नौकरी छोड़ी नहीं थी। गाँव में घूमते हुए, मैं एक बुज़ुर्ग सज्जन से मिला—एक धनगर-गौड़ा (या कुरुब-गौड़ा)। आप जानते हैं किस तरह के लोग? कमर पर धोती, कंधे पर मोटा ऊनी कंबल, और हाथ में लाठी। चाहे वह आदमी कितना भी अमीर क्यों न हो, यही उसका आम पहनावा होता था। उनका नाम सोद्रेगौड़ा था। "वे अनपढ़ थे—पढ़-लिख नहीं सकते थे। फिर भी, उनमें महाभारत के कुमारव्यास और जैमिनी संस्करणों को सुरीले ढंग से गाने और उनका अर्थ समझाने की समझ थी। मैं उनसे मिला और उन्होंने मुझे अपने घर बुलाया। वे सत्तर के दशक में थे। उन्होंने ज़ोर दिया कि मैं रात वहीं रुकूँ और मेरे लिए चिकन का व्यंजन बनवाने की पेशकश की, साथ ही आग्रह किया कि मैं वहीं दोपहर का भोजन करूँ। मैंने उन्हें बताया कि मैं मांस नहीं खाता। उन्होंने पूछा, 'क्या आप हमारे जैसे नहीं हैं? फिर आप मना कैसे कर सकते हैं?' मैंने जवाब दिया, 'मैं महात्माजी का अनुयायी हूँ; मेरा मानना है कि जानवरों को मारना एक गंभीर पाप है—यहाँ तक कि दूसरों को डांटना भी

हिंसा है। ऐसे में, किसी दूसरे जीव को मारकर खाना कितनी क्रूर है!' बहस बढ़ गई। बाद में, मुझे पता चला कि वे भी गांधीजी के अनुयायी थे; वे उनके नाम पर जेल भी गए थे।"
रविंद्र ध्यान से उसकी बातें सुन रहा था। उसने आगे कहा,
"वह बहुत बड़े गौड़ थे, है ना? उनके पास बहुत सारी ज़मीन, जुमले, बाग-बगीचे थे। उनके पास दो हज़ार भेड़ें थीं। दोनों हाथों में चांदी के कंगन के अलावा उन्होंने कुछ और नहीं पहना था। गौड़ की पत्नी... उनके शरीर पर बस कुछ ही चांदी के गहने थे। उनके हाथों के कंगन, कलाई की अंगूठियां और कमरबंद भी सादे चांदी के थे। उनके शरीर पर सोने का एक भी टुकड़ा नहीं था। उन्हें पैसे खर्च करने की आदत नहीं थी।"
उनके पास शिंदी वन की एक सौ बीस एकड़ ज़मीन थी। उन्होंने इसे एक ठेकेदार को सौंप दिया, जिसने कहा कि उन्हें हर साल हज़ारों रुपये मिलेंगे – उस समय हज़ारों रुपये! जी हां, उन्हें मिले भी। वो भी घर पर। स्वतंत्रता आंदोलन गाँवों तक फैल गया। इसका असर उन पर भी पड़ा। उन्होंने अपने नौकरों से उस एक सौ बीस एकड़ ज़मीन पर लगे पेड़ कटवा दिए। बाद में, उन्होंने आस-पास के गाँवों के लोगों को उन पेड़ों को लेकर घर बनाने की अनुमति दे दी। उनकी एकमात्र शर्त यह थी कि उन्हें बेचा नहीं जाएगा। एक सौ बीस एकड़ का मतलब है कितने हज़ार पेड़ होंगे – आप हिसाब लगा लीजिए!
तो?
यह खबर तत्कालीन रामास्वामी मुदलियार सरकार तक पहुंची। अनमलदार और पुलिस आए। उन्होंने कहा कि शिंदी के पेड़ काटना मना है – आपको गिरफ्तार किया जाएगा। लेकिन सौद्रे गौड़ा ने उन्हें ताना मारते हुए कहा, यह मेरी जमीन है – मैंने अपने पेड़ काटे हैं – मैंने कोई अपराध नहीं किया है। लेकिन गौड़ा ने तर्क दिया – अगर जमीन आपकी होती, तो ये पेड़ सरकार को कर के रूप में पैसा देते! आपको इन्हें काटने का कोई अधिकार नहीं है। अनमलदार का तर्क था कि आप अपराधी हैं। गौड़ा ने कहा कि लोगों का जीवन बर्बाद करने वाली शराब पर कर वसूलना सरकार का अपना अपराध है – स्वयं महात्मा गांधी ने यह कहा है। जैसे ही उनके मुंह से गांधीजी का नाम निकला, अनमलदार और पुलिस को यकीन हो गया कि वह सरकार विरोधी हैं। गौड़ा को गिरफ्तार कर लिया गया। कहते हैं कि वह एक साल जेल में रहे। जेल में रहते हुए वह पूरी तरह से गांधीजी के शिष्य बन गए। बाद में देश स्वतंत्र हुआ। गौड़ा को रिहा भी कर दिया गया। वह घर लौट आए। तब तक वह बदल चुके थे। "क्या तुम जानते हो कौन सा?" इतना कहकर वह रुक गया।
"क्या आप कट्टर राष्ट्रवादी बन गए हैं?"
उस समय तक वे केवल सूती धोती और सादे बुने हुए कंबल का इस्तेमाल करते थे। मेरे घर पर सूती धोती आती थी और नित्य के बदले में दी जाती थी। अगर कोई उन्हें मशीन से बनी धोती भी देता, तो वे बिना ज्यादा सोचे-समझे उसे पहन लेते थे। लेकिन अब उन्होंने पीठ पर बुनी हुई धोती पहनने का फैसला कर लिया था। उन्होंने मांसाहार छोड़ दिया था – यह गांधीवादी सिद्धांतों के खिलाफ था। जब मैंने उन्हें यह बताया, तो उनका चेहरा खिल उठा! उनकी आंखें भी चमक उठीं! उसके बाद वे मुझसे कई सवाल पूछने लगे। महात्मा गांधी ने इस बारे में क्या कहा था – उन्होंने इस बारे में क्या कही था – वे केवल सूती धागे से बने कपड़े क्यों पहनते थे – वे हमारी तरह कंबल क्यों नहीं ओढ़ते थे – जैसा कि आप तस्वीर में देख सकते हैं – वे हमारी तरह हाथ में लाठी भी रखते थे – क्या वे भी कुरुब या गौड़ा थे? उन्होंने मुझसे ऐसे ही एक-दो सवाल पूछने शुरू कर दिए। इस बारे में बात करते हुए, मैंने उनसे गांधीजी के शिक्षा संबंधी विचारों और शिक्षा कैसी होनी चाहिए, इस बारे में भी बहुत कुछ कहा। आज हमने स्कूलों की स्थिति, वहां की शिक्षा कैसी है,

इस बारे में भी बात की। अंत में, हमने अपने विचार भी व्यक्त किए। हमने कहा, "यदि आप हमें अपने गाँव में जगह देंगे, तो हम आपके गाँव में ऐसा ही एक स्कूल स्थापित करेंगे।"
रविंद्र उत्सुकता से सुन रहा था।
उन्होंने तुरंत कुछ नहीं कहा। मैंने उनसे दोबारा पूछकर उन पर दबाव नहीं डाला। मुझे लगा कि उन्हें स्वतंत्र रूप से सोचने का मौका दिए बिना उनसे कुछ लेना उपहार नहीं बल्कि विश्वासघात होगा। इसलिए मैंने बात वहीं खत्म कर दी। अगली सुबह उन्होंने मेरे लिए एक खास चावल की खीर बनाई। उसके बाद...
उन्होंने अपनी साइकिलें रोक दीं और थोड़ी देर के लिए सांस लेने लगे। आधा मील की चढ़ाई पूरी कर ली थी, इसलिए सांस फूलना स्वाभाविक था। वे साइकिल को हाथों में लिए किनारे पर खड़े होकर बातें कर रहे थे। अपनी व्यस्त बातचीत में उन्होंने इस बात पर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने भी थोड़ी देर के लिए सांस ली।
फिर से चढ़ते हुए, वे कहने लगे,
``इस घटना को लगभग एक महीना हो गया होगा। एक दिन एक आदमी मुझसे मिलने तुमकुर आया। वह स्कूल आया और मुझसे विदा लेते हुए बोला, 'हलुकेरे के सौद्रगौड़ा ने आपको बुलाया है।' मैं यहाँ आया, उसने मुझे बताया, 'गाँव के पास शिंदी के पेड़ों वाली एक सौ बीस एकड़ ज़मीन है - मैं आपको वह ज़मीन दे रहा हूँ - मैं अपने खर्च पर ज़मीन साफ़ करवाऊँगा - मैं ज़मीन आपके नाम पर पंजीकृत करवाऊँगा - और मैं आपको पच्चीस हज़ार रुपये दूँगा - आप हमारे गाँव में अपना स्कूल शुरू कीजिए।" मैंने अपने सभी साथियों को यहाँ बुलाया। हमने एक पंजीकृत संस्था बनाई और गौड़ा का औपचारिक दान पत्र भी तैयार किया। मेरे पास चालीस हज़ार रुपये भी थे। मैंने वह भी संस्था में लगा दिए और संस्था शुरू कर दी। फिर मैं भी तुमकुर गया और इस्तीफा देकर वापस आ गया।"
अब चढ़ाई बहुत खड़ी थी। सड़क चौड़ी होने के बावजूद चढ़ाई थका देने वाली थी। सड़क के दोनों ओर छाती तक ऊँची घनी झाड़ियाँ थीं। चढ़ाई करते समय सांस फूलने के कारण बोलना असंभव था। हाँ कहना भी मुश्किल हो रहा था। इसी बीच, उसने कुछ जंगली जानवरों की आवाज़ सुनी। दो खरगोश दौड़ते हुए निकले - उसने उनमें से एक को लोमड़ी के रूप में पहचाना। एक जानवर ज़ोरदार आवाज़ करते हुए भागा। वह एक बड़ी छिपकली के आकार का था। जानवर इतना करीब से भागा कि न केवल रविंद्र, बल्कि अन्नाया भी चौंक गया। बाद में, संभलकर उसने कहा,
अरे, घोरपड़! याद है? पुराने ज़माने में, दुश्मन के किले में घुसते समय इसका इस्तेमाल किया जाता था। अगर इसकी कमर में रस्सी बाँधकर इसे दीवार के ऊपर से फेंक दिया जाए, तो यह इतनी मज़बूती से चिपक जाता था कि सारे सैनिक एक-एक करके इस पर चढ़ जाते थे! पेड़ों और पत्तों से दवा और पानी बेचने वाले इसकी चर्बी को दवा के रूप में बेचते हैं। वे कहते हैं कि यह दवा कुछ ज़ख्मों के लिए बहुत अच्छी होती है। क्या तुमने इसके बारे में नहीं सुना?
आधे घंटे की चढ़ाई के बाद पहाड़ की चोटी दिखाई देने लगी। इतनी ऊंचाई पर हवा के कारण पेड़ों की डालियाँ और पत्तियाँ तेज़ी से हिल रही थीं। उन्हें पहाड़ की चोटी तक जाने की ज़रूरत नहीं थी। उन्हें दाईं ओर मुड़कर नीचे उतरना था। दोनों चढ़ाई के कारण पसीने से तरबतर थे। लेकिन वहाँ पहुँचते ही हवा ने दो-तीन मिनट में उनका सारा पसीना सुखा दिया। उस हवा में छाता पकड़ना मुश्किल था और हवा में सूरज की गर्मी महसूस नहीं हो रही थी, इसलिए उन्होंने अपना छाता भी मोड़ लिया। आधे घंटे चलने के बाद आगे का इलाका साफ़ दिखाई देने लगा।
"देखो उसे – उधर! क्या तुम उसे देख सकते हो? खेत – तालाब – बस्तियाँ – वो हलुकेरे है। क्या तुम वहाँ एक और तालाब देख सकते हो? पानी दिख रहा है,

उसमें देखो – उसके ठीक आगे हमारा स्कूल है! वह खपरों देसी कोला की इमारत है, है ना? वही है –" उन्होंने इशारा किया।
इसके बाद सड़क ढलान वाली थी। साइकिल बिना ब्रेक लगाए लगातार आगे बढ़ती रही। वह उत्सुकता से नीचे उतर रहा था, सामने स्थित गाँव, खेतों, पास की ऊँची चोटी और घने जंगल को देख रहा था जो उसके शरीर पर फैला हुआ था और हवा में लहरों की तरह लहरा रहा था।

■

हाथ-पैर धोने के बाद एक जगह बैठकर आराम करने के बजाय, वह रवींद्र विवेकानंद विद्याशाला देखने के लिए निकल पड़े। अन्नय्या भी उन्हें सब कुछ दिखाने के लिए उतने ही उत्सुक थे।
एक सौ बीस एकड़ भूमि के ऊपरी हिस्से पर बांध बनाकर एक छोटी झील बनाई गई थी। गाँव का नाम हलुकेरे है। गाँव के पास स्थित झील का नाम भी यही है। हालांकि, अन्नय्या ने पहाड़ों से आने वाली एक धारा के पानी को रोककर इस झील का निर्माण किया था। यह धारा पहले शिंदी वन से बहती थी। अब झील में पानी जमा होने के कारण नीचे की भूमि भी साल के आठ महीने तक नम रहती थी। जब झील में पानी नहीं होता था, तो वहाँ जमा हुई मिट्टी और गाद का उपयोग नारियल के पेड़ लगाने और खेत बनाने के लिए किया जाता था। वहाँ पच्चीस एकड़ भूमि में एक हजार नारियल के पौधे लगाए गए थे। अब आठ साल पुराने उन पौधों में भी फल लगने लगे हैं। शेष भूमि में आम, कटहल, चीकू आदि फलदार पेड़ लगाए गए थे। बांध से सटी पंद्रह एकड़ भूमि में धान की खेती की जाती थी। धान की फसल के बाद उसी भूमि में मूंग, चनी, उड़द आदि दालें उगाई जाती थीं। दूसरी तरफ दस एकड़ ज़मीन थी जहाँ चना, ज्वार, हलगा, मिर्च आदि फसलें उगाई जाती थीं। एक कोने में गौशाला थी। खेती के काम के लिए बैल और दूध देने वाली देसी गायें थीं। एक तरफ लकड़ी का काम सिखाने का स्थान था। पास ही कुएँ से पानी निकालने वाली पंप-लेथ मशीनें थीं। एक और जगह सिलाई विभाग थी। पहाड़ी की तलहटी में एक बड़ा खेल का मैदान था। बीच में स्कूल की कक्षाएं लगाने के लिए एक इमारत थी। पास ही एक पुस्तकालय था। एक कोने में छात्रों के लिए छात्रावास था और उसके बगल में शिक्षकों के आवास थे। सभी इमारतें मिट्टी की बनी थीं और उन पर देसी टाइलें लगी थीं।
दोपहर का समय था। कक्षाओं में पढ़ाई शुरू हो चुकी थी। सभी शिक्षक और छात्र कक्षाओं में मौजूद थे। अन्नय्या रविंद्र को विद्यालय के प्रत्येक विभाग और उस विभाग के प्रमुख की शैक्षणिक योग्यताओं के बारे में जानकारी दे रहा था। रविंद्र यहाँ रुककर दो-तीन दिनों में सभी विभागों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने की सोच रहा था।
उसने अन्नय्या से पूछा,
"क्या आपने इस विद्यालय का निर्माण शांतिनिकेतन के आदर्शों को ध्यान में रखते हुए किया है?"
"पहली नज़र में शांतिनिकेतन और श्रीनिकेतन में समानताएँ दिखती हैं। लेकिन इस विद्यालय की पूरी अवधारणा गांधीजी के विचारों से प्रेरित है। हम यहाँ उनके दो सिद्धांतों को लीग करने का प्रयास कर रहे हैं। एक शिक्षण संस्थान को हमेशा स्वतंत्र होना चाहिए। यदि उसे वित्तीय सहायता के लिए सरकार या किसी व्यक्ति पर निर्भर रहना पड़े, तो वह संस्थान अपनी स्वतंत्रता कैसे बनाए रख सकता है? इसीलिए हमने यहाँ नारियल के पेड़, खेत और गायें लगाई हैं। छात्रों और शिक्षकों के भरण-पोषण के लिए। लेकिन इतना ही काफी नहीं है। फसल कटाई के दिनों में, हम आसपास के गाँवों में, अपने छात्रों के गाँवों में जाते हैं और ठेलों में राशन और अनाज लाते हैं। कुल खर्च कितना होता है? हम सरकार से एक पैसा भी नहीं लेते। दूसरा, यहाँ का अधिकांश काम छात्र स्वयं करते हैं।" प्रत्येक छात्र को चार

महीने खेतों में काम करना होता था, चार महीने नारियल के काम की देखरेख करनी होती थी, फिर गौशाला में गायों और बछड़ों की देखभाल करनी होती थी, वहाँ दूध का उचित प्रबंधन करना होता था, मशीनें चलानी होती थीं, मशीनों को खोलकर उनके विभिन्न भागों का अध्ययन करना होता था, बिजली का काम करना होता था, सिलाई करनी होती थी, छात्रावास में खाना बनाना होता था, ज़मीन की सफाई करनी होती थी - ये सभी कार्य सभी को अपनी-अपनी शिफ्ट के अनुसार करने होते थे। न केवल कार्य करना, बल्कि उनकी बुनियादी बातें भी सीखनी होती थीं। गायों और बछड़ों की देखभाल करते समय उन्हें उनकी शारीरिक संरचना, गर्भावस्था, दूध उत्पादन विधि, पशुओं में होने वाली बीमारियों के बारे में बताया जाता था और इस विषय पर पढ़ने के लिए किताबें भी दी जाती थीं। खेतों में काम करते समय उन्हें फसलों के बारे में इसी तरह की जानकारी दी जाती थी। खाना बनाते समय उन्हें विटामिन और संतुलित आहार के बारे में सिखाया जाता था। कुल मिलाकर, हम देखते हैं कि यहाँ पढ़ने वाला हाई स्कूल या पीयूसी का छात्र अपने गाँव में कोई न कोई स्वतंत्र व्यवसाय करके अपने पैरों पर खड़ा हो सकेगा। "भले ही वह बाद में कॉलेज जाए, हम इस बात पर जोर देते हैं कि उसे अन्य छात्रों की तुलना में अधिक आत्मविश्वास से व्यवहार करना चाहिए - हमारा एक लक्ष्य है, अगर आप चाहें तो! हमारा मानना है कि एक बार जब कोई छात्र आत्मनिर्भरता का स्वाद चख लेता है, तो वह भविष्य में दूसरों का शोषण किए बिना अपना जीवन जिएगा।"
रवींद्र उनकी बातें सुनकर प्रसन्न था। उसने गांधीजी के शिक्षा संबंधी विचार पढ़े थे। उसने वर्धा, शांतिनिकेतन, श्रीनिकेतन देखे थे। लेकिन वह सरकार के अहंकार से प्रभावित नहीं होना चाहता था, इसलिए यह पहली बार था जब वह किसी ऐसे शिक्षण संस्थान को इतने करीब से देख रहा था जो छात्रों पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी डालता है।
अन्नाय्या ने आगे कहा,
“यह मत सोचिए कि हम अपने विद्यार्थियों को महज़ मज़दूर बना रहे हैं! परीक्षाएँ दो महीने दूर हैं, इसलिए हम बाकी सभी काम रोककर बच्चों को पढ़ाई में लगा देते हैं। बच्चे भी उन्हीं सरकारी परीक्षाओं में बैठते हैं। यहाँ फेल होने वाले बच्चों की संख्या बहुत कम है। हर साल दस से पंद्रह बच्चे पहली कक्षा में पहुँच जाते हैं! याद रखिए, ये सभी बच्चे गाँव के ही हैं!”
प्रत्येक भाग को विस्तार से दिखाने से पहले, अन्नाडुया उसे उसके कमरे में ले गया ताकि उसके ठहरने की व्यवस्था कर सके। हालाँकि मेहमानों के लिए दो अलग-अलग कमरे थे, उसने उसके लिए अपने कमरे में ही व्यवस्था की थी ताकि वह जब चाहे रविंद्र से खुलकर बातचीत कर सके। कमरे में प्रवेश करते ही उसने उसका थैला मेज़ पर रख दिया और उसे हाथ-पैर धोने को कहा। उसके लिए एक मोटी चटाई और उससे भी मोटा बिस्तर तैयार था।
हाथ-पैर धोते और बाल संवारते हुए उनकी नज़र सामने दीवार पर लगी तस्वीरों पर पड़ी। वहाँ विवेकानंद और गांधी की बड़ी-बड़ी तस्वीरें थीं। उनके बगल में कुछ छोटी तस्वीरें भी थीं। कमर पर धोती, कंधों पर कंबल, सफ़ेद बाल, घनी मूंछें, हाथ में चांदी का कंगन, हाथ में एक लंबी छड़ी! नीचे लिखे लेख को पढ़ने से पहले ही उन्होंने बगल में चांदी के वस्त्र पहने पत्नी को सौद्रगौड़ा और उनकी पत्नी के रूप में पहचान लिया। उनके बगल में—
उन्हें आश्चर्य हुआ। सौद्रेगौड़ा दंपत्ति के बगल में उनके दादा-दादी की तस्वीरें थीं! उन्होंने सोचा, यह तस्वीर कब ली गई होगी? उन्होंने गौर से देखा। उन्हें याद आया कि गांव के अस्पताल के उद्घाटन के समय ऐसी ही एक तस्वीर ली गई थी और मंत्री जी ने डॉक्टर की कुर्सी पर बैठकर उसकी बहुत सराहना की थी। उन्होंने उस तस्वीर की नकल करके यहां लगा दी होगी।

लेकिन उन्हें याद नहीं आ रहा था कि उनके दादा-दादी ने इस स्कूल को क्या दान दिया था। यह स्पष्ट था कि यह स्कूल दस साल पुराना भी नहीं था। तो उनके दादा-दादी ने कब इतना दान दिया था कि उन्हें सोद्रेगौड़ा के बगल में जगह मिल गई?
खाना खाते समय भी उसके मन में यही बात चल रही थी। लेकिन उसने खुद इसके बारे में पूछना उचित नहीं समझा। इसके बजाय, उसने ध्यान से सुनने का फैसला किया, यह जानते हुए कि वे उसे कभी न कभी बता ही देंगे।
अन्नय्या खाना खाते हुए कह रहा था,
धर्मनिरपेक्ष शिक्षक अपने घरों में खाना खाते हैं। मेरे जैसे शिक्षक, जो वेतन नहीं लेते और जिनका कोई परिवार नहीं है, वे यहाँ अपने छात्रों के साथ खाना खाते हैं। बच्चों के लिए जो भी खाना बनता है, वे वही खाते हैं - यहाँ कोई भेदभाव नहीं है।
खाना बहुत स्वादिष्ट था। दाल, कटहल के बीज, चावल और गाढ़ी छाछ। अन्नाया को रचने उकाडा के बिना खाने की इच्छा नहीं होती थी, इसलिए उसने ठंडी उकाडा के साथ ही खा ली।
दोपहर के भोजन के समय स्कूल की छुट्टी हो गई। सभी बच्चे कक्षाओं से बाहर आ गए। फिर वे सप्ताह भर के अपने-अपने कार्य करने के लिए अलग-अलग जगहों पर चले गए। रात में, वे कक्षा में अपनी-अपनी जगह पर बैठकर पढ़ाई करते थे। इसलिए, किताबों को उनकी जगह से हटाना संभव नहीं था।
अन्नाय्या ने रविंद्र का परिचय सभी शिक्षकों से कराया। उनमें से केवल छह ही पेशे से शिक्षक थे। उन्हें हर महीने एक निश्चित वेतन मिलता था। वे भी पढ़ाने का काम करते थे या किसी न किसी विभाग में मदद करते थे। अन्नाय्या की तरह ही पाँच और शिक्षकों ने अपना जीवन इस विद्यालय को समर्पित कर दिया था। वे सभी अन्नाय्या की तरह ही थे - सिर मुंडाए हुए, खादी के धोती या लुंगी और खादी की नेहरू कमीज पहने हुए। वे सभी विद्यालय में बच्चों को पढ़ाते थे और बाकी समय में वे किसी एक विषय के विशेषज्ञ थे, जैसे पशुपालन, कृषि या मशीनरी, दुग्ध उत्पादन - और बच्चों का मार्गदर्शन करते थे। वे चार दीवारों के बाहर शिक्षा देने के बजाय, छात्रों को आत्मनिर्भर बनाने वाली शिक्षा पर अधिक ध्यान केंद्रित करते थे।
रविंद्र को इन शिक्षकों से विशेष लगाव हो गया था। उन्होंने उनके बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया।
बत्तीस वर्षीय शंकरमूर्ति ने इंजीनियरिंग में बी.ई. की उपाधि प्राप्त की थी। उन्होंने अविवाहित रहने का निश्चय किया था क्योंकि उन्हें नौकरी या विवाह में कोई अर्थ नहीं दिखता था। कक्षा में गणित और भौतिक विज्ञान पढ़ाते समय, वे सभी को खराद मशीनों, जल पंपों और अन्य मशीनों से परिचित कराते थे और उनकी कार्यप्रणाली के माध्यम से मशीनों के डिजाइन से अवगत कराते थे।
लगभग चालीस वर्ष के चंद्रशेखर ने एमबीबीएस की पढ़ाई पूरी कर ली थी। वे हलुकेरे गाँव में सुबह सात बजे से शाम ग्यारह बजे तक औषधालय चलाते थे। स्कूली बच्चों और शिक्षकों के स्वास्थ्य की देखभाल करना उनकी ज़िम्मेदारी थी। शाम को वे सभी बच्चों को शरीर की संरचना, स्वास्थ्य, स्वच्छता, रोग कैसे फैलते हैं और उनसे बचाव के उपाय जैसे बुनियादी विषय पढ़ाते थे। वहाँ के प्रत्येक छात्र को हलुकेरे के औषधालय में कुछ समय के लिए इस डॉक्टर की मदद करनी पड़ती थी। इससे बच्चों को रोगों और दवाओं के बारे में बुनियादी ज्ञान भी प्राप्त होता था।
तावरेकारे के पशुचिकित्सक राम राय सप्ताह में एक बार आकर वहां के पशुओं की जांच करते थे। उनके माध्यम से छात्रों को इस विषय का ज्ञान भी प्राप्त होता था, जबकि अन्य समय में चंद्रशेखर पशुओं की देखभाल भी करते थे।
तीस वर्षीय शराभन्ना के पास वनस्पति विज्ञान में स्नातकोत्तर की डिग्री थी। यद्यपि उन्होंने कृषि विज्ञान का प्रत्यक्ष अध्ययन नहीं किया था, फिर भी वे इसके बारे में सीखते थे और छात्रों को इसकी जानकारी प्रदान करते थे तथा उनका मार्गदर्शन

करते थे। विद्यालय को अपनी फ़सलों के अलावा, यदि आसपास के किसी अन्य खेत में फ़सलों में कोई समस्या होती थी, तो वे उस पर भी ध्यान देते थे।
बत्तीस वर्षीय सोमशेखराचार्य ने बीएससी, एमएससी और बीएड की उपाधियाँ प्राप्त की थीं। साथ ही, उन्होंने अपने पिता से बहुत कम उम्र से ही अपने खानदानी पेशे - बढ़ईगिरी - को सीखा था। यहाँ विज्ञान पढ़ाने के साथ-साथ वे बच्चों को लकड़ी का काम भी सिखाते थे।
रामचंद्र नाम का एक अट्ठाईस वर्षीय युवक था। उसने बी.ए. तक की शिक्षा पूरी कर ली थी। हालाँकि उसने अपने बाल पूरी तरह कटवा लिए थे, फिर भी उसने अभी तक अपने जीवन का मार्ग तय नहीं किया था। अब उसका झुकाव आध्यात्मिकता की ओर अधिक था। वह पढ़ाने में इतना व्यस्त रहता था कि अपना अधिकांश समय अपने कमरे में, दरवाजा बंद करके बिताता था।
तैंतीस वर्षीय नारायणप्पा ने गणित में एम.ए. किया था।
सभी से जान-पहचान हो जाने के बाद, रविंद्र ने उनसे खुलकर बातचीत शुरू कर दी। उन्होंने आशा जताई कि इस मार्ग पर चलते हुए सभी को जीवन में संतुष्टि मिलेगी। सबके चेहरों पर निष्ठा स्पष्ट रूप से झलक रही थी।
बाद में शंकरमूर्ति ने कहा,
यहाँ एक और व्यक्ति भी है—होनट्टी। वह मूल रूप से धारवाड़ ज़िले का रहने वाला है। उसके पिता रिज़र्व बैंक में एक सीनियर पद पर थे, जिसकी वजह से उनका अक्सर अलग-अलग जगहों—तिरुवनंतपुरम, गुवाहाटी, पटना, मुंबई—में तबादला होता रहता था; इसलिए शुरू में उसे कन्नड़ भाषा का बहुत कम ज्ञान था। यहाँ आने के बाद, उसने न केवल धाराप्रवाह कन्नड़ बोलना सीखा, बल्कि उसे पढ़ना भी सीख लिया; अब वह कन्नड़ कविता का आनंद भी ले सकता है। उसने पवई से M.Tech और अहमदाबाद से MBA किया, और बेंगलुरु में रेक्सोल (Rexol) के लिए रेजिडेंट मैनेजर के तौर पर काम कर रहा था। उसे हमेशा से शास्त्रीय संगीत में गहरी रुचि थी और वह सितार सीखता था। अपनी पढ़ाई पूरी करने और एक अच्छी नौकरी—जिसमें कंपनी की कार, बंगला और टेलीफ़ोन जैसी सुविधाएँ थीं—पाने के दो साल बाद, उसके माता-पिता ने उस पर शादी करने का दबाव डालना शुरू कर दिया। हालाँकि, उस मोड़ पर, उसने अपनी शिक्षा, आर्थिक स्थिति और सामाजिक रुतबे के असली महत्व पर सवाल उठाना शुरू कर दिया। उसने अलग-अलग कारण बताकर शादी को एक साल के लिए टाल दिया। आखिरकार, उसने सितार सीखने के लिए अपनी नौकरी पूरी तरह छोड़ने का फ़ैसला किया। यह उसके माता-पिता के लिए एक बड़ा झटका था, जो उस समय दिल्ली में रह रहे थे। उनकी आपत्तियों को नज़रअंदाज़ करते हुए, उसने नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया। उसने अपनी जमा-पूंजी बैंक में डाल दी ताकि हर महीने एक निश्चित आय होती रहे, और फिर अपने संगीत गुरु से सीखने के लिए मुंबई चला गया। वह तीन साल तक अपने गुरु के साथ रहा, लेकिन आखिरकार उसे वहाँ रहना मुश्किल लगने लगा—आखिरकार, आर्थिक रूप से भी तो गुज़ारा होना ज़रूरी था। अकेले रहने और खुद को संगीत के अभ्यास में समर्पित करने के लिए शांत जगह की तलाश करते समय, कर्नाटक में किसी ने उसे जोगिगुड्डा के बारे में बताया। उसे हमारे स्कूल के बारे में भी पता था। दो साल पहले, वह यहाँ आया और अन्नाय्या से पूछताछ की। क्या मैं आपको बताऊँ कि वह अब क्या करता है? एक बार आने के बाद, वह तीन महीने तक पहाड़ पर ही रहता है। वह हर दिन दस से बारह घंटे सितार का अभ्यास करता है। वह हफ़्ते में एक बार नीचे आता है ताकि स्थानीय छात्रों का समूह गायन सिखा सके; जो भी इच्छुक हो, उसे वह 'सा-रे-गा-मा' की बुनियादी बातें भी सिखाता है। उसने अपना एक हारमोनियम यहाँ स्कूल में रखा हुआ है। हर दोपहर, वाद्दरय्या हलुकेरे से पहाड़ पर बने मंदिर में पूजा करने जाते हैं, है ना? रास्ते में वे यहाँ रुकते हैं और खाने से भरा टिफ़िन बॉक्स साथ ले जाते हैं

—होनट्टी उसी बॉक्स से दोपहर और रात का खाना खाते हैं। तीन महीने ऐसे ही बीतने के बाद, वे अपने *गुरु* से ट्रेनिंग जारी रखने के लिए मुंबई लौट जाते हैं। फिर, वे यहाँ वापस आते हैं, पहाड़ पर बैठते हैं और *रागों* को आत्मसात करते हैं। आपको भी उनसे ज़रूर मिलना चाहिए...
रविंद्र ने पहले ही यह निर्णय ले लिया था। उसने पूछा,
आपने अपना नाम क्या बताया था? होन्नाटी?
जी हाँ। एच.एस.एस. होन्नाट्टी... हेमंत होन्नाट्टी...
उन्हें याद आया कि दिल्ली में रहते हुए उन्होंने यह उपनाम सुना था। यह उपनाम किसी पेशे से नहीं आया था, बल्कि एक गाँव से आया था। इसलिए इस उपनाम वाले लोग ज़्यादा नहीं होंगे। होन्नाटी, जिनसे मैं मिला था, शायद उनके रिश्तेदार हों।

■

रात को बच्चों और शिक्षकों के एक साथ भोजन करने से पहले, सभी ने प्रार्थना की। जिन दस छात्रों की बारी आई, उन्होंने सारी प्रार्थनाएँ खा लीं। सुबह का बचा हुआ खाना खाने के बाद, गरमागरम ताज़ा खाना परोसा गया। छोंछ की करी, चावल, चावल और छाछ। रात के खाने के बाद, ब्रह्मचारी शिक्षक से थोड़ी देर बातचीत करने के बाद, रविंद्र सोने के लिए अपने कमरे में चला गया। अन्नय्या के कमरे में, एक दीवार के सहारे शिंदी की चटाई बिछी थी, उस पर एक नरम गद्दा और एक सफेद कंबल बिछा था। उस पर एक नरम चौपाया बिछा था। उसके ओढ़ने के लिए एक कंबल था और उसके अंदर एक और चौपाया था। क्योंकि यह नया कंबल था, इमली के गूदे की मीठी खुशबू उसकी नाक में गई और उसे कितनी पुरानी यादें ताजा हो गईं! अब गाँव में कंबल नहीं थे। क्यों? जब से वह अपनी नानी का घर छोड़कर दिल्ली गया था, घर में केवल कारखाने के कंबल ही थे। सर्दियों में रजाई। मुझे कंबल ओढ़े हुए बहुत समय हो गया था - ऐसा लग रहा था जैसे कई साल बीत गए हों। जब मैं, मेरे दादाजी और दादीजी गाँव में रहते थे, तो हम कंबल ओढ़कर सोते थे। अगर गद्दा होता भी था, तो भी मेरी दादीजी उस पर कंबल बिछा लेती थीं। वो अपनी पुरानी साड़ी का साफ कपड़ा उस पर बिछाकर सोती थीं। नहीं तो, सर्दियों में उनकी पीठ में दर्द होने लगता था और उनके हाथ-पैर सुन्न पड़ जाते थे। मैं उनके बगल वाले बिस्तर पर सोता था। मैं नींद में उन्हें खूब लातें मारता था! उन लातों को नज़रअंदाज़ करते हुए, वो मेरे उन पैरों पर कंबल डाल देती थीं जो कंबल से बाहर होते थे।
अपने विचारों से बाहर आते हुए, रविंद्र ने देखा कि अन्नय्या उसका इंतज़ार कर रही थी, उसके पास तकिया, चादर और दूसरी दीवार के सहारे बिछी चटाई के अलावा कुछ नहीं था। उसने पूछा,
क्या हम लाइट बंद करें दें?
"क्या आपको कंबल चाहिए?" रविंद्र ने पूछा।
“मेरे लिए यह चटाई ही काफी है। मुझे ओढ़ने के लिए एक कंबल होना चाहिए था,” उन्होंने दीपक बुझाते हुए और चटाई पर लेटते हुए तीन बार ‘श्री राम’ का जाप करते हुए कहा।
कुछ समय बाद उसने पूछा,
आप धूप में बहुत चल चुके हैं। आप थक गए होंगे। क्या आपको नींद आ रही है?
मैं हर दिन बहुत देर से सोता हूँ। अखबार बेचने वाले लड़कों को भी ताज़ा खबरों का इंतज़ार करते हुए देर से सोना पड़ता है। इसीलिए मैं भी सुबह देर से उठता हूँ।
एक बार फिर, कुछ पल खामोशी में खो गए। बच्चे अपनी-अपनी कक्षाओं में पढ़ रहे थे। उनके शिक्षक भी वहीं बैठे पढ़ रहे थे ताकि उनका समय गपशप में बर्बाद न हो। वे बच्चों की पढ़ाई से जुड़ी समस्याओं को भी हल कर रहे थे। बच्चे रात

10:30 बजे छात्र छात्रावास में सोने चले गए। सभी के बिस्तर एक जैसे थे - एक चटाई पर एक कंबल और खुद को ढकने के लिए एक और कंबल।
कुछ देर बाद रविंद्र ने कहा,
मैंने दीवार पर अपने दादा-दादी की तस्वीर देखी।
"वे मेरे दादा-दादी भी थे। अगर उन्होंने मेरी मदद न की होती, तो मेरे लिए शिक्षा प्राप्त करना असंभव होता।"
रविंद्र को यह भी याद था कि जब वह हमें अंग्रेजी व्याकरण पढ़ाने के लिए गांव आते थे, तो हमें 'दादा-दादी' कहकर बुलाते थे। लेकिन उस समय उन्हें लगता था कि गांव में बड़े-बुजुर्गों को संबोधित करने का यही तरीका है।
अन्नाय्या कहने लगीं,
मैं मूल रूप से मूडलगी सीगेहललली की रहने वाली हूँ। यह बसावनपुर से तीन मील दूर है। मैं गाँव से पैदल चलकर बसावनपुर गई और किसी तरह माध्यमिक विद्यालय तक अपनी शिक्षा पूरी की। लेकिन आगे अनगिनत मुश्किलें थीं। घर के पास डेढ़ एकड़ ज़मीन थी। आस-पास कोई और रिश्तेदार नहीं थे। सिर्फ़ मेरी माँ थीं। मुझे कभी अपने पिता की ज़रूरत महसूस नहीं हुई – लेकिन मैं अपने दादा-दादी से बहुत लगाव रखती थी। मैं छुट्टियों में उनके गाँव जाया करती थी – खूब खीर खाती थी – भेड़शाला में बैठती थी और अपने दादाजी से कहानियाँ सुनती थी!
रविंद्र को यह मजेदार लगा। आज के समय का आकर्षण ही कुछ और है!
बसवनपुर में लोअर सेकेंडरी पास करने के बाद, मैंने चन्नारेपट्टन में हाई स्कूल जाना शुरू किया, क्योंकि मेरी माँ ने अपनी असमर्थता ज़ाहिर कर दी थी। लेकिन मैंने वहाँ पढ़ाई पर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने भी कर्ज़ लिया और पढ़ाना जारी रखा। लेकिन जब मैं कॉलेज गया, तो उन्होंने हाथ जोड़ लिए। उन्होंने कहा, अगर मैं खेत बेचकर पढ़ाई करूँ, तो मुझे अच्छी नौकरी मिल जाएगी! उसी साल भी उन्होंने छोटा सा कर्ज़ लिया। उसी साल उनका निधन हो गया। आपको कैसे पता? सड़न से! उन्होंने सारा पैसा मुझ पर लुटा दिया, खुद भूखी रहीं! जब मुझे पता चला, तो मैं उन्हें मैसूर ले गया – लेकिन बहुत देर हो चुकी थी। वह चली गईं और मैंने अपनी पढ़ाई छोड़ दी और घर वापस आ गया..."
"क्या आपको छात्रवृत्ति या ऐसी कोई चीज नहीं मिली?"
उस समय पिछड़ी जातियों के लिए बहुत कम सुविधाएं थीं। इसके अलावा, मैं कोई मेधावी विद्यार्थी भी नहीं था। जब मैं गाँव आया, तो मैंने देखा कि उन्होंने मेरी मां की अज्ञानता का फायदा उठाकर कई कागजातों पर हस्ताक्षर करवा लिए थे। अगर वे खेत बेचकर सारा कर्ज चुकाना चाहते हैं, तो गांव वाले कितना पैसा मांगेंगे? डेढ़ सौ रुपये!
"अन्नाया, हमारा रैयत एक नेक इंसान है - कहा जाता है कि वह किसी के साथ अन्याय नहीं करता - आप क्या सोचते हैं?"
उन्होंने उठते हुए, स्विच दबाते हुए और फिर बैठते हुए कहा, "मैं आपको अपना अनुभव बताता हूँ—किसान हमेशा भूखे को खाना खिलाने में उदार होते हैं। लेकिन जब पैसे की बात आती है, तो वे बहुत कंजूस बन जाते हैं। क्योंकि वे बस इतना ही खर्च करने को तैयार होते हैं..."
उन्हें भी यह बात समझ आ गई। वे भी उठकर दीवार के सहारे बैठ गए ताकि बात करना आसान हो जाए।
उन्होंने आगे कहा,
फिर मुझे गांव वालों पर गुस्सा आया। काफी सोच-विचार के बाद, मैं उनसे अलग-अलग मिला और कहा कि मैं जमीन तभी बेचूंगा जब अच्छे दाम मिलेंगे! अगर मेरी मां ने कर्ज लिया होता तो मैं क्या करता? बड़े होने पर बूढ़े आदमी ने मुझे जो अंगूठी दी थी, उसकी क्या कीमत है? गांव में कोई भी जमीन खरीदने को तैयार नहीं था, इसलिए उन्होंने हार मान ली। फिर उन्होंने कहा, "मत खरीदो! साहूकार

इसे खरीद लेंगे!" फिर, दो दिन में 2500 रुपये में खरीद का दस्तावेज तैयार हो गया। जब मुझे पैसे मिले, तो मैंने अपनी मां के सारे कर्ज चुका दिए और खाली हाथ घर लौट आया।
तो?
घर में खाना बनाने के लिए बेसन का एक बर्तन तक नहीं था। अब तो घर ही बेचना पड़ रहा था। मुझे दो-तीन सौ रुपये ही मिलते। और जेब में सिर्फ डेढ़ रुपये। दो दिन तो मैंने जूठे टुकड़ों पर ही गुजारे। मन में ये ख्याल आ रहा था कि अगर मैंने पढ़ाई पर अड़े रहने के बजाय नौकरी कर ली होती, तो मेरी माँ चार दिन और जी लेती! मुझे शिक्षा से गहरी नफरत हो गई थी। मैं भी भूखा मरना चाहता था - अपनी माँ की तरह मर जाना चाहता था, बस यही मेरे दिमाग में था। और कोई दूसरा रास्ता था ही नहीं! मैंने दस दिन तक हठपूर्वक भूखा रहना सहा - लेकिन ग्यारहवें दिन मुझे याद आया कि मेरी माँ ने मेरी शिक्षा के लिए कितनी मेहनत की थी! और मैंने क्या किया?
रविंद्र उनकी बातें ध्यान से सुन रहा था।
लेकिन शिक्षा कैसे मिलेगी? मैंने एक पल सोचा। फिर मुझे तुम्हारे दादाजी का नाम याद आया। मैंने सुना था कि उन्होंने घर की नौकरानी की बेटी के स्वास्थ्य पर एक हजार रुपये खर्च किए थे। मैं उठा और चिलचिलाती धूप में तीन मील चलकर तुम्हारे घर आया। मेरा सिर दर्द कर रहा था, मेरे हाथ-पैर पसीने से भीग रहे थे, मेरा संतुलन बिगड़ रहा था।
तो?
जब मैं पहुंचा, तो दरवाजा बंद था। इतने बड़े महल के अंदर मेरी आवाज कैसे सुनाई दे सकती थी? आखिरकार, मेरे दादाजी ने दरवाजा खोला। उन्होंने पूछताछ की और मुझे अंदर बुलाया। मैं खंभे के पास खड़ा होकर बातें कर रहा था - वे पलंग पर बैठे सुन रहे थे। उन्हें याद नहीं कि मैंने क्या कहा। मेरी आंखों के सामने अंधेरा छा गया और मैं जमीन पर गिर पड़ा। जब मुझे होश आया, तो मेरे दादाजी पानी छिड़क रहे थे और मेरी दादी चिनार के पत्ते से हवा फूंक रही थीं। फिर मेरी दादी मेरे लिए नींबू और चीनी मिला पानी लाईं।
अब अन्नाय्या पूरी तरह से अपने दादा-दादी की यादों में डूबा हुआ था।
फिर दादाजी ने नब्ज़ जाँची और दादीजी से कहा कि इसे तुरंत खाने के लिए उगाएँ। दादीजी ने पपीते के पत्ते पर आमटी-भात उगाना शुरू किया। दादीजी उनके सामने बैठकर बड़े प्यार से उसे उगाने लगीं, लेकिन भूख के मारे चार-पाँच निवाले खाने के बाद आखिरी निवाला भी निगलने लगीं। यह देखकर दादीजी ने कहा, "अगर तुम्हें नहीं चाहिए तो इसे छोड़ दो। मैं जीरे का काढ़ा बना देती हूँ। थोड़ी देर बाद छाछ पी लेना।"
कुछ क्षण खामोशी में बीत गए।
``दादाजी खेत गए थे। दादीजी ने मुझे जीरा, हलदी, गुड़ और दूध से बना काढ़ा दिया। काढ़ा पीते ही मुझे थोड़ा अच्छा लगा। दादीजी मेरे पास बैठ गईं और मेरी माँ के बारे में पूछने लगीं। तभी मैं अपनी माँ के जाने के बाद पहली बार रोई!``
उस याद ने अन्नाय्या की आँखों में आँसू ला दिए। जैसे ही परावर्तित किरणें उसकी आँखों में पड़ीं, रविंद्र की आँखों में भी आँसू भर आए। अन्नाय्या आँसू टपकाते हुए बोलता रहा,
अजी ने मेरी पीठ पर हाथ फेरते हुए मुझे दिलासा दिया और कहा, "हर दिन एक जैसा नहीं होता, बेटा! भगवान सबका भला करते हैं। आओ, छाछ और चावल खाओ!" फिर हमने अच्छा खाना खाया। खाने के बाद हम दीवार के सहारे चटाई और कंबल पर सो गए। कई दिनों बाद, मुझे गहरी नींद आई।
रविंद्र ने अपना अजीब सा पैर हिलाया।

जब मैं जागा, तो मेरे दादाजी मुझे पुकार रहे थे – "अरे, उठो – मैंने तुम्हें इसलिए जगाया ताकि दीपक जलाते समय तुम सो न जाओ। तुम्हारा नाम क्या है?" फिर मेरी दादी ने दीपक जलाया। मैंने अपने हाथ-पैर धोए। तब तक मेरे दादाजी भी शाम का खाना खाकर आ चुके थे। वे मवेशियों के लिए घास और पानी देखकर आए और मुझसे सवाल पूछने लगे –
"आप क्या सीखने के इच्छुक हैं?"
'बी.एस्सी.'
आपको हर महीने कितने पैसों की जरूरत होती है?
"यह मुफ्त है। अगर आपको महीने में तीस रुपये भी मिलते हैं, जिसमें कमरे का किराया, खाना, कागज और पेंसिल के लिए दस रुपये शामिल हैं, तो यह पर्याप्त है।"
आपने पढ़ाई के कितने दिन छोड़े हैं?
एक महीना।
ठीक है। मैं आपको साढ़े तीन साल तक हर महीने चालीस रुपये भेजूंगा। लेकिन मैं पढ़ाई नहीं कर पाऊंगा। मैं बीड़ी या सिगरेट नहीं पीऊंगा। मुझे हर परीक्षा के अंक समझने ही होंगे।
"मेरे लिए तीस रुपये काफी हैं।"
"तुम सिर्फ तीस रुपये खर्च करो। बाकी गरीबों के लिए बचा लो। इस महीने दस रुपये अतिरिक्त बचा लो।"
मैंने बिना रुके उन्हें प्रणाम किया, लेकिन उन्होंने कहा, 'उस देवता के सामने ऐसा करो।'
अन्नाय्या का चेहरा तीस साल पहले घटी उस घटना के लिए कृतज्ञता से भरा हुआ था।
उसके बाद, जब तक मेरी शिक्षा पूरी नहीं हुई, मेरा मनी ऑर्डर हर महीने की पहली तारीख को आता था, बिलकुल सरकारी अधिकारी की तरह। यहां तक कि जब मैं अपने दादाजी से मिलने गाँव जाता था, तो मेरी दादी मेरे लिए बेसन, चावल, दाल और मिर्च पाउडर समेत सब कुछ पैक करती थीं। उसके बाद तो वह हर बार मेरे लिए यही करती थीं।
कुछ याद आने पर अन्नाय्या ने आगे कहा,
"मेरे दादाजी के व्यवहार में एक प्रकार की औपचारिकता थी। जब हम पहली बार मिले थे, तो वे अलग-थलग व्यवहार करते थे। लेकिन बाद में, उनका व्यवहार स्वाभाविक रूप से अधिक खुला हो गया।"
बीएससी पूरा करने के बाद, मैंने उनसे अनुरोध करके बीएड भी किया। पहली तनख्वाह मिलते ही मैं बड़ी खुशी से गांव भागा। क्या आप जानते हैं कि उन्होंने उस समय क्या कहा था? "अन्नाया, मैंने तुम्हें कर्ज के रूप में पैसा नहीं दिया था - मैंने दान के रूप में दिया था। मुझे खुशी है कि तुमने इसे लौटाने का फैसला किया है। लेकिन मैं दान की राशि किसी और को दे दूंगा। आजकल दान के लिए "योग्य व्यक्ति" मिलना मुश्किल है! तुम शिक्षा के क्षेत्र में हो। अगर तुम्हें कोई जरूरतमंद और प्रतिभाशाली लड़का मिले, तो उसे दान कर देना। अगर यह तुम्हारा जीवन का संकल्प बन जाए, तो मुझे खुशी होगी!" अगले दिन, जब वे मुझे बस स्टैंड पर छोड़ने आए, तो उन्होंने कहा, "कल मुझसे कुछ गलती हो गई होगी। दान इस उम्मीद से दिया गया था कि तुम दान करोगे, यह सच नहीं है! कल मैंने जो कहा था उसे भूल जाओ। तुम जो चाहो कर सकते हो।"
उसके बाद अन्नय्या ने कुछ नहीं कहा। कुछ देर तक दोनों चुपचाप बैठे रहे, फिर 'श्री राम', 'श्री राम' कहते हुए अन्नय्या लेट गए।
हालांकि वे दोनों जाग रहे थे, लेकिन उनमें से कोई भी अपने दादा की छवि को अपने दिमाग से मिटाने के लिए तैयार नहीं था।

■
सुबह से ही अन्नय्या काम में मग्न थे। अन्य ब्रह्मचारी भी बहुत व्यस्त थे। लेकिन चूंकि सभी मामलों में निर्णय अन्नय्या ही लेते थे, इसलिए उन्हें हर जगह जाना पड़ता था। दस्तावेज़ों की जाँच, खातों की जाँच, रसोई पर नज़र रखना। जब उनका काम चल रहा होता, तो रविंद्र भी उनके पीछे-पीछे चलते और हर जगह प्रक्रियाओं का अवलोकन करते। मितव्ययिता और छोटी से छोटी चीज़ों का हिसाब रखना वहाँ एक महत्वपूर्ण विशेषता प्रतीत होती थी। अन्य शिक्षकों ने उनसे छात्रों को समाचार पत्रों की कार्यप्रणाली के बारे में जानकारी देने का अनुरोध किया। उन्होंने तीन और दिनों की छुट्टी ली - इस संबंध में टेलीग्राम भी तुरंत भेज दिया गया।
उसी शाम उनका व्याख्यान हुआ। बच्चों ने उत्सुकतापूर्वक कई प्रश्न पूछे। रविंद्र ने उनके उत्तर देते हुए अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव किया। इसके बाद वे बच्चों के साथ घुलमिल गए और उनके गांवों के बारे में पूछताछ करने लगे। इससे भी उन्हें काफी जानकारी प्राप्त हुई।
हालांकि वहां किसी भी छात्र से कोई शुल्क नहीं लिया जाता था, लेकिन फसल कटाई के मौसम के दौरान, जो लोग संपन्न थे उनसे घी, चावल, इमली, मिर्च आदि एकत्र किए जाते थे।
अन्नाय्या ने कहा,
हमें इसे सिर्फ अपने बच्चों का पेट भरने के लिए नहीं देना चाहिए। हमें इसे सिर्फ इसलिए नहीं देना चाहिए क्योंकि हमारे बच्चे यहां से पढ़कर निकल गए हैं। भले ही हमारे बच्चे यहाँ से पढ़कर निकल गए हों, किसानों में हर किसान को यथासंभव अनाज देने की भावना पैदा करनी चाहिए। ऐसे समय में, यह वास्तव में बिना किसी सरकारी सहायता के चलने वाली एक स्वतंत्र संस्था बन जाएगी। मेरा पहला काम यहाँ के किसानों के मन में यह भावना पैदा करना है।
रविंद्र ने एक और बात गौर की कि वहाँ हर जाति के बच्चे मौजूद थे – हर कोई अपनी जाति जानता था – लेकिन वे इधर-उधर घूमते समय सिर नहीं उठाते थे। छात्र अपनी पढ़ाई और सौंपे गए काम में मग्न थे!
हर लड़का दो हफ्ते रसोई में बिताता है और वहाँ दूसरे लड़कों से खूब दोस्ती कर लेता है। फिर, जब वह दो हफ्ते बढ़ईगिरी सीखता है, तो वहां भी लड़कों से दोस्ती कर लेता है! अब उसकी ख्वाहिश है कि वह अपने हाथों से एक स्टूल बनाए। इसके बाद, वह सिलाई विभाग में जाता है। शिक्षक वही हैं। वे सभी जातियों के लोग हैं। इस स्कूल में केवल उन्हीं को प्रवेश दिया जाता है जो इसके मूल उद्देश्य से सहमत हों। वेतन वृद्धि, तरक्की आदि में रुचि रखने वाले शिक्षकों की यहां प्रवेश की अनुमति नहीं है।
उस रात बिस्तर पर लेटे-लेटे बातें करते हुए उसने अन्नाय्या से पूछा,
"लेकिन आपको अपने दादा-दादी की यह तस्वीर कहां से मिली?"
क्या आपको नहीं पता? यह तस्वीर बसावनपुर अस्पताल में लगाई गई थी। मैं उस अवसर पर नहीं आ सका था। क्या आप और आपके पिताजी तब आए थे? मैंने आपके पिताजी को कभी नहीं देखा। जब अस्पताल का उदघाटन हुआ, मैं चिंतामणि में था। मुझे इसके बारे में किसी ने सूचित नहीं किया था। कार्यक्रम समाप्त होने के बाद, किसी ने पत्र लिखा था। बाद में, मैं जानबूझकर अपने दादा-दादी से मिलने आया। तब मुझे पता चला कि मेरे दादाजी ने इसी तस्वीर को वहां न लगाने पर ज़ोर दिया था। उस समय ज़िले के चिकित्सा अधिकारियों ने उनकी बात नहीं मानी। उन्होंने कहा कि इससे भविष्य में दूसरों को दान करने की प्रेरणा मिलेगी! वे पहले यहाँ के महाराजा के अधिकारी थे, है ना? उस समय यही सरकारी नीति थी। आर्थिक रूप से सक्षम लोगों को लाओ और अपने गाँवों में अस्पताल, स्कूल और पुल बनवाओ! महाराजा प्रसन्न होंगे। वे आपको डिग्री देने की सिफ़ारिश करेंगे और काम उनसे करवाएंगे! हालाँकि उस समय स्वतंत्रता आ चुकी थी, फिर

भी अधिकारियों का काम करने का तरीका पुराना ही था। उन्होंने कहा कि उन्हीं अधिकारियों ने पहले आपके दादाजी से मुलाकात की थी और अस्पताल बनवाने पर ज़ोर दिया था। आप दादाजी का स्वभाव तो जानते ही हैं। लेकिन वे बहुत अमीर नहीं थे। बसवनपुर में आठ-दस लोग दादाजी से भी ज़्यादा अमीर थे। लेकिन जिसने उन्हें यह संपत्ति दी थी, उसे कौन रोक सकता था? अधिकारियों ने कहा – अगर अस्पताल आपके माता-पिता के नाम पर बनवाया जाता है, तो पंचक्रोशी के सभी लोगों को इसका लाभ मिलेगा। जब वहां नाम की टाइलें लगाई जा रही थीं, तो दादाजी ने बहस करते हुए कहा – हमारे माता-पिता के नाम ही काफी हैं – इसीलिए तो हमने अपने नाम लिखवाए हैं! मैंने उनसे यह भी पूछा, – इतनी बड़ी सभा थी – मुझे क्यों नहीं बताया? मैं भी आता। इस पर उन्होंने कहा – सरकार ने कुछ तय किया था – इसके लिए आपको अपना काम छोड़कर आने की कोई ज़रूरत नहीं थी!
रविंद्र को यह भी याद आया कि उसके दादा ने भी उसे कोई पत्र नहीं लिखा था। जिला कलेक्टर हिरण्या ने केंद्र सरकार में उच्च पद पर कार्यरत उसके पिता को पत्र लिखकर उसे आमंत्रित किया था। उसके दादा ने उसके द्वारा किए गए इस परोपकार की सराहना नहीं की!
उसके मन में दादाजी की छवि और भी भव्य हो गई। उसने जानबूझकर अन्नाय्या से पूछा,
"क्या वह फर्श अभी भी वहीं है?"
``यह उस मंजिल का नाम नहीं है, और यह अंदर के कमरे में लगी तस्वीर भी नहीं है!"
"मैंने फर्श में भी बदलाव देखा। लेकिन मैं अंदर नहीं गया।"
"उसकी भी एक कहानी है! सुनो, मैं तुम्हें वो भी सुनाता हूँ! अगर तुम बसावनपुर में अपने खेत के पास से गुज़रते हो, तो क्या तुम्हें पता है कि वहाँ से डेढ़ मील दूर नेरलिकरे नाम का एक छोटा सा गाँव है?"
``ऐकलंय."
"नेरलिकरे के जयप्पा अब विधायक हैं। इसी इलाके के शिंदी के ठेकेदार श्रीकांतैया, जयप्पा के रिश्तेदार हैं – एक महान व्यक्ति! उस समय जयप्पा राजनीति में आगे बढ़ने के लिए कड़ी मेहनत कर रहे थे। वे श्रीकांत गौड़ा की बहुत आरती करते थे। तत्कालीन विधायक नरसिम्हा गौड़ा हसन से थे और रामेगौड़ा मंडल के स्वास्थ्य मंत्री थे। जयप्पा इन दोनों के मित्र बन गए थे। वे उनका समर्थन हासिल करने के लिए कड़ी मेहनत कर रहे थे। यह योजना उसी का हिस्सा थी। उनकी इच्छा थी कि स्वास्थ्य मंत्री, सांसद, विधायक – सभी उनके गांव आएं! लेकिन उनका गांव बहुत छोटा है। तुलना में बसवनपुर बड़ा है। उनके आने के अवसर पर उन्हें देश को कुछ समर्पित करना चाहिए। ये कांग्रेसी जो कुछ भी करते हैं, क्या वह देश को समर्पित नहीं होता! उन्होंने पुराना फर्श हटाकर उसकी जगह नया फर्श लगा दिया। उन्होंने अंदर लगी तस्वीर भी हटाकर उसकी जगह इन तीनों महान व्यक्तियों की तस्वीर लगा दी।"
"लेकिन इन तीन महान पुरुषों ने किसी और द्वारा निर्मित अस्पताल को जनता को पुनः समर्पित करके क्या हासिल किया?" रविंद्र ने बीच में पूछा।
अन्नाय्या ने उसकी ओर ऐसे देखा मानो उसने कोई बेतुकी सवाल पूछा हो। फिर उसने कहा,
अरे वाह, आप तो इतने बड़े अखबार के संपादक हैं! आपका अंग्रेजी अखबार एक साथ देश के दस गांवों में प्रकाशित होता है! अब आप ही समझाइए! क्या अजोबा द्वारा अपने लिए बनवाया गया आनंद भवन उसी समय कांग्रेस कार्यालय के रूप में राष्ट्र को समर्पित किया गया था या नहीं? क्या वही आनंद भवन हमारे प्रधानमंत्री

द्वारा एक बार फिर राष्ट्र को समर्पित किया गया था? इसका क्या अर्थ है? संपादक महोदय, कृपया हमें समझाइए!
यह स्पष्ट था कि विधायक बनने की इच्छा रखने वाले जयप्पा ने अपने पार्टी नेताओं से प्रेरणा ली थी। फिर भी, उन्होंने पूछा,
"यह सर्वमान्य है कि दान की गई वस्तु को दोबारा दान करना मना है। लेकिन इंदिरा गांधी ने अपने दादा की संपत्ति दोबारा दान कर दी। पर जयप्पा के इस व्यवहार को कैसे उचित ठहराया जा सकता है? जबकि उन्होंने अस्पताल बनवाया था! गांव में किसी ने भी इसका विरोध नहीं किया?"
अस्पताल के डाक्टरों, नर्सों, सैनिकों और अन्य कर्मचारियों ने इसका विरोध किया। लेकिन जयप्पा ने क्या किया, मुझे बताओ? वह अपने गाँव के लोगों को झंडे लेकर यहां लाए और उनके जयजयकार के बीच भाषण दिया - महाराज का युग समाप्त हो गया है - यह जनता का शासन है - हम उन लोगों की निंदा करते हैं जिन्होंने गरीबों का शोषण करके इकट्ठा किए गए धन से अस्पताल बनवाए और उन पर हमारे माता-पिता के नाम लिखवाए - उन्होंने कहा - जनता की जीत हो - महाराज की जीत हो - महाजनता प्रतिनिधियों की जीत हो - महाजनता प्रतिनिधि राम गौड़ा की जीत हो! - अगर कोई इसका विरोध करेगा, तो हम उसे खत्म कर देंगे - महाराज के समय में नौकरी करने वालों को हम खत्म कर देंगे - अस्पताल के सभी कर्मचारी डर गए। क्योंकि वे सभी महाराज के समय में नौकरी पर आए थे। तो क्या हुआ! एक और शक्तिशाली कार्यक्रम आ गया है!" अन्नाय्या ने उनकी यह बात सुनकर उन्हें देखा।
राजनीतिक समाचार जुटाने, लिखने और छापने के व्यवसाय में डूबे रहने वाले रविंद्र में ऐसी घटनाओं को बिना किसी आश्चर्य के देखने की बुद्धि थी, लेकिन साथ ही उन्हें यह भी महसूस हो रहा था कि यह विषय उनके दिल को भावनात्मक रूप से छू रहा है। उनके दादाजी ने अपने दान के प्रति कोई भावनात्मक लगाव नहीं दिखाया था। लेकिन उन्हें यह भी एहसास था कि हमारे साथ ऐसा नहीं था – इसी कारण हम भी इस घटना को भावहीन नहीं देख पा रहे थे।
अन्नाया ने उसके चेहरे को देखते हुए आगे कहा,
मैंने भी ये खबर अखबारों से सुनी। जब मैंने ये खबर पढ़ी, तो सोचा – अरे बाप रे! अब तो बसवनपुर में दो सरकारी अस्पताल हो गए, ऐसा कहा जाता था! उसी उत्साह में, छुट्टी मिलते ही मैं बस से बसवनपुर चला गया – और तभी ये खबर मिली! उसी समय मैंने कुछ ग्राम नेताओं से बात की। गाँव में किसी ने भी इस घटना का समर्थन नहीं किया। साथ ही, किसी ने इसका विरोध भी नहीं किया! अगर ऐसा उसकी जाति के किसी व्यक्ति के साथ हुआ होता, तो उस जाति के लोग एकजुट होकर इसका विरोध करते। मेरे दादाजी तो अब जीवित भी नहीं थे। – उसकी जाति के सभी लोग गाँव छोड़कर चले गए थे। चाहे कुछ भी हुआ हो, वे अल्पसंख्यक थे! इसीलिए मुझे लगा ही नहीं कि गाँव में किसी के साथ ऐसा अन्याय हुआ है। लेकिन मैं इसे सहन नहीं कर सका। इस अन्याय को रोकने के लिए कुछ करने का निश्चय करके मैं सीधे नेरलेकेरे चला गया। मैं जयप्पा गौड़ा से मिला और उनसे बात की। हमने बसवनपुर में दो दिन बिताए। लेकिन क्या आप जानते हैं कि उन्होंने बाद में क्या किया?
क्या?
``ये कुरुब गौड़ा-धनागर—इसके पास गाँव में एक हेक्टेयर भी ज़मीन नहीं है—हमारी जाति आगे आ रही है, लेकिन लोग इसे देखते तक नहीं—इसलिए मैं घर-घर जाकर सबको बता रहा हूँ—सबने कहा! यहाँ कृष्णा गौड़ा नाम के एक कन्नड़ लेक्चरर हैं—वो नारियल की व्यापार भी करते हैं। जब मैंने कहा कि मैं अस्पताल के सामने बैठकर भोजन सत्याग्रह करूंगा, तो इस कृष्णा गौड़ा ने कहा—अरे जाओ! धनगर हमारे गाँव से निर्वाचित नहीं हुआ, इसलिए मैं ये सत्याग्रह कर रहा हूँ।

विधायक बनने की उम्मीद में—तो मैं पूरे गाँव में बम धमाका कर रहा हूँ! तुम इस जन्म में हमारे तालुका से निर्वाचित नहीं हो पाओगे!"
तो?
मैं सोच में डूबा हुआ था। मुझे ख्याल आया कि मेरे दादाजी को महान बनने की कोई महत्वाकांक्षा नहीं थी। ऐसे समय में, मैं उनके नाम के लिए क्यों मुसीबत मोल लूं? इसी दौरान ऐसे स्कूल की स्थापना का विचार भी प्रबल होता जा रहा था। मैंने अपनी सारी ऊर्जा इसी काम में लगाने का फैसला किया और फिर से तुमकुर के लिए निकल पड़ा।
रवींद्र को अन्नय्या के प्रति अपनापन महसूस हुआ, जो उसे परेशान करने वाली भावना में सक्रिय रूप से शामिल था। उसे पूरे बसवनपुर – पूरे कर्नाटक – पूरे भारत के प्रति एक प्रकार की घृणा महसूस हुई। उसे लगा कि ऐतिहासिक ज्ञान और कृतज्ञता एक ही भावना के दो रूप हैं। इन लोगों में न तो कृतज्ञता का भाव है और न ही ऐतिहासिक ज्ञान! उसे याद आया कि पश्चिमी देशों में उसने जो छोटे-छोटे गाँव देखे थे, उनमें भी संग्रहालय थे। गाँव के संस्थापक से लेकर गाँव के उत्थान में योगदान देने वाले तक, वहाँ हर किसी को कितनी कृतज्ञता से याद किया जाता था! उनके हृदय में ऐतिहासिक ज्ञान है – इसीलिए वे इतिहास रचते हैं। करोड़ों लोगों की यह भीड़, जो कृतज्ञता तक नहीं जानती – उसने पूछा,
"अन्नय्या, कुछ लोग कहते हैं कि हमारे गाँव के लोग असल में भले लोग हैं—राजनेता उन्हें भ्रष्ट कर देते हैं। इस बारे में आपकी क्या राय है?"
असल में, लोगों को अच्छा या बुरा कहना सही नहीं है। ये लोग खाद की तरह हैं। अगर आप इसे नारियल के पेड़ पर डालते हैं, तो नारियल उगता है; अगर आप इसे कैक्टस पर डालते हैं, तो कैक्टस उगता है। असली सवाल तो इन लोगों को इंसान बनाना है। हमने इसी उद्देश्य से अपना स्कूल स्थापित किया है। हमारा काम देश के हर व्यक्ति को खाद की अवस्था से इंसान की अवस्था तक लाना है। तब उनके मन में अच्छे और बुरे का भेद पैदा होगा। वे अच्छे और बुरे के अंतर से अवगत भी होंगे। सरकारी स्कूलों में ऐसा होना असंभव है। क्योंकि वहां सिर्फ जातिगत राजनीति के जरिए आगे बढ़े हुए लोग ही पढ़ते हैं।
अन्नय्या की बातें सुनते हुए रविंद्र का मन भारत के इतिहास के बारे में सोच रहा था। राजा अपने राज्य की स्थिति पर मंत्रियों से चर्चा करते थे। प्रत्येक कुल का मुखिया अपने कुल के हित को ध्यान में रखते हुए अपनी राय देता था। मंत्री अन्य मामलों को इस तरह संभालते थे कि किसी भी कुल के हित की उपेक्षा न हो। राजा उनकी बात मान लेते थे। आज भी यही हाल है। हर कोई अपनी जाति का प्रतिनिधि बनने की कोशिश करता है। इसीलिए हर कोई अपनी जाति के हित में सोचता है – वे न तो पूरे राष्ट्र के हित को देखते हैं और न ही समझते हैं। मंत्रिमंडल में सभी कुल के मुखिया हैं – जनता का प्रतिनिधित्व करने वाला कोई नहीं है।
यह विचार उसे भी नया लगा। उसने इस बारे में और सोचना शुरू किया –
इतना ही नहीं, इन कबीले के मुखिया हर जगह सरकारी कार्यालयों, विश्वविद्यालयों, स्कूलों और कॉलेजों में मौजूद हैं।

■

२

योजना के अनुसार, प्रधानाध्यापक ने उन चारों को अलग-अलग समूहों में बाँट दिया और ऐसी व्यवस्था की कि वे आपस में न मिलें। फिर भी, ज़ावेरी ने अपने बेटे को इस विद्यालय से निकाल लिया और उसे बैंगलोर से बारह मील दूर स्थित इंडियन स्पिरिचुअल फाउंडेशन द्वारा संचालित एक विद्यालय में भेज दिया। अब इस विद्यालय में केवल वे तीनों ही रह गए थे। इसलिए तीनों कक्षा शिक्षकों के लिए

यह सुविधाजनक हो गया कि वे उन पर नज़र रखें कि वे आपस में मिलें या नहीं। दो सप्ताह बाद, प्रधानाध्यापक और कक्षा शिक्षक सब कुछ भूल गए और अपने अन्य कार्यों में तल्लीन हो गए।
तीनों दोस्त इसी का इंतज़ार कर रहे थे। उन्हें पूरा यक़ीन था कि ऐसा ही होगा! इसके बाद वे बाहर मिलने लगे। बेबी खुद को बहुत होशियार समझता है, है ना! – मलयालम में बेबी को पिल्ले कहते हैं, ये बच्चों ने अपने सहपाठी सुकुमारन नायर से सीखा था। – और उन्होंने प्रधानाध्यापक का नाम बेबी रख दिया था। यह बात सिर्फ़ उन चारों के बीच ही राज़ थी। अब सिर्फ़ उन तीनों के बीच! किसी और को यह बात नहीं पता – ठीक-ठीक बताना नामुमकिन है! कभी-कभी वे जानबूझकर कक्षा में शिक्षक के सामने "बेबी कैसा है?" पूछने लगते थे। हालाँकि शिक्षक मलयालम थे, लेकिन उन्हें कुछ समझ नहीं आता था। उन्हें लगता था कि यह उनके किसी दोस्त का नाम होगा और वे इस पर ध्यान नहीं देते थे। साथ ही, वे यह भी समझते थे कि ऐसी छोटी-मोटी बातों पर ध्यान देने का कोई फ़ायदा नहीं है।
तकनीकी विभाग इतना सुव्यवस्थित था कि वहाँ से सुई भी नहीं निकल सकती थी। पुस्तकालय की खिड़कियों पर लोहे की सलाखें लगी थीं, जिससे कागज का एक टुकड़ा भी बाहर नहीं निकल सकता था। यह देखकर कि वहाँ कुछ भी करना असंभव है, अनुपम ने अपनी माँ पर फिर से प्रभाव डालना शुरू कर दिया।
“माँ! क्या तुम्हारा बेटा ताकतवर बनना चाहता है या कमज़ोर? तुम ही बताओ।”
जब से वह इस स्कूल में जाने लगा था, तब से वह अपनी माँ से ज़्यादातर अंग्रेज़ी में ही बात करता था—हिंदी में नहीं। माँ को इस बात से कोई फ़र्क नहीं पड़ता था कि वह किस भाषा में बात करता है। उनकी समझदारी के अनुसार, हिंदी के बिना उसे कोई स्वीकार नहीं करेगा और अंग्रेज़ी के बिना वह अपना दबदबा कायम नहीं कर पाएगा। हिंदी एक अच्छी बुनियाद है—उसने अब तक यही सीखा था, उन स्कूलों के ज़्यादातर बच्चों की मातृभाषा हिंदी ही थी। अब अंग्रेज़ी का अभ्यास करना ज़रूरी था। लड़के ने अंग्रेज़ी में बोलना शुरू किया और माँ ने उसे और भी ज़्यादा प्रोत्साहित किया।
अब भी उसने उत्साहपूर्वक कहा,
"मैं अनूप पटौदी बनना चाहती हूँ! सर्वश्रेष्ठ बल्लेबाज! अस्सा-" उसने पटौदी की शैली की नकल करते हुए कहा।
"माँ! मेरी प्यारी माँ! मेरी प्रिय माँ! माँ - क्या अनुप भी आपका प्रिय है?" उसने अपनी माँ की कमर पर हाथ रखते हुए पूछा।
उसे आभास हो गया था कि इसके पीछे कोई योजना है। उसे उसकी चतुराई पर गर्व महसूस हो रहा था।
उसने उत्तर दिया,
मैं आपको बता दूं, मेरे अनूप को कितना प्यार मिलता है! कोई भी माँ ऐसा नहीं करेगी, मैं अपने अनूप को बहुत प्यार करती हूँ!
"लेकिन अगर मैं पटौदी जैसा बनना चाहता हूँ, तो क्या मुझे हफ्ते में कम से कम दो बार चिकन नहीं खाना चाहिए? वो तो हर दिन चिकन खाते हैं! आप ही बताइए, क्रिकेट में कौन बिना चिकन खाए आगे आया है!"
वह अपने बेटे की बुद्धिमत्ता देखकर बेहद खुश थी। लेकिन उसने कहा, वह इसे प्रदर्शित नहीं कर रही थी।
हमें मांस और मछली नहीं खानी चाहिए! हम ब्राह्मण हैं, है ना!
``ब्राह्मण? इसका क्या मतलब है?"
``तो पंडितजी–"
``माँ! तो हम पंडित जवाहरलाल नेहरू के लोग हैं, है ना?"
"जी बेटा!" उसने गर्व से मुस्कुराते हुए कहा। उसके होंठों से हिंदी में एक अस्पष्ट विस्मयबोधक शब्द निकल गया।

"पंडित नेहरू चिकन खाते थे, आपको पता है ना, माँ! उनकी बेटी और पोते-पोतियाँ तो रोज़ चिकन खाते हैं, आपको पता है ना! इसीलिए तो वो प्रधानमंत्री बने!"
उसे समझ नहीं आ रहा था कि इस पर क्या तर्क दे। जैसा कि लड़का कह रहा था, पटौदी-प्रधानमंत्री बनना तो दूर की बात थी; लेकिन मांसाहारी भोजन किए बिना उस स्तर का प्रभाव कैसे हासिल किया जा सकता है? उसे दिल्ली के सामाजिक दायरे, वहाँ के कारकों आदि की अच्छी जानकारी थी।
अनुपना ने पूछा,
``मम्मी... पापा कहते हैं कि मांस खाना पाप है! बकवास! क्या आप इससे सहमत हैं?"
उसने इस सवाल का सीधा जवाब देने से परहेज किया। दरअसल, उसने पहले कभी कुछ भी ऐसा नहीं खाया था जो खाने लायक न हो। वह जानती थी कि अगर उसने कोशिश की तो उसे उल्टी हो जाएगी। लेकिन जब वह अपने पिता के साथ बाहर जाती थी, तो उसने उन्हें सरकारी खर्च पर चलने वाले या सरकार द्वारा समर्थित बड़े होटलों में खाना खाते हुए मांस खाते देखा था। ऐसे मौकों पर, वह और उसकी माँ खाने से पहले फ्रूट जूस, पैंटा-कोक और शाकाहारी भोजन के बाद आइसक्रीम खाती थीं। उसके पिता, दूसरे पुरुषों की तरह, व्हिस्की पीते थे और मांस खाते थे। इसलिए उसे लगता था कि अगर कोई पुरुष इसे पीता है तो इसमें क्या गलत है। कभी-कभी तो वह यहाँ तक कह देती थी, "ऐसा कौन सा आदमी है जो इसे नहीं पीता?" हाल ही में, उसने भी पार्टियों में शराब पीना शुरू कर दिया था। शराब महिलाओं का पेय है - वह तो औरतों को ज्यादा शराब पीते देखकर नाक-भौं सिकोड़ लेती थी। उसका पति कभी मांस नहीं खाता - वह तो बहुत कम पीता है - पत्रकार होने के बावजूद! अब, अपने पति के बारे में सोचते हुए, वह समझ नहीं पा रही थी कि उसकी छवि को किस रंग में रंगे। यह किस तरह का आदमी था, भले ही वह देखने में ऐसा ही लगता था, अगर वह मांस खाए बिना और चूल्हा जलाए बिना उसके पास आता था? उसका पूरा शरीर काँप उठा।
लेकिन पिछले दो-तीन सालों में, उसके मन में अपने पति की पसंद और स्वभाव के प्रति लगाव कम होता जा रहा था। जब से वह बैंगलोर आई थी, उनके बीच की दूरी बढ़ती ही जा रही थी। कन्नड़ भाषा! यह भूमि! यह मिट्टी! भले ही यह भारत का हिस्सा है, लेकिन इसकी अनूठी संस्कृति! कुछ तो बात है! अगर तुम्हारी सोच इतनी पुरानी है, तो तुम्हें यहीं की किसी पुराने ख्यालों वाली भाटजी की बेटी से शादी कर लेनी चाहिए थी! तुम्हें केंद्र सरकार में काम करने वाले किसी बड़े इंजीनियर की पत्नी चाहिए! उसे तो ऐसी स्टाइलिश लड़की चाहिए जिसने देश के सभी बड़े गांवों में रहकर पढ़ाई की हो! साथ ही, उसमें कर्नाटक के पुराने गुण भी होने चाहिए! वाह!
लेकिन उसने यह सब बच्चे को नहीं दिखाया।
``मम्मी... मुझे हफ्ते में दो बार चिकन चाहिए... आप मुझे उतने पैसे दे दीजिए। लेकिन पापा को मत बताना! मेरी मम्मी! मैं आपका प्यारा अनूप हूँ! मैं आपसे बहुत प्यार करता हूँ मम्मी..." उसने मदहोश होकर कहा...
अरे... मेरे बोलों का स्टाइल खराब मत करो... मतलब चालीस रुपये प्रति सप्ताह? मैं इतने पैसे कहाँ से लाऊँगा, भाई?
“ये क्या है माँ! आप हर महीने घर पर कितना खर्च करती हैं? पापा तो आपसे हिसाब भी नहीं पूछते। चालीस रुपये प्रति सप्ताह देना आपके लिए कोई मुश्किल काम नहीं है! कितने साल तक? जब तक आपका अनूप इंजीनियर नहीं बन जाता! फिर क्या? माँ, फिर मैं आपको चार सौ रुपये प्रति सप्ताह जेब खर्च के रूप में दूँगा!... वादा!...”

"अरे बाप रे! ये तो चलेगा ही नहीं..." उसने कहा। लेकिन अनुपाला को उसके चेहरे के भाव देखकर यकीन हो गया कि वो ज़रूर कोशिश करेगी।

■

रवींद्र ने अपने द्वारा खींची गई तस्वीरों को केंद्र बिंदु बनाकर बसावनपुर की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालने वाले तीन-चार लेख लिखने और उन्हें अपने अखबार में प्रकाशित करने का निर्णय लिया था। इन लेखों में उन्होंने यह प्रश्न उठाया कि हरिजन युवाओं को पूरा मंदिर अमेरिका को क्यों नहीं बेच देना चाहिए – वे मंदिर को उचित स्थान दिलाना चाहते थे और साथ ही इस पर चर्चा भी शुरू करना चाहते थे। दो-तीन दिन बीत गए, फिर उन्हें लगा कि मंदिर को केंद्र बिंदु बनाने के बजाय, उन्हें "बसावनपुर का पुनरावलोकन" शीर्षक से छह-सात लंबे लेख लिखने चाहिए। इसी समय दिल्ली-तलवार के मुख्य संपादक का संदेश आया। उन्होंने रवींद्र से "क्या भारत में पुलिस गणतंत्रवादी शासन के अनुरूप है या नहीं?" विषय पर एक लंबा लेख तैयार करने को कहा था। इसके उत्तरों को इकट्ठा करने के लिए भारत के सभी राज्यों के प्रमुख गांवों के प्रतिनिधियों को प्रश्नावली भेजनी आवश्यक थी। सबसे पहले, प्रश्नावली तैयार करनी थी। उसके बाद, विषय पर उपलब्ध जानकारी की समीक्षा करना अनिवार्य था। यह सब करने के बाद, लेख को बीस दिनों के भीतर तैयार करना था। क्योंकि इसे पुलिस दिवस के अवसर पर प्रकाशित करना था। एक विशेष परिशिष्ट में। यही एक पत्रकार का काम है। हर काम ज़रूरी होता है और हर काम की एक समय सीमा होती है! इसीलिए रविंद्र का ध्यान उस लेख पर गया। इसके अलावा, यहाँ अखबार के संपादन की जिम्मेदारी भी वही थी। कर्नाटक और भारत में आज घटित हो रही घटनाओं की समीक्षा करते रहना चाहिए... समय-समय पर अगर कोई ऐसा ही विषय हो तो संपादकीय लिखना चाहिए... हर सुबह होने वाली संपादकीय बैठक में अपने विचार प्रस्तुत करने चाहिए... चर्चा करनी चाहिए...
पुलिस विभाग पर एक लेख के लिए उन्होंने जो प्रश्न भेजे थे, उन पर कोई खास प्रतिक्रिया नहीं मिली। अंततः, उन्होंने प्राप्त जानकारी के आधार पर एक व्यापक लेख तैयार किया। अब, कल से शुरू होकर, उन्हें दो दिनों तक सुबह जल्दी उठकर लेख को पूरा करने के लिए लिखवाना होगा।
टेलीफोन की घंटी बजी। सचिव लोबो ने कहा,
"सर... आपके गांव के विधायक आ गए हैं। श्री जयप्पा..."
रविंद्र को यह बात बुरी तरह महसूस हुई कि अभी उनका किसी से मिलने का मन नहीं है। ये जयप्पा कौन हैं? विधायक? उन्होंने कहा।
अरे! मैं अभी बहुत व्यस्त हूँ!...
"सर... अब तो उन्हें बस अपॉइंटमेंट चाहिए! लेकिन अब वे कहते हैं कि वे सिर्फ दो सेकंड के लिए मिलना चाहते हैं।"
उसके बोलने से पहले ही, रविंद्र समझ गया कि विधायक जयप्पा कौन हैं। वह 'बसवांपुरची पुआनभेट' में एक महत्वपूर्ण किरदार हो सकते हैं! बढ़िया कहानी है! उसने जयप्पा को अंदर भेजने का आदेश दिया और पुलिस रिपोर्ट के नोट्स देखने लगा।
रविंद्र ने पहली नज़र में ही पहचान लिया कि अंदर आने वाला व्यक्ति चौथी श्रेणी का कांग्रेसी है। पहली श्रेणी - मोटा खादी का धोती-जब्बा पहने हुए। दूसरी श्रेणी - थोड़ा पतला खादी का कपड़ा - पायजामा और नेहरू शर्ट - सीने पर एक जेब के साथ। तीसरी श्रेणी - गहरे रंग की खादी की पैंट और कॉलर वाला कोट। अंदर आने वाला व्यक्ति खादी का सफारी सूट पहने हुए था। एक तरफ तो वह राजनेता जैसा दिखता था, दूसरी तरफ़ एक व्यापारी का आभास दे रहा था। सफारी सूट में लगभग पचास प्रतिशत पॉलिएस्टर था। उसकी उम्र चालीस वर्ष थी। जवानी में

वॉलीबॉल खेलने वाला उसका शरीर अब मोटा हो रहा था। उसके अंदर आते ही 'सुगंधराज' की महक चारों ओर फैल गई।
अपने बाएं हाथ में पकड़े चमड़े के ब्रीफकेस को नीचे रखते हुए, जयप्पा ने अपने दाहिने हाथ में पकड़ी टोकरी से एक हार निकाला, मेज पर झुककर उसे अपने सामने कुर्सी पर बैठे रविंद्र के गले में पहनाया और चेहरे पर दोस्ताना मुस्कान लिए हुए कहा,
मैं श्रद्धांजलि अर्पित करने आया हूँ। अगर अभी समय नहीं है, तो जब भी आपके पास समय हो, मैं आ जाऊँगा! बस हमारे विधायक छात्रावास को फोन करने के लिए कह दीजिएगा! मैं आमतौर पर यहीं रहता हूँ... अभी वहाँ सत्र चल रहा है।
रविंद्र ने अपनी सीट से ही पूछा, और उसके द्वारा बढ़ाए गए हाथ को पकड़कर उससे हाथ मिलाया।
अब आप ये सब क्यों लाए?
इस अवसर का लाभ उठाते हुए, जयप्पा सामने वाली कुर्सी पर बैठ गया और बोला,
"हमने बहुत बड़ी गलती कर दी, महोदय! आप गाँव में, मानो दिन के बीचोंबीच आ गए! हमारे स्कूल में भी, मानो भाषण था! मैं उस समय गाँव में नहीं था। अगर मुझे पहले पता होता, तो मैं चार बड़े लोगों को इकट्ठा करता – गाँव में एक बड़ी जनसभा आयोजित करता – उन्हें प्रमाण पत्र देता। इसके बाद, मैं सभा के लिए एक दिन तय करूँगा। लेकिन आपको उस समय अवश्य आना होगा! बस यही बताने आया था। अगर आप अभी व्यस्त हैं, तो मैं चला जाता हूँ..." उसने उठने का नाटक करते हुए कहा।
"बैठ जाओ। यह मीटिंग सर्टिफिकेट किसलिए है?" रविंद्र ने पूछा।
आप इतने बड़े अखबार के संपादक बन गए हैं... राष्ट्रीय स्तर पर लेख लिख रहे हैं... न केवल हमारे तालुका को... बल्कि पूरे जिले को इस पर गर्व होना चाहिए! इतने वर्षों बाद आप जैसे व्यक्ति का अपने गृहनगर लौटना एक ऐतिहासिक घटना है! एक ऐतिहासिक घटना!... सच है या नहीं?
पत्रकार के रूप में काम करते हुए, रविंद्र ने कई मुख्यमंत्रियों के साक्षात्कार लिए थे। वे साक्षात्कारों के माध्यम से उन बातों को भी उजागर करने में सफल रहे थे जिन्हें मुख्यमंत्रियों ने छिपाने की कोशिश की थी। उन्हें कई केंद्रीय मंत्रियों के साक्षात्कार का अनुभव था। इस पेशे में आने से पहले, उन्होंने केवल साक्षात्कारों के विषय पर ही कई पुस्तकें पढ़ीं और उनका अध्ययन किया था। वे प्रधानमंत्री की तीन बार की विदेश यात्राओं में भी शामिल हुए थे। रविंद्र का मानना था कि एक पत्रकार का पहला गुण यह है कि वह सामने वाले व्यक्ति को पल भर में जान ले - उसके उद्देश्य को समझ ले, और व्यक्ति के बाहरी भाषण के बजाय उसके उद्देश्य में रुचि रखे।
उसने कहा,
इसे जाने दो। तुम इतिहास रचोगे... हम इसे लिखेंगे! तुम्हें कितनी बार इस सभा की सदस्यता मिली है?
दूसरी बार।
"क्यों? क्या आपने राजनीति में बहुत देर से प्रवेश किया?"
नहीं। मुझे बचपन से ही राजनीति में रुचि रही है। मैं विद्यार्थी रहते हुए ही पार्टी का काम करता रहा हूँ। हमारे लोग कैसे हैं... आप भी तो जानते हैं, महोदय! जब कोई कहता है कि वह काम करता है, तो वह उसका खून चूसकर अपना दबदबा कायम करता है! श्रीकांत गौड़ा नाम के एक विधायक थे। मैंने उनके लिए वर्षों तक काम किया... मैंने उन्हें अपने कंधों पर उठाया और कई वर्षों तक ऐसा ही करता रहा। हर चुनाव में वे कहते थे... जयन्ना, मैं इस बेच से सिर्फ एक बार चुनाव लड़ूंगा - यानी मैं वरिष्ठ विधायक बनूंगा... मुख्यमंत्री के लिए भी यह कहना मुश्किल होगा

कि मैं मंत्री नहीं बनूंगा... इसें साल मेरा काम तुम हो कर दो! एक चुनाव के दौरान ऐसा हुआ था। उन्होंने अगले बैच से भी कहा, जयन्ना, मुझे इस बार चुनाव जितवा दो... फिर सब कुछ तुम्हारा है!... अरे छोटे लड़के! अगले सात-आठ मौके तो तुम्हें जरूर मिलेंगे। तुमने वो भी कर दिखाया। कम से कम इतना तो मेरी इच्छा का अंत होना चाहिए, है ना? फिर मैं कब तक चुप रहूंगा? यहीं से शुरुआत हुई... ताकि युवा आगे आ सकें... ताकि नया खून आ सके! हमारे नेता ने तो पहले ही सिंडिकेट को खत्म करने का नारा दे दिया थी! इसलिए मैं सीधे नेता के पास गया और उनसे कहा... मुझे टिकट दे दीजिए... देखते हैं मैं जीतता हूं या नहीं!... अब अगर हमने उस थेराद्दी श्रीकांत गौड़ा को टिकट दे दिया तो पार्टी पीछे चली जाएगी... मैंने उन्हें मना लिया और एक ही बार में टिकट हासिल कर लिया। लोग कब तक वही पुराने चेहरे देखते रहेंगे?"

"लोगों ने देखा कि आपने इतने वर्षों तक मेहनत की है... इसीलिए उन्होंने आपको चुना..."

वाह! आपने क्या कहा, महोदय! यह बिलकुल सच है! इसमें कोई शक नहीं कि काम हुआ... साथ ही, एक-दो ऐसी चीजें भी हुईं जो नहीं होनी चाहिए थीं, देखिए! ये पुराने सिंडिकेट वाले लोग... यानी निजलिंगप्पा, संजीव रेड्डी, मोरारजी देसाई, कामराज... आप हमें दूसरे राज्य के साथ क्या करने को कहते हैं? हमारे निजलिंगप्पा-कर्नाटक की राजनीति के नेता! उन्होंने तो एकीकरण के लिए भी लड़ाई लड़ी। यह सब सच है। लेकिन उन्होंने एकीकरण के लिए लड़ाई क्यों लड़ी? उनका समर्थन किसने किया? आप यह सब भी जानते हैं, बताइए! ये सभी लोग बेहद सांप्रदायिक हैं! यह बिल्कुल घिनौना है, देखिए! अब तो इनकी संख्या कम होती जा रही है!

रविंद्र को कुछ हद तक अंदाजा था कि वह क्या कहना चाह रहा है। उसने जानबूझकर ऐसा कहा,

"आपने कहा था कि आपको एक-दो काम नहीं करने चाहिए, लेकिन आपने वो काम भी कर दिए! अगर आपने वो किया होता तो क्या होता?"

तुम मुझसे क्या छुपाना चाहते हो? मैं तुम्हें वो भी बता दूंगी। अरे, क्या ये वही बूढ़ा श्रीकांत गौड़ा नहीं है? वो हमेशा मेरे पीछे पड़ा रहता था... मेरा नाम तालुका में अमर हो जाना चाहिए, ताकि कहीं लिखा रहे, ऐसा करो, इसीलिए! मैंने उससे साफ-साफ कह दिया था, अगर तुम्हें ऐसा लगता है, तो तालुका के लिए कुछ अमर काम करो! कोई अस्पताल, स्कूल-कॉलेज-तालाब-पुल या कुछ और बनाओ। मैं तुम्हें बताती हूं... उनके हाथों क्यों हो रहा है?... वे बस हाथ उठाते हैं! फिर वे शुरू हो गए... मुख्यमंत्री, चलो सुनते हैं... बजट में आवंटन करवाते हैं... योजना में शामिल करवाते हैं... वे डरे हुए पिल्ले की तरह भौंकने लगे, देखो! फिर मैंने पूछा, हमें क्या करना चाहिए, तुम बताओ? तो उसने क्या कहा, तुम्हें पता है? उन्होंने कहा, तुम्हारे बसवनपुर में एक अस्पताल है... जिसने इसे बनवाया है, उस कमीने ने कभी पिट बुल नहीं खाया!... गांव में उसकी जाति का कोई नहीं है जो दंगा करे!... मैंने उसके साथ कुछ किया है, तो एक और पत्थर डालो! मंत्रियों को बुलाओ और डड्डाग पार्टी करते हैं!... मैं तुम्हें बताता हूं... मुझे इतना गुस्सा आया!... मैंने उन्हें साफ-साफ कहा... ये क्या है, श्रीकांत गौड़ा! उसने अपनी सास से लेकर अपने दामाद को दे दिया... यही हुआ! फिर वो डर गया! लेकिन तुम बताओ... वो मेरी बात कैसे सुनेगा? फिर उसने मंत्री को बताया... सांसद को। आखिरकार, बसवनपुर के वेंकटसुब्बय्या जैसे धर्मराज द्वारा किया गया दान उसके नाम पर कर दिया गया और वो बेरी हो गया! तब मैं भी चुप नहीं रह सका। मुझे अपना मुँह बंद रखना पड़ा। मैं क्या करता?"

उसे चुप क्यों रहना पड़ा? रविंद्र की पेशेवर समझ उसे यकीन दिलाती थी कि वह जो कह रहा था वह पूरी तरह झूठ था। अगर वह सच भी होता, तो यह स्पष्ट था कि

वह अपने राजनीतिक हितों के लिए चुप रहा था। फिर भी, उसने जयप्पा को शर्मिंदा करने के लिए कोई सवाल नहीं पूछा। रविंद्र बस उस निर्लज्ज व्यक्ति को घूरता रहा जो अपने दादा द्वारा दी गई दानि राशि का दुरुपयोग अपने छोटे स्वार्थों के लिए कर रहा था।

जयप्पा को यह एहसास होने पर गुस्सा आया कि वह बिना कुछ कहे उसे घूर रहा है। उसने बात को हल्के में लेते हुए कहा,

मैं मानता हूं कि मुझसे तब गलती हुई थी! मतलब, जब मेरे सामने कुछ गलत हो रहा था, तब मैंने विरोध नहीं किया, क्या यह भी एक गलती नहीं है? अब मैं ऐसी स्थिति में हूँ जहाँ मुझे उस गलती को सुधारना होगा। आपके दादाजी... नहीं। आपको दादाजी कहना गलत है। वे सिर्फ पूरे गाँव के दादाजी नहीं हैं... पूरे तालुका के दादाजी हैं!... पूरे जिले के दादाजी हैं! हमें उन लोगों को घसीटकर मंच पर लाना चाहिए जो हमारे गाँव के दादाजी द्वारा दिए गए दान-पत्र पर अपना नाम खुदाते हैं! मैं एक समारोह तय करूँगा... मैं मुख्यमंत्री को बुलाऊँगा... अगर हो सके तो प्रधानमंत्री को भी बुला लें। एक बड़ा समारोह, एक ऐसा समारोह जहाँ एक लाख लोग इकट्ठा हों! अगर कम से कम एक लाख लोग इकट्ठा नहीं हुए, तो प्रधानमंत्री को बुलाना संभव नहीं है। अगर हम उन्हें बुला भी लें, तो वे उन्हें आने नहीं देंगे। वे सी.आई.डी. से सूचना लिए बिना आने को तैयार नहीं हैं। आइए इतने लोगों को इकट्ठा करें कि बसवनपुर अस्पताल के सामने का चौक बस स्टैंड तक भर जाए और हमारे नाम लिखे फर्श को हटाकर उसकी जगह हमारे दादाजी के नाम वाला संगमरमर का फर्श बिछा दें। उस समारोह में, हमारे दादाजी के प्रतिनिधि के रूप में, सभी ग्रामीणों की ओर से... महान जनता की ओर से, मैं एक ऐसा समारोह आयोजित करूंगा जहां राष्ट्रीय नायिका हमें शाल... माला भेंट करेंगी और प्रमाण पत्र प्रदान करेंगी! अन्याय का नाश होना चाहिए... असत्य का नाश होना चाहिए! इसकी शुरुआत के रूप में, मैंने आज किसी की अनुपस्थिति में यह माला अर्पित की है। लेकिन दूसरी माला लाखों लोगों के सामने अर्पित की जाएगी!"

फिर भी, रविंद्र कुछ नहीं बोले। उनका मन कांग्रेस में हुए उस विभाजन के बारे में सोच रहा था जिसका जिक्र जयप्पा ने शुरुआत में किया था। हवा गर्म थी। पसीना इतना तेज था कि उनकी बनियान शरीर से चिपक गई थी... हां, दिल्ली की गर्मी अलग ही थी। पूरे शरीर पर पसीना था। इतनी गर्मी में, हर दिन सात-आठ हजार लोगों का एक समूह - कभी रिक्शा चालकों के संगठन के रूप में, कभी नगर श्रमिकों के संगठन के रूप में, कभी फुटपाथ व्यापारियों के संगठन के रूप में, कभी हरियाणा के किसानों के संगठन के रूप में - हर दिन सात-आठ हजार लोगों का एक समूह किसी न किसी संगठन के नाम पर रामलीला मैदान से निकलकर कनॉट प्लेस से प्रधानमंत्री आवास तक नारे लगाते हुए जाता था। ऐसे नारे पूरे रास्ते गूंजते थे! वहाँ पहुँचने के बाद भी, 'देश के नेता', 'हमारी माता' आदि के नारे लगाए जाते थे। फिर भाषण दिए जाते थे यह दिखाने के लिए कि वे ही हैं जो वहाँ बने लकड़ी के मंच से भाषण देंगे! हर दिन गरीबों के लिए नई नीतियों की घोषणा करेंगे। वहाँ जमा हुए पत्रकार फिर उनकी तस्वीरें विश्व के उद्धारकर्ता के रूप में अपने-अपने अखबारों में प्रकाशित करेंगे! दुर्गा-शांता-लक्ष्मी की त्रिमूर्ति वाली तस्वीरें! फिर बड़े-बड़े लेख छपेंगे – 'इन ठेलों को हटा देना चाहिए – नए लोगों को लाना चाहिए – इत्यादि।'

मैं उस समय दूसरों से अलग कैसे था? मैं उस समय एक समाचार संपादक था। इन घटनाओं को अत्यधिक महत्व देना - इनके बारे में विस्तृत जानकारी देना - यह बिलकुल बॉक्स न्यूज़ जैसा था!

एक शाम, रुहेला, जिसे दिल्ली में इंडिकेट-सिंडिकेट के लिए विशेष रूप से समाचार कवर करने का काम सौंपा गया था, ने मेरे सामने मेज पर एक टाइप किया हुआ समाचार रखा और कहा,

मुझे यहाँ ऊब हो रही है... मुझे कहीं और ले चलो!
अरे वाह, इतिहास को बनते हुए देखने का मौका मिलना कितना बड़ा सौभाग्य है! अगर आप इस अवसर का लाभ उठाते हुए एक तरफ़ खबरें देते रहें और दूसरी तरफ़ अपनी टिप्पणियां करते रहें, तो आप चक्षुरवैशात्यम जैसी किताब लिख डालेंगे! आपकी यह किताब भविष्य के इतिहासकारों के लिए एक बेहतरीन स्रोत होगी! और आप मुझे उबाऊ कहते हैं?
इस पर उन्होंने उत्तर दिया,
आप सिर्फ कागजी कार्रवाई कर रहे हैं। आपको पता ही नहीं कि वहां असल में क्या हो रहा है। वहां आने वाले जुलूस चाहे जो भी तख्तियां लेकर आएं – वे सब एक ही लोग हैं। ये सात-आठ हजार लोग किराए पर लाए गए हैं। यह बात सबको पता है। लेकिन कोई इसकी रिपोर्ट नहीं करता। इंदिरा लहर हर जगह फैल रही है – ये गिरोह दुष्ट राक्षस हैं – शिव की शक्ति साक्षात् रूप धारण करके इन्हें नष्ट करने आई हैं। लगता है अखबारों ने भी ऐसे समय में विरोधी खबरें न छापने का फैसला कर लिया है। बड़े उद्योगपति उनके साथ हैं। जिस तरह उन्होंने बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया, उसी तरह उन्होंने हमारे उद्योगों को भी छीनकर अपने गले में डाल लिया है, डर के मारे! अखबार मालिकों को भी यही डर सता रहा है। और अगर इससे सच भी लिखा जाए, तो उसे कौन छापेगा?
उस समय मुझे लगा कि यह सवाल मेरे पेशे के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। फिर भी, उस समय मुझमें इतनी हिम्मत नहीं हुई कि मैं उनसे कह सकूं, "आप सच लिखिए - मैं उसे छाप दूंगा।" कुछ जगहों पर रिपोर्टर के रूप में काम करने और संपादक के पद तक पहुँचने के बाद, मालिक, व्यवसाय और अखबार के बीच के रिश्ते को भला कौन नहीं समझ सकता? फिर भी, उस समय मेरे मन में यह विचार आया - हमें इसे स्वयं परख कर देखना चाहिए।
अगले दिन जब वह उठा, तो बिना दाढ़ी बनाए और बाल संवारे घर से निकल चुका था। उसने थैले से निकाले हुए पुराने कपड़े ही पहन रखे थे। उन्हीं सिकुड़े-तुड़े कपड़ों में वह रामलीला मैदान के लिए चल पड़ा। ग्यारह बज रहे होंगे। उस दिन दिल्ली होटल ओनर्स एसोसिएशन का जुलूस निकला था। हालांकि वह खुद एक पत्रकार था, लेकिन उसे ऐसी किसी संस्था के अस्तित्व की जानकारी नहीं थी। जब वह वहाँ पहुँचा, तो विशाल जुलूस पहले ही शुरू हो चुका था। जुलूस कनॉट प्लेस की ओर मुड़ गया। हर सौ लोगों पर एक राजमिस्त्री था। बाकी लोग भी राजमिस्त्री के नारों को दोहरा रहे थे। अगर कोई नारा लगाते समय गलती करता, तो राजमिस्त्री उसे धक्का देता। हर कोई गर्मी से झुलस रहा था। वहाँ मौजूद लोगों के कपड़े उससे भी ज़्यादा फटेहाल थे। रविंद्र भी एक मील लंबे जुलूस में शामिल हो गया। उसने भी बम्बी के डंडे से 'देशकी नेता - इंदिरा माता -' जैसे नारे लगाने शुरू कर दिए। 'हम सिंडिकेट तोड़ेंगे - हम भारत को बचाएंगे' जैसे नारे भी चारों ओर सुनाई दे रहे थे। नारे लगाते-लगाते सब थक गए थे।
लगभग सौ कदम चलने के बाद, उसने चुपचाप अपने बगल में खड़े आदमी से पूछा,
"भाई... तुमको क्या पैसा मिला?"
"तुम कौन हो?" उसने पूछा, और रविंद्र चौंक गया। उसे ऐसे उलटे सवाल की उम्मीद नहीं थी। लेकिन वह तुरंत संभल गया और बोला, "पांच रुपये..."
अरे बाप रे! –" उनके चेहरे पर गुस्से के साथ-साथ धोखे का भाव भी झलक रहा था, ``पांच? और मेरे पास तो सिर्फ तीन हैं? कल देखते हैं...''
"अरे बाप रे!... चुप रहो, चिल्लाओ... देश के नेता..." राजमिस्त्री ने गुस्से से कहा।
घोषणाएँ फिर से शुरू हो गईं। मौका देखकर वह धीरे-धीरे फुटपाथ की ओर बढ़ा। जुलूस अभी भी आगे बढ़ रहा था। उसी समय, एक राजमिस्त्री आया और उसने अपना फावड़ा उठा लिया।

"क्या?" रविंद्र ने खुद को छुड़ाने की कोशिश करते हुए कहा।
"तुम इतनी जल्दी नहीं जा सकते... क्या तुम पैसे लेकर भाग रहे हो? यह नहीं चलेगा! तुम्हें प्रधानमंत्री आवास जाना होगा और भाषण समाप्त होने तक वहीं रहना होगा। अगर नहीं, तो मुझे पैसे दे दो..." उसने एक सूदखोर से पैसे छीनते हुए कहा, ठीक वैसे ही जैसे कोई भाड़े का गुंडा सूदखोर से पैसे छीनता है।
रविंद्र ने भागने की कोशिश में संघर्ष किया।
मैंने पैसे नहीं लिए!...
"तो फिर आप बिना पैसे लिए यहां क्या कर रहे हैं?"
"लो, अपने पैसे ले लो... धूप से मेरा सिर दर्द कर रहा है..." रविंद्र ने कहा और अपनी जेब से पाँच रुपये का नोट अपने सामने दिखाया। उसने नोट लिया और चला गया। दो-तीन मिनट बाद रविंद्र फिर बाजार में आया। नारे फिर से शुरू हो गए - "देश की नेता - इंदिरा माता!" पचास कदम चलने के बाद उसने अपने पड़ोसी से वही सवाल पूछा। उसने यह भी पूछा, "तुम्हें कितने रुपये मिले?" जब उसने कहा "पाँच रुपये", तो वह आदमी गुस्से में आ गया!
``बेवकूफ! तुम्हारे जैसे मूर्खों के पैरों तले ही दर घट रही है!..."
``माफ़ कीजिए, बड़े भाई! गलती हो गई! अब आप मुझे बताइए – कल से मैं ऐसा ही व्यवहार करूंगा..."
उस आदमी ने अपने दोनों हाथों की सभी उंगलियां दिखाते हुए कहा,
"अगर आप इससे कम के लिए तैयार होते हैं, तो याद रखें!"
उस दिन रविंद्र चार-पाँच बार इसी तरह जुलूस में शामिल हुए। तब उन्हें भी कुछ समझ आया। वहाँ मौजूद हर किसी की अलग-अलग ज़िम्मेदारियाँ थीं। सबकी तनख्वाह एक जैसी नहीं थी। तीन रुपये, पाँच रुपये, पंद्रह रुपये, छह रुपये—जैसे-जैसे प्रधानमंत्री भवन नज़दीक आता गया, सभी राजमिस्त्री दूसरे अलग-अलग कामों में व्यस्त हो गए। उन्हें ज़रूर यकीन रहा होगा कि इतनी दूर से आए लोग सच्ची राष्ट्र नेता इंदिरा माता के दर्शन किए बिना नहीं लौटेंगे। इसमें झूठ की गुंजाइश नहीं थी, रविंद्र ने भी इसका अनुभव किया था। बताइए, और किस नेता ने ऐसे पाँच-दस रुपये दिए!—यही सवाल कई लोगों के मन में था।
रविंद्र ने जानबूझकर दो-तीन लोगों से कहा,
"लेकिन आप इसे हर दिन देखते हैं, है ना? तो आज आप फिर से क्या देखना चाहते हैं?"
``वह तो जादूई है! वह सचमुच एक राजकुमारी है! उसका रंग-रूप तो किसी ब्रिटिश रानी जैसा है ही नहीं! वरना हमें और क्या करना है?..." उसे जवाब मिल गया था-
"क्यों? क्या तुम चुप हो? ऐसा लगता है कि तुम कुछ सोच रहे हो!" जयप्पा ने पूछा।
"लेकिन मुझे खबर मिली है कि आपने, अपनी बस्ती के लोगों के साथ मिलकर... बम्मा ने गरीबों का पैसा लूटकर एक अस्पताल बनवाया... उसका नाम उस पर क्यों डाला?... इसीलिए तो आपने दंगा किया!" रविंद्र ने स्पष्ट रूप से पूछा।
एक पल के लिए जयप्पा का चेहरा उदास हो गया। लेकिन पल भर में ही उन्होंने खुद को संभाला और आत्मविश्वास से कहा,
मैं अपनी माँ की कसम खाकर कहती हूँ... मुझे पता है कि आपको यह किसने बताया। आप एक बड़े अखबार के संपादक हैं! आपको यह बताने वाले ने ऐसा क्यों किया... इसके पीछे उसका मकसद क्या था, आपको पता होना चाहिए! क्या मैं आपको बताऊँ? ये लोग...
जयप्पा ने कुछ इशारे किए।
मैं तुमसे कहता हूँ! चाहे वे हम पर कितनी भी स्याही बहा दें, उनके लिए यह काफी नहीं होगा।
"ये लोग कौन हैं?" रविंद्र ने जानबूझकर पूछा।

क्या आप मेरी बात मानेंगे? आपको वो सॅंपाठी! अगर मुझे पहले पता होता, तो मैं बसवनपुर में किराए पर लिया हुआ नया घर खाली करवा देता और आपको रहने देता... मैं रसोइया के लिए एक उडुपी ब्राह्मण को बुलाता। शादी के कामों के लिए दो नौकर भी देता! जब आप फिर से बसवनपुर आएं, तो मुझे ज़रूर बताना! आप जैसे बड़े आदमी को किसी और के घर में रहने की क्या ज़रूरत है?
``देखिए, जयप्पा गौड़ा! आप कह रहे हैं कि उस व्यक्ति ने मुझे कुछ नहीं बताया। मैंने आपके इलाके में पूछताछ की, तब मुझे पता चला। मैं पत्रकार हूं! जब तक मुझे खबर का स्रोत पता नहीं चल जाता, मैं कुछ नहीं बोलूंगा! छोड़िए! हमारे दादाजी ने ज़ोर देकर कहा था कि अगर हम दान करते हैं, तो नाम की क्या ज़रूरत है? दूसरों ने जानबूझकर फर्श पर उनका नाम लिखवाया था ताकि दूसरों को दान करने की प्रेरणा मिले। वह फर्श हटा दिया गया है, ताकि हमारे दादाजी की आत्मा को कोई ठेस न पहुँचे! फिर मिलेंगे! धन्यवाद..."
रविंद्र ने बात खत्म करते हुए विषय को समाप्त कर दिया।
"चलिए फिर मिलते हैं। मुझे नहीं पता दादाजी का स्वभाव कैसा है, या क्या-क्या? लेकिन चलिए हम एक आदर्श बने रहें, है ना? और अपनी गलतियों को भी सुधारें! नहीं तो, हमारी संस्कृति..." उन्होंने खड़े होते हुए कहा।
रविंद्र को अब समझ आ गया था कि उसे अपने नाम वाली फर्श को हटाकर उसकी जगह अपने दादा के नाम वाली फर्श बिछानी होगी। वह मुख्यमंत्री को ज़रूर फोन करेगा। मुख्यमंत्री भी गांवों में जाकर भाषण देने का मौका नहीं छोड़ेंगी। प्रधानमंत्री? वह उन्हें फोन करेगा... लेकिन वह इतने छोटे समारोह के लिए नहीं आएंगी।
यह कार्यक्रम मूल दानदाता की प्रतिष्ठा बहाल करने के लिए नहीं है... यहाँ मौजूद गिरोह के बदमीश... रविंद्र को अच्छी तरह पता था कि वह इस कार्यक्रम का आयोजन रामेगौड़ा नरसिम्हा गौड़ा, जिनका नाम चर्चा में है, और श्रीकांत गौड़ा, जो उनके रास्ते में बाधा बने हैं, को 'अकृतज्ञ' बताकर बदनाम करने के लिए कर रहा है। जयप्पा की योजना उन्हें सार्वजनिक रूप से लुटेरा घोषित करके उनकी बची-खुची राजनीतिक शक्ति छीनने की थी। साथ ही, वह यह भी जानता था कि अपने दादा के प्रतिनिधि के रूप में उन्हें आमंत्रित करके और विशेष आतिथ्य सत्कार देकर, वह अखबारों में प्रचार जैसी कुछ चीजों की भी उम्मीद कर रहा था... मुख्यमंत्री से मुलाकात की भी।
पुलिस पर लिखे लेखों के नोट्स मेज़ पर फैले हुए थे। उसकी नज़रें उन पर घूम रही थीं, लेकिन उसका मन अभी भी जयप्पा गौड़ा के शब्दों से नहीं हट रहा था। आज ही तैयारी करने और कल सुबह डिक्टेशन देने का फैसला करके, रविंद्र ने लीना को संदेश भेजा और एक पुराने कागज़ पर नोट्स लिखने लगा। उसने तय कर लिया था कि यह काम खत्म करने के बाद वह घर जाएगा, चाहे कितना भी समय हो जाए। उसने लोबो को भी फोन किया और उसे कहा कि वह उसे परेशान न करे। उसने अपनी घड़ी देखी। साढ़े छह बज रहे थे। वह पूरी तरह से अपने काम में मग्न हो गया।

■

उसने साढ़े सात बजे अपना काम खत्म किया। फिर उसने डाक से छपने वाला संस्करण मंगवाया और उसे देखा। आखिरी पन्ना पढ़ने के बाद जब वह घर जाने की तैयारी कर रहा था, तभी फोन की घंटी बजी। लोबो का फोन था। उसने कहा,
"महोदय, आपको परेशान करने के लिए क्षमा करें! शहर के सहायक पुलिस आयुक्त लाइन पर हैं। वे आपसे तुरंत बात करना चाहते हैं।"
उसने फोन उठाया। ए.पी.सी. उसने कहा,
श्रीमान रविंद्र? मैं ए.पी.सी. बोल रहा हूं। क्या आप थोड़ी देर के लिए वैंटोनमेंट पुलिस स्टेशन आ सकते हैं? एक छोटा सा काम है..."

"क्या मैं आऊं? हम देखेंगे कि हमारे पास कोई शहर का रिपोर्टर है या नहीं। अगर नहीं, तो हम किसी और को भेज देंगे। प्रेस समाचार का एक मिनट बीत चुका है।"
मैं आपके बेटे के बारे में बात करना चाहता था। कोई खास बात नहीं... हमने दोपहर 3:30 बजे ब्रिगेडियर रोड पर एक केबरे क्लब पर छापा मारा। हमने तीन केबरे नर्तकियों, क्लब के मालिक, बैंड के चार सदस्यों... उनमें से कुछ को गिरफ्तार किया। संयोग से, दर्शकों में तीन नाबालिग भी पाए गए। तेरह-चौदह साल की उम्र के..."
एक पल में, रविंद्र को एहसास हुआ... कि उन लड़कों में से एक उसका अनूप था! उन्होंने बाद में भी यही बात कही।
"...उनमें से एक आपका बेटा है... क्या उसका नाम अनूप है? हमने क्लब के मालिक से नाबालिगों को अंदर आने देने के बारे में पहले ही पूछताछ कर ली है। आप आइए और अपने बच्चों को ले जाइए। पूछताछ करते ही उसने आपका नाम बताया था।"
मैं नहीं आऊँगा... सज़ा कानून के अनुसार हो... या फिर उसे अपने जूते से कुचलकर सीधा कर दो... मैं ये सब कहकर आज़ाद होना चाहता था, पर मेरे मुँह से एक शब्द भी नहीं निकला। चूंकि ए.पी.सी. भी जल्दी में था, उसने जल्दी से रिसीवर रखकर "शुभ संध्या" कही।
रविंद्र का मन गुस्से से भरा हुआ था। उसे पुलिस की लातों से उसे सबक सिखाने के अलावा कोई और उपाय सूझ नहीं रहा था। उसने फैसला किया... कि वह पुलिस स्टेशन नहीं जाएगा। बस घर चला जाएगा... नहीं। अगर वह घर गया, तो उसे उसे बताना ही पड़ेगा। आधे घंटे या पंद्रह मिनट में फोन आ जाएगा। उसका मन कर रहा था कि वह कब्बन पार्क जाकर किसी पत्थर की बेंच पर चुपचाप बैठ जाए। अगर वह ऑफिस में ही रुका रहा तो क्या? थोड़ी देर में फिर फोन आ जाएगा।
वह हाथ में ब्रीफकेस लिए दफ्तर से निकला। लिफ्ट वाले ने उसे बड़े आदर के साथ नीचे उतारा। जब उसने कार को क्यूबन पार्क जाने वाली सड़क पर पार्क किया, तो उसमें कार से उतरने और फिर से चढ़ने की इच्छा भी नहीं रही। वह वहीं बैठा रहा, स्टीयरिंग व्हील पकड़े हुए।
बहुत समय तक तो ऐसा लगा जैसे उसके बेटे की सारी परेशानियाँ खत्म हो गई हों। उसने भी यही सोचा था कि सारे दोस्तों से पीछा छुड़ाने के बाद सब ठीक हो जाएगा। वो अभी सिर्फ़ चौदह साल का है! और वो केबरे देखने जाता है! इसका मतलब है कि मामला सिर्फ़ मांस चोरी का नहीं है... बल्कि उससे कहीं आगे बढ़ गया है। पुलिस उसे दो-चार लातों से पीटेगी... लेकिन इससे समस्या हल नहीं होगी। पर फिर क्या किया जा सकता है?...
बगीचे में कुछ ही लोग थे। पत्थर की अधिकांश बेंचें खाली थीं। सड़क की बिजली की रोशनी बगीचे के अंधेरे को प्रतिबिंबित कर रही थी। उसने अपनी घड़ी देखी। सवा आठ बज रहे थे। उसे पुलिस स्टेशन जाना था... उन्हें कितनी देर तक इंतज़ार करना पड़ेगा? उसने कार स्टार्ट की।
पुलिस स्टेशन के बाहरी कमरे में दो बेंचों पर कई लोग बैठे थे। कुछ लोग दीवार के सहारे खड़े भी थे। कुल मिलाकर पंद्रह-बीस लोग थे। वे केबरे मामले से जुड़े ही होंगे। ज़ाहिर है, इस समय तो कई अन्य कामों में लगे लोगों का पुलिस स्टेशन में इकट्ठा होना स्वाभाविक ही है! पटना और जयपुर जैसे गांवों में भी शाम के समय पुलिस स्टेशनों पर लोगों की भीड़ उमड़ती थी। कर्नाटक में उसने ऐसा नज़ारा पहले कभी नहीं देखा था।
दीवार के सहारे बात कर रहे दो आदमियों पर उसकी नज़र पड़ी। उनके चेहरे चर्बी से ढके हुए थे... उनके गले... उनके सफारी सूट... 'शक्ति इलेक्ट्रिकल्स' के अरोरा। दूसरे ने उस दिन पजामा और बाथरोब पहना था। आज उसने कमीज़ और

पैंट पहनी थी। 'डेवलपर्स एंड बिल्डर्स सभरवाल।' दोनों शांत चेहरों के साथ खुशी-खुशी बातें कर रहे थे, मानो यह रोज़ की बात हो। उसे अब याद आया... उन्हें एक ही उम्र के तीन बच्चे मिले थे। इसीलिए एपीसी ने उसे बताया था... अनुप के साथ उनके बच्चे... जगदीश अरोरा और ओमप्रकाश सभरवाल भी कैबरे गए होंगे! लेकिन ज़वेरी ने अपने बेटे को इस स्कूल से निकालकर एक ऐसे स्कूल में भेजा था जो एक भारतीय आध्यात्मिक केंद्र चलाता है, है ना! अगर उसने इन बच्चों को अलग-अलग विभागों में भी डाल दिया होता, तो बाहर मिलने पर वह क्या करता? यह साफ़ था कि उसने मुझे बुलाया था, और उसने उन दोनों को भी बुलाया था। वह उनसे बात करने के लिए उस दिशा में बढ़ा भी था। लेकिन वह कुछ सोचते हुए रुक गया। फिर वह धीरे से उनके बगल में चला गया।
वे दोनों आपस में पंजाबी में बात कर रहे थे। शायद इसलिए क्योंकि उन्हें लगा कि अगर वे हिंदी में बात करेंगे तो इस गांव के कई लोग उन्हें समझ जाएंगे! चूंकि भाषा पंजाबी थी, इसलिए वे बिना आवाज उठाए आराम से बातचीत कर रहे थे।
“इन पुलिसवालों के काम करने के तरीके में बहुत बड़ी गलती है! उन्हें साफ-साफ बताकर हमें जाने देना चाहिए था। उन्हें हमें यहां बुलाना चाहिए था... इंतज़ार करवाना चाहिए था... हमें दांत पीसने पर मजबूर करना चाहिए था... आखिर में उन्हें हमें ऐसे तैयार करना चाहिए था जैसे हमने उन पर कोई बड़ा एहसान किया हो... फिर भी बात नहीं बनेगी... हमें इतना पैसा देना पड़ेगा वगैरह... ये सब समय की बर्बादी है! हमारा असली काम तो शाम को होता है। अगर हम अपना काम छोड़कर यहाँ आकर खड़े रहेंगे, तो हमारे नुकसान की भरपाई कौन करेगा?” अरोरा पूछ रहे थे।
“लेकिन अब हम उन्हें क्यों जाने दें? बच्चे जाना नहीं चाहते थे, यह सच है! लेकिन वे गए, इसलिए जो लोग गए उन्हें सज़ा मिलनी चाहिए! बच्चे कुछ नहीं कर सकते। वे बस देखते रहे? उन्होंने कुछ नहीं किया!” सभरवाल ने पेट हिलाते हुए और हंसते हुए कहा, “आप क्या करेंगे, बताइए? उस नज़रिए से देखें तो वे अभी छोटे हैं...”
"युवा उम्र क्या होती है? हमारे राजस्थान में तो बच्चे चौदह साल की उम्र में ही शादी कर लेते हैं!" अरोरा ने कहा।
"शादी के बाद क्या होता है? क्या वे शादी के हॉल में भी ऐसा करते हैं?"
"यह सच है, कहो! लेकिन जाने दो... जब तुम्हें पहली बार ऐसा अनुभव हुआ था तब तुम्हारी उम्र कितनी थी?"
अरे, मुझे जाने दो, रे! बताओ... तुम हर काम में बहुत तेज हो! व्यापार विस्तार में तो बेहद तेज हो!
बताओ? मैं तब चौदह साल की थी। वो तीस साल की रही होगी। इतनी कम उम्र में किसी औरत की असली उम्र कैसे पता चल सकती है, बताओ! मैंने अंदाज़ा लगाया। मैंने जेब खर्च के पैसे बचाए थे... मैं उन्हें अपने साथ ले गई थी। मैं कितनी डरी हुई थी! मुझे इसके बारे में कुछ पता ही नहीं था! वो अनुभवी थी, इसलिए मुझे कोई परेशानी नहीं हुई। और तुम?
"आपसे एक साल बाद।"
"किस गाँव में?"
``मुरादाबाद में। जब मैं हाई स्कूल जाता था। वो भी कितने सस्ते दिन थे, है ना! मुझे याद है मैंने पाँच रुपये दिए थे। वो अठारह-उन्नीस या बाईस साल की रही होगी... किसे इतना याद रहता है, बताओ!..." बोलते-बोलते उसने खुद को संभाला और बोला, ``हमें इसके बारे में कुछ क्यों करना चाहिए! बच्चों को इस तरह खुला छोड़ना ठीक नहीं है। उन्हें पुलिस के सामने पेश करके उन्हें सौंप देना चाहिए!" उसने अरोरा के सामने सिगरेट लहराते हुए कहा।
उसने रवींद्र की तरफ मुड़कर देखा तक नहीं... और अगर देखा भी होता, तो कौन जानता कि वह उसे पहचान पाता या नहीं! वह अपनी पुरानी यादों में खोया हुआ

था। अगर वह अपना परिचय भी देता, तो भी उसे अपने बेटे की समस्याओं पर उससे बात करने में हीन भावना महसूस होती।
यह सोचकर कि यहाँ ऐसे खड़े रहने से बेहतर होगा कि अंदर जाकर किसी अधिकारी से बात कर ली जाए, उसने चारों ओर देखा। उसे एक कमरे में सब-इंस्पेक्टर का बोर्ड दिखाई दिया।
जब वह अंदर आया, तो सब-इंस्पेक्टर किसी से फोन पर बात कर रहा था। वह उसके सामने वाली कुर्सी पर तब तक बैठा रहा जब तक बात खत्म नहीं हो गई। फिर उसने कहा,
"मेरा नाम रविंद्र है। मेरा चौदह वर्षीय बेटा यहाँ है। इसीलिए मुझे एपीसी से फोन आया।"
``संपादक महोदय, है ना?..." सब-इंस्पेक्टर खड़ा हुआ और सलाम किया, ``ए. पी. सी. महोदय ने यहीं से आपसे बात की थी। मैंने आज के छापे की योजना बनाई थी। ये निकम्मे न केवल समाज को बल्कि बच्चों को भी भ्रष्ट कर रहे हैं!..."
उसने कहा,
आप उन्हें जैसे चाहें वैसे दंडित करें। लेकिन यह सब उनकी गलती है... मैं यह स्वीकार नहीं करूंगी कि मेरा बेटा पूरी तरह निर्दोष है। उसने तो स्कूल की प्रयोगशाला से कुछ उपकरण चुराकर बेच भी दिए... तीन अन्य बच्चों के साथ मिलकर!..."
"यह हमारे रिकॉर्ड में भी दर्ज है, महोदय! मुझे पता है। ब्रिगेड रोड मेरा वार्ड है। आपके बेटे की संगति ऐसी ही है। ये बाहरी लोग यहाँ आकर व्यापार में लाखों की लूट करते हैं, है ना? वे सारा पैसा अपने मनोरंजन पर खर्च कर देते हैं। बच्चे अगर कुछ मांगते भी हैं, तो वे उन्हें मनचाहा पैसा देते रहते हैं! जब तक बच्चों की ऐसी संगति रहेगी, तब तक आपके और हमारे बच्चों को सही रास्ते पर लाना संभव नहीं है... मैं यह अपने अनुभव से कह रहा हूँ।"
"लेकिन उसे इतना पैसा कहां से मिला? क्या आपने इस बात की जाँच की है कि उसने कोई चोरी या अन्य अपराध तो नहीं किए हैं?"
मैंने जांच की। पक्का तुम्हारा ही बेटा है! मार खाने के बाद मुंह खोलने वालों में से वो नहीं है। मैंने कहा, मैं तुम्हारे पैर लटका दूंगी, लेकिन उसने कहा, ऐसा करना गैरकानूनी है... अगर हमारी गलती है तो चाहो तो हमारे माता-पिता को बुला लो! वो मुझसे बेहतर अंग्रेजी बोलता है! उस हिसाब से तो वो कन्नड़ भी हकलाकर ही बोलता है।
"उसे पैसा कहां से मिला? क्या आपको इसका जवाब मिला?"
उस पर दबाव डाला गया... तब जाकर वह सच बताने को तैयार हुआ। उसने बताया कि उसका और मम्मी का एक गुप्त समझौता था। पापा की जानकारी के बिना, मम्मी उसे हर हफ्ते तीस रुपये चिकन खाने के लिए देती हैं। उसने कहा कि कभी-कभी वह इस पैसे से बिना चिकन खाए कैबरे देखने जाता है। उसके दोस्त तब तक कैबरे देखने नहीं जाते जब तक वह उन्हें न ले जाए... उसने कहा कि भले ही वे अच्छे दोस्त हैं, फिर भी वह कभी भी चिकन या कैबरे पर अपना पैसा खर्च नहीं करता। उसने यह भी बताया कि यह चौथी बार था जब वह कैबरे देखने गया था। उसने कहा कि यह सब सच है, उसने यह सब अपनी कल्पना से बताया है, हमें इसकी जांच करनी चाहिए। ये बच्चे... मैं आपको बता दूं... इन बच्चों में झूठ बोलने की बहुत बड़ी कला होती है। और तो और, वे इस बात से वाकिफ भी होते हैं। इसीलिए ये बच्चे इतने आत्मविश्वास से ऐसी चीजों में शामिल हो जाते हैं। इसीलिए वे पुलिस स्टेशन में भी नहीं डरते। ये बच्चे रोते या गिड़गिड़ाते तक नहीं। जब आम लोग पुलिस स्टेशन शब्द सुनते हैं, तो उनकी आँखों से ही नहीं, बल्कि माथे, गर्दन, सिर, कान, हर जगह से पानी बहने लगता है! वे तुरंत रोने लगते हैं!

अब तो वो बहुत दृढ़ निश्चयी हो गया है, मैं तो यही कहूंगी! कंपनी भी इसमें शामिल हो गई। लेकिन इसमें कुछ तो अपराधबोध भी होगा, है ना? इतनी कम उम्र में कोई भी सिर्फ कंपनी की वजह से इतना निर्दयी नहीं हो सकता। वो किसके जैसा बन गया? हमारे परिवार में जितना मैं जानती हूं, लगता है कि इस तरह का कोई था ही नहीं। सब लोग स्वभाव से नेक थे। उसकी मां के पिता इंजीनियर के तौर पर काम करते हुए रिश्वत लेते थे। आज भी वो थोड़ा-बहुत झूठ बोलता है। लेकिन उसमें भी कोई आपराधिक प्रवृत्ति नहीं है। उसके माता-पिता-दादा-दादी-नाना-नानी-उनके बारे में मुझे कुछ नहीं पता...
अपने भटकते विचारों को दरकिनार करते हुए, उसने सब-इंस्पेक्टरों से कहा,
तुम उसे अपने जूते से चार बार लात मारो! इस तरह वह सही रास्ते पर आ जाएगा। मुझे जो भी सजा दो, मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी..."
"महोदय, मेरा यह मतलब नहीं है कि हम पुलिस स्टेशन में मारपीट नहीं करते... हम तृतीय डिग्री दंड नहीं देते। फिर भी, क्या मैं अपना अनुभव साझा करूँ? ये तरीके अपराधी को बोलने पर मजबूर करने में कारगर हो सकते हैं। लेकिन उन्हें सुधारने में इनका कोई फायदा नहीं है। मैं यह बात सिर्फ आपके बेटे के संदर्भ में नहीं कह रहा हूं। उसे बोलने पर मजबूर करने का काम हो चुका है। अगर आप इसके बाद भी उसे पीटेंगे, तो वह और भी जिद्दी हो जाएगा... उसमें कोई सुधार नहीं आएगा। मैं आपसे भी यही कहता हूं... घर जाने के बाद भी उसे पीटने का कोई फायदा नहीं है।"
उन्हें इस बात में कोई संदेह नहीं था कि वे जो कह रहे थे वह सही था। फिर भी, उनके भीतर की निराशा, हताशा और पीड़ा कम नहीं हुई।
तभी एक सिपाही अंदर आया और उनके सामने एक नोट रख दिया। जैसे ही उसने उसे देखा, उसने रविंद्र से कहा,
"मैं आधे घंटे के लिए बाहर जाना चाहता हूँ, महोदय। मैं आपको सारी बातें बताता हूँ। वे मासूम बच्चों को केबरे देखने के लिए अंदर ले गए थे। अगर हम इस मामले को आरोपपत्र में शामिल करते हैं, तो इन बच्चों को भी अदालत ले जाना पड़ेगा। बच्चों को सज़ा नहीं दी जाएगी, यह सच है, बाकी दो बच्चों के पिता भी बाहर इंतज़ार कर रहे हैं। हमारे सर्कल इंस्पेक्टर आए हैं, उनसे बात करने और अपने वरिष्ठ अधिकारियों से इस बारे में चर्चा करके फैसला लेने के लिए कहा है। तब तक आपका बेटा हमारी हिरासत में रहेगा। आप अभी घर जा सकते हैं। हम आपको लगभग नौ या दस बजे बुलाएँगे। तब आकर बच्चे को ले जाइए। हमने तीनों बच्चों को यहाँ अलग-अलग रखा है। हम उनसे पूछताछ कर रहे हैं कि उनके बयान एक जैसे हैं या उनमें कोई अंतर है। इसी कारण वे हर घंटे उनसे एक ही सवाल पूछ रहे हैं। उसे आज ही ले जाइए। फिर कल या परसों फिर मिलते हैं और इस बारे में आगे बात करते हैं।" फिर वह उठे, प्रणाम किया और बाहर चले गए।
रविंद्र भी उनके साथ कमरे से बाहर निकल गया।

■

वह घर पहुँच गया। कांति तब डर गई। उसे देखते ही उसने कहा,
मैंने दफ्तर में फोन किया था। मुझे पता चला कि आप पौने सात बजे चले गए थे।
उसने कुछ कहा नहीं।
उन्होंने आगे कहा,
अनुप अभी तक घर नहीं आया है...
उसकी नजर घड़ी पर पड़ी। साढ़े नौ बज रहे थे।
"तो जाओ और उसे ढूंढो!" उसने शांत भाव से उत्तर दिया।
"ये क्या बकवास है!" उसने गुस्से से कहा, "अनुप घर नहीं आया, इसलिए मैं शाम सात बजे से उसका इंतज़ार कर रही हूं! और तुम मुझे सीधे उसे ढूंढने जाने को कह रहे हो? इस बार मैं उसे कहाँ ढूंढूं?"

"आपको पता होना चाहिए कि ब्रिगेड रोड पर कौन सा चिकन रेस्टोरेंट है! वहां जाइए और पता कीजिए!"
"तुम्हारा क्या मतलब है? मैं वहाँ चिकन खाने जाऊँ? या उसे ले जाकर खिलाऊँ? मैं ऐसी बदतमीज़ी बर्दाश्त नहीं करूँगी... मैं तुम्हें बता दूँगी!" उसकी आँखों में गुस्सा और चेहरे पर दृढ़ निश्चय था।
उसने उसकी ओर मुड़कर देखा और कहा,
"क्यों? क्या उसके पिता को बिना बताए उसे हफ्ते में एक बार चिकन खाने के लिए पैसे देना काफी नहीं है? आपको उसे खुद वहां क्यों ले जाना पड़ता है? अगर आपको खाना है, तो वह आपको वहां ले जाएगा!"
उसने उसकी निगाहें बचाईं। वहीं रुक न पाने के कारण, वह रसोई की ओर चल पड़ी, उसके जूतों की आवाज़ गूंज रही थी। वह भी अपने अध्ययन कक्ष में चला गया। उसने अपना ब्रीफकेस मेज पर रखा और अपने जूते-कपड़े उतारे बिना, आधे घंटे तक वहीं बैठा रहा, पुलिस स्टेशन से फोन आने का इंतज़ार करता रहा।
दस मिनट बीत चुके होंगे... कांति उस कमरे में आई। यही उसका आम तरीका है। अगर गलती उसकी होती, तो वो धीरे से कमरे से निकल जाती... दस मिनट बाद लौट आती। ऐसे में, उसे उसकी गलती भूल जानी चाहिए! अगर उसे याद आ भी जाए, तो वो बड़ी कुशलता से उस पर 'निर्दयी', 'अकृतज्ञ', 'अनुदार', 'बदला लेने वाली' जैसे आरोपों की बौछार करके उसके मन में गलती का एहसास करा देती है! यही उसकी तरकीब है!
अब वह अंदर आई और ऐसे दिखावा करने लगी जैसे कुछ हुआ ही न हो और बोली,
हमें पुलिस को बुलाना होगा... लड़का घर नहीं आया, इसलिए..."
"तो फिर तुम ही तो यह करना चाहते थे!"
"मेरे फोन करने और इंडियन ट्रिब्यून के संपादकों के फोन करने में बहुत बड़ा अंतर है!" रविंद्र समझ गया कि उसका इरादा उसके अहंकार को संतुष्ट करना और उसके प्रति उसके गुस्से को भुला देना था।
"सच है! लेकिन उन्होंने पूछा... आपका बेटा आमतौर पर कहाँ जाता है? तो मैं क्या कहूँ? वह ब्रिगेड रोड पर चिकन रेस्टोरेंट जाता है, तो मैं आपको बता दूँ? अगर मैं पूछूँ कि इतने छोटे बच्चे को पैसे कौन देता है, तो मैं आपको बता दूँ, उसकी माँ अपने पति की नज़रों से बचते हुए उसे पैसे देती है... तो मैं आपको बता दूँ?"
उसने अपनी निगाहें उस पर गड़ा दीं। गुस्से से उसके मसूड़े भींच गए थे। उसकी आँखों में साफ झलक रहा था कि वह ऐसे ताने नहीं सहेगी। फिर उसने धीरे से कहा,
"अगर पिता कंजूसी दिखाए तो क्या माता भी कंजूसी दिखा सकती है? क्या दोनों में से किसी को भी प्यार नहीं दिखाना चाहिए? नहीं तो बच्चे घर का प्यार कैसे महसूस करेंगे? अगर प्यार ही नहीं होगा तो उन्हें सही राह पर कैसे लाया जा सकेगा?"
मुख्य प्रश्न से विषय भटकाना केवल आज की राजनीति की विशेषता नहीं है! यह सीधे राजनीति से क्यों नहीं जुड़ता? ऐसे अवसर आने पर ये विचार हमेशा उनके मन में आते थे। उन्होंने कहा,
"अब विषय मत बदलो। पैसे देकर तुम मांसाहार जैसी बुरी आदत को एक और बुरे तरीके से बढ़ावा दे रहे हो!"
"बसवनपुर जैसे गांव में पले-बढ़े लोगों की जो बुरी आदतें होती हैं, उनके लिए दुनिया के हर व्यक्ति को बुरा महसूस करने की जरूरत नहीं है! अगर हम इसे ठीक से समझ लेते, तो हमें अपनी मां की मदद करने के लिए छुपकर जाने की जरूरत नहीं पड़ती!..." उसने कहा।
वह एक पल के लिए अवाक रह गया। उससे बहस करने का कोई फायदा नहीं था। वह हार नहीं मानेगी... इसके लिए वह किसी भी हद तक गिर सकती है... उसे

यह याद आया और वह बहुत क्रोधित हो गया। अनुप के प्रति जो क्रोध शाम से उसके हृदय में सुलग रहा था, वह अब क्रांति पर फूट पड़ा। अनजाने में ही उसके मसूड़े कस गए। उसके मन में उसे दोनों हाथ देने की तीव्र इच्छा जागी। हालांकि उसे दोनों हाथ देने की इच्छा कई बार उसके मन में आई थी, लेकिन उसने कभी हाथ नहीं उठाया था। इसीलिए तो यह सब हो रहा है! वह उसी उत्साह से उठ खड़ा हुआ।
लेकिन उसके मन ने उसे आगाह किया। अगर उसने आज उस पर हाथ उठाया, तो आज की पूरी घटना में यही सबसे अहम घटना होगी। उसकी गलती का पर्दा गिर जाएगा! उसने कैबरे देखा... यह भी एक सिहरन पैदा कर देगा। यह सारा मामला ठीक वैसा ही था जैसे हमारे देश में सारे सवाल पुलिस फायरिंग के पीछे छिपे रहते हैं! उसने अपने मन को आगाह किया, लेकिन क्रोध... फिर भी, नेक क्रोध को रोकना हमारी फितरत के खिलाफ है...
उसी समय फोन की घंटी बजी। यह पुलिस स्टेशन से ही फोन था, इसमें कोई शक नहीं था।
"सर, उन दोनों लड़कियों के पिता ने हमारे बॉस से मुलाकात की और हमसे अनुरोध किया कि बच्चों को अदालत में न बुलाया जाए। हम उन लड़कियों के खिलाफ़ अत्यधिक अश्लील प्रदर्शन के लिए मुकदमा दायर करने जा रहे हैं। आपको बच्चे को ले जाने में कोई आपत्ति नहीं है..."
रविंद्र रिसीवर पकड़े वहीं बैठा रहा। उसका मन कर रहा था कि वह उसे कुछ बताए बिना ही वहां से चला जाए और उसे भी अपने साथ ले जाए। लेकिन अगर उसने ऐसा किया, तो बाद में वह अपनी गलती कभी स्वीकार नहीं कर पाएगा।
उसकी ओर मुड़कर उसने कहा,
``यह पुलिस स्टेशन का फोन था। आपने उसे चिकन खाने के लिए जो पैसे दिए थे, उनसे वह ब्रिगेड रोड पर एक कैबरे शो देखने गया था। वहाँ लड़कियाँ हद से ज़्यादा अपने शरीर का प्रदर्शन कर रही थीं, इसलिए पुलिस ने वहाँ छापा मारा। फिर आपका बेटा अपने दोस्तों के साथ वहाँ मिला! पुलिस उसे भी पुलिस स्टेशन ले गई। मैं वहीं से आई हूँ..."
"तो?..." उसे जो झटका लगा वह सामान्य नहीं था।
वह उसमें आए बदलाव को देखे बिना नहीं रह सका। खुद को संभालते हुए उसने कहा,
ये बेवकूफ बच्चे! इन्हें क्लब में आने की इजाजत सिर्फ इसलिए दी जाती है क्योंकि उन्हें पैसा मिलता है... इन क्लब मालिकों को गिरफ्तार करके जेल भेज देना चाहिए! इन्हें रिहा नहीं किया जाना चाहिए! आपको पुलिस को भी बताना चाहिए। आपको उच्च अधिकारियों को भी बताना चाहिए..."
"क्या आप कह रहे हैं कि आपके बेटे की कोई गलती नहीं है?"
``ऐसा कौन कहता है? जब आप इसे घर लाते हैं, तो आपको दो रखने चाहिए, है ना? अगर मैं बीच में गिर जाऊं, तो मुझे बताना! तुम ही पिता हो! लेकिन इसकी तुलना क्लब के अपराध से नहीं की जा सकती। चाहे कुछ भी हो, यह आधी उम्र का है!..."
वह चला गया, और वह भी उसके साथ चली गई। उसने कहा,
"पता नहीं उन्होंने वहां क्या किया होगा, मेरे बच्चे! बच्चा जरूर डर गया होगा!"
"पुलिस ने मुझे बताया कि तुमने उसे जो पैसे चिकन खाने के लिए दिए थे, उनसे वह नग्न लड़कियों को देखने चला गया! अरे यार... उस पुलिसवाले को भी एक आदर्श माँ देखने दो..."
लेकिन उसके कठोर शब्दों को सुनकर वह स्तब्ध रह गई। उसके चेहरे पर गुस्सा साफ झलक रहा था।

रास्ते में उसके मन में एक विचार आया... क्या बच्चे की गलतियों को छुपाना और दूसरों पर दोष मढ़ना उसका स्वभाव है? या इस मामले में सभी स्त्रियाँ एक जैसी होती हैं? केवल स्त्रियाँ ही क्यों? ऐसे पुरुष भी होते हैं। लेकिन स्त्रियों का यह विशेष स्वभाव प्रशंसनीय है। तभी उसे दिल्ली में रहने वाले अपने कश्मीरी पंडित मित्र की याद आई। वह हमेशा कहा करता था... यदि किसी का दिल जीतना हो, तो उसकी प्रशंसा मत करो... उसके बच्चों की प्रशंसा करो। यदि वे छोटे बच्चे हैं, तो उनके गुणों का वर्णन करो। बस हो गया।
उन्होंने एक बार अपनी बात साबित भी कर दी थी।
एक बार वे दोनों किसी काम से दिल्ली से झांसी जा रहे थे। थर्ड क्लास का डिब्बा इतना भरा हुआ था कि उसमें एक भी सीट खाली नहीं थी। उन्होंने बताया,
"पहले मैं जगह बनाऊंगा, फिर आपको फोन करूंगा।"
वह सीधे दो बच्चों वाले एक दंपत्ति के पास गया और वहीं खड़ा हो गया। उनसे कुछ देर बातचीत करने के बाद, उसने बच्चों से सरल प्रश्न पूछे, जैसे स्कूल का नाम क्या है... संख्याएँ कितनी दूर तक जाती हैं... ताजमहल किसने बनवाया था, आदि। जब बच्चों ने उत्तर दिए, तो उन्होंने सिर हिलाया... उनकी प्रशंसा की... और अपने गाल फुला लिए। फिर उसने बच्चों के माता-पिता से कहा,
“कितने प्यारे बच्चे हैं ये! न सिर्फ दिखने में सुंदर हैं... बल्कि बुद्धिमान भी हैं! इनकी आंखों की चमक खुद ही सब कुछ बयां करती है! सचमुच! आप भाग्यशाली हैं!...” और वह फिर से एक और बच्चे की प्रशंसा करने में मग्न हो गए।
तब तक बच्चों के माता-पिता पूरी तरह गायब हो चुके थे। उस आदमी ने कहा,
"ये क्या है साहब! आप खड़े क्यों हैं? बैठ जाइए!... यहाँ बैठिए! आप किस गाँव जा रहे हैं? बैठ जाइए। क्या आप यहाँ कुछ समय बिताना चाहते हैं?" यह कहकर वह उनके लिए जगह बनाने के लिए एक तरफ हट गए।
“मुझे बैठने दीजिए, जी! क्यों बहनजी को परेशान कर रही हो?” मैंने कहा, लेकिन बिना सुने ही मैंने उन्हें बैठने के लिए मजबूर कर दिया। जब उन्हें बैठने की जगह मिल गई, तो उन्होंने प्यार से एक बच्चे को गोद में उठा लिया। फिर वे अपनी आँखों से मुझे इशारा करने लगे कि मुझे भी उसी तरह बैठने की जगह ढूंढ लेनी चाहिए। लेकिन मैं ऐसा नहीं कर सकी। वे बच्चे भी ज्यादा बातूनी नहीं थे। उन्हें मेरी मजबूरी का एहसास हो गया। वे मेरी ओर मुड़े और बोले,
अरे बाप रे! मैं तो अकेला बैठा हूँ! चलो... आंधी सीटें हम सब ले लेते हैं!..."
मैं भी आधी सीट पर बैठ गई। फिर अचानक जाग गई। वह बच्चों की और भी ज़्यादा तारीफ़ करने लगा। नतीजा यह हुआ कि दोनों ने बच्चों को अपनी गोद में उठा लिया। ये बच्चे इन अजनबियों के साथ कब तक रहेंगे?
अरोरा और सभरवाल शायद इतने समय से पुलिस स्टेशन में ही रहे होंगे। हो सकता है वे बच्चों को घर भी ले गए हों! हो सकता है उन्होंने एक-एक हजार रुपये दिए हों? कौन जाने! वे नहीं चाहते थे कि उनके बच्चों के बाल भी रहें। उस उम्र में उन्होंने जो किया, वही ये बच्चे अब कर रहे हैं, है ना? इसीलिए वे दोनों चुपचाप खड़े रहे, सोचते हुए, 'इसमें कुछ खास नहीं है!' सिर्फ मैं ही बहुत शर्मिंदा और परेशान थी। जो व्यक्ति पवित्र जीवन जीना चाहता है, उसमें क्षमा और भावना की कमी होती है। बुद्धि हमेशा सख्त नियमों का पालन करने पर जोर देती है। तो क्या मैं ही अजीब इंसान हूँ? मैंने भी बहुत प्यार और स्नेह पाया है। दादी का स्नेह... इस दुनिया में इससे कोमल और क्या हो सकता है? दादाजी को भी कठोर हृदय नहीं कहा जा सकता। हालांकि, अप्पा में स्नेह और भावना की कमी थी। फिर भी, वे कठोर नहीं थे। वे क्रूर नहीं थे। आप कह सकते हैं कि वे लापरवाह थे। जब मैं बच्ची थी, तब मुझे इस तरह के भटकने और गलत रास्ते पर जाने का अनुभव नहीं था।
“जगन्नाथ, मुझे बताइए, इस देश में गणतंत्रात्मक शासन प्रणाली ठीक से जड़ नहीं जमा पाई है। इसे जड़ जमाने की बड़ी ज़िम्मेदारी हमारे नेताओं पर है। यह इंग्लैंड

और अमेरिका को संस्कृति से पोषित हुई है। यह सामान्य बात नहीं है! इस स्थिति में यह अपने ही बेटे को सत्ता में क्यों लाना चाहती है? यह लोकतांत्रिक विचारधारा में गहराई से क्यों नहीं समाई है?...” रविंद्र ने खाली समय में एक संपादकीय बैठक के दौरान जी. एन. पंडित से ये सवाल पूछे थे। यह घटना झांसी जाने के एक हफ्ते बाद घटी थी।
उस समय पंडित ने कहा था,
"याद रखो, मातृत्व से बढ़कर कोई क्रूर प्रवृत्ति नहीं मिलेगी! कोई भी शक्ति न्याय या अन्याय, तर्क या विवेक पर विजय नहीं पा सकती! इस महत्वपूर्ण तथ्य को जाने बिना केवल किताबें पढ़कर और मुख्य पृष्ठ पर लेख लिखकर काम मत चलाओ!" विद्वान ने कितनी गंभीरता से यह बात कही थी!
अचानक, रविंद्र ने कार रोक दी। गहरी सोच में डूबे होने के कारण, उन्हें लगा कि वे गलती से गलत रास्ते पर आ गए हैं। यह ठीक नहीं है... उन्होंने खुद को चेतावनी दी। गाड़ी चलाते समय शांत रहना बहुत ज़रूरी है। उन्होंने एक बार चारों ओर देखा और पुलिस स्टेशन के पास वाले रास्ते को याद करके उस ओर चल पड़े।

■

रविंद्र उनके बच्चों के साथ रवाना होने से पंद्रह मिनट पहले वहाँ पहुँच गया। इस वजह से अनूप थोड़ा असहज लग रहा था। लेकिन जब सब-इंस्पेक्टर ने कहा, "अब अपने पिता के साथ जाओ... लेकिन इसके बाद सावधान रहना," तो वह फिर से खुश हो गया। ट्रेन चलने तक वह पूरी तरह से संभल चुका था। रविंद्र सोच रहा था कि उससे बातचीत कैसे शुरू करे। लड़का वहाँ बैठा था और उसे ज़रूरत से ज़्यादा भरोसा था कि वह पूछे गए हर सवाल का जवाब दे देगा।
आधा मील चलने के बाद, रविंद्र ने कार को सड़क के किनारे रोक दिया और अनूप का चेहरा देखने के लिए अंदर की लाइट जला दी। उसने पूछा,
"क्या आपको ऐसी जगह देखने जाने में शर्म नहीं आई?"
अनूप बिना कुछ कहे सामने की सड़क को घूरता रहा।
बिना क्रोधित हुए पिता ने वही प्रश्न दोबारा पूछा।
अनूप को कुछ याद आया और वह जोर से हँसने लगा।
रविंद्र गुस्से में था, लेकिन उसने अपना संयम नहीं खोया और अनूप को देखता रहा।
अनूप की हंसी कम होने के बजाय और बढ़ गई। रविंद्र ने पूछा,
``क्या, रे?"
इंस्पेक्टर कितना मूर्ख था! वो मसखरे की तरह मुँह बनाकर कह रहा था, "वो लोहे की छड़ का इस्तेमाल कर रहा है... उसे हवाई जहाज की तरह उठा रहा है!" वो आँखें घुमा रहा था! ये बदमाश तो स्वाभाविक गंभीरता दिखाना भी नहीं जानते! सब-इंस्पेक्टर को इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ा।
"तो तुमने उन्हें सब कुछ बता दिया?"
"अगर मैं तुम्हें बता भी दूं, तो वे क्या करेंगे? अगर मैं तुम्हें नहीं बताऊंगी, तो वे इसे टुकड़े-टुकड़े कर देंगे। इसीलिए मैंने तुम्हें बताया। वरना मैं तुम्हें नहीं बताती। मैंने पहले कुछ नहीं कहा था। उन्होंने जगदीश और ओमप्रकाश से सब कुछ पूछ लिया। फिर वे मुझ पर दबाव डालने लगे। मैंने कहा, अगर मैं नहीं बताऊंगी, तो वे क्या करेंगे? इसीलिए मैंने उन्हें बताया।"
मैंने आपसे पूछा था... आपको ऐसी जगह जाने में शर्म क्यों नहीं आई?
"अगर यह खराब जगह थी, तो इसे लाइसेंस क्यों दिया गया? अगर वयस्कों को इसे देखने की अनुमति है, तो बच्चों को क्यों नहीं? अगर ऐसा है, तो क्या पुलिस बच्चों को होटलों और सिनेमाघरों में जाने से रोकने के लिए कानून बनाएगी?"
वह कभी खुद को छोटा नहीं समझता! वह छोटे और बड़े के बीच के अंतर को स्वीकार नहीं करता। वह पूछे गए सवालों का सीधा जवाब नहीं देता। वह दूसरा

सवाल उठा देता है ताकि उसका सवाल भुला दिया जाए।
इसे वापस पटरी पर कैसे लाया जा सकता है? सब-इंस्पेक्टर ने कहा, यह सच है। अगर हम विरोध करेंगे तो हठधर्मिता और बढ़ जाएगी।
उसने लाइट बंद की और कार स्टार्ट की।
घर लौटने पर उसने इस बारे में एक शब्द भी नहीं कहा। उसकी माँ कुछ देर तक नाराज़ रही और कहने लगी, "तुम तो बिलकुल निकम्मे हो! अपने बर्ताव से तुमने परिवार में अंधेरा ला दिया है।" उसने अंग्रेज़ी में बोलना शुरू किया, लेकिन फिर खुलकर बात करने के लिए काफ़ी देर तक हिंदी में ही बोलता रहा। पीठ पर दो थप्पड़ पड़ने के बावजूद अनूप पर कोई असर नहीं हुआ। रोज़ का खाना खाने के बाद वह अपने कमरे में गया और दरवाज़ा ज़ोर से बंद कर लिया। उसकी आवाज़ पूरे घर में गूंज उठी। दोनों को समझ आ गया कि उसने चुपचाप उन्हें चेतावनी दे दी है कि अब दोबारा परेशान न करें।
रविंद्र सुबह जल्दी उठ गया क्योंकि उसे सुबह-सुबह ऑफिस जाकर डिक्टेशन देना था। जब वह शेविंग कर रहा था, तभी कांति हाथ में कागज़ लिए वहां आई और तीसरे पन्ने के कोने में छपी खबर की ओर इशारा करते हुए बोली,
"देखो! खबर आ गई है! तुम्हारे अखबार में! नाम भी अनूप रविंद्र ही दिया गया है! अगर तुमने मुझे यह ख़बर प्रकाशित न करने के लिए कहा होता, तो क्या यह तुम्हारे नियमों का उल्लंघन होता?"
रविंद्र ने उससे अखबार लिया और खबर पढ़ी।
पुलिस ने एक कैबरे क्लब पर छापा मारा, जहां हद से ज्यादा अश्लील प्रदर्शन हो रहे थे। इस सिलसिले में पुलिस ने तीन लड़कियों, चार संगीतकारों और क्लब के मालिक को गिरफ्तार किया है। यह भी पता चला है कि इस दौरान एक केंद्रीय विद्यालय के चौदह वर्षीय तीन छात्र भी वहां मौजूद थे। बच्चों के नाम जगदीश अरोरा, ओमप्रकाश सभरवाल और अनूप रविंद्र हैं। बताया जा रहा है कि इन बच्चों को पकड़ना आसान था क्योंकि वे डांस फ्लोर के पास बैठे थे, जहां अश्लील प्रदर्शन हो रहा था। आगे की जांच में पता चला कि ये बच्चे पांचवीं बार कैबरे देख रहे थे।
एक पल के लिए रविंद्र ने भी सोचा। फिर उसने कहा,
"मैंने कल डाक संस्करण देखा था। यह खबर उसके बाद ही आई होगी। हमारे समाचार संपादक या अन्य उप-संपादकों को कैसे पता चलेगा कि यह मेरा बेटा है?"
फिर भी, उसका तनाव कम नहीं हुआ। उसने अपने बेटे पर गुस्सा निकालने के लिए दो-तीन बार उसके कमरे के बंद दरवाजे तक भी गई। लेकिन अनुपम ने दरवाज़ा नहीं खोला। रविंद्र भी नहाने चला गया।
कुछ देर बाद गांव के अन्य अखबार भी आ गए। सभी अखबारों में यह खबर छपी थी। मानो इतना ही काफी नहीं था, दो कन्नड़ अखबारों ने भी कहीं से तीनों बच्चों की तस्वीरें ढूंढकर छाप दी थीं। यह देखकर वह और भी परेशान हो गई।
"उन्हें यह तस्वीर कहां से मिली? पुलिस ने इसे छापने की अनुमति कैसे दी? इस अखबार और पुलिस पर मानहानि का मुकदमा होना चाहिए!" उसने नहाकर लौटे रविंद्र को तस्वीरें दिखाते हुए कहा।
उन्हें इस बात पर आश्चर्य नहीं हुआ कि सभी अखबारों में यह खबर छपी थी। इन दो कन्नड़ अखबारों ने तस्वीर छापकर थोड़ी सी हिम्मत दिखाई, बस! इस सारी खबर को पाने का सिर्फ एक ही तरीका है। उन्होंने पेशेवर सूझबूझ दिखाई है!
उसने बताया उसे,
"किसी के खिलाफ मामला दर्ज करना संभव नहीं है। ऐसा मामला तभी दर्ज किया जा सकता है जब उसमें कोई सच्चाई न हो।"

"लेकिन तुमने कल रात सबको फ़ोन करके पहले से क्यों नहीं बताया? मुझे लगता है तुमने मुझे चिढ़ाने के लिए अपनी सारी समझदारी का इस्तेमाल किया!"
उसके पास अब और बहस करने का समय नहीं था। पुलिस पर लेख अगली शाम तक भेजना था।
"मुझे जल्दी चाय दो..." कहते हुए वह कपड़े बदलने चला गया।

■

इसके बाद रविंद्र ने अपनी पत्नी से अनूप के बारे में कोई बात नहीं की। उन्होंने अनूप से भी कुछ नहीं कहा। पुलिस विभाग से संबंधित लेख को पूरा करते समय, उनके मन में काफी समय से चल रहे विचार सतह पर आ गए।
हमारी पुलिस हमारे समाज का अभिन्न अंग है। पुलिस से उन गुणों की अपेक्षा करना व्यर्थ है जो आम जनता में मौजूद नहीं हैं। यह सोचना भी तर्कसंगत नहीं है कि उनमें वे कमियां नहीं होनी चाहिए जो हममें हैं।

लेख छपने के बाद, वह फिर से अनूप के बारे में सोचने लगा। उसके जन्म के बाद, वह दिल्ली-पटना-मुंबई-फिर से दिल्ली-अब बैंगलोर के गांवों में पला-बढ़ा। जिस वातावरण में हम रहते और सांस लेते हैं, वह कहीं भी पूरी तरह से जड़ नहीं जमा पाया है। केंद्रीय विद्यालय जो किसी भी भूमि में जड़ नहीं जमा पाया है, अंग्रेजी भाषा जो यहां किसी भी भूमि में जड़ नहीं जमा पाई है, हिंदी जो अन्य भाषाओं की जड़ों को नहीं छूती है-कोका-कोला-आइसक्रीम-चिकन-कैबरे जिसका कहीं भी उपयोग नहीं होती है-ऐसे में जीवन जीने का कौन सा अच्छा तरीका जड़ जमाकर पनप सकता है?
वह दो दिनों से इस बारे में सोच रहा था। फिर उसे यह बात सूझी – जब तक वह अरोरा-सभरल जैसे लोगों के बच्चों की संगति में रहेगा, जिनका पैसा बर्बाद हो रहा है, तब तक उसे और कौन सा आदर्श मिल सकता है? हालांकि यह सच था कि उसे उनके बच्चों के रूप में नहीं पहचाना जाना चाहिए, लेकिन आंखें बंद करके बैठे रहने का कोई फायदा नहीं था, क्योंकि उनका उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

■

दो सप्ताह इसी सोच में बीत गए। फिर एक दिन सुबह जल्दी उठकर उन्हें एक विचार आया। क्यों न उन्हें हलुकेरे स्थित अन्नय्या के विवेकानंद विद्याशाला में भेज दिया जाए? जैसे ही उन्होंने यह प्रश्न पूछा, उन्हें लगा मानो उन्हें उन अनेक प्रश्नों का उचित उत्तर मिल गया हो जो जन्म से ही अनूप को परेशान कर रहे थे। त्याग, वीरता, आत्मनिरीक्षण, तुम शेर हो, लोमड़ी नहीं, तुम नरसिम्हा हो, असुर नहीं - ये वे आदर्श हैं जिन्हें अन्नय्या और उनके मित्र सिखाते हैं और दूसरों को भी इसी प्रकार मार्गदर्शन करते हैं! गांधीजी ने अपने जीवन में जो कुछ प्राप्त किया, उसके मूल स्वरूप यहां अनुष्ठान के लिए संरक्षित हैं - इन्हें यहाँ मूलभूत माना जाता है। इस विद्यालय की नींव मजबूत है। यह यहीं की भूमि में जड़ जमाए खड़ा है। अनूप को इसी भूमि में विकसित होना चाहिए! अन्नय्या उनके गुरु हैं। उनका प्रभाव ही उन्हें सही मार्ग पर लाने के लिए पर्याप्त है! उन्हें विश्वास होने लगा कि अनूप का स्वभाव भी धीरे-धीरे बदल जाएगा। दो सप्ताह में उनके मन में ये विचार बहुत प्रबल हो गए।
एक दिन वह अनूप के स्कूल गया और वहां उसकी मुलाकात पिल्लै साहब से हुई। जब उसने अपने विचार विस्तार से उन्हें समझाए, तो उसने यह भी कहा,
यह बहुत अच्छा विचार है। आपको इसे ज़रूर करना चाहिए। मैं खुद कह रहा हूँ... हम सभी वेतन, वेतन वृद्धि, भत्ते, नए वेतनमानों में उलझे रहते हैं। हम बच्चों को अपने-अपने विषयों पर व्याख्यान देते हैं... लेकिन हम ऐसा व्यवहार करते हैं मानो उनके व्यवहार, चरित्र, भविष्य से हमारा कोई लेना-देना ही न हो। यही तो असली

स्कूल है! बच्चे यहाँ दिन में छह से आठ घंटे रहते हैं। उसके बाद, क्या बाहरी दुनिया उन पर असर नहीं डालेगी? इस पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है। आपको उसे ज़रूर दाखिला दिलाना चाहिए।
रवींद्र ने मन बना लिया था। कांति विरोध करेगा। अनुप अड़ा रहेगा। फिर भी, वह पीछे नहीं हटेगा। वह दृढ़ निश्चयी था। और ऐसा ही हुआ। कांति ने बहस की,
"वहाँ बिस्तर नहीं हैं – वे चटाइयों पर कंबल ओढ़कर सोते हैं, यही तो आप कह रहे थे। आप उसे ऐसी जगह क्यों भेज रहे हैं? उसे मवेशी चराने होंगे... ज़मीन खोदनी होगी... बढ़ईगिरी करनी होगी, दुनिया इलेक्ट्रॉनिक युग से आगे बढ़ चुकी है! और हम एक बच्चे को ईसा-पूर्व युग में भेजना चाहते हैं?"
"वहाँ इलेक्ट्रॉनिक्स भी सिखाते हैं। तुम्हें कुछ समझ नहीं आता... चुप रहो, चलो देखते हैं!"
उसने कहा,
मैं भी उस स्कूल को देखने आता हूँ..."
"इसकी कोई जरूरत नहीं है।"
प्रधानाध्यापक ने अनुप को बुलाया और बताया कि उसके पिता जो कर रहे हैं वह सबसे अच्छा है, जिससे अनुप को एक तरफ राहत मिली। विद्यालय के सभी बच्चों को पता था कि उसका नाम अखबार में छपा है। कुछ बच्चों ने यह खबर नोटिस बोर्ड पर लगा दी थी और बच्चों के बीच खूब चर्चा हो रही थी। बच्चे उसे देखकर जानबूझकर "कैबरे..." चिल्ला रहे थे। वे उससे पूछने गए कि क्या वह बहस कर रहा है।
कैबरे ने कहा, 'तुम गुस्से में क्यों हो?'
पहले तो उसने बलपूर्वक उन्हें चुप कराने की कोशिश की। लेकिन उनकी संख्या बढ़ती ही जा रही थी। फिर भी, वह अड़ियल बना रहा। जब प्रधानाध्यापक ने उसे बुलाया और बताया, तो उसका गुस्सा शांत हो गया। उसे इस स्थिति से निकलने का रास्ता नज़र आ गया और बिना ज़्यादा आनाकानी किए, उसने अपने पिता की बात मान ली।
रवींद्र के पत्र का अन्नय्या ने तुरंत उत्तर दिया। विद्यालय में पूरी शिक्षा कन्नड़ भाषा में होती थी। अनूप कन्नड़ पढ़ भी नहीं सकता था। उसकी माँ का कहना था कि घर में भी कन्नड़ का प्रयोग नहीं होना चाहिए। इसलिए, कन्नड़ का उसका ज्ञान छावनी क्षेत्र में पल रहे प्रवासी समुदाय के बच्चों के स्तर तक ही सीमित था। रवींद्र ने ठान लिया था कि अगर एक साल छूट भी जाए तो कोई फ़र्क नहीं पड़ेगा, इसलिए वह स्कूल से अपना टी.सी. लेकर आया। दरअसल, रवींद्र के पास छुट्टी नहीं थी। कार से जाना और तुरंत लौट आना सुविधाजनक होता। लेकिन यह सोचकर कि ऐसा करने से वहाँ के दूसरे बच्चे उसे खास समझेंगे... और उसे भी ऐसा ही महसूस होगा, वह बिना बैठे ही चला गया। कोई न कोई उसका सामान चौराहे तक ले जाने के लिए ज़रूर मिल जाएगा।

■

विवेकानंद विद्याशाला का वातावरण अनूप के लिए उतना कठिन नहीं था जितना उसने अनुमान लगाया था।
बैंगलोर में अपने दोस्तों के सामने हुई सार्वजनिक बेइज्जती के बारे में सोचते हुए भी, उसे इस स्कूल के कुछ फायदे समझ आने लगे थे। यहाँ के सभी शिक्षक छात्रों के प्रति खुले दिल के थे। वे खेल-कूद, शिक्षण और विभिन्न विभागों में काम करते समय बिलकुल सही थे। उसकी दिली इच्छा थी कि वह हर चीज में उन्हें प्रभावित करे और उनकी प्रशंसा पाए।
उन्हें अपने दिल में यह पक्का यकीन था कि वे यहाँ के ज़्यादातर बच्चों से ज़्यादा बुद्धिमान हैं, कि वे ये सब चीज़ें बहुत कम समय में सीख सकते हैं। एक दिन उन्हें अचानक एहसास हुआ... अरे बाप रे! यहाँ आए हुए अभी पंद्रह दिन भी नहीं हुए

थे... और मैंने कन्नड़ बोलना शुरू कर दिया! बिना अटके! उन्हें खुद पर गर्व हुआ! लेकिन उन्हें एक बात समझ नहीं आई... ये बच्चे इतने डरे हुए क्यों हैं, जबकि यहाँ कोई शिक्षक उन्हें पीटता नहीं है? एक बार उन्होंने एक छात्र, उग्रप्पा से यही सवाल पूछा, और उसने कहा,
"हम किसी चीज से नहीं डरते! जब हम गुरु कहते हैं तो क्या हमारे साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए?"
आदर का मतलब आदर होता है – तो इससे डरने की क्या जरूरत है? अनूप का आश्चर्य वैसा ही बना रहा।
एक और बात से वह बहुत खुश था। यहाँ कोई वर्दी नहीं थी! काम करते समय वह सिर्फ शॉर्ट्स और बनियान पहनता था! उसका शरीर धूल और गंदगी से भर जाता था; लेकिन उसे इसकी भी परवाह नहीं थी। वह तेज़ बहती नहर में डुबकी लगाता और उसका शरीर अपने आप साफ हो जाता! क्लास जाते समय वह लुंगी को मोड़कर आधी बाजू की कमीज़ पहन लेता और काम खत्म! यहाँ सब कुछ बहुत आरामदेह लगता था!
बिना ज्यादा मेहनत किए ही वह विद्यार्थियों के बीच महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करने लगा था। बैंगलोर-दिल्ली में इतने कम समय में इतनी प्रसिद्धि पाना उसके लिए संभव नहीं था। यह जानकर कि उसने पहले बैंगलोर में और उससे पहले दिल्ली में पढ़ाई की थी, अन्य बच्चों के मन में उसके प्रति एक विशेष लगाव पैदा हो गया था।
लेकिन एक बार हसन से यहाँ स्कूल में पढ़ने आए हर्ष कुमार ने पूछा,
"वे आपको बैंगलोर से यहां लाए हैं? आप वहां क्या कर रहे थे?"
अनुपान उसे घूरता रहा। ऐसा लग रहा था मानो दो अनजान कुत्ते एक-दूसरे को देखते ही गुर्राने वाले हों। ऐसा लग रहा था जैसे वे एक-दूसरे को पहचान रहे हों।
अनुपना ने पूछा,
आपने क्या किया?
मैं पढ़ाई नहीं करता, मैं हमेशा फिल्में देखता हूं, मैं दुकानों से पैसे चुराता हूं, इसलिए..."
"हां!" अनुपम ने अनुमान लगाया। यह याद करते हुए कि उसने केवल फिल्में ही नहीं देखी हैं, उसने आगे पूछा, "आपकी दुकान किस प्रकार की है?"
``जनरल स्टोर्स।"
"आपकी उड़ान लागत कितनी थी?"
``कभी दो... कभी तीन रुपये। शाम को, जब दुकान में भीड़ होती थी, मैं एक कोने में खड़ी होकर कॉफी बनाती और वहीं पैसे इकट्ठा करती थी। लेकिन मैं पहले यह सुनिश्चित कर लेती थी कि अप्पा का किसी अन्य ग्राहक के साथ हिसाब-किताब में कोई दखल न हो..."
अनुपम को बहुत उत्साह महसूस हो रहा था। उसने आगे कुछ नहीं पूछा। थोड़ी देर बाद हर्षकुमार ने पूछा,
तुम क्या कर रहे थे?
"मैं?..." उसने आत्मप्रशंसा जताते हुए कहा, "मुझे उस गाँव की शिक्षा पसंद नहीं आई। मैं वैसी शिक्षा चाहता था जैसी स्वामी विवेकानंद कहा करते थे। तुम शेर हो, छोटी लोमड़ी नहीं। मुझे ऐसी शिक्षा चाहिए थी जो यही सिखाए, इसलिए मैंने खोजबीन की और यहाँ आ गया। पूरे देश में इसके जैसा कोई दूसरा स्कूल नहीं है! इसलिए मैंने सीधे कह दिया – मुझे वहाँ ले चलो – मैं बैंगलोर में नहीं रहूँगा, इसीलिए!"
हर्षकुमार निराश था। स्कूल में भी यही सब कहते हैं, मैं भी यहाँ यही कहता हूँ! सिंह, तुम कहते हो! तो, यहाँ के शिक्षकों की तरह तुम्हें भी अपना सिर चमकाना होगा – खादी की लुंगी पहननी होगी – खादी की कमीज पहननी होगी – क्या यहाँ

भी ऐसा ही होगा? क्यों नहीं? हर्षकुमार के मन में अनुप को लेकर डर पैदा हो गया।
अनूप से डरने और उस पर शक करने का एक और कारण था। यह खबर पूरे स्कूल में फैल चुकी थी कि यह अन्नाया परिवार का ही कोई सदस्य है। कोई यह भी कह रहा था कि यह उसका भतीजा है। तीन-चार महीने पहले उसके पिता यहाँ आए थे - रुके थे - उन्होंने अखबारों को दो भाषण दिए थे - यह भी सबको पता था कि यह उन अंग्रेजी अखबारों के संपादकों का बेटा है। अगर अन्नाया उसका डोड्प्पा यानी बुड़ा चाचा था, तो उन्होंने उसे अपने कमरे में क्यों नहीं रखा? उसे सबके साथ यहां क्यों रखा?
उन्होंने एक बार अनुपाल से पूछा,
"क्या यह सच है कि अन्नाइया आपके परदादा हैं?"
आपको किसने बताया?
``राम् ने मुझे दूसरे वर्ष के मार्दिहल्ली के बारे में बताया।"
"मुझे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि डोडप्पा कौन है! मेरे अंदर का शेर जाग उठा है, और मैं ही डोड्प्पा बनूंगा!" अनुप ने ऐसे कहा मानो उसने स्कूल के आदर्श वाक्य का सार पी लिया हो!
हर्षकुमार अब आश्वस्त हो गया था। क्योंकि उसने अन्नाइया को कभी-कभी उसे अपने कमरे में बुलाते हुए देखा था। वह पूरी तरह से भूल गया था कि पिछले साल, जब वह इस स्कूल में नया था, तब अन्नाइया भी कभी-कभी उसे अपने कमरे में बुलाता था।
हर्ष कुमार के सवाल ने अनूप की जिज्ञासा बढ़ा दी थी। क्या अन्नय्या सचमुच उसका डोडप्पा है? डोडप्पा का मतलब होता है पिता का बड़ा भाई या बड़ी बुआ का पति - यानी डोडम्मा का पति। वह जानता था कि उसकी एक डोडम्मा-आम है - यानी मम्मी की बड़ी बहन। उसका पति उत्तरी रेलवे में इंजीनियर है। अब वे मुगलसराय में रहते हैं। इसके अलावा, कोई और डोडम्मा नहीं है। और तो और, अन्नय्या ब्रह्मचारी है, ऐसा लोग कहते हैं। इसका मतलब है कि उसने भगवान से व्रत लिया है! तो यहीं पापा का डोडप्पा होना चाहिए। वह कोई करीबी भाई या चचेरा भाई होगा। इस स्कूल में मेहमानों के लिए दो कमरे रखे गए हैं। जब बच्चों के माता-पिता आते हैं, तो वे उन कमरों में ठहरते हैं। लेकिन जब पापा हमें यहाँ छोड़ने आए, तो वे अन्नय्या के कमरे में ठहरे।
बच्चों ने यह भी बताया कि अगर कोई बच्चा कुछ गलत करता है, तो अन्नाय्या उसे अपने कमरे में बुलाते हैं। फिर सजा मिलती है, वे कहते हैं! अन्नाय्या का हाथ बहुत सख्त है, वे कहते हैं! उनका हाथ सूखी टहनी की तरह चलता है, वे कहते हैं। फिर वे मुझे आधे घंटे तक वहाँ बिठाते हैं, समझाने की कोशिश करते हैं, मेरे बाल सहलाते हैं और चेतावनी देते हैं, 'फिर कभी ऐसा मत करना!' जब मैं वहाँ से बाहर आता हूं, तो वे मुझे एक पुदीने की गोली देते हैं। पुदीने की गोली का एक डिब्बा उनके कमरे में सिर्फ इसी काम के लिए रखा रहता है। जब बच्चे एक-दूसरे से पूछते हैं, 'क्या? तुम्हें पुदीने की गोली मिली?', तो इसका मतलब होता है, 'पिटाई हुई या नहीं?'! मुझे कोई और नहीं पीटता, वे कहते हैं! अगर कोई शिकायत भी होती है, तो दूसरे शिक्षक अन्नाय्या को बताते हैं और अन्नाय्या खुद मामले की पूरी जाँच करते हैं और अपनी मर्जी से सजा देते हैं, वो भी अपने कमरे में! आज तक उन्होंने मुझे एक बार भी नहीं पीटा। वे मेरे चाचा हैं, तो उन्होंने मुझे क्यों नहीं पीटा? मैंने आधा दिन इसी बारे में सोचते हुए बिताया। फिर मुझे याद आया – यहाँ आने के बाद मैंने ऐसी कोई गलती नहीं की! यहाँ तो सिर्फ बड़ी गलतियाँ – झूठ बोलना या चोरी करना – ही शिक्षकों के ध्यान में लाई जाती हैं। इसी तरह, दूसरे बच्चों को पीटना – शिवा को गाली देना भी यहाँ संज्ञेय अपराध हैं। लेकिन अगर ये अपराध पहली बार किए जाते हैं, तो शिक्षक तुरंत उन्हें शिक्षकों के पास नहीं ले जाते।

एक शाम, वह बांस अन्य बच्चों के साथ खेत में बांध बना रहा था। उसी समय अन्नाय्या भी वहाँ आ गया। उसने पाँच मिनट तक बच्चों को काम करते देखा। फिर उसने अपनी लुंगी और कमीज़ उतारकर सूखी ज़मीन पर रख दी। बाकी बच्चों की तरह, वह भी शॉर्ट्स और बनियान पहनकर मिट्टी में उतर गया और बांध बनाने में जुट गया। सबसे पहले, उसने उन्हें फावड़े का इस्तेमाल करके कम मेहनत में ज़्यादा काम करना सिखाया। साथ ही, उसने उन्हें फावड़े को आराम से और कम मेहनत से पकड़ना भी सिखाया। उसने लगभग डेढ़ घंटे तक सबके साथ काम किया। उसने अनुप को, जिसे इस तरह के काम की बिलकुल भी आदत नहीं थी, बांध बनाने की बारीकियाँ विस्तार से समझाईं। उसने अनुपे की तारीफ़ भी की और फिर वे नारियल के बाग में काम कर रहे बच्चों के पास चले गए।
उस दिन अनुपम ने अन्नय्या से विस्तार से बात करने का निश्चय कर लिया। काम खत्म करके और हाथों-पैरों से मिट्टी धोकर सब लोग खेलने चले गए। लेकिन अनुपम अन्नय्या के कमरे में चला गया। उस समय वह भी नारियल के बाग से ही लौटा था। उसे देखकर वह चौंक उठा,
``आओ...आओ! तुमने काम जल्दी सीख लिया! तुम्हारे शरीर में बहुत ताकत है!..."
जब वह कमरे में दाखिल हुआ, तो वह उनके चेहरों को देखता रहा, यह जानने की कोशिश करता रहा कि क्या उसके और पापा के चेहरों में कोई समानता है!
"क्या बात है, जान? चलो ना," उसने कहा, "मैं तुम्हें फोन करने वाला था। स्कूल जाना कैसा रहेगा, या नहीं?"
हां... मुझे पसंद आया।
``आप भी बहुत बुद्धिमान हैं, यही बात दूसरे गुरु कहते रहते हैं। आपको कन्नड़ पढ़ने में कोई परेशानी तो नहीं होती, है ना?"
"चंन्नावीरिया मास्टर प्रतिदिन मुझे अकेले में आधे घंटे के लिए कन्नड़ पढ़ाते हैं।"
“शाबाश! ऐसे ही पढ़ाई करो। तुम वाकई होशियार हो—” उसने उसके पास आते हुए कहा। उसके बालों में हाथ फेरते हुए उसने कहा, “बेबी...”
अनुप अपनी चटाई पर बैठ गया।
वे भी दीवार के सहारे चटाई पर बैठ गए।
उन्होंने पूछा,
मुझे एक सवाल है। क्या मैं पूछूं?
यह एक बहादुर लड़का है। अन्नाया जानता था कि वह यहाँ के गाँवों के अन्य बच्चों की तरह डरपोक नहीं है। उसे उसका यह गुण बहुत पसंद आया। उसने पूछा,
"मुझे लगता है आप मेरे चाचा हैं। क्या यह सच है?"
"आपको यह किसने बताया?"
"मेरी उम्र के बच्चे यह बात समझते हैं।"
बस इतना ही!
अन्नाय्या का मन इसी मुद्दे पर सोचने लगा। उसे याद आया... दीवार पर लगी तस्वीर में दिख रहे दादा-दादी उसके असली दादा-दादी बन गए थे, ये कहानी वो कभी-कभी अपने साथियों को सुनाया करता था। कभी-कभी उसे ये याद आ जाती थी कि वो दूसरों से इस बारे में बात करके अपना मूड हलका कर लेता था। इसीलिए यहाँ के सभी साथियों को इसके बारे में पता था। उसे ये भी पता था कि ये दादा-दादी इस स्कूल के निर्माण में अप्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार थे। पिछली बार जब रविंद्र यहाँ आया था, तो उसने उससे इस बारे में विस्तार से बात की थी। ऐसा हुआ था। उसे एहसास हुआ कि उसके शिक्षक या ब्रह्मचारी गुरु ने बच्चों को इस बारे में कुछ बताया होगा और ये बात बच्चों में भी फैल गई होगी। इस तरह अन्नाय्या के मन में यहाँ के शिक्षकों के लिए गहरा स्नेह पैदा हो गया था। उसे उम्मीद थी कि

बच्चों में भी यही भावना विकसित होगी। आखिर, जब उसे रवींद्र का बड़ा भाई कहा जाता है, तो उसे डोडप्पा कहना स्वाभाविक ही है, है ना?
"क्या यह सच है?" अनुपना ने पूछा।
उसका मन कर रहा था कि वह अनुपाल को सारी सच्चाई बता दे। लेकिन उसे रविंद्र की वह चेतावनी याद आ गई जो उसने उसे यहाँ छोड़ते समय दी थी। उसने उसे सब कुछ बता दिया था।
अनुप में किसी भी अवसर का लाभ उठाने की अद्भुत क्षमता है। यह मत भूलिए कि यदि आप उसे थोड़ी सी भी आत्मीयता या निकटता दिखाएंगे, तो वह इसका दुरुपयोग करने से खुद को रोक नहीं पाएगा!
इसी कारण अन्नाय्या ने जानबूझकर उसे एक निश्चित दूरी पर रखा था।
अन्य शिक्षक अब उसकी प्रगति से संतुष्ट थे। अन्नय्या स्वयं भी इसे देख रहे थे। तो फिर उसे अभी भी ऐसा व्यवहार क्यों करना चाहिए? यह ठीक नहीं है - अपने दिल की भावनाओं को दबाना ठीक नहीं है, अन्नय्या को लगा। इनका उपयोग चरित्र की मजबूत नींव रखने के लिए किया जाना चाहिए। हाँ - उसे बताया जाना चाहिए कि उसके परदादा और परदादी कैसे थे। अनुपाल को यह भी पता होना चाहिए कि उन्होंने बिना किसी रिश्ते के कैसे एक बंधन बनाया। उसे समझना चाहिए कि वे कैसे रहते थे और कैसे उन्होंने उससे एक आदर्श का निर्माण किया! इतना ही नहीं, उसे यह भी बताया जाना चाहिए - नहीं, उसे दिखाया जाना चाहिए कि उन्होंने ग्रामीणों के लिए एक अस्पताल बनवाया था! 'तुम कोई साधारण बालक नहीं हो - तुम ऐसे परदादा और परदादी के परपोते हो! उनका खून तुम्हारे शरीर में बहता है!' उसे यह बताया जाना चाहिए। विवेकानंद ने क्या कहा था? 'अपने भीतर के मनुष्य को जगाओ -' क्या उन्होंने यही नहीं कहा था? एक राजपरिवार का बच्चा जंगल में खो गया। जंगल के लोगों ने उसका पालन-पोषण किया। राजकुमार खुद को भी जंगली समझता था। अंत में, एक मार्गदर्शक ने उनसे मुलाकात की और समझाया, "आप एक राजकुमार हैं! आप ऐसी स्थिति में क्यों रह रहे हैं? ऐसी मानसिक स्थिति और किसकी हो सकती है?" सौद्रगौड़ा के पोते-पोतियों और वेंकटसुब्बय्या के परपोते-परपोतियों से इस नैतिक प्रेरणा को क्यों छिपाया जा रहा है?
अन्नाय्या आगे झुके, सिर हिलाया और बोले, "क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि तुम्हारे दादाजी कैसे थे?" उन्होंने अपने सामने अपने परदादा और परदादी का चित्र बनाना शुरू किया। उन्होंने विस्तार से बताया कि कैसे उन्होंने उनकी मदद की थी, जबकि उनका उनसे कोई रिश्ता नहीं था। उनका मन सौद्रगौड़ा की जीवनी सुनाने का हुआ, लेकिन उन्होंने यह विचार छोड़ दिया। उन्होंने तय किया कि वे अपनी कहानी विस्तार से किसी और दिन सुनाएँगे, और उस दिन उन्होंने केवल वेंकटसुब्बय्या और उनकी पत्नी की जीवनी सुनाई। जब उन्होंने सारी बातें सुनाना समाप्त किया, तो खाने की घंटी बज गई।

■

इस घटना के एक सप्ताह बाद विद्यालय में भाषण प्रतियोगिता हुई। इसमें भाग लेने वाले आठ छात्रों ने अलग-अलग विषय चुनकर अपने भाषण तैयार किए थे। अनुपालु चन्नावीरिया मास्टर ने भी कन्नड़ के मुहावरे, कहावतें आदि बताकर अपना भाषण तैयार करवाया था। उन्होंने अपने भाषण का विषय विवेकानंद को चुना था। बैंगलोर आने से पहले वे कलकत्ता गए थे और वहाँ उन्होंने दक्षिणेश्वर मंदिर, बेलूर मठ आदि स्थान देखे थे। अपने भाषण में उन्होंने विवेकानंद के जीवन से जुड़े उन स्थानों का आत्मविश्वासपूर्वक वर्णन किया, जिन्हें उन्होंने देखा था। यहाँ तक कि शिक्षक भी उन्हें सुनकर अचंभित रह गए! कार्यक्रम की अध्यक्षता करने के लिए पर्वत से आए अन्नाईया और होन्नाटी के अलावा, वहाँ कोई और ऐसा नहीं था जिसने वास्तव में कलकत्ता देखा हो। बीच में कन्नड़ शब्द भूल जाने के कारण उन्होंने

हिंदी-अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग किया, लेकिन अनुपालों का भाषण अपने विषय, बोलने की शैली और आत्मविश्वास के कारण सबसे प्रभावशाली रहा! श्रोताओं को पूरा विश्वास था कि उन्हें प्रथम पुरस्कार मिलेगा। और अंततः, पुरस्कार की घोषणा हो गई। अनुपाला कन्नड़ भाषा में रुचि बढ़ाने का एक अच्छा अवसर साबित हुआ।
इस घटना के तुरंत बाद, स्कूल को एक सूचना मिली कि हासन रोटरी क्लब जिला स्तरीय भाषण प्रतियोगिता का आयोजन कर रहा है। हमारे देश में अंग्रेजी भाषा की कितनी ज़रूरत है? उस भाषा में भाषण कला का हम क्या करें? यह तो अमेरिकी संस्कृति का एक चलन है... इसलिए, अन्नाय्या ने स्पष्ट राय दी कि हमारे स्कूल को इस प्रतियोगिता में भाग लेने की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन अंग्रेजी पढ़ाने वाले बी.टी. श्रीनिवासैया की राय अलग थी। उन्होंने कहा,
"शहर में अंग्रेजी माध्यम में पढ़ने वाले बच्चों की प्रतियोगिता में पुरस्कार जीतना हमारे बच्चों के लिए आसान बात नहीं है। और अब, अनुप भी है! अगर हम उसे थोड़ा मार्गदर्शन दें और तैयार करें, तो वह ज़रूर सफल होगा! हमारे स्कूल का नाम भी रोशन होगा!"
"हमारे स्कूल को शहर में नाम मिलने का क्या फायदा? हम यहाँ मुख्य रूप से गाँवों से बच्चों को लेते हैं। अगर कन्नड़ भाषण प्रतियोगिताएँ होती हैं, तो उन्हें भी बैंगलोर क्यों न भेजा जाए?" अन्नाय्या का यही कहना है।
लेकिन शिक्षकों की भी इस प्रतियोगिता में भाग लेने और शील्ड जीतने की प्रबल इच्छा थी। इसलिए, यह निर्णय लिया गया कि श्रीनिवासा दो छात्रों, अनुप और रमन्ना को तैयार करके प्रतियोगिता में ले जाएंगे।
अंततः, शिक्षकों की उम्मीद के मुताबिक, स्कूल को शील्ड मिली और अनुप ने प्रथम पुरस्कार जीता। श्रीनिवासैया, जो दोनों पुरस्कार लेकर लौटे और इसे अपनी उपलब्धि बताते हुए गर्व से बोले, बेहद प्रभावित हुए और उन्होंने अन्नाइया और अन्य शिक्षकों से कहा,
प्रतियोगिता का विषय चौबीस घंटे पहले घोषित कर दिया गया था। इसमें यह भी बताया गया था कि कौन किस पक्ष से बोलेगा। विषय का विरोध करने वाले वक्ताओं की सूची में अनुपा आठवें नंबर पर था। मैंने बहुत सोच-विचार के बाद उन्हें अंक दिए थे। लेकिन जैसे मैंने अंक दिए थे, वैसे ही अन्य शिक्षकों ने भी दिए थे। जब तक उनमें से दो-तीन बोल चुके थे, तब तक सारे अंक समाप्त हो चुके थे। अनुपा की बारी आने तक क्या बचता? तब तक तो उसका नंबर भी तय हो चुका होता। लेकिन अनुपा ने पूरी स्थिति ही बदल दी! मैं आपको बताऊँ, उसने अपने से पहले बोलने वालों के तर्कों का कितनी चतुराई से खंडन किया! इसके अलावा, उसकी अंग्रेज़ी बेदाग है। अगर उसके मन में कोई नया विचार आता है, तो वह उसे अंग्रेज़ी में व्यक्त कर सकता है। साथ ही, उसकी वाद-विवाद करने की क्षमता भी ज़बरदस्त है! उसे भविष्य में वकील बनना चाहिए, यह बहुत अच्छा होगा!
शुरू से ही अनुप में बोलने और अभिनय करने का आत्मविश्वास था। उसके बोलने का तरीका ऐसा था कि सुनने वाले को लगता था कि इस मामले में कोई और सच्चाई हो ही नहीं सकती! अब उसका आत्मविश्वास पूरी तरह से मजबूत हो चुका था। चाहे स्कूल में कोई कार्यक्रम हो या कोई बाहरी अतिथि आए, उनका धन्यवाद करना उसका काम था। उसका तरीका था अतिथि के भाषण का सारांश प्रस्तुत करना और फिर धन्यवाद देना। स्कूल के शिक्षक भी उसकी वाक्पटुता से प्रसन्न थे! शिक्षक आने वाले अतिथियों के सामने गर्व से कहते थे, "हमारे स्कूल में भी ऐसा ही एक छात्र है।"

■

एक दिन दोपहर में, पुजारी होन्नाट्टी समुदाय के लिए दोपहर का भोजन पेटी पहाड़ पर नहीं ले गए। लगभग 11:30 बजे, पुजारी वडेरय्या गाँव से निकलते। वे स्कूल से पेटी लेकर जाते। उस समय छात्रावास में भोजन का टिफिन पूरी तरह भरा रहता

था। मिट्टी से बनी पीतल की चार-पट्टल वाली टिफिन पेटी दोपहर और रात के लिए पर्याप्त भोजन से भरी होती थी। वडेरय्या अपने बाएँ हाथ में सफेद कपड़े से बंधी पेटी और दाएँ हाथ में पूजा की थाली लेकर होन्नाट्टी समुदाय को भोजन परोसने पहाड़ पर जाते।
उस दिन, जब तय समय बीत गया और वडेरैया नहीं आए, तो रसोइया वीरैया परेशान हो गया। उसने यह खबर चन्नवीरैया को बताई। चन्नवीरैया साइकिल पर सवार होकर चिक्कन्ना से पहले गाँव पहुँच गया। उसने बताया कि वडेरैया के एक चाचा का क्यातनहाली में निधन हो गया है - क्योंकि वे सूतक थे, इसलिए वडेरैया ने उसके बाद दस दिनों तक भगवान की पूजा नहीं की।
लेकिन अब चन्नावीरैया के मन में एक विचार आया। बेचारा होन्नाटी पहाड़ पर भूख से तड़प रहा होगा। ऐसे में उसे किसे भेजना चाहिए?
जब वह यह सोच रहा था, तभी उसकी नजर अनूप पर पड़ी। उसने उसे पुकारते हुए पूछा,
"क्या आप आज होन्नाटी परिवार को एक बक्से में भरकर पहाड़ों पर ले आएंगे? मैं कल से अलग व्यवस्था करूंगा।"
``हो, निघतोच आता..."
क्या आपको रास्ता पता है?
हां। परसों, रविवार को, मैं अपने दोस्तों के साथ बिब्ब्या के बीज ढूंढने गया था। तब वहां होन्नाटी के बीज नहीं थे।
चन्नावीरैया ने अपने शिक्षकों को बताने की जिम्मेदारी लेने के बाद, वह उस बक्से को लेकर अकेला चला गया।
कॉलेज परिसर पार करके दो किलोमीटर आगे बढ़ने के बाद, चढ़ाई शुरू हुई। वह एक संकरी सड़क पर चल पड़ा, जो मुश्किल से बैलगाड़ी के लिए ही काफी चौड़ी थी, और दोनों ओर घनी झाड़ियाँ थीं। कानों तक ऊँची घनी झाड़ियाँ - उसे ऐसा लग रहा था जैसे वह किसी साहसिक यात्रा पर निकल पड़ा हो। अफ्रीका का घना जंगल - अमेज़न की जटिल घाटियाँ... महीनों तक भटकना... रास्ते में सिर्फ़ एक चाकू से बाघों और शेरों को मारना - उनकी खालें कंधों पर लादकर जंगल में घूमना - मेरा अनूप कहाँ चला गया, मेरी माँ जो आँसू बहाती है... अन्नाय्या जो मेरा ख्याल रखती है... आह, डोडप्पा! पापा? मेरा ख्याल कहाँ है? जब वह कहता है कि वह मुझसे प्यार नहीं करता, तब भी वह रोता नहीं है। रहने दो! मैं हमेशा ऐसे नहीं रहूँगा। जब सब लोग 'अनूप-अनूप' चिल्लाते हुए पागल हो रहे होंगे, तब मैं अमेज़न घाटी से निकलूँगा और सौ बाघों और शेरों की खालें उतारूँगा! तब सारे अखबारवाले मेरे पीछे पड़ेंगे! मेरी तस्वीरें अपने आप दुनिया के सभी अखबारों में छपेंगी! पापा के अखबार में भी! और फोटो के नीचे मेरा नाम 'अनूप!' होगा! तब पापा को खूब हंसी आएगी!
तब तक अनूप की सांस फूल चुकी थी। मक्खियाँ और मच्छर उसके सिर के चारों ओर भिनभिना रहे थे। मेरे साथ चलते हुए वे गोल-गोल घूम रहे थे! फूलों की जगह वे मेरे सिर पर मंडरा रहे थे! अनूप का सिर है, इसीलिए वह भाषण प्रतियोगिताओं में इतने सारे पुरस्कार जीतता है, है ना? उसे खुद पर गर्व हो रहा था।
सड़क घुमावदार होकर ऊपर की ओर जा रही थी। वह बीच में रुक गया और चारों ओर देखने लगा। एक पल के लिए उसे डर लगा। आसपास की झाड़ियों में उसे समझ नहीं आ रहा था कि स्कूल कहाँ है और पहाड़ कहाँ हैं। ऊपर उड़ रही मक्खियाँ ऐसे ही मंडरा रही थीं। कहीं वे उसके सिर पर न चिपक जाएँ? वह स्कूल लौटने के लिए मुड़ा। फिर उसने सोचा, वह वहाँ चन्नवीरैया मास्टर को क्या बताएगा? बाघ सामने से आया था, इसलिए वह बता सकता था। वह भुवनेश्वर के नंदनकानन में देखे गए बाघ का वर्णन करके भी बता सकता था। लेकिन भागकर

बताने के बजाय, अगर वह एक बक्सा लेकर लौटने के बाद यह कहानी सुनाए, तो सभी इसकी सराहना करेंगे...
उसे चिड़ियाघरों में देखे हुए बाघ याद आने लगे... ओह! कितनी बड़ी गलती हो गई... हमें अकेले नहीं आना चाहिए था। इस स्कूल में बाकी सब ठीक है; लेकिन दमन हद से ज़्यादा है। इसे जारी नहीं रहने देना चाहिए! हमें सभी बच्चों को इकट्ठा करके हड़ताल करनी चाहिए। हमें बच्चों के सामने खड़े होकर ज़ोर-ज़ोर से नारे लगाने चाहिए...
फिर सभी कागजों पर नाम और तस्वीरें होती हैं।
उसने किसी के बोलने की आवाज़ सुनी। उसे बीड़ी की खुशबू भी आई। उसने गौर से देखा... जी हाँ, दो आदमी सिर पर बोरियाँ लिए आसमान से नीचे आ रहे थे। वे करीब आए और अनुप का दिल ज़ोर से धड़कने लगा। उसने पूछा,
"पहाड़ की तलहटी यहाँ से कितनी दूर है?"
“बीस कदम आगे बढ़ो... मैं पहाड़ियों की तलहटी तक पहुँच गया हूँ...” वे बिना रुके चलते रहे। उन्हें पूछना चाहिए था... यहाँ बाघ या तेंदुए तो नहीं हैं, है ना? अगर होते भी, तो क्या वे उन्हें खाए बिना छोड़ देते?
उसके दिल का डर गायब हो गया। वह जल्दी से फिर चलने लगा। मक्खियाँ फिर से उसके सिर के चारों ओर मंडराने लगीं। बीस कदम—क्या बीस? तीस, चालीस, साठ, सौ कदम, लेकिन पहाड़ अभी भी दिखाई नहीं दे रहा था। झूठे! इस गाँव के सभी लोग झूठ बोलते हैं! अब वापस जाने का कोई फायदा नहीं था। हम इतनी दूर आ गए थे—हमें अकेले ही वापस जाना होगा! वह पूरी रफ्तार से आगे बढ़ने लगी, अपने सिर के चारों ओर मंडरा रही मक्खियों को भगाने के इरादे से।
बाकी सब कुछ भुलाकर, केवल अपने कदमों पर ध्यान केंद्रित करते हुए, वह कुछ देर तक चलता रहा, एक-दो-तीस-पचास गिनते हुए कदम गिनती रहा, और अचानक उसके आसपास के पेड़ गायब हो गए और ठंडी हवा उसके पूरे शरीर को छू गई। हे भगवान! यहाँ डरने का तो सवाल ही नहीं उठता! इस खुले मैदान में बाघ, शेर और तेंदुए का होना असंभव है। उसका दाहिना हाथ कमजोर पड़ रहा था। उसने अपने बाएँ हाथ में बक्सा लेकर चलना शुरू कर दिया।
अब वह सामने वाले पहाड़ की तलहटी तक पहुँच गया था। जी हाँ। सामने वाले मंडप के पास वाला वही रास्ता ऊपर मंदिर तक जाता है। चारों ओर काले, नुकीले पत्थर बिखरे पड़े थे। कहते थे कि इनमें लोहा है! उस दिन शिवलिंग ने उसे बताया था। उसने कहा था, "एक छोटा सा पत्थर भी उठाओ तो बहुत भारी होता है..." जी हाँ। उसने एक पत्थर उठाया और कोशिश की। उस दिन शिवलिंग ने एक पत्थर को दूसरे से टकराकर और 'खटखट' की आवाज़ निकालकर यह दिखाया था। अनुपमा ने अपने बाएँ हाथ में संदूक पकड़े हुए एक पत्थर उठाया और उसे दूसरे बड़े पत्थर पर फेंका। 'खटखट' की आवाज़ सुनाई दी। जी हाँ... यह सचमुच लोहा है।
वह मंडप पार करके पहाड़ पर स्थित मंदिर की ओर चल पड़ा। रास्ता पत्थरों से बना हुआ नहीं था, बल्कि प्राकृतिक था। हवा चल रही थी और विशाल पेड़ों के पत्ते सरसरा रहे थे। अरे बाप रे! इतनी तेज़ हवा चल रही है, फिर भी ये पत्ते गिर क्यों नहीं रहे? वह कुछ देर वहीं खड़ा रहा और हजारों-करोड़ों पत्तों के हिलने की आवाज़ सुनता रहा। उसने अपना हाथ सिर के ऊपर घुमाया – एक भी मक्खी नहीं थी! ये कब चले गए? क्या हवा इन्हें उड़ा ले गई? काश मैंने देख लिया होता।
अब उसे ज़रा भी डर नहीं लगता था। उसे बाघों और तेंदुओं की याद भी नहीं आती थी। ये विचार उसके मन में आया, लेकिन उसके बाद जो सवाल उठा, 'अगर ऐसा कुछ था, तो होन्नाटी मास्टर अकेले कैसे हो सकते थे?' वो विचार गायब हो गया।
पत्तों की सरसराहट सुनकर उसका मन हुआ कि वह भी उसमें अपनी आवाज़ मिला दे। उसने एक चीख मारी। जैसे ही उसने विद्यालय की प्रार्थना में गाए जाने

वाले 'शेवोहा-शेवोहा' का जाप शुरू किया, उसे एहसास हुआ... अगर हवा को भी ऐसी आवाज़ होती, तो सामूहिक गीत कितना मधुर लगता! उसका उत्साह और एक उदात्त भाव उसके मन में भर गया। वह ज़ोर से गाने लगा। लेकिन जल्द ही उसकी आवाज़ मानो रुक गई। क्या हवा के कारण यहाँ आवाज़ सुनाई नहीं दे रही? नहीं। आवाज़ थक गई है। उसने गाना बंद कर दिया। वह रुका और चारों ओर देखने लगा। पीछे मुड़कर देखा तो हम ऊपर आ गए थे, उस सड़क पर—पहाड़ की तलहटी में... जैसे-जैसे हम वहां से आगे बढ़े, झाड़ियाँ—हाँ—वहीं हमारा विद्यालय था—विद्यालय के लिए बनी वह छोटी झील—हलुकरे के सामने एक बड़ी झील—यहाँ तक कि डोड्डुप्पा का सिर भी चमक रहा था! विद्यालय यहाँ से दिखाई दे रहा है। यानी, विद्यालय की इमारतें दिखाई नहीं दे रही हैं। वे झाड़ियों में छिपी हुई हैं।
उसके हाथ में बक्से का भार फिर से महसूस होने लगा। होन्नाट्टी मास्टर मंदिर में भूखे होंगे। यही सोचकर वह फिर चलने लगा। कुछ दूर चढ़ने के बाद हवा धीमी हो गई। ये कैसे हुआ? वहाँ के विरल पेड़ों के पत्तों की सरसराहट भी बहुत धीमी सुनाई दे रही थी। अब पैरों के नीचे पत्थर और भी ज़ोर से बज रहे थे। कहीं दूर से – हाँ। सितार की आवाज़ सुनाई दी। कहते हैं ना, होन्नाट्टी मास्टर दिन-रात अकेले बैठकर सितार बजाते हैं। उन्हें खाने-पीने या रहने की भी ज़रूरत नहीं है। बच्चे कहते थे ना, उन्हें बाघों या तेंदुओं से भी डर नहीं लगता।
डोड्डुप्पा ने एक बार कहा था:
``ऐसा अभ्यास आवश्यक है! अन्यथा, किसी भी कला में महारत कैसे प्राप्त की जा सकती है?"
अनूप कुछ देर चुपचाप खड़ा रहा। वह थोड़ी देर और वहीं खड़े रहकर दूर से आती सितार की मधुर ध्वनि सुनना चाहता था। लेकिन जब लंच बॉक्स पकड़े रहने से उसके दाहिने हाथ में दर्द होने लगा, तो उसे होश आया और वह जल्दी से आगे बढ़ गया।
ऊपरी हिस्सा समतल था। एक नीची जगह जहाँ एक बड़ा घर बनाया जा सकता था। उस पर एक छोटा मंदिर बनाया गया था। मंदिर का प्रांगण उसे घेरे हुए था। मंदिर मुश्किल से पाँच या छह मंज़िल ऊँचा था। मंदिर का द्वार पूर्व दिशा में था। अंदर ज़रा भी हवा नहीं थी। अंदर का वातावरण एकदम शांत था। बाहर तक केवल सितारी की आवाज़ सुनाई दे रही थी, जो अंदर के वातावरण को भर रही थी। अनूप मंदिर के द्वार पर गया और वहीं खड़ा हो गया।
अंदर, होन्नाटी मास्टर सितार बजाने में मग्न थे।
अनूप अंदर आया। खिड़की न होने के कारण दरवाजे से आने वाली रोशनी रुक गई, इसलिए उसने सिर उठाकर सितार बजाते हुए उसकी ओर देखा। हाथ में लंच बॉक्स देखकर उसने बिना कुछ और कहे उसे बैठने को कहा और सितार बजाना बंद किए बिना ही अपनी निगाहें फिर से संगीत के केंद्र बिंदु पर टिका दीं।
लंच बॉक्स को खंभे के पास रखकर अनूप हांफते हुए चारों ओर देखने लगा। अंदर, दाहिनी ओर फर्श पर चार-पांच डिब्बे रखे थे। एक मिट्टी का बर्तन पानी से भरा था। वहां एक एलुमीनियम की प्लेट थी, बिलकुल वैसी ही जैसी अनूप के हॉस्टल में थी। दीवार से बंधी एक क्षैतिज तार पर चार-पांच कपड़े सूख रहे थे। होन्नाटी बेंत के पलंग पर बैठी थी। हलुकरा से लाए गए दो कंबल उस पर तह करके रखे थे। पास ही एक तकिया और एक लालटेन रखी थी। एक छोटा सा केरोसिन का डिब्बा भी वहीं था।

■

अनूप उनसे कुछ दूरी पर बैठा था। होन्नाटी मास्टर अपनी ही धुन में संगीत बजा रहे थे।
ऐसा नहीं था कि शास्त्रीय संगीत का यह प्रकार उनके लिए बिलकुल अपरिचित था। उन्होंने इसे टीवी और रेडियो पर सुना था। जब वे बहुत छोटे थे, और उनके

पेता सुनने लायक उम्र के हो गए थे, तब वे उन्हें संगीत समारोहों में ले जाया करते थे। वे हिंदुस्तानी संगीत और कर्नाटक संगीत में फर्क बता सकते थे। वे सिर्फ ध्वनि से ही बता सकते थे कि कौन सा वाद्य यंत्र बज रहा है। संगीत सुनते समय, उन्हें ऐसा लगता था मानो वे कहीं अकेले हों, बिना यह महसूस किए। कई बार, रेडियो पर कोई गाना सुनते समय, वे खिड़की से बाहर देखते और खो जाते। अब, इस मंदिर के अंदर बैठकर और होन्नाटी मास्टर का सितार सुनते हुए, मंदिर के बाहर से उन्होंने जो कुछ देखा था - पहाड़, नदियां, पेड़, खेत, तालाब और विद्यालय परिसर - वह सब एक सुंदर चित्र की तरह उनकी आँखों के सामने तैरने लगा। वे संगीत की उस शक्ति में पूरी तरह डूब गए जो उस चीज़ को दिखाती है जो वहाँ नहीं है।
होन्नाटी समाधि की अवस्था में सितार बजा रहे थे। उनका ध्यान अपनी उंगलियों पर केंद्रित था। उन्हें पता था कि उनकी प्रत्येक उंगली तार को छूते ही कौन सा स्वर उत्पन्न होगा! इसीलिए उन्होंने तारों की ओर नहीं देखा! उन्होंने काफी देर तक अपनी आंखें बंद रखीं! यहां तक कि जब उन्होंने आंखें खोलीं, तब भी उनकी निगाह तारों पर नहीं थी – वे एक ऐसी जगह पर टिकी थीं जिसे कोई और नहीं देख सकता था और केवल वे ही देख सकते थे! अपनी उंगलियों की तीव्र गति को देखते हुए उनके मन में यह विचार आया – क्यों न वे भी उन्हीं की तरह सितार बजाएं?
कुछ समय बाद सितार बजना बंद हो गया, लेकिन वह अभी भी उनकी गोद में था। सितार की मधुर ध्वनि पूरे मंदिर में गूंज रही थी। उनकी निगाहें अब भी किसी अज्ञात स्थान पर टिकी हुई थीं, जो केवल उन्हें ही दिखाई दे रहा था। वे उन्हें ध्यान से देख रहे थे।
संगीत से पूरी तरह बाहर आने के बाद, उसने उसकी ओर मुड़कर कहा,
अनुप, धन्यवाद! बहुत-बहुत धन्यवाद! मेरा पेट भूख से गुड़गुड़ा रहा है, देखो! अगर तुम खाना नहीं लाते तो मुझे नीचे आना पड़ता!
अनुप ने जल्दी से कहा,
``वेडेरय्या पुजारी के चाचा का निधन हो गया, इसलिए वह क्यातानहल्ली चले गए। मुझे दोपहर एक बजे यह खबर मिली। मुझे लगा कि आपको भूख लगी होगी और मैंने चन्नवीरिया स्वामी से कहा, होन्नट्टी स्वामी को भूख लगी होगी... मुझे डिब्बा दे दीजिए... मैं उन्हें ले जाऊंगा। उन्होंने पूछा, क्या आप अकेले जाएंगे? मैंने कहा, मुझे डर नहीं है! मैं डिब्बा लेकर जल्दी में यहाँ आया हूँ। आपको भूख लगी होगी, है ना? बस!"
होन्नाटी मास्टर ने कृतज्ञता भरी निगाहों से उनकी ओर देखा। अनुप को उनकी निगाहों में छिपी भावना अच्छी लगी। उसने उन्हें देखते हुए उस भाव का भरपूर आनंद लिया।
एक बार फिर, 'धन्यवाद, अनूप!' कहते हुए, होन्नाटी ने अपनी गोद से सितार नीचे रख दिया और आभार व्यक्त किया। उन्होंने तांबे-एलयूमीनियम के बर्तन में टंकी से पानी लिया और मंदिर के बाहर चले गए। वहाँ उन्होंने अपने हाथ-पैर धोए और चूल्हा भर दिया, और वापस अंदर आ गए। उन्होंने फर्श पर पड़ी दो थालियाँ उठाईं और उनसे कहा,
"आओ, तुम भी एक टुकड़ा खा लो।"
नहीं। मैंने अपना खाना खत्म कर लिया है। खाना खत्म करते ही मैं वहां से चला गया।
बिना देर किए, उसने अपनी थाली में कलवन और नाचनी उकाड़ी का कटोरा लिया। थाली में थोड़ा चावल और सब्जियां डालकर, वह उसके पास आकर दीवार से टेक लगाकर बैठ गया, कटोरा तोड़ा, उसे आटे में लपेटा, मुंह में डाला और चबाने लगा।

अनूप उसकी हर हरकत को ध्यान से देख रहा था। लंबे बाल – रोज़ाना शेव न करने से बढ़ी हुई दाढ़ी – उसने कहा कि उसने एम.टेक, एमबीए किया है! उसने अपना पूरा जीवन उत्तर भारत में बिताया है! लड़कों ने उसे उसके बारे में बहुत सी जानकारी दी थी। उसे अचार खाने की आदत नहीं थी। इसीलिए उसने देखा कि अचार चबाने के बाद वह थक जाता था। इस कॉलेज में दाखिला लेने के बाद शुरुआत में उसे भी यही समस्या हुई थी। उसके बगल में खाना खाने बैठे इलाके के बच्चे उसका मज़ाक उड़ाते थे। उनकी नकल करते हुए उसने भी अचार निगलने की कला सीख ली थी। चन्नवीरैया मास्टर, सोमशेखराचार्य, डोडप्पा सभी कहते थे – कोई लड़का अचार कैसे तोड़कर खाता है, इससे पता चलता है कि वह किस इलाके का है! लेकिन अनूप ने इस बात को इतनी अच्छी तरह समझ लिया था कि डोडप्पा ने एक बार सबके सामने उसे एक प्रमाण पत्र दे दिया – हमारा अनूप सच में बसवनपुर का बेटा कैसे हो सकता है!
वह कुछ कहना चाहता था, इसलिए उसने पूछा,
क्या आपको उबले हुए चावल खाने की आदत नहीं है?
"पहले ऐसा नहीं था। अब ऐसा है।"
"क्या आपको यह पसंद है? चपाती इससे कहीं ज्यादा स्वादिष्ट होती है, है ना?"
यह कहना बेकार है कि यह अच्छा है... वह बुरा है। मेरा मानना है कि जो भोजन हवा में अच्छी तरह उगता है, वह वहां के लोगों के लिए भी फायदेमंद होता है। आयातित भोजन नहीं खाना चाहिए। मैं उबला हुआ पानी भी पी सकता हूँ। इसमें कोई दिक्कत नहीं है। लेकिन मुझे लगता है कि हर खाद्य पदार्थ को खाने से पहले अच्छी तरह चबाना चाहिए और लार में पूरी तरह भिगोना चाहिए। मैंने इस विषय पर अन्नाय्या से बहुत चर्चा की है। मैं जानबूझकर इसे इसी तरह चबाकर खाता हूँ।
अनुपा तुरंत समझ गई कि वह क्या कह रहा है। हमें इस मुद्दे पर अन्नय्या से भी बात करनी चाहिए। हमें उन्हें भी इस सिद्धांत को स्वीकार करवाना चाहिए। उन्होंने यह भी अनुभव किया था कि हम जितना अधिक चर्चा करते हैं, डोडप्पा उतना ही खुश होता है। वह कहा करते थे,
"आपको प्रतियोगिता जीतने के लिए ही बहस नहीं करनी चाहिए। लेकिन बिना विचार-विमर्श किए, बिना खुद से ठीक से विचार-विमर्श किए, किसी भी बात पर सहमत नहीं होना चाहिए। आपको साहस के साथ विचार-विमर्श करना चाहिए!"
वे सभी बच्चों को एक ही बात बताते रहते हैं! लेकिन कोई कुछ नहीं बोलता। मैं ही अकेली हूँ जो इतना ज़्यादा बहस करती हूँ। इसीलिए वे मुझ पर विशेष कृपा करते हैं!
"क्या आपको शास्त्रीय संगीत सुनने की आदत है?" होन्नाटी ने भोजन के बीच में पूछा।
"मैंने रवि शंकर का सितार सुना है!" उसने तुरंत जवाब दिया।
"सचमुच?" उनके बीच की सारी दूरी गायब हो जाने की खुशी से उसने पूछा, "कहाँ? कब?"
``रवि शंकर का चैरिटी कॉन्सर्ट दिल्ली के प्रेस क्लब में आयोजित किया गया था। एक बहुत बड़ा टेंट लगाया गया था! उस समय उन्होंने बागेश्री राग को अद्भुत ढंग से बजाया! मुझे लगता है कि उन्होंने इससे पहले कभी बागेश्री राग को इस तरह नहीं बजाया था!"
उनकी यह बात सुनकर होन्नाटी को उनके बहुत करीब होने का एहसास हुआ। प्लेट वहीं छोड़कर वह खड़े हो गए और चूंकि उनका दाहिना हाथ अकड़ा हुआ था, इसलिए उन्होंने अपने बाएं हाथ से अपने बालों को सहलाते हुए कहा,
वाह! तो तुम भी इतने गुणी हो! फिर तुमने गाना क्यों नहीं सीखा? क्या तुम्हें सितार सीखने का मन नहीं हुआ? क्या तुम्हारे मन में कभी उन तारों को एक बार भी छूने की इच्छा नहीं हुई? अगर तुमने अपने माता-पिता को अपनी यह इच्छा बताई होती,

तो वे तुम्हें ज़रूर एक सितार लाकर किसी अच्छे गुरु के पास सीखने के लिए भेज देते। मैं उनका स्वभाव जानता हूं!
अनूप को इस बारे में कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। उसे याद आया कि उसने कभी संगीत सीखने के बारे में सोचा ही नहीं था। उसने होन्नाटी से पूछा,
"आपने इतना कुछ सीखा है, आप इतने बड़े पद पर काम कर रहे थे! आपने सब कुछ छोड़कर इस तरह संगीत की पढ़ाई करने का फैसला कैसे किया?"
"मैं आपको बताता हूं कि मैं यहां कैसे पहुंचा। सुनिए..." उन्होंने कहा। तब तक वे उकाड़ी की सब्ज़ी खा चुके थे। बचा हुआ कलवन चावल पर डालकर और चावल को कलवन करते हुए उन्होंने बोलना शुरू किया, "आपने सही कहा था ना? क्या रवि शंकर ने दिल्ली में प्रेस बेनिफिट म्यूज़िक मीटिंग में बागेश्री राग नहीं बजाया था? वह संगीत सभा और वह राग मेरे जीवन का निर्णायक मार्गदर्शक बन गया। उस समय मैं मुंबई के IIT पवई में एम.टेक की पढ़ाई कर रहा था। मुझे सितार से बहुत लगाव था, इसलिए मैं थोड़ा-बहुत सितार भी बजाता था। कुछ खास कार्यक्रमों, संस्थान दिवसों, समारोहों में मेरा सितार बजता रहता था। सब लोग खुशी से तालियां बजाते थे। लड़कियां भी मेरी तारीफ करती थीं, मुझे एक महान कलाकार मानती थीं! एक छात्र को जीवन में और क्या चाहिए? है ना? उस समय मेरे माता-पिता काम के सिलसिले में दिल्ली में थे। छुट्टियां शुरू होते ही मैं भी दिल्ली चला गया। उसी समय प्रेस क्लब ने रवि शंकर के लिए सितार वादन सत्र आयोजित किया था। मैं उस कार्यक्रम में उपस्थित था।" वो मंडप कहां था – किस दिशा से अंदर जाया जा सकता था – मंच कहां था – रवि शंकर उस पर कैसे बैठे थे – मुझे आज भी उसकी हर बात याद है! आप बागेश्री के बारे में बता रहे थे, है ना? उसे सुनते हुए ऐसा लगा जैसे अचानक मेरे सामने एक सागर प्रकट हो गया हो, मानो कोई छोटा सा तालाब हो। मैं यह देखकर हैरान रह गया कि सारेगम की मदद से संगीत का इतना विशाल सागर रचा जा सकता है। उसे सुनकर मैंने क्या सोचा? बताइए?
क्या?
मैंने सोचा, इसके बाद तो मुझे सितार नहीं बजाना चाहिए! अगर मुझे इसके बाद सितार बजाना ही है, तो मुझे उस स्तर पर बजाना होगा – नहीं तो मैं जीवन भर सिर्फ श्रोता बनकर रह जाऊंगा। यह स्पष्ट था कि मैं इस जन्म में उस स्तर पर सितार नहीं बजा पाऊंगा। इसका मतलब है कि मुझे यह पूरा जन्म सिर्फ श्रोता बनकर ही बिताना होगा! रवि शंकर के गुरु अलाउद्दीन खान कहा करते थे: संगीत अभ्यास के लिए तीन जन्मों की आवश्यकता होती है। पहला जन्म पागलों की तरह संगीत सुनने का, दूसरे जन्म पागलों की तरह अभ्यास करने का – फिर तीसरे जन्म में व्यक्ति कलाकार बनता है। मुझे बचपन में आठ-दस साल तक अपने गुरु से मार्गदर्शन मिला, उतना ही काफी था! मैंने उसी समय तय कर लिया था, यही मेरा पहला जन्म है! मुझे लगातार संगीत सुनना चाहिए। मैंने ऐसा करना शुरू कर दिया। संगीत सभाओं में! अगर वह संभव न हो, तो कैसेट सुनना..."
तो?
एम.टेक के बाद मैं एमबीए करने अहमदाबाद चला गया। लेकिन उसके बाद भी मैंने सितार बजाना जारी रखा। मैं बड़ौदा-अहमदाबाद-भावनगर-मुंबई-जयपुर-दिल्ली – जहां भी संगीत के बड़े आयोजन होते थे, वहां जाने लगा। बाद में मुझे नौकरी मिल गई। मैं बस सितार साफ करता था। लेकिन एक दिन, सितार साफ करते-करते, मैंने उसे सही सुर में लगा दिया और बजाना शुरू कर दिया, पता ही नहीं कब! कौन जाने कितनी देर तक मैं बागेश्री में लीन रहा! लेकिन उस दिन मुझे यह एहसास हुआ... हर कोई रवि शंकर नहीं बन सकता... लेकिन साधना कोई नहीं छोड़ता। उसके बाद, मैं जब भी समय मिलता, सितार बजाता रहता था! लेकिन एक निजी नौकरी में रियाज़ को इतनी शांति कहां मिलती? मैंने मुंबई के

गुरुजी से पूछा। उन्होंने मेरी इच्छा समझी। उन्होंने कहा, मुंबई आ जाओ... मैं हफ्ते में एक बार सिखाऊंगा... फिर तुम रियाज़ करो। उस समय मैं बैंगलोर में काम कर रहा था। अगर मैं चाहता, तो वहाँ तबादला करवा सकता था। लेकिन समय कैसे मिलता? और नौकरी छोड़ने पर मेरा पेट कैसे भरता? जब मैंने गुरुजी को नौकरी छोड़ने के अपने इरादे के बारे में बताया, तो उन्होंने कहा, मेरे पास जो भी ज्ञान है, मैं तुम्हें दे दूंगा; लेकिन इस गाँव में रहने का तुम्हारा क्या इंतज़ाम है? उनकी बात सही भी थी। बैंक में सारा पैसा रखना और हर महीने एक निश्चित रकम मिलने का इंतज़ाम करना मुमकिन था। मैंने बोरीवली से आगे एक छोटा सा कमरा किराए पर लेकर रहना शुरू किया। रियाज़ अच्छा चल रहा था। लेकिन तीन साल के अंदर ही सारा पैसा खत्म हो गया। उस शहर में भी ज़िंदगी फल-फूल रही थी। उसी समय, एक दिन, मेरी मुलाकात अपने एक पुराने पारसी दोस्त दिलाल से हुई। उन्होंने भी मेरे साथ एम.टेक और एम.बी.ए. की पढ़ाई की थी। उन्हें भी संगीत का शौक था। जैसे ही उन्होंने पूछा, मैंने अपने सारे विचार बता दिए। उन्होंने सब कुछ ध्यान से सुना। बाद में, दो-तीन दिन बाद, वे मुझसे मिले और बोले... मैंने भी इस बारे में सोचा था। मुझे लगता है कि इस शहर में एक कमरे में रहने के बजाय, किसी शांत जगह पर रहना और गाँव में रियाज़ करना और कभी-कभी गुरुजी से मार्गदर्शन लेने के लिए यहाँ आना बेहतर होगा। जब तुम यहाँ आओगे, तो हमारा घर यहीं है। मुझे भी यह बात समझ में आ गई और मैंने मुंबई छोड़कर यहां आ गया..."
तब तक उनका भोजन समाप्त हो चुका था। वे तांबे का पानी का घड़ा और चावल की थाली लेकर मंदिर से बाहर आए। वहीं पत्थर पर खड़े होकर थाली धोते हुए उनके मन में यह विचार आया... मैं इस लड़के से इतनी देर से क्यों बात कर रही हूँ? क्या मैं इतनी बड़ी हो गई हूँ कि यह सब समझ सकूँ? मैं भी अजीब होती जा रही हूँ! मैं लोगों से दूर रहती हूँ... कई दिनों तक एक शब्द भी नहीं बोलती। फिर जब किसी से मिलती हूँ, तो ऐसा होता है! क्या कहूँ, कितना बोलूँ... मेरे सामने कौन है... मुझे कुछ भी पता नहीं चलता। तो, मेरा यह भ्रम कि मैं चुप रह सकती हूँ, सच नहीं है! चाहे मैं सत्तारी से दिन में सात-आठ घंटे बात करूँ, मौका मिलते ही मैं अपनी चेतना भूल जाती हूँ और शब्दों में खो जाती हूँ...
प्लेट और कप पकड़े हुए वे खड़े हो गए और चारों ओर देखने लगे।
उस समय मैंने गाँव जाने का फैसला किया, लेकिन मैं कहाँ जा रहा था? बचपन से बड़े शहरों में पला-बढ़ा होने के कारण मैंने गाँवों को ठीक से नहीं देखा था। ट्रेन से यात्रा करते समय, चलती ट्रेन से ही उन्हें देख पाता था, बस इतना ही! त्रिवेंद्रम, गुवाहाटी, पटना, दिल्ली, मुंबई, कोलकाता – एक के बाद एक गाँव, एक के बाद एक दोस्त, एक के बाद एक भाषा, और अंग्रेजी भाषा जो हर जगह बदल रही थी, बदलाव के दौर में पले-बढ़े मुझ जैसे व्यक्ति को गाँवों के बारे में कैसे पता होता? रेक्साल कंपनी के नागराज ने मुझे इस कॉलेज के बारे में बताया था। जब मैं नौकरी कर रहा था, तब मैंने उस स्कूल की वार्षिक फीस के लिए दस हज़ार रुपये का विज्ञापन भी दिया था। नागराज ने मुझे इस स्कूल की याद दिलाई। मैं तुरंत उनके साथ यहाँ आ गया।
"चलो वहाँ चलते हैं। मैं भी तुम्हारे साथ आऊँगा। अगर हमारी मुलाकात अन्नाय्या से हुई तो कोई न कोई व्यवस्था जरूर हो जाएगी।"
जब मैं यहां आया और मैंने अन्नाय्या को अपने बारे में सब कुछ बताया, तो उसने तुरंत कहा,
"हमारे संकाय में ही रहो! अगर चाहो तो हम वहाँ एक झोपड़ी बना सकते हैं। छात्रावास में खाना खाओ और फूस की झोपड़ी में बैठकर संगीत का अभ्यास करो!"
उन्होंने कितनी आसानी से यह बात कह दी!
बताया तो,

"हॉस्टल का फीस जो भी होगा, मैं चुका दूंगा।"
उन्होंने कहा,
हम कोई शुल्क नहीं लेंगे... हम काम लेंगे! हमारे बच्चों को सप्ताह में दो घंटे समूह गायन सिखाएं। यह एक स्कूल है। इसे अपनी आध्यात्मिक साधना का स्कूल भी बनाएं।
ठीक उसी क्षण, मैंने मन बना लिया। अगले दिन, नागराज बैंगलोर के लिए रवाना हो गया। मैं वहाँ तीन दिन एक छात्रावास में रुका और संगीत का अभ्यास किया। फिर एक सुबह, मुझे इस पर्वत पर चढ़ने की तीव्र इच्छा हुई। मैंने रास्ता पता करके चलना शुरू किया। मुझे बी.टेक की पढ़ाई के दौरान मनाली की यात्रा याद आ गई। जब मैं ऊपर आया और इस जगह पर खड़ा होकर चारों ओर देखा, तो अब तक सीखे हुए राग स्वतः ही फैल गए, एक विशाल रूप धारण कर लिया और अनंत लय और ताल के रूप में मेरे सामने प्रकट होने लगे। मेरा मन सतारी से उत्पन्न रागों की सृजन-स्थिति-लय की विशिष्टताओं को सुनने लगा और मैं स्तब्ध रह गया!
उस समय मैं दो घंटे से अधिक समय से इसी स्थान पर खड़ा था। मंदिर का द्वार बंद था – ताला देखकर मैंने बंद द्वार की दहलीज पर सिर झुकाकर प्रणाम किया – उस समय मुझे नहीं पता था कि अंदर कौन सा देवता है – तभी मुझे यह बात सूझी –
"हे जोगनाथ, आप योग की अवस्था में हैं... आपका यह स्थान मेरा ध्यान स्थल हो!"
मैं पहाड़ से नीचे आ गया। नहा-धोकर खाना खाने के बाद मैं सीधे अन्नाय्या के कमरे में गया। वहाँ मैंने उसे पहाड़ पर बिताए अपने अनुभव के बारे में विस्तार से बताया। मैंने आगे कहा,
मैंने मंदिर के अंदर का नजारा नहीं देखा है। बाहर से देखकर मुझे लगता है कि इसमें एक गर्भगृह और उसके सामने एक हॉल होगा। मुझे लगता है कि बेहतर होगा अगर मैं उस हॉल में रहूं और वहीं अभ्यास जारी रखूं। इस मंदिर की व्यवस्था कौन करता है? क्या वे मुझे वहां रहने देंगे? अगर आप मुझे दिन में एक बार एक डिब्बा भेज दें, तो मैं दोनों बार वही खाऊंगा। मैं डिब्बा पहुंचाने वाले को उसकी मजदूरी भी दूंगा। मैं सप्ताह में एक बार आकर बच्चों को गाना भी सिखाऊंगा।
अन्नाय्या ने बिना समय बर्बाद किए अनुमति दे दी। इतना ही नहीं, उन्होंने तुरंत वडेरय्या से संपर्क भी किया। अन्नाय्या ने उनके सामने मेरी इतनी प्रशंसा की कि वडेरय्या ने यहाँ तक कह दिया कि वे भोजन का डिब्बा उसी मुलाकात में अपने साथ ले जाएँगे। फिर मैंने भी मंदिर का पानी निकालकर उसे प्रतिदिन पीने के पानी से भरना शुरू कर दिया। लेकिन मैंने देवता के सिर पर जल चढ़ाने और चार फूल अर्पित करने की जिम्मेदारी क्यों नहीं ली?
इस प्रश्न ने तुरंत होन्नाटी को, जो इस प्रश्न से विचलित थे, याद दिला दिया कि उन्होंने ईश्वर के अस्तित्व के बारे में अधिक नहीं सोचा था। एम.टेक की पढ़ाई के दौरान, विज्ञान के इतिहास का अध्ययन करते हुए, उन्होंने यह मन बना लिया था कि ईश्वर की अवधारणा को पूरी तरह से मिटा देना चाहिए। फिर भी, अद्भुत संगीत सुनते हुए, उन्हें लगा कि भले ही ईश्वर न हो, लेकिन दैवीय शक्ति अवश्य होगी, यह भावना उनके मन में भर गई। प्रेस क्लब के लाभार्थ संगीत समारोह में रवि शंकर की बागेश्री सुनते हुए, ऐसा लगा मानो बिना फूलों और फलों के एक शुद्ध पूजा या भावपूर्ण बलिदान हो। यदि दैवीय शक्ति को नकार दिया जाए, तो संगीत उस अद्भुत स्तर तक कैसे पहुँच सकता है? यदि संगीत केवल एक भावपूर्ण शक्ति है, तो मुझे सब कुछ छोड़कर इसके लिए क्यों तरसना चाहिए? यद्यपि उनमें स्वाभाविक रूप से ईश्वर को धन अर्पित करने और माँग करने की प्रवृत्ति नहीं थी, फिर भी यहाँ रहने के बाद से उनमें स्वयं परिवर्तन आ रहा था। वडेरय्या ने पूजा करना शुरू कर दिया, वे सितार बजाना बंद कर देते और ईश्वर के सामने हाथ जोड़कर खड़े हो जाते। बाद में, उनके द्वारा अर्पित की गई भेंट और आरती ग्रहण

करने के बाद, वे तुलसी का पत्ता अपने दाहिने कान पर रखते। वह भी किसी विवशता से नहीं, बल्कि भीतर से मिली प्रेरणा से! न केवल इस पूरे पर्वत के, बल्कि पूरे विश्व के, पूरे ब्रह्मांड के, उस जोगीराज के, जो यहाँ लिंग के रूप में पूजा स्वीकार करते हैं!
क्या पहाड़ पर अकेले रहने का फैसला करते समय यह विचार डर से ही पैदा नहीं हुआ था? लेकिन, मैंने यहाँ अकेले रहने का फैसला खुद ही किया था। किसी की सलाह या दबाव के कारण नहीं! किसी भी क्षण मैं कह सकती थी कि मैं ऐसा नहीं कर सकती और कॉलेज के एक कोने में झोपड़ी बना सकती थी। यह भावना निश्चित रूप से डर से पैदा नहीं हुई है।
होन्नाटी अंदर आई और थालियों और कटोरियों को उनकी संबंधित जगहों पर रखा, बर्तन में बचा हुआ खाना अलग कटोरियों में निकाला, बर्तन को धोकर अनुप के सामने रखा और कहा,
"जाते समय इस डिब्बे को अपने साथ ले जाएं।"
वह फिर से सितार के पास बैठ गया और उसे उठाकर अपनी गोद में रख लिया। अनुपान ने पूछा, "क्या आप इसे बजाना शुरू करने वाले हैं?"
"क्या यहाँ बाघ और तेंदुए नहीं हैं? आप रात को अकेले सोते हैं, है ना?"
सितार बजाना शुरू करने के लिए एकाग्रचित्त होन्नाती ने अपनी आँखें खोलीं और उसकी ओर देखा। वह एक पल के लिए रुका और उससे पूछा,
"क्या आपको यहां आते समय डर लगा?"
अनूप का चेहरा शर्म से लाल हो गया था। फिर भी उसने जवाब दिया,
नहीं... उस तरह से नहीं..."
आंखें दोबारा बंद करते हुए होन्नाटी ने कहा,
``तुम डरे हुए थे, तुम्हारे चेहरे से साफ पता चल रहा था..." चुप्पी तोड़ते हुए उन्होंने आंखें खोलीं, `मेरी तरह तुम भी शहर में ही पले-बढ़े हो। इसीलिए तुम्हें पहाड़ों, पेड़ों, झाड़ियों, जंगलों और निर्जन स्थानों से डर लगता है। एक बात याद रखना – जो लोग गांवों और जंगलों में जाए बिना सिर्फ शहर में ही पले-बढ़े हैं, उनमें साहस नहीं पनपता और वे जीवन को पूरी तरह नहीं समझ पाते। मैं रात को दरवाजा बंद करके सोता हूं। फिर भी, मैं तुमसे कहता हूं – यहां एक भी ऐसा जानवर नहीं है जिससे तुम्हें डरना चाहिए। अगर तुम्हारे दिल में डर रहेगा, तो क्या संगीत रचेगा? अगर चांदनी रात हो, तो मैं रात में देर तक बाहर बैठा रहता हूं। अगर हवा बिलकुल रुक जाए, तो मैं रात में बाहर बैठकर सितार बजाता हूं।"
अनूप ने उत्साहपूर्वक कहा,
"तो मुझे भी सुनना चाहिए!"
"अन्नैया से जरूर पूछना..." होन्नाटी ने कहा, एक बार फिर आत्ममग्न होकर और सतारी के तारों को बजाना शुरू कर दिया।
उनके चेहरों पर एक शांत, गंभीर भाव और गहरी श्रद्धा झलक रही थी। ऐसा लग रहा था मानो वे अपने भीतर से कोई अनमोल खजाना निकालने की कोशिश कर रहे हों।
अनूप अचंभित होकर उस भाव को निहार रहा था। ऐसा लग रहा था मानो सतारी की ध्वनि ने उसके मन को बांध लिया हो। ध्वनि के बाहर निकलने का कोई रास्ता न होने के कारण, सतारी के तारों के कंपन से उत्पन्न ध्वनि तरंगें वहीं गूंज रही थीं, जिससे एक रहस्यमय वातावरण बन गया था। वह अपनी उंगलियों को तारों पर चलते हुए देखने में मग्न था। उसने कुछ समय तक यह ध्यान दिया कि उसकी उंगलियों के स्थान से कैसी ध्वनि उत्पन्न हो रही है।
होन्नाटी ने आधे घंटे तक वह राग बजाया। जब उन्होंने बजाना बंद किया, तब भी उनका मन उसी राग में डूबा हुआ था। लगभग पांच मिनट बाद, उन्होंने अपनी आँखें खोलीं और अनूप से पूछा,

"यह गुस्सा किस बात का था?"
"अद्भुत! यह किस प्रकार का क्रोध है?" अनुपना ने पूछा।
होन्नाती ने उसे घूरकर देखा और उससे पूछा,
"यह गुस्सा कहाँ है? मुझे बताओ, चलो देखते हैं!"
"मुझे पता ही नहीं चला!" अनूप ने उलझन भरे भाव से कहा।
"इसे जाने दो। तुम किन-किन प्रकार के गुस्से को पहचानते हो?"
उन्होंने उत्तर दिया, "यमन, स्वामी और दरबारी..."
और?
``भूप और मलहार!"
जी हाँ! मैं प्रत्येक राग का एक भाग बजाता हूँ। क्या आप राग को पहचान पाएंगे?
अनूप के चेहरे पर हैरानी के भाव उभर आए।
"तो आप क्रोध को पहचान नहीं सकते! सचमुच?"
अनूप के मुंह से तुरंत हां का जवाब नहीं निकला। हालांकि, वह इस एहसास को छिपा नहीं सका कि उसे पहचान लिया गया है।
होन्नाटी ने कहा,
प्रेस क्लब के संगीत कार्यक्रम में रवि शंकर ने बागेश्री आधु-आधु बजाया था, तो आपने मुझे नौ साल पहले उस घटना के बारे में बताया था। उस समय आप—मुझे लगता है—छह साल के थे—सच में?
अनूप ने कुछ नहीं कहा।
सच-सच बताओ। ये तो सीधी-सादी कहानी है! उस समय तुम्हारे पिता दिल्ली में थे। वो प्रेस क्लब का कोई कार्यक्रम सुनने गए होंगे। तुम्हें भी साथ ले गए होंगे। ताकि तुम्हें संगीत से प्रेम हो जाए! आधी रात को राग बजाते समय तुम सो गए होंगे। क्या ये सच है या नहीं? बाद में तुम्हारे पिता ने कहा होगा – बागेश्री राग कितनी खूबसूरती से बजाया गया!
``नहीं। राग शुरू करने से पहले, रवि शंकरजी ने घोषणा की, और मैं जाग गई! बाद में, पिताजी ने कहा, ``तुमने बहुत अच्छा राग बजाया, तुम सो गई होगी," अनुपना ने सुधार किया।
इसका मतलब है कि तुम बहुत बुद्धिमान हो! तुम्हारी याददाश्त भी बहुत अच्छी लगती है। तुम्हें छह साल की उम्र में हुई घटनाएँ नौ साल बाद भी साफ-साफ याद हैं!..."
वह खुश था क्योंकि उन्होंने उसकी प्रशंसा की थी।
उन्होंने आगे पूछा,
लेकिन आपको झूठ बोलने की आदत कब से पड़ गई?
अनूप ने शानदार प्रदर्शन किया।
"बगिश्री कमाल का था – उसने पहले कभी इस तरह नहीं बजाया था – और इसी तरह की बातें, जिसका मतलब है, 'मुझे संगीत के बारे में बहुत कुछ पता है'। तुमने मुझे सच क्यों नहीं बताया? इतने लंबे समय से इस संकाय में आने के बाद भी तुमने झूठ बोलने की आदत क्यों नहीं छोड़ी?"
अनूप हताशा की स्थिति में था, मानो किसी ने उसे चोरी करते हुए पकड़ लिया हो। उसके हृदय में क्रोध उमड़ रहा था, लेकिन उसने स्वयं को नियंत्रित किया।
कुछ क्षण बाद, होन्नाटी ने फिर कहा,
आपने मेरे लिए खाना लाने में इतनी मेहनत की। इसके लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद! लेकिन आप एक डिब्बा लेकर जा रहे हैं, तो क्या आपने चन्नवीरैया मास्टर को बताया या उन्होंने आपको बताया? सच बताइए। क्योंकि कल मैं स्कूल में गायन सिखाने आऊंगा, तब मुझे ज़रूर पता चल जाएगा कि उस समय वास्तव में क्या हुआ था!..."
अनूप को अपराधबोध हुआ और वह दोषी महसूस कर रहा था।

“अरे, तुम तो बड़े होशियार, समझदार और प्रतिभाशाली लड़के हो! फिर झूठ क्यों बोल रहे हो? हमें तो हर मामले में बुद्धिमान कहलाना चाहिए और महानता प्राप्त करनी चाहिए, है ना? जैसे-जैसे ज्ञान, अनुभव और उम्र बढ़ती है, महानता अपने आप आ जाती है। अब से इतना अधीर मत बनो!...” होन्नाटी ने कालीन पर लगे दाग को कपड़े के एक छोटे टुकड़े से पोंछते हुए कहा।
फिर, कुछ याद आने पर, उसने पूछा,
क्या आप जानते हैं कि सत्य क्या है?
अनूप ने गुस्से में आकर कोई जवाब नहीं दिया।
फिर उन्होंने कहा,
"बोलो, बोलो, भाई, अगर तुम मेरी बताई हुई चार ज्ञान की बातों पर गुस्सा हो जाते हो, तो तुम बुद्धिमान कैसे हो सकते हो?"
"मैं वो बात नहीं कह रहा जो मौजूद नहीं है..." उसने जवाब दिया।
"इतना ही नहीं। महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा का क्या नाम रखा था?"
``माय एक्सपेरिमेंट्स विद ट्रुथ।"
सत्य के साथ मेरे प्रेयोग! – मेरा मतलब है, वे जीवन भर सत्य की खोज में लगे रहे। क्या आप जानते हैं कि विवेकानंद सत्य की खोज से क्या समझते थे? स्वयं की खोज करना और यह पता लगाना कि मैं वास्तव में कौन हूँ। पूर्ण आस्था और समर्पण के साथ। क्या आपने कभी सोचा है कि आप क्या बनेंगे? जब आप बूढ़े हो जाएँगे, तो आप मरने तक कैबरे देखते रहेंगे, अगर आपको पैसे चाहिए होंगे, तो आप अपनी माँ से झूठ बोलकर उनसे पैसे लेंगे, आप चोरी करेंगे, या मैं इनमें से कोई भी रास्ता नहीं अपनाना चाहूँगा – क्या मैं विवेकानंद जैसा व्यक्ति बनूँगा – क्या मैं महात्मा गांधी जैसा व्यक्ति बनूँगा और अपना पूरा जीवन जनसेवा में बिताऊँगा – क्या मैं आइंस्टीन की तरह नई खोजें करूँगा, क्या मैं यह तय करूँगा? आपको उन लोगों की जीवनियाँ पढ़नी चाहिए जिन्होंने अपना जीवन किसी लक्ष्य के लिए समर्पित कर दिया है। उनके जैसा बनने की तीव्र इच्छा होनी चाहिए। जब आपके अंदर ऐसी तीव्र इच्छा होती है, तो आप ऐसी छोटी-मोटी बातों पर ध्यान भी नहीं देते। आप झूठ भी नहीं बोलना चाहते।
यह कहते ही होन्नाटी चुप हो गया। बोलते समय भी उसका ध्यान आधा बोलने पर और आधा सितारों के तारों पर था। अनूप को उसकी बातों के आखिरी वाक्यों से अपमानित महसूस हुआ। उसे मेरे कैबरे कांड, झूठ बोलने, चोरी करने के बारे में कैसे पता चला? किसने बताया उसे? उसे याद आया – जब वह हमें यहाँ छोड़ने आया था, तो वह पापा से मिलने आया था। उसने पापा को सब कुछ बता दिया था! अब वह पापा को क्यों बताएगा?
होन्नाटी मास्टर पूछ रहे थे,
"क्या हम कोई और धुन बजाएँ?"
अब उसका संगीत सुनने का बिल्कुल मन नहीं था। वह खाली डिब्बा लेकर खड़ा हुआ और बोला,
मुझे देर हो रही है। मैं जा रहा हूँ...
"क्या तुम नाराज़ हो, मेरी प्यारी?"
जब उसे एहसास हुआ कि वह गुस्से में है और उसे इसके पीछे का कारण समझ आ गया है, तो वह और भी ज्यादा आपा खो बैठा। उसने कहा,
नहीं...
"तुम्हारे चेहरे से साफ पता चल रहा है, बैस। मेरी बात ध्यान से सुनो।"
हाँ
"सिर्फ हां मत कहो। इक्कीसवीं बार कहो।"
वह पहले की तरह फिर से बैठ गया।
होन्नाटी ने कहा,

"देखो, तुमने झूठ बोला, मुझे कैसे पता चला?"
उसने कुछ नहीं कहा। उसने वही बात दोबारा कही।
मैंने एमबीए किया है, है ना? यानी, व्यवसाय प्रबंधन व्यापार और उद्योग में व्यवहार करने का प्रशिक्षण है। व्यापार और उद्योग में, आपको हमेशा इस बात का ध्यान रखना होता है कि सामने वाला व्यक्ति सच बोल रहा है या झूठ। आपको उसकी बात को पूरी पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए सुनना होता है। बोलते समय आपको उसके चेहरे के भावों पर ध्यान देना होता है। यदि उसके भाषण में विरोधाभासी बातें हों, तो आपको उन्हें पकड़ना होता है। व्यावसायिक मनोविज्ञान इसी के बारे में है! मैंने इसे केवल सीखने के लिए नहीं सीखा - मैंने काम करते समय उस ज्ञान का उपयोग करने की कोशिश भी की! मैं अभी भी उस आदत से छुटकारा नहीं पा सका हूं..."
अनूप चुपचाप बैठा था। थोड़ी देर बाद उसने कहा,
"तुम्हें देर हो जाएगी। चलो... कभी-कभार मालिक की अनुमति से यहाँ आ जाना!"
जैसे राहत महसूस करते हुए, अनूप ने बक्सा उठाया और वहां से निकल गया। दरवाजे के पास रखी चप्पलें पहनकर पहाड़ी से नीचे उतरते समय भी उसे हवा का झोंका महसूस हो रहा था। ढलान होने के कारण वह तेज़ी से चल रहा था। उसे पता ही नहीं चला कि कब वह पहाड़ी के आधे रास्ते तक पहुंच गया, बड़े-बड़े पेड़ों के पत्ते हवा से गिरते और संघर्ष करते हुए उसे देख रहा थे। मंडप से होते हुए गाड़ी में जाते समय उसके मन में ख्याल आया, "तो पापा ने यहाँ किसी को नहीं बतायां! अगर तुम उन्हें बताओगे, तो बता दो! फिर मैं तुम्हें भी दिखा दूंगा!"
रास्ते के दोनों ओर झाड़ियाँ उगने लगीं और वहाँ काफी देर से बैठी मक्खियाँ फिर से उसके सिर पर मंडराने लगीं। इन मक्खियों को कैसे पता चला कि मैं ठीक इसी क्षण वापस आऊंगा! वे आपस में गुनगुनाती आवाज़ में बातें कर रही थीं और आवाज़ के मामले में एक-दूसरे से होड़ कर रही थीं, अनूप के गुस्से और लालच से बेखबर। वाह! क्या मेरा सिर उसके पिता की संपत्ति है, यी क्या?
गुस्से में उसने अपना हाथ सिर के ऊपर लहराया। चाहे वह कितनी भी तेज़ी से हाथ लहराए, वे भागकर फिर से चलने लगते! ओह! उन्हें पहले से कैसे पता चल जाता है? क्या उनके शरीर में कोई रडार जैसा तंत्र है? हमें इसका पता लगाने के लिए कुछ करना होगा! उसने उन्हें फिर से मारने की कोशिश की। हाँ, ऐसा कुछ तो ज़रूर होगा! हमें इसका पता लगाना होगा! फिर नोबेल पुरस्कार – मेरा नाम और तस्वीर दुनिया के सभी अखबारों में होगी! खबर टीवी और रेडियो पर भी आएगी! उसका पूरा शरीर उत्साह से भर गया था। एक दिन, वह जाल में चालीस-पचास मक्खियाँ पकड़ेगा – वह विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला में उनका अध्ययन करेगा – शरभन्ना मास्टर्स की ज़रूरत नहीं है। उन्हें तो सिर्फ़ वनस्पति विज्ञान आता है। शंकर मूर्ति ठीक है – उनके पास बी.ई. की डिग्री है, है ना! – उन्हें पता ही होगा कि रडार क्या होता है! वह उनसे क्या पूछेगा? प्रयोगशाला में एक सूक्ष्मदर्शी है। मैंने पंद्रह साल की उम्र में नोबेल पुरस्कार जीता था, इसलिए मेरा नाम और तस्वीर सभी अखबारों में है। लेकिन मेरी तस्वीर सबको कैसे मिलेगी? वे पापा से पूछेंगे! क्या अनुपम को नोबेल पुरस्कार मिलने पर पापा खुश होंगे? या उनका गुस्सा अभी शांत नहीं हुआ है? अगर वो यहाँ किसी को बेंगलोर के बारे में सारी सच्चाई बता दें तो क्या होगा? तब तो मैं देखूंगी।
अचानक उसके मन में ख्याल आया – मुझे एमबीए करना चाहिए! मुझे यह तरकीब सीखनी चाहिए कि सामने वाला व्यक्ति सच बोल रहा है या झूठ! जी हाँ – यही तो मुझे सीखना चाहिए! फिर किसी को पता नहीं चलेगा कि मैं सच बोल रहा हूँ या झूठ!
मैं हार नहीं मानूंगा! मैं इसे जरूर सीखूंगा! - उसने निश्चय किया।

■

३

कांति इस बात से बेहद असंतुष्ट थी कि उसके पति ने उससे यह नहीं पूछा कि उसने अपने बेटे को गाँव के स्कूल में कब भेजा था – वह भी भेड़ चराने वालों के स्कूल में। क्योंकि उस समय उससे एक गलती हो गई थी – उसकी नज़र में एक गलती! उस दिन उसने कुछ भी बड़ा नहीं किया था! बिना कुछ देखे, वह जलदबाजी में अनूप को गाँव के गांधी स्कूल में ले गया था!

उसे समय मुझसे क्या बड़ी गलती हो गई थी? मैं जैन आहार में विश्वास नहीं करती। क्या मेरे बेटे को चिकन खाकर बड़ा नहीं होना चाहिए? ये कैसा ज़माना है, और मैं इतनी छोटी सी बात पर इतना हंगामा क्यों मचा रही हूँ! मैं उसे चिकन खाने के लिए पैसे दे रही थी – आखिर बच्चे भी तो जिज्ञासु होते हैं, है ना? इसीलिए तो वो एक दिन कैबरे देखने गया होगा! अगर कैबरे क्लब के मालिकों ने रिश्वत न दी होती, तो पुलिस उन्हें पकड़ लेती! इतनी छोटी सी बात पर तुम क्यों चिल्ला रही हो और संत बनने का नाटक कर रही हो, मुझे भी ये बात ज़ोर से कह देनी चाहिए थी। कम से कम वो अनूप को भेड़ों के उस झुंड के पास तो नहीं ले जाता।

उसे धीरे-धीरे मनचाही खबर निकलवाने की कला आती थी। इस मामले में उसका तरीका अलग था। वह एक ही दिन में सारे सवाल नहीं पूछती थी। एक बार, जब उसका पति दफ्तर जाने से पहले चाय पी रहा था, तब उसने इस विषय को उठाया।

"अनूप के हॉस्टल में वे ऐसा कुछ तो नहीं पकाते जिससे आप बीमार पड़ जाएं, है ना? मिर्च भुजी... चना दाल अंबोडी... इस तरह की चीजें।"

ऐसे समय में उसकी चिंता को समझते हुए, उसने जानबूझकर वहाँ के खाने के बारे में विस्तार से बात करना शुरू कर दिया। एक बार, ऐसी ही बातचीत के बीच, उसने पूछा,

"वहां शारीरिक श्रम करना पड़ता है, है ना? क्या अनूप थकता नहीं?" उन्होंने वहाँ की कार्यप्रणाली और कार्यप्रणाली के बारे में विस्तार से बताया। अगर मैं इसे लिखूँ तो यह चार स्तंभों का लेख बन जाएगा। इसमें इतनी सारी जानकारी थी।

एक बार जब उसकी देखभाल की जा रही थी और उसके बाल संवारे जा रहे थे, "ये क्या है! दोनों कानों पर सफेद बालों का ये गुच्छा! अब मैं इस बूढ़े आदमी से कैसे निपटूँगी?" उसने व्यंग्य से पूछा, "मैं उससे बाद में पूछूँगी, वो कहती है - इन बच्चों का मालिक कौन है? क्या उसे भी कैबरे वगैरह देखने का ऐसा ही अनुभव है? हर कमरे में कितने बच्चे हैं?"

उसने न केवल इस तरह से सभी विवरण प्राप्त किए, बल्कि बाद में उसने अपनी इच्छानुसार प्राप्त ज्ञान को संपादित भी किया। अंततः, उसने प्राप्त ज्ञान को अपनी पसंद के अनुसार ढाला और अपने पति पर आरोप लगाया।

"तुम मेरे बेटे को भेड़ चराने के लायक बना रहे हो!"

रविंद्र भी उसके स्वभाव की इस विशेषता से भली-भांति परिचित था। वह कभी-कभी सोचता था – अगर वह पत्रकार बन जाती, तो खबरें जुटाने का काम और भी बेहतर कर लेती! फिर भी, वह उसके सवालों के जवाब दे रहा था। अगर वह ठान लेता, तो बिना खबर का खुलासा किए बोलना उसके लिए आसान था। फिर भी, वह बिना कुछ छिपाए उसे सब कुछ बता देता था। वह कभी-कभी सोचता था कि ऐसा कहने में उसे इतनी आज़ादी क्यों महसूस होती है। क्या एक पति-पत्नी के लिए ऐसा रिश्ता सही है, एक ऐसा राजनेता जिसे किसी बात की परवाह नहीं और एक ऐसी पत्रकार जो गुप्त तरीकों से खबरें जुटाती है? कभी-कभी वह सोचता था, मैं उसके आकर्षण में डूब रहा हूँ, या कौन जाने!

रवींद्र को पटना के झा द्वारा पति-पत्नी के रिश्ते के बारे में सुनाई गई कहानी याद आ रही थी। झा हमेशा कहते थे कि इस रिश्ते का स्वरूप शादी के आठ-दस दिनों के भीतर ही तय हो जाता है। उनका कथन असत्य नहीं था। अब याद आने पर मुझे यह स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था। हमारे रिश्ते का स्वरूप भी उसी सप्ताह के भीतर तय हो गया था।
शायद लोगों के मन की बात जानने की मेरी अंदरूनी इच्छा ने ही मुझे पत्रकारिता का रास्ता चुनने के लिए प्रेरित किया। रविंद्र, जो पूरी दुनिया के बारे में अपनी राय खुलकर व्यक्त करते थे, उनके पास कोई ऐसा करीबी नहीं था जिससे वे अकेले में बात कर सकें। शादी के बाद जब वे हनीमून पर गए, तो अकेले होते ही उन्होंने रविंद्र से खुलकर बातें करना शुरू कर दिया। बीच-बीच में गुनगुनाते हुए और सवाल-जवाब पूछते हुए, रविंद्र उस समय अपनी जिज्ञासा शांत कर रही थीं – उन्हें और बोलने के लिए प्रोत्साहित कर रही थीं। लेकिन वे उन्हें अपने मन की कोई बात नहीं बता रही थीं।
एक बार उसने पूछा,
आप बात क्यों नहीं कर रहे हैं?
इस पर उसने कहा,
मैं क्या कहूं? अविवाहित लड़कियों को क्या कहना होता है? घर-कॉलेज-खाना बनाना-दोस्ती-सिलाई-कढ़ाई-माता-पिता की स्नेहपूर्ण शिक्षा! बस इतना ही!
वह बात भी झूठ नहीं थी। इसीलिए रविंद्र बोलता रहा। शादी के चार-छह साल बाद ही उसे एहसास हुआ कि वह सिर्फ सुन ही नहीं रही थी, बल्कि जानकारी भी जुटा रही थी! फिर भी उसने इस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। वह उससे इसी तरह बातें करता रहा। बाद में यह उसकी भी आदत बन गई। वह भी उसकी आदत बन गई। कभी-कभी वह उसके सवाल का सतही जवाब दे देता, या वह कहती,
``मुझसे चालाकी मत करो! मुझे दफ्तर में एक नई स्मार्ट सेक्रेटरी मिल गई है जिससे मैं खूब बातें करती हूँ! एक बार मुझे अलग कमरा मिल जाए, तो वहीं पर वो प्यार भरी बातें होंगी!"
कम से कम उसके आरोपों का खंडन करने के लिए, मुझे उससे बात तो करनी ही पड़ी!
"आपने अनूप को स्कूल भेजे आठ महीने हो गए हैं। वो गर्मी की छुट्टियों में भी घर नहीं आया। आप मुझे उससे मिलने तक नहीं ले गए!..." उसने एक दिन शिकायत की।
रविंद्र को उसकी बातों में कुछ भी गलत नहीं लगा। चाहे वह कितनी भी कोशिश कर ले, आखिर वह उसकी माँ थी। अगर वह अपने बेटे से मिलना चाहती थी, तो इसमें क्या बुराई थी? वह तो एक बार बीच में गया भी था और दो दिन रुका भी था। उसने देखा था कि अनूप की सेहत अच्छी थी। वहाँ उसके बुरे लोगों की संगत में पड़ने का तो सवाल ही नहीं था। 'तुम्हारे बेटे में बड़ा होकर कुछ हासिल करने की क्षमता है - वह कोई साधारण लड़का नहीं है', सभी शिक्षकों ने यही राय व्यक्त की थी। अन्नाया को उसमें छोटा विवेकानंद दिखाई देता था! वही रविंद्र से बहस कर रहा था, 'छोटे नरेंद्र ने क्या-क्या शरारत की है?'
अपने बेटे के भविष्य के बारे में उनके उज्ज्वल विचारों को सुनकर रविंद्र भी गर्व से भर उठा। हालांकि बेटे की बिगड़ती हालत में दिल को कठोर कर लेना और उससे दूरी बना लेना आसान होता है, लेकिन जब दूसरे उसके उज्ज्वल भविष्य की बात करते हैं तो मन में उठने वाले गर्व को रोकना नामुमकिन है! चाहे उसका रास्ता कितना भी कठिन क्यों न हो, यह बात तो तय है कि वह हमारा बेटा है। हम भी उससे बहुत प्यार करते हैं। अगर वह न होता तो हम उसके लिए इतना कष्ट क्यों सहते और इतनी कठिनाइयों का सामना क्यों करते?
दरअसल, जब वह अनूप से मिलने गया था, तब अन्नय्या ने खुद उसे बताया था,

``छुट्टियां एक महीने बाद शुरू होंगी। उस समय, जिन बच्चों के घर हैं, उन्हें उनके गृहनगर भेज दिया जाता है। क्या हमें अनूप को भेजना चाहिए? आपका क्या विचार है?"
उस समय रविंद्र ने स्वयं कहा था,
"अनुपाला को यहां आए चार महीने हो गए हैं। इन चार महीनों में वह बहुत बदल गया है। अब अगर हम उसे दो महीने के लिए बेंगलुरु ले जाएं, तो वह समय कैसे बिताएगा? वही पुराने दोस्त - वही टीवी - समय बिताने का वही पुराना तरीका!"
यह सच है। हमारे ब्रह्मचारी शिक्षक भी उस समय यहाँ मौजूद रहेंगे। इन दो महीनों के दौरान उनका स्वभाव भी उस पर गहरा प्रभाव डालेगा। तालाब में जमा मिट्टी को हटाकर खेतों में फैलाने का काम भी है। बीस बेघर, माता-पिता विहीन बच्चे यहाँ रहेंगे। वे बच्चे यह काम करेंगे। हमारे पास मिट्टी ढोने के लिए बैलगाड़ियाँ भी हैं। अनुपाल जो चाहे वह काम कर सकता है। कुल मिलाकर, मुझे लगता है कि सभी कामों की ज़िम्मेदारी उसे ही सौंप देनी चाहिए। मुझे विश्वास है कि वह यह काम अच्छे से करेगा। ज़िम्मेदारी सौंपने से उसकी समझ अपने आप बढ़ जाएगी। आपका क्या विचार है?
"यह तो बहुत अच्छा विचार है!" रविंद्र ने उत्साहपूर्वक कहा।
जब वह छुट्टियों में अपने दादा के घर बसावनपुरी आता था, तो बैलगाड़ी खींचकर खेतों में जोयी करता था। धूप से बैल थक जाते थे, इसलिए उस समय वह रात में खेतों में काम करता था। अगर रात में चांदनी होती, तो गांव के सभी किसान रात में काम करते थे। उनका काम सुबह आठ बजे तक चलता रहता था। चांदनी रात में खेतों में काम करने का आनंद शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता था! अब याद करके मेरा मन करता है कि मैं इसे फिर से जी लूं! मेरे बेटे को भी यह आनंद क्यों न मिले? रवींद्र ने अन्नाय्या से कहा था कि मैं भी ऐसे समय आऊंगी। लेकिन जब अन्नाय्या ने पत्र लिखा, तो वह दूसरे काम के कारण नहीं आ सका। रवींद्र भी जानता था कि काम करना मुमकिन नहीं है, लेकिन चांदनी रात में काम करते किसानों के गीत सुनने का आनंद भी उसे नहीं मिल पाया।
उस समय रविंद्र ने कांति से कहा था,
"उसे छुट्टियों के दौरान वहीं रहने दो। उसे एक प्रोजेक्ट पर काम करना है।"
अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार, उसने पूछा, "यह किस प्रकार की परियोजना है?" और फिर, अवसर का लाभ उठाते हुए कहा,
अब अगली गर्मियों में भेड़ पालन की एक परियोजना शुरू की जाएगी!
रविंद्र ने उसके शब्दों में छिपे व्यंग्य को तुरंत नहीं समझा, क्योंकि उनके विचार में, भेड़ें पालना और दो महीने तक वैज्ञानिक रूप से उनका अवलोकन और अध्ययन करना एक व्यवहार्य परियोजना थी।
एक बार जब वह काम से जल्दी घर आ गया, तो खाना बनाते समय उसने उससे पूछा,
"क्या हम दोनों उस गांव में जाकर अनूप से मिलें?"
अनुपाल ने उसे स्कूल भेजने से पहले कई बार स्कूल दिखाने और उसकी प्रक्रियाओं और लक्ष्यों के बारे में समझाने के बारे में सोचा था। उसने इसका सुझाव भी दिया था। लेकिन उस समय उसने कहा था,
"आपकी गांधी-शिक्षा और गांधी-मानदंड आपके साथ बने रहें!"
वह जानता था कि उसे गांधी में कभी कोई दिलचस्पी नहीं थी। वह मोपेड को भी गांधी-साइकिल कह देती थी। यहां तक कि बेकार कार्डों को भी वह 'गांधी-दाव' कहती थी। गांधी नाम का इस तरह इस्तेमाल करने वाली वह अकेली नहीं थी। उसने सोचा था कि वह ऐसा इसलिए करती है क्योंकि बहुत से लोग मज़ाक में ऐसा कहते हैं। लेकिन उसके जीवन के बाकी हिस्सों को देखकर, उसकी पहली

प्रतिक्रिया गांधी नाम को ठुकराने की ही थी। इसीलिए उसने दोबारा इस विषय को नहीं उठाया।
अब उसे लगा कि उसे वहाँ ले जाने में कुछ खतरे हैं। वहाँ पहुँचते ही वह रोने लगेगी, "मेरे बेटे को यहाँ कैसे छोड़ दिया गया!"
फिर यह बढ़ना शुरू हो जाएगा।
अब गौरी के त्योहार की छुट्टी है – इसलिए मैंने उसे पत्र लिखा – आ जाओ!'
इन सब बातों पर विचार करने के बाद उन्होंने कहा,
नवरात्रि के दौरान उन्हें दस दिन की छुट्टी मिलती है। चलिए उस समय उन्हें फोन करते हैं...
"क्यों? आपको नहीं लगता कि मुझे वहां जाकर कुछ देखना चाहिए?" उसने कहा, यह सोचते हुए कि आरोप को मिटाने के लिए वही जिम्मेदार था।
यह जानकर रविंद्र ने आरोप का खंडन किए बिना कहा,
``वैसे, यह गांधी स्कूल है! आप जैसी महिला, मेकअप, लिपस्टिक और गहनों से लदी हुई, वहां अजीब लगेगी!"
वह भी उसे घूरती रही और चुपचाप खाना खाने लगी।
बाद में, बिस्तर पर लेटे-लेटे वह स्तब्ध अवस्था में उसके पास गई और बोली,
आप बिलकुल सही कह रही हैं! मैं खादी की दुकान से दो सफेद साड़ियां लाऊंगी... मुझे गहने, स्नो पाउडर या लिपस्टिक नहीं चाहिए। मैं बस पैरों में चप्पल पहनूंगी। फिर वे मुझे अंदर जाने देंगे या नहीं?
"हम चाहे जैसे भी जाएं, वे हमें प्रवेश से नहीं रोकेंगे। हमें खुद तय करना होगा कि कहां और कैसे जाना है!"
"अगर तुमने मुझे ये बात सरल शब्दों में बताई होती, तो मैं समझ जाती। मैंने यही तो कहा था, 'मैं खादी की साड़ी पहनकर आऊंगी,' है ना? आजकल तुम मेरे प्रति बिलकुल उदासीन हो गई हो!"
अंततः, वह उसे अनूप के कॉलेज ले जाने के लिए राजी हो गया। तब उसने पूछा,
"अगर दूरी इतनी ज्यादा है, तो क्या हमें अपने साथ ड्राइवर ले जाना चाहिए?"
"क्या आपको याद है कि जब आप अनूप को छोड़ने गए थे या बाद में उससे मिलने गए थे, तब कार क्यों नहीं ली गई थी?"
"अरे! तो फिर कार रखने की क्या ज़रूरत है? हम तो सुविधा चाहते हैं, है ना? अगर हमें अपना पूरा जीवन इस चिंता में बिताना पड़े कि लोग क्या कहेंगे, तो जीना नामुमकिन हो जाएगा!"
"यहाँ किसी के कुछ कहने का सवाल ही नहीं उठता! हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि हमारे भटकते हुए बच्चे को सही रास्ते पर लाने की कोशिश कर रहे शिक्षक क्या कहेंगे और वहाँ मौजूद अन्य बच्चों पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा!"
उसने इस बारे में कुछ नहीं कहा।

■

एक रविवार को, वे दोनों सुबह-सुबह बस से निकले। उन्होंने टिपटूर से दूसरी बस ली और दोपहर के आसपास बिदारली फाल्या में उतर गए। वे दोनों हलुकेरे की ओर पैदल चलने लगे।
उसने उससे खादी की साड़ियाँ लाने को नहीं कहा था। वह खुद दो साड़ियाँ लाई थी। एक उसके पास थी और दूसरी उसके कंधे पर लटके शबनम के थैले में थी। हालाँकि वह उसके इस नाटकीय व्यवहार से शर्मिंदा था, पर उसने कुछ नहीं कहा। वह खुद खादी के कपड़े नहीं पहनता था। कॉलेज जाने वाले हर किसी के लिए खादी पहनना अनिवार्य नहीं था। वहाँ के कुछ शिक्षक भी टेरीक्लॉथ-टेरीकॉट के कपड़े पहनते थे। केवल अन्नय्या ही हमेशा खादी के कपड़े पहनती थी। शायद उसे खादी की साड़ी में देखकर उसके मन में विशेष सम्मान पैदा हो जाए! यह सोचकर उसे अच्छा लगा, लेकिन तभी उसे याद आया - जब वह बाद में बेंगलूर आएगा

और वहाँ उसे इस पोशाक में देखेगा, तो वह चौंक जाएगा! पहले से ही इस बात का अंदाजा होना हमेशा बेहतर होता है।
दरअसल, अभ्यास की कमी के कारण कांति काफी थकी हुई थी। लेकिन बिना दिखाए, उसने अंग्रेजी में पूछा,
हम कितनी दूर आ चुके हैं?
रविंद्र को एहसास हुआ कि "अभी कितनी दूरी बाकी है?" के अलावा एक और सवाल भी पूछा जा सकता है। उसने उसे साफ-साफ बताया,
"अगर आपसे कोई गलती हो जाए तो कोई बात नहीं - लेकिन आपको वहां कन्नड़ में ही बात करनी होगी।"
हालांकि वह उसके सीधे सुझाव से बहुत परेशान थी, लेकिन उसने कुछ नहीं कहा।
थोड़ा और आगे चलने पर सड़क के दोनों ओर झाड़ियाँ थीं। उसने पूछा,
यह किस प्रकार का जंगल है?
कन्नड़ में जंगल को कडु कहते हैं! यह असली जंगल नहीं है। क्या ये पेड़ असली जंगल हैं? इन्हें तंगड़ी कहते हैं। इस पेड़ के पीले फूल कुछ खास दिनों में खिलते हैं, जिससे पेड़ बहुत खूबसूरत लगते हैं।
जब वह यह जानकारी दे रहा था, तो मक्खियाँ उनके सिर के चारों ओर मंडराने लगीं। कांति को गुस्सा आया। उसने अभिज्ञानशाकुंतला से पानी पीने आई भौंरे का उदाहरण देकर उसे प्रसन्न करने की सोची, लेकिन उस मोहक भाव के लिए आवश्यक स्नेह उसके हृदय में उत्पन्न नहीं हुआ।
चढ़ाई शुरू होते ही दोनों की सांस फूलने लगी। कांति ने मक्खियों से बचने के लिए अपना सिर ढकने वाला स्कार्फ उतार दिया था।
एक मील चलने के बाद, आसपास के घने पेड़ गायब हो गए और बाईं ओर दूर एक पहाड़ दिखाई देने लगा। उसे देखकर कांति ने निराशा में कहा,
``उधर देखो। पहाड।"
कन्नड़ में इसे बेत्त कहते हैं..." बिना रुके, रविंद्र उसे पहाड़ों, पहाड़ियों और टीलों के बीच की दूरी बताने लगा। फिर दाईं ओर मुड़कर उसने उसे नीचे विवेकानंद विद्याशाला का इलाका दिखाया। फिर उसने कहा, "अब हमें नीचे उतरना है। इसलिए आपको उतरने में ज्यादा परेशानी नहीं होगी। दोनों तरफ संतरे के पेड़ भी हैं। इसलिए आपको गर्मी भी नहीं लगेगी।"
रविंद्र भूल गया था कि आज रविवार है। उसे तब याद आया जब उसने कॉलेज परिसर में छात्रावास के पास एक निर्माण परियोजना में लगभग पच्चीस बच्चों को काम करते देखा। उसे यह भी पता था कि जिस काम में सभी बच्चों को भाग लेना अनिवार्य था, वह छुट्टी के दिन किया जा रहा था।
वे दोनों पास आ गए। विद्यार्थी छात्रावास के विस्तार का काम चल रहा था। बाहर कोई नौकर नहीं था। पाँच शिक्षक दीवार पर बैठे थे। तीन जगहों पर बच्चे मिट्टी को रोल करने में मग्न थे। कुछ बच्चे अपने पैरों से कुचली हुई मिट्टी के गोले बनाकर शिक्षकों को दे रहे थे। ताकतवर बच्चे इन गोलों को ऊपर बैठे शिक्षकों की ओर फेंक रहे थे। ऊपर बैठे शिक्षक मिट्टी लेकर दीवार बनाने में लगे थे। मिट्टी की दीवारें, शिंगल की छतें, बांस के खंभे और छत की टाइलें – वो भी देसी टाइलें। रविंद्र ने देखा कि वे यह निर्माण कार्य बहुत कम लागत में कर रहे थे – उससे ज़्यादा खर्च किए बिना। दीवारों के सूखने और प्लास्टर आदि के बाद, दीवारों और ज़मीन पर चूने और रेत की एक अच्छी परत बिछाई जाती थी – गारे की एक चिकनी सतह बनाई जाती थी – उतनी ही लागत में जितनी टाइलें खरीदने में आती है। या फिर वे टाइलें खुद बनाते हैं?
ऐसा सोचते-सोचते रविंद्र ने अनूप को पहचान लिया। जी हाँ – वही ऊपर बैठे लोगों पर एक ही बार में मिट्टी की गेंदें फेंक रहा था। बाकी लोगों की तरह उसने भी पुरानी शॉर्ट्स पहनी हुई थी। किसी ने भी बनियान नहीं पहनी थी। सबके हाथ-पैर

मिट्टी से सने हुए थे। यहाँ तक कि सिर के बाल भी मिट्टी से सने थे। गेंदें फेंकते समय उनकी पीठ, बांहों और छाती की मांसपेशियां फड़क रही थीं। रविंद्र को एहसास हुआ – इस बार तो वह पिछली बार से भी ज्यादा बड़ा हो गया था!
अनुप जब मिट्टी के बड़े-बड़े गोले हवा में उछाल रहा था, तब वह मिट्टी खोदने वालों के काम पर भी नज़र रख रहा था।
ओह इराप्पा! अगर तुम ऐसे ही नाचते रहोगे तो मिट्टी ठीक से नहीं मिलेगी! फावड़े से मिट्टी को ऊपर-नीचे करो और फिर उसे अच्छे से दबा दो! ओह गोरगा, पानी कम करो। अगर तुमने इतना पानी डाल दिया और उसे उबलने दिया तो दीवार खड़ी नहीं रहेगी। तुमने सुना या नहीं?
रवींद्र का हृदय संतोष से भर गया। एक ओर तो उसे गर्व भी महसूस हुआ। उसने पास खड़े कांति से कहा,
"क्या आप उसे पहचानते हैं? उसे देखिए – मिट्टी की गेंदें उछाल रहा है, है ना? वही है हमारा अनूप!"
“वो कहाँ है? वो कहाँ है?” उसने चारों ओर देखना शुरू किया। जब आखिरकार उसकी नज़र अनूप पर पड़ी, तो उसका दिल मचल उठा। अनूप उसके चेहरे पर दिख रहे भावों को महसूस किए बिना नहीं रह सका।
उन्होंने इसका समर्थन किया और कहा,
"क्या आप जानते हैं कि बच्चे अपने हाथों से इमारत बनाने से कितना आत्मविश्वास प्राप्त करते हैं?"
वह कुछ नहीं बोली।
उन्होंने आगे कहा,
"चलो, अतिथि कक्ष में चलते हैं। अन्ना का कमरा भी वहीं है।"
वह वहीं खड़ी रही। उसकी निगाहें अपने बेटे पर टिकी थीं, जो कीचड़ से सना हुआ था। तभी, वहाँ मौजूद एक लड़के की नज़र उन दोनों पर पड़ी। उसने रवींद्र को पहचान लिया, जो पहले तीन बार आ चुका था और दो बार भाषण दे चुका था। वह हाथ में फावड़ा लिए अनुप की ओर दौड़ा और अनुप का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया।
अनूप उन दोनों को देखकर हैरान रह गया। पापा और मम्मी भी! अनूप हाथ में पकड़ी मिट्टी की गेंद गिराते हुए उनकी ओर दौड़ा। उसकी माँ भी उसकी ओर दौड़ीं। कौन जाने अगर अनूप और करीब आ जाता तो क्या करता – लेकिन पहले कांति आगे आई और उसे कसकर गले लगा लिया और खुशी से बोली,
``अनुप! मेरे लाल! मेरे बेटे!"
उसके हाथों और शरीर पर लगी मिट्टी उसकी सफेद साड़ी के किनारे को छू गई। उसकी आँखों में आँसू भर आए। वह भी फूट-फूटकर रोने लगा। उसकी आँखों में भी आँसू आ गए। माती-पिता के मिलन को आठ महीने बीत चुके थे।
तभी एक आवाज़ सुनाई दी, 'रवींद्र-'। आवाज़ अन्नय्या की थी। अनुप अपनी माँ के आलिंगन से दूर हट गया। उसका रोना बंद हो गया। रविंद्र ने आवीज़ की दिशा में देखा। यह अन्नय्या था, जो एक तरफ बैठा मिट्टी के गोले पकड़कर दीवार पर चढ़ा रहा था। उसने भी सिर्फ़ शॉर्ट्स पहने थे। वह भी मिट्टी से सना हुआ था। अगर रविंद्र ने आवाज़ न पहचानी होती, तो वह वहां ध्यान भी न देता!
अनूप मिट्टी की गेंदें बनाने में वापस लग गया। उसने उन दूसरे बच्चों पर चिल्लाया जो इतनी देर से उसे और उसकी माँ को घूर रहे थे।
"मेरे प्यारे, तुमने काम क्यों रोक दिया? चलो, शुरू करो। एराप्पा - ओह गोरगा, मिट्टी की चारें और परतें डालो - और इसे अच्छी तरह मिलाओ! नहीं तो दीवारें गिर जाएँगी। अरे, तुम हर्दप्पा! क्या देख रहे हो?"
अनूप की कन्नड़ भाषा स्थानीय बोली में भी स्पष्ट रूप से झलक रही थी। यह देखकर रविंद्र भी उत्साहित हो गया। बचपन में जब वह छुट्टियों में अपने दादा के

घर आया था, तब वहाँ चल रहे दीवार निर्माण कार्य में उसने भी भाग लिया था। अब उसने हाथ में रखा थैला नीचे रख दिया। कमीज़, पैंट और घड़ी उतारकर वह इराप्पा गया और उत्साह से कच्ची मिट्टी को रौंदने लगा। यह जानते हुए कि जितनी अधिक मिट्टी वह रौंदेगा, उसके कण उतने ही अधिक आपस में जुड़ेंगे और दीवार उतनी ही मजबूत होगी, वह श्रद्धा और भक्ति से मिट्टी रौंदने लगा। अपने बचपन में, दादा के घर में गौशाला की दीवार के निर्माण के दौरान, उस समय बहुत मज़ा आता था। उस समय, मिट्टी रौंदने के बजाय, वह कीचड़ में नाचने का आनंद लेता था। यक्षगान की पंक्ति 'बेदा मुकुद अरिन्वदा' का जाप करते हुए, ढोल बजाते हुए नाचता था।
अनुपना ने तुरंत उसे चेतावनी दी।
"ये क्या है पापा! आप एक तरफ ही रौंद रहे हैं! आपको फावड़े से मिट्टी को ऊपर-नीचे करना चाहिए और फिर उसे रौंदना चाहिए!"
आधे घंटे में दीवार का काम पूरा हो गया और बाकी शिक्षक नीचे आ गए। सभी बच्चे पास के हैंडपंप की ओर दौड़े और बहते पानी में हाथ-पैर मलते हुए नहाने लगे। कांति के सामने खड़े होकर, जो अनुप को अपने शरीर को मलते और उनके साथ नहाते हुए देख रही थी, अन्नय्या ने हाथ जोड़कर कहा,
``नमस्ते, तोई! मेरा नाम अन्नय्या है। रविंद्र ने मुझे बताया होगा। हम दोनों भाई-बहन हैं–"
इतने अधेड़ उम्र के व्यक्ति को अपने सामने सिर्फ शॉर्ट्स पहने बात करते देख कांति को शर्मिंदगी महसूस हुई। वह उसके बारे में जानती थी। रविंद्रन ने उसके बारे में उसे बहुत कुछ बताया था। फिर भी, वह महिलाओं के सामने इस तरह खुलकर बोल रहा था।
अन्नाय्या ने कहा,
अगर मैंने पहले कार्ड डाला होता, तो मैं कार को बिदारली किले भेज देता..."
"रहने दो..." उसने कहा। कुछ और कहने की इच्छा से उसने आगे कहा, "धन्यवाद! हमें कोई दर्द नहीं हुआ...!" उसका मन असमंजस में था और उसके मुँह से अनायास ही एक हिंदी वाक्य निकल गया।
क्या ये लोग हिंदी के मूल वक्ता हैं? लेकिन रविंद्र ने हमें बताया था - क्योंकि वह ऐसे परिवार की बेटी है जो काम के सिलसिले में उत्तर भारत में रहता था। अन्नाया को भी हिंदी आती थी। गांधीजी के प्रभाव से उसने जानबूझकर हिंदी का अध्ययन किया था। जब अनूप यहाँ आया, तो उसे भी केवल हिंदी और अंग्रेजी ही आती थी। वह कन्नड़ भी ठीक से नहीं बोल पाता था।
रविंद्र का बैग और अन्य सामान उठाते हुए उसने उससे कहा,
``अतिथि वर्ग खुले हैं...स्वयंपाक झाले...खौ घ्या..."
वह अन्नाय्या के पीछे-पीछे चली और बार-बार अनुपक की ओर देखती रही, जो हैंडपंप के पास पानी की धारा में नहा रहा था।
उन दोनों को बाकी बच्चों के साथ खाना खिलाया गया। उसने रचन उकड़ा के बारे में सिर्फ सुना था – उसने इसे कभी अपनी आँखों से नहीं देखा था। उसका मानना था कि रचन गरीबों के लिए बाजरे की एक किस्म है। सभी बच्चे उसी उकड़ा को बड़े चाव से खा रहे थे, जैसे ही वे उसे मुँह में डालते। अनूप क्या कर रहा था? लेकिन उस दिन अनूप की खाने की बारी थी, इसलिए वह देख नहीं पाई। हर हफ्ते सबकी खाने की बारी होती है। उसे बहुत बुरा लगा – इतना काम करने के बाद भी, इस गांधी स्कूल में चैन से खाने की भी इंसानियत नहीं है! रविंद्र ने उकड़ा उकड़ा माँगा।
अन्नाय्या ने अपने पेज पर आकर कहा,
"तुम्हें चावल खाने की आदत नहीं है... बस चावल खा लो।"
रात के खाने के बाद, रविंद्र अन्नय्या के कमरे में गया।

कांति उस कमरे में बिछी चटाई और कंबल पर बैठ गई जो उन्हें दिया गया था। सुबह जल्दी उठने, बस यात्रा और उसके बाद पैदल चलने से वह थक चुकी थी। उसकी आँखों में नींद भरी हुई थी। कंबल पर लेटते ही उसे नींद आ गई।
जब वह उठी तो उसके पिता और माता पास ही एक चटाई पर बैठे आपस में बातें कर रहे थे।
अनूप कह रहा था,
"...शंकरमूर्ति मास्टर ने कहा, आइंस्टीन का सिद्धांत ही अंतिम सत्य है! इससे पहले कोई दूसरा सिद्धांत नहीं आया! लेकिन आइंस्टीन के सिद्धांत में भी कुछ कमियां हैं! उनका कहना था कि जो भी उन कमियों को दूर करेगा, वह महान वैज्ञानिक बन जाएगा! उन्होंने कहा कि किसी को भौतिकी में एम.एससी. करना चाहिए, तभी वह इस तरह का शोध कर सकता है। मैं आगे की पढ़ाई के लिए भौतिकी ही चुनूंगा! मैं आइंस्टीन के सिद्धांत को गलत साबित करके अपना नया सिद्धांत बनाऊंगी... मैं ऐसा इसलिए करूंगा ताकि मेरा नाम सभी अखबारों में छपे..."
``बिलकुल सही! ऐसा करो..." रविंद्र कह रहा था, ``अगर तुम्हें भौतिक विज्ञान में रुचि है, तो इसका अध्ययन करो। अगली बार जब मैं आऊँगा, तो तुम्हारे लिए सरल भौतिक विज्ञान की किताबें लाऊंगा..."
यहां पुस्तकालय में भी कितनी सारी किताबें हैं! मैं आपको बताता हूँ कि सापेक्षता का सिद्धांत कितना रोचक है! गुरु शंकरमूर्ति कहा करते थे – पृथ्वी पर सत्तर किलो वजन वाला व्यक्ति चंद्रमा पर तेरह दशमलव तैंतीस किलो, बृहस्पति पर एक सौ पचासी किलो, शनि पर अस्सी किलो, शुक्र पर छियासठ किलो और सूर्य पर एक हजार नौ सौ साठ किलो वजन का होता है! तो हमारा वजन भी सापेक्षिक है, ऐसा कह सकते हैं!
"रिश्तेदार से तुम्हारा क्या तात्पर्य है?" कांति ने कहा, जो अब पूरी तरह जागृत हो चुका था।
अनुपना ने उत्तर दिया, ``सापेक्षता का सिद्धांत!"
"तो, उन्हें क्या कहना था? रिश्तेदार, रिश्तेदार, रिश्तेदार!" अपने बेटे को आठ महीने में कन्नड़ बोलते देखकर वह निराश हो गई, मानो दुनिया में कोई और भाषा ही न हो।
अब वह और भी ध्यान से देखने लगी। उसका बेटा बिना इस्त्री की हुई सफेद लुंगी पहने आया था। बरगद के पेड़ पर आधी आस्तीन वाली सादी सफेद कमीज पहने, धूप, कीचड़, ठंडे पानी, रेत और गोबर के कारण उसका पूरा शरीर और चेहरा काला पड़ गया था। उसके चेहरे की त्वचा भी छिल गई थी। ऐसा लग रहा था मानो किसी नाई ने उसके बाल काट दिए हों।
"क्या यहाँ ऐसा कोई नियम है जो कहता है कि यहाँ नहाने के लिए साबुन का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए?" उसने पूछा।
"ऐसा कुछ नहीं है। कुछ लोग इसकी इस्तेमाल करते हैं, है ना!" उसने जवाब दिया।
"मिट्टी के शरीर को धोते समय किसी ने साबुन का इस्तेमाल नहीं किया!"
“अम्मी! मिट्टी में साबुन लगाने की कोई ज़रूरत नहीं है! मिट्टी में कोई कीड़े-मकोड़े नहीं हैं जो त्वचा को नुकसान पहुंचा सकें, और न ही कोई रसायन हैं! हमारे डॉक्टर चंद्रशेखर आपको बता देंगे! वे एम.बी.बी.एस. हैं। उन्होंने खुद यह किया है। उन्होंने मुझे बताया - डोडप्पा ने कभी अपने शरीर पर साबुन नहीं लगाया, बल्कि कभी-कभी बेसन या शिकेकाई पाउडर लगा लेते हैं।”
"डोडप्पा कौन है?"
"पापा, क्या आपने मम्मी को नहीं बताया कि डोडप्पा कौन है?" अनुपन ने अपने पिता से पूछा।

वह समझ गई थी। लेकिन उसने यह दिखाया नहीं। इसके बाद भी, वह कुछ देर तक हिंदी में बोलती रही और वह कन्नड़ में। उसे यह गहरा एहसास हुआ कि उसका बेटा, जो उससे केवल हिंदी या अंग्रेजी में बात करता था, अब उससे दूर होता जा रहा है। क्या वह हिंदी-अंग्रेजी पूरी तरह भूल गया है, या क्या? वह उसके पास आई और उसके हाथों, गर्दन, गालों और बालों पर हाथ फेरते हुए पूछा,
"उंह-गर्म-ठंडा पानी-मिट्टी-जाने दो! क्या आप रात को सोने से पहले कोई क्रीम लगाना चाहते हैं?"
"यह सब तो महिलाओं का काम है!" उसने गुस्से से कहा।
अन्नाय्या को बाहर से रविंद्र को पुकारते हुए सुनकर रविंद्र ने उसे अंदर बुलाया। अन्नाय्या सफेद खादी की लुंगी और सफेद खादी की नेहरू कमीज पहने हुए अंदर आए। उनके बाल पूरी तरह मुंडे हुए थे। उन्होंने कांति की ओर मुड़कर कहा,
"क्या आपको थोड़ा आराम मिला, या नहीं?"
बाद में, अनुप और कांति को वहीं छोड़कर, अन्नय्या रविंद्र को लेकर वहां से चले गए।
जब वे दोनों कमरे में अकेले थे, अनुप ने कहा,
"जानते हो मेरे दोस्त ईरप्पा ने क्यों कहा? उसने पूछा, 'तुम्हारी माँ ने अपने बाल बच्चों की तरह क्यों कटवा लिए?' मैंने उसे कितनी बार समझाया, 'अरे, ये क्रॉप कट नहीं है, ये बॉबकट है!' लेकिन उसे दोनों में फर्क ही नहीं पता!"
कांति का पूरा शरीर कांप उठा। ऐसे मूर्खों के बीच पले-बढ़े उसके बेटे का क्या होगा? अब उसके मन में उठ रही अकारण बेचैनी धीरे-धीरे आकार लेने लगी।
वह भावुक हो गई। अनुप का हाथ अपने हाथ में लेकर उसने पूछा,
"बेटी, क्या मैं तुमसे कुछ पूछ सकती हूँ? सच-सच बताओ। अपने पापा के सामने नहीं!..."
``क्या? मैं किसी से नहीं डरता! शेर का बच्चा किसी से नहीं डरता, यही तो विवेकानंद ने कहा था!"
``क्या तुम यहाँ खुश हो? यहाँ की मिट्टी... यहाँ का काम... यहाँ गाँव वालों के साथ रहना... सच बताओ, जान! क्या तुम यहाँ उतनी ही खुश हो जितनी बैंगलोर में थी? क्या तुम बैंगलोर की तरह जीना नहीं चाहती... किसी अच्छे स्कूल में जाना नहीं चाहती?'
अनुप का मन असमंजस में था। उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या जवाब दे। जब वह इस मानसिक स्थिति में था, तभी वह आगे आई और उसे अपने सीने से लगा लिया। उसकी आँखों में आँसू भर आए। सिसकते हुए, वह उसके सलीके से कटे बालों में हाथ फेरने लगी।
लेकिन अब वह रोना भी नहीं रोक पा रहा था।
"मुझे पता है बेटा... तुम यहाँ खुश नहीं हो!" उसने उसे दिलासा देने की कोशिश की और उसे प्यार से सहलाया।

■

अन्नय्या ने रविंद्र को उसके कमरे में ले जाकर चटाई पर बिठाते हुए पूछा,
"तुम क्या कहती हो? तुम्हें कैसा लग रहा है, लेक?"
"यह वाकई बहुत अच्छा लग रहा है! मैंने उसे उत्साह से मिट्टी में काम करते देखा! अभी भी, जब मैं उससे बात कर रहा था, वह कह रहा था - भौतिकी में आगे की पढ़ाई के बाद वह एक महान वैज्ञानिक बनेगा! - आइंस्टीन से भी बड़ा वैज्ञानिक!"
मुझे लगता है, इस उम्र में बच्चों के मन में ऐसे सपने बन जाते हैं कि आधा काम तो हो ही जाता है! वो मुझसे ये भी कहता है – मैं आइंस्टीन के सिद्धांत को सुधारूँगा! कभी-कभी कहता है, मैं विवेकानंद जैसा महान तपस्वी बनूँगा और संयुक्त राष्ट्र में जाकर भाषण दूंगा ताकि कोई भी देश किसी दूसरे देश पर हमला न करे! कभी-कभी कहता है – अगर मैं इस देश का प्रधानमंत्री बन गया, तो शराब, बीड़ी,

सिगरेट और गलत राह दिखाने वाली फिल्मों पर प्रतिबंध लगा दूंगा! वो ये सब सिर्फ मुझे प्रभावित करने के लिए नहीं कहता। वो सचमुच ऐसा महसूस करता है! पढ़ाई में भी वो बहुत होशियार है। शारीरिक मेहनत भी वो पूरे मन से करता है। इसके अलावा, उसमें एक नायक के गुण हैं। उसे इतना काम और इतने लोगों की ज़िम्मेदारी सौंपी जाती है कि उसे पीछे मुड़कर देखने की जरूरत ही नहीं पड़ती। वो बिलकुल सही-सही जानता है कि किसी से कितना और कैसे काम लेना है! वो तय समय से एक घंटा पहले काम खत्म करके निकल जाता है। काम पूरा करते समय उसका व्यवहार निर्दयी होता है। "इस पर ध्यान देना आवश्यक है। इसके बजाय, उसे यह विश्वास दिलाना चाहिए कि उसके सहकर्मियों को उससे प्रेमपूर्वक काम करवाना चाहिए। उसमें अधिकार का दुरुपयोग करने का आपराधिक स्वभाव है! उसमें प्रेम और करुणा की कमी है। लेकिन यदि सही संस्कृति स्थापित हो जाए, तो यह आपराधिक प्रवृत्ति धीरे-धीरे दूर हो जाएगी।"
जब रविंद्र को अनुप के बैंगलोर में बिताए दिन याद आए, तो उन्हें दृढ़ विश्वास हुआ कि आज उसकी स्थिति कहीं बेहतर है। रविंद्र को पूरा यकीन था कि अगर अनुप यहाँ तीन साल और रहता, तो अन्नाया उसमें आमूलचूल परिवर्तन ला देता।
बोलते-बोलते अन्नाय्या ने महाविद्यालय के बारे में बात शुरू कर दी। सौद्रगौड़ा के पोते, परशुरामगौड़ा, जिन्होंने महाविद्यालय के लिए एक सौ बीस एकड़ भूमि दान की थी, रामनगर में मुखिया के रूप में कार्यरत थे। अन्नाय्या ने यह भी कहा कि यदि उन्हें पिछड़ी जाति का लाभ मिल जाए, तो वे शीघ्र ही मामलदार बन जाएंगे।
उनकी उम्र बत्तीस साल होगी। गाँव में खेत, बाग-बगीचे, नारियल के पेड़ - सब कुछ है। उनकी मौसी - यानी सौद्रगौड़ा की बेटी। वह विधवा हैं और यहीं रहती हैं और खेत-बाड़े की देखभाल करती हैं। उनको कोई संतान नहीं है। परशुरामगौड़ा कभी-कभार गाँव आते हैं और अपनी संपत्ति का प्रदर्शन करते हैं। सरकारी नौकरी करते हुए उन्होंने खूब रिश्वत लेकर बेंगलुरु में दो मकान बनवाए और उन्हें किराए पर दे रखा है। अगर कोई पूछे कि दो साल पहले तक क्लर्क रहे परशुरामगौड़ा को इतना पैसा कहाँ से मिला, तो वे कहते हैं - यह गाँव की ज़मीन से आया है। जब वे हेड क्लर्क थे, तब इतना पेट्रोल जलाते थे और मोटरसाइकिल पर गाँव में घूमते थे, उनके पास इतनी ज़मीन नहीं थी, यह बात कोई भी आसानी से बता सकता है। उन्होंने कार नहीं खरीदी क्योंकि उन्हें लगता था कि तहसीलदार के अधीन यह नौकरी करना उनके लिए ठीक नहीं है - जब मालिक के पास कार ही न हो, तो बात अलग है! उन्हें तहसीलदार के पद पर पदोन्नति मिली, उसी दिन उनके दरवाजे पर एक कार आई! ये सारी खबरें सिर्फ गांव में रहने वाली विधवा से ही सुनने को मिलती हैं। उन्हें ज्यादा कुछ समझ नहीं आता। जो कुछ भी उनके कानों तक पहुंचता है, बेचारी अपने पड़ोसियों और राहगीरों को बता देती है! फिर ये खबर हम तक भी पहुंच जाती है। मैं भी गांव गया था और उनसे चार वाक्य बात की थी। जब मेरे दादा सौद्रगौड़ा ने मुझे स्कूल शुरू करने के लिए जमीन दी थी, तो मैंने उनसे कहा था कि आपको भी समिति का सदस्य होना चाहिए। लेकिन वे तैयार नहीं थे। आप खुद देख लीजिए - उन्हें यह कहने की पूरी छूट थी! वे एक भी बैठक में नहीं आए। अगर आते भी, तो कौन जानता है कि उन्हें कुछ समझ आता या नहीं!
मैंने खुद परशुरामगौड़ा को सदस्य बनाया ताकि उस परिवार का कोई सदस्य इस संगठन में रहे। शुरू में उनका व्यवहार ठीक था। जब भी वे किसी बैठक में आते, स्कूल के फायदे के लिए कुछ सुझाव भी देते थे। लेकिन पिछले एक साल में उनका व्यवहार बदल गया है। हाल ही में उन्होंने सवाल उठाए हैं - उनके दादाजी ने स्कूल के लिए जमीन दी थी - नारियल की खेती से मुनाफा कमाने के लिए नहीं। अगर यही करना था, तो हम भी नारियल की खेती करते! यह अन्नागौड़ा की निजी संपत्ति नहीं है - मैंने सुना है कि वे कह रहे थे कि जब मन करेगा, मैं सरकार को सूचित

कर सब कुछ छीन लेगा! सौदगौड़ा ने अपने गांव के कल्याण के लिए दान दिया था - किसी गांव के बच्चों को खिलाने के लिए नहीं - यही उनका मुद्दा है। इस स्कूल से हमारे गांव को क्या फायदा हुआ है? हमें उनकी मदद क्यों करनी चाहिए? - वे इस तरह की बातें कहकर गांव वालों को परेशान कर रहे हैं। लोगों के मन में नेक भावना जगाना और उसे बढ़ाना मुश्किल है - लेकिन छोटी सोच को भड़काना बिलकुल भी मुश्किल नहीं है। ऐसा करके तो वो गाँव से स्कूल को मिलने वाली मदद को रोकना चाह रहे हैं! हमें इस गाँव से किसी और तरह की मदद की ज़रूरत नहीं है। लेकिन कभी-कभी हमें मज़दूरों की ज़रूरत पड़ती है। अगर उन्हें याद आ जाए तो वो ये मदद रोक सकते हैं। क्या हमने ऊपर की तरफ बांध बनाकर पानी जमा नहीं किया है? वो उस पर भी आपत्ति जताते हैं, कहते हैं। संक्षेप में, वो हर बात में कोई न कोई बहाना बना रहे हैं। अगर वो सख्ती से मना करें तो सौ बहाने ढूंढ लेंगे! मैं ही हूं जो उनसे बात करके, उन्हें मीटिंग में बुलाकर और प्यार से उन्हें चुप कराने की कोशिश कर रही हूं। लेकिन इसे मेरी डरपोक होने का संकेत समझकर वो और भी मुसीबत में फंसने की कोशिश कर रहे हैं!..."
यह सुनकर रविंद्र दुखी हो गया। परशुराम गौड़ा अधिनियम के अनुसार कुछ भी करना संभव नहीं है। यह संगठन सरकार से कोई नया धन नहीं लेता है। इसके अलावा, यहां एक पैसा भी गबन नहीं होता है। इसलिए, उन्हें किसी से डरने का कोई कारण नहीं है। फिर भी, स्थानीय लोगों से शिकायत करते रहना काम में सौ तरह की बाधाएं खड़ी करने जैसा है।
अन्नाय्या ने आगे कहा,
क्या आप होन्नाटी को जानते हैं? वह पहाड़ पर बने एक मंदिर में रहते हैं और दिन-रात संगीत का अभ्यास करते हैं। इस संबंध में, समिति के सदस्य के रूप में परशुराम गौड़ा ने एक पत्र लिखा था। पत्र इस तरह से लिखा गया था कि राजस्व विभाग को नोटिस जारी करना चाहिए। आप कहेंगे, यह तो स्वाभाविक है! पत्र में लिखा था –
कॉलेज का मुख्य उद्देश्य गरीब ग्रामीण छात्रों को रोजगार प्रदान करना है - आपने होन्नाटी नामक एक बड़ी फैक्ट्री के प्रबंधक को नियुक्त किया है और संस्था के मूल उद्देश्य को ही नष्ट कर दिया है - इसका खुलासा होना चाहिए - इत्यादि!
सच कहूं तो, जब होन्नाटी काम कर रहे थे, तब उन्होंने इस स्कूल को दो साल तक हर साल दस हजार रुपये दिए थे, विज्ञापन के तौर पर। यह सिलसिला आज भी जारी है। अब भी वे हफ्ते में एक बार स्कूल आते हैं और बच्चों को समूह गायन सिखाते हैं। अगर उन्हें अंशकालिक शिक्षक माना जाए, तो उन्हें कितना वेतन देना पड़ेगा! वेतन की बात छोड़िए – अगर कोई साधक संगीत के लिए इतनी अच्छी तनख्वाह वाली नौकरी छोड़ दे और संन्यासी की तरह जीवन व्यतीत करे और भूख के समय एक पासा चावल और एक रोटी दान करे, तो क्या इससे स्कूल का उद्देश्य ही खत्म हो जाएगा?
`` परशुराम गौड़ा भी यह जानते हैं! मैंने उनके पत्र का जवाब नहीं दिया। अब तो वे अलग-अलग गलतियाँ करने लगे हैं! वे ग्रामीणों का मज़ाक उड़ा रहे हैं – पहाड़ पर स्थित यह मंदिर हलुकेरे गाँव का है – मंदिर में किसी को रहने का अधिकार नहीं है – क्या वडेरय्या रोज़ाना पूजा के लिए जाते समय होन्नाती लोगों के लिए यहां से भोजन नहीं लाते? – यह भी ठीक नहीं है – उन्होंने यह आपत्ति भी उठानी शुरू कर दी है कि भगवान की पूजा के लिए जाते समय उन्हें चाकू नहीं ले जाना चाहिए। यह पहाड़ या मंदिर किसी गाँव या जाति का नहीं है। हालांकि, पुजारी वडेरय्या हलुमत जाति के हैं। इस आधार पर, मंदिर हलुमत लोगों का कैसे हो सकता है? मैंने राजस्व विभाग की फाइलें भी देखी हैं और उन्हें संभाल कर रखा है। लेकिन इन पुरानी फाइलों को खोजने, उनका अध्ययन करने में कितना समय और ऊर्जा

खच्र होती है – खेतों को तालुकों में आवंटित करने में कितना समय और ऊर्जा खच होती है..."
यह सब सुनकर रविंद्र क्रोधित हो गया। उसे यह भी महसूस हुआ कि आजकल परशुराम गौड़ा जैसे लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है। उसे यह प्रवृत्ति बिलकुल पसंद नहीं थी कि लोग अपने पिता या दादा द्वारा किए गए दान का लाभ इसी जन्म में नकद रूप में हड़प लेते हैं। तभी उसे अपने पिता की याद आई। एक तरह से वे बहुत एकांतप्रिय व्यक्ति थे। वे इतने एकांतप्रिय थे कि कभी-कभी अहंकारी भी लगते थे।
अपने दादा द्वारा अस्पताल बनवाने के कार्यक्रम के बाद दिल्ली लौटते समय, रविंद्र ने उनसे पूछा था,
"दादाजी ने एक ही उद्देश्य से दान दिया था - अगर ये लोग इसका दुरुपयोग करते हैं, तो क्या हमें, उनके वंशजों के रूप में, उन्हें जवाबदेह ठहराने का अधिकार है?"
ऐसा सवाल तो आपके मन में आना ही नहीं चाहिए! एक तरफ तो, अगर आप इसे उपहार में देने के बाद फिर से इसमें दखल देंगे, तो यह उपहार नहीं रहेगा। आपके दादाजी के मन में तो यह ख्याल भी नहीं आएगा! मैं उनके मन को अच्छी तरह जानता हूँ!
अप्पा के बोलने का तरीका हमेशा ऐसा ही होता है! सीधा और स्पष्ट! अधिकार होने के बावजूद, वे विनम्र हैं।
रवींद्र ने अन्नय्या को इस घटना के बारे में भी बताया। उन्होंने अन्नय्या को परशुराम गौड़ा की उपेक्षा करने के बारे में भी बताया।
जैसे ही होन्नाटी का ज़िक्र आया, उनके मन में उनसे मिलने की तीव्र इच्छा जाग उठी। अगर अब यह ज़िक्र न भी होता, तो भी वे उनसे मिले बिना वापस नहीं लौटते। लेकिन अब उन्हें एहसास हुआ कि संकाय को लेकर शुरू हुए विवाद में होन्नाटी एक अहम शख्सियत थे।
रविंद्र ने रात में अन्नाय्या के साथ काफी देर तक बातचीत की। अगली सुबह, उसने जल्दी उठकर स्नान और नाश्ता करने का फैसला किया और फिर होन्नाटी से मिलने पहाड़ों की ओर चल दिया।
सुबह उठकर उसने कांति से जल्दी तैयार होने को कहा। कांति ने पूछा,
यह कितनी दूर है?
"यह कुछ मील की दूरी है। लेकिन यह पैदल चलने से ज्यादा चढ़ाई है।"
वहां देखने लायक क्या है?
पहाड़ पर चढ़ना अपने आप में एक अनोखा अनुभव है, वहाँ कुछ देखने मात्र से कहीं बढ़कर! वहाँ से आसपास के क्षेत्र और विशाल आकाश का नज़ारा एक अनूठा अनुभव है। इसके अलावा, होन्नाटी नाम का एक व्यक्ति वहाँ सितार का अभ्यास करने आया है। मुझे लगता है मैंने आपको उसके बारे में पहले भी बताया है..."
कांति पहाड़ों पर जाने के लिए राजी हो गई। वह चाहती थी कि अनुप भी उसके साथ आए। लेकिन उस दिन इमारत की छत के लिए लकड़ियाँ, घास और शिंडी की चटाई बनाने का काम था। अनुप का साथ देना ज़रूरी था। नहीं तो अन्नय्या को जाना पड़ता। इसीलिए रविंद्रन ने उसे आने से रोक दिया।
नाश्ते के बाद, दोनों को चावल, रोटी, सब्जियां, चटनी आदि से भरा हुआ दोपहर का भोजन दिया गया। हालांकि, होन्नाटी का भोजन हमेशा की तरह वडेरया परिवार के साथ जाना था।

■

सड़क के दोनों ओर तंगड़ी के पेड़ उग आए और मक्खियाँ एक बार फिर उनके सिर के ऊपर मंडराने लगीं।
कांति ने हताशा में कहा,

वे कहाँ छिपे हैं, हमारा इंतजार कर रहे हैं?
चढ़ाई करते समय दोनों को खूब पसीना आ रहा था।
रविंद्र को लगभग अठारह या उन्नीस साल पहले की एक घटना याद आई।
उन्होंने अभी-अभी पत्रकार के रूप में काम शुरू किया था। एक दिन, तत्कालीन संपादक झा ने उन्हें फोन किया और कहा,
आप एक युवा पत्रकार हैं। आपकी शैली भी काव्यात्मक है। कई लोग चार धाम यात्रा करने के बाद यहां आते हैं। क्या आप भी एक आम यात्री की तरह यात्रा करेंगे – बिना किसी विशेष सुविधा का लाभ उठाए, जहां संभव हो बस से और जहां आवश्यक हो पैदल चलकर – और एक रिपोर्ट लेकर लौटेंगे? आप इसे प्रत्येक रविवार को अनुपूरकों से पांच-छह भागों में दे सकते हैं। ढेर सारी तस्वीरें भी साथ लाएं।
उस समय रविंद्र भी यह नौकरी पाकर बहुत खुश थे। गंगोत्री-जमनोत्री-केदारनाथ की यात्रा पूरी करने के बाद वे बद्री के कालीकंबलीवाला धर्मशाला गए थे। वहीं उनकी मुलाकात अहमदाबाद के जानी से हुई, जो बगल वाले कमरे में ठहरे हुए थे। कड़ाके की ठंड में भी वे सुबह जलदी उठकर पूजा-अर्चना और जप करने जाते थे। जानी या जोशी? उनका असली नाम क्या था? मुझे याद नहीं। याद करने की कोशिश भी करूं तो उनके सिर पर मंडराती मक्खियां याद करने में बाधा डालती हैं। वे अब भी अहमदाबाद में ही हैं, या कौन जाने उन्होंने नौकरी छोड़कर कोई आश्रम बना लिया हो! उस समय वे भी होन्नाटी की तरह एम.टेक तक पढ़े थे और एक कारखाने में काम करते थे। विदेश जाने के बाद भी उन्होंने काफी प्रशिक्षण प्राप्त किया था। वार्षिक अवकाश पर हर साल बद्री जाना उनकी आदत थी। वहां उनके एक गुरु थे। वे धर्मशाला से एक मील दूर एक पहाड़ी घाटी में डेढ़ खान का मकान बनाकर उसमें रहते थे। वे गर्मियों में बद्री में रहते थे और जब सर्दी शुरू होती थी, तो हरिद्वार या ऋषिकेश चले जाते थे। वे अहमदाबाद से अपनी यात्रा के दस दिन बर्बाद कर देते थे और शेष दिन हर साल अपने गुरु के साथ बैठकर वैदिक ग्रंथ का अध्ययन करने में बिताते थे।
उस साल योगवासिष्ठ का अध्ययन चल रहा था। रवींद्र भी उनके साथ गए और सब कुछ देखा। हिमालयी क्षेत्र। निर्गुण निरंकार के घर में – कैसा घर था वो? एक मंडप जैसा! – वहाँ बैठकर सुनने से कितना गहरा अर्थ समाहित हो जाता था! अगर उसी पुस्तक को पुस्तकालय या अध्ययन कक्ष में बैठकर पढ़ा जाए, तो उसके अर्थ की गहराई का अनुभव संभव नहीं होगा। क्या सच में किसी विशेष स्थान में इतनी शक्ति होती है? उस समय मेरे मन ने पुष्टि की – हाँ! यदि पर्वत पर मंदिर हो, तो साधना और भी गहरी हो जाती है। उस समय रवींद्र ने विस्तृत जानकारी देते हुए जानी और संन्यासी, दो पात्रों का विस्तृत वर्णन किया था। उन्हें उन लेखों की श्रृंखला के लिए बहुत सारे प्रसन्नता भरे पत्र मिले थे! कई लोगों ने अनुरोध किया था – कृपया मुझे उनके पते बताएँ – हम उनसे संपर्क करना चाहते हैं! लेकिन अगर अनुभवी ज्ञान ने यह न कहा होता कि अखबारों में जीवित व्यक्तियों को इस तरह प्रचारित करना गलत है - इससे उनकी तपस्या और साधना में बाधा आती है - हमें यह अधिकार नहीं है - हम किसी को भी पते नहीं बताना चाहते, तो उत्साही रविंद्र सचमुच पते बता देते!
अब जब मैं इस बारे में सोचता हूँ, तो मुझे याद आता है कि रविंद्र ने होन्नाटी और जानी में कई समानताएं देखी थीं। दोनों ने साधना के लिए पर्वतीय चोटियों को चुना था। दोनों बड़ी कंपनियों में मैनेजर के तौर पर काम करते थे। क्या जानी अभी भी काम कर रहे हैं? क्या उनकी शादी हो गई है या वे ब्रह्मचारी हैं? यह बीस साल पहले की बात है। अब मैं कैसे पता लगाऊँ? मैंने अहमदाबाद स्थित दफ्तर में थोड़ी छानबीन की और पाया कि जानकारी हासिल करना नामुमकिन नहीं है। लेकिन अब जब मुझे यह पता चल गया है, तो मुझे क्या करना चाहिए?

कांति पीछे-पीछे चल रहा था। उसने रुककर उसे पास आने दिया। चुपचाप इस तरह चढ़ना उबाऊ होता – उसे लगा कि उसे कुछ कहना चाहिए। पर क्या कहता? वह भी पास आई और बिना कुछ कहे चलती रही। शायद वह बीच में इसलिए रुका क्योंकि उसकी सांस फूल रही थी और आगे चलना मुश्किल होता, इसलिए वह ऐसे ही चलती रही।
बद्री में एक और घटना हुई थी – जी हाँ। उसके बारे में तब लिखा भी गया था। कालीकंबलीवाला धर्मशाला के प्रांगण में एक गोल पात्र रखा था। उसके नीचे एक तख्ती लगी थी जिस पर लिखा था – हमें संन्यासियों को भोजन उपलब्ध कराने में यथासंभव सहायता करनी चाहिए। ऋषिकेश के समय से ही नकली संन्यासियों के बढ़ते प्रभाव के कारण रवींद्र पहले ही अपना सिर उठा चुके थे। उनका दृढ़ मत था कि उन सभी को पुलिस द्वारा पकड़ा जाए और श्रम शिविर में डाल दिया जाए। ऐसे समय में, रवींद्र उस दान पात्र और वहां लगी तख्ती को देखकर और भी क्रोधित हो गए। ऐसे आलसी लोगों को भोजन क्यों दिया जाए? इसलिए उन्होंने धर्मशाला के प्रबंधक से भी बहस की।
उसी दोपहर, धर्मशाला के प्रबंधक ने उन्हें फोन किया,
मैं तपस्वियों को भोजन कराने जा रहा हूँ। मेरे साथ आओ!
रविंद्र भी तुरंत उनके साथ रवाना हो गया।
वे अपने कंधों पर चपातियाँ, चावल और चना दाल लेकर चल पड़े। वे बस्ती से दूर पहाड़ों में स्थित एक गुफा में जाते, बाहर रखी एलयुमीनियम की थाली में चावल या दो चपातियाँ और मुट्ठी भर दाल रखते, और बिना कुछ बोले दूसरी गुफा की ओर चल देते, जहां वे बाहर रखी थाली में चपातियाँ या चावल और दाल रख देते। प्रबंधक को पता था कि किस गुफा के बाहर चपातियाँ रखनी हैं और किस गुफा के बाहर चावल। साधकों का बुजुर्ग समूह चपातियों के बजाय चावल खाता था। कुछ लोग केवल चावल खाते थे क्योंकि उन्हें चपातियाँ खाने की आदत नहीं थी।
जब प्रबंधक गुफा के बाहर पंद्रह थालियाँ भोजन लेकर लौटा, तो उसने कहा,
"हम उन झूठे तपस्वियों के बारे में भी जानते हैं जिनसे आप इतने क्रोधित हैं। लेकिन यह असंभव है कि इन गुफाओं में रहने वाले झूठे हों। आध्यात्मिक साधना में कौन किस स्तर तक पहुंचा है, यह हमारा प्रश्न नहीं है। इस प्रकार, लोगों से दूर, मृत्यु के समान एकांत में रहना, निश्चित रूप से साधना की मानसिक प्रेरणा है, है ना? ऐसे साधकों के शरीर को आवश्यक भोजन – चाहे वह थोड़ी मात्रा में ही क्यों न हो – उपलब्ध कराना किसकी जिम्मेदारी है? क्या साधकों की देखभाल करना समाज का कर्तव्य नहीं है?"
उस समय, रविंद्र को ऐसा अनुभव हुआ जैसे उनकी आँखों से फुंसियाँ निकल रही हों और उनकी दृष्टि वापस आ गई हो। मठ लौटते समय, उन्होंने वापसी यात्रा के लिए पर्याप्त धन बचा लिया था और बाकी पैसे एक बर्तन में डाल दिए थे।
कई पाठकों ने श्रृंखला के इस भाग के बारे में रुचि दिखाते हुए हमें पत्र लिखे। कुछ ने धर्मशाला का पता पूछा था। हालांकि, झा ने तुरंत हमें सलाह दी कि हम अगले रविवार के अंक में पता शामिल कर दें। झा सचमुच एक संतुलित संपादक हैं! यह संतुलन केवल उम्र से नहीं आता, बल्कि अध्ययन और संस्कृति से भी आता है!
इस घटना के एक साल के भीतर ही वे सेवानिवृत्त हो गए। क्या वे अब जीवित होते? निन्यानवे वर्ष – यह निश्चित रूप से कहना असंभव है।
आस-पास के पेड़ गायब हो गए और एक खुला मैदान दिखाई दिया। उस खुले मैदान में विशाल पेड़ों की पत्तियाँ और शाखाएँ हवा के कारण तेज़ी से हिल रही थीं। सामने एक पहाड़ दिखाई दे रहा था।
रवींद्र ने कांति का ध्यान अपनी ओर खींचते हुए कहा,
वही पहाड़! अगर आप उस पर चढ़ेंगे, तो चोटी पर एक मंदिर है। अगर आप वहां खड़े होकर चारों ओर देखेंगे, तो कितना शानदार नज़ारा दिखेगा! अगर आप वहां

से देखेंगे, तो नीचे झील बिलकुल बसावनपुर की हमारी झील जैसी दिखेगी। लेकिन वहां बादल नहीं होने चाहिए। अगर सूरज की किरणें उस पर पड़ें, तो वह चांदी की चादर जैसी लगेगी!..."
"क्या मुझे अभी भी इस पहाड़ पर चढ़ना होगा?"
"इस पहाड़ पर चढ़ना वाकई बहुत मज़ेदार है! हवा कितनी ठंडी है, है ना! और जब ये पेड़ खिलते हैं, तो कितनी प्यारी खुशबू आती है। तो चलिए मैं आपको बताता हूँ!..." उसने उसे मनाने की कोशिश करते हुए कहा।
``पहाड़ी ने कहा था कि यहाँ रोपवे होना चाहिए। ये कितना पिछड़ा पहाड़ है!..." उसके चेहरे से साफ पता चल रहा था कि वह दबाव से थक चुकी है। लेकिन जैसे-जैसे वह मंडप के पास काले पत्थर के पहाड़ पर चढ़ती गई, उसके चेहरे पर जिज्ञासा भी झलकती रही। सुहावनी हवा से उसें थकान महसूस नहीं हुई।
जब वे पहाड़ी की चोटी पर पहुंचे, तो वहां स्थित मंदिर से सतारी की आवाज़ सुनाई देने लगी। रवींद्र, जो संकेत थी, ने उसे चुप रहने को कहा और खुद अपनी चप्पलें उतारकर मंदिर की दीवार से टेक लगाकर बैठ गया। उसने भी अपनी चप्पलें उतारकर चुपचाप उसके बगल में बैठ गई। कुछ देर तक आवाज़ें सुनने के बाद, उसने कांति के कान में फुसफुसाया,
``मलहार?"
``अहेम... मेघ..." उसने भी हलके से जवाब दिया।
वह जानता था कि संगीत के बारे में वह उससे कहीं अधिक जानती है। रविंद्र का संगीत ज्ञान उतना ही था जितना वह बचपन में सुन पाता था। लेकिन उसने चार-पाँच साल तक गुरु से सितार का अध्ययन किया था। इसीलिए वह संगीत की तकनीक और व्याकरण को समझती थी। शादी के बाद रविंद्र ने कई बार उससे इस पर अधिक ध्यान देने का आग्रह किया था। लेकिन उसने ध्यान नहीं दिया। अनुप के जन्म के बाद, घर के काम और अन्य सभी जिम्मेदारियों को संभालते हुए, उसके पास समय नहीं था। बैंगलोर में, उसे सितार का कोई गुरु भी नहीं मिला था। वहां का वातावरण भी हिंदुस्तानी संगीत के अनुकूल नहीं था। हाल ही में, वह कभी-कभी रविंद्र पर आरोप लगाती थी।
"बैंगलोर आने से मेरा संगीत बर्बाद हो गया..."
यहां तक कि रविंद्र भी इस बात पर बहस किया करता था।
"वाह! मुझे पता है कि आपने इससे पहले कितना अभ्यास किया था और आप किस स्तर तक पहुंच चुके थे!"
अब दोनों एकाग्रता से सितार सुनने लगे। रविंद्र ध्यान से देख रहा था – क्या इस बार होन्नाटी के सितार वादन में पिछली बार से ज़्यादा स्पष्टता थी? यद्यपि यह सच था कि पहाड़ों के शांत और विशाल वातावरण में धुनें स्वतः ही एक अकल्पनीय शक्ति प्राप्त कर लेती हैं, फिर भी उसे लगा कि होन्नाटी का सितार अभ्यास भी प्रगति कर रहा है। वह अपने चारों ओर फैले विशाल आकाश में गूंजती सितार की ध्वनि को ध्यान से सुनने लगा।
कांति भी एकाग्र होकर होन्नाटी के सितार वादन को सुन रही थी। उसके मन में वैसी ही आशा उमड़ रही थी जैसी बादलों के छंटने के बाद बारिश की उम्मीद में जागती है। उसे वे दिन याद आ गए जब वह सितार बजाना सीख रही थी।
सुबह 10:30 बजे कॉलेज, शाम 5:30 से 8 बजे तक सतारी की क्लास। रियाज़, हफ्ते में तीन दिन घर आने वाले तबला वादक के साथ। शुरू में तो उसे ये सब मम्मी-पापा की मजबूरी लगती थी, पर बाद में उसे इसका स्वाद अच्छा लगने लगा। लेकिन उसके कुछ ही समय बाद उसकी शादी हो गई। आखिर पहाड़ों पर कानों में गूंजने वाली सितारी की ये धुनें हमें अपनी पूरी जिंदगी की याद क्यों दिला देती हैं? ये एहसास कि हमारी जिंदगी भी किसी न किसी कला से गहराई से जुड़ी हुई है, उसके मन में बार-बार आता रहा।

सितार की मधुर ध्वनि जब तक गूंजती रही, उसे एक गहरी अनुभूति हुई... उसे शादी नहीं करनी चाहिए थी। किसी ने उसे मजबूर नहीं किया था। पढ़ाई खत्म हो चुकी थी—बाईस साल बीत चुके थे—अगर अब शादी नहीं करनी थी, तो फिर क्या करना था?—यह सामाजिक दायित्व ही उसकी शादी का कारण था। वरना...वह क्या करती—उसे इसका कोई जवाब नहीं सूझ रहा था। अंतर्मुखी होने के कारण, वह सितार की बारीकियों, आलाप, मन की कसरत, और उसके संवाद को नहीं समझ पाई थी। उसका मन अब एक ही विचार में डूबा हुआ था—अगर शादी न की होती, तो मैं ज़रूर सितार वादक बनती!—यह जानते हुए भी कि संगीत से उसका इतना गहरा लगाव पहले कभी नहीं था, वह पूरी तरह से इसी विचार में खो गई।
सतारी की आवाज़ ने रविंद्र को भारत भर में फैल रहे कुछ रुझानों के प्रति अधिक जागरूक कर दिया। हमारे परदादाओं, दादाओं और पिताओं ने देश या समाज के लिए जो कुछ भी किया, उसके बदले में ठोस परिणाम की अपेक्षा करना—सिर्फ अपेक्षा ही नहीं, बल्कि उसके लिए कुछ भी करने की चाहत—हर जगह दिखाई देती है, देश के शीर्ष नायकों से लेकर परशुराम गौड़ा तक! गांधीजी के किसी भी पुत्र ने राजनीति में प्रवेश नहीं किया। क्या ऐसा हो सकता है कि गांधीजी ने स्वयं उन्हें राजनीति में आने की अनुमति दी हो? रविंद्र, जो पूरे देश और उसकी समस्याओं के बारे में सोच रहे थे, सतारी की आवाज़ के पीछे एक निराशाजनक पृष्ठभूमि थी।
जब उन्हें होश आया, तो उन्होंने महसूस किया कि उन्हें भीतर फिर से उसी राग की शुरुआत सुनाई दे रही है। लेकिन अब यह आलाप-जोड़-जला की सामान्य लयबद्धता में नहीं था – उन्हें लगा कि होन्नाटी उसी भाग को बार-बार बजा रहे हैं। हर धुन, हर स्वर, बार-बार तब तक जब तक उनका मन संतुष्ट नहीं हो गया, शायद वह अपने गुरु द्वारा मुंबई जाने के दौरान सिखाई गई बातों को आत्मसात कर रहे थे। चाहे कितना भी समय लगे, रविंद्र ने फैसला किया कि जब तक होन्नाटी खुद सितार बजाना बंद नहीं कर देते, तब तक वह अंदर नहीं जाएंगे, इसलिए वह वहीं बैठे क्षितिज की ओर देखते रहे। उन्होंने बगल में देखा –
कांति दीवार के सहारे खड़ा था।

■

कुछ समय बाद ऐसा लगा मानो कोई पहाड़ पर चढ़ गया हो। लाल किनारी वाली सफेद धोती, बनियान के ऊपर एक लबादा, एक हाथ में चार खानों वाला पीतल का टिफिन बैग और दूसरे हाथ में एक छोटी टोकरी (जिसमें पूजा-पाठ की सामग्री थी) लिए हुए, उसने तुरंत समझ लिया कि वह वडेरय्या पुजारी है। रवींद्र को देखते ही उसने पूछा,
"क्या आप पूजा के लिए रुके थे? कौन सा गाँव?"
उस आवाज को सुनकर कांति जाग उठी। रविंद्र ने कहा,
"बसवनपुर..."
"बसवनपुर? आपका मतलब कौन सा है? और मुझे कैसे नहीं पता?" उसने उन दोनों को देखते हुए पूछा, जो अपनी जगह पर जमे हुए थे।
मैं बैंगलोर में था। मैं अभी-अभी विश्वविद्यालय में आया था..."
"हाँ! तो ठीक है! क्या आपने पहाड़ पर व्यर्थ ही चढ़ाई की?"
रविंद्र ने भगवान को यह बताने का सोचा कि वह प्रार्थना करने आया है, लेकिन उसे याद आया कि वह फूल, नारियल, कपूर या फल नहीं लाया है। इसलिए वह बिना कुछ बोले चुप रहा।
वडेरय्या मंदिर में दाखिल हुए। रविंद्र को शर्मिंदगी महसूस हुई। भारत में, आमतौर पर सभी छोटे-बड़े पहाड़ों और पहाड़ियों पर कोई न कोई देवता विराजमान होते हैं। अक्सर, उन पहाड़ों का नाम भी उसी देवता के नाम पर रखा जाता है। पहाड़ पर चढ़ना भगवान के पास जाने जैसा है, गाँव वाले यही समझते हैं। चाहे मन को

आनंद, रोमांच, मनोरंजन जैसी हर चीज की चाह हो, अगर वहाँ भगवान का स्थान नहीं है, तो कोई भी गाँव वाला पहाड़ पर नहीं चढ़ेगा। यह सच है कि मैं होन्नाटी से मिलने आया हूँ, लेकिन पहाड़ पर चढ़ते समय जो आनंद मुझे मिला, वह अलग ही था। जो भी हो, यहाँ एक देवता है – उनके लिए दो अगरबत्ती, दो केले और चार जंगली फूल लाने का ख्याल मुझे कभी आया ही नहीं, यह सच है! सिर्फ अभी ही नहीं, पहले दो बार आने पर भी मैंने इस बात पर ध्यान नहीं दिया था। तो अब, जब पुजारी ने पूछा, "क्या आप पहाड़ पर चढ़ने आए हैं?" तो मुझे शर्मिंदगी क्यों महसूस होनी चाहिए?
वडेरय्या के सवाल में भी कोई व्यंग्य या कड़वाहट नहीं थी। जब उन्होंने हमें देखा, तो उन्हें एहसास हुआ कि 'यह समूह सिर्फ पहाड़ चढ़ता है - मजे के लिए पहाड़ चढ़ता है', बस! और उन्होंने अपनी बातों से यह साबित भी कर दिया। दादा-दादी या सोदरगौड़ा बिना मंदिर के कभी पहाड़ पर नहीं चढ़ते। अगर चढ़ते भी, तो वहाँ एक देवता की मूर्ति स्थापित करते।
बाहर हो रही बातचीत सुनते ही होन्नाटी ने सितार बजाना बंद कर दिया। अंदर आए वडेरय्या ने उनके चेहरे पर सवालिया भाव देखा और कहा,
"वे बैंगलोर से हैं। वे कॉलेज में पढ़ने आए थे। वे यहां पहाड़ देखने आए थे।"
उसने भोजन का डिब्बा वेदी के सामने रखा, फूलों और पूजा की वस्तुओं की टोकरी गर्भगृह की दहलीज पर रखी, आगे झुककर गर्भगृह का दरवाजा खोला, वहां रखे कुंड के पानी से अपने हाथ-पैर धोए और पीछे की ढलान से नीचे उतर गया।
गुस्से में बाहर आए होन्नाटी उन दोनों को देखकर हैरान रह गए। उन्होंने पूछा,
आप कब पहुंचे?
"लगभग दो घंटे लगे होंगे। मैंने मेघ राग का इतना विस्तृत संस्करण पहले कभी नहीं सुना।"
हालांकि वह रविंद्र की बातों से संतुष्ट थे, उन्होंने कहा,
"मैंने अभी तक इस पर पूरी तरह महारत हासिल नहीं की है..." फिर वह कांति की ओर मुड़ा और बोला, "रवींद्र कह रहे थे कि तुम यहाँ कभी न कभी ज़रूर आओगे..."
कांति को अच्छा लगा। उसे कुछ-कुछ अंदाज़ा था कि होन्नाटी पच्चीस-छब्बीस साल का कोई नौजवान होगा। लेकिन अब उसे देखकर वह बहुत हैरान रह गई। उसका चेहरा साफ़-सुथरा था, दाढ़ी सलीके से रखी हुई थी और पीछे के बाल लंबे थे। पता नहीं, उसने जानबूझकर तीन महीने तक बाल बढ़ाए थे, क्योंकि यहाँ कोई अच्छा नाई नहीं था! सफ़ेद धोती-बनियां। उसकी उम्र भी लगभग कांति के बराबर ही होगी – यानी लगभग सैंतीस-अड़तीस। इतनी उम्र कैसे हो सकती है? – वह पूरी तरह से उलझन में थी – फिर भी, खुद को ढकते हुए उसने 'नमस्ते' कहा।
रवींद्र को यह एहसास हो गया था कि होन्नाट्टी को शायद यह पता नहीं था कि परशुराम गौड़ा उसके मंदिर में रहने पर आपत्ति जता रहे थे। अगर होन्नाट्टी की उम्र लगभग पच्चीस वर्ष होती, तो कोई समस्या नहीं होती। कांति को यह भी समझ आ गया था कि इसके बाद उसके लिए नई नौकरी ढूंढना और नया जीवन शुरू करना आसान नहीं होगा।
होन्नाटी ने अपने पास मौजूद चटाई बिछाई और उन दोनों को बैठने को कहा। उसने टिफिन से अपना खाना निकाला, खाली डिब्बा फेंका और उसे दीवार के सहारे रख दिया। रविंद्र ने उससे कहा,
"आप खा लीजिए। हमने सुबह नाश्ता कर लिया था। उन्होंने दोपहर के भोजन के लिए भी खाना पैक कर दिया था। हम आपका डिब्बा भी ला सकते थे—लेकिन हमें याद नहीं आया।"

"वडेरायों को यहां आना ही होगा। जब तक यहां उनकी पूजा समाप्त नहीं हो जाती, मैं कुछ नहीं खाता..." होन्नाटी ने कहा।
"क्या ईश्वर के प्रति भक्ति बढ़ी, या कुछ और?"
"जितना अधिक क्रोध से प्रवेश करने का प्रयास किया जाता है, उतना ही जोगना के चरणों में स्वयं को अर्पित करने की इच्छा प्रबल होती जाती है। और यदि कोई जोगया में विश्वास नहीं करता, तो वह इस पर्वत पर दिन-रात अकेले कैसे रह सकता है?"
हालांकि होन्नाटी इस पर हंस पड़ा, लेकिन रविंद्र जानता था कि उसने यह जवाब गंभीरता से दिया था।
वडेरय्या पानी से भरा एक घड़ा लेकर आए। उनकी कमर पर एक गीला कपड़ा लिपटा हुआ था। वे गर्भगृह में गए और वहाँ रखी छोटी झाड़ू से गर्भगृह को साफ़ किया, देवता को अर्पित की गई भेंटों को अपने हाथों से इकट्ठा करके बाहर पान के पेड़ के नीचे फेंक दिया, शिवलिंग को ताज़े पानी से मला, गर्भगृह का सारा पानी निकाल दिया, शिवलिंग पर विभूति लगाई, हल्दी और केसर चढ़ाया, तंगड़ी के फूल और पान के पत्तों से शिवलिंग की पूजा की, केले का भोग लगाया, कपूर आरती की और बाहर आ गए! और उन्होंने वहाँ मौजूद तीनों को मंगला आरती दी। रवींद्र ने तहान में एक रुपये का सिक्का डाला और कपूर की लौ पर हाथ फेरकर प्रणाम किया। उन्होंने कांति को भी एक रुपये का सिक्की दिया। वडेरय्या का काम पूरा हो गया। अगर वहाँ कोई नहीं होता, तो शायद वे होन्नत्ती से कुछ हल्की-फुल्की बातें करते। धोती पहनने, बनियान पहनने और होन्नाटी परिवार को विदाई देने के बाद, वह एक खाली बक्से और एक टोकरी के साथ पहाड़ से नीचे उतरने लगा।
बाद में, होन्नाटी खाने के लिए बैठ गईं। कांति-रवींद्र ने भी अपनी रोटी और चटनी निकाल ली। कांति का ध्यान सितार पर था। उनके मन में इस बात का दुख था कि उन्होंने सितार को बीच में ही छोड़ दिया था। अनजाने में ही सही, लेकिन इस तरह से कि किसी को पता न चले, वह होन्नाटी को देख रही थीं।
होन्नाटी उत्साह से रवींद्र को अनुपम के बारे में बता रही थी।
"इस उम्र के बच्चे ही कल कुछ करेंगे! संगीत की कक्षा में वह मुझसे दूर नहीं हटता। वह बीच-बीच में यहाँ आता है... वह मुझसे पूछता है कि क्या मैं उसे सितार बजाना सिखा सकती हूँ। अगर मैं बजाती हूँ, तो वह चुपचाप बैठकर सुनता है। बीच-बीच में वह कहता है... मैं तुम्हारे जैसा बनूंगा... मैं शादी नहीं करूंगा! विवेकानंद के आदर्श उसके मन में गहराई से बसे हुए लगते हैं। उसमें बहुत आत्मविश्वास है - लेकिन एक ही बात है! उसे दिखावा करने की बहुत इच्छा है! वह तारीफें सुनकर बहुत खुश होता है! मैं उसकी बहुत प्रशंसा करती हूँ।"

■

कॉलेज आने के बाद से ही विवेकानंद उसके मन में परेशानी का सबब बने हुए थे। अनुप एक कैबरे देखने गया था – मैंने उसे पैसे दिए थे। उसे पूरा यकीन था कि अनुप को हम दोनों को सज़ा देने के लिए ही उस स्कूल में भेजा गया था। मिट्टी, कीचड़, गोबर, वही चावल की खिचड़ी जो कैदियों को दी जाती थी, वही लाल चावल की खिचड़ी जो सफाईकर्मी पकाकर खाते हैं, वही दालें – जिसे सर-अमटी-हुली कहते हैं, आदि! ऐसा ब्रह्मचारी गुरु – बच्चों के मन पर कैसा दबाव डालता है... उन्हें यह एहसास दिलाता है कि 'हम भी इसमें रुचि रखते हैं' – गांधीजी! विवेकानंद!! एक शेर! शेर का बच्चा! वही उपदेश जो वह गरीब बच्चों को दिया करता था – वही मेरी अनुप दिन-रात थी – उसे सज़ा मिली, इसीलिए उसे वहाँ भेजा गया!
कुछ ही दिनों में, उसके मन में मौजूद भावनाओं का भ्रम पूरी तरह से दूर हो गया और कुछ मुद्दे स्पष्ट होने लगे।

एक रात, खाना खाने के बाद, दीपक बुझाए बिना, वह मच्छरदानी में घुस गई और रविंद्र की छाती पर हाथ रखकर पूछने लगी,
"क्या मैं आपसे एक सवाल पूछ सकती हूँ? क्या आप मुझे सच बताएंगे?"
आवाज़ में कोमलता तो थी, लेकिन रविंद्र को अपने अनुभव से आभास हो गया कि कुछ और ही चल रहा है। उसने कहा,
"ज़रा सोचो, तुम क्या पूछना चाहते हो! छाती पर हाथ बांधकर क्यों पूछ रहे हो?"
वह गुस्सा गई,
"क्यों? क्या एक पत्नी को प्यार के कारण कभी कुछ नहीं मांगना चाहिए?"
“मनोवैज्ञानिक सवाल पूछते समय ‘झूठ पकड़ने वाली मशीन’ नामक एक उपकरण लगाते हैं। जब कोई व्यक्ति झूठ बोलता है, तो रक्त प्रवाह या चेतना के प्रवाह में कुछ परिवर्तन होते हैं। उपकरण पर लगी सुई इस परिवर्तन को दर्शाती है – यह पता लगा लेती है कि व्यक्ति ने झूठ बोला है। बेशक, मैंने यह सब केवल सुना है, मैंने इसे स्वयं नहीं देखा है!”
"तुम्हारा क्या मतलब है?" उसे उसके शब्दों का सार समझने में थोड़ा समय लगा,
"मैंने अपना हाथ अपनी छाती पर रखा, क्या तुम्हें इस पर कोई आपत्ति है?"
अरे, मैं तो बस मज़ाक कर रहा था...
यह सुनकर वह और भी क्रोधित हो गई। उसे भी ऐसा ही लगा—
हमारी बातें व्यर्थ ही रहीं। अगर हमने वो न कहा होता तो हम वो कर ही देते। चाहे कितनी भी कोशिश कर लें, मुझे महसूस होता था कि हाल ही में उससे बात करते समय मेरे मुँह से इस तरह के टेढ़े-मेढ़े शब्द निकल रहे थे। पिछले दो-तीन सालों से ऐसा ही हो रहा था। उसके बारे में जानकारी इकट्ठा करने, उससे पूछताछ करने, मेरे इरादों पर शक करने और जब उसने मेरे साथ प्यार का खेल खेलना शुरू किया, तब अनजाने में ही मेरे शब्दों में एक तरह की कड़वाहट घुलने लगी।
जैसे ही उसने यह समर्थन दिया, उसने अपने पछतावे को एक तरफ रख दिया और पूछा,
``क्या? सोचो..."
"अगर तुम इस तरह की गुर कर रहे हो तो तुम कैसे पूछ सकते हो?"
वह क्या पूछना चाहती होगी? क्यों न—उसे खुद पूछने दो, अगर वह चाहे तो—और वह भी चैन से सो गया। वह उसका स्वभाव जानता था। वह जानता था कि अगर उसके मन में कुछ है, तो उसे पूरा जवाब मिलने तक चैन नहीं मिलेगा। अगर उसे कुछ कहना भी हो, तो वह चुप नहीं रहेगी—भले ही वह जानता था कि इन सब के बाद, जब तक वह अपनी बात नहीं कह देगा, उसे नींद नहीं आएगी, फिर भी उसने उसकी तरफ पीठ कर ली और अपने शरीर की मांसपेशियों और नसों को आराम देते हुए, मन को अंतर्मुखी करते हुए, सोने की कोशिश करने लगा।
वह काफी देर तक सोती रही, मानो गहरी नींद में हो, और फिर अचानक बोली,
ठीक है! मैं बहुत सोच-समझकर पूछ रही हूं – इसके बाद मैं तुम्हें छुऊंगी भी नहीं – वादा! देखो, अगर तुम मुझसे और मेरे अनूप से नाराज़ हो, तो मुझे जैसे चाहो सज़ा दो – थप्पड़ मारो भी! मैं बिल्कुल मना नहीं करूँगी। तुम उसकी पूरी ज़िंदगी क्यों बर्बाद कर रहे हो?
उसने उसके प्रश्न के लहजे को समझा; लेकिन बिना दिखाए ही उसने पूछा,
``क्या? तुम्हारा क्या मतलब है?"
"अब और इंतज़ार क्यों करें? उस चरवाहे के स्कूल के अलावा, क्या इस देश में कोई और स्कूल नहीं है?"
"इसे इतनी तिरस्कार भरी नजरों से मत देखो। वह सचमुच वहीं बड़ा हो रहा है! वहां के वातावरण में सचमुच जादू है। हमने इसे अपनी आंखों से देखा है, है ना? वहां के सभी गुरु यही कह रहे थे। अन्नाय्या भी यही कह रहे थे।"

मुझे पता था कि तुम यही कहोगी। वो लड़का है! वो बहुत ज़िद्दी है! इसीलिए वो वहाँ चुपचाप काम कर रहा है। मुझे पता है अगर मैं तुम्हें बताऊँ तो तुम्हें अच्छा नहीं लगेगा – इसीलिए वो मुँह बंद करके काम कर रही है! तुमने देखा भी था कि कैसे उसने मुझे गले लगाया और कीचड़ से सने शरीर के साथ रोया!
एक पल के लिए रविंद्र को वह घटना फिर याद आ गई। फिर उसने कहा,
मैं इस तरह के काम को जानती हूँ, इसलिए उसे काम करते देखकर मुझे खुशी हुई। उस समय आपको अपने लिए दुख हुआ होगा, क्योंकि आपने ऐसा काम पहले कभी नहीं देखा था। इतने दिनों बाद अपने बच्चों को देखकर किसी भी माँ का भावुक हो जाना स्वाभाविक है। जब उसने आपको देखा, तो आपकी आँखों में आँसू देखकर उसे भी रोने का मन हुआ!
कांति इस बात से बेहद क्रोधित थीं कि उन्होंने उस मुद्दे को इतनी आसानी से खारिज कर दिया था जो उन्हें इतनी गहराई से परेशान कर रहा था। उन्होंने कहा,
एक माँ के दिल में जो दर्द होता है, वो एक पिता नहीं समझ सकता – खासकर आप जैसे क्रूर पिता! मेरे पिता की आँखें उस दिन आँसुओं से भर आई थीं जब मेरे भाई को आईआईटी कानपुर भेजा गया था! मैंने खुद देखा है! जिस परिवार में प्यार और स्नेह खून में बसा होता है, उस परिवार के पुरुषों की आँखों में भी आँसू आ जाते हैं!
उन्हें समझ आ गया कि उसके आखिरी वाक्य के लिए पैसा किसके पास था। जब उसके पिता सरकारी नौकरी से सेवानिवृत्त हुए, तो उसने रविंद्र से कई बार पूछा था कि वह अपने बचत कोष से उसके लिए कार क्यों नहीं खरीद लेते। लेकिन रविंद्र ने उसकी बात को पूरी तरह अनसुना कर दिया था। अकेले रहने वाला एक बूढ़ा आदमी इतने पैसे का क्या करे? जैसा कि रविंद्र ने कहा, सवाल तो उनका ही था कि इसका क्या किया जाए। अगर हमें कार चाहिए, तो हमें उसके लिए पैसे जुटाने चाहिए - अगर यह संभव नहीं है, तो हमें कर्ज लेना चाहिए। उसके पिता का स्वभाव पहले से ही उदासीन था। उन्होंने बहू बनकर घर आई कांति से कभी प्यार या स्नेह की उम्मीद नहीं की। वह भी पहल करके उन्हें प्यार और सम्मान देने वाली नहीं थी! लेना-देना उसके स्वभाव में नहीं था! उस समय मुझे भी जो महसूस हुआ, क्या वह उससे अनसुना रह गया?
एक दिन, किसी संदर्भ में, उसने उनसे यह भी कहा,
"आप सेवानिवृत्त हो चुके हैं - आप इस पैसे का क्या करना चाहते हैं? अगर आप हमारे लिए एक कार खरीद सकें, तो यह बहुत उपयोगी होगा!"
वे बिना किसी सूचना के चले गए थे। दिल्ली में उनका सरकारी बंगला खाली करना था – उस समय भी हम मुंबई से उनसे मिलने गए थे। उस समय वह अपने माता-पिता से मिलने के लिए आने को तैयार हो गई थी! उसने अपने ससुराल वालों से भी मुलाकात की थी, बस इतना ही! बेशक, वह इसलिए आई थी ताकि उसकी मदद करने के बजाय वहाँ के नौकरों का काम और बढ़ जाए, आप जानते हैं! उस समय उसने मेरे सामने ही उन्हें कार के बारे में बताया था। फिर भी, बिना कुछ कहे, वे सरकारी कार में चले गए। उस समय रविंद्र ने उससे पूछा था,
क्या आपको जरा भी शर्म या झिझक है? अगर आपको नैतिक या नीतिपरक कोई चिंता है, तो यह विचार आपके मन में आना ही नहीं चाहिए!
यह पहली बार था जब उसने ऐसा कहा,
"ऐसा कोई परिवार नहीं है जिसका दिल प्यार से भरा हो, जैसे तुम्हारा परिवार!"
बाद में, उसे एहसास हुआ कि उसके माता-पिता ने ही उसके दिमाग में यह बात बिठा दी थी कि वह अपने ससुर के पैसे से कार खरीदे!
अब उसने कहा,
मुझे पता है कि अनोखा कैसे बनना है – क्या करना है। ज़्यादा कठोर मत बनो। अब उसका मन वहाँ अच्छी तरह से जम गया है – अब उसे परेशान मत करो। मुझे

पता है कि बाद में तुमने उसे गले लगाया और उसे रुला दिया। अब उसके रास्ते में मत आओ। अगर तुम अपनी आँखों से आँसू पोंछती हो, तो ही प्यार है; अगर नहीं, तो यह मत सोचो कि प्यार नहीं है!
यह कहते हुए उसने कंबल ओढ़ लिया और सोफे की ओर मुड़ गया।
जब मैंने अनुपम को पास बुलाया, तब तक वह अन्नय्या के कमरे में जा चुका था। तो उसे यह किसने बताया? अनुपम ने खुद? उसे किसने बताया, मैं तब तक चुप नहीं बैठूंगा जब तक मुझे पता नहीं चल जाता!
रवींद्र की धीमी साँसों से पता चल गया कि वह सो रहा है। वह अनुपाल और मुझे सज़ा देना चाहता था, इसीलिए उसने इतना हंगामा किया था! इसी वजह से वह जानबूझकर मुझे बुरा-भला कहता है। अब अगर मैं कुछ कहने की कोशिश करती हूँ, तो वह जानबूझकर मुझे नज़रअंदाज़ कर देता है! क्या बच्चे की शिक्षा माता-पिता दोनों के लिए मिलकर चर्चा करने और सुलझाने का मामला नहीं है? क्या अपनी मर्ज़ी के खिलाफ़ अपने बच्चे को उस स्कूल में भेजना, जिससे मुझे घोर नफ़रत है, गलत नहीं है?
लेकिन उसके बाद उसने फिर कभी उससे इस विषय पर बात नहीं की। उसे इस बात से हीन भावना महसूस हुई।
एक दिन दोपहर करीब तीन बजे फोन की घंटी बजी। उसने रिसीवर उठाया। दूसरी तरफ से एक आवाज आई,
``इज इट द होम ऑफ रवींद्र बी. के. प्लीज?"
स्टाइलिश अंग्रेजी उच्चारण, पंद्रह-सोलह साल के लड़के की आवाज, जिसकी आवाज अभी पूरी तरह विकसित नहीं हुई है। कांति ने पूछा,
``यैस प्लीज. हे इज कॉलिंग?"
"आंटी, मेरा नाम जगदीश अरोरा है। मैं अनुप का दोस्त हूँ। मैं कोडाई नहर में पढ़ता हूँ। मैं यहाँ अनुप से बात करने आया हूँ। क्या आप मुझे बुला सकती हैं?"
उन्होंने अंग्रेजी में भी कहा,
वह भी एक दूसरे आवासीय विद्यालय में पढ़ता है। वह यहाँ नहीं है..."
ओह हाँ! मुझे निराशा हुई! क्या आप कृपया मुझे उनका पता दे सकते हैं?
उसके मन में एक विचार कौंधा। उसने तुरंत हिंदी में पूछा,
"बेटे, अगर अनूप यहां नहीं भी है, तो जगदीश को अपनी मां से मिलने में क्या दिक्कत है?"
"क्यों नहीं, आंटी? आपका घर कहाँ है? क्या आप मुझे पता बता सकती हैं?" जगदीश ने उतनी ही सहजता से खुशी से पूछा।
"पहले मल्लेश्वर सर्कल पर आइए - मुझे अपना घर बताइए। मैं आपको वहां पहुंचने का सही रास्ता बता दूंगा।"
"सदाशिव नगर..." उसने कहा। यह सुनते ही वह चौंक उठी, "ओह!" सदाशिव नगर में रहने वाले मतलब करोड़ों की मकानों से मुनाफा कमाने वाले व्यापारी! लेकिन मल्लेश्वर के इस किराएं के मकान में रहने का दुख उसके मन में छा गया। फिर भी, उसने उसे मकान का सही पता बता दिया। जगदीश ने कहा,
``मेरा एक दोस्त... ओमप्रकाश सभरवाल भी यहां है। आपको पता ही होगा। हम तीनों इस स्कूल में खूब शरारत करते थे! हम आपको और अपने माता-पिता को बहुत परेशान करते थे! इसी वजह से आपने अनूप का स्कूल बदल दिया और हम दोनों के पिताओं ने हमें कोडाइकनाल भेज दिया। अगर हम दोनों आ जाएँ तो आप नाराज़ तो नहीं होंगी ना? अगर आप नाराज़ भी हो जाएँ तो हम उसे आशीर्वाद समझेंगे!..." उसने आत्मविश्वास से मुस्कुराते हुए कहा।
"सच में! मैं तुम्हारी पीठ पर दो थपथपाऊँगा!"
"...आंटी, आपको वो रिवाज तो पता ही है ना? आंटियां पीठ थपथपाती हैं, नहीं तो बाद में मुंह में मिठाई डालनी पड़ती है! हम पंद्रह मिनट में वापस आ जाएंगे - बाय

-" उसने कहा और फोन काट दिया।
जगदीश के बोलने का अंदाज़ और उसमें मौजूद आत्मविश्वास देखकर वह बहुत उत्साहित थी। अब तक उसने इन दोनों के बारे में सिर्फ़ शिकायतें ही सुनी थीं। वह लंबे समय से उनके प्रति कड़वाहट महसूस कर रही थी, उसे लगता था कि उनकी आवाज़ें उसकी सुंदरता को बिगाड़ रही हैं। अब उसने सोचा, कितना सलीकेदार लड़का है!
उसने सोफे की अच्छी तरह से सफाई की, मेज पर अखबारों और पत्रिकाओं को करीने से व्यवस्थित किया, उन्हें क्या खिलाना है यह तय किया, खाना तैयार किया, जल्दी से दरवाजा बंद किया और बाहर से खाना ले आई।
रिक्शा से उतरे दोनों लड़कों के चेहरे आत्मविश्वास से भरे हुए थे। उनकी त्वचा कोमल थी, जो उनकी कम उम्र का संकेत दे रही थी, फिर भी उनकी जवानी इतनी आकर्षक थी मानो किसी भी क्षण उनमें से खून निकल आएगा। गले में फुल नेक टी-शर्ट, पैरों में ट्रेकिंग बूट, स्टोनवाश्ड जींस, सफेद कमीज़ और हाथों में क्वार्ट्ज घड़ी। उनकी चाल में एक एथलीट जैसी ताकत झलक रही थी।
उन्हें देखते ही दोनों ने कमर झुकाकर नमस्ते कहा और एक हाथ से उनके चरणों में झुकते हुए उसी हाथ से अपने राजेश खन्ना स्टाइल के बालों को सहलाया।
``मैं जगदीश हूं – मैंने फोन किया था। ये ओमप्रकाश है। अनुप मुझे जगगु और इन्हें ओमी कहकर बुलाता था। हम दोनों इन्हें अपु कहते थे! ओह – ये तो हमेशा हमसे श्रेष्ठ थे!" यादों की कोमलता उनके शब्दों और चेहरे पर स्पष्ट झलक रही थी।
उसने दोनों की पीठ पर हाथ फेरकर उन्हें आशीर्वाद दिया और फिर दोनों के हाथ पकड़कर उन्हें हॉल में ले आई।
"आंटी... आप तो बहुत अच्छी हिंदी बोलती हैं! हमें लगा आप यहीं की रहने वाली हैं!"
"मैं दिल्ली से हूँ..." उसने जवाब दिया।
``समझ गया! समझ गया! फिर तो कोई सवाल ही नहीं उठता। हम जितनी चाहें उतनी बातें कर सकते हैं। सच कहूँ तो? हम यहाँ के स्थानीय लोगों से बात नहीं कर सकते! ये लोग भी अच्छे हैं—कोई दिक्कत नहीं! बेशक, पूरा भारत एक है! लेकिन आप समझ रहे हैं—मेरा मतलब क्या है!”
"यह वास्तव में आपका है। भाषा ही समस्या है," उसने कहा।
कन्नड़ एक खूबसूरत भाषा है – लेकिन – हमें यह आती नहीं है – मेरी माँ को थोड़ी-बहुत आती है – क्या हमें नौकरानियों से बात करने के लिए यह भाषा नहीं बोलनी पड़ती? मेरे पिताजी को भी थोड़ी-बहुत आती है। व्यापार के लिए सभी भाषाएँ ज़रूरी हैं! लेकिन मुझे यह भाषा बिलकुल नहीं आती। बहुत कठिन भाषा है!" ये कहते-कहते दोनों उसके बहुत करीब आ गए।
"मैंने सुना है कि कोडाइकनाल में बहुत सारे स्कूल हैं। आप किस स्कूल में पढ़ते हैं? वहाँ का माहौल कैसा है?" उसने जानकारी हासिल करने के लिए पूछा।
आंटी, कोडाइकनाल वाकई बहुत खूबसूरत जगह है! फिर भी, यह शिमला, मनाली और मसूरी जैसी नहीं है। चाहे आप कितना भी कुछ कर लें, यह हिमालय ही तो है! आप एक बार कोडाइकनाल क्यों नहीं आतीं... अगर आप हमें पहले बता दें, तो हम आपके लिए अपने स्कूल के गेस्ट हाउस में व्यवस्था कर देंगे। स्कूल का नाम 'बेवर्ली इंटरनेशनल स्कूल' है क्योंकि फादर बेवर्ली नाम के एक व्यक्ति यहाँ आए थे और उन्होंने इसकी स्थापना की थी...
ओम प्रकाश ने बीच में कहा,
"हमारा स्कूल इस क्षेत्र का सबसे ऊंचा स्थान है।"
जगदीश ने कहा,
“मैं आपको बताऊँ, गर्मियों में जब मैदान साफ़ होता है, तो हमारे स्कूल से कितना शानदार नज़ारा दिखता है! पहाड़ियाँ एक के बाद एक समुद्र की लहरों जैसी लगती

हैं! आंटी, हमारा स्कूल सचमुच अंतरराष्ट्रीय है। यहां सिर्फ़ भारतीय ही नहीं, बल्कि मलेशिया, दुबई, मस्कट, ईरान जैसे कई देशों के छात्र पढ़ते हैं। अमेरिका और इंग्लैंड के बच्चे भी हैं। क्या यहाँ अनिवासी भारतीय भी हैं?" उनके बच्चे ब्रिटेन, कनाडा, सऊदी अरब से हैं – यहाँ रहने वाले कई लोग अपने बच्चों को हमारे स्कूल में पढ़ाते हैं। जब उनसे डॉलर और पाउंड में फ़ीस माँगी जाती है, तो वह बहुत सस्ती लगती है। यहाँ का स्तर अंतरराष्ट्रीय है! अंग्रेज़ी उच्चारण पर इतना ध्यान दिया जाता है कि पढ़ाने के लिए सिर्फ़ लंदन से डिप्लोमा प्राप्त शिक्षकों को ही रखा जाता है। हमारे स्कूल के एक छात्र ने बताया कि उन्हें इंग्लैंड, अमेरिका और कनाडा से जहाँ चाहे वहाँ दाखिला मिल जाता है! वह बड़े गर्व से कह रहा था।
शुल्क कितना है?
"ज़्यादा नहीं, आंटी! वहाँ दी जाने वाली सुविधाओं और मानकों को देखें तो यह बहुत सस्ता है। इंग्लैंड में ऐसे आवासीय स्कूल की फीस आठ हज़ार पाउंड प्रति वर्ष होती है! यानी दो लाख रुपये! विजय रेड्डी – हमारा सहपाठी कह रहा था। उसके पिता वहां सर्जन हैं। वह अगले साल हैदराबाद आ रहा है!..."
वे आपसे कितना शुल्क लेते हैं?
"मैं आपको बताती हूँ, आंटी..." ओमप्रकाश ने बोलना शुरू किया, "शुरुआती प्रवेश शुल्क तेरह हज़ार चार सौ बीस था। उसके बाद, यह हर साल छब्बीस हज़ार पाँच सौ था। इसमें भोजन, भोजन, शिक्षण शुल्क और बिजली शामिल थी। यहाँ नहाने के लिए हमेशा गर्म पानी आता था। वहाँ तो ठंड में ठंडे पानी से नहाना भी मुमकिन नहीं था, आप जानती हैं! हम कपड़े धोने का शुल्क अलग से देते थे। वर्दी हमारी थी। नोटबुक, किताबें, सारा स्टेशनरी का सामान स्कूल में उपलब्ध था। हम उसे खरीदते थे। इसका खर्च दो हज़ार रुपये सालाना आता था।"
"खाना-पीना कैसा है?"
"क्या आपने नहीं कहा था कि यह अंतरराष्ट्रीय स्तर का है, आंटी? अगर ऐसा नहीं होता, तो क्या अमेरिका, इंग्लैंड और खाड़ी देशों के माता-पिता अपने बच्चों को यहां छोड़ते? सुबह उठते ही बिस्तर पर चाय, सुबह 7:30 बजे नाश्ता – अंडा आमलेट – टोस्ट – कॉर्न फ्लेक्स – अगर चाहें तो ओट्स, पूरी – काफी – चाय। दोपहर का भोजन: पुलाव, सब्जियां, चपाती, घी चावल, मटन – मछली। शाम 4:30 बजे दूध और बिस्कुट। रात का खाना: सूप – सब्जियां – नूडल्स – तंदूरी – दही – सलाद – मिठाई। हर रविवार दोपहर को दावत। हर महीने के पहले रविवार को भव्य दावत।"
उसका ध्यान फिर से उनकी गोल-मटोल गर्दन और दमकते गालों पर गया। सचमुच! बढ़ते बच्चों को इतना अच्छा पोषण चाहिए! उसने पूछा।
खेल क्या होते हैं?
"आउटडोर और इनडोर। हमारा स्कूल कोदाई क्षेत्र में खेलों में अग्रणी है! सिर्फ क्रिकेट ही नहीं! क्योंकि पहाड़ों में इसके लिए पर्याप्त जगह नहीं है। बाकी सभी खेल अनिवार्य हैं। इसके साथ ही, पर्वतारोहण और घुड़सवारी भी है। अब हमारी छुट्टियां हैं। ये सर्दियों के दिन हैं! हमारी वार्षिक छुट्टियां केवल सर्दियों के दिनों में ही होती हैं। अगर हम चाहें तो हममें से कुछ लोग शीतकालीन खेलों के लिए मनाली भी जाते हैं। लेकिन यह अनिवार्य नहीं है।"
"क्या घुड़सवारी आदि के लिए अलग से शुल्क लगता है?"
जी हां। सप्ताह में एक दिन। इसके लिए चार सौ रुपये प्रति माह का अलग शुल्क लगता है। ट्रेकिंग-पर्वतारोहण के लिए भी अलग शुल्क है। घुड़सवारी उतनी अनिवार्य नहीं है। लेकिन बाकी सब कुछ अनिवार्य है।
कांति ने कोडाइकनाल के स्कूलों के बारे में पहले सुना था। वह यह भी जानती थी कि उत्तर के कई व्यापारियों और उद्योगपतियों के बच्चे वहां पढ़ते हैं। हालांकि, उसे इसके बारे में विस्तार से जानकारी नहीं थी। उसने पूछा,

वहां कैसे पहुंचा जाए?
``बैंगलोर से मदुरै के लिए फ्लाइट है। जेट से जाने पर चालीस मिनट लगते हैं। नहीं तो डेढ़ घंटा लगता है। वहां से आप टैक्सी ले सकते हैं। एयरपोर्ट के पास टैक्सी हमेशा तैयार रहती हैं। हमारे स्कूल के लोग हमें प्लेन में बिठा देते हैं। माता-पिता को पहले से सूचित कर दिया जाता है। बच्चों के पहुंचने पर माता-पिता उन्हें टेलीग्राम या कॉल के ज़रिए सूचित करते हैं। लेकिन यह अनिवार्य है।"
वह उठी, अंदर गई और बच्चों के लिए अलग रखे हुए भोजन और कटे हुए फल लेकर बाहर आई। तुरंत ही, दोनों ने बड़ी बेबसी दिखाते हुए कहा,
"मौसी—प्लीज़!—मौसी! मेरे पेट में इतनी जगह भी नहीं है!"
वह जानती थी कि इस तरह का व्यवहार वहाँ के कुलीन परिवार की खासियत थी। उसने कहा,
"ये क्या है! तुम तो बड़े ही मजबूत और सहनशील बच्चे हो! अगले साल तुम हिमालय चढ़ने वाले हो! तो तुम्हें ताकत की जरूरत ही नहीं है?"
दोनों ने कागंज का एक टुकड़ा लिया। ओम प्रकाश ने कहा,
"बहुत बढ़िया, आंटी! हमें तो बस अपने बारे में ही बात कर रहे थे! हमारे दादाजी अब कैसे हैं? उनका स्कूल कहाँ है?"
"पहाड़ पर उनका एक स्कूल भी है। मतलब, पहाड़ पर नहीं। पठार पर है, अगर आप चाहें तो! अच्छा स्कूल है! वहाँ वही मुखिया हैं!" उसने अपने अंदर के दर्द को छिपाते हुए कहा।
हमारे विद्यालय में नेतृत्व को भी बहुत महत्व दिया जाता है! आत्मविश्वास! इसके बिना कोई नेता कैसे बन सकता है? व्यवसाय में अधिक निवेश कैसे किया जा सकता है? श्रमिक वर्ग से व्यवहार करते समय आत्मविश्वास अनिवार्य है, है ना? हमारे प्रधानाचार्य इस बात पर बहुत जोर देते हैं!
वह भी यह बात समझ गई थी।
जगदीश ने पूछा,
"वह छुट्टियों में घर आता है, है ना? दिसंबर में उसकी छुट्टियां होती हैं?"
"उनका स्कूल सिस्टम अलग है। वहां सिर्फ गर्मियों की छुट्टियां होती हैं।"
आंटी, हम उसके स्कूल जाकर उससे मिलेंगे। पापा ने ड्राइवर का इंतज़ाम करने की भी सहमति दे दी है। मैं भी गाड़ी चलाती हूँ – लेकिन मेरे पास लाइसेंस नहीं है! बस बता दीजिए कि आप कैसे जाना चाहती हैं। हम शनिवार को निकलेंगे, रविवार को रुकेंगे और सोमवार को वापस आ जाएंगे। हम उसे पहाड़ पर जल्दी चढ़ना भी सिखाएंगे! हम उसका सारा सामान गाड़ी की डिग्गी में ही छोड़ देंगे!
ऐसा लग रहा था जैसे नुकीली सुइयाँ उसके दिल को छेद रही हों। गोबर, मिट्टी और घास से बनी कॉलेज की इमारत—वहाँ की मिट्टी और हवा से उगी कच्ची त्वचा—उसके कपड़े—ओह! इन बच्चों को वहाँ नहीं जाना चाहिए!
फिर भी, चेहरे पर वही प्रसन्न भाव लिए उसने कहा,
``ये क्या है, ओमप्रकाश! तुमने नमक को छुआ तक नहीं! सेब ले लो... ये तो एकदम कश्मीरी है..."
अपने प्रश्न के उत्तर की प्रतीक्षा करते हुए अरोदा ने पूछा,
"आंटी, अनूप का स्कूल बैंगलोर से कितने मील दूर है?"
"अरे, उनके स्कूल में किसी भी आगंतुक को आने की अनुमति नहीं है!"
"यह कैसे? क्या उनके पास हमारे स्कूल की तरह अतिथि कक्ष नहीं थे? आप हमारे स्कूल में भी आ सकते हैं। फिर अतिथि शुल्क का भुगतान करें, और काम हो जाएगा!"
"बेटा, हर स्कूल के नियम अलग-अलग होते हैं। तुम्हारे लिए उन्हें कैसे बदला जा सकता है?"

"तो फिर आपको उसे हमारे स्कूल में भेज देना चाहिए। स्कूल 15 तारीख को फिर से खुल रहा है। अगर आप अभी फोन करके आवेदन पत्र मांग लें, तो आपको आसानी से मिल जाएगा। किसी को अपना परिचय देना होगा... वो मेरे पापा होंगे।"
आपको इस बारे में सोचना चाहिए... मैं अनुप के पिताजी को बता दूंगा! आपके पिताजी किस तरह का व्यवसाय करते हैं?"
``वह शक्ति इलेक्ट्रिकल्स साउथ जोन के इकलौते वितरक हैं। यह सीलिंग फैन हमारा है..." उन्होंने इसे पहले भी देखा था, ``और ओमी के पिता जमीन विकसित करते हैं, प्लॉट बनाते हैं और उन्हें बेचते हैं।"
उसने धीरे-धीरे उन दोनों के बारे में जानकारी इकट्ठा करना शुरू कर दिया, जिसमें उनकी दुकानें और कार्यालय, उनके पास कितने कर्मचारी थे, इत्यादि शामिल थे।
छह बजे तक बातें करने के बाद ओमी और जगदीश चले गए।

■

कॉलेज जाने के बाद से कांति का गुस्सा समय-समय पर फूटता रहता था। उसका गुस्सा अपने पति पर निकलता था। लेकिन हाल ही में वह पहले की तरह शांत नहीं रह पा रहा था। जब भी वह कुछ कठोर बोलती, तो वह उसे वैसे ही कठोर जवाब देता। हाल ही में रविंद्र ने उपेक्षा का हथियार अपना लिया था। अगर कभी झगड़ा हो भी जाता तो सहा जा सकता था, लेकिन उपेक्षा का यह सिलसिला जानलेवा साबित हो रहा था। अपने गुस्से को दबाते हुए, वह यथासंभव कठोर शब्दों से बच रही थी।
कभी-कभी उसे लगता था कि अनुप का स्कूल ही असंतोष का एकमात्र कारण नहीं है। इससे कहीं गहरा घाव हो रहा है। उसे महसूस होता था कि पति-पत्नी के बीच दूरियां बढ़ती जा रही हैं। लेकिन अगर वह इस बारे में गंभीरता से सोचती, तो उसे कुछ खास नज़र नहीं आता था।
प्रेस क्लब की बैठक में भी उन्हें शराब से कोई लगाव नहीं है, सिवाय इसके कि वे विज्ञान के लिए एक गिलास में ढेर सारे पानी के साथ सिर्फ तीन घूंट पीते हैं। वे सिगरेट पीते हैं – लेकिन बहुत ज़्यादा नहीं। अगर वे सिगरेट न भी पीते, तो भी उन्हें उसकी गंध में एक तरह का आनंद महसूस होता। वे स्वभाव से क्रूर नहीं हैं – कम बोलने वाले व्यक्ति हैं – फिर भी यह अंतर क्यों बढ़ना चाहिए?
यह हठधर्मिता है। बेहद हठधर्मिता! और क्रूरता भी। एक क्रूर पिता जो अपने बेटे को एक छोटी सी गलती के लिए कठोर कारावास की सजा सुनाता है!
एक रात, बिना रुके ही, हमने इस विषय पर चर्चा शुरू कर दी।
``देखो, मैंने यह बात इसलिए नहीं उठाई क्योंकि मैं तुम्हें परेशान नहीं करना चाहती थी और तुम्हें बुरा महसूस नहीं कराना चाहती थी। लेकिन मैं तुम्हें कुछ बताना चाहती थी—" उसने अनुप के दोस्तों के घर लौटने की खबर सुनाते हुए बात शुरू की। उसने उन्हें अपनी बातचीत के बारे में भी बताया, उनमें जो आत्मविश्वास था, उनके चेहरों की चमक, मनाली के पहाड़ों को पार करने की उनकी शारीरिक शक्ति, जब उसने बीच में पूछा,
आपने उन बच्चों के स्कूल का नाम क्या बताया था?
``बेवर्ली इंटरनेशनल स्कूल!..."
नाम से ही स्पष्ट है! बेवर्ली हिल्स हॉलीवुड के बेहद अमीर इलाके का हिस्सा है! नाम से ही पता चलता है कि इस स्कूल में सिर्फ बहुत अमीर लोगों को ही अपने बच्चों को भेजना चाहिए! क्या आपने वहाँ की फीस के बारे में पता किया है? अगर नहीं, तो मैं कल फोन पर पता कर लूँगी। मैं अरोरा और सभरवाल दोनों को जानती हूँ। लेकिन मुझे यकीन है... बिना पूछे रहना नामुमकिन है! बताइए..."
उसने सोचा कि उसे उन दोनों द्वारा उद्धृत की गई मात्रा से थोड़ा कम उद्धृत करना चाहिए। उसने कहा,

"अधिकतम पंद्रह से अठारह हजार रुपये प्रति वर्ष। हमारे लिए ऐसे खर्चों को पूरा करना असंभव नहीं है।"
उन्होंने तुरंत कुछ नहीं कहा। कुछ गणनाओं और स्वयं से तुलना करने के बाद उन्होंने कहा,
उन लोगों ने आपको सही जानकारी नहीं दी। चालीस से पचास हज़ार डॉलर सालाना खर्च किए बिना यह सब संभव नहीं है। मैं कल उन लोगों को यहाँ बुलाऊँगा। फिर हम आमने-सामने मिलकर जाँच कर सकते हैं...
उसे उस पर अविश्वास करते देख, उसे अपमानित महसूस हुआ। उसके भीतर क्रोध उमड़ आया। रात के दीपक की मंद रोशनी में भी उसने उसकी ओर देखा तक नहीं। उसने आगे कहा,
यह इकलौता ऐसा स्कूल नहीं है। ऊटी, पंचमढ़ी, अजमेर, ग्वालियर, दून में भी ऐसे स्कूल हैं। आपने जिस बेवर्ली स्कूल का ज़िक्र किया, हमारे देश में ऐसे कितने स्कूल हैं, वहाँ हर छात्र की सालाना फीस कितनी है, अन्य खर्च कितने हैं, किस तरह के माता-पिता अपने बच्चों को ऐसे स्कूलों में भेजते हैं, बाद में इन बच्चों का क्या होता है? उनकी मानसिक स्थिति कैसी होती है – मैं इन सभी सवालों पर गहराई से विचार करते हुए एक लंबा लेख लिखने जा रहा हूँ। मैंने उन स्कूलों के प्रॉस्पेक्टस और बुकलेट मंगवा लिए हैं। उनका तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद, मैं वहाँ के शिक्षकों, अभिभावकों और छात्रों से मिलकर बात भी करूँगा। मैं यह सब खुद करूँगा – मैं इसे किसी और को सौंपने को तैयार नहीं हूँ। मैंने प्रधान संपादक से अनुमति माँगी है। उन्होंने कहा कि मैं आकर ये साक्षात्कार लूँगा!
उसे समझ नहीं आ रहा था कि आगे क्या कहे। वो आजकल ऐसे ही बातें कर रहा है। मंदिर से मूर्ति चोरी हो गई थी, तो वो उसे ढूंढने गांव गया था, और तब से उसकी आदत बन गई है कि वो अपनी छोटी सी समस्या को राष्ट्रीय समस्या बना देता है! जबकि मेरे हिसाब से उसके बेटे का मामला बहुत बड़ा है, वो इसे सिर्फ अपने अखबार के पन्ने भरने का विषय समझता है! क्या ये भी एक तरह की उपेक्षा नहीं है?
उसने पूछा,
``क्या? तुम्हारा क्या मतलब है?"
आपका क्या मतलब है? राष्ट्रपति इस देश के सबसे अधिक वेतन पाने वाले सरकारी अधिकारी हैं। उनका वेतन दस हज़ार रुपये प्रति माह है। सब कुछ कटने के बाद, उनके पास चार या पांच हजार रुपये बचते हैं। अगर वे अपने बच्चे को इस बेवर्ली स्कूल में भेजते हैं, तो उन्हें एक बार घर पर शराब पीनी पड़ेगी और अगली बार उपवास रखना पड़ेगा! ऐसी स्थिति में, अन्य सरकारी कर्मचारी अपने बच्चों को इस स्कूल में कैसे भेज सकते हैं? फिर भी कितने सरकारी कर्मचारियों के बच्चे इन स्कूलों में पढ़ रहे हैं! ये सभी भ्रष्ट हैं - यह पहला निष्कर्ष है! इसके बाद, चलिए व्यापार और उद्योग के बारे में सोचते हैं, यानी..."
यह सुनकर उसका गुस्सा भड़क उठा। उसने तीव्र क्रोध से कहा,
अपनी बकवास बंद करो! अगर तुमने दोबारा ऐसा कहा तो मैं तुम्हारी बात नहीं सुनूंगा...
उसे तुरंत समझ नहीं आया कि वह क्या कहना चाहती थी। वह इतनी गुस्से में क्यों थी?
लेकिन उसका गुस्सा और बढ़ गया था।
अपने पिता की तरह, उनके पिता भी उत्तर भारत में सरकारी नौकरी करते थे। धीरे-धीरे, पूरे परिवार का कर्नाटक से रिश्ता पूरी तरह टूट गया था। आखिर वहाँ ऐसा क्या था, जिसके साथ संबंध बनाए रखने लायक हो! लेकिन बच्चों की शादी के समय, उन्होंने ज़िद की कि उनकी शादी कर्नाटक के ही लड़के से होनी चाहिए। उस समय उनकी माँ भी उनके साथ खड़ी रहीं। बच्चों की भाषा उत्तर भारतीय थी,

उनका खाना-पीना उत्तर भारतीय था, लेकिन शादी सिर्फ कन्नड़ लड़के से ही होनी चाहिए! इतना हंगामा क्यों? जब मैंने उनसे पूछा, तो उन्होंने कहा,
``गुजराती या मारवाड़ी लोग व्यापार और रोजगार के लिए किसी भी क्षेत्र में जाते हैं। लेकिन क्या वे दूसरों के साथ संबंध विकसित करते हैं - यानी, विवाह करते हैं? इस बारे में सोचिए!"
उस समय मैंने पूछा,
"हो सकता है वे ऐसा न करें, तो हम क्यों करें?"
इस पर मां ने कहा,
"क्योंकि उनकी जीवनशैली और हमारी जीवनशैली में बहुत बड़ा अंतर है। आप इसे नहीं समझ पाएंगे!"
इसीलिए एक महान अभियंता की बेटी का विवाह एक ऐसे पत्रकार से कर दिया गया, जिसने पत्रकारिता के नाम पर आडंबरपूर्ण भाषण देने का चोला पहना! उस समय भी मेरा मन असंतोष से भरा हुआ था।
लेकिन पिताजी की कहानी कुछ और ही थी। एक बड़े सरकारी अधिकारी के इकलौते बेटे! बी.वी.के. मूर्ति की आमदनी सबसे ज़्यादा तो नहीं है, यह सच है! लेकिन फिर भी उनकी तनख्वाह अच्छी-खासी है! और तो और, बेहद मितव्ययी होने के कारण, इसमें कोई शक नहीं कि उनके पास काफी पैसा बच जाता होगा! फिर उस पैसे को बाँटने का काम कौन करेगा? घर में कोई सास तो है ही नहीं। और तो और, हाल ही में अखबार कर्मचारियों की तनख्वाह और अन्य भत्ते भी बढ़े हैं!
लेकिन चाहे वेतन और भत्ते कितने भी अच्छे हों, इतना खर्च कैसे हो सकता है? लेकिन उन्होंने मेरी बहन के लिए एक अच्छा इंजीनियर ढूंढ लिया। क्या मेरी शादी के समय तक उनका उत्साह कम हो गया था? क्या उन्होंने पर्याप्त प्रयास नहीं किया था? क्या पैसों की कमी थी? शादी के लिए उन्होंने कितना भव्य आयोजन किया था! शादी दिल्ली में ही हुई थी। बैंगलोर से लाया गया बड़ा तंबू, रसोइया और पुजारी भी कर्नाटक से थे। कर्नाटक से एक सांसद भी आए थे। कर्नाटक से आए किसी भी परिवार में इतना भव्य समारोह कभी नहीं हुआ था। उस समय अम्मा की एक सहेली ने कहा था - अगर उन्हें इतना खर्च करना ही था, तो वे आसानी से किसी अच्छे परिवार से बेटा ढूंढ सकते थे!
उसने मेरे ऊपर अपने सारे गहने देख लिए थे! उसने अपनी पत्नी के गहनों को चमकाकर पुराने गहने मुझे पहना दिए थे। उसने सिर्फ मंगलसूत्र ही पहनाया था।
दूल्हा-दुल्हन के घर से कोई मेहमान नहीं आया था। लड़के की माँ पहले ही जा चुकी थीं। दादा-दादी जीवित नहीं थे। तो फिर रिश्तेदार कौन होते? उस विशाल सरकारी बंगले पर ही एक तोरण बना दिया गया था - बस! कोई और विशेष सजावट नहीं थी - कुछ भी नहीं! घर में कोई लोग इकट्ठा नहीं थे। भला कैसे हो सकते थे? ये सब तो देहाती लोग थे! शादी के बाद मुझे उसी विशाल सरकारी बंगले में ले जाया गया। अगले दिन मुझे रात की ट्रेन से हनीमून के लिए जाना था। सुबह मेरे ससुराल वालों ने मुझे बताया,
"देखो, गहने पहनकर यात्रा करना ठीक नहीं है। दिन भर यहाँ कोई नहीं होगा। अपने गहने अपने माता-पिता के घर पर ही छोड़ दो।"
नवविवाहित अक्का अपने पति को हनीमून पर ले जा रही थीं। अक्का और उनकी मेज़बान उन्हें स्टेशन छोड़ने आए थे। भाई भी साथ आए थे। उसी समय, अक्का स्टेशन पर थर्ड क्लास स्लीपिंग रिजर्वेशन चार्ट ढूंढने गईं और बोलीं, "हमारा नाम कहाँ है?" अक्का ने अपने पति की ओर इशारे से देखा। जब उन्हें इस बात का एहसास हुआ, तो उनके मन में आया - एक ऐसा आदमी जिसमें जरा भी गरिमा या स्वाभिमान नहीं! देखने वालों को मैं एक नवविवाहित लग रही थी। और यह

विवाहित आदमी! उसने मेरे पिता द्वारा दिया गया सूट पहना हुआ था। उसकी उंगली में एक अंगूठी थी, जो नई पॉलिश की हुई चमक रही थी!
ट्रेन चल पड़ी। जब मेरे सहयात्रियों ने बीड़ी जलाई, तो उसकी गंध से मेरे पेट में हलचल मचने लगी। आखिरकार, यह असहनीय हो गई और मैंने कहा,
"अरे, ये हमारी पहली यात्रा है साथ में! हमें तो हवाई जहाज से ही जाना चाहिए था। छोड़ो इसे - फर्स्ट क्लास टिकट खरीदने का क्या मतलब था?"
मैंने अक्का और उसके पति के सामने कीमत में गिरावट का जिक्र तक नहीं किया। उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। वे अब भी पुराने दिल्ली किले को देख रहे थे, जो पीछे छूटता जा रहा था। उनका चेहरा भी नाखुश लग रहा था - शायद इसलिए कि शादी के ठीक अगले दिन दिखाई गई मेरी धृष्टता उन्हें पसंद नहीं आई थी! फिर, यह महसूस करते हुए कि अगर उन्होंने मुझसे कुछ नहीं कहा तो वे हार जाएंगे, उन्होंने कहा,
``बिस्तर को देखकर ही हमें अपने पैर फैलाने चाहिए!"
"अगर पैसे नहीं होते, तो हनीमून जैसी कोई चीज़ न होती तो भी ठीक होता। धर्मग्रंथों में ऐसा कुछ नहीं लिखा है..." मैंने बिना किसी झिझक के कहा।
लेकिन फिर वह तुरंत अपना सामान लेकर दरवाजे पर गया और बोला, "अभी दरवाजे पर आओ - चलो अगले स्टेशन पर उतरकर घर चलते हैं"? कितना घमंड!
मैंने कहा था,
"ऐसा नहीं था। अगर कोई समस्या होती, तो मैं अपने पापा को बता देती! वे वापसी का हवाई टिकट और पहले से बुक किया हुआ होटल का इंतजाम कर देते!"
जब मैं इतनी समझदारी से यह कह रहा था, तो उन्होंने कहा,
"रिश्वत के पैसों से कुछ भी किया जा सकता है! लेकिन जिनके पास केवल ईमानदारी से कमाया हुआ पैसा है, उन्हें बिस्तर देखने के बाद ही पैर फैलाने चाहिए!"
इसीलिए मैंने इसे सहन किया। मुझे उसी समय जवाब दे देना चाहिए था, है ना? फिर भी, कंजूसी के दौर में, क्या मैंने कभी शिकायत की कि इसका जवाब पहले से ही तय था?
"मेरे पास पैसे नहीं हैं! और मैं लार टपकाने वाला कुत्ता नहीं हूँ!"
एक बार—आठ या दस साल पहले—दस साल पहले—हाँ, जब अनूप पाँच साल का था—मैंने कहा था,
"जब तुम कहते हो 'लार चाटने वाले कुत्ते' - तो ऐसा लगता है जैसे तुम हमारे पापाओं के बारे में बात कर रहे हो! अगर तुमने दोबारा ऐसा कहा, तो तुम इस दुनिया में नहीं रहोगे। याद रखना!"
उसके बाद उसने ऐसा कभी नहीं कहा! उसे बाद में याद आया, हालाँकि यह सच था, कि पिछले दस वर्षों में उसने कभी भी उससे पैसे या रुतबे को लेकर बहस नहीं की थी। इसका मतलब है कि वह शालीनता से पेश आती है।
रविंद्र को पहले तो समझ नहीं आया कि वो अचानक ऐसे क्यों चिल्लाई। लेकिन कुछ ही पलों में उसे कारण समझ आ गया। अगर वो किसी भी संदर्भ में रिश्वतखोरी का मुद्दा उठाता, तो उसे उसमें अपने पिता की घृणा दिखाई देती; उसका भी यही अनुभव था। ज्यादा कठोर न होने के कारण, रविंद्र ने हाल ही में इस विषय को उठाना बंद कर दिया था। जब हम देश में रिश्वत लेने वाले लाखों लोगों के खिलाफ कुछ नहीं कर रहे हैं, तो सिर्फ उसके पिता को नीचा दिखाने का क्या मतलब है? सच कहें तो, हमें इन रिश्वतखोरों पर गुस्सा भी नहीं आता। लेकिन जब कोई रिश्वत न लेने वाले हम जैसे लोगों को रिश्वत के आधार पर नीचा दिखाने आता है, तो मन को काबू में रखना मुश्किल हो जाता है। ये लोग रिश्वत न लेने वालों को कितनी बेइज्जती से मूर्ख कहते हैं! एक बार रविंद्र से बात करते हुए, वो उसके पिता को मूर्ख और नासमझ अधिकारी कह रही थी। रविंद्र को याद है कि

उस समय उसने उसके चेहरे पर थप्पड़ मारा था।

एक वरिष्ठ सरकारी अधिकारी होने के बावजूद अप्पा की बुद्धि असाधारण रूप से तीक्ष्ण थी। किसी भी दस्तावेज़ पर नज़र पड़ते ही, उसकी विषयवस्तु के साथ-साथ उसकी बारीकियाँ भी उनके मन में बस जाती थीं। रविंद्र ने स्वयं उन्हें सुबह-सुबह घर पर अपने सचिव को लिखवाते हुए कई बार देखा था। वे इतनी तेज़ी से बोलना शुरू कर देते थे, दशमलव और सैकड़ा सहित आंकड़े देते थे, कि सबसे तेज़ लिखने वाले भी थक जाते थे! उस समय वे उद्योग मंत्रालय में कार्यरत थे। यदि उन्होंने विदेशी कंपनियों से उत्पादन के लिए आवश्यक प्रत्येक लाइसेंस पर ध्यान दिया होता, तो वे आसानी से दस-बीस करोड़ रुपये का गट्ठा जमा कर सकते थे! सभी संबंधित मंत्रियों और अधिकारियों को उनसे परेशानी होने लगी, इसलिए उन्हें एक अलग खाते में डाल दिया गया।
जिस दिन तबादले का आदेश आया, उसी रात उसने रविंद्र को फोन किया और उसे सारी सच्चाई बताई। और कहा,
असल में, पता नहीं क्यों उन्होंने मुझे यहाँ इतने लंबे समय तक रखा! मैंने चाहे जितना भी काम किया हो, आखिर वो एक नौकरी ही थी। तो मैंने यहाँ क्या किया और वहाँ क्या किया? नौकर ही नहीं, बल्कि आम लोग भी यही मानते हैं कि रिश्वतखोरी के जितने ज़्यादा मौके होंगे, वह विभाग उतना ही प्रतिष्ठित होगा! काम करवाने के लिए इन अधिकारियों के सामने हाथ जोड़कर खड़ा होना पड़ता है! सच कहूँ तो, अगर हाथ जोड़ना और रिश्वतखोरी न होती, तो मेरी राय में एक सचिव और एक माली में कोई फर्क ही नहीं होता! वेतन और काम के लिए ज़रूरी सामान्य ज्ञान के अलावा, सच में कोई फर्क नहीं है!
उस दिन वे कितने खुश थे!
किसी से न डरना और अत्यधिक दब्बू न होना उनके स्वभाव की विशेषता थी। उन्होंने एक बार कहा था,
आप चाहे जितना भी कमा लें, एक बार में दो चपातियाँ और दो मुट्ठी चावल से ज़्यादा नहीं खा सकते। एक साथ दो कमीज़ पहनना भी मुमकिन नहीं है। एक ही समय में दो कारों में बैठना भी मुमकिन नहीं है। जब आप इन सरल बातों को ध्यान में रखेंगे, तो आपके मन की लालसा अपने आप ही शांत हो जाएगी। क्या आपने टॉलस्टॉय की वो कहानी नहीं सुनी? उस कहानी में, जहाँ मृतकों को दफ़नाया जाता है, इस सवाल पर जवाब था कि हर किसी को कितनी जगह चाहिए, और वो भी 'छह हाथ जितनी जगह'। हमारे जैसे देश में जहाँ शवदाह की व्यवस्था है, वहाँ तो इतनी जगह की भी ज़रूरत नहीं है! एक उंगली जितनी जगह भी नहीं चाहिए। यही मूल सिद्धांत है!
शादी के बाद, रवींद्र कश्मीर में हनीमून मनाकर घर लौट आया। इंद्रिन ने हमेशा की तरह गरमागरम खाना बनाया। फुलके-सब्जी-दाल-रायता-अचार-पापड़। इसके बाद भी इंद्रिन खाना बनाने लगी। ऐसे हफ्ता ऐसे ही बीत गया। बातचीत करना उसकी आदत नहीं थी। उस समय वह काम से बहुत देर से घर आता था। इसलिए ससुर-बहू के बीच बातचीत का तो सवाल ही नहीं उठता था। रवींद्र भी काम पर जाने लगी था। एक दिन उसने रवींद्र को अपने कमरे में बुलाया और कहा,
"देखो, उसकी अभी-अभी शादी हुई है। सरकारी बंगला चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो, वह उसे अपना घर नहीं मानती। तुम कोई दूसरा घर देखो। मुझे नहीं पता तुमने कितना पैसा बचाया है। घर बनाने के लिए पैसे चाहिए - ये लो..." उसने अपने सामने रखे खाते में पहले से लिखा हुआ दस हजार का चेक उसे देते हुए कहा।
रविंद्र का जीवन उथल-पुथल में था। उसे इस तरह घर से क्यों निकाला जा रहा था? क्या कांति ने कुछ ऐसा कह दिया था जिससे वह आहत हो गया था? वृद्धावस्था में

अपने माता-पिता की देखभाल करना उसका कर्तव्य है, यह भावना अनजाने में ही उसके मन में घर कर गई थी। हालांकि उसकी माता की मृत्यु के बाद इंद्रिनसागा ने उसकी देखभाल की थी, लेकिन उसे पूरा विश्वास था कि इसके बाद यह जिम्मेदारी उसकी पत्नी की है। अब उसके पिता के शब्द मानो उस भावना पर पानी फेर रहे थे।
रविंद्र ने महसूस किया कि कश्मीर से आए इतने दिन बीत जाने के बाद भी इंद्रिनसांग घर में, रसोई में, खाने की मेज के पास, हर चीज़ पर नज़र रख रही थी। वह कभी इस पर ध्यान नहीं देती थी। एक मेहमान की तरह, वह हर समय खाने की मेज पर बैठती, नाश्ता, दोपहर का खाना, रात का खाना आदि खाती और फिर अपने कमरे में लौट जाती। वह टैक्सी बुलाकर अपने पिता के घर चली जाती।
अप्पा को यह बात जरूर समझ आ गई होगी – उन्हें यह भी जरूर समझ आ गया होगा कि वह इस तरह साथ रहने में दिलचस्पी नहीं रखती थी।
उसने कहा,
"हम अलग नहीं रहने वाले हैं। सब ठीक रहेगा, मैं यहां सब संभाल लूंगा।"
वे उसके चेहरे से उसकी मनोदशा जान गए और बोले,
"देखो, उससे कुछ मत कहो। तुम्हें भी समझना चाहिए। अगर सामाजिक दबाव, आर्थिक मजबूरी और पति का ज़िद पूरी तरह से हटा दिया जाए, तो कोई भी महिला अपने ससुराल में रहना नहीं चाहेगी। तुमने शादी इसलिए की थी ताकि तुम गृहस्थ बन सको—" उसने चेक जेब में रखते हुए कहा और बोला, "शांत हो जाओ..."
उस समय उन्हें उनकी बातों का अर्थ समझ नहीं आया। उस समय उन्होंने सोचा कि घर में कोई ऐसा नहीं है जो हमेशा ताने मारता रहता हो, कोई ऐसा नहीं है जो दहेज को लेकर बेतुकी बातें करके लोगों को परेशान करता रहता हो। तो एक कमरे में कही गई बात दूसरे कमरे में सुनाई नहीं देगी, भला इतने बड़े घर में रहने पर किसी को आपत्ति क्यों होगी?
एक बार उसने उससे पूछा,
आप रसोई में क्यों नहीं जाते?
"इंद्रिनसांग अच्छा खाना बनाता है, है ना! क्या आपने यह कहावत नहीं सुनी कि बहुत सारे रसोइये खाना बिगाड़ देते हैं?"
आप खाना बनाइए। बाकी काम उसे करने दीजिए।
"क्या तुम मुझसे मजाक कर रहे हो, या तुम अपना धैर्य खो रहे हो इसलिए ऐसा कह रहे हो?" उसने कहा।
फिर भी, उस दिन वह रसोई में गई। उस दिन के खाने का स्वाद इंद्रिनसांग के स्वाद से बिल्कुल अलग था। लेकिन बस इतना ही! अगले दिन वह फिर रसोई में नहीं गई।
एक दिन उसने इस विषय को उठाया,
"देखो, मुझे नहीं पता कि तुमने और तुम्हारे माता-पिता ने आपस में क्या फैसला किया है। उन्होंने तुम्हें इतना पाला-पोसा, तुम्हारी शादी करवाई! क्या यह सही है कि तुम अब भी उन पर बोझ बने रहो?"
अप्पा घर के सारे खर्चे उठाते थे। किराया उनकी तनख्वाह से कटता था, और बिजली-पानी के बिल भी उन्हीं के खाते से भरते थे। इंदेरिनसांग पहले की तरह ही घर के लिए दूध, फल, सब्जियां वगैरह सब कुछ लाती थीं। वो बहुत ही ईमानदार आदमी थे। भले ही उन्हें पता था कि वो पांच-छह प्रतिशत पैसा गबन कर लेंगे, अप्पा चुप रहते थे। अब वो मेरे साथ इंदेरिनसांग के खर्चे क्यों बाँटेंगे? उन्होंने जो कहा वो सच है।
"इसके बाद हमें इंद्रिन सिंह को घर के खर्चों के लिए भुगतान करना चाहिए...", उन्होंने कहा।

इस पर उसने कहा,
"उन्हें वेतन मिलता है। वे आपकी या मेरी बात कैसे सुनेंगे?"
फिर क्या करें?
फिर दो दिन सोचने के बाद उसने कहा,
"ऐसा लगता है कि उन्हें हमारा यहाँ रहना पसंद नहीं है। शायद मैं गलत सोच रहा हूँ। आप चाहे कितनी भी कोशिश कर लें, पिता-पुत्र के रिश्ते को कैसे समझा जा सकता है... मुझ जैसे व्यक्ति को, जो चार दिन पहले ही आया है... मुझे बताओ!"
मुझे भी यही लगा था। उन्होंने सचमुच मुझे दूर रहने को कहा था। लगता है यह सच है। उन्हें हमारा यहाँ रहना पसंद नहीं आया होगा।
अब, जब वह गुस्से से उबल रही थी, रविंद्र को चौदह साल पुरानी वह घटना याद आ गई। सांसारिक मामलों में मनुष्य की सोचने-समझने की क्षमता एक जैसी ही होती है। उस समय, इनमें से कुछ भी समझ में नहीं आता था। उसके आदर्श तो थे, लेकिन आर्थिक शक्ति नहीं थी। मैं उसकी इस बात पर कैसे विश्वास करूँ कि उसे हमारा यहाँ रहना पसंद नहीं है? जब वह बहू बनकर इस घर में आई, तो क्या उसने कभी उससे खुद चार वाक्य भी बोले थे? इतनी आधुनिक - इतनी पढ़ी-लिखी! क्या उसके लिए उससे चार वाक्य बोलना इतना मुश्किल था? वह, जो अपनी बात मनवाने के लिए बातचीत में इतनी चतुराई दिखाती है, शाम को अपने ससुर से शिष्टाचारवश चार शब्द भी नहीं बोल सकती? अगर उसने शाम को दफ्तर से थके-हारे घर लौटे अप्पा को खुद चाय-बिस्किट दिए होते और बड़े प्यार से पूछा होता, 'क्या दफ्तर में बहुत काम है?', तो वह ज़रूर स्नेह से बात करते।
मुझे उस समय यह बात समझ क्यों नहीं आई? क्या दादी और माँ को उनकी देखभाल में छोड़कर मैंने अपना मानसिक संतुलन पूरी तरह खो दिया था? क्या यही सभी पुरुषों की कहानी है, या कौन जाने!
उसी समय, हमारे अखबार के संपादक ने अपनी नौकरी छोड़ दी और दूसरे अखबार में शामिल हो गए। अगर आप दो घरों वाले गाँव में रहते हैं, तो आप शहर में बदनाम ही माने जाएँगे – बेहतर यही है कि तबादला करवाकर उपनगर चले जाएँ – मैंने उस समय यही सोचा था। अब मैं सोचता हूँ – शहर में बदनाम होने का क्या मतलब है? जब आप अपने रिश्तेदारों, गाँव के सभी लोगों को छोड़कर किसी बड़े गाँव में रहने आते हैं, तो वहाँ कोई ऐसा नहीं होता जो आलोचना करे और इस तरह की बातें करे। यह तो बस अपनी संतुष्टि के लिए या फिर अपने माता-पिता के सामने खड़े होने पर मन में उठने वाले अपराधबोध को कम करने का एक अस्थायी उपाय था!
जब मैं घर आकर उसे तबादले की खबर सुनाई, तो उसने पूछा,
"मिथिला बिहार में है, है ना?"
"हाँ। क्यों?" मैंने पूछा।
``यह सीता की भूमि है!–"
फिर भी, मुझे कुछ समझ नहीं आया।
वह अपने पति के पीछे जंगल में चली गई। चाहे मैं कितनी भी आधुनिक क्यों न हो जाऊं, वही परंपराएं मुझमें भी हैं! शादी के बाद मेरी माँ ने मुझसे साफ-साफ कहा था – तुम्हारा पति जहाँ भी जाए, तुम्हें भी उसके साथ जाना चाहिए! अगर मैं तुम्हारे साथ मिथिला नहीं गई, तो अगले जन्म में मेरा क्या होगा!
इस समय तक, मैं इस निष्कर्ष पर पहुँच चुका था कि उसकी माँ, जो अक्सर उसके घर आती थी और उसे अच्छा खाना खिलाने पर जोर देती थी, "उसके मुकाबले कहीं भी उतनी अच्छी और प्यार करने वाली महिला नहीं थी जितनी वह खुद है!"
वे दोनों पटना में साथ रहने लगे और उसका एक नया ही रूप सामने आया! खाना पकाने का कितना जुनून! वह अपनी माँ को चिट्ठियाँ लिखकर व्यंजनों की विस्तृत जानकारी माँगती। वह पड़ोस की महिलाओं और जान-पहचान वालों से नए-नए

पकवान सीखती। किताबों में लिखे पकवान – उसकी अपनी कल्पना के प्रयोग! बोलने और व्यवहार में कितनी आत्मीयता! 'आप' 'आप' बन गया था – जब वह बहुत करीब होती, तो 'आप' बन जाता! यौन संबंध में भी यही बात थी! झिझक दूर होने के बाद उसने सक्रिय रूप से भाग लेना शुरू कर दिया। – परिणामस्वरूप, मेरे दिल में मौजूद अपराधबोध धीरे-धीरे कम होने लगा।
इसी बीच, अप्पा एक बार दफ्तर के काम से पटना आए थे। एयरपोर्ट से सरकारी गेस्ट हाउस तक और वहाँ से दफ्तर व अन्य जगहों तक जाने के लिए एक सरकारी गाड़ी थी। वह भी उनसे मिलने सरकारी गेस्ट हाउस आई थीं। वह उनसे खूब बातें करती रहीं। 'हमारे घर खाना खाए बिना मत जाना!' लाडिक ने ज़िद की। उस समय भी मुझे समझ नहीं आया, लेकिन वह उन्हें यह बताना चाहती थीं कि हमारा घर 'आपकों' नहीं है!
वे भी खाने के लिए आए। उसने बहुत स्वादिष्ट खाना बनाया था। उसने इसके लिए बहुत मेहनत की थी। अप्पा गांव की मशहूर मिठाई की दुकान से चार-पांच तरह के फल और मिठाई भी लाए थे। वह बातें करते हुए खाना खाने पर अड़ी रही। जब वे जाने लगे, तो उन्होंने झककर मुझे प्रणाम किया। मुझे उनका यह व्यवहार बहुत अच्छा लगा। लेकिन अप्पा हर बात का असली मतलब समझते थे, यह तो पक्का है! उन्होंने ऐसे कहा जैसे वे किसी अनजान परिचित के घर खाना खाकर जा रहे हों।
धन्यवाद! इन सभी व्यंजनों को तैयार करने में इतनी मेहनत करने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। खाना सचमुच बहुत स्वादिष्ट था!
फिर भी, उस समय मुझे कुछ भी समझ नहीं आया था।
अब वह थोड़ी शांत हो गई थी। उसने धीमी आवाज़ में पूछा,
आपने क्या कहा? आप मेरी बकवास बर्दाश्त नहीं करेंगे? कुछ बोलिए ताकि मैं समझ सकूं!
"क्या आप यह कह रहे हैं कि मेरे पिता जैसे भ्रष्ट सरकारी अधिकारी ही इस स्कूल का खर्च उठा सकते हैं?" उसने सीधे-सीधे पूछा।
"देखिए, मैं एक पत्रकार हूँ। मैं दिन में सौ बार रिश्वतखोर अधिकारियों के बारे में लिखता और बोलता हूँ - आप घर पर हैं, आपको यह पता नहीं है। लेकिन रिश्वतखोरी की बात करते समय आपको अपने पिताओं की याद क्यों आती है? इस देश में आपके पिताओं जैसे लाखों लोग हैं!"
उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। उसे शर्म आ रही थी कि उसने अपना आपा खो दिया था। उसका मन बेचैन था। उसने उसकी तरफ पीठ कर ली और चुप रही।

■

इस घटना के बाद पंद्रह से बीस दिन बीत चुके होंगे। एक रात आठ बजे उसे दिल्ली से फोन आया। फोन पर उसकी मां थी।
"आप आजकल नियमित रूप से पत्र क्यों नहीं लिख रहे हैं?"
आगे की पूछताछ के बाद उसने कहा,
अगले महीने की 6 तारीख को आपके पिताजी सत्तर वर्ष के हो रहे हैं। इस अवसर पर एक भव्य पूजा-हवन समारोह आयोजित करने का निर्णय लिया गया है। आप दोनों को आना होगा। अनुपाला को भी साथ लाना। अगर उसे स्कूल न जाने जैसी कोई समस्या हो, तो अपने पति से उसे लाने के लिए कहना और दो दिन पहले आ जाना। लेकिन आपको पंद्रह दिन पहले आना होगा। शांति भी आ रही है। अगर आप दोनों नहीं होंगे, तो सब कुछ कौन संभालेगा? अब मेरा क्या हाल होगा! कृपया जल्द से जल्द आने का समय तय करें और मुझे फोन पर बता दें।
कांति बहुत खुश थी। दरअसल, उसने पिछले कुछ दिनों से अपनी माँ को कोई पत्र नहीं लिखा था। वह फोन पर भी बहुत कम बातें करती थी। उसे पंद्रह से बीस दिन

अपने माता-पिता के साथ रहने का मौका मिलेगा। उसे सुकून मिलेगा, उसने कहा! वह अपने दोस्तों से भी मिलेगी। सच्चे दोस्त तो सिर्फ दिल्ली में ही मिलते हैं! ऐसे दोस्त उसे और किस गाँव में मिलेंगे? उन सभी दोस्तों ने तो तय कर लिया था कि दिल और दिल्ली को जोड़ देना चाहिए और 'दिल' को 'दिल्ली' बना देना चाहिए! उसका मन पापा के सत्तरवें जन्मदिन के जश्न की तैयारियों में मग्न था..
एक विशाल टेंट! यह दिल्ली की एक खास बात है! किसी और गाँव में – इस गरीब बैंगलोर में – कोई इतना सुंदर टेंट नहीं लगाता। इस गाँव के सारे कार्यक्रम कल्याण मंडपम में ही होते हैं! मानो घर ही न हों, सब लोग एक साथ उठकर कल्याण मंडपम् जाते हैं! कल्याण मंडपम में अपने घर के सामने टेंट लगाने का आनंद और खुशी कहाँ से आती है? खानदानी!
उसने अपने पति को उस फोन कॉल के बारे में बताया। तब उसने कहा,
"इतनी जल्दी क्यों जा रहे हो?"
ये तो सभी पतियों की तरह है! हालांकि वह गुस्से में थी, लेकिन उसने चुप रहकर इसे दिखाया नहीं। रात को जब वह बिस्तर पर लेटी, तो उसने पूछा,
"तो मुझे कब जाना चाहिए? या जब तक पापा आपको फोन नहीं करेंगे या चिट्ठी नहीं लिखेंगे, तब तक आप मुझे नहीं भेजेंगी?"
वह यह भी जानता था कि यह उसका तरीका था।
वह कहती, "मैंने ऐसा कहा कहा?" या "अगर मैंने इसे अपने मुँह से नहीं कहा, तो यह मेरे मन में ही होगा!"
उन्होंने कुछ नहीं कहा। उसके बाद, उन्होंने उसकी चालाकी भरी बातों का जवाब चुप रहकर ही देने का फैसला कर लिया था। इसके अलावा, उनका दिमाग उस शाम लिखे गए कर्नाटक मंत्रिमंडल पर संपादकीय लेख में भी उलझा हुआ था। यह ठीक नहीं है। एक बार लिख लेने के बाद, उस विषय को दिमाग से निकाल देना चाहिए। अब तक तो वह लेख बैंगलोर संस्करण में मुख्य संपादकीय के रूप में और अन्य जगहों पर दूसरे संपादकीय के रूप में प्रकाशित हो चुका होगा। अब इसके बारे में सोचना ठीक नहीं है – उन्होंने खुद को समझाते हुए सोने की कोशिश की।
कर्नाटक एक्सप्रेस के तीसरे दर्जे के स्लीपर डिब्बे में अकेले सफर करते हुए, उसका मन इस बात को लेकर परेशान था कि समारोह कैसा होगा। इसमें कोई शक नहीं कि पापा सोने के गहने तो लाएंगे ही। शांति काल में उन्होंने उसे पाँच लड़ियों का हार दिया था। वे अनुप के लिए कपड़े, दामाद के लिए जापान् में बनी एक खूबसूरत घड़ी और सैमसोनाइट का एक बैग भी लाए थे। अगर वे इतनी उदारता से ये सब लाए थे, तो उन्हें स्वीकार करते समय उसे कितनी असहजता महसूस होती होगी! वे उपहार देने और लेने की सामाजिक परंपरा को अनुचित मानते थे! उन्होंने खुद उसे कुछ नहीं दिया था। उन्होंने मुट्ठी भर फूल देकर उसका स्वागत किया और कहा,
"काश चालीस साल बाद मुझे ऐसा ही अभिवादन करने का सौभाग्य प्राप्त हो!"
उसे कैसे पता चला कि वह ऐसा व्यवहार करेगा? अब जब वह उसका स्वभाव जान चुकी थी, तो उसने अपने पति को बिना बताए ही तैयारी शुरू कर दी थी। अनजाने में ही उसकी नज़रें गर्व से सूटकेस पर टिक गईं। अपनी माँ के लिए सबसे अच्छी मैसूर सिल्क साड़ी, अपने पिता के लिए पूजा के दौरान् पहनने के लिए सिल्क का हेडपीस, पहनने के लिए सिल्क का शॉल, शांति और रजनी के लिए मैसूर से साधारण प्रिंटेड सिल्क साड़ियाँ, निरंजन के लिए सफारी सूट – अब इस समय उसका मन कर रहा था कि वह सूटकेस खोलकर सारी चीज़ें फिर से देख ले। इच्छा चाहे कितनी भी प्रबल क्यों न हो, वह यह भी जानती थी कि यह संभव नहीं है। उसने मन ही मन हिसाब लगाया – कुल मिलाकर साढ़े चार से पाँच हज़ार रुपये खर्च हो चुके थे। यह वह पैसा था जो उसने परिवार के लिए दिए गए पैसों में

से अलग रखा था। अपने पति को बिना बताए – भले ही किसी ने उसे अंदर से डांटा हो, उसने मन बना लिया था – तो फिर वह क्या करे? क्या उसे अपनी इज़्ज़त की रक्षा नहीं करनी चाहिए?
उसके छोटे भाई निरंजन और बड़ी बहन शांति नई दिल्ली स्टेशन पर पहुँच चुके थे। वे ठीक उसी जगह खड़े थे जहां उसकी ट्रेन का डिब्बा होना था। उन्हें पता था – मैं तीसरी श्रेणी की स्लीपर ट्रेन में आऊँगी, इसीलिए तो! कांति का दिमाग इस सोच से सुन्न हो गया था।
शांति के पति रेलवे इंजीनियर हैं, इसलिए वह हमेशा वातानुकूलित डिब्बे में सफर करती हैं। उनके पास पास है ना? वरना, वह पैसे देकर हवाई जहाज से सफर करती हैं। कांति रविंद्र पर बहुत गुस्सा थी। अगर वह एक तरफा हवाई टिकट लाए होते, तो क्या आसमान नहीं गिर जाता? वरना, पापा हवाई जहाज का वापसी टिकट खरीद लेते। छोड़ो, क्या रेलवे में फर्स्ट क्लास का टिकट खरीदना भी आर्थिक तंगी थी? जब हम काम के लिए गांव जाते हैं, तो हमें ऑफिस से टिकट मिल जाता है, तो हम हवाई जहाज से फ़र्स्ट क्लास में क्यों नहीं सफर करते? स्वार्थी! और क्या!
उनके सामने तीसरे दर्जे के डिब्बे से उतरते ही उसे ऐसा लगा जैसे उसने अपनी जान गंवा दी हो। स्टेशन से बाहर निकलते ही वाहनों और लोगों की भीड़ कम हो गई और ट्रेन कनॉट सर्कल की ओर बढ़ने लगी। अचानक, बाईं ओर बैठी शांति कांप उठी। उसने कांति की पीठ के पीछे छिपने की कोशिश कर रहे एक बदमाश को हल्के से चुटकी काटी और अपने पूरे शरीर और चेहरे पर घृणा का भाव दिखाते हुए कहा,
वाह! ये तो थर्ड क्लास का सफर है! मेरे रोंगटे खड़े हो रहे हैं...
उसने चिमटी में फंसी गांठ को खिड़की से बाहर फेंक दिया, लेकिन घर जाकर पियर्स सोप से उंगलियां धोए बिना वह कुछ नहीं कर सकती थी, इसलिए उसने अपना हाथ और चिमटी एक तरफ रख दी। कांति के दाहिनी ओर बैठा और गाड़ी चला रहा निरंजन भी बोला,
घर पहुंचते ही अपना सूटकेस और कपड़े अलग रख दें! सूटकेस के ढक्कन पर टिक-टैंटी स्प्रे करें और उसे दो घंटे के लिए वहीं छोड़ दें! नहीं तो यह पूरे घर में फैल जाएगा!
गाड़ी यहीं रोक दो... मैं एक रिक्शा लेकर इसी पावली स्टेशन वापस जाऊंगी और वही कोच, वही कंबल लेकर अपने घर जाऊंगी—उसका मन तो कर रहा था, पर उसने कुछ नहीं कहा। जैसे ही गाड़ी कनॉट प्लेस पार करके जनपथ की ओर बढ़ी, उसे एहसास हुआ... निरंजन बोला, इसमें क्या गलत है? हालांकि, रवींद्र द्वारा उसे इस घटिया सीट पर बिठाने पर उसका गुस्सा फिर से भड़क उठा। उसके सामने अपना गुस्सा ज़ाहिर करने का भी कोई फ़ायदा नहीं था! रवींद्र को साफ-सफाई पर ज़्यादा ध्यान देना चाहिए—उसे इस बारे में किसी अखबार में लेख लिखना चाहिए, वह कहता है! लेकिन मेरा मतलब क्या है, वह इस पर ध्यान ही नहीं देता। उफ़! यह भी सच नहीं है। वह जानबूझकर इस पर ध्यान नहीं देता—यह देखकर उसकी आँखों में आंसू भर आए। न तो उसके भाई को इसका कारण समझ आया और न ही उसकी बहन को। शांति की उंगलियां अभी भी दबी हुई थीं।
लेकिन पिताजी विशेष रूप से खुश थे। उन्होंने उसका गर्मजोशी से स्वागत किया। उन्होंने पूछा,
"तुम्हारा पति तो जरूर आएगा ना? अनूप? वो कब आ रहा है?"
उसे पूरी तरह यकीन नहीं था कि रविंद्र अनुपा को ज़रूर लाएगा। ट्रेन से आना-जाना चार दिन का सफर होता। कम से कम आठ दिन की छुट्टी चाहिए होती। इसके अलावा, कौन जानता था कि इस तरह अनुपा को स्कूल भेजने का कोई तरीका होगा भी या नहीं? उसे यह भी पता था कि उनके बैंक खाते में दोनों के हवाई टिकट के लिए पर्याप्त पैसे नहीं हैं। वह खुद पर गुस्सा हो रही थी।

जब वह यहाँ पहुँची, तो उसे एक और बात का एहसास हुआ। इस समारोह का कारण केवल सत्तर वर्ष नहीं था। निरंजन एक वास्तुकार के रूप में अच्छा काम कर रहा था। उसने हाल ही में एक पंचसितारा होटल का काम पूरा किया था। एक और पंचसितारा होटल का काम मिलने की संभावना थी। इसलिए, इस समारोह में अपने संपर्कों से जुड़े लोगों को आमंत्रित करने का निर्णय लिया गया। घर वापसी और अन्य धार्मिक कार्यक्रमों के लिए घर के सामने एक बड़ा तंबू लगाने का निर्णय लिया गया। अगले दिन निरंजन के काम करने वाले पंचसितारा होटल में व्यवसाय से जुड़े लोगों के लिए एक भव्य भोज का आयोजन किया गया। इसका उद्देश्य नए ग्राहकों को अपना काम दिखाना था। इसके अलावा, उनके वास्तुकार होने के नाते, होटल मालिकों ने एक तिहाई कीमत पर सभी व्यवस्थाएँ करने पर भी सहमति जताई थी। उस रात कौन क्या पहनेगा, यह भी अब तक तय हो चुका था। कांति द्वारा लाई गई साड़ी को देखते ही सबने तय कर लिया कि मामी उस अवसर पर यह साड़ी पहनेंगी। यह भी तय किया गया कि कांति को अपने बालों को एक बार फिर से संवारना चाहिए। पूरा घर उत्साह से भरा हुआ था।
निरंजन एक प्रतिभाशाली वास्तुकार थे। उन्होंने एम्स्टर्डम में शिक्षा प्राप्त की थी। अब वे व्यवसाय में अच्छी तरह स्थापित थे।
एक दिन पिताजी ने मुझसे पूछा,
``कांति, तुम्हारा घर का फ़ोन नंबर क्या है? तुम्हारे पति घर कब आते हैं?"
उस रात उसने खुद फोन किया और पूछताछ की,
आप कैसी हैं? घर की गंदगी और धूल से परेशान मत होइए। कांति जब वहाँ पहुँचेगी तो सब देख लेगी! चाहे वो कितनी भी नाराज़ हो जाए, उसका पति क्या करेगा?' हा हा हा, स्नेह जताते हुए और मुस्कुराते हुए उसने कहा, 'मैं कल आपके दफ्तर के पते पर दो हवाई टिकट कूरियर से भेज दूँगा। आप अनूप के साथ आइए!'
पास ही खड़ी कांति को ऐसा लगा मानो पापा के सुझाव से समस्या हल हो गई हो।
लेकिन दूसरी तरफ से, रविंद्र ने कहा,
नहीं नहीं! हवाई जहाज़ के लिए पैसे लाने का ये कैसा दफ्तरी काम है? पैसे मत भेजो – मेरे पास पैसे हैं!
नहीं नहीं! गलत मत समझिए। लगता है मैंने ठीक से नहीं कहा। मेरा मतलब था कि अगर हम अपने कारोबार से कमाए पैसों से टिकट खरीदते हैं, तो टैक्स के लिहाज से यह सुविधाजनक होगा। लेकिन अगर हमारे दामाद या पोते नहीं हैं, तो हम ऐसा कैसे कर सकते हैं?" उन्होंने समझाने की कोशिश की।
उन्होंने यह भी कहा, "मुझे छपा हुआ निमंत्रण पत्र मिल गया है। समारोह की सारी जानकारी मिल गई है..."
कुल मिलाकर, वह आएगा या नहीं, यह एक रहस्य ही बना रहा। पापा ने उसे उससे बात करने को कहा। अगली रात, जब ऊपर वाले कमरे में कोई नहीं था, तो उसने बैंगलोर फोन किया। बड़े प्यार से पूछा, 'खाने का क्या कर रहे हो? होटलों के खाने से ऊब गए हो? मुझे समझ नहीं आता कि दक्षिण भारत के होटल वाले बिना तेल डाले पोलही कैसे बना लेते हैं! सिर्फ चावल और सांभर खाकर कैसे गुजारा करोगे?' इस तरह की पूछताछ के बाद, उसने खास प्यार भरे लहजे में कहा, 'झूठे! मुझसे मिलना नहीं चाहते? इतने बूढ़े हो गए हो क्या? मेरा दामाद गांव में है - लेकिन उसे मेरी आंखों के सामने जुदाई का दर्द सहते देख पापा ने मुझे हवाई टिकट भेजने की पेशकश की, तो तुम क्यों मना कर रहे हो? अरे, दामाद का यही हक है! वह कभी जाना ही नहीं चाहता! पापा को इस बात पर भी बहुत गर्व है कि उनका दामाद इतने बड़े अखबार का संपादक है! ट्रांसकॉन्टिनेंटल नाम का एक नया होटल है - निरंजन इसके आर्किटेक्ट हैं।' वहाँ एक भव्य स्वागत समारोह आयोजित किया जा रहा है। बहुत सारे लोग आ रहे हैं! वे चाहते हैं कि मेरा दामाद

भी उनमें शामिल हो, उनका कहना है कि वह एक बेहतरीन संपादक हैं। आप उन्हें इतना निराश क्यों कर रहे हैं?..."
यहां के समाचार संपादक छुट्टी पर हैं। एक उप-संपादक भी छुट्टी पर हैं! इसीलिए मेरा आना असंभव है! अनुपाल को वापस लाना – उसे दोबारा सौंपना संभव नहीं है। समारोह के लिए मेरी शुभकामनाएं!
उसे ऐसा लग रहा था जैसे वह पूरी तरह से अलोकप्रिय हो गई हो। वह कुछ न कुछ करके भी उसे अपनी बात मनवाने में नाकाम रही थी। कब से? हाँ – मूर्ति चोरी होने के बाद से वह हमारे गांव आया था! खासकर जब से अनुपाल को उस दलभद्री स्कूल में भेजा गया है, वह और भी ज़िद्दी हो गया है! इसके बाद वह उसे फिर से चिढ़ाने लगती और वह उसे ठंडे लहजे में जवाब देता – यह सोचकर कि यह कोई खेल नहीं है, वह कहती, 'जैसी तुम्हारी मर्ज़ी!' और फोन रख देती।
हालांकि मां अपने पति के अजीबोगरीब व्यवहार से परेशान थी, फिर भी उसने उसे एक और कहानी सुनाई:
“इस बात को शांति तक मत पहुंचने देना – उसका सब्र पहले से ही कम है – उसे रजनी के सामने जाकर जवाब मांगना पड़ेगा!” उसने अपना परिचय देते हुए कहा, “ओह, रजनी अपने पति के साथ अलग रहना चाहती है! तुम इस घर में ऊपर रहो – अगर हम नीचे रहने को कहें तो भी उसे पसंद नहीं आता। वह एक गली में नहीं रहना चाहती – यही उसकी ज़िद है। मैंने देखा कि वह सिर उठा रही थी! अब निरंजन का कारोबार भी खूब चल रहा है। अगर वह उसके दफ्तर के काम में मदद करे तो क्या दिक्कत है? लेकिन उसने तो उसे भी रोक दिया। इसके बजाय उसने कहा कि हम एक अलग नौकर रखेंगे! अब, तुम्हारे पापा ने अपने सत्तरवें जन्मदिन पर अपनी आमदनी इस तरह बांटने का फैसला किया है। उन्होंने निरंजन को सीधे बता दिया। उन्होंने उसकी पत्नी के सामने कहा। वह ज़िद कर रही है कि लड़कियों को उसमें से कुछ भी न दिया जाए। वे कहती हैं – मैं अपनी कमाई किसे दूं, यही मेरा सवाल है!” निरंजन में ऐसी स्वार्थी बुद्धि नहीं है। उसे पूरा भरोसा है कि वह अपने दम पर सब कुछ हासिल कर सकता है। लेकिन किसी भी पुरुष में अपनी पत्नी की कूटनीति का सामना करने की हिम्मत नहीं होती। वह एक ही गाँव में दो घर नहीं बनवाना चाहता। देहरादून के पास एक बड़ी फैक्ट्री बननी है। निरंजन ही आर्किटेक्ट है। उस फैक्ट्री के मालिक ने तुम्हारे पिता को पूरे निर्माण की देखरेख करने को कहा है। वह तुम्हें एक बंगला, एक कार और बारह हजार रुपये प्रति माह रहने के लिए देगा। काम कम से कम तीन-चार साल चलेगा। हम दोनों वहां जाकर रहने की योजना बना रहे हैं। हम दून में ही एक छोटा सा बंगला बनवा लेंगे। वहाँ गर्मी की कोई समस्या नहीं है। सर्दियों में हम एक महीना दिल्ली में और एक महीना लड़कियों के साथ बिताएंगे।
कांति अपने देवर पर बेहद क्रोधित थी। पिताजी ने भी अपना पूरा जीवन शान-शौकत में बिताया है... उन्होंने अपने बेटे को इतना बड़ा वास्तुकार बनाया है... उन्हें अपनी बहू से क्यों डरना चाहिए? उनमें इतनी हिम्मत क्यों नहीं है कि वे उसे घर छोड़ने के लिए कह सकें?
जब वह यह सोच ही रही थी, रजनी ने हल्के से दरवाजे पर दस्तक दी और उतनी ही कोमल आवाज में पुकारा,
`` मम्मी... "
मां ने भी उतना ही प्यार दिखाते हुए कहा,
चलो, चलो, बेबी!..."
कुमर का दरवाजा खुला। रजनी दरवाजे पर खड़ी थी। उसने कहा,
"मैं ब्यूटी पार्लर गई थी। मैं इसलिए गई थी ताकि अगर दुलहन आए तो मैं उसे भी ले जा सकूं। उसके चेहरे पर पसीने के दो निशान थे। अगर मैं अभी उसका इलाज कर दूं तो समारोह के दिन उसका चेहरा साफ हो जाएगा।"

"चलो चलें! हम आपको बताते हैं कि रजनी की सास क्या कहती हैं! वह मुझे हमेशा आपकी याद दिलाती हैं!" माँ ने बड़े स्नेह भरे लहजे में सुझाव दिया।
यह जानते हुए कांति ने यह भी कहा,
चलो... मैं यहाँ हूं..."

■

अगली सुबह आठ बजे, उसे एक कॉल आया। जैसे ही रजनी ने कहा, "वंशा, आपका फ़ोन नंबर," उसने रिसीवर कान से लगा लिया। दूसरी तरफ से आवाज़ आई,
``हाय, कांति! मैं तुम्हें अपना नाम नहीं बताऊँगी। चलो मेरी आवाज़ से पहचानते हैं!"
चाहे कितने भी साल बीत जाएं, उस आवाज को भूलना नामुमकिन था। वह ऐसे चीखती थी मानो किसी खेल के मैदान में चीख रही हो।
``हाय ऽ शीतल!... "
"दिल्ली आए हुए तुम्हें दस दिन हो गए हैं और तुमने मुझे एक बार भी फोन नहीं किया - मुझसे संपर्क करने की कोशिश तक नहीं की? चले जाओ! मैं तुमसे बात नहीं करूंगी!"
कल सुबह मैंने अपनी मां से आपका फोन नंबर मांगा और आपको फोन किया। क्या आप मुझे अपना फोन नंबर बता सकते हैं?
मैंने अपना घर बदल लिया है... मैंने अपना फ़ोन नंबर भी बदल लिया है! मुझे बताइए आप मुझसे कब मिलेंगी। अगर आप चाहें तो मैं आज दोपहर ऑफिस से छुट्टी ले लूंगी। क्या मैं आपको लेने घर आ सकती हूँ? मैं यहीं ग्रेटर कैलाश में रहती हूँ।
``कोई बात नहीं। आज कोई काम नहीं है। खैर, मैं एडजस्ट कर लूंगा। आप आइए—रुको—अरे, लेकिन आपको कैसे पता चला कि मैं आ गया हूं?"
"अंतरमहाद्वीपीय स्वागत समारोह का निमंत्रण पत्र आ गया है। हमारे मंत्रालय के सभी प्रमुख अधिकारियों को आमंत्रित किया गया है। इससे मैं यह बता सकता हूँ कि आप आ चुके हैं या आएंगे।"
"एक मिनट रुको..." तो कांति ने रिसीवर नीचे रख दिया और यह पता लगाने के लिए अंदर चली गई कि क्या उस दिन कोई खास बात है। उसने फिर से रिसीवर उठाया और कहा, "शीतल, आज दोपहर आ जाओ। हम शाम आठ बजे तक साथ रह सकते हैं।"
मैं एक बजे वापस आऊंगा। घर पर खाना मत खाना। चलो बाहर कुछ खाते हैं। फिर मेरे घर चलते हैं। मैं तुम्हें रात को तुम्हारे घर छोड़ दूंगा।
तय समय पर शीतल एक बजे पहुंची। एक पुरानी परिचित की तरह सहजता से उसने कांति की मां से थोड़ी देर बातचीत की। आते ही उसने सम्मान दिखाने के लिए हल्का सा झुककर अभिवादन किया। जब वे मिरांडा हाउस में साथ पढ़ती थीं, तब शीतल कई बार कांति के साथ घर आई थी। निर्मला सिंघानी, जया श्रीवास्तव और ये चारों उस समय एक समूह थीं। कांति की मां रत्नाम्मा को याद था कि वह शीतल की शादी में गई थीं। बाद में भी, उन्हें कई बातें पता चली थीं। रत्नाम्मा ने समय-समय पर शीतल के ससुराल वालों द्वारा दहेज को लेकर उसे परेशान करने की कहानियां सुनी थीं - उसका पति भी अपने माता-पिता के पीछे छिपा हुआ था - शीतल की अपने पति से एक 'असली मर्द' होने की उम्मीदें थीं और इसी वजह से उसके परिवार में दरार आ गई थी। उन्हें यह भी पता था कि शीतल का आखिरकार तलाक हो गया था। उन्होंने इस विषय पर कांति से भी बात की थी।
आज की लड़कियों में बहुत साहस है! चाहे कुछ भी कहो, इस क्षेत्र के लोगों ने अपनी बहुओं को उनके ससुराल वालों के साथ रहने के लिए राजी करने में बहुत

प्रगति की है!
अब उसने शीतल से कहा,
"तुम दोनों यहीं खाना खा लो। होटल जाने की क्या जरूरत है?"
"आंटी, यहां एक नया होटल खुला है। मैं उन्हें इसका अनुभव कराना चाहती थी, इसलिए मैं यहाँ आई हूँ।"
दोनों शीतल की फिएट कार से बाहर निकलीं। बाहर धूप में कांति ने देखा कि शीतल के कान के पास के बाल भूरे दिख रहे थे। हालांकि उन्हें बहुत सावधानी से रंगा गया था, फिर भी ध्यान से देखने पर रंग में अंतर साफ नज़र आ रहा था। कांति को एहसास हुआ कि शीतल भी उसी की उम्र की है, यानी अड़तीस साल की।
उसने पूछा,
क्या आपने खुद घर खरीदा?
जी हाँ। प्लॉट में तीन कमरे हैं। अब आप देख लेंगी। क्या आपको अपना घर खरीदने के लिए सरकारी लोन मिल सकता है? अगर हम सब हिसाब लगाएं तो किराया चुकाने के साथ-साथ कुछ सालों में किश्तों में अपना घर भी खरीद लेंगे। आप अपने पति को बताकर दिल्ली क्यों नहीं आ जातीं?
आखिरी सवाल सुनकर कांति खुश हो गई। उसके दोस्त इसी गांव में रहते हैं। अगर हमारा बेटा यहीं रहेगा तो उसका पालन-पोषण बहुत अच्छे से होगा। लेकिन यह बात उसके पति को तो मंजूर होनी चाहिए, है ना? लेकिन इस बारे में कुछ कहे बिना ही उसने कहा,
"लेकिन उच्च अधिकारियों को तो सुनना ही चाहिए, है ना?"
शीतल ने ग्रेटर कैलाश के पास दुकानों के नज़दीक कार खड़ी की। वह कांति को लेकर अंदर 'हडसन क्लब' नाम के एक रेस्तरां में गई। वातानुकूलित वातावरण में, एक दीवार पर मैनहट्टन की एक तस्वीर लगी थी - ठीक उसके सामने वाली तस्वीर के आकार की। गगनचुंबी इमारतों को देखकर किसी का भी सिर चकरा जाता था। दूसरी दीवार पर मियामी बीच का ऐसा ही दृश्य था। पुरुषों और महिलाओं की कतारें नंगे बदन नहा रही थीं और धूप सेंक रही थीं, उन्होंने इतने छोटे कपड़े पहने थे जो उनकी मर्यादा को बचा रहे थे। एक और दीवार पर वाई.एस.ए. नाम का एक रॉकेट वायुमंडल को भेदकर अंतरिक्ष में छलांग लगाने की कोशिश करता हुआ दिखाई दे रहा था - कुल मिलाकर, वहाँ का वातावरण अंदर आने वालों के मन में यह एहसास जगा रहा था कि वे अमेरिका में ही आ गए हैं। वातावरण में बहती सुहावनी हवा और मधुर जैज़ संगीत मन को तरोताज़ा कर रहे थे। काउंटर पर बैठी रिसेप्शनिस्ट, जो ग्राहकों की संख्या के अनुसार बैठने की व्यवस्था करती थी और उनकी पसंद के अनुसार खाना परोसती थी, वहाँ के सभी सख्त कर्मचारी अठारह से तीस वर्ष की आयु की आकर्षक व्यक्तित्व वाली युवतियाँ थीं। उन सभी ने पीले रंग की शर्ट पहनी हुई थी, जिसकी आस्तीनें कोनों तक पहुँच रही थीं, और स्टोनवाश्ड जींस पैंट पहनी हुई थी। पैरों में टैक शूज़ थे। शर्ट के सामने वाले हिस्से पर बड़े अक्षरों में हडसन लिखा हुआ था, जिसे युवतियाँ अपने सीने पर लगाए हुए थीं। सभी के बाल एक जैसे कटे हुए थे। सभी का अंग्रेज़ी लहजा अमेरिकी शैली का था। हिंदी-पंजाबी-राजस्थानी-किसी अन्य भाषा का प्रयोग नहीं होना चाहिए, ऐसा दमनकारी वातावरण था।
जैसे ही उन दोनों को बैठने की जगह मिली, शीतल ने मेनू कार्ड देखे बिना ही अपना ऑर्डर दे दिया।
``वन किंग साईझ वुईथ ऑनियन ग्रीन चिली–द ग्लासेस् ऑफ फेश ऑरेंज विथ आईस अॅड नो शुगर."
जब वह ऑर्डर लेकर चली गई, तो शीतल ने कांति से अंग्रेजी में पूछा,
"क्या तुमने पिज्जा खाया?"

``हां-मैंने खाया..." कांति ने कहा। शीतल ने उसके वाक्य को बीच में ही रोकते हुए उसके कान में फुसफुसाया,
अंग्रेजी! यहाँ अंग्रेजी बोलो – यहाँ शिष्टाचार एक जैसा ही है! – भले ही यह एक रेस्तरां है, इसे क्लब कहा जाता है – इसका मतलब है कि आपको यहाँ क्लब के शिष्टाचार का पालन करना होगा! क्या आप कभी अमेरिका गए हैं?
नहीं...
मैं आपको बता रहा हूँ... असल में, पिज़्ज़ा एक इतालवी व्यंजन है! लेकिन अमेरिका में मिलने वाले बेहतरीन पिज़्ज़ा जैसा शानदार पिज़्ज़ा आपको दुनिया में कहीं और नहीं मिलेगा! इटली में भी नहीं! मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ! यहाँ का पिज़्ज़ा बिलकुल अमेरिकी पिज़्ज़ा जैसा ही है! दोपहर का समय है, इसलिए भीड़ बहुत ज़्यादा है। शाम के पाँच बज रहे हैं, तो मैं आपको बताता हूँ कि कितनी भीड़ होती है! अगर आप पहले से फ़ोन करके सीट रिज़र्व करवा लें, तो आपको एक निश्चित समय पर सीट मिल जाएगी!..."
कांति अंग्रेजी अच्छी तरह बोल सकती थी। उसकी शिक्षा एक कॉन्वेंट स्कूल और अन्य अंग्रेजी स्कूलों में हुई थी। लेकिन जब पांच-छह साल बाद उसकी इतनी करीबी दोस्त से मुलाकात हुई, तो हिंदी में बात करना अंग्रेजी से ज्यादा आसान लगा। लेकिन यहाँ का माहौल कैसा था! वहाँ सब लोग एक-दूसरे से दबी आवाज़ में बात करते थे। वह भी उसी दबी आवाज़ में खेल रही थी।
"अगर आपको अंग्रेजी बोलनी है, तो आप मुझे यहां क्यों लाए?"
पिज्जा खाओ! तब तुम्हें समझ आ जाएगा...
लेकिन दोनों को पता था कि पिज्जा जल्दी नहीं आएगा। गाड़ी चलाते समय एक-दूसरे के चेहरे देखते हुए वे ठीक से बात नहीं कर पा रहे थे। अगर आप यहाँ आते हैं, तो शिष्टाचार कैसे! कांति हिचकिचाई। फिर भी, उसने दबी हुई आवाज़ में पूछा,
आप वर्तमान में किस मंत्रालय में काम करते हैं?
``फॉरेन ट्रेड!... "
``किस्मत अच्छी है! इसीलिए तो तुमने विदेश यात्राएं इतनी कीं!"
“क्या तुमने विश्व औद्योगिक प्रदर्शनी में भाग लिया था? तुम फ्रैंकफर्ट गई थीं। फिर एक बार न्यूयॉर्क गईं। एक बार ओसाका गईं। तुम हर क्षेत्र में गईं, तुम पूरे क्षेत्र को देखना चाहती थीं!” ये कहते हुए उसका चेहरा गर्व से भर गया। कांति के मन में ईर्ष्या और जलन भी जाग उठी। अब उसे एहसास हुआ कि शीतल का 'सजावटी थैला' विदेशी लग रहा था। हालांकि वह ठीक-ठीक नहीं बता सकती थी कि यह किस देश का है, लेकिन चमड़े की बनावट, आकार और सुंदरता से वह समझ गई थी कि यह विदेशी है। कांति पहले ही पहचान चुकी थी कि उसने जो थैला सिला था, वह सेंट पेरिस का था। यह स्पष्ट था कि उसने जो सिंथेटिक साड़ी पहनी थी, वह भारत की नहीं थी। इतनी बार विदेश जाने के बाद, उसकी अलमारी और दराज तो वहां की साड़ियों से भरी ही होगी! अगर उसने हमें दे दी होती, तो बात अलग होती, वरना खुद खरीदने के इरादे से पूछने का क्या मतलब था? लेकिन नहीं, ये अच्छा नहीं लगेगा...
कांति ने निर्मल और जया से धीमी आवाज़ में पूछा। देखते ही देखते पिज़्ज़ा आ गया। यह सचमुच किंग साइज़ था, यानी बहुत बड़ा! इतना बड़ा कि कांति को आश्चर्य हुआ कि क्या वे दोनों इसे खत्म कर पाएंगे। साथ ही, संतरे के रस के दो बड़े गिलास भी थे। कांति के लिए चाकू और कांटा कोई नई बात नहीं थी।
पिज्जा बहुत ही स्वादिष्ट था। उसे डर था कि अगर उसने पिज़्ज़ा पर लगा पनीर खा लिया तो उसका वज़न एक दिन में दो किलो बढ़ जाएगा, लेकिन उसने खुद को समझाया कि ऐसा तो कभी-कभार ही होता है।
शीतल ने यह भी कहा,
"मैंने यहाँ पिज्जा खाया, और उस रात मैंने सिर्फ खीरे खाए और सो गया।"

दोनों ने खूब खाया, लेकिन फिर भी बहुत सारा पिज्जा बचा था। तीन बजे घर पर चाय पीने का फैसला करने के बाद, शीतल ने बिल लाने का इशारा किया। बिल को रिसेप्शन की अलंकृत घड़ी से लाकर दिया गया।
कितना?
"कितने पैसे! आप क्या करना चाहते हैं?"
"हां, बिलकुल। मैंने इसलिए पूछा क्योंकि मैं जानना चाहता था।"
"दो सौ अड़तीस रुपये और पचहत्तर पैसे..." शीतल ने बहुत ही सरल शब्दों में कहा।
"इतना? उन्होंने इसकी गणना कैसे की?" कांति ने अन्याय के खिलाफ विरोध जताते हुए स्वर में पूछा।
"किंग साइज़ पिज़्ज़ा के बारह डॉलर और संतरे के जूस के दो डॉलर। कुल सोलह डॉलर। एक डॉलर के तेरह रुपये। टैक्स भी लगाओ। ऊपर से पंद्रह प्रतिशत टैक्स भी - और यहाँ बारह प्रतिशत टिप देने का रिवाज है..." शीतल ने पैसे डालते हुए पूरा हिसाब समझाया।
"लेकिन भारत में डॉलर की गणना कैसे होती है?"
"न्यूयॉर्क में भी यही दरें हैं। यहाँ भी वही दरें हैं। बेशक, बिल रुपये में ही मिलेगा। वे डॉलर में बिल नहीं मांगते। वे तो उचित हैं! चलिए चलें?"
शीतल का फ्लैट वहाँ से महज़ आधा किलोमीटर दूर था। वह चौथी मंजिल पर था। लेकिन वहाँ लिफ्ट थी। हर फ्लैट मालिक के लिए अलग गैरेज भी था। चौबीसों घंटे चौकीदार भी तैनात रहता था। छोटा बरामदा, बड़ा लाउंज और उसका शयनकक्ष वातानुकूलित थे। फ्लैट को बहुत ही कलात्मक ढंग से सजाया गया था।
चलो, यहीं लेटकर बातें करते हैं। कॉलेज के दिनों में हम चारों ऐसे ही थे।
हम बातें कर रहे थे... तुम्हें उसकी कितनी याद आती है? रुको, मैं तुम्हें एक घर का गाउन देती हूँ-" शीतल ने एक बड़ी अलमारी खोलकर एक गाउन निकालते हुए कहा। कांति की आंखों के सामने अलमारी पर अलग-अलग तरह और गुणवत्ता के कम से कम पंद्रह-बीस गाउन और नाइट ड्रेस गिर पड़े। कांति ने भी अपनी साड़ी उतार दी और मोर के रंग का, बेहद लंबा गाउन सिर से पैर तक पहन लिया। शीतल पर सफेद गाउन उसकी नज़र पड़ते ही नज़र आ गया। गाउन के स्पर्श को अपने मन में संजोए हुए कांति सोचने लगी। यह गाउन ज़रूर पेरिस का होगा। न्यूयॉर्क का तो बिल्कुल नहीं। भारत का तो बिल्कुल नहीं! इस जगह पर कुछ भी भारतीय नहीं है...
शीतल ने एयर कंडीशनर चालू किया और कांति से कहा,
चलो... सो जाओ। चलो..."
नरम गद्दे पर लेटी हुई कांति ने पूछा,
"क्या आप अकेले रहते हैं?"
"तो? आप कह रहे हैं कि मुझे किसके प्रेमी को बुलाना चाहिए?" शीतल मुस्कुराई, लेकिन उसकी मुस्कान में स्पष्ट रूप से तिरस्कार झलक रहा था।
``ऐसा नहीं है, जैसे... खाना पकाने का पानी... घर के काम आदि..."
"एक महिला सुबह आती है और फर्श, दरवाजे और खिड़कियां साफ करने जैसे सारे काम करती है। वह शाम को आती है, खाना बनाती है और चली जाती है। वह सुबह फल, कॉर्नफ्लेक्स, डबल रोटी, दूध आदि लेकर जाती है। नरोला का लंच दोपहर में ऑफिस आता है। वह रात को घर पर खाना खाती है। अगर किसी को 24 घंटे घर पर रहने के लिए कहा जाए, तो इससे उसकी आजादी सीमित हो जाती है। इसके अलावा, यहां सुरक्षा की कोई समस्या नहीं है।"
आपने शादी के बारे में क्यों नहीं सोचा?
तुम उस बुरे सपने को दोबारा क्यों जीना चाहते हो? मैं तो बिल्कुल खुश हूँ...
अपनी बात पूरी करने से पहले ही कांति को जम्हाई आ गई।

यह देखकर शीतलाच ने कहा,
"तुम आधे घंटे की झपकी ले लो, देखते हैं! फिर हम आराम से बातें कर सकते हैं।"
आप?
दोपहर में झपकी लेना हर गृहिणी का अधिकार है! अगर आपको नींद नहीं मिलती, तो सिर दर्द होने लगता है... अब गोली लेने का समय आ गया है! कामकाजी लोगों का क्या हाल है? संकोच न करें। सो जाइए।
कांति ने अपना रुख बदलते हुए गिरते हुए फल का आदेश सुनाया।
शीतल कांति पर गुस्सा थी। वह भी बाकी गंदी भारतीय महिलाओं जैसी ही है! एक बार जान लो, तो बस! तुमने शादी क्यों की?
नहीं? – इसीलिए तो ये लोग बार-बार पूछते हैं! अगर उन्हें लगता है कि उसका तलाक हो चुका है, तो पूछने का कोई मतलब नहीं। पश्चिमी देश इससे कहीं बेहतर हैं!
चाहे जो भी हो, ये बचपन की दोस्त है। इन्होंने कई मौकों पर एक-दूसरे के सुख-दुख बाँटे हैं। फिर भी, गृहस्थी में रहने वाली विवाहित महिलाओं की नज़र में, पति के बिना अकेली रहने वाली महिला का जीवन अर्थहीन है! क्या वो भी गृहिणी नहीं है? क्या वो अपने जीवन में पूरी तरह खुश है? जब कांति गहरी साँसें लेते हुए चैन से सो रही थी, शीतल को उसके पुनर्विवाह के प्रयास याद आ गए।
मेरे माता-पिता हाँ कह रहे थे, इसलिए मैंने मना कर दिया। अगर मैंने उस समय हाँ कह दी होती, तो क्या शादी हो पाती? पति और बेटे जो एक खूबसूरत, जवान लड़की से शादी करने के लिए भी संघर्ष कर रहे हैं, जो लाखों रुपये का दहेज देती है! क्या वे एक तलाकशुदा से शादी करेंगे? कोई भी शांति से यह नहीं सोचता कि गलती किसकी है। 'तलाकशुदा' का लेबल ही 'ना' कहने के लिए काफी है। मैं किसी के लिए परेशानी नहीं बनना चाहती थी, इसलिए मैंने उस समय ना कह दिया! मेरे देवर घर आए, उसके बाद मैं स्वतंत्र रूप से रहने लगी – उसके बाद मैंने अपनी पसंद के आदमी से शादी कर ली –
मुझे कई पुरुष पसंद थे। मैं कई ऐसे पुरुषों को जानती थी जो प्यार से बातें करते थे। मुझे अपने सहकर्मियों से बहुत उम्मीदें थीं। लेकिन उनमें से किसी ने भी शादी की बात नहीं उठाई। मैंने इस बारे में कुछ कहने की कोशिश की, लेकिन उन्होंने अनदेखा कर दिया। जब मैंने उनसे सीधे पूछा, तो दोनों ने कहा - हमें कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन हमारे माता-पिता पुराने ख्यालों के हैं!
फिर वे लोग दोस्ती के लिए आगे आए, वे सभी वयस्क थे और उनके घर पर पत्नियां और बच्चे थे। तब तक मैं जवान नहीं रह चुका था। इसीलिए कोई भी अकेला नहीं घूम रहा था।
विवाहित जोड़े तो बिलकुल अलग ही कहानी हैं! अनुभवी! उनके व्यवहार और बातों में कितनी चतुराई और धूर्तता है! मानो वे अपनी पत्नियों को तलाक देकर मुझसे शादी करने वाले हों। इसी भ्रम में मैंने दुआ और खन्ना को अपने फ्लैट पर आमंत्रित किया और—वाह! क्या आशीर्वाद है, सिगरेट के विज्ञापनों की तरह, 'एक-दूसरे के लिए बने हैं!'! अंत में, मैंने पूछा,
"तो फिर आप अपनी पत्नी को तलाक कब देंगे?"
"तलाक?" उसके चेहरे पर घोर आश्चर्य के भाव थे।
तो फिर? वरना तुम मुझसे शादी कैसे करोगे? इस गुप्त रिश्ते को कब तक छुपा कर रखोगे? अगर तुम सच में एक-दूसरे के लिए बने हो, तो चलो जीवन भर साथ रहें!
फिर अचानक उसके चेहरे से वो उत्साह कैसे गायब हो गया!
"मैं इस बारे में सोचूंगा और आपको बताऊंगा," उसने कहा और भाग गया! एक बार, हम उसे ऑफिस से बोट क्लब ले गए और उससे सीधे पूछा, और उसने

कहा,
"यह सच है कि हम एक-दूसरे के लिए बने हैं। लेकिन इसमें मेरी पत्नी की क्या गलती है? फिर मेरे तीन बच्चों का क्या होगा?"
"आप उन्हें अपना वेतन दे दीजिए। मेरा वेतन हम दोनों के लिए पर्याप्त होगा।"
यह सिर्फ पैसों का सवाल नहीं है। अगर घर में कोई सक्षम पिता नहीं है, तो बच्चों का व्यवहार बिगड़ने में देर नहीं लगेगी – वे नशे जैसी लतों के शिकार हो जाएंगे। उन्हें बर्बाद करना नैतिक रूप से सही नहीं है...
...और मेरे साथ धोखा करने में कौन सी नैतिकता फिट बैठती है?..."
तुम अज्ञानी नहीं हो। तुम मेरी ही उम्र के हो। तुम मुझसे ज़्यादा अनुभवी हो! यह सच है कि हमारा स्नेह बढ़ा है। एक तरह से, हम सचमुच एक-दूसरे के लिए बने हैं। लेकिन तुम मुझ पर धोखा देने का आरोप नहीं लगा पाओगे! अगर तुमने ऐसा करने की कोशिश की, तो – धन्यवाद और अलविदा! –" इस तरह पीठ फेरकर चले जाना – न कोई फ़ोन कॉल, न कोई मुलाक़ात –
ऐसी घटनाओं के बाद, पुरुष जाति के प्रति घृणा के अलावा और कौन सी भावना उत्पन्न हो सकती है? लेकिन यह शरीर! यह शरीर – इसमें मौजूद ग्रंथियाँ मन को नियंत्रित करती हैं, है ना? उस समय मुझे दृढ़ता से महसूस हुआ कि इस शरीर के सामने मन का कोई खेल नहीं खेला जा सकता। अन्यथा, ऐसे अनुभव के छह महीने के भीतर ही मैं खन्ना के साथ संबंध बनाने की पहल कैसे कर सकती थी?
ऐसे रिश्ते में सही जगह चुनना पुरुष की ज़िम्मेदारी होती है! मैं खन्ना को, जो मौज-मस्ती कर रहा था, अपनी ज़िम्मेदारी से बचने के लिए अपने फ्लैट पर ले जाती थी, है ना? गंगा-यमुना-संगम वगैरह-वगैरह - फिर भी मुझे लालच होता था, है ना? सब कुछ खत्म करके चाय-नमकीन खाने के बाद, क्यों छह बजते देख घर की ओर भागते खन्ना के प्रति मेरा गुस्सा कम होता था? ऐसी स्थिति में भी मेरा मन बेचैन हो जाता था। दिन में दफ्तर में समय बिताना बहुत मुश्किल नहीं था। रात को घर में अकेले सोना - वह जानलेवा अकेलापन - अगर मुझे यह पक्की उम्मीद न होती कि सुबह उठते ही कोई मुझे अपनी बाहों में भर लेगा, तो मैं उससे कुछ भी न पूछती।
जब मैंने उससे पूछा, तो मुझे उससे वही जवाब मिला। मैंने कहा,–
"अगर ऐसा है तो तुम मेरे इतने करीब क्यों आए?"
आपने मुझे बुलाया, इसलिए मैं आ गया! बस इतना ही!
यही मेरी अवस्था है!! एक बार फिर मनुष्य-पशु के प्रति घोर घृणा – लेकिन मेरे भीतर कितनी भी घृणा क्यों न हो, यह शरीर – यह अदम्य शक्ति –
एक दिन मैंने उन दोनों को शास्त्री भवन के सामने पत्तों की दुकान पर खड़े देखा, वे एक-दूसरे के लिए ताली बजा रहे थे और दोस्ताना अंदाज़ में बातें कर रहे थे। उन्होंने मुझे भी देख लिया। अगर धरती भी बंट जाए तो भी कोई बात नहीं, उस समय मुझे ऐसा ही लगा! क्या ये दोनों इतने गहरे दोस्त हैं? क्या इसका मतलब यह है कि जब वे आपस में बात करते हैं तो हमारी बातें भी आती हैं? क्या पुरुषों को इसमें एक तरह का मर्दाना गर्व महसूस नहीं होता!
शीतल पुरानी यादों में खोई हुई थी, तभी उसने कांति की सांस लेने के तरीके में बदलाव महसूस किया। उसके चेहरे से उसे पता चल गया कि वह जाग रही है।
कुछ ही क्षणों में कांति पूरी तरह से जाग गया और बोला,
"यह क्या है? मैं कितने समय से सो रही थी? काफी समय हो गया जब हम आखिरी बार मिले थे," उसने उठते हुए और चेहरा धोते हुए कहा।
शीतल ने पूछा...
आप कैसी हैं? आपके पति क्या कहते हैं? अनूप अब किस कक्षा में पढ़ता है? वह कहाँ है?
कांति ने अनूप के स्कूल के बारे में अपनी भावनाएं केवल अपनी मां से ही व्यक्त की थीं। चूंकि पिताजी जल्दी में थे, इसलिए वे शांति से बैठकर बातचीत नहीं कर

पाए थे। यह भी स्पष्ट था कि समारोह समाप्त होने तक यह संभव नहीं होगा। अब, जैसे ही उसकी सहेली ने इस विषय को उठाया, उसने खुलकर बात करना शुरू कर दिया।
मेरे पति गांधी जी के प्रति आसक्त हैं! वे भारत को बचाएंगे – वे मेरे बेटे को मना करते हैं, जो भारत के साठ करोड़ लोगों को समझ नहीं आता! इसीलिए उन्होंने मेरे बेटे अनूप को एक गरीब गांव में छात्रों द्वारा बनाए गए स्कूल में भेजा...
लेकिन वह सेंट्रल स्कूल में पढ़ रहा था, है ना?
यह देखकर कि उसे अपने बेटे के बारे में सारी बातें याद थीं, कांति को उससे और भी अधिक जुड़ाव महसूस हुआ।
हां। पहले वो केंद्रीय विद्यालय में पढ़ता था। गांव बड़ा था। वो ठीक से स्कूल नहीं जाता था। छोटा लड़का था। क्या तुम, मैं, जया, निर्मल भी ऐसा ही नहीं करते थे? क्या वो स्कूल-कॉलेज छोड़कर सिनेमा नहीं जाते थे? लेकिन जब परीक्षाएँ नज़दीक आती थीं, तो वो दिन-रात पढ़ाई करके साल बर्बाद नहीं होने देते थे। कभी-कभी वो स्कूल छोड़कर अपने दोस्तों के साथ फिल्म 'दिशा-दिशा' देखने भी चले जाते थे। वहाँ के प्रधानाध्यापक फौजी की तरह सख्त थे - उन्होंने शिकायत की। मेरे पति ने इसी बात पर उसे उस स्कूल से निकाल कर गांव के गरीब गांधी स्कूल में दाखिला दिला दिया! मैंने चाहे जितना भी कहा, उसका क्या फायदा?
शीतल के दिल में उमड़ती गर्मजोशी और भी बढ़ गई। कांति की ओर मुड़कर और उसके बालों में हाथ फेरते हुए उसने स्नेहपूर्वक पूछा,
"आपने कहा था कि सब ठीक है, है ना?"
"शादी के बाद शुरू में सब ठीक रहता है, वाह! लेकिन बाद में ये सब बातें शुरू होती हैं - मैं एक पुरुष हूँ - मैं कमाता हूँ! मैं भी कमाता हूँ - मैं उसकी आधी तनख्वाह लाता हूँ, इसलिए मेरे बेटे की पढ़ाई के स्थान और तरीके के बारे में मेरी भी कुछ राय हो सकती थी! एक तरह से देखा जाए तो शीतल, तुम मुझसे बेहतर स्थिति में हो!"
शीतल को अंदर से अच्छा महसूस हुआ। उसने कहा,
"आप गलत हैं। आपको उसी समय कोई और नौकरी भी कर लेनी चाहिए थी।"
"ऐसी स्थिति में यह कैसे संभव था जब मेरे पति अखबार के व्यवसाय में थे और उनका तबादला एक गांव से दूसरे गांव में होता रहता था?"
"किसने कहा कि पति का तबादला हो तो पत्नी को उसी गाँव जाना चाहिए? वह वहीं रहेगी, पति को वहां आकर नहीं रहना चाहिए? किसने कहा कि अपने-अपने गांवों में काम करते हुए छुट्टी के दौरान उन्हें एक-दूसरे के साथ नहीं रहना चाहिए? साथ रहना, यानी साल में 365 दिन साथ रहना – उन्हें एक ही बिस्तर पर क्यों सोना चाहिए? क्या आपने हाल ही में सुप्रीम कोर्ट का फैसला पढ़ा है? पति-पत्नी दोनों दिल्ली में काम करते थे। पत्नी का तबादला पदोन्नति पर गोहाटी हो गया। वह चली गई। बच्चों की ज़िम्मेदारी पति पर आ गई। पति तलाक के लिए अदालत गया। अगर पत्नी ने पदोन्नति ठुकरा दी होती, तो वह दिल्ली में रह सकती थी – उसने कहा कि उसके लिए उसका करियर उसके पति और बच्चों से ज्यादा महत्वपूर्ण है। मामला अदालत में गया। वहां फैसला सुनाया गया – पत्नी का करियर उसकी समस्या है – पति को बच्चों की ज़िम्मेदारी भी निभानी चाहिए! समझ में आया? "तुम कहाँ हो?" शीतल गुस्से से उबल रही थी जब उसने आखिरी वाक्य कहा।
शीतल की बातें सुनते हुए कांति का मन एक अजीब सी संतुष्टि से भर गया। अदालत ने उस बदमाश पति को अच्छा सबक सिखा दिया! लेकिन फिर उसे याद आया। आजकल हम अखबार इतने ध्यान से नहीं पढ़ते! देश के सभी महत्वपूर्ण अंग्रेजी अखबार हमारे घर आते हैं। रविंद्र उनमें सब कुछ पढ़ता है। कुछ लेखों के आगे पेंसिल या लाल स्याही से निशान भी लगाता है। जब वह दफ़्तर जाता है तो

अखबारों का पूरा बंडल अपनी कार में ले जाता है। वह देश की सभी पत्रिकाएँ और साप्ताहिक अखबार घर लाता है और उन पर एक नज़र डालता है। लेकिन हम तो सिर्फ कढ़ाई-बुनाई, सिनेमा-मनोरंजन और खेल-कूद से जुड़े पन्ने ही पढ़ते हैं, उसे यह भी याद आया।

■

चलो... चाय पीते हैं..." शीतल उठी और अंदर चली गई।
कांति भी उसके पीछे-पीछे अंदर चली गई।
शीतल की रसोई देखकर कांति दंग रह गया। यहाँ तक कि वास्तुकार बनने के लिए एम्स्टर्डम आए निरंजन ने भी अपना घर इतनी बारीकी से नहीं बनवाया था। रसोई का चबूतरा, उसके नीचे बनी छोटी-छोटी और साफ-सुथरी अलमारियाँ, उनके स्प्रिंग वाले दरवाजे, और ये कि चबूतरे पर चाक चाहे जैसे भी रखा जाए, उस पर खरोंच तक नहीं आती थी। डिशवॉशर, ये सभी चीजें बहुत ही करीने से एक-दूसरे से जुड़ी हुई थीं।
"ये तुम्हें कहाँ से मिला, यार? ये तो यहाँ का बिलकुल नहीं है!"
"पूरा सेट - वो एग्जास्ट फैन, वो प्लेटफार्म, कुकिंग रेंज, ओवन - सब मैंने इंग्लैंड से मंगवाया था। पूरे दिल्ली में ऐसी व्यवस्था सिर्फ ब्रिटेन के हाई कमिश्नर के आधिकारिक आवास और राजदूत के आधिकारिक आवास पर ही है!" शीतल ने संतुष्टि भरी मुस्कान के साथ इलेक्ट्रिक केतली का स्विच ऑन किया।
कांति देख रहा था – यहाँ सब कुछ विदेशी है!
शीतल कह रही थी,
"इन सबको साफ करने के लिए एक खास तरह के डिटर्जेंट पाउडर का इस्तेमाल करना पड़ता है। फिर हर चीज को बहुत नरम स्पंज से पोंछना पड़ता है। भारतीय नौकरानियों को चाहे जितना भी समझाओ, वे अपना काम ठीक से नहीं करतीं, असली समस्या तो यही है! सब कुछ खुद उनके सामने खड़े होकर करना पड़ता है..."
जब केतली में पानी उबल गया, तो उसका स्विच अपने आप बंद हो गया। सामने वाली दीवार पर तीन अलंकृत खूंटियाँ थीं। जैसे ही उसने उनमें से एक को दबाया, दीवार से दो स्टूल अपने आप बाहर आ गए। उनके बीच एक सुविधाजनक डाइनिंग टेबल दिखाई दी। उस टेबल पर चाय के मग और बिस्कुट रखते हुए उसने कांति से कहा,
``ये... बैस..."
इस व्यवस्था से मन ही मन मोहित हो चुकी कांति एक स्टूल पर बैठ गई। शीतल ने बिस्कुट की थाली उसकी ओर बढ़ा दी। उसने अपनी चाय में चीनी नहीं डाली थी।
चाय की एक घूंट लेते हुए कांति ने पूछा,
अगर आप मुझे बताना नहीं चाहतीं, तो मत बताइए... आपके पति... मतलब, अगर आप चाहें तो उन्हें पूर्व पति कह सकती हैं!... वो अब कहाँ हैं? क्या उसके बाद आपको उनसे मिलने का मौका मिला? आखिर वो भी दिल्ली में ही हैं—"
"वो? देखिए – इसके बाद तो उन्हें मेरे पूर्व पति के रूप में ज़िक्र करने की भी ज़रूरत नहीं है। बस उन्हें गुप्ता कह दीजिए, ठीक रहेगा। अरे, छह साल हो गए जब हमने इतनी सहजता से बातचीत की थी, है ना? तीन साल पहले एक बार उनसे हुई बातचीत का ज़िक्र हुआ था। एक अंतर-मंत्रालयी समिति का गठन हुआ था। उस समय मैं अपने मंत्रालय से थी – वो वित्त मंत्रालय में थे। लाल नाम का एक व्यक्ति विधि मंत्रालय से आया था। एक दक्षिण भारतीय विमानन मंत्रालय से आया था। इन दक्षिण भारतीय नामों को याद रखना बहुत मुश्किल है! इनका उच्चारण करना लगभग नामुमकिन है – भला इन्हें याद कैसे रख सकते हैं! हम चारों को एक साथ रिपोर्ट जमा करनी थी। मैं इस समूह की संयोजक थी। सच कहूँ तो, उस समय विदेश व्यापार मंत्रालय सचिवालय में एक महिला थीं। वो महिलाओं को

प्रोत्साहित करना चाहती थीं, इसीलिए उन्होंने मुझे संयोजक बनाया। कुल मिलाकर, हमें सात-आठ बार मिलना पड़ा। मुझे खुशी थी क्योंकि मुझे इसमें एक विशेष स्थान दिया गया था।" लेकिन जब मैंने उसमें ए.के.गुप्ता का नाम देखा, तो मना करने के बावजूद मुझे गुस्सा आया। मैं उस महिला से मिली और उसे सब कुछ बताया और उससे हमें में से किसी एक को इससे बाहर निकालने का अनुरोध किया। उसने कहा-
"वह तो बीते जमाने की बात है। यह आधिकारिक मामला है। क्या आपको लगता है कि उसे कोई कठिनाई होगी? उसे अब तक पता चल चुका होगा कि आप यहाँ हैं। क्या वह अपने वरिष्ठों से मेरा नाम हटाने का अनुरोध करेगा? वह अपना अवसर छोड़ने को तैयार नहीं है – तो आप क्यों छोड़ें? आप जैसी सुधारवादी महिला को इसे एक चुनौती के रूप में लेना चाहिए!'
मैंने तय समय पर बैठक बुलाई। वे तीनों आए। मैंने अपना परिचय उनसे नहीं दिया। बाकी दोनों की तरह, हमने भी उनसे औपचारिक बातचीत से बैठक शुरू की। इस मामले में असली काम मेरा और गुप्ता का था। वे उस विषय के असली विशेषज्ञ थे! दो बैठकों में बाकी दोनों ने भी यह बात गौर की। तीसरी बैठक में लाल ने कहा – तुम दोनों मिलकर एक रिपोर्ट तैयार करो – फिर हम उस पर चर्चा करेंगे और हस्ताक्षर करेंगे। इस तरह काम जल्दी हो जाएगा। लेकिन मैं इससे सहमत नहीं हुआ। एक बार मेरे मन में यह ख्याल आया। क्या उन्हें हमारे पुराने संबंधों के बारे में पता था? लेकिन इसकी संभावना बहुत कम थी। गुप्ता उपनाम भी इतना आम है कि उन्हें इससे कुछ महसूस करने का कोई कारण नहीं था। और वैसे भी, मुझे परवाह नहीं!
कीर्ति ने उसकी बात रोकते हुए पूछा,
"आपने अपना नाम गुप्ता क्यों रखा? आपने माहेर का उपनाम क्यों नहीं अपनाया?"
"तुमने क्यों नहीं किया? मैं तुम्हें इसके बारे में बाद में बताऊँगी। यह महिलाओं की दिलचस्प मानसिकता है। आगे क्या हुआ? उन दोनों ने सुझाव दिया कि श्री गुप्ता को पूरी रिपोर्ट तैयार करनी चाहिए। उन्होंने कहा, यह संयोजक का काम है। मैं तो बस निर्देश दूँगा। उन्हें यह भी पता था कि उनके सहयोग के बिना मैं यह रिपोर्ट तैयार नहीं कर पाऊँगी! उस समय, बाकी दो मेरे आसपास खड़ी थीं और उन्होंने भी जोर दिया कि वे पूरी रिपोर्ट तैयार करें। आखिरकार, वे मान गए। हम चारों ने अगले हफ्ते तय दिन को दस बजे फिर से मिलने का फैसला किया। मैं दस बजे गई। वे दस मिनट देर से आए। बाकी दो नहीं आई थीं। उन्होंने देर से आने के लिए माफी माँगी, लेकिन वे शर्मिंदा थे। मैं भी असमंजस में थी। अपनी असमंजस को छिपाने के लिए, उन्होंने मेज पर रखी रिपोर्ट की चार प्रतियों में से एक उठाई और उसे देखने लगे। तभी मेरी स्टेनोग्राफर एक संदेश लेकर आई। श्री लाल और श्री... मुझे नाम याद नहीं आ रहा। कोई दक्षिण भारतीय नाम है। वे बैठक में नहीं आ पाएंगे क्योंकि वे काम पर हैं।" फोन आ गया था। मैं उठा और बोला, "तो, बैठक स्थगित हो गई है।"
उन्होंने कहा, "मैं थोड़ी देर बात करना चाहता हूं।"
मैं फिर से कुर्सी पर बैठ गया, यह सोचकर कि वह रिपोर्ट से संबंधित किसी बात पर चर्चा करना चाहते हैं। उन्होंने हिंदी में बोलना शुरू किया – वह भी हमें 'तुम' कहकर संबोधित करते हुए। उन्होंने कहा – 'देखो, जो होना था वही हुआ। उस समय मुझे ज्यादा समझ नहीं आया था। मेरे माता-पिता भी ज्यादा समझदार नहीं हैं। तुम भी जलदबाजी में अदालत चले गए थे। क्यों न हम जो हुआ उसे भूलकर फिर से एक साथ आ जाएं?'
मैं असमंजस में था। फिर भी, बिना दिखाए, मैंने कहा, "हम यहां सरकारी काम के लिए एकत्रित हुए हैं।"

उन्होंने कहा, "अगर यह सिर्फ़ सरकारी काम होता, तो मैं यह रिपोर्ट नहीं लिखता! देखिए, आपको जो कहना है, साफ़-साफ बताइए, और कृपया हिंदी में बोलिए। यह ऐसा विषय है जिस पर हिंदी में ही बात होनी चाहिए। मैं आपसे तुरंत जवाब देने की ज़िद नहीं कर रहा हूँ। मैं आपसे यह ज़िद भी नहीं कर रहा हूँ कि आप मेरे घर आकर अपनी भाभी के साथ रहें। आपको अपने घर में अलग रहना चाहिए। अगर आप चाहें तो आप दोनों मिल सकती हैं, अगर नहीं तो मत मिलिए। बच्चों को पता है कि हमारे घर में एक बुजुर्ग माँ हैं। अब आपकी उम्र छत्तीस साल है। चलिए किसी वरिष्ठ प्रसूति विशेषज्ञ से सलाह लेते हैं, अगर वे सारी ज़िम्मेदारी उठा लें, तो आप भी माँ बन सकती हैं।"
मुझे यह भी एहसास हुआ कि वह सोच-समझकर ही यह बात कह रहा था। वह बिना रुके या अटके बोल रहा था। यही उसकी शैली थी - मेरी स्टेनोग्राफ़र मुझे बता रही थी - उसने बोलना समाप्त किया। मुझमें उसकी ओर देखने की हिम्मत नहीं हुई।
कुछ देर इंतजार करने के बाद उन्होंने कहा, 'अगर आपको कुछ और पूछना हो तो पूछिए। अगर आप चाहें तो हम दोबारा मिल सकते हैं।'
मैंने तुरंत कहा, "दोबारा मिलने की कोई जरूरत नहीं है। बस एक सवाल का जवाब दीजिए—क्या आप उनसे तलाक लेने के लिए तैयार हैं?"
उन्होंने कहा, "यह कैसे हो सकता है? जो कुछ हुआ उसमें उसकी क्या गलती है? मेरे बच्चों की क्या गलती है? किसी के साथ अन्याय न हो, यह सुनिश्चित करना मेरी जिम्मेदारी है।"
मैं मानसिक रूप से उलझन में था। ऐसे समय में मैं सोच-समझकर कैसे बोल सकता हूँ? फिर भी, मैंने तुरंत कहा, "द्विविवाह के खिलाफ कानून है, है ना?"
उन्होंने कहा, "मुझे भी कानून की जानकारी है। आप भी गुप्ती हैं। मान लीजिए, अगर मैं कभी-कभार आपके घर पर ठहर जाऊं, तो मुझे कौन सा कानून समझ आएगा? अगर आपका बच्चा भी हो जाए, तो भी कानून कुछ नहीं कर पाएगा। कानून और उसकी खामियों को मुझसे बेहतर कोई नहीं जानता!"
मुझे ऐसा लगा जैसे किसी को खुद को फांसी लगा लेनी चाहिए। मैंने उनसे औपचारिक रूप से कहा, "रिपोर्ट तैयार करने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं इसकी प्रतियां बाकी दोनों को भेज दूंगा। धन्यवाद।"
और मैं उस कान्फ्रेंस रूम से बाहर निकल गई। उस दिन मेरी हालत के बारे में मत पूछो! ऐसा लग रहा था जैसे मेरी पूरी जिंदगी का संतुलन बिगड़ गया हो। इसके बारे में सोचकर मेरा सिर दर्द कर रहा था। उसकी हिम्मत कैसे हुई ऐसा पूछने की? मीटिंग में उसे दो-तीन बार देखने के बाद क्या उसे पुराने दिन याद आ गए? वो दहेज का मुद्दा उठाता था और अपने माता-पिता को परेशान करता था। अकेले में तो वो अच्छा बर्ताव करता था। अगर उसे पैसा भी मिलता, तो वो उसे भी चाहता। फिर भी, साथ का सुख! शायद उसे यही याद आया होगा। या शायद बात ये है! – अगर उसने मना भी कर दिया, तो भी वो स्वार्थी है! इस उम्र के बाद मेरे लिए बच्चे पैदा करना मुमकिन नहीं है। तो क्या उसे ये हिसाब नहीं है कि मेरी आमदनी मेरे बच्चों पर खर्च होनी चाहिए? ऐसा सोचकर शायद उसकी पत्नी इस रिश्ते को मान ले। कुल मिलाकर, वो दुआ-खन्ना की तरह अपनी पत्नी को तलाक देने को तैयार नहीं है! –
"यह दुआ-खन्ना कौन है?" कांति ने पूछा।
अरे यार! मेरी एक सहकर्मी की कहानी। उसे दुआ और खन्ना नाम के लोगों ने इसी तरह धोखा दिया था। उसका व्यवहार देखकर मुझे उनकी याद आ गई! आठ दिन बाद उसने मुझे दफ्तर में बुलाया। जैसे ही उसने पूछा, "कैसे हो?" वगैरह, मैंने कहा, "माफ़ कीजिए, श्री गुप्ता—अगर आपको रिपोर्ट की कॉपी चाहिए, तो कृपया

मेरा स्टेनोग्राफर से संपर्क करें—" और रिसीवर पटक दिया! उसके साथ मेरी यही आखिरी बातचीत थी!
चाय पिए हुए उन्हें काफी देर हो चुकी थी। मग सिंक में रखकर और बचे हुए बिस्कुट एयरटाइट डिब्बे में वापस रखकर, उसने खुटियाँ ठोंकीं और स्टूल व मेज अंदर ले आई। दोनों लाउंज में आ गईं। शीतल ने एयर कंडीशनर चालू कर दिया। दोनों ने बेडरूम का एयर कंडीशनर बंद किया और लाउंज में आरामदायक सोफे पर बैठ गईं।
शीतलाच ने आगे कहा,
आप कह सकते हैं, क्यों नहीं, बच्चा होने पर जीवन सुखमय हो जाएगा! लेकिन मेरा एक सवाल है – एक महिला किसी पुरुष से तब कैसे संपर्क कर सकती है जब वह पहले से ही किसी और के साथ रहता हो? क्या पुरुष इसे स्वीकार करेंगे? एकपत्नी विवाह जैसी कोई और प्रथा नहीं है, यह सच है!
``आप भी सही कह रही हैं, बताइए..." कांति ने कुछ देर सोचा। कुछ याद आने पर उसने पूछा, ``आपने अपना नाम बदलकर फिर से मिस गोयल तो नहीं रख लिया?"
हां! वह कहती हैं – मेरे देवर तब तक चुप रहे जब तक मैंने तलाक के लिए अर्जी नहीं दी। मैं पूरा दिन दफ्तर में बिताती थी। घर आकर मैं घर के कामों में उनकी मदद भी करती थी। लेकिन तलाक होने के बाद उनका मिजाज पूरी तरह बदल गया। वह बेचैन हो गईं, उन्हें डर लगने लगा कि कहीं उन्हें हमेशा के लिए अपने घर में ही न रहना पड़े। मैं भी कमाती थी – घर के खर्च भी मैं ही उठाती थी। घर के काम करती थी – उनके बच्चों की देखभाल करती थी। फिर भी, उन्हें डर था कि कहीं घर में सांप न घुस जाए! उन्होंने साफ-साफ कहा, माता-पिता के साथ रहना मेरा धर्म है। मैं ऐसे ही रहूंगी। सास के साथ रहना किसी की नजर में अच्छा नहीं होता। तुम्हें उनसे अलग रहना चाहिए!
मुझे गुस्सा आ गया। मैंने कहा, "तो तुम इस घर की मालकिन हो?"
उसने जवाब दिया, "तो क्या हुआ? तुम अपनी मां के घर इसलिए आई हो क्योंकि नंदिता तुम्हारे पति के घर नहीं आ सकी!"
मुझे बिलकुल भी अंदाजा नहीं था कि वो ऐसा कुछ कहेंगी! मुझे भी गुप्ता उपनाम से चिढ़ थी। मैं भी गोयल उपनाम अपनाना चाहती थी। क्या आप जानते हैं कि जब मैंने इस विषय पर बात की तो मेरे जीजाजी ने क्या कहा? उन्होंने कहा, "इस घर को एक बार छोड़ने के बाद दोबारा गोयल बनने का तुम्हें अधिकार कहां से मिला? एक बार श्रीमती बन जाने के बाद तुम दोबारा कुमारी कैसे बन सकती हो? इसके बाद, श्रीमती गोयल का मतलब सिर्फ मैं ही हूं! तुम अब कुंवारी नहीं हो जो कुमारी गोयल बन सको!"
"मैं उसे क्या जवाब दूं?" सीतालन ने कांति की ओर देखा।
कांति सोचने लगी। उसे भी कुछ समझ नहीं आ रहा था। एक तरफ तो वह शीतल की भाभी की बात समझ भी रही थी। उसने शीतल से ही पूछा,
तो आपने क्या जवाब दिया?
उस समय तो मैं भी अवाक रह गया था। अब सोचता हूँ, शादी हो जाने मात्र से पत्नी का उपनाम क्यों बदलूं? कुमारी-सौभाग्यवती की क्या ज़रूरत है? क्या पुरुषों को भी ऐसी उपाधियाँ मिलती हैं? हाँ – एक और सवाल, क्या आपने नारी मुक्ति से संबंधित साहित्य पढ़ा है या नहीं?
कांति ने अखबारों में कभी-कभार छपने वाले लेखों के अलावा इनमें से कुछ भी गंभीरता से नहीं पढ़ा था। उसने खुद भी यह बात स्वीकार की थी।
शीतल ने कहा,
मेरे पास महिला मुक्ति पर कम से कम पचास किताबें हैं! मैं आपको उनमें से कुछ दे दूंगी। आप भी उन्हें पढ़िए..."

शादी में चार दिन बाकी थे, लेकिन पति की तरफ से न कोई चिट्ठी आई, न फोन। उन्होंने उस दिन कहा था कि वो नहीं आएंगे, और अगर ये सच भी था, तो क्या हुआ! वो इतना ज़ोर दे रही थीं – उन्हें कुछ देना था, तो आने में क्या दिक्कत थी? अब उनके मन में बस एक ही डर था – क्या वो इतने बड़े पारिवारिक समारोह में उनका सम्मान करेंगे? ये बड़ा समारोह निरंजन की शादी के बाद होने वाला था! भाऊजी ने पंद्रह दिन पहले शांताक्का को मदद के लिए भेजा था। हर दो दिन में उन्हें फोन आता था, जिसमें वो इसके बारे में पूछते थे। फिर वो अपनी पत्नी और बच्चों से बात करते थे। और ये बदमाश खुद कभी फोन नहीं करता! अगर वो समारोह में नहीं आए, तो सब उनसे सवाल करेंगे! ये जानबूझकर मुझे बेइज्जत करने के लिए ऐसा कर रहे हैं! – उनका मन बार-बार यही सोच रहा था।
उस रात उसने चुपचाप अपने कमरे का दरवाजा बंद किया और बैंगलोर को फोन किया।
आप कैसे हैं?
अब घर आओ।
उसने घड़ी देखी - ग्यारह बजकर पांच या सात मिनट हो रहे थे।
उसने पूछा,
इतनी देर क्यों हुई?
"यहां की कैबिनेट ऐसी स्थिति में है कि किसी भी क्षण गिर सकती है! यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटना है! रात दस बजे तक समाचार देखने के बाद, मैंने एक संपादकीय लिखी और चला गया।"
क्यों? अगर इसे कल लिखा गया होता, तो क्या यह काम नहीं करता?
अखबार का कारोबार क्या है, आप क्या सोचते हैं? सबसे पहले खबर और विश्लेषण देने वाला अखबार ही सबसे महत्वपूर्ण होता है! लगता है मुझे घर आने में एक हफ्ता देर हो जाएगी। आप कब आएंगे?
मैंने आपको फोन करके पूछा था कि आप कब पहुंचेंगे...
"क्या मैंने तुम्हें उस दिन नहीं बताया था? कोई समाचार संपादक नहीं है... उप-संपादक छुट्टी पर है। मेरे लिए आना असंभव है।"
यह कितनी महत्वपूर्ण समारोह है!..."
"मैंने निमंत्रण देखा। यह एक तरह का व्यावसायिक स्वागत समारोह है। मैं आपको टेलीग्राम भेज दूंगा कि यह उस दिन पहुंच जाएगा।"
वह गुस्से से आग बबूला हो गई। इतना बड़ा समारोह! और वह इतनी तुच्छ बात पर ध्यान दे रहा है! उसने ऊंची आवाज में कहा,
घर पर बलिदान और पूजा-अर्चना होगी...
"ठीक है! मैं भी उस सुबह भगवान के सामने खड़ा होकर उनकी लंबी उम्र के लिए प्रार्थना करूंगा! अच्छा... और क्या? मुझे अब चावल पकाने वाला कुकर चालू करना है..." उन्होंने सादगी से कहा, लेकिन उनके लहजे में थोड़ी झुंझलाहट थी।
देखो... मैं तुम्हें टिकट भेज दूंगी, पापा ने उस दिन मुझसे यही कहा था। मैं कल रात तक तुम्हारे लिए टिकट का इंतजाम कर दूंगी। मुझे पता है तुम्हारे पास पैसे नहीं हैं। अनुपाल को भी आना होगा!
"मैं साफ-साफ कह दूं... ध्यान से सुनो! अगर मैं T.A.D.A. के साथ आता हूं, तो यह ठीक नहीं रहेगा! इसलिए मैं अपने खर्च पर आऊंगा, यानी हम दोनों के लिए पांच हजार रुपये लगेंगे! मेरे पास इतने पैसे नहीं हैं। अगर मैं रेलगाड़ी से आता हूं, तो मेरे पास इतनी छुट्टियां नहीं होंगी। इसके अलावा, यह एक व्यावसायिक कार्यक्रम है। मैं अखबार में काम करता हूं... मैं हर दिन सुबह होते ही ऐसी एक सौ साठ पार्टियां देखता हूं। मुझे यह भी पता है कि उस पांच सितारा होटल में हर कोई खाने पर सिर्फ एक सौ पचास रुपये खर्च करता है। देश का अस्सी प्रतिशत पैसा

ऐसी चीज़ों पर खर्च होता है। लेकिन खेतों में काम करने वाले किसान को डेढ़ रुपये में एक किलो चना भी नहीं मिलता! ये समाज में एक तरह के आर्थिक काले गड्ढे हैं!
- चलिए - कार्यक्रम खत्म होते ही आप तुरंत निकल जाइए -" उन्होंने कहा और रिसीवर रख दिया।
उसके पिता को भी पता था कि वह ऊपर वाले कमरे से बुला रही है। उन्होंने यह भी देखा कि उसकी आवाज़ तेज़ हो गई थी। जब वह सीढ़ियों से नीचे आई, तो उन्होंने पूछा,
तो? आपके पति कब आ रहे हैं?
वह निराशा और गुस्से से भरी हुई थी और उसे कोई दूसरा जवाब सूझ नहीं रहा था। उसने फिर पूछा,
आप क्या कहते हैं?
उसकी आँखों में आँसू भर आए। उन्होंने भी यह देख लिया। बिना कुछ कहे वह अपने कमरे में चली गई। उसके मन में दबी आवाज़ें गूंज रही थीं... उसे खुद यह सब पाने का हक नहीं है... अगर किसी और को यह मिलता है, तो उसे जलन होती है! उसका स्वभाव ही क्या है? इतना गुस्सा उसके मन में उमड़ रहा था कि उसे खुद को नोच लेना चाहिए। उसके मन में ये सवाल उठ रहा था... पापा ने मेरी शादी ऐसे आदमी से क्यों करवाई? मेरे लिए भी कोई इंजीनियर क्यों नहीं ढूंढा? उसका गुस्सा पहले पिता पर निकला... फिर ससुराल वालों पर... और आखिर में फिर से अपने पति पर आकर रुक गया।
भोर हो चुकी थी। जब वह उठी, तो उसने फैसला किया... उसे शीतल से खुलकर बात करनी चाहिए। यहाँ आने के बाद से वह उससे चार-पाँच बार मिल चुकी थी। ठीक वैसे ही जैसे विद्यार्थी जीवन में होता था, खुलकर बात करने से उसे हल्कापन महसूस होता था, दोनों ने यह अनुभव किया था। क्यों, कौन जाने क्यों, लेकिन वह इस बारे में अपनी माँ से बात करने को तैयार नहीं थी। अगर वह अपनी माँ से बात करती, तो शांति समझ जाती। फिर वह अपने शरीर की परवाह किए बिना उसे बताती कि उसका पति अपनी पत्नी और बच्चों को तुमसे ज़्यादा प्यार करता है!
उसने शीतल को 8:30 बजे फोन किया।
मैं आज आपसे थोड़ी देर बात करना चाहता हूँ। आप ऑफिस कितने बजे जाते हैं?
मैं दस बजे वहाँ पहुँच जाऊँगा... रुको, मैं तुम्हें बताता हूँ... हाँ... देखो, मैं साढ़े नौ बजे तुम्हारे पास आऊँगा। क्या यह संभव है? मेरे साथ कार्यालय चलो। हम वहाँ बात कर सकते हैं। अगर संयुक्त सचिव बीच में कोई संदेश भेजते हैं, तो मुझे जाना पड़ेगा—लेकिन—हाँ—मुझे याद आया। वह आज छुट्टी पर है। तो फिर कोई सवाल ही नहीं! हम जितनी चाहें उतनी बातें कर सकते हैं। दोपहर में हम हल्का-फुल्का नाश्ता करेंगे! तब तुम तैयार हो जाओगे, है ना? लेकिन तुम्हें घर लौटने के लिए टैक्सी या रिक्शा लेना पड़ेगा।
कांति का मन थोड़ा शांत हो गया।
कांति को जरा भी अंदाजा नहीं था कि शीतल का दफ्तर इतना खूबसूरत होगा। बीस फीट गुणा बीस फीट के पूरे हॉल में बिछा हुआ भारी कालीन! वातानुकूलित हॉल! एक बड़ी, साफ-सुथरी मेज़। आरामदायक कुर्सियाँ और आसन! पीछे झुकने पर आरामदेह रिक्लाइनिंग वाली कुर्सियाँ। सामने वाली दीवार से लगा हुआ एक बेहद आलीशान सोफा! दफ्तर के बगल में एक आधुनिक शौचालय।
`` अरे वाह!! मुझे पता ही नहीं था कि आप इतने शानदार अधिकारी हैं!" कांति ने बड़ी प्रशंसा के साथ कहा।
शीतल ने फोन उठाया और बगल के कमरे में मौजूद अपनी निजी सहायक को बताया,
"अगर कोई आगंतुक आए तो उसे अंदर मत आने देना - यहाँ बातचीत चल रही है!"

फिर वह कांति के पास आई, उसका हाथ पकड़ा, उसे सोफे पर बिठाया और खुद उसके बगल में बैठकर पूछा,
बोलो! तुमने फोन किया था – तुम्हारा पति नहीं आ रहा है! उसने तुम्हें निराश किया है!
आपको कैसे पता?
आपने मुझे परसों थोड़ा-बहुत बताया था, है ना? बताइए, आपने कल उनसे किस बारे में बात की? मुझे ठीक-ठीक बताइए कि क्या बातचीत हुई थी। बिलकुल सटीक जानकारी दीजिए। आपकी प्रतिक्रिया या मल्लिनाथी की कोई ज़रूरत नहीं है।
कांति को याद था, और उन्होंने इसे विस्तार से समझाया।
"तो हवाई जहाज से आने के लिए पैसे नहीं हैं... ट्रेन से आने के लिए छुट्टी नहीं है, क्या यह सच है?"
"जी हाँ, महोदय, लेकिन कभी-कभी आपको ऋण लेना पड़ता है, कुछ काम तो करने ही पड़ते हैं। वरना, जब आपके ससुर आपको हवाई टिकट भेज रहे हैं तो आप अपना अहंकार क्यों दिखा रहे हैं?"
शीतल सोच में डूबी हुई थी। सोचते-सोचते उसने कहा,
“यह नहीं सोचना चाहिए कि पुरुषों का हर व्यवहार गलत होता है। हमें उनके दृष्टिकोण को भी समझना चाहिए। ससुर से टिकट लेना – वो भी तब जब दामाद की स्थिति इतनी अच्छी हो – इतना आसान नहीं होता। एक महत्वपूर्ण बात याद रखिए! आज के महंगाई भरे दौर में, अगर आप एक निश्चित स्तर पर जीना चाहते हैं, तो पैसा काफी नहीं है!” उन्होंने आखिरी वाक्य के हर शब्द पर जोर देते हुए कहा। आगे उन्होंने कहा, “इसीलिए अब जब पति भी चाहते हैं, तो पत्नियों को भी काम करना चाहिए। आजकल तो बेरोजगार लड़कियों की शादी एक नई समस्या बन गई है! आपने उस समय नौकरी नहीं की! आपके पति का तबादला हो गया, आप सीता देवी की तरह उस गांव में घूमती रहीं! अगर आप उस समय काम कर रही होतीं, तो वो अपने आप वहीं रुक जाते, आप भी वहीं रुक जातीं। अब आप कुछ करने के बारे में क्यों नहीं सोच रही हैं?”
"मुझे अड़तीस साल की उम्र में नौकरी कौन देगा?"
बस यही तो है! यहाँ सब कुछ गलत हो रहा है! इसी रवैये की वजह से यह देश पिछड़ रहा है! नौकरियों की बात कर रहे हो? कौन देगा ये, इसीलिए तो तुम परेशान हो! क्यों न अपना खुद का व्यवसाय शुरू कर लो? अरे, अपने भाई का उदाहरण देखो! उसने अपना खुद का व्यवसाय शुरू करके कितना पैसा कमाया है! अब मैं उसके जैसा आर्किटेक्ट नहीं बन सकता।
इसलिए रोना मत! मैंने तुम्हें एक उदाहरण दिया है। मुझे जाने दो... मैं दो-तीन दिन में इस बारे में थोड़ा सोचूंगा और फिर तुम्हें बताऊंगा। तुम्हारे पास जितनी बुद्धि और शक्ति है, उससे तुम कुछ भी कर सकते हो! तुम्हें दृढ़ निश्चय की आवश्यकता है...
"बताओ! यह आज से शुरू हो रहा है!..." कांति ने उत्साह से कहा।
मुझे थोड़ा समय दीजिए... मैं आपको बताता हूँ। मुझे विदेश व्यापार मंत्रालय में नौकरी मिल गई है! मैं ज़रूर कोई न कोई रास्ता निकाल लूँगा। लेकिन यहाँ समारोह समाप्त होते ही भागने की जल्दी मत करना!
कांति ने शीतल को गले लगाया और उसके गाल पर अपने होंठ रख दिए। शीतल, जो शर्म से लाल हो रही थी, बोली,
"क्या! एक सहायक कर्मचारी बिना किसी सूचना के अंदर आ गया और उसने एक ही उम्र की दो महिलाओं को गले मिलते देखा, इससे तो पूरे मंत्रालय में हंगामा मच जाएगा! शुभकामनाएं! मुझे तो सिर्फ अपने गाल मिले - होंठ नहीं!" शीतल ने बनावटी गंभीरता से कहा।

माफ़ कीजिए! मेरा दिमाग़ पूरी तरह से खराब हो गया था, इसलिए ऐसा हो गया! मेरे पति मुझसे हर महीने हिसाब नहीं पूछते। जब मैं उन्हें कोई अंदाज़ा बता देती हूँ और चार पैसे अलग रख देती हूँ, तो हमेशा सोचती हूँ - इतनी छोटी रकम के लिए कितना बड़ा झूठ! अगर मैंने खुद पैसे कमाए होते, तो मैं उन्हें उतनी ही आज़ादी से खर्च कर सकती थी। अनूप को उस घटिया गांधी स्कूल से निकालकर किसी दूसरे स्कूल में भेज देना चाहिए था, जहाँ मुझमें आत्मविश्वास पैदा होता। मेरी माँ भी हवाई जहाज़ से आती-जाती रहती!..."
कांति भावना घबराई हुई आवाज़ में बोल रही थी। उसकी पलकों के पीछे की कल्पना विशाल भविष्य को पकड़ने की कोशिश कर रही थी।
इंटरेकॉम की घंटी बजी। अतिरिक्त सचिव की सहायक फोन पर थीं। साहब ने तुरंत बर्टन कंपनी की फाइल लेकर उन्हें फोन किया था।
शीतल के चेहरे पर ऊब के भाव थे। उसने कहा,
"यह तो सरकारी नौकरी की पुकार है! एक घंटा इंतज़ार करते-करते बीत गया! अब आप घर जाइए। क्या मैं अपने सहायक से रिक्शा मंगवा लूँ? शाम को फिर मिलेंगे।"
"तुम आओ। तुम्हें याद होगा मैंने तुमसे क्या कहा था, है ना?" कांति उठते हुए बोला।
तब तक शीतल फ़ाइल की तलाश में व्यस्त हो चुकी थी।
कांति को राहत मिली जब उसने एक रिक्शा लिया और ग्रीन पार्क लौट आई। इस समस्या का कोई न कोई हल तो ज़रूर निकलेगा! शीतल ज़रूर मदद करेगी। पापाओं से भी मदद ली जा सकती है। उनके पास भी अनुभव है—मार्गदर्शन है। वे आर्थिक सहायता देने में संकोच नहीं करेंगे। हालांकि, माँ कह रही थी—इस जन्मदिन पर वे लड़कियों को कुछ देने वाले हैं। उन्होंने बाकी बातें नहीं बताईं। वे कह सकते हैं—मुझे और कुछ नहीं चाहिए, मैं खुद ले लूँगी—तो उनकी मदद करो, कुछ शुरू करने में!
जैसे ही रिक्शा सफदरजंग हवाई अड्डे के पास पहुँचा, अनूप की याद उसके मन में आ गई। उसने तय किया – आज रात वह रविंद्र को फोन करके अनूप को विमान में बिठाने के लिए कहेगी – और कहेगी, टिकट का पैसा मैं दूंगी! फिर उसने दोबारा सोचा – अरे, मुझे उसे बदले की भावना से फोन नहीं करना चाहिए। लेकिन मेरे बेटे को भी ऐसे समारोह में तमीज़ से पेश आना चाहिए। टांस-कॉन्टिनेंटल में ऐसा स्वागत कब देखेगा? अगर उसे छोटी उम्र से ही यह आदत नहीं पड़ी, तो बड़ा होकर वह मूर्ख जैसा व्यवहार करेगा। गांधी स्कूल में पले-बढ़े लड़के को प्रथम श्रेणी की ट्रेन या हवाई अड्डे को देखकर भला मूर्ख कैसे नहीं बनना चाहिए? वह अपने मामा-मामी से चार वाक्य भी नहीं बोल पाता! आप कहते हैं कि यह एक अंग्रेजी अखबार का संपादक है! वह यह कैसे नहीं समझ सकता?
जब वह गुस्से से छटपटा रही थी, तब रिक्शा चालक ने पूछा,
मुझे किससे मदद मांगनी चाहिए?
रिक्शा ग्रीन पार्क के सामने आकर रुक गया था।

■

दोपहर के भोजन और आराम के बाद, पापा और मम्मी कुछ लोगों को अपने घर बुलाने वाले थे। उन्हें खुद भी कुछ घरों में जाना था। शांति अपने पति के कुछ रिश्तेदारों से मिलने गई थी। रजनी भी काम पर गई थी। मम्मी ने कांति से कहा,
आप घर पर अकेले बैठकर क्या कर रहे हैं? हमारे साथ आइए...
ड्राइवर एक बड़ी एम्बेसडर कार चला रहा था। अगर हमें थोड़ी दूर जाना होता, तो पापा खुद गाड़ी चलाते। लेकिन अगर दूरी ज़्यादा होती, तो वो निरंजन के दफ्तर से ड्राइवर को बुला लेते। दिल्ली की दूरी भी शामिल है! हर घर कोने पर है! कार के हर घर पहुँचने से पहले, रेवाम्मा कांति को उन लोगों के बारे में और उनसे अपने

रिश्ते के बारे में विस्तार से बताती। ताकि मुलाकात के दौरान कोई भ्रम न हो! दोनों घरों से निमंत्रण पत्र बाँटने में पाँच बज चुके थे। बाद में, रत्नाम्मा ने कहा,
अब वसंत विहार चलते हैं। चलिए होन्नाटी के घर चलते हैं। वे रिजर्व बैंक में बहुत उच्च पद पर कार्यरत थे। वे डिप्टी गवर्नर के पद से सेवानिवृत्त हुए। दरअसल, उस समय उनके साथ अन्याय हुआ था। राजनीति के कारण उन्हें दरकिनार कर दिया गया और एक कनिष्ठ व्यक्ति को पदोन्नत कर दिया गया। होन्नाटी कन्नड़ मूल के हैं। वे धारवाड़ के पास के एक गांव से आते हैं...
यह सुनकर कांति ने पूछा,
उनके बेटों में से एक ने एम.टेक.-एमबीए पूरा कर लिया है और एक बड़ी नौकरी कर रहा है... क्या वह सितार सीखने के लिए अपनी नौकरी छोड़ रहा है?
"...हाँ! लेकिन आपको यह कैसे पता चला?" अब पिताजी ने भी इस विषय में रुचि दिखाई।
"हमने अपने अनूप को पढ़ाई के लिए रखा है, है ना? पास में एक पहाड़ है। उस पर एक मंदिर है..." कांति ने सारी बातें समझाते हुए कहा, "वह रवींद्र का नायक है! वह अपने अंतर्मन की सुनता है और उसी के अनुसार जीवन जीता है, सांसारिक सुखों का त्याग करता है... इसीलिए मैं उसकी बहुत प्रशंसा करता हूँ!..."
"क्यों नहीं... होन्नाटी के घर पर इस विषय को मत उठाओ। माहौल के हिसाब से इस पर चर्चा करो। तुम्हें पता है वो कहाँ है, बस उसे फॉर्मूला बता दो, और वो आगे जांच करेगा।"
कांति जानती थी कि वसंत विहार छोटे-बड़े बंगलों और खूबसूरत बगीचों वाला इलाका है। हालांकि वह वहां की मुख्य सड़क पर तो गई थी, लेकिन उसे कभी अंदर जाने का मौका नहीं मिला था। उनकी कार उस गेट पर रुकी, जिसके पास वाले खंभे पर एस. जी. होन्नाटी का नाम लिखा था और फर्श काले संगमरमर का था। परिसर में एक चौड़ा कालीन बिछा था, जो लॉन जैसा लग रहा था। घास जितनी ऊंची। परिसर के पास लगे सजावटी पेड़ मालिक के व्यवसाय और रुचि को दर्शाते थे। गुलमोहर के पेड़ लॉन के बीच में और दोनों ओर भरपूर छाया दे रहे थे। उन पेड़ों के नीचे रखी कुर्सी पर एक सज्जन बैठे थे, जो पिताजी से चार-पांच साल बड़े थे। सिर पर बाल नहीं थे, गोरे रंग के थे, सोने के फ्रेम का चश्मा, सफेद पजामा और चॉकलेट रंग का चोला पहने हुए थे और एक पत्रिका पढ़ने में मग्न थे। जैसे ही गेट खुला, बंगले में मौजूद कुत्ता भौंकने लगा, तो उन्होंने ऊपर देखा और ऊपर लगे शीशे से उनकी ओर नजर डाली।
"तुम दिल्ली में हो, और कहाँ जा रही हो? कितने साल बीत गए? चलो, चलो... अरे सत्यवती, देखो कौन आया है! चलो, चलते हैं," यह कहते हुए वह उठा और चला गया।
कांति ने देखा कि वह "अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक रुझान" पर एक लेख पढ़ रहे थे। यह एक अंग्रेज़ी पत्रिका थी। उन्होंने उत्साहपूर्वक सभी को एक बड़े, खूबसूरती से सजाए गए हॉल में आमंत्रित किया। वहाँ का फर्नीचर, कालीन और सजावटी सामान उनकी निजी पसंद-नापसंद के बजाय उनके व्यवसाय को दर्शाता था। यह स्पष्ट था कि इन सभी को सजाने में किसी पेशेवर का हाथ था।
सौभाग्यशाली होन्नाटी तभी बाहर आए। उन्होंने उसे पहचान लिया। उन्होंने भी उत्साहपूर्वक उसका अभिवादन किया।
"चलो, चलो..." उसने उन दोनों को अंदर के कमरे में बुलाया।
निमंत्रण की औपचारिकताएं पूरी होने के बाद, रत्नाम्मा ने पूछा,
"झील अब कहाँ है?"
"क्या वो वही है? लगता है वो किसी गुरु से सितार सीख रहा है।"
"मुझे लगता है कि हमारी कांति उनसे मिली थी! वे साधना करते हैं, और वह उस पहाड़ की चोटी पर गई थीं। मेरा पोता वहीं नीचे स्कूल में पढ़ता है, है ना?"

यह सुनकर उसका चेहरा खिल उठा। वह उठी और कांति के बगल में बैठ गई और पूछने लगी। कांति भी बोलने लगी,
"मैं वहीं अपने बेटे से मिलने गई थी। वहीं हमारी मुलाकात हुई। मेरे पति भी वहां गए थे ताकि वे उससे मिल सकें।"
वह उत्साह से बाहर गई और बोली,
"अरे... तुम अंदर आओ! लोग कहते हैं कि मूर्ति की बेटी हेमंत से मिली थी!"
बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद उनमें व्याप्त रिश्वतखोरी और अन्य बुराइयों पर चर्चा में मग्न होन्नाटी अपनी सीट से उठे बिना बोले,
चलो चलें! आप कहते हैं कि मैं कहीं पहाड़ पर रहता हूँ! भारत में ऐसे कितने ही पहाड़ हैं!" और वे आगे चर्चा करने लगे।
सत्यवती को पूरा यकीन था कि वे बच्चे से पूछताछ करने जरूर आएंगे। फिर भी, उनकी गरिमा की रक्षा के लिए, उसने एक बार फिर पुकारा,
तुम क्या कर रहे हो? सुनो... वो क्या कह रही है!
ठीक है! चलो वहां चलते हैं और उपहार देते हैं!–" तो सभी लोग अंदर आ गए, मूर्तियाँ भी। उन्होंने कांति से पूछा, `हम्म- बताओ! वह क्या कह रहा है? वह कहाँ रहता है?–"
"आप कैसे रहते हैं? आप क्या खाते हैं?" सत्यवती ने कांति के बगल में बैठते हुए पूछा।
कांति ने हमें वह सब बताना शुरू कर दिया जो वह जानती थी।
कांति यह बताते हुए हैरान रह गई। उसे अचानक एहसास हुआ... वह जगह का वर्णन हेमंत के लिए सुविधाजनक तरीके से कर रही थी! जैसे ही उसने खाने के बारे में बात करते हुए नृत्य का जिक्र किया, होन्नाटी ने पूछा,
रागी क्या है?
"यह एक प्रकार का बाजरा है। हमारे गांवों में लोग इसे खाते हैं। वे बाजरे से मोटे गोले बनाते हैं और खाते समय उन्हें निगल जाते हैं," मूर्ति ने समझाया।
कांति द्वारा सब कुछ बताने के बाद सत्यवात्यम्मा ने कहा,
"उसका तरीका अद्भुत है! वह हमेशा तपस्या को ध्यान में रखकर ही सब कुछ करता है! वह खुद भी इसी तरह पढ़ाई करता था!" उसके शब्द अपने बेटे के प्रति प्रशंसा से भरे हुए थे। लेकिन होन्नाटी को यह बात बिल्कुल समझ नहीं आई।
उसने कहा,
अगर आप इस तरह बीच में ही अपनी किस्मत बदल लेते हैं, तो कोई भी कहीं नहीं पहुंच पाएगा! मैं उस समय एक साक्षात्कार समिति का अध्यक्ष था। एक उम्मीदवार आया। उसके एक आवेदन में लिखा था कि उसके पास चार विषयों में एम.ए. की डिग्री है: अर्थशास्त्र, तेलुगु या कोई अन्य भारतीय भाषा, इतिहास और समाजशास्त्र या कोई अन्य विषय। अगला उम्मीदवार अर्थशास्त्र में स्नातक था - उसके पास एम.ए. और उसी में पी.एच.डी. थी। बताइए - आप किसे नौकरी पर रखेंगे? मेरा बेटा लापरवाह है, इसमें कोई शक नहीं। उसने अट्ठाईस साल पढ़ाई की, एमबीए जैसी डिग्री हासिल की, तीन साल काम किया - फिर उसने कहा, 'मुझे यह पसंद नहीं है' और सितार सीखने चला गया! तो यह न यह है न वह! तो यह सब कैसे हुआ, क्या आप जानते हैं? वे अपनी सारी पूंजी लगाकर कपड़ा कारखाना लगाते - उत्पादन शुरू होने के अगले दिन ही वे कहते, "मुझे इसमें कोई दिलचस्पी नहीं है" और कंप्यूटर बनाना शुरू कर देते - अरे, वे अपने निवेश पर नुकसान कैसे नहीं उठा सकते थे? आजकल बच्चों का गैरजिम्मेदार रवैया साफ दिखाई देता है..."
मूर्ति भी यह सब समझ गया। उसने तुरंत सिर हिलाकर अपनी सहमति जताई। कांति को बहुत बुरा लगा – बच्चे के प्रति अपनी असंतुष्टि व्यक्त करते हुए उसे यह भी एहसास नहीं हुआ कि उसके सामने कौन खड़ा है!
होन्नाटी ने आगे कहा,

मैं भी इस बात से सहमत हूँ कि सितार सीखना भी एक तरह का निवेश है। रवि शंकर जैसे लोग क्या करते थे? कम उम्र में ही, उनके जैसे बी.ई.-बी.टेक. की पढ़ाई करने वाले बच्चे हर दिन बारह से चौदह घंटे पढ़ाई में लीन रहते थे और बारह से बारह घंटे सितार बजाते थे। दूसरे शब्दों में, उन्होंने एक ही व्यवसाय में निवेश किया।
धन, समय और ऊर्जा के मामले में, वे अब इस क्षेत्र में इतनी प्रगति कर चुके हैं कि एक ही बैठक से आसानी से तीस-चालीस हजार रुपये कमा लेते हैं। अगर वे हर साल कम से कम पचास बैठकें भी करें, तो भी वे आसानी से पंद्रह से बीस लाख रुपये कमा लेते हैं! वहीं दूसरी ओर, वे अमेरिका में डॉलर में कमा रहे थे। यह तो बिलकुल अलग बात है! चाहे वे कितनी भी मेहनत करें,
हालाँकि, उस मुकाम तक पहुंचना मुमकिन नहीं है। अगर वह यही करना चाहता था, तो उसने उसे बचपन में, बी.टेक में दाखिला लेने से पहले, क्यों नहीं बताया? मेरा असली सवाल यही है।
"यह है..." उसने स्वीकृति की उम्मीद में मूर्तियों की ओर दोबारा देखा।
"-लेकिन रुचियां तो अपने आप बदल जाती हैं, है ना?" कांति ने अनजाने में हेमंत का समर्थन किया।
“ब्याज भी एक प्रकार का निवेश है - क्या तुम जानती हो?” यह कहते हुए उनकी आवाज़ में गुस्सा था। उसे रास्ते में कार में अपने पिता द्वारा दी गई सलाह याद आ गई। उसने सहमति में सिर हिलाया।
जब यह विषय उठा, तो सत्यम्मा, यह जानते हुए कि उन्हें अपने पति को ज्यादा परेशान नहीं करना चाहिए, तुरंत बोलीं,
"आपको चाय या कॉफी चाहेंगे?"
"हमें अभी तीन और घरों में जाना है। पटेल नगर, कमला नगर और मॉडल टाउन। बहुत देर हो चुकी है। मुझे अभी कुछ नहीं चाहिए..." रत्नाम्मा ने उठते हुए कहा।
"अंदर आओ। मैं तुम्हारे लिए एक कप चाय बनाती हूँ..." सत्यम्मा ने रसोई की ओर मुड़ते हुए कहा।

■

``समारोह दो दिनों तक चला। एक दिन घर में हवन, पूजा और घर के करीबी लोगों के लिए भोजन का आयोजन किया गया। अगली शाम ट्रांसकॉन्टिनेंटल होटल में रात्रिभोज का आयोजन था। घर में हवन से एक दिन पहले, शीतल ने शाम 4 बजे फोन किया।
"क्या आप आधे घंटे में मेरे घर आ सकते हैं? मुझे एक बहुत ज़रूरी काम है।"
माँ से यह पूछने के बाद कि घर पर कोई विशेष काम नहीं है, कांति ने उन्हें बताया कि वह आ रहा है। अगर हम इस नज़रिए से देखें तो वहाँ किसी काम की ज़रूरत ही नहीं थी। मंडप लगाना, मेहमानों का ठंडे पेय से स्वागत करना, खाना बनाना, पानी पिलाना, मंडप को ऊपर-नीचे करना, पूजा-अर्चना करना – ये सब काम उन लोगों को सौंपे गए थे जो उस विशेष पेशे में माहिर थे। परिवार का एकमात्र काम मेहमानों के सुख-दुखों के बारे में बातचीत करना था।
जब कांति तैयार होकर घर पहुँची, तब शीतल भी घर पहुँच चुकी थी, फ्रेश होकर चाय बना रही थी। शीतल कल दोपहर के खाने पर आने वाली थी। फिर भी, कांति को लगा कि आज फोन आया है तो कोई ज़रूरी बात होगी। उसके मन में जिज्ञासा उमड़ रही थी।
शीतल रसोई में डाइनिंग टेबल पर स्टूल पर बैठकर चाय और बिस्कुट खाते हुए बोली,
“हम मेरे ऑफिस में मिले थे, तीन दिन हो गए हैं, है ना? एक शानदार मौका आया है, देखो! अमेरिका में एक बहुत बड़ी रेडीमेड कपड़ों की कंपनी है... जिसका नाम ट्रेंड्ज़ है। ये लोग नए-नए फैशनेबल कपड़े डिज़ाइन करते हैं और उन्हें बाज़ार में

उतारते हैं। अगर आप दिल्ली में होते, तो आपको पता होता कि इस कंपनी के जींस-शर्ट, ब्रा-अंडरवियर पेहनना कितना रुतबा माना जाता है। भले ही इनकी कीमत दूसरी कंपनियों के कपड़ों से पाँच गुना ज़्यादा है, फिर भी लोग इन्हें खरीदते हैं! बैंगलौर के ऊँचे तबके में भी शायद यही क्रेज़ है। मुझे तो पक्का पता है कि मुंबई-कलकत्ता में तो है ही। टेंडज़ कंपनी का काम है कपड़े सिलना और भेजना। अमेरिका में मज़दूरी बहुत ज़्यादा है, है ना? इसीलिए वहाँ की कंपनियाँ रेडीमेड कपड़े भारत, कोरिया, मलेशिया, हांगकांग से मंगवाती हैं, जहाँ मज़दूरी सस्ती है। फिर वे इन कपड़ों पर अपनी कंपनी का लेबल लगाकर बेचते हैं। कंपनी का प्रतिनिधि आकर डिज़ाइन देता है। कपड़ा वही चुनता है।" हमें यथासंभव अधिक से अधिक मजदूरों को काम पर रखना होगा, बिजली की मशीनें खरीदनी होंगी – हमें बिजली से काटने वाली मशीनें भी खरीदनी होंगी – हमें हर दिन एक या दो हजार पीस की आपूर्ति की गारंटी देनी होगी। जैसा कि वे कहते हैं, हमें गुणवत्तापूर्ण डिज़ाइन चाहिए। लेकिन इस मामले में, वे बहुत सख्त हैं। थोड़ी सी भी कमी या अधिकता होने पर वे माल अस्वीकार कर देते हैं। यदि माल दो बार अस्वीकार हो जाता है, तो वे अनुबंध रद्द कर देते हैं। क्यों न हम दोनों मिलकर एक छोटी कंपनी शुरू करें? पहले हम उन्हें आपूर्ति करेंगे। बाद में, डिज़ाइन में थोड़ा बदलाव करके, हम एक स्वतंत्र कंपनी शुरू कर सकेंगे। जब तक हमें उनके ऑर्डर मिलते रहेंगे, हमारे लिए कोई जोखिम नहीं है। हमें भरपूर मुनाफा मिलता रहेगा!"

"यह कैसे किया जा सकता है?" रोमांचित कांति ने उत्सुकता से पूछा।

मुझे इसमें कोई खास दिक्कत नहीं दिखती। अगर हम ज़्यादा मज़दूरी दें, तो दूसरी कंपनियों के मज़दूरों को भी आकर्षित कर सकते हैं। कंपनी कटिंग मशीनें मुहैया कराती है। हमें यहीं एक जगह ढूंढनी चाहिए जहां हम बिजली की मशीनें रख सकें और काम कर सकें। हमें एक ऐसा विभाग भी चाहिए जहाँ सिले हुए कपड़ों को इस्त्री करके करीने से रखा जा सके। हमें इतना पैसा जुटा लेना चाहिए कि बाकी सब आसान हो जाए। अगर हम दस प्रतिशत पूंजी लगाएं, तो बैंक से लोन ले सकते हैं। निर्यात शुरू करने के बाद हम जितना चाहें उतना पैसा जुटा सकते हैं! मैं उसी मंत्रालय में हूँ, है ना? चिंता मत करो। हम मिलकर यह कंपनी शुरू करेंगे। सरकार और अदालतों के लिए काम करवाने की पूरी ज़िम्मेदारी मेरी होगी! आपको वहाँ की फैक्ट्री और उत्पादन देखना चाहिए। अगर आप चाहें तो अपने पिताजी से इस बारे में और बात कर सकते हैं। उन्हें पता होगा कि हमें मनचाही खाली जगह कहाँ मिल सकती है। आप कोई जगह खरीद या किराए पर लेकर कम खर्च में एक हॉल बना सकते हैं, या आप फरीदाबाद एंटरप्राइज ज़ोन में एक शेड भी ले सकते हैं। यह मौका हाथ से नहीं जाने देना चाहिए! टेंडज़ कंपनी का एक प्रतिनिधि मुझसे मिलने आया था। वे अहमदाबाद, मुंबई जैसे कई गांवों में सामान मंगवाने की कोशिश कर रहे हैं। अगर हम उन्हें उनकी ज़रूरत के हिसाब से सामान मुहैया करा दें, तो वे किसी और से ऑर्डर नहीं करेंगे। मैंने आपसे बिना पूछे ही हर दिन दो हज़ार पीस देने की ज़िम्मेदारी ली है! एक चुनौती के तौर पर! आप देखते ही देखते करोड़पति बन जाएंगे! आप व्यापार के लिए अनगिनत बार विदेश जाएंगे! चूंकि विदेशी मुद्रा हम कमा रहे हैं, इसलिए कोई रुकावट नहीं आएगी!"

कांति का मन कल्पनाओं से झरना फूट रहा था। ऐसा क्यों नहीं हो सकता? मैं जितनी चाहूँ उतनी मेहनत करूँगी! फिर मेरी अपनी आमदनी, मेरा अपना बैंक बैलेंस, मेरी अपनी कार! शांति की तरह, जब चाहूँ जो चाहूँ खरीद सकूँ! वह खड़ी हुई और बोली, 'शीतल! तुम मेरी मदद करो - मैं जितनी चाहूँ उतनी मेहनत करूँगी -' और शीतल के माथे पर अपने होंठ रख दिए।

"घर पर यह समारोह समाप्त होने के बाद मैं पिताजी से इस बारे में बात करूँगा। वह किसी न किसी तरह से ज़रूर मदद करेंगे!"

लेकिन बाद में, जब हम लाउंज में बैठे थे, तो उसने कहा,

"यह सब ठीक है, महोदय! लेकिन अगर मेरे पोते बैंगलोर में हों, मेरा बेटा किसी छोटे से गाँव में हो और मैं दिल्ली में व्यापार कर रही हूँ तो क्या होगा?"
"स्वीकारोक्ति! क्या इसका कोई समाधान नहीं है?" शीतल ने एक गुरु के शिष्य से पूछे जाने वाले प्रश्न के समान पूछा।
कांति को कुछ सूझ नहीं रहा था। शीतल ने उसे मौका देते हुए कहा,
पहले सोचो, फिर बोलो!
फिर भी, कांति ने कुछ नहीं कहा। शीतल ने कहा,
"समाधान तो पक्का है! थोड़ा और दिमाग लगाओ। अगर बात नहीं बनी तो मैं तुम्हें बता दूंगा।"
काफी देर तक सन्नाटा छाया रहा। फिर शीतल बोली,
"ऐसा कोई स्थायी नियम नहीं है कि पत्नी को अपने पति के नौकरी वाले शहर में ही जाना पड़े! आपके पति का तबादला हो सकता है और वे यहाँ आ सकते हैं। हो सकता है उन्हें यहाँ रेजिडेंट एडिटर का पद न मिले। उन्हें थोड़ा समझौता करना पड़ेगा। या फिर, वे किसी दूसरे अखबार के दफ्तर में नौकरी पा सकते हैं। अगर हम इसे ठीक से संभाल लें, तो आपकी साप्ताहिक कमाई उनकी मासिक कमाई के बराबर हो जाएगी! फिर तो यह सवाल कि किसे कहाँ जाना चाहिए, अपने आप हल हो जाएगा!"
"वह कर्नाटक से बाहर नहीं आना चाहता। वह कहता है, मेरी जड़ें वहीं हैं!"
ऐसे लोगों को देश से निकाल देना चाहिए! ये लोग भारतीय कहलाने के लायक नहीं हैं! जिन लोगों में भारत को एक देश मानने की भावना ही नहीं है, उन्हें पत्रकार बनाना बहुत खतरनाक है! ऐसे कई परिवार हैं। एक दार्जिलिंग से है, एक त्रिवेंद्रम से, एक गोवा से, एक मुंबई से। ये हवाई जहाज़ों का ज़माना है! यहाँ दूरी कोई मायने नहीं रखती। और किसने कहा कि बेटे को एक ही स्कूल में पढ़ना चाहिए? उसे किसी दूसरे बोर्डिंग स्कूल में भेजा जा सकता है। अगर पैसा है, तो काम हो जाएगा!
कांति को लगा जैसे कोई बड़ी समस्या हल हो गई हो। अगर इसके बाद वो यहाँ नहीं आया, तो ये उसकी गलती होगी! अलग-अलग गाँवों में रहना और कभी-कभार मिलना, मरने तक गरीबी में जीने और अपने बच्चे को किसी गरीब स्कूल में भेजने से तो हमेशा बेहतर होता है! उसे कल के कार्यक्रम में नहीं आना चाहिए! फिर मैं उससे कहूँगी कि तुम पैसे की कमी के कारण नहीं आए? अब मैं यहाँ पैसे कमाने के लिए कोई धंधा शुरू करूँगी! मम्मी-पापा क्या कहेंगे? हम कब तक गरीबी में जिएँगे? उसका तबादला यहाँ हो जाए और वो आए, उसने कहा, ताकि वे समझ जाएँ। अगर नहीं, तो वो क्या समझेगा? उसने इस कार्यक्रम के लिए हवाई टिकट तक नहीं खरीदा और खुद भी नहीं आया, क्या ये सबूत नहीं है!
जब वह घर पहुँची, तो घर के सामने की सड़क साफ़ कर दी गई थी और घर के सामने और आँगन में एक भव्य मंडप बना दिया गया था। मंडप को लाल, पीले, हरे और नीले बल्बों की सुंदर मालाओं से सजाया गया था। वाह! ये है दिल्ली! एक घंटे में इतना बड़ा मंडप कितनी सफ़ाई से तैयार हो गया! पंद्रह मिनट में वे पूरा मंडप उतार देते हैं और हमें बताते हैं कि कुछ हुआ या नहीं! सब कुछ तैयार है। बैंगलोर की तरह यहाँ केले के पेड़, आम के तोरण, मोगरा गजरा आदि नहीं हैं! अगर अनुप आया होता, तो रंग-बिरंगी बत्तियों के तोरण देखकर खो जाता! उसने उसे भेजा तो नहीं, है ना? भाऊजी आए हैं। उनके दोनों बच्चे भी साथ आए हैं। दोनों बनारस के जी.के. स्कूल में पढ़ते हैं। उसने तय किया कि आज सोने से पहले वह बैंगलोर फ़ोन करके शीतल के साथ तय किए गए अपने काम के बारे में मुझे बताएगी और आराम करेगी। फिर उसने खुद को याद दिलाया - इससे पहले कि सब कुछ एक स्तर पर आ जाए - फिर मुझे बताना -

सुबह छह बजे तांमेल संगीतकार आ गए। उनकी धुन पर होम-हवन, पूजा-अर्चना आदि की रस्में शुरू हुईं। दस बजे तक सभी रस्में पूरी हो गईं। उसके बाद रिश्तेदार अपने माता-पिता का अभिवादन करने लगे। शांति ने उसे इशारा किया। कांति भी उठी और अपनी माँ की भारी रेशमी साड़ी और अपने पिता का रेशमी मुकुट भेंट किया। दोनों के चेहरों पर संतोष झलक रहा था। जब सब कुछ समाप्त हो गया, तो माँ दोनों लड़कियों को मंदिर ले गईं और उन्हें चाँदी की थाली में एक-एक भारी रेशमी साड़ी-ब्लाउज का टुकड़ा और एक-एक लखोटा भेंट किया। कांति के मन में लखोटे में क्या है, यह देखने की बड़ी उम्मीद थी। लेकिन वह यह भी जानती थी कि वह ठीक नहीं लगेगा। एक बार फिर, दोनों ने झुककर अपने माता-पिता का अभिवादन किया। माँ ने कहा,
"इसे अपने बैग में रख लो। आज घर में लोग घूम रहे हैं!..."
यह सुनकर कांति दौड़कर अपने कमरे में गई। दरवाजा बंद करके उसने लिफाफा खोला – उसमें पांच लाख रुपये की सावधि जमा की रसीद थी! छह साल बाद पैसा उसके हाथ में आ जाएगा! उस समय तो दस लाख रुपये मिलने की व्यवस्था थी!
कांति का हृदय अपने पिता के प्रति प्रेम से भरा हुआ था। रसीद को वापस डिब्बे में रखते हुए उसने डिब्बे को देर तक चूमा। डिब्बे को सूटकेस में रखकर, सूटकेस और कमरे को ताला लगाकर वह नीचे आई, और जब वह नीचे आई तो वहाँ और भी मेहमान थे। रत्नाम्मा उसे ढूंढ रही थीं। दूर से ही उसे देखकर वह जल्दी से उसके पास आई और बोली,
"हम आपको आमंत्रित करने गए थे, है ना? वे विवाहित जोड़ा हैं। उनकी पत्नी ने कहा कि वह आपसे दस-पंद्रह मिनट शांति से बात करना चाहती हैं। उनके मेज़बान किसी से बात कर रहे हैं। मैं सत्यवतीबाई को लाता हूँ - उन्हें अपने कमरे में ले जाइए और उनसे कहिए, वे पूछेंगी! बेचारी! वे बच्चे के बारे में पूछताछ करना चाहेंगे!"
वह उन्हें अपने कमरे में ले गई। उसने उन्हें पलंग पर बिठाया और खुद एक कुर्सी पर बैठ गई और बोली,
हम उस दिन जल्दी निकल गए थे। और भी निमंत्रण थे, है ना?!..."
“अगर आप ज़्यादा देर रुकते, तो उस दिन हम ज़्यादा बात नहीं कर पाते। हमारे बॉस गुस्से में थे, कह रहे थे कि उनके सामने उनके बारे में बात करना नामुमकिन है। वैसे तो हमारे बॉस स्वभाव से शांत हैं। लेकिन जब उनकी बात आई, तो वे अपना गुस्सा रोक नहीं पाए। वे कहते हैं, अरे! इतनी शिक्षा देने के बाद, उन्होंने सब कुछ क्यों छोड़ दिया? उन्होंने यह फैसला पहले क्यों नहीं लिया? यहाँ और कौन है? आप गाँव कब जाएँगे? इसके बाद, हमारे लिए पहाड़ों पर जाइए और उनसे मिलिए। उनसे कहिए कि पहाड़ों में रहने के बजाय, दिल्ली आकर रहिए। कितना बड़ा बंगला है! उसमें से किसी एक कमरे में बैठिए और जितनी साधना कीजिए! दिल्ली से मुंबई जाना उस पहाड़ से जाने से ज़्यादा आसान है। राजधानी से सिर्फ़ पंद्रह घंटे लगते हैं।”
"लेकिन क्या यहाँ ऐसी मन की शांति मिल सकती है? अगर तुम अपने पिता से लगातार झगड़ते रहोगे, तो क्या तुम सितार बजाना चाहोगे?" उसने पूछा।
“देखो, तुम उसकी बात बिल्कुल समझ रहे हो! मैंने भी यह गौर किया है। हाल ही में साहब को भी यह समझ आने लगा है। कल ही उन्होंने कहा था, अगर उनकी किस्मत में सतारी में रहना लिखा है, तो फिर कौन क्या करेगा? उन्हें यहाँ आने दो। अगर चाहें तो दिल्ली में ही रहें। यहाँ भी उन्हें अच्छे शिक्षक मिल जाएंगे। क्या दिल्ली जैसा कोई और गाँव है जहाँ ऑल इंडिया रेडियो-टीवी पर मौका मिल सके? वे मुझे पत्र लिखने को कह रहे थे। लेकिन हमें तो उनका पता भी नहीं है। मुझे लगता है, ऐसा पत्र लिखने की बजाय, अगर तुम हमारी तरफ से जाकर उन्हें

मना लो, तो शायद उनका मन भी बदल जाए! क्या तुम इतनी मेहरबानी करोगे?" यह कहते हुए उनकी आंखों में आँसू भर आए।
कांति भी उदास थी। उसे बहुत तीव्र इच्छा हो रही थी कि वह खुद जाकर उससे इस मुद्दे पर बात करे और उसे मना ले। लेकिन हमें नहीं पता कि हम बेंगलोर कब जाएंगे और - उस गाँव का नाम क्या है? हां - हलुकेरे! - हलुकेरे, हमें नहीं पता। उसे याद आया कि उसने बेंगलोर न जाने का फैसला किया था, जब तक कि वह यहां अपना खुद का व्यवसाय शुरू करने और अपने खर्च पर हवाई यात्रा करने में सक्षम न हो जाए।
उसने उत्तर दिया,
"जब मैं वहां जाऊंगा तो मैं उनसे इस बारे में जरूर बात करूंगा।"
मैं सीधे-सीधे कह दूंगी, नहीं, मुझे उन्हें यहां बुलाना चाहिए! यह सच है कि हमारे बॉस उनसे नाराज़ थे क्योंकि उन्होंने उस समय की अच्छी नौकरी छोड़ दी थी। उन्होंने मुझे यह भी कहा कि मैं इस घर की दहलीज पार न करूँ। क्या आपके पिता को इतना कहने का अधिकार नहीं है? आपने इतने सालों तक उनसे क्यों नाराज़गी रखी? आप चाहे कुछ भी कर लें, आपके पिता को अब भी आपसे नाराज़गी है! लेकिन उन्हें मेरे लिए माफ़ी माँगने के लिए उनके घर क्यों जाना चाहिए? हेमंत भी पागल है। वह अपने दिल में एक छोटे बच्चे जितना गुस्सा पाले हुए है! अगर वह चाहे तो मैं आपके साथ आकर उन्हें बता दूँगी। लेकिन अगर वह ज़िद करे कि उसके पिता आकर उसे बताएँ, तो ऐसा नहीं होगा। आप बेंगलोर कब जा रही हैं?
"अभी फैसला नहीं हुआ है। अगर मैंने जाने का फैसला किया तो मैं तुम्हें बता दूँगा! क्या तुम उस पहाड़ पर चढ़ोगे?"
"क्या यह वैष्णो देवी से भी ऊंची है? पिछले साल हम दोनों पैदल ही इस पर चढ़े थे।"

■

४

दोपहर का समय था। वह कर्नाटक से अब तक संसद में गए लोगों और वहाँ उनके द्वारा निभाई गई ज़िम्मेदारियों पर एक लंबा लेख लिखने के उद्देश्य से नोट्स बना रहे थे। लेख की लंबाई अभी तय नहीं हुई थी। इसके अलावा, पचास साले पुराने दस्तावेज़ों को देखना भी आवश्यक था। दिल्ली संवाददाता को संसद से जानकारी जुटाने के लिए कहा जाना चाहिए। यह कार्य किसे सौंपा जाना चाहिए? उस व्यक्ति के लिए कर्नाटक की राजनीति का अध्ययन करना भी आवश्यक है - यदि किसी व्यक्ति को यहाँ भेजा जाता है, तो उचित सहयोग मिलना असंभव है...
तभी फ़ोन की घंटी बजी। लीना कह रही थी,
``शांति प्रतिमाएं आ गई हैं। क्या हम उन्हें भेज दें?"
``भेजें..."
अट्ठाईस वर्षीय शांतामूर्ति एक बेहद सक्रिय पत्रकार थे। वे लोहिया-गांधी-माओ आदि के विचारों में निरंतर लीन रहते थे। वे अंग्रेजी कविताएँ लिखते थे - हाल ही में, इसकी निरर्थकता को समझते हुए, उन्होंने कन्नड़ में लघु कथाएँ लिखना शुरू कर दिया था।
कांच के दरवाजे से अंदर आए शांतामूर्ति से रविंद्र ने कहा,
क्या आपको आने से पहले पी.ए. से भी अनुमति लेनी होगी? मैं अपने कार्यालय में नौकरशाही नहीं चाहता, इसलिए मैं हमेशा...
"... महोदय! मेरा इरादा आपको गुस्सा दिलाना था! अगर हमें अपने वरिष्ठों का भय नहीं होगा, तो हम चैन से नहीं बैठ पाएंगे! हम भारतीय हैं!" उसने कुर्सी पर बैठते

हुए कहा।
सीधे मुद्दे पर आते हुए, उन्होंने कहना शुरू किया,
"सर, एक बड़ी कहानी मिलने की संभावना है। लेकिन मुझे अभी भी समझ नहीं आ रहा कि इसे सही तरीके से कैसे निकाला जाए। रामनगर से तीन मील दूर एक पत्थर है, है ना? वहाँ से आदर्श तक हर तीन मील पर पत्थरों से भरी ज़मीन है। बीच में एक गहरा इलाका है जहाँ पहुँचना मुश्किल है। खबर है कि एक पत्थर व्यापारी ने वहाँ करीब बीस परिवारों को काम पर रखा है! ये सभी लोग दिन भर इस खदान में काम करते हैं। रोज़ाना पच्चीस से तीस ट्रक बेंगलोर भेजे जाते हैं। वहाँ पुरुषों को चार रुपये और महिलाओं को डेढ़ रुपये मज़दूरी मिलती है! खास बात यह है कि यहाँ किसी को भी बाहर जाने की इजाज़त नहीं है। अगर कोई जाता है, तो उसे जान से मारने की धमकी दी जाती है। ये लोग ज़रूर उत्तर कर्नाटक के होंगे। उन्हें बीड़ी और कढ़ी के लिए भी बाहर नहीं जाने देते!"
"तो यह खबर कैसे सामने आई?"
"हर दो दिन में आधा बोरा ज्वार पिसाई के लिए रामनगर की आटा चक्की में लाया जाता है। ऐसा लगता है कि उन्होंने उत्तरी कर्नाटक में सूखे के कारण यहाँ आए एक समूह को पकड़ लिया है और उनका शोषण कर रहे हैं। अगर यह जांच सफल होती है, तो इसे जब्त करना संभव हो सकता है..."
दोनों ने सिगरेट जलाई। दो कश लेने के बाद रविंद्र ने कहा,
``देखो, मुझे पता है कि तुम आगे क्या करना है, इस बारे में सोचे बिना मेरे पास नहीं आए हो! बोलो..."
"सर, आप कहते हैं... आपका दिमाग किसी तमिल फिल्म की तरह चलता है..."
आप बोलिए। मैं कुछ नहीं कहूंगा...
"सर, सर, सरप्राइज बहुत जरूरी है! एक दिन मैं सुबह-सुबह वहां जाता। कैमरामैन-डायरेक्टर-हीरो-हीरोइन... मैं उनसे कहता कि मैं थोड़ा सा शूट करके कुमारवधन को दिखाऊंगा - अगर उन्हें पसंद आया तो हम पूरी फिल्म यहीं शूट करेंगे - मुझे खूब पैसा मिलेगा। अगर कोई मालिक नहीं है, तो मालिक के पास अनुमति है, इसलिए मैं उसकी पीठ थपथपा देता।"
लेकिन पत्रकार इस तरह काम नहीं करते, नायिका कौन है? अगर इस सब में उसे कुछ हो जाता है, तो जिम्मेदार कौन होगा?
``ये शशि ही है, है ना! उसे नाटकों में अभिनय करने की आदत है..."
शशिरेखा ने पत्रकारिता का कोर्स पूरा करने के बाद छह महीने पहले ही कॉलेज में दाखिला लिया था। वह स्मार्ट-कैजुअल जींस पैंट में सहजता से घूमती-फिरती नज़र आती हैं।
"लेकिन क्या तुमने उससे बात की?"
वह इसे करने में खुश है। उसने छात्रा रहते हुए अपने शोध प्रबंध के लिए मानव तस्करी पर काफी काम किया था!..."
रविंद्र को यह एहसास हो गया था कि सारी तैयारियों के साथ आए शांतामूर्ति को उनसे केवल औपचारिक अनुमति की ही उम्मीद थी। लेकिन इसके लिए, यह नाटकीयता—अहम, फिल्मीपन?
अपने मन में उठ रहे इस प्रश्न को व्यक्त करते हुए उन्होंने शांतामूर्ति से कहा,
कल मिलते हैं। मुझे इस बारे में और सोचना होगा।
उस रात रविंद्र इसी विचार में डूबे हुए थे। उन्होंने स्वयं एक पत्रकार के रूप में इस क्षेत्र में कदम रखा था। एक पत्रकार का काम होता है सामने दिख रही घटनाओं के आधार पर पर्दे के पीछे क्या हो रहा है, उसका अवलोकन करना! केवल बैठकों और सम्मेलनों की रिपोर्टिंग करना ही नहीं! अनुभव, चिंतन, तर्क, जासूसी आदि के माध्यम से वे स्वयं संपादक की कुर्सी तक पहुँचे थे। यानी, मुख्य मंच तक! यद्यपि

इस कुर्सी का बहुत सम्मान होता है, फिर भी उन्हें यह काम रुचिकर नहीं लगता था।
सुबह उठते ही उसने फैसला कर लिया था – उसे इस मामले को हमेशा के लिए सुलझाना था, और इतना ही नहीं – उसे इस अभियान में शामिल होने का रोमांच भी महसूस करना था! वह इसमें शामिल जोखिमों को जानता था। अगर मामले में कोई और उलझन पैदा होती, तो संपादक को सबको बचाने के लिए अपनी कुर्सी पर डटे रहना पड़ता।
लेकिन शांतामूर्ति द्वारा यह आश्वासन दिए जाने के बावजूद कि कुछ नहीं होगा, रविंद्र प्रलोभन से खुद को रोक नहीं सका।
शशिरेखा सचमुच एक फिल्म अभिनेत्री की तरह व्यवहार कर रही थीं। मेकअप, पोशाक, गहने – और उनके साथ उनका चंचल व्यवहार आतिथ्य सत्कार का एक अनूठा उदाहरण था। ऑफिस की गाड़ी के बोर्ड की जगह कुमार स्टूडियो का एक छोटा सा बोर्ड लगा दिया गया था। रविंद्र प्रोडक्शन मैनेजर बन गए थे। कुल मिलाकर आठ लोग थे। रामनगर से तीन मील दूर दगड़ा के पास से गुजरने वाली कच्ची सड़क वाहनों के लिए थोड़ी चौड़ी कर दी गई थी।
दो गार्डों ने दोनों की गाड़ियां रोक दीं। शांतामूर्ति ने उनसे बात करना शुरू किया। उन्होंने अभिनेत्री की ओर उनका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा,
"आपके ऋणदाता सब कुछ जानते हैं। उन्होंने ही इसे भेजा है।"
गार्डों ने वीडियो और अन्य कैमरे निकाले। अभिनेत्री वहाँ चट्टानों पर चढ़ गई, इशारे करते हुए अपने प्रेमी को पुकारने लगी। कैमरामैन उसके पीछे-पीछे गए। थोड़ी देर में, खादी की पैंट और एक छोटी सी कमीज़ पहने हुए तीस-पैंतीस साल का एक आदमी वहाँ दिखाई दिया। लगता है, वही साहूकार था! उसने गुस्से से पूछा।
आप यहां किससे पूछने आए हैं?
निर्देशक शांतमूर्ति ने बात की। उन्होंने अभिनेत्री से उनका परिचय कराया। अभिनेत्री ने भी शरारती अंदाज़ में उनका अभिवादन किया और फिर हाथ मिलाने के लिए अपना हाथ आगे बढ़ाया। प्रोडक्शन मैनेजर ने भी देखा कि अभिनेत्री के स्पर्श से साहूकार का दिल नरम पड़ गया। अभिनेत्री, निर्देशक और प्रोडक्शन मैनेजर एक छोटी सी चट्टान पर बैठकर बातें कर रहे थे। पूरी बातचीत को रिकॉर्ड करने के लिए गुप्त व्यवस्था की गई थी। बाकी सभी लोग अंदर जाकर ये दृश्य देख रहे थे। किसी को भी उनकी पेशेवरता पर शक नहीं हुआ।
निर्देशक ने साहूकार से पूछा,
आज ट्रायल शूटिंग है। अगर हमारे कुमारवर्धन मान जाते हैं, तो हम यहां शूटिंग शुरू कर देंगे। उस समय मैं आपकी औपचारिक अनुमति लेने आऊंगा। शूटिंग एक महीने तक चलेगी। इसमें कई लड़ाई के दृश्य होंगे। क्या वे चट्टानें वहाँ हैं? कुमारवर्धन को उनमें से एक से दूसरी पर कूदते हुए दिखाया जाएगा।
"क्या वह इन दृश्यों को करने के लिए किसी डमी का इस्तेमाल करते हैं, या कुमारवर्धन वास्तव में इन दृश्यों को खुद करते हैं?" साहूकार ने पूछा, जिससे पता चलता है कि उन्हें शूटिंग तकनीक की अच्छी जानकारी है।
"वाह! लगता है आपको इस क्षेत्र की काफी जानकारी है! क्यों न आप इस फिल्म में कोई भूमिका निभाएं? आपका शरीर तो कमाल का है - क्या आप अभिनय के आदी हैं?"
नाटी ने यह भी कहा, "अच्छा फिगर है।"
साहूकार और भी ज्यादा असमंजस में पड़ गई और उसे देखती रही। उसने प्रोडक्शन मैनेजर से कहा,
``कितनी गर्मी है! मैं इसे बर्दाश्त नहीं कर सकता! एक महीने तक इतनी गर्मी में शूटिंग करना भयानक है!"

"इस भीषण गर्मी में आपको कटहल के पेड़ का पानी पीना चाहिए, महोदया! अन्यथा आप गर्मी सहन नहीं कर पाएंगी। उ... इधर आइए, महोदय—" साहूकार ने कहा और एक पहरेदार को दस उत्तम कटहल के पेड़ लाने के लिए भेजा।
निर्देशक ने कहा, "अगर हमारे कुमारवर्धन मंजूरी दे दें... तो 99 प्रतिशत संभावना है कि वे सहमत हो जाएंगे... मुझे इस बात का पूरा यकीन है..."
नाटी ने बीच में यह भी कहा,
"निर्देशक ने कभी कोई काम करने से मना कब किया है?"
"फिर भी, उनका फैसला अंतिम होता है, है ना? पैसा तो वही लगाएंगे, निर्माता-मुख्य अभिनेता ही तो हैं! इसीलिए मैं उनकी अनुमति के बिना कोई फैसला नहीं लेता। अब बताइए, अगर हम इस जगह को एक महीने के लिए शूटिंग के लिए इस्तेमाल करते हैं, तो मुझे मानदेय के तौर पर कितना भुगतान करना होगा?"
साहूकार को इस बात का बिलकुल भी अंदाजा नहीं था। लेकिन वह यह भी जानता था कि उसे यह बात दिखानी नहीं चाहिए। उसने कहा,
इसका मतलब है कि हमें एक महीने के लिए अपना काम बंद करना पड़ेगा... पूरे महीने का नुकसान!
"छी छी! हमें आपके काम से कोई लेना-देना नहीं है। हमारी शूटिंग कहीं न कहीं कोने में ही होगी। निर्देशक के तौर पर मैं आपको आश्वस्त करता हूं... आपको कोई नुकसान नहीं होगा।"
"गोलीबारी चल रही है, इसलिए वहां लोगों की बड़ी भीड़ नहीं होनी चाहिए।"
"हम उसका भी ध्यान रखेंगे। जब लोग कहते हैं कि कुमारवर्धन आएंगे, तो भीड़ जमा हो जाती है। लेकिन जब भीड़ होती है, तो बैठक का माहौल नहीं बन पाता... इसलिए वे भीड़ के खिलाफ भी होते हैं।"
इसी बीच नाटी ने कहा,
"भीड़ उमड़ गई थी, और मेरे लिए भी वहां से निकलना नामुमकिन था, पिताजी!"
"ठीक है! मुझे पाँच रुपये दो..." साहूकार ने कहा।
``पांच? एक हजार, या एक लाख?"
देखो, मजाक मत करो! यह हजारों का सवाल नहीं है। पहले मुझे पांच लाख रुपये नकद दो, फिर बात करना!
"अगर मैं आपको चेक दूं तो क्या होगा?"
"हमारे साथ चेक से लेन-देन का तो सवाल ही नहीं उठता!"
"क्या आप मुझे रसीद देंगे या नहीं? हमें इसका हिसाब भी तो रखना होगा, है ना?"
हम किसी भी चीज़ के लिए रसीद नहीं देते हैं। अगर आप चाहें तो राशि में थोड़ा-बहुत बदलाव कर सकते हैं। रसीद या चेक की कोई ज़रूरत नहीं है।
अचानक, गर्मी सहन न कर पाने के कारण, अभिनेत्री ने अपना घूंघट उतार दिया और ज़मीन पर बैठ गई। निर्देशक ने आवाज़ लगाई,
"चलो, कार में बैठकर बात करते हैं। वह बहुत थकी हुई है।"
"हमारा खेत यहाँ से लगभग तीन मील दूर है। आप वहाँ हमारे घर में आराम कर सकते हैं। चलिए---" साहूकार ने कहा।
रविंद्र को डर था कि शशिरेखा के साथ केवल दो ही पुरुष हैं – कौन जाने उस जागीर का घर कैसा होगा – लेकिन शांतमूर्ति और शशिरेखा बिना किसी झिझक के मान गए। इसके विपरीत, उन्होंने यह कहते हुए प्रस्थान किया कि यह भी उनकी इच्छा थी। तीनों साहूकार की कार में बैठकर उसकी जागीर पर गए। साहूकार ने अभिनेत्री को अपने बगल में बैठने का सुझाव दिया – वह भी आगे की सीट पर उसके बगल में बैठ गई और बोली, "बाहर का नज़ारा यहाँ से बहुत सुंदर दिखता है।" निर्देशक ने वहाँ मौजूद गार्ड को अलविदा कहा।
हमें अपने आदमियों से कहना चाहिए, शांत भाव से गोली चलाओ... हम साहूकार के खेत में जा रहे हैं..."

अभिनेत्री साहूकार के खेत और घर की इतनी प्रशंसा कर रही थी कि उसका मुंह खुला रह गया। आम के मौसम में आठ दिन यहाँ रुकना कितना अच्छा होगा! उसने यह भी कहा। कुआँ देखते ही उसने कहा,
"अगर यह थोड़ा और लंबा होता, तो मैं बहुत अच्छी तरह तैर सकता था! मुझे तैरना बहुत पसंद है, तो क्यों नहीं?"
वह साहूकार के साथ-साथ चल रही थी। दोनों एक दूसरे के पीछे चल रहे थे। साहूकार पूरी तरह से स्तब्ध था।
रविंद्र को दृढ़ विश्वास था कि उससे पंद्रह या सोलह साल बड़ी लड़की की तरह व्यवहार करने की यह चतुराई उस समय की लड़कियों में निश्चित रूप से नहीं पाई जाती थी!
वे तीन घंटे बाग में रहे। जब वे वापस आए, तो वहाँ केवल रविंद्र की कार थी। वहाँ मौजूद गार्ड ने बताया कि बाकी सब लोग कुछ देर पहले दूसरी कार में चले गए थे। दोनों ने राहत की साँस ली। फिर प्रोडक्शन मैनेजर अपनी कार के स्टीयरिंग व्हील पर बैठ गया। अभिनेत्री और निर्देशक पीछे की सीट पर बैठ गए। बेशक, इससे पहले अभिनेत्री ने साहूकार से हाथ मिलाया और कहा, "आपसे मिलकर अच्छा लगा।" उसने उन पूरे दिनों में ऐसी अभिनेत्री का हाथ सिर्फ़ दो बार छुआ था - और वो भी ऐसी अभिनेत्री का जो कुमारवर्धन के साथ नायिका के रूप में काम कर रही थी! - उसकी नज़रें अभिनेत्री के चेहरे से हट ही नहीं रही थीं!
प्राप्त तस्वीरों के आधार पर शांतामूर्ति ने एक विस्तृत लेख तैयार किया। उन्होंने मजदूरों की झोपड़ियों, उनके बर्तनों, उनके रहने के कमरों आदि की तस्वीरें प्राप्त की थीं। वे वहाँ मौजूद लगभग सभी लोगों - महिलाओं, पुरुषों, युवाओं और बुजुर्गों, बच्चों और शिशुओं - की तस्वीरें लेने में सफल रहे थे। वहाँ मौजूद हर व्यक्ति इतना दुबला-पतला था कि उसकी हड्डियाँ साफ़ दिखाई दे रही थीं। बीजापुर जिले में सूखे के कारण, इस क्षेत्र में आए कुछ लोगों को रोज़गार का लालच देकर यहाँ रोक लिया गया था। उनसे प्रतिदिन दस से बारह घंटे लगातार पत्थर तोड़ने का काम करवाया जाता था। उन्हें एक सप्ताह की छुट्टी भी नहीं दी जाती थी। यदि कोई वहाँ से जाने की कोशिश करता, तो गार्डों को उसे गोली मारकर हत्या करने का आदेश दिया गया था। यह सिलसिला पिछले चार वर्षों से चल रहा था। गर्मियों में जब आसपास के पत्थर गर्म और भाप छोड़ रहे होते थे, तब भी उन्हें वहाँ से बाहर नहीं निकलने दिया जाता था। इस संबंध में वहाँ मौजूद तीस लोगों से पूछताछ की गई और उनके बयान दर्ज किए गए। पत्थर ढोने वाले ट्रकों की नंबर प्लेट और ड्राइवरों की तस्वीरें ली गईं। पिछले चार वर्षों में यहाँ पाँच लोगों की मृत्यु हो चुकी थी। उन्होंने अपने दफ़न स्थल भी दिखाए और कहा कि उन्हें यहीं दफ़नाया गया है। 'स्वतंत्र भारत में हिटलर का यातना शिविर' शीर्षक से एक विस्तृत लेख तैयार किया गया था।
इस लेख में शांतामूर्ति ने इस जानकारी को प्राप्त करने के लिए रचे गए नाटक के बारे में एक शब्द भी नहीं लिखा। लेकिन उन्होंने जिस साहूकार से मुलाकात की, उसकी तीन अलग-अलग कोणों से ली गई तस्वीरें छापीं और नीचे यह सवाल लिखा, "क्या आप उसे जानते हैं?"

■

जांच के लिए लौटने के अगले दिन ही यह खबर अखबार में व्यापक रूप से प्रकाशित हुई और भारी हंगामा मच गया। अखबार के दफ्तर में फोन लगातार बजने लगे। रविंद्र, जो सुबह घर पर अखबार पढ़ रहे थे, उन्हें भी घर पर फोन आने लगे।
सबसे पहली कॉल आई,
वाह, महोदय! क्या आप जानते हैं कि वह साहूकार कौन है? वह येलुलियूर मंडल के एम.एल.ए. हनुमंथप्पा हैं! आपने पाठकों के सामने प्रश्न को बहुत ही मार्मिक

ढंग से रखा है!..."
यह सुनकर रविंद्र एक पल के लिए चौंक गया! उसे इसके बारे में ज्यादा जानकारी नहीं थी। वह जानता था कि येलहंका बेंगलुरु जिले का हिस्सा है। वह सत्ताधारी पार्टी में जरूर रहा होगा। लेकिन उसे यह नहीं पता था कि वह कौन सा मंत्री था। वैसे भी, पाठकों को यह बताने का कोई फायदा नहीं था। उसने जवाब दिया,
"धन्यवाद! हमने जानबूझकर वह सवाल पूछा था।"
फोन रखते ही उन्हें एहसास हुआ कि उनकी दिलचस्पी राष्ट्रीय स्तर की घटनाओं में ज़्यादा थी। स्थानीय खबरों की उन्हें पर्याप्त जानकारी नहीं थी। उन्हें शांतामूर्ति पर गुस्सा आ गया। वह अक्सर विधानसभा की कार्यवाही कवर करने जाते हैं। शशिरेखा भी प्रशिक्षु के तौर पर कई बार उनके साथ जाती हैं। दोनों को यह बात पता है। उन्होंने मुझे क्यों नहीं बताया? आधे घंटे तक इसी गुस्से में रहने के बाद उन्हें एहसास हुआ कि अगर मुझे सच्चाई पता होती, तो मैं ऐसे राजनीतिक मामलों में नहीं उलझती, और इसे रोक देती! इतनी मेहनत से हासिल की गई खबर का प्रकाशित न होना स्वाभाविक है। शायद इसीलिए उन्होंने मुझसे सच्चाई छुपाई। दोनों ही बहुत गुस्सैल हैं!
उन्होंने शांतामूर्ति को फोन किया और पूछा,
"आपने मुझे यह विचार पहले क्यों नहीं दिया?"
मैंने इसे कल ही डिजाइन किया था और फाइनल प्रूफ भी देखा था। क्या डिस्प्ले ठीक है?
"ठीक है... लेकिन मेरे सवाल का जवाब दो! अगर तुम कहोगे कि तुमने उसे पहले कभी नहीं देखा, तो मैं तुम्हारी बात पर विश्वास नहीं करूंगा। यह तुम्हारा मामला है।"
तो उसने हमें भी ज़रूर देखा होगा! जब आप अखबार वालों की बात करते हैं, तो वे भी बहुत ध्यान देते हैं। शशि भी सभा में आती है। उसने हम दोनों में से किसी को भी नहीं पहचाना! इसका मतलब है कि हमारा मेकअप एकदम सही था! वह अलग है – वह आमतौर पर जींस और शर्ट में घूमती है – इतने मेकअप में तो उसे पहचानना मुश्किल होता। लेकिन मैं? मैंने तो बस एक फेल्ट की टोपी पहनी थी! और हाँ... मैंने नकली मूंछें भी चिपकाई थीं। फिर भी, जैसा कि कहावत है, अच्छे लोगों को पहचानना मुश्किल हो जाता है, यह सच है! इसीलिए मैंने यह तरीका ईजाद किया!
यह सब कहने के बाद भी उन्होंने रविंद्र के सवाल का जवाब नहीं दिया। उसके बाद रविंद्र ने दोबारा इस विषय को नहीं उठाया।
जब वह दोपहर में कार्यालय पहुंचा, तो लीना ने बताया कि उसे दो महत्वपूर्ण फोन आए थे। एक सरकारी जनसंपर्क अधिकारी का था और दूसरा बेंगलुरु के पुलिस उपमंडल अधीक्षक का। दोनों ने रविंद्र का घर का फोन नंबर मांगा था।
उन्हें पूरा यकीन था कि दोनों कॉल इसी मामले से संबंधित थीं। अगर वे कॉल नहीं भी करते, तो वे ज़रूर कॉल करते। लेकिन शिष्टाचार निभाने का मौका वे क्यों गंवाते? उन्होंने सबसे पहले जनसंपर्क अधिकारी से संपर्क किया। उन्होंने कहा,
बधाई हो, रविंद्र! कितना अन्याय हो रहा है! सरकार चाहे कितनी भी निगरानी रखे, ये सब होता ही रहता है, देखिए! आपने और आपके साथियों ने इस मामले को उजागर किया है... आप समाज के लिए गौरव हैं! मुख्यमंत्री ने आदेश जारी किया है कि तत्काल कार्रवाई करके अन्याय को दूर किया जाए। बताइए... आपको इसका पता कैसे चला?
उन्हें पहले से ही पता था कि सब कुछ पहले बता देना आखिरी सवाल के लिए एक बहाना था। उन्होंने जवाब दिया,
"अरे, यही तो हमारा काम है! मुख्यमंत्री ने हमें तुरंत कार्रवाई करने को कहा है, बहुत बढ़िया। अगर आप इस तरह की सामग्री वाला कोई बयान देना चाहते हैं, तो

भेज दीजिए। इसे कल छाप देंगे। सब कैसा चल रहा है?"
जनसंपर्क अधिकारी ने इस विषय को दोबारा नहीं उठाया। अन्य बातों में भी वह बहुत कुछ बोलने के बाद चुप रहे।
जब मैंने एसपी को फोन किया तो उन्होंने भी यही बात कही।
इस दौर में, यहां तक कि स्वतंत्र भारत में भी, ऐसी घटनाएं होती रहती हैं, तो हम क्या कह सकते हैं! हमें पुलिस को साथ लेकर उन गरीब मजदूरों को बचाना होगा! हमें उस जगह की सही-सही जानकारी चाहिए। अगर आप उन लोगों को भेज सकें जिन्होंने यह खबर दी है, या हम किसी से मिलकर उस जगह की भौगोलिक जानकारी प्राप्त कर सकें। अगर वे हमारे साथ जीप में चलें, तो बहुत मदद मिलेगी। चूंकि उन्होंने इतने सारे लोगों को इतने लंबे समय तक हिरासत में रखा है, इसका मतलब है कि उन्होंने सशस्त्र गार्ड जरूर रखे होंगे - आपने भी चेतावनी दी थी! अगर हम उचित सावधानी बरते बिना जाते हैं, तो अनावश्यक रक्तपात नहीं होना चाहिए!
हमने आपको ठीक-ठीक बता दिया है कि कहाँ मुड़ना है... कितनी दूर जाना है... जगह कैसी है। हमने जरूरत के हिसाब से तस्वीरें भी दे दी हैं। इसके आधार पर आम लोगों को यकीन है कि आप अब तक वहाँ पहुँच चुके होंगे! हमें कई फ़ोन भी आए हैं। उन्होंने अख़बार में खबर पढ़ी होगी। इतने समय में वे उस जगह को खाली कर चुके होंगे। है ना? आप अभी भी बेंगलुरु में बैठे हैं और सड़क की जाँच कर रहे हैं! अरे, पत्रकार होने के नाते हमारा काम खबर देना है। उसके बाद आप क्या करते हैं, इस पर नज़र रखना हमारा काम नहीं है...! हमारे पत्रकार जो इस खबर को रिपोर्ट कर रहे हैं, वे किसी दूसरे काम से बाहर गए हैं। उन्हें वापस आने में कम से कम तीन दिन लगेंगे। आपकी सेहत कैसी है?
एसपी ने इस पर कुछ नहीं कहा। बनावटी शिष्टाचार का कोई भी संकेत दिए बिना, उन्होंने बस इतना कहा, "ठीक है..." और रिसीवर नीचे रख दिया।
रविंद्र सोच में डूबा हुआ था। दोनों की बात करने के अंदाज़ को देखकर लग रहा था कि मामला सिर्फ़ विधायक स्तर का नहीं है – बल्कि इसकी जड़ें कहीं गहरी हैं! उसने शांतामूर्ति को अपने कमरे में बुलाया। पर वो अभी तक नहीं आया था। शशिरेखा आ चुकी थी। उसने शशिरेखा को नहीं बुलाया था क्योंकि वो जानता था कि शशिरेखा राजनीति की बारीकियों से वाकिफ़ नहीं है। शांतामूर्ति के आते ही उसने शशिरेखा से उसे भेजने को कहा और संपादकों की बैठक के लिए सबको बुलाया। सब लोग इकट्ठा हो गए।
वरिष्ठ उप-संपादक थिरुमलेशम सुचावलम-
"आप अपने अखबार में इस महत्वपूर्ण समाचार पर संपादकीय क्यों नहीं लिखते?"
रविंद्र ने कहा,
"हमें इस खबर के और सबूत मिलने तक इंतजार करना चाहिए।"
शांतमूर्ति 4:30 बजे पहुंचे। उन्हें बहुत पसीना आ रहा था। वे बहुत थके हुए थे। उनके खुश चेहरे से स्पष्ट था कि वे इसी खबर से संबंधित कुछ और महत्वपूर्ण जानकारी लेकर आए थे।
रविंद्र के कमरे का दरवाजा बंद करके और सामने वाली कुर्सी पर बैठते हुए उन्होंने कहा,
“महोदय, दो महत्वपूर्ण खबरें हैं! आज दोपहर करीब 12 बजे, उन मजदूरों को वहाँ से किसी अज्ञात स्थान पर ले जाया गया। उनकी झोपड़ियाँ भी वहाँ से हटा दी गईं। दूसरी खबर यह है कि यह सिर्फ भवन निर्माण के लिए पत्थर ढोने का मामला नहीं है। उस क्षेत्र में विशाल ग्रेनाइट की चट्टानें हैं। वे इन समूहों को यहाँ से हटा रहे हैं। इसमें करोड़ों रुपये का मुनाफा हो रहा है! मैंने सुना है कि ग्रेनाइट मद्रास जाता है और वहाँ से यह विदेश भी जाता है।”
रविंद्र ने उत्सुकता से पूछा,

"आपको यहाँ कैसे समझ आया?"
“क्या आपने ट्रक नंबर नोट किए? आपने उनके ड्राइवरों की तस्वीरें भी लीं। आपने उनके पते लिए और उनसे मुलाकात भी की। चाहे कुछ भी हो जाए, अगर आप कम वेतन देंगे, तो ये कर्मचारी हमेशा असंतुष्ट ही रहेंगे! मैं एक ड्राइवर से मिला। मैंने उसकी तनख्वाह और अन्य सुविधाओं के बारे में पूछा। उसने पूछा क्यों? मैंने कहा, “क्या आप यह नौकरी छोड़कर हमारे यहाँ काम करेंगे?” हम उसे छह सौ रुपये प्रति माह और बीस रुपये प्रतिदिन देंगे। उसके बाद, हमने इतनी दूर से पत्थर ढोने के बारे में बात की... तो डीजल और अन्य खर्चों को हटा देने पर यह व्यवसाय लाभदायक कैसे होगा?” उस समय, उसने मुझे ग्रेनाइट के बारे में बताया। उसने मुझे वह जगह भी दिखाई जहाँ ग्रेनाइट रखा जाता है - मैंने तस्वीरें ले लीं।”
"आपको कैसे पता चला कि मजदूरों को बारह बजे स्थानांतरित किया गया था?"
बैंगलोर विश्वविद्यालय में पत्रकारिता की पढ़ाई कर रहे दो लड़के मेरे दोस्त हैं। वे हमेशा कुछ खास करने के लिए उत्सुक रहते हैं। वे स्वभाव से साहसी हैं। उन्हें यह उम्मीद भी है कि कोर्स पूरा होने के बाद मैं उन्हें नौकरी दिलाने में मदद करूंगा। मेरे मन में यह बात बैठी थी कि आज हनुमंथप्पा कुछ ऐसा ही करेंगे। मैंने इन दोनों लड़कों को इस मिशन पर भेजा और अगर कुछ भी होता, तो मैंने उनसे तस्वीरें लेने को भी कहा था। चूंकि काम जानलेवा था, इसलिए मैंने उनसे सावधानी से काम करने को कहा था। उन्होंने धनगरों के बच्चों की तरह कपड़े पहने थे। उनके बाल लंबे और आधुनिक थे। उन्होंने अपने बाल पूरी तरह से मुंड़वा लिए थे और सिर भी मुंडा हुआ था। उन्होंने मिट्टी से सने शॉर्ट्स और कमीजें पहनी हुई थीं। उन्होंने अपने स्कूटर दूर छिपा रखे थे। उन मजदूरों के बर्तन और कड़ाही पत्थर ढोने वाले ट्रकों में रखे गए थे। इन लड़कों ने इसकी तस्वीरें ली हैं।
"बहुत बढ़िया! उन बच्चों को कभी वापस लाना! ऐसे बच्चों को अकेला नहीं छोड़ना चाहिए! क्या आप किसी भी गाँव में जाने के लिए तैयार हैं?"
वे किसी भी जंगल में चले जाएंगे! वे समय-समय पर कंद और जड़ें खाएंगे!
उन्होंने अगले दिन इन दोनों प्रमुख समाचारों को ठीक से पहुंचाने की व्यवस्था की। बाद में, उन्होंने शांतामूर्ति को आए दो महत्वपूर्ण फोन कॉल के बारे में भी बताया।
``पुलिस झोपड़ियों और मजदूरों को हटाकर बारह बजे वहाँ पहुंची होगी। उन्होंने मुझे उसी समय अपने साथ ले जाकर बदनाम करने की योजना बनाई होगी! शायद पुलिस आज बयान देगी। अब तक दे चुकी होगी। अपने अखबार के अलावा किसी और अखबार में भी दे चुकी होगी। ``एक स्थानीय अखबार में एक खबर छपी है – जब पुलिस ने इस मामले की जांच की तो पता चला कि इसमें कोई सच्चाई नहीं है –' वगैरह वगैरह! वे यह आरोप भी लगाएंगे कि अखबारों का धंधा हाल ही में पीली खबरें फैलाने का धंधा बन गया है – वगैरह। अगर ऐसा कुछ हुआ है तो उस पर ध्यान देना चाहिए। पता करो कि पुलिस वहाँ किस समय गई थी। मुझे उसका फोन बारह बजकर बीस मिनट पर आया था। अपने साथ दो और लोगों को ले जाओ। शशि चालाक है, है ना? मुझे बता देना कि उसने मुझे फोन किया था। मैं सही समय लिख लूँगा –"
"सर, एक और बात। क्या वह ग्रेनाइट के लिए सरकार को भुगतान करता है? हमें कल तक इसकी जानकारी मिल जाएगी। हमें अपना फिल्मी इतिहास भी बता दीजिए। दर्ज है कि उसने शूटिंग के लिए पाँच लाख रुपये मांगे थे। यह इतनी बढ़िया सामग्री है - इसे बेकार क्यों रखा जाए?"
``गो अहेड–"
शांतमूर्ति ने तुरंत घड़ी देखी। रविंद्र ने घंटी बजाई और लीना को शशिरेखा, गोविंदीप्पा और वेंकट नायडू को अंदर आने देने का निर्देश दिया, जो उस दिन कैमरा लेकर आए थे। शांतमूर्ति ने तीनों को उचित निर्देश दिए।

अगली सुबह अखबार निकला और खूब धूम मची। जैसा कि रवींद्र ने अनुमान लगाया था, सरकार का बयान अन्य अखबारों में छप चुका था और उसी समय खबर का दूसरा हिस्सा उनके अखबार में भी छप गया था! उनके प्रचार प्रबंधक का अनुमान था कि सात हजार से अधिक प्रतियां छपी थीं। वह भी सुबह दस बजे से पहले ही बिक गईं।
अन्य समाचार पत्रों को भी इस खबर की भनक लग गई। सभी समाचार पत्रों को इस बात का पता चल गया, क्योंकि उन्हें डर था कि अगर वे इस मामले पर कुछ भी नहीं छापेंगे तो इससे उनकी बिक्री प्रभावित होगी।
शांतमूर्ति भी जांच के दायरे में थे। जब सरकार और पुलिस ने मामला खारिज कर दिया, तो उन्होंने मजदूरों से हुई बातचीत का ब्योरा देना शुरू कर दिया। उन्होंने मजदूरों के नाम, बीजापुर जिले के उनके गांव, गांव छोड़ने का समय, यहां काम शुरू करने के बाद से गांव से संपर्क टूटने के कारण, वे कहां थे, उन्हें गांव का नाम बताने से मना क्यों किया गया था, आदि सब कुछ रिकॉर्ड कर लिया था। उनके पास वहां मौजूद सभी लोगों की तस्वीरें और वीडियो रिकॉर्डिंग भी थीं। अखबार की बिक्री बढ़ाने के लिए उन्होंने हर दिन थोड़ा-थोड़ा अखबार छापना शुरू कर दिया। साथ ही, उन्होंने इस लेन-देन के अन्य पहलुओं की भी जांच शुरू कर दी। चूंकि उनके पास शुरू से ही विस्तृत जानकारी थी, इसलिए उन्हें यह भी पता था कि किस मुद्दे पर गहराई से जांच करनी है।
जब उन्होंने पूछताछ की तो पता चला कि वह ज़मीन पूरी तरह से सरकार के स्वामित्व में थी। उन्होंने वहाँ ग्रेनाइट पत्थर बेचने के लिए सरकार से पूर्व अनुमति नहीं ली थी। उन्होंने इसके लिए सरकार को एक पैसा भी मानदेय के रूप में नहीं दिया था। इसके विपरीत, यह दर्ज किया गया कि उन्होंने उस ज़मीन पर फिल्म की शूटिंग के लिए पाँच लाख रुपये की माँग की थी।
इन सभी खबरों के प्रकाशित होने के बाद, हनुमंथप्पा ने एक बयान दिया – जिसमें उन्होंने लिखा कि उन्होंने सरकार से अनुमति ली थी। उन्होंने यह भी लिखा कि वे सरकार को हर साल मानदेय की एक उचित राशि का भुगतान कर रहे थे और चेतावनी दी कि यदि कोई उन्हें फिर से बदनाम करने की कोशिश करता है, तो वे उन्हें अदालत में ले जाएंगे। रविंद्र ने शांतामूर्ति, गोविंदाप्पा और वेंकट नायडू से मुलाकात की और उनसे हनुमंथप्पा के बयान की सच्चाई का पता लगाने को कहा। वेंकट नायडू को इस कार्य के लिए भेजा गया क्योंकि शांतामूर्ति की पहचान उजागर होने की संभावना थी।
दो दिन बाद आए वेंकट नायडू ने खबर दी कि दो दिन पहले पुरानी तारीख वाले फर्जी दस्तावेज तैयार किए गए हैं। लेकिन इसके लिए बाकी सभी दस्तावेज, रसीदें आदि पेश करना नामुमकिन है। इसके लिए कई जगहों से छानबीन करनी पड़ेगी। खबर के साथ ही उन्होंने यह भी बताया कि वहां के दफ्तर में परशुराम गौड़ा नाम के एक व्यक्ति ने हनुमंथप्पा को पुरानी तारीख वाले अस्थायी दस्तावेज तैयार करने में मदद की थी।
अगले दिन वेंकट नायडू द्वारा दी गई जानकारी प्रकाशित हुई। इसके साथ ही उन्होंने एक और बयान दिया – ग्रेनाइट की यह चोरी और अवैध व्यापार किसी विधायक के अधिकार क्षेत्र तक सीमित नहीं रह सकता, इस बात से इनकार करना असंभव है कि इसमें राजस्व मंत्री की संलिप्तता है – हमारे पास अपने बयान को साबित करने के लिए पर्याप्त सबूत हैं!
विपक्षी दल ने भी इस पर हंगामा खड़ा कर दिया।
बाद में, रविंद्र ने इस विषय पर एक लंबा संपादकीय लिखा।
यह मामला करीब बारह दिनों तक चलता रहा – जिसके बाद एक दिन के लिए रुक गया। सरकार ने आगे क्या कदम उठाए, यह किसी को समझ नहीं आया। चाहे ग्रेनाइट से सरकार को हुए नुकसान की बात हो या उन मज़दूरों का सवाल

जिन्होंने इस काम में अपनी हड्डियां घिस दी थीं – इसके बाद किसी ने भी इन सवालों की जांच नहीं की, उनका क्या हुआ, वे कहां गए, आदि। जब पूरा समाज नैतिक आलस्य में डूबा हो तो एक अखबार क्या कर सकता है? – रविंद्र ने मन ही मन सोचा। लेकिन शांतामूर्ति, जो इतने लंबे समय से खबरों के हीरो रहे थे, संघर्ष कर रहे थे। हमें सिर्फ खबरें ढूंढनी चाहिए और उसे प्रकाशित करना चाहिए – बस! हमें और उलझनों में नहीं पड़ना चाहिए – रविंद्र के अनुभव के ये शब्द उन्हें झूठे लग रहे थे।
इस मामले की वजह से रविंद्र को अपने पत्रकार वाले दिन याद आ गए। पत्रकार का असली काम तो यही होता है! किसी दफ्तर में डेस्क पर बैठकर काम करना नहीं।

■

५

वडेरय्या ने भोजन और पूजा पूरी करने के बाद प्रस्थान किया, लेकिन वे भोजन करने के लिए उठे नहीं। हाल ही में उन्होंने एक अलग तरीका अपनाया था। पिछली बार जब वे मुंबई गए थे, तब दलाल की माँ ने उन्हें सुझाव दिया था,
अपने पास मिलक पाउडर, कॉर्नफ्लेक्स, चीनी और अन्य चीज़ें रखें। सुबह आठ बजे इनमें से कुछ खा लें। अगर आप चीनी, मिलक पाउडर, कॉर्नफ्लेक्स और पानी मिलाकर खाएंगे, तो आपकी संगीत की पढ़ाई भी बहुत अच्छी होगी।
उस सुबह जब वे रोटी, मक्खन, उबले अंडे और दूध का नाश्ता परोसने आए, तो होन्नाटी ने कहा था,
"अगर मुझे यहां इस तरह के नाश्ते की आदत हो गई, तो पहाड़ों में मैं क्या करूंगा?"
उस समय उन्होंने मुझे यह उपाय बताया था। जब वे वापस लौटने लगे, तो उन्होंने ये सारा सामान अपने साथ पैक कर लिया था। उन्हें यह बात समझ में आ गई थी। उन्होंने यह भी अनुभव किया था कि यदि उनके पेट में कुछ कैलोरी हों, तो वे रियाज़ करते समय अधिक ध्यान केंद्रित कर पाते हैं। इसलिए, हालांकि वदेरय्या भोजन लाए थे, फिर भी उन्होंने उसे काफी देर बाद खाया।
उस दिन वे बागेश्री राग की आलापी में पूरी तरह लीन थे। पिछले एक सप्ताह से वे इसी राग की आलापी और झाला का अभ्यास कर रहे थे। सितारी के तार बजाते हुए, बिना तार बजाए मौन में डूबते हुए, पहाड़ पर बरगद के पेड़ के नीचे खड़े होकर ठंडी हवा का आनंद लेते हुए, रात में आंधी नींद में, वे इस राग की मधुरता में डूबे रहते थे। उन मधुरताओं की लहरों पर अपने पूरे व्यक्तित्व को झुलाते हुए, उन्हें भीतर से कहीं यह अहसास हुआ – आखिर हम इस राग के सार को कहाँ तक समझने की कोशिश कर रहे हैं! मन के कोनों में इस राग के खाली स्थान विभिन्न मधुरताओं और आलापियों से भर रहे थे। अब हमें उन्हें ऊपर से खींचकर अपनी उंगलियों के वश में करना चाहिए! ताकि हम इसमें और अधिक सूक्ष्मताओं को खोज सकें! इसी जिज्ञासावश, वे उन्हीं पंक्तियों, उन्हीं धुनों, उनके अत्यंत सूक्ष्म-तरल स्वरों, विरोधाभासी स्वरों की सजावट को बार-बार दोहरा रहे थे, और बड़ी सावधानी से सुन रहे थे कि क्या वे मूल राग के गर्भ में पूर्णतः विलीन हो सकते हैं। आज, यह राग स्वयं हमारे समक्ष अपना मूल रूप प्रकट कर चुका है – गुरु हमें बता सकते हैं – इसे बजाकर दिखा सकते हैं, हम इससे कहीं अधिक समझ रहे हैं, उन्हें तो यह भी पता नहीं था कि कब कार्यक्रम समाप्त हो रहा है।
तभी उसे मंदिर के बाहर किसी के बोलने की आवाज़ सुनाई दी। बागेश्री, जो काफी देर से होश में इधर-उधर भटक रहा था, वापस अंदर चला गया। तभी मंदिर के

द्वार पर एक काली परछाई पड़ी। उसने वेदी पर टिका अपना चेहरा उठाया और आधे मन से उसकी ओर देखा।
एक आदमी अंदर आया। उसके पीछे दो और लोग आए। पहले वाले ने एक ही कपड़े की बनी कमीज़ और पैंट पहनी हुई थी। उसके घुंघराले बाल, सांवला रंग और गांव के माहौल में आत्मविश्वास से ज़्यादा हंसमुख चेहरा—कुल मिलाकर, वह गांव के आदमी जैसा दिखता था, लेकिन शहर में रहता था। बाकी दोनों ने अपनी धोती को लुंगी की तरह लपेटा हुआ था। यह साफ़ था कि दोनों, जिनकी उम्र चालीस या चालीस के आसपास थी, शहर में रहने आए थे, लेकिन अब स्थायी रूप से गांव में रह रहे थे।
पैंट पहने हुए आदमी सीधे अंदर आया और वहाँ बिछी चटाई पर पैर फैलाकर बैठ गया, मानो वह चटाई उसी की हो। दोनों जांघें मोड़कर बैठ गए। चटाई पर बैठे हुए व्यक्ति ने अपनी जेब से एक धारीदार रुमाल निकाला और अपना चेहरा और गर्दन पोंछते हुए होन्नाटी से पूछा,
आप किस गांव से हैं?
लेकिन इसके पीछे सवाल यह था: आपने यहां डेरा डालने के लिए किसे कहा था?
बागेश्री के विभिन्न आकर्षणों से घिरे होन्नाटी को यह अत्यंत कठिन प्रश्न समझ में नहीं आया। ऐसा नहीं था कि उनके पास ऐसे प्रश्नों के उत्तर नहीं थे - बल्कि उन्हें यह भी एहसास था कि जब तक वे अपना वह रवैया और करिश्मा नहीं छोड़ेंगे, संगीत शांत नहीं होगा, इसलिए उन्होंने यह सोचकर मौन धारण किया कि इसका प्रश्न से कोई लेना-देना नहीं है। पंतवाला ने अपनी जेब से सिगरेट का एक पैकेट और माचिस निकाली। उन्होंने बाकी दोनों को एक-एक सिगरेट दी, अपनी सिगरेट का एक लंबा कश लिया और माचिस उन पर फेंक दी। जब उन्होंने भी सिगरेट के कश ले लिए, तो वे होन्नाटी की ओर मुड़े और फिर पूछा,
क्या आपको कन्नड़ या हिंदुस्तानी नहीं आती?
"कन्नड़ आ रही है..." होन्नाटी ने जवाब दिया।
"जब मैंने आपसे पूछा कि आप किस गांव से हैं, तो आपने जवाब नहीं दिया!"
"होन्नाटी... धारवाड़ जिले में स्थित है।"
"तुम यहाँ क्यों आए? और भगवान के मंदिर में यह कैसी दुनिया है?" उसने कोने में रखे लंच बॉक्स, बर्तन, डिब्बे आदि की ओर हाथ बढ़ाते हुए पूछा।
हेमंत होन्नाटी अंदर ही अंदर बहुत गुस्से में थे। लेकिन बिना कुछ दिखाए उन्होंने पूछा,
हमारी मुलाकात नहीं हुई है!..."
"हमारा परिचय?... तुम तीन साल से हमारे गाँव में रह रहे हो और अब हमारे परिचय के बारे में पूछ रहे हो? अरे लक्कन्ना, उसे बताओ कि हम कौन हैं!"
लक्कन्ना, जो जांघों को बीच में मोड़कर बैठा था और मुट्ठी से तुरही की आकृति में तार खींच रहा था, धुएं का एक कश छोड़ते हुए पूछा,
"ये लोग कौन हैं, है ना? फिर आप इस मंदिर में कैसे रहते हैं? चोर बगीचे वाले घर में सेंध लगा रहे हैं!"
"मुझे नहीं पता। मुझे बताने का क्या फायदा?" हेमंत ने धीमी आवाज़ में पूछा।
तुम खाना नहीं खाते? उन्होंने उस स्कूल को ज़मीन दान में दी थी! तुम उनका खाना निगल जाते हो - ये क्या बात है? क्या भगवान भला करेगा? तुम दिन-रात वहीं क्यों बैठे रहते हो?
हेमंत समझ गया कि यह सौद्रगौड़ा का पोता परशुरामगौड़ा है। उसने उसका नाम सुना था। इतना ही नहीं, उसने यह भी सुना था कि हाल ही में उसका अन्नाय्या से झगड़ा हुआ था। उसे यह भी पता था कि वह रामनगर या किसी अन्य गाँव के राजस्व विभाग में काम करता है। उसे यह बिलकुल भी अंदाजा नहीं था कि यह आदमी इतना असभ्य हो सकता है। उसे समझ आ गया था कि उसका यह व्यवहार

अन्नाय्या से झगड़े का ही एक रूप है। उसे तुरंत समझ नहीं आ रहा था कि उसे करारा जवाब देकर चुप करा दे या नहीं।
"हमारी मुलाकात पहले कभी नहीं हुई। मैं हफ्ते में एक दिन छोड़कर यहीं पहाड़ों में रहता हूँ। आपसे मिलकर अच्छा लगा!" उन्होंने शिष्टाचार दिखाते हुए कहा।
"उन्हें जाने दो। यह भगवान का मंदिर है! उन्हें यहाँ भोजन-पानी रखना चाहिए और अपने अनुष्ठान करने चाहिए। उन्हें रात में यहीं सोना चाहिए - क्या भगवान गंदे और मैले नहीं होते?" परशुराम गौड़ा ने पूछा।
भगवान गर्भगृह में विराजमान हैं। मैं यहाँ कोई बर्तन नहीं रखता। अगर कोई खाने का बर्तन भी हो, तो खाना खत्म होते ही मैं उसे मंदिर के बाहर, उस चट्टान के पार धो देता हूँ। मैं यहाँ खाना नहीं पकाता, मुझे बीड़ी, सिगरेट या तंबाकू पीने की भी आदत नहीं है..."
"तो आपको हमारे सिगरेट पीने पर आपत्ति है?"
हेमंत ने गौर किया कि वह अपने बारे में एकवचन में बात कर रहा था। फिर भी, ज्यादा ध्यान दिए बिना, उसने कहा,
यह आपके गांव का पहाड़ है, आपका गांव का मंदिर है! आप जो चाहें करें... लेकिन मैं ऐसा कुछ नहीं करता। बस इतना ही कहना चाहता हूं। अतीत में भी विद्वान और कलाकार अपने मंदिरों में बैठकर अध्ययन, अध्यापन और अपनी कला का विकास करते थे। मैं भी यहां बैठकर साधना करता हूं..."
"हमारे गांव वाले इस सब के बारे में क्या सोचते हैं? किसी दूसरे गांव का एक आदमी हमारे गांव के मंदिर में एक, दो या तीन साल से नहीं बैठा है - हमने उसे बाहर निकालने का फैसला किया है!"
वे लोग नहीं समझेंगे... क्योंकि वे अशिक्षित लोग हैं! आप शिक्षित हैं... आपको उन्हें ठीक से समझाना चाहिए..."
अरे! अगर आपको हमें चार ज्ञानवर्धक बातें बतानी हों, तो क्या आप बताएंगे? आप अपने सांसारिक जीवन के साथ एक मंदिर में बैठे हैं... क्या आप कम से कम इसके लिए कुछ किराया तो देते हैं या नहीं?
"देखो, गौड़ा! किसी अनजान बुजुर्ग से अकेले में बात करना शिक्षा की निशानी नहीं है। मैं चुप रहता हूं, इसलिए तुम भी हद से ज्यादा मत बोलो! अगर गांव के सभी लोग पूजा या मंदिर की मरम्मत के लिए चंदा इकट्ठा करने का फैसला करें, तो मैं भी यथासंभव मदद करूंगा। यहां रहने के लिए किराया नहीं... भक्ति का उपहार! एक समिति बनाओ और उस नाम से एक बैंक खाता खोलो। मैं भी आऊंगा और रसीद ले जाऊंगा..." उन्होंने बहुत ही विनम्रता से कहा।
परशुरामय को उनका अर्थ समझ आ गया। उन्होंने कहा,
देखो, बैंक खाते... रसीदें... समितियाँ, आदि गाँव में नहीं चलेंगे। इसके लिए तुम्हें गाँव में ही बैंक खोलना होगा। तुम शहर में रहने के लायक हो। तो फिर हमारे गाँव में क्या कर रहे हो?
मुझे नहीं लगता कि मुझे ऐसे सवालों का जवाब देने की ज़रूरत है। मंदिर में किसी को भी लड़ाई-झगड़ा नहीं करना चाहिए। मैंने भी पूछताछ की है। मुझे जो जानकारी मिली है, वह यह है... यह पर्वत हलुकेरे की सीमा में नहीं आता। यह इस तरफ़ तगलिहल्ली की सीमा में आता है।
इस मंदिर के पुजारी हमारे गांव में रहते हैं। हमारी जाति के वडेरय्या इस देवता की पूजा करते हैं। यह हमारी जाति का मंदिर है। तागलीहल्ली में तो पीछे से सिर्फ शेतजी ही दिखते हैं!"
देओल किसी एक जाति से ताल्लुक नहीं रखता। आप जैसे पढ़े-लिखे व्यक्ति को ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए! अगर आपको कॉलेज से कोई आपत्ति है, तो उनकी बैठक में अपनी राय रखें। जो व्यक्ति यहां सिर्फ चार दिन के लिए आया है, उसे इस झगड़े में क्यों घसीट रहे हैं?

परशुराम गौड़ा ने इससे आगे ज्यादा कुछ नहीं कहा। उन्होंने बस इतना ही कहा – "क्या आप ऐसा कहते हैं?"
फिर मैं क्या कहूँ? एक संगठन शुरू करना और उसे इतना बड़ा बनाना आसान नहीं है। अन्नाइया इसके लिए बहुत संघर्ष कर रहा है। आपको भी उसकी यथासंभव मदद करनी चाहिए। आपके दादाजी की आत्मा को शांति मिले!" उन्होंने यह कहते हुए अपनी बात समाप्त की।
"अरे! अन्ना गौड़ा मुफ्त में ढेर सारा खाना उगाता है। इसलिए उसकी तारीफ मत करो। चुप रहो। अपने कान बंद कर लो!..." वह उठते हुए बोला।
जाते समय उसने सिगरेट का टुकड़ा वहीं फेंक दिया। उसके जाते ही बाकी दोनों उठे, देवता के बंद द्वार की ओर मुड़े, 'शिव-शिव-शिव-भगवंत-' का जाप किया, आँखें बंद कीं, प्रणाम किया और चले गए। हेमंत को इस बात का गहरा अहसास हुआ कि परशुराम गौड़ा ने देवता से हाथ तक नहीं मिलाया था।
कैमरा सिगरेट की गंध से भरा हुआ था। बागेश्री का वातावरण पूरी तरह से बिगड़ चुका था। एक पल के लिए मेरा मन हुआ कि उसे फोन करके सिगरेट के टुकड़े फेंकने को कहूँ, लेकिन उसने खुद को संयमित रखा। हमने बात की, और वह भी कुछ ज़्यादा ही हो गई। जो भी हुआ हो, हमें अन्नाय्या को बता देना चाहिए।
अब उसे बहुत भूख लग रही थी। सिगरेट के टुकड़े और राख फेंकने और हाथ धोने के बाद, उसने अपना खाना थाली में निकाला और बरगद के पेड़ के नीचे ठंडी हवा में बैठकर खाने लगा। वह सोच रहा था - क्या उसे अन्नय्या को बताना चाहिए या नहीं? उसे बता देना बेहतर होगा। इससे उसे अपने व्यवहार के बारे में निर्णय लेने में मदद मिलेगी।

■

सुबह कॉलेज की सभी कक्षाएं शुरू हो रही थीं। तभी मोटरसाइकिल की वही आवाज़ सुनाई दी। वहां के शांत वातावरण में उस आवाज़ ने न केवल छात्रों बल्कि शिक्षकों का भी ध्यान आकर्षित किया। अन्नाय्या रसोई में रसोइयों को कुछ निर्देश दे रही थीं, वही बात बार-बार दोहरा रही थीं,
आप तो हर रोज खाना बनाते हैं! मुझे आपको दोबारा क्यों बताना पड़ेगा? खुद से खाना बनाना आज़ादी है! दूसरों की बात सुनकर खाना बनाना आजादी है!
मोटरसाइकिल की आवाज़ भी उनके कानों तक पहुँची। उनके मन में एक सवाल उठा – ये किसकी हो सकती है? परशुराम गौड़ा? रसोइयों के यह कहते ही कि, "हम झाड़ू लगा रहे हैं... आप एक तरफ हट जाइए...", अन्नय्या गर्मी से झुलसते हुए एक तरफ हट गए। उन्होंने अपने कमरे के पास एक मोटरसाइकिल रुकते हुए सुनी और उसे स्टैंड पर खड़ा किया। वे वहाँ गए। जी हाँ – परशुराम गौड़ा आ गए थे। परशुराम गौड़ा, पैंट और ब्लाउज पहने हुए, अभी-अभी अपने कमरे में गए थे और वहाँ ताला देखकर वापस मुड़े। अन्नय्या को देखते ही उन्होंने सबसे पहले उन्हें प्रणाम किया और अभिवादन किया, फिर अभिवादन में हाथ उठाया।
अन्नाय्या ने दरवाजा खोला। उसने दरवाजे पर अपने जूते उतारे और चटाई पर बैठ गया। उसके बगल में बैठते हुए, अन्नाय्या ने हमेशा की तरह मुस्कुराते हुए पूछा,
"गौड़ा कब आए थे?"
उनके शांत चेहरे को देखकर परशुराम गौड़ा मानो अपनी बात भूल ही गए। उनका चेहरा तो ऐसा ही मोहक है! इसी मोहक अंदाज़ से उन्होंने हमारे दादाजी से एक सौ बीस एकड़ ज़मीन छीन ली। उस समय मैं बालिग़ हुआ था – उन्होंने मेरे हस्ताक्षर लेकर इसे रिकॉर्ड में पक्का कर लिया! चूंकि वे लेखा विभाग में काम करते थे, इसलिए परशुराम गौड़ा भी जानते थे – अब कुछ नहीं किया जा सकता!
जी मिचलाने के बावजूद, उसने एक बार चारों ओर देखा और पूछा,
"स्कूल का क्या कहना है? क्या सब कुछ ठीक चल रहा है?"

हालांकि अन्नाय्या जानता था कि वह गांव के लोगों को स्कूल के बारे में कुछ बेतुके विचार दे रहा है, फिर भी उसने बिना दिखाए कहा,
आप जैसे लोगों को बैठक में आना चाहिए। जब आप गाँव आएँ, तो स्कूल में आकर देखें कि क्या चल रहा है। अगर कुछ कम या ज़्यादा है, यह करो या वह करो, तो सुझाव दें! ताकि हम जैसे यहाँ काम करने वाले लोग भी काम करने के लिए उत्साहित हों! आप नहीं आते। आपको दोनों पक्षों को देखना होगा, है ना? बच्चे कैसे हैं? क्या वे ठीक हैं? सबसे बड़ा सात साल का है, है ना?
उन्हें धीरे-धीरे एहसास होने लगा कि पीठ पीछे उकसाना आसान था—बोलना मुश्किल था। उन्होंने सीधे बोलना शुरू कर दिया।
"मैं चाहता हूं कि तुम मेरे लिए एक काम करो! अगर तुम ठान लोगे तो मुझे यकीन है कि यह हो जाएगा, इसीलिए तो मैं आया हूं।"
उसे इस बात का कुछ-कुछ अंदाजा था कि वह किसलिए आया है, लेकिन बिना इसे दिखाए उसने कहा।
"क्या आप अपने बच्चे को स्कूल भेजना चाहते हैं? वह अभी सात साल का है। उसे अगले छह-सात साल अपने माता-पिता के साथ ही रहने दीजिए। यहाँ आने वाले बच्चे लगभग तेरह-चौदह साल के होते हैं। अगर उनकी उम्र में बहुत अंतर होता है, तो वे बच्चे यहाँ भी नहीं खेलते। लेकिन अगर वहाँ भी ऐसी ही कोई समस्या है, तो मुझे बताइए। हम कुछ इंतज़ाम कर सकते हैं। मैं शनिवार और रविवार को आपके गाँव आऊँगा।"
"यह चतुर व्यक्ति, अन्नय्या! क्या इसे नहीं पता कि हम इसके लिए नहीं आए थे?" परशुराम गौड़ा ने कहा।
"मेरा काम अलग था। क्या इंडियन ट्रिब्यून आपके कॉलेज में आता है?"
इधर आइए। हम बैंगलोर से आने वाले सभी कन्नड़ और अंग्रेजी अखबार मंगवाते हैं। इसका मतलब है कि यहाँ पहुँचने में दोपहर 12 बजे तक का समय लगता है। सभी पुराने अखबार पुस्तकालय में करीने से रखे हुए हैं। आज का अखबार आते ही मैं आपको भेज देता हूँ। अन्यथा, आप यह कीजिए, यहीं खाना खा लीजिए और जाने से पहले अखबार पढ़ लीजिए!
परशुराम गौड़ा को यह आभास हो गया था कि यह जानबूझकर बातचीत को दूसरी दिशा में मोड़ने की कोशिश है। लेकिन अब उन्होंने स्पष्ट रूप से इस विषय को उठाया।
`` देखिए, आपने भी शायद पढ़ा होगा। रामनगर के पास ग्रेनाइट के बारे में वो खबर – बीजापुर के मजदूरों को हिरासत में लिया गया वगैरह – कई तस्वीरें भी दी गई थीं, देखिए! अखबारों में तो पन्ने भरने के लिए झूठी कहानियां छाप देते हैं! तस्वीरें भी छाप देते हैं – भला इन्हें कौन मना करेगा? लेकिन – हमारा एक दोस्त है – विधायक हनुमंथप्पा, उसका नाम यही है। वो चोरी का धंधा करता है – एक निर्दयी, इंसानियतहीन आदमी – ऐसे झूठे आरोप लगाने में क्या न्याय है? क्या आपने पढ़ा है?"
मुझे कई दिनों से अखबार पढ़ने का समय नहीं मिला है। मुझे समय चाहिए! मैं कन्नड़ अखबार पर मुश्किल से एक बार नज़र डाल पाती हूँ, बस इतना ही!
यह कहते हुए उन्हें सब कुछ स्पष्ट रूप से याद आ गया। न केवल इंडियन ट्रिब्यून, बल्कि अन्य समाचार पत्रों ने भी इस खबर को विस्तार से प्रकाशित किया था। उन्हें इसे संबंध में रविंद्र को लिखे पत्र का हर वाक्य याद था। उन्होंने उसी प्रशंसा के साथ लिखा था - ऐसे घृणित कृत्य करने वाले विधायक की सारी संपत्ति जब्त कर ली जाए, और बीजापुर के शोषित मजदूरों को उसमें से जमीन देकर पुनर्वासित किया जाए तथा शेष संपत्ति सरकार को हस्तांतरित कर दी जाए!
अब उसे यह बताने का कोई फायदा नहीं था—वह पहले ही संगठन के कामकाज में दखल देना शुरू कर चुका था। उसे डर था कि इससे उसे चोट पहुंचेगी और

संगठन को और नुकसान होगा, इसलिए वह चुप रहा।
उन्हें भी समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहें। उन्होंने कहा,
कोई अखबार बेचने वाले हनुमंथप्पा के पास गया और फिल्म बनाने के लिए पाँच लाख रुपये मांगने लगा। हनुमंथप्पा ने कहा, "पैसा मुफ्त में क्यों मिल रहा है?" हनुमंथप्पा ने मना कर दिया। उसने कहा, "किसी के पास चार पैसे का थैला है। यही है हीरोइन।" हनुमंथप्पा ने कहा, "अरे, जब बड़े सितारों वाली फिल्में कचरे की तरह उड़ रही हैं, तो हनुमंथप्पा इतनी सस्ती हीरोइन की फिल्म के लिए पैसे क्यों देंगे?" हनुमंथप्पा को गुस्सा आ गया और उसने हनुमंथप्पा के खिलाफ ये सब लिख डाला! उसने सरकार से पत्थर तोड़ने का जो लाइसेंस लिया था, वो दिखाया, लेकिन वो फर्जी था, इसलिए उसने उसे दोबारा लिख दिया! और उसने कहा कि मैंने उसे फर्जी लाइसेंस दिया है, वो भी पिछली तारीख का! उसने बड़े गर्व से लिखा, "इस मामले में मैंने बहुत रिश्वत ली है और सात मंजिला महल बनवाया है और उस पर नौ सोने के खंभे लगवाए हैं! इस तरह लिखने से मेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा! उसे जाने दो। वो तुम्हें बताएगा कि मैं अब तुम्हारे पास क्यों आया हूं। मुझे पता चला है कि उस अखबार का संपादक तुम्हारा दोस्त है। क्या उनका बेटा यहाँ पढ़ रहा है?" उन्हें पत्र लिखो, या मेरे साथ बैंगलोर चलो और झूठी खबरें मत छापो - अगर सच है तो छाप दो - हनुमंथप्पा ने देश के लिए अपना बलिदान दिया - उनके पिता स्वतंत्रता संग्राम के दौरान जेल गए थे। आपके रिपोर्टर ने जिस पर फर्जी लाइसेंस देने का आरोप लगाया है, वह कोई और नहीं बल्कि परशुराम गौड़ा हैं - सौद्रगौड़ा के पोते, जिन्होंने इस कॉलेज के लिए एक सौ बीस एकड़ जमीन दान की थी! रिपोर्टर इस पृष्ठभूमि को जाने बिना ही कुछ भी लिख देते हैं! इस अन्याय को होने नहीं देना चाहिए - अगर आप पत्र लिखेंगे, तो आपको न्याय मिलेगा। क्या मैंने आपको पहले नहीं बताया? वे कुछ भी लिखें, मेरा या हनुमंथप्पा का एक बाल भी टेढ़ा नहीं होगा, लेकिन जब अखबारों की बात आती है, तो क्या उन्हें सच नहीं लिखना चाहिए?
एक बार जब उसने बोलना शुरू किया, तो उसकी सारी झिझक और संकोच गायब हो गए। इससे उसे यह आत्मविश्वास मिला कि वह जितना चाहे उतना बोल सकता है।
अन्नाय्या उसे देख रहा था। उसके चेहरे पर वही कोमलता और स्नेह था। उसे पूरा यकीन था कि वह जो कह रहा है, उस पर उसे पूरा विश्वास है। उसने आगे कहा,
"चलो, बैंगलोर चलते हैं। या फिर एक पत्र लिखो। मैं जाकर उनसे मिलूंगा।"
"मैं एक पत्र लिखूंगा—" अन्नायाह उठे और अपनी मेज पर कागज का एक टुकड़ा रखकर लिखने लगे। इससे पहले उन्होंने उससे कहा, "रवींद्र बसवनप्प के वेंकटसुब्बय्या के पोते हैं। मैंने वेंकटसुब्बय्या और उनकी पत्नी शांताम्मा जैसे दानवीर लोग कभी नहीं देखे। बुढ़ापे में उन्होंने एक लाख रुपये और एक एकड़ जमीन दान की – उन्होंने एक अस्पताल बनवाया। रवींद्र के पिता ने भी इसमें कोई दखल नहीं दिया। जब उनके माता-पिता ने दान समारोह किया, तो वह भी खुशी-खुशी उपस्थित हुए और यहां तक कि उन्होंने उनके हाथ को छुआ और उस पर जल छिड़का। रवींद्र भी उन्हीं की तरह हैं। अगर कोई मुसीबत में होता है, तो वह आगे आकर मदद करते हैं। उन्होंने मेरी पूरी कॉलेज की पढ़ाई करवाई। देखो – तुम्हारे दादाजी की तस्वीर के बगल में उनकी तस्वीर है! मैंने तुम्हें यह जानबूझकर बताया है। रवींद्र में न्याय की सहज भावना है! अगर इसमें कोई अन्याय है, तो वे जरूर ध्यान देंगे!..."
यह कहते हुए उन्होंने पत्र लिखना शुरू किया। सबसे पहले अनुप की पढ़ाई से संतुष्टि व्यक्त करते हुए उन्होंने लिखा,
– यह पत्र लाने वाले व्यक्ति हलुकेरे के स्वर्गीय सौद्रे गौड़ा के पोते परशुराम गौड़ा हैं। मैंने आपको सौद्रे गौड़ा के बारे में पहले ही बता दिया है। आपके अखबार ने

ग्रेनाइट के अवैध निर्यात के बारे में विस्तृत समाचार प्रकाशित किया है। श्री परशुराम गौड़ा का कहना है कि विधायक हनुमंथैया बहुत अच्छे व्यक्ति हैं और आपके संवाददाता ने किसी निजी कारण से उन पर ये गंदे आरोप लगाए हैं। हालांकि, आपको इन सभी मामलों की स्वयं जांच करनी चाहिए और यदि इसमें कोई सच्चाई हो, तो एक बयान प्रकाशित करें। यदि हमें पता चलता है कि संवाददाता द्वारा दी गई खबर सही है, तो हमें कुछ नहीं कहना है।
पत्र लिखने के बाद, उन्होंने उसे परशुराम गौड़ा को देखने के लिए दिया और लिफाफा लेकर उस पर रवींद्र का पता लिखना शुरू कर दिया।
पत्र पढ़ते ही परशुराम गौड़ा का चेहरा पहले तो खिल उठा, फिर धीरे-धीरे काला पड़ गया। उसके बाद उनके हृदय में क्रोध उमड़ आया। उन्होंने पत्र उनके सामने फेंक दिया और कहा,
आपने क्या लिखा!
"क्या तुमने वह देखा?" उसने सवाल का मतलब न समझने का नाटक करते हुए कहा।
इस पत्र को लिखने के लिए आपको क्या चाहिए था? सच, सच! अगर आप सचमुच किसी की मदद करना चाहते हैं, तो आपको पता चल जाएगा कि पत्र कैसे लिखा जाता है!
"समाचार मीडिया ने झूठी खबरें दी हैं - आप सच्ची खबरें छापें, इसीलिए मैंने लिखा। आप और क्या कहना चाहते थे?"
``देखो – मेरे पास इससे निकलने की शक्ति है, और हमारे हनुमंथप्पा के पास भी! मैं यहां यह देखने आया हूँ कि तुम क्या कर सकते हो!" वह पत्र वहीं छोड़कर खड़ा हो गया।
बैठ जाइए, परशुराम गौड़ा! उन्होंने अपने बेटे को यहाँ पढ़ने के लिए भेजा है, तो हम उन्हें उनके काम में यह करने और वह न करने के लिए कैसे कह सकते हैं? हर किसी के अपने विश्वास और सिद्धांत होते हैं। इस पत्र में हमने उनके पत्र-व्यवहारकर्ता पर झूठ बोलने का आरोप लगाया है। मुझे ऐसा करने का क्या अधिकार है? मैंने इसमें सत्य या असत्य की जाँच नहीं की है। मैंने यह पत्र आपके कहे पर पूर्ण विश्वास के साथ लिखा है। पत्र में इससे अधिक लिखने की क्या आवश्यकता है? आप उनसे स्वयं मिलेंगे, है ना? उस समय आपको जो कुछ भी कहना हो, कह दीजिएगा। वे अवश्य सुनेंगे और निर्णय लेंगे –" उन्होंने धैर्यपूर्वक कहा।
"मुझे पता है क्या करना है और क्या कहना है..." उसने कहा और जल्दी से कमरे से बाहर निकल गया, जिससे पूरे संकाय की शांति एक बार फिर भंग हो गई। उसने अपनी मोटरसाइकिल स्टार्ट की और चला गया।
क्या हमने सही किया या गलत? – अन्नाय्या के मन में एक सवाल उठा था। ये परशुरामैया तो पहले से ही अपने संगठन के बारे में कुछ न कुछ कहकर गाँव में अफवाहें फैला रहे हैं। इस गाँव के सौदागौड़ाओं द्वारा दी गई ज़मीन पर बने स्कूल से हमारे गाँव को क्या विशेष लाभ मिला है? हमें बाहर के बच्चों को यहाँ क्यों रखना चाहिए? – ये सवाल वो उठा रहे हैं। वे ये भी कहते हैं कि लोग पहाड़ों से गाँव के तालाब में आने वाले पानी को बीच में दीवार बनाकर रोक रहे हैं। इस आरोप में कोई सच्चाई नहीं है। हमने इस बांध के निर्माण के लिए आवश्यक सरकारी अनुमति ली थी। अगर इस गाँव को अलग स्कूल चाहिए, तो गाँव को इसके लिए प्रयास करना चाहिए।
आखिरकार, कानूनी तौर पर तो वो कुछ कर नहीं पाएगा – फिर भी ये रोज़ाना की परेशानी है! ये मामला करीब छह महीने पहले शुरू हुआ था। लेकिन तब ये मामूली था। अब तो वो ज़रूर और ज़्यादा मुसीबत खड़ी करेगा!

दोपहर के भोजन के दौरान भी वे किसी से ज्यादा बात नहीं करते थे और मन ही मन सोचते रहते थे। रवींद्र की सत्य लिखने वाली कलम पर हम क्यों रोक लगाएं, सिर्फ इसलिए कि कोई सामाजिक उपद्रवी विश्वविद्यालय में अशांति फैला सकता है? सा विद्या या विमुक्तये – वह ज्ञान मुक्ति देता है! महात्मा गांधी जिस वाक्य को दोहरा रहे थे, वही विश्वविद्यालय का आदर्श वाक्य भी है! सा लेखा या विमुक्तये क्यों न कहें? क्या यह वाक्य लेखन पर भी लागू नहीं होता? क्या? वह सारा लेखन जिस पर यह वाक्य लागू नहीं होता, अर्थहीन बकवास है! रवींद्र के अखबार में छपे इस लेख ने कम से कम साठ लोगों को आज़ादी दी है।
लेकिन वे साठ लोग कहाँ गए? क्या वे अपने-अपने गाँवों में जाकर स्वतंत्र जीवन जी रहे हैं? मुझे इस बारे में रविंद्र को पत्र लिखकर और जानकारी लेनी चाहिए।

■

शाम को सभी विद्यार्थी प्रार्थना कर रहे थे। एक कमरे में अन्नाइया कृष्णमूर्ति, डॉ. चंद्रशेखर, शरभन्ना और सोमशंकराचार्य से उस सुबह परशुराम गौड़ा के साथ हुई बातचीत के बारे में बात कर रहे थे। सबके सामने अपनी भावनाएं व्यक्त करने से उनका मन हल्का हो गया था। उसी क्षण होन्नाटी वहां पहुंचे। अन्नाइया ने उनका स्वागत किया।
``या–या–"
हर शुक्रवार शाम को, वह कॉलेज के छात्रों को संगीत सिखाते, रात वहीं बिताते और शनिवार सुबह पहाड़ों पर लौट जाते। कभी-कभार ही, जब उन्हें लोगों से मिलने-जुलने और बातचीत करने की तीव्र इच्छा होती, तब वे पहाड़ों से नीचे आते थे। आज, सोमवार को, उन्हें रियाज़ से भी ज़्यादा लोगों से मिलने की तीव्र इच्छा हो रही थी, होन्नाटी ने सोचते हुए कहा।
"ठीक है, मैं बाद में वापस आऊंगा।"
"चलो... तुम्हें भी सुनने में कोई आपत्ति तो नहीं है? नहीं, हम एक ऐसे विषय पर बात कर रहे हैं जिसे तुम्हें सुनना ही होगा..." अन्नय्या ने उन्हें अंदर बुलाया और उन्हें उस सुबह परशुराम गौड़ा के साथ हुई बातचीत के बारे में बताया।
"अच्छा! अब मुझे भी इसका स्पष्टीकरण मिल गया है। आज दोपहर 1:30-2:00 बजे के बीच, वह और दो अन्य लोग... उनमें से एक का नाम लक्कन्ना था, दूसरे का... मुझे नहीं पता - वह भी ऊपर आया था..." होन्नाटी ने पूरी घटना का विस्तार से वर्णन किया।
सभी के मन में एक ही विचार था – परशुराम गौड़ा अब काम कर रहे थे! उनकी कार्यशैली भी अब समझ में आ गई थी।
"इसे पूरी तरह से नज़रअंदाज करना ही बेहतर है। उसे जो चाहे करने दो।"
"हम उस भाग्यशाली व्यक्ति को पकड़ लेंगे और देखेंगे कि क्या हम उससे कुछ करवा सकते हैं..."
हम्म... चलो गांव के चार बड़े आदमियों से उसे एक थप्पड़ मरवा देते हैं—"
"क्यों नहीं! जब तक वह खुद कोई कदम नहीं उठाता, तब तक हमारा कुछ भी करना गलत होगा..." काफी चर्चा के बाद, सभी इस निर्णय पर पहुंचे।
रात के खाने के बाद, होन्नाटी ने पुस्तकालय खोला और कुछ देर बैठकर 'इंडियन टिब्यून' के अंक पढ़े। बाद में, जब वे अतिथि कक्ष में अपने बिस्तर पर लेटे, तो बागेश्री की वो धुनें जो उनके मन में गूंज रही थीं, फिर से उनके मन में भर गईं। अगर दोपहर के भोजन के बाद और खाना खत्म करने के बाद परशुराम गौड़ा न आए होते, तो वे उस धुन में फिर से डूब जाते और सितार पर नई उभरती आलापी बजा पाते। अगर वे रात को सोते समय भी उसी धुन को गुनगुनाते रहते, तो वही धुन और वही आलापी उनकी नींद, सपनों और अर्ध-नींद में भी उनके मन में गूंजती रहती! ऐसा मौका बहुत कम आता है और ठीक उसी क्षण, वही परशुराम गौड़ा प्रकट हुए! उन्हें दृढ़ निश्चय हुआ कि अब, इसी क्षण, उन्हें उठकर पहाड़ों

पर जाना चाहिए। उन्होंने अपनी घड़ी देखी। ग्यारह बज रहे थे। अगर वे अभी भी निकले, तो वहाँ पहुँचने में बारह बज जाएँगे। बाद में पढ़ाई कितनी करनी होगी? इसके अलावा, इस अंधेरे में पहाड़ पर चढ़ने का मतलब यह था कि जंगल में बाघ जैसे जानवर तो नहीं होंगे, लेकिन लोमड़ी, भेड़िये, छिपकली, सांप और अन्य जानवर जरूर होंगे! इसलिए उन्होंने जाने का विचार छोड़ दिया।
जब वे सुबह उठे, तो उन्होंने अनाया से कहा,
मैं अब जा रहा हूँ...
बस इतना ही?
हां। मेरा मन सितार बजाने का कर रहा है। संयोगवश, जब तक मैं इसे आपके कानों तक नहीं पहुंचा देता, तब तक मुझे चैन नहीं आता, इसलिए मैं कल यहां आया था।
"आपने कहा था कि यह बहुत अच्छा था..." अन्नाय्या ने विदाई लेते हुए कहा, "लेकिन इसके बारे में ज्यादा मत सोचो। हमारे पास इसका कोई इलाज नहीं है - इसलिए हमें ध्यान देना होगा। देखते हैं क्या होता है। आप अपनी साधना जारी रखें..."
जैसे ही उन्होंने पहाड़ पर चढ़ना शुरू किया, उनके बाईं ओर क्षितिज पर सूरज उग रहा था। उन्हें ख्याल आया कि वे यह बात अन्नाय्या को शुक्रवार को बता सकते थे। मैंने इस मामले को ज़रूरत से ज़्यादा अहमियत दे दी थी, या कौन जाने! अगर वे वहीं रुके रहते, तो उन्होंने कल का पूरा दिन और रात बगीचे में बिता दी होती और अब तक वे उस व्यंग्य से वो पंक्तियाँ, वो सुर, वो स्वर निकालने में व्यस्त होते!
यही विचार मन में लिए उसके कदमों में उत्साह भर उठा। चारों ओर फैली तेज़ हवा के बावजूद, जिससे उसे डर लग रहा था, उसका मन बागेश्री की धुनों में मग्न था। मंदिर पहुँचते ही वह तुरंत स्नान करता, कॉर्नफ्लेक्स खाता और धुन बजाने बैठ जाता। चाहे कितना भी समय लगे, वह तब तक प्रतीक्षा नहीं करता जब तक कि कल सुझाए गए सभी आलाप और ताना, कलात्मक शुद्धता के साथ, उसके मन को तृप्त न कर दें... यद्यपि इस विचार में लीन होने के कारण उसकी साँस फूल रही थी, उसने इसे अनदेखा किया और चढ़ाई जारी रखी।
पहाड़ की पूरी चढ़ाई चढ़ने के बाद, जब वे मंदिर की ओर मुड़ रहे थे, तो अचानक उनके कदम लड़खड़ा गए। उन्होंने देखा कि वहाँ चट्टान के पास कुछ टूटकर गिर गया था...
ओह माय गॉड! सितार! टूटा हुआ... टूटा हुआ सितार! लौकी फट गई थी—बीच के डंडे की हड्डियाँ भी चकनीचूर हो गई थीं—अहम—टूट गया था! सारे तार टूट गए थे—अहम—खून नहीं निकला था! क्योंकि किसी ने इसे चुरा लिया था और यह मेरे हाथ से फिसल गया था—नहीं! अगर ऐसा होता तो एक-दो दरारें तो आतीं। ऐसा नहीं हुआ! पहले इसे जानबूझकर पत्थर पर पटका गया ताकि इसे पूरी तरह तोड़ दिया जाए—और फिर फेंक दिया गया! जी हाँ...
टूटी हुई लौकी का डंडा—टूटी हुई और आपस में उलझी हुई डोरियाँ—उन्होंने सितारों की टूटी हुई डोर को अपनी छाती से लगाया और मंदिर की ओर दौड़ पड़े। मंदिर के दरवाजे का ताला टूटा हुआ था। दरवाजा पूरी तरह खुला हुआ था। चोरी के स्पष्ट संकेत थे। वे मंदिर के अंदर भी घुस गए।
चार डिब्बे, प्लेटें, बर्तन, लंच बॉक्स, छोटी-मोटी चीजें, टॉर्च, लालटेन – सब कुछ गायब हो गया था। पानी का जग टूट गया था। रात को बैठने और सोने के लिए इस्तेमाल होने वाली चटाई और ओढ़ने के लिए कंबल भी गायब हो गए थे।
यह महज़ चोरी नहीं है – यह परशुराम गौड़ा की मुझे सबक सिखाने की साज़िश है! सितार चुराना मुश्किल है! इसका मूल्यांकन करना मुश्किल है – इसका अपना कोई उपयोग नहीं है – और इसे बेचना भी मुश्किल है! अगर ऐसा है, तो इसका मूल्यांकन करना मुश्किल नहीं है। लेकिन यहाँ इसे जानबूझकर तोड़ा गया है और

फेंक दिया गया है! यह जानबूझकर की गई क्रूरता है! मेरे मन को आहत करने के एकमात्र बुरे इरादे से दिखाई गई क्रूरता! क्या उसने यह सब मुझे देखते हुए किया होगा? अगर मैं यहाँ होता, तो वह मुझे भी पीटता या मार डालता – नहीं। वह मुझे नहीं मारता। वह अन्नय्या से नाराज़ है। उसका एकमात्र इरादा मुझे थोड़ा पीटना और यहाँ से भगा देना ही होगा!
उसने मंदिर के गर्भगृह में झाँका। वहाँ कलश, पीतल की थाली, तांबे की वस्तुएँ और अन्य सामान मौजूद थे। गर्भगृह में किसी के प्रवेश का कोई संकेत नहीं था।
हालांकि अन्नय्या को पूरी सच्चाई बताना ज़रूरी था, फिर भी वह चुपचाप वहीं बैठा रहा जहाँ वह हमेशा रियाज़ करता था। सतारी का कंकाल उसके हाथों में था। परशुराम गौड़ा सिर्फ़ एक नीच आदमी नहीं है। चाहे वो चोरी करे, चाहे मुझे डराए, लेकिन इस तरह एक वाद्य यंत्र की हत्या करना घोर क्रूरता है! क्या वह स्वयं यहाँ आया होगा? या उसने गुंडों को विस्तृत निर्देश देकर भेजा होगा?
उसने एक बार फिर अपने हाथों की हड्डियों को देखा। पर उसे कुछ दिखाई नहीं दिया क्योंकि उसकी आँखें आँसुओं से भरी हुई थीं। उसे रोने का मन कर रहा था। अगर वह दो हज़ार रुपये खर्च करता, तो उसे एक नया सितार मिल सकता था। अगर वह मुंबई के जानकार डीलरों से बात करता और थोड़ा इंतज़ार करने को तैयार होता, तो उसे थोड़ा इस्तेमाल किया हुआ सितार मिल सकता था। इतना बुरा क्यों महसूस कर रहा है? सितार तो चला गया, पर संगीत नहीं गया! चाहे उसने खुद को कितना भी शांत करने की कोशिश की, सिसकी उसके गले से निकल ही आई। उसके आँसू उस सितार की कला पर बह गए जिसने उन धुनों, लय और गीतों को आकार दिया था जो कल उसके भीतर उमड़ रहे थे।
पता नहीं कितना समय बीत गया! फिर वह बाहर आया। उसकी नज़र सामने की घाटी, दूर झील और पेड़ों पर पड़ी, और उसे याद आया कि उसकी संगीत की नोटबुक बर्तनों, डिब्बों, प्लेटों और कंबलों के साथ ही कहीं खो गई थी! जब गुरु ने प्रत्येक राग की धुनों की प्रकृति, लय और कलात्मक रचना समझाई, तो उन्होंने उसे उन प्रतीकों का उपयोग करके लिखा था जिन्हें वह समझ सके। अध्ययन करते समय, उसने उनमें से कुछ को आत्मसात कर लिया था। फिर भी, कुछ जगहों पर, राग के स्वर अपनी सीमा से बाहर निकलकर दूसरे राग के क्षेत्र में प्रवेश करते प्रतीत होते थे। उसे संदेह था कि नोटबुक में लिखे ये संकेत उपयोगी हो सकते हैं। गुरु के पास ऐसी कोई पुस्तक नहीं थी। जब भी उन्हें सिखाते समय यह याद आता, वे इसे बजाकर इस सूक्ष्म अंतर को प्रदर्शित करते। होन्नाटी ने कुछ ऐसा बजाया जिससे उस विशेष धुन और उस विशेष राग के बीच का अंतर स्पष्ट हो गया, साथ ही उस राग से उसकी निकटता भी दिखाई दी। होन्नाटी इस सूक्ष्म अंतर को अपनी नोटबुक में लिख लेता था। वह किसी विशेष बात को तब तक नहीं सिखाता था जब तक कि उसके लिए कोई संदर्भ न हो, क्योंकि उसने स्वयं उसे इसी तरह सीखा था।

■

सतारी के कंकाल को दोनों हाथों में पकड़े हुए, सुबह की धूप में पहाड़ से नीचे उतरते समय मक्खियाँ उनके सिर पर भिनभिनाने लगीं। वे जल्दी से उस सड़क पर उतरे जो वाहन का पिछला हिस्सा थी। वे कॉलेज गए और अवशेष अन्नय्या के सामने रख दिए।
"मुझे लगा कि वह बस बड़बड़ा रहा है। लेकिन इतनी जल्दी वह इस नीच कृत्य तक कैसे पहुँच गया?" अन्नय्या ने कहा।
उनके चेहरे पर दर्द साफ झलक रहा था। उन्होंने तुरंत शंकरमूर्ति, शरभन्ना और सोमशेखर को फोन किया और आगे की योजना बनाने लगे। उन्हें कई सुझाव मिले, जैसे गाँव जाकर लक्कन्ना से पूछताछ करना, पुलिस में शिकायत दर्ज कराना आदि। पुलिस पूछेगी, आपको किस पर शक है? ऐसे में परशुराम गौड़ा का नाम

नहीं लेनी चाहिएँ। क्योंकि अगर आपने ऐसा किया, तो वह हमेशा के लिए आपके खिलाफ हो जाएंगे। ऐसे व्यक्ति का लगातार विरोध विश्वविद्यालय के लिए हमेशा के लिए सिरदर्द बन जाएगा! यह बात सबको समझ आ गई थी।
अब तक होन्नाटी को बहुत भूख लगने लगी थी। सुबह पहाड़ पर चढ़ने और उतरने में रात का खाना बर्बाद हो गया था। नहाने के बाद पहनने के लिए अंडरवियर या बनियान भी नहीं बची थी।
सोमशेखराचार्य ने कहा,
मैं सिलाई विभाग से आपके लिए कुछ कपड़े लाऊंगी। फिर आप नहा सकते हैं और कुछ खा सकते हैं। अगर मुझे थोड़ी देर हो भी जाए, तो मुझे भूखा मत रखना।
दोपहर तक सबने फैसला कर लिया था। होन्नाटी और अन्नाय्या बिदारनहल्ली जाकर पुलिस स्टेशन में शिकायत दर्ज कराएंगे। अगर उनसे पूछा जाता कि उन्हें किस पर शक है, तो होन्नाटी कहती, "मैं पहाड़ों में रहती हूँ, इसलिए मैं किसी को नहीं जानती।" अन्नाय्या कहते, "मैंने सुना है कि हलुकेरे का लक्कन्ना नाम का एक आदमी नारियल और दूसरे फल चुराता है।" अगर आप उससे पूछताछ करेंगे, तो शायद कुछ पता चल जाए।
दोनों ने एक-एक साइकिल ली और बिदारनहल्ली के लिए चल पड़े। दूरी चार मील थी। वहाँ के पुलिसकर्मी अन्नाय्या के परिचित थे। वहां का दफेदार उस थाने का प्रमुख था। उसने यह सब सुना और पूछा,
"क्या उस पहाड़ का नाम जोगिगुड्ड नहीं है? उसका हलुकेरे से कोई लेना-देना नहीं है। वह पहाड़ नंगर निगम से संबंधित है।"
"यह सच है कि राजस्व के दृष्टिकोण से, यह कर से संबंधित है..." अन्नाय्या ने सहमति जताई।
"तो यह बिलिकेरे पुलिस स्टेशन के अधिकार क्षेत्र में आता है! आपको वहां शिकायत दर्ज करानी चाहिए... आप यहां क्यों आए थे?" उसने जिम्मेदारी से मुक्त होने की खुशी में दांत पीसते हुए कहा।
"लेकिन हमें हलुकेरे के लक्कन्ना नाम के एक व्यक्ति पर शक है। वह गाँव आपके क्षेत्र में आता है, है ना?"
"यह सच है... लेकिन मामला दर्ज हुए बिना हम जांच नहीं कर सकते। एक बार जब आप उस पुलिस स्टेशन में शिकायत दर्ज करा देंगे, और जब वे इस व्यक्ति के बारे में हमें लिखेंगे, तब हम उचित कार्रवाई करेंगे।"
अन्नाय्या पुलिस जांच की इन बारीकियों से अनभिज्ञ था। उसे बिलिकेरे जाना था, यानी पहाड़ के दूसरी ओर, निचले रास्ते से। यानी यहां से चौदह मील दूर। कोई दूसरा रास्ता नहीं था।
अन्नाय्या ने पूछा,
क्या आप साइकिल चला सकते हैं?
"आपस में अनबन क्यों हो रही है!" होन्नाटी ने कहा। लेकिन तेज़ हवा के विपरीत दिशा में पहाड़ी पर साइकिल चलाते हुए वह काफी थक चुका था। उसकी टांगों की मांसपेशियां खिंची हुई महसूस हो रही थीं। लेकिन एक बार शुरू करने के बाद वह बीच में रुक नहीं सका। होन्नाटी को याद आया - हालांकि उसने बचपन में साइकिल चलाना सीखा था, लेकिन उसके बाद से उसे इसकी ज्यादा आदत नहीं पड़ी थी! उसे जो थोड़ा-बहुत अनुभव था, वह शहर की सड़कों पर था - ऐसे पत्थरों और कंकड़ों पर नहीं। लेकिन जब अन्नाय्या, जो उससे दस या बारह साल बड़ा था, चुपचाप आगे चल रहा था, तो उसे भी उसके पीछे चलना पड़ा।
शाम के 6:30 बज रहे थे जब वे बिलिकेरे पहुंचे। सब-इंस्पेक्टर का उस इलाके से डर उनकी मूंछों से साफ झलक रहा था। उन्होंने ध्यान से उनकी बातें सुनीं और फिर कहा,
"ठीक है! इसे लिख लो।"

अन्नाय्या की जेब में कलम तो थी, लेकिन कागज नहीं था। जब उसने सब-इंस्पेक्टर से कागज मांगा, तो उसने जवाब दिया,
"यह आपकी शिकायत है। इसलिए आपको खुद ही कागजात लाने चाहिए, है ना?"
अन्नाय्या फिर साइकिल से पास की एक दुकान पर गया और दो कागज़ ले आया। उन पर शिकायत लिखने के बाद होन्नाटी ने उस पर हस्ताक्षर कर दिए। शिकायत पढ़ने के बाद सब-इंस्पेक्टर ने कहा,
"क्या यह घटना पहाड़ पर नहीं घटी थी? आप लोग वहाँ मंदिर में रहते थे, है ना? यह मंदिर संस्कृति विभाग से संबंधित है, है ना?"
"हाँ, पुजारी को यह भूमि उपहार में मिली है!" अन्नायाह ने कहा।
"तो मंदिर मंदिर के पुजारी के कब्जे में है। सहमत हैं? क्या आपने मंदिर में ठहरने के लिए विभाग से अनुमति ली थी—अर्थात संस्कृति विभाग के मंदिर से? क्या इस संबंध में कोई लिखित पत्र है?"
"वह एक सुनसान मंदिर में सितार बजा रहा था, जहां दिन के समय भूत भी नहीं घूमते। इसके लिए हमें विभाग से अनुमति लेने की क्या जरूरत है?"
वह सरकारी मंदिर है। अब जब तक हमें पुजारियों से शिकायत नहीं मिलती, हम कुछ नहीं कर सकते। सरकार की अनुमति के बिना उन्होंने उसे वहां रहने की इजाजत कैसे दी? इसलिए हमें पहले पुजारी के खिलाफ कार्रवाई करनी होगी। क्या वह हलकेरे में नहीं रहता? ठीक है - पहले उसे यहां भेजो। हम पहले उससे पूछताछ करेंगे और फिर तुम्हारे चोरी के मामलों की जांच करेंगे!..."
"चलिए, इस तकनीकी मुद्दे को अभी छोड़ देते हैं। हम यहां इसलिए आए हैं ताकि आप इस चोरी की जांच कर सकें!..." अन्नाय्या ने धैर्यपूर्वक लेकिन दृढ़ता से कहा।
"देखो, हमें पता है कि कब क्या करना है! हमें कानून के अनुसार ही काम करना चाहिए, है ना? अब तुम जाओ..." सब-इंस्पेक्टर ने कहा, उठा, अपनी घड़ी देखी और चला गया।
साढ़े सात बज रहे थे।
सब-इंस्पेक्टर की मेज के सामने बैठे वे दोनों एक-दूसरे को देखने लगे। पुलिस सब-इंस्पेक्टर के सवालों और जवाबों से दोनों को कुछ भी समझ नहीं आया। तभी बाहर एक मोटरसाइकिल स्टार्ट हुई। दोनों को एहसास हुआ कि सब-इंस्पेक्टर जा चुके हैं।
वे दोनों कुछ देर तक बेंच पर बैठे रहे, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि आगे क्या करें। वही पुलिसकर्मी अंदर आया और बोला,
"अभी उठो! हमें मालिक का कमरा बंद करना होगा!"
वे खड़े हो गए। पुलिस कांस्टेबल ने सहानुभूतिपूर्वक पूछताछ की।
"कितनी रकम चोरी हुई?"
"पिताजी, कीमती वस्तु जैसी कोई चीज नहीं होती!" अन्नाय्या ने जवाब दिया।
"यह कितना कीमती है! अगर हमारे बॉस ने इसे गंभीरता से लिया, तो हमें जल्द ही पता चल जाएगा! चिंता मत करो!"
"लेकिन ऐसा लगता नहीं कि वे इसे गंभीरता से ले रहे हैं, है ना?"
कांस्टेबल ने यह सुनिश्चित किया कि आसपास कोई नहीं है और पांच उंगलियां दिखाते हुए धीरे से कहा,
"इसे बॉस को दे दो... और हम दोनों को भी दे दो। भगवान तुम्हें ज्ञान प्रदान करे, बस! सौ काफी हैं। अगर चोर पाताल लोक में छिपा है, तो वह उसे और उसके सामान को वहाँ से खींच लाएगा, बस देखते रहो!" और वह उनकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करने लगा।
दोनों चुप रहे।
उसने दोबारा पूछा,

"क्या तुम पैसे लाना भूल गए? घबराओ मत। बॉस से मिलो और उसे बता दो। कल वो मोटरसाइकिल पर मौके का मुआयना करने आएगा। अगर तुम उसे उस समय पैसे दे दोगे, तो सब ठीक हो जाएगा। फिर तुम क्या करोगे? क्या उन्हें पेट्रोल के चार पैसे नहीं चाहिए? कौन देगा? तुम ऐसे ही कर लो। चलो... मैं तुम्हें उसका घर दिखाता हूँ।"
उन दोनों को एहसास हो गया कि उन्हें अब यहाँ से निकलना होगा। अन्नाय्या ने अपने पीछे आ रहे सिपाही से कहा,
"रुको, हमें एक पल सोचने दो।"
"अगर तुम वहीं बैठकर सोचते-विचारते रहोगे तो कुछ नहीं होगा! अगर पंद्रह मिनट और बीत गए तो बॉस तुम्हें देख भी नहीं पाएगा। एक बार जब वह बैठकर ड्रिंक करने लगता है, तो किसी से बात नहीं करता," सैनिक ने पीछे रुकते हुए चेतावनी दी।
अपनी साइकिलें खींचते हुए, दोनों पुलिस स्टेशन से निकले और बाजार चौक पर आ गए। होन्नाटी ने एक पल सोचा और कहा,
सितार पूरी तरह से नष्ट हो गया है। बाकी सभी सामानों की कुल कीमत शायद सात सौ भी नहीं होगी। और हमें गुंडों को दंडित करने के लिए पैसे देने चाहिए, इसलिए..."
"बिलकुल!" अन्नाइया ने आगे कहा, "इसीलिए तो हमें रिश्वत देनी चाहिए, यानी हम खुद भ्रष्ट हैं! इसके अलावा, यह मामला सिर्फ पुलिस की मदद से खत्म नहीं होगा। इसके बाद हमें सोचना पड़ेगा कि आगे क्या करना है। चलो विश्वविद्यालय चलते हैं। यह यहाँ से ग्यारह मील दूर है। हमें अँधेरे में गाँव की सड़कों पर साइकिल चलाने की आदत डाल लेनी चाहिए। इस गाँव में मेरा एक दोस्त है। चलो आज रात उसके घर रुकते हैं और कल सुबह जल्दी उठकर निकल जाते हैं।"
बिलिकेरे के मुद्देशेत ने जीवन भर हाई स्कूल में शिक्षक के रूप में काम किया और सेवानिवृत्ति के बाद भी गाँव में कुछ ज़मीन का प्रबंधन करते रहे। अन्नय्या के प्रति उनके मन में शुरू से ही आदर का भाव था। उन्होंने अचानक आए दोनों का सम्मानपूर्वक स्वागत किया। उन्होंने बैठने के लिए मोड़ी गई कुर्सियों को खोला और दोनों से पूछताछ की। वे रसोई में गए और अपनी पत्नी से खाना बनाने को कहा। दोनों ने परेशुराम गौड़ा का ज़िक्र किए बिना चोरी की पूरी सच्चाई उन्हें बता दी।
यह सुनकर मुद्देशेट ने कहा,
अब वे सात सौ रुपये माँग रहे हैं... बाद में और पैसे लाना... वरना मामला आगे नहीं बढ़ेगा, वे कहते हैं! मामला उनके हाथ में आ गया तो वे क्या करेंगे? या आप नेगलहल्ली के पाटिल को जानते हैं? यह सब-इंस्पेक्टर उन्हीं की जाति का है। अगर पैसे देने भी पड़ें, तो उसकी पहचान का असर ज़रूर पड़ेगा। अगर वह उनकी उपजाति का होता, तो काम मुफ्त में हो जाता। जाति अलग होने पर हम बिना पैसे दिए काम कैसे करवा सकते हैं?
रात को गर्म भोजन करने के बाद, दोनों अच्छी नींद सोए और सुबह जल्दी उठकर अपनी साइकिलों पर फिर से निकल पड़े।

■

जैसे ही वडेरय्या को पता चला कि होन्नाट्टी अभी भी कॉलेज में है, इसलिए कोई संदूक नहीं है, वह हमेशा की तरह पहाड़ की ओर चल पड़ा। रास्ते में मिले फूलों और पान के पत्तों को इकट्ठा करते हुए वह पहाड़ पर पहुँचा और आश्चर्यचकित रह गया। ऐसा लग रहा था मानो किसी ने ताला छुए बिना कुंडी उठाकर मंदिर का दरवाजा खोल दिया हो। वह अंदर गया और देखा कि होन्नाट्टी मास्टर का सारा सामान बिखरा पड़ा था। पानी का तम्बू भी टूटा हुआ था। लेकिन मंदिर का सामान पहले जैसा ही था।

जब वह पहाड़ से नीचे उतरकर महाविद्यालय में घटना का सच बताने आया, तो शरभन्ना मास्टर ने उसे चोरी के बारे में पूरी सच्चाई बताई। उन्होंने यह भी बताया कि होन्नट्टी मास्टर का सितार टूट गया था। उन्होंने वडेरय्या को यह भी बताया कि अन्नय्या और होन्नट्टी पुलिस में शिकायत दर्ज कराने गए थे।
चोर जोगय्या के मंदिर में घुसकर उसे चुरा ले गया! अब तक तो चोर खून बहने से मर चुके होंगे! पुलिस उन्हें किस जुर्म में पकड़ेगी? अन्नय्या पुलिस के पास क्यों गया? क्या उसे नहीं पता कि पुलिस के पास जाने से उसकी प्रतिष्ठा कम हो जाती है? किसी ने उसे यह बात क्यों नहीं बताई? वदेरय्या ने अपने मन में उठ रहे ये सवाल शरभन्ना गुरु से पूछे। लेकिन शरभन्ना ने इस बारे में कुछ नहीं कहा। वदेरय्या के पास ज्यादा देर इंतजार करने का समय नहीं था। उसे बहुत भूख लग रही थी। उसकी आदत थी कि पूजा खत्म होने तक वह पानी की एक घूंट भी नहीं पीता था। उसके पिता की भी यही आदत थी। उन्होंने वदेरय्या से कहा था कि पूजा से पहले पानी की एक घूंट भी पी लो तो घर टूटकर बिखर जाएगा।
उस शाम, वह स्कूल का एक और चक्कर लगाने गया। पुलिस सलामी देने गए अन्नाय्या और होन्नट्टी मास्टर अभी तक घर नहीं लौटे थे। अगले दिन, जब वह पूजा करने जा रहा था, तो उसने सोचा - वहाँ सितार नहीं है, वे कल शाम तक स्कूल नहीं लौटे थे। इसलिए लंच बॉक्स ले जाने का कोई सवाल ही नहीं था। उसने कुछ कीलें, एक छोटा हथौड़ा आदि एक टोकरी में रखे और पहाड़ की ओर चल पड़ा।
पर्वत पर पहुंचकर उन्होंने सबसे पहले हथौड़ा और कीलें निकालीं और मंदिर के द्वार के हैंडल को थोड़ा ठीक करके सही जगह पर लगा दिया। फिर स्नान करके, वस्त्र धारण करके और जल लाकर उन्होंने पूरे मन से जोगप्पा की पूजा की। आरती, अभिषेक, घंटी बजाना, धूप जलाना और प्रसाद चढ़ाना पूरा करते-करते उनका भीगा हुआ शरीर सूख गया था। पूजा समाप्त करने के बाद उन्होंने गीले कपड़ों का एक गठ्ठा अपने सिर पर रखा, बनियान और सूखी धोती पहनी, उसे द्वार पर लगे नए हैंडल में बंद किया और चप्पलें पहन लीं।
वह ढलान से उतरकर कार में बैठने ही वाला था कि तभी उसने विपरीत दिशा से एक पुलिस कांस्टेबल को आते देखा। बूढ़े आदमी को देखते ही वह वहीं रुक गया और पूछा,
"तुम ही हो ना?"
"हाँ..." कहते हुए वडेरय्या को एहसास हुआ... चूंकि उन दोनों ने पुलिस में शिकायत दर्ज कराई थी, इसलिए ऐसा लगता है कि यह सज्जन जांच करने आए थे।
"चलो, चलते हैं। मैं मंदिर देखना चाहता हूं।"
पुजारी पहाड़ी पर चढ़ने लगा। एक पुलिस कांस्टेबल उसके पीछे-पीछे चल रहा था। वह ऊपर आया और मंदिर के दरवाजे को ध्यान से देखा। यह देखकर कि कुंडी और ताला सही जगह पर लगे हैं, उसने कहा,
उन्होंने कहा कि कुंडी खींचकर इसे चुराया गया था, है ना? वाह!
"अरे, मैंने तो आज सुबह ही सब कुछ खुद ही ठीक कर दिया!"
ठीक है। दरवाजा खोलो।
पुलिसकर्मी ने दरवाजा खोला। पुलिसकर्मी ने पूछा,
"उस सम्मान के साथ कौन-कौन सी चीजें जुड़ी होती हैं?"
पुजारी ने सारी जानकारी बता दी। बाद में, पुलिस ने गर्भगृह में झाँककर पूछा,
"कप, कप, घंटियाँ... क्या वे यहाँ हैं?"
हां।
"चोरों ने इसे क्यों नहीं चुराया?"
चोरों को यह पता होना चाहिए कि अगर वे ईश्वर की वस्तुओं को छूते हैं, तो वे खून बहने से मर जाएंगे!

पुलिसकर्मी ने मंदिर का चक्कर लगाया, चारों ओर देखा, उस धारा के पास गया जहाँ होन्नाट्टी और वडेरय्या पानी का उपयोग करते थे, और फिर कहा,
"चलो... नीचे चलते हैं।"
वे दोनों पहाड़ से नीचे उतरे। पुलिसकर्मी की साइकिल पहाड़ की तलहटी में बने पत्थर के मंडप के पास खड़ी थी। उसने ताला खोलते हुए कहा।
"अब तुम बिलिकेरे जाओ। पुलिस स्टेशन जाओ।"
"मुझे पुलिस स्टेशन क्यों आना चाहिए?" वडेरय्या अब डर गया था।
"क्या यह संस्कृति विभाग का मंदिर नहीं है? तो फिर आप शिकायत पर हस्ताक्षर क्यों नहीं कर देते? क्या आप हस्ताक्षर करते हैं या अंगूठे का निशान लगाते हैं?"
मैं हस्ताक्षर करता हूँ! मैं थोड़ा-बहुत पढ़ सकता हूँ। अक्षरों का मिलान कीजिए! चलो फिर...
मैंने रात का खाना नहीं खाया है। मैं सुबह से उपवास कर रहा हूँ। पूजा के बाद तक मैं पानी की एक घूंट भी नहीं पीऊँगा!
"पुलिस विभाग की ड्यूटी के दौरान मुझे यहाँ से तीन मील दूर आपके गाँव जाना पड़ा... और फिर वापसी आना पड़ा... मेरे पास और कोई काम तो नहीं है, है ना? सब-इंस्पेक्टर ने मुझे आपको साथ लाने को कहा है। अगर आप देर से पहुँचे तो वो नाराज़ हो जाएँगे! तुरंत निकल जाइए। अगर आप चाहें तो यहीं होटल में कुछ खा सकते हैं।"
"मैं पूजा के लिए घर से निकला हूँ! मेरे पास होटल के लिए पैसे कैसे होंगे?" वडेरय्या ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।
समूह के साथ मौजूद सैनिक ने उत्साह से बात की, क्योंकि उसे वर्षों का अनुभव था कि जब कोई व्यक्ति उसके सामने खड़ा होता है तो उसके साथ क्या होता है।
``पैसा और बाकी चीजें बाद में! पहले आओ, मेरे साथ आकर देखो!"
यह महसूस करते हुए कि उसने उसे एक ही दिशा में संबोधित किया है, वडेरय्या और भी भयभीत हो गया। उसे कोई दूसरा रास्ता नहीं दिख रहा था। उसके पैरों में चप्पलें थीं। उसके सिर पर रखा गीला कपड़ा पूरी तरह सूख चुका था। टोकरी हाथ में लेकर वह पश्चिम की ओर मुड़ा और बिलिकेरे की ओर चलने लगा। साइकिल पर सवार पुलिसकर्मी चिल्लाते हुए उसके पीछे-पीछे चल रहा था।
हम्म... जल्दी आओ! कितना समय लग रहा है!
पुलिसकर्मी ने अपनी गति बढ़ा दी। लेकिन एक फर्लांग की दूरी तय करते ही गति स्वतः ही कम हो गई। उसने धीमी गति से साइकिल चलाना शुरू किया और पुलिसकर्मी का संतुलन बिगड़ने लगा। इसी वजह से वह लगातार गलतियाँ करता रहा।
"अरे, तुम इतनी जल्दी कब पहुँचोगे? चलो, जल्दी करो!"
पुलिस और सैनिक बैलों की पूंछ दबाकर उन्हें भगाने की जल्दी में थे। अपनी साइकिल का पहिया पास आते देख वडेरय्या भी बार-बार आगे दौड़ रहा था। उसे यह भी लग रहा था कि अगर उसके पेट में कुछ रोटी और एक बाल्टी पानी होता तो वह और भी तेज़ दौड़ पाता। साइकिल के पीछे एक ठेला लगा हुआ था। वडेरय्या समझ गया कि अगर वह उस पर बैठ जाए तो मंज़िल तक जल्दी पहुँच जाएगा। लेकिन उसे यह समझ नहीं आ रहा था कि पुलिस से यह पूछना सही है या गलत।
वडेरय्या ने पहले भी कई पुलिस जानवरों को देखा था। उसने उन्हें गाँव के बाज़ार में, चन्नारायपटना के बस स्टैंड पर कई बार देखा था। लेकिन उसे पहले कभी पुलिस स्टेशन जाने का मौका नहीं मिला था। चिलचिलाती धूप में दौड़ते हुए उसकी बनियान और धोती पसीने से भीग गई थी। पुलिसकर्मी जल्दी में थे।
जब वे दोनों बिलिकेरे पुलिस स्टेशन पहुंचे, तो दोपहर के डेढ़ बज रहे थे। सिपाही ने उसे बाहर सीढ़ियों पर बैठने को कहा ताकि वह थोड़ा आराम कर सके और खुद

अंदर जाकर उसें अपनी वर्दी दे दी। सीढ़ियों पर बैठे-बैठे वदेरय्या ने चारों ओर देखा। वह उठकर भाग जाना चाहता था, लेकिन पुलिस स्टेशन के परिसर के गेट के पास एक आदमी खड़ा था। वदेरय्या को लगा कि खाकी वर्दी न पहने होने के बावजूद वह आदमी पुलिसवाले जैसा दिख रहा है। इसके अलावा, चिलचिलाती धूप में आठ मील दौड़ने के बाद, दोबारा दौड़ने की ताकत उसमें कैसे बचेगी? उसने मन ही मन सोचा।
जोगप्पा – मैंने कभी भी भरपेट खाने-पीने के बाद आपकी पूजा नहीं की – मैंने कभी भी स्नान किए बिना और विधि-विधान का पालन किए बिना आपके गर्भगृह में कदम नहीं रखा! अब आप मुझे इससे बचाइए, जोगप्पा!
जब वह अपने हाथ की हथेली से पसीना पोंछ रहा था, तभी सिपाही फिर बाहर आया। उसने उसे वहीं रुकने का इशारा किया और गेट के पास छोड़ी अपनी साइकिल लेकर चला गया।
अब वडेराया का ध्यान साइकिल के बगल में पेड़ की छाया में खड़ी मोटरसाइकिल पर गया। यह मोटरसाइकिल तो बाघ जैसी है! इस पर सवार सब-इंस्पेक्टर... वह बाघ की तरह उछला और उसका सिर टकरा गया... यह सोचकर वडेराया कांप उठा।
कुछ देर बाद, एक सिपाही—जो उससे कहीं अधिक सुंदर दिखता था—बाहर आया और बोला, "अंदर आ जाओ।" बाघ की छवि मन में उमड़ते ही वदेरय्या के हाथ-पैर कांपने लगे। सिपाही ने फिर उसके कान में फुसफुसाया,
चलिए आमने-सामने बात करते हैं! चलिए चलते हैं—महोदय बुला रहे हैं—"
वह कांपते हुए अंदर आया, चप्पलें बाहर ही छोड़ दीं। सब-इंस्पेक्टर हरे पत्ते के रंग के कपड़े से ढकी मेज़ के पीछे बैठा था। घनी मूंछें, कॉलर पर चांदी के अक्षरों वाली खाकी कमीज, दीवार से टिकी हुई थी। बाघ जैसी आंखों वाले सब-इंस्पेक्टर ने गुर्राया।
``हें! नाव?"
``वेडर करियान्ना!'
आप कब से उपासना कर रहे हैं?
``हमारे पिता का निधन हो गया... तब से मैं पूजा-अर्चना कर रहा हूँ..."
उनकी मृत्यु कब हुई?
पच्चीस-छब्बीस साल हो गए हैं!
``उम्र?"
``मेरा?"
"तो फिर किसका?"
चालीस! नहीं... नहीं... पैंतालीस!
"हम्म! वह कितने सालों से इस मंदिर में रह रहा है?"
तीन साल हो गए हैं...
"आपको उससे हर महीने कितना किराया मिलता है?"
ससुर को गहरा सदमा लगा। उन्होंने कहा,
"मुझे किराया क्यों देना चाहिए? इसके बजाय, मैं हर दिन ऊपर वाले कमरे में उनके लिए खाना पहुंचाता हूं।"
"कोई मुझे इतने लंबे समय तक आज़ाद नहीं रहने देगा! मुझे सच बताओ!" उसने अपने मोटे बूट ज़मीन पर पटके।
"जोगप्पा का श्राप!" वडेरय्या ने दयनीय स्वर में कहा।
वाह! मंदिर तो सांस्कृतिक श्रेणी में आता ही है, है ना? आपका इनाम क्या है?
"यहां दो एकड़ कृषि भूमि है, एक एकड़ में फलों का बाग है। यहां पचास नारियल के पेड़ हैं।"
"पूजा-पाठ के खर्चों के लिए आपको सरकार से कितना पैसा मिलता है?"

``हर महीने आठ आना।"
"आप पिछले तीन साल से किसी को सरकारी जमीन पर रहने दे रहे हैं! क्या आपने इसके लिए सरकार से अनुमति ली थी या नहीं?"
वडेरय्या आश्चर्यचकित थे। सरकार लोगों को मंदिर में राहु संगीत गाकर और सितार बजाकर साधना करने के लिए क्या करेगी? हालांकि, उन्होंने कहा,
मुझे इसका एहसास नहीं था...
"देखो! सरकार को धोखा देने के लिए तुम्हें सज़ा मिलेगी! तुम्हें पता है क्या? और चोरों ने मंदिर का ताला तोड़कर उसे चुरा लिया, है ना? तो फिर तुमने ताला क्यों ठीक किया?"
"यह टूटा हुआ था, इसीलिए!" वडेराया अब हैरान था।
"आपने लिंक तोड़ा और आपने ही उसे ठीक किया!"
"जोगप्पा की कसम! मैं लोगों के खेतों में पड़ी एक मुट्ठी घास भी नहीं उठाता और घर नहीं ले जाता! मैं किसी से एक हंसिया तक नहीं लेता..."
"इसे देखो..." सब-इंस्पेक्टर ने अपने सामने पड़े कागज़ को उठाते हुए और दूस हाथों की दूरी से उसे खोलते हुए कहा, "इसमें लिखा है - वडेरय्या के पास मंदिर की चाबी है - उसने रात में दरवाजा तोड़कर चाबी चुराई - इसीलिए उसने शिकायत दर्ज कराई है! क्या तुम इसे पढ़ सकते हो? इधर आओ -"
"किताबों में भी, मैं कुछ शब्दों जोड़कर ही अक्षर पढ़ता हूँ... मैं हाथ से लिखे हुए को नहीं पढ़ सकता।"
तो मैं एक पढ़ता हूँ। आपके गाँव के अन्ना गौड़ा परिवार ने शिकायत दर्ज कराई है! होन्नाटी ने नीचे हस्ताक्षर किए हैं! मुझे बताइए कि सच क्या है..."
लेकिन अब वदेरय्या शोक से व्याकुल हो गए। वे ऐसे बैठ गए मानो कोई शव हों। कुछ देर बाद उन्होंने खुद को थोड़ा संभाला और उठ खड़े हुए।
उसने दबी हुई आवाज में पूछा,
"तो? सम्मानपूर्वक कहूँ तो, क्या आप चोरी स्वीकार कर रहे हैं या नहीं?"
ऐसा लग रहा था मानो उसका दिमाग पानी से भर गया हो। उसने कुछ नहीं कहा, सब-इंस्पेक्टरों ने मेज पर लगी घंटी बजाई। एक सिपाही अंदर आया। जैसे ही उन्होंने इशारा किया, सिपाही ने उसका बायां हाथ कसकर पकड़ लिया और उसे बाहर ले आया। जब उसे दूसरे दरवाजे से ले जाया जा रहा था, तभी एक और सिपाही वहां आ गया। दोनों ने खुद को उसके साथ बंद कर लिया और दरवाजा बंद कर दिया।
जैसे ही उसने अंदर कदम रखा, पेशाब की तेज गंध उसकी नाक में घुस गई। एक सैनिक ने कहा,
"देखो! उन्होंने कल तुम्हारे खिलाफ चोरी का आरोप लगाते हुए शिकायत दर्ज कराई है! क्या तुम चुपचाप इसे स्वीकार कर रहे हो, या नहीं?"
जब उसने कहा कि वह कुछ नहीं बोलेगा, तो दूसरे सैनिक ने उससे अपनी बनियान उतारने को कहा। जब उसने मना किया, तो उसने जबरदस्ती उसे उतार दिया। इससे पहले कि वडेराया कुछ समझ पाता, उसने उसकी धोती भी उतार दी और उसे पूरी तरह नंगा कर दिया। कितना बड़ा अपमान! वडेराया ने अपने चेहरे को दोनों हाथों से ढकने की कोशिश शुरू कर दी। दोनों सैनिकों ने उसके दोनों हाथ बांध दिए। रस्सी से खूंटी से बंधे होने के कारण, वडेराया को यह महसूस होने लगा कि मर जाना ही बेहतर होगा।
वडेरय्या पिछले पाँच वर्षों से बवासीर से पीड़ित थे। एक ओर तो वे तिप्पूर या चन्नारायपटना जाकर किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाने के बारे में सोचते थे, लेकिन अपमान समझकर उन्होंने दर्द से राहत पाने के लिए साधारण दवाइयां ले ली थीं। अब उन्हें लग रहा था कि मृत्यु ही उनके सामने मौजूद अपमान का एकमात्र उपाय है, इसलिए वे मन ही मन प्रार्थना कर रहे थे –

जोगप्पा, मुझे इसी क्षण मरने दो!
अब एक सैनिक ने उसके गुप्तांगों को छूकर उसे धमकाया।
"इसे खुलकर स्वीकार करो! वरना मैं तुम्हें यहाँ-वहाँ कुचल दूँगा, देखो..."
उसकी इज्जत उसके हाथ में थी—लेकिन अगर उसने जुर्म कबूल कर लिया और उसे सज़ा मिली तो क्या होगा? वदेरय्या की आंखों के सामने उसके पिता, दादा और परदादा की तस्वीरें कौंध गईं। आखिर, वह उस चोरी को कैसे कबूल कर सकता था जो उसने की ही नहीं थी?
दोनों सैनिक उसे उसी स्थिति में लटका हुआ छोड़कर उसके कपड़े लेकर चले गए।
जब उन्होंने दरवाज़ा बंद कर दिया, तो वदेरय्या वहीं अकेला लटका रह गया। मक्खियाँ, मच्छर और छोटे-छोटे कीड़े उसके चारों ओर मंडराने लगे। उसके दिल में गुस्सा उबल रहा था... मैंने चोरी की थी, इसलिए मैंने लिख दिया! अपने शरीर पर बैठे मच्छरों और मक्खियों को भगाने का कोई और उपाय न देखकर, वह गाय की तरह अपने पैर पटकने लगा।
बाहर मोटरसाइकिल स्टार्ट होने की आवाज़ सुनाई दी। उसे समझ आया कि सब-इंस्पेक्टर रात के खाने के लिए घर चला गया है। अब बाहर किसी की आवाज़ सुनाई नहीं दे रही थी। ऊँचाई पर लटके रहने के कारण उसका लिंग और उसके जोड़ काँपने लगे थे। ओह... मुझे इससे बाहर निकालो... उसे ज़ोर से चीखने का मन कर रहा था, लेकिन उसे शर्म भी आ रही थी। अगर सच में कोई अंदर आ गया तो? उस आदमी का कितना बड़ा अपमान होगा! उसे कब तक ऐसे ही रखा जाएगा!
अब उसे बहुत भूख लगने लगी। तभी उसे याद आया कि उसने सुबह से पानी की एक बूंद भी नहीं पी थी। सुबह वह गाँव छोड़कर पहाड़ पर चढ़ा था... फिर यहाँ तक पहुँचने के लिए आठ मील दौड़ा था... हे भगवान! मैं तो मर ही जाऊँगा!
कुछ देर बाद उसे याद आया कि शिवरात्रि के दिन उसने पूरे दिन उपवास रखा था और मंदिर तक पहाड़ पर चढ़ा था, है ना? उस समय क्या हुआ था? अगर वह एक दिन भूखा रहे तो कौन मरेगा? इस विचार से उसके मन में नई जान आ गई। मच्छर, मक्खियाँ, झींगुर, यहाँ की तेज़ हवा, पेशाब की तेज़ बदबू – उफ़! – ये सारे पुलिसवाले यहीं मर जाते हैं, या कौन जाने!
आधा घंटा इसी तरह बीत गया। फिर किसी ने दरवाजा खोला। नग्न अवस्था का एहसास होते ही उसने शर्म से अपनी आँखें बंद कर लीं।
लेकिन अब जो व्यक्ति आया था उसने अपनी धोती उसकी कमर के चारों ओर लपेट दी और उसे आँखें खोलने को कहा। पहाड़ से उसे बुलाने वाला सिपाही अंदर आ गया था, उसने वदेरय्या के सिर के ऊपर लटके हाथों को नीचे किया और रक्त संचार सुधारने के लिए उन्हें हिलाया। उसने उसे बनियान भी पहनाई। फिर उसने आदरपूर्वक उसे "इधर आओ" कहा। वह उसे लोगों से भरे कमरे से बाहर दूसरे कमरे में ले गया और उसे पानी पिलाया। पानी देखते ही वदेरय्या की आत्मा में जान आ गई। लेकिन कुछ याद करके उसने सिपाही से पूछा,
आपकी जाति क्या है?
"क्यों? मैंने तो पानी मांगा था। तुम्हारी जाति क्या है?"
"हम उपासक हैं। लेकिन हम उपासक हैं। हम मांस या मछली नहीं खाते। हम ऐसा पानी नहीं पीते जिसे खाने वालों ने छुआ हो।"
हम भी उच्च जाति के हैं। हम भी मांस नहीं खाते। पहले पानी पियो!
बूढ़े व्यक्ति ने खूब सारा पानी पिया। फिर सिपाही ने उसके सामने सूखे पलाश के पत्तों का एक गट्ठा रखा और कहा,
"पहले इसे खा लो। मैं इसे लिंगायत होटल से लाया हूँ।"

उसने मन ही मन कहा, "यह सिपाही सचमुच एक देवदूत है," और चारों इडली एक झटके में खा लीं। हाथ धोने और एक गिलास पानी पीने के बाद सिपाही बोलने लगा।
ये पुलिस का काम कितना घटिया है, देखो! ये दो सिपाही तुम्हारे कपड़े उतार रहे हैं! – क्या तुम बता सकते हो कि अगले जन्म में उनका क्या होगा? ये सब क्यों? इसी जन्म में तो वे अपनी आँखों के सामने देखेंगे कि उनकी पत्नियों और बच्चों का क्या होगा! उन्हें तुम्हें पहचानना चाहिए था और तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार करना चाहिए था!
सांत्वना के वे चार शब्द सुनते ही बूढ़े व्यक्ति को रोने का मन हुआ। उसने सिपाही का हाथ पकड़ा और फूट-फूटकर रोने लगा।
सिपाही ने कहा,
"जाने दो, हां! अब क्यों रो रहे हो? मुझे सच बताओ! अच्छे लोग भी बहक जाते हैं। क्या बच्चे इमली, आम और आलू नहीं चुराते? मुझे सच बताओ..."
मैं जोगप्पा की कसम खाता हूँ... मैंने चोरी नहीं की!
देखो! अगर उन दोनों ने कल यह न लिखा होता कि उन्हें तुम पर शक है, तो हम तुम्हें यहाँ क्यों लाते और इतनी परेशानी क्यों देते? क्या हम तुम्हारे गुनाहों का बोझ बढ़ाना चाहते हैं? अब तुम खुद करो... मैं साहब को भी बता दूँगा। लेकिन मामला दर्ज होने के बाद साहब क्या करेंगे? अब यह मामला उच्च अधिकारियों के पास जाएगा। हमें कीमत पता है। तुम सात सौ रुपये दो... तुम्हें छुड़ाना और तुम्हारे घर पहुँचाना मेरी ज़िम्मेदारी है!
पिता के कान खड़े हो गए - सामान को घर पहुंचाने की जिम्मेदारी - उन्होंने कहा,
मैं तो सिर्फ बनियान और धोती पहनकर आया हूं! मेरे पास सात सौ रुपये क्या हैं?
"अगर आप रिकॉर्ड की गई चीज़ को दबाना चाहते हैं, तो क्या बिना नोट्स दिए यह काम करेगा? आप ही बताइए!"
"गांव जाकर हम कुछ इंतज़ाम कर लेंगे। लेकिन मुझे सात सौ रुपये कहां से मिलेंगे? मैं पहाड़ पर स्थित मंदिर का पुजारी हूं! हमारे मंदिर में ज़्यादा श्रद्धालु नहीं आते। आमदनी भी ज़्यादा नहीं है। पुजारी होने के नाते भेड़ पालने का धंधा भी नहीं कर सकते। बाबा, कम से कम कुछ तो कर लीजिए और कुछ पैसे बचा लीजिए!"
"पैसा कम करने का अधिकार हमारे हाथ में कहाँ है? फैला काम की कीमत तो पहले से ही तय है। अगर हम मना भी कर दें, तो भी पैसा सरकार का ही है!"
वदेरय्या ने एक पल सोचा। घर में एक गर्भवती गाय है। अगर वह बच्चे को जन्म दे और उसे बछड़े समेत बेच दे, तो उसे पाँच सौ रुपये मिल जाएँगे। बाकी के दो सौ रुपये किसी तरह जुटा लिए जाएँगे। अब ये साधु भी आ गया! अगर वो फिर चला जाए और वे दोनों राक्षस वापस आ जाएँ तो क्या होगा?
"अच्छा! मैं आपसे सहमत हूँ। लेकिन देखिए – मैं पूजा के लिए निकला था – मैंने कमीज़ भी नहीं पहनी थी! मैं गाँव जाता हूँ, पैसे इकट्ठा करता हूँ और भेज देता हूँ। यकीन मानिए! आपको उस गाय की कहानी तो पता ही है ना? क्या उसने बाघ से किया वादा निभाया और बछड़े का दूध दुहा? यही मेरा भी नसीब है! यकीन मानिए!"
अब सिपाही सोचने लगा। फिर उसने पूछा,
"क्या इस गांव में आपके कोई रिश्तेदार नहीं हैं? इस गांव में या आसपास के किसी गांव में?"
वडेराया सोचने लगा। उसे याद आया।
मेरे बहनोई चौदेनहल्ली में रहते हैं। वे अपनी पत्नी की बड़ी बहन के पति हैं!
मैं चाहूंगी तो उन्हें यहां बुला लूंगी। मैं तुम्हारे लिए खुद उनके पास जाऊंगी। तुम कह रहे हो कि ऐसी स्थिति है कि बार-बार कहने पर भी वे तुम्हें ऋण नहीं देंगे?

ओह, मुझे पता है - जब तक तुम उन्हें पूरा भुगतान नहीं कर देते, वे तुम्हें यहाँ से जाने नहीं देंगे। ओह - ये तो सरकार है!
वडेरय्या फिर सोचने लगा। इस गाँव के साधुओं से उसका ज़्यादा संपर्क नहीं था। वैसे, कोई झगड़ा तो होता ही नहीं था! उनका सारा काम चन्नरायपट्टाना में होता था – उनके गाँव तिप्तुर में। यहाँ तक कि शादियों या अंत्येष्टि के लिए भी वे एक-दूसरे के यहाँ जाते थे। इसलिए, भले ही अब ऐसे मौकों पर जाना उसके लिए मुश्किल था, लेकिन ऐसे माहौल में उन राक्षसों के साथ रहना तो और भी मुश्किल था।
"तुम जाकर उनसे मिलो। मेहमानों के सामने बेशर्मी मत बरतो! अगर उन्हें पता चला कि तुम पुलिस स्टेशन में फंसी हो तो क्या कहेंगे? उन्हें सब कुछ ठीक से बताओ। और अपने साथ सात सौ रुपये ले जाना। बाविमने उन्हें कल्लेगौड़ा कहकर बुलाते हैं। उनकी पत्नी, थोली तैयवा, मेरी भाभी हैं।"
सिपाही स्वयं चल पड़ा। कमांडर हिचकिचाया और बोला,
"क्या आपके पास बीड़ी है? मैं तो पूजा के बाद तक बीड़ी पीता भी नहीं हूँ।"
"ये लो—" सिपाही ने उसे दो माचिस, चार माचिस की तीलियाँ और उन्हें जलाने के लिए माचिस की तीली के किनारे का एक उंगली जितना लंबा टुकड़ा देते हुए कहा। सरदार ने फिर कहा,
और उन दोनों को बता देना कि वे यहाँ-वहाँ न घूमें, तो तुम जाओ!
"तुम क्यों परेशान हो? मैं सारी व्यवस्था कर दूंगा!..." सिपाही ने उसे पूरे विश्वास के साथ आश्वस्त किया और बाहर से दरवाजा बंद करके चला गया।
अब वडेरय्या काफी हद तक ठीक हो चुका था। कौन जाने साधु गाँव में है या नहीं! अगर नहीं है तो उसे अपनी पत्नी को बता देना चाहिए था। छोटी बहन का पति ऐसे समय में मुश्किल में था, इसलिए बेचारी ने ज़मीन का एक टुकड़ा बेचकर अपने बड़े बेटे के साथ पैसे भेज दिए होंगे।
उसने बीड़ी का एक कश लिया। लेकिन अब उसे लगा कि साधु घर में ही होगा। तभी उसे पेशाब करने की तीव्र इच्छा हुई। उसने प्यास के मारे एक ही घूंट में पूरा पानी पी लिया था – इसीलिए अब उसे पेशाब करने की इच्छा हो रही थी – लेकिन अब वह क्या करे? वह सिपाही – उसका नाम क्या था? – बाहर से खुद को अंदर बंद कर लिया था। उसके आने तक वह कैसे रह सकता था? अगर वह दरवाजा खटखटाता, तो कोई दरवाजा खोल देता। अगर वह उन्हें बताता, तो वे उसे बाहर निकाल देते। अगर उसे पुलिस स्टेशन में डाल दिया जाता, तो पेशाब करना मना होता, है ना? लेकिन अगर वह अनदेखा राक्षस दरवाजा खोलने आ गया तो? इस ख्याल मात्र से ही उसका शरीर कांप उठा। मैं तो ऐसे ही रहना पसंद करूंगा। क्या होगा? पेशाब की थैली अंदर ही फट जाएगी, है ना? उसे जाने दो – लेकिन मैं दरवाजा खोलने के लिए नहीं कहना चाहता – वह बेंच पर बैठ गया और बीड़ी का बचा हुआ टुकड़ा फेंक दिया। बाद में, मैंने सोचा – शायद पेशाब करने की इच्छा बीड़ी के झटके से ही हुई थी।
फिर भी, उसे बीड़ी का बचा हुआ टुकड़ा और पूरी बीड़ी फेंकने का मन नहीं कर रहा था। उसका मन छटपटा रहा था, उसे अपने शरीर और मन पर लंबे समय से हो रही हिंसा याद आ रही थी।
दबाव इतना बढ़ गया कि ऐसा लगा जैसे पेशाब की थैली फूट जाएगी, और फिर दरवाजा खुल गया। सिपाही अपने साथ अपनी साड़ी, कल्लेगौड़ा, लेकर आया था। जो सिपाही आया था उसने कहा,
"मुझे जल्दी आना पड़ा, इसलिए मैं उन्हें साइकिल के कैरियर पर लेकर आई। देखो, साइकिल से मेरी जांघें कुचल गईं!"
उनकी अच्छाई देखकर वदेरय्या का हृदय आनंद से भर गया।
कल्लेगौड़ा ने कहा,

``गंगप्पा ने मुझे सब कुछ बता दिया! दूध पिलाने के बाद उसी साँप ने उसे काट लिया, बस इसी तरह सब कुछ हुआ! क्या हमें नहीं पता कि आपने उसे तीन साल तक मंदिर में रखा और उसे खाना खिलाया? आप जो भी कहें, मुझे उस खादी वाले अन्ना गौड़ा पर हमेशा से शक था। अगर वे दोनों मिलकर इतना झूठ बोलते हैं, तो वे कितने मूर्ख होंगे! मैं पुलिस को बताऊँगा, हमारे साधु ऐसे नहीं हैं... इसीलिए!"
यह कहते हुए कलालेगौड़ा नीचे झुके और वडेरय्या के कान में फुसफुसाए,
``आपने संदेश भेजा है, हमने उसका भी इंतजाम कर लिया है! चिंता मत करो।"
सिपाही जानता था कि भले ही पैसा आ जाए, साहब दोपहर के भोजन और कॉफी के बाद ही पुलिस स्टेशन आएंगे—यानी शाम को।
यह सुनकर वडेरय्या ने हिम्मत जुटाकर कहा कि उसे पेशाब करने जाना है। इस पर गंगाप्पा ने कहा,
इसमें क्या है? चलो बताओ ना—"
वह उसे उस कमरे में ले गया जहाँ वडेराया को बांधकर नग्न अवस्था में छोड़ दिया गया था। उसने वडेराया को कोने में दरवाजे के पास खड़ा कर दिया। जैसे ही वह उस कमरे में दाखिल हुआ, वडेराया का मन फिर से भय से भर गया। हालाँकि अंदर का दबाव बढ़ गया था, फिर भी वडेराया के लिए पेशाब करना असंभव हो गया। वडेराया का पूरा शरीर कांप रहा था मानो उसमें हल्की ठंड लग गई हो। उसके मुँह से
"ओह, ओह," विस्मयबोधक स्वर में सुनाई दिया।
सिपाही ने पूछा,
क्या हुआ?
``नहीं। अंदर दर्द हो रहा है..." वडेराया कराह उठा।
हालात को भांपते हुए सिपाही ने अपनी लाठी उठाई, उसे बाहर ले गया और पुलिस स्टेशन के पीछे एक पेड़ के नीचे ले गया। उसने कहा,
``हम्म—इसे यहाँ करो—"
फिर भी, कुछ पल ऐसे ही बीत गए। लेकिन फिर, ऐसा लगा जैसे बांध टूट गया हो, और राहत की भावना से वदेरय्या की आँखों में आँसू भर आए।
शाम को जब सब-इंस्पेक्टर आए, तो गंगाप्पा उनके पास गए और धीमी आवाज़ में उनसे बात की। वडेरय्या के मेहमान ने आगे बढ़कर गंगाप्पा को दो सौ रुपये का एक नोट दिया। फिर, शेष पाँच सौ रुपये सब-इंस्पेक्टर के सामने रखकर उन्होंने प्रणाम किया। उन्होंने अनदेखा करते हुए कहा,
हम्म! अब से हमें समझदारी से काम लेना चाहिए।
जी हाँ!
साहब के इशारा करते ही दो और सिपाही बाहर से अंदर आ गए। वे उनके कपड़े उतार रहे थे! उन्हें देखकर वदेरैया फिर से कांपने लगे। सब-इंस्पेक्टर उनमें से एक को कुछ कहने लगा और वदेरैया लिखने लगा।
दोपहर में पूजा करने के बाद मैं गांव लौट आया, और उसके बाद मैं दोबारा मंदिर नहीं गया। विभाग से अनुमति लिए बिना उन्हें मंदिर में ठहरने देने की मेरी गलती मैं स्वीकार करता हूं। मैंने अन्ना गौड़ा की सलाह पर उन्हें ठहरने दिया था। मुझे चोरी के बारे में कुछ नहीं पता।
वडेरय्या के हस्ताक्षर करने के बाद, साहब ने जाने की अनुमति दे दी। वडेरय्या ने साहब को एक बार फिर प्रणाम किया और बाहर आ गए। उन्होंने गंगाप्पा को आशीर्वाद दिया, जिन्होंने उन्हें इतनी कठिन परिस्थिति से बचाया था, और कहा, "गंगाप्पा आपको और आपके बच्चों को सुखी रखें," और अपनी चप्पलें पहनकर चले गए।

■

उसके पैरों पर पड़ रही छाया अब पूरब की ओर एक हाथ की दूरी पर खिसक गई थी। अब, वदेरय्या, जो पूजा के लिए जोगप्पा की पहाड़ियों पर गए थे, इस समय भोजन के लिए घर लौट आते थे, इसलिए छोटी बहन तैयव्वा खाना पकाने में व्यस्त थी। जोगप्पा की पूजा पूरी होने तक पति भूखा ही रहेगा। पहले पति कहेगा,
"आपको घर के काम करने होंगे। अगर आप उपवास के दौरान काम करते रहेंगे, तो आपको चक्कर आने लगेंगे। जाइए, नाश्ता कर लीजिए।"
वह भी अपने पति के कहने पर रोटी खाती थी। लेकिन शादी के पांच-छह साल बाद उसे लगा कि पति के खाने से पहले रोटी खाना ठीक नहीं है। किसी के कुछ कहने से पहले ही उसने नाश्ता करना छोड़ दिया। पड़ोस की महिलाओं से बात करते हुए उसने अपना इरादा पक्का कर लिया और कहा, "सास बनने के बाद मैं उपवास और व्रत से कैसे डर सकती हूं?" बाद में यह उसकी आदत बन गई। इसी वजह से उसे भूख लगने का सवाल ही नहीं उठता था।
सच कहें तो, वडेरय्या एक ऐसा स्थान था जहाँ पुजारी वर्ग का वर्चस्व था। शादी से पहले, उसकी माँ बचपन से ही मांस खाती थी। चिकन सूप उसका जीवन-यापन का साधन था! जब उसके पिता ने उससे कहा कि वडेरय्या में शादी के बाद वह मांस या मछली नहीं खाएगी, तो उसने उनसे बहस भी की और कहा, "तो मुझे यह पति नहीं चाहिए! क्या हमारी जाति में कोई दूसरा पति नहीं है?"
लेकिन बिचौलियों और जाति नेताओं के दबाव में आकर उनकी शादी वडेराया से हो गई। उसके बाद उन्होंने मांसाहार छोड़ दिया। दिलचस्प बात यह है कि उसके बाद उनकी जीभ को मांसाहार का कभी एहसास ही नहीं हुआ। आज भी जब वह अपनी मां के घर जाती हैं, तो वहां भी मांसाहार नहीं होता। यहां तक कि अंडे भी नहीं तोड़े जाते। यहां तक कि जब वह चौदनहल्ली में अपनी बड़ी बहन के घर जाती हैं, तो वहां भी मांसाहार नहीं होता। यहां तक कि उनके मेजबान, जो पहले उन्हें उनकी मां के नाम से प्यार से पुकारते थे, शादी के बाद उन्हें सम्मान से वडेराम्मा कहने लगे।
पहले तो उसे इस बात पर शर्म आती थी। लेकिन धीरे-धीरे उसे इसकी आदत हो गई। जल्द ही उसे लगने लगा कि वह अपनी जाति की दूसरी महिलाओं से अलग है। हलुकेरे गाँव में, भले ही उसका परिवार धनी न माना जाता हो – उसके पास कोई बड़ा महल, ज़मींदारी या गहने न हों – लेकिन उसके मन में चौबीसों घंटे यही भावना रहती थी कि उसका परिवार सबसे श्रेष्ठ है। लेकिन उसके पति को ऐसी कोई भावना नहीं थी।
जैसे-जैसे शाम पूरब की ओर ढलती गई, वदेरम्मा के पेट में कौवे कांव-कांव करने लगे। गाँव से भक्तों का कोई समूह कभी-कभार ही आता था, और अगर आता भी तो वदेरम्मा उनसे बातें करते हुए और केले-नारियल का प्रसाद खाते हुए खुशी-खुशी घर लौट आती थीं। एक-दो बार कुछ भक्तों ने जोगप्पा के लिए खाना बनाकर चढ़ाया था, लेकिन तब भी वे आने में बहुत देर कर देते थे। लेकिन कारण चाहे जो भी हो, आज सोमवार था! वे आज क्यों नहीं आए? यह सोचकर कि शायद कोई उन्हें भगवान के लिए कुछ करने के लिए गाँव ले गया होगा, उन्होंने अपनी थाली उठाई और खाने बैठ गईं।
शाम हो चुकी थी, फिर भी पति नहीं आया – बत्तियाँ जल चुकी थीं, फिर भी वह नहीं आया। जब मैंने अपने पड़ोसी रमन्ना को बताया, तो उसने कहा, "मैं पहाड़ पर स्थित मंदिर जाकर देख लेता हूँ," और चल पड़ा। निंगन्ना भी उसके साथ गया। दोनों ने अपने साथ एक-एक लालटेन और एक-एक छड़ी ले ली। लेकिन जब तक सभी ग्रामीण सोने जा रहे थे, तब तक वे दोनों खाली हाथ घर लौट आए थे। वे यह खबर लेकर आए थे,
"दरवाजे पर एक नया ताला लगा दिया गया है... और होन्नाटी मास्टर वहां नहीं है।"
"क्या आप कम से कम स्कूल जाकर देख सकते हैं?" वडेरम्मा ने अनुरोध किया।

"मुझे भूख लग रही है - हमारा खाना ठंडा हो रहा है," दोनों ने अपने-अपने घरों को और जाते हुए कहा।
जब वे दोनों भोजन करके लौटे, तो उन्होंने देखा कि वडेरम्मा के दरवाजे पर एक रथ आ रहा है। वडेरम्मा उत्सुकता से बाहर आईं और चौदानहल्ली के बहनोई को देखा! वे पहले कभी नहीं आए थे! वडेरम्मा भी उनके पीछे-पीछे उतर गईं। करिसिद्धा के घर का नौकर बैल हांकने के लिए बैठा था। वडेरम्मा रथ से उतरीं और बड़ी मुश्किल से एक-एक कदम रखते हुए घर में दाखिल हुईं और दीवार के सहारे बैठ गईं।
"इतने लंबे इंतजार के बाद मैंने रमन्ना और लिंगन्ना को पहाड़ों पर भेजा था। अब वे भी आ गए हैं!" वदेरम्मा ने अपनी स्थिति समझाई। उन्हें उम्मीद थी कि इससे बातचीत आगे बढ़ेगी और यह स्पष्ट हो जाएगा कि वे दोनों कैसे आए थे।
"जब दूध पीकर पला-बढ़ा सांप अपनी आंतें उगल दे, तो हम इंतजार करने के अलावा और क्या कर सकते हैं?" चौदनहल्ली के मेहमान कहने लगे।
जब देखा कि गाड़ी वदेरम्मा के दरवाजे परे रुकी है और वदेरिया उतर गया है, तो रामन्ना-लिंगन्ना ही नहीं, बल्कि उनकी माता लक्ष्मका भी अंदर आ गईं। मेहमानों ने वदेरिया को दिन भर की सारी घटना विस्तार से बताई। उन्होंने वदेरिया के कपड़े उतारकर उसे परेशान करने के बजाय, उसे एक संवेदनशील जगह पर पीटा था, बस यही एक बदलाव था। अन्नय्या और बाबा, जो मंदिर में बैठकर घंटी बजा रहे थे, ने भी बताया कि उन्होंने वदेरिया को इसलिए पीटा क्योंकि उसने चोरी के संबंध में वदेरिया का नाम लिख दिया था। उन्होंने आगे कहा, "मैंने अपनी आँखों से उसकी लिखी शिकायत देखी थी। वरना बेचारे पुलिसवाले किसी को बेवजह क्यों पीटते? अब तो मामला चन्नारिपट्टन के इंस्पेक्टर-हसन के एसपी तक पहुंच गया है! दक्षिणा दिए बिना कुछ नहीं होगा, ऐसा कहकर उन्होंने मुझे बुलाया! उन्होंने हमसे सात सौ रुपये लिए और उसे ऊपर भेजकर यहीं छोड़ दिया। उसके पैर इतने दुख रहे थे कि वह चल नहीं पा रहा था।" आखिरकार, हम अपने घर गए और कार में बैठ गए, बस! अगर मैं उनसे कहता कि यहीं रुको और कल जाओ, तो वे बिलकुल नहीं सुनते! उन्होंने कहा कि उन्होंने हमें घर पर नहीं बताया। वे ज़रूर चिंतित होंगे!
वडेरय्या के दोनों पैर बुरी तरह दुख रहे थे। वडेरय्या ने अपने पैरों पर तेल मला और पानी डाला। आठ मील दौड़ने से पैरों में हो रहे दर्द को भूलकर, वडेरय्या को अब लग रहा था कि यह दर्द सीधे तौर पर पुलिस द्वारा किए गए उत्पीड़न से जुड़ा है। अन्ना गौड़ा और होन्नाटी मास्टर इस अन्याय के लिए ज़िम्मेदार थे... जिस बेटे ने अपने ही हाथों से खाना खाया, उसी ने उसे गंदा किया! यह भावना उसके मन में और भी प्रबल होती जा रही थी।
कललेगौड़ा द्वारा वर्णित विवरण एक कठोर वास्तविकता बन गया। सैनिकों के क्रूर व्यवहार का भय धीरे-धीरे कम होता गया, और अब इसे उनके कर्तव्य का हिस्सा बताकर उचित ठहराया जा सकता था। अगर हम किसी को नारियल चुराते हुए पकड़ते, तो क्या हम उसे बांधकर फांसी पर नहीं चढ़ा देते?
खाना बना रही वदेरम्मा के मन में भी, अन्ना गौड़ा और किन्नरी की भूमिका निभाने वाले उस्ताद की लापरवाही उसके पति के कष्टों से कहीं अधिक भयावह थी। साथ ही, वह इस बात को लेकर भी चिंतित थी कि अपनी भाभीयों द्वारा दिए गए सात सौ रुपये कैसे चुकाए।
अगली सुबह, गाँव की महिलाओं और बच्चों में पूरी सच्चाई फैल गई। इन दोनों तरीकों से मिली खबर की पुष्टि करने के लिए, शाम को गाँव के सभी लोग वडेरय्या के घर पर इकट्ठा हुए और अन्नागौड़ा और होन्नाट्टी मास्टर की घोर कृतघ्नता की कहानी सीधे वडेरय्या के मुँह से सुनी।

■

फिर अगले दिन, पूरी सच्चाई कॉलेज तक पहुंच गई। उससे एक दिन पहले, यह खबर पूरे दिन हलकेरे में फैल रही थी। जब गाँव की एक कामगार केम्पी अपने बीमार बेटे के लिए दवा लेने कॉलेज आई, तो उसने डॉक्टर को इसके बारे में बताया। बिना समय बर्बाद किए, डॉ. चंद्रशेखर ने अन्नाय्या को यह खबर बताई और कहा,
"हमारे देश के पुलिस विभाग में कुछ भी हो सकता है... वे किसी भी घटना को तोड़-मरोड़ सकते हैं!"
अन्नाय्या को यह भी याद था कि सिपाही ने सात सौ रुपये मांगे थे।
अन्नाय्या को वडेरय्या से विशेष लगाव था। वे मानव स्वभाव से भलीभांति परिचित नहीं थे, उनमें आशा की भावना भी कम थी, और जब उनसे ईश्वर की उपासना करने को कहा जाता, तो वे पूर्ण श्रद्धा और लगन से करते थे। तीन वर्ष पूर्व, जब मैं उनके घर गया और होन्नाटी मंदिर की चाबी मांगी, तो उन्होंने तुरंत मुझे मंदिर की चाबी दे दी और प्रतिदिन भोजन परोसने की ज़िम्मेदारी भी स्वीकार कर ली। वे अब तक इसे अत्यंत श्रद्धापूर्वक निभाते आ रहे हैं। वे सचमुच एक दयालु व्यक्ति थे!
उन्होंने तुरंत होन्नाटी से मुलाकात की और उन्हें पूरी सच्चाई बताई और कहा,
"चलो, उनसे मिलते हैं।"
होन्नाटी भी यही वाक्य कहने ही वाले थे।
देर न हो इसलिए वे दोनों एक-एक साइकिल लेकर रवाना हो गए।
वडेरय्या घर में था। दोनों ने अपनी साइकिलें शेड के बाहर खड़ी कीं और घर में प्रवेश किया। उन्हें देखकर वडेरय्या आश्चर्यचकित रह गया, उसका दिल दुख से भर गया और माथे में दर्द होने लगा। होन्नाटी अंदर गई और उसका हाथ पकड़कर बोली,
"पिताजी, क्या हुआ?"
अन्नाइया भी उसके बगल में बैठ गई।
इसके विपरीत, यदि कोई और अवसर होता, तो जब भी कोई द्वार पर आता, वडेरय्या स्वयं आदरपूर्वक खड़े होकर उनका अभिवादन करते और पलंग पर कंबल बिछा देते। अजि भी वे हमेशा की तरह खड़े हुए, लेकिन फिर बैठ गए। उनके बगल में बैठे अन्नाय्या ने उत्सुकतापूर्वक पूछा,
क्या हुआ? मुझे सब कुछ ठीक से बताओ..."
तभी वडेरम्मा रसोई से दरवाजे पर आई और बोली,
"बताओ! बताओ... क्या हुआ! वही जिसने बच्चे की गर्दन पर अपने नाखून गड़ाए... और फिर उसे पालने में झुलाया! कितना घिनौना रवैया है! अपना काम करने के बाद, अब वो सिर उठाकर जांच की मांग कर रही है?"
अब अन्नाय्या और होन्नत्ती के साथ-साथ वडेरय्या भी अवाक रह गया। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि उसकी पत्नी अजनबी पुरुषों से इस तरह बात करेगी! लेकिन अन्नाय्या ने शांत भाव से कहा,
“अम्मा, आपका गुस्सा होना स्वाभाविक है। हमने अभी-अभी सुना है कि हमने वडेराय परिवार पर चोरी का आरोप लगाया है। उन्हें बताने दीजिए कि वहाँ क्या हुआ था... मैं आपको सच बताऊंगी। चलिए यह भी पता लगा लेते हैं कि पुलिस ने क्या किया...”
"कोई कुछ भी कह ले, वे सुनेंगे नहीं! हमारे जीजाजी कोई साधारण आदमी नहीं हैं! वे झूठ बोल रहे हैं, है ना? अगर उन्होंने पैसे नहीं दिए होते, तो उन्हें हसन की जेल में डाल दिया जाता! फिर उन्हें वहाँ पत्थर तोड़ने का काम करना पड़ता... भूख के समय भगवान की तरह आपको भोजन पहुंचाने की सजा के रूप में!" उसने रोते हुए कहा।
“अव्वा! कसम से! हमने तो सिर्फ चोरी की शिकायत की थी, बस! हमने और कुछ नहीं कहा। बताओ वहाँ क्या हुआ... कल कितने पैसे दिए गए? किसने पैसे मांगे...

तुम्हें कैसे मिले... सब कुछ बताओ। जब तक हम पैसे वापस नहीं दिला देते और तुम्हें नहीं दे देते, हम चैन से नहीं बैठेंगे! हमने शिकायत में तुम्हारा नाम लिखा था, तो उन्होंने हमें सिर्फ बताया या दिखाया?"
"उन्होंने मुझे दिखाया...", वडेरय्या ने कहा।
``क्या लिखा था? क्या आपने उसे पूरा पढ़ा? क्या आप मेरी लिखावट पहचानते हैं?..."
"अरे, जाओ, जाओ, जाओ! क्या तुम मेरे पति को इसलिए गड्ढे में फेंक रही हो क्योंकि वह पढ़ा-लिखा नहीं है? हमारी भाभी ने हमें बताया था। उन्होंने इसे पढ़ा है!"
क्या पुलिस ने कोई फर्जी दस्तावेज़ बनाकर इन दोनों को दिखाया? अन्नाय्या ने कहा, यह सोचकर कि जब तक वे उसे अपने सामने पेश करके आमने-सामने पूछताछ नहीं करेंगे, तब तक कुछ नहीं होगा।
आप ऐसा कीजिए... साइकिल पर बैठें और हमारे साथ चलिए। चलिए आपकी साड़ियाँ लेकर पुलिस स्टेशन चलते हैं। वहाँ जाकर हमने जो शिकायत दर्ज कराई है, उसे वापस ले आते हैं..."

वडेरया डर से कांपने लगा। उसे दो दिन पहले घटी सारी भयानक घटना याद आ गई। वह भागना... वह पुलिस स्टेशन... वह अंधेरी कोठरी, वे मच्छर... वह सिपाही... वह खुला स्थान... उसने डरते हुए कहा।
नहीं... नहीं...
अन्नाय्या ने कहा,
डरो मत। मैं तुम्हें निराश नहीं करूंगा... और अगर तुम्हें साइकिल नहीं चाहिए, तो चलो हम सब कार से चलते हैं..."
तुम जो भी कहो—मैं नहीं आऊँगा—तुमने एक बार किया, मेरे लिए उतना ही काफी है!—मुझे छोड़ दो—मुझे अकेला छोड़ दो, है ना!—"
अन्नाय्या ने गौर किया कि उसने उससे अलग तरीके से बात की थी। यह देखकर वह झट से उठा और रसोई के दरवाजे से बाहर निकल गया।
कुछ देर इंतजार करने के बाद अन्नाय्या ने कहा,
"चलो, चलते हैं..." उसने अपने ससुर से पूछा, जो अभी भी रसोई के दरवाजे पर खड़े थे, "क्या चौदेनहल्ली आपके साले का गाँव नहीं है? उनका नाम क्या है?"
"भाविमाने का कलालेगौड़ा-" वह कांपते हुए बोली, "आप इसका क्या करना चाहते हैं? अगर वडेरया कहते हैं कि वे नहीं आएंगे, तो हमारे भावजी भी नहीं आएंगे!"
यह जानते हुए कि यहां बैठे रहने से कुछ हासिल नहीं होगा, अन्नाय्या उठ गई।
जब वे दोनों चौडेनहल्ली पहुँचे तो ग्यारह बज रहे थे। कलालेगौड़ा खेत पर गया हुआ था। वे दोनों पड़ोसी के छोटे लड़के के पीछे-पीछे खेत पर चले गए, जिसे उसकी पत्नी ने उनके साथ भेजा था।
कलालेगौड़ा अन्नाय्या को बहुत अच्छी तरह जानता था। वह जानता था कि वह अपनी जाति के एक बड़े विद्यालय का संचालक था। इसके अलावा, उसके साधु वडेरय्या लंबे समय से उसके बारे में बहुत सम्मान से बात करते थे। लेकिन हाल की घटना के अनुसार –
चाहे कुछ भी हो जाए, वे उन दोनों का स्वागत करने के लिए आगे आए जो उन्हें ढूंढते हुए खेत में आए थे।
``या... या..."
एक-दूसरे की खुशी के बारे में पूछने के बाद, अन्नाय्या ने पूछा,
"वडेरम्मा का कहना है कि हमने वडेरयास के खिलाफ चोरी की शिकायत दर्ज कराई है, आपने इसे पढ़ा होगा... क्या यह सच है?"
"नहीं तो, क्या वदेरय्या ऐसा कहते?"

तो तुमने इसे अपनी आँखों से नहीं देखा। बड़ों ने तुम्हें बताया था, इसीलिए तुमने...
इस कानूनी मामले ने कल्लेगौड़ा को काफ़ी मुश्किल में डाल दिया। उन्होंने कहा, "अगर उन्होंने भी देखा और मैंने भी देखा, तो क्या हुआ? हम साढ़ू हैं... दो खूबसूरत बहनों से शादीशुदा हैं!" उन्होंने कहा, यह दिखाते हुए कि वे अपनी एकता में फूट डालने की कोशिशों को बर्दाश्त नहीं करेंगे।
"यह सच नहीं है... यह सचमुच हुआ था, ऐसा ही हुआ था... मैंने चोरी की शिकायत दर्ज करा दी है। मैंने किसी पर आरोप नहीं लगाया। मैंने मौखिक रूप से भी किसी का नाम नहीं लिया। अगर आपने वह अखबार नहीं पढ़ा है, तो बता दीजिए। आप दोनों के बीच बेवजह झगड़ा नहीं होना चाहिए... और न ही मेरे और आपके बीच कोई झगड़ा होना चाहिए।"
"देखो, हम इतने अलग नहीं हैं! वरना, उनसे खबर मिलते ही, क्या मैं बिना कुछ और सोचे-समझे खाद के लिए अलग रखे पैसे निकाल लेता?"
आपने कितना दान दिया?
"तुम मुझसे क्या पूछ रहे हो? क्या वडेराया ने तुम्हें नहीं बताया?"
उन्होंने कहा था कि सात सौ थे। उनमें से कितने लोगों को किसी ने लिया?
मैंने सब-इंस्पेक्टरों को पाँच सौ रुपये दिए... ताकि वे अपने वरिष्ठों को दे दें। शेष दो सौ रुपये मैंने कांस्टेबलों को दिए। उन्हें इसे आपस में बाँटना था, इसलिए..."
"अच्छा फिर! दोबारा मिलते हैं..." अन्नाय्या ने यह कहकर विदा ली। घर का रास्ता दिखाने आए लड़के को छोड़ने के बाद, वह अपनी साइकिल पर सवार होकर बिलिकेरे के लिए फिर चल पड़ा।
डेढ़ से दो मील साइकिल चलाने के बाद वे लगभग 12:30-15:00 बजे पुलिस स्टेशन पहुँचे, जहाँ एक सब-इंस्पेक्टर भी मौजूद था। वहाँ मौजूद कांस्टेबल ने उन दोनों को पहचान लिया जो दो दिन पहले शिकायत दर्ज कराने आए थे। हालाँकि उन्हें उनसे कोई लाभ नहीं हुआ था, लेकिन उसे याद था कि एक दिन पहले उनकी शिकायत के कारण उसे ग्राम प्रधान से बीस रुपये मिले थे, और उसने उन दोनों को सलाम किया। "क्या आप सब-इंस्पेक्टर हैं?" जब उसने पूछा, "जी हाँ - अंदर आइए, महोदय -" तो उन्होंने सम्मानपूर्वक जवाब दिया।
कुर्सी पर बैठा सब-इंस्पेक्टर दरवाजे की ओर उड़ते धुएं के गोलों को देख रहा था और गौर कर रहा था कि वे बिना टूटे कितनी दूर तक रह सकते हैं। उसने अंदर आए दोनों लोगों को पहचान लिया। उसने पूछा,
यह क्या है?
हालांकि उन्हें पता था कि उसने उन्हें बैठने के लिए नहीं कहा था, फिर भी वे दोनों बिना ध्यान दिए सामने वाली कुर्सियों पर बैठ गए। उन्होंने रुमालों से अपना चेहरा पोंछा। सब-इंस्पेक्टर ने पूछा,
मैं यह पूछने आया था कि मामले में कितनी प्रगति हुई है? जांच जारी है... इसमें समय लगेगा!..."
उनके भाषण का लहजा स्पष्ट रूप से यह था कि "आपको आने की जरूरत नहीं थी।"
"अपनी जांच जारी रखें। कोई जल्दी नहीं है। आपने वडेराया परिवार को यहां बुलाया, हमने उन पर चोरी का ओरोप लगाया... हमने इसे लिख लिया, इसलिए हमने उन्हें बताया... इसमें बड़ी बात क्या है?"
"भंगड़?..." सब-इंस्पेक्टर ने उन्हें एक बार व्यंग्य भरी नज़र से देखा और फिर अपनी सिगरेट का एक लंबा कश लेकर धुआँ हवा में उड़ाते हुए कहा, "किसे पूछताछ के लिए बुलाया जाए और किसे नहीं, यही हमारा सवाल है! आपको यह कहने का कोई अधिकार नहीं है कि हमने वडेरय्या को बुलाकर गलती की है। क्या वह उस मंदिर का प्रभारी नहीं है? इसलिए, उसका बयान लिए बिना कोई और कदम उठाना संभव नहीं है।"

"कौन क्या कहता है? लेकिन हमसे वह बात मनवाकर सात सौ रुपये की रिश्वत लेने का तरीका क्या है जो हमने नहीं लिखी?"
रिश्वतखोरी का सवाल उठा... मुख्यतः इसलिए क्योंकि लेन-देन को रिश्वत के रूप में बताया गया था, जिससे सब-इंस्पेक्टर क्रोधित हो गया। उसने ऊंची आवाज में पूछा,
"उसने कहा कि उसने रिश्वत ली थी, है ना?"
"किसी ने मुझसे कहा था कि यह कोई खास बात नहीं है। रिश्वत लिए बिना तुम कुछ नहीं कहतीं। कोई भी प्यार से ऐसा उपहार नहीं लाता, जब तक कि वह मुझे यहाँ बुलाकर धमका न दे। तुम्हारा यह व्यवहार कैसा है?" अन्नाय्या की आवाज़ शांत थी, लेकिन उसमें गहरा अर्थ छिपा था।
अन्नाय्या के सवालों और उसकी सीधी निगाहों से सब-इंस्पेक्टर असहज हो गया। लेकिन कुछ क्षणों बाद, उसने खुद को संभाला और पूछा,
"क्या आपको इस बात का अंदाजा है कि किसी सरकारी अधिकारी के खिलाफ इस तरह के आरोप लगाने के क्या परिणाम हो सकते हैं... खासकर ऐसे अधिकारी के खिलाफ जो अपना कर्तव्य निभा रहा हो?"
"क्या आपको इस बात का अंदाजा है कि अगर आरोप साबित हो गया तो इसके क्या परिणाम होंगे?" उसने पूछा।
सब-इंस्पेक्टर बेहद प्रतिभाशाली लग रहा था।
अन्नाय्या ने तुरंत कहा,
"हमने आपके पास शिकायत दर्ज करा दी है, कृपया हमें उसकी एक प्रति दें।"
"शिकायत दर्ज करने से पहले आपको एक प्रति ले लेनी चाहिए थी!" रिश्वतखोरी के मुद्दे को दूसरी ओर मोड़ जाने को देखकर उप-निरीक्षक ने तुरंत कहा।
आवेदक को आधिकारिक प्रति प्राप्त करने का अधिकार है...
"देखो! यहाँ अपनी कानूनी बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन मत करो। हमारा काम चोर को पकड़ना है... लेकिन तुम्हारे साथ बहस करने में हमें क्या फायदा? क्या हमें चोर को ढूंढना चाहिए या नहीं?"
"चोर को पकड़ने की चाह रखने वालों को निर्दोष लोगों को यातना देकर रिश्वत नहीं लेनी चाहिएं!"
सब-इंस्पेक्टर को गुस्सा आ गया।
अरे, जल्दी करो, जल्दी करो! रिश्वत दो, रिश्वत दो, रिश्वत दो! जिसने रिश्वत दी है उसे मेरे पास लाओ! मैं देख लूंगा! हमने तुम्हारे जैसे कितने निकम्मे वकील देखे हैं! क्या करना चाहते हो, उसे मारो!..."
इसके बाद, उन दोनों को एहसास हुआ कि उससे सभ्य तरीके से बातचीत करना असंभव था।
"देखिए, हम शिकायत दर्ज कराने आए थे, और आपके सिपाही ने हमसे सात सौ रुपये रिश्वत मांगी। लेकिन हमने देने से इनकार कर दिया... तो आपने एक निर्दोष व्यक्ति को यातना देकर पैसे वसूले! ठीक है! हम आपको दिखाएंगे कि हम जिसे चाहें उसे मारकर क्या कहते हैं—" उन्होंने कहा और वहां से चले गए।
उनके चले जाने के बाद भी सब-इंस्पेक्टर कुछ देर तक सीटी बजाता रहा।

■

वदेरम्मा को हमेशा इस बात से असंतोष रहता था कि उनके पति प्रतिदिन किसी और का खाना ढोते थे और उन्हें घर लौटने तक भूखा रहना पड़ता था। उनका मानना था कि हमें यह सेवा लगातार क्यों करनी पड़ती है, सिर्फ एक-दो दिन के लिए ही क्यों? क्या यही ईश्वर की इच्छा है? शुरुआत में तो उन्होंने अपने पति से इस बारे में अपनी नाराजगी भी व्यक्त की थी।
लेकिन उसने अपना मन बना लिया था।

"वह पर्वत पर बैठकर सरस्वती की पूजा करते हैं! हमें अपने घर से एक दाना भी खर्च किए बिना ही दान करने का पुण्य मिल रहा है! मुझमें क्या कमी है?"
इस पर कोई प्रतिक्रिया न देते हुए, उसने उसे इस विषय पर समझाने की कोशिश छोड़ दी थी। फिर भी, उसके दिल में असंतोष वही था। किसी की मुफ्त सेवा करना, और वह भी वदेरय्या नाम के किसी व्यक्ति द्वारा... इसका क्या मतलब है! जब उसे पता चला कि उन दोनों ने उसके पति के खिलाफ चोरी की साज़िश रची थी, तो वह और भी परेशान हो गई। वदेरय्या के दोनों पैर सूजे हुए थे और उनमें दर्द हो रहा था। उन्होंने उसके शरीर के सबसे नाजुक हिस्सों पर भी लात मारी थी! आपका मतलब है कि वह अपनी जान गंवा देता?
सुबह अन्नाय्या और होन्नाट्टी घर आए और जब अन्नाय्या ने जोगप्पा की कसम खाई तो वह अवाक रह गई। उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। तभी उसका पति रसोई में आया और बैठ गया! अगर उसने उसे इतना गुस्सा न दिलाया होता, तो क्या वह इस तरह छिपता रहता?
अब उसे यकीन हो गया था... गलती अन्नय्या की थी... इसे छिपाने के लिए वह जोगप्पा से झूठी कसम खा रहा था! पुलिस स्टेशन चलो... वह उसे कागजों से मार रहा था! लेकिन उसने कहा था कि वह पैसे दिलवा देगा, है ना? यह हमारी गलती थी। उसे उतने पैसे मांगने चाहिए थे। वह हैरान रह गई। बाद में उसने सोचा - उसने एक बार ऐसा कहा था, है ना? उसे उतने पैसे पकड़कर सड़क पर उससे मिलना चाहिए था, फिर उसे पकड़कर पैसे वापस ले लेने चाहिए थे! भाऊजी ने तुरंत सात सौ रुपये नहीं मांगे। लेकिन अगर वह उसे तुरंत पैसे नहीं देते, तो क्या परिवार की इज्जत बचती? अब, अगर ऐसा मौका आया, तो उसके शरीर पर जो गहने हैं - उसने गहने दो बार गिरवी रखे थे, जब तक कि उसे वापस नहीं मिल गए, वही काफी थे! चाहे कुछ भी हो जाए - मैं उसे इस बार गहने बेचने नहीं दूंगी!
दोपहर में जब वडेरय्या जोगप्पा प्रसाद दिखाकर और भोजन करने के लिए बैठकर घर लौटी, तो उन्होंने इस विषय को उठाया।
"क्या आपने चौदेनहल्ली के सात सौ रुपये के कर्ज को चुकाने के बारे में सोचा है?"
उसने रस्सी की गांठ तोड़ दी – लेकिन कोई जवाब नहीं दिया। जब उसने वही सवाल दोबारा पूछा, तो उसने कहा,
"अगर मैं आपकी नारियल आने पर भुगतान कर दूं तो क्या होगा?"
"क्या कीमत चार लोगों के बीच नहीं होनी चाहिए?"
``गाय गर्भवती है... अगर मैं इसे बेच दूं तो पांच सौ रुपये मिलेंगे। फिर एक गहना..."
"सब लोग मेरा गहना देख रहे हैं!...!" उसने झुंझलाहट में कहा, लेकिन वह जानती थी कि उसके पास कोई और रास्ता नहीं था। वैसे भी, गर्भवती गाय के लिए उसकी उम्मीदें भी वैसी ही थीं। यह सोचकर उसका पेट मरोड़ उठा।
शाम को, जब दीपक जलाए जा रहे थे, तभी दो साइकिलें दरवाजे पर आईं। आंगन साफ कर रही वडेरम्मा उन्हें पहचान नहीं पाईं। आने वाले लोगों में से एक ने पूछा, पिता का घर क्या है?
उस आवाज़ को सुनकर वडेरय्या बाहर आया। दोनों साइकिल पर सवार पुलिसकर्मी थे। गंगान्ना और वही दूसरा पुलिसकर्मी जो उसे उस दिन जोगप्पा के मंदिर से घर लेकर आया था! वडेरय्या की धड़कन तेज़ हो गई। वह वहीं खड़ा रहा, समझ नहीं पा रहा था कि इन दोनों से क्या कहे। उसे देखकर गंगान्ना ने कहा,
आप घर पर हैं!
बिना कुछ कहे, वदेराया मुड़ गया। गंगाना भी उसके पीछे-पीछे आई और एक और पुलिसकर्मी भी अंदर आ गया। इससे पहले कि वदेराया कुछ कह पाता, दोनों

दीवार से लगी चादर पर बैठ गए। वदेरामा भी आकर वहीं खड़ी हो गई। वदेराया, जिसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे, ने गंगाना से पूछा,
"तुमने पुलिस को रिश्वत दी थी, इसलिए तुमने मुझे बताया, इसलिए मैं समझ गया!"
नहीं... नहीं... नहीं! मैंने किसी को नहीं बताया!
"वे दोनों दोपहर में हलके से मुस्कुराते हुए पुलिस स्टेशन आए।"
रसोई के दरवाजे पर खड़ी वदेरम्मा ने देखा कि वे दोनों पुलिसकर्मी थे। हम एक महिला हैं... क्या उनके सामने बोलना हमारे लिए सही है या गलत? वह असमंजस में थी। लेकिन यह सोचकर कि उसका पति भी असमंजस में पड़ जाएगा और कुछ ऐसा कह देगा जिससे स्थिति और बिगड़ जाएगी, वह बाहर आए बिना वहीं खड़ी रही और बोली,
"वे यहाँ भी हमारे पास आए थे। उत्पीड़न कम हो गया था, इसलिए हम आए, हमने उन्हें डांटा और भगा दिया! हमने किसी को नहीं बताया! मैं जोगप्पा की कसम खाता हूं!"
"तो ठीक है! इसके बाद मैं किसी को नहीं बताऊँगा, इसलिए तुम दोनों गोपनीयता की शपथ लो और मुझे बताओ! मैंने तुम्हें तब भी यही कहा था... इसे सरकारी शुल्क समझो, इसीलिए! किसे बताना चाहते हो? फिर अगर कोई तुम्हें पकड़ ले, तुम्हारे हाथ-पैर जकड़ दे और तुम्हें केंद्रीय जेल में डाल दे तो तुम क्या करोगे?"
"हे भगवान... हे भगवान! ऐसा मत करो, ठीक है! हम गरीब लोग हैं! उन्होंने ही हमारी रक्षा की है, हम ऐसे ही जीते हैं... देखो, मुसीबत उन अदृश्य लोगों से शुरू हुई है..." वह बाहर आकर खड़ी होते हुए बोली।
"वडेरप्पा, आगे आओ और अपनी पत्नी के मंगलसूत्र की कसम खाकर कहो कि तुम उस पैसे के बारे में फिर कभी किसी को नहीं बताओगे!"
"हाँ... जल्दी करो!" दूसरे पुलिसकर्मी ने गुर्राते हुए कहा।
वदेरय्या वहीं खड़ा रहा। अपनी पत्नी के मंगलसूत्र पर इस तरह कसम खाने का मतलब था कि अगर उसने कोई गलती की तो उसे अपनी जान जोखिम में डालनी पड़ेगी!
एक और पुलिसकर्मी ने फिर से आह भरी।
"क्या? तुमने सुना या नहीं? अगर नहीं, तो चलो थाने वापस चलते हैं!"
लेकिन अब, वदेराया बिना किसी झिझक के आगे बढ़े और अपनी पत्नी के मंगलसूत्र पर हाथ रख दिया। वदेराम्मा एक कदम पीछे हट गईं और बोलीं,
"क्या वदेरय्या का नाम लेने के बाद हमें ऐसी शपथ लेनी पड़ती है? हम दोनों जोगप्पा की कसम खाते हैं, हम पर भरोसा कीजिए!"
दोनों को उसकी बातों पर भरोसा था। गंगाप्पा ने कहा,
ठीक है, महोदया! आपने शपथ ली है, यह आपके भले के लिए है... मैंने यही कहा था। अगर आपने किसी और को बताया कि आपने पैसे दिए हैं, तो आप दोनों को पुलिस स्टेशन ले जाया जाएगा और दो अलग-अलग कमरों में बांधकर सज़ा दी जाएगी - पुलिस स्टेशन बहुत बुरी जगह है! अगर आपने अपने मालिकों से पूछा भी तो! भले ही यह मालिक बदल जाए, अगला मालिक नहीं जाएगा। वे अपने अगले मालिक को बता देंगे। सांप को भुगतना ही पड़ता है, यही नियम है!
वडेरम्मा ने अपने पति से थाने में हुई सारी बातें सुन ली थीं। अब, अगर वे उसके साथ औरत जैसा बर्ताव करें तो क्या होगा? इस सोच मात्र से ही उसे पसीना आ गया। वह गाने लगी।
अरे, आप तो हमारे माता-पिता के समान हैं! आप तो मेरे सगे भाइयों के समान हैं! हम आपका वचन क्यों तोड़ें? जोगप्पा की शपथ! अब आप जाइए—देर हो जाएगी —"
इतना कहकर उसने हाथ जोड़े और अंदर चली गई।

दोनों ने बीड़ी जलाई और गंगाप्पा चिल्लाकर पूछने लगा,
"महिला... क्या घर में कॉफी पाउडर नहीं है, यी क्या बात है?"
वडेरम्मा बहुत दुखी थी। उसे ऐसा लग रहा था मानो वह शर्म से मर रही हो।
"मैं अभी लाती हूं..." कहते हुए वह बाहर आई और पड़ोस के घर से रामन्ना-लिंगप्पा को बुलाया और उनसे बाजार से कॉफी पाउडर लाने को कहा। फिर से सोचकर उसने रामन्ना से कहा,
पुलिस घर आई है। वे अकेले हैं। आप आइए, पिताजी...
पहले तो वह भी डरा हुआ था। लेकिन जब वडेरम्मा ने कहा, 'तुम क्या कर रहे हो? मैं एक स्त्री हूँ और मुझे डर नहीं लगता,' तो वह किसी तरह आने के लिए राजी हो गया।
कॉफी पीते हुए एक अन्य पुलिसकर्मी ने कहा,
"मुझे चार नारियल दीजिए, महोदय..."
लड़के ने दस-बीस नारियल उतारे। तीनों आदमियों ने नारियल छीलने के बाद, दोनों पुलिसकर्मियों ने दस-दस नारियल बड़े-बड़े थैलों में डाले, जिन्हें वे खास तौर पर इसी काम के लिए लाए थे। उन्होंने थैलों को गाड़ी से बांधा, डायनेमो चालू किया और अंधेरे में अपनी साइकिलों पर सवार होकर चले गए।

■

अगले दिन, परशुरामगौड़ा शाम आठ बजे गाँव आए। उनकी अनुपस्थिति में, उनकी चाची, निंगम्मा ने उन्हें विस्तार से बताया कि पुलिस वडेरय्या को थाने ले गई और उसकी पिटाई की। उन्होंने महसूस किया कि गाँव में घट रही महत्वपूर्ण घटनाओं के बारे में उन्हें बताना उनका कर्तव्य है।
सब कुछ खत्म होने के बाद, उसने कहा, 'क्या ऐसा है? रुको, मैं आकर देखता हूँ —' और अपनी मोटरसाइकिल स्टार्ट कर दी। दरअसल, उस छोटे से गाँव के एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँचने में सात-आठ मिनट से ज़्यादा समय नहीं लगा। उस गाँव में वडेरय्या का घर एक तंग गली में था। अगर बीच वाली सड़क से जाते तो सिर्फ़ डेढ़ मिनट लगता। चूंकि मोटरसाइकिल उस गली से नहीं जा सकती थी, इसलिए उसे घूमकर जाना पड़ा। लेकिन उसका मानना था कि गाँव के शांत वातावरण में फ्लैडलाइट्स से तेज़ आवाज़ करके गाँव के जानवरों और लोगों में डर पैदा करना ही असली मर्दानगी है।
दरवाजे के सामने मोटरसाइकिल के आने और रुकने की आवाज़ सुनकर वडेरय्या की रीढ़ की हड्डी में सिहरन दौड़ गई, मानो कोई सब-इंस्पेक्टर आ गया हो। वह झट से उठा और रसोई में चला गया। वहां मौजूद वडेरय्या ने देखा कि यह परशुरामगौड़ा की कार थी। जब वह बाहर देखने आई, तो उसका अनुमान सही निकला। उसने अपने पति को भी यही बात बताई।
बाद में, बाहर कंबल पर बैठे हुए, परशुराम गौड़ा ने कहा,
“अब मैं गाँव से आया और अपने चाचा को सब कुछ बताया जो हुआ था। उन्होंने कहा, अन्नाय्या ने तुम्हारे खिलाफ शिकायत दर्ज कराई है! जब मैं यहाँ ज़िंदा था, तब तुम्हारे साथ यह सब हुआ, इसलिए मेरा दिल दहल गया, देखो! उन्होंने कहा, चलो मिलते हैं और बात करते हैं—” बोलते-बोलते उन्होंने सिगरेट जला ली।
वडेरम्मा भी खंभे के पास बैठ गई। उसने उसे आश्वस्त करते हुए कहा,
"अगर कोई आपको परेशान कर रहा है, तो मुझे बताएं, पुलिस को क्यों नहीं बुलाते - मैं उन्हें सबक सिखा दूंगा..."
परशुरामन्ना सरकारी सेवा में उच्च पद पर हैं – उनके पास सब-इंस्पेक्टर जैसी शानदार मोटरसाइकिल भी है – वे सौदरगौड़ा के पोते हैं! तो पुलिस को उनकी बात माननी ही पड़ेगी! वडेरम्मा ने उनकी बात पर विश्वास किया। उन्होंने कहा,
`` अन्ना... मुझे जाने दो, बाबा! आप वो सब बातें दोबारा क्यों याद करना चाहते हैं?..." फिर उसने अपने पति से चूल्हे पर रखे बर्तन में बेसन डालने को कहा और

परशुराम गौड़ा से बोली, ``अब यहाँ जितना भूख लगे उतना स्टू खा लो..."
आज नहीं। मैं किसी और दिन आऊँगा। आज आंटी घर पर खाना बना रही हैं...
"रहने दो बाबा! शहर की दुकान में खाना खाने वाले को हमारे घर का सूप इतना मीठा क्यों लगेगा?..." उसने परशुराम गौड़ा को पूरी घटना बताई। एक दिन पहले, दो पुलिसकर्मी घर आए और उससे शपथ लेने को कहा - उसने उस समय तक जो कुछ भी हुआ था, उसे अपने अनुभव के अनुसार बताया। सब कुछ बताने के बाद, उसने पूछा,
"क्या आप कॉफी पीना चाहेंगे?"
"इस बार नहीं। मुझे नींद नहीं आ रही। मैं कल सुबह अपनी मोटरसाइकिल लेकर बिलिकेरे जाऊँगा। मैं उन सब-इंस्पेक्टरों को भी बताऊँगा - वडेरय्या कैसा आदमी है! इसके बाद तो वो इंतज़ाम कर रहा है कि कोई पुलिसवाला इस घर में न आए। वो इंतज़ाम कर रहा है कि न सिर्फ नारियल, बल्कि एक नया सिक्का भी न देना पड़े, हद है! ये सब होने के बाद तुमने मुझे संदेश क्यों नहीं भेजा?"
"उस समय आप क्या सुझाव देंगी, अन्ना?"
"रहने दो। मैं कल जाकर पुलिस से मिलूंगा..." उसने उठते हुए कहा।

■

अगली सुबह, जब परशुरामगौड़ा की मोटरसाइकिल पुलिस स्टेशन के सामने रुकी, तो बाहर खड़े एक सिपाही ने उन्हें सलाम किया। उन्होंने उसी सिपाही से पूछा,
"क्या सच में?"
दरअसल, वहां मौजूद कोई भी परशुराम गौड़ा को नहीं जानता था। लेकिन उनकी मोटरसाइकिल और सफारी सूट देखकर सैनिक को यकीन हो गया कि वे कोई उच्च पदस्थ सरकारी अधिकारी होंगे। जब सब-इंस्पेक्टर अंदर आया, तो उसे भी यही एहसास हुआ। उसने भी उन्हें सम्मानपूर्वक प्रणाम किया और सामने वाली कुर्सी पर बैठने को कहा।
उन्होंने अपना परिचय दिया।
"वह रामनगर के प्रमुख हैं। अब, उम्मीद है कि जल्द ही उनका तबादला इसी तालुका में तहसीलदार के रूप में किया जाएगा।"
यह सुनकर सब-इंस्पेक्टर का चेहरा और भी आज्ञाकारी हो गया।
"जोगी बेट्टावर के मंदिर से चोरी की शिकायत आई है, है ना? उस बारे में क्या खबर है?"
सब-इंस्पेक्टर के चेहरे पर भय के भाव उभर आए। उसने उत्तर दिया,
"जांच जारी है, महोदय!"
मामले का विवरण क्या है?
"एक समूह संस्कृति विभाग के मंदिर में अवैध रूप से ठहरा हुआ था। मंदिर का दरवाजा तोड़ दिया गया और चार ढोल और एक फूलदान चोरी हो गए। पुजारी को बुलाया गया है और आगे की जांच की जा रही है।"
ठीक है... लेकिन पुजारी बहुत ही नेक इंसान हैं। वो हमारे ही गांव के हैं!..."
क्या आप भी हलुक्केर हैं, महोदय?
"जी हां! उस बेचारे ने बिना कुछ जाने-समझे उसे वहाँ रहने दिया क्योंकि उसे सितार बजाने की इजाज़त थी। यही उसकी एकमात्र तकनीकी गलती थी। वह एक सज्जन व्यक्ति है। वह एक पिछड़े समुदाय से आता है! क्या अन्नाय्या ने इसीलिए शिकायत की क्योंकि उसे शक था?"
सब-इंस्पेक्टर अब काफी घबरा गया था। फिर भी, बिना दिखाए, उसने कहा,
महोदय, यानी जांच करने के लिए..."
ठीक है! दूधवाले को काटना तो साँप का स्वभाव है! भले ही शिकायत में यह लिखा न हो, उसने ऐसा कहा तो होगा ही। फिर भी, आपको पुजारी के खिलाफ कार्रवाई नहीं करनी चाहिए। आपको 'मंदिर पर अनाधिकृत कब्ज़ा और दुरुपयोग' का पत्र

तैयार करना चाहिए। तब तक मैं यहाँ आकर मामला संभाल लूँगा। अब, कितने लोग पैसा कमाने के लिए शिक्षण संस्थान चलाते हैं! आपको यह भी पता होगा, बताइए! अन्ना गौड़ा नाम का एक व्यक्ति यहाँ भी यही कर रहा है। शिकायत उसी ने दर्ज कराई है, है ना?
"जी हाँ... सर!" अब सब-इंस्पेक्टर को यह बात स्पष्ट रूप से समझ आ गई थी कि यह उसके पक्ष में था।
"इसका आपके मामले से कोई लेना-देना नहीं है... लेकिन मैंने आपको इसलिए बताया ताकि आपको पृष्ठभूमि पता रहे। हमारे गांव के लोग... पुजारी समेत... पुलिस ने कहा कि वे डरे हुए हैं! उन्हें दोबारा यहां मत बुलाना।"
"मुझे याद है, महोदय! अब जब आपने इसका जिक्र किया है, तो जांच की एक अलग दिशा..."
जब परशुरामगौड़ा उठे, तो लोगों ने उनसे कॉफ़ी पीने का आग्रह किया। लेकिन वे वहाँ रुकने के बजाय, यह कहकर चले गए कि उन्हें कुछ और काम करना है। सब-इंस्पेक्टर स्वयं उन्हें विदाई देने के लिए मोटरसाइकिल तक आए।
"लगता है अन्नाइया पुजारी से पैसे लेने के तुम्हारे मामले को बेवजह खींचता रहेगा... लेकिन चिंता मत करो... ये मैं हूँ! वदेरैय इस बारे में कुछ नहीं बोलेगा। तुम इस बात को लेकर निश्चिंत रहो!" परिशुराम गौड़ा ने कहा और मोटरसाइकिल स्टार्ट कर दी।
सब-इंस्पेक्टरों ने अपने जैसे ही एक सरकारी अधिकारी की बातों पर विश्वास कर लिया।
जब वह गांव लौटकर वडेरय्या के घर पर रुका, तो वडेरय्या ने एक मोटरसाइकिल की आवाज सुनी और जल्दी से बरामदे में दीवार के सहारे एक कंबल बिछा दिया। वडेरय्या पहाड़ों पर पूजा करने गए थे।
वह अंदर आया और बोला,
मैंने सब-इंस्पेक्टर से बात की। उन्होंने मुझे शिकायत भी दिखाई। अन्नाया ने उसे अपने हाथ से लिखा था, जिसमें लिखा था कि पुजारी ने चोरी की है! इसके अलावा, पुलिस किसी को बेवजह गिरफ्तार या दंडित नहीं करती। मैं भी जानबूझकर उसे देखने गया था... आपके जीजाजी ने मुझे बताया, चाहे सच हो या झूठ, बस! मुझे यकीन है कि वडेरय्या और आपके जीजाजी झूठ नहीं बोलेंगे। उन्होंने आपके दिए हुए पैसे नहीं खाए। उन्होंने काम करवाने के लिए उसे पैसे दिए थे। अब उन्हें पैसे वापस नहीं मिलेंगे। अब आप एक काम कीजिए... अन्नाया के पास जाइए और उनसे कहिए, "हमारे पैसे आपकी झूठी शिकायत की वजह से चले गए हैं, अब आप उन्हें वापस कर दीजिए!" आप अपने हाथ में मौजूद पैसे क्यों खोना चाहेंगे? आपने जोगप्पा की कसम खाई है... अब अगर कोई आकर पूछताछ भी करे, तो उसे यह मत बताना कि आपने पैसे दिए थे।
वडेरम्मा, जो इस दुविधा में थी कि भाऊजी को सात सौ रुपये किसे दें, ने सोचा कि अन्ना गौड़ा से पैसे वसूलना ही उचित होगा। अपना काम खत्म करने के बाद, परशुराम गौड़ा बिना कॉफी पिए ही चले गए। जाते समय उन्होंने कहा,
"अगर आपको कोई और समस्या हो तो मुझे बता दीजिए। मैं आ जाऊंगा, भले ही रविवार न हो।"

■

मैंने चाहे जितना भी धैर्य रखने की कोशिश की, जब मैंने कहा, "तुम क्या करना चाहते हो, उसे मारना चाहते हो?", तो उसने अपने आप ही जवाब दे दिया। यह सच था कि मैं धैर्य नहीं रख सकती थी। लेकिन मैं और क्या जवाब दे सकती थी? अब जब यह बात मेरे मुंह से निकल ही गई थी, तो मुझे उस सब-इंस्पेक्टर को सबक सिखाने की ज़रूरत महसूस हुई।

लेकिन अन्नाय्या को समझ नहीं आ रहा था कि क्या करे। अपने वरिष्ठ अधिकारी – एसपी – से मिलना एक उपाय हो सकता था। लेकिन अगर वो भी पुजारी को पूछताछ के लिए बुलाने को उचित ठहरा दे तो? रिश्वत देने वाला अगर हिम्मत से सब कुछ बता दे, तभी इस मामले से निकलने का कोई रास्ता हो सकता है। क्या वडेरय्या कह सकता है, 'तुमने मुझे इतनी परेशानी दी, इसीलिए मैं डर गया और पैसे ले आया'? नहीं, अन्नाय्या के अंतर्मन ने वडेरय्या की पत्नी से कहा – उसने अब तक उससे कभी बात नहीं की थी। जब तक उसकी पत्नी का मन नहीं बदलता, तब तक उसका मन बदलना संभव नहीं था – अन्नाय्या का मन पक्का था।
दो दिन इसी तरह बीत गए। विद्यालय के अधिकांश शिक्षकों ने कहा, 'यदि परशुराम गौड़ा इस स्तर तक आ सकते हैं, तो उन्हें आने दीजिए – हमें उनके लिए इतना नीचा क्यों गिरना चाहिए? क्या हम ऐसा कर पाएंगे? यदि हम अपनी ऊर्जा विद्यालय के कार्य में लगाएं, तो कम से कम बच्चों में अच्छे संस्कार तो आएंगे। उनके बाद आने वाले अधिकारी भी बेहतर होंगे और जनता भी बेहतर होगी! यही तो हमारा लक्ष्य होगा, है ना? हमें किसी अनावश्यक झगड़े में पड़कर अपनी ऊर्जा क्यों बर्बाद करनी चाहिए?' यह सलाह अन्नय्या को भी अच्छी लगी। लेकिन यह केवल एक सब-इंस्पेक्टर के असभ्य व्यवहार का मामला नहीं था – यह पूरे संकाय के हित का मामला था। मंदिर में हुई चोरी संकाय के समक्ष उठाया गया एक प्रश्न था। उन्होंने अपने सहकर्मियों को भी इसके बारे में बताया।
तब उन्होंने कहा,
"रहने दो! हम अपने दुश्मन को जानते हैं। उसे सामने आने दो... चलो उससे लड़ते हैं। उससे लड़ने के बजाय एक नया दुश्मन क्यों न खड़ा कर दें?"
फिर भी, अन्नाइया पुलिस के प्रयासों और वडेरया परिवार को दी जाने वाली रिश्वत से नाराज़ था, जो बिना किसी अपेक्षा के प्रतिदिन होन्नाटी को भोजन पहुँचाते थे। लेकिन उसे इस समस्या का कोई अच्छा समाधान नहीं सूझ रहा था।
होन्नाटी के सामने भी यही बड़ी समस्या थी और उनके पास बदलने के लिए कपड़े भी नहीं थे। उनके पास बजाने के लिए सितार भी नहीं था। वे मुंबई जाकर पुराना सितार खरीद सकते थे या मिराज में नया सितार मंगवा सकते थे। अगर वे दो हजार रुपये तक खर्च करने को तैयार होते, तो उन्हें नया सितार मिल जाता। लेकिन अगर वे अपनी पूंजी में से दो हजार रुपये निकाल लेते, तो उन्हें हर महीने मिलने वाली राशि कम हो जाती। लेकिन इसके अलावा कोई और उपाय नहीं था।
सबसे बड़ा सवाल यह था कि इसके बाद पहाड़ पर स्थित जोगप्पा के मंदिर में रुककर रियाज़ करना मुमकिन नहीं था। वे समझते थे कि वडेरय्या के लिए वहां दोबारा भोजन लाना असंभव था। अन्नय्या भोजन का कोई और इंतज़ाम कर ही लेते। लेकिन सब-इंस्पेक्टर ने संस्कृति विभाग के स्वामित्व वाले मंदिर में बिना अनुमति के रहने का मुद्दा उठा दिया था! इस मामले का हल निकलने तक वहां रहना मुमकिन नहीं था। होन्नत्ती को वहां की शांति की इतनी आदत हो गई थी कि आस-पास कोई व्यक्ति होता तो भी उसकी एकाग्रता भंग हो जाती थी। उनके विचार में, भले ही अब रिश्ता तोड़ना पड़े, जोगय्या का पहाड़ और मंदिर एक पवित्र स्थान था!
मंदिर में ठहरे बिना, प्रतिदिन सितार उठाकर मंदिर के बाहर उस स्थान पर बैठकर रियाज़ करना उचित नहीं है। यह सत्य नहीं है। सितार की ध्वनि वहाँ हवा में कहीं उड़ जाएगी। रियाज़ मंदिर के भीतर ही करना चाहिए। अन्यथा यह संभव नहीं है।
चार दिन बाद, अन्नाय्या सुबह 8:30 बजे होन्नाटी के कमरे में आया। होन्नाटी के मन में कुछ विचार था और वह पुलिस स्टेशन के बारे में कुछ कहना चाहता था। लेकिन अन्नाय्या ने पूछा,
"एक नई या पुरानी सतारी की कीमत कितनी होगी?"

"अगर आपको नया सितार चाहिए, तो आपको ऑर्डर देना होगा। इसकी कीमत 2,500 रुपये तक हो सकती है। पुराना सितार लेने पर 1,500 से 2,500 रुपये तक खर्च हो सकते हैं। लेकिन इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि आपको पुराना सितार ही मिलेगा। आपको मुंबई में लगातार पूछताछ करते रहना होगा।"
आप ऐसा कीजिए... मुंबई जाइए और एक सितार ले आइए, नया हो या पुराना, जैसा भी मिल जाए। तब तक मैं आपको दिखाता हूँ... तटबंध के उस पार, नारियल के पेड़ों के उस पार... उस कोने में... मैं आपके लिए वहाँ एक छोटा सा दो मंजिला मकान बना दूँगा। इतनी दूरी से आपको कॉलेज की आवाज़ सुनाई नहीं देगी। वहाँ भी, पहाड़ पर, उतनी ही शांति है। इसके अलावा, आप जानते हैं कि यहाँ हमारा निर्माण... उस पर कुछ भी खर्च करने की जरूरत नहीं है। सारा सामान यहीं मौजूद है। हमारे बच्चे इमारत बनाएँगे। स्थानीय छात्रों के लिए केवल सौ रुपये लगेंगे, बस। आपको केवल दोपहर के भोजन के लिए कॉलेज आना होगा - बस! अगर यह भी आपकी पढ़ाई में बाधा लगे, तो आप किसी बच्चे के साथ भोजन भेजने का इंतज़ाम कर सकते हैं।
यह सुनकर होन्नाती का हृदय आनंद से भर गया। उसे महसूस हुआ कि अन्नाय्या उसके हृदय को खुश करने की कोशिश कर रहा है, जो हुई सारी घटनाओं से कमजोर पड़ गया था।
उसी समय अनूप वहाँ आया। वह उन दोनों को ढूँढ़ते हुए आया था। कॉलेज के बच्चों को मंदिर में हुई चोरी और सितार टूटने की घटना के बारे में कुछ पता नहीं था। अन्नय्या स्वयं भी इस बात का ध्यान रख रहे थे कि बच्चों को इसके बारे में पता न चले। चूंकि अन्य शिक्षक भी यही सोचते थे, इसलिए बच्चों को कॉलेज से इस खबर के बारे में पता चलने का कोई सवाल ही नहीं था। लेकिन हलकेरे से स्कूल आने वाले बच्चों के माध्यम से यह खबर स्कूल में फैल चुकी थी। इसके अलावा, बच्चों ने यह भी देखा था कि होन्नातिसार कॉलेज में रह रहा था। अनूप उससे और पूछताछ करने के लिए वहां आया था। केवल उसी में इतना साहस थी कि वह ऐसा प्रश्न पूछ सके।
उसे सुनी हुई सारी बातें बताने के बाद उसने पूछा,
"क्या यह सच है, डोडप्पा?"
अन्नाय्या ने कहा,
"यह सच है कि इसे चुराया गया था। लेकिन यह नहीं कहा जाना चाहिए कि यह काम फलां व्यक्ति ने किया था, और फिर फलां व्यक्ति ने किया था!"
"अगर यह सिर्फ चोरी थी, तो तुमने सितार क्यों तोड़ा?"
"इसे जानबूझकर किसने तोड़ा? यह एक ऐसा सितार है जिसका माप लेना मुश्किल है... इसे बेचने में ज्यादा मुनाफा नहीं है, इसलिए उन्होंने शायद अपनी अनुपस्थिति में इसे तोड़ दिया होगा। क्या यह सच है या नहीं?" आखिरी सवाल होन्नाटी के उस्तादों के लिए था।
"जी हां! ये लोग इस उपकरण को खोखले लौकी से बनाते हैं। गांव के चोरों को इसकी कीमत कैसे पता चलेगी?"
अनुपम को होन्नाटी की बातों से कुछ हद तक यकीन हो गया। अन्नाय्या ने आगे कहा,
"अब हमने फैसला कर लिया है, देखो! अब से होन्नातिसारा पहाड़ पर नहीं रहेगी। होन्नातिसारा अकेले रहेगी। हमें नहीं पता चोर कब फिर आएंगे। इसलिए, चलो उनके लिए यहां एक शांत जगह पर घर बना देते हैं। हमने इसके लिए जगह भी तय कर ली है... ये काम कौन करेगा?"
अनूप का उत्साह सकारात्मक मोड़ लेने लगा। उसने तुरंत कहा,
वाह! इसमें क्या-क्या है? मैं योजना तैयार करके आपको दिखा देता हूँ। मेरे साथ छह लोग ही काफी हैं... क्या ये दो कमरों का घर नहीं है? ये कटहल के पेड़ों की

लकड़ी से बना है जिन्हें परसों ही काटा गया था। हम दरवाज़े और खिड़कियों के फ्रेम भी खुद ही बनाएंगे। लेकिन हमें अपने काम में कोई बड़े-बड़े लोग नहीं चाहिए...
अन्नाय्या खुश था। उसने फिर सोचा, उसके साथियों की बात सच है! ऐसे बच्चों को शिक्षित करने में अन्य व्यर्थ की उलझनों में पड़ने से कहीं अधिक रचनात्मक आनंद है! सब-इंस्पेक्टर के मामले में बेवजह उलझने का कोई फायदा नहीं है।
उस दिन अनूप कक्षा में बैठा था, लेकिन उसका मन और बुद्धि होन्नाटी सर के घर के बारे में सोचने में तल्लीन थी।
जल्दी-जल्दी दोपहर का खाना खत्म करके वह निर्माण स्थल देखने आया और सीढ़ियों की नाप से उसने पूरे स्थल का अंदाज़ा लगा लिया। बारिश होने पर भी पानी अंदर नहीं आएगा, क्योंकि यह काफी ऊँचा है... यह तो बढ़िया है। लेकिन पूरी इमारत तीन फीट ऊँची होनी चाहिए ताकि ज़मीन की ठंडक और नमी महसूस न हो। डोड्डप्पा कहते हैं दो फीट ऊँचा। लेकिन हमें अंदर बाथरूम चाहिए। रसोई नहीं। ज़मीन पर एक ऊँचा चबूतरा क्यों न बना लें जिस पर बैठकर सितार बजाया जा सके? रात में उस पर बिस्तर बिछाकर सो भी सकते हैं। पीछे सरस्वती की वीणा बजाते हुए एक तस्वीर है - लेकिन सरस्वती वीणा बजाती हैं या सितार? सितार और वीणा में क्या फर्क है? होन्नाटी साहब वीणा क्यों नहीं सीखते? हमें उनसे पूछना चाहिए। अगर सोने की जगह ऊँची होगी तो रात में अगर कोई साँप भी आ जाए तो कुछ नहीं कर पाएगा। और हाँ, कहते हैं ना कि अगर ज़मीन चिकनी मिट्टी की हो तो साँप उस पर चल भी नहीं पाएगा! इसके लिए बहुत काम है... नहीं, ऐसा नहीं है! लेकिन फिर फर्श साफ करना आसान हो जाता है। साथ ही, अगर आप ध्यान रखें कि दरवाजों और खिड़कियों के बीच जरा सी भी दरार न हो, तो सापों का अंदर आना नामुमकिन है! इसके अलावा, आपको घर के मालिक से कहना चाहिए कि रात को सोते समय बाथरूम के दरवाजे में कुछ लगा दें। लेकिन आपको नई लकड़ी का इस्तेमाल करना चाहिए, ताकि दरारें कुछ दिनों में अपने आप बंद हो जाएं। इसका ध्यान बाद में रखा जा सकता है। इसके चारों ओर बाड़ और गेट भी होना चाहिए।
इतिहास की कक्षा शुरू होने तक, अनुप घर के मोटे-मोटे नक्शे बना रहा था और उनमें सुधार कर रहा था। समाजशास्त्र की आखिरी कक्षा तक, उसका नक्शा और भी संशोधित हो चुका था और लगभग तैयार था।
स्कूल के बाद, वह दौड़कर अन्ना के कमरे में गया और उन्हें निर्माण स्थल पर आने के लिए पुकारने लगा।
अन्नाय्या यह देखकर बहुत प्रसन्न हुए। वे उनके साथ उस स्थान पर गए जहाँ घर बनना था। उन्होंने उन्हें घर के बारे में अपने विचारों को विस्तार से समझाया। घर को थोड़ा ऊँचा बनाने के विचार का समर्थन करते हुए उन्होंने कहा,
"अगर अचानक तेज बारिश हो जाए या रात में कोई डायनामाइट से बांध को उड़ा दे, तो गहरी नींद में सो रहे होन्नाटी सर पानी में डूब जाएंगे..."
"बारिश से कोई दिक्कत नहीं है... लेकिन बांध के पास डायनामाइट क्यों फोड़ेगा? पागलों जैसी बातें मत करो!" अन्नाय्या ने अपनी असंतुष्टि व्यक्त की।
फिर भी, उसके मन में एक सवाल उठा... क्या उसने ऐसा इसलिए कहा होगा क्योंकि चोरी की कहानी बच्चों में फैल गई थी? ऐसा नहीं कहा जा सकता था। कई बार उसके मन में कुछ शंकाएँ उठती थीं... उसने भी ऐसा अनुभव किया था।
वहां से लौटने के बाद, अन्नय्या ने शंकरमूर्ति-सोमशेखराचार्य और अन्य लोगों को बुलाया और उनके सामने नए घर का विचार रखा। उन्होंने उन्हें अनुपना द्वारा बनाए गए उस घर के नक्शे के बारे में भी समझाया।
सब कुछ सुनने के बाद, शरभन्ना ने एक सुझाव दिया।

"उन्हें यहाँ बैठकर दिन भर सितार बजाने दो। लेकिन रात को सोने के लिए उन्हें स्कूल के पास स्थित हमारे छात्रावास में आने दो।"
"जब भी मेरा मन करता है, मैं आधी रात तक खेलता रहता हूँ। इससे वहाँ पढ़ रहे बच्चों को परेशानी होती होगी। आखिर ये दोनों अलग-अलग क्षेत्र हैं!"
"सच में नहीं... मैं सुरक्षा कारणों से ऐसा कह रहा हूं।"
"जो व्यक्ति पहाड़ पर अकेले रहने का आदी हो, उसे किस बात का डर हो सकता है?"
"लेकिन क्या हम यहाँ घर इसलिए नहीं बना रहे हैं क्योंकि वहाँ असुरक्षा का माहौल है?"
शरभन्ना की बात सभी को समझ आ गई. बाद में अन्नय्या ने कहा,
"पहले हम एक घर बना लेते हैं। फिर उस समय की परिस्थितियों के आधार पर तय करेंगे कि रात में कहां सोना है।"
अन्नाय्या की बात सबको समझ आ गई।

■

होन्नाटी ने अपना पैसा बैंगलोर के एक बैंक में ब्याज पर जमा कराया था। उसे उस पर 2500 रुपये का ऋण लेने के लिए बैंगलोर जाना था। वह जलद से जलद बैंगलोर जाकर अन्य आवश्यक चीजें खरीदना चाहता था। उसे लगता था कि सतारी के बिना बीता हर पल जीवन की बर्बादी है। इसलिए वह बैंगलोर के लिए निकल पड़ा।
इसी संदर्भ में अन्नाइया भी बैंगलोर जा रहे थे। अगर रविंद्र को परशुराम गौड़ा द्वारा विश्वविद्यालय में मचाई जा रही परेशानी के बारे में पता चल जाता, तो शायद उन्हें राहत मिलती – और वे कोई समाधान भी निकाल लेते। इसके अलावा, उन्हें लगा कि अगर वे उन्हें विश्वविद्यालय का कोई पदाधिकारी दिलवा देते, तो परशुराम गौड़ा के खिलाफ़ उनकी लड़ाई और मजबूत हो जाती। जब उन्होंने इस मुद्दे पर अन्य सहकर्मियों से चर्चा की, तो उन्होंने भी उत्साहपूर्वक इस विचार का समर्थन किया।
वे शुक्रवार को जाने वाले थे। स्कूल में शनिवार और रविवार को डेढ़ दिन की छुट्टी थी। इसलिए अन्नय्या ने अनुपाल से पूछा,
"क्या आप बैंगलोर आएंगे? मैं अपने माता-पिता से मिलूंगा। आप रविवार रात या सोमवार सुबह हमारे साथ वापस आ जाइए।"
एक पल के लिए अनूप को लालच हुआ। लेकिन थोड़ी देर सोचने के बाद उसने कहा,
"अम्मा बेंगलुरु में नहीं हैं। उन्हें कुछ काम है, इसलिए वे अभी भी दिल्ली में हैं। सोमशेखराचार्य साहब ने होन्नाट्टिसारा के घर की योजना को मंजूरी दे दी है। हमें इस पर काम शुरू कर देना चाहिए। डेढ़-दो दिनों में हमें नींव तक का काम पूरा कर लेना चाहिए, और फिर स्कूल के बाद समय मिलने पर ऊपरी निर्माण कार्य शुरू कर सकते हैं। डोडप्पा, सेबकी यही राय है! अगर मैं नहीं रहूँगा, तो ये सब लोग काम करेंगे और मुफ्त में काम कर लेंगे। हमें उनसे काम ठीक से करवाना चाहिए। अगर हमने इसे कल या परसों नहीं किया, तो इसमें एक और हफ़्ते की देरी हो जाएगी।"
अनूप की बातें प्रभावशाली थीं।
बिदीरली फाटा तक पैदल जाएं और वहां से टिपटूर जाने वाली बस पकड़ें।
और वहाँ से वे ट्रेन पकड़कर शाम छह बजे तक बैंगलोर पहुँच जाते। उनके पास रविंद्र के घर का पता था। लेकिन घर जाने का तो सवाल ही नहीं था। वैसे भी, घर पर कोई नहीं था। इसलिए दोनों रविंद्र के दफ्तर चले गए।
केबिन में अन्नाया ने रविंद्र से कहा,
मैं आपसे मिलने के लिए ही यहाँ आया हूँ...

यह सुनकर रवींद्र भी बहुत खुश हुआ। उसने कहा,
यहां एक संगीत संस्था है। मैं उसका सदस्य हूं। मैंने कार्यक्रम के लिए आपका नाम सुझाने का सोचा था। लेकिन अब मुझे याद आया कि आपने कहा था कि आप सिर्फ मेहनत करेंगे, कार्यक्रम नहीं देंगे। इसलिए मैं चुप बैठा रहा। अभी एक घंटे का काम बाकी है। तब तक आप हमारे प्रिंटिंग विभाग में आकर देख सकते हैं। फिर चलिए घर चलते हैं...
सात बजकर साढ़े सात बजे, वे तीनों उसकी कार से उसके घर पहुँचे। उनके जाने के बाद, वह रसोई में दाखिल हुआ। अन्नाय्या भी उसके पीछे-पीछे गई और बोली,
मैं करती हूँ... मुझे आपसे ज़्यादा खाना बनाने की आदत है..."
लेकिन आपको गैस कुकर पर खाना बनाने का कितना अनुभव है? दूसरी बात, आपको यह सोचना चाहिए कि क्या आपके कॉलेज के चूल्हे को वैज्ञानिक रूप से बेहतर बनाकर लकड़ी की जगह ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। मेरा एक इंजीनियर दोस्त है। वह ऐसे वैज्ञानिक प्रयोग करता है। हम उससे भी मदद ले सकते हैं। मैं सुबह खाना बना लेती हूं। फ्रिज में खाना रखा है। मैं सिर्फ आप दोनों के लिए चावल बनाती हूँ। मेरी चतुराई तो देखो! मैं पंद्रह मिनट में खाना बना लेती हूँ!
रविंद्र रसोई में दाखिल हुआ। अन्नाया भी उसके पीछे-पीछे गई।
खाना बनाते समय अन्नय्या ने रविंद्र को गाँव की हाल की सभी घटनाओं के बारे में बताया। उन्होंने रविंद्र को सितार न होने के कारण होन्नाटी की परेशानी और यहाँ आने का कारण बताया। जब यह विषय चल रहा था, तभी उन्होंने अपने अखबार में छपे ग्रेनाइट मामले का जिक्र किया।
जैसे ही यह विषय उठा, रविंद्र को कुछ जानकारी थी और उसने पूछा,
"बैंगलोर के कुछ अखबारों ने पता लगाया था कि उस मामले में फैर्जी अनुमति पत्र तैयार करवाने वाले व्यक्ति का नाम भी परशुराम गौड़ा था। उस समय मुझे उस नाम में कुछ खास नहीं लगा था। अब मुझे एहसास हुआ - क्या यही आपकी समस्या है?"
हां, वही है...
"तो फिर सही बात है! हमारे अखबार ने इस मामले में सबसे पहले खबर छापी। इससे स्कूल अप्रत्यक्ष रूप से नाराज हो गया होगा। उसे यह भी पता होगा कि हमारा दोस्त... अनुप वहीं पढ़ता है।"
"पता नहीं उसे यह बात पता है या नहीं! उसने तो इससे पहले ही गड़बड़ शुरू कर दी थी। इसका कारण यह है कि उसके दादाजी ने स्कूल को जो ज़मीन दान में दी थी, वह उस समय शिंदी का जंगल था। उसे समझ आ गया है कि उसी ज़मीन पर नारियल की अच्छी फसल होगी! वह ये सब स्वार्थवश कर रहा है!"
तीनों के भोजन करने के बाद, अनुपान होन्नत्ती को अपने कमरे में ले गया। हालाँकि नौकरानी रोज़ाना पूरे घर की सफाई करती थी और हफ्ते में दो बार फर्श पोंछती थी, फिर भी खिड़कियों और लैंपशेड पर धूल जमी हुई थी। चादर पर भी धूल थी। उसने कंबल झाड़ा और होन्नत्ती के सोने के लिए जगह बनाई। फिर कुछ याद आने पर वह अपने शयनकक्ष में गया। वहां उसने गोदरेज की अलमारी पर कपड़े में लिपटा हुआ सितार धीरे से उठाया और नीचे उतार लिया।
उन्होंने आवरण हटाया और सितार को दर्शकों के सामने रखकर कहा,
यह मेरी पत्नी का सितार है। शादी से पहले, वह भी दूसरी लड़कियों की तरह सीख रही थी। अपने माता-पिता के कहने पर! उसे बाद में भी सीखने का मौका मिला। दिल्ली और पटना में सितार सिखाने वाले शिक्षक थे। लेकिन उसने बजाना बंद नहीं किया! शायद इसे ऐसे ही बिना बजाए रखने से इसके खूंटे जाम हो गए हैं। इसमें एक तार भी है। जब तक आप दूसरे सितार का इंतजाम न कर लें, तब तक इसे बजाकर देखिए। इससे सितार थोड़ी ढीला हो जाएगा। अगर इसे बिना इस्तेमाल

किए रखोगे तो यह खराब हो जाएगा, है ना? मुझे लगता है यह सितार कलकत्ता में खरीदा गया था। तेईस साल पहले... जब वह पंद्रह साल की लड़की थी! अब एक नए सितार की कीमत कितनी होगी?
मिराज में आपको दो हज़ार से ढाई हजार के बीच मिल सकते हैं...
होन्नाटी को ऐसा लगा जैसे उसे जीवन मिल गया हो। उसने सितार उठाया। उसने उस तौलिये से उसे धीरे से पोंछा जो रवींद्र ने उसे हाथ-पैर पोंछने के लिए दिया था। हलके से उसे छेड़ते हुए उसने पूछा,
"तुमने कहा था कि मुझे चिढ़ाए हुए सालों हो गए! लेकिन हाल ही में लगता है कोई इस बात को लेकर कुछ ज्यादा ही उत्साहित हो गया है!"
"हाँ, मुझे याद है! हम दोनों कॉलेज आए थे - बाद में हम मंदिर भी गए, उस समय आप अंदर मेघ राग बजा रहे थे। हम बाहर बैठकर पूरा राग सुनते रहे। जब हम वहाँ से लौटे, तो उसने सितार को गवासनी से बाहर निकाल लिया था! उसके बाद, वह कुछ दिनों तक उसका अभ्यास करती रही। क्या पंद्रह-सोलह साल के अंतराल की भरपाई करने में कम से कम दो-तीन साल नहीं लगते? चार दिनों में ही उसका उत्साह फीका पड़ गया... सितार वापस गवासनी में चला गया! आप सितार को ट्यून करते हैं..." इतना कहकर रविंद्र कमरे से बाहर चला गया।
बाहर हॉल में बैठे हुए, वह और अन्नय्या बातें करने लगे। रविंद्र कह रहा था,
"ग्रेनाइट का अवैध व्यापार, इतने सारे लोगों को गुलामों की तरह रखना और उनसे कड़ी मेहनत करवाना – हमारे अखबार ने इन सभी मामलों में भरपूर और विश्वसनीय खबरें दीं। बाद में, अन्य अखबारों ने भी इसके बारे में और अधिक जानकारी जुटाई। लेकिन नतीजा? कुछ नहीं! कौन जाने उन मजदूरों को कहाँ ले गए! अखबारों ने अनुमान लगाया था कि आठ करोड़ से अधिक मूल्य का ग्रेनाइट अवैध रूप से बेचा गया। इसमें राजस्व मंत्री का भी हिस्सा है। मुख्यमंत्री का भी हिस्सा है! अगर आप उनसे निजी बैठकों में इस बारे में पूछें, तो वे कहते हैं – फिर मंत्री क्यों बनना चाहते हो? क्या यहाँ नियमित वेतन या पेंशन मिलती है? जो पद पर रहते हुए इसका लाभ नहीं उठाता, उसे मूर्ख कहा जाना चाहिए! कुछ लोग कहते हैं – हाँ! इस छोटे मंत्री को इससे क्या मिलता है? इसका तीन हिस्सा मुख्यमंत्री के पास जाता है। इसका एक बड़ा हिस्सा सूटकेस में पैक करके दिल्ली भेज देना चाहिए! नहीं तो, राष्ट्रव्यापी पार्टी कैसे बनेगी? ऐसे मामलों में, अगर आम मजदूरों को काम पर रखा जाए, तो खबर फैल जाएगी... इसलिए उन्होंने सूखे के कारण गाँव छोड़कर गए मज़दूरों के एक समूह को गिरफ्तार कर लिया!..."
कमरे से बीच-बीच में सितार की सुरीली धुन सुनाई दे रही थी। अन्नय्या को महसूस हुआ कि होन्नाटी राहत की स्थिति में थी, मानो कोई कई दिनों से भूखा हो और मिठाई मिलने की उम्मीद कर रहा हो। अन्नय्या ने बातचीत पर ध्यान देते हुए कहा,
"परशुरामगौड़ा ने फर्जी तारीख वाला एक फर्जी कागज बनाया, इसीलिए वह अखबार में छपा, है ना? अब उसके साथ आगे क्या होगा?"
मुझे तो पता ही नहीं क्या हुआ। हमारे साथ भी क्या होता है, बताओ? हमें एक खबर मिलती है, हम उसकी छानबीन करते हैं – उससे कुछ जानकारी निकालते हैं, छापते हैं – फिर दूसरी खबर मिलती है – फिर एक नई खबर – फिर एक और नई खबर – फिर हम पहली खबर को भूल जाते हैं। अगर हम बार-बार वही खबर देते रहेंगे, तो लोग ऊब जाएंगे। एक बार जब लोगों की दिलचस्पी खबरों में खत्म हो जाती है, तो सरकार कुछ नहीं करती। किसी अधिकारी को सजा नहीं मिलती। इस मामले में भी, मुझे लगता है कि उसका तुरंत कहीं तबादला कर दिया जाएगा, लोग और भी भूल जाएंगे – तीन महीने बीत गए हैं, और उसे चुपचाप पदोन्नति देकर कहीं भेज दिया जाएगा!
अन्नाया ने दो-तीन बार जम्हाई ली। यह देखकर रविंद्र ने कहा,
"अब तुम भी सो जाओ। कल बात करते हैं..."

रवींद्र ने अन्नाय्या के लिए अलग कमरे में सोने का इंतजाम किया था। जब उसने बिस्तर से चादरें हटाना शुरू किया, तो अन्नाय्या ने कहा,
मैं वहां नहीं सोऊंगा। मुझे चटाई दे दो। या कोई पुराना गद्दा। मैं फर्श पर सोता हूं।
"जब आप कॉलेज से बाहर निकल जाएं, तो वहां के नियमों के अनुसार जीवन जिएं। अपने नियम कॉलेज में ही रहने दें!"
"आप ऐसा कहते हैं?" उन्होंने एक पल सोचा और फिर कहा, "हमारे मंत्री भी यही कहते हैं। मंत्री बनने से पहले वे भी चटाई या कंबल पर सोते हैं। विधायक छात्रावास में पलंग और गद्दे की व्यवस्था होती है। मंत्री बनने के बाद उन्हें बड़ा बंगला और गाड़ी मिल जाती है। घर छोड़ने के बाद उन्हें मुश्किल हालात का सामना करना पड़ता है। लेकिन बाद में वे पहले जैसी स्थिति में नहीं रह पाते। बेचारे लोग क्या करें? वे सदाशिवनगर में छोटा महल बनवा लेते हैं - उन्हें मंत्री के बंगले जितना बड़ा बंगला बनवाना चाहिए। तो फिर मंत्री बनने के बाद क्या उन्हें ये सारी व्यवस्थाएं नहीं करवानी चाहिए? उन्होंने आखिर क्या गलत किया? विवेकानंद ने शिकागो के एक गेस्ट हाउस में कहा था कि जब तक मेरे देश का हर नागरिक पलंग पर नहीं सोएगा, मैं नहीं सोऊंगा - मन अपने शरीर को कितना धोखा देता है - क्या आप नहीं जानते?"
रविंद्र ने आगे कोई बहस नहीं की। दरअसल, उसके घर में न तो चटाई थी और न ही कंबल। लेकिन एक कालीन जरूर था। उसने पलंग लगाया और उस पर कंबल बिछाया। उसने मच्छरदानी ठीक से लगाई, बत्ती बंद की और दरवाजा बंद करके बाहर आ गया।
उसने दरवाजा और दीपक बंद करके अपने कमरे में प्रवेश किया और मच्छरदानी में घुस गया। अन्नाया द्वारा सुनाई गई यादों ने उसके मन में विवेकानंद के व्यक्तित्व को उजाड़ दिया। भले ही सभी बच्चों के भरपेट खाने के बाद कुछ भी नहीं बचा था, उपवास के बाद तृप्त होकर सोने वाली माँ का हृदय उस महान आत्मा के हृदय में बसा हुआ था। गांधीजी ने भी ऐसा ही हृदय धारण किया। लेकिन आज के राजनेता इस हृदय को छू भी नहीं पाए हैं! शास्त्री जी अपवाद हैं! वास्तव में, गांधी युग का अंत उसी दिन, 30 जनवरी 1848 को हुआ था! गांधी युग में भी गांधी जैसे कितने लोग थे? उसे मोतीलाल याद आए, जो स्वयं जमीन पर सोए थे क्योंकि उनके बेटे को जेल में सोने के लिए बिस्तर नहीं मिला था। गांधी युग के प्रकाश में भी गांधी जी नहीं थे।
उनके मन में तरह-तरह के विचार उमड़ रहे थे, तभी सितार की आवाज़ उनके कानों तक पहुँची। होन्नाटी के कमरे का दरवाज़ा बंद था। बीच में पंद्रह फीट चौड़ा और बीस फीट लंबा एक हॉल था। इस कमरे का दरवाज़ा भी थोड़ा खुला हुआ था। रात के सन्नाटे में सितार की आवाज़ साफ़ सुनाई दे रही थी। इसका मतलब है कि होन्नाटी सितार को ठीक करने में कामयाब हो गए हैं। अन्नाय्या ने उन्हें पिछले कुछ दिनों से सितार न मिलने के कारण उनकी बेचैनी के बारे में भी बताया था। आज रात वे सितार बजाए बिना नहीं सोएंगे, जब तक कि उनका मन पूरी तरह से संतुष्ट न हो जाए!
अब स्वरों की सूक्ष्म ध्वनियाँ अधिक स्पष्ट रूप से सुनाई दे रही थीं। बादल - निश्चित रूप से बादल! लेकिन उस दिन, यह राग हमें पहले मल्हार राग जैसा लग रहा था। यह कौन सा मौसम है? यदि आप बारिश के आने की उम्मीद में इस राग को गाते हैं, तो आप निश्चित रूप से उस राग और बारिश की तीव्र प्रत्याशा का अनुभव करते हैं। बाहर मौसम कैसा भी हो - यहाँ तक कि कड़ाके की सर्दी में भी - यदि आप इस राग को अच्छी तरह से प्रस्तुत करते हैं, तो यह भावना निश्चित रूप से व्यक्त होती है। गायक इस बात पर जोर नहीं देते कि इस राग को केवल बरसात के मौसम में ही गाया जाना चाहिए।

अचानक उसे यह बात समझ में आई – उसे उसका सितार इस तरह उठाकर होन्नाटी को नहीं देना चाहिए था! यह उसका सितार है – उसके पिता ने उसे दिया था। क्या उसे इसका इस्तेमाल करना चाहिए या इसे ऐसे ही रखना चाहिए, तारों को जंग लगने देना चाहिए या कीड़ों द्वारा खाए जाने देना चाहिए – यही उसका सवाल था। मैंने इस मामले में पहल क्यों की?
मुझे उसे किसी को भी सौंपने का कोई अधिकार नहीं है, एक-दो दिन के लिए भी नहीं, दो-चार महीने के लिए भी नहीं। भले ही हमने खुलकर कुछ नहीं कहा है, लेकिन हम दोनों जानते हैं कि हमारे और उसके बीच की दूरी बढ़ती जा रही है।
एक दिन सुबह 7:30 बजे उसने फोन किया और कहा,
"समारोह अच्छे से संपन्न हुआ। सुबने आपके बारे में पूछा। अब मुझे कुछ काम की जल्दी है। उसे पूरा करने में दो-तीन सप्ताह लगेंगे।"
मैं यहाँ कब तक खाना बनाती रहूँगी? ये ज़रूरी काम क्या है, मैंने मन ही मन पूछा। फ़ोन रखने के दस मिनट बाद, रविंद्र ने दिल्ली में फ़ोन किया। उसकी भाभी ने फ़ोन उठाया और उसे कांति को फ़ोन करने के लिए कहा। जब कांति ने फ़ोन उठाया, तो उसने उसे अपनी परेशानियाँ बताईं।
इस पर उसने दुर्भावनापूर्वक कहा,
"आप मुझे फोन करके अपनी समस्याओं के बारे में क्यों नहीं बताते?"
बाद में, जब उनसे पूछा गया, "किस तरह का काम?", तो उन्होंने कहा,
क्या मुझे आपके कार्यालय की हर एक चीज की जांच करनी होगी? कुछ और दिन इंतजार कीजिए..."
एक महीना बीत गया, लेकिन वह नहीं आई। उसने फोन भी नहीं किया। जब उसने दोबारा फोन किया, तो उसने फिर वही कहा,
"इसमें अभी दो या तीन सप्ताह और लगेंगे।"
"मुझे बताओ तुम क्या कर रहे हो, ठीक है?" उसने कहा। "मुझे तुम्हारा व्यवहार बिलकुल पसंद नहीं है..."
मुझे भी तुम्हारा चिल्लाना बिलकुल पसंद नहीं आया! तुम्हें जल्द ही समझ आ जाएगा कि समस्या क्या है! थोड़ा और धैर्य रखो, ठीक है? तुम अच्छे बच्चे हो, है ना?
एक महीना बीत गया। रविंद्र का गुस्सा चरम पर था। वह सोच रहा था कि उसे उसके पिता से बात करके कुछ माफी मांगनी चाहिए, तभी एक रात दस बजे के बाद उसने उसे फोन किया।
"नमस्ते! खुशखबरी! मेरा काम पूरा हो गया है!... इसका मतलब है कि काम शुरू हो गया है! हालांकि मुझे पूरा यकीन था, फिर भी मैंने काम पूरा होने तक किसी को न बताने का फैसला किया था।"
मैं!..." उसने एक अमेरिकी कंपनी के साथ अपने रेडीमेड कपड़ों के कारोबार के बारे में बात करते हुए कहा। उसने आगे कहा, "इसमें मेरी एक दोस्त मेरी पार्टनर है। पहले तो हम सिर्फ़ शर्ट सिलवाना चाहते हैं। बाद में हम जींस और दूसरे कपड़ों का काम भी लेंगे। हम नाम बदलकर भारत में भी बाज़ार बना सकते हैं। इसमें संभावनाएं बहुत ज़्यादा हैं! मैं उत्पादन का काम देखती हूं। और दोस्त - चलो चलते हैं। फ़ोन पर सब कुछ बताना मुमकिन नहीं है। मैंने इसके लिए फ़ोन किया था - अब मुझे भी मिल रहा है। तुम दिल्ली कब आना चाहते हो? मैं तुम्हें हवाई टिकट भेज दूँगी!"
रविंद्र गुस्से से आग बबूला हो गया – उसने ऐसा व्यवहार क्यों किया? उसने मुझे बिना बताए इतना बड़ा फैसला ले लिया! क्या उसे लगा कि अगर मुझे पता चल गया तो मैं इसका विरोध करूँगा? एक आधुनिक महिला, चाहे वह अपने पति की आमदनी का एक चौथाई या पाँचवाँ हिस्सा ही क्यों न कमाती हो, खुद को उसके

बराबर समझती है और अगर उसकी आमदनी उसके बराबर हो तो उसे बदमाश समझती है! और अब तो वह मेरी तनख्वाह से चार गुना कमाने लगी है!
ठीक है! अब जब आपने कह दिया है कि आप दिल्ली में ही रहेंगी, तो हमारी ज़िंदगी...
"देखो... अपने मारवाड़ी से कहो और उसका तबादला दिल्ली करवा दो..." उसने शायद पहले ही इस बारे में सोच लिया होगा।
यह सिर्फ तबादलों का मामला नहीं है। वहां आने का मतलब है कि उस स्तर पर कोई रिक्त पद होना चाहिए। या फिर जुलगांव का कोई निवासी बेंगलुरु आने को तैयार हो। चूंकि मेरा संबंध कर्नाटक से है, इसलिए मुझे मेरे अनुरोध पर यहां भेजा गया। अन्यथी, मुझे जो भी पद मिलता, उसे स्वीकार करना पड़ता और दिल्ली में नौकरी का प्रस्ताव स्वीकार करना पड़ता। इससे भी बुरी बात यह थी कि मुझे अपने पूर्वजों की भाषा, क्षेत्र और संस्कृति को छोड़कर दिल्ली वापस जानी पड़ता, जिसका मतलब था कि मेरा मन अंदर ही अंदर विद्रोह करे रहा था।
उसके दिल में उठने वाली यह तड़प उसके लिए बिलकुल नई है! वह कभी बेंगलोर से जुड़ नहीं पाई – उसने कभी कोशिश भी नहीं की। बेंगलोर में रहते हुए भी, वह ऐसे रहती थी मानो दिल्ली में रह रही हो।
उन्होंने पूछा,
"जब आपने कारोबार शुरू किया था तब आपने मुझसे क्यों नहीं पूछा?"
"लेकिन अब तो कारोबार शुरू हो गया है, है ना? अब बताओ आगे क्या होगा..." उसकी आवाज़ में स्पष्ट रूप से उपेक्षा झलक रही थी।
"क्या आप बेंगलोर में अपना कारोबार नहीं कर सकते?"
"क्या? रवि, तुम तो एक बड़े अखबार के संपादक हो! तुम्हें ये भी समझ नहीं आता? अरे, हमने तो निर्यात का कारोबार शुरू कर दिया है! केंद्र सरकार के इशारों पर चलते हुए हम इन मुश्किलों का सामना कैसे करेंगे? बेंगलुरु जैसे दूरदराज के गांव में रहते हुए हम ये सब कैसे संभालेंगे? मेरी साथी वहां आने को तैयार कैसे होगी? ये तो सिर्फ इसलिए मुमकिन हो पाया क्योंकि वो विदेश व्यापार विभाग में थीं। अगर वो नौकरी छोड़ देंगी तो हमारा कारोबार ठप हो जाएगा! वरना हमें लाखों रुपये बर्बाद करने पड़ेंगे! तीसरी बात, तुम्हारे प्यारे दादाजी की संस्कृति के लोगों पर भरोसा करके हम तुम्हारे बेंगलुरु में कोई कारोबार कैसे कर सकते हैं? अच्छे लोग! अगर तुम कहो, "आओ, काम करो, तनख्वाह लो," तो तुम्हें कितनी दूर जाना पड़ेगा? - एक मील? - ये तो बहुत दूर है, कहते हैं। दोपहर हो जाती है, जब वे "दमलो" कहते हैं, तो वे बगीचे में जाकर दाल खाते हैं। क्या तुम्हें पता है यहां के पंजाबी मजदूर मेहनत करके पैसे कैसे कमाते हैं? अगर विदेशी कंपनियां डाक समय पर नहीं पहुंचातीं, तो ऑर्डर रद्द कर दिया जाता है!" इसका असल मतलब क्या है, आप जैसे पत्रकार को समझ नहीं आएगा। - ठीक है! हम फोन पर सब कुछ नहीं बता सकते - इसमें बहुत पैसे लगते हैं। तो फिर यह कब तक आएगी? वे टिकट भेजते हैं।
रविंद्र ने अपने आप को रोक न पाने के कारण गुस्से से कहा,
"जब भी मेरा मन करेगा, मेरे पास टिकट खरीदने के लिए पैसे होंगे!"
इस पर उसने दुर्भावनापूर्वक कहा,
मुझे लगता है मुझे बोनस मिला है!
आप ऐसा क्यों पूछ रहे हैं?
बात यहीं खत्म नहीं होती... आपने अपनी पत्नी को थर्ड क्लास स्लीपर में भेजा। आपको और अनुप को कार्यक्रम के लिए विमान से जाने को कहा गया था, लेकिन पैसे नहीं थे! छुट्टी भी नहीं मिली थी। अब आप कह रहे हैं... पैसे हैं, तो मैं खुश हूं!
जी हां – यही है मेघ राग। उत्तर भारत की भीषण गर्मी का अनुभव किए बिना, साफ आसमान में बादलों की याद दिलाने वाले धुएं का एहसास असंभव है। उस

दून पहाड़ों पर खेलते समय जो बेचैनी महसूस हुई थी, उससे भी कहीं अधिक तीव्र बेचैनी का अनुभव होता है।
उसके बाद उसने फोन नहीं किया। मैंने भी नहीं किया। क्या एक महीना बीत गया था या पाँच हफ्ते? उसने रात 10 बजे फोन किया और पूछा कि क्या वह ठीक है। फिर उसने कहा,
मैंने अनूप को उस गाँव के गांधी स्कूल से निकालकर किसी दूसरे, बेहतर स्कूल में भेजने का फैसला किया है। अगर उसे दून स्कूल या ग्वालियर स्कूल में दाखिला लेना है, तो उसे अपने वरिष्ठों से सिफारिशों की ज़रूरत होगी। आप यह आसानी से कर सकते हैं, इसीलिए मैंने आपको अभी बुलाया है।
"उसका स्कूल बदलने की कोई जरूरत नहीं है। वह वहां अच्छी तरह से सीख रहा है। आप भी यह जानते हैं। मैंने उसे उस स्कूल में इस स्पष्ट विचार के साथ भेजा था कि उसे उस स्कूल में नहीं जाना चाहिए।"
"उस समय आपके पास इतना पैसा कहाँ से आया? इस दुनिया में अकेले कमाने वाले के लिए इतना पैसा खर्च करना नामुमकिन था, इसलिए आप उसे किसी बड़े स्कूल में नहीं भेज सके। अब मैं भी कमा रहा हूँ। शिक्षा पर चाहे कितना भी खर्च हो, मैं उसे करने के लिए तैयार हूँ।"
रवींद्र ने किसी तरह अपने गुस्से पर काबू पाया और कहा,
"यह सिर्फ पैसों का सवाल नहीं है, मैंने तुम्हें हज़ार बार बताया है! अगर तुम अब भी नहीं समझना चाहते, तो फिर अपना गला खींचने का क्या फायदा? उसकी पढ़ाई-लिखाई की ज़िम्मेदारी मुझ पर छोड़ दो - बाकी कुछ?"
उसने कुछ नहीं कहा। अंत में, रविंद्र ने रिसीवर वापस रख दिया।
यह उन दोनों के बीच आखिरी बातचीत थी! इसके बाद न कोई पत्र आया, न कोई फोन। वह समझ गया था कि उनके बीच दूरी बहुत बढ़ गई है। वह यह भी समझ गया था कि अगर उसने इसे ऐसे ही छोड़ दिया, तो दूरी और भी बढ़ जाएगी। लेकिन वह क्या कर सकता था? उसके दिल का दर्द कोई नहीं समझ सकता था। अब जब उसे भी समझ आने लगी थी, तो उसके द्वारा दिखाई जा रही घृणा को कौन सहन कर सकता था?
कुछ घंटे पहले अन्नाय्या रसोई में अनूप के बारे में बात कर रही थी, कितना अच्छा लग रहा था! होन्नाटी के लिए, संगीत की पढ़ाई के लिए अपने दम पर पूरा घर बनाने का आत्मविश्वास! यह सिर्फ ऊर्जा और आत्मविश्वास की बात नहीं है। किसी संगठन के लिए पहल करने और कुछ करने का दृढ़ संकल्प! पूरे घर की लागत छत की टाइलों के लिए सिर्फ सौ रुपये है! दिल्ली के लोग तो इसका मतलब भी नहीं समझ सकते!
अब तो होन्नाटी की उंगलियों पर क्रोध हावी हो गया है! डिले प्ले करते हुए वह कितनी धैर्य और गंभीरता से अपनी भावनाओं को व्यक्त कर रहे हैं! दर्द में होने पर उनकी बोलने और सांस लेने की गति भी धीमी हो जाती है। कई बार तो वे बोलते समय पूरा वाक्य भी नहीं बोल पाते!
जी हाँ! उनकी ख्याति बढ़ती जा रही है। एम.टेक-एम.बीए करने के बाद मिली अच्छी नौकरी छोड़ने के बाद, वे अपने भीतर छिपी संगीत प्रतिभा को खोजने के लिए पूरी लगन से प्रयास कर रहे हैं। उनका संगीत सुनते समय हमें क्रोध और तिरस्कार जैसी तुच्छ भावनाओं को अपने हृदय में जगह नहीं देनी चाहिए। हम संगीत को सतही रूप से समझ सकते हैं। हमें इसके विज्ञान को भी ठीक से समझना चाहिए। यहाँ तक कि उस वादक को भी अपार आनंद का अनुभव होता होगा जब कोई उसके पुराने संगीत को निखारकर उसे बजाता है!

■

जब तक उन्होंने सितार की धूल झाड़कर उसे ठीक से ट्यून नहीं किया, तब तक उन्होंने यह तय नहीं किया था कि कौन सा राग बजाना है। उन्होंने यह भी तय नहीं

किया था कि क्या बजाना है। इतने उत्तम वाद्य यंत्र को अलमारी में बंद रखना कितना बड़ा अन्याय था!
सभी तारों को सुर में लाने में काफी समय लगा। लेकिन जैसे ही तार आपस में सामंजस्य बिठाने लगे, मेघ राग का वातावरण अनजाने में ही हवा में घुलने लगा। होन्नाटी, उन्हीं सुरों को थामे हुए, गाने लगीं। उनके मन में जो तड़प थी, जो इतने लंबे समय से उनके हाथों से दूर थी, अब उन सुरों के माध्यम से खुद को व्यक्त करने लगी। बीच में कोई और बाधा न होने के कारण, उनका मन मेघ राग के जोश और उम्मीद में डूब गया। जैसे-जैसे वे मन्द्र सप्तक में गहराई से उतरते गए, वे पूरी तरह से भूल गए कि यह उनका सामान्य वाद्ययंत्र नहीं है।
ढाई घंटे तक उन सुरों और लय में खो जाने के बाद, उन्होंने बड़ी सावधानी से सितार नीचे रख दिया। धूल से सने बिस्तर पर रखते समय उनका हाथ काँप रहा था। उन्होंने धोबी द्वारा लाई गई इस्त्री की हुई चादर से उसे हल्के से ढक दिया, और फिर खुद मच्छरदानी में घुसकर सो गए। वे गहरी नींद में सो गए।
वह इतनी गहरी नींद में सो रही थी कि जब वह जागी तो नौ बज चुके थे! जब वह बाहर आया तो अखबार पढ़ रही अन्नाय्या ने कहा,
कल, मुझे लगता है मैं काफ़ी देर तक खेलता रहा। मुझे गहरी नींद आ गई, देखो! मुझे उसे पालने में सुला देना चाहिए था, बिल्कुल सही! अब मुझे समझ आया, राजा और महाराजा अपने शयनकक्ष के बाहर संगीत क्यों बजाते हैं!" उन्होंने दिल खोलकर हंसते हुए कहा। फिर उन्होंने कहा, 'रवींद्र, तुम अपना चेहरा धोकर बाहर जाओ। वह जल्दी आ जाएगा। उसने तुमसे कहा था कि उसके आने तक तुम यहीं रहो, इसलिए वह चला गया।'
होन्नाटी ने घड़ी देखी – सवा नौ बज रहे थे। उन्हें जल्दी से तैयार होकर रिक्शा पकड़ना था और महात्मा गांधी रोड स्थित अपने बैंक जाना था। आज शनिवार था – बैंक बारह बजे बंद हो जाता था और सोमवार को सुबह नौ बजे तक नहीं खुलता था। उन्हें सावधि जमा पर ऋण लेना था, जिसमें थोड़ा और समय लगेगा। वे तैयार होने लगे।
एक कार के आने और रुकने की आवाज़ सुनाई दी, ताकि वह दाढ़ी बना सके और नहा सके। अंदर आए रविंद्र ने पूछताछ की,
"क्या तुम अच्छे से सोए? कल रात बादल छा गए थे! लगता है आज रात बहुत तेज बारिश होगी!"
अखबार पढ़ रहे अन्नाय्या को इनमें से कुछ भी समझ नहीं आया। उन्होंने पूछा,
अब यह किस प्रकार का बादल है?
"होन्नाटी रात में जो धुन बजा रहा था, उसका नाम 'मेघ' है!" रविंद्र ने उत्तर दिया।
"इसके बाद वे हमारे स्कूल के पास ही रुकेंगे, है ना? तब तो ये बात मेरे दिमाग में भी थोड़ी-बहुत बैठ जाएगी!" उसने खुलकर हंसते हुए कहा।
होन्नाटी जब कमरे में कपड़े बदल रहा था, तभी उसने दरवाजे पर दस्तक सुनी। 'अंदर आ जाओ,' उसने कहा और मुड़कर देखा तो रविंद्र अंदर आ रहा था।
दरवाजा बंद करके उसकी ओर आते हुए रविंद्र ने कहा,
देखो, हमारे बीच स्नेह बहुत गहरा हो गया है। इसीलिए अब हमारे बीच औपचारिकता या झिझक की कोई गुंजाइश नहीं है। अब मेरी बात सुनो – दो दिन यहीं रुको। नए कपड़े सिलवाओ। इस सितार को दिन-रात बजाओ। इसे अन्नाय्या के साथ हलुकेरे भेज देते हैं। तुम यहाँ से सीधे मिराज जाओ – एक नया सितार मंगवाओ और तिपतुर में उतरकर विश्वविद्यालय जाओ। जब तक नया सितार न आ जाए, तब तक इसी सितार का इस्तेमाल करो। अब मुझे समझ आ गया है कि तुम बैंक से कर्ज लेने आए हो। लेकिन ब्याज तो कटेगा ही। हम्म... ये लो..." उसने होन्नाटी के सामने नोटों का एक बंडल रखते हुए कहा। " तीन हजार हैं। दो हजार तो सिर्फ़ सितार पर ही खर्च हो जाएंगे। इसके अलावा, कपड़ों और मिराज जाने का

खर्च भी बहुत है। – अहम्म – मैंने तुम्हें पहले भी बताया है – अब हम अच्छे दोस्त हैं, तो! तुम्हारी मुलाकातें शुरू हो चुकी हैं, या फिर मुझे ब्याज समेत दे दो। ठीक है?"
``–नहीं–नहीं! मेरे पास पैसे हैं–" होन्नाटी एक कदम पीछे हट गया।
``मुझे भी पता है। लेकिन मेरी बात सुनो... खाते से पैसे मत निकालना - अपने दोस्तों को बताने में संकोच मत करना -" रविंद्र ने पैसे अपनी जेब में रखते हुए कहा, ``चलो नाश्ता करते हैं -" और वहां से चला गया।
होनट्टी झिझक रहा था। रविंद्र की उदारता और बड़े दिल को देखकर उसका हृदय भर आया। यह पहली बार नहीं था जब उसने किसी की उदारता देखी थी। अन्नाय्या ने उसे तीन साल तक खाना खिलाया था। विद्यालय के अन्य शिक्षकों ने भी उसे बहुत प्यार दिया था। वडेरय्या तीन साल तक हर दिन उसके लिए खाना लाते थे। जब वह मुंबई गया, तो दलाल और उसकी माँ ने भी उसे बहुत प्यार दिया। अब होनट्टी को लगा जैसे उसे एक और दोस्त मिल गया हो। उसे लगा कि अगर वह पैसे लौटा देगा, तो यह उस दयालुता का अपमान होगा। उसकी आँखों में आँसू भर आए।
थोड़ा शांत होने के बाद, होन्नाटी बाहर आई और नाश्ता करने लगी।
उसने दो दिन बेंगलोर में रुकने और फिर मिराज जाने का फैसला किया। सोमवार को अन्नाय्या ने सितार लिया और ट्रेन से टिप्पुर के लिए रवाना हुआ और वहाँ से उसने कॉलेज जाने का फैसला किया। रविंद्र ने होन्नाटी को बताया था कि उसे सोमवार को मिराज जाने वाली ट्रेन में स्लीपर सीट मिल जाएगी।
लेकिन सोमवार को उन्हें खबर मिली कि मंगलवार और बुधवार को कुंदगोल में सवाई गंधर्व की पुण्यतिथि है। इससे पहले वे कभी इस अवसर पर आयोजित संगीत समारोह में नहीं गए थे। इसीलिए वे मिराज से पहले कुंदगोल पहुंच गए। यह कहते हुए कि वे संगीत प्रेमी हैं और इस समारोह के लिए बेंगलुरु से आए हैं, वे नादगीर वाडा में ठहर गए। वे दो दिन तक संगीत की धुनों में डूबे रहे। वहाँ उन्हें पता चला कि पुणे में भीमसेन जोशी गुरुवार, शुक्रवार और शनिवार की रात को सवाई गंधर्व की पुण्यतिथि पर संगीत समारोह आयोजित करते हैं। क्यों न वे भी वहाँ जाएँ? और पूछताछ करने पर उन्हें पता चला कि धारवाड़, हुबली और बेलगाम से डेढ़ से दो सौ प्रशंसक इस समारोह के लिए पुणे जाते हैं। धारवाड़ के साली नाम के एक संगीत प्रेमी ने उनसे आग्रह किया,
चलिए, पुणे चलते हैं! हमारे चाचा का घर वहीं है—"
अंत में, रास्ते में मिराज में थोड़ी देर रुकने के बाद, उन्होंने एक सतारी मंगाई और हलुकेरे से उसे अन्नय्या के पते पर भेजने को कहा, फिर वे पुणे के लिए रवाना हुए। वहाँ तीन रातों तक एक भव्य शास्त्रीय संगीत समारोह चल रहा था। खूब संगीत सुनना चाहिए! पहाड़ों में रहने से ऐसा अनुभव नहीं होता। फिर भी, चिंतन के लिए एकांत भी आवश्यक है! मुझे पवई में पढ़ाई करते समय या अहमदाबाद में काम करते समय संगीत समारोहों की याद आ गई। संगीत का अभ्यास करते समय भी खूब संगीत सुनना आवश्यक है। सौभाग्य से, हमारे गुरुजी संगीत के मामले में बहुत सख्त या हठी नहीं हैं।
होन्नाटी को गुरुजी की बहुत याद आ रही थी। हम पुणे तक आ गए थे, मुंबई तक जाने का क्या फायदा? और बिना सितार के उनके पास जाने का क्या लाभ? आखिरकार, उन्होंने गुरुजी से मिलने और उन्हें अपने सितार और नोटबुक की हालत बताने का फैसला किया।
गुरुजी ने उनकी सारी बातें सुनीं और कहा,
जो व्यक्ति किसी वाद्य यंत्र को पत्थर पर पटक कर तोड़ देता है, उसे कंस से भी अधिक क्रूर माना जाना चाहिए, जो छोटे बच्चों को पत्थर पर पटककर मार डालता है! इसमें कोई संदेह नहीं कि उसका भी वही हश्र होगा जो कंस का हुआ। उसकी

चिंता मत करो। और उस नोटबुक की बात तो छोड़ो! क्या नोटबुक देखने के बाद तुम कोई बैठक करोगे? अरे, संगीत तो दिल से आना चाहिए!
गुरुजी भले ही मुसलमान हों, लेकिन वे संगीत के संदर्भ में हमेशा हिंदू धर्म के उदाहरण या भगवद गीता की कहानियाँ देते हैं, यह उनका सामान्य अनुभव है!
वह दो सप्ताह तक मुंबई में रहे। गुरुजी के पुराने सितारी यंत्र का उपयोग करके उन्होंने जितना हो सके अभ्यास किया। गुरुजी ने उनके बागेश्री राग को सुना और उन्हें कुछ अन्य क्षेत्रों के बारे में बताया जहाँ वे अपने राग का विस्तार कर सकते थे। दलाल और उनकी माता ने भी हमेशा की तरह सौहार्दपूर्ण व्यवहार किया। जब मुंबई से विदा होने का दिन आया, तो दलाल उन्हें कार से वी.टी. ले गए और वहाँ छोड़ दिया।
जैसे ही ट्रेन दादर-कुर्ला से गुज़रने लगी, उसे अचानक अपनी माँ की याद सता गई। कितने सालों से उनसे मिले नहीं थे! अप्पा मुझसे नाराज़ थे, इसलिए इतने सालों तक उनसे नहीं मिल पाया! अगर इस नज़रिए से देखें तो अप्पा की क्या गलती थी? उन्होंने मुझे बहुत कुछ दिया ताकि मैं एक अच्छा जीवन जी सकूं। उन्होंने मेरी इच्छा के अनुसार मुझे पढ़ाया-लिखाया। एम.टेक पूरा करने के बाद, मैं एमबीए भी करना चाहता था! मुझे शुरू से ही सितार का शौक था – उन्होंने कभी इसका विरोध भी नहीं किया। उन्होंने ही मुझे वह सितार दिया था जो कंस ने पत्थर से टकराकर तोड़ दिया था। लेकिन जब मैंने अपना मुख्य पेशा छोड़कर अपने शौक को ही अपना जीवन बना लिया, तो वे नाराज़ हो गए – और यह भी, मैं कहना चाहूँगा, बहुत स्वाभाविक है। हो सकता है वे अब भी मुझसे नाराज़ हों। लेकिन इसके लिए उनका नाराज़ होना मेरे लिए अनुचित है। अब मैं भी कोई छोटा लड़का नहीं हूँ। मुझे दिल्ली जाकर उनसे क्यों नहीं मिलना चाहिए?
यह विचार और भी प्रबल हो गया। उसने खिड़की से बाहर देखा। अब कल्याण के बिना यह ट्रेन नहीं रुकेगी।
मुझे फिर से यह ख्याल आया, मैंने अपना पूरा जीवन संगीत को समर्पित कर दिया है। अगर मैं इस क्षेत्र में कुछ भी हासिल किए बिना इन साधारण सूती कपड़ों में उनके सामने जाकर खड़ा हो जाऊं, तो वे और भी नाराज़ होंगे – शायद वे अपना गुस्सा ज़ाहिर न करें। बल्कि, वे चुप रहेंगे। अगर मैं इस तरह आधे-अधूरे मन से वहां जाऊं, तो मेरा दिल भी कड़वाहट से भर जाएगा।
जब वह अपने ख्यालों से बाहर आया, तो कल्याण जा चुका था और कार खंडाला-लोनावला की ओर बढ़ रही थी। उसने दिल्ली के पते पर अपनी माँ को एक पत्र लिखने का फैसला किया – उसमें वह संगीत में अपनी प्रगति के बारे में भी लिखेगा और अंत में अप्पा को अपना नमस्कार भेजेगा। वह अपना पता भी देगा। जब उसे जवाब मिलेगा, तो उसके मन की स्थिति को समझना आसान हो जाएगा।
लेकिन मैंने एक पत्र लिखा, इस उम्मीद में कि उसका पत्र आएगा। इसमें कोई शक नहीं था कि वह शादी के बारे में ही होगा।
पुणे भले ही पीछे रह गया, लेकिन मेरा मन विचारों में डूबा हुआ था। हम जीवन में क्या हासिल करेंगे? क्या इस उम्र में संगीत को पूरी तरह से त्याग देना संभव है? क्या हम सिर्फ संगीत से ही अपना पेट भर सकते हैं?
वह इस रास्ते से पहले भी कई बार गुज़र चुका था। उसका ध्यान ट्रेन की आवाज़ पर, उसकी चरमराहट पर केंद्रित था, जब तक कि पूरी संरचना उसकी आँखों के सामने स्पष्ट नहीं हो गई। इसी वजह से, ट्रेन यात्रा के दौरान उसे कई नई लंबी पंक्तियाँ सूझीं। लेकिन इस बार, मन की वह एकाग्रता संभव नहीं थी। अपने माता-पिता की याद, गाँव की याद, इस बात की चिंता कि इसके बाद वह अपने खाने-पीने का क्या करेगा – यह सब ठीक नहीं था। लेकिन ऐसा क्यों होना चाहिए?

■

टिप्पुर से निकलने के बाद, जब वह बस से बिदारनहल्ली पहुंचा और वहाँ से चार मील पैदल चलकर होन्नाट्टी विद्याशाला पहुँचा तो उसे आश्चर्य हुआ। वहाँ पहुँचने पर उसने देखा कि भवन निर्माण का काम लगभग पूरा हो चुका था और अनुप और उसके दोस्त ज़मीन समतल कर रहे थे। एम.टेक की पढ़ाई के ज्ञान को याद करते हुए, उसने एक बार घर का निरीक्षण किया। अनुप ने घर को उस नक्शे से थोड़ा अलग बनाया था जो उसने पहले दिखाया था।
उन्होंने पूछा,
"अनुप, तुम्हारे पिछले नक्शे में कोई पत्थर के खंभे नहीं थे। तुमने अब छह खंभे क्यों जोड़ दिए हैं?"
अनुप ने उत्साहपूर्वक कहा,
``दीवारें मिट्टी की हैं। अगर हमें छत का पूरा भार इस पर डालना है, तो इसे मोटा रखना होगा। इसके अलावा, इसे सूखने के लिए पर्याप्त समय देना भी आवश्यक है। इसीलिए हमने ये पत्थर के खंभे लगाए। पहले से खंभे थे। अब सारा भार इन्हीं खंभों पर आ गया है। इसीलिए दीवारें भी पतली रखी गई हैं। ये जल्दी सूख गईं। अंदर की दीवारों पर भी जल्दी से प्लास्टर कर दिया गया।"
"लेकिन इतनी जल्दी?"
नींव का काम पूरा होते ही हमने बाकी सारा काम तुरंत शुरू कर दिया। हमने बीच में ज़रा भी समय बर्बाद नहीं किया। हमने बच्चों को तीन समूहों में बाँटा और बिना रुके काम जारी रखा। कल, नींव का काम पूरा होने के बाद, आप अंदर आ सकते हैं!
अनुप की आंखों में आत्मविश्वास की चमक थी कि अगर उसे कोई और काम सौंपा गया होता, तो वह उसे आसानी से पूरा कर लेता।
होन्नाटी बच्चों की अद्भुत कार्यशैली देखकर चकित रह गए। स्कूल के अन्य शिक्षकों से बात करने पर उन्हें पता चला कि अनुप ने हर काम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी - घर की योजना बनाने से लेकर नींव खोदने, महत्वपूर्ण बदलाव करने, लकड़ी का काम करने, खंभे लगाने, जमीन तैयार करने, छत बनाने - और हर काम में।
होन्नाटी को दृढ़ विश्वास था – इस विद्यालय के सभी बच्चे एक समान वातावरण में हैं, सभी को एक जैसी शिक्षा दी जाती है, सभी को हर बात वैज्ञानिक तरीके से समझाई जाती है। लेकिन अनुप, एक बार सीख लेता है तो तुरंत आत्मसात कर लेता है। उसका आत्मविश्वास अटूट है!
अगले दिन, सभी छात्रों ने अन्नाय्या से चार नारियल तुड़वाए, दरवाजे पर तोरण बनवाया और घर में तीन पत्थरों का चूल्हा बनवाया, उस पर दूध रखा और उसे भाप में पकने दिया। नारियल के टुकड़े प्रसाद के रूप में सबको बांटे गए। उत्साह से घर में प्रवेश किया गया। तंबू, चटाई, लोटा और कंबल लाकर वहां रखे गए। अनुप स्वयं सितार लेकर आया। उसने पूछा,
"सर, क्या यह मेरी मां का सितार नहीं है? मैंने इसे कभी नहीं सुना। मैं सुनना चाहता हूँ कि यह कैसा लगता है!"
मैं थोड़ी देर में खेलने बैठूंगा। लेकिन अब तुम्हारा स्कूल है, है ना?"
"ठीक है... मैं शाम को आऊंगा... या रात को..." उसने कहा और सभी बच्चों के साथ वापस चला गया।
रियाज़ा के लिए, उन्होंने एक ऊंचे चबूतरे पर चटाई और कंबल बिछाया और उस पर बैठकर होन्नाट्टी सितार बजाना शुरू कर दिया। पहाड़ पर बने मंदिर की तरह, यहाँ का वातावरण शांत है। पत्थर की दीवारों के कारण धुन अंदर गूंजती रहती है। यहाँ मिट्टी की दीवारें हैं - और ऊपर की देसी छत हवा को आने-जाने देती है। इस सब में मधुर धुन कहीं खो जाती है! लेकिन यह कोई बड़ा अंतर नहीं है। मन को एकाग्र रखना ज़रूरी है। दूसरी तरफ पानी बहता है। चारों ओर घनी झाड़ियाँ हैं।

नारियल के पेड़ हैं - और उससे दो फलांग आगे एक कॉलेज है। रियाज़ा के लिए इससे ज़्यादा शांत जगह और कहाँ मिल सकती है?
उन्होंने सितार को सुर में ढाला। जी हाँ... बोलकर! एक हफ्ते तक आपको तोड़ी के अलग-अलग रूप, अलग-अलग धुनें, अलग-अलग आलाप सीखने होंगे। नोटबुक की कोई ज़रूरत नहीं है। जैसे ही आप बजाना शुरू करेंगे, अगले सुर धीरे-धीरे स्पष्ट हो जाएँगे। कोई दिक्कत नहीं... धुन धीरे-धीरे समझ में आ रही है...
लेकिन एक घंटे बाद, उसे एहसास हुआ – पहाड़ पर मिलने वाला सुखद एकांत यहाँ असहनीय होता जा रहा था! क्या यह कोई नई जगह थी? तो फिर रविंद्र के घर पर यह समस्या क्यों नहीं उठी?
उन्होंने एक घंटे के लिए फिर से सितार उठाया – उन्हें अपने गुरु द्वारा सिखाए गए राग की मूल संरचना याद आ गई और उन्होंने बौद्धिक स्तर पर उसका अध्ययन किया! सहज गायन की प्रवृत्ति गायब हो गई।
वह काफी समय से इस बारे में सोच रहा था।
क्या तोड़ी राग मेरे स्वभाव के अनुकूल नहीं है? अगर मैं कोई दूसरा राग चुन लूँ तो कैसा रहेगा? लेकिन कौन सा? घर के बाहर बजाना बेहतर रहेगा। सितार को थैले में रखते हुए मैंने सोचा - मुझे इसे अच्छे से धोना होगा।
दरवाजा बंद करके, चप्पलें पहनकर, होन्नाटी चला गया। उसके कदम बांध की ओर बढ़ने लगे। क्या हमें पहाड़ों पर जाना चाहिए? हमारे सिर के चारों ओर मंडराने वाली मक्खियाँ धूप से झुलसी त्वचा की तरह हमारा पीछा करती हैं!
लेकिन आज ऐसा नहीं हुआ। उसकी बड़बड़ाती आवाज़ मुझे बहुत परेशान करने लगी। वह पसीने से भीगी हुई थी! मेरे सामने एक पहाड़ था। उस पर एक मंदिर था! एक ऐसी जगह जिसने मुझे तीन साल तक असीम आनंद और संतुष्टि दी थी!
मुझे पहाड़ पर चढ़ने का मन हुआ। वह जगह जहाँ मैं लगातार तीन साल, हफ्ते में छह दिन रहा। वह जगह जिसने मेरी कल्पनाशीलता को असीम रूप से बढ़ावा दिया। मैं अपने विचारों को सितार संगीत में ढाल पाया, बस यही तो वो जगह है! उस जगह... उस वातावरण का मुझसे और मेरी सितार की धुनों से कोई न कोई संबंध जरूर होगा! लेकिन संस्कृति विभाग... अब तो मानो परशुराम गौड़ा खुद तहसीलदार बन गए हैं! अब मुझे उस मंदिर में प्रवेश कैसे मिलेगा?
वह लगभग आधे घंटे तक पहाड़ को देखता रहा। पहाड़ पर स्थित मंदिर... वहाँ की हवा... पेड़ों की सरसराहट... मंदिर में बजते सितारों की आवाज़ें उसके मन में गूंज रही थीं। उसे अपने सिर पर सूरज की गर्मी महसूस हुई और वह होश में आकर वापस मुड़ गया।
यह समय है पहाड़ों पर जाकर वदेराया की पूजा करने का। शायद रास्ते में उनसे मुलाकात हो जाए। अगर मुलाकात हुई भी तो वे सिर झुकाकर बिना कुछ कहे चले जाएंगे। अगर मैं अपने असली रूप में भी उनके पास जाऊं तो भी वे बिना कुछ कहे चले जाएंगे... वदेराया के साथ ऐसा कभी नहीं होना चाहिए! उनका क्रोध शांत होने में चार-छह दिन और लगेंगे। तब मैं उनसे अपने असली रूप में बात कर पाऊंगा। तीन साल से वे मेरे लिए भोजन लाते रहे हैं और पहुंचाते रहे हैं... वो भी बिना किसी अपेक्षा के! ऐसे व्यक्ति के साथ संबंध बनाए बिना, यहां तक कि उनसे बात करने लायक भी रिश्ता रखे बिना मैं कैसे जी सकता हूं?
अंततः वह लौट आया। जब वह बांध पर पहुंचा और पीछे मुड़कर देखा, तो उसे एहसास हुआ... वदेरय्या उसे यहां नहीं देख पाएगा।
घर का ताला खोलने और थोड़ा आराम करने के बाद, उन्होंने फिर से सितार उठा लिया। उन्होंने रियाज़ा शुरू की, न तो उनमें कोई उत्साह था और न ही तारों को बजाने में कोई झिझक। हालांकि उन्हें लग रहा था कि उनका मन पहाड़ों जैसी पूर्ण तल्लीनता में नहीं था, फिर भी वे समझते थे कि इतना सोचने से रियाज़ा रोकना ठीक नहीं है। वे जानते थे कि वे अभी भी ऐसी अवस्था में हैं जहाँ वाद्य यंत्र पर

नियंत्रण पाने के लिए रियाज़ा आवश्यक है। इसलिए, उन्होंने किसी भी कारण से रियाज़ा को न रोकने का निश्चय किया, क्योंकि ऐसा करना व्यर्थ था।
उसके बाद, वह दिन में जितना संभव हो उतना समय इसी दृष्टिकोण से अभ्यास करने में व्यतीत करता था।
इस तरह तीन महीने बीत गए। इस दौरान होन्नाटी ने फैसला किया कि मुंबई जाकर गुरुजी से मिलने के दौरान वे रास्ते में मिराज में रुकेंगे और अगर कोई नया सितार तैयार हुआ तो उसे साथ ले आएंगे।

■

मुंबई जाने की योजना बनाते ही, रविंद्र एक दिन पहले ही वहाँ पहुँच गया। दोपहर तीन बजे पहुंचते ही, अपना हल्का भोजन और विश्राम समाप्त करने के बाद, अन्नय्या उसे नए संगीत विद्यालय ले गया। रविंद्र को देखकर होन्नाटी की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। रविंद्र ने पूछताछ भी की,
"रियाज़, तुम कैसे हो?"
"देखो ये कैसे हुआ, ये..." उसने कहा और सितार को अपनी गोद में रख दिया।
अन्नाय्या ने रविंद्र को नए घर की विशेषताओं, अनूप द्वारा सुझाए गए सुधारों और अपने द्वारा किए गए व्यवस्थित कार्य के बारे में विस्तार से बताया। अपने बेटे की प्रशंसा सुनकर होन्नाटी रविंद्र के चेहरे पर गर्व और संतुष्टि स्पष्ट रूप से देख सकते थे। उन्होंने यह भी बताया कि अनूप कितनी बार यहाँ सितार सुनने आते थे। बाद में होन्नाटी ने कहा,
"आपसे मुलाकात होना संयोगवश हुआ, ये सच है! अगर आप कल आते, तो मैं चौराहे पर बस का इंतजार कर रहा होता। मैं एक महीने के लिए मुंबई जा रहा हूं..."
"तुम्हारा सितार बैंगलोर पहुँच गया है! हम इसके बारे में बाद में बात करेंगे..." रविंद्र ने कहा और अन्नय्या से घर के निर्माण के बारे में फिर से बात करने लगे।
उस रात, खाना खाने के बाद, रविंद्र होन्नाटी के कमरे में सोने आया। रात में होन्नाटी अपनी पत्नी के साथ छात्रावास के कमरे में सोता था। नए घर में रात में उसका अकेले रहना सबके खिलाफ था।
अपने-अपने बिस्तरों पर लेटने के बाद, रविंद्र ने बात करते हुए कहा,
सच कहूँ तो, मुझे संगीत अभ्यास के बारे में ज़्यादा जानकारी नहीं है। फिर भी, मुझे लगता है कि आप एकांत में अलापी का अभ्यास कर सकते हैं। लेकिन अगर तबले का साथ न हो, तो लय का अभ्यास कैसे करेंगे? और अगर हो भी, तो क्या वह काफ़ी है? कहते हैं कि जब तबले के साथ सितार बजाते हैं, तो धुन अपने आप खिल उठती है। जब आप मुंबई जाते हैं, तो एक महीने तक रोज़ दो से तीन घंटे तबले के साथ सितार बजाते हैं, यह सच है! लेकिन बाद में? यह किसने बताया, देखते हैं क्या होता है?
होन्नाटी सोचने लगा। उसने याद करने की कोशिश की, लेकिन उसे याद नहीं आया।
"मिराज में सितारी मंगवाने के बाद, आपने करीम खान को अपनी अध्ययन विधि के बारे में बताया था, है ना? उस समय, धारवाड़ और हुबली से साली नाम का कोई व्यक्ति आपके साथ था, मुझे लगता है। उस समय, आपने वहाँ पुरानी सितारी पर थोड़ा बहुत बजाया था..."
"हाँ, बिलकुल सही! मैं तो इसके बारे में पूरी तरह से भूल ही गया था!" होन्नाटी को भी अब याद आ गया।
"उनका मानना है कि इस तरह से अध्ययन करने से आपके समग्र वादन में एक प्रकार का आराम आता है। मेरा भी मानना है कि आपको उनकी राय पर विचार करना चाहिए।"
होन्नाटी सोच में पड़ गया।

"मुझे नहीं लगता कि उनकी बातों में कुछ गलत है। मैंने खुद भी कई बार इस तरह का आराम महसूस किया है।"
मैंने जानबूझकर तुम्हारा नया सितार यहाँ नहीं लाया। मैं तुम्हें इसका कारण बताता हूँ। आजकल मैं बैंगलोर में अकेला रहता हूँ। मेरी पत्नी ने दिल्ली में एक कारखाना स्थापित किया है। तुम मेरे साथ बैंगलोर आओ और मेरे घर पर रहो। तुम वहाँ चौबीसों घंटे रियाज़ का अभ्यास करो, कोई आपत्ति नहीं करेगा। हमारे घर के पास एक तबला वादक हैं। उनका नाम कमलापुर है। वे धारवाड़ रेडियो स्टेशन में स्टाफ़ आर्टिस्ट थे। अब वे सेवानिवृत्त हो चुके हैं। उन्हें भी संगीत का अच्छा ज्ञान है। उनकी उंगलियों का जादू आज भी बरकरार है। मेरा बेटा बैंगलोर में काम करता है, इसलिए वह भी वहाँ आकर रहने लगा है। मैंने उनसे बात की है। उन्हें हर महीने एक सौ से डेढ़ सौ रुपये देने होंगे। मैं दे दूंगा। वे दोपहर तीन बजे मेरे घर आएँगे। उसके बाद हम चार घंटे तबले की संगत में अभ्यास करेंगे। सुबह हम अन्य अभ्यास कर सकते हैं। अगर तुम रात भर रियाज़ का अभ्यास भी करो, तो भी कोई बात नहीं! मैं सितार की धुन सुनते हुए चैन से सो जाऊँगा! देखो, मैंने सब कुछ तय कर लिया है। तुम्हें हां या ना कहने की भी आजादी नहीं है! तुम कल मुंबई जा रहे हो, है ना? वहां से सीधे बैंगलोर आ जाना।
उनका हृदय रविंद्र के प्रति कृतज्ञता से भर गया था, जिसने कुछ करने से पहले अपने मन की बात सोची और फिर उसका हल निकाल लिया।
उसने कहा,
"आपकी बात बिलकुल सही है! लेकिन अगर आप मुझे मुफ्त जगह देने की बात भी कहें, तो भी दूसरे खर्चे तो होंगे ही। मैं ब्याज से तबलाजी की फीस चुका दूंगा। लेकिन आपको यह मानना ही होगा!" बोलते समय उनकी आवाज़ में एक तरह का भाव आ गया था, मानो वह कोई मायने ही न रख रहे हों।
"ठीक है, हाँ! अब मैं दे दूँगा। क्या मैंने तुम्हें बताया नहीं था? जब तुम संगीत सभाएँ करके लाखों रुपये कमाने लगो, तो सारा पैसा ब्याज समेत मुझे लौटा देना। फिर क्या बात है? मुझे पता है तुम्हारी फिक्स्ड डिपॉजिट में कितना पैसा है और उस पर कितना ब्याज मिलता है। तुमने खुद मुझे बताया था। इस बीच, जब तुम मुंबई जाओ और वापस आओ, तो उसे पैसे से अपने गुरुजी को वहीं दे देना। बेहतर होगा कि तुम अपने पास एक जोड़ी डग्गा-तबला रख लो। अगर तुम कमलापुर को बताओगे, तो वे उसे तुम्हारे पास भिजवा देंगे।"
मुझे समझ नहीं आ रहा था कि होन्नाटी से क्या कहूँ।
बातचीत करते-करते रविंद्र सो गया। वह धीरे-धीरे खर्राटे लेने लगा। लेकिन होन्नाटी को नींद नहीं आई।
रविंद्र सुशिक्षित हैं, उन्हें पढ़ना बहुत पसंद है। अखबार के संपादक रहते हुए उन्होंने दुनिया का व्यापक अनुभव प्राप्त किया है। उन्होंने देश-विदेश में खूब यात्रा की है। उनका मानना है कि मुझ जैसे साधक की सहायता करना उनका धर्म है। यह अनुभूति उन्हें गहरी समझ से मिली है। लेकिन अनुपान, जो अभी तक पूरी तरह से विकसित नहीं हुए हैं, उन्होंने भी इस संगीत विद्यालय की स्थापना की! उनकी उम्र को देखते हुए इसे छोटी उदारता नहीं कहा जा सकता। अगर उन्होंने अपनी बुद्धि, कुशलता और मेहनत का योगदान न दिया होता, तो यह विद्यालय बन ही न पाता!
सचमुच, इन माता-पिता ने मेरे प्रति कितनी उदारता दिखाई है!
अन्नया द्वारा बनाई गई रविंद्र के दादा-दादी की तस्वीर उनके मन में बसी रही। इतनी उदारता तो तभी संभव थी जब उनके खून में वह खून बहता!
इस विचार से उनका मन कुछ शांत हुआ, और जल्द ही उन विचारों की जगह कमलापुर के एक तबला साथी के साथ अभ्यास करने का विचार आ गया, जिसे उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था।

■

६

कांति को पहले कभी यह एहसास नहीं था कि उसके अंदर इतनी अपार आंतरिक शक्ति है। शीतल जैसी सहयोगी और मित्र उसके जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। उसके पिता का अनुभव महत्वपूर्ण स्तरों पर उसका मार्गदर्शन करता था। जब भी आवश्यकता होती, वे देहरादून से आकर आवश्यक निर्देश देते थे। साथ ही, भारत में ट्रेंड्ज़ कंपनी के प्रतिनिधि समय-समय पर उचित तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करते थे। उसके पिता के पास हौज़ खास के पास एक भूखंड था, जो मज़दूरों द्वारा हड़प ली गई झुग्गी बस्ती के बगल में था। अगर वे इसे खाली छोड़ देते, तो निश्चित था कि इस पर जल्द ही अतिक्रमण हो जाएगा। इसलिए, अगर वे वहां एक अच्छा बंगला बनाना चाहते, तो आसपास की झुग्गी बस्तियों के कारण अच्छा किराया मिलना असंभव था।

उन्होंने अपनी बेटी को वही प्लॉट बेचने के लिए दस्तावेज़ तैयार किए और उस पर एक कारखाना बनवाया, जिसमें पचास सिलाई मशीनें, इस्त्री करने की जगह, पैकिंग, कार्यालय और कटिंग की जगह थी। बैंक ने कांति को पाँच लाख रुपये जमा पर ऋण भी दिया। इसके अलावा, ट्रेंड्ज़ कंपनी ने बाकी की अग्रिम राशि दी। कुल मिलाकर, कांति ने कारखाना अपनी कंपनी को किराए पर दे दिया। मूर्ति की कार्यकुशलता के कारण, सारा काम दो महीने में पूरा हो गया और तीसरे महीने में सिलाई मशीनें भी अपनी-अपनी जगह पर लगा दी गईं। श्रमिकों की नियुक्ति के बाद उत्पादन भी शुरू हो गया।

हालांकि उसे हर तरफ़ से समर्थन मिल रहा था, फिर भी उसे पूरा भरोसा हो गया था कि सारी ज़िम्मेदारी उसी पर है। शीतल सुबह आधे घंटे और शाम को एक घंटे के लिए कारखाने आती-जाती थी, लेकिन उसका असली काम सरकारी परमिट, लाइसेंस, मंजूरी, बातचीत आदि की पेचीदगियों को सुलझाना था। यह काम भी कम महत्वपूर्ण नहीं था। अमेरिकी कंपनी ट्रेंड्ज़ द्वारा दिए गए डिज़ाइन, कपड़ों के चयन, तैयार कपड़ों की तह और सुंदर पैकेजिंग का कड़ाई से पालन करने के बावजूद, उसे जल्द ही एहसास हो गया कि सरकारी विभाग में 1760 के कानूनों की बाधाओं को पोर किए बिना काम सुचारू रूप से नहीं चल सकता।

इन कामों को करवाने के लिए पैसे देने पड़ते थे। लेकिन फिर भी, काम जल्दी करवाने के लिए विभिन्न सरकारी दफ्तरों में जाना, दस्तावेज़ जमा करना और उन पर हस्ताक्षर व मुहर लगवाना आसान काम नहीं था। इसके लिए सरकार से संपर्क रखने वाले एक वरिष्ठ अधिकारी की ज़रूरत थी – और यही शीतल का असली काम था। शीतल अपना काम उतनी ही लगन से कर रही थी जितनी लगन से कांति उत्पादन का काम कर रही थी।

उत्पादन शुरू होते ही कारखाने के लिए टेलीफोन की सख्त जरूरत महसूस हुई। टेलीफोन कंपनी से बातचीत के बाद पता चला कि फोन मिलने में कम से कम आठ साल लगेंगे। लेकिन शीतल ने आठ दिनों के भीतर फोन मंगवा लिया। इसमें पैसा खर्च हुआ। लेकिन दूसरे उद्यमी इतना पैसा खर्च करने के बाद भी इतनी जल्दी फोन नहीं पा सके! इसलिए उनके काम को कम नहीं आंका जा सकता। जहां कांति कारखाने में बैठकर उत्पादन का जायजा ले रहे थे, वहीं शीतल अपने वातानुकूलित कार्यालय में बैठकर और अलग-अलग सरकारी कार्यालयों में जाकर उसी उत्पादन पर काम कर रही थीं।

इन सब के परिणामस्वरूप, महज दो महीनों के भीतर ही उनका उत्पादन अपेक्षित मात्रा में होने लगा। थोड़े ही समय में, कांति ने अपना काम करवाने के लिए अलग-अलग लोगों से बातचीत करने का तरीका सीख लिया।

कांति का दिल्ली में बसने का सपना सच हो गया था। फैक्ट्री की इमारत उसकी हो गई थी। इसके लिए उसके पिता ने दो साल का किराया भी तय कर दिया था। किराया बैंक में जमा किया जाता था और लिया गया ऋण और उस पर ब्याज चुकाया जाता था। दस साल में दोनों का भुगतान हो जाएगा और इमारत पूरी तरह से कांति की हो जाएगी। कांति को कंपनी से इमारत के किराए के रूप में प्रति माह आठ हजार रुपये मिलते थे। उसके पास आने-जाने के लिए कंपनी के नाम पर एक कार थी। कंपनी में उसकी हिस्सेदारी इतनी ज़्यादा थी कि बैंगलोर के लोग इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते थे! हालाँकि वह पहले कार चला सकती थी, लेकिन इस बीच उसकी आदत छूट गई थी। लेकिन अब वह दिल्ली की सड़कों पर फिर से आत्मविश्वास से गाड़ी चला रही थी।
जब उसके माता-पिता देहरादून में बस गए, तो यह सवाल उठा कि उसे कहाँ रहना चाहिए। अपने भाई और बहनोई के साथ रहना असंभव था। उसने एक घर किराए पर लेने के बारे में सोचा। उसकी माँ भी सहमत हो गई। उसके भाई ने अपनी सलाह दी –
"यह बहुत बड़ा घर है। फ़िलहाल ऊपर की जगह इस्तेमाल करने में कोई दिक्कत नहीं है। बाहर से सीढ़ियाँ भी हैं। जब तुम्हारा भाई यहाँ आएगा, तो बाद में तुम अपने मनपसंद मोहल्ले में जगह ले सकते हो। तुम यह भी तय कर सकते हो कि उस समय बना हुआ घर खरीदो या ज़मीन खरीदकर अपना मनपसंद घर बनाओ।"
कांति और उसकी मां को पूरा यकीन था कि उसने अपनी पत्नी से चर्चा किए बिना यह प्रस्ताव नहीं रखा होगा। मां ने यह भी कहा,
मुझे लगता है आपको भी ऐसा ही करना चाहिए। आप काम के सिलसिले में ज्यादातर समय घर से बाहर रहेंगे। इस तरह आप घर पर नजर नहीं रख पाएंगे। इसके अलावा, रात में किसी महिला के साथ अकेले रहना मतलब... यह वही घर है जिसे आपके माता-पिता ने बनाया है!
कांति इस बात पर सहमत हो गई। माँ ने आगे समझाया,
सुबह जल्दी आकर सफाई, झाड़ू-पोछा और खाना पकाने वाली नौकरानी ढूंढ लो। उसे रात में आकर खाना पकाने के लिए कहो। खाना पकाने और घर के कामों में बेवजह दखल मत दो। – दो साल के भीतर मैं अपनी इच्छा अनुसार घर बना लूंगी। अपने दिल की इच्छा के अनुसार – यानी मैं एक मोटा-मोटा खाका बनाऊंगी और निरंजन उससे अंतिम खाका तैयार करेगा।
कांति को बेचैनी होने लगी थी यह देखकर कि पापा को अब भी लगता था कि दामाद का तबादला दिल्ली हो जाएगा और वह उसे अपने साथ ले आएगा। हालांकि, मम्मी को इस बात पर थोड़ा शक जरूर रहा होगा। आखिर, ऐसी बातों की बारीकियों को महिलाएं पुरुषों से बेहतर समझती हैं!
कांति को पापा के सत्तरवें जन्मदिन पर यहाँ आए सात महीने हो गए थे। इन सात महीनों में वो अपने दामाद से एक बार भी मिलने नहीं आई थीं! उनकी उम्र तो सिर्फ पैंतालीस साल थी। ये तो ज़्यादा उम्र नहीं है। क्या उन्हें कम से कम इस उम्मीद के लिए तो आना चाहिए था? मैं भी वहाँ नहीं गई। अगर उन्होंने हवाई जहाज़ से जाने को कहा होता, तो पैसों का सवाल ही नहीं उठता। क्या माँ को ये सब पता होता? मर्दों के साथ तो बात ही अलग है। उन्होंने पापा से बड़े ही घमंडी लहजे में कहा, "मैं कुछ तो समझ ही जाऊँगी," ताकि वो उनकी बात मान लें। एक बार जब पापा ने दिल्ली में पूछताछ की, तो उन्होंने उन्हें बताया।
समाचार संपादक और सहायक संपादक छुट्टी पर हैं। उनका सारा काम उन्हीं पर है। इसीलिए वे गांव छोड़कर नहीं जा सकते। अखबार के प्रकाशन में एक दिन की भी देरी संभव नहीं है।
पिताजी को यह बात समझ आ गई थी।
लेकिन उसी समय, मेरी माँ ने मुझसे एक बार पूछा,

"क्या, जी? तुम्हारे पोते को तुम्हारा कारोबार कुछ खास पसंद नहीं है, है ना?"
"मम्मी, आप किसी की पसंद-नापसंद के कारण इतने अच्छे व्यवसाय को कैसे छोड़ सकती हैं?" उसने जानबूझकर अप्रत्यक्ष रूप से अपनी माँ से यह सवाल किया।
रत्नाम्मा को उसके शब्दों का अर्थ समझ में आ गया। उसने इस बारे में कुछ नहीं कहा। उस रात, जब वह खाना बना रही थी, उसने फिर से इस विषय को उठाया।
"साफ-साफ बताओ, चलो देखते हैं! अगर उन्हें पसंद नहीं आया, तो तुमने इतना हंगामा क्यों किया? अगर तुमने पापा द्वारा दिए गए पैसे सीधे बैंक में जमा किए होते, तो तुम्हें हर महीने चार-पाँच हजार रुपये मिलते। घर उनकी तनख्वाह से चलता और तुम ये पैसे मनचाहे खर्च कर सकती थीं! पति-पत्नी साथ रहते!"
इसके बाद, उसके लिए अपनी माँ से कुछ भी छिपाना नामुमकिन हो गया। क्यों छिपाना? छिपाने में मेरी क्या गलती थी? उसने अपनी माँ को बेंगलुरु में अपने परिवार की गरीबी के बारे में बताना शुरू किया। साथ ही, उसने अनूप के स्कूल और वहाँ के उसके मुश्किल जीवन के बारे में भी विस्तार से बताया। उसने यहाँ आते समय थर्ड क्लास में सफर करते हुए झेली कठिनाइयों के बारे में भी बताया और यह भी बताया कि हवाई यात्रा के लिए पैसे न होने के कारण उसके पति और अनूप 70वें जन्मदिन की पार्टी में शामिल नहीं हो पाए थे।
फिर उसने संयम से कहा,
इसके बाद मैं अपने अनूप को उस कीचड़ भरे स्कूल में मेहनत नहीं करने दूंगी। मैं उसे दून, कोडाइकनाल या ग्वालियर के किसी अच्छे स्कूल में दाखिला दिलवाऊंगी! मेरी तनख्वाह से यह मुमकिन नहीं है, इसीलिए मैं आपको गांधीवादी सिद्धांत बता रही हूं! मेरी जिंदगी में जो भी हो, सो हो। कम से कम मेरा बेटा खुशहाल जिंदगी जिए, इसीलिए मैं आखिरी दम तक काम कर रही हूं! अगर मैं उससे यहां तबादला करने को कहती हूं, तो वो कहता है – बैंगलोर में फैक्ट्री शुरू कर दो! बताओ, क्या ये मुमकिन है? फिर देहरादून से पापा मेरी मदद कैसे करेंगे? ऐसे धंधे में तो हर सुबह विदेश मंत्रालय से संपर्क करना पड़ता है। क्या बैंगलोर में रहना मुमकिन होगा? अगर मैं बैंगलोर में फैक्ट्री लगाऊं तो क्या शीतल मेरी पार्टनर बनेगी? वो अड़ियलपन दिखा रहा है ताकि उसीका बेटा आगे न आए, तो मैं उसका क्या करूं?
मां को बेटी की बात समझ आ गई। दरअसल, रत्नाम्मा ने ही उसकी शादी का विरोध किया था। उन्होंने तो यहाँ तक कह दिया था कि बड़ी बेटी की शादी एक इंजीनियर से करना, जो कि अच्छी-खासी आमदनी वाला इंजीनियर है, और छोटी बेटी की शादी एक पत्रकार से करना, जिसकी कोई आमदनी नहीं है, अन्याय है। लेकिन उस समय उसके पति ने उनकी बात नहीं सुनी थी।
हाल ही में अखबार कर्मचारियों का वेतन भी बहुत बढ़ गया है। चुप रहो, देखते हैं! आगे चलकर इनकी तनख्वाह इंजीनियरों से भी ज्यादा हो जाएगी। लड़का तो होशियार है! देर-सवेर संपादक जरूर बनेगा।
वह संपादक तो बन गया – लेकिन इसका क्या फायदा?
फिर भी, उन्हें पति-पत्नी का इस तरह अलग रहना पसंद नहीं आया। उन्होंने सुझाव दिया,
क्यों न, आप चार दिन के लिए वहाँ जाइए और वापस आ जाइए। उसे भी समझाइए। उससे कहिए – मैं यह सब आपके और आपके बच्चे के लिए कर रही हूं। ऐसी बेतुकी बातों से पति-पत्नी के बीच दुश्मनी और बढ़ जाती है! रिश्ता तभी सुधर सकता है जब कोई एक हार मानकर पहल करे। मेरी बात सुनिए... आप जाइए और वापस आ जाइए। अगर एक बार जाने से बात नहीं बनी, तो दूसरी बार जाइए। फिर तीसरी बार, वह भी आपकी तरह ही आएगा।

वह अपनी माँ की बातों से नाराज़ थी। मैं एक स्त्री हूँ, इसलिए मुझे ही सहना चाहिए, और वो ऐसा कह रही है। वह इसी मुद्दे पर अपनी माँ से बहस करना चाहती थी। लेकिन मन में कड़वाहट लिए वह चुप रही। साथ ही, वह जानती थी कि ऐसे विषय पर अपनी माँ से बहस करना अपने पिता के साथ अन्याय करने जैसा होगा। पिता ने कभी भी उसकी माँ को जीवन में किसी चीज़ की कमी महसूस नहीं होने दी थी। अगर दुनिया के सभी पुरुष हमारे पिता जैसे होते, तो महिलाओं को किसी भी तरह से लड़ने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती! इसके अलावा, वह अपनी माँ से हर बात नहीं कर सकती। इसीलिए शीतल उसकी सच्ची दोस्त है! जो रवैया हम सब महसूस करते हैं, वो उसकी माँ की पीढ़ी की महिलाओं के लिए महसूस करना नामुमकिन है। इसलिए, बिना कुछ कहे, वह चुपचाप खाती रही।
अगले दिन मम्मी और पापा देहरादून के लिए रवाना हो गए। उसने सोचा कि अगर मम्मी ने दोबारा इस विषय को नहीं उठाया, तो यही काफ़ी होगा।
जैसे ही वह कार चलाकर कारखाने की ओर बढ़ी, उसे शीतल के शब्द याद आ गए। वह बार-बार दोहराती रही,
जब आप स्वतंत्र रूप से कमाना शुरू कर देती हैं, तो पति के प्रति आपका नजरिया निश्चित रूप से बदल जाता है। आप अपने लिए कमाना शुरू कर देती हैं। अगर आप कमाना शुरू कर देती हैं, तो आप कह सकती हैं, 'मैं अपने पति को चार पैसे दूंगी,' और इस तरह आप आर्थिक रूप से अच्छी स्थिति में आ जाती हैं। उनकी मदद जरूर करें। अगर इसके बाद भी आपके मन में उनके लिए प्यार बना रहता है, तो यह सच्चा प्यार है! अन्यथा, यह केवल आर्थिक निर्भरता है!
यह सच है! मुझे अब अपने पति की याद आती है... लेकिन गुस्से और नफरत से! प्यार से नहीं! मैं ऐसे पति से कैसे प्यार कर सकती हूँ जो मुझसे ज़रा भी बात नहीं करता, जो अपनी पत्नी और बच्चे को गरीबी में रखता है, बताओ! शादी के बाद हम चार दिन तक प्यार भरी बातें करते थे! पत्रकार! भाषा पर बोलने का क्या मतलब? मेरी माँ ने कहा कि मुझे उससे मिलने जाना चाहिए। लेकिन मैं क्यों जाऊं? मैंने क्या गलती की है? इतने दिनों में उसने मुझसे एक शब्द भी नहीं पूछा, 'तुम्हारा कारोबार कैसा चल रहा है?', या मेरी समृद्धि देखकर अपनी खुशी ज़ाहिर की - या मुझे दो शब्दों में बधाई दी! क्या इस धरती पर कभी कोई ऐसा पति पैदा हुआ है जो अपनी पत्नी को कमाते हुए देखकर खुश होता हो - खुद से ज़्यादा कमाते हुए? क्या इसके बाद कभी कोई ऐसा पति पैदा होगा?
शीतल ने कितनी सही बात कही है!

■

एक दिन शाम आठ बजे शीतल और कांति कारखाने के एक केबिन में बैठे थे। उस केबिन की सभी दीवारें काँच की बनी थीं। केबिन में बैठकर कारखाने के हर मजदूर पर नज़र रखी जा सकती थी। हालाँकि मजदूर अंदर सब कुछ देख सकते थे, लेकिन बाहर से कोई आवाज़ कमरे तक नहीं पहुँच सकती थी।
सभी कारीगर जा चुके थे। केवल चौकीदार ही बाहर था। उन दोनों के जाने के बाद, शटर खींचना, दरवाजे बंद करना, उन पर तीन-चार ताले लगाना और पूरी रात पहरा देना उसी का काम था। सरकार को प्रस्तुत किए जाने वाले एक खाते के दस्तावेज़ को देखने के बाद शीतल ने कहा,
"चाहे कोई कितना भी कुशल क्लर्क या कंप्यूटर विशेषज्ञ क्यों न हो, हर बदलती सरकार के बदलते नियमों के साथ तालमेल बनाए रखने के लिए एक विशेष प्रकार की बुद्धिमत्ता की आवश्यकता होती है।"
कांति ने उनके शब्दों के महत्व को समझते हुए कहा,
"लेकिन सरकार इतनी बार नियमों में बदलाव क्यों करती रहती है?"
"काम करते समय आपको सिरदर्द हो सकता है। लेकिन पूरे देश को चलाने वाली सरकार को तो और भी बहुत सी चीजों के बारे में सोचना पड़ता है!" शीतल ने

सरकारी कर्मचारी होने के नाते इस बात का समर्थन किया।
"रिश्वत को रंगे हाथों पकड़कर वसूलना, है ना?" कांति ने पूछा, पिछले आठ महीनों में खातों और 1760 दस्तावेजों के इस जटिल जाल से परिचित होने के बाद।
लेकिन शीतल को यह सवाल बिलकुल पसंद नहीं आया। उसने कहा,
क्या मैंने आपको नहीं बताया था? उद्यमियों के अपने हित होते हैं। लेकिन राजनीति एक अलग मामला है। उन्हें बहुत सी चीजों के बारे में जानकारी रखनी पड़ती है। ऐसा नहीं है कि उन्हें व्यापारियों और उद्यमियों को ये सब बातें समझानी पड़ती हैं।
कांति ने इस बारे में कुछ नहीं कहा। क्योंकि शीतल सिर्फ उसकी दोस्त ही नहीं, बल्कि उसकी साथी भी थी। कांति को पूरा यकीन था कि ऐसे समय में किसी भी बात पर ज्यादा जोर देना ठीक नहीं होगा।
"चलो कहीं खाना खा लेते हैं। रात को घर आकर अकेले खाना खाते-खाते मैं थक गई हूँ। कल मैं नौकरानी को अपना बनाया हुआ खाना दे दूंगी..." शीतल ने सुझाव दिया।
चौकीदार से दरवाजे बंद करने को कहकर दोनों वहां से निकल गए। उन्होंने कार ली और ग्रेटर कैलाश स्थित हडसन क्लब गए। उन्होंने कांच का दरवाजा धक्का देकर खोला और अंदर वातानुकूलित हॉल में प्रवेश किया। जैसे ही उन्हें ठंडी हवा का एहसास हुआ, दीवार पर लगे पोस्टर पर मियामी बीच पर धूप सेंकते नग्न लोगों, मैनहट्टन की गगनचुंबी इमारतों और ह्यूस्टन के रॉकेट रॉकेट की तस्वीर उनकी नजर में आ गई और उनकी आपस में बातचीत अनायास ही अंग्रेजी में बदल गई। उनका अंग्रेजी लहजा भी दिल्ली के पंजाबी लहजे से बदलकर अमेरिकी लहजे जैसा हो गया। उनकी आवाज भी धीमी हो गई और वे ऐसी आवाज में बोलने लगे जिसे केवल वे दोनों ही सुन सकते थे।
अरे कांति – सामने की दीवार देखो! हमें सच में मियामी बीच पर कम से कम आठ दिन रुकना चाहिए! देखो! वैसे, हमारा अमेरिका के साथ निर्यात का व्यापार है। हम आसानी से व्यापारिक यात्रा के बहाने विदेशी मुद्रा प्राप्त कर सकते हैं। कर मुक्त! यात्रा का खर्च कंपनी उठाएगी! सच है या नहीं?
"इस उम्र में, समुद्र तट पर रेत पर नग्न लेटना? ओह! मैं पकड़े जाना नहीं चाहती!"
"हूँ! तो तुम अकेले सोना नहीं चाहती! है ना?" शीतल ने उसका मज़ाक उड़ाया। उसने आगे कहा, "जब कोई महिला मियामी बीच पर अकेली दिखती है, तो पुरुष पूछते हैं कि क्या उसे किसी की संगति चाहिए, और अगर कोई पुरुष अकेला होता है, तो महिलाएं भी पूछती हैं! उस धुंधले वातावरण में कोई अकेला नहीं रह सकता! कोई किसी को मजबूर नहीं कर रहा है। लेकिन भीतर से, अकेलेपन के खिलाफ विद्रोह चल रहा है!"
स्टोनवॉश जींस पहने और सीने पर हडसन लिखा हुआ एक लड़की मेन्यू कार्ड लेकर आई। शीतल ने पूछा,
``शराब पीने का क्या फायदा..."
नहीं। मैं यहाँ से सीधे घर जाना चाहता हूँ। अगर रात में अचानक गेट पर रजनी से मुलाकात हो जाए और उसे इसकी गंध आ जाए तो क्या होगा?...
"बेवकूफी मत करो! खाने से पहले शराब की खुशबू नहीं आती। शराब और व्हिस्की में फर्क होता है..." उसने दो गिलास शराब मंगवाते हुए कहा।
फिर उसने कांति से कहा,
खाना ऑर्डर करते समय आपको बहुत सावधान रहना होगा! आज नहाते समय मैंने देखा – आपका वजन आधा किलो बढ़ गया है! बिलकुल पाँच सौ ग्राम! इस उम्र में आधा किलो वजन कम करना बहुत मुश्किल है! आप बहुत अच्छा कर रही हैं! आपका शरीर तो पहले से ही कमजोर होने लगा है! और आपके बाल! ओह! एक भी बाल सफेद नहीं हुआ! मुझे आश्चर्य है कि मैं कब पूछूँगी – क्या आपकी माँ अपने बालों को रंगती हैं?

"बिलकुल नहीं!" कांति ने गर्व से कहा।
अरे वाह! दुनिया का नौवां अजूबा! जब उनके बाल इतने काले हैं, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है कि उनकी बेटी - और तुम, दूसरी बेटी - के एक भी बाल सफेद नहीं हैं? हम चाहे कितनी भी कोशिश कर लें, इनमें से कई चीजें पीढ़ियों से चली आ रही हैं। तुम बहुत भाग्यशाली हो!
कांति गर्व और खुशी से भर गया था।
शीतल ने आगे कहा,
अगर बालों को बदलना संभव होता, तो मैं आपके बाल लिए बिना आपको नहीं छोड़ता। बाल प्रत्यारोपण क्यों न आजमाया जाए? या फिर हमें कोई ऐसी दवा खोजनी चाहिए जो बचपन में एक बार देने पर बुढ़ापे तक बालों को सफेद होने या झड़ने से रोक सके...?
शैम्पेन आ गई। शीतल ने बिना ज्यादा सोचे समझे एक किंग साइज पिज्जा ऑर्डर कर दिया। वेटर्स के ऑर्डर लेकर जाने के बाद शीतल ने कहा,
"देखो! वजन बढ़ने की चिंता में मैंने फिर से पिज्जा ऑर्डर कर दिया! तुम्हें पता है इसमें मौजूद पनीर की वजह से मेरा वजन कितना बढ़ जाएगा? मैं कल नाश्ता नहीं करूंगी और दोपहर के खाने में दो नमकीन बिस्कुट और बिना चीनी वाली कॉफी पीऊंगी। इस पिज्जा के खास स्वाद के लिए मुझे इतना खर्च करना पड़ता है! है ना? तुम तो किस्मतवाली हो! चाहे कुछ भी खाओ, तुम्हारी फिगर की कोई परवाह नहीं! इसीलिए बहल तुम पर इतनी मेहनत करता है! मैं तुमसे बहुत जलती हूं, सच में!" शीतल ने आँख मारी।
बहल, विदेश व्यापार सचिवालय में शीतल से भी ऊंचे पद पर था। शीतल का बहल की ओर आकर्षित होना कांति के लिए कोई नई बात नहीं थी। उनका कारोबार निर्यात से जुड़े कई दस्तावेजों पर बहल के हस्ताक्षरों की वजह से ही चल रहा था। व्यापार तीन गुना भी बढ़ जाए, तो भी बहल के हस्ताक्षर की जरूरत तो पड़ेगी ही। उसके बाद तो उन्हें किसी उच्च अधिकारी के पास जाना ही पड़ेगा। बेशक, कांति यह भी जानती थी कि इस मामले में भी बहल से बचना नामुमकिन था।
शीतल के साथ संदेश भेजने के सिलसिले में ही उनकी मुलाकात शीतल से हुई थी। बेहद सौम्य और आकर्षक स्वभाव के, लगभग चौवालीस से पैंतालीस वर्ष की आयु के, हमेशा विदेशी कपड़े पहने, कलाई पर आधुनिक जापानी घड़ी बांधे, एक बड़े अधिकारी की तरह ठाठ-बाठ से रहने वाले। उनका कार्यालय शीतल के कार्यालय से बड़ा था और भव्य साज-सज्जा से सुसज्जित था। फर्श पर एक बहुत ही महंगा कालीन बिछा था जो दीवार से दीवार तक फैला हुआ था।
पहली मुलाकात में उन्होंने औपचारिक रूप से विदाई ली थी, लेकिन विस्तृत बातचीत के बाद। उसके बाद शीतल ने उन्हें विभिन्न कार्यों के लिए अपने कार्यालय भेजा था। मुंबई-कलकत्ता-अहमदाबाद से उनसे मिलने आए लोग बाहर पुराने सोफे पर बैठे इंतजार कर रहे थे। उनके चार सहायक कर्मचारी थे। अक्सर, चूंकि उनके पास खुद मिलने का समय नहीं होता था, इसलिए वे बाहर इंतजार कर रहे लोगों से बिना मिले ही उन्हें भेज देते थे। लेकिन चूंकि शीतल कांति को उनकी मुलाकात के समय पहले बुलाती थीं, इसलिए कांति को कभी इंतजार नहीं करना पड़ता था। जब वह जातीं, तो सहायक कर्मचारी हल्की मुस्कान के साथ खड़े होकर सम्मान दिखाते। वे केबिन में उनसे ऐसे मिलते जैसे वे भी उनका इंतजार कर रहे हों! अगर अंदर कोई होता, तो सहायक कर्मचारी बहुत ही विनम्रता से अनुरोध करते।
"महोदया, महोदय, मैं किसी से बात कर रहा हूँ। क्या आप कृपया एक पल प्रतीक्षा कर सकते हैं?"
और उसके लिए उसके अपने केबिन में एक कुर्सी पर बैठने की व्यवस्था करें।

जब कांति दूसरी बार उनसे मिलने गई, तो बहल अपनी कुर्सी से थोड़ा उठे और बड़े स्नेह से उनका हाथ मिलाया। इसके बाद भी, उनका हाथ छोड़े बिना, उन्होंने उन्हें वहाँ रखे भारी सोफे पर बिठाया और खुद उनके बगल में बैठ गए। उन्होंने पूछा,
आप क्या कह रहे हैं, व्यापार जगत?
"यह तो अभी शुरुआत है! इस समय मैं क्या कह सकता हूँ?"
“इसमें क्या है? अगर आप चाहें तो मैं आपको बताता हूँ! फाइल देखकर नहीं – हाथ देखकर! क्या आप जानती हैं कि मैंने हस्तरेखा शास्त्र का कितना अध्ययन किया है? अगर मैं आज यहाँ सब कुछ छोड़कर अभ्यास करना शुरू कर दूँ, तो मैं आसानी से अभी की कमाई से दस गुना ज़्यादा कमा लूँगा! राजनेता, मंत्री, करोड़ों रुपये के व्यापारी, फ़िल्म इंडस्ट्री के लोग लाइन में लग जाएँगे! मैं क्या करूँ? मेरी किस्मत – यही तो है कि मैं यहाँ इन फाइलों से घिरा हुआ हूँ...” उसने उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा। उसकी हथेली को ध्यान से देखते हुए, उसने कहना शुरू किया, “इस धन रेखा को देखो, कितनी मजबूत है! आपने अपने जीवन में कभी गरीबी नहीं झेली। लेकिन अब यह कितनी मजबूत हो गई है, देखो! अपना हाथ आगे बढ़ाओ, चलो देखते हैं... आह... इसे हथेली की तरह बनाओ। इस धन रेखा को देखो... यह नदी की तरह सीधी जा रही है!...” उसने बहुत ही कोमल मुस्कान के साथ कहा और अपने हाथ से उसकी हथेली को थपथपाते हुए पूछा, “आप क्या लेंगी? चाय या कॉफी?”
मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं तो बस इसे लेकर आया हूँ..."
"बिना चीनी वाला? अगर आपको खान-पान से जुड़ी कोई समस्या है, तो आप चाहें तो बिना चीनी वाला मांग सकते हैं। लेकिन कोई दबाव नहीं है। मुझे आपके पारिवारिक पृष्ठभूमि की समझ नहीं है। आपने ऐसा क्यों पूछा? मुझे बताइए, अगर आप अकेले रहना चाहते हैं और अपना व्यवसाय संभालना चाहते हैं, तो इसमें कोई शक नहीं कि आपकी शिक्षा का स्तर ऊंचा होना चाहिए, मुझे बताइए!"
संक्षेप में, उसने उसके ठिकाने के बारे में पूछताछ की और पता लगाया कि उसका पति गाँव में नहीं है। इतना ही नहीं, उसने चतुराई से उससे यह भी पता लगा लिया कि वह बैंगलोर में है। पैंतीस मिनट की उस मुलाकात में ये सब हो जाने के बाद, उसने फाइल अपने हाथ में ले ली।
“मुझे आपके द्वारा तैयार किए गए दस्तावेज़ दोबारा क्यों देखने चाहिए? मैं अपनी हथेली की रेखाओं को देखे बिना ही बता सकता हूँ कि धोखाधड़ी वाले लेन-देन और लेखांकन अनियमितताओं के पीछे कौन है! ऑर्डर तुरंत तैयार हो जाएगा... आप इसे ले जाइए...” उसने हस्ताक्षर किए, दोबारा हाथ मिलाया और पीछे मुड़कर अलविदा कहा।
उसी क्षण कांति समझ गई कि उसके मन में क्या चल रहा है। उसने शीतल को उस दिन हुई सारी घटना बता दी। सब कुछ सुनने के बाद शीतल ने कहा,
"वे बातचीत करने और व्यवहार करने में बहुत खुले हैं। उन्होंने मेरे दोस्त की तरह अधिक स्नेह दिखाया है, बस इतना ही। बड़े-बड़े व्यवसायी उनके एक-दो मिनट का समय पाने के लिए पांच सितारा होटलों में कमरे बुक करते रहते हैं... क्या आप जानते हैं? आपको पता ही नहीं कि बदमाश क्या होता है!"
उसकी बात सुनकर कांति उसके प्रति भय, सम्मान और जिज्ञासा से भर गया।
उस घटना के बाद दो और बैठकें हुईं। बाद की बैठकों में, खुलकर बातचीत करते हुए, बहल ने अपने निजी मामलों का भी ज़िक्र किया – चाहे संयोग से हो या जानबूझकर, कौन जानता है! बोलते-बोलते उन्होंने पूछा,
आपके कितने बच्चे हैं?
"एक। मेरा एक सोलह साल का बेटा है!" कांति ने कहा।
बहल का चेहरा आश्चर्य से चमक उठा। उन्होंने कहा,

"सच में? झूठ मत बोलो। असंभव! तुमने अभी तक दहलीज़ पार नहीं की है, इसलिए अगर तुम चाहो तो मैं सौंदर्य की देवी की कसम खाने को तैयार हूँ!"
कांति को महसूस हुआ कि उसका चेहरा लाल हो रहा है और उसके कान के निचले हिस्से गर्म हो रहे हैं।
फिर उसने पूछा,
तो क्या हुआ? बेटे के जन्म के बाद तो आपने ट्यूबेक्टॉमी करवाई ही होगी! पढ़े-लिखे परिवार की बात हो तो...
कांति ने बिना ज्यादा सोचे-समझे कहा,
``हो... "
"बिलकुल ठीक है! मेरा मतलब है, इसमें कोई बुराई नहीं है! आजकल अगर किसी महिला के एक से ज़्यादा बच्चे होते हैं, तो उसकी शारीरिक शक्ति बिलकुल नहीं बढ़ती। इतना ही नहीं, अगर उसे परिवार नियोजन के लिए कुछ और इस्तेमाल करने को कहा जाए, तो यह उसके साथ अन्याय है। उसे अपनी खुशियाँ पाने में भी बाधाओं का सामना करना पड़ता है। मैं महिलाओं की स्वतंत्रता में पूरी तरह विश्वास करती हूँ! प्रकृति ने पुरुष-महिला संबंधों की सारी ज़िम्मेदारी महिला पर डाल दी है। यह प्रकृति द्वारा उसके साथ किया गया घोर अन्याय है! नसबंदी करवाना प्रकृति का सही जवाब है - पुरुषों को भी यह ऑपरेशन करवाना चाहिए। मैंने भी करवाया है। अरे, हमेशा सारी ज़िम्मेदारी महिला पर ही क्यों डालनी चाहिए? उसे हमारी वजह से क्यों भुगतना पड़े? क्या? सच है या झूठ? मुझे खुशी है कि आप भी इस मामले में आगे की सोच रखते हैं!..."
कांति ने इस बारे में कुछ नहीं कहा था। बाद में, जब उसने शीतल को पूरी सच्चाई बताई, तो उसने सुझाव दिया कि उसे उससे बात करते समय इस विषय को नहीं उठाना चाहिए था।
लेकिन शीतल ने कहा,
इसमें क्या गलत है? इतनी शिक्षा प्राप्त करने के बाद, ऐसे किसी भी विषय पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से चर्चा करने में क्या समस्या है? आप दोनों वयस्क हैं। आजकल आधुनिक पुरुष और महिलाएं इस विषय पर आपस में चर्चा करते हैं, यहां तक कि मजाक भी करते हैं। इससे उनके व्यवहार में एक प्रकार की सहजता आती है। इससे एक प्रकार का आनंद भी मिलता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि वे तुरंत एक-दूसरे के साथ शारीरिक संबंध बना लें! यदि चर्चा वैज्ञानिक स्तर पर हो रही है, तो मुझे इसमें कुछ भी आपत्तिजनक नहीं लगता!
कांति को समझ नहीं आ रहा था कि आगे क्या कहे। उसे दिल्ली के मौजूदा माहौल का कोई अंदाजा नहीं था। इतना ही नहीं, उसने पहले कभी किसी से इस तरह बात नहीं की थी। यहाँ तक कि वह ऐसे लोगों से कभी मिली भी नहीं थी।
शैम्पेन की घूंट लेते हुए, उसने बातचीत के शोरगुल के बीच अपनी आवाज धीमी कर ली और शीतल बहल के बारे में बात करना शुरू कर दिया।
देखिए, हमारी कंपनी को कारोबार करते हुए एक साल हो गया है। विदेशी संबंधों पर निर्भर रहने वाली कोई भी कंपनी एक साल से कारोबार कर रही है, और बहल को समीक्षा रिपोर्ट देनी चाहिए थी। क्या इस कारोबार से देश को वाकई फायदा हुआ है? अगर हां, तो कैसे? अगर नहीं, तो क्यों? इस तरह की रिपोर्ट। उन्होंने एक बार नकारात्मक टिप्पणी की, और लाइसेंस हमेशा के लिए रद्द कर दिया जाएगा। बहल इतने अच्छे इंसान हैं। उनका किसी को जानबूझकर नुकसान पहुंचाने का कोई इरादा नहीं है। वे ऐसा कुछ नहीं करेंगे। उन्होंने आपकी दोस्ती की इच्छा जाहिर की है। वे ऐसे आगे आए हैं जैसे गुलाबों का गुलदस्ता दे रहे हों। अगर आप पहल करने वाले किसी व्यक्ति के स्नेह को ठुकरा देते हैं, तो क्या यह स्वाभाविक नहीं है कि वह नाराज होगा? यह जोखिम क्यों लेना? आपको भी एक अच्छे दोस्त की जरूरत होती है। तो फिर, बहल जैसे उच्च पदस्थ अधिकारी से दोस्ती करने में

क्या दिक्कत है, जो बहुत ही सौम्य और विनम्र स्वभाव के हैं और देश-विदेश घूमकर अमीर बन गए हैं? तब भी, जब वे खुद पहल कर रहे हैं..."
"क्या आप मुझसे कंपनी का लाइसेंस बचाने के लिए उसके साथ सोने के लिए कह रहे हैं?"
अरे! ये क्या बकवास कर रही हो! कांति, मुझे तुमसे ये उम्मीद नहीं थी! मुझे लगा था कि तुम इस मामले की बारीकियों को समझोगी! उसे अनपढ़ गांव की औरत की तरह मत देखो। अगर उसे औरतों के साथ शौक रखना है, तो क्या नामुमकिन है? उसके ज़रा से इशारे पर सैकड़ों मर्द उसे बेहद कम उम्र की खूबसूरत लड़कियाँ देने को तैयार रहते हैं - छत्तीस, चौबीस, छत्तीस साल की लड़कियाँ भी! अगर वो कहे, तो वे ऐसी सुंदरियों के साथ कश्मीर या स्विट्ज़रलैंड की सैर का इंतज़ाम भी कर देते हैं! उसे सोने के लिए तुम्हारी तरफ देखने की भी ज़रूरत नहीं है। वैसे भी, वो उस तरह का इंसान नहीं है। उसे तुम्हारी दोस्ती चाहिए। अगर ये सिर्फ शौक होता, तो उसे उन्नीस साल की लड़की चाहिए होती - तुम्हारे जैसी उनतालीस साल की औरत नहीं! बताओ, उसे शांति चाहिए या दोस्ती?
कांति को इस बारे में कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे।
शीतलाच ने आगे कहा,
"आपको दोस्ती की ज़रूरत है, उसने पहल की है। हमारी कंपनी को भी इससे फ़ायदा होता है - इसमें क्या गलत है? क्या गलत है?"
फिर भी, कांति ने कुछ नहीं कहा।
देखो, कांति, तुम्हारे मन में अब भी कुछ शंकाएँ हैं। मेरे साथ भी ऐसी ही घटनाएँ हुई हैं। मैंने तुम्हें उनके बारे में बताया है। मुझे ऐसे रिश्तों में कुछ भी आपत्तिजनक नहीं लगता..."
लेकिन शीतल, तुममें और मुझमें फ़र्क है! तुम्हारा तलाक हो गया। फिर वो घटना घटी। मैं वैसी नहीं हूँ। मैं तलाक के बारे में सोचती भी नहीं। इसके अलावा, मेरा बेटा..."
मैं आपसे एक सवाल पूछ रहा हूँ। इसका जवाब ईमानदारी और सच्चाई से दीजिए, अपने आप से ईमानदार रहिए। क्या आप देंगे?
क्या?
मैं कई सालों से घर से बाहर काम कर रहा हूँ। आप भी कई सालों से गृहिणी बनकर घर पर बैठी हैं। आपके पति से मिले हुए एक साल से ज़्यादा हो गया है। क्या आप मुझे यकीन दिला सकती हैं कि पिछले एक साल से वह आपके मन में ब्रह्मचारी ही रहे हैं? इस बात को भी छोड़ दें... क्या आप मुझे यकीन दिला सकती हैं कि आपके साथ रहते हुए भी वह बेहद पवित्र और बेदाग रहे?
शीतल, तुम उसका स्वभाव नहीं जानती...
“यह सच है। मुझे नहीं पता। मुझे तो उनके स्वभाव को समझने का मौका ही नहीं मिला। आप मुझे वो मौका देंगे!” वह व्यंग्य भरी हंसी हंसते हुए बोली, “डरिए मत! अगर आप मुझे वो मौका दें भी, तो भी मैं उसे नहीं चाहूंगी! अगर आपमें यह विश्वास नहीं है, तो मेरी बात सुनिए, हर गृहिणी के लिए मन की शांति बनाए रखना नामुमकिन हो जाएगा, इसलिए वह अपना जीवन इसी विश्वास को कायम रखते हुए जीती है!”
जब वे बातें कर रहे थे, तभी गरमागरम पिज्जा आ गया। शीतल ने किंग साइज़ पिज्जा के आठ टुकड़ों में से एक टुकड़ा उठाया और चाकू-चम्मच की मदद से दो टुकड़े अपने मुंह में डालते हुए कहा,
सेक्स मज़ेदार है! बस मज़ेदार! जब प्यास लगे तो कोक पी लो, बस! या जब भूख लगे तो हडसन आकर पिज्जा खा लो, बस! जब तक यह सोच नहीं फैलेगी, हमारी महिलाओं को आज़ादी नहीं मिलेगी। अगर मैं यहाँ पूरे दिल से पिज़्ज़ा खाऊँ, तो क्या इसका मतलब यह है कि मैं अपनी रसोई के प्रति वफ़ादार नहीं हूँ? आप

जानते हैं कि मुझे अपनी रसोई से कितना प्यार है। हमारे देश में पुरुष यह बात जानते हैं। वे इसे मज़े के तौर पर लेते हैं! बेचारी औरतें पुरानी सोच और भावनाओं से चिपकी रहती हैं और मुसीबत में फंसती रहती हैं!
कांति यह भी जानती थी कि अगर शीतल को किसी बात पर उसे मनाना होता, तो वह किसी भी तरह से बहस करती और जो भी सबूत चाहिए होते, वो दे देती। बात महिलाओं की मुक्ति के मुद्दे पर आ गई, और शीतल ने लंदन, न्यूयार्क और शिकागो से मंगाई गई पत्रिकाओं में छपे मुद्दों और आंकड़ों से शीतल पर सवालों की बौछार कर दी। यह उसका भी अनुभव था। कांति में भी यही विशेषता थी। यह बिक्री कौशल का एक हिस्सा है...
शीतल द्वारा किंग साइज़ पिज्जा की तुलना घर के बाहर लूटे जाने के यौन सुख से करने पर कांति दिल खोलकर हंस पड़ी।
उस मुस्कान ने स्थिति में तनाव कम कर दिया। शीतल ने ज़ोर देकर पूछा,
"तुम क्यों हंस रहे हो? मुझे सच बताओ! तुम्हें क्या याद आया? मुझे बताओ..." उसने आगे झुकते हुए कहा।
वैवाहिक जीवन का एकमात्र आधार यौन निष्ठा है... यदि यह न हो तो विवाह टूट जाएगा... ऐसे अतिवादी विचार तो कांट के भी नहीं थे। इतना ही नहीं, उन्हें इससे पहले कभी इस विषय पर इतने स्पष्ट रूप से सोचने का अवसर भी नहीं मिला था।
उसने मुस्कुराते हुए कहा,
कुछ नहीं, जी! क्या तुमने पिज्जा खाया, या तुम्हारा पेट भर गया? इसीलिए तुम यहाँ इतनी बार आते हो? मन ही मन, हाँ!..."
"मैं इसे तुम्हें एक ही बार में दे दूंगी!..." शीतल ने गुस्से में अपना हाथ उठाया।
कांति के मन में एक और याद उमड़ रही थी। हालांकि यह सच था कि शादी के बाद किसी दूसरे पुरुष के साथ नज़दीकी का सवाल ही नहीं उठता, लेकिन शादी से पहले के उस प्रेम प्रसंग का क्या? क्या वह महज़ मौज-मस्ती थी, जैसा कि वह कहती है, या फिर उस उम्र में होने वाली एक जिज्ञासा थी?
कौन जाने कॉलेज के दिनों में टेनिस पार्टनर वाला रिश्ता अब कहाँ तक पहुँच गया होता! उस समय तो यह सब जिज्ञासावश शुरू हुआ था, लेकिन उसने ज़िद की और दोपहर में उसके घर पर – घर में कोई और नहीं था क्योंकि उसके माता-पिता काम पर जा रहे थे। हालाँकि वह पहले तो डर गई थी, लेकिन उसने गर्भनिरोधक का इस्तेमाल किया था और उसे बताया कि कोई खतरा नहीं है। उसके बाद कितने दिन बीत गए? बीस? या तीस? अगर सामने वाले घर की लड़की उस पर नज़र न रखती और उसकी माँ को भी अपने घर से देखने के लिए न कहती, तो कुछ और दिन ऐसे ही बीत जाते। हालाँकि उस लड़की ने उस पर दबाव डाला, लेकिन उसने यह बात अपने माता-पिता को नहीं बताई, जिससे कांति को अच्छा लगा। क्योंकि उन दोनों के बीच प्यार का कोई भाव नहीं था। इसीलिए उसके बाद उन दोनों के बीच फिर कभी कोई झगड़ा नहीं हुआ।
परिणामस्वरूप, कांति भयभीत हो गई। लेकिन उसके बाद, विवाह तक वह फिर कभी उस जाल में नहीं फंसी। उसे यह भी महसूस हुआ कि विवाह से पहले के अनुभव के कारण, हम विवाह और ऐसे रिश्तों को एक-दूसरे के प्रति समान रूप से महत्वपूर्ण नहीं समझते। अतीत में जो कुछ भी हुआ, उसे भूल जाओ... इसके बाद, यदि हम एक-दूसरे को धोखा न दें, तो यही पर्याप्त है... उसे महसूस हुआ कि बिना कुछ कहे भी, दोनों के दिलों में ऐसी भावना मौजूद है।
फिर भी, उसके मन में यह ख्याल आया – पूरा एक साल बीत जाने के बाद भी, क्या उसे अपनी पत्नी की याद एक बार भी नहीं आनी चाहिए? शादी के बाद उसने अपनी पत्नी के अलावा किसी और को छुआ तक नहीं – यही तो उसकी वफादारी है। इस विचार से उसका गुस्सा और भी बढ़ गया।

■

उसे बहल से यह उम्मीद नहीं थी कि वह उसके लिए कुछ खास महसूस करेगा या उस रिश्ते में किसी तरह का जुनून महसूस करेगा। फिर भी, उसे यह उम्मीद नहीं थी कि वह इतनी अचानक रिश्ता खत्म कर देगा और आज़ाद हो जाएगा।
उसने शीतल के निर्देशों का अक्षरशः पालन किया था। शीतल ने कहा,
"मेरे घर पर कोई नहीं है। आप दोनों वहीं मिलिए... आपके फोन के बाद मैं फैक्ट्री से घर आ जाऊँगा... इस तरह का फैसला करने में कोई दिक्कत नहीं है। लेकिन उन्हें यह पसंद नहीं है। वे पाँच सितारा होटल में कमरा लेना चाहते हैं। मैंने इस बारे में सोच लिया है। मैं अपनी कंपनी के नाम से रोज़ पेंटा होटल में एक कमरा बुक कर देता हूँ। मुझे मुंबई का पता दीजिए, और आप अतिथि के रूप में हस्ताक्षर कर दीजिए। सारे खर्चे कंपनी के नाम से चुका देते हैं। इससे टैक्स की बचत होगी।"
दोपहर में, वह शीतल के साथ होटल गई, शीतल द्वारा दिया गया सैमसोनाइट सूटकेस अपने साथ ले गई। वह कमरे की चाबी लेकर लौटी। शाम को, वह बहल के साथ होटल वापस आई। बहल ने अपनी कार दफ्तर में छोड़ दी थी। कमरे में प्रवेश करने के बाद भी, बहल की सौम्य और दोस्ताना बातचीत जारी रही। फिर भी, वह सब कुछ जल्दी निपटाने की जल्दी में था। उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि पुरुष और महिलाएं इतनी भावहीनता से एक साथ आ सकते हैं और बिना कुछ कहे या इशारा किए अपनी खुशियाँ बटोर सकते हैं।
बाद में, कमरे में स्नैक्स और स्कॉच के दो पेग मंगवाने और आराम से घूंट लेने के बाद, बहल ने कहा,
आप वाकई बहुत अच्छे हैं! माफ़ कीजिए... मेरी 7:30 बजे एक अपॉइंटमेंट है। क्या आप मुझे मेरी कार तक छोड़ सकते हैं? कल शाम 5:00 बजे फिर मिलते हैं..."
अगले दिन भी ऐसा ही हुआ। हमने डेढ़ घंटा साथ बिताया।
तीसरे दिन का एक घंटा। खेल खत्म।
चौथे दिन कांति पार्किंग में जाकर इंतजार करने लगी। सात बज गए और बहल नहीं आई, तो उसका दिल निराशा और गुस्से से भर गया। गुस्से में उसने कारखाने में मौजूद शीतल को वहीं से फोन किया।
शीतल ने कहा,
"वह कहीं किसी मीटिंग में फंसा होगा। एक घंटा और इंतजार करो।"
"अगर कोई महिला इतनी देर तक वहां अकेली खड़ी रहती है, तो उसे कौन समझेगा?"
"तो फिर कारखाने आ जाओ। वह कल जांच करेगा। फिर मैं तुम्हें बताऊंगा।"
अगले दिन सुबह 10:30 बजे, शीतल ने उसे अपने कार्यालय में बुलाया।
जब शीतल ने बहल से इसके बारे में पूछा, तो उसने कहा, "मेरा मतलब है, माफ़ कीजिए, मुझे लगा कि कार्यक्रम समाप्त हो गया है। मैंने अगले दिन मिलने के लिए नहीं कहा, इसीलिए! क्या आपको लगता है कि आपके दोस्त ने ध्यान नहीं दिया? माफ़ कीजिए..."
कांति को भी याद था – हाँ, उसने ऐसा कुछ नहीं कहा था। इसलिए मैं उसका इंतज़ार करता रहा, है ना?
"चलो अभी होटल चलते हैं। अगर चेक आउट का समय नहीं हुआ है, तो हम उतने पैसे बचा लेंगे!"
जब नौकर ने सूटकेस को टैक्सी के ट्रंक में रखा तो कांति डर गई। कहीं कोई परिचित उससे मिल न ले और पूछ ले कि वह इस शहर के होटल में क्या कर रही है? जब तक टैक्सी शीतल के दफ्तर नहीं पहुंची और वह अपनी कार में नहीं बैठ गई, तब तक उसने कुछ नहीं कहा। शीतल ने उससे कहा,
"आज़ शाम मुझे कारखाने पहुंचने में एक घंटा देरी हो जाएगी। लेकिन मैं ज़रूर आऊँगी..." और उसने जल्दी से कार लॉक की और हड़बड़ी में ऑफिस में प्रवेश

कर गई।
अपनी कार से फ़ैक्टी लौटते समय, कांति का दिमाग़ घटनाओं को समझने की कोशिश कर रहा था। अपना काम करवाने के लिए, बड़े-बड़े व्यापारी उसके लिए आलीशान होटल में ठहरने का इंतज़ाम करते हैं और साथ ही एक आकर्षक वेश्या का भी इंतज़ाम करते हैं। शाम को ऑफ़िस का काम खत्म करके घर जाते समय वह वेश्या के साथ कितनी देर रह सकता है? डेढ़ घंटा काफ़ी है। हर कंपनी उसे दो-तीन दिन के लिए भेजती। होटल का सारा किराया कंपनी ही देती। अभी भी हमारी कंपनी ने ही होटल का बिल भरा। हमारी अपनी गाड़ियाँ उसके लिए चलीं। वेश्या की जगह तो सिर्फ़ मैं ही था! इसीलिए उसने उसे ज़्यादा काम नहीं दिया... उसने ज़्यादा दिलचस्पी भी नहीं दिखाई। शीतल से जान-पहचान होने के कारण उसने हमें इतना डिस्काउंट दिया... इसके बाद भी, वह दूसरों से दस-पंद्रह हज़ार लेता है, उसने इतना नहीं लिया! आसान है!
वह गुस्सा हो गई। शीतल बहुत गुस्से में थी। इतना पैसा खर्च हो गया था। उसने किसी कॉल गर्ल को क्यों नहीं बुलाया? उसने मुझे क्यों बुलाया? जब वह शाम को आए, तो उसे पूछना चाहिए-
शाम को सभी कारीगर चले गए। आठ बजे ट्रेन की आवाज सुनाई दी। शीतल के आते ही कुर्सी पर बैठते ही कांति ने उससे सीधे पूछा,
"अब होटल का बिल ही साढ़े पाँच हज़ार रुपये है। हर दिन एक अलग लड़की और उनके लिए पैसे देने पड़ते हैं, तो कुल मिलाकर तीस हज़ार रुपये हो जाते, लेकिन कोई बात नहीं। पर तुमने मुझे क्यों भेजा?"
यह सुनकर शीतल अवाक रह गई। खुद को संभालते हुए उसने कहा,
देखो, कांति, तुम्हारा नाराज़ होना स्वाभाविक है। मुझे भी बुरा लगा था ये देखकर! लेकिन उसे उम्मीद नहीं थी कि तुम किसी कॉल गर्ल को बुलाओगी। उसे इसकी आदत नहीं है। वो तुम्हें वाकई बहुत पसंद करता है। अभी मीटिंग में भी उसने जानबूझकर मुझे अलग ले जाकर कहा – तुम्हारी गर्लफ्रेंड तो रोज़मर्रा की भागदौड़ से कविता पढ़ने जैसी है! तुम्हें पता है ऑफिस में उस पर कितना काम का दबाव है? वो तुम्हारे साथ ज़्यादा समय नहीं बिता पाता, इसीलिए तो इतना परेशान था! जब तुमसे मिलने आया तो गुलाब का गुलदस्ता तक नहीं ला पाया, इसीलिए खुद को दोष दे रहा था। दूसरी बात ये है कि तुमने पैसों का हिसाब तो लगा लिया है। वो दूसरों से पैसे लेता है – मैं भी ले लेता। कौन छोड़ता? अगर करोड़ों रुपये कमाने वाला आदमी इजाज़त देने वाले को हिस्सा दे, तो इसमें क्या बुराई है? लेकिन वो अपनी कंपनी का भला चाहने वाला है – वो तुमसे एक पैसा भी नहीं लेगा! उसे भी तुम्हारा प्यार चाहिए – पैसा नहीं! "शारीरिक सुख भी नहीं! कोई गलतफहमी मत पालना," वह कांति के करीब आते हुए बोली। उसने कांति का सिर अपनी छाती से लगाया और कहा, "तुम बहुत प्यारी बच्ची हो!"
लेकिन कांति अब रोना बंद नहीं कर पा रही थी। उसने अपना चेहरा शीतल की छाती में छिपा लिया और फूट-फूटकर रोने लगी।
शीतल तब तक अपने बालों में हाथ फेरती रही जब तक कि उसका रोना बंद नहीं हो गया।
जब वह शांत हुई, तो उसने उसकी ठोड़ी पकड़ी और उसके होठों को गहराई से चूमते हुए कहा,
मेरी प्यारी बच्ची! अगर इसके बाद तुम्हारा मन नहीं है, तो किसी को भी साथ मत देना! तो क्या हुआ? हम दोस्त हैं। मैं तुमसे प्यार करता हूँ—मैं तुमसे प्यार करता हूँ, जान—चलो, कहीं खाने चलते हैं—"
कांति भी समझ गई थी कि बहल के बारे में वह जो कह रही थी उसमें कोई सच्चाई नहीं थी। उसे कई ऐसे पल याद थे जो इस बात को साबित करते थे। लेकिन वह यह भी समझ गई थी कि अब ऐसा कहने से शीतल के साथ उसकी दोस्ती में तनाव

पैदा हो जाएगा। उसे यह भी महसूस हुआ कि यह सिर्फ दोस्ती का सवाल नहीं था – यह दोनों पक्षों का सवाल था।
वह कुछ नहीं बोली।

■

कांति के मन में अब अपराधबोध का एक ऐसा भाव जाग उठा था जो उसने बहुत समय से महसूस नहीं किया था। शीतल चाहे बहस के लिए कुछ भी कहे, कांति एक बात भली-भांति जानती थी – चाहे वह गाँव में हो या न हो, चाहे काम के लिए गाँव में हो या गाँव से बाहर – रवींद्र उन पुरुषों में से नहीं था जो किसी दूसरी स्त्री की उम्मीद रखते हों। अगर कोई उससे प्रेम भी कर ले, तो भी वह उसका साथ नहीं देगा। उसे यह रवैया बिलकुल पसंद नहीं था – "अगर हो तो चलेगा, नहीं तो कोई फर्क नहीं पड़ता!" कांति को याद आया कि जब वह विरोध करती थी तो वह अक्सर इसी तरह सो जाता था। हालाँकि वह भी मानती थी कि अगर कुछ गलती से हो जाए तो उसे भूल जाना चाहिए, लेकिन वह समझती थी कि बहल के साथ जो कुछ भी हुआ वह महज़ एक गलती नहीं थी।
रात में उसकी नींद खराब हो गई थी। वह अनजाने में गहरी नींद में सो जाती, फिर अचानक जाग जाती और उसे ऐसा लगता जैसे वह किसी गहरे गड्ढे में गिर गई हो —जैसे वह किसी वेश्या के स्तर पर पहुँच गई हो।
शीतल को अपनी ये भावना बताकर वो अपने मन की बात भी नहीं कह पाई। क्योंकि कांति को इसका जवाब पहले से ही पता था। साथ ही, कांति को ये आशंका भी थी कि कहीं शीतल उसके शब्दों का अर्थ लेन-देन से जोड़कर कुछ गलत न समझ ले।
जब अंदर ही अंदर उथल-पुथल मची हुई थी, तभी एक दिन कांति को एक उपाय सूझा। हमें अब थोड़ा पीछे हटना चाहिए। इस बारे में सोचने के बाद – अगर इसके लिए बेंगलुरु जाना ही पड़े, तो हमें वहाँ भी जाना चाहिए – हमें उसके करीब फिर से आना चाहिए। सिर्फ भावनात्मक रूप से ही नहीं – शारीरिक रूप से भी। तभी यह अपराधबोध अपने आप कम हो जाएगा।
यह सोचते ही कांति को अच्छा महसूस हुआ। यह करना इतना मुश्किल नहीं था— उसका आत्मविश्वास वापस लौट आया।
उसी रात उसने घर से बेंगलोर फोन किया। रात के 10:30 बज रहे थे। वह सोच ही रही थी कि क्या वह अब तक घर आ गया होगा, तभी दूसरी तरफ से रिसीवर उठाया गया और 'हैलो' की आवाज सुनाई दी।
ये उनकी आवाज है!
अरे! क्या तुमने किसका फ़ोन नंबर पहचाना? निराश हो गए? किसी नए दोस्त के फ़ोन की उम्मीद कर रहे थे, अपनी पूर्व पत्नी की आवाज़ सुनकर गुस्सा आ गया! सच है या झूठ? सच बताओ, हाँ... मैं नाराज़ नहीं होऊँगी! क्योंकि तुम जो भी कहो... मुझसे भी गलती हुई है! मैं मानता हूँ, है ना? तुम चुप क्यों बैठे हो? देखो रवि... जैसा तुम कहते हो, मैंने बेंगलोर में कारोबार शुरू नहीं किया, बस यही मेरी गलती है। लेकिन ऐसा मुमकिन नहीं था, भाई! अभी भी मुमकिन नहीं है। तुम भी तो जानते हो। तुम इतने बड़े अख़बार के संपादक हो! अब समझ आया कि मैंने फ़ोन क्यों किया। पंद्रह दिन में फ़ैक्ट्री को एक साल हो जाएगा। बताओ, मैंने कितना मुनाफ़ा कमाया? साढ़े चार लाख रुपये! मेरा कुल मुनाफ़ा, हाँ! अगले साल यह आंकड़ा आठ लाख तक पहुँच जाएगा! तुम कहाँ हो! तुम्हारा तबादला हो गया और तुम दिन में दो घंटे मेरी मदद करते थे, कितना मुनाफ़ा कमाओगे? अगर तबादला नहीं हुआ, तो तुम इस्तीफ़ा देकर आज़ाद हो सकते हो। तुम फ्रीलांस काम कर सकते हो। आपको इससे पैसे कमाने की ज़रूरत नहीं है। मेरी कंपनी को दो घंटे दे दीजिए... बस इतना ही काफी है। अरे, कोई भी पढ़ा-लिखा पति अपनी पत्नी को, जिसने इतने कम समय में अपने स्वतंत्र व्यवसाय में इतनी तरक्की की है, लाल

गुलाब देकर बधाई देता! आप तो बहुत पढ़े-लिखे हैं! आपको यहाँ आकर मुझे गुलाब देने में बहुत समय लग जाएगा – आपको मुझे फोन पर ही बधाई देनी चाहिए थी! इसके बजाय, आप चुप हैं, कुछ नहीं कह रहे! खैर, पिताजी! मैं इसी भारत में एक औरत के रूप में पैदा हुई हूँ! मैं खुद आऊँगी, मुझमें इतना घमंड नहीं है, मैंने कहा!
कुछ पल खामोशी में बीत गए। उसने आगे कहा,
मुझे पता है... तुम नाराज़ हो। इतने दिनों से क्यों नहीं आए? इसीलिए तो! है ना? मैं पूरे साल मेहनत करना चाहती थी और तुम्हें अपनी उपलब्धियाँ दिखाना चाहती थी और तुमसे तारीफ़ पाना चाहती थी! ओह, पैंतालीस साल बाद भी तुममें यह कहने की हिम्मत है कि तुम्हारी पत्नी ने गलती की? कितना कायर है! लेकिन सच कहूँ तो? तुम्हारी यही कायरता मुझे लुभाती है!
लेकिन दूसरी तरफ शांति थी।
``मुझे लगता है आप बैंगलोर एयर में सितार सुन रहे थे। इसीलिए आप मुझसे बात नहीं कर रहे हैं? इसीलिए आपने मुझे इतना गुस्सा दिलाया है? अरे, अरे! मैं दो दिन में आऊंगी आपका गुस्सा निकालने! लेकिन अगर आप मेरे लिए एक लाल गुलाब नहीं लाएंगे और उसे अपने बालों में नहीं बांधेंगे, तो मैं अपने पैर फैलाकर पागल हो जाऊंगी! मैं आने से पहले आपको फोन करूंगी। लेकिन मुझे एयरपोर्ट आना है!..." उसने कहा और रिसीवर नीचे रख दिया।
वह सुबह उठी और ट्रैवल एजेंट को फोन किया। दोपहर तक अगले दिन की फ्लाइट का टिकट घर पहुंच गया। उसने अपने कपड़े पैक किए। हालाँकि वह रात में उसे फ्लाइट के समय के बारे में बताने के लिए फोन करना चाहती थी, लेकिन उसे अच्छी तरह याद था कि पिछले दिन, पूरी बातचीत में उसने सिर्फ दो-तीन बार हाँ कहा था और आने की बात कही थी। उसने फोन नहीं किया क्योंकि उसे डर था कि अगर उसने अब फोन किया, तो उसे फिर से वही अपमानजनक चुप्पी झेलनी पड़ेगी।
एयरपोर्ट जाने से पहले उसने फोन किया।
वह बस इतना ही कहना चाहती थी, "मैं आ रही हूँ... एयरपोर्ट आ जाओ..."। लेकिन जब उसने रिसीवर उठाया तो उसे जो "हैलो" सुनाई दिया, वह रविंद्र का नहीं था। दूसरी तरफ से आवाज़ आई,
``रवींद्र अभी-अभी घर से निकला है..."
"ऑफिस में मिलोगे?"
नहीं। आज विधानसभा में कोई महत्वपूर्ण बैठक है... उन्हें वहां जाना था। मुझे नहीं पता कि वे कार्यालय कब जाएंगे।
वे अलविदा कहना चाहते थे...
विधानसभा में संदेश पहुंचाना मुश्किल है। अगर आप इसे दफ्तर में ही रखेंगी तो सचिव उनकी मेज पर एक नोट छोड़ देंगे। आप कौन हैं, महोदया?
वह क्रोधित हो गई। जिसने घर की मालकिन से इतनी बदतमीज़ी से यह सवाल पूछा – क्या यह कोई रसोइया है या क्या? लेकिन वह तो एकदम सही अंग्रेज़ी में जवाब देती है! क्या उसे सच बताना चाहिए या नहीं? क्यों? क्या इसमें कुछ छिपाने लायक है?? उसने जवाब दिया,
श्रीमती रविंद्र, दिल्ली से बोल रही हूँ...
"–नमस्कार महोदया! मैं होन्नाटी हूँ। मैं पहाड़ों में सतारी का अध्ययन कर रही थी... तभी हमारी मुलाकात हुई। अभी मैं यहाँ रवींद्र के साथ सतारी का अध्ययन कर रही हूँ। क्या कोई जरूरी संदेश है? मैं स्वयं जाऊंगी। लेकिन मुझे नहीं लगता कि वे मुझे सभा में जाने देंगे!"
यह सोचकर कि अगर वह उसे अलविदा कह देगी तो वह हवाई अड्डे पर आ जाएगा, उसने कहा,

"ऐसा कुछ नहीं है... मैं आपसे बाद में बात करूंगा..."
जैसे ही मैं हवाई अड्डे के पास पहुँच रही थी, मुझे ख्याल आया कि मुझे बैंगलोर जाने से ठीक पहले उसे फोन कर लेना चाहिए था, और मैंने किया भी। मेरी माँ हमेशा मुझसे अनूप को लाने के लिए कहती थीं। उन्होंने देहरादून से फोन किया था और बताया था कि यह जाँच जल्द ही शुरू होने वाली है। मुझे लगता है, यह होन्नाटी हमेशा के लिए घर पर ही थी! इसीलिए रविंद्र इतना अकेला महसूस कर रहा था और उसे अपनी पत्नी की याद नहीं आ रही थी! फोन पर रेडियो पर सितार की धुन नहीं बज रही थी—वह होन्नाटी की आवाज़ थी। जब घर में दोज्जंजना बज रहा था, तब वे खाना बना रहे होंगे। वे एक-दूसरे की मदद कर रहे थे—उसके मन में ईर्ष्या और जलन की भावना पैदा हो गई।
उसकी निगाहें टैक्सी से बाहर की ओर घूम गईं। ये दिल्ली की खूबसूरत सड़कें हैं – वही सड़क जो वसंत विहार जाती है। होन्नाटी के माता-पिता का घर भी यहीं है। क्या होगा अगर हम टैक्सी को थोड़ी देर के लिए यहीं रोक दें और उसकी माँ से कहें, "आपका बेटा बैंगलोर में हमारे घर पर है – आपको भी आना चाहिए," और उसे उनके साथ दिल्ली भेज दें? यह विचार उसके मन में आया, लेकिन उसने ड्राइवर से कुछ नहीं कहा।
इस बार वह पहली बार विमान की एग्जीक्यूटिव क्लास में सफर कर रही थी। मार्गदर्शन के लिए अलग काउंटर। बड़ी सीटें जहाँ आप पैर फैलाकर बैठ सकते हैं। सबके लिए अलग-अलग गगनसाखी! पहले ये यात्री उतरेंगे, फिर बाकी यात्री उतरेंगे!
उसके साथ यात्रा कर रहे अधिकांश लोग व्यापार जगत से थे। कुछ नौकर थे, लेकिन अधिकतर उच्च पदस्थ अधिकारी थे। जब उसने उन सभी को देखा, तो उसे गर्व महसूस हुआ कि वह भी इसी स्तर की है।
उसके बगल में बैठा यात्री बंगाली रहा होगा। उसने विनम्रतापूर्वक उससे सवाल किया।
आपका पेशा क्या है?
उन्हें यह कैसे पता चला कि मैं एक स्वतंत्र पेशेवर हूँ, जबकि उन्होंने मुझे बताया भी नहीं? उनका दिल आश्चर्य और खुशी से भर गया। उन्होंने गर्व से अपने चेहरे पर हल्की सी मुस्कान बिखेरी और उन्हें अपना कार्ड दे दिया।
अरे वाह! वस्त्र निर्यातकों! बहुत बढ़िया! आप किन देशों को निर्यात करते हैं?
``फिलहाल, केवल अमेरिका को। वहां के बाजार की मांग को पूरा करने के लिए इतना ही काफी है!"
"किस्मत वाली! तुम सचमुच बहुत भाग्यशाली हो! तुम बहुत अच्छी जगह पर हो! मैं एक कंप्यूटर कंपनी में वरिष्ठ अधिकारी हूं—" उसने कहा और उसे अपना कार्ड दे दिया।
उसने नज़रें उससे हटा लीं। बी.ई. के बाद उसने एमबीए किया था। उसके बाद, उसने आधे घंटे तक केवल तैयार माल आयात करने के खतरों के बारे में उत्साहपूर्वक बात की। तीस साल की उम्र में भी इतना उत्साह! उसे सुनते हुए, उसे लगा जैसे उसने दुनिया का एक नया नज़रिया देख लिया हो। उसे पता ही नहीं चला कि ढाई घंटे कैसे बीत गए।
अन्य यात्रियों से पहले बेंगलुरु हवाई अड्डे पर उतरने पर उसकी संतुष्टि की भावना और भी बढ़ गई।
जैसे ही वह टैक्सी से उतरी, उसे घर के अंदर तबले के फ्रेम से सतारी की तेज़ आवाज़ सुनाई दी। वह दरवाज़े तक आई। यह सोचकर कि अगर उसने घंटी बजाई तो होन्नाटी परिवार का मन भटक जाएगा और वे शर्मिंदगी के मारे बजाना बंद कर देंगे, वह अपना सूटकेस पास ही छोड़कर घर के सामने सीढ़ियों पर बैठ गई। उसने घड़ी देखी - चार बज रहे थे। यह कौन सा राग है? वह इसे पहचान नहीं पा

रही थी। अभ्यास करते समय वह ताल और लय को एकसमान कैसे रख पाता है? यह ज़रूर कोई सारंगा होगा। हाँ - यह दिल्ली में ज़्यादा लोकप्रिय नहीं है, मुंबई में काफ़ी लोकप्रिय है, इसीलिए तो उसने ऐसा कहा होगा। उसने अपनी सारी संगीत शिक्षा मुंबई में ही प्राप्त की है, है ना!
जी हां। बीच में सारंग है। राग को पहचानते ही मुझे उसका स्वभाव याद आ गया। प्रेम-प्रसंग, उपहास, प्रेम की पराजय - कौन ईमानदारी से कह सकता है कि यही राग का स्वभाव है? प्रत्येक वाद्ययंत्र की अलग-अलग ध्वनियाँ, प्रत्येक गायक की आवाज़ और वादक की उंगलियाँ - बहुत कुछ उसकी मानसिकता पर निर्भर करता है। फिर भी, गायन सीखते समय गुरुओं ने सिखाया कि एक विशेष राग का एक विशिष्ट स्वभाव होता है, इसीलिए उसे सिखाया जाता है।
उसे याद आया कि पापा कलकत्ता से उसके लिए जो सितार लाए थे, वह यहीं पर था। इस बार उसे वापस जाते समय उसे अपने साथ ले जाना था। वह तीन बार घूमकर उसी जगह पर वापस आने का अभ्यास कर रही थी।
अंदर से एक आदमी की आवाज सुनाई दी। जब तबला बजना बंद हो गया और केवल तबले की धुन ही सुनाई दे रही थी, तब उसे एहसास हुआ कि यह तबलाजी की आवाज है।
तबालजी कह रहे थे,
``–ऐसा नहीं, है ना! आप बैठिए और मैच का इंतज़ार कीजिए। कैसा होना चाहिए, बताइए? मैच आपके सामने खड़ा है—`ओह प्रियतम, मैं यहीं हूं, क्या आप मुझे पहचान नहीं रहे? आइए—मुझे गले लगाइए!' वह कहती है! आप उसे अनसुना करके अगले दौर में चले जाते हैं। आपको यह सोचना भी नहीं चाहिए कि आप उस पर ज़्यादा ध्यान दे रहे हैं। अंत में, आपको बस खुले दिल से उस मैच को गले लगाना चाहिए जो आपके पास आया है, बिना किसी चिंता के, आपका संवाद स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ना चाहिए। ताल की भी कोई चिंता नहीं होनी चाहिए। फिर भी, समय-समय पर, आपको ताल के प्रति अपनी जागरूकता दिखानी चाहिए, यह कहकर कि 'मैं आपकी सीमाएँ पार नहीं कर रहा हूं, देखिए—बस यही है—'। 'क्या मैं ताल से भटक जाऊँगा, या क्या?' का यह निरंतर डर किसी गायक या संगीतकार को परेशान नहीं करना चाहिए। चलिए—चलिए फिर से वही चक्र दोहराते हैं, देखते हैं! आप अपनी गति से आगे बढ़ते रहिए—"
उसे इस बातचीत की सारी बातें समझ नहीं आईं। उसके मन में यह ख्याल आ रहा था कि अगर हमने शादी के बाद भी सितार बजाना बंद न किया होता, तो मैं भी आज इसी तरह सितार बजा पाती। इस विचार से वह उदास हो गई।
यह सिलसिला करीब एक घंटे तक चलता रहा। फिर अंदर सितार की आवाज बंद हो गई। तबले की आवाज दोबारा सुनाई दी।
आज हमें थोड़ा जल्दी निकलना होगा। कल हम सात या साढ़े सात बजे तक वहाँ पहुँच जाएँगे।
चलो—" तभी, एक आदमी के खड़े होने और आलस से अपना शरीर झुकाने की आवाज सुनाई दी, वह धीरे-धीरे ``शिव-शिव" बुदबुदा रहा था।
जब उन्होंने दरवाजा खोला और बाहर आए, तो वह अभी भी सीढ़ियों पर बैठी थी। बाहर आने वाला सज्जन साठ साल के एक घर से था। धोती और कमीज़ से बनी नेहरू शर्ट, सिर पर काली टोपी, माथे पर राख की क्षैतिज धारियाँ - उसने पीछे से आने वाले व्यक्ति को तुरंत पहचान लिया। उसने भी उसे देखा और बहुत हैरान हुआ। उसने खुद को संभाला और कहा,
अरे बाप रे! श्रीमती रविंद्र, है ना? आप कब आईं? आप यहां कब से बैठी हैं? हमने तो आपकी आवाज सुनी ही नहीं। आपने कितनी बार घंटी बजाई?
उसके चेहरे पर अपराधबोध स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था।

मैंने घंटी नहीं बजाई। मैं धुन की मधुरता सुन रहा था। मुझे यकीन था कि अगर मैंने घंटी बजाई तो मेरी नींद उड़ जाएगी और फिर कभी वापस नहीं आएगी!
वह खड़ी हो गई। होन्नाटी ने कमलापुर और उसका परिचय कराया। कमलापुर ने कहा,
"संगीत के प्रति प्रेम के बिना कोई भी इस तरह यूं ही बैठा नहीं रहेगा! अपना खुद का सितार होने की बात कहने के बाद आप और क्या कहेंगे?"
होन्नाटी ने अपना सूटकेस उठाया और उसे हॉल में सोफे के बगल में रख दिया। वह अंदर आई। होन्नाटी ने उससे कहा,
"मुहोदया, मैं फोन पर रविंद्रन को आपका संदेश भी नहीं दे पाया। वह अब तक ऑफिस पहुंच गया होगा। अगर आपने मुझे बताया होता कि आप आ रही हैं, तो मैं उसे संदेश पहुंचाने का कुछ न कुछ इंतजाम जरूर कर लेता। कम से कम मैं एयरपोर्ट तो पहुंच जाता।"
उसने उसके चेहरे पर क्षमा का भाव देखा। उसने कहा,
"मुझे जाने दो - मैं टैक्सी से आई हूँ," उसने कहा और अपना सूटकेस लेकर उनके बेडरूम में चली गई।
वहाँ डबल बेड पर बिछी चादर बेहद गंदी थी। मच्छरदानी धूल से भरी हुई थी। खिड़की के पर्दों पर पिछले एक साल से पानी की एक बूंद भी नहीं पड़ी थी। वह किसी नौकरानी का काम तो कर ही नहीं सकती थी! वहाँ की गंदगी उसके लिए असहनीय हो गई। उसने चादर को एक तरफ खींचा। सौभाग्य से, धोबिन द्वारा लाई गई चादरें अलमारी में थीं। उसने पर्दों से धूल झाड़ी और साफ चादर बिस्तर पर बिछा दी। पूरे कमरे की अच्छी तरह सफाई करने के बाद वह बाहर आई। होन्नाटी अपने कमरे में था।
उसने उसे बुलाया। वह कमरे से बाहर आया। उसकी झिझक दूर करने के लिए उसने कहा,
"मैं यहां एक हफ्ते तक रुकूंगा। मुझे आपसे हर दिन सितार सीखने की जरूरत है।"
फिर भी, घर में इस अजनबी को देखकर वह बहुत परेशान थी, क्योंकि पति-पत्नी के बीच तनावपूर्ण संबंध बिगड़ते जा रहे थे।
मैं हमेशा अपने ही राग बजाता हूं। अगर आप मुझसे कोई विशेष राग बजाने को कहें, तो मैं वही राग बजाऊंगा। मैंने आपकी अनुमति के बिना दो महीने तक आपका सितार बजाया। यह एक बेहतरीन सितार है..."
शहद की खुशबू से महकते सारंग की धुन सुनते हुए, मेरी भी आपसे कुछ सीखने की इच्छा हुई!
"सचमुच?" वह प्रसन्न हुआ। उसने आगे कहा, "अगर गुरुजी ने अनुमति दी होती, तो मैं तुम्हें अवश्य पढ़ाता!"
"हमें जिसे चाहें उसे संगीत सिखाने के लिए गुरुजी की अनुमति की आवश्यकता क्यों है?"
उन्होंने मुझसे शपथ ली है कि वे अपनी शिक्षा पूरी होने तक दूसरों को नहीं पढ़ाएंगे और न ही सभाएं आयोजित करेंगे! उनका कहना है कि अगर आप पूरी तरह से तैयार हुए बिना पढ़ाना या सभाएं आयोजित करना शुरू कर देते हैं, तो आपकी प्रगति पूरी तरह से रुक जाएगी। मैं भी इससे सहमत हूं।
उसने उसकी ओर देखा। कनाशीलंकड़ के बाल पतले हो गए थे—यहां तक कि सफेद भी हो गए थे। वह अभी भी गुरु की बातें सुन रहा है—वह कब अपने पैरों पर खड़ा होगा? लेकिन बिना कुछ कहे, उसने कहा,
"तुम्हारी मां तुमसे मिलीं। उन्होंने तुम्हारी तरफ से मुझे अलविदा कहा।"
"जी? आप उसे जानते हैं?" उसकी आवाज़ आश्चर्य से भरी थी और उसकी मासूम आंखों में खुशी झलक रही थी।

“मेरे माता-पिता आपके माता-पिता के पारिवारिक मित्र हैं। मुझे उस समय इसका एहसास भी नहीं हुआ था। जब मैं आपको हमारे पिता के 70वें जन्मदिन की पार्टी में आमंत्रित करने आपके घर गया, तब यह बात उठी। आपकी माँ ने उस समय बहुत कुछ कहा था। अब आपके पिता भी आपका इंतज़ार कर रहे हैं। अगर वे चाहें, तो यहाँ आकर सतारी का अध्ययन कर सकते हैं - उन्हें यहाँ अच्छे शिक्षक भी मिल जाएँगे, अन्यथा मुंबई जाना सुविधाजनक रहेगा - वे कहते हैं। मैं आपको बाद में सब कुछ बताऊँगा। पहले मुझे रसोई देखनी है। कौन जाने रसोई में क्या है और क्या नहीं!...”
मैं खाना बना लूंगी। वे नौ बजे आएंगे। मैं सवा आठ या साढ़े आठ बजे से शुरू करूंगी। उनके आने से पहले मैं चावल और सब्जियां तैयार कर लूंगी।
"अब जब मैं घर आती हूँ, तो मुझे किसी पुरुष से खाना बनवाना पड़ता है और फिर वो मेरे पति को खिलाता है, मुझे ये बिलकुल पसंद नहीं!" उसने ये वाक्य जानबूझकर कहा, इस विश्वास के साथ कि ने केवल उसे, बल्कि सभी पुरुषों को अच्छा लगेगा।
इस वाक्य का उस पर वही प्रभाव पड़ा जिसकी उसने उम्मीद की थी। उसने कहा, "तो कम से कम बाकी के इंतज़ाम तो मैं कर ही दूंगा, महोदया..."
“महोदया, बस इतना ही रहने दीजिए, चलिए देखते हैं! हम पारिवारिक मित्र हैं। मेरा नाम कांति है!...” उसने कहा और रसोई में जाकर देखने लगी कि वहां क्या है। दिल्ली से आते समय उसे कुछ आमटी और सब्जी मसाला लाना चाहिए था। उसने कागज़ के एक टुकड़े पर आवश्यक वस्तुओं की एक छोटी सूची बनाई। उसने सूची के साथ दिए गए पचास रुपये के नोट को अस्वीकार करते हुए कहा, मुझे पैसों की ज़रूरत नहीं है। वे मुझे मेरे मासिक खर्चों के लिए ज़रूरी पैसे देते हैं। मैंने मेथी बो दी है। मैंने लोबिया की फलियाँ चुनकर रख ली हैं..."
यह कहकर उसने अपनी चप्पलें पहनीं और अपना सामान लेने के लिए घर से बाहर चला गया।
अब मुझे क्या करना चाहिए? क्या मुझे दफ्तर में फोन करके उसे बता देना चाहिए कि मैं आ गई हूँ? अगर मैं उसे पहले बता दूँगी, तो वह मेरे साथ कैसा व्यवहार करना है, इस बारे में सोच-समझकर घर आएगा। बिना किसी जानकारी के घर आकर अचानक मुझे देखना... लेकिन चाहे वह होन्नाटी के सामने कितना भी अजीब व्यवहार करे, यह ठीक नहीं होगा। दरअसल, आज हमारे बीच जिस तरह का रिश्ता है, उसमें किसी तीसरे व्यक्ति का होना ठीक नहीं है! - इस विचार ने उसे होन्नाटी पर गुस्सा दिला दिया। लेकिन बाद में, इस बारे में सोचते हुए, उसने सोचा - एक दृष्टिकोण से, उसका यहाँ होना सही है। एक बाहरी व्यक्ति हमारे सामने है, इसलिए, भले ही वह बीच-बीच में मुस्कुराते हुए कुछ कहे -
यह सोचकर कि चाहे कुछ भी हो जाए, सबसे पहले उसे सूचित करना ही बेहतर होगा, वह बाहर आई और उसके कार्यालय का फोन नंबर डायल किया।
``रवि... मैं बोल रहा हूँ! बताओ तुम कहाँ से बोल रहे हो, चलो देखते हैं?"
``घर से..."
मैंने होन्नाटी को कुछ सामान लाने भेजा ताकि मैं तुमसे बात कर सकूँ! लेकिन अंदर आते समय एक लाल गुलाब ज़रूर लाना! रात के खाने के बाद अकेले में बेडरूम में मेरे बाल बाँध देना! रात के खाने में क्या बनाऊँ? पराठा? या हल्के मसाले और फूलों के साथ सूखी सब्ज़ियाँ? जल्दी घर आ जाना। मैं तुमसे मिलने के लिए बहुत बेताब हूँ! मुझे हवाई जहाज़ का टिकट नहीं मिल रहा था - लेकिन किसी तरह मिल गया! मुझे वीआईपी टिकट मिला है। होन्नाटी घर में है, इसीलिए! नहीं तो, जैसे ही तुम घर में कदम रखते, मैं दरवाज़ा बंद करके तुम्हें कसकर गले लगा लेती! तुम बात क्यों नहीं कर रहे? क्या कमरे में कोई और है? कोई पुरुष या स्त्री? सच बताओ, हाँ! बताओ ही सही! मैं फ़ोन रखूँ?..." उसने रिसीवर नीचे रखते हुए कहा।

मुझे लगता है कि अभी इसमें कुछ कामेयों हैं! रहने दो! मैं आज देख लूंगा!
उसने रात करीब 9:30 बजे खाना बनाना खत्म किया। पंद्रह मिनट बाद, एक कार की आवाज़ सुनाई दी। होन्नाटी ने दरवाजा खोला। उसने रविंद्र को समझाया,
``मैडम ने दिल्ली से फोन किया था। लेकिन उस समय आप विधानसभा में गए हुए थे। इसलिए मैं आपसे संपर्क नहीं कर सका।"
"हां... मैंने ध्यान दिया..." यह बातचीत भी उसके कानों तक पहुंच गई।
रविंद्र कपड़े बदलने के लिए बेडरूम में गया। उसने अंदर झाँका और बेफिक्री से कहा,
गर्मी बढ़ने लगी है... जल्दी से कपड़े बदल लो। ये सूख जाएँगे...
वे दोनों खाने की मेज पर बैठ गए। उसने चिमटे से छोटे फूल उठाए और उन दोनों को चिढ़ाने लगी। ताकि भोजन के दौरान सन्नाटा न छाए, उसने विषय को आगे बढ़ाया।
“सिर्फ मेरे माता-पिता ही नहीं... आपके पिताजी भी मेरे ससुराल वालों से परिचित थे, इसलिए मैं समझती हूँ। आपके पिताजी भी यही बात कह रहे थे – रवि – और उन्हें भी आपकी याद आ रही थी। उन्होंने मुझे बताया कि आपके पति बहुत अच्छा लिखते हैं! उन्होंने बीच वाले पन्ने पर जो लेख लिखा था, वह तो कमाल का था! जब से वे बैंगलोर गए हैं, अखबार पढ़ते समय हमें बहुत अच्छा लगता है! क्या आपको याद है?”
उसने यह सवाल इस सोच के साथ पूछा था कि कम से कम हां या ना में जवाब मिले बिना बात नहीं बनेगी, अन्यथा उसकी हठधर्मिता उजागर हो जाएगी।
उसने होन्नाटी से कहा, "रात के खाने के बाद भी,
"अगर आप पूरी रात सितार बजाते रहें तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है! संकोच न करें!"
भले ही उसके पति का गुस्सा बढ़ जाए, लेकिन उसका इरादा उसे शांत रखने का था ताकि बहस की खबर होन्नाटी के कानों तक न पहुंचे।
वह जानती थी कि रात ग्यारह बजे रेडियो पर समाचार सुनना उसके पति की एक आवश्यक आदत थी। इसलिए उसने अपना भोजन धीरे-धीरे समाप्त किया और ग्यारह बजने के बाद चुपचाप अपने शयनकक्ष में चली गई।
जब वह अंदर आई, तो वह एक कुर्सी पर बैठा एक टाइप किया हुआ लेख देख रहा था। सितार की मधुर ध्वनि उसके कानों में गूंज रही थी, मानो कहीं दूर से आ रही हो।
वह उसके पास जाकर खड़ी हो गई। वह अपने हाथ में पकड़े लेख से नज़रें हटाकर दूसरी ओर देख रहा था, ध्यान नहीं दे रहा था। उसने पूछा,
"क्या हमें पश्चिम की ओर वाली यह खिड़की बंद कर देनी चाहिए? क्या हवा ठंडी है?"
उसने कुछ कहा नहीं।
उसने खुद ही खिड़की बंद कर दी। वह अभी भी पढ़ रहा था। अगर वह ऐसे ही खड़ा रहा तो हिलेगा भी नहीं! वह आगे बढ़ी और उसे गले लगाकर बोली,
रवि, मैं तुम्हें बताना चाहता था, मैंने तुम्हें फोन पर सब कुछ बता दिया था! अगर तुम माफी मांगने पर अड़े हो, तो कह दो! मैं पीछे नहीं हटूंगा! मुझमें इतना अहंकार नहीं है! सारा घमंड तुम्हारा है! चलो – मुझे साफ-साफ बताओ मेरी गलती क्या है! मैं उसे स्वीकार कर लूंगा!..."
वह वहां निष्क्रिय बैठा रहा।
उसने उसका चश्मा उतारकर मेज पर रख दिया। उसने उसका हाथ पकड़कर खींचा और कहा,
"चलो, वहीं बैठकर बात करते हैं..."

"...कृपया! मुझे खुद जैसा रहने दो..." उसने खुद को मुक्त करने की कोशिश करते हुए कहा।
मैं तुम्हें किसी भी बात से नहीं रोकूंगा। लेकिन क्या तुम मुझे बताओगे कि मैंने क्या गलती की है या नहीं? अगर तुम नहीं बताना चाहते, तो बता दो... मैं अनूप के कमरे में जाकर सो जाऊंगा..."
वह यह भी जानती थी कि वह इसे स्वीकार नहीं करेगा। कभी-कभी वह कहता, "तुम्हारी इच्छा—" लेकिन अब जब होन्नाटी कमरे में था, तो यह संभव नहीं था। वह दरवाजे के पास गई और कुंडी को छूकर उसकी ओर देखा।
उसने उसकी ओर देखा और कहा,
"अगर तुम्हें शर्म नहीं आती, तो जाओ! अगर तुम चाहो, तो कल सुबह मैं मल्लेश्वरम के सभी मुकाबलों में लड़ने के लिए भी तैयार हूं।"
यह मेरी शर्म का सवाल नहीं है!
"आपकी इज्जत दांव पर लगी है! क्योंकि मैं यहां आपकी अनुमति के लिए खड़ी हूं!" उसने जवाब दिया।
उसकी निगाहें उस पर टिकी हुई थीं। उसने भी नज़रें नहीं हटाईं। फिर उसने नीचे खींची हुई कुंडी को वापस ऊपर सरका दिया और उसके पास आ गई। उसने अपनी बाहें उसके चारों ओर लपेट लीं और कहा,
``रवि, तुम अब भी नवविवाहितों जैसे दिखते हो! जब तुम देखते हो तो कितने प्यारे लगते हो! रुको, मैं तुम्हें दिखाती हूं..." उसने चारों ओर देखते हुए कहा।
``इस दीवार पर एक छोटा सा दर्पण था, वो कहाँ गया? मुझे जाने दो। तुम इधर आओ..." उसने उसे ड्रेसिंग टेबल की ओर खींचते हुए कहा। लेकिन उसने विरोध किया।
उन्होंने आगे कहा,
लेकिन मैं कहती हूँ, ये किस तरह का गुस्सा है? मैं पूरी तरह मानती हूँ कि तुम गुलाब नहीं लाए... इतनी देर से... क्योंकि मैंने तुम्हें पहले नहीं बताया! तो फिर हुआ क्या?-" वह उसकी बाहों में गिरते हुए बोली। उसने उसी अस्पष्ट स्वर में फुसफुसाया जैसे उसने शादी के बाद उसके कान में फुसफुसाया था, 'रवि... मेरे रवि...'
उसके बाद, उसके लिए उसे पशु चिकित्सक के पास ले जाना आसान हो गया।
उसकी पहल कोई नई बात नहीं थी। रविंद्र ने बस मन और शरीर के बंधन को ढीला किया। उसके बाद, उसने कुछ नहीं कहा और उसने भी कुछ नहीं कहा। उसका शरीर ऐसा महसूस कर रहा था जैसे उसे ज़ोर का झटका लगा हो। यह जानकर उसका मन विजय की अनुभूति से झूम उठा। उसे पूरा यकीन था कि अब कोई सवाल बाकी नहीं रहेगा। अब उसके साथ उसका बंधन ज़रा भी कमज़ोर नहीं होना चाहिए! उसे अपनी बाहों में कसकर पकड़े हुए वह सो गई। उसका दिल उसके लिए प्यार से भरा हुआ था। मैं उसे पूरे एक साल के लिए कैसे छोड़ सकती थी? अगर मैं इसी तरह आती-जाती रहती, तो क्या होता? अगर मैं दो बार आती-जाती, तो तीसरी बार वह अपने असली रूप में आता! यह एक गलती थी! अब जाने दो - अब मैं जीत गई!
उस क्षण उसे बहल की याद आई और उसका मन क्रोध से भर उठा। उसे याद आया... वह कहा करता था,
मैं आक्रामक महिलाओं का बहुत सम्मान करता हूँ! आक्रामक स्वभाव के बिना महिलाओं के लिए व्यापार और उद्योग में आगे बढ़ना संभव नहीं है। यह स्वभाव उनका मूल स्वभाव होना चाहिए!
उसने मुझे सब कुछ बताकर मेरा फायदा उठाया था! अपने पति के लिए उसके दिल में उमड़ी कोमल भावनाएँ फिर से जाग उठीं। अगर मैं उसे सब कुछ बताकर माफी मांग लूं तो क्या होगा? उसे यह भी लग रहा था कि उसे खुद को ऐसी महिला

के रूप में पेश करना चाहिए जो परिस्थितियों के कारण मुसीबत में फंसी है। लेकिन तुरंत ही, उसके मन का एक कोना सतर्क हो गया। उसने मन ही मन तय कर लिया कि इस घटना के लिए उसे दोषी ठहराने का कोई सवाल ही नहीं उठता... बल्कि, अगर उसे कहीं से भी पता चल जाए और वह पूछताछ करे, तो मैं साबित कर दूंगी कि यह सच नहीं है! अगर मैं खुद को उसके सामने एक बेबस महिला के रूप में पेश करूँ, तो वह मुझे माफ करेगा या नहीं, यह एक अलग सवाल है... इससे पहले, वह निस्संदेह मुझे दोषी मानेगा और सारी घटना का दोष मेरे व्यापार करने के दृढ़ संकल्प पर डालेगा। उसके दिल में एक अजीब सी संतुष्टि भर गई।
सारंगा की मधुर ध्वनि अभी भी कानों में गूंज रही थी। दूर से आने वाला संगीत हमेशा मनमोहक होता है। उसका मन होन्नाटी की ओर मुड़ गया। शाम को उसने जो कहा था, उसका उस पर ज़रूर असर हुआ था। इसके बाद, वह अपने माता-पिता से मिलने आना बंद नहीं करेगा। शाम को उसने उससे कहा था,
"मैं ये नहीं कहूंगी कि आप सब कुछ छोड़कर तुरंत चले जाएं। एक हफ्ते के लिए यहां आइए - अगर आपको यहां अच्छा लगे तो यहीं रुक जाइए। चाहे कुछ भी हो जाए, ये आपका घर है। बैंगलोर को सतारी के लिए दिल्ली जैसा अनुकूल वातावरण कहां मिलेगा?" ये ज्ञान शीतल का है! ग्राहक को समझाते हुए भी, वह हमेशा इस बात पर जोर देती हैं कि उसे ये महसूस होना चाहिए कि "ये उसका अपना फैसला है"!
जब वह सोच रही थी, सोफे पर सो रहे रविंद्र ने अपनी करवट बदली। वह बेचैन हो गया और कुछ पल बाद, उसकी पीठ उसकी तरफ करके सो गया। फिर भी, उसने हार नहीं मानी और उसे पीछे से गले लगा लिया और वहीं लेटी रही। इस गाने में रोमांस था - पागलपन था - उस गाने की धुनें ऐसी लग रही थीं मानो कोई मदहोश भौंरा पागलपन की चरम सीमा पर पहुँचकर मरने वाला हो। कुछ पलों के लिए, उन धुनों में उलझा हुआ मन रविंद्र की ओर मुड़ा। वह सोया नहीं था। सोने का नाटक करने के लिए चुप्पी साधी जा सकती है। लेकिन क्या मैं सांस लेने और सांस लेने में फर्क नहीं समझती? अगर मैं उससे बोलने को कहूं, तो वह जवाब नहीं देगा। यह मेरे लिए अपमान होगा। अभी भी, मेरा शरीर उसके करीब जाने की कोशिश कर रहा है और उसका शरीर चुपचाप मुझे कोस रहा है। एक साल से ज़्यादा समय बीत चुका है, पहली मुलाकात में उसके शरीर ने साथ दिया - क्या बस यही वह चाहता था? उसके बाद, उसके पास कहने को कुछ नहीं है?
वह उससे दूर हट गई और बेचैन हो गई। फिर उसने अपनी स्थिति बदली और उसकी ओर पीठ करके सो गई।

■

सुबह उठते ही वह रसोई में दाखिल हुई। उनके ऑफिस जाने का सामान्य समय ग्यारह बजे था। उससे पहले उनका खाना खत्म करने का नियम था। उन्होंने उसी हिसाब से खाना बनाना शुरू किया। चाय पीने के बाद होन्नाटी रियाज़ करने बैठ गई। जब वे साथ होते थे, तो रविंद्र सुबह का खाना बनाते थे। जब भी होन्नाटी उनकी मदद करने की कोशिश करती, रविंद्र उनका विरोध करते थे। होन्नाटी ने यह बात कांति को उसी दिन बताई थी जिस दिन वह आई थीं। अब, जैसे ही कांति रसोई में जातीं, वह अपने कमरे में चले जाते, दरवाजा बंद कर लेते और सितार बजाने लगते। फिर भी, रविंद्र उनकी मदद करने के लिए रसोई में नहीं गए। वह हॉल में सोफे पर बैठे बेंगलुरु से छपे सभी अखबार देख रहे थे। देखने के बाद उन्होंने सारे अखबार कार में रख दिए। कांति जानती थीं कि यह उनकी रोज़ की आदत है।
खाना बनाने के बाद उसने उसे बुलाया। खाना खाने के बाद वह दफ्तर के लिए निकल गया। खाना खाते समय भी रविंद्र होन्नाटी को विस्तार से बता रहा था कि

मुख्यमंत्री विपक्षी दल द्वारा लगाए गए रिश्वतखोरी के आरोपों को किस तरह खारिज कर रहे हैं। बीच-बीच में होन्नाटी उससे इस तरह बात कर रही थी कि उसे पता ही न चले कि रविंद्र और उसकी पत्नी में गहरा मतभेद है। अगर होन्नाटी को पति-पत्नी के बीच अनबन का पता चल जाता तो यह बहुत बड़ी बात होती, इसलिए वह समझ सकती थी कि रविंद्र सावधानी बरत रहा है।
रात के खाने और शाम की खबरें देखने के बाद, रविंद्र सोने चला गया। उसने भी रसोई बंद कर दी, दरवाजा ताला लगा दिया और मच्छरदानी के अंदर चली गई। उससे एक हाथ की दूरी पर सोते हुए, उसने बिस्तर का स्विच बंद कर दिया। उसने भी उसे छुआ नहीं। वह ऐसे सो रहा था मानो सितार सुन रहा हो। होन्नाटी अभी भी उसी तरह सारंगा आलाप बजा रहा था। वह यह कहने के बजाय कि वह बजा रहा है, यह देख रहा था कि कैसे नए स्वर और आलाप के टुकड़े इसमें जुड़ते हैं और राग के साथ अच्छी तरह घुलमिल जाते हैं, या कैसे वृंदावनी सारंगा के स्वभाव को व्यक्त करती है, और फिर वह विशिष्ट आलाप तय कर रहा था। वह दोपहर 3:30 से शाम 6-7 बजे तक कमलापुर के तबला-सती के साथ बजाता था - वह बहुत जिद्दी है! उसे दोपहर की घटना याद आ गई। जब वह कमलापुर पहुंची, तो उसने उन दोनों के लिए चाय बनाई और फिर सितार सुनने के लिए वहां बैठ गई, तभी उसने बहुत विनम्रता से कहा,
"मैं अभी सीख रही हूं! अगर कोई मेरे सामने बैठकर सुन रहा होता, तो यह मेरे लिए ठोकर खाने जैसा होता।" जब वह उठने लगी, तो उसने माफ़ी मांगते हुए कहा, "माफ़ कीजिए।" फिर भी, वह हॉल में बैठकर सितार सुनती रही। भला वह और क्या कर सकती थी जो अपने पति से मिलने आई थी और उसने उसे ठुकरा दिया था?
आज भी वही पति दो हाथ की दूरी पर सो रहा है। मैंने दूरी कम किए बिना एक उंगली की भी जगह रखी थी! उसे याद आया कि इस बारे हम उससे बात करते समय सम्मानपूर्वक बोल रहे थे। जानबूझकर उसे चिढ़ाने के लिए नहीं। हमारे मुंह से बस एक ही शब्द निकलता है, 'आप'। और तो और, हम ज्यादातर समय कन्नड़ में बात कर रहे हैं। क्या ऐसा इसलिए है क्योंकि दिल्ली आने पर हमें अपनी मां से बात करने की आदत हो गई थी? क्या ऐसा इसलिए है क्योंकि वह माता-पिता से बात करते समय हमें सम्मानपूर्वक संबोधित करती हैं? भाषा अपने आप मुंह से नहीं निकलती। जब कोई खास भावना हमारे मन में आती है, तभी एक खास तरह की भाषा हमारे मुंह से निकलती है।
शादी के बाद, अपने प्यार का इज़हार करते समय, मैं 'तुम', 'तू', 'तेरा', 'तुम्हारा' आदि कहने लगी। उस समय उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी। बाद में, हम दोनों को इसकी आदत हो गई। लेकिन आज सुबह से उनके मुंह से एकवचन शब्द नहीं निकला है।
कुछ देर बाद उसने देखा कि वह सो गया है। वह उससे थोड़ी दूरी पर सो रहा था। अचानक उसके मन में एक भयानक शंका पैदा हुई। क्या उसे बहल के बारे में कुछ पता चल गया होगा? उसने बाद में सोचा - उसे कैसे पता चलेगा? कौन बताएगा? शीतल उन लोगों में से नहीं थी जो दोस्तों को धोखा देते हैं। इन सब में, उसकी अपनी ज़िद थी - कंपनी के फायदे के लिए! मैंने अपनी मर्ज़ी के खिलाफ़ यह किया था - ऐसे समय में बताना नामुमकिन था। अगर किसी और ने देख लिया होता तो क्या होता? अगर उसने देख लिया होता, तो क्या गड़बड़ हो जाती? एक महिला जो व्यापार चलाती है, उसके लिए ऐसे होटल में जाना क्या गुनाह है? अंदर से बंद और दरवाज़ा बंद कमरे में क्या हुआ, यह कौन देखेगा? ऐसे बड़े होटलों में कोई ध्यान नहीं देता कि कौन पति है और कौन पत्नी। अगर कोई ऐसी शरारत करने लगे, तो उस होटल को दिवालिया होने में ज़्यादा समय नहीं लगेगा।

लेकिन इन कागजी कर्मचारियों के बारे में क्या कहा जा सकता है, बताओ! कौन जाने कहाँ से खबरें हासिल करने के लिए वे क्या-क्या इंतजाम करते हैं! कंपनी के अतिथि के तौर पर मैंने अपना मुंबई का पता दिया है और वहाँ हस्ताक्षर भी किए हैं। अगर कोई इससे और जानकारी निकालने की कोशिश करे तो क्या होगा?
इस विचार से वह भयभीत हो गई। उसे काफी देर तक नींद नहीं आई।
लेकिन सुबह रसोई में काम करते समय उसे एहसास हुआ कि इस बेबुनियाद डर का कोई मतलब नहीं था। उसके गुस्से का असली कारण यह था कि मैं उसकी इच्छा के विरुद्ध वहाँ रुकी रही और अब उससे छह या सात गुना ज़्यादा कमाती हूँ। उसे जितना गुस्सा करना है करने दो! मुझे क्यों परेशान होना चाहिए? इस विचार से उसे काफी सुकून मिला।
जब वह दफ्तर गई, तो उसका मन हुआ कि वह अपने दोस्तों को फोन करे। हर कोई उसे दिल्ली में उसके कारोबार और उससे होने वाले आर्थिक लाभ के बारे में बताना चाहता था। लेकिन जब तक वह कमरे में पहुंची, उसका इरादा बदल गया। जब वह उत्साह से इसके बारे में बात कर रही थी, तो उसे पूरा यकीन था कि हर कोई उससे पूछेगा, "तो अब तुम्हारा पति कहाँ रहेगा?" उसे या तो सच बताना होगा या कोई झूठी कहानी गढ़नी होगी। आखिर ये सब बकवास उसे किसने बताई थी?
उस दोपहरे, हमने लंच के दौरान होन्नाटी के साथ खुलकर बातचीत की। वह अपने माता-पिता के बारे में और अधिक विस्तार से पूछ रहे थे। उन्होंने दिल्ली में होने वाले संगीत कार्यक्रमों के बारे में भी जानकारी ली।
कांति खुद कई सालों से दिल्ली के किसी संगीत समारोह में नहीं गई थीं। अपने काम में पूरी तरह मग्न रहने के कारण उन्हें इस पर ध्यान देने का समय ही नहीं मिला था। फिर भी, अखबार पलटते समय उनकी नज़र इस विषय से जुड़ी खबरों पर पड़ जाती थी, इसलिए उन्होंने अपनी जानकारी के आधार पर उन्हें इसके बारे में थोड़ा-बहुत बताया। उनकी बातचीत कमलापुर पहुँचने तक जारी रही।
उस रात उसने इस विषय पर अपने पति से बात की, जो गहरी नींद में सो रहा था।
"मैं यहाँ सिर्फ आठ दिनों के लिए हूँ। अगर मैं अनुप को आमंत्रित करता हूँ, तो यह उसके साथ चार दिन रहने जैसा होगा।"
"उन्हें इस तरह बाहर भेजना स्कूल के नियमों के अनुरूप नहीं है।"
"तो मुझे जाकर उसे ले आना चाहिए..."
"अरे, चलो भी। मैं तो पिछले हफ्ते ही वहाँ गया था। मेरे पास इस रविवार तक समय नहीं है।"
मैं अकेले जाऊंगी। मैं न तो बस बदल पाऊंगी और न ही आगे पैदल चल पाऊंगी। मैं टैक्सी लूंगी। मुझे डर नहीं है। आपके पास समय होगा।
तो आप टैक्सी बुक करवा लीजिए। मैं कल सुबह निकलूंगा और परसों रात आठ बजे तक वापस आ जाऊंगा। अगर आपके पास समय नहीं होगा तो मैं आपको फोन कर दूंगा।
"मैं करूंगी," उसने कहा। बोलते-बोलते उसकी आवाज़ तेज़ होती जा रही थी। लेकिन फिर उसने सोचा, ऐसे आदमी को वो और कैसे समझाएगी? चाहे कुछ भी हो जाए, उसने कहा कि वो यहाँ सिर्फ़ एक हफ़्ते के लिए है, जो कि ठीक है। उसे समझने दो कि उद्योग के प्रति हमारी भी ज़िम्मेदारी है!
होन्नाटी वही धुन बार-बार बजा रहे थे। एक ही धुन को बार-बार बजाने से उन्हें बोरियत क्यों नहीं होती? मुझे उनसे कल पूछना चाहिए।
"बच्चे के माता-पिता का टैक्सी से वहां जाना, टैक्सी से पूरा दिन वहां बिताना सही नहीं है। मैंने कभी वहां कार से यात्रा नहीं की है। अनुपाले ने मुझे यह भी चेतावनी दी है कि मैं अपने किसी भी दोस्त को यह न बताऊँ कि मेरे पास कार है। वह इसके पीछे के सिद्धांत को भी समझता है!"

वह गुस्से से आग बबूला थी। इतनी मेहनत से कमाए पैसे खर्च करने से मुझे कौन रोक सकता है? यह सवाल उसके मन में उठा, लेकिन उसने इसे ज़बान पर नहीं आने दिया। क्योंकि वह इसका जवाब भी जानती थी। उसे वह समय याद आया जब उसने उसे दिन की चिलचिलाती धूप में धूल भरी बस से बाहर खींच लिया था। उस समय उसने कहा था,
पुराने आश्रमों में एक अनुशासन था। चाहे वह राजकुमार हो, गरीब ब्राह्मण-कुमार हो, सारथी हो या किसान का पुत्र, सभी एक जैसे वस्त्र पहनते थे, बाल मुंडवाते थे, आश्रम में आवश्यक शारीरिक श्रम करते थे और पास के शहर जाकर हाथ फैलाकर 'ॐ भवति भिक्षम देहि' का जाप करते थे। इस प्रकार, माता-पिता की संपत्ति को भूलकर, उससे उत्पन्न अहंकार दूर हो जाता था और वे सब मिलकर 'सहना भवतु-सहनौभुनक्तु, सहवीर्यं करवावहै' का जाप करते हुए भोजन करते थे - और यह सिलसिला चलता रहता था!
उसे डर था कि अगर उसने अभी इस विषय को उठाया तो फिर से झगड़ा शुरू हो जाएगा। उसकी नज़र में, देश की संपत्ति बढ़ाने के लिए अपनी बुद्धि का इस्तेमाल करने और कई जोखिम उठाने वाले सक्रिय लोगों और बाकी भेड़चाल चलने वालों में कोई फर्क नहीं था! रहने दो... मैं भी देख लूँगी...
उसने कहा,
"तुम्हारे पास अभी आने का समय नहीं है, तुम कहती हो! क्या मुझे उस जंगल के रास्ते पर अकेले चार मील पैदल चलना चाहिए?"
उसे तुरंत समझ नहीं आया कि क्या कहे। उसने भी कुछ नहीं कहा। थोड़ी देर में ही उसे नींद आ गई।
सुबह चाय पीते हुए उन्होंने कहा,
"वे कह रहे थे कि होन्नाटी भी कभी अपने संकाय के सहयोगियों से मिलना चाहते हैं। तुम उनके साथ चलो। धूप से बचने के लिए छाता ले जाना। मैं उनसे बात करूँगा।"

■

बैंगलोर से टिप्पुर तक चार घंटे की बस यात्रा के बाद, कांति बुरी तरह थक चुकी थी। टिप्पुर के डेबदा बस स्टैंड पर अगली बस का इंतज़ार करते-करते, बस आते ही सीट पाने के लिए जानवरों की तरह धक्का-मुक्की करते हुए, एक घंटे तक इंतज़ार करने के बाद, वह हांफते-हांफते बिदारली बस स्टैंड पर उतरी। बस स्टैंड पर उतरते ही होन्नट्टी उसके लिए एक गिलास पानी ले आया। उसे थोड़ी राहत मिली। बाद में, उसने अपने बैग से सेब और बिस्कुट निकालकर उसे खिलाए। वह अपना छाता भी लाया था। दोनों ने अपने-अपने छाते खोले और विश्वविद्यालय की ओर चल पड़े।
सड़क पर चलते हुए भी होन्नाटी अपने माता-पिता के बारे में और अधिक जानना चाहता था। कांति ने उसे बताया था कि उसकी माँ उसकी हर हरकत पर नज़र रख रही है, और तब से उसका मन अपनी माँ की हर हरकत की यादों में डूबा रहता था। उसके पिता का गुस्सा भी शांत हो गया था, इसलिए उसकी माँ ने एक संदेश भेजा था। होन्नाटी को लगता था कि श्रीमती रविंद्र न केवल उसके माता-पिता से एकमात्र संपर्क सूत्र हैं, बल्कि उनकी इकलौती प्रतिनिधि भी हैं।
उसने अपनी माँ का विषय उठाते हुए फिर से पूछा,
"भाभी, क्या आपको मेरी माँ के चेहरे पर झुर्रियाँ दिख रही हैं?"
वह कुछ नहीं बोली।
शायद उसने उसकी बात ठीक से नहीं सुनी, इसलिए वह उसकी तरफ देखने के लिए मुड़ा।
वह उसके ठीक बगल में चल रही थी। सिर पर छाता होने के बावजूद, उसका चेहरा, गर्दन और माथा पसीने से भीगा हुआ था।

उन्हें एहसास हुआ कि उन्होंने मेरा सवाल सुन लिया है – लेकिन उनका ध्यान कहीं और था। वे बिना कुछ कहे आगे बढ़ने लगे।
उसने उसका पूछा हुआ सवाल साफ़-साफ़ सुन लिया था। उसे यह भी महसूस हुआ था कि उसके बाद वह मुड़ गया था। उसके बोलने के तरीके से वह असहज हो गई थी। उसे फिर से कहने दो... फिर मैं तुम्हें बताऊंगी कि क्या कहना है... वह मन ही मन फैसला करते हुए आगे बढ़ रही थी। गाड़ी की चेकोरी में तीन फुट ऊंची घास की पट्टी उग आई थी - दोनों बारी-बारी से चेकोरी से कदम बढ़ा रहे थे। कांति को आसपास के पेड़ों का एहसास होते ही चिढ़ हो गई। ये पेड़—अरे! फिर से मक्खियाँ उसके सिर के ऊपर मंडराने लगीं!...
उसके बिना कुछ कहे चले जाने पर उसे गुस्सा आया। उसे एहसास हुआ कि अगर उसने अभी चुप रहकर यह मौका गंवा दिया, तो उसे इस विषय पर उससे दोबारा बात करने का मौका कभी नहीं मिलेगा।
उसने कहा,
मैं परसों से आपको देख रही हूँ! आप मुझे भाभी कहकर बुलाती हैं! मैं आपके स्नेह और प्रेम को महसूस कर सकती हूँ। मैं सचमुच आपके साथ प्रेमपूर्ण संबंध बनाना चाहती हूँ। लेकिन क्या हमारे बीच के प्रेम और मित्रता में किसी और के दखल की कोई अविश्यकता है?
उसे उसके शब्दों का सही अर्थ समझ नहीं आया। उसने उसकी ओर देखा। वह भी उससे यही उम्मीद कर रही थी। जब उनकी नज़रें मिलीं, तो उसने कहा,
ज़रा सोचिए। भाभी का मतलब बड़े भाई की पत्नी होता है। यह सच है कि देवर-देवर का रिश्ता भी घनिष्ठता का अच्छा उदाहरण है। लेकिन इसके लिए बीच में रवींद्र का होना ज़रूरी है! क्या राम-लक्ष्मण-सीता की तस्वीरें नहीं हैं? राम के साथ लक्ष्मण यहाँ और सीता वहाँ! लक्ष्मण और सीता का आपस में कोई संवाद नहीं है। क्योंकि राम के बिना तो उनका कोई अस्तित्व ही नहीं! क्या आप मेरी बात समझ रहे हैं?
उसे उसकी बातें अस्पष्ट रूप से समझ में आईं। उसने कहा,
हम्म...
"क्या हुआ?" उसने तुरंत पूछा।
जो विचार मन में आ रहा था, वह अभी स्पष्ट रूप से सामने नहीं आया था। जब वह इस बारे में थोड़ा सोच-विचार कर रहा था और इसे शब्दों में व्यक्त करने की कोशिश कर रहा था, तभी मक्खियों का झुंड उनके सिर के चारों ओर मंडराने लगा। उस आवाज़ ने उसे डफ की याद दिला दी और उसका मन संगीत की ओर मुड़ गया। दो स्वरों को साथ-साथ रखने से धुन का स्वरूप स्पष्ट नहीं होता। केवल जब एक तीसरा स्वर विशेष ढंग से जोड़ा जाता है, तभी किसी विशेष धुन की बारीकी प्रकट होती है। यदि कोई स्वर अकेला बजाया जाए, तो उसका कोई व्यक्तित्व नहीं होता। वह स्वर सप्तक के दायरे में ही मौजूद होता है। यदि कोई दायरा न हो, तो उसके स्वर का भी कोई अर्थ नहीं होता। लेकिन उसे यह सब बताने का कोई फायदा नहीं था।
उसने जारी रखा,
मुझे ठीक से समझ नहीं आया। आपने राम-लक्ष्मण-सीता की तस्वीर का उदाहरण दिया। जब मैं हाई स्कूल में पढ़ रहा था, तब मैं एक संस्कृत नाटक का एक हिस्सा पढ़ाता था। उसमें लक्ष्मण कहते हैं - मैं सीता के किसी अन्य आभूषण को पहचान या खोज नहीं पाऊंगा। मैं केवल उनके पैरों में पहनी अंगूठी को ही पहचान सकता हूं। मैं यह बात भूल गया था! अब याद आने पर मुझे लगता है कि उस समय दिर-भावजय मानसिक रूप से पद्ठ विधि का पालन कर रहे थे। उस समय यही विधि प्रचलित थी!

"तुम्हारा मतलब है कि यह एक अच्छा तरीका था?" उसने अपने सिर के चारों ओर मंडरा रही मक्खियों को भगाते हुए पूछा।
"यह भी एक तरह की अतिशयोक्ति है!"
मैं बस इतना कहना चाहती हूँ कि हर व्यक्ति का अपना एक व्यक्तित्व होता है। मुझे लगता है कि इसे नकारना और किसी व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति की छाया में पहचानना सही नहीं है। उदाहरण के लिए – जब मैं बैंगलोर आई, तो आपने मुझे श्रीमती रविंद्र कहकर पुकारा। इसका मतलब है कि रविंद्र से अलग मेरा कोई व्यक्तित्व नहीं है! या यूँ कहें कि आपके और मेरे बीच कोई अलग रिश्ता नहीं है। बाद में आपने मुझे भाभी कहना शुरू कर दिया। इसका भी वही मतलब है। इसका मतलब है कि एक महिला का कोई अलग व्यक्तित्व नहीं होता – उसका कोई अस्तित्व ही नहीं होता, क्या आपका यही मतलब है?
अब उन्हें उनकी बातों का अर्थ स्पष्ट रूप से समझ आ गया था। नारी मुक्ति की भावना। आईआईटी और बाद में आईआईएम में पढ़ाई के दौरान, उनकी कक्षा की कुछ लड़कियाँ अपने साथ हुए अन्याय के बारे में - सामान्य तौर पर महिलाओं के साथ हुए अन्याय के बारे में - बड़े जोश से बात करती थीं। कभी-कभी वे खुद भी उस हमले का शिकार हो जाते थे। फिर भी, कई बार उन्हें समझ नहीं आता था कि उन्होंने कितना बड़ा अन्याय किया है। तब भी, वे लड़कियाँ उन पर आरोप लगाती थीं - सनातन परंपरा की इतनी बड़ी पगड़ी तुमने पहन रखी है कि तुम्हें समझ ही नहीं आती! अगर तुम इस पगड़ी से बाहर नहीं निकल सकते, तो तुम्हारी सारी शिक्षा का क्या फायदा!
उसके कुछ सहपाठी बहुत गंभीरता से यह पता लगाने की कोशिश कर रहे थे कि इन लड़कियों का असली मतलब क्या था।
लेकिन तब भी होन्नाटी के पास इस पर ध्यान देने का समय नहीं था। जब भी उन्हें पढ़ाई से समय मिलता, वे अपना सितार लेकर पीछे वाले कमरे के एक कोने में बैठ जाते और उसे बजाते। उस बड़े नीम के पेड़ के नीचे...
जब वह उन यादों में खोया हुआ चला गया, तो उसने पूछा,
"अब से मैं भाभी कहलाना नहीं चाहती। तो आप मुझे क्या कहेंगे?"
"अगर आप कांतिबेन कहते तो क्या होता?"
"मुझे यह भी पता है कि आप अहमदाबाद में रहते थे। वहाँ सभी महिलाओं को बेन और सभी पुरुषों को भाई कहकर पुकारने का रिवाज है। लगता है आपने भी इसे अपना लिया है! लेकिन इसमें भी कुछ संबंध है! इसमें सामंतवाद का एक अंश निहित है। दिल्ली में भी, किसी व्यक्ति को बहनजी-भाईसाब कहकर पुकारने का ऐसा ही रिवाज है। किसी व्यक्ति को सिर्फ एक नाम से पुकारने में क्या समस्या है?"
``यह सिर्फ गुजरात और दिल्ली में ही नहीं है। यह प्रथा पूरे भारत में प्रचलित है। हमारे देश में भी महिलाओं को अक्का कहकर पुकारा जाता है – यानी बड़ी बहन! यहां तक कि छोटी बच्ची को भी आ कहकर पुकारा जाता है..."
"...तो आप उसके छोटे से मन में यह बात बिठाने की कोशिश कर रहे हैं कि जीवन का अर्थ बच्चे को जन्म देना और माँ बनना है, है ना?"
वह उसकी आलोचना का कोई जवाब नहीं सोच पा रहा था। उसका दिमाग इस तरह की सामाजिक चर्चाओं को लंबे समय तक सहन नहीं कर सकता था। इसलिए उसने कहा,
ठीक है! अब से मैं आपको कांतिजी कहकर बुलाऊंगा..."
वह मान गई। चढ़ाई शुरू होते ही उसकी साँस फूल रही थी। उसके कपड़े पसीने से भीगे और चिपचिपे हो गए थे। अगर वह टैक्सी से आती, तो इस गरीब स्कूल के नियमों का क्या होता? उसे इस स्कूल के निरर्थक और क्रूर नियमों के बारे में बात करने की तीव्र इच्छा हो रही थी। लेकिन होन्नाटी, जिसने संगीत के प्रति जुनून के चलते इतनी बड़ी नौकरी छोड़ दी थी और इस स्कूल में दिन में दो बार खीर खा

रहा था – और सबसे महत्वपूर्ण बात, अब रबींद्र की शरण में रहकर संगीत का अभ्यास कर रहा था, उसे मेरा इस तरह बोलना बिल्कुल पसंद नहीं आएगा... वह तो मेरे दर्द को समझ भी नहीं पाएगा...
जैसे ही यह विचार उसके मन में आया, उसने अपनी जुबान पर अटके हुए शब्दों को तुरंत निगल लिया।
होन्नाटी ने कहा,
"अगर आपकी सांस फूल रही है, तो उस पेड़ के पास एक पत्थर है... चलिए उस पर थोड़ी देर बैठ कर आराम कर लेते हैं, फिर आगे बढ़ते हैं।"
वह सचमुच बहुत थकी हुई थी। फिर भी, उसने अपने सिर के ऊपर मंडरा रही मक्खियों को भगाते हुए कहा,
नहीं। अब और इंतज़ार मत करो। चलो, चलते हैं..."

■

अन्नाया को यह भी पता था कि वह दिल्ली में रहती है और अपना खुद का व्यवसाय चलाती है, न कि अपने पति के साथ बैंगलोर में रहती है। लेकिन इसका उससे कोई लेना-देना नहीं था... अन्नाया ने पूरे सम्मान के साथ उसका स्वागत किया, मानो उसे इस बारे में कुछ पता ही न हो, और कहा,
"कितनी गर्मी है! अगर मैंने कोई भेजा होता, तो चौराहे पर बैलगाड़ी भेजनी पड़ती। हाथ-पैर धोकर इस कमरे में आ जाओ। तुम्हारा कमरा यहीं है..." और कमरे का दरवाजा खोलते हुए उसने चटाई भी बिछा दी।
दोपहर के भोजन के दौरान स्कूल की घंटी बजी। अन्नाय्या ने अनूप को संदेश भेजा और खुद होन्नाटी से मिलने चली गया, जो अपने कमरे में नीचे गयी हुआ था।
अनूप को अपनी माँ के आने का पता तब तक नहीं चला जब तक कि वह कमरे में नहीं आ गई। माँ को देखकर वह चौंक गया। उन्हें देखते ही उसने पूछा,
"आप दिल्ली में कारोबार करते हैं, है ना? तो फिर आप बैंगलोर नहीं आएंगे?"
"क्या किसी ने तुम्हें आने से मना किया था? अब मैं वहीं से आ रही हूँ!" यह कहते हुए उसे खुद को बचाव करने की ज़रूरत महसूस हुई।
कौन जाने वो आगे क्या-क्या पूछेगा! मुझे और किस बात का समर्थन करना चाहिए?
लेकिन उन्होंने इस विषय पर आगे चर्चा नहीं की। इसके बजाय, उन्होंने पूछा,
"हमने होन्नाटी सर के लिए एक घर बनाया, क्या आपने देखा?"
"उन्होंने कहा कि तुमने इसे बनाया है... लेकिन उन्होंने इसे देखा नहीं..."
"चलिए... आपको दिखाते हैं..." वह कहता है और उठ जाता है।
वह भी उसके साथ चली गई।
करीने से लगाए गए नारियल के पेड़ों के बीच से इमारत की ओर जाते हुए, वह अपनी माँ को घर की योजना, निर्माण कार्य की देखरेख, बाद में सुझाए गए सुधारों और दूसरों से मिली सराहना के बारे में विस्तार से बताता था। वह गर्व से यह भी कहता था कि पूरी इमारत केवल तीन सप्ताह में बनकर तैयार हो गई थी।
वह उसे जो भी बातें बता रहा था, वे सब वही बातें थीं जो होन्नाटी ने उसे बैंगलोर में बताई थीं। अपने बेटे के मुंह से ये सब सुनकर वह बहुत खुश हुई।
जब वे वहाँ पहुँचे, तो दरवाज़ा बाहर से कुंडी से बंद था, पर ताला नहीं लगा था। दरवाज़े के ठीक दस फीट आगे एक छोटा सा परिसर था। यह परिसर पेड़ लगाकर बनाया गया था। अनुपान ने कुंडी खोली और दिखाया कि होन्नाटी साहब ने सोने और सितार बजाने के लिए बैठने की जगह कैसे बनाई थी। वह बार-बार उन्हें बता रहे थे कि उन्हें यह विचार कैसे आया।
अंदर पहुँचकर उसने भी वहाँ की चिकनी, रेतीली मिट्टी की प्रशंसा की। उसे अनूप पर गर्व महसूस हुआ। उसकी छड़ी पकड़कर उसने उसे अपने करीब खींचा और उसकी पीठ सहलाते हुए कहा,

``रे, तुम कितने बुद्धिमान हो!..."
अपनी माँ की प्रशंसा सुनकर उसका हृदय आनंद से भर गया। उसके प्रति उसका प्रेम उमड़ पड़ा।
उन्हें दिलली स्थित अपनी फ़ैक्ट्री की इमारत याद आ गई। ऊपरी मंज़िल को ज़रूरत के हिसाब से बनाने के लिए लगाए गए लोहे के खंभों को छोड़कर, इमारत अपने आप में सादी थी। जब इसका निर्माण चल रहा था, तब वह रोज़ाना निर्माण कार्य देखने जाती थीं, भले ही इसकी कोई ज़रूरत न हो। अब वही इमारत कंपनी से चार हज़ार रुपये प्रति माह किराया लेती है। आज अगर यह जगह किसी और को किराए पर दी जाए, तो किराया आसानी से दोगुना हो जाएगा! अगर इसमें दो-तीन और मंज़िलें जोड़ दी जाएं, तो किराया और भी बढ़ सकता है। इसके अलावा, कंपनी को भी इच्छानुसार बढ़ाया जा सकता है।
अनुप के चेहरे पर उसकी नज़र फिर से टिक गई। काम को उसी लगन से जलद से जलद पूरा करने का जज़्बा! उसके चेहरे पर दिख रहा दृढ़ संकलप! उसे भी बड़ा व्यवसायी बनना चाहिए! एक बड़ी फ़ैक्ट्री - एक बड़ा कारोबार - मेरे अनुप में तीस-चालीस साल में टाटा-बिरला को पीछे छोड़ने की क्षमता है! मेरा बेटा, वह अभी सिर्फ सोलह साल का है! वह मुझसे दो इंच लंबा है! उसने एक बार फिर उसे कसकर गले लगाया और कहा,
"बेटा! तुम कितने होशियार हो! मैं कितनी खुश हूँ, तुम्हें बता न सकूँ! मेरे अनूप! अनुप, अब आगे क्या करने की तुम्हारी योजना है?"
"इंजीनियर!" उसने बिना एक पल भी बर्बाद किए कहा।
उसका हृदय गर्व से भर उठा। उसके दादा और चाचा के आदर्श उसके हृदय में बसे हुए हैं! यह तो हमारे खून में है!
उसने जानबूझकर पूछा,
"क्यों यार? तुम इंजीनियर क्यों बनना चाहते हो?"
माँ, इस देश में आमूलचूल परिवर्तन केवल इंजीनियर ही ला सकते हैं! यहाँ कितना पानी बहता है और समुद्र में मिल जाता है! सह्याद्री पर्वतों से कितना पानी बहता है... उसकी कितनी शक्ति व्यर्थ ही बर्बाद हो जाती है! कितनी ही जगहों पर जमीन के नीचे पानी भरा पड़ा है और लोग सूखे से मर रहे हैं! हमारे जोगीगुड्डा जैसे कितने ही पहाड़ों पर लोहा बिखरा पड़ा है! कन्नमवाड़ी जैसा बड़ा बांध, शरावती जैसा जलविद्युत संयंत्र, भद्रावती जैसी इस्पात फैक्ट्री और गरीबों के लिए बहुत कम लागत में मजबूत घर – ये सब करने पर ही क्या जनता की सेवा करना सार्थक होगा? इंजीनियरे बने बिना क्या एक साधारण बी.ए., एम.ए. का छात्र ये सब कर सकता है? माँ, मैं विश्वेश्वरैया जैसा बनूँगा!
ये विश्वेश्वरैया कौन है? ये नाम मेरे दिमाग में आया था, लेकिन मुझे ठीक से याद नहीं आ रहा था। क्या पटना में मेरे समय में रेलवे विभाग में इसी नाम का कोई व्यक्ति था? हाँ। वो इंजीनियर था। लेकिन मैं आपको बता रही हूँ, वो तो हो ही नहीं सकता। जब वो याद करने की कोशिश कर रही थी, अनुप ने कहा,
"विश्वेश्वरैया कौन थे, क्या आप नहीं जानतीं माँ? कर्नाटक के जनक! मुंबई, हैदराबाद, कराची – उन्होंने कई गाँवों में पीने के पानी की व्यवस्था की। मैंने उनकी जीवनी पढ़ी है! डोडप्पा ने मुझे पढ़ने के लिए दी थी। पहले मैं कहती थी – हमें बिना एक पैसा वेतन लिए काम करना चाहिए! लेकिन डोडप्पा ने कहा – वेतन लेने में कोई बुराई नहीं है। विश्वेश्वरैया भी वेतन लेते थे। लेकिन बदले में वे चौबीसों घंटे उस काम में तल्लीन रहते थे! रिश्वत या किसी भी तरह के पैसे को छुए बिना, केवल अपने वेतने पर ही जीवन यापन करना चाहिए। माँ, क्या आप जानती हैं? विश्वेश्वरैया सरकारी काम के लिए दौरे पर जाते थे, सरकारी मोमबत्ती जलाते थे और फिर अगर उन्हें अपने ज्ञान के लिए मोमबत्ती जलानी होती थी तो

अपनी खुद की मोमबत्ती जलाते थे! यह उनकी जीवनी में लिखा है। मैं आपको वह जीवनी ला कर दूँगी! आपको भी उसे पढ़ना चाहिए..."
अनूप की कही हर बात उसके दिमाग में नहीं आई। फिर भी, उसके मन में एक बात पक्की थी। उसे डर था कि अपने बेटे को इस गांधीवादी स्कूल में भेजकर वह भी संन्यासी बन जाएगा। लेकिन अब वह डर गायब हो गया था। भला और कोई लक्ष्य होता ही क्यों – इंजीनियर बनने की महत्वाकांक्षा तो उसके मन में पहले ही पैदा हो चुकी थी!
चाहे वह विश्वेश्वरैया हो या कोई इंजीनियर जो थोड़ी अतिरिक्त आय स्वीकार करता हो, काम का ठोस होना ज़्यादा ज़रूरी है। आज भी दुर्गापुर-भोपाल क्षेत्र में हमारे पूर्वजों – आर. एम. मूर्ति – के काम को इतना सम्मान दिया जाता है! इसीलिए देहरादून में भी उन्हें सम्मानपूर्वक बुलाया और काम दिया जाता है? अगर हम खुद खाना नहीं चाहते और दूसरों को भी नहीं खाने देना चाहते, तो हमारे साथ काम करने वालों का उत्साह कहाँ से आएगा? अगर कोई इंजीनियर कड़ी मेहनत करता है, दिन-रात धूप-सर्दी में खुद को थका देता है, तो उसे एक निश्चित प्रतिशत मिलता है, इसमें कोई बुराई नहीं है – लेकिन दिल्ली सचिवालय में, हर स्तर पर, हर लाइसेंस जारी करते समय, हर कागज़ आगे बढ़ाते समय, हज़ारों-लाखों रुपये निगल लिए जाते हैं, यह सरासर अन्याय है! एक भेलू की तरह – उसका मन क्रोध से भर उठा। फिर उसे अपने पति की याद आई। मैंने गाँव से आने के दिन पहल की थी, इसलिए उन्होंने मुझे छुआ, बस! उसके बाद उन्होंने मुझे छुआ तक नहीं...
ऐसा क्यों? क्या वो हमारी बात सुने बिना दिल्ली में ही रुक गईं? हमें कैसे पता चलेगा? कौन बताएगा?
इन विचारों के साथ, उसका मन एक अजीब सी झिझक में डूब गया। उसे अनुपम की ओर मुड़कर देखना भी मुश्किल लग रहा था।
तभी, अंधेरे में से, उन्हें दरवाजे की ओर किसी के आने का आभास हुआ। कदमों की जरा सी भी आवाज किए बिना, कोई आया और दरवाजे पर खड़ा हो गया। दोनों ने मुड़कर देखा। तीस साल का एक आदमी, बिलकुल अन्नाय्या की तरह कपड़े पहने हुए—सफेद खादी की लुंगी और सफेद खादी की कमीज, और बाल पूरी तरह से मुंडे हुए—वहाँ खड़ा था।
अनुपना ने उसे देखते ही उसका परिचय कराया।
"सर, ये मेरी मां हैं। वो मुझसे मिलने आई हैं..."
उन्होंने अत्यंत विनम्रता से झुककर कहा कि वह उनकी भी माता होंगी।
"नमस्कार, माँ!..." उसकी निगाहें माँ के पैरों पर टिकी हुई थीं और उसने अपना सिर झुका लिया।
लेकिन परिणामस्वरूप, वह उस समय इलाज के लिए आवश्यक चार वाक्य बोलने के बारे में सोच भी नहीं सकती थी।
वे दोनों वहाँ अंतर्मुखी भाव से खड़ी थीं। अनुपान ने उन्हें जाने का इशारा किया। दोनों बाहर आईं, जूते पहने और दस-बारह कदम चलीं, या शायद उससे भी कम, तभी उन्हें अपने पीछे दरवाजा बंद करने की आवाज़ सुनाई दी।
दस-पंद्रह कदम और चलने के बाद, अनूप ने धीरे से कहा,
उनका नाम रामचंद्र है। वे हमारे गुरु हैं। वे बहुत अच्छा पढ़ाते हैं! वे कोई वेतन नहीं लेते। स्कूल के बाद, वे अपने कमरे में जाकर ध्यान करते हैं। वे कहते हैं कि रमण महर्षि के एक शिष्य ने उन्हें ध्यान सिखाया था। दरअसल, मैंने यह इमारत होस्टल मास्टर के लिए बनवाई थी। लेकिन वे बैंगलोर चले गए। इसलिए यह खाली पड़ी थी। रामचंद्र यहीं रहने लगे। वे कभी दरवाजा बंद नहीं करते। कक्षा में भी वे यही बात कहते हैं। अगर आप वो चीज नहीं रखते जो दूसरों के पास नहीं है, तो दरवाजे की क्या जरूरत? अंदर दीवार पर एक रस्सी बंधी थी, क्या आपने देखी? उस पर एक लुंगी और एक नेहरू शर्ट थी - बस यही उनके कपड़े हैं। एक चटाई

और एक कंबल। बस यही उनका सामान है! वे रात में भी दरवाजा बंद कर देते हैं ताकि कोई जानवर घर में न घुस सके - किसी चोर के डर से नहीं। वे रात में भी नहीं सोते - वे कहते हैं कि वे ध्यान करते हैं!
उसे अभी भी उसकी अंतर्मुखी आँखें याद थीं। आँखें खुली होने के बावजूद, वे सामने कुछ भी नहीं देख पा रही थीं। होन्नाटी के साथ भी ऐसा ही था। सितार बजाते समय वे भले ही एकाग्रचित्त दिखते थे, लेकिन उनके चेहरे पर वही अंतर्मुखी भाव होता था। कई बार तो उनकी आँखें पूरी तरह बंद रहती थीं। उस दोपहर उन्होंने कहा कि उन्हें अपने सामने किसी और के होने से असहजता महसूस होती है, इसलिए उन्होंने मुझे बाहर निकाल दिया। यह भी संन्यासी का एक गुण है, या शायद नहीं!
उसी समय अनूप कह रहा था,
"माँ, क्या आपने वह छोटा सा बांध देखा? मुझे बताइए, उस छोटे से बांध से यहाँ हर जगह पानी कैसे पहुँचता है!"
उसने उसे देखा। आधुनिक इंजीनियरिंग के दृष्टिकोण से, यह सब एक गड़बड़ थी। फिर भी, उसने पूछा,
"यह किस पेड़ की तना है?"
"कट्टाले। मुझे पेड़ के तने को सीधा काटना पड़ा, बीच का नरम हिस्सा हटाना पड़ा और फिर यह पानी का कुंड बनाना पड़ा! मैंने कर दिखाया! जानते हो?" उसने गर्व से कहा।
हालांकि यह सच था कि सारा काम उन्होंने ही किया था, लेकिन यह उनका अपना विचार नहीं था। अन्नाया ने ही उन्हें सभी गांवों में इस्तेमाल होने वाली विधि सिखाई थी। लेकिन वह यह भी जानती थीं कि उन्हें लोगों को यह बताने में विशेष आनंद आता था कि उन्होंने सब कुछ खुद ही खोजा है। उन्हें लगा कि इस महाविद्यालय में भी उनका स्वभाव वैसा ही रहा। एक तरह से यह अच्छा ही था। आखिर जो लोग हर चीज का श्रेय भगवान को देते हैं, वे इस संसार में क्या हासिल करेंगे?
बाद में, उन्हें लगा कि मेरा अनुपाच, जो हर जगह पैनी नज़र रखता था, रामचंद्रैया से बेहतर था, जो अंतर्मुखी था और कुछ नहीं देखता था! उन्हें दृढ़ विश्वास था कि अन्नाइया अपने बेटे को सही राह पर ले जा रहे हैं! उन्होंने जो भी आदर्श निर्धारित किए हों, उनका उद्देश्य चाहे जो भी हो, उन्होंने अनुपाच के मन में इंजीनियर बनने की आकांक्षा जगा दी थी! हमें इस बारे में उनसे थोड़ी बात करनी चाहिए...
वे वापस लौटे, तब तक होन्नाटी शारभन्ना के कमरे में जा चुकी थी। कमरे में केवल अन्नाइया ही था, उन्होंने दोनों को अंदर बुलाया और चटाई पर बैठने को कहा। फिर उन्होंने अनूप से पूछा,
"क्या तुमने खानी खत्म कर लिया? तुम्हारी माँ ने अभी-अभी खाना खत्म किया है।"
उसके जाने के बाद, अन्नाय्या ने पूछा,
"तुम होन्नाटी परिवार को अपना खुद का बनाया हुआ घर दिखाने ले गए थे, है ना?"
"तुम्हारे मार्गदर्शन के बिना वह अकेले घर कैसे बना सकता है?" उसने अनाया की तारीफ़ करते हुए धीरे से मुस्कुराया।
"मार्गदर्शन कहाँ है? उसने योजना समेत सब कुछ कर लिया था। ऐसे हर काम में उसका दिमाग बहुत तेज चलता है। हम किसी के दिमाग की कार्यप्रणाली को देखकर उसे प्रोत्साहित करते हैं। यही हमारे स्कूल का लक्ष्य है।"
आज वह विश्वेश्वरैया जैसा बनने का सपना देखता है – महान कार्य करने और देश की सेवा करने का! आपने उसे प्रोत्साहित किया और इंजीनियर बनाया, ताकि उसका जीवन सार्थक हो सके। इसके लिए, अगर वह अपना नाम बदलकर विश्वेश्वरैया रख ले, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। व्यक्ति को कर्म के मार्ग पर चलकर ही अपने जीवन का अर्थ खोजना चाहिए! विश्वेश्वरैया – आपका मार्ग भी

वहाँ है। अगर इसके बजाय वह ध्यान के नाम पर आंखें बंद करके बैठा रहे, तो इसका क्या लाभ? गांधीजी ने और क्या कहा था?
कांति की बातें सुनकर अन्नय्या को बहुत खुशी हुई। एक ओर तो उन्हें आश्चर्य भी हुआ। जैसा कि रवींद्र ने कहा था, वह विलासितापूर्ण जीवन की ओर आकर्षित है! उसे गांधीजी के आदर्शों और विचारों से घोर नफरत है। वह अपने बच्चे को इस स्कूल में भेजना भी नहीं चाहती थी। क्या वह सिर्फ मुझे खुश करने के लिए ऐसा कह रही है?
कारण चाहे जो भी हो, हमारा कर्तव्य है कि हम विद्यार्थी को उस क्षेत्र में प्रोत्साहित करें जिसमें उसकी विशेष रुचि हो। जब अनूप ने यहाँ दाखिला लिया था, तब हमने सोचा था कि वह बस एक अच्छा वक्ता बनेगा, बस! लेकिन अब हमें लगता है कि उसका दिमाग सभी तकनीकों में अच्छा काम कर रहा है। लेकिन इसके बाद, आज कौन कह सकता है कि अगले साल उसकी बुद्धि कैसी रहेगी, जब वह स्कूल खत्म करके कॉलेज में प्रवेश करेगा तो उसे कैसा लगेगा, और उसे कहाँ दाखिला मिलेगा?
उसने दोहराया कि इस स्कूल में आने के बाद अनुपाल में काफी सुधार आया है। इस पर अन्नय्या ने कहा,
"सब ईश्वर की इच्छा है! दीवार पर लगी उस तस्वीर को देखो। ये उसके परदादा और परदादी की तस्वीर है। जब तक उसका खून बह रहा है, उसे महान बनना ही होगा! उसे इसके लिए सही वातावरण देना हमारे संकाय का कर्तव्य है!" यह कहते हुए अनाया ने विनम्रता से हाथ जोड़ लिए, शायद उस तस्वीर के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए, या निराकार ईश्वर के प्रति, या अपनी प्रशंसा के प्रति, या इन सभी चीजों के प्रति।
उस अभिवादन से कांति को थोड़ी शर्मिंदगी महसूस हुई। तभी उसके मन में एक सवाल उठा? क्या उसके शरीर में मेरे पिता - इंजीनियर एम. एस. मूर्ति - का खून नहीं है? मेरे बेटे की बुद्धिमत्ता और चतुराई की बात करते समय मेरे पिता का ज़िक्र करने का क्या मतलब है? रवींद्र ने तो यहाँ अपने ससुर का नाम तक नहीं लिया है...
खाना खत्म करने के बाद अनुप वापस वहीं आ गया। उसे याद आया कि वह खास अनुप के लिए कैडबरी चॉकलेट लाई थी। अनुप का पसंदीदा खाना! अन्नय्या को अलविदा कहकर वह अनुप के साथ अपने कमरे में आई। अपने हैंडबैग से प्लास्टिक में लिपटा एक पैकेट निकालकर उसने अनुप को दिया और कहा,
मैं आपके लिए घर का बना आपका पसंदीदा खाना लाने वाली थी। लेकिन दिल्ली से जल्दबाजी में निकलना पड़ा, इसलिए यह संभव नहीं हो पाया। मैं बैंगलोर से कुछ मिठाई ला सकती थी। लेकिन बैंगलोर में अच्छी मिठाई कहाँ मिलती है?
उसने जल्दी से अपनी माँ द्वारा दिए गए डिब्बे को खोला। उसने एक चॉकलेट का रैपर हटाया और एक टुकड़ा मुंह में डाल लिया। जैसे ही उस जाने-पहचाने स्वाद ने उसकी जीभ को छुआ, उसकी आँखें चौड़ी हो गईं और भौंहें तन गईं। दो-तीन बार पलकें झपकाकर और स्वाद को जीभ पर फैलने देने के बाद, उसने सारी चॉकलेट चटाई पर बिखेर दीं और गिनना शुरू कर दिया। सैंतीस। कुछ देर हिसाब लगाने के बाद उसका चेहरा गंभीर हो गया, मानो वह किसी कठिन समस्या में फंस गया हो।
उन्होंने गंभीरता से कहा,
माँ, हमारे स्कूल का नियम है कि बच्चों के माता-पिता चाहे जो भी खाना लाएँ, उन्हें सबको बाँटने के बाद खुद खाना पड़ता है। यहाँ सिर्फ़ सैंतीस चॉकलेट हैं। अगर मुझे सिर्फ़ अपनी कक्षा में बाँटना होता, तो चालीस चॉकलेट लग जातीं। अब मैं स्कूल का मुख्य निगरानीकर्ता हूँ। इसे सिर्फ मेरे विभाग में नहीं गिना जा सकता। इसके लिए तीन सौ पचानवे चॉकलेट लगनी चाहिए। तुम इतनी कम क्यों लाए?

इस सवाल ने उसे चौंका दिया। उसे थोड़ा असहजता भी महसूस हुई। वह यह भी जानती थी कि उसे अकेले नहीं खाना चाहिए – उसे सबके साथ बाँटना चाहिए। वह खुद भी इस बात का पालन करती थी। यानी, वह अपना खाना अपने सबसे करीबी दोस्तों के साथ बाँटती थी। कॉलेज में पढ़ाई के दौरान भी वह शीतल, निर्मल और जया के साथ खाना बाँटती थी; लेकिन अगर वे उसे पूरी कक्षा या स्कूल के साथ बाँटने को कहते, तो वह कुछ नहीं खाती! कोई भी मीता-पिता ऐसा बर्दाश्त नहीं कर सकते थे – कहना तो दूर की बात!
उसने अनुपाला से कहा,
"बेटा, अगर मुझे पता होता, तो मैं उन सबके लिए दस-दस चॉकलेट लाती, तीन सौ पचानवे नहीं! मेरे पास पैसों की कोई कमी नहीं है। वैसे भी, मैं इतनी सारी चॉकलेट बस से कैसे ला सकती थी? अगर मैं कार या टैक्सी से आती, तो तुम्हारे पापा उन्हें तोड़ देते। अगर मैं कार से आती, तो वो उन्हें डिग्गी में भर देते। लेकिन अब कोई चारा नहीं है। इन्हें खा लो। या फिर अपने चार सबसे करीबी दोस्तों को दे दो।"
"यह कैसे संभव है? यह ठीक नहीं है। अब जबकि मैं मुख्य पर्यवेक्षक हूँ, यह कहना सही नहीं है कि ये चारों घनिष्ठ मित्र हैं और बाकी दूर के। यदि आप जानना चाहते हैं कि एक मुख्य नेता के महत्वपूर्ण गुण क्या होते हैं, तो डोड्डप्पा के बारे में सोचिए – वह आपको बता देंगे!" उन्होंने चटाई पर बिखरी चॉकलेटों को वापस कटोरे में रखते हुए कहा।
उसी समय, बाहर से कहीं से समूह गीत और हारमोनियम की आवाज़ सुनाई देने लगी। यह सुनकर अनुप अचानक खड़ा हो गया और बोला,
"माँ, होन्नाटी साहब गीयन सिखा रहे हैं! उन्होंने अपना हारमोनियम यहीं स्कूल में रखा है, है ना? सोमशेखराचार्य रोज़ प्रार्थना के दौरान थोड़ी देर के लिए इसे बजाते हैं ताकि यह खराब न हो जाए। उन्होंने मुझे भी थोड़ा सिखाया है। होन्नाटी साहब ने मुझे एक सुंदर प्रार्थना सिखाई है। मैं अभी आया ही था-" यह कहते हुए उसने फुर्ती से अपनी लुंगी का निचला किनारा उठाया, उसे अपनी कमर के चारों ओर लपेटा और वहाँ से भाग गया।
वह अपनी सीट पर बैठी सुन रही थी। तीन चक्करों के बाद, उसने फिर से ध्रुपद गाते हुए सुना। हालाँकि शब्द स्पष्ट रूप से सुनाई नहीं दे रहे थे, फिर भी वह इतनी दूरी से भी धुन समझ गई। हाँ—ये भीमपाला हैं। यहाँ तक कि गायक भी भीमपालाओं को गाते समय खो जाने नहीं देते। ये शब्द क्या हैं? हाँ—मुझे कुछ 'नन्ना हरन निंजा शरण' जैसा सुनाई दे रहा है। इसका क्या अर्थ है? मुझे इन कन्नड़ छंदों का अर्थ ठीक से समझ नहीं आ रहा है। लेकिन भीमपाला-होनट्टी—कोई बात नहीं। क्यों न हम भी बाहर जाकर सुनें? लेकिन नहीं। इस अजीब वातावरण में, मैं अकेली महिला हूँ—मैं वहाँ गई, और सबकी निगाहें मुझ पर टिक गईं और हम सब अजीब महसूस करने लगे! उसे याद आया कि बचपन में, सितार पकड़ने से पहले, वह हारमोनियम पर गीत गाती थी। भीमपाला की खामोशी—हम तब स्कर्ट और पोलका पहनते थे, और शांति ने अभी-अभी साड़ी पहनना शुरू किया था—वह उनके साथ डफली बजाती थी—उसे यह बात गहराई से महसूस हुई कि वह अकेली है—बिलकुल अकेली।
चॉकलेट बार ठीक उसके सामने पड़ी थी। ये ठीक नहीं है। उसे यहाँ से निकालने के लिए कुछ करना होगा। लेकिन कैसे? अब तक तो वो इस स्कूल-अन्नाया-यहाँ आदर्श के अवांछित प्रभाव में आ चुका है। ऊपर से उसका स्वभाव भी अपने पिता की तरह जिद्दी है! उसे रविंद्र पर गुस्सा आया।
उस रात अनुप अपनी माँ के कमरे में सोया था। चटाई पर लेटने के लिए एक कंबल और खुद को ढकने के लिए दूसरा कंबल। इमली के गूदे जैसी खट्टी गंध

उसकी नाक में घुस गई। उसे घिन आ रही थी। लेकिन अनूप को अच्छा लगा क्योंकि उसे इसकी आदत हो गई थी। उसने उससे फिर पूछा,
तो आप कभी बैंगलोर नहीं आएंगे?
जब उसने उससे वही सवाल दोबारा पूछा जो उसने उस दोपहर पूछा था, तो वह असमंजस में पड़ गई। उसने पूछा,
"किसने कहा था कि मैं कभी नहीं आऊँगी? क्या पापा ने तुम्हें बताया था?"
नहीं। मुझे बस ऐसा ही लगा था। जब आपने दिल्ली में फैक्ट्री शुरू कर दी है तो आप बैंगलोर में कैसे रहेंगे?
तुम्हारे पापा तुम्हारा तबादला दिल्ली करवाने की कोशिश कर रहे हैं।
"हां?" उसका मन असमंजस में था।
पिताजी इस स्कूल के कार्यकारी सदस्य हैं। वे कथित तौर पर इस संकाय के विकास के लिए कुछ निर्णय ले रहे हैं। इतने लंबे समय तक अनुपस्थित रहने के बाद वे स्कूल का काम कैसे संभालेंगे?
"क्या तुम्हें नहीं लगता कि तुम्हें हवाई जहाज से यात्रा करनी चाहिए, अनूप?" कांति ने बीच में पूछा। "हवाई जहाज की खिड़की के पास बैठकर बादलों के बीच से देखना कितना मजेदार होगा? क्या तुम्हें नहीं लगता कि तुम्हें बादलों के बीच से नीचे की ज़मीन, घर, सड़कें, जंगल, खेत, समुद्र, नदियाँ देखनी चाहिए?"
"मम्मी, हवाई यात्रा का किराया कितना होता है?"
अरे, ये तो कुछ भी नहीं है! मैं दिल्ली से बैंगलोर हवाई जहाज से आई थी! और आगे भी हवाई जहाज से ही जाऊंगी। जब आप कहते हैं कि आपकी फैक्ट्री है, तो इतनी रकम मामूली लगती है। लेकिन ये सिर्फ आपके पापा के पैसों से मुमकिन नहीं है। मैं आपकी इस छुट्टी के लिए टिकट भेज दूंगी! अरे, आपको पता है आपके दादा-दादी आपसे मिलने के लिए कितने बेताब हैं?
"जब आप विमान में बैठते हैं, तो आपको अपनी सीट बेल्ट बांधनी पड़ती है, है ना? वह सीट बेलट कैसी दिखती है?"
``यह चार उंगले चौड़ा है। यह बिल्कुल वहीं है, है ना? अगर आप इसे देखेंगे, तो आपको भी तुरंत पता चल जाएगा–"
लेकिन अब उसका मन बेचैन था, बैंगलोर से दिल्ली जा रहे विमान की खिड़की के पास बैठा, नीचे तुंगभद्रा, कृष्णा, गोदावरी और फिर दुनिया के नक्शे को देख रहा था! इस विचार मात्र से ही उसका मन भटकने लगा। उसने अपनी माँ को आगाह किया,
मम्मी, इसे भेजना मत भूलना! नहीं तो, आप जाते समय इसे बैंगलोर में ही छोड़ देना...

■

७

हालांकि उनके पिता ने कोई स्पष्ट नाराजगी नहीं दिखाई, लेकिन हेमंत को उनके घर में रहते हुए सतारी का अभ्यास करना असंभव लगा।
उनके पिता स्वभाव से सज्जन थे। उन्होंने अपना पूरा जीवन रिजर्व बैंक में बिताया था। समय और धन का हिसाब-किताब लगाकर विश्लेषण करना उनकी आदत बन चुकी थी। आज भी उनका पसंदीदा विषय देश की आर्थिक स्थिति पर विश्लेषण करना और लेख लिखना था। ऐसे समय में, उनके लिए अपने चालीस वर्षीय शिक्षित पुत्र के प्रति सहानुभूति दिखाना असंभव था, जो अपने कमरे में दरवाजा बंद करके बैठा सितार बजा रहा था।
अगर इस नज़रिए से देखें तो, वे रवि शंकर, विलायत खान, अली अकबर खान, जसराज के बारे में बहुत कुछ जानते थे। उन्होंने भीमसेन जोशी के साथ अपने दूर

के रिश्ते को भी बड़ी प्रशंसा के साथ समझा था। लेकिन सितार सुनने के प्रति रवींद्र की गहरी भावना और यहाँ उनके पिता की कठोर भावना में बहुत बड़ा अंतर था।
लेकिन इसमें अप्रत्याशित क्या है? मैं यहाँ क्यों आया?
एक दिन, जब कांतिजी ने मुझे दिल्ली से खबर सुनाई, तो मुझे मेरी मां का फोन आया।
"अरे, तुम्हारे अलावा हमारे पास और कौन है?" और फिर एक आह।
रवींद्र ने सब कुछ सुन लिया था और कहा,
``दिल्ली की जलवायु बेंगलोर की तुलना में सतारी के लिए हमेशा अधिक अनुकूल रही है। स्वार्थवश आपको यहाँ रखना मेरे लिए उचित नहीं है, क्योंकि मुझे आपका साथ नहीं मिलेगा।"
जब से हम यहाँ आए हैं, मेरी माँ का चेहरा कितना प्रसन्न रहता है! वो हर दिन कितने मन से खाना बनाती हैं! उन्हें संगीत से भी बहुत प्यार है। हालाँकि उन्हें रागदारी संगीत समझ नहीं आता, फिर भी वो बाहर सोफे पर बैठकर रियाज़ करते समय संगीत सुनती हैं।
मुझे दिल्ली आए एक महीना हो गया है। जैसे ही मैंने गुरुजी को मुंबई में आए इस बदलाव के बारे में बताया, उन्होंने कहा,
फिर हर बार मुंबई आने की ज़रूरत नहीं है। मेरे चाचा पुरानी दिल्ली में रहते हैं। 78 साल के होने के बावजूद, उनके कान माइक्रोफोन की तरह तेज़ हैं! उन्होंने मुझे सिखाया भी है। वे खुद घंटों सितार नहीं बजा सकते। लेकिन चारपाई पर बैठकर वे आपको ज़रूर सिखाएंगे – उसके बाद तो आपके लिए इतना ही काफी है। वहाँ तबला सीखने के लिए काफी बच्चे हैं। गोट्या बजाने वाले लड़के भी तबला पर शेर की तरह हैं, आप खुद देख लेंगे! अगर आप उन्हें हर महीने पाँच सौ रुपये देंगे, तो वे भी खुश रहेंगे।
जब होन्नाटी ने तुर्कमान क्षेत्र की गलियों में बंदे खान साहब के घर की तलाश शुरू की, तो उन्हें एहसास हुआ कि पूरा इलाका संगीतकारों का था।
खान साहब ने अपने सामने खेल रहे एक लड़के द्वारा गुरुजी को उर्दू में दिया गया पत्र पढ़ा। फिर उन्होंने कहा,
अगर सतारी इतनी शिक्षा पाने के लिए पागल है, तो वह खुश नहीं होगी! थोड़ा खेलो, देखते हैं! देखते हैं हमारे बेटे ने कितना ज्ञान दिया है—"
जब वह एक घंटे बाद लौटा, तो वह बहुत प्रभावित हुआ!
अगले दिन, वह सतारी के साथ निकला, साथ में सब्जियों का वह डिब्बा भी था जो उसकी माँ ने उसे दिया था। यह महसूस करते हुए कि सतारी के साथ भीड़ भरी बस में से निकलना असंभव है, उसने एक रिक्शा ले लिया।
दोपहर में रिक्शा से घर लौटते समय मेरे मन में हिसाब चल रहा था – बंदे खान और तबला के लिए आठ सौ रुपये। ऊपर से, रिक्शा का दैनिक किराया बीस रुपये है – वो भी पेट्रोल की कीमतें बढ़ने तक! मैं ये खर्च कैसे उठा पाऊंगा?
बाद में मुझे और भी अधिक एहसास हुआ – खान साहब ने आज रियाजा के दौरान जो सुझाव दिए, वे बेहद उपयोगी हैं!
इस बड़े गाँव में हर कदम पर आर्थिक समस्याएँ आना तय था। लेकिन उसने ठान लिया था कि वह किसी भी हालत में अपनी आर्थिक समस्याएँ अपनी माँ को नहीं बताएगा – चाहे राजधानी का सारा पैसा खर्च ही क्यों न हो जाए, इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा।

■

हेमंत के दिल्ली में कोई दोस्त नहीं थे। उन्होंने बी.टेक और एम.टेक की पढ़ाई पुणे और अहमदाबाद से की थी। अगर उन्होंने दिल्ली में भी पढ़ाई की होती, तो भी उनके सभी सहपाठी अब तक अलग-अलग जगहों पर चले गए होते। अगर

उनके कुछ दोस्त होते भी, तो उन्हें पता था कि उनके साथ बातचीत का आनंद लेना उनके लिए नामुमकिन होता।
फिर भी, सतारी में छह-सात दिन फंसे रहने के बाद, उसे लगा कि उसे किसी से दिल खोलकर बात करनी चाहिए। जोगीबेटा में रहते हुए भी, वह हफ्ते में एक बार कॉलेज आता था और वहां के शिक्षकों से बातें करता था। बेंगलोर में, वह कमलापुर से थोड़ी-बहुत बातें करता था। बाद में, वह रात में रविंद्र से बातें करता था। हम दिल खोलकर बातें करते थे, कि वह एक ऐसी इंसान थी जिसका दिल मन को शांति दे सकता था! ये सारी यादें उसके मन में उमड़ आईं, और उसका मन अपने दोस्त के लिए और भी चिंतित होता जा रहा था।
इस गाँव में आई क्रांति ने उसे दो-तीन बार फ़ोन किया था। एक-दो बार वह उसके घर भी आई थी और उसके सितार वादन और अन्य समस्याओं के बारे में पूछताछ की थी। उसे यह भी दृढ़ विश्वास था कि इस पूरे गाँव में वही एकमात्र ऐसी व्यक्ति थी जो चार वाक्य भी दोस्ताना लहजे में बोल सकती थी।
एक दिन, बंदे खान साहब के घर से लौटने के बाद, उनका सितार उठाने का मन नहीं हुआ। उन्हें किसी से दिल खोलकर बात करने की तीव्र इच्छा हुई। उनसे मिलने का सोचकर वे निकल पड़े। उनके पास उनकी फैक्ट्री का पता और फ़ोन नंबर वाला कार्ड था। उन्होंने उन्हें फोन करने का सोचा, लेकिन फिर सोचा, क्यों न उन्हें एक अप्रत्याशित सरप्राइज़ दिया जाए? एक बार जब वे यहाँ आई थीं, तो उन्हें अपने साथ ले गई थीं और उन्हें अपनी फैक्ट्री दिखाई थी।
जब वह बस से उसकी फैक्ट्री पहुंचा, तो वह अपने लेखा-जोखा के काम में मग्न थी। उसे देखते ही उसकी आँखें चमक उठीं और उसने उसका स्वागत करते हुए कहा,
आज तो ऐसा लगता है कि गर्मी कम करने की दिशा में रुझान बदल गया है!
वह उसके काँच के केबिन में बैठा था। उसके चारों ओर पाँच हज़ार सिलाई मशीनें चल रही थीं। एक तरफ़ तैयार कपड़ों को इस्त्री किया जा रहा था। दूसरी तरफ़ कपड़े पैक करने वालों का काम था...
उसने अपना सिर फिर घुमाया और उसकी ओर देखा। उसने कहा,
मैंने तय कर लिया था कि अगर तुम नहीं आओगे तो मैं तुमसे फिर कभी बात नहीं करूंगा।
मैं मुंबई गया और वापस आ गया। अब मुझे यहां अच्छे शिक्षक मिले हैं। वे मेरा अच्छे से मार्गदर्शन करते हैं..."
`` ...तुर्कमेन लोग द्वार के पास रहते हैं... पाँच सौ रुपये... तीन सौ तबला - रिक्शा के लिए प्रतिदिन बीस रुपये..."
"अरे बाप रे! आपको यह कैसे पता चला?" मुझे यह भी ख्याल आया कि यह सवाल पूछते समय मेरी माँ ने मुझे सारी बातें बता दी होंगी।
आपको कैसे पता? जिसे परवाह होगी, वह ज़रूरी जानकारी हासिल करने के लिए कुछ न कुछ करेगा। अगर उन्हें परवाह नहीं है, तो वे यह भी नहीं देख पाएंगे कि वह व्यक्ति जीवित है या मृत!
उसे दुख हुआ, मानो उसने कुछ गलत किया हो। उसने भी उसके चेहरे में आए बदलाव को गहराई से महसूस किया। उसने कहा,
"माफ़ करना, हेमंत! तुमने मुझे न तो फ़ोन किया और न ही मुझसे मिलने आए! मैं बहुत गुस्से में थी, इसलिए तुम्हें बता रही हूँ! अगर तुम यह कहना चाहते हो कि मुझे गुस्सा होने का कोई अधिकार नहीं है, तो यह बिलकुल अलग बात है!..."
अब वह सचमुच दुविधा में पड़ गया था। उसने बिना जवाब दिए बस उन्हें घूरता रहा। उसने वही सवाल दोबारा पूछा।
मुझे बताओ! क्या तुम कह रहे हो कि मुझे वह अधिकार नहीं है?

"मैं ऐसा कैसे कह सकता हूँ?" उसने असहज स्थिति से खुद को निकालते हुए पूछा। उसे डर था कि अगर वह इस मुद्दे को उठाता रहा तो वह असभ्य लग सकता है, इसलिए उसने विषय बदल दिया।
मुझे पता चला है कि आपका सितारी रियाज़ इतनी तेजी से प्रगति कर रहा है कि अगले दो वर्षों में यह पूरे देश पर अपनी छाप छोड़ेगा! – यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई है!
वह उसकी बातों से प्रसन्न भी हुआ। उसने कहा,
मुझे पूरे देश के बारे में तो नहीं पता। क्या इसे हवाई जहाज़ का टेक-ऑफ नहीं कहते? लगता तो कुछ ऐसा ही है! गुरुजी राग को इतनी अच्छी तरह समझाते हैं कि जब मैं इसे सुनता हूँ, तो मुझे लगता है कि राग का अर्थ है हवा में स्वतंत्र रूप से तैरना। अब मैं राग के आकाश में तैरने का अनुभव कर रहा हूँ..."
हेमंत! मैं बहुत खुश हूँ, बताऊ! क्या तुम एक दिन मेरे लिए सितार बजाओगे? अगर हाँ, तो मैं तुम्हारे गुरुजी के घर सुनने आऊँगी। या अगर तुम चाहो, तो मेरी दोस्त शीतल के घर पर भी इंतज़ाम कर सकते हो। जब मैंने पहली बार बैंगलोर में तुम्हारा सारंग सुना, तो मुझे लगा कि तुम मेरा सितार बजा रहे हो, इसलिए जब मुझे एहसास हुआ कि मैं बीच में बजा रही हूँ, तो मुझे बहुत खुशी हुई। मैंने सितार भी कंठस्थ कर लिया था। अब मुझे लगता है कि मैंने उसे बीच में ही छोड़ दिया है! क्या मैं तुमसे कुछ पूछ सकती हूँ? अगर तुम चाहो, तो इसे मेरी विनती समझो। क्या तुम मुझे रोज़ एक घंटा सितार सिखाओगे? अगर रोज़ नहीं सिखा सकते, तो हफ्ते में तीन बार सिखाओ। बाद में, मैं भी रोज़ तीन घंटे अभ्यास करूँगी। अगर नहीं, तो तुम्हें मुझे चार थप्पड़ मारने का पूरा अधिकार है। फीस बताओ! अगर बताने में झिझक हो, तो मैं खुद सोच लूँगी...
`` कांति जी, मैं आपको बता नहीं सकती कि अगर आप फिर से सितार सीखना शुरू कर दें तो मुझे कितनी खुशी होगी? लेकिन मैंने शपथ ली है कि जब तक मेरी साधना पूरी नहीं हो जाती, मैं किसी को भी नहीं सिखाऊंगी। मुंबई के गुरुजी ने मुझसे यही शपथ ली थी। मैं यह बात भी समझ गई थी..."
"तो मैं तब तक इंतजार करूंगा। तब तक मैं आपका सितार सुनूंगा।"
मैं तुम्हारे लिए एक और शिक्षक ढूंढूंगा... जो तुम्हारे घर आकर तुम्हें पढ़ाएगा..."
इसकी कोई जरूरत नहीं है। मैं आपके अलावा किसी और से नहीं सीखूंगा...
उसी समय, कंपनी का सुपरवाइजर एक टाइप किया हुआ कागज लेकर आया। उसने कागज पर एक नजर डाली और हस्ताक्षर किए, फिर वह कांच के दरवाजे से बाहर चला गया। कांच का दरवाजा अपने आप बंद हो गया।
उसने उससे पूछा,
"आज का मेरा काम हो गया। चलें टहलने?"
चूंकि उसके पास करने के लिए और कुछ नहीं था, इसलिए वह तुरंत सहमत हो गया।
जब गाड़ी मुख्य सड़क पर पहुंची, तो उसने उससे पूछा,
क्या आपको गाड़ी चलाना आता है?
"मैं पहले गाड़ी चलाता था। जब मैं बैंगलोर में था, तब कंपनी ने मुझे एक कार दी थी। लेकिन हाल ही में मुझे इसकी आदत नहीं रही। मैंने अपना लाइसेंस भी रिन्यू नहीं कराया है। साथ ही, मुझे दिल्ली की सड़कों पर तेज रफ्तार से गाड़ी चलाने की आदत डालनी होगी, जिसका मतलब है कि मुझे कम से कम एक महीने अभ्यास की जरूरत है।"
इसमें मुश्किल क्या है? आप हर शाम समय निकालते हैं... मैं पढ़ाऊँगी। मतलब, मैं आपके बगल में बैठूंगी। चलो छोड़ो। बताओ... आज आपको मेरी इतनी याद क्यों आई? अगर आप आज नहीं आते, तो सच में मेरा आपसे बात करने का मन नहीं था, इसलिए मैंने ऐसा किया।

``कोई काम नहीं था। मेरा मन किया कि किसी से एक-दो घंटे बात कर लूँ। इस गाँव में तुम्हारे अलावा और कौन दोस्त हैं जिनसे बात कर सकूँ?..."
उसने सड़क से नज़रें उठाकर एक पल के लिए उसकी ओर देखा।
वह सड़क पर चल रहे वाहनों को देखते हुए उससे बात कर रहा था। इसीलिए उसने उसकी आंखों में आई नमी पर ध्यान नहीं दिया।
उसने पूछा,
सचमुच?
"मुझसे झूठ क्यों बोल रही हो?" उसने उसकी ओर देखते हुए कहा।
लेकिन उससे पहले, उसकी नजर सड़क पर टिकी हुई थी।
उसने कहना शुरू किया,
पिछले कुछ वर्षों से मैं संगीत और सितार में पूरी तरह से लीन रहा हूँ। परिणामस्वरूप, मेरे सहकर्मियों द्वारा चर्चा किए जाने वाले आधुनिक व्यावसायिक रुझानों में मेरी रुचि कम हो गई है। इसके अलावा, इस विषय में मेरा ज्ञान भी सीमित है। यहाँ तक कि मेरे मित्र भी मेरे संगीत में रुचि नहीं रखते...
"बिलकुल सही! मुझे भी यही अनुभव हो रहा है! अगर आप अपने किसी करीबी से मिलें, तो आप संगीत के बारे में बहुत सारी बातें कर सकते हैं!..." उसने उसकी ओर देखते हुए कहा।
उसके शब्दों ने उसके दिल को छू लिया, इसलिए उसने अपना सिर घुमाकर उसकी ओर देखा। और वह विस्मय से बोला,
``सच है, कांतिजी..."
उसने इस पर कुछ नहीं कहा। वह गुस्से से भरी हुई गाड़ी चलाने लगी। वह भी चुपचाप सड़क को घूरता हुआ बैठा रहा।
कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद, उसने बिना किसी झिझक के पूछा,
"मेरे नाम के आगे 'G' क्यों लगाते हो? सच बताओ, चलो देखते हैं!"
वह क्रोधित हो गया। एक ओर तो उसे लगा कि उसने गलती कर दी है, लेकिन उसने कहा,
``सम्मान दिखाने का एक तरीका, इसलिए..."
"आपको यह समझ क्यों नहीं आ रहा कि यह हम दोनों के बीच की दूरी दिखाने का एक तरीका है? क्या मैं आपको हेमंतजी कहकर बुलाता हूँ? क्या आपको यह एहसास नहीं होता? एक तरफ तो मैं यह कहूँगा कि आपके सिवा मेरा कोई दोस्त नहीं है, और दूसरी तरफ मैं इस तरह का अलगाव दिखाऊँगा! इसके बाद, अगर आप मुझे 'आप... जी' आदि कहकर अलगाव दिखाना चाहें, तो यह बात याद रखिएगा!"
उसके चेहरे पर झिझक और कठिनाई के भाव थे। उसने बात वहीं छोड़ दी और दाईं ओर मुड़कर ग्रेटर कैलाश के पास कार खड़ी कर दी। उसके प्रश्नवाचक भाव को देखकर उसने उत्तर दिया,
"शांति से बातचीत करने के लिए यह एक अच्छी जगह है। खाना भी अच्छा है... लेकिन बैठकर बातचीत करने की जगह तो और भी बढ़िया है।"
हडसन क्लब में प्रवेश करते ही उनकी नज़र मियामी बीच पर कॉफी का कप लिए खड़ी खूबसूरत युवती, मैनहट्टन की गगनचुंबी इमारतों, अंतरिक्ष में छलांग लगाने के लिए तैयार प्रतीत होने वाले विशाल रॉकेट, चंद्रमा पर कदम रखने वाले और अमेरिकी ध्वज फहराने वाले पहले व्यक्ति नील आर्मस्ट्रांग पर पड़ी और उन्हें एहसास हुआ कि यह अमेरिका का एक छोटा रूप है। अंदर का वातावरण भी शरीर और मन को सुकून देने वाला था। स्टोनवॉश पैंट और पीली टी-शर्ट पहने, फौजी हेयरकट वाली एक सुडौल युवती उनके पास आई और उन्हें एक मेज पर ले गई।

होन्नाटी ने भी ऐसा ही एक रेस्टोरेंट देखा था। जब वे IIT में पढ़ रहे थे, तब उनके कुछ दोस्त मानते थे कि दोस्तों के साथ ऐसे रेस्टोरेंट में जाना एक यादगार छुट्टी होती है। वहीं, IIM में पढ़ते समय छात्रों को लगता था कि अगर वे ऐसे रेस्टोरेंट के बजाय किसी साधारण होटल में जाते हैं, तो उनका भविष्य खतरे में पड़ जाएगा। उन्होंने यह भी देखा था कि देश में उद्योग और व्यापार के विकास के साथ-साथ ऐसे पांच सितारा होटलों की संख्या भी बढ़ती जा रही थी। जब वे बेंगलुरु में रेजिडेंट मैनेजर थे, तब उन्हें लगभग हर दिन ऐसे पांच सितारा होटलों में जाना पड़ता था। यह सब सरकार को टैक्स देने से बचने के लिए किया जाता था! उन्हें यह भी पता था कि इसमें बड़ी संख्या में सरकारी अधिकारी और मंत्री भी शामिल थे।
हालांकि, पिछले पांच सालों में उन्होंने ऐसे किसी होटल में कदम नहीं रखा था। मुंबई आने पर दलाल ने बहुत ज़ोर दिया था। लेकिन उन्होंने मना कर दिया था, यह सोचकर कि अगर ऐसी आदत पड़ गई तो हलकेरे कॉलेज में नान-ओ-रई खाना मुश्किल हो जाएगा। अब भी उन्हें यहाँ कुछ भी खाने से मना करने का मन कर रहा था। फिर उन्होंने सोचा, अब मैं दिल्ली में रहने आ गया हूँ। घर पर मेरी माँ बहुत अच्छा खाना बनाती हैं और मैं बचपन से खाता आ रहा हूँ। अब ऐसे बहाने से खाना न खाना अजीब लगेगा। फिर भी, उनके सामने वाली कुर्सी पर बैठते हुए उन्होंने कहा कि वे बिल देना चाहते हैं, लेकिन जेब में पैसे नहीं हैं। इस एहसास ने उन्हें बेचैन कर दिया।
उस संकरी मेज पर आमने-सामने बैठते ही उनके चेहरे अपने आप करीब आ गए। स्टोन-वॉश पैंट पहने लड़की पास आते ही बोली,
यहां का पिज्जा बिलकुल वैसा ही है जैसा वहां है। चलिए खाते हैं और आप बताइए इसके साथ क्या पीना चाहिए..."
"कुछ भी चलेगा..." उसने अनिच्छा से कहा।
बात सिर्फ इतनी ही नहीं है... आपको मुझे बताना चाहिए, जब आप पुरुषों की बात करते हैं... तो सब कुछ यहीं है..."
"मैं इस मामले में बहुत भोली हूँ! पहाड़ों में रहते हुए मैंने चाय और कॉफ़ी भी छोड़ दी थी! यहाँ आने के बाद से मेरी माँ मुझे निश्चित समय पर चाय देती है - मैं उसे पी लेती हूँ, बस! और कुछ नहीं।"
चलिए अब आपको दो बड़े आकार के कोक के बारे में बताते हैं। यहाँ असली कोक मिलता है! वे गाढ़ा कोक बाहर से मंगवाते हैं और यहीं बनाते हैं...
वहां पहुंची वेट्रेस ने कांति को पहचान लिया और "हाय" कहा।
कोक का एक घूंट लेते हुए उसने उससे एक प्रस्ताव रखा।
मैं पिछले पंद्रह दिनों से इस बारे में सोच रहा हूँ। आपने एमबीए किया है। आपको मार्केटिंग आदि का ज्ञान है। इसके बाद, हमें भारत में अपना कारोबार बढ़ाना चाहते हैं। इसके लिए आपको हमें सुझाव देने चाहिए। इसके लिए आपको नियमित रूप से कार्यालय आने की आवश्यकता नहीं है। यदि आप सप्ताह में दो-तीन घंटे आते-जाते हैं, तो यह पर्याप्त होगा। इसके लिए आपको प्रति माह डेढ़ हजार रुपये का मानदेय दिया जाएगा। यदि आप व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुए बिना फोन पर भी सलाह देते हैं, तो भी यह पर्याप्त होगा।
डेढ़ हजार रुपये प्रति माह का प्रस्ताव उन्हें तुरंत पसंद आ गया। उन्होंने जल्दी से हिसाब लगाया कि इससे गुरुजी और तबला की फीस के साथ-साथ रिक्शा का खर्च भी निकल जाएगा। लेकिन जैसे ही उन्होंने कोक का एक और घूंट लिया, उन्हें इसमें छिपी कठिनाइयों का एहसास हो गया।
कोई भी निजी कंपनी वेतन के एक-एक पैसे के बदले काम लिए बिना नहीं रह सकती। इसके अलावा, शीतलजी भी इस कंपनी की मालकिन हैं। एक बार जब वह कंपनी की सलाहकार बन जाएगी, तो वह भी ऐसे सवाल पूछेंगी, "आपकी सलाह से कंपनी का कितना विस्तार हुआ? कितना मुनाफा हुआ?" अगर उन्होंने ये

सवाल नहीं पूछा होता, तो ये सवाल मेरे मन में ही रह जाता। फिर क्रोध के विस्तार में डूबे मन को बाजार के विस्तार में लगने में कितना समय लगेगा?
इसके बजाय, बेहतर यही होगा कि आप अपने पहले विचार पर कायम रहें—यानी जरूरत के हिसाब से पैसा खर्च करें। अगर किस्मत आपके साथ रही, तो कल आप संगीत शो करके पैसे कमा सकेंगे।
"तुम क्या सोच रहे हो?" उसने पूछा।
उन्होंने हमें स्पष्ट रूप से बता दिया कि वे इस बारे में क्या सोचते हैं।
वह इस बारे में गंभीरता से सोचने लगी। कुछ देर सोचने के बाद, बिना अपनी कोक का एक घूंट पिए, उसने कहा,
तो चलिए ऐसा करते हैं... मैं आपको हर महीने डेढ़ हजार रुपये दूंगा। इससे आपके गुरुजी... तबला... रिक्शा आदि का खर्च निकल जाएगा। हमारी कंपनी के सलाहकार के तौर पर आपको हमें रसीद देनी होगी। आप जानते हैं मैंने रसीद क्यों मांगी... यही एक टैक्स है जो आप बचा पाएंगे। आपको कोई काम नहीं करना पड़ेगा...
मेरे पास हर महीने खर्च करने के लिए पर्याप्त पैसा है! आप मुझे क्यों देंगे?
मैं क्यों भुगतान करूँ?..." उसने उसे घूरते हुए कहा, "इसका क्या मतलब है? मैं हर महीने पच्चीस हज़ार रुपये कमाती हूँ! और किराया इतना है कि पूरी इमारत की लागत छह साल में वसूल हो जाएगी! तुमने अपना पूरा जीवन संगीत के लिए गिरवी रख दिया है। मेरा भी जीवन संगीत के लिए है! तो अगर मैं दो साल तक तुम्हारी फीस और अन्य खर्च चुका दूं, तो क्या इससे तुम्हारे स्वाभिमान को ठेस पहुँचेगी? इसके अलावा, तुम्हें सलाहकार नियुक्त करके मुझे भी आर्थिक लाभ होगा। इस गाँव में तुम्हारा कोई मित्र नहीं है, इसीलिए तुमने ऐसा कहा। तुम्हें क्या लगता है? मेरे यहाँ बहुत सारे मित्र हैं? इसीलिए मैं तुम्हें एक-एक करके फोन करती हूँ और ऐसा ही करने का आग्रह करती हूँ! लेकिन तुम्हारे पास कुछ नहीं है..."
जब वह बोल रही थी, उसकी आँखों में पानी आ गया। उसकी आँखों से परावर्तित पानी की किरणें उसकी आँखों में पड़ीं। वह बेचैन हो गया। उसने अपने मुँह में कोक का गिलास रख लिया ताकि वह उसके भावों को न देख पाए।
उसने भी खुद को संयमित करते हुए कहा,
"और अगर आपको पैसे लेने का मन नहीं है, तो इसे कर्ज के तौर पर ले लीजिए। चाहें तो छत्तीस हज़ार रुपये पर बारह प्रतिशत ब्याज चुकाएं। जब आप कार्यक्रम शुरू करें, तो मेरे पैसे लौटा दें। ठीक है? बस बैंक में जमा सारा पैसा खर्च मत कर देना।"
वह चुप कर रहा।
उन्होंने आगे कहा,
मेरी तरफ देखो और कहो 'नहीं'..."
"तुमने सोचा होगा कि इसके बाद तो तुम रवि शंकर की तरह भारत ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी लगातार पांच सितारा होटलों में घूमते रहोगे - तो फिर इस कर्ज की क्या जरूरत? इसलिए मैंने कहा, मुझे बारह प्रतिशत ब्याज भी चुका दो! देखो यहाँ! मुझे देखने दो, तुम्हारा चेहरा कितना लाल हो गया है!"
हालांकि उसने उसे चिढ़ाया, लेकिन उसने अपना सिर नहीं उठाया।
दरअसल, उन्होंने इससे पहले कभी पिज्जा नहीं खाया था। लेकिन जैसे ही उन्होंने पहला निवाला लिया, उन्हें उसका स्वाद बहुत पसंद आया। इसे कुछ कहने का मौका समझते हुए उन्होंने कहा,
इसका स्वाद लाजवाब है! इसे खाकर बार-बार आने का मन करेगा!
"धन्यवाद! लेकिन मुझे छोड़कर अकेले मत आना! अगर आप जैसा कलाकार यहाँ अकेला आया तो कोई आपका अपहरण कर लेगा!..." उसने भौंहें चढ़ाते हुए

चेतावनी दी।

■

उस समय तक उन्हें दिल्ली में आयोजित होने वाले संगीत कार्यक्रमों की व्यापकता का कोई अंदाज़ा नहीं था। वे दिल्ली, मुंबई और पुणे के आसपास के संगीत परिवेश से परिचित थे। उन्हें वडोदरा और अहमदाबाद के संगीत परिवेश की भी जानकारी थी। अब उन्हें लगा कि हमें सर्वोत्तम संगीत सुनना चाहिए। उन्होंने शंकरलाल संगीत महोत्सव, गंधर्व कॉलेज में विष्णु दिगंबर पुलुस्कर जयंती के अवसर पर आयोजित संगीत महोत्सव, मैक्समुलर भवन में आयोजित कार्यक्रम और ग्वालियर में तानसेन महोत्सव के साथ-साथ विभिन्न संगठनों द्वारा आयोजित कई अन्य संगीत कार्यक्रमों में भाग लेना शुरू कर दिया।
उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि कांति भी संगीत कार्यक्रमों को सुनने में उतनी ही रुचि रखती थीं जितनी उन्हें। वह संगीत कार्यक्रमों के लिए अग्रिम टिकट लेकर आती थीं। वह उनके साथ गाने सुनने के लिए भी उत्साहपूर्वक आती थीं। गाने खत्म होने के बाद, वह उन्हें उनके घर छोड़कर अपने घर लौट जाती थीं। वह उनके साथ पांच दिनों तक चलने वाले शंकरलाल संगीत महोत्सव में प्रतिदिन जाती थीं और वहां भी गाने सुनती थीं। वह बीच-बीच में खाने के लिए पोली और सब्जियां भी लाती थीं। साथ ही, संगीत के प्रति उनके ज्ञान ने उन्हें आश्चर्यचकित कर दिया और उन्हें साथ का आनंद प्रदान किया। उन्होंने एक समय चार बुनियादी राग सीखकर संगीत की शिक्षा छोड़ दी थी। लेकिन अब वह सरल रागों को भी आसानी से पहचान सकती थीं! वंह राग की बारीकियों को तुरंत समझ जाती थीं, जैसे कि उतार-चढ़ाव और स्वर-व्यंजन। यदि उन्हें मिश्रित रागों के बीच के अंतर समझ में नहीं आते थे, तो वह उनसे बात करके समझने की कोशिश करती थीं। एक बार मुझे पता चला कि अन्य संगीत सुनते समय भी वह उस संदर्भ का उपयोग करती थीं और उसके आनंद का अनुभव करती थीं।
धीरे-धीरे, उसे उसकी संगति की इतनी आदत हो गई कि अगर किसी कारणवश वह कार्यक्रम में नहीं आती, तो कला की बारीकियों को सीखने के लिए आवश्यक एकाग्रता भी उससे दूर हो जाती। उसके काम के कारण शाम को जल्दी शुरू होने वाली संगीत सभाओं में शामिल होना उसके लिए असंभव हो गया था। क्योंकि वह भली-भांति जानती थी कि इस पेशे में शीतल से कहीं अधिक ज़िम्मेदारी उसकी है।
इसके अलावा, उसे शीतल पर ज़िम्मेदारी डालनी पड़ी, जिसका मतलब था कि उसे शीतल को इसके पीछे का कारण बताना होगा। हांलाँकि उसने कहा था कि वह गाना सुनने जा रही है, शीतल समझ गई थी कि वह हेमंत के साथ जा रही है। कांति को महसूस हो रहा था कि हेमंत के आने के बाद से वह शीतल के साथ बहुत कम समय बिता रही है। इसी वजह से कांति ने यह भी महसूस किया कि उनके रिश्ते में एक अनकही दूरी आ गई है। वह बहुत सतर्क भी थी, उसे डर था कि अगर यह दूरी और बढ़ गई तो दोनों की साझेदारी भी टूट जाएगी और कारोबार ठप हो जाएगा।
अब कांति आसानी से उसे एकवचन में संबोधित कर रही थी। लेकिन वह उसे एकवचन में संबोधित करने से हिचकिचा रहा था। वह बहुत ज़ोर दे रही थी कि वह उसे एकवचन में ही संबोधित करे। लेकिन अनजाने में ही वह फिर से उससे सम्मानपूर्वक बात करने लगेगा। उसने उसे एक बार चेतावनी दी थी,
"अगर तुमने इसके बाद फिर से वही गलती की, तो मैं हर गलती के लिए पांच रुपये अलग रखूंगा और महीने के अंत में एक हजार रुपये इकट्ठा करूंगा!"
आखिरकार, उसे भी उसे उसके पहले नाम से पुकारने की आदत पड़ गई।
उसके मन में एक और ख्याल आ रहा था। रविंद्र कितना सज्जन है! वह हमेशा दूसरों की भावनाओं का ख्याल रखता है। कांति का स्वभाव भी बहुत सहज है। फिर भी दोनों इतना दूर क्यों रहते हैं? बेंगलुरु में रहते हुए रविंद्र ने कभी अपनी

पत्नी का ज़िक्र नहीं किया था। पिछले कुछ दिनों से वह उससे बहुत मिल रहा है - लेकिन वह कभी अपने पति की बात नहीं करती। या क्या मैंने यह निष्कर्ष निकाल लिया कि मेरे सामने एक-दूसरे का ज़िक्र न करने से उनका रिश्ता टूट गया है? शायद वे एक-दूसरे को नियमित रूप से पत्र लिखते हों, फोन पर भी बात करते हों। यहाँ उसका व्यवसाय अच्छा चल रहा था - वे उसे भी यहाँ स्थानांतरित करवाने की कोशिश कर रहे होंगे। यह सोचकर कि कहीं वह खुद ही किसी गलतफहमी का कारण तो नहीं है, वह बेचैन हो गया। कभी-कभी उसे लगता था कि हम दोनों अच्छे दोस्त हैं। उसे इस विषय पर बात करनी चाहिए और पता लगाना चाहिए कि उनके रिश्ते में कोई समस्या है या नहीं, उसे सुलझाने की कोशिश करनी चाहिए। वह सोचता रहा, हम इस रिश्ते के बारे में क्या जानते हैं? कहीं कुछ ऐसा न कर बैठें जिससे हम पागल हो जाएँ!
उन्हें पता था कि संगीत के माध्यम से बनी मित्रताएँ बहुत गहरी होती हैं। इसके अलावा, उन्होंने यह भी अनुभव किया था कि यह मित्रता बहुत तेज़ी से बढ़ती है। जब वे दोनों दिल्ली के लगभग सभी संगीत समारोहों में जाने लगे, तो उन्होंने यह भी देखा कि हर कार्यक्रम में एक ही धर्म के लोग सुनने आते थे। धीरे-धीरे, वे संगीत समारोहों में मिलने वाले कुछ चेहरों को इस कदर जानने लगे कि एक-दूसरे को देखकर मुस्कुराने लगे। बाद की मुलाकातों में, "कमानी सभागार में जसराज का अहीर भैरव कितना शानदार था?" जैसे विषय स्वाभाविक रूप से उठने लगे। विराम के दौरान, पान या चाय के आदान-प्रदान से स्नेह व्यक्त होता था, और फिर जान-पहचान गहरी होती चली गई।
ऐसे समय में, लगातार एक-दूसरे के साथ रहने वाले कांति और हेमंत को अपने रिश्ते के बारे में कुछ न कुछ कहना ही पड़ता था। एक बार, एक-दूसरे का परिचय कराते हुए, हेमंत ने अपना परिचय 'भाभी-' कहकर दिया। उस समय, वह भी चुप रहीं और धीरे से मुस्कुराईं। लेकिन बाद में उन्होंने हेमंत से कहा,
"तुम किस मध्ययुगीन युग में जी रहे हो, यार? तुम दिल्ली क्यों आए हो?"
उसे समझ आ गया कि वह ऐसा क्यों कह रही थी। उसे भी बेचैनी महसूस हुई। उसने कहा,
"किसी महिला को दोस्त के रूप में मिलवाना मुश्किल होता है, है ना? तुम किस तरह के कलाकार हो, यार? दिल्ली एक अंतरराष्ट्रीय शहर है! अपने घर जाओ! वही तुम्हारे लायक है! देखो, अगर तुमने इसके बाद मुझे फिर से भाभी कहा, तो मैं चली जाऊंगी! इसके बाद मैं तुम्हारी तरफ देखूंगी भी नहीं!"
और वह वहां से चली गई। यह सोचकर कि अब वह चली जाएगी, वह भी जाकर कार के पास खड़ा हो गया। लेकिन वह नहीं आई। जब वह वापस कार्यक्रम स्थल पर लौटा, तो वह उसे ढूंढ रही थी। जैसे ही उसने उसे देखा, उसने अपने हाथ में बनारसी पत्ता उसे देते हुए कहा,
तुम कहाँ गए थे? तुम्हें कितना पैसा चाहिए? अगला कार्यक्रम शुरू हो रहा है... चलो, जल्दी करो..."
जब दोनों अपनी-अपनी जगह पर बैठे हुए पत्ते मुंह में डाल रहे थे, तभी सियाराम तिवारी ने गाना शुरू किया। ध्रुपदा की पहली दृढ़, अडिग आवाज़ जैसे ही उसके कानों तक पहुंची, उसने उसके कान में फुसफुसाया,
बागेश्री..."
जब तिवारी ने दो घंटे तक बागेश्री राग गाने के बाद विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़े, तो दर्शकों ने अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए काफी देर तक ताली बजाई, क्योंकि इस राग ने उन्हें पहले कभी ऐसा अनुभव नहीं दिया था।
उसने उसके कान में फुसफुसाया,
"जब आप सतारी कार्यक्रम करेंगे, तो आपको और भी बेहतर परिणाम मिलेंगे!"

हालांकि उसे लग रहा था कि वह उसका आधा भी नहीं दे सकता, फिर भी जब उसने उसे बोलते सुना तो उसे एक तरह का उत्साह महसूस हुआ। उसने कृतज्ञता भरी नजरों से उसकी ओर देखा।

■

मोहिउद्दीन डागर द्वारा मैक्समुलर भवन में आयोजित रुद्रवीण संगीत समारोह में हरिशंकर से उनकी पहली मुलाकात हुई। हालांकि वे पहले भी कई संगीत समारोहों में एक-दूसरे को देख चुके थे, लेकिन कभी आमने-सामने नहीं मिले थे। उनके लिए एक-दूसरे को जानने का एक अवसर भी आया। उस दिन हेमंत के साथ आए नियाज़ उनसे मिलने आए थे। जब वे हेमंत से बातचीत करने आए, तभी कोई उनके पास आया। नियाज़ ने हेमंत की शिक्षा, सितार के लिए किए गए बलिदानों और सितार वादन में आज उनकी उपलब्धि के बारे में खुलकर बात की, और यह सुनकर हेमंत की भौंहें तन गईं।
साधारण पजामा, लोहिया गाउन और नेहरू जैकेट पहने हरिशंकर अपने कंधे पर खादी का थैला लटकाए इधर-उधर घूम रहे थे। उनकी सफेद दाढ़ी, जो ठुड्डी पर दो उंगल तक बढ़ गई थी, और बिखरे हुए बाल, तुरंत यह स्पष्ट कर रहे थे कि वे समाजवादी विचारों वाले एक बुद्धिजीवी हैं। बैठक के बाहर रहते हुए उन्होंने अपनी उंगलियों में एक जलती हुई सिगरेट रखी हुई थी। नियाज़ यह ठीक से नहीं बता सके कि उन्होंने क्या किया। उन्होंने अपना परिचय दिया।
"मैं विश्वविद्यालय के भारतीय संस्कृति विभाग में प्रोफेसर हूं - मेरा नाम हरिशंकर है।"
हेमंत ने कांति को अपनी दोस्त के रूप में परिचय कराते ही उसका हाथ अपने हाथ में लेकर हिलाया और कहा,
"महोदया, लगता है आपको भी संगीत की अच्छी समझ है! वरना, ऐसे कलाकार से दोस्ती करना और उनके साथ हर संगीत कार्यक्रम में जाना कैसे संभव होता?"
फिर उसने अपने बैग से लेख की पंद्रह पन्नों की छपी हुई प्रति निकाली, हेमंत को दी और कहा,
कृपया इस लेख को पढ़िए। मैं लंबे समय से किसी ऐसे व्यक्ति से मिलना चाहता था जो मेरे लेख को पढ़कर मेरे विचारों को स्पष्ट रूप से समझ सके। अब आप मुझसे मिल चुकी हैं! महोदया, चूंकि इसकी केवल एक ही प्रति है, इसलिए मैं आपको दूसरी प्रति नहीं दे सकता। लेकिन चूंकि आप दोनों मित्र हैं, इसलिए मुझे लगता है कि आपको भी इसे उनसे लेकर पढ़ लेना चाहिए।
होन्नाटी ने लेख के शीर्षक पर एक नज़र डाली। 'हिंदुस्तानी संगीत का सौंदर्यशास्त्र: डॉ. हरिशंकर-' फिर उन्होंने इसके पहले पैराग्राफ पर एक नजर डाली। जैसे ही उन्होंने अगले लेख पर नजर डाली, उन्हें एहसास हुआ - लेख अच्छा लग रहा है!
"मुझे इस तरह के लेख पढ़ना अच्छा लगता है। धन्यवाद," उन्होंने कांति को लेख सौंपते हुए कहा।
उसी समय, डॉ. हरिशंकर के साथ अन्य दो लोग भी उनके पास आए। कांति-हेमंत ने उन्हें पहले भी कई कार्यक्रमों में देखा था। उन्होंने आपस में यह भी कहा था कि उनके साधारण पहनावे के आधार पर वे कोई अमेरिकी दंपत्ति या मित्र होंगे। अब परिचय होने पर सच्चाई सामने आ गई। पता चला कि तीस वर्ष के जॉन वायल पूसा अनुसंधान केंद्र में उत्तर भारत की जलवायु में अधिक उपज देने वाली गेहूं की किस्म पर शोध कर रहे थे। उनकी पत्नी हैलेन भारत में बच्चों को आसानी से अंग्रेजी सिखाने के प्रयोगों में लगी हुई थीं। दोनों को संगीत का शौक था। वह पियानो बजाती थीं और वह वायलिन बजाते थे। दोनों का मानना था कि जो व्यक्ति किसी भी प्रकार के गंभीर संगीत का आनंद ले सकता है, वह किसी भी अन्य प्रकार के गंभीर संगीत की सराहना कर सकता है।

जॉन दुबला-पतला आदमी था, जिसकी लंबाई पाँच फुट दस इंच थी और उसका व्यक्तित्व शुद्ध और सदाचारी था। वह खादी के पजामा या धोती पहनता था। हेलेन भी रेशम या हथकरघा की साड़ियाँ पहनती थी। कभी-कभी वह सलवार-कमीज़ भी पहनती थी। वह अपने कपड़ों के रंग से मेल खाने वाला कुमकुम माथे पर लगाती थी। वह हाथों में चूड़ियाँ और मंगलसूत्र भी पहनती थी। वह भी दुबली-पतली युवती थी, जिसकी लंबाई साढ़े पाँच फुट थी। जैसे ही डॉ. हरिशंकर ने हेमंत के बारे में बात की, जॉन की आँखों में श्रद्धा का भाव झलक उठा। उसने हेमंत के दोनों हाथ अपने हाथों में लिए और कहा,
``ग्रेट ! ग्रेट !"
जब उन्हें पता चला कि कांति अमेरिका को रेडीमेड कपड़े भेजता है, तो उन्होंने बड़ी ईमानदारी से कहा,
"यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई! भारत के उद्योगपतियों और व्यापारियों को अमेरिका की संप्रभुता को तोड़ देना चाहिए! कहीं भी साम्राज्यवाद नहीं होना चाहिए! आर्थिक साम्राज्यवाद बिल्कुल भी नहीं होना चाहिए।" और उन्होंने भारतीय शैली में हाथ जोड़ लिए।
घर लौटने पर उन्होंने डॉ. हरिशंकर का लेख पढ़ा। हिंदुस्तानी संगीत के सार को भलीभांति जानते हुए उन्होंने इसका गहन विश्लेषण किया था। उन्होंने कहा था कि भारतीय संगीत का मुख्य उद्देश्य क्षणभंगुर, निरंतर प्रवाहित समय को स्थिर बनाना और उसका विस्तार करना है। उन्हें यह बात अत्यंत सार्थक लगी। लय निम्न स्तर से शुरू होती है... गायक वांछित स्वर-शिखर पर पहुँचकर शांत और स्थिर हो जाता है। इस प्रकार उन्होंने आधुनिक शब्दों में भारतीय संगीत के बारे में अनेक बिंदु लिखे थे।
लेख पढ़ते ही उन्होंने हरिशंकर को एक भावपूर्ण पत्र लिखा और उसे भेज दिया। बाद में हरिशंकर का जवाब भी आ गया। बिस्मिल्लाह खान साहब से मुलाकात के बाद उन्होंने उनसे इस विषय पर विस्तार से चर्चा की। जॉन और हेलेन भी उस चर्चा में शामिल हुए। कांति भी वहां मौजूद थे। जॉन हेमंत का विशेष आदर करते थे। उन्होंने हेमंत से अक्सर मिलने और चुपचाप बैठकर उन्हें सितार बजाते हुए, अपने विचारों में मग्न देखने की इच्छा व्यक्त की।
उसने हेमंत से कहा,
आप ऐसा क्यों नहीं करते? हमारे घर पर बैठिए और जी भर के रियाज़ का अभ्यास कीजिए। मैं बगल वाले कमरे में चुपचाप बैठकर सुनूंगा। मैं आपको बिल्कुल भी परेशान नहीं करूंगा। उस आत्मचिंतनशील ध्वनि से मेरा घर पवित्र हो जाएगा। हेलेन और मैं भारत आने के बाद से शुद्ध शाकाहारी बन गए हैं। हमने इसके बाद हमेशा शाकाहारी रहने का फैसला किया है। हमारे घर पर भोजन कीजिए और मंद्रास्वरों का अभ्यास कीजिए।
हेमंत को ऐसा लग रहा था कि वह जो भी वाक्य कह रहा है, वह उसके दिल की सच्ची अभिव्यक्ति है। उसने पूछा,
"भारतीय संगीत की किस विशेषता से आप प्रभावित हुए हैं?"
“इसमें जो अंतर्मुखता है!” उन्होंने तुरंत जवाब दिया, “भारतीय संगीत सुनने से पहले मुझे कभी एहसास नहीं हुआ था कि संगीत हमें इतना अंतर्मुखी बना सकता है। हमारे यहाँ भी चर्च का संगीत है। उसे इतने जोश से गाया जाता है कि आकाश में बैठे देवताओं की भी आवाज़ सुनाई देती है। लेकिन वह हमें आपके संगीत की तरह अंतर्मुखी नहीं बनाता। संगीत ऐसा है कि कोई भी जानबूझकर उसकी दिशा तय नहीं कर सकता। केवल वही लोग अच्छे संगीतकार बनते हैं जो पूरे समुदाय की मानसिकता को एक निश्चित स्तर पर समझते हैं। हमारा संगीत बहिर्मुखी है। सामुदायिक सहयोग और कर्तव्य का संगीत! हमारे ऑर्केस्ट्रा हमारी मानसिकता को

दर्शाते हैं। इसे देखकर आप में से कुछ लोग ऑर्केस्ट्रा भी बना रहे हैं। लेकिन यह आपकी मानसिकता नहीं है...”
जॉन हरिशंकर के लेख में लिखी बातों से कहीं अधिक कुछ कह रहा था। हेमंत को यह बात गहराई से महसूस हुई कि उसकी स्वाद की समझ उसकी अपनी समझ से कहीं अधिक सूक्ष्म थी।
मुझे जोगीबेट पर रियाज़ा के दिन याद आ गए। संगीत के प्रति हमारी आत्मिक अनुभूति के लिए एक आदर्श स्थान! - योगियों की साधना के लिए भी एक आदर्श स्थान!
तभी यह घोषणा हुई कि अगला कार्यक्रम शुरू हो रहा है।
उन्हें जॉन को अपने घर बुलाकर सितार बजाने का मन हुआ। लेकिन चूंकि उन्हें खुद कुछ नहीं मिल रहा था, इसलिए उन्हें यह उचित नहीं लगा। तो एक शनिवार को वे पटेलनगर स्थित जॉन के घर गए। उन्होंने आधी रात तक खुशी-खुशी सितार बजाया। अगली सुबह वे सितार बजाने बैठे, दोपहर में उठे। दोपहर का भोजन और वामकुक्षी करने के बाद, उन्होंने फिर से तीन घंटे तक सितार बजाया। घर में वातानुकूलित हॉल था। अनुमति मिलने के बाद, जॉन सामने एक साधारण कुर्सी पर बैठ गए और आंखें बंद करके उनका सितार सुनते रहे। हेलेन ने दोपहर में अमेरिकी शैली का सलाद, बेक्ड बीन्स और भारतीय शैली की चपातियां बनाई थीं।
■
उस साल, गर्मी अपने चरम पर थी। अप्रैल के मध्य तक तापमान 44 से 45 डिग्री सेलसियस तक पहुँच गया था। मई-जून में क्या होगा, कौन जाने? हर कोई डरा हुआ था। गुरुजी के घर में भी, जो एक छोटी सी गली में स्थित था जहाँ सूरज की रोशनी नहीं पहुंच पाती थी, गर्मी असहनीय थी। अक्सर ऐसा होता था कि मेरा पूरा शरीर पसीने से भीग जाता था, हथेलियों से पानी तारों पर टपकता था और मेरा मन विचलित हो जाता था।
उनके गुरुजी को यह कोई बड़ी बात नहीं लगी। क्या पिछले कुछ वर्षों में काफी गरमागरमी नहीं हुई थी?
इसके अलावा, सितार बजाते समय पंखे का इस्तेमाल करने की कोई सुविधा नहीं थी। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि लगातार चलने वाली हवा से तारों का तनाव प्रभावित होता था।
हेमंत को गुरु के घर से रियाज़ करने के बाद घर लौटते समय और भी अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। वह एक पुराना मिट्टी का मकान था, जो इस तरह बना था कि कहीं से भी गर्मी अंदर नहीं आ पाती थी। मकान में एक ऊपरी मंज़िल भी थी। हालांकि यह बहुत अच्छी बात थी, लेकिन एक बार ऊपर की नौ इंच मोटी छत गर्म हो जाती थी, तो इस वसंत विहार में गर्मी से बचने का एकमात्र उपाय एयर कंडीशनर ही बचता था।
घर में एक एयर कंडीशनर भी था। लेकिन वह पिता के शयनकक्ष में लगा हुआ था। उसे चालू करने के बाद वे दिन-रात उसी कमरे में रहते थे। वे उसी कमरे में पढ़ते-लिखते और फिर वहीं आराम करते। हेमंत यह भी समझता था कि वहां जाकर सितार बजाना संभव नहीं था। दूसरा एयर कंडीशनर खरीदने के लिए कम से कम बीस हजार रुपये लगते। इसके लिए कमरे की खिड़कियां और दरवाजे भी ठीक करवाने पड़ते। इन सबके बाद हर महीने आने वाला भारी-भरकम बिजली का बिल भी भरना पड़ता! वह यह भी समझता था कि सेवानिवृत्त पिता पर इतना बोझ डालना और उनसे ऐसी अपेक्षा करना उचित नहीं था।
एक शाम, कांति ने पूछा,
“क्या तुम इस गर्मी में रियाज़ करते हो? दोपहर में तो रिक्शा की सवारी भी मत करो! गुरुजी के घर से लौटने में एक घंटा लग जाता है। मुझे हर पल डर लगता है कि कहीं तुम्हें लू न लग जाए! मैं हज़ार बार सोचती हूँ कि पता कर लूँ कि तुम घर

पहुँचे हो यों नहीं। लेकिन फ़ोन तुम्हारे पापा के कमरे में है। अगर मैं रोज़ एक तय समय पर तुम्हें फ़ोन करने लगूँ, तो मैं खुद को रोक लेती हूँ, यह सोचकर कि कहीं वो मुझे गलत न समझ लें।"
मैं ठंडी हवा वाली किसी जगह जाना चाहती हूँ। लेकिन गुरुजी का मार्गदर्शन छोड़ना ठीक नहीं है, इसलिए मैं चुप हूँ। नियाज़ को ऑल इंडिया रेडियो में नौकरी मिलने की प्रबल संभावना है। अगर उसे नौकरी मिल जाती है, तो उसकी पोस्टिंग भोपाल में होगी। उसके जाने के बाद, इतने लंबे समय तक तबले पर इतनी अच्छी संगत देने वाला कोई दूसरा व्यक्ति मिलना आसान नहीं होगा। गुरुजी यह भी सलाह देते हैं कि तब तक एक भी दिन खदरा किए बिना रियाज़ करो। मुझे जोगीगुड्डा की भी बहुत याद आती है। वहाँ मुझे एक दिन भी गर्मी नहीं लगी! वहाँ तो मुझे ग्रीष्म ऋतु का भी एहसास नहीं होता!
"क्या दिल्ली आने पर भी आपको जोगीगुड्डा की याद आती है?" उसने बेचैनी महसूस करते हुए पूछा।
उसकी आवाज़ में नाराज़गी साफ झलक रही थी। उसने इसे महसूस किया। लेकिन वह इसके पीछे का कारण पूरी तरह नहीं समझ पाया। दिल्ली जैसा महानगर इस कला के फलने-फूलने के लिए बिलकुल उपयुक्त है – संगीत सुनने आने वाले, पैसे खर्च करके टिकट खरीदने वाले अमीर लोग जोगीगुड्डा या हलुकेरे जैसे छोटे गाँवों में कहाँ जाएँगे?... वह यह भी समझ गया था। वह उसके मन की निजी भावनाओं का कुछ हद तक अंदाज़ा लगा सकता था, लेकिन उसकी तीव्रता को पूरी तरह नहीं समझ पाया।
उसने उसके लिए एक वातानुकूलित कमरा किराए पर लेने का फैसला किया। उसने उसे अपने घर बुलाने के बारे में सोचा। लेकिन वह हर दिन एक निश्चित समय पर घर आने लगी, और वह जानती थी कि रजनी को शक जरूर होगा। उसे इतनी जानकारी मिल गई थी कि वह इससे कोई भी कहानी गढ़ सकती थी, और उसके मन ने उसे यह चेतावनी भी दी कि शायद वह इस विचार को स्वीकार न करे। उसने यह भी सोचा कि अगर किसी कारखाने में ऐसा कमरा किराए पर लिया जाए, तो वह इतना आरामदायक नहीं होगा। जब वह इन विचारों में डूबी हुई थी, तभी उसे शीतल का घर याद आया।
इस विचार से उसे एक तरफ़ तो तसल्ली मिली। फिर उसके मन में आया, पर वो इसे कैसे समझेगी? हेमंत के यहाँ आने के बाद से मैं उसके साथ घूम रही थी, इसलिए वो चिढ़ रही थी। उसे ज़रूर डर लग रहा होगा कि उसके प्रति मेरी वफ़ादारी कम हो जाएगी। ऐसे में अगर मैं उसके रियाज़ा के लिए उसके घर की चाबी माँगूँ, तो वो इसे ज़रूर अलग तरह से समझेगी।
कांति को शीतल याद आई, जो कुछ देर पहले घर के लाउंज में बैठे हुए भावनात्मक रूप से उसके करीब आई थी और उसे गले लगाया था। उस समय शीतल कह रही थी,
``कांति, पैसा ही सब कुछ नहीं है। बहुत सारा पैसा कमाकर मुझे क्या मिलेगा? हमारा प्यार ही असली मायने रखता है! मुझसे वादा करो कि यह कभी कम नहीं होगा..."
फिर उसने अपने होंठ बड़े ही कोमल और प्रेम से मेरे होंठों से सटा दिए! हालाँकि मेरे मन में सब कुछ असहनीय था, फिर भी मैं किसी तरह चुप रहने में कामयाब रहा। असल में, वही थी जिसने पीड़ा में शिकायत की।
"ये क्या है? तुम कभी पहल क्यों नहीं करते?"
इतने दिनों तक कोशिश करने के बाद आखिरकार उसने हार मान ली। अगर उसने इतनी आसानी से हार मान ली, तो मैं भी पूरे दिल से उसका प्यार पाना चाहता!

सोच-विचार करने के बाद, कांति ने उसे सब कुछ बताने और उसके घर की चाबी मांगने का फैसला किया। अगर वह आपत्ति करती, तो उससे बहस क्यों करती? क्या आप मानती हैं कि इसके बिना पुरुष और स्त्री का रिश्ता नहीं हो सकता? आप किस तरह की आधुनिक महिला हैं?
उसी शाम जब कांति ने शीतल से उसके घर की चाबी मांगी, तो शीतल ने कुछ नहीं कहा। उसने तुरंत चाबी भी नहीं दी। कांति समझ गई कि शीतल मन ही मन दुविधा में है। शीतल रात आठ बजे बिना चाबी का ज़िक्र किए ही अपने घर के लिए निकल गई।
कांति को बुरा लगा। उसे बिलकुल भी अंदाजा नहीं था कि उसकी सहेली इतनी खुशमिज़ाज होगी। लेकिन उसने खुद को समझाया कि चाहे कुछ भी हो जाए, उसे उससे संबंध नहीं तोड़ना चाहिए। साथ ही, उसे यह भी लगा कि अच्छा हुआ कि उसने उसे यह नहीं बताया कि वह हेमंत को हर महीने किराया दे रही है। हालांकि, हेमंत के लिए वातानुकूलित कमरा दिलाने का उसका इरादा अभी भी पक्का था।
आज सुबह जब वह अपने दांत ब्रश कर रही थी, तभी फोन की घंटी बजी। कांति उत्साह से भर उठी और उसने रिसीवर उठाया – लेकिन दूसरी तरफ ठंड थी। उसने पूछा,
"आप कारखाने में किस समय आ रहे हैं? अन्यथा, मैं कार्यालय जाते समय आपको घर की एक और चाबी दे दूंगा।"
कांति हैरान रह गई। उसने कहा,
"यहीं रुको, भाई! उसने कुछ और ही इंतज़ाम किया है! उसके कुछ दोस्तों ने उसे अपने घर आकर अभ्यास करने के लिए बुलाया है..."
"तुम इतनी जल्दी अपना मन क्यों बदल लेती हो? कौन रोज़ अपने पर्स में डुप्लीकेट चाबियाँ रखता है? क्या तुम्हें घर जाकर चाबियाँ मिलने का इंतज़ार नहीं रहता? क्या तुमने अभी-अभी उन्हें मना कर दिया? तुम्हें अपने दोस्त को इस तरह थप्पड़ नहीं मारना चाहिए था! तुम्हारा हेमंत मेरे बारे में क्या सोचेगा?"
इन शब्दों को सुनकर कांति का हृदय आनंद से भर गया। उसने कहा,
तुम बहुत प्यारी लड़की हो!
बिना समय बर्बाद किए, कांति ने हेमंत के घर फोन किया। वह घर से निकलने ही वाला था। उसने उसे बताया,
गुरुजी के यहाँ से लौटकर तुरंत एक रिक्शा लेकर कारखाने आ जाना। शीतल के घर की चाबी मेरे पास है! वहाँ वातानुकूलित घर में रात आठ बजे तक जितना चाहो उतना अभ्यास कर लो! अभी और कुछ मत कहना... कल जब मैं तुमसे मिलूंगी, तब तुम्हें बता दूँगी कि आगे क्या करना है।
वह दोपहर 2 बजे कारखाने पहुंचे। बिना समय बर्बाद किए, उसने सितार को कार की पिछली सीट पर रखा और उसे अपने बगल में बैठाकर शीतल के फ्लैट की ओर गाड़ी चला दी। कार स्टार्ट करने के आधे मिनट के भीतर ही उसने एयर कंडीशनर चालू कर दिया। कार ग्रेटर कैलाश की ओर चलने लगी। उसने कहा,
"मुझे कल से एक निश्चित समय बता दो। मैं तुर्कमान गेट तक गाड़ी लेकर आऊँगी और तुम्हें शीतल के घर छोड़ दूँगी। अम्मा को बता देना कि मैं इसके बाद दोपहर के भोजन के लिए घर पर नहीं रहूँगी। मैं तुम्हारा बक्सा भी ले आऊँगी।"
"तुम मेरे लिए कितनी गाड़ी चलाओगे?" उसने हिचकिचाते हुए कहा।
अब तक कार के अंदर का वातावरण ठंडा हो रहा था। उसने कहा,
``ऐसा अहंकार अच्छा नहीं है! यह मत सोचो कि यह सब तुम अपने लिए कर रहे हो! मैं यह सतारी के लिए कर रहा हूँ। इस नरक में, उसका कद्दू फट जाएगा! तारे पिघल जाएँगे!"
हेमंत भी यह सुनकर खुश हुआ।

शीतल के फ्लैट के लाउंज को खिड़की मोटे पर्दों से ढकी हुई थी। बाहर पिघलते लोहे का धुआँ ज़रा भी अंदर नहीं आ पा रहा था। एयर कंडीशनर चालू करके वह उसे रसोई में ले गई और वहाँ फ्रिज खोला। उसने उसे चाय, चीनी, कॉफी और कोको के डिब्बे भी दिखाए और कहा,
"जो मन करे खाओ - संकोच मत करो - इसे कांति का घर समझो - शीतल तुम्हें इस तरह विदाई देती है। अब मैं जा रही हूँ। अगर चाहो तो दीवान पर बैठो और खेलो, नहीं तो नीचे चटाई पर बैठो - इंतज़ार करो। यह तुम्हारी आदत बन जाएगी - मैं तुम पर एक चादर डाल देती हूँ - अगर चाहो तो झपकी ले लो। मैं सपने में आकर तुम्हें परेशान नहीं करूँगी!..." वह हँसी और बोली, "हम दोनों साढ़े आठ बजे आएँगे। फिर मैं तुम्हें तुम्हारे घर छोड़ दूँगी..." उसने कहा और दरवाज़ा बंद करके वहाँ से चली गई।
अंदर एक सुखद ठंडक फैलने लगी और हेमंत का मन जागृत हो गया। उसका मन कांति के प्रति कृतज्ञता से भर गया। फिर उसे याद आया कि उसके पिता, जिन्होंने उसे जन्म दिया, उन्होंने भी कभी इतना नहीं सोचा और उसे रियाज़ करने के लिए अपने कमरे में नहीं बुलाया। बेशक, क्या वह इतने लंबे समय तक हर दिन लगातार शास्त्रीय संगीत सुन पाते, यह भी एक सवाल है! जाने दो, उन्होंने तो दूसरे कमरे में एयर कंडीशनर लगवाने के बारे में सोचा भी नहीं – हा हा! ऐसा सोचना ठीक नहीं है, वह तो नौकरी से रिटायर हो चुके हैं। इतना पैसा कहाँ खर्च करेंगे? और क्यों? उनके बारे में ऐसा सोचना बेहद नीचता है!
हालांकि उसने अपने पिता के प्रति अपने विचारों को नियंत्रित कर लिया था, लेकिन कांति के प्रति उसका स्नेह उमड़ता ही रहा। उसे अपने मन को काबू में करने और सतारी की ओर मोड़ने में घंटों लग गए।
वह हर दिन तय समय पर तुर्कमान गेट पर आती और इंतज़ार करती। ताकि उसे इंतज़ार न करना पड़े, वह भी जल्दी से तय जगह पर पहुँच जाता। वह अपना सितार कार की पिछली सीट पर रखता और उसके बगल में बैठ जाता। वह उसे वातानुकूलित कार में शीतल के घर ले जाती। घर पहुँचकर वे दोनों अपने साथ लाए पोली और सब्जियों का डिब्बा खाते। कभी-कभी, फ्रिज से ठंडा पानी पीकर लौटते समय वह कहती,
"मैं भी ऐसी ठंडी जगह पर बैठकर आपका सितार सुनना चाहूंगा। लेकिन अगर मैं आपके सामने होता, तो क्या आपका ध्यान कहीं और नहीं भटकता?"
उन्हें भलीभांति पता था कि कारखाने के कार्य समय के दौरान लंबे समय तक बाहर रहना उनके लिए व्यावहारिक नहीं था। इसलिए वे कुछ देर सितार सुनने के बाद जल्दी ही निकल जाती थीं।

■

बैंगलोर से लौटने के बाद, उसकी ज़िंदगी मानो बेजान सी हो गई थी। लेकिन हेमंत से प्यार होने के बाद, उसे लगा जैसे उसकी ज़िंदगी में संतुलन आ गया हो। लाखों रुपये कमाने और जब चाहे हवाई यात्रा करने की सुविधा होने के बावजूद, उसे लगा कि बहल के साथ हुए अनुभव ने उसके मूल्यों को हिला दिया है। वह इसी अनुभव से उबरने के लिए बैंगलोर गई थी। पहले करने के बावजूद बहल द्वारा ठुकराए जाने से उसे और भी ज़्यादा तकलीफ़ हुई थी। फिर भी, उसने खुद को समझाया। आख़िरकार, वही तो था जो उससे ज़्यादा कमाने वाली पत्नी के साथ रहने में हिचकिचाता था!
हेमंत के प्रेम के बाद, संगीत के प्रति उनका आकर्षण बढ़ गया था। अगर बचपन से ही पिता को संगीत सुनते हुए संगीत में रुचि ली होती, तो आज तक मैं एक प्रसिद्ध कलाकार बन चुकी होती। अब मेरा मन संगीत में ही खोया रहता था। मुझे यह भी अनुभव हो रहा था कि प्रत्येक राग अपने आप में एक अलग दुनिया है। लेकिन अब उन्हें यह भी समझ आ गया था कि अपना व्यवसाय छोड़ना या उससे

समय निकालकर सितार का अभ्यास करना संभव नहीं है। इसके बजाय, हेमंत जैसे साधक की यथासंभव मदद करना ही पर्याप्त होगा!
धीरे-धीरे उसका मन हेमंत के ख्यालों में मग्न हो गया। क्या हम उसके कारण या उसके लिए रात भर जागकर संगीत सुनते हैं? उसका मन उलझन में था। क्या हम उसकी दोस्ती पाने के लिए संगीत में रुचि नहीं लेते?
हेमंता से दोस्ती कायम करने के लिए उसे उससे बहस करनी पड़ी थी। लेकिन अब वह बिना किसी झिझक के उसे अपनी दोस्त के रूप में मिलवाता था। यहाँ तक कि उसने अकेले में उसे एकवचन में संबोधित करना शुरू कर दिया था। लेकिन इससे ज़्यादा उसने कोई आत्मीयता नहीं दिखाई थी।
क्या उनके मन में ऐसी कोई उम्मीद नहीं पनप रही है?
उसने यह भी सुना था कि एक कलाकार—विशेषकर एक संगीतकार—ने कहा था कि सुंदरता उसके खून में बसी एक प्रमुख विशेषता है। लेकिन वह ऐसे व्यवहार करता था मानो यह सब झूठ हो। उसे याद आया कि जब वह सत्रह साल की थी और सितार सीख रही थी, तब पचास वर्षीय पंडित पांड्या बिना किसी कारण के उसकी उंगलियों को छूकर उसे सिखाते थे। वह इसे महसूस कर सकती थी। जब उसका पूरा शरीर कांप रहा होता था। लेकिन उस समय वह वहीं रुक गए। शायद उनमें हिम्मत नहीं थी! इसके बाद भी उसने गायकों, तबला वादकों आदि के बारे में कई कहानियां सुनी थीं। उसने एक पत्रिका में एक लेख भी पढ़ा था जिसमें इसे रचनात्मकता का एक हिस्सा बताया गया था। लेकिन यह सब कुछ अलग लग रहा था! एक साधारण साधक, जोगीगुद्दा पर अकेले बैठा, साधु-सन्यासी की तरह अभ्यास कर रहा है! एक साधक जो संगीत से भी ज्यादा योग का अभ्यास करने योग्य है! क्या इस व्यक्ति के लिए कभी एक पूर्ण संगीतकार बनना संभव है?
मैं उनकी ही उम्र की हूं – चालीस के आसपास – तो क्या वह मुझमें अरुचि दिखा रहे हैं? क्या उन्हें एक युवा महिला चाहिए?
इस विचार से उसे गहरा दुख हुआ। उसका मन खुद को सही ठहराने लगा – उसके सिर का एक भी बाल सफेद नहीं हुआ, मेरी माँ के बाल भी अब सफेद हो रहे हैं। मेरे बाल कम से कम पंद्रह साल तक ऐसे ही काले और घुंघराले रहेंगे! उसके चेहरे पर एक भी झुर्री नहीं है। यहाँ की दूसरी पंजाबी महिलाओं की तुलना में वह दुबली-पतली है! शीतल अपनी पतली काया बनाए रखने के लिए कितनी मेहनत करती होगी! वह हर निवाले को खाते समय बहुत सावधान रहती है! एक दिन पिज्जा खाती है, फिर चौबीस घंटे उपवास रखती है! लेकिन ये सब तो मुझे मेरी माँ से स्वाभाविक रूप से मिला है। जब वह मेरे इतने करीब है तो इतनी दूर कैसे रह सकती है?
उसके मन में एक अजीब दृढ़ संकल्प जागा। चाहे कुछ भी हो जाए, मैं इसे तब तक नहीं छोड़ूंगी जब तक मैं इसे वश में नहीं कर लेती!
क्योंकि रसोई में बहुत गर्मी थी, इसलिए वे दोनों बाहर लाउंज में बैठ गए और अपने साथ लाई हुई सब्जियां खाईं।
एक दिन, उसके बगल में बैठकर पोल खाते हुए, उसने पूछा,
"रे, तुम कितने थके हुए हो!"
"मुझे बताओ गुरुजी का घर इतना गर्म क्यों है!" उन्होंने कारण बताया।
इधर आओ। अपना सिर मेरी गोद में रखो, चलो देखते हैं! मैं बच्चे को दूध पिलाऊँगी..."
तो संकोचला.
उन्होंने आगे कहा,
``क्यों? दोस्ती का नारा लगाने के बाद मेरी गोद में सिर रखकर सोने में क्या बुराई है? सोचो, अगर तुम रास्ते में कहीं बेहोश हो जाओ और मैं तुम्हारा सिर अपनी गोद में ले लूं, तो क्या करोगे? अगर तुम्हें इतनी झिझक है, तो मैं तुम्हारी गोद में सिर

रखकर सो जाऊँगी... तुम मुझे खिलाओ..." और उसने अपना सिर उसकी गोद में रख दिया और खिलाने लगी। चार कौर पोल-भागी खाने के बाद, वह उठी और बोली, `` मुझे क्या हुआ है? तुम तो बहुत थके हुए हो," उसने उसका सिर अपनी गोद में लिया और उसे खिलाने लगी।
हालांकि हेमंत उसकी पहल के कारण थोड़ा झिझक रहा था, लेकिन दूसरी ओर, यह अनुभव उसे एक अजीब सी संतुष्टि दे रहा था। उसके पूरे शरीर का स्पर्श उसकी इंद्रियों को जागृत कर रहा था।
यह जानकर उसने स्वयं को उसके हवाले कर दिया। उसे उसकी अनुभवहीनता का भी एहसास हुआ। लेकिन उसके सहयोग से वह कुछ ही क्षणों में उसमें गहरा विश्वास जगाने में सफल रहा।
उसका अस्थिर मन गहरी आस्था से भी भरा हुआ था।

■

८

विमान से लौटने के बाद, अनुप का सारा ध्यान विमान, दिल्ली और अपनी माँ पर केंद्रित था। उसने वह नोट नहीं हटाया था जो एयरलाइन कर्मचारियों ने उसके सूटकेस के हैंडल पर लगा दिया था, जिसे वह हवाई यात्रा के दौरान अपने साथ ले गया था। कॉलेज लौटते समय वह टिकट के बचे हुए हिस्से भी साथ ले आया था। चूंकि उसने अपने दोस्तों को पहले ही बता दिया था कि वह हवाई यात्रा कर रहा है, इसलिए पिछले एक महीने से उनके बीच अनुप के सौभाग्य की ही चर्चा चल रही थी। उनमें से अधिकांश ने बस सड़क पर गलती से इधर आ गए एक छोटे विमान को देखा था, बस इतना ही। लेकिन अनुप उन्हें यह बताकर आश्चर्यचकित कर रहा था कि विमानों में भी प्रोपेलर, जेट, एंवरो, कारवेल, बोइंग आदि होते हैं और विभिन्न आकारों के इंजन होते हैं।
अनुपक, जिसने दिल्ली में तीन सप्ताह की छुट्टियाँ बिताईं और हवाई जहाज से आना-जाना किया, चाहे वह कितने ही लोगों को अपने अनुभव के बारे में बताए, कभी संतुष्ट नहीं हुआ। अपने सामने बैठे दोस्तों की हैरानी और हल्की ईर्ष्या देखकर, उसका अनुभव और भी विविध रूप ले लेता और उत्साह से खिल उठता। फिर, अपने आप ही, उसमें कई और सच्चे और झूठे अनुभव जुड़ जाते!
वह एक बार कह रहे थे,
बैंगलोर से जो विमान रवाना हुआ, वह कुनिगल, नेलमंगल से सीधे बसवनपुर आया। मैं खिड़की के पास बैठकर बाहर देख रहा था। फिर वह यहाँ जोगीगुड्डा आया, कॉलेज के चारों ओर चक्कर लगाया और चला गया... छुट्टी का दिन था, है ना? इसीलिए कोई बच्चा नज़र नहीं आया..."
उन्होंने कहा, अगली बार बताते हुए,
"...क्या हुआ, मैं आपको बताता हूँ—मैंने एयर होस्टेस से कहा—मैं कॉकपिट में बैठना चाहता हूँ। उसने मुझे पायलेट के बगल में बिठा दिया। उसने मुझे विमान उड़ाना सिखाया। कुनिगल से बसवनपुर पहुँचने पर विमान ने झटपट बटन दबाया और विमान को अपने कॉलेज ले आया। पायलट हैरान रह गया! मैंने उससे कहा, क्या आप वह स्कूल देख रहे हैं? हमारा स्कूल! यह बहुत अच्छा स्कूल है! पायलट का एक बेटा है, उसने कहा। वह हमारे बराबर है। क्या आप उसे अपने स्कूल में दाखिला दिलाएँगे, उसने पूछा। अब आप सब बताइए—क्या आप उसके बेटे को अपने स्कूल में लेना चाहते हैं या नहीं?"
उनके सवाल ने श्रोताओं को दो भागों में बांट दिया। कुछ बच्चों का मानना था कि अगर पायलट का बेटा उनके स्कूल में आया, तो स्कूल की प्रसिद्धि हवाई जहाज की तरह आसमान छू जाएगी! जान-पहचान की वजह से हम भी हवाई जहाज में

चक्कर लगा सकेंगे - कम से कम अंदर तो देख सकेंगे। दूसरे समूह का मानना था कि अगर पायलट का बेटा यहाँ आया, तो अनूप और वह छात्र सबका ध्यान अपनी ओर खींच लेंगे - अनूप तो हमसे बात भी नहीं करेगा - हम सब सैनिकों के स्तर पर आ जाएंगे।
लेकिन जूनियर पीयूसी के छात्र बोरलिंगप्पा ने गौर किया कि अनुप हर दिन अपनी कहानी बदल रहा था। उसने पूछा,
"आपने कहा था कि उस दिन विमान हलुकेरे-कुनिगल-बसवानपुर के ऊपर से गुज़रा था, है ना? तो फिर विमान यहाँ हर दिन क्यों नहीं उड़ता? हम उसे हर दिन क्यों नहीं देखते?"
अनूप से अचानक पूछे गए इस सवाल ने मानो उसे फांसी पर लटका दिया हो। मम्मी के टिकट भेजने के बाद, अप्पा ने उसे तय समय पर हवाई अड्डे पहुंचा दिया था। खिड़की के पास वाली कुर्सी पर बैठने के बाद, जब विमान ने उड़ान भरी, तो उसे खिड़की के बाहर केवल बादल ही दिखाई दिए। इसीलिए वह बैंगलोर गाँव तक नहीं देख पाया। आधे घंटे बाद, जब बादल छटे, तो उसे धुंधला सा ही यह पहाड़, यह घाटी, और नीचे कहीं बहती नदी दिखाई दी। उसे यह सब साफ-साफ याद था। लेकिन हवाई यात्रा के बाद, उसे यह एहसास हुआ कि वह यहाँ सबसे श्रेष्ठ है। इसी एहसास से प्रेरित होकर वह यह कहानी गढ़ रहा था कि मैं श्रेष्ठ हूँ और तुम सब हीन हो।
शुरुआत से ही अन्नाइया बच्चों में यह भावना जगाने के लिए अथक प्रयास कर रहे थे कि हम सब एक समान हैं। यहां तक कि दैनिक प्रार्थना में भी वे कहते थे, "सहम भवतु-सहनाउभुनक्तु।" इसका अनुप के मन पर शुरू में गहरा प्रभाव पड़ा। उनके पिता एक बड़े अखबार के संपादक हैं - इसलिए यह भावना कि वह यहां के अन्य लोगों से अलग तरह के घर से आया है, उनके मन से काफी हद तक गायब हो चुकी थी। हालांकि उन्हें स्कूल में नेतृत्व दिया गया था, फिर भी उन्हें इसमें अधिक जिम्मेदारी का एहसास होता था। लेकिन अब, अनजाने में ही, जिम्मेदारी की वह भावना फीकी पड़ गई थी और श्रेष्ठता की भावना ने उनके मन पर कब्जा कर लिया था।
और इसमें गलत क्या है? क्या यहाँ किसी ने बोइंग जेट में सफर किया है? यहाँ के बच्चों को छोड़ो – यहाँ के किसी भी शिक्षक ने तो हवाई जहाज़ में कदम भी नहीं रखा है! ये शिक्षक ही तो हवाई जहाज़ के अंदर के बारे में, सीटों के बारे में, उड़ान के दौरान कैसा लगता है, लैंडिंग के दौरान कैसा लगता है, आदि के बारे में पूछताछ कर रहे थे, है ना?
मम्मी कहती हैं, ये सच है! दिल्ली के आधुनिक स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों का रंग कितना कोमल और गोरा है! वे हमारी तरह दुबले-पतले नहीं हैं! धूप, कीचड़, गंदगी और गोबर में फावड़ा, कुदाल और कुल्हाड़ी से काम करने के बाद और क्या होगा?
मम्मी कह रही थीं,
देखो, अनूप! इस कारखाने में कितने लोग काम करते हैं। जब वे यहाँ से घर जाते हैं, तो उनकी ज़िम्मेदारी खत्म हो जाती है। अगर मैं ऐसा कहूंगी, तो कारखाना कैसे चलेगा? तुम्हें पता है मैंने तुम्हारे पिताजी से तुम्हें उस स्कूल में न भेजने के लिए कितनी लड़ाई की थी? लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। इसीलिए मैं हताशा में यहाँ आई हूँ - मैंने तब तुम्हें पैसे भेजने और तुम्हें दिल्ली भेजने का फैसला किया था। ग्रीन पीक के बच्चों को देखो! वे कैसे कपड़े पहनते हैं! कितने मज़े से क्रिकेट खेलते हैं! कल वे ही देश पर राज करेंगे, व्यापार और उद्योग में सबसे आगे होंगे! तुम्हारे कॉलेज में पढ़ने वाले बढ़ई बनेंगे - किसान! क्या तुम्हें मेरी बात समझ नहीं आ रही?

दिल्ली में उनकी छुट्टियां एक अलग ही तरह की खुशी में बीतीं। जींस पैंट, पोरेस कट टाउजर, मम्मी के हाथों से बनी कमीजें, स्पोर्ट्स शूज, हडसन पिज्जा, जॉयस आइसक्रीम, घंटेवाला पेड़े, बनारसीदास का गाजर का हलवा, और मम्मी के घर पर बनाया हुआ स्वादिष्ट घी, बादाम और पिस्ता से लिपटा हुआ संतरे का शिरा।
जब हम कॉलेज पहुंचे, तो हमने खादी की कमीज़ें और शॉर्ट्स, पंचा, कुलथे की खुशबू, नाचन की महक, नुकीले पत्थरों से भरी कच्ची सड़कें देखीं – दिल्ली की चकाचौंध भरी सड़कें! मम्मी कह रही थीं – दिल्ली की सड़कें तो विदेशों की सड़कों जैसी हैं! कितनी चौड़ी सड़कें हैं! चिकनी! चौड़े फुटपाथ – ऊँचे पेड़ – बीच-बीच में चौकों में गोल-गोल बगीचे! मम्मी कह रही थीं – सारे गाँव एक जैसे गरीब हैं – बस दिल्ली ही अपवाद है! वाकई, दिल्ली से बेंगलोर लौटने के बाद, बेंगलोर की सड़कें देखकर हमें भी यही बात समझ आई! दिल्ली की उन चौड़ी सड़कों पर मम्मी कितनी बढ़िया कार चलाती हैं! उन्होंने यह भी कहा – अगली बार जब तुम आओगे, तो मैं तुम्हें ड्राइविंग स्कूल में दाखिला दिला दूँगी, इसीलिए।
बैलगाड़ी में मिट्टी और गोबर भरते हुए, उन्हें पुराने ज़माने की सारी बेवकूफी याद आने लगी। उनका मन किया कि सब कुछ छोड़कर भाग जाएं।
लेकिन उसकी मां ने उसे चेतावनी दी थी।
तुम वहां कन्नड़ में पढ़ रहे हो। अगर अभी स्कूल बदलोगे तो तुम्हें अच्छे नंबर नहीं मिलेंगे। अभी वहीं रहो और खूब अच्छे नंबर लाओ। उसके बाद चाहे तुम्हें दिल्ली-मुंबई-पुणे, कहीं भी दाखिला मिले, मैं तुम्हें पढ़ाऊँगा! पैसों की चिंता मत करो। मुझे छोटे बच्चों के चेहरों पर गरीबी देखना अच्छा नहीं लगता!
फिर भी, वहाँ मौजूद शिक्षकों—डोडप्पा, नारायणस्वामी मास्टर, सोमशेखराचार्य, रामचंद्र मास्टर, शरभन्ना मास्टर—को देखकर उनके हृदय में अनजाने में दबी श्रद्धा की भावना जागृत हो उठी। उस समय, हवाई जहाज़ की यात्रा, दिल्ली की सड़कें, टुकटुक में बैठे गोरे बच्चे, माँ द्वारा खरीदे गए नए कपड़े—सब कुछ भुला दिया गया था। लेकिन जब वे अकेले बैठे होते, तो दिल्ली की यादें उनके मन में उमड़ आतीं। उस समय, अगर कोई बच्चा हवाई जहाज़ या दिल्ली की बात छेड़ता, तो उनकी कल्पना शक्ति खिल उठती!
उनके सबसे करीबी दोस्त उनसे पूछ रहे थे,
"वे हवाई जहाज़ों में एयर होस्टेस हैं - क्या तुमने उन्हें चूमा नहीं है? मेरा मतलब है, वे सबको चूमती हैं - क्या यह सच है?" यह पूछते हुए उसकी निगाहें एक रहस्यमयी जगह पर टिकी थीं, मानो वह उस पर टॉर्च की रोशनी डाल रहा हो। जैसे-जैसे उसने उन्हें इसके बारे में सच और झूठ बताया और दिल्ली की लड़कियों का वर्णन किया, उसकी ज़ुबान तेज़ होती गई।
लेकिन अनुप्पा या अन्य शिक्षकों में से किसी ने भी उसमें आए इस बदलाव पर ध्यान नहीं दिया, क्योंकि अनुप स्वयं इससे भलीभांति परिचित था।

■

जब रविंद्र को यकीन हो गया कि उन दोनों के लिए सहमत होना नामुमकिन है, तो उसने ठान लिया कि उसके लिए दिल्ली में रहना और उसके लिए बेंगलोर में रहना ही सही है। जब वह अनुप से मिलने आई, तो उसे यह भी एहसास हुआ कि उनके बीच की दूरी पूरी हो चुकी है। होन्नाटी के जाने के बाद से उसका अकेलापन और भी बढ़ गया था। जब वह घर पर होता, तो वह उसके साथ बातें करने और कुछ खाने के लिए होती। इतना ही नहीं, जब वह बिस्तर पर लेटता, तो उसकी सितारों की आवाज़ उसे गहरी नींद दिला देती।
अब चारों ओर शांति छाई हुई थी। एक आदमी के लिए इतने बड़े घर की क्या ज़रूरत थी? क्यों न इस घर को छोड़कर किसी होटल में हमेशा के लिए कमरा ले लिया जाए? हालाँकि, अगर यह विचार उसके मन में आया भी, तो उसे एहसास हुआ कि इसमें बहुत खर्च आएगा और उसे कोई आज़ादी नहीं मिलेगी। उसने तय

किया कि वह एक नौकर को रोज़ सुबह खाना बनाने, घर के काम करने और खाने के लिए रखेगा।
फिर भी, उनके मन में अपनी पत्नी के लिए गहरी नफरत नहीं पनपी। हालांकि उन्हें इस बात का दुख था कि उन्हें एक ऐसी महिला का साथ मिला जिसके विचार उनसे भिन्न थे, लेकिन उन्होंने अपने दिल में यह बात स्वीकार कर ली थी कि हर किसी को अपनी मर्जी से जीने की आजादी है। चाहे उन्होंने खुद को कितना भी समझाने की कोशिश की हो कि वे उनकी जीवनशैली का सम्मान नहीं कर सकते—और उन्हें इससे नफरत करने का क्या हक है—उनका मन कभी-कभी बेचैन हो जाता था। इस प्रकार, किसी न किसी कारण से, उनकी याद उन्हें सताती रहती थी। सोलह साल का जीवन चौवालीस साल की उम्र में समाप्त हो गया।
कभी-कभी तो उनके मन में तलाक लेकर दोबारा शादी करने का ख्याल भी आता था। भला भला खाना न होने की वजह से भला खाना बनाना क्यों छोड़ दे?
लेकिन यह विचार ज्यादा देर तक नहीं टिका।
ऐसे समय में उन्हें कॉलेज से बहुत सहारा मिला। वे कभी-कभार दो-तीन दिन के लिए कॉलेज जाने लगे। वे अन्नाईया, सोमशेखराचार्य, चंद्रशेखर और शरभन्ना को देखते और यह सोचकर सुकून पाते कि उनका जीवन उन लोगों से कितना बड़ा था जो शादी करके दुनिया में खो गए। लेकिन जब वे मन की शांति की उम्मीद में कॉलेज जाते, तो परशुराम गौड़ा की निंदा सुनकर उन्हें घृणा होती। वे सोचते, पत्रकार होने के नाते ऐसी बातों से क्यों घृणा हो? आखिर पेशा अलग है और कॉलेज जैसी संस्था भी अलग है!
उसी विद्यालय में अनुपाला को अपने मन की शांति का अनुभव हुआ। जब अन्नाइया और अन्य शिक्षकों ने उनकी परिश्रमशीलता, वीर गुणों और तीक्ष्ण बुद्धि की प्रशंसा की, तो उन्हें प्राचीन ऋषियों की याद आ गई। कितने ही ऋषि ऐसे थे जिनका अपना कोई संसार नहीं था। वे किसी स्त्री से पुत्र की कामना करते और पुत्र को जन्म देते। वे उस पुत्र को अपना सारा ज्ञान दे देते और फिर निष्कलंक हो जाते। वे उस धर्ममाता को अपने जीवन में कभी कोई महत्व नहीं देते थे – वे उसे केवल उस मिट्टी की तरह देखते थे जो बीज को अंकुरित होने तक अपने भीतर समेटे रखती है। सोलह वर्ष की आयु के संसार में डूबे रहना उनके लिए कितना कष्टदायक था!
लेकिन यह विचार जल्द ही प्रबल हो गया, क्योंकि उन्हें लगा कि सोचने का यह तरीका सही नहीं है। वे ऋषि अलग थे और हम अलग हैं। हमें पुराणों में उनके उदाहरण क्यों खोजने चाहिए? अन्नय्या और उनके मित्र, जो जीवन में एक लक्ष्य लेकर जीते हैं, किस प्रकार कम शक्तिशाली हैं?
अनूप एक हफ्ते की छुट्टी के लिए बेंगलोर आया था। अगले दिन, वह सुबह जल्दी उठी और घर की खिड़कियों और दरवाजों से धूल साफ करने लगा। उसने खिड़कियों के कांच के दरवाज़ों को साबुन के पानी से धोया था। उस समय उसके घर में खाना बनाने वाला कोई नहीं था। अनूप ने खुद सब्जियां काटीं और रविंद्र से पूछने के बाद खाना बनाने में मग्न हो गया। जब रविंद्र रात को घर लौटा, तो उसके पलंग पर लगी मच्छरदानी धुल कर चमक रही थी। उसकी चादर, तकिए का कवर और चादर भी बदली जा चुकी थी। पूरा घर बिल्कुल अलग दिख रहा था। रात को खाना खाते हुए वह कह रहा था,
"मैं विश्वेश्वरैया की जीवनी पढ़ना चाहता हूँ, क्या आप इसे मेरे लिए ला सकते हैं?"
"विश्वेश्वरैया ही क्यों? मैं रामकृष्ण, विवेकानंद, महात्मा गांधी को भी लाऊंगा। क्या आप इसे पढ़ेंगे?"
मैं पढ़ूंगा। लेकिन विश्वेश्वरैया कर्मयोगी! मैं उन्हें बहुत पसंद करता हूं! मैं भी उन्हीं की तरह इंजीनियर बनना चाहता हूं। किए गए काम के लिए वेतन लेने में कोई बुराई नहीं है। लेकिन काम ईमानदारी से किया जाना चाहिए, डोडप्पा कहते हैं।

वेतन का भी एक निश्चित मूल्य होता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए! मैं भी इससे सहमत हूं..."
अपने बेटे के लिए उनका प्यार और भी बढ़ गया; वे अनूप की इच्छा के अनुसार किताबें लाते थे। उन्हें विश्वास था कि कल जब अनूप बड़ा होगा, तो उनके लिए उनका स्नेह और भी बढ़ जाएगा। जब तक अनूप घर पर रहता, वे जल्दी घर आ जाते। दोनों कई विषयों पर खुलकर बातें करते। वे देर रात तक, जब तक उन्हें नींद नहीं आ जाती, बातें करते रहते। सुबह वे जल्दी उठ जाते, रसोई का दरवाजा बंद कर देते और अपने काम इस तरह करते कि रविंद्र की नींद न टूटे।
यह सब देखकर रविंद्र को यह जानकर खुशी हुई कि किसी भी माता-पिता के लिए इतना प्रतिभाशाली बेटा होना मुश्किल है, न केवल शहर में बल्कि गांव में भी।
फिर भी उन्होंने अपने बेटे के सामने कभी अपनी मां का ज़िक्र नहीं किया। अनूपम ने भी कभी इस विषय पर बात नहीं की। वह भली-भांति जानता था कि उसके पिता को यह विषय पसंद नहीं था।
लेकिन नवंबर के आखिरी सप्ताह में अनुपम का पत्र पढ़कर वह चौंक गया। अनूपम ने लिखा था,
``मेरी 8 दिसंबर से 2 जनवरी तक छुट्टियां हैं। मम्मी ने यहां आने पर मुझसे कहा था कि मुझे उस समय दिल्ली आना चाहिए। अब उन्होंने मुझे पंजीकृत डाक से हवाई जहाज का टिकट भेजा है। उन्होंने मुझे बताया है कि मुझे 9 तारीख को बेंगलोर से उड़ान भरने वाले विमान से आना है। मैं 8 तारीख की शाम को बेंगलोर आ रहा हूं।``
हवाई जहाज का नाम सुनते ही रविंद्र का दिल बैठ गया। वह हवाई यात्रा को महज़ एक सुविधा नहीं मानती – उसकी नज़र में तो यह प्रतिष्ठा का मामला है! उसने दिल्ली में अपना कारोबार तभी शुरू किया जब मैंने उसका खर्च उठाने से इनकार कर दिया। वह यहां आधे रास्ते तक आई थी, तब भी उसने तीन बार कहा था कि वह एग्जीक्यूटिव क्लास में आई है। अब उसने अपने बेटे के लिए भी हवाई जहाज़ का टिकट भेज दिया है! मैं तो रेलगाड़ी से भी भेज सकता था। ऐसा नहीं है कि बेटे को हवाई जहाज से यात्रा नहीं करनी चाहिए – लेकिन... लेकिन... इससे वह मेरे और मेरे बेटे के बीच का रिश्ता तोड़ने की कोशिश कर रही है!
इसका मतलब है कि उसका अपनी मां से सीधा संपर्क है! वे दोनों एक-दूसरे को पत्र लिखते हैं! नहीं तो, उसे उसकी छुट्टियों की सही तारीखें कैसे पता चलतीं? वह मेरे साथ यहां एक हफ़्ते रुका था, और वहां तीन हफ़्ते रुकेगा!
रविंद्र का दिल ईर्ष्या से भर गया था। उसने अपने इस घृणित व्यवहार से उसके प्यार का एक बड़ा हिस्सा बर्बाद कर दिया था!
मुझे कल भी उसे पत्र लिखना चाहिए – कहीं मत जाना, उससे कोई संबंध मत रखना, इसीलिए। लेकिन जब मैंने अपने हाथ-पैर धोए और फ्रिज से एसेंस निकालकर गर्म किया, तो मुझे यह ख्याल आया,
छेह—यह ठीक नहीं है! वह ऐसा व्यवहार क्यों कर रही है?—हमारे लिए ऐसा व्यवहार करना उचित नहीं है।
उस रात उसे ठीक से नींद नहीं आई। उसे यह एहसास हुआ कि जिस प्रेम पर उसने इतने लंबे समय से विश्वास किया था, उसकी बुनियाद ही हिल गई है।
सुबह चेहरा धोते समय उन्हें एक अमेरिकी पत्रिका में छपा लेख याद आया जिसका शीर्षक था 'अलग हुए माता-पिता के बच्चे'। उसमें एक बात कही गई थी - ऐसे बच्चे शुरू से ही इतनी चतुराई से पेश आते हैं कि वे अपने पिता से अपनी माँ के बारे में और अपनी माँ से अपने पिता के बारे में बात नहीं करते। इस परिप्रेक्ष्य से, समाजशास्त्री ने लिखा था, क्या अनूप का व्यवहार भी चतुराई का एक उदाहरण है?

इस विचार से रवींद्र का मन व्याकुल हो गया। वह यह भी समझ गया कि इसे स्वीकार न करना स्वयं को धोखा देने के समान होगा।
दो दिन इसी असुविधा में बीत गए।
लेकिन तीसरे दिन, उन्होंने एक निर्णय ले लिया था। अनूप एक बढ़ता हुआ लड़का है। उसके विकास को ज़बरदस्ती रोकना या उसकी दिशा तय करना न तो सही है और न ही संभव। उन्होंने अनूप को अपने आगमन के बारे में एक पत्र लिखा और उसे सूचित किया,
मैं हवाई अड्डे पर सभी औपचारिकताएं पूरी कर लूंगा...

■

प्री-यूनिवर्सिटी की परीक्षाएं पूरी करने और बैंगलोर में अपने पिता के साथ दो दिन बिताने के बाद, अनूप फिर से दिल्ली के लिए रवाना हो गया। इस बार वह अकेले ही हवाई अड्डे गया और सारी औपचारिकताएं खुद ही पूरी कीं। रवींद्र ने चाहे जितनी भी मिन्नतें कीं, अनूप ने उसे आने नहीं दिया। वह रिक्शा से हवाई अड्डे गया। उसने किसी तरह खिड़की वाली सीट ले ली ताकि बीच में पंखा न चले। उसे भी एक तरह की आजादी का एहसास हुआ।
जब वह बच्चा था तब दिल्ली गया था और वहाँ की गर्मी उसने देखी थी, लेकिन अब उसे ठीक से याद नहीं था। पर अब उसे यहाँ की गर्मी असहनीय लग रही थी। वैसे, घर में गर्मी महसूस होने का तो सवाल ही नहीं था। घर में दो एयर कंडीशनर थे। मम्मी के बेडरूम में और लिविंग रूम में। इसके अलावा, मम्मी की कार भी एयर कंडीशनर वाली थी।
अनूप यथासंभव लाउंज के ठंडे वातावरण में ही रहना चाहता था। शाम को वह पटेलनगर स्थित ग्लोब कॉम्पिटिटिव ट्यूटोरियल में जाता था। हालांकि, वहां बेहद गर्मी होती थी। ऊपर लगे पंखे की हवा से गर्म हवा के बुलबुले बन रहे थे। उसे लगा – क्यों न यहां भी एयर कंडीशनर का इस्तेमाल किया जाए?
वह इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला लेना चाहता था। उसकी माँ का मानना था कि उसे केंद्र सरकार द्वारा विभिन्न राज्यों में शुरू किए गए क्षेत्रीय इंजीनियरिंग कॉलेजों में दाखिला लेने की कोशिश करनी चाहिए। वह सभी प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने की भी योजना बना रहा था। अपनी तैयारी के तहत, वह ग्लोब ट्यूटोरियल्स जा रहा था, जिसका शुल्क डेढ़ महीने के लिए 1,500 रुपये था। घर बैठे ही वह उन परीक्षाओं के पुराने प्रश्नपत्र हल कर रहा था।
वहाँ जाने के बाद से उसे दो बातें पता चलीं। वहाँ आने वाले बच्चे पुराने प्रश्नपत्र उससे भी ज़्यादा तेज़ी से हल कर रहे थे। नेपोलियन की प्रेमिका का नाम, वह राजा जिसने एक आम औरत के प्यार में अपना सिंहासन त्याग दिया, सबसे तेज़ गेंदबाज़, सौंदर्य प्रतियोगिताओं के लिए मशहूर गाँव और सबसे लंबा समुद्र तट, मनुष्य ने चाँद पर कदम कब रखा, उस वर्ष की मिस यूनिवर्स का नाम और देश, उसके शारीरिक माप - ये बच्चे कंप्यूटर की गति से ऐसे सवालों के जवाब दे रहे थे। वे बमवर्षक और लड़ाकू विमान में अंतर, रॉकेट की तकनीक जैसे आधुनिक सवालों के जवाब भी दो वाक्यों में दे रहे थे। यहाँ हवाई यात्रा आरामदायक नहीं थी। यहाँ के कई बच्चे विदेश यात्रा भी कर चुके थे। अगर वे एफ़िल टावर, स्टैच्यू ऑफ लिबर्टी, सियर्स बिलडिंग, ब्रेनर पास की कोई तस्वीर देखते, तो वे उसे देखने का अपना अनुभव बयान कर देते। उनकी अंग्रेज़ी भी बहुत अच्छी थी। इसके बजाय, वे एक-दूसरे से "या", "गाइ", "डोम", "स्क्रू", "येलो", "टैप-लक-बाय", "डो-घारी" और "अगर आप घर आकर ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में इसे ढूंढेंगे, तो आपको यह नहीं मिलेगा" जैसे शब्दों का इस्तेमाल करते हुए बात करते थे।
यह सब देखकर अनूप हिचकिचाने लगा, उसे लगा कि वह पिछड़ रहा है। एक तरफ तो उसे गुस्सा भी आ रहा था। मुझे अपनी माँ की कही बात याद आ गई कि उस गुस्से की दिशा भी अपने आप तय हो जाती है। बैंगलोर के स्कूल से निकाले

जाने के बाद अगर मुझे ग्वालेयर, देहरादून, कोडाइकनाल, दिल्ली के किसी स्कूल में भेजा जाता, तो मैं भी ऐसी ही हो जाती, उतनी ही होशियार और समझदार!
वहाँ कोई ऐसा दोस्त नहीं था जिससे वह अपने दिल की ये भावनाएँ व्यक्त कर सके। इसलिए एक दिन उसने अपनी माँ से अपने दिल की बात कह दी।
उसकी सारी बातें सुनने के बाद, कांति कुछ देर तक चुपचाप बैठी रही। उसके चेहरे से साफ़ था कि वह इस विषय पर बात नहीं करना चाहती थी। एक घंटे बाद, उसने मन ही मन कहा,
उस समय तुम्हारे दोस्त जगदीश अरोरा और ओमप्रकाश सभरवाल कोडाइकनाल में स्कूल जाने लगे थे। मैं तुम्हें भी वहाँ भेजने के लिए बहुत उत्सुक था। लेकिन वहाँ पढ़ाई बहुत महंगी थी, इसलिए मैंने तुम्हें उसी गाँव के गांधी स्कूल में भेज दिया! अगर बच्चा मिट्टी खोदे और गोबर उठाए, तो उसमें देशभक्ति की गुण अवश्य आ जाता है! अगर तुम गोबर के कटोरे में बैठी मक्खी की तरह पसीना बहाते हुए थर्ड क्लास में सफ़र करो, अगर तुम देशभक्ति के नाम पर बने विमान में सफ़र करो, तो यह राजद्रोह है! अगर तुम्हारे मन में ऐसे विचार हैं, तो तुम क्या करोगे? इसलिए मैं यहाँ आया और अपनी खुद की फैक्ट्री शुरू की और खुद पैसे कमाने लगा...
अनूप ध्यान से उसका भाषण सुन रहा था।
उन्होंने आगे कहा,
"मैंने तुम्हें इतने दिनों तक कुछ नहीं बताया, क्योंकि मैं सोच रही थी कि पिता-पुत्र के प्रेम में दखल क्यों देना चाहिए। इसके बाद भी, मेरी ऐसी कोई इच्छा नहीं है। मेरा भी आत्मसम्मान है!"
दरअसल, उसके बाद उसने इस विषय पर फिर कभी बात नहीं की। अनूप इसके बारे में और जानना चाहता था। उसने सोचा – मम्मी तो ज़िद्दी हैं। एक बार मना कर दिया तो फिर बात ही नहीं करतीं! बेशक, इसे करने के और भी तरीके हैं, बताओ!
जब वह अपने दादा-दादी से मिलने देहरादून गया, तो उसने अपनी दादी को अकेले पाया और इस विषय को उठाया।
"दादी, क्या मम्मी को घर और कारखाने दोनों की देखभाल करने में परेशानी नहीं होती? अगर पापा भी यहाँ आ जाएँ तो क्या होगा?"
लेकिन तुम्हारे पिता को कौन बताएगा? वो तो कभी-कभार बैठकों के लिए दिल्ली आते हैं। पर तुम्हारी माँ को कभी फ़ोन तक नहीं करते। उन्हें ये बर्दाश्त नहीं होता कि उनकी पत्नी उनसे ज़्यादा कमाती है! वो खुद कमाने और अपनी पत्नी-बच्चों को खुश रखने की हिम्मत ही नहीं करते! ऐसे पति के साथ तुम्हारी माँ क्या करेंगी? बेचारी, वो अकेले ही काम करती हैं! हमने उनकी हर संभव मदद की है और उनके लिए सब कुछ आसान बनाया है!
लेकिन फिर उसे लगा कि वह स्थिति को पूरी तरह समझ गया है। उसके बाद उसे किसी और से पूछने की ज़रूरत महसूस नहीं हुई। उसका हृदय अपनी माँ के प्रति कृतज्ञता से भर गया था।
जून के पहले सप्ताह में, उसके पीयूसी परीक्षा परिणाम घोषित हुए। उसने कॉलेज में अस्सी प्रतिशत अंकों के साथ प्रथम स्थान प्राप्त किया था। आईआईटी आदि की परीक्षाओं के परिणाम भी घोषित हो चुके थे। उसके लिए वहाँ प्रवेश पाना संभव नहीं था। उसके मन में अपने पिता और फिर कॉलेज के प्रति गुस्सा फिर से भड़क उठा। मम्मी ने कहा,
अब तुम्हें एहसास हुआ कि तुमने कितना कुछ खो दिया है? मैं तुम्हें बड़े-बड़े, मशहूर शिक्षण संस्थानों में भेजना चाहती थी। बच्चों के भविष्य की ज़िम्मेदारी सिर्फ़ माँओं की ही नहीं होती। अब तुम बैंगलोर जाओ। वहाँ इंजीनियरिंग कॉलेजों में दाखिला लो। लेकिन हो सकता है कि उच्च जाति के होने की वजह से तुम्हारा आवेदन खारिज हो जाए, जो कि जातिगत भेदभाव होगा! लेकिन क्या वहाँ ऐसी

सीट पाने का कोई तरीका है? चाहे कितना भी पैसा देना पड़े, कोई बात नहीं – सीट खरीद लो और मुझे फ़ोन पर बता देना। मैं तुरंत पैसे भेज दूंगी। वहाँ किसी गाँव में अपनी पढ़ाई पूरी कर लेना। फीस, किताबें, हॉस्टल का खर्च... किसी बात की चिंता मत करो। मैं सब कुछ संभाल लूंगी।
उसने उसे अपनी कार में बिठाकर हवाई अड्डे पर छोड़ दिया।

■

बैंगलोर पहुँचने पर उन्होंने तकनीकी शिक्षा विभाग में आवेदन किया। उनके पास साक्षात्कार के लिए बुलाए जाने तक इंतज़ार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। उन्होंने अपने पिता को भी स्पष्ट रूप से बताया,
"अगर मुझे पढ़ना-लिखना है तो मैं इंजीनियरिंग ही चुनूंगा। मैं बी.ए. या बी.एससी. करने के लिए कॉलेज भी नहीं जाऊंगा।"
रविंद्र ने पूछा,
"यह ज़िद क्यों?"
"मुझे अस्सी प्रतिशत अंक मिले हैं। मुझे इंजीनियरिंग में रुचि है। क्या मुझे अपनी पसंद का विषय पढ़ने का अधिकार नहीं है?" उसने पूछा।
रविंद्र भी यह बात समझ गया। बिना कुछ किए, बिना अंक प्राप्त किए इस तरह बहस करना गलत है। लेकिन इतने अंक प्राप्त करने के बाद इस तरह बहस करने में क्या गलत है? लेकिन अगर उसे सीट नहीं मिलती, तो फिर क्या करना है, इस बारे में कोई कुछ नहीं कह सकता। लेकिन अनुप ने तुरंत जवाब दिया,
``प्रति व्यक्ति शुल्क का भुगतान करके सीट प्राप्त करें!..."
"लेकिन इसके लिए मुझे कितना भुगतान करना होगा?" रविंद्र ने खुद से पूछा।
अगले दिन, उन्होंने दो निजी कॉलेजों को फोन किया और पूछताछ की। उन्हें जवाब मिल गया,
"अगर आप अभी बुकिंग करें और तुरंत भुगतान करें, तो यह लगभग चालीस से पचास हजार रुपये होगा। बाद में, यही राशि एक लाख या उससे अधिक हो जाएगी।"
रवींद्र ने मन ही मन अपनी आर्थिक स्थिति का जायजा लिया। एक हफ्ते सोचने के बाद उसने दोबारा पूछताछ की।
"क्या इस बात का कोई अनुमान है कि योग्यता के आधार पर कितने प्रतिशत प्रवेश बंद कर दिए जाएंगे?"
उसे जवाब मिल गया।
पिछले साल यह 88 प्रतिशत पर बंद हुआ था। इस साल के संकेतों को देखते हुए लगता है कि यह 90 प्रतिशत पर ही रुक जाएगा..."
इसलिए, उस रास्ते से अनुप के प्रवेश पाने की संभावना बहुत कम लग रही थी।
सीट पाने के लिए पैसे की इंतज़ाम करना ही उनके सामने एकमात्र मुद्दा नहीं था। पिछले साल इसी महीने उन्होंने एक संपादकीय लिखा था। उसमें उन्होंने यह सवाल उठाया था,
अगर शिक्षा पाने के लिए छात्रों को इतना पैसा देना पड़ता है, तो फिर शिक्षा के लिए उनके मन में कोई और नेक मकसद कैसे हो सकता है? वे अपने अर्जित ज्ञान का उपयोग जनता के हित में करने की इच्छा कैसे रख सकते हैं? अगर इस तरह से सीटों का लेन-देन करना सरकार और शिक्षण संस्थानों द्वारा किया गया पाप है, तो धनी माता-पिता द्वारा उन सीटों को खरीदना भी पाप है!
उनके लेख के प्रकाशित होने के बाद पाठकों की ओर से कई प्रतिक्रियाएं आईं।
"वे पिछड़े हुए हैं, इसलिए एक तरफ तो आप कम अंक पाने वालों को प्रवेश दे रहे हैं! फिर अगर मेधावी छात्र पैसे देकर सीटें खरीदते हैं, तो इसमें क्या गलत है?" यह एक प्रतिक्रिया थी।
एक ने लिखा था,

शिक्षा भी एक निवेश है। कुछ लोग इसमें जातिगत पूंजी का इस्तेमाल करते हैं, जबकि अन्य लोग पैसे का इस्तेमाल करते हैं, बस इतना ही! इन दोनों के बीच दार्शनिक अंतर क्या है?
ऐसे पत्रों ने उनके लेखन के पीछे छिपे नैतिक विचारों को कमजोर कर दिया था। हालांकि वे उन पत्रों में मौजूद विवादास्पद बिंदुओं को पूरी तरह से खत्म नहीं कर सके, लेकिन अपने विचारों पर उनका दृढ़ विश्वास जरा भी कम नहीं हुआ था। उन्होंने उन पत्रों में उल्लिखित प्रतिनिधि पत्रों को सार्वजनिक किया था।
लेकिन अब वह अपने नैतिक विश्वासों को लेकर दुविधा में था। अनुप जिस स्कूल में पढ़ता था, वहाँ अस्सी प्रतिशत से अधिक अंक लाना नामुमकिन था। ग्रामीण इलाकों के किसी भी छात्र को योग्यता के आधार पर प्रवेश नहीं मिल सकता था। यह कैसी न्याय व्यवस्था है? अगर बड़े-बड़े नेता लाभ उठाने के लिए अपनी जाति को पिछड़ा बताने लगें, तो संख्या में कमज़ोर लोग क्या करें? क्या भारतीय लोकतंत्र में जाति-मुक्त न्याय संभव है?
जब उनका मन इन दार्शनिक विचारों में लीन था, एक दिन अनुपना ने कहा,
मैंने पता किया। योग्यता के आधार पर भेजे गए साक्षात्कार पैत्र भेज दिए गए हैं। पहले बैच में प्रवेश 90 प्रतिशत पर रुक गया है। किसी भी हालत में यह 80 प्रतिशत से नीचे नहीं आ सकता। उस समय मैंने एक छोटा-मोटा दंगा किया था, इसलिए आपने मुझे उस गाँव के स्कूल में रखा! नहीं तो मुझे आसानी से 85-86 प्रतिशत मिल जाते। अब कैपिटेशन फीस देकर सीट पाने के अलावा कोई और रास्ता नहीं है। आज दोपहर मेरी माँ का फोन आया – उन्होंने कहा, चाहे कितना भी पैसा लगे, चिंता मत करो – सीट ले लो!
अनुपान ने अब तक अपने भाषण में अपनी माँ का ज़िक्र तक नहीं किया था। अब उसने अपने सारे विचार स्पष्ट शब्दों में कह दिए थे। इतना ही नहीं, उसने उस स्कूल को भी गाँव का स्कूल बताकर उसका मुज़ाक उड़ाया जिसने उसके व्यक्तित्व को आकार दिया था! वह बैंगलोर से वहां गया था, और इसी स्कूल ने उसमें वह संस्कृति समाहित की थी जिसने उसके तत्कालीन और आज के व्यक्तित्व में अंतर पैदा किया है। उसने अनुपान को चेतावनी दी कि इंजीनियरिंग में दाखिला न मिलने पर उसका गुस्सा जायज़ है, लेकिन बिना सोचे-समझे आरोप लगाना ठीक नहीं है, और उसने अनुपान को आश्वासन भी दिया कि वह कैपिटेशन फीस देकर अगले ही दिन सीट पाने की कोशिश करेगा।
अब तक रविंद्र ने किसी भी काम में संपादक के पद का दुरुपयोग नहीं किया था। वह नहीं चाहता था कि बच्चे की सीट खरीदने के मामले में भी ऐसा हो। उसने कार्यालय में मुख्य रिपोर्टर शांतामूर्ति के सामने अपनी समस्या रखी। सब कुछ सुनने के बाद उसने कहा,
"सर, अगर नहीं, तो आपको इस सीट के लिए भुगतान करना होगा! बैंगन खरीदने के लिए किसी की पहचान की क्या ज़रूरत है? हम पत्रकार तो पूरी दुनिया घूमते हैं। मैंने सब कुछ देख लिया है... चिंता मत कीजिए..."
वह तुरंत अपना स्कूटर लेकर चला गया। एक घंटे बाद वह वापस आया और बोला,
"मेरी मुलाकात तकनीकी शिक्षा विभाग के निदेशक से हुई थी।" उन्होंने कहा... "अधिकांश सीटें अब तक भर चुकी होंगी... मैं मैसूर के एक कॉलेज में सीट की सिफारिश कर सकता हूँ और उसे दिलवा सकता हूँ... मुझे चालीस हजार रुपये दान करने होंगे... यदि आप शाम से पहले अपना संदेश भेज दें, तो यह संभव हो सकता है... इसी तरह, मंत्रियों का भी दबाव है - लेकिन हमें उन्हें जल्द से जल्द सूचित कर देना चाहिए..."
मैसूर तो मैसूर ही है। रविंद्र सहमत हो गया। लेकिन अगर हम अपना सारा पैसा भी इकट्ठा कर लें, तो भी मुश्किल से पच्चीस हजार ही जुटा पाएंगे। चालीस हजार कैसे

जुटाएँगे, यह एक सवाल था। फिर भी, उसने शांतामूर्ति से कहा,
ठीक है। हमें वो सीट दे दो—"
शाम तक, उसने एक निष्कर्ष निकाल लिया था। वह भी अपने व्यवसाय में बहुत संघर्ष कर रही थी। मैंने अनूप को कभी नहीं कहा कि वह हवाई यात्रा के लिए उससे पैसे न ले। अब भी उसकी मदद न लेने के लिए कहना सही नहीं है। मुझे उसके पैसों से जलन क्यों होनी चाहिए? क्या उसे अपने बच्चे पर पैसे खर्च करने का अधिकार नहीं है?

■

अनुपन, जो अपना प्रमाण पत्र लेने कॉलेज गया था, ने सभी शिक्षकों के पैर छुए और हार्दिक प्रणाम किया। सभी को उस पर गर्व महसूस हुआ। बी.ई. पूरा कर चुके शंकरमूर्ति ने उससे कहा,
"यदि आप अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद यहाँ आते हैं, तो हम सभी बहुत प्रसन्न होंगे। अन्यथा, यदि आप कहीं भी रहें, तो भी हम प्रसन्न होंगे और विश्वेश्वरैया की तरह, हर नौकरी को समाज की सेवा करने के अवसर के रूप में देखें!"
जिस वातावरण में उन्हें तीन वर्षों तक प्रेम मिला था, वहाँ अनूपना ने भी अपने मन में विश्वेश्वरैया के आदर्श का अनुसरण करने का निश्चय किया। जब वे वहाँ से निकले, तो उनका हृदय अत्यंत कोमल हो गया था। उनकी आँखों में आँसू भी आ गए।
मैसूर में कॉलेज की पढ़ाई पूरी करने के बाद भी, वह लगातार खुद की तुलना अपने कॉलेज से करता रहता था। वहाँ उसकी किसी भी प्रोफेसर से मुलाकात नहीं हुई थी। किसी भी छात्र से उसकी दोस्ती नहीं हुई थी। अकेलापन उसके दिल को खा रहा था। उसे बार-बार कॉलेज के अंतरंग पल याद आ रहे थे।
लेकिन कॉलेज में उच्च वर्ग के लड़कों के सुखमय जीवन को देखकर उन्हें इसमें भी कुछ अजीब सा लगने लगा। उन्हें लगा कि बैंगलोर के स्कूल की मौज-मस्ती और खेल-कूद यहां भी मौजूद है। फिर भी, अब वे जवान नहीं थे—उन्हें कॉलेज में तीन साल हो चुके थे—और वे यह भी जानते थे कि किसी फिजूलखर्ची वाले होटल में समय बिताना ठीक नहीं है—उन्हें यहाँ पूरी लगन से पढ़ाई करनी चाहिए।
धीरे-धीरे वह अपने दूसरे बच्चों को जानने लगा। उसे इस बात का एहसास था कि कॉलेज में कदम रखते ही उसके पास पैसों की कोई कमी नहीं थी। मम्मी ने उसे सीट के लिए जो भी पैसे देने थे, सब भेज दिए थे। पापा हर महीने हास्टल का खर्च, फ़ीस और बाकी खर्चे उठाने के लिए तैयार थे। मम्मी भी हर तरह का पैसा देने को तैयार थीं। मम्मी कभी नहीं पूछती थीं कि पापा कितना पैसा देते हैं और पापा कभी नहीं पूछते थे कि उन्होंने मम्मी से कितना पैसा उधार लिया है! लेकिन वह बेवजह पैसे मांगकर उसे खर्च नहीं करना चाहता था। उसकी दिली इच्छा थी कि वह कॉलेज की लाइब्रेरी में बैठकर खूब पढ़े। लेकिन उसे अभी भी यह नहीं पता था कि उसे क्या पढ़ना चाहिए।
उन्होंने इलेक्ट्रॉनिक्स की पढ़ाई की थी। यहाँ आने से पहले, वे अपने दादाजी से मिले थे, जिन्होंने उन्हें बताया था,
विश्वेश्वरैया के समय में बांध और तटबंध बनाने के अपार अवसर थे... यह देखकर मैंने सिविल इंजीनियरिंग को चुना। निरंजन चाचा के समय में वास्तुकला में बहुत संभावनाएं थीं... अब वे इसमें खूब पैसा कमा रहे हैं। फिर भी, इसमें कमाई की एक सीमा है। लेकिन अब आप इलेक्ट्रॉनिक्स में जाइए। भले ही अभी थोड़ा अतिरिक्त खर्च करना पड़े, कोई बात नहीं। बाद में आप अपनी खुद की फैक्ट्री शुरू कर सकते हैं और उसे लाखों, करोड़ों, अरबों रुपये तक बढ़ा सकते हैं! अब दस-बीस हजार रुपये देखने का कोई मतलब नहीं है...
कॉलेज में भी, इलेक्ट्रॉनिक्स के छात्रों के बीच एक विशिष्ट होने का भाव स्पष्ट था। उसे भी यही एहसास हुआ। उसने भी अपने से ऊपर की कक्षा के होशियार बच्चों

से उचेत मागेदशेन प्राप्त करने का प्रयास शुरू कर दिया।

■

९

होन्नाटी को भी नहीं लगा था कि उस दोपहर जो कुछ हुआ वह पूरी तरह अप्रत्याशित था। फिर भी, उसने यह नहीं सोचा था कि वे इतने करीब आ जाएँगे। उसने हमेशा उसे एक ऐसे मित्र के रूप में ही महसूस किया था जिसका हृदय प्रेममय और कोमल था।
जवानी के दिनों में यह युवा भावना कभी-कभी उसे सताती थी... लेकिन पिछले कुछ वर्षों में, उसे यह याद भी नहीं आई थी।
लेकिन उस दिन के बाद, उस घटना की याद उन्हें एक गहरी, अवर्णनीय खुशी का एहसास कराती थी। वे बार-बार वही अनुभव पाना चाहते थे—और कुछ नहीं। यहाँ तक कि जब वे दोबारा मिले, तब भी उन्होंने कांति को नहीं छोड़ा, भले ही शाम के पाँच बज चुके थे। इसके बाद भी, उनके जाने के बाद उन्हें वहाँ अकेले बैठकर सितार बजाना असंभव लगता था। वे तुरंत एक रिक्शा लेकर घर के लिए निकल जाते थे, सितार को उसमें ही छोड़ देते थे।
जैसे ही वह घर में दाखिल हुआ, उसकी माँ ने पूछा,
"यह क्या है? तुम आज इतनी सुबह यहाँ कैसे आ गए?"
उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या जवाब दे। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि उसकी माँ या कोई और उससे ऐसा सवाल पूछेगा।
उसने भी यही बात कही।
"आप एक ही चीज़ को बार-बार खेलते-खेलते थक गए होंगे, है ना?"
उन्हें फिर से एहसास हुआ कि पंखे के नीचे बैठकर सितार बजाते हुए तारा का पहले जैसा रहना नामुमकिन है। दिल्ली की भीषण गर्मी में एयर कंडीशनर के बिना ध्यान लगाकर रियाज़ करना असंभव है! हम्म... शीतल के घर का लाउंज... उसके बाद कांति की याद - वहाँ उसके साथ बिताए मीठे पल...
लेकिन बेंगलोर में एयर कंडीशनर या पंखे की भी ज़्यादा जरूरत नहीं है... तभी मुझे रविंद्र के घर पर की जा रही रियाज़ याद आ गई... रविंद्र...
रवींद्र की याद आते ही हेमंत के पूरे शरीर से पसीना बहने लगा। उसने ऊपर देखा तो पंखा घूम रहा था। अगर वह उसकी गति और बढ़ा देता, तो गर्म हवा और तेज़ हो जाती, लेकिन वातावरण ठंडा नहीं होता। कल दोपहर से उसे रवींद्र की याद नहीं आई थी। जिस अनुभव ने उसे ऐसा महसूस कराया था जैसे वह अंतरिक्ष में तैर रहा हो, अब ऐसा लग रहा था जैसे वह किसी गहरी खाई में गिर गया हो। वह अपने बिस्तर पर लेटा हुआ घूमते पंखे को घूर रहा था।
मां कमरे के दरवाजे पर आई और अंदर झांकते हुए पूछा,
क्या आप चाय पीना चाहेंगे?
"अभी नहीं। मुझे रात को नींद नहीं आती!"
"ये तो बहुत गंदी जगह है!" उसने कहा और वहीं खड़ी रह गई।
ऐसा लग रहा था कि वह बातचीत करना चाहती है। अगर वह सितार अपने हाथ में ले लेता, तो वह अंदर चली जाती – लेकिन अगर वह उससे किसी और चीज़ के बारे में बात करता, तो वह कुछ देर के लिए अपनी चिंताओं को भूल जाता, इसलिए उसने उसे आवाज़ दी।
"अरे, अंदर आ जाओ..." वह जल्दी से कमरे में दाखिल हुई और मेज के बगल वाली कुर्सी पर बैठ गई।
जब वो रात को अपने कमरे में अकेले सो रहे थे, तो रवींद्र की छवि फिर से उनकी आँखों के सामने तैरने लगी। अब मैं बजा रहा हूँ, उन्होंने ही मेरे लिए वो सितार

खरीदा था। उनकी नज़र गिरे हुए सितार पर पड़ी। खिड़की से गली की बत्तियों की रोशनी आ रही थी, इसलिए वो उसमें साफ़ दिखाई दे रहा था। उस समय उन्होंने कहा, 'नहीं, मेरे पास पैसे हैं', लेकिन उन्होंने मेरी बात नहीं मानी। वो मुझे बैंगलोर ले आए, मुझे कमलापुर के साथ रखा - मैंने उनसे कहा कि मैं सुबह घर के काम और खाना बनाने में उनकी मदद करूँ, लेकिन उन्होंने मना कर दिया। 'तुम अपनी रियाज़ करो -' वो इतनी ज़िद से मुझे खाना खिलाते थे! ये सिर्फ़ स्नेह नहीं है - ये सच्चा स्नेह है!

एक बड़े पाप का स्वामी होने का अहसास उसके मन में भर गया। उसने अपनी आँखें बंद कर लीं।

रवींद्र मेरे बड़े भाई हैं! सिर्फ इसलिए नहीं कि वो मुझसे बड़े हैं, बल्कि इसलिए कि उनका मेरे प्रति प्रेम, वो स्नेह जो आसानी से व्यक्त हो जाता है, हमारी सोच में समानता, विश्वविद्यालय में हम दोनों के बीच आपसी सम्मान, मेरे दिल में भाईचारे की वो भावना जो प्रेम से भी कहीं अधिक प्रबल है। एक ऐसी भाईचारे की भावना जो करीबी भाई-बहनों में भी नहीं होती! कांति को 'भाभी' कहकर पुकारने का विचार इसी भावना से आया है – किसी विधि के रूप में नहीं।

अब, उसी कांति के साथ ऐसा संबंध – यह साधारण व्यभिचार नहीं है – मेरे साथ भाई की हत्या का घातक विश्वासघात हुआ है! मैं पापी हूँ – परम पापी –

पंखा मेरे सिर को रगड़ रहा था। बदबूदार पसीना मेरे पूरे शरीर को ढक रहा था, जिससे यह और भी घिनौना लग रहा थी। स्नेह, विश्वास, उदारता – क्या इन सबका यही अर्थ है? मैं इसे कैसे नहीं समझ पा रहा हूँ? या क्या मैं एक तुच्छ, वासनापूर्ण व्यक्ति हूँ जो इनसे मिलने वाले विभिन्न सुखों के आगे आत्मसमर्पण कर देता है, भले ही मैं इन्हें समझता हूँ? क्या मैंने इन सुखों के लालच में अपनी नैतिकता को अंधकार में डुबो दिया? यही सच है!

बिना एहसास किए ही, उसके फेफड़ों में ऑक्सीजन की कमी हो रही थी और उसे लग रहा था जैसे वह साँस लेने के लिए तड़प रहा हो। उसकी ज़ान खतरे में थी। और उसे लग रहा था कि उसका दिल किसी भी पल धड़कना बंद कर देगा। उस स्थिति में भी, उसने सोचा कि यही सही होगा - ऐसे अपराध के लिए मौत ही सही सज़ा है! लेकिन उसके सीने में कोई दर्द नहीं था, उसके बाएँ हिस्से में कोई दर्द नहीं था, और उसे पसीना भी नहीं आ रहा था। पहाड़ चढ़ते समय, उसे ऐसा लग रहा था जैसे वह साँस के लिए तड़प रहा हो। वह आँखें बंद करके वहीं लेटा रहा, यह महसूस करते हुए कि अगर वह मर जाए, तो वह बच जाएगा।

कुछ देर बाद मुझे नींद आ गई।

वह सुबह जल्दी उठ गया। उठने के बाद उसने स्नान किया और चेहरा धोया। उसको शरीर हलका महसूस हो रहा था, लेकिन मन अभी भी उदास था। उसे लग रहा था कि गुरुजी के घर जाना - सितार बजाना - व्यर्थ है। उसका मन कर रहा था कि वह सितार को उठाकर फेंक दे और टुकड़े-टुकड़े कर दे। रवींद्र ने इस सितार के लिए मुझ पर कितनी मेहनत की थी! इसी सितार की वजह से कांति इतना करीब आया और अंततः उसने ऐसा किया। लेकिन फिर उसने सोचा, अगर उसने सितार तोड़ दिया, तो उसके पास क्या बचेगा? अगर वह गुरु के पास नहीं गया, तो समय कैसे गुजारेगा, यही एकमात्र सवाल था।

क्या रवींद्र ने मेरे लिए इतना बलिदान सिर्फ सतारी के लिए किया? क्या मेरे व्यक्तिगत व्यवहार – मेरे स्वभाव का इससे कोई लेना-देना नहीं है? क्या सतारी ने ही मुझे कांति के इतना करीब लाया?

माँ द्वारा दिए गए भोजन को हमेशा की तरह खाने के बाद, उसने अपना सितार लिया और गुरुजी के घर चला गया। पलंग पर बैठकर गुरुजी उसका सितार सुनते रहे। उसका सितार बजाना उसकी कलपनाशीलता के अनुरूप था, इसलिए उन्होंने उसे टोका नहीं, और जब वह सितार बजाना बंद कर देता, तो वे उसे वह सब कुछ

बता देते जो वह सुनना चाहता था। उसे गुरुजी की उपस्थिति से असहज हुए बिना सितार बजाने की आदत हो गई थी। उस दिन, जब वह तोड़ी के विलंब में खुद को तल्लीन करने का प्रयास कर रहा था, तो उसका मन उदासी में डूब गया। उसे लगा कि हाल ही में उसके मन में क्रोध से भी अधिक असंगत भावनाएँ भर गई हैं। मैं एक ऐसा व्यक्ति हूँ जो स्वयं से असंगत है - एक पापी मनुष्य -
उन्होंने गुरुजी से कहा,
रात में कोई आया था। सुबह तक बातचीत चलती रही। अब तो इसका कोई मतलब ही नहीं रह गया है...
"यह ठीक नहीं है। संगीत जैसी कला के लिए मन पर इस तरह दबाव डालना ठीक नहीं है। थोड़ी देर सो जाओ, फिर उठो, हम देखेंगे!" गुरुजी ने उन्हें प्यार से समझाया। फिर भी, उन्होंने थोड़ी देर और सितार बजाने की कोशिश की। अंत में, जब उनसे कोई परहेज नहीं रहा, तो उन्होंने भी सितार नीचे रखकर कोने में रखी चारपाई पर लेट गए।
इससे मेरे शरीर को थोड़ा बेहतर महसूस हुआ, लेकिन मेरा मन शांत होने के लिए तैयार नहीं था।
ये सब कैसे हो गया! पच्चीस साल की उम्र में भी मेरा मन कभी नहीं भटका। आईटी और आईआईएम में पढ़ाई के दौरान, वो अपने दोस्तों से खुलकर बातें करते थे। कभी-कभी तो उनके बीच कोई रोक-टोक नहीं होती थी। देर शाम को, कई जोड़े पेड़ों और झाड़ियों की छाँव में नज़र आते थे। फिर भी, मुझे एक खास पेड़ के नीचे बैठकर सितार बजाने की आदत थी, बिना मन भटकने दिए। दूसरे बच्चों ने मज़ाक में उस पेड़ का नाम सितार वृक्ष रख दिया था। बाद में, वो नाम पक्का हो गया। कोई भी जोड़ा वहाँ नहीं आता था।
और इस उम्र में मैं ऐसे अजीबोगरीब रिश्तों में क्यों फंसा हुआ हूँ?
कुछ देर बाद मैंने झपकी ले ली।
जब मैं उठा तो साढ़े बारह बज रहे थे। गुरुजी सो रहे थे। इतनी गर्मी थी कि किसी को भी अपराधबोध होना चाहिए! बिस्तर पर लेटे-लेटे मैं मन ही मन सोचने लगा, मैंने जो पाप किया है उसका प्रायश्चित मैं कैसे करूँ, ये तो बाद में पता चलेगा। लेकिन उससे पहले, इस पाप को रोकना होगा। हमें वो गलती दोबारा नहीं करनी चाहिए। आज से हमें वहाँ जाना बंद कर देना चाहिए, उससे मिलना भी नहीं चाहिए। हमें यहाँ से सीधे घर जाना चाहिए – घर पर थोड़ा खाना खाकर रियाज़ करना चाहिए। उसके बाद, जब तक वो घटना हमारे मन में खटकती रहे, हमें उस पीड़ा को सहते रहना चाहिए।
वह उठा। गुरुजी को जगाए बिना, उसने अपना सितार उठाया और चला गया। गलियों और संकरी सड़कों पर पड़े कचरे को पार करते हुए, वह तुर्कमान गेट पर आया और एक रिक्शा लिया। सितार लेकर बैठते हुए उसने कहा,
वसंत ऋतु की सैर..."
उसे थोड़ी राहत मिली। लेकिन जब रिक्शा तेज़ चलने लगा, तो उसे ख्याल आया कि कांति कारखाने में मेरा इंतज़ार कर रही होगी। वो हर मिनट अपनी घड़ी देख रही होगी। जब मैंने कहा कि मैं नहीं आ रहा, तो वो कार लेकर तुर्कमानगेट चली गई होगी। क्या वो घर पर फोन करेगी? करेगी क्या? उसने अब तक कर ही दिया होगा। नहीं तो, घर पहुँचते ही मुझे फोन करेगी। चाहे मैं उसे कोई कड़ा जवाब ही क्यों न दूँ, वो सुनेगी नहीं। वो मुझे वसंत विहार बस स्टॉप पर बुलाएगी, ये सोचकर कि मैं किसी बात पर नाराज़ हूँ – हमेशा की तरह! इसके बजाय, क्यों न मैं सीधे शीतल के घर जाकर उसे अपने इस नैतिक पतन के बारे में बता दूँ? मुझे अपने दिल की बात उसके सामने रख देनी चाहिए और उसे बता देना चाहिए कि इसके बाद मैं ऐसा नहीं कर सकता – चलो हम बस दोस्त बनकर मिलते रहें! बस! सच बताए बिना अपना चेहरा क्यों छुपाऊँ?

"वसंत विहार मत जाओ... इसे हौज खास ले जाओ..." उसने रिक्शा चालक से कहा।
वह उसके बगल में बैठ गया, और अपना सितार कार की पिछली सीट पर रख दिया। कार सड़क पर आ गई। खिड़कियाँ काली थीं। उसे भी आभास हो गया था कि वह अय्याश है, उसने एक हाथ से स्टीयरिंग व्हील पकड़ा और दूसरा हाथ उसकी गोद में रख दिया। फिर भी, वह चुप रहा।
वह शीतल के फ्लैट में गई, एयर कंडीशनर चालू किया और उसके साथ फारसी कालीन पर बैठ गई। उसने पूछा,
``क्यों? अच्छा नहीं है?"
हेमंत चुप रहा। अपनी छड़ी पकड़े हुए उसने फिर पूछा,
"हेमंत, क्या तुम्हें कुछ हो गया है?"
"मुझे अपने मन की सारी बातें आपको बतानी हैं..." हेमंत हकलाते हुए बोला, उसे समझ नहीं आ रहा था कि शुरुआत कैसे करे।
मैं भी यही कहता हूँ! मैं इसी बात पर ज़ोर दे रहा हूँ...
"तो एक मिनट रुकिए, चलिए देखते हैं! मुझे किनारे पर रहना पसंद नहीं है!" यह कहते हुए वह दूर हट गया।
उसके व्यवहार से उसे ऐसा लगा जैसे कोई उसे लात मारने वाला हो। उसने खुद को ढक लिया और ऐसा दिखाया जैसे कुछ हुआ ही न हो, और शांत भाव से कहा, ठीक है! मुझे विस्तार से बताओ...
"मैंने भाई की हत्या का अपराध किया है! तुम रवींद्र की पत्नी हो! वह मेरे बड़े भाई हैं... तुम मेरी भाभी हो! कितना पवित्र रिश्ता है..." उसने भावुक होकर कहा और उसे पिछली रात से अपने अंदर उमड़ रहे दुख के बारे में बताया।
वह चुपचाप उसकी बातें सुन रही थी। सुनते-सुनते उसका मन और भी कठोर होता जा रहा था। यह याद करते हुए कि परिस्थितियाँ जितनी कठिन होती जाती हैं, उसकी मानसिक शक्ति उतनी ही बढ़ती जाती है, वह उसकी बातों पर दिल खोलकर हँसी। फिर भी, उसे समय देते हुए, उसने पूछा,
"क्या आपने यही कहा था? अब, क्या मैं थोड़ी देर बात कर सकता हूँ? क्या यह ठीक रहेगा? या मुझे बस अपनी बात कह देनी चाहिए और दूसरे व्यक्ति को बोलने का मौका दिए बिना चले जाना चाहिए?"
"बोलो!" उसने उत्साहपूर्वक कहा, जिससे पता चलता है कि वह हमेशा चर्चा के लिए तैयार रहता था।
देखो, तुम रवींद्र को अपना भाई मानो या कुछ भी। यह तुम्हारा सवाल है। लेकिन एक बात याद रखना – मैं उसकी पत्नी नहीं हूँ। वह रिश्ता कभी टूटा ही नहीं! मैं कांति हूँ – सिर्फ़ कांति! वो भाग्यशाली रवींद्र नहीं! मैंने तुम्हें कितनी बार बताया है! अगर तुम अब भी मूर्ख की तरह अपनी अकड़ में हो, तो तुम्हें मनोचिकित्सक के पास ले जाना पड़ेगा। मैं कांति हूँ – एक स्वतंत्र, आज़ाद इंसान! किसी की पत्नी नहीं! अब समझ में आया क्या? मेरी तरफ देखो! क्यों? क्या तुममें सच का सामना करने की हिम्मत नहीं है?..."
उसके दृढ़ शब्दों को सुनकर उसका मन भ्रम की स्थिति में आ गया। उसने अपनी गहरी आँखों से उसे घूरकर देखा। उसने उसके मन की उलझन को भांप लिया। उलझन बढ़ने से रोकने के लिए वह एक पल के लिए चुप रही। अब, जैसे ही उसे लगा कि संवाद पूरी तरह से उसके वश में है, उसने उससे कहा,
बताइए, क्या आप दिल्ली में एक कलाकार के रूप में नाम कमाना चाहते हैं या नहीं? या फिर उस गरीब गाँव में एक आम आदमी बनकर रह जाना चाहते हैं? पहले इस बारे में अपने मन में फैसला कर लीजिए। अगर आप गाँव की नैतिकता और सिद्धांतों के इन विचारों से खुद को मुक्त नहीं कर पाए, तो एक कलाकार के रूप में दुनिया में अपनी पहचान कैसे बना पाएँगे?...

उसे पूरा यकीन था कि उसका मन काफी विचलित था। वह उठी और उसके बगल में बैठ गई, उसके कान में फुसफुसाते हुए बोली,
हेमंत, कल रात मैंने क्या सपना देखा, बताओ? मैं सितार वादक था और तुम एक महान कलाकार! एक ही धुन से तुमने मेरे भीतर ध्वनि की कितनी लहरें पैदा कर दीं, बताओ!
उसे कभी उम्मीद नहीं थी कि वह इतनी जल्दी सफल हो जाएगी। उसके शब्दों ने सचमुच उसके दिल को छू लिया था।
उन्होंने उन्हें यह भी याद दिलाया कि कोई भी कलाकार गवासनी के साथ सितार नहीं बजाता है।
उसने स्वयं पहल की।
हेमंत अब खेल में पूरी तरह मग्न हो चुका था। उस तल्लीनता में उसने उसे राधा कहकर पुकारा।
उसने उसके कान में फुसफुसाते हुए यह भी कहा:
``मुरारी... "
उसके बाद, वे दोनों एकांत में एक-दूसरे को एक ही नाम से पुकारने लगे। यह उनका प्यारा राज़ बन गया। सीने से सितार लगाकर बजाते समय उन्हें राधा के नग्न शरीर की याद आ जाती थी। उस अद्भुत सौंदर्य की याद उन्हें मंत्रमुग्ध कर देती थी। बेदाग सौंदर्य! गोरा रंग, सुडौल शरीर और लंबे घुंघराले बाल, जो पहाड़ से नीचे बहती काली नदी की तरह काले थे! अगर कोई चित्रकार इस शरीर को देखता, तो वह इसे अपनी पेंटिंग में उतारे बिना नहीं रह पाता – शायद ऐसे ही अनुभवों से प्रेरित होकर उन्होंने रागों और रागिनियों को नाम दिए होंगे। राधा के ऐसे प्रेम का अनुभव किए बिना मुरारी को बांसुरी बजाने की प्रेरणा मिलना संभव ही नहीं था...
एक दिन, दोपहर में उससे मिलने के बाद, उसने उससे कला संग्रहालय तक छोड़ने के लिए कहा। उसने मजाक में कहा,
``क्यों? क्या आप अभी तस्वीर खींचने वाले हैं या क्या?"
उन्होंने सीधे जवाब दिया,
आपको देखना चाहिए कि चित्रकार रागों और रागिनियों के चित्र कैसे बनाते हैं...
वह संग्रहालय में रागों और रागिनियों के चित्रों की गैलरी में गए और चित्रों को देखते हुए मग्न हो गए। प्रत्येक राग में भावों और संवेदनाओं को कितनी बारीकी से चित्रित किया गया है! रागिनी का चित्रण करते समय उन्होंने केवल सुंदर, युवती, उसके स्तनों और नितंबों और उनकी घुमावदार रेखाओं का ही उपयोग किया है। अचानक, उन्हें प्रत्येक राग के स्थान पर अपनी राधा दिखाई देने लगी। भूपली, बागेश्री, कल्याणी, भैरवी – मुझे अपने सितारी के माध्यम से उनकी विभिन्न भावनाओं को व्यक्त करना चाहिए। कुछ चित्रों को देखते हुए उन्हें दृढ़ विश्वास हुआ कि मेरी राधा किसी थिलर जैसी नहीं है। वह इन चित्रों में व्यक्त भावों की तुलना में गहन और परिपक्व भावों को अभिव्यक्त करने वाली है!
शाम 5:30 बजे वह रिक्शा से शीतल के घर लौटा। जब कांति उसके पास आई, तो उसने उसे अपने सारे दिल की बात बता दी। कांति का चेहरा संतुष्टि से चमक उठा।
उसने जारी रखा,
आज तक किसी ने भी राधा नाम का राग नहीं रचा है। मैं तुम्हारे नाम पर एक राग रचूंगा! उसमें तुम्हारे व्यक्तित्व के सभी गुण होंगे!..."
गाड़ी चलाते समय उसने अपनी बाहों को उसकी गर्दन के चारों ओर लपेट लिया।
इसके बाद भी हेमंत ऋण्वद्र को याद किए बिना नहीं रह सका। वह सोचता रहा, मेरी राधा कितनी स्वतंत्र है! वह किसी बंधन में नहीं है। इस विचार के साथ ही उसके मन में नैतिकता को लेकर जो उलझन थी, वह दूर होती जा रही थी। समाज़

के संकीर्ण नियमों और विनियमों के विचारों को त्यागे बिना कला के विशाल क्षेत्र में कैसे उड़ान भरना संभव है? वह उसे बता रही थी,
हेमंत, जब तुम अभ्यास कर रहे हो, तो अपने मन में कोई और विचार मत आने देना... मेरे विचार भी नहीं! अपने शुद्ध अभ्यास को जारी रखो...! क्या यह सच नहीं है कि मैं तुम्हारे संगीत की प्रेरणा हूँ? या तुम सिर्फ मुझे अच्छा महसूस कराने के लिए ऐसा कह रहे हो?
यह बिलकुल सच है! मेरी शपथ... तुम्हारी शपथ... मेरे सतारी की शपथ..."
``सतारी को अपशब्द मत कहो! मुझे बताओ कि तुम्हारे मुंह से ये सुनकर मुझे कैसा लगता है! मुझे तुम्हें प्रेरित करने में कभी असफल नहीं होना चाहिए..."

■

१०

एक रात, हॉस्टल में खाना खाने के बाद, अनुप सोने के लिए अपने कमरे में जा रहा था। उसी समय, इलेक्ट्रॉनिक्स के अंतिम वर्ष के छात्र विजयकुमार ने उसे फोन किया।
``अरे अनुप, स्टॉप! आय वॉंट टु टॉक टु यू..."
अनुपम ने पीछे मुड़कर देखा। उसने उसे पहचान लिया। हाल ही में, इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग के सभी वरिष्ठ छात्रों, प्रोफेसरों और विभागाध्यक्ष ने नए छात्रों के स्वागत के लिए एक कार्यक्रम आयोजित किया था। उस समय, यह सातवें सेमेस्टर का छात्र विभागाध्यक्ष के आने तक असमंजस में इधर-उधर घूम रहा था। वह अपनी कक्षा का प्रतिनिधि था। अपने अखिल भारतीय दौरे के दौरान भी, एक तरह से, वह नेतृत्व कर रहा था! विभागाध्यक्ष ने अपने भाषण में यह भी कहा था कि यदि नए छात्रों को कोई समस्या हो, कोई प्रश्न हो, तो उन्हें विजयकुमार जैसे वरिष्ठ छात्रों से अवश्य सहायता लेनी चाहिए...
अनुपाला को यह भी पता था कि विजयकुमार कर्नाटक सरकार के औद्योगिक आयुक्त एन.टी. रेड्डी का बेटा है। इसके अलावा, पूरे हॉस्टल को यह भी पता था कि वह 'स्पीड किंग' के नाम से मशहूर है, जो ऐसी हेलमेट पहनता है कि पलक झपकते ही गोली से उसका चेहरा पहचानना मुश्किल हो जाता है। नए छात्रों और लड़कियों के लिए उससे मिलना एक रोमांचक अनुभव था, उसे अपनी बाइक पर तेज़ रफ्तार में घूमते देखना। वह हमेशा अपने हाथ में हेलमेट लिए किसी अंतरिक्ष यात्री की तरह हॉस्टल के कमरे में आता था। अब विजयकुमार के उसे बुलाने पर अनुपाला को ऐसा लगा जैसे उसे सम्मानित किया जा रहा हो!
उसे विजयकुमार से ईर्ष्या भी होती थी। विजयकुमार खुद कॉलेज का हीरो था। लेकिन यहाँ उसकी वीरता को कौन स्वीकार करेगा, और क्यों? यही कारण था कि वह विजयकुमार से दोस्ती करना चाहता था।
विजयकुमार, जो पास आए, उन्होंने मानो अपनी महानता का एहसान मानते हुए उनकी पीठ पर हाथ रखा और पूछा,
``डु यू नो फायरिंग?"
``मेरे पास एन.सी.सी. का कोई प्रशिक्षण नहीं है। मैं इसमें शामिल होना चाहता हूँ..." अनुपनम ने उत्तर दिया।
हालांकि अन्य कॉलेजों के बच्चे आपस में अपनी मातृभाषा में बात करते थे, लेकिन इस इंजीनियरिंग कॉलेज के बच्चे आपस में अंग्रेजी में बात करते थे, इस बात पर गर्व महसूस करते हुए कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उनकी मांग है।
उसका जवाब सुनकर विजयकुमार के चेहरे पर वही तिरस्कार भाव आ गया जो किसी विद्वान के चेहरे पर किसी मूर्ख व्यक्ति को देखकर आता है। उसने पूछा,
``यू डोंट नो द मीनिंग ऑफ फायरिंग?"

अनूप को अब यह एहसास हो गया था कि अमीरेकी और अन्य अंग्रेजी बोलचाल की भाषा का प्रयोग न केवल दिल्ली में बल्कि भारत के अन्य इंजीनियरिंग कॉलेजों में भी होता है। उसने सावधानीपूर्वक उत्तर दिया,
``आय् नो इट्स ओन्ली ज़नरल मीनिंग."
"चलो, मैं तुम्हें बताता हूँ! लेकिन पहले मुझे बताओ, क्या तुम मेरे दोस्त बनना चाहते हो या नहीं?"
``हो..."
अगली बातचीत अंग्रेजी में जारी रही।
मेरे कमरे में आओ...
उन्होंने अनूप की पीठ थपथपाते हुए कहा।
कॉलेज में अकेलेपन और दोस्तों की कमी से जूझ रहे अनूप खुशी-खुशी उसके पीछे-पीछे चल दिया। उसने सबसे ऊपरी मंजिल पर स्थित अपने कमरे का दरवाजा खोला और अनूप को अंदर आने के लिए कहा। उसने उसे कुर्सी पर बैठने को कहा। अनूप जानता था कि आखिरी बेंच के छात्रों को अकेले रहने का मौका मिलता है।
उसे कमरे में लाने के बाद, विजयकुमार बाहर गया और अपने तीन और दोस्तों को ले आया। विजयकुमार ने उन तीनों का परिचय अनूपसी से कराया। नंजुंदप्पा का उपनाम रोबोट था। क्योंकि वह एक बहादुर आदमी था जो किसी भी मशीन में घुसकर काम कर सकता था! रंगनाथ का उपनाम रॉकेट था। एक बहादुर आदमी जो मोटरसाइकिल को रॉकेट की गति से चला सकता था! तीसरा था जसबीर चौधरी, हरियाणा के एक बड़े जमींदार का बेटा। उसने चार साल पहले दो लाख रुपये देकर सीट खरीदी थी। उसने सीट दिलाने वाले कॉलेज के सदस्य को डेढ़ लाख रुपये और कॉलेज फंड में पचास हजार रुपये भी दिए थे। "यह है फायर-मास्टर!" रेड्डी ने उनका परिचय कराया। चौधरी ने अपनी भौंहें उठाईं और गर्व से हंसे। भौंहें उठाना और इसी तरह की बातें - संदर्भ से अनुपसी को फायर-मास्टर शब्द का अर्थ समझ में आया, लेकिन वह पूरी तरह से नहीं समझ पाया।
उन चारों में से तीन रेड्डी के बिस्तर पर बैठे थे। रेड्डी ने अपनी कुर्सी मेज़ के पास खींची और राष्ट्रपति की ओर मुख करके उस पर बैठ गए। दीवार से लगी लोहे की तह वाली कुर्सी की ओर इशारा करते हुए उन्होंने अनूप को उस पर बैठने के लिए कहा। इन चारों के नाम सुनकर अनूप का मन भारी हो गया। उन्होंने आदरपूर्वक अपनी कुर्सी उनसे थोड़ी दूरी पर रखी और बैठ गए। उन्हें समझ नहीं आ रही थी कि क्या कहें। उन्हें भी समझ नहीं आ रहा था कि इस सज्जन से कैसे बात करें।
अंत में, जसबीर चौधरी ने पुलिस अधिकारी से पूछा,
तो फिर आप हमारे दोस्त बनने के लिए तैयार हैं!
अनूप को इस प्रश्न का सही अर्थ समझ नहीं आया। वह उसकी ओर देखने लगा।
चौधरी ने खुलासा किया,
"हमारा समूह सिर्फ चार लोगों का है! अब तक हमने किसी को भी इसमें शामिल होने का मौका नहीं दिया है! चाहे वो महाराजा का बेटा हो या ब्रिटिश रानी का बेटा! हमने फैसला किया है कि हम आपको ये मौका देंगे। समझे?"
अनुपना ने बस सिर हिलाया।
"फिर उठो, पास आओ, सबसे हाथ मिलाओ और ऐसा कहो..."
चौधरी का आदेश सुनकर वह अपनी सीट पर हिचकिचा उठा।
"आप इतने संकोच क्यों कर रहे हैं? हमारे दोस्त... उम, क्या आप बचपन के दोस्त बनने में संकोच कर रहे हैं?" रेड्डी ने पूछा।
अनूप अपनी कुर्सी से उठा और रेड्डी के सामने खड़े होकर उनसे हाथ मिलाया और कहा,
``आय् विल बी युवर फ्रेंड्...ऑलवेज..."

फिर वहाँ रस्म बाकी तीनों के साथ भी निभाई गई। फिर, मानो रस्म पूरी हो गई हो, वे चारों उठकर उसके पास आए, उसे घेर लिया और बोले,
``गुड... गुड अवर फ्रेंड! गुड... गुड अवर फ्रेंड... "
यह बात चार बार कहने के बाद वे चारों फिर से बैठ गए। जब रेड्डी ने कहा, "अपनी जगह बैठो...", तो वह अपनी कुर्सी पर बैठने लगा। फिर रेड्डी ने कहा,
"नहीं, अब तुम अजनबी नहीं हो। अब अपनी कुर्सी लाओ और पास आओ।"
अनुपना को एक नई दोस्ती का आशीर्वाद मिला और उसने ठीक वैसा ही किया। उन तीनों के बीच बैठा रोबोट नंजुदप्पा उठ खड़ा हुआ। अनूप और बाकी चारों ने उसे घेर लिया।
अब रेड्डी ने कहा,
लेकिन इसमें एक गलती है...
अनूप उसके चेहरे को देखने लगा।
"एक बार दोस्त कहलाने के बाद, आपको निकाला नहीं जा सकता! लेकिन बिना परीक्षा दिए परीक्षा देना भी नियमों के खिलाफ है। अब मुझे क्या करना चाहिए?"
अनूप को इनमें से कुछ भी समझ नहीं आया। रेड्डी ने परिहार से कोई गहरा सवाल पूछने का नाटक करते हुए चौधरी से पूछा,
अब क्या करें?
"स्पीड किंग जो भी कहे, वही करो। उसका फैसला अंतिम है!" बाकी दोनों ने एक स्वर में कहा।
"तुम क्या कह रहे हो?" चौधरी ने अनूप से पूछा।
"किस बारे में?" अनूप असमंजस में था।
"स्पीड किंग आपको बताएगा कि वह निर्णय अंतिम है, क्या आप इससे सहमत हैं या नहीं?"
"क्या फैसला?" अनुपना ने पूछा।
"एक बार जब आपको नेता मान लिया जाता है, तो ऐसे सवाल नहीं उठने चाहिए!" चौधरी ने असहमति भरे लहजे में कहा, "जब कोई नेता अपने मन की बात कह देता है, तो आपको उसी के अनुसार कार्य करना चाहिए!"
फिर भी, अनूप को कुछ समझ नहीं आया। रेड्डी ने कहा, जब वह अभी भी उसी उलझन भरी स्थिति में था,
मुझे कोई आपत्ति नहीं है! लेकिन संदेह क्यों करें, सुनिश्चित कर लेना बेहतर है!
फिर चौधरी उसके पास आए और अपना गीला हाथ अनूप के कंधे पर रखकर बोले,
देखो, हमारे पास नायकों का समूह है! बहादुर पुरुष! तुम भी यह जानते हो! अगर तुम स्पीड किंग, रोबोट, रॉकेट, फायर मास्टर को खिताब हासिल करना चाहते हो, तो तुम्हें भी अपनी मर्दानगी साबित करनी होगी! यहाँ महिलाओं और हिजड़ों का प्रवेश वर्जित है। तुम भी औरत नहीं हो, यह तुम्हारे मजबूत शरीर, युवा दाढ़ी और अन्य मर्दाना व्यवहार से स्पष्ट है। लेकिन तुम्हें यह साबित करना होगा कि तुम हिजड़े नहीं हो! बस अपनी पैंट और शॉर्ट्स उतारकर साबित करो, और बस!
अब अनूप को बहुत कुछ समझ आ गया था। चाहे वे दोस्ती का कितना भी वादा करें, उसे एहसास हो गया था कि वे सब बदमाश हैं। उसने यह भी सुना था कि ऊँचे खानदान के लड़के नए छात्रों के साथ ऐसा ही दुर्व्यवहार करते हैं। लेकिन उसने कभी नहीं सोचा था कि उसके साथ छात्रावास में ऐसी घटना घटेगी। अब उसे समझ आ गया था कि वह इन चारों के चंगुल में फँस गया है। उसे एहसास हुआ कि इस अपमान से बचने के लिए उसे कुछ करना होगा – एकमात्र उपाय था यहाँ से निकल जाना। चाहे वह कितना भी मजबूत क्यों न हो, वह अच्छी तरह समझ गया था कि अपने से चार-पाँच साल बड़े इन बदतमीज़ों के सामने वह टिक नहीं पाएगा।

वह उछलकर कमरे के दरवाजे की ओर भागा। वह कुछ ऐसा ही करने वाला था, इसलिए तैयारी कर रहे तीनों ने उस पर झपट्टा मारा और उसे पकड़कर बिस्तर पर पटक दिया। रोबोट नंजुदप्पा ने दरवाजा बंद कर दिया। चौधरी ने अनुप की कमीज का कॉलर कसकर पकड़ा और हिंदी फिल्म के किसी डाकू की तरह बोला,
"अगर ये बात फैल गई तो... मैं तुम्हें खत्म कर दूंगा! जब तुम यहाँ आओगे, तो तुम्हें हमारे कानूनों का पालन करना होगा! भागना बहादुरी नहीं है! अगर तुम साबित नहीं करोगे कि तुम हिजड़ा नहीं हो, तो...!"
चौधरी ने अनुप का कॉलर कसकर पकड़ रखा था, मानो अनुप की सांसें रुक गई हों। वह चौधरी की ठोड़ी पर एक घूंसा मारना चाहता था। लेकिन अनुप के मन में चल रहे विचार को भांपते हुए चौधरी ने अपनी पकड़ और कस दी। अनुप की सांसें रुक गईं और वह बुरी तरह डर गया। जब चौधरी को यकीन हो गया कि उसने अनुप को काफी डरा दिया है, तब उसने अपनी पकड़ ढीली कर दी।
कुछ पल सांस लेने के बाद, अनुप के दिमाग में थोड़ी-बहुत बात आने लगी। उनसे बचकर भागना नामुमकिन है...
इसी बीच रेड्डी ने कहा,
"देखो... अब हम तुम्हें एक मौका दे रहे हैं। क्या तुम खुद अपनी पैंट और अंडरवियर उतारोगे, या हम तुम्हें ब्लेड से काट देंगे? लेकिन फिर तुम्हें नग्न अवस्था में अपने कमरे में जाना होगा!"
अनुप चुपचाप बैठा था। उसे थोड़ा और समय देते हुए चौधरी उसके पास आया और उसका हाथ पकड़कर उसे खड़ा कर दिया। रोबो नंजुदप्पा और रॉकेट रंगनाथ ने उसकी कमर पर हाथ रखकर उसकी पैंट और निकर नीचे खींच दी। अनूप को शर्म से ऐसा लगा जैसे वह मर रहा हो।
स्पीडकिंग रेड्डी ने अपने दोस्तों से पूछा,
"क्या, इसे पुरुष कहें या हिजड़ा?"
``अरे! मेरी आंखें बंद हो रही हैं! ये किस तरह का आदमी है?" रॉकेट रंगनाथ ने हैरानी से कहा।
``रुको! चलो उसके सारे कपड़े उतार देते हैं और उसे तीस बार गलियारे में घुमाते हैं!... चलो हॉस्टल के सभी लड़कों को बुला लेते हैं..." रेड्डी ने सुझाव दिया।
लेकिन अब अनुपना ने हाथ जोड़कर विनती की।
नहीं-नहीं! कृपया! भगवान के लिए... कृपया!..."
"यह असली आदमी नहीं है! अगर यह आदमी है, तो इसे इतनी शर्म क्यों आ रही है?" रोबोट ने पूछा।
"तो फिर तुम्हें नग्न होकर घूमना चाहिए..." अनुप ने कहा।
“अरे! हम कोई ऐसे बच्चे नहीं हैं जो अपनी मर्दानगी साबित करना चाहते हों! हम तो यहाँ अपनी मर्दानगी साबित करके नेता बने हैं! तुम भी तो अपने स्कूल में नेता थे, है ना? यहाँ क्या होगा? नेता बनोगे या भेड़चाल चलोगे? अगर नेता बनना है तो हमारी बात माननी पड़ेगी! हमारी इजाज़त के बिना कोई भी किसी भी कक्षा में नेता नहीं बन सकता!” रेड्डी ने उसके सामने पूरी बात रख दी।
शुरुआती झिझक अब थोड़ी कम हो गई थी। खड़े होते ही अनूप का शरीर अपने आप अकड़ गया, जिससे उसकी पीठ में हो रही तकलीफ कम हो गई।
यह समझते हुए रेड्डी ने कहा,
ठीक है! वो हमारा दोस्त है। इसलिए उसके बारे में ज्यादा हंगामा मत करो। उसने कल शाम को हमें स्कॉच-चिकन पार्टी दी है, क्या इतना काफी है! मंज़ूर?
"सहमत!" सबने कहा।
"हम पार्टी देना चाहते हैं, तो तुम्हें भी देना चाहिए!" रेड्डी ने अनुप को चेतावनी देते हुए कहा, "अगर तुम मान गए, तो तुम्हें कपड़े मिल जाएंगे..."
"यह काम करेगा!" अनूप ने उत्सुकता से कहा।

"अगर तुमने उस समय मना कर दिया था, तो याद रखना!" चौधरी ने आह भरी।
मैं अपने वचन से कभी पीछे नहीं हटता!
उन्होंने अनूप के कपड़े लौटा दिए। उसने उन्हें पहना और चला गया।
"अरे, तुम खुद को दोस्त कहते हो और कपड़े मिलते ही भाग जाते हो? बिलकुल नहीं..." रॉकेट ने कहा।
"मेरा रूममेट सिनेमा जा रहा है। अगर वो चाबियां लेकर चला गया, तो मुझे रात के 2 बजे तक इंतज़ार करना पड़ेगा। आप सभी कल शाम पार्टी में आमंत्रित हैं! जितना चाहें उतना ले आइए। कोई सीमा नहीं है। मैं वापस आते समय टैक्सी ले लूंगी!" अनुपना ने कहा।
यह सुनकर वे चारों प्रसन्न हो गए।
"अरे वाह! आप तो बड़े दयालु हैं..." चौधरी ने अपने गालों को सहलाते हुए और उन्हीं उंगलियों को चूमते हुए कहा।

■

सच कहूँ तो, अनूप के पास अपने कमरे की दो चाबियाँ थीं, और उनमें से एक उसके पास थी। जब वह अपने कमरे में लौटा, तो उसके रूममेट का चेहरा भी लाल और सूजा हुआ था। उसकी आँखें भी ऐसी लग रही थीं मानो वह रोया हो। जब अनूप ने पूछा, "क्या हुआ?" तो उसकी आँखों में फिर से आँसू भर आए। जब अनूप ने दोबारा पूछा, तो उसने कहा,
``तीसरे वर्ष के लड़कों ने मुझे अपने कमरे में ले जाकर मेरे कपड़े उतार दिए और मुझे अपमानित किया!..."
कुल मिलाकर, अनूप ने देखा कि आज सभी नए बच्चे रैगिंग कर रहे थे। उसने पूछा,
"कितने लोग थे?"
``छह–"
"क्या आप उन सभी छह लोगों को पहचान सकते हैं? वे कौन थे?"
बिलकुल नहीं।
"क्या आप उन्हें देखकर उनके चेहरे पहचान पाएंगे?"
हां। मैं उनमें से चार को निश्चित रूप से पहचानता हूं।
"तो मेरे साथ आइए। चलिए मेरे पिता को फोन करते हैं। वो इंडियन ट्रिब्यून के संपादक हैं। वो मुझे अक्सर फोन करेंगे। वो यहां के एसपी को भी फोन करेंगे। मुझे चार लड़कों ने परेशान किया था। उनके नाम हैं स्पीडकिंग रेड्डी, रॉकेट रंगनाथ, फायर-मास्टर चौधरी, रोबो नंजुंदप्पा। अगर आप उन्हें भी जानते हैं तो बताइए। हम उन्हें गिरफ्तार करवाएंगे।"
जैसे ही उसके रूममेट कांतराज के रोते हुए चेहरे पर "पुलिस" और "गिरफ्तारी" शब्द सुनाई दिए, उसके चेहरे पर डर साफ दिखाई दिया। उसने जल्दी से कहा,
"नहीं, नहीं! वे हमें हरा देंगे!"
अरे, चुप रहो! अगर हम उच्च अधिकारियों के पास जाएंगे तो कोई हमें परेशान नहीं करेगा!..."
लेकिन अनुपान ने चाहे जितना भी समझाया, उसे समझ नहीं आया। आखिरकार अनुपान तंग आकर बोला,
"तो फिर तुम क्यों रो रही हो? मैं अभी अपने माता-पिता को बताऊंगी और पुलिस में शिकायत करूंगी।"
रात के ग्यारह बज चुके थे और गाँव जाने के लिए रिक्शा या बस मिलना संभव नहीं था, इसलिए अनूप फोन करने के लिए गाँव की ओर चल पड़ा। रास्ते में चाँदनी थी। उस चाँदनी में चलते हुए उसे एक अलग ही आनंद का अनुभव हुआ। तभी उसे अपने कॉलेज के दिन याद आ गए। ऐसा लगा मानो शहर में रहने वाले ही इन

चाँदनी भरी शांत रातों में घूमने के आनंद को नहीं समझते! मैंने कॉलेज में पढ़ाई की है! मैं यहाँ के किसी भी बच्चे से बेहतर हूँ।
इस विचार के साथ ही उसकी चलने की गति बढ़ गई।
मैंने पापा से फोन पर बात की। उन्होंने कहा,
"पापा, मैं अनूप से बात कर रहा हूं! यह कोई विश्वविद्यालय जैसा कॉलेज नहीं है। यहाँ के बच्चे बिलकुल निकम्मे हैं! इन्होंने पहले साल के हर बच्चे को अगवा कर लिया और उनका बलात्कार किया! चार बच्चों ने मुझे बहला-फुसलाकर अपने कमरे में ले गए..." उसने कमरे का नंबर, चारों बच्चों के नाम और घटी घटना का ब्योरा देते हुए कहा।
"कल सुबह तुम प्रधानाचार्य से शिकायत करो। मैं भी सुबह वहीं आऊंगा!" रविंद्र ने उसे समझाते हुए कहा।
"प्रिंसिपल तो बिलकुल निकम्मा है, पापा! कहते हैं, ऐसा हर साल होता है। अगर हम कुछ करेंगे तो ये गुंडे हमारे खिलाफ हंगामा खड़ा कर देंगे, इसलिए चुप रहते हैं। क्या मैंने आपको उन चारों लड़कों के नाम और कमरे के नंबर नहीं बताए थे? आप अभी आईजी को फोन कीजिए। वे यहां एसपी को सूचित करेंगे और इन लड़कों को गिरफ्तार करवा देंगे। अगर आप चाहें तो मैं शिकायत लिखवा दूंगी। मैं अदालत में भी सब कुछ बताने को तैयार हूं। आप समझ नहीं पाएंगे कि मुझे कितना अपमान सहना पड़ा है, पापा! ऐसे अपमान सहने के बाद मेरे लिए इस कॉलेज में रहना नामुमकिन है! मैं इंजीनियर तो नहीं बनी – मैंने कुछ सीखा भी नहीं, लेकिन मैं बेहतर हूं!"
"उन बच्चों को गिरफ्तार करना और उन्हें दंडित करना आपका अधिकार है। आप शिकायत दर्ज करें। मेरे रुख पर दबाव डालने की कोई आवश्यकता नहीं है।"
लेकिन इसके बिना, इस देश में कोई पुलिस कार्रवाई नहीं करेगी! ठीक है! मैं कॉलेज छोड़ रहा हूं और घर वापस आ रहा हूं!..."
कुछ क्षण खामोशी में बीत गए।
तब रविंद्र ने कहा,
अन्याय के सामने हार मत मानो। मैं तुम्हें अभी फोन करूंगा। डरो मत...
जैसे ही वह हॉस्टल के पास पहुंचा, उसके मन में यह ख्याल गूंज रहा था कि उन चारों को पुलिस हिरासत में बंद कर दिया गया है और उनकी पिटाई की गई है। वह चलते-चलते सोच रहा था कि इंस्पेक्टर के सवाल पूछने पर क्या जवाब देगा, कैसे शुरू करेगा। उसे सब कुछ साफ-साफ समझाना था। आखिर शर्म की क्या बात थी? पूरी सड़क पर कोई नहीं था। वहाँ की रोशनी ने सड़क के सन्नाटे को और भी स्पष्ट कर दिया था। उसे ऐसी सड़क पर चलते हुए किसी बहादुर हीरो जैसा महसूस हो रहा था।
अगर वे बच्चे कल सुबह सामने आ जाएं, तो मुझे अपनी घृणा प्रकट करनी चाहिए। साथ ही, जब तक पुलिस मुझे पकड़ न ले, तब तक किसी को भी मेरे किए के बारे में पता नहीं चलना चाहिए!
यही सोचते हुए उसे हॉस्टल पहुँचने में पचास मिनट लग गए। हालाँकि हॉस्टल का गेट बंद था, लेकिन बत्तियाँ जल रही थीं। चौकीदार जागा हुआ था। अनूप को देखते ही उसने सिर हिलाया।
``ए! कोण, रे, तू?"
अनुपना ने अपना परिचय दिया। उसने पूछा,
"तुम कहाँ गए थे? किसकी अनुमति से?"
मुझे अपने पिता को अर्जेंट कॉल करना पड़ा।
"क्या तुम पुलिस के डर से भाग गए थे?"
"क्या पुलिस आई थी? उन्होंने किसे गिरफ्तार किया और किसे अपने साथ ले गए?"

पुलिस ने स्पीड किंग, रॉकेट, दिल्ली के उस हिंदी भाषी लड़के और एक अन्य लड़के को पकड़ लिया!
अनुपाल को बिलकुल भी अंदाजा नहीं था कि ऐसा इतनी जलदी हो जाएगा। वह सब कुछ सुनकर खुश था। लेकिन उसने अनजान होने का नाटक करते हुए अपने कमरे में चला गया। छात्रावास का माहौल ऐसा था मानो किसी और को इस खबर की जानकारी ही न हो। कांतराज ने दीपक बुझा दिया था और सो रहा था। उसने दरवाजा खोला और अनुपाल से पूछा,
"क्या आपने कॉल किया था?"
“हम्म...” यह कहते हुए ही उसे हॉस्टल का बड़ा गेट खुलने और एक मोटरसाइकिल के अंदर आने की आवाज़ सुनाई दी। आई हुई मोटरसाइकिल हॉस्टल के सामने रुक गई। उसने किसी को अपने कमरे की ओर आते और फिर दरवाज़ा खटखटाते सुना। उसने दरवाज़ा खोला। दरवाज़े पर सादे कपड़ों में एक पुलिसकर्मी खड़ा था। उसने पूछा,
"क्या आप अनुप रविंद्र हैं?"
हां।
कुछ देर पहले आप यहां नहीं थे। आप कहां चले गए थे?
मैं अपने पिता को फोन करने गया था।
"आपने उन चारों बच्चों के खिलाफ शिकायत दर्ज कराई थी, है ना?"
हां।
"तुम्हें मेरे साथ पुलिस स्टेशन चलना चाहिए और शिकायत दर्ज करानी चाहिए। चलो..."
सब-इंस्पेक्टर की मोटरसाइकिल पर पीछे बैठकर वह खुद पर गर्व महसूस कर रहा था। वाह! एक फ़ोन वाले ने क्या कमाल कर दिया! सब-इंस्पेक्टर ने खुद मुझे परखने के लिए मोटरसाइकिल ली – हमें भी एक नई, साफ-सुथरी मोटरसाइकिल लेनी चाहिए! हमें रेड्डी से स्पीड किंग का खिताब छीन लेना चाहिए!
थाने में सब-इंस्पेक्टर ने उसे अपने सामने कुर्सी पर बैठाया और उससे घटना के बारे में पूछताछ शुरू कर दी। अनुपम ने उसे सब कुछ बता दिया। उन्होंने उसे लिखने के लिए कागज़ और कलम दे दी। उसने सब कुछ लिख लिया। उसे देखकर सब-इंस्पेक्टर ने संतोष व्यक्त किया और कहा,
"अगर आप इसे ठीक से लिख लें, तो हम अपराधियों को खाई से बाहर निकाल लेंगे!"
उसके बाद, उससे यह जानने के बाद कि उसके पिता कौन थे और यह जानकारी उन्हें किस माध्यम से मिली, सब-इंस्पेक्टर उसे मोटरसाइकिल पर वापस छात्रावास ले आए और उसे वहां छोड़ दिया।

■

अगले दिन, कॉलेज शुरू होने के बाद, चारों महावीरों को पुलिस लॉकअप में डाल दिए जाने की खबर पूरे कॉलेज में फैल गई। सबको यह भी पता चल गया था कि अनुप, जो इलेक्ट्रॉनिक्स प्रथम वर्ष का छात्र था और जिसने रात भर में पुलिस स्टेशन में शिकायत दर्ज कराई थी, नया छात्र था। लेकिन किसी को भी उसके पिता के इस मामले में दखल के बारे में पता नहीं चला। उन्होंने भी किसी को कुछ नहीं बताया।
कॉलेज के बच्चों को यह खबर नहीं थी कि वह 'इंडियन ट्रिब्यून' के संपादक का बेटा है। प्रधानाचार्य को भी लगा कि इन चार लड़कों के साथ दस-बारह और लड़कों को ले जाना बेहतर होता, लेकिन उन्हें यह बात पसंद नहीं आई कि वह लड़का बिना कानों में कुछ पहने पुलिस के पास चला गया था।
लगभग 11:30 बजे, उसने इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग के विभागाध्यक्ष, कार्वी अनुपम को संदेश भेजा और उन्हें फोन किया। अनुपम ने प्रधानाचार्य को दूर से देखा था। उसने

उस व्यक्ति को दूर से ही देखा था, जो भीषण गर्मी में भी अंग्रेजी शैली की टाई और शर्ट पहने हुए, हाथीदांत रंग की फिएट कार में कॉलेज आ रहा था। उसने सोचा कि अब उससे बात करनी पड़ेगी। वह सोचने लगा कि किस बात से प्रधानाचार्य नाराज होंगे और उसे क्या कहना चाहिए। पहले, बेंगलुरु के स्कूल में ऐसी घटनाएं कई बार हुआ करती थीं। उस समय, उसका तेज दिमाग कोई न कोई जवाब भी ढूंढ लेता था! कॉलेज में दाखिला लेने के बाद से किसी ने उससे कुछ नहीं कहा था। लेकिन फिर भी, उसे याद था कि उसे अपनी गलती का एहसास था। वैसे भी, वह वहां कोई गलती नहीं कर रहा था। लेकिन यहां, यह बिल्कुल बेंगलुरु के स्कूल जैसा था!
लेकिन अब, उसने कुछ भी गलत नहीं किया था। गलती तो उनकी थी। इसलिए, उसने खुद से कहा, डरने का कोई कारण नहीं था। वह अंदर चला गया और दफ्तर का दरवाजा ज़ोर से बंद कर दिया।
अब, उस बड़े लकड़ी के विभाजक के पार, प्रधानाचार्य का कक्ष था। वहाँ का वातावरण सरल था। जड़ों से सफेद हो चुके बालों से स्पष्ट था कि प्रधानाचार्य अपने बालों को रंगते थे। उनके चेहरे पर झुर्रियाँ भी दिखाई दे रही थीं।
विभागाध्यक्ष की ओर दोस्ताना मुस्कान के साथ देखने के बाद, उन्होंने अनुप को अपने सामने वाली कुर्सी पर बैठने के लिए कहा। फिर उन्होंने पूछा,
उन्होंने तुम्हारे साथ क्या किया?
अनुपम ने फिर से बिना कोई बात छोड़े, क्रम से सब कुछ बताया। रात में सब-इंस्पेक्टरों को बताते समय, उसका क्रम थोड़ा आगे-पीछे हो गया था। उसने सारी बातें ध्यान से सुनी थीं और उन्हें एक व्यवस्थित रूप दिया था। चूंकि उसने वही बातें लिख रखी थीं, इसलिए किसी भी तरह की गड़बड़ी की कोई गुंजाइश नहीं थी। इसके बाद, चाहे कोई कितनी भी बार पूछे, वह उसे ऐसे बता सकता था जैसे उसने उसे पढ़ा हो।
सब कुछ सुनने के बाद प्रधानाचार्य ने विभागाध्यक्ष की ओर देखा। उन्होंने अनूप से कहा, "अब तुम कक्षा में जाओ," और वे दोनों वहीं रुक गए। काफी चर्चा के बाद, उन्होंने फैसला किया कि—किसी कारणवश, क्योंकि वे चारों उनके कॉलेज के छात्र थे—उन्हें पुलिस स्टेशन जाना चाहिए। जब वे वहाँ पहुँचे, तो उन्हें पता चला कि उन चारों को अदालत ले जाया गया है। वे दोनों वहाँ गए। उस समय, उन चारों को फिर से काली पुलिस वैन में बिठाया जा रहा था। जब वे वहाँ पहुँचे, तो उन्हें उप-निरीक्षकों से पता चला कि मजिस्ट्रेट ने उन चारों को तीन दिनों के लिए पुलिस हिरासत में रखने का आदेश दिया है।
विभागाध्यक्ष और प्रधानाचार्य ने वैन का पिछला दरवाजा खोला और देखा कि चारों नायक सिर झुकाए बैठे हुए थे।
"क्या हुआ, साहब? आपने अपने माता-पिता को बताया है या नहीं?" प्रधानाचार्य ने पूछा।
उन चारों में से किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा। बार-बार पूछने पर भी कोई नहीं बोला। उन्होंने वही बात बार-बार दोहराई।
"अगर आपके पास उनके फोन नंबर हैं, तो मुझे दे दीजिए... मैं आपको बता दूंगा!"
लेकिन अब स्पीडकिलिंग रेड्डी की आवाज लड़खड़ा गई। उन्होंने कहा,
कृपया... किसी को मत बताना..."
लेकिन अब मामला दर्ज हो चुका है! अदालत में मामला दर्ज हो चुका है! अब वकील नियुक्त करके अदालत में बहस करने के अलावा कोई और रास्ता नहीं बचा है। आपको तभी वकील का इंतजाम कर लेना चाहिए था। अगर आप अपने घर वालों को नहीं बताएंगे, तो वकील कौन मुहैया कराएगा? बेशक, मैं आपके किए का समर्थन नहीं करना चाहता, लेकिन सबको मौका मिलना चाहिए, है ना!

चारों ने एक-दूसरे की ओर देखा। फ़ायरमास्टर चौधरी ने कहा,
"हमें एक वकील नियुक्त करना होगा! हमें लड़ना होगा! मुझे मत बताना। मैं बाद में पैसे मांगकर वकील को दे दूंगा।"
हालांकि, रेड्डी, रंगनाथ और नंजुंदप्पा अंदर जूझ रहे थे, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें।
इस बीच सब-इंस्पेक्टर ने कहा,
"उन्हें थोड़ा और सोचने दीजिए, महोदय! हमें और भी काम करने हैं। उन्हें जाने दीजिए...! आप बाद में पुलिस स्टेशन आइएगा। हम आपसे वहीं मिलने का इंतज़ाम करेंगे।" और उन्होंने सैनिकों को वैन का दरवाज़ा बंद करके ताला लगाने को कहा। ताला लगाने के बाद, वे सभी ड्राइवर के साथ बैठ गए और वैन चल पड़ी।
उन दोनों ने यह निर्णय लिया कि कॉलेज लौटने के कारण उन चारों के माता-पिता को सूचित करना उनके हित में होगा। जैसे ही वे कार्यालय के दरवाजे पर पहुंचे, सहायक कर्मचारी ने बहुत ही विनम्रता से कहा,
``स्पीड-किंग रेड्डी के पिता – श्री एन.टी. रेड्डी आए हैं, महोदय! कर्नाटक सरकार के उद्योग आयुक्त! मैंने उन्हें अंदर सोफे पर बैठा दिया है।"
"वे आपके टेलीग्राम भेजने से पहले ही आ गए थे। उन्हें किसने सूचना दी होगी?"
"स्पीड किंग के दोस्त ने फोन करके कहा, 'वे बहुत गुस्से में हैं!'" पीए ने बताया।
प्रधानाचार्य यह जानकर विचलित हो गए कि औद्योगिक आयुक्त का पद अत्यंत शक्तिशाली और लाभप्रद था। उन्हें यह भी याद आया कि उनके बेटे के छोटे स्विचबोर्ड कारखाने के लाइसेंस की सिफारिश करने का अधिकार केवल उन्हीं के पास था।
हालांकि वह उस नाम को बहुत लंबे समय से जानता था, लेकिन उससे कभी आमने-सामने नहीं मिला था। इसलिए अब वह विनम्रता से खड़ा था, अपने साढ़े पांच फीट लंबे शरीर को साढ़े चार फीट तक सिकोड़कर, और दांत पीसते हुए बोला,
प्रधानाचार्य आ गए हैं...
मुझे परवाह नहीं - रेड्डी वहीं बैठे-बैठे अपने मुंह से सिगरेट का धुआं उड़ा रहे थे। पीए की मंशा नाकाम हो गई! तभी प्रधानाचार्य अंदर आए और अपनी कॉलर और गर्दन पर उंगलियां फेरने लगे। उन्होंने रेड्डी से आदरपूर्वक कहा,
चलो, चलो! चैंबर में बैठकर बात करते हैं। मैं अभी-अभी अदालत से आया हूँ। हमें बिना बताए मुझे मजिस्ट्रेट के सामने पेश कर दिया गया! अब हमें एक वकील चाहिए..."
सोफे पर पालथी मारकर बैठे रेड्डी ने सिगरेट का एक और कश लिया और प्रधानाचार्य को घूर कर देखा। इस गुस्ताखी पर प्रधानाचार्य क्रोधित हो गए।
फिर भी, वह वहीं विनम्रता से खड़ा रहा, बिना इसे दिखाए। कुछ क्षण बाद, रेड्डी "सब ठीक है" के भाव के साथ प्रधानाचार्य के कक्ष में दाखिल हुआ।
कुर्सी पर बैठने के बाद उन्होंने प्रधानाचार्य से कहा,
"तुम किस बारे में बात कर रहे हो? तुम इस संगठन के मुखिया हो! पुलिस द्वारा बच्चों को ले जाने से पहले तुम क्या कर रहे थे?"
रेड्डी ने पहले ही वाक्य से आक्रमण की रणनीति अपना ली थी।
प्रधानाचार्य ने कहा,
"सब कुछ आधी रात को हुआ। मुझे कुछ समझ नहीं आया। मैं मांड्या गया था। वार्डन गांव में नहीं था। मुझे सुबह दफ्तर आने पर ही सब कुछ समझ आया।"
"बच्चों को प्रधानाचार्य की अनुमति के बिना ले जाया गया, इसलिए तुरंत याचिका दायर करें।"

"यह विचार अच्छा है! हम इस बारे में अपने कानूनी सलाहकार से बात करेंगे। इन चार लोगों ने रैगिंग के बहाने आधी रात को एक प्रथम वर्ष के लड़के के कपड़े उतार दिए - लड़के ने आधी रात को पुलिस में शिकायत दर्ज कराई। पुलिस उस शिकायत के आधार पर इन चारों को गिरफ्तार करने आई थी।"
"यह सब जगह हो रहा है, इसमें खास क्या है? यह एक अंग्रेजी शब्द है, तो यह इंग्लैंड से ही आया होगा। अगर वहां ऐसा होता है, तो क्या पुलिस बच्चों को ले जाती है? क्या पुलिस को शिक्षण संस्थानों में घुसने का अधिकार है? अगर ऐसा कुछ वहां होता है, तो संसद में हंगामा मच जाता है। समझे?"
प्रधानाचार्य ने सिर हिलाया, यह भूलकर कि उन्होंने बर्मिंघम विश्वविद्यालय से एम.टेक की डिग्री प्राप्त की थी।
उसी समय, पी.ए. नंबर अंदर आया और बोला,
अनुप रविंद्र के पिता आ गए हैं...
"मुझे अंदर भेजो..." प्रधानाचार्य बार-बार यही कहते रहे, लेकिन उन्हें याद नहीं आ रहा था कि वे कौन थे। प्रवेश के समय जब शिक्षा निदेशक ने अनुप के लिए पत्र भेजा था, तब उन्होंने यह भी लिखा था कि "वह 'इंडियन ट्रिब्यून' के संपादक के पुत्र हैं।" उस समय उनके माता-पिता भी उनसे मिलने कक्ष में आए थे। अरे! उनकी याददाश्त को क्या हो गया है!
अंदर आए रविंद्र ने उनका अभिवादन किया। प्रधानाचार्य भी खड़े हो गए और रेड्डी के बगल वाली कुर्सी की ओर इशारा करते हुए रेड्डी से कहा,
"उनके अपने बेटे ने शिकायत की है। ये श्री रविंद्र हैं, जो 'इंडियन ट्रिब्यून' की बैंगलोर शाखा के संपादक हैं। ये एन. टी. रेड्डी हैं, उद्योग आयुक्त।"
रेड्डी बैठते हुए अपना हाथ आगे बढ़ाते हुए बोले, "नमस्कार।" रविंद्र ने भी प्रधानाचार्य को अभिवादन किया था। अपना हाथ वापस लेते हुए रेड्डी ने कहा,
"ट्रिब्यून? आपका बिजनेस मैनेजर हमारे पास आया था! उसे प्रिंटिंग मशीन खरीदने के लिए दो करोड़ रुपये का लोन चाहिए था।"
"मेरी एकमात्र जिम्मेदारी समाचार और संपादन है। मैं बाकी चीजों पर कभी ध्यान नहीं देता," रविंद्र ने जवाब दिया।
"मुझे समझ नहीं आ रहा कि आप अभी यहाँ क्यों आए। लेकिन आप आए, यह अच्छी बात है। माता-पिता का एक साथ बैठकर कुछ समस्याओं का समाधान करना हमेशा अच्छा होता है! इससे कॉलेज चलाने में भी हमें सुविधा हुई।" - प्रधानाचार्य ने कहना शुरू किया।
"आपका अपना! जो माता-पिता अपने बच्चे का दाखिला करवाते हैं - हर महीने मनचाहा पैसा देते हैं - और अब खुद को बेगुनाह समझते हैं, वे बहुत नुकसान पहुंचा रहे हैं!" रविंद्र ने जवाब दिया।
रेड्डी ने कहा, "उसके बेटे को बुलाओ। मैं उसके सामने उससे सवाल करूंगा!"
प्रिंसिपल ने इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग के विभागाध्यक्ष और अनुप रविंद्र को बुलाने के लिए एक सिपाही भेजा। रविंद्र उनके चेहरों से समझ गए कि उनके आने तक रेड्डी से कोई और बातचीत करना नामुमकिन था। उसी समय, सहायक प्रिंसिपल के हस्ताक्षर के लिए कुछ दस्तावेज़ लेकर आया, जिससे उनकी मुश्किल थोड़ी आसान हो गई। प्रिंसिपल ने विभागाध्यक्ष और अनुप को रविंद्र के बगल में बैठने को कहा। सभी का दोबारा परिचय होने के बाद, रेड्डी ने अनुप से पूछा,
अरे! क्या मेरे बेटे ने यह काम किया? मुझे सच बताओ। मेरे सामने झूठ नहीं बोलोगे।
"आप यह कैसे मान सकते हैं कि मैं झूठ बोलूंगा?"
अनुप के पलटवार प्रश्न ने माहौल को तनावपूर्ण बना दिया। प्रधानाचार्य मन ही मन खुश थे।
"अच्छा! बताओ, क्या हुआ...?" रेड्डी ने थोड़ी धीमी आवाज़ में पूछा।

बिना कुछ छोड़े, घटनाओं के क्रम को आगे-पीछे किए बिना, अनुपम ने पूरी घटना का ब्यौरा दिया। हालांकि, उसने उन्हें यह नहीं बताया कि उसने अपने पिता को फोन किया था। क्योंकि जब यह खबर पूरे कॉलेज में फैली, तो कई लड़कों - खासकर लड़कियों - ने उसकी खूब तारीफ की। उसके अनुभव के कारण, कुछ और लड़के उस गिरोह के खिलाफ शिकायत दर्ज कराने को तैयार हो गए। संक्षेप में, अनुपम ने थोड़े ही समय में वहाँ नेतृत्व का दर्जा हासिल कर लिया था। दो-तीन लड़कियाँ उससे व्यक्तिगत रूप से मिलीं और बोलीं, "अनुपम, तुमने कमाल कर दिया!" उसे ऐसा लगा मानो पिछली रात का अपमान उसके लिए फायदेमंद साबित हुआ हो!
हालांकि वह इतनी बहादुरी का प्रदर्शन कर रहा था, लेकिन वह यह भी नहीं चाहता था कि कोई यह सोचे कि उसने इसके लिए अपने पिता से मदद ली है। वह अपने पिता को भी इस मामले में शामिल नहीं करना चाहता था, इसलिए उसने यह कहकर बात खत्म कर दी कि वह पुलिस स्टेशन गया था और शिकायत दर्ज कराई थी।
"यह घटना आपके कॉलेज में हुई। कॉलेज का नेतृत्व प्रधानाचार्य करते हैं। आपने उन्हें बिना बताए पुलिस के पास क्यों गए?" रेड्डी ने सवाल उठाया।
अनुप ने जल्दी से कहा, "अगर शिक्षा में कोई समस्या होती, तो मैं प्रधानाचार्य को बताता, अगर खाना अच्छा नहीं होता, तो मैं वार्डन को बताता, अगर बदमाशी का कोई मामला होता, तो मैं पुलिस को सूचित करता..."
रेड्डी उत्तेजित हो गए। अंदर तो कुशासिन भी नहीं पनपा और यह लड़का, जिसका पिता संपादक है, अपनी शान दिखा रहा है। उसे और लंबा करने की सोचकर उन्होंने कहा,
सब-इंस्पेक्टर के सामने झूठी शिकायत लिखना आसान है! लेकिन जब आप अदालत में खड़े होते हैं, तो वकील बनने की बारी आपकी होती है! मैं बैंगलोर से एक बड़ा वकील लाऊंगा! क्या आपने कृष्णदास का नाम सुना है? मशहूर आपराधिक वकील! आपकी शिकायत झूठी है, इसलिए अगर यह साबित हो गई, तो आपको जेल जाना पड़ेगा! अपनी शिकायत वापस ले लो... अभी भी समय है!
"अगर आप बैंगलोर से कृष्णदास को फोन करेंगे, तो मैं दिल्ली से अग्रवाल को फोन करूंगी! क्या आपने सुप्रीम कोर्ट के वकीलों के नाम सुने हैं? आप कहते हैं कि मेरी शिकायत झूठी कैसे है?" अनुपना ने पलटवार किया।
विभागाध्यक्ष अनुप की बातें सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुए। रविंद्र को दृढ़ विश्वास था कि ऐसा साहस झूठ से नहीं आ सकता – यह संकाय की ओर से एक उपहार था।
रेड्डी अंदर ही अंदर गुस्से से उबल रहा था। उसे कुछ क्षणों के लिए निर्देश दिए गए थे कि उसे क्या कहना है। फिर उसने कहा,
"आपने प्रधानाचार्य की अनुमति के बिना पुलिस में शिकायत दर्ज कराई... कॉलेज आपको निष्कासित कर देगा... याद रखना!"
"मैंने ऐसा कोई अपराध नहीं किया है जिसके लिए मुझे बर्खास्त किया जाए। अगर कोई कहता है कि गुंडागर्दी के खिलाफ पुलिस में शिकायत करना अपराध है, तो मैं उनके खिलाफ़ भी अदालत जाऊंगा! मैं अग्रवाल को फोन करूंगा। फ़िर अगर मुझे सुप्रीम कोर्ट तक भी जाना पड़े, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है!" अनूप ने गुस्से से कहा।
लेकिन अब, प्रधानाचार्य का पतन हो गया है।
``अब, क्या मुझे थोड़ा बोलना चाहिए? अगर नहीं, तो विभागाध्यक्ष को बोलने दीजिए..." फ़िर उन्होंने घंटी बजाई और अंदर आए सहायक कर्मचारी से कहा,
``आपने कॉफी कहा था, है ना? अभी तक नहीं आई?"
पीए को एक स्थायी निर्देश दिया गया था - एक बार कहा जाए तो कॉफी मत लाना। इसलिए जब साहब ने उसे दूसरी बार कहा, तो उसने कहा,

अब आ रहा है। वैन में दूध नहीं था, इसलिए देर हो गई...
प्रधानाचार्य अब कुछ भी समझ नहीं पा रहे थे। हालांकि रेड्डी एक वरिष्ठ अधिकारी थे, लेकिन रविंद्र देश के एक प्रमुख समाचार पत्र के संपादक थे! अगर वे इस खबर को प्रकाशित करके और फिर अपने अखबार में कॉलेज के आंतरिक मामलों की बेतुकी जांच करके कॉलेज की बदनामी कर देते, तो क्या होता? उन्हें यह भी समझ आ रहा था कि अगर मामला पुलिस तक पहुंच गया, तो यह खबर बन जाएगी। इसका क्या फायदा? जब मामला अभी छोटा है, तब तक इसे दबा देना ही सबके हित में है।
प्रधानाचार्य ने अनूप की ओर मुड़कर कहा,
"कई कॉलेजों में रैगिंग आम बात है। हम अपने कॉलेज में इसे रोकने के लिए पूरी कोशिश करते हैं। हमने तो एडमिट कार्ड के पीछे भी यह लिखवा दिया है ताकि हॉस्टल के लड़के किसी भी तरह का दुर्व्यवहार न करें! आप यकीन मानिए कि उन चारों को सजा मिलेगी! लेकिन पुलिस द्वारा छात्रों को सजा देना सही नहीं है। अच्छा हुआ कि आपने शिकायत दर्ज कराई। इस बारे में सोचिए। अगर आप चाहें तो विभागाध्यक्ष से भी इस बारे में बात कर लीजिए!"
तुरंत ही विभागाध्यक्ष चिल्लाए, 'हां-हां! यह सही है-' उसने अपनी गर्दन हिलाई।
अनुपम ने एक पल सोचा। उसके मन में एक उपाय आया। उसने कहा,
ठीक है! मैं आपको बता रहा हूं, अगर श्री रेड्डी और उन चारों ने ऐसा किया है, तो मेरे पास कहने के लिए कुछ नहीं है।
यह क्या है?
श्रीयुत रेड्डी के माता-पिता, उनकी पत्नी और नंजुदप्पा-चौधरी को यहाँ कक्ष में बुलाएं। विभागाध्यक्ष और प्रधानाचार्य भी उपस्थित रहें। इन सभी के सामने, चारों को अपने कपड़े उतारकर नग्न हो जाना चाहिए और तीन बार माफी मांगते हुए कहना चाहिए, "हमने गलती की है!" तब मैं शिकायत वापस ले लूंगा।
वहां बैठे सभी लोग असमंजस में थे। रेड्डी, जो किसी तरह बचने का रास्ता तलाश रहा था, गुस्से से लाल हो गया। प्रधानाचार्य को यह असभ्य लगा। विभागाध्यक्ष अवाक रह गए। लेकिन रविंद्र जानबूझकर चुप रहा। अपराधी को सजा मिलनी चाहिए – वह समझता था कि जिसे सीधे तौर पर चोट पहुँची हो, वह कड़ी सुजा की मांग करेगा, लेकिन उसे भी इसमें कुछ अजीब लगा। इतने सालों तक कॉलेज में पढ़ने के बाद उसके मन में ऐसा विचार कैसे आ सकता था? क्या उसे मिले अपमान के कारण उसके मन में इतने कठोर विचार आ सकते थे? और तो और, वह माफ़ करने के लिए बहुत छोटा है!
तभी कॉफी आ गई। सबने अपनी-अपनी कॉफी पी ली। कॉफी पीने के बाद प्रधानाचार्य ने उनसे कहा,
आप बाहर बैठिए। मैं आपको बाद में कॉल करूंगा...
जब अनूप बाहर चला गया, तो उसने रविंद्र की ओर मुड़कर पूछा,
आप क्यों मध्यमार्गी रास्ता सुझाएंगे? हर जगह का माहौल आपसे बेहतर कौन जानता है?...
रविंद्र ने रेड्डी के चेहरे की ओर देखा। वह अपनी कॉफ़ी खत्म कर रहा था और मुँह में सिगरेट जला रहा था। उसे किसी शैक्षणिक संस्थान में सिगरेट नहीं पीनी चाहिए, इस आदमी में जरा भी शिष्टाचार नहीं है! तो उसके बेटे में अच्छे संस्कार कैसे डाले जाएँगे? उसका दिल कठोर हो गया। उसने कहा,
"इस बात पर काफी बहस हुई है कि क्या पुलिस को शिक्षण संस्थानों में दखल देना चाहिए या नहीं। हमारी राय में, अगर पुलिस दखल नहीं देती है, तो यह कर्तव्य की अवहेलना होगी। पश्चिमी देशों की स्थिति और यहाँ की स्थिति में बहुत बड़ा अंतर है! श्री रेड्डी ने यहाँ अनूप पर दबाव डालने की कोशिश की – लेकिन उन्हें लगता ही नहीं कि उनके बेटे ने जो किया उसमें कुछ गलत है! तो फिर उन्हें कृष्णदास को

बैंगलोर से बुलाकर मुकदमा जीत लेना चाहिए! आप इसके बारे में इतना क्यों सोचते हैं?"
प्रधानाचार्य ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी।
विभागाध्यक्ष ने कहा,
"मामला दर्ज होते ही पुलिस पूरी रिपोर्ट विश्वविद्यालय को भेज देगी। नतीजे आने तक छात्र कक्षा में नहीं आएंगे। वैसे भी, आप जानते ही हैं कि अगर इन बच्चों को सज़ा मिली तो इसके क्या परिणाम होंगे!"
रविंद्र को समझ नहीं आया कि विभागाध्यक्ष किसे संबोधित कर रहे हैं। लेकिन रेड्डी समझ गए कि यह उनके लिए एक सुझाव था। उन्हें यह भी पता था कि विभागाध्यक्ष उनके बेटे का पक्ष ले रहे हैं। क्योंकि उनका बेटा परीक्षा के दौरान निजी ट्यूशन के लिए उन्हें 5,000 रुपये देता था। अगर मामला अदालत में गया, तो उन्हें यह भी पता था कि चाहे कोई भी जीते, इसके दूरगामी परिणाम होंगे। हालांकि वे इतने ऊंचे पद पर रहते हुए अच्छी आमदनी कमी रहे थे, लेकिन स्वतंत्र व्यवसाय शुरू करने और असीमित धन कमाने का उनका सपना अधूरा रह गया था। उनका सपना था कि वे अपने बेटे को बी.ई. करवाएं, उसे अपने नियंत्रण में एक व्यवसाय लाइसेंस दिलवाएं और उसे एक बड़ा व्यवसायी बनाएं। इसके लिए वे जगह, शेड, सरकारी ऋण - सब कुछ देने को तैयार थे। उन्होंने अपने बेटे के लिए एक बड़ा सपना भी देखा था। उसे पर ध्यान दिए बिना, यह व्यक्ति उनके बेटे के साथ बदतमीजी कर रहा था!
चाहे हमें कितना भी गुस्सा आए, अगर हमने अभी समझदारी से काम नहीं लिया, तो जल्द ही उसका जीवन धूल में मिल जाएगा, और उसे व्यवसायी बनाने का हमारा सपना भी चकनाचूर हो जाएगा!
रवींद्र की ओर मुड़कर उसने अपना हाथ बढ़ाया और कहा,
मैं आपको क्या बताऊं! हमारा काम मुझे पागल कर रहा है, देखिए! करोड़ों रुपये की परियोजनाएं सामने आती हैं। उनकी जांच-पड़ताल करना और फैसले लेना सिरदर्द है। आज हर कोई कहता है, इतना मुनाफा हुआ – इतना हुआ! अगर कल पैसा डूब गया, तो किसका नुकसान होगा? सरकार का, है ना? मैं, जिसने बीच में हस्ताक्षर किए, वही खुद को फांसी पर लटका लूंगा, है ना? उन परियोजनाओं पर सिर खुजलाने का समय ही नहीं है – और लीजिए, इस काई ने तो काम ही कर दिया! मैंने आपके बेटे से बात की है, इसलिए गुस्सा मत कीजिए। अरे, आपका बेटा भी तो मेरे बेटे जैसा ही है! आज जो प्रथम वर्ष में है, कल अंतिम वर्ष में जाएगा, है ना? चलिए इस पूरे मामले को यहीं सुलझा लेते हैं! क्या कहते हैं? – दरअसल, आज वित्त समिति की बैठक थी। मैं उसमें शामिल नहीं हो पाया और फिर यहां आया –"
रेड्डी के भाषण का लहजा पूरी तरह बदलते देखकर रविंद्र को आश्चर्य नहीं हुआ। उन्हें यह भी एहसास हुआ कि विभागाध्यक्ष की चेतावनी सही जगह तक पहुँच गई थी। उनके मन में यह भी आया कि अगर वहां गुंडे मौजूद हैं तो छात्रों के मामले पर इतना ज़ोर देने का कोई फायदा नहीं है, लेकिन वे कुछ पल चुप रहे।
प्रधानाचार्य ने कहा,
"आपके बेटे को जो सदमा और अपमान झेलना पड़ा, उसके लिए मैं क्षमा चाहता हूं। मैं विभाग प्रमुख के साथ बैठक करूंगा ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि ऐसा दोबारा न हो।"
रविंद्र ने कहा,
"ठीक है! प्रधानाचार्य की बात का सम्मान करना चाहिए। मुझे पुलिस स्टेशन में उन चारों लोगों से भी बात करनी चाहिए!"
प्रधानाचार्य अपनी रिहाई की खुशी में खड़े हो गए और बोले,
चलो, चलते हैं...

रेड्डी भी खड़े हुए और बोले,
"अरे यार - मैं भी उनसे नहीं मिला हूँ!"
रेड्डी की सरकारी गाड़ी का ड्राइवर भी सरकारी कर्मचारी था। उसने रविंद्र को फोन किया। लेकिन रविंद्र ने कहा, "नहीं - प्रधानाचार्य की गाड़ी आरामदायक है - हम रास्ते में उनसे बातचीत भी कर सकते हैं -" और वह वहाँ चला गया।
रेड्डी को अपने व्यवहार की अकड़ का एहसास भी हो गया। उन्होंने अपने ड्राइवर को प्रधानाचार्य की कार का पीछा करने को कहा। वे पुलिस स्टेशन गए। सब-इंस्पेक्टर ने उन चारों को कार्यालय में बुलाने की तत्परता दिखाई। लेकिन रेड्डी ने कहा,
नहीं। हम अंदर जाकर देखेंगे, उन्हें शर्मिंदगी का एहसास होने दो! हमारा नागरेड्डी परिवार! हमारे पास चौदह पीढ़ियों का इतिहास है। हमने इतने पुराने परिवार की इज्जत खो दी और जेल में बंद हो गए! चलो—" उसने रवींद्र की ओर देखते हुए कहा। वह यह भी देखना चाहता था कि उसका नैतिक आक्रोश उस पर अच्छा असर डाल रहा है या नहीं!
तीनों सब-इंस्पेक्टर के पीछे-पीछे चले। पुलिस स्टेशन के पीछे की लोहे की सलाखें खुली हुई थीं। चारों दीवार से टेक लगाकर बैठे थे। चारों के चेहरे उदास थे। प्रिंसिपल और विभागाध्यक्ष को आते देख उन्होंने अपना सिर नीचे कर लिया। अपने पिता को देखकर रेड्डी ने अपना चेहरा अपनी दोनों जांघों में छिपा लिया।
बेटे के नजर आते ही पिता का गुस्सा भड़क उठा।
"क्या आपको होश में लाने के लिए अच्छे जूतों से पिटाई की ज़रूरत है, श्रीमान्?" उसने फुसफुसाते हुए अपने बाएं पैर से पंप शू उतारा, उसे हाथ में लिया और लड़के पर फेंक दिया।
"श्री रेड्डी! रुकिए! खुद पर काबू रखिए! चलिए उन्हें उचित दंड देते हैं... लेकिन अपने गुस्से पर नियंत्रण रखिए!" प्रधानाचार्य ने अपने जूते हाथों में पकड़े खड़े-खड़े कहा।
रवींद्र को मामला कुछ हद तक समझ आ गया था। क्या इसे यक्षगान की शैली कहें या भागवत की शैली?
सब-इंस्पेक्टर ने यह भी कहा,
"तुम कुर्सी पर बैठो और बात करो। चाहे वह तुम्हारा असली पिता ही क्यों न हो, तुम उसे यहाँ नहीं मार पाओगे।"
चारों पचास साल पहले के अरकोट रामास्वामी मुदलियार के समय की प्राचीन कुर्सियों पर बैठे थे। रेड्डी ने जोर से पूछा,
"अरे! सच बताओ! तुमने ऐसा क्यों किया? हॉस्टल में अच्छा खाना नहीं मिलता, इसलिए घर से अतिरिक्त पैसे मांग रहे थे। क्या होटल में चिकन खा-खाकर ऊब गए थे?"
स्पीडकिंग विजयकुमार ने अपना छिपा हुआ चेहरा दिखाए बिना कहा,
चाहे कुछ भी हो जाए... मैं अब इस कॉलेज में पढ़ाई नहीं करूँगा! मुझे किसी दूसरे कॉलेज में ट्रांसफर करवा दो!
वहां मौजूद सभी लोग समझ गए थे कि यह सजा उसने खुद को ही दी थी। नजुंदप्पा और रंगनाथ ने प्रधानाचार्य को बताया,
हमने ये जानबूझकर नहीं किया! रात को जब हम अपने कमरे में थे, रेड्डी आया और बोला – एक फर्स्ट ईयर का लड़का आया है – चलो मुजे कुरते हैं, ओओ! तो हम चले गए, बस इतना ही। इस चौधरी ने सचमुच अनूप की शॉर्ट्स उतार दीं! हम वहाँ थे; लेकिन हमने कुछ गलत नहीं किया। हमें नज़रअंदाज़ मत करो।
"आपने प्रत्यक्ष रूप से कुछ नहीं किया होगा। लेकिन जब यह सब आपकी आंखों के सामने हो रहा था, तो आपने विरोध क्यों नहीं किया?"
रंगनाथ ने कहा,

"हमें पता ही नहीं चला, महोदय!"
"इसमें क्या लिखा है? आप क्या कह रहे हैं?" चौधरी ने पूछा, क्योंकि उन्हें कन्नड़ ठीक से समझ नहीं आती थी।
रविंद्र ने उन दोनों के बीच हुई बातचीत का हिंदी में अनुवाद किया। यह सुनकर वह उछल पड़ा और बोला,
मुझे ऐसे धोखेबाज दोस्त नहीं चाहिए - और मुझे यह कॉलेज भी नहीं चाहिए! मुझे कोई और कॉलेज भी नहीं चाहिए। मैं अपनी पढ़ाई छोड़ दूंगी! मैंने आज सुबह यही कसम खाई है। नहीं तो, मैं इंजीनियर बन जाऊंगी और कुछ नहीं करूंगी।
"इस स्तर पर शिक्षा छोड़कर आप आगे क्या करने वाले हैं?" रविंद्र ने पूछा।
अब आप आगे क्या करेंगे? चुनाव लड़ेंगे और विधायक-सांसद बनेंगे! अगर आप जीत जाते हैं, तो आपकी किस्मत आपके हाथ में! अगर आप चुने नहीं जाते और आने वाले चुनावों में कम से कम उपमंत्री भी बन जाते हैं, तो मैं जसबीर चौधरी नहीं – मुझे जसबीर चमार कहिएगा!
उन चारों को अंदर बंद करके, सभी लोग बाहर स्थित कार्यालय में लौट गए।
रविंद्र ने कहा,
"मैं इस बात पर ज़ोर नहीं दे रही कि उन्हें अदालत में सज़ा दी जाए। ये बच्चे गलत रास्ते पर हैं! यह ज़्यादा ज़रूरी है कि वे सही रास्ते पर आ जाएं। लेकिन अगर ये बच्चे कल ही जेल से छूट गए, तो मेरे बच्चे की सुरक्षा की गारंटी कौन देगा?"
"सर, जैसे ही मेरा बेटा रिहा होगा, मैं उसे सीधे बेंगलोर ले जाऊँगा। मैं यह सुनिश्चित करूँगा कि उसका वहाँ तबादला हो जाए। मैं उसे यहाँ छात्रावास से उसका सामान उठाने के लिए भी नहीं भेजूँगा!" रेड्डी ने तुरंत कहा।
सब-इंस्पेक्टर ने कहा,
और वो भी नहीं जाएगा! उसे बहुत शर्म आ रही है। हमने सब से अलग-अलग पूछताछ की थी, है ना? तभी हमें पता चला! हरियाणा का चौधरी जा रहा है, इसलिए उसने वैष्णवी देवी की कसम खाई है। बाकी दोनों को चुपचाप काम करते रहना चाहिए। इसीलिए उन्हें हर हाल में अपनी पढ़ाई पूरी करनी है। वरना उन्हें डर है कि उनके बाप और भाई, जिन्होंने खेत बेचकर उनकी पढ़ाई का खर्च उठाया, उन्हें घर से निकाल देंगे! उन्होंने दबी आवाज़ में कहा - हमें इस मामले से निकालो - हम होटल में नहीं रुकेंगे - हम गाँव में ही किसी कमरे में रुकेंगे - बस!
सब-इंस्पेक्टर की बातों से मानो सभी सहमत हो गए। वास्तव में, विभागाध्यक्ष और प्रधानाचार्य के लिए रेड्डी कॉलेज में रहना ही लाभप्रद था। लेकिन इससे भ्रम और बढ़ रहा था।
सब-इंस्पेक्टर ने कहा,
"अगर उनका बेटा शिकायत दर्ज कराता है तो इसमें कोई दिक्कत नहीं है। लेकिन इसके लिए एसपी को अनुमति भी देनी होगी।"
"यहां एसपी कौन है?" रेड्डी ने पूछा।
"उसका नाम सिद्धा राजू है!" सब-इंस्पेक्टर ने कहा।
"सिद्धराजु कौन है? क्या हमें जाकर उसकी पिटाई करनी चाहिए?"
नहीं, काम गड़बड़ हो जाएगा। इसके बजाय, मैं चाहूंगा कि मैसूर के डीसी मुझे बताएं..."
मैसूर के डीसी कौन हैं?
इस बातचीत को पूरी तरह से नजरअंदाज करते हुए, रविंद्र ने प्रधानाचार्य की ओर मुड़कर कहा,
विजयकुमार का तबादला बैंगलोर हो जाएगा, चौधरी को गांव छोड़ना पड़ेगा, और बाकी दो बच्चे हॉस्टल के बाहर रहेंगे। आपको मेरे बेटे की सुरक्षा की गारंटी देनी होगी! क्या यह सचमुच सच है?"

■

इस घटना के बाद अनूप पूरे कॉलेज में मशहूर हो गया। रंगनाथ और नंजुंदप्पा का कॉलेज हॉस्टल छोड़कर गाँव में कमरा लेना कोई बड़ी खबर नहीं थी। लेकिन रेड्डी और चौधरी के भाग जाने से अनूप का गर्व और बढ़ गया। क्या सिर्फ पंद्रह दिनों में ऐसा कर पाना कोई छोटी बात थी? तेज रफ्तार से बुलेट चलाते हुए चिल्लाना कि सारी लड़कियां मुड़कर देखें, इसके लिए हिम्मत चाहिए! लेकिन ऐसे नायकों को पुलिस लॉकअप में डलवाना और उन्हें न सिर्फ कॉलेज से, बल्कि गांव से भी भगाना कितना बड़ा साहस था! सिर्फ इलेक्ट्रॉनिक्स ही नहीं, बल्कि सिविल, इलेक्ट्रिकल, प्रोडक्शन, मैकेनिकल, कंप्यूटर - हर विभाग में उसको नाम इतना मशहूर था कि लड़के-लड़कियां उससे मिलने और एक बात करने के लिए भी आते थे, और खुद को भाग्यशाली समझते थे!
अनूप को भी इस बात का एहसास था। इस अप्रत्याशित प्रसिद्धि से वह बेहद खुश था। हालांकि प्रसिद्धि उसके लिए कोई नई बात नहीं थी, लेकिन यहां उसे सबसे ज्यादा खुशी लड़कियों से मिली प्रसिद्धि से मिली! कॉलेज तो बिलकुल अलग था! यहां लड़के-लड़कियां आपस में बातें करते, चुटकुले सुनाते, एक-दूसरे को नोट्स देते और यहां तक कि होटल में साथ में कॉफी पीने भी जाते थे। वाकई, अनूप के नजरिए से यह एक बिलकुल अलग दुनिया थी!
अनुपम ने वाकई में उसे तेज़ रफ़्तार वाले लड़के को भगा दिया, लेकिन कॉलेज के कुछ छात्रों ने सवाल उठाया: वह इस तरह बच कैसे सकता है? क्या कॉलेज को कम से कम एक तेज़ रफ़्तार वाले लड़के की ज़रूरत नहीं है? वरना कॉलेज का माहौल पूरी तरह से अराजक हो जाएगा! एक दिन उसका रूममेट कांतराज यह खबर लेकर आया। उसने यह भी बताया कि यह शिकायत ज़्यादातर लड़कियों की तरफ से आ रही थी।
"किसने कहा कि?"
हमारे मैकेनिकल विभाग में चंद्रवानी नाम की एक लड़की है। बहुत ही साहसी! वो सभी लड़कियों की लीडर है। उसने कहा, अपनी रूममेट को बता दो। हर कॉलेज में एक स्पीड किंग होता है। अगर तुम अपने कॉलेज के स्पीड किंग को हटा दोगी, तो दूसरे कॉलेज का स्पीड किंग यहाँ आकर तुम्हारा पैसा खा जाएगा! इसमें तुम्हारे कॉलेज को क्या गर्व है? तुमने मजे के लिए थोड़ी सी रैगिंग की, तो कायरों की तरह सीधे पुलिस के पास जाकर शिकायत दर्ज करा दी, तो ये कोई बहादुरी नहीं थी! स्पीड के मामले में विजयकुमार का कोई मुकाबला नहीं, तो तुमने जलन के मारे ये पुलिस शिकायत दर्ज कराई है!
यह सुनकर अनूप का दिमाग एक अलग ही स्तर पर सोचने लगा। अपनी साइकिल के अलावा वह कोई और वाहन चलाना नहीं जानता था। कॉलेज के सभी शिक्षक मुसीबत आने पर साइकिल का इस्तेमाल करते थे। अगर कोई काम होता, तो वे छात्रों को भी दे देते थे। कई कारणों से अनूप उस साइकिल को बहुत चलाता था। चाहे सकरे, ऊबड़-खाबड़ रास्ते हों, जिनके दोनों ओर पेड़ हों या बैलगाड़ी के रास्ते, पूरे स्कूल में वही इंकलौता था जो बिना रुके साइकिल को आगे बढ़ा सकता था। अगर टायर पंचर हो जाता, तो वह पंचर वाली जगह ढूंढकर उसे ठीक कर देता और पूरे पहिये को वैसे ही छोड़ देता।
लेकिन जब उन्होंने सड़क पर सीधी दौड़ती साधारण साइकिलें देखीं, तो उन्हें भी लगा कि ये तो पुराने ज़माने का वाहन है। गांधी जी के दादाजी के ज़माने का वाहन चलाने का कोई मतलब नहीं! अगर खरीदना ही है तो लूना खरीद लो, स्कूटर - अरे बाप रे! मोटरसाइकिल खरीद लो! सारे वाहन छोड़ दो और बुलेट खरीद लो जो लड़ाकू विमान की तरह आगे बढ़ सकती है!
शुरुआत में यह महज एक विचार था, फिर एक उम्मीद बन गई। देखते ही देखते यह एक स्पष्ट महत्वाकांक्षा में तब्दील हो गया। मुझे बुलेट को हर हाल में जीतना

है। मुझे सिर्फ स्पीड किंग नहीं, बल्कि सुपर स्पीड किंग बनना है! मुझे न सिर्फ अपने कॉलेज का, बल्कि पूरे मैसूर का टॉप-सुपर-स्पीड किंग कहलाना है!
आठ दिनों के भीतर यह इच्छा बहुत प्रबल हो गई।
एक बड़े परिसर में, एक तरफ कॉलेज था, दूसरी तरफ छात्रावास, पास में ही एक कार्यशाला, और एक दुकान जहां ज़रूरत की सारा सामान मिलता था – इस छात्र सहकारी दुकान में साबुन, पेस्ट और ब्रश जैसी ज़रूरी चीज़ें भी मिलती थीं। वहाँ एक कैंटीन भी थी जहाँ कॉफ़ी, चाय और खाना मिलता था। ऐसे में, अगर आप गोली माँगते, तो कौन देता?
पिताजी के सामने यह बात रखने का कोई फ़ायदा नहीं है। वे यह कहकर राहत महसूस करेंगे कि उनके पास इतने पैसे नहीं हैं। क्या सच में उनके पास पैसे नहीं हैं? उन्हें कितनी तनख्वाह मिलती है? एक बहु-संस्करण अखबार के स्थायी संपादक को कितनी तनख्वाह मिलती है?
ऐसे सवाल उसके मन में पहले कभी नहीं आए थे। इसलिए पता लगाने का सवाल ही नहीं था। उसने तय किया कि इसके बाद कभी न कभी तो पता लगाना ही पड़ेगा। उसे यह भी अंदाज़ा लगाना चाहिए कि सारे खर्चों के बाद कितने पैसे बचेंगे। अभी भी वह मासिक खर्च, कॉलेज की फ़ीस और दूसरे खर्च देने के लिए तैयार है। उससे गोलियों का मुद्दा उठाने का कोई फायदा नहीं। अगर वह कहता है, 'मैं पैसे नहीं दूंगा - मेरी मां से भी मत लो', तो बाद में विवाद हो जाएगा। अगर मैं उसके साफ-सीफ़ कहने के बाद कुछ करता हूं, तो बेवजह मामला क्यों बढ़ाऊं?
उस रात वह पास के एक टेलीफोन बूथ में गया। मम्मी ने सब कुछ सुन लियां और वही सवाल पूछा,
"ओह, कालेज और हॉस्टल एक ही परिसर में हैं, तो आपने ही तो बताया था ना? आपको कार की क्या ज़रूरत है?"
मम्मी, मैं इलेक्ट्रॉनिक्स की पढ़ाई कर रहा हूँ! क्या कॉलेज की चार दीवारों में बैठे रहने से ज़्यादा ज़रूरी नहीं हैं कि हम कारखानों में जाकर काम देखें? मैसूर के पास कई बड़े कारखाने हैं। आपको वहां जाना होगा और वापस आना होगा। आपको दस से पंद्रह मील पैदल चलना होगा। वहां बसें नहीं चलतीं!..."
“मेरे प्रिय, मुझे दो पहिया वाहनों से डर लगता है, महोदय! अगर कोई दुर्घटना होती है, तो सबसे पहले चालक को चोट लगती है! अगर चार पहिया वाहन है, तो सबसे पहले इंजन को चोट लगती है। फिलहाल, किसी तरह दिन गुजार लो। एक-दो साल में मैं तुम्हें एक पुरानी कार खरीद दूंगा!...”
अनुपम इस बात से भी खुश था कि उसकी मां ने उसे कार खरीदकर देने की बात कही थी। लेकिन बुलेट में वो आकर्षण, वो मर्दानगी है जो रोल्स-रॉयस जैसी कार में भी नहीं है।
लेकिन, मम्मी! आप कहती हैं कि कार में बहुत पेट्रोल लगता है! यहाँ उसे पार्क करने की जगह ही नहीं है! मैं मोटरसाइकिल अपने कमरे में पार्क कर सकती हूं। उसमें पेट्रोल भी कम लगता है।
"अरे, तुम्हें मोटरसाइकिल की क्या ज़रूरत है? लूना ले लो... या फिर स्कूटर!"
थू! मैं लूना पर नहीं बैठूंगी। क्या आपको पता नहीं? यहाँ के बच्चे इसे गांधी-साइकिल कहते हैं! और मैंने स्कूटर के बारे में भी पूछताछ की। अगर मेरा बेटा, जो इतना लंबा है, स्कूटर चलाएगा तो उसे कमर दर्द होने लगेगा, वे कहते हैं! यहाँ के सभी डॉक्टरों ने यही बात कही है!
“ओह चोर! क्या मैं समझ नहीं पा रही? अगर तुम बुलेट की सवारी करोगे और तेज़ भागोगे, तो लड़कियाँ प्रभावित होंगी, क्या यही तुम्हारा गणित है? मैंने तुम्हारी सीट के लिए पैसे इसलिए नहीं दिए कि तुम अपना पूरा साल इस पर बर्बाद करो! तुम्हें मुझे अपने हर टेस्ट के नंबर बताने चाहिए! अगर नहीं, तो मैं प्रधानाचार्य से पूछ

लूँगा!" – ये कहते हुए भी उनकी आवाज़ में शक्ति से ज़्यादा प्रेम झलक रहा था। अनुपम इसे महसूस किए बिना नहीं रह सका।
वह भी उतना ही प्रसन्न हुआ और बोला,
मम्मी, मैं किसी भी परीक्षा में साठ प्रतिशत से कम अंक नहीं लाऊंगा – भगवान की कसम! लेकिन अगर मुझे ऐसे अंक लाने हैं, तो मुझे कारखानों का दौरा करना होगा। मैं आपको यह भी बता दूं कि मैं अपने साथ किसी लड़की को नहीं ले जाऊंगा! लेकिन मैं लूना साइकिल तो बिलकुल नहीं चलाऊंगा! नहीं तो मैं ये करूंगा – मैं सौ रुपये में एक पुरानी साइकिल खरीदूंगा, उसे ठीक करवाऊंगा और चलाना शुरू कर दूंगा। अगर कारखाने का चौकीदार मना कर दे, तो मैं उसे बता दूंगा कि मैं मशहूर उद्योगपति कांतिजी का बेटा हूं, इसलिए..."
अनुप का जवाब बहुत प्रभावी था। उसने पूछा,
आपने कौन सी कार खरीदने का फैसला किया है?
मैंने अभी तक इस बारे में ठीक से सोचा नहीं है। मैं इस पर अच्छे से विचार कर लूंगी और कल एक पत्र लिखूंगी। फिर आप तुरंत पैसे भेज देना। मम्मी! मेरी प्यारी मम्मी!

■

अनूप को एक और बात से सुखद आश्चर्य हुआ। उसके दोस्त ओमप्रकाश सभरवाल और जगदीश अरोरा, जो उसके साथ बेंगलुरु के सेंट्रल स्कूल में आइसक्रीम-चिकन-कैबरे का आनंद लेते थे और कोडाइकैनाल चले जाने के बाद अलग हो गए थे, अब उसी कॉलेज में दाखिला ले चुके थे। अरोरा ने इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग में और सभरवाल ने सिविल इंजीनियरिंग में दाखिला लिया था। दोनों ने ब्रेवरली इंटरनेशनल स्कूल में पढ़ाई की थी, इसलिए उन्हें पूरा भरोसा था कि उन्हें आईआईटी या किसी क्षेत्रीय इंजीनियरिंग कॉलेज में आसानी से दाखिला मिल जाएगा। लेकिन वे प्रवेश परीक्षा में अपेक्षित अंक प्राप्त नहीं कर सके। अंततः, उनके पिता ने उन्हें मैसूर के एक कॉलेज में दाखिला दिलाने के लिए तुरंत कदम उठाए। जगदीश के पिता ने कॉलेज को पचहत्तर हजार रुपये और सीट दिलाने वाली समिति के सदस्य को ढाई लाख रुपये दिए थे। उनका लक्ष्य फरीदाबाद में शक्ति इलेक्ट्रिकल्स का विस्तार करना या बेंगलुरु में एक अलग कारखाना स्थापित करना था। इसीलिए उन्होंने इतनी मेहनत की थी।
सिविल इंजीनियरिंग विभाग में ज्यादा भीड़ न होने के कारण, ओमप्रकाश के पिता ने सीट के लिए साठ हजार रुपये और समिति सदस्य के लिए एक लाख चालीस हजार रुपये का भुगतान किया था। चूंकि उनका व्यवसाय बेंगलोर में पुराने मकान खरीदना, उनकी जगह नए भवन बनाना और बेंगलोर नगर विकास योजना में भाग लेना, नई जमीन अधिग्रहण करना, बहुमंजिला इमारतें बनाना और शुरू में ग्राहकों को आकर्षित करके उन फ्लैटों को बेचना था, इसलिए उनके बेटे के लिए सिविल इंजीनियरिंग में बी.ई. की पढ़ाई करना आवश्यक था।
अरोरा या सभरवाल की नज़र में ये दो-तीन लाख रुपये बहुत मामूली रकम थी। उनकी नज़र में, इतनी कम कीमत पर सीटें बेचने वाले समिति सदस्य सरासर मूर्ख थे!
जब ओमप्रकाश और जगदीश कॉलेज में आए हुए केवल पाँच दिन ही हुए थे, तब यह खबर पूरे शहर में फैल गई थी कि अनुप रविंद्र नाम के एक लड़के ने चार सीनियर लड़कों को पुलिस लॉकअप में डलवा दिया और फिर उन्हें कॉलेज हॉस्टल से भगवा कर लिया, और उनमें से दो तो गाँव से भाग भी गए थे। इसके अलावा, कॉलेज में देर से दाखिला लेने के कारण उन्हें हॉस्टल में जगह नहीं मिल पाई थी। वे जानते थे कि ब्रेवरली इंटरनेशनल में अच्छा खाना खाने की आदत रखने वाली उनकी जीभ को यहां के हॉस्टल का साधारण खाना पसंद नहीं आएगा। दक्षिण भारत के हॉस्टलों में वे चपातियाँ नहीं खाते थे - अगर खाते भी तो उन्हें ठीक से

पचा नहीं पाते थे। अगर हम जैसे लोग उनका दाल रोहत सांचा - भगभगोत सांभर - रोज़ खाएँ तो हमारा क्या हाल होगा? हमारा शरीर मज़बूत कैसे होगा? उनके पिता भी यह सब समझते थे। आखिरकार दोनों ने इस बारे में सोचा और मैसूर के एक शांत इलाके में एक घर किराए पर लेने का फैसला किया। उन्होंने उत्तर भारत से एक भरोसेमंद नौकर को वहाँ रहने और अपने खाने-पीने का ख्याल रखने के लिए रख लिया। जब तक यह व्यवस्था नहीं हो जाती, उन्होंने उन दोनों को किसी मारवाड़ी या उत्तर भारतीय के स्वामित्व वाले होटल में ठहराने का फैसला किया। उन्होंने यह व्यवस्था इसलिए की थी क्योंकि उन्हें लगा था कि 'चंद्रमोहन' होटल, जहाँ वे बिजली के सामान का व्यापार करने के लिए मैसूर जाते समय ठहरे थे, इस लिहाज़ से सुविधाजनक रहेगा।
एक दिन जब अरोरा नोटिस बोर्ड के पास आया, तो उसकी नज़र अनुप पर पड़ी। दोनों ने एक-दूसरे को देखा और खुशी से चिल्ला उठे। कॉलेज की आदत के चलते अनूप ने कन्नड़ में चिल्लाकर पूछा, 'अरे! तुम यहाँ हो?', वहीं अरोरा ने भी चिल्लाकर पूछा, 'तुम? यहाँ?' अनूप को यह जानकर भी खुशी हुई कि सभरवाल भी यहाँ है और दोनों चंद्रमोहन में रहते हैं। उसी शाम कॉलेज की छुट्टी होते ही तीनों चंद्रमोहन चले गए। दोनों के पास यामाहा मोटरसाइकिल थी। बुलेट से बड़ी, आकर्षक और आधुनिक यामाहा ने अनूप का ध्यान तुरंत खींच लिया। ओमप्रकाश के पीछे बैठे-बैठे उसने तय कर लिया कि वह यही मोटरसाइकिल खरीदेगा।
लेकिन उनके दोस्तों ने असहमति जताई।
यह सच है कि हाल के दिनों में यामाहा का उपयोग अधिक हो रहा है। वज़न और ईंधन खपत के मामले में यह सुविधाजनक है। लेकिन इसमें बुलेट जैसी शक्ति नहीं है!
इसलिए, अनुप की नजर में गोली शक्ति का प्रतीक बनी रही।
एक और बात थी जो उनके दिमाग से निकल ही नहीं रही थी। स्पीडकिंग विजयकुमार रेड्डी की बुलेट। अगर हमें उनके जाने के बाद उनका खिताब हासिल करना था, तो हमें खुद बुलेट हासिल करनी थी—वो भी उन्हीं की तरह काले रंग के सूट में। हमें उन्हीं की तरह का फुल-फेस हेलमेट भी चाहिए था। जी हां—हमें इसे बैंगलोर से मंगवाना था।
उसे अब भी मोटरसाइकिल चलाना नहीं आता था। उसने कभी कोशिश भी नहीं की थी। भला कौन कहता, "मुझे अपनी मोटरसाइकिल पर सिखाओ?" अब इन दो खास दोस्तों से मिलने के बाद यह सवाल हल हो गया। ओमप्रकाश अच्छी मोटरसाइकिल चलाता है - लेकिन उसकी रफ्तार धीमी है। जगु की रफ्तार भी बहुत तेज़ नहीं है। दोनों ही डरे हुए हैं! सुपर स्पीड किंग के खिताब के लिए इन दोनों में से कोई भी उसका प्रतिद्वंदी नहीं बन सकता!
चंद्रमोहन की तीसरी मंजिल के एक छोर पर स्थित विशाल कमरे में प्रवेश करते ही, जहां वे ठहरे हुए थे, उपित-काजर हलवा और मुसालेदार काजू खाते हुए, वे दोनों उस बेवली इंटरनेशनल विश्वविद्यालय के बारे में प्रशंसात्मक बातें करने लगे जहाँ उन्होंने पढ़ाई की थी। वे कह रहे थे,
``घुड़सवारी, मोटरसाइकिल, कार – स्कूल में सब कुछ सिखाया जाता है। हम दोनों ने वहीं सीखा..."
यह सुनकर अनूप को अपनी मूर्खता का एहसास हुआ। उसे कॉलेज में सब लोग जो पुरानी साइकिल इस्तेमाल करते थे, वह याद आ गई। उसे उसे मनचाहे ढंग से चलाने की पूरी आज़ादी थी। मोटरसाइकिल, जीप, कार आदि उसके कॉलेज के पास भी नहीं चल सकती थीं।
जब वह यह सोच रहा था, तभी जगगु ने उससे पूछा,
"अरे, मुझे अपने आवासीय विद्यालय के बारे में बताओ! हमने तो एक बार तुम्हारे विद्यालय आने का सोचा भी था। लेकिन तुम्हारी माँ ने कहा कि वहाँ मेहमानों को

आने का अनुमोदन नहीं है, तो फिर यह किस तरह का विद्यालय है?"
अनुपमा को कुछ-कुछ अंदाजा था कि क्या हुआ होगा। मम्मी ने ज़रूर झूठ बोला होगा क्योंकि उसे भी विद्याशाला और कोडाइकनाल के स्कूल में फर्क महसूस हुआ था। वह अपने पिता से नाराज़ थी क्योंकि उन्होंने उसे ऐसे स्कूल में भेजा था। जब वह हवाई जहाज से दिल्ली गई थी तब मम्मी ने भी इस बात का इशारा किया था।
ओमी ने पूछा,
"क्या यही आपके स्कूल की खासियत है - आप मेहमानों को भी अंदर नहीं आने देते?"
अनूप का अपने पिता के प्रति क्रोध अब इन दोनों की ओर मुड़ गया। अपने विद्यालय की महानता का बखान करते हुए उसने ऊँची आवाज़ में कहा,
यह एक ऐसा विद्यालय है जो विवेकानंद के आदर्शों को साकार रूप देता है! आप भेड़ नहीं, शेर हैं – यह एक ऐसा विद्यालय है जो संदेश देता है: उठो – खड़े हो जाओ – लक्ष्य की ओर बढ़ो और तब तक चलते रहो जब तक उसे पा न लो। यह एक ऐसा विद्यालय है जो आपको बिना इधर-उधर रुके, गोली की तरह – मतलब रॉकेट की तरह – अंतरिक्ष में छलांग लगाने के लिए तैयार करता है! यह एक ऐसा विद्यालय है जो मुझे मेहमान बनकर एक भी दिन बर्बाद नहीं करने देता! आज मैं जो कुछ भी हूं, उसका कारण विवेकानंद की शेर शक्ति है!
दोनों की आँखों में भय और आश्चर्य झलक रहा था। उन्होंने भी विवेकानंद का नाम सुना था। सामान्य ज्ञान परीक्षा में इस विषय पर एक प्रश्न था। उन्होंने यह भी पढ़ा था कि सार्वभौमिक मनुष्य उनका दर्शन था। उन्होंने उनकी तस्वीर भी देखी थी। जैसे उनके बेवर्ली स्कूल में फादर बेवर्ली की एक बड़ी तस्वीर लगी है, वैसे ही अनूप के कॉलेज में भी, बड़ी-बड़ी चमकदार कांच की खिड़कियों और कालीन बिछी दीवारों वाले हॉल में फादर विवेकानंद की एक पूर्ण लंबाई वाली तस्वीर ज़रूर लगी होगी। जग्गू की जिज्ञासा यहीं नहीं रुकी। उसने पूछा,
``विवेकानंद फादर होते, की सेंट?"
इस सवाल ने अनूप को उलझन में डाल दिया। उसने ऊंची आवाज़ में पूछा,
"पिताजी, आपकी क्या मतलब है? वह तो आजीवन ब्रह्मचारी थे! एक आजीवन तपस्वी!"
मैं भी यही कह रहा हूँ – अगर आप पिता बनना चाहते हैं, तो आपको अविवाहित और कुंवारा होना चाहिए। संत तो इससे भी कहीं बढ़कर होते हैं! इसलिए मैंने पूछा। क्या विवेकानंद सिर्फ एक पिता थे, या एक संत भी थे?
अनूप और भी ज्यादा क्रोधित हो गया और बोला,
"ये स्वामी विवेकानंद थे! यानी एक संन्यासी!" उनकी अज्ञानता का उपहास करते हुए उन्हें इस बात का संतोष हुआ कि वे उनसे श्रेष्ठ हैं। उनके मन में एक बार फिर यह विचार आया कि उनका विद्यालय उनसे श्रेष्ठ है।

■

बेवर्ली स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने वाले, व्यापारियों के बच्चे, मूल रूप से पंजाबी-पंजाबी, हालांकि आज पंजाबी में उतने धाराप्रवाह नहीं हैं, लेकिन हिंदी बोलते हैं, और दोनों के लिए रसोइया का काम करते हैं - चूंकि उनमें कई बातें समान थीं, इसलिए ओमप्रकाश और जगदीश घनिष्ठ मित्र थे, और अनुपाल के दोबारा करीब आने पर उनमें से किसी को भी कोई आपत्ति नहीं थी। उन्हें बातचीत करने के लिए एक दोस्त की भी ज़रूरत थी। अगर इस नज़रिए से देखा जाए, तो अनुपाल को हिंदी भाषी कहा जा सकता है। उनकी माँ पूरी तरह से हिंदी भाषी हैं, जबकि उनके पिता कन्नड़ हैं। दोनों को पूरा यकीन था कि उनका विवाह अंतरजातीय है। इसीलिए उनकी तिकड़ी फिर से बनी।
उसकी बुलेट आने से पहले ही, उन दोनों ने उसे अपनी यामाहा चलाना सिखा दिया था। चूंकि वह साइकिल अच्छी तरह चला लेता था, इसलिए उसने केवल दो दिनों

में यामाहा चलाना सीख लिया। तीसरे दिन, उसने यामाहा ली और शहर में चक्कर लगाया। चौथे दिन, उसने शाम को शहर में सायाजीराव रोड और धनवंतरी रोड पर यामाहा चलाई। पांचवें दिन, उसने संबंधित लोगों को 100 रुपये की रिश्वत देकर ड्राइविंग लाइसेंस भी प्राप्त कर लिया।
जब उसके हाथ में गोली आई, तो वह जगगु-ओमी से भी तेज़ दौड़ने लगा। गति का अध्ययन करने के लिए वह कभी-कभी हुनसुर रोड पर जाता था। उस सड़क पर सौ किलोमीटर प्रति घंटे से अधिक की रफ्तार से दौड़ना उसका शौक था।
वह बुलेट कार को कॉलेज परिसर में तेज गति से लाता था और उसे अपनी कक्षा के सामने पार्क कर देता था, जिससे वह सभी छात्रों को यह दिखा सके कि इस वाहन पर उसका कितना नियंत्रण है।
लेकिन स्पीड किंग या सुपर स्पीड किंग का खिताब यूं ही नहीं मिल जाता! उन्हें एहसास हुआ कि इसे व्यवहार में लाना पड़ता है। फिर, जब वे कक्षा के हर बच्चे को अपनी गाड़ी की पिछली सीट पर बिठाकर तेज़ गति से घुमाते, तो कहते, "मुझे पता है - क्या वो तथाकथित स्पीड किंग रेड्डी नहीं था? वो कभी अस्सी किलोमीटर प्रति घंटे से ज़्यादा तेज़ नहीं चला। क्या उसकी गाड़ी से आवाज़ नहीं आती थी? जिससे लगता था कि वो बहुत तेज़ चल रहा है। मेरी नई, स्पोर्टी बुलेट को देखो - ये तो एक सौ दस किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार पार कर चुकी है!..."
लेकिन फिर भी, इस बात का कोई सबूत नहीं था कि बच्चे अपने नामों के साथ यह उपनाम जोड़ रहे थे। इसलिए उसने अपने दोनों सहपाठियों से सीधे बात करने का फैसला किया।
अरे! मैं तुम्हें एक दिन आनंद भवन ले जाऊँगा। तुम जितना चाहो उतना खा सकते हो। कोई सीमा नहीं। दस मिठाई खाओ, दस आइसक्रीम खाओ, पच्चीस उड़ी दवाड़े खाओ। जो चाहो खाओ। बिल जितना चाहो उतना बना लो। लेकिन तुम्हें मेरे लिए एक काम करना होगा!..."
"जो लड़की आपसे प्यार नहीं करती, उसके दिल में आप प्यार की चिंगारी नहीं जगा पाएंगे!..." दावनगिरी के मुकुंद ने कहा, जिसे मेरिट के आधार पर प्रवेश मिला था।
मुझे किसी लड़के में कोई दिलचस्पी नहीं है। मैं आपको बता दूं, पहले मेरी बात सुनिए। क्या आपने मेरी बुलेट की रफ्तार देखी है? सबको मुझे सुपर स्पीड किंग कहना चाहिए, आप लोगों को भी कुछ ऐसा ही करना चाहिए! कल कॉलेज में, मैं अपनी मोटरसाइकिल तेज़ी से लाऊंगी और उसे गाचा में पार्क कर दूंगी, फिर आप सब मुझे 'हाय - सुपर स्पीड किंग!' कहकर पुकारेंगे! मैं दो दिन तक ऐसा ही करूंगी - और फिर एक दिन मैं इसे बोर्ड पर लिख दूंगी!
"जब आपको सिर्फ एक ही बार खाना दिया जाता है तो क्या आपको यह सब करना पड़ता है?" अरसिकेरे के यल्लप्पा ने पूछा, जिनके लिए एक आरक्षित सीट थी।
"ओह, मैं तुम्हें दो घंटे में मोटरसाइकिल पर अरसिकेरे ले जाऊंगी और दो घंटे में ही मैसूर वापस ले आऊंगी! तो क्या हुआ?" अनुपना ने थोड़ा और नखरा दिखाया।
इन सब के परिणामस्वरूप, एक सप्ताह के भीतर ही उसकी कक्षा के सभी बच्चे उसे सुपर स्पीड किंग कहने लगे। लेकिन फिर भी, अनुप इस बात से दुखी था कि पूरा कॉलेज उसे इस नाम से नहीं जानता था। दो दिन तक सोच-विचार करने के बाद, उसे एक और विचार आया। उसने एक लड़के को पैसे दिए जो चुनावों के दौरान सड़कों पर नारे लिखता था और उससे कहा कि वह रात में कॉलेज के गेट पर एक नारा लिख दे। अगले दिन, पूरे कॉलेज ने पढ़ा,
इस कॉलेज में सुपर स्पीड किंग हैं, इसलिए गेट पर स्पीड ब्रेकर लगाया जाना चाहिए! या फिर उसकी गोली को रोककर जानमाल के नुकसान को रोका जाना चाहिए!

अगले दिन, कार से आए प्रधानाचार्य ने घोषणा पढ़ी। उन्होंने पूछा – ये सुपर स्पीड किंग कौन है? बच्चे भी उत्सुकता से एक-दूसरे से पूछने लगे। उस दिन अनुपशी बुलेट ने परिसर के छह चक्कर लगाए और अचानक रुक गई – और ये विज्ञापन सफल रहा और अनुप को सुपर स्पीड किंग का खिताब मिल गया! बच्चे उन्हें एस.ए.के. अनुप कहकर बुलाने लगे, जो उनके खिताब का छोटा रूप था। प्रधानाचार्य ने ये भी सोचा कि वैसे तो आजकल कई बच्चे स्कूटर और मोटरसाइकिल कॉलेज ला रहे हैं। अगर वो उन्हें धीरे चलने को कहते भी तो कोई नहीं सुनता। रडार लगाकर भी इसे साबित नहीं किया जा सकता। उन्होंने संबंधित अधिकारियों को गेट के पास स्पीड ब्रेकर लगाने का आदेश दिया।
अनुपम को भी स्पीड ब्रेकर देखकर थोड़ा बुरा लगा। लेकिन उसे गेट से अंदर आने की ज़रूरत नहीं थी। चूंकि वह परिसर में स्थित हॉस्टल से आ रहा था, इसलिए स्पीड ब्रेकर उसकी गति को सीमित नहीं कर सकता था।

■

एक शाम, वह सरस्वतीपुर में जगगु और ओमी के घर में बैठे उनसे बातचीत कर रहे थे। उसी समय, जगगु ने पूछा,
"अरे हाँ! उन बच्चों के नाम क्या थे यार? उन्होंने तुम्हें खूब परेशान किया, है ना? उन बच्चों ने! उन्होंने तुम्हारे साथ क्या किया?"
अनुपम ने अपने दोस्तों को विस्तार से सारी सच्चाई बताई। सब कुछ सुनने के बाद, उन्होंने पूछा,
तो आप पुलिस स्टेशन गए थे?
जी हां। मैं तुरंत एसपी के घर गया और वहां शिकायत दर्ज कराई और उन चारों को लॉकअप में डलवा दिया!
"क्या सिर्फ मजाक करने के लिए इस तरह प्रतिक्रिया देना सही है?"
अनुप इस सवाल से स्तब्ध रह गया। अगर उसे अपने साथ हुए अपमान की गंभीरता का एहसास होता, तो वह ऐसा नहीं कहता। एक ओर तो उसे दुख हुआ। उसने पूछा,
"चार लोगों द्वारा एक व्यक्ति को नंगा करने का क्या मतलब है!"
देखो, नग्न होकर कुछ करना और नग्न अवस्था में रहना... इसमें सब कुछ मनोवैज्ञानिक ही होता है। तुम्हें इतनी शर्मिंदगी इसलिए महसूस हुई क्योंकि तुम्हें इस तरह का अनुभव नहीं था, बस यही बात है। हमारे बेवली स्कूल में यह सब अलग है!
अनुप की आंखें उसकी बात सुनकर जिज्ञासा से चमक उठीं। जगगु बोलने लगा,
क्रिस पॉल नाम का एक लड़का हाल ही में हमारे स्कूल में आया था। वह अमेरिका से आया था। उसकी जाति क्या थी? वह एक शुद्ध हिंदू था! ओह, कृष्ण का अमेरिकी रूप। उसके पिता का नाम नरेंद्र पॉल था। उन्होंने अपना उपनाम भी बदलकर पॉल रख लिया था ताकि वहाँ यह ठीक लगे। पीएयू आने से पहले, क्रिस वहाँ के किसी बोर्डिंग स्कूल में पढ़ रहा था। उसे यहाँ इसलिए भेजा गया था ताकि बढ़ते हुए लड़के को थोड़ी भारतीय हवा मिल सके। जानते हो उसने एक दिन क्या किया? हमारे हॉस्टल के एक तरफ़ बाथरूम हैं। वहाँ बीस नल भी हैं - सुबह दांत साफ करने के लिए - खाना खाने के बाद हाथ धोने के लिए। उस सुबह हम पच्चीस लड़के वहाँ खड़े होकर दांत साफ कर रहे थे। क्रिस वहाँ हाथ में टूथब्रश, टूथपेस्ट, तौलिया, साबुन आदि लेकर आया। मज़े की बात यह है कि वह पूरी तरह नंगा था! हम सब चौंक गए। लेकिन उसने ऐसा चेहरा बनाया जैसे कुछ हुआ ही न हो! हममें से एक ने उससे पूछा: ये क्या है भाई? नंगे क्यों आए हो?
उसने सरल शब्दों में उत्तर दिया, "मैं कपड़े पहनने से पहले अपने दांत साफ कर लूंगा और नहा लूंगा!"

सभी बच्चे उसे उत्सुकता से देख रहे थे। उनमें से दो-तीन ज़ोर से हंसने लगे। तीन-चार सीटी बजाने लगे। अब वह हैरान रह गया। तभी उसने ध्यान दिया! उसके अलावा, सभी ने कपड़े पहने हुए थे! उसने चिढ़कर कहा, "अरे! तुम लोग मुझे कितनी भद्दी नज़रों से देख रहे हो!"
हमने उसे और भी हंसाया। लेकिन हमारे हंसने पर वह गुस्सा हो गया। "तुम बदतमीज़ भारतीय हो!" वह नहाने के लिए बाथरूम में चला गया।
उस शाम जब हम उनसे पुस्तकालय में मिले, तो हम सबने उनसे कहा, "क्या इतने सारे बच्चों का नग्न होना अश्लीलता नहीं है?"
``जानते हो उसने क्या कहा? अमेरिका में गर्मियों में, सारे दोस्त सुबह इसी तरह से दांत साफ़ करते थे! फिर हर कोई नहाता और कपड़े पहनता! क्योंकि सब इसी हालत में होते थे, किसी को भी इसमें कोई शर्म नहीं आती थी! वे रात को सोने की तरह ही सुबह उठकर नहाते थे! अगर दोस्त इतने खुले होते हैं, तो प्यार बढ़ता है – और इसी तरह की बातें उसने बहुत कहीं। हम भी उसकी बात समझ गए थे। फिर एक दिन, हम चारों उसी तरह एक दोस्त के कमरे में खड़े हो गए। पहले तो हमें बहुत झिझक हुई; लेकिन बाद में, हमें कुछ भी महसूस नहीं हुआ। इसके विपरीत, हमें एक खास खुशी महसूस हुई, यह महसूस करते हुए कि हम चारों एक समूह का हिस्सा हैं। बाद में, हम हर दिन अपने-अपने दोस्तों के कमरे में इकट्ठा होने लगे और इसी तरह बातें करने लगे। कुछ नया करने का रोमांच बढ़ता गया। फिर, हममें से हर एक ने, एक मिशनरी की तरह, अपने समूह में लोगों की संख्या बढ़ाना शुरू कर दिया। लगभग तीन महीनों के भीतर, हॉस्टल के 75 प्रतिशत बच्चे सुबह उठकर पूरी तरह नंगे होकर दांत साफ करने लगे...'"
"तो? आगे क्या हुआ?" अनुपमा ने उत्सुकता से पूछा।
जब कोई आंदोलन जड़ पकड़ता है, तो उसके विरोधियों की संख्या भी बढ़ जाती है। छात्रावास के पच्चीस प्रतिशत लड़कों को यह पसंद नहीं आया। अगर नहीं, तो कोई बात नहीं। लेकिन कुछ लड़कों ने वार्डन, अन्य शिक्षकों और प्रधानाचार्य – यानी प्रधानाध्यापक – को इस खबर के बारे में बता दिया। फिर उन सबने मिलकर साजिश रची। अगली सुबह, एक लड़के ने खिड़की से एक सफ़ेद तौलिया लहराया। किसी भी आंदोलन की तरह, हम सब एक ही समय पर वहाँ इकट्ठा हो गए!
अनूप ने अभी तक इस सब को लेकर कोई निश्चित निर्णय नहीं लिया था। इसलिए जब जगगु ने इसे एक आंदोलन बताया, तो वह भी असमंजस में पड़ गया। उसने पूछा,
"तो क्या प्रिंसिपल, वार्डन और बाकी सभी शिक्षकों ने तुम्हें पकड़ लिया?"
हम सब वहाँ खड़े होकर एक-दूसरे को महसूस कर रहे थे और अपने दाँत ब्रश कर रहे थे। उसी समय, पाँच-छह लोग नंगे पैर सीढ़ियों से ऊपर आए और कदमों की कोई आवाज़ नहीं होने दी। वे एक दीवार की तरह खड़े हो गए, जैसे किसी को भी अपने कमरे में जाने से रोक रहे हों। उन सातों की आँखों में क्रोध की आग जल रही थी। अगर उनमें कोई शक्ति होती, तो हम सब उसी क्रोध में भस्म हो जाते! हमारी क्लास टीचर ने एक-एक करके हम सबको नाम लेकर एक तरफ़ खड़ा करना शुरू किया। वार्डन ने नाम लिखना शुरू किया। अब बाकी बच्चे भी आकर खड़े हो गए।
लेकिन अब अचानक हमें शर्म महसूस होने लगी। हमें लगा जैसे हमने कुछ गलत कर दिया हो। हममें से एक ने अपने कंधों से तौलिया उतारकर अपनी कमर पर लपेट लिया। जैसे ही हममें से एक ने ऐसा किया, बाकी सबने भी वैसा ही किया। हमें डर लगने लगा – पता नहीं अब हमें क्या सज़ा मिलेगी! अगर हमने अपने माता-पिता को बता दिया तो क्या होगा? ओमी और मैं बहुत डरे हुए थे। याद है जब

पुलेस ने हमें बैंगलोर में एक कैबरे देखते हुए पकड़ा था? अगर उन्हें इसके बारे में पता चला तो वे क्या करेंगे!
अनुपाल को भी वह घटना याद थी। जब वह कैबरे देख रहा था, तभी पुलिस अंदर आ गई थी - उन्हें सूचना मिल गई थी और उन्होंने परिवार को सूचित कर दिया था - अंत में, पापा ने उसे सजा के तौर पर कॉलेज भेज दिया था...
जगगु ने आगे कहा,
प्रधानाचार्य ने हमें कपड़े पहनकर अपने कार्यालय में आने को कहा। हालाँकि हम नंगे थे, हमें ठंड नहीं लग रही थी – लेकिन अब हम पूरी तरह काँप रहे थे। हमने अपने रोज़ाना के गर्म कपड़े पहने और उनके कार्यालय में चले गए।
जब तक हम वहां पहुंचे, मेरे मन में एक बात पक्की हो गई थी। चूंकि यहां एकल अभिभावक होने का कोई सवाल ही नहीं है, इसलिए कोई सजा नहीं होगी। ज़्यादा से ज़्यादा वे हमें एक घंटे का उपदेश जैसा व्याख्यान देंगे - ज़्यादा से ज़्यादा वे हमें अलग-अलग मंजिलों पर रहने के लिए भेज देंगे, हम पर सौ रुपये का जुर्माना लगाएंगे और हमारे माता-पिता को सूचित कर देंगे - हम आपस में यही सोच रहे थे।
हम सभी उनके कार्यालय के बाहर बरामदे में खड़े थे। प्रधानाचार्य और वार्डन आगे आए और खड़े हो गए। अन्य शिक्षक भी वहां मौजूद थे।
प्रधानाचार्य ने पूछा,
"क्या आपको इस बात का जरा भी अंदाजा है कि आप कौन सा पाप कर रहे हैं?"
हममें से कोई भी निरक्षर नहीं था। तभी नीलगिरी के विलियम नाम के एक लड़के ने कहा,
"सर, बाइबल की कक्षा में आपने ही आदम और हव्वा की कहानी सुनाई थी! हम भी उस समय उसी तरह मंत्रमुग्ध थे। तो फिर उसमें पाप क्या था?"
``हमें भी यह कहानी पता थी। लेकिन किसी ने भी इसके लिए ऐसा संदर्भ नहीं सुझाया था। हमें एहसास हुआ कि प्रधानाचार्य भी भ्रमित थे। अब हम पहले से ज्यादा मज़बूत महसूस कर रहे थे।``
तब मुंबई के एक लड़के ने, जो मूल रूप से गुजराती था, कहा, "महोदय, हमारे धर्म में भी तीर्थंकरों को वस्त्र धारण करने की अनुमति नहीं है। मैंने स्वयं देखा है कि गोमतेश्वर की 58 हाथ ऊंची प्रतिमा नग्न है! हमारे स्वामीजी भी नग्न हैं। तो फिर आधे घंटे तक दिगंबर मुद्रा में रहने से लड़के पापी कैसे हो सकते हैं?"
अब प्रधानाचार्य ने खुद को संभाला। वार्डन ने कहा, "तुम जैसे शरारती बच्चों को, जिनके दिमाग में सत्रह सौ साठ विचार भरे रहते हैं, हव्वा-आदम की कहानी सुनाने की कोई ज़रूरत नहीं है! अगर तुम सिर्फ बहस करने के लिए बहस करना चाहते हो, तो सावधान रहो! मैं इसे तुम्हारे रिकॉर्ड में दर्ज करूंगा। इस अंतरराष्ट्रीय विद्यालय में हम तुम्हें किसी और धर्म के बारे में बात करने की अनुमति नहीं देंगे। अगर तुम्हारे मन में कोई सवाल हो, तो छुट्टियों में अपने गाँव जाकर अपने शिक्षक से पूछ लेना। यहाँ विद्यालय के नियम, नियम हैं! अगर कोई इनका उल्लंघन करता है, तो मैं उनके माता-पिता को बुलाकर उन्हें यहाँ से ले जाने के लिए कहूंगा!"
प्रधीनाचार्य ने भी कहा, "कोई बात नहीं।" हम सब चुप रहे। फिर अमेरिका से आए क्रिस ने कहा, "स्कूल के नियमों में ऐसा कोई नियम नहीं है कि कोई भी छात्र नग्न न रहे। किसी अलिखित नियम का उल्लंघन करने पर किसी को दंडित करना उचित नहीं है!"
सभी बच्चे उसे सुनने के लिए उत्साहित थे। लेकिन प्रधानाचार्य ने कहा, "हमने तो इसमें यह नियम भी नहीं बनाया है कि हत्या नहीं करनी चाहिए। तो क्या तुम हत्या करने जा रहे हो?"
लेकिन महोदय...यह अमेरिका के स्कूल नियमों में दर्ज है-

जी हाँ! यह अमेरिका नहीं, भारत है! हर किसी से अपनी-अपनी गलतियाँ हुई हैं, इसलिए उन्हें लिखित में माफी माँगनी चाहिए! फिर हम आप सभी के रिकॉर्ड देखेंगे और तय करेंगे कि आपके घरों को सूचित करना है या नहीं।
"हमें लगा जैसे हमने कोई कठिन निर्णय लिया हो। हमने इससे पहले भी ऐसे कई पत्र दिए थे! लेकिन इसके परिणामस्वरूप, हम सभी का नग्न आंदोलन के प्रति उत्साह कम हो गया। उसी समय, मानसून का मौसम समाप्त हो गया और कोडाइकनाल की ठंड शुरू हो गई।"
अनूप का मन बेवर्ली स्कूल और वहां के माहौल की कल्पना में डूबा हुआ था। जगगु वापस पहले मुद्दे पर आ गया।
"क्या तुम्हें पता है मैंने तुम्हें ये सब अभी क्यों बताया? शायद उन चारों के मन में भी कुछ ऐसा ही चल रहा हो! तुम इसे ठीक से नहीं समझ रहे हो..."
उनके शब्दों का दृढ़तापूर्वक खंडन करते हुए उन्होंने कहा,
अरे! वे तो बिलकुल गुंडे थे। एक सम्लैंगिक के सामने नग्न होना तो पागलपन है! मैंने उन्हें सज़ा दी, बिलकुल सही! उन्हें जाने दो - अब तुम और ओम साथ रह रहे हो, है ना? कोई बताएगा या पूछेगा नहीं। तो अब तुम दोनों एक-दूसरे के सामने नग्न बैठते हो?
"तुम सही कह रहे हो, अनूप। एक ही लिंग के लोगों का एक-दूसरे के सामने नग्न होना वाकई असहनीय है!..." ओमी ने कहा, जो इतने लंबे समय से चुप थी।
"तो क्या हमें विपरीत लिंग के किसी व्यक्ति को आमंत्रित करना चाहिए?" अनुपना ने पूछा।
यह सुनकर दोनों चौंक गए। उन्होंने मुड़कर रसोई की ओर देखा। नौकरानी सब्जियाँ लाने बाहर गई थी। इसकी पुष्टि करने के बाद ओमी ने कहा,
"क्या कहूँ यार! हमारे दोनों पिता इतने दूरदर्शी हैं कि उन्होंने बहुत आगे की सोच रखी है! हमें मनपसंद खाना चाहिए, इसलिए उन्होंने नौकर रख रखा है, है ना? वो दिन-रात घर की रखवाली करता है। खाने-पीने या पैसे खर्च करने पर कोई रोक नहीं है। लेकिन वो इस बात का खास ख्याल रखता है कि कोई औरत या लड़की इस घर में न आए! इसीलिए वो घर का सारा काम करता है। इसके अलावा, जगगु के पापा भी कभी-कभी व्यापार के सिलसिले में यहाँ आते हैं। दस्तावेजों में तो ये घर शक्ति इलेक्ट्रिकल्स के गेस्ट हाउस के रूप में दर्ज है!"

■

११

अंततः, हेमंत को जीतने के बाद, कांति को अहसास हुआ। उसने पहले कभी ऐसा अनुभव नहीं किया था। उसने कभी किसी स्त्री से इस भावना के साथ बात भी नहीं की थी, इसलिए उसने उसे बताया। जब उसे यह बात समझ आई, तो उसकी संतुष्टि चरम पर पहुँच गई। एक ईमानदार पुरुष आज उसका गुलाम बन गया था! एक ऐसा पुरुष जो इतना चंचल नहीं था कि आँखें फेर ले! उसकी उम्र! इतनी शिक्षा! अब अखिल भारतीय स्तर का कलाकार – अहा – जिसमें उससे भी आगे बढ़ने की क्षमता थी! मेरा – पूरी तरह से मेरा! उसने अपने इस सौभाग्य को सचमुच सराहा।
अच्छा हुआ कि उसके मन में सुंदरता के लिए ज़्यादा जगह नहीं है! वरना, संगीत के माहौल में, खासकर कल, वो अलग-अलग शहरों में मीटिंग्स के लिए जाने लगेगा, या अलग-अलग आकर्षक महिलाओं के साथ रिश्ते बनाने लगेगा, और मुझे पूरी तरह से भूल जाएगा! लेकिन उसका स्वभाव अलग है। ज़िम्मेदारी, कृतज्ञता, मित्रता - वो मेरे स्नेह से कभी दूर नहीं होगा!

लेकिन तीसरे दिन, जब उसने नैतिकता का मुद्दा उठाया, तो वह दुखी हो गई। उसे ऐसा लगा जैसे किसी ने उसे अनजाने में छुरा घोंप दिया हो। लेकिन उसने दृढ़ता से खुद को संभाला। उसने बड़ी हिम्मत और बुद्धिमत्ता से इस स्थिति का सामना किया।
लेकिन उसके बाद भी उनका रिश्ता नहीं टूटा। हेमंत भी हर मुलाकात में उतनी ही बेसब्री से उसका इंतज़ार करता था। अब उसे हर बार पहल करने की ज़रूरत भी नहीं पड़ती थी। वह भी उसे सितार और राधा जैसे कई नामों से पुकारता था। वह उसके शरीर की सुंदरता का वर्णन करते-करते इतना मग्न हो जाता था कि उसे पता भी नहीं था कि उसका शरीर इतना सुंदर है। हाल ही में उसने एक नई शुरुआत की थी – मैं सितार के साथ-साथ चित्रकला भी सीखूंगा – मैं तुम्हारे सुंदर शरीर के सुंदर चित्र बनाऊंगा –
शादी के इतने साल बीत जाने के बाद भी, रविंद्र ने कभी भी उसके और उसके शरीर के बारे में इतनी खुलकर बात नहीं की थी! हालांकि, हेमंत उसकी जवानी, खूबसूरती और वाक्पटुता से मोहित हो गया था। वह उससे दूर जाने को बिल्कुल भी तैयार नहीं था।
लेकिन कांति अपनी फैक्ट्री छोड़कर हमेशा के लिए उसके साथ नहीं रह सकती थी। जाते समय जब उसने घड़ी देखी, तो उसके आलिंगन में समा जाने की तीव्र इच्छा जागी, लेकिन उसे खुद को रोकना पड़ा। जब वह शीतल के साथ आई और उसे उसके घर पर छोड़कर गई, तो दोनों के मन में तीव्र इच्छा हुई कि वे कार को किसी एकांत जगह पर थोड़ी देर के लिए ही सही, रोक लें, लेकिन दिल्ली की व्यस्त सड़कों पर उन्हें एक पल के लिए भी ऐसी कोई शांत जगह नहीं मिली। अगर वे अपनी फैक्ट्री में एक घंटा बिताने की अनुमति मांगते, तो वहां के चौकीदार की नजरों में उनकी प्रतिष्ठा कम हो जाती। आखिरकार, हर दिन उसे उसके घर से आधा फलांग दूर छोड़ते समय, दोनों ने अगले दिन शीतल के घर पर एक घंटा और रुकने का फैसला किया।
रोजाना होने वाली यह जुदाई कांति को बहुत असहज कर रही थी। उसे कुछ दिनों के लिए शिमला-मसूरी या नैनीताल जाकर शांति से रहना चाहिए था।
इस पर उन्होंने कहा,
"मैं इसे संभाल सकता हूँ। मुंबई से मेरे गुरुजी ने मुझे फोन किया है, इसलिए मैं उन्हें घर पर बता दूंगा।"
कांति भी शाम तक यही सोचती रही। रजनी-निरंजन को बताया जा सकता था कि बैंगलोर की एक मैनेजमेंट कंपनी ने महिला उद्यमियों के लिए दो सप्ताह का रिफ्रेशमेंट कोर्स आयोजित किया है, और इसमें भाग लेना मेरे व्यवसाय के लिए फायदेमंद होगा। लेकिन वह शीतल को क्या बताती? अगली सुबह, उसने फैसला किया कि बेटे को अपनी मां से मिलवाना चाहिए, और कहा, "मैं अपने पति से मिलने की प्रक्रिया भी पूरी कर लूंगी।" उसने आगे कहा, "दो सप्ताह तक तुम कारखाने पर ध्यान देना। फिर, जब मैं वापस आऊंगी, तो तुम जहां चाहो जा सकते हो।"
शीतल को समझौते की जानकारी देने के बाद, शीतल ने पूछा,
"उस पति के प्रति आपके मन में अब भी किस तरह का लगाव है?"
हमें गलतियाँ नहीं करनी चाहिए। कल बच्चा यह न कहे कि मम्मी पापा को छोड़कर चली गई!
"अगर बच्चा कुछ कह भी दे, तो क्या होगा?"
"तुम नहीं समझोगे! धैर्य रखना हमेशा बेहतर होता है!" कांति ने बोलना बंद कर दिया।
शीतल ने कहा, कांति के जाने से एक दिन पहले,

अरे हाँ! तुम यहाँ नहीं हो, तो हेमंत को अपना रियाज़ रोकने की ज़रूरत नहीं है, है ना?
कांति ने भी इस बारे में सोचा था। उसने तुरंत जवाब दिया,
"वे कह रहे थे कि वे मुंबई जा रहे हैं। वे किसी राग का विस्तार सीखना चाहते हैं। अब गुरुजी किसी कार्यक्रम में नहीं जा रहे हैं। इसलिए वे अभी आ गए हैं, इसीलिए उन्होंने मुझे सूचित किया है।"
शीतल ने उसकी ओर देखा, जिससे स्पष्ट रूप से पता चल रहा था कि उसे यह जवाब पसंद नहीं आया; लेकिन कांति ने बात को वहीं रोककर कहा,
आपको छुट्टी लेकर कारखाने में बैठने की ज़रूरत नहीं है। यहाँ के प्रबंधक को काम की अच्छी समझ है। फिर भी, दिन में एक बार घूमकर तैयार कपड़ों को देख लीजिए! हो सके तो दोपहर के भोजन के समय भी घूम लीजिए। इससे आप और भी सतर्क हो जाएँगे!..."
"मैं भी यही कह रही हूँ - अगर ज़रूरत पड़ी तो मैं दोपहर के खाने के समय तुर्कमान गेट से हेमंत को ले आऊँगी और उसे फ्लैट पर छोड़ दूँगी! अब मेरी कार भी एयर कंडीशनर वाली है, है ना?" शीतल ने पूछा।
"ऐसा ही करो! हर रोज कार से मुंबई जाओ!..." कांति ने मुस्कुराते हुए कहा।
■
शीतल के जाते समय कांति ने उसकी बातों पर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया, हालाँकि शिमला गए दो दिन बीत चुके थे, शीतल क्या करेगी, यह बात उसके मन में आई ही नहीं थी। शीतल को समझ नहीं आ रहा था कि मैं अपने बेटे और बहू से मिलने क्यों जा रही हूं और हेमंत मुंबई क्यों जा रहा है। अरे, पटेना - ये तो सबका निजी मामला है, इसीलिए तो ये बात भी नहीं मानती! उसकी सहेली ने बताया कि वो चाहती है कि उसे सब कुछ बताया जाए! इस मामले में तो उसकी भावनाएँ नवविवाहित जोड़ों से भी ज़्यादा तीव्र हैं! अगर मैं अपने पति के सामने थोड़ा सा भी झुक जाऊँ तो वो नाराज़ हो जाती है। हेमंत के यहाँ आने के बाद से ये बहुत संवेदनशील हो गई है! इसमें कोई शक नहीं कि उसकी नज़र हेमंत पर है।
उसने एक बार कहा था,
कुछ बोलो! तुम कितने स्वार्थी हो! क्या तुम्हारा हेमंत कोई चीनी की गुड़िया है जिसे तुम इतना प्यार करते हो? तुम उसे इतना प्यार करते हो कि अगर वह किसी और के हाथों में पड़ जाए तो उसका आधा हिस्सा भी खो जाएगा! क्यों? अगर तुम्हारा दोस्त मेरा भी दोस्त है, तो इसमें क्या बुराई है?
लेकिन क्या हमारे बीच दोस्ती धीरे-धीरे नहीं पनपनी चाहिए? मैं उसे अपनी मनमानी कैसे करने दे सकता हूँ? इसके अलावा, उस पर मेरा क्या अधिकार है?..."
शीतल चुप रही, लेकिन उसने कहा,
"तुम आजकल मुझसे क्यों भाग रहे हो?"
यहां से जाने के बाद वो इस विषय को दोबारा नहीं उठा पाएगी। उसे उठाने दो! मैं उसे मुंहतोड़ जवाब दूंगी और उसका मुंह बंद कर दूंगी! – कांति ने आत्मविश्वास से मन ही मन कहा। साथ ही, उसने खुद को चेतावनी भी दी, हमें ध्यान रखना होगा कि इस मामले का व्यापार पर कोई असर न पड़े! इस मामले में उसमें धैर्य की कमी है। इसलिए हमें इसका ध्यान रखना होगा। इसके अलावा, वो अपनी नौकरी से इतना पैसा कमाती है कि सरकार से भी छुपा सकती है!
अंततः, उसने खुद को समझा लिया – मैं यहाँ पहाड़ी इलाके में इसलिए नहीं आई थी कि उसकी यादों के कारण पेट दर्द से पीड़ित होऊं! अपने हेमंत के साथ एक होने के लिए –
उसने हेमंत को शीतल के बारे में अपने मन में चल रहे एक भी विचार के बारे में नहीं बताया। हेमंत चाहे कितना भी सज्जन क्यों न हो, अगर उसे पता चल जाता कि

उसका हमउम्र दोस्त को उस पर क्रश है, तो कौन जानता कि उसके मन में यह विषय किस हद तक और कैसे फैल जाएगा? उसने कहा कि वह इस बारे में बहुत सोच-विचार करेगी, लेकिन सब कुछ समझने के बाद, हेमंत ने कहा कि उसे शीतल के साथ किसी भी तरह का रिश्ता नहीं रखना चाहिए, वरना सब कुछ अजीब हो जाएगा!
शिमला के शांत वातावरण में, एक और सवाल उसके मन में घूम रहा था। इसके बाद उसका और हेमंत का व्यावहारिक रिश्ता कैसा रहेगा? एक बात तो तय है – उन दोनों के बीच शादी नहीं होनी चाहिए। एक बार रिश्ता बन जाने पर, उनके बीच कोई भावना नहीं रहेगी। उसके मन में भी यह भावना पनप सकती है कि "उसका मेरे सिवा कोई नहीं..." और वह अहंकारी व्यवहार करने लगे।
इसके बाद हमें एक अलग घर बनाकर उसमें रहना चाहिए। हेमंत शाम को वहाँ आएगा। शाम की बातचीत और खाना खाने के बाद वह देर रात अपने पास वाले घर चला जाएगा। उसे मेरा घर भी ऐसे इस्तेमाल करना चाहिए जैसे वो उसका अपना हो; लेकिन वो उसका अपना घर नहीं होना चाहिए! तभी हमारे रिश्ते में मिठास बनी रहेगी!
मुझे उसके जीवन के हर पहलू पर नज़र रखनी होगी। इसमें कोई शक नहीं कि वह बहुत जल्द एक महान कलाकार बनेगा। लेकिन वह कला के व्यावहारिक पक्ष को संभाल नहीं पाएगा! मुझे इस बात का ध्यान रखना होगा। जो लोग उसका कार्यक्रम आयोजित करना चाहते हैं, वे पहले मुझसे संपर्क करें। मैं उस संगठन की जानकारी मांगूंगी और फिर कार्यक्रम की फीस तय करूंगी। यह खबर पूरे भारत में फैलनी चाहिए, "हेमंत मैडम की अनुमति के बिना कोई कार्यक्रम नहीं करता!" बड़े संगीत सम्मेलनों, सभाओं और अन्य जगहों पर, बड़े लोग मुझे देखकर कहेंगे, "यह हेमंत की दोस्त है, हेमंत की प्रेरणा है! हर साधक के पीछे ऐसी महान महिला होती है!"
हेमंत का पैसा कमाना उतना ज़रूरी नहीं है। अगर वो नहीं कमाता, तो मैं उसके साथ हूँ! मैं ये सब किसके लिए कमा रही हूँ? मैं अपनी कमाई का एक हिस्सा हेमंत पर खुशी-खुशी खर्च कर दूंगी!
जब वह इस विचार पर मनन कर रही थी, तभी उसके मन में एक और विचार पनपने लगा। वह हेमंत के पहले सितार वादन कार्यक्रम को आयोजित करने की योजना बना रही थी।
पहला कार्यक्रम किसी बड़े संगीत संगठन द्वारा आयोजित किया जाना चाहिए। थोड़े से पैसे खर्च करके आप इसे आसानी से कर सकते हैं! लेकिन इस बात का ध्यान रखें कि कार्यक्रम सुव्यवस्थित हो। अखबारों में संगीत के बारे में लिखने वालों को विशेष निमंत्रण भेजा जाना चाहिए। उन्हें एक शानदार पार्टी भी दी जानी चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि पहले कार्यक्रम के लिए किसी प्रसिद्ध तबला वादक को आमंत्रित करने पर जोर दिया जाना चाहिए। इसके लिए आवश्यक धन जुटाना मुश्किल नहीं है, जैसे! बनारस के विजय मिश्रा? जी हाँ। यह उपयुक्त रहेगा। इसके बजाय, मैं स्वयं विजय मिश्रा से मिलने जाऊंगा और उनसे निवेदन करूंगा, 'पंडित जी, मैं स्वयं हेमंत जी को आशीर्वाद देना चाहता हूँ। मैं पचास हजार दक्षिणा दूंगा।' दिल्ली, जयपुर, अहमदाबाद, बड़ौदा, पुणे, भोपाल, ग्वालियर, कोलकाता – जहाँ भी आपके परिचित हैं, हेमंत जी के कार्यक्रम के आयोजन के लिए अपना वचन दें। उन्हें वहाँ जो भी मानदेय मिलेगा, वह सब आपका होगा! इस वर्ष वे जितने भी कार्यक्रम करें, सारा मानदेय आपको ही मिलेगा! इसके अलावा, आप ही उनके साथ होंगे। ऐसा माहौल बनाया जाना चाहिए कि हेमंत होन्नाटी पंडित विजय मिश्रा के तबले के साथ ही सितार बजाएँ! लोगों को अपने सवालों और जवाबों के लिए आप दोनों की ज़िम्मेदारी लेनी चाहिए! क्या वे सुनेंगे? पचास हज़ार और पूरे साल का मानदेय देने पर मना करना आसान नहीं होता। एक साल में हमने इतना खर्च

कर दिया है कि अगले साल हम कह सकते हैं – हम तीस हज़ार से कम पर हाथ नहीं लगाते, इसीलिए! मैं यह करूँगा। लेकिन इसे हेमंत पर छोड़ना बेकार है – उन्हें व्यावहारिक ज्ञान नहीं है!
एक दोपहर, उसके बालों में हाथ फेरते हुए, उसके मन में यह विचार आया कि जब भारत में पर्यटन का दौर चल रहा है, तो हमें इंग्लैंड, अमेरिका, कनाडा, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों का दौरा करना चाहिए। बनारस की जीत मिश्रा के लिए तबला वादन के क्षेत्र में हो। इससे हमें विदेशी मुद्रा के रूप में भरपूर धन प्राप्त होगा। इसके अलावा, इस दौरे के दौरान मैं अपनी कंपनी के लिए भी काम करूँगी और अपना व्यवसाय बढ़ाऊँगी। केवल अमेरिका पर निर्भर रहना उचित नहीं है!
भारत में भी कारोबार क्यों न बढ़ाया जाए? अगर शर्टों के नाम सारंग, मल्हार, मेघ आदि रखे जाएं तो कितना अच्छा होगा! हेमंत की तस्वीर का इस्तेमाल विज्ञापन के लिए भी किया जा सकता है! "मैं हमेशा कॉनकॉर्ड कंपनी की सारंग शर्ट पहनता हूँ!" सारंग पहने हेमंत की यह तस्वीर उसकी आँखों के सामने कौंध गई। उसने गहरी नींद में सो रहे हेमंत को इस सोच के साथ देखा - हाँ, सभी लड़कियाँ अपने दोस्तों, पत्नियों और पतियों के लिए यही शर्ट चुनेंगी! बस उसका हेयरस्टाइल बदलना होगा। यह छोटा हेयरस्टाइल नहीं - बल्कि उसे बाल बढ़ाने होंगे और एक अलग हेयरस्टाइल बनवानी होगी!

■

जब वे शिमला से दिल्ली लौटे, तो वहाँ की हवा भट्टी जैसी थी। अगर आप आटे को धूप में रख देते, तो वह अपने आप रोटी बन जाता, इतनी गर्मी थी! जून का अंत थी। आसमान में एक भी बादल नहीं था। कोई भी कलाकार मल्हार राग नहीं बजा रहा था, ताकि राग का अपमान न हो।
वापस लौटते समय कांति ने हेमंत से कहा,
"दो-तीन दिन तक फैक्ट्री या शीतल के घर मत जाना। किसी को यकीन नहीं होगा कि हम दोनों एक ही दिन बैंगलोर और मुंबई से लौटे हैं। मैं तुम्हें अगली सुबह फोन करूंगा।"
कांति ने उसे वसंत विहार के पास छोड़ दिया और उसी टैक्सी से अपने घर चली गई।
उस दिन वह कारखाने गई। उसने शीतल को फोन करके बताया कि वह बैंगलोर से लौट आई है। जब शीतल शाम को कारखाने आई, तो उसने मुस्कुराते हुए कांति से पूछा कि उसके पति और बेटे कैसे हैं। फिर भी, कांति के सतर्क मन ने महसूस किया कि शीतल बेचैन है। कारखाने के कामकाज के बारे में बात करने के बाद, कांति ने कहा,
शीतल, मैंने तुम्हें बहुत याद किया! अगर तीन दिन तक तुमसे मुलाकात न हुई तो मैं सचमुच पागल हो जाऊंगी! चलो, आज ही हदसान चलते हैं..."
"रुको, जी! आज तुम जल्दी घर जा रही हो। क्या तुम अपने पति को फोन करके बताना चाहती हो कि तुम पहुँच गई हो? अगर नहीं, तो यहीं से कर लो - अगर तुम चाहो तो मैं चली जाऊँगी!"
"यह एक असहनीय झंझट है, देखो! लेकिन तुम इसे क्यों चुनते हो?"
फिर भी, शीतल ने रूखेपन से कहा,
नहीं... मुझे जाना होगा। मेरी एक अपॉइंटमेंट है..."
शीतल, मुझे तुमसे बहुत कुछ कहना है! मैं तुम्हारे घर भी आऊँगी, चलो। तुम अपनी कार में जाओ। मैं पीछे आ जाऊँगी। मैं बार-बार यहाँ आना चाहती हूँ, है ना!" कांति भी खड़ी हो गई।
दोनों शीतल के घर के लाउंज में सोफे पर बैठी थीं और एयर कंडीशनर चल रहा था। कांति ने शीतल का हाथ पकड़कर पूछा,
``का, ग? एवढी का अपसेट वाटतेस?"

शीतल को यह एहसास हो गया कि अगर उसने अभी अपने विचारों को नहीं त्यागा तो उसका मन उथल-पुथल में पड़ जाएगा। उसने सिर उठाकर शीतल की ओर देखा। फिर उसने तीखे स्वर में पूछा,
"कांति, सच बताओ! तुम मुझसे झूठ क्यों बोल रही हो? मुझसे झूठ बोलने का मतलब है कि तुम्हें मुझ पर भरोसा नहीं है!" - शीतल की आवाज भावुक हो गई थी।
कांति तुरंत उसकी ओर बढ़ी और उसकी गर्दन में बाहें डालकर पूछा,
मैंने किस बारे में झूठ बोला?
शीतल ने कांति के चेहरे पर अपनी गहरी निगाहें टिका दीं और कहा,
आपने मुझे बताया था कि आप अपने बेटे और पति से मिलने गई थीं! आप बैंगलोर में एक शॉर्ट कोर्स में भाग लेने गई थीं, इसलिए आपने अपने देवर को बताया! सच हो या झूठ! अब मैं आपको साफ़-साफ बता देती हूँ। मुझे शक हुआ, इसलिए मैंने आपके देवर को फोन किया। मैंने अपनी आवाज और नाम बदलकर पूछताछ की। उन्होंने कहा - आईआईएम बैंगलोर में महिला उद्यमियों के लिए एक शॉर्ट कोर्स है, तो फिर! आपने झूठ क्यों बोला!
शीतल, तुमने मुझ पर शक करते हुए उसे क्यों बुलाया? मैं सचमुच अपने बेटे के साथ रहना चाहती थी। अगर मैं कभी-कभार अपने पति के साथ रहने नहीं जाती, तो मेरे बेटे को उसकी विरासत नहीं मिलती! मुझे डर लग रहा था। मुझे लगा कि उसे यह बात बताना शर्म की बात होगी। क्या तुम सबके सामने सब कुछ बता सकती हो? मैंने तुम्हें सच बताया था। लेकिन तुमने मेरी बात पर विश्वास नहीं किया!
शीतल सचमुच घबरा गई थी। लेकिन कुछ ही क्षणों में, उसने खुद को संभाला और एक और मुद्दे को उठाया जो हमें परेशान कर रहा था।
"तुम्हारी साजिश यह है कि जब तुम अकेली हो, तब हेमंत यहाँ आए! इसीलिए तुमने उसे ठीक इसी समय मुंबई भेजा!"
कांति ने पूछा,
"सच बताओ... क्या तुमने उसके घर फोन करके पूछताछ की?"
"सच बोलने में क्या डर है? संगीत नाटक अकादमी के कार्यक्रम सहायक बोल रहे हैं," उन्होंने कहा। फिर उनके पिता ने कहा - "वह गुरुजी से कुछ राग सीखने मुंबई गए हैं, पंद्रह-बीस दिनों में वापस आ जाएंगे!"
तो तुमने मेरी बात पर विश्वास नहीं किया!
मुझे तुम पर शक था!
``किस तरह का संदेह? मुझे स्पष्ट-स्पष्ट बताएं, चलिए देखते हैं! कुछ भी अनकहा नहीं रहना चाहिए। सब कुछ स्पष्ट होना चाहिए! मित्रता में इस तरह का कोई संदेह नहीं होना चाहिए!" कांति ने जोर देकर कहा।
``शक! हाँ। मुझे तुम्हारे और उसके रिश्ते पर शक था – और आज भी है! क्यों, बताओ? तुम उसे सोमवार चौदह तारीख को मेरे घर रियाज़ के लिए लाई थीं। मंगलवार बाईस तारीख को तुम दोनों यहाँ फ़ारसी कालीन पर बैठी थीं – सच बताओ, कांति! शीतल कोई तीन साल की बच्ची नहीं है!"
कांति चौंक गई। वह असमंजस में थी और शीतल की आंखों में देखने की हिम्मत खो बैठी थी। हालांकि, उसने पल भर में खुद को संभाला और कहा,
``क्यों? क्या आपने दस-बीस हजार खर्च करके किसी को हमारी जासूसी करने के लिए रखा था? या आपने घर में स्वचालित कैमरे लगवाए थे? वाह! आपने तो बहुत अच्छी दोस्ती बनाए रखी है!"
``जो हुआ वो साफ है। तुमने उसे रहने की जगह दिलवाई। इसके पीछे क्या वजह हो सकती है? मैं ये नहीं कह रही कि तुम्हें उसके संगीत में मदद नहीं करनी चाहिए। लेकिन इस प्रेम में ऐसा कोई रिश्ता नहीं है, इसलिए अगर कोई तुम्हें

बताएगा भी तो तुम यकीन नहीं करोगे! मैं ये नहीं कह रही कि ये गलत है। लेकिन तुमने ये मुझसे क्यों छिपाया? क्या प्यार बस इतना ही होता है? क्या तुम्हारा दोस्त मेरा भी दोस्त नहीं हो सकता? तुमने मुझे कभी पैसों या व्यापार के मामलों में धोखा नहीं दिया। लेकिन इस मामले में तुम्हारा बर्ताव स्वार्थी है। तुम्हारे सिवा मेरा और कौन है? इसीलिए मैं तुम्हें सब कुछ खुलकर बता रही हूँ, दिल में कुछ छिपाए बिना!"
शीतल अब अधिक खुलकर बोलने लगी,
"जब से तुम दोनों यहाँ मिलने लगे हो, मैं यहाँ हर दिन हर कोने को बारीकी से देख रहा हूँ। मैंने चश्मा लगाकर भी ध्यान से देखा। एक दिन मुझे कालीन पर कुछ दिखा, तो मैंने देखा। कालीन के बीचोंबीच निशान थे जहाँ तुमने गीले कपड़े से पोंछा था!"
कांति को समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे।
तुम सब कुछ खुद ही संभाल रही थी; लेकिन मैं तुम पर कड़ी नज़र रखती थी। तुम कब जाती हो, कब आती हो, यहाँ तुम दोनों कितना समय साथ बिताती हो? बाईसवें दिन के बाद, तुम हर दिन डेढ़ घंटा यहाँ रहती थी। अब भी, मेरी बात समझो। तुम्हारे व्यवहार के बारे में मुझे कुछ नहीं कहना... मैं तुम्हें दोष भी नहीं देती! तुमने यह बात मुझसे क्यों छिपाई, बस यही मेरा सवाल है!
कांति अब ठीक हो चुकी थी। उसने कहा,
“सितार सुनते हुए खाना खाते समय, तुम्हारे हज़ारों रुपये के कालीन पर सब्ज़ी का एक दाना गिर गया और मैंने उसे पोंछ दिया, तुमने ऐसा क्यों सोचा? तुम किस तारीख और किस मंगलवार की बात कर रही हो – मुझे बिलकुल याद नहीं। देखो, तुम एक बेहतरीन कहानीकार बन सकती थीं! शीतल प्यारी! तुम मुझ पर इतना अविश्वास क्यों करती हो? मेरी बदकिस्मती – और क्या!” आह भरते हुए, कांति शीतल की ओर बढ़ी और उसके होंठों को गहराई से चूम लिया। शीतल की पीठ पर हाथ फेरते हुए, उसने फिर भावुक होकर मुंह बनाया, “नहीं, गा, मुझ पर इतना अविश्वास मत दिखाओ!”
शीतल ने इन दिनों में कई बार कांति को बड़े प्यार से चूमा था; लेकिन कांति ने कभी इस तरह पहल नहीं की थी। इस अनुभव से शीतल का मन शांत हो गया। उसकी आँखों में आँसू भर आए। कांति का चेहरा दोनों हाथों में लेकर उसने करुणा से कहा,
``कैंटिडियर! किसी भी आदमी पर भरोसा मत करो। हेमंत पर भी भरोसा मत करो। अगर सितार सुनना है तो पैसे देकर कार्यक्रम में जाओ और जितनी चाहो उतनी लाइव रिकॉर्डिंग सुन लो। वो तुम्हें धोखा देता है! मैं अपनी प्रेमिका को धोखा देते हुए बर्दाश्त नहीं कर सकता! मेरे पास तुम हो और तुम्हारे पास मैं हूँ!..."
कांति धीरे-धीरे अपने हाथों को अपनी पीठ पर फेर रही थी।

■

उस दिन घर लौटते समय कांति के मन में एक सवाल बार-बार आ रहा था। मैंने शीतल को साफ-साफ क्यों नहीं बताया कि मेरा हेमंत से ऐसा रिश्ता है? उसके बाद हर दोपहर उससे मिलना मुमकिन नहीं रहा। शीतल जानबूझकर घर आती थी। उसे डर था कि अगर उसने ऐसा किया तो शीतल फिर से उसके होंठों पर चुंबन करके कहेगी, "अगर तुम मुझ पर इतना अविश्वास दिखाओगी तो मुझे तुम्हारी दोस्ती नहीं चाहिए!" मैंने सोचा था कि यह दोस्ती अब तक इतनी पक्की थी, तो इसे टूटने में ज्यादा समय नहीं लगेगा! लेकिन अगर बात और बढ़ गई तो यह उसकी सहनशीलता से परे हो जाएगा। भले ही कांति ने हेमंत के सामने अपने और हेमंत के भविष्य का मुद्दा न उठाया हो, उसे पूरा भरोसा था कि वह कभी उसके विचारों का विरोध नहीं करेगा। मैं व्यापार में उसे कभी धोखा नहीं दूंगी। लेकिन अगर इस मामले की वजह से वह साझेदारी से पूरी तरह पीछे हट गई, तो मुझे

सारी ज़िम्मेदारी लेने के लिए तैयार रहना चाहिए। किसी भी हालत में वह अपनी सरकारी नौकरी नहीं छोड़ेगी!
वह दुविधा में थी कि सुबह किए वादे के मुताबिक हेमंत को फोन करे या नहीं। अगर वह बिना फोन किए आ गया तो? अगर वह आ गया तो वह उसकी तड़प समझ जाएगी! लेकिन अगर वह नहीं आया तो? नहीं। उसे फोन करना ही होगा। ऐसा लग रहा था जैसे उससे मिले हुए सदियां बीत गई हों!
फिर भी, उसने खुद को संयमित किया और उसे फोन किए बिना, हमेशा की तरह 12:30 बजे तुर्कमान गेट पर पहुँच गई। एयर कंडीशनर चालू करके और इंजन स्टार्ट करके, वह उसका इंतज़ार करने लगी—बाहर चिलचिलाती धूप में उसकी आँखें उसे ढूँढ रही थीं।
घड़ी की सुइयाँ टिक-टिक करने लगीं और उसे लगा कि वह नहीं आएगा, उसका गुस्सा और बढ़ गया। तभी उसने उसे आते देखा, चिलचिलाती धूप में उसकी कार ढूँढते हुए, हाथ में सितार लिए! उसकी नेहरू शर्ट पसीने से भीगी हुई थी। हाँ! वह भी मेरी ही तरह सोचता है! हमारे दिल एक साथ धड़कते हैं!
अगर मेरा अपना स्वतंत्र घर होता, तो मुझे किसी से डरने की ज़रूरत नहीं होती। अगर कोई मुझसे कुछ पूछता, तो मैं बस यही कहती कि मैं दोस्त हूँ! मैं किसी पर ज़्यादा ध्यान नहीं देना चाहती थी। मम्मी-पापा भी पूछते, तो मैं यही जवाब देती। शीतल भी पूछती, तो मैं यही जवाब देती!
उन्होंने अपना सितार पिछली सीट पर रखते हुए और उसके बगल में बैठते हुए कहा,
मुझे संदेह था कि तुम आओगे या नहीं। क्योंकि तुम्हारी तरफ से कोई संदेश नहीं आया था। फिर भी, मुझे लगा कि तुम बिना आए नहीं रहोगे। इसलिए मैं दौड़ता हुआ आया!..."
उसका दिल खुशी से भर गया। उसका चेहरा खिल उठा। उसने कार की रफ्तार बढ़ा दी। शीतल के घर में एयर कंडीशनर चालू करते हुए और उसकी बाहों में समाते हुए, उसने एक पल के लिए सोचा - अगर वह अभी आ जाए तो क्या होगा? फिर उसने सोचा, वह नहीं आएगी - उसमें इतनी हिम्मत नहीं है!
शीतल सचमुच नहीं आई। इतना ही नहीं, जब वह शाम को कारखाने आई तो खुश थी। यह देखकर कांति ने भी कहा,
``हेमंत आज सुबह मुंबई से आया था। मैंने उसके घर जाकर पूछताछ की और पता लगाया। मैंने उसे दोपहर में आपके घर छोड़ दिया।"
इससे शीतल का उत्साह भी कम नहीं हुआ। बाद में, जब दोनों अपनी-अपनी कारों से शीतल के घर गए, तो उसने मुस्कुराते हुए हेमंत से मुंबई की गर्मी और पसीने के बारे में पूछा। उसने यह भी पूछा कि उसने विशेष रूप से कौन सा राग सीखा है और फिर कहा,
आप कहते हैं, "बेशक, मुझे रागों की पहचान भी नहीं है! फिर भी, मुझे संगीत से प्रेम और सम्मान है! आप यहाँ एक भी दिन अनुपस्थित नहीं रहते और अभ्यास करते रहते हैं! चाहे धूप हो या न हो, चाहे गर्मी हो या सर्दी-जुकाम—"
कांति को यह भी अहसास हुआ कि यह शीतल द्वारा उसे प्रदत्त एक विशेष सुख था।

■

रात के दस बज चुके थे। हेमंत जब सोने की तैयारी कर रहा था, तभी उसकी मां ने दरवाजे पर दस्तक दी और अलविदा कहा।
"कोई तुम्हें बुला रहा है, देखो!"
कौन?
``कुछ विदेशी हैं। ले लो..."

जैसे ही उसने लिविंग रूम में रिसीवर उठाया, उसने अपने पिता द्वारा रिसीवर को अपने बेडरूम में रखने की आवाज सुनी।
``क्या आप होन्नाटी हैं? सितार वादक?``
मैं उसकी आवाज से अमेरिकी लहजा पहचान सकता था। उसने पूछा,
"क्या आप मुझे पहचानते हैं? मैं जॉन वायल हूं!"
जी हाँ! नमस्कार! आप कहाँ से हैं? क्या सब ठीक है?
मैं दिल्ली से बोल रहा हूं। मैं अमेरिका जा रहा हूं। मेरी कल रात की फ्लाइट है। मैं हमेशा के लिए जा रहा हूँ। मैं फिर कभी ऐसे देश में नहीं आऊँगा - कभी नहीं! जाने से पहले मैं किसी को अलविदा नहीं कहना चाहता। आप भी तो नहीं, कहिए! लेकिन मैंने सोचा कि आपको बता दूं - मैं आपके संगीत को कोसूँगा और फिर चला जाऊँगा! मेरे पास आपका फ़ोन नंबर भी नहीं था। मैंने डायरेक्टरी में ढूँढा। इतनी रात को आपको परेशान करने के लिए माफ़ कीजिएगा!
कुल मिलाकर, जॉन बहुत परेशान लग रहा था। हेमंत ने पूछा,
"तुम अचानक क्यों जा रहे हो?"
"यह जानकर किसी को क्या फायदा होगा?" उनकी आवाज में क्रोध और खेद स्पष्ट रूप से झलक रहा था।
जॉन, मैं कल सुबह जल्दी तुम्हारे घर आऊँगी। मुझे जानना है कि तुम इस तरह क्यों जा रहे हो!
क्या आपको रात को जल्दी सोने की आदत है?
नहीं। क्यों?
कुछ नहीं।
अगर आपको जल्दी सोने की आदत नहीं है, तो क्या मैं अभी आ सकता हूँ? मैं एक बार आपके घर आया था। उसके बाद आपने मुझे कई बार फोन भी किया था। लेकिन मैं नहीं आ सका। आपका घर पटेलनगर में टैक्सी स्टैंड के बाईं ओर है, है ना?
मुझे पता है आपके पास गाड़ी नहीं है। मैं आपको लेने आ जाता। लेकिन मैंने कल गाड़ी बेच दी। खरीदार उसे कल ही ले गया..."
मुझे यहीं रहने दो—मुझे यहीं रहने दो। मैं एक रिक्शा ले लूंगा।"
वह घर से यह कहकर निकला कि वह बहुत देर से घर आएगा या शायद सोने के समय तक घर नहीं आएगा।
जब वह जॉन के घर पहुंचा, तो सारा सामान पहले से ही पैक था। चूंकि अधिकांश फर्नीचर मालिक का था, इसलिए उसे पैक करने का कोई सवाल ही नहीं था।
जॉन ने कहा,
“चलो, होन्नाटी। मुझे लगा था कि तुम्हारे देश से जाते समय तुमसे चार वाक्य भी कहने को नहीं मिलेंगे। जैसे ही मुझे तुम्हारा नाम याद आया, मैंने रात को भावुक होकर तुम्हें फोन किया और तुम्हें परेशान कर दिया – माफ़ करना! लेकिन मेरे पास इसके लिए भी समय नहीं था...” इतना कहकर जॉन चुप हो गया।
जॉन आधी बाजू की कमीज पहने सामान पैक करने में व्यस्त था, जिसके कारण उसके हाथ और कपड़े धूल से भर गए थे।
हेमंत ने कहा,
"आपने मुझे पहले क्यों नहीं बताया? हेलेन कैसी है? वह ठीक नहीं लग रही..."
यह सुनकर जॉन का चेहरा और भी गंभीर हो गया। लेकिन अब हेमंत को कुछ अंदाजा हो गया था। ऐसा लग रहा था कि वह घर पर नहीं है। ऐसा लग रहा था कि वह घोर निराशा में घर के लिए निकल गई है। अब ऐसा लग रहा था कि वह भी जा रहा है!
हेमंत चुपचाप सोफे पर बैठा रहा। जॉन ने आराम से एक डिब्बे की पैकिंग दोबारा जांची।

कुछ देर बाद जॉन ने कहा,
माफ़ कीजिए! मैंने आपको खुद ही फ़ोन किया था! लेकिन मुझे नहीं लगता कि अब मुझे किसी को कुछ बताना चाहिए। कृपया गलत न समझें, ठीक है? ये बिस्कुट और सेब ले लीजिए..."
``गलतफहमी का तो सवाल ही नहीं उठता। लेकिन मुझे लगता है कि अगर आप किसी से खुलकर बात कर सकें तो ज़्यादा आसानी होगी। मुझे एक दोस्त के साथ अपनी भावनाएं साझा करने की संतुष्टि भी मिलेगी। भले ही हम अक्सर नहीं मिले हैं, लेकिन संगीत के मामले में हम अच्छे दोस्त हैं!..."
``...श्री होन्नाटी!..." जॉन गुस्से से आग बबूला हो गया, ``...आपका संगीत! दुनिया में आपको इससे ज़्यादा धोखे वाली चीज़ कहीं नहीं मिलेगी! मैंने सोचा था कि आपका संगीत आपकी संस्कृति का प्रतीक है। रहस्यमय और प्राचीन—! लेकिन अब मैं समझ गया—यह महज़ एक अर्थहीन, अव्यवस्थित तत्व है! मैं आपको यह क्यों बता रहा हूँ—इतने सारे जाने-माने भारतीयों में से मैं आपको ही क्यों बता रहा हूँ?—अब मुझे समझ आ रहा है! आप एक संगीतकार हैं! वही जो भारतीय संस्कृति स्थापित करने का दावा करते हैं!—"
हेमंत को जॉन की बात समझ नहीं आई। लेकिन उसे आभास हुआ कि इसके पीछे कोई दिल दहला देने वाली कहानी है। उसने जॉन का हाथ पकड़ा और उससे आग्रह किया,
``क्या हुआ, जॉन? मुझे सब कुछ बताओ! इधर आओ..."
हेमंत ने उसे सोफे पर बिठाया और खुद भी बैठ गया।
कुछ ही क्षणों में जॉन का गुस्सा शांत हो गया।
कुछ क्षणों बाद, उन्होंने खुद को संभाला और कहा,
माफ़ कीजिए! बहुत-बहुत माफ़ कीजिए! कहीं न कहीं मेरा गुस्सा निकल रहा है! मैंने आज रात आप सबको फ़ोन किया – सुनिए, सुनिए। इस देश की संस्कृति – या यूं कहूं, जिसे मैं इस देश की संस्कृति कहा करता था – कुछ साल पहले मुझे बहुत आकर्षित करती थी! मैंने तय किया था कि हम इस देश में यथासंभव लंबे समय तक रहेंगे – अपने कृषि ज्ञान का उपयोग इस देश के लिए – यहाँ के लोगों के लिए करेंगे। यहाँ के लोगों का घमंड, यहाँ की गरीबी, यहाँ की गंदगी, सड़कों पर घूमते मवेशी-कुत्ते-अन्य जानवर, सड़क किनारे गंदगी और गोबर, सब्जी की दुकानों में चार पैसे के लिए भी वजन में हेराफेरी, यहाँ की रिश्वतखोरी, यहाँ का आलस्य – भले ही यह दिखाई देता था, फिर भी लगता था – ये लोग सीधे-सादे हैं – इनका आध्यात्मिक आधार है – ये अपनी पत्नियों को छोड़कर सभी महिलाओं को मां-बहन-बेटी की तरह देखते हैं! हमारे पूर्वज भी गंदे थे – मैं खुद को यही समझा रहा था। मैंने यहाँ के स्थानीय पहनावे, खान-पान और सोच को अपनाकर अंततः इस देश का नागरिक बनने का फैसला कर लिया था। अमेरिका में इंसान और इंसान के बीच कोई संबंध नहीं है। अगर कोई सड़क पर चलते हुए पता पूछता है, तो जवाब में यही आएगा कि पता नहीं है। लेकिन अगर पता बता दिया, तो वही सही पता होगा। पर यहाँ मैंने देखा है – पता न होने पर भी, झूठ बोलो। बेवकूफी भरा धोखा!
हेमंत जॉन के लंबे भाषण को ध्यान से सुन रहा था।
"उसने भी यह सब सहा! क्यों, आप जानते हैं? अमेरिका में आप अपनी पत्नी को किसी दोस्त के पास नहीं छोड़ सकते, चाहे वह कितना भी करीबी क्यों न हो। ऐसे में, यह सिर्फ दोस्त पर भरोसे का सवाल नहीं है – ऐसे में तो आपको अपनी पत्नी पर भी भरोसा करने की ज़रूरत नहीं है! उस समाज में, मां-बहन-बेटी का बहाना भी मुमकिन नहीं है। यहाँ हालात ऐसे नहीं हैं। यहाँ पुरुष काम में व्यस्त रहते हुए अपनी पत्नियों की चिंता किए बिना आराम से रह सकते हैं। यह स्थिति भरोसे के

लिए बेहद ज़रूरी है। यहाँ की दुनिया और जीवन को देखकर मुझे इस देश से प्यार हो गया, जो इसी भरोसे पर आधारित है!”
"तो?" होन्नाटी ने पूछा। लेकिन अब उसके विचार अस्पष्ट दिशा में जा रहे थे। हालाँकि उसकी निगाहें जॉन के चेहरे पर टिकी थीं, फिर भी उसकी आँखों के सामने कई और दृश्य मंडरा रहे थे।
"जब कोई किसी का विश्वास तोड़ता है, तो व्यक्ति क्रोधित हो जाता है। इसीलिए मुझे लगता है कि यहाँ अधिकतर हत्याएँ पुरुषों और महिलाओं के बीच होती हैं। यहाँ रहते हुए अखबार पढ़ने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ।"
हेमंत को अब समझ आ गया था कि जॉन के शब्द हेलेन के बारे में थे। लेकिन उसके लिए यह कल्पना करना असंभव था कि तीसरा व्यक्ति कौन हो सकता है। वह ज़रूर कोई भारतीय होगा जो कृषि विज्ञान भवन में उसके साथ काम करता था।
जॉन ने बोलना बंद कर दिया और कहा,
माफ़ करना! सब कुछ बताने की क्या ज़रूरत है, बताओ! मैं फिर भी बता दूँगा। शायद इससे मेरा दिल का दर्द कम हो जाए! क्या हुआ, बताओ? चार-पाँच महीनों से मुझे लग रहा था कि हेलेन का मेरे प्रति लगाव कम हो गया है। वो हमेशा की तरह ही बर्ताव करती और बोलती थी। लेकिन मेरे अंदर की गर्मजोशी गायब हो गई थी। उस समय तो मुझे समझ नहीं आया था - लेकिन अब जब मैं इसके बारे में सोचता हूँ तो समझ आता है। पिछले हफ्ते एक दिन उसने कहा - जॉन, मुझे तुम्हें कुछ बताना ही होगा - नहीं तो हमारे बीच दरार पड़ जाएगी। मैं हरिशंकर से प्यार करती हूँ। तुमने कुछ गलत किया है - तुम बिल्कुल भी बुरे नहीं हो। तुम सच में बहुत अच्छे हो! लेकिन मुझे उससे प्यार हो गया है।
उसे समझ नहीं आ रहा था कि हेमंत से क्या कहे।
हेलेन अमेरिकी है। उसने ऐसा व्यवहार किया। उसका केवल एक पति है, इसलिए उसके लिए अपनी इच्छा के विरुद्ध किसी के साथ रहना असंभव है! एक अमेरिकी महिला का सवाल यह है कि उसे इस तरह क्यों रहना चाहिए? दोनों हाथों से ताली बजती है। क्या एक भारतीय पुरुष अपनी पत्नी या भावी पत्नी को छोड़कर सभी महिलाओं को माँ, बहन और बेटी नहीं मानता? तो फिर उसे ऐसा क्यों करना चाहिए?
"क्या हरिशंकर का यही मतलब था?"
क्या वे विश्वविद्यालय में प्रोफेसर नहीं हैं? वे दिल्ली के विभिन्न संगठनों में भाषणों में, देश-विदेश के विद्वानों के बीच होने वाली चर्चाओं में बार-बार यही बात दोहराते रहते हैं! क्या यही तो "पर-दारा-सहोदर" का मतलब नहीं है? इसका क्या अर्थ है? मैंने ये सब बातें हरिशंकर के मुंह से कम से कम सौ बार सुनी हैं!
अब हेमंत को भी याद आया – यह हरिशंकर विवाहित है – उसने यह भी सुना था कि उसकी पत्नी और बच्चे बनारस में रहते हैं –
जॉन ने पूछा,
श्री होन्नाटी, आप स्वयं बताइए। क्या हरिशंकर ने मुझे धोखा दिया? क्या आपकी भारतीय संस्कृति एक धोखा है? उन्होंने भारतीय संस्कृति और शास्त्रीय संगीत पर एक लंबा लेख भी लिखा था - आपने भी तो पढ़ा होगा!
हालाँकि होन्नाटी यह समझता था कि एक व्यक्ति के व्यभिचार के लिए पूरे समाज, संगीत और संस्कृति को ज़िम्मेदार ठहराना गलत है, फिर भी वह देख सकता था कि इनमें से कोई भी जवाब जॉन की मानसिक स्थिति को संतुष्ट नहीं करेगा। अब जॉन भी बैठ गया था, मानो उसने अपनी सारी बातें कह दी हों।
हेमंत को समझ नहीं आ रहा था कि जॉन से इस बारे में क्या कहे। वह जॉन की हालत को लेकर भी चिंतित था। हरिशंकर को ऐसा नहीं करना चाहिए था। यह समझना नामुमकिन है कि यह सब कैसे शुरू हुआ। अगर पहल उसने ही की थी,

तो भी उसे संयम बरतना चाहिए था। वह बत्तीस या चौंतीस साल की थी - वह पैंतालीस साल का था। इसके अलावा, वह दिखने में भी सुंदर था - लंबाई में वह उससे एक इंच छोटा था! अपने पति को छोड़ने के बाद वह उसके आकर्षण में कैसे पड़ सकती थी?
हेमंत के दिमाग में कई सवाल उठ रहे थे, लेकिन उसका दिल जॉन को घेरने वाले यातना कक्ष में फंसा हुआ था। कहीं भीतर से हरिशंकर के प्रति क्रोध उमड़ रहा था। उसका मन कर रहा था कि वह उसे एक बात कह दे –
हेमंत की निगाहें जॉन के चेहरे पर टिकी थीं। जॉन का चेहरा? – उम – रवींद्र का चेहरा – फिर मेरा? हरिशंकर का?
छे: कांति स्वतंत्र है – उसकी पत्नी नहीं है –
लेकिन इस विचार से मेरे मन का भ्रम दूर नहीं हुआ। हमारी वह अनूठी प्रेरणा—अरे—यह विचार भी सतही है!
वही जॉन उठा। कुछ सोचते हुए वह अंदर चला गया। जब वह बाहर आया तो उसके हाथ में एक प्लास्टिक की थैली थी। वह बहुत सारी चीजों से भरी हुई थी। थैली को हेमंत के सामने रखते हुए उसने कहा,
इसमें आपकी शास्त्रीय संगीत की कैसेटें हैं। ये भारत के सभी प्रसिद्ध गायकों द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों में गाए गए संगीत की ऑडियो टेप हैं। इसमें लगभग पाँच सौ घंटे का संगीत है। प्रत्येक कैसेट पर कलाकार, संगतकार, तिथि, समय, स्थान, राग आदि जैसी जानकारी लिखी हुई है। क्या आपको वह दिन याद है जब आपने हमारे घर पर बिना किसी संगत के केवल आलापी की थी? वह कैसेट भी इसमें है। मेरी राय में, आपका शास्त्रीय संगीत धोखा है, तो मैं इसे क्यों ले जाऊं? हरिशंकर ने हमें इनमें से आधे से अधिक कैसेटें दी थीं। भला कौन ऐसी यादें अपने साथ ले जाना चाहेगा? मेरा तो मन कर रहा था कि इस थैले पर पेट्रोल डालकर आग लगा दूं! लेकिन जब मुझे आपकी याद आई, तो मुझे लगा कि इसे आपको दे देना चाहिए। इसलिए मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप इसे अपने साथ ले जाएं! ऐसा करके आप मुझे एक बहुत बड़ी मुसीबत से बचा लेंगे!
जॉन ने बोलना बंद कर दिया, लेकिन होन्नाटी अभी भी वहीं बैठा था। उसने कहा,
"अब आप जाइए। अगर दूसरा शो खत्म हो गया, तो आपको बाद में कोई वाहन नहीं मिलेगा।"
होन्नाटी खड़ा हुआ, पर उसे समझ नहीं आ रहा था कि जॉन से क्या कहे। "बहुत बुरा हुआ! - ऐसा नहीं होना चाहिए था -" उसकी आँखों में आँसू भर आए। लेकिन बिना कुछ दिखाए वह बाहर चला गया। जॉन भी उसके पीछे-पीछे गया। पता नहीं उसने आँसू देखे या नहीं - दोनों कुछ कदम सड़क पर बिना कुछ बोले चलते रहे। हेमंत ने सामने से आ रहे एक रिक्शा को रोककर रिक्शा में बैठ गया। जॉन ने कैसेट का बैग अपने पास रखा और "अलविदा -" कहते हुए एक सिपाही की तरह सलाम किया और कड़े कदमों से पीठ फेरकर घर लौट गया।

■

जब वह घर पहुँचा और घंटी बजाई, तो उसकी माँ ने दरवाज़ा खोला। वह अपने कमरे में गया और सो गया। आधी रात के साढ़े दो बजे वह एक घंटे की नींद के बाद उठा, लेकिन उसे वह मानसिक शांति नहीं मिली जिसकी उसे प्राकृतिक नींद से ज़रूरत थी। इसी बीच, वह नींद में कराहते हुए एक बार जागा और फिर सो गया। वह जागा। फिर उसे नींद नहीं आई। समय क्या हुआ था? उसने बिस्तर का स्विच चालू किया और देखा, साढ़े तीन बज रहे थे। जब वह दोबारा सोने के लिए बिस्तर ठीक कर रहा था, तो उसे जॉन की कही बात याद आई। उसने कहा था, तुम्हारा संगीत एक बड़ा धोखा है!
हेलेन और हरिशंकर द्वारा जॉन के साथ किए गए विश्वासघात और भारतीय संस्कृति तथा उससे जुड़े संगीत के बीच क्या संबंध है? किसी एक व्यक्ति के

व्यवहार के आधार पर पूरी संस्कृति के बारे में एक विशेष्ट राय बनाने का क्या औचित्य है?
लेकिन फिर उन्हें जॉन का शास्त्रीय संगीत के प्रति जुनून याद आया - एक बैठक के दौरान, जब आयोजक तबला वादक को बुलाने में व्यस्त थे, तो जॉन खुद जाकर अपनी कार में एक लड़के के साथ तबला वादक को ले आए थे। वह हमेशा एक संगीतकार की सेवा के लिए तत्पर रहते थे। मैंने संगीत के प्रति ऐसा असीम प्रेम कहीं नहीं देखा।
हेमंत के मन में वाक्य पूरा होने से पहले ही रविंद्र का चेहरा उसकी आँखों के सामने कौंध गया। उसने मुझे अपने बेंगलुरु वाले घर में सिर्फ संगीत के लिए रखा था - उसने मेरे लिए कमलपुर जाने का इंतज़ाम किया - ताकि मुझे रियाज़ के लिए खूब समय मिल सके, उसने सुबह भी यही किया - उसने खाना बनाया और परोसा - जॉन की पत्नी हरिशंकर से बहुत प्रभावित हुई - मैंने और क्या किया?
हेमंत की आँखों के सामने, जॉन के चेहरे पर दिख रही पीड़ा, विश्वासघात का दर्द, रविंद्र के चेहरे पर भी उभरने लगा। उस क्षण, रविंद्र को लगा मानो उसकी साँसें रुक गई हों। उसे लगा मानो वह इसी क्षण मर जाएगा। एक ओर तो वह भयभीत था। लेकिन जैसे ही उसकी साँसें सामान्य हुईं, उसे यह दृढ़ निश्चय महसूस हुआ कि काश उसकी साँसें रुक गई होतीं।
जब वह बिस्तर पर लेटा हुआ कपड़े बदल रहा था, तो उसे अपने प्रति घृणा का गहरा एहसास हुआ। कौन जानता था कि हरिशंकर जॉन के बारे में क्या सोचते थे? हालांकि, जॉन हरिशंकर को भारतीय संस्कृति का विद्वान मानता था। उन दोनों के बीच एक साधारण मित्रता रही होगी। फिर भी, उसे बार-बार यह महसूस होता था कि हरिशंकर का व्यवहार स्वीकार्य नहीं था।
उसका शरीर पसीने से तरबतर था। वह उठा और बाथरूम गया, दांत साफ किए और स्नान किया। पानी पड़ने के बाद उसके शरीर का भारीपन कुछ कम हो गया था, लेकिन मन का भारीपन वैसा ही बना रहा।
उस दिन गुरुजी तबला बजाने नहीं आए थे। गुरुजी के सामने आलाप बजाते हुए उनका मन अंतर्मुखी हो गया। यह भाव उनके अंतर्मन तक पहुँच गया और वे आरती की अनुभूति में लीन हो गए। कुछ क्षण बाद, उन्होंने अपना ध्यान गुरुजी की ओर लगाया और उन्हें लगा जैसे गुरुजी कह रहे हों, "इसे ऐसे बजाना चाहिए... इसे ऐसे करना चाहिए..." वे फिर अंतर्मुखी हो गए और मधुर ध्वनियों में लीन हो गए। उसी मधुरता से घिरे हुए उनका मन फिर से जॉन की समस्या में डूब गया।
यह सिलसिला कब से चल रहा था, कौन जाने! उसका मन उसे बता रहा था – मैंने ज़ख्म को छुपाने के लिए मुखौटा पहन रखा था। कभी-कभी मुखौटा हट जाता था, लेकिन मैं उसे एक दूसरे आवरण से ढक लेता था, जिसे कला की स्वतंत्रता कहता था। अगर यह ऐसे ही चलता रहा, तो झूठ का यह खेल चलता रहेगा। इसे आज ही खत्म होना चाहिए। मुझे खुद को इससे अलग करना होगा और इससे नाता तोड़ना होगा – इस विचार ने उसे मुक्ति का अहसास कराया।
गुरुजी के घर से निकलते समय उसने तय कर लिया था कि वह इसके बाद उससे नहीं मिलेगा। फिर भी, उसे डर था कि अगर वह बिना बताए उससे मिलने से बचता है, तो वह गुरुजी के घर आ जाएगी या अपनी माँ को बुला लेगी, इसलिए उसने यह भी जान लिया कि बेहतर यही होगा कि वह उससे खुलकर बात करके इस रिश्ते को तोड़ दे। अगर सिर्फ शारीरिक संपर्क से बचना संभव नहीं था, तो उसे उसकी दोस्ती पूरी तरह से ठुकरा देनी चाहिए थी। हमेशा की तरह, वह रिक्शा में बैठा और तुर्कमान गेट की ओर चल पड़ा।
जब वह गाड़ी चलाकर जा रही थी, उसकी सितार पिछली सीट पर रखी थी, उसकी निगाहें सामने वाले टक पर टिकी हुई थीं। उसके भावहीन चेहरे को देखकर, उसने गाड़ी चलाते हुए कहा,

"क्यों, भाई? क्या हुआ? तुम चुप क्यों हो?"
उन्हें लगा कि इस मोटर यात्रा के दौरान उन्हें जो कुछ भी कहना है, वह कहने की पूरी आजादी होनी चाहिए, जिससे आगे की बातचीत में और रंग भर जाए। लेकिन फिर, ड्राइवर का ध्यान भटकाना खतरनाक होता है। यह याद रखते हुए उन्होंने कहा,
कुछ नहीं। मुझे आपको एक बात बतानी है, मैं वहां पहुंचकर बता दूंगा।
लिफ्ट ऊपर जाने के बाद, उसने फ्लैट का दरवाजा खोला और एयर कंडीशनर चालू कर दिया, और हमेशा की तरह, उसने अपना लंच बॉक्स खोला जो वह अपने साथ लाई थी। खाते समय शरारती बातें करना उनका रोज़ का खेल था। लेकिन आज, उसे उसकी बातों से घिन आ रही थी। वह उसे बताना चाहता था, अगर उसने नहीं बताया, तो वह ऐसी बकबक में डूब जाएगी। उसे पोलिवझा खाते समय भी उसे ताने मारने की आदत थी। अब तो यह ख्याल भी उसे परेशान कर रहा था। लेकिन अगर उसने खाने से पहले उसे बताया, तो उसे फूड पॉइज़निंग हो सकती थी। आखिरकार, उसने उसे बता दिया,
"आज हम यहीं भोजन की मेज पर खाना खाएंगे।"
जब वह एक कुर्सी पर बैठी, तो वह सामने वाली दूसरी कुर्सी पर बैठ गया और अपने लिए अलग थाली में पोल-भागी परोस ली। यह देखकर कि उसने एक ही थाली में खाने की अपनी आदत को छोड़ दिया है, उसने पूछा,
"बोलो, तुम क्या कहना चाहते थे?"
"कुल क्या हुआ..." हेमंत ने उसे पिछले दिन की सारी बातें बता दीं। जैसे ही उसने जॉन-हेलेन और हरिशंकर की कहानी सुनाना शुरू किया, कांति को सब कुछ स्पष्ट हो गया। फिर भी, उसने उसे सब कुछ बताने दिया और फिर सहजता से कहा,
"इसमें नया क्या है? मुझे तो हमेशा से पता था कि उन दोनों के बीच कुछ तो है! मैंने तुम्हें भी बताया था! - याद है?"
उसने याद करने की कोशिश की। उसने उसे बताया होगा। लेकिन वह याद नहीं कर पाया। उसने कहा,
"इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उनके मन में वह भावना है या नहीं। मुझे पता है कि कोई भी पुरुष और महिला इस तरह का रिश्ता रख सकते हैं। लेकिन क्या हरिशंकर ने अपने दोस्त के साथ अन्याय किया, यही सवाल मुझे परेशान करता है!"
उसने उसे तीखी निगाहों से देखा, मानो उसके मन में चल रही उलझन को दूर करने की कोशिश कर रही हो। उसकी आँखों में उलझन देखकर उसने तीखे स्वर में कहा,
"किसी एक व्यक्ति से प्यार करते हुए किसी तीसरे व्यक्ति के साथ सोना, उस व्यक्ति से प्यार करते हुए उसके साथ यौन संबंध बनाना, उसके पति के सामने उसे बहन कहना - क्या इस तरह का रिश्ता एक मज़ाक नहीं है?"
उसके मन में भ्रम और भी बढ़ गया। उसे दो मिनट तक इसी भ्रम में रहने देने के बाद, उसने शांत और तिरस्कारपूर्ण स्वर में कहा,
"हरिशंकर, जिन्होंने लोगों की बातों - अपने पुराने दोस्त जॉन की बातों - के डर पर काबू पाकर हेलेन को ईमानदारी से स्वीकार किया, बधाई के पात्र हैं! साथ ही, हेलेन, जिन्होंने जॉन से साफ़-साफ़ कहा कि 'जब मैं उससे प्यार करती हूँ तो तुम्हारे साथ पत्नी बनकर रहना बेईमानी है', भी बधाई की पात्र हैं। उस देश के लोग हमारे जितने समझदार नहीं हैं! हरिशंकर हमारे समाज में एक अपवाद हैं!"
उसके शब्दों का उस पर वही असर हुआ जिसकी उसे उम्मीद थी। उसने महसूस किया कि उसके मन के सारे विचार गायब हो गए। अपने और हेमंत के बर्तन सिंक में रखने और मेज पोंछने के बाद, वह हेमंत के पास गई और बोली,

हेमंत, तुम्हारे दिमाग में ऐसे सड़े हुए विचार क्यों पनपते हैं? ईमानदारी को हटा दो तो फिर बचेगा क्या? ईमानदारी की कमी के कारण हमारा देश बर्बाद हो रहा है! व्यापार, उद्योग, परिवार, दोस्ती, राजनीति – कहीं भी ईमानदारी नहीं बची है। मैं जानती हूँ कि तुम सौ प्रतिशत ईमानदार हो। वरना मैं तुमसे कभी प्यार न करती। लेकिन मुझे लगता है तुम्हारे दिमाग में कुछ गंदगी रह गई है! उसे कीटाणुनाशक से साफ करने की जरूरत है!
कुछ क्षणों तक फिर सन्नाटा छाया रहा। उसने आगे कहा,
"ज़रा सोचो। अगर मेरे मन में भी तुम्हारे जैसे गंदे विचार आने लगें, तो तुम्हारे बगल में खड़ा होना भी मेरे लिए नामुमकिन हो जाएगा! क्या तुम मुझे वेश्या समझते हो?..."
ओह! यह बात तो मेरे दिमाग में आई ही नहीं। आप मेरी बात को अच्छी तरह समझ गए हैं। मुझे आपकी दोस्ती चाहिए, लेकिन मुझे शारीरिक संबंध और उससे जुड़ी भावनाएं नहीं चाहिए।
"तो शीतल के साथ मेरी दोस्ती ही काफी है, है ना? तुम्हें मेरी क्या जरूरत है? तुमने एक पुरुष की दोस्ती भी काफी झेल ली है! मुझे समझ नहीं आता, तुम्हारे दिमाग में ऐसे अस्वाभाविक विचार कौन डालता है?"
उसे जवाब देने का समय दिए बिना ही उसने कहा,
देखो, रविंद्र के लिए तुम्हारे मन में चाहे जो भी भावनाएँ हों, तुम्हें यह जान लेना चाहिए कि अब हमारे बीच कोई वैवाहिक बंधन नहीं है! मैं श्रीमती रविंद्र नहीं हूँ, कांति। स्वतंत्र कांति! इसी स्वतंत्रता के कारण मैं तुम्हें बिना किसी डर के इतना प्यार कर सकती हूँ! मैं तुम्हारे साथ खुलकर घूम सकती हूँ। तीन महीने में मेरा अपना घर होगा। तब शीतल के घर की भी कोई ज़रूरत नहीं रहेगी। तुम जब चाहो घर आ सकती हो। रात में जितनी देर चाहो मुझसे बातें कर सकती हो। लेकिन तुम्हारा अंतर्मन मेरी इस स्वतंत्रता को स्वीकार नहीं कर पा रहा है! तुम्हारे अंदर एक स्वतंत्र भारत की सोच नहीं है, तुम्हारे अंदर एक पुराने रूढ़िवादी और सामंती व्यक्ति की सोच है!
उसे उसकी स्पष्ट बातों का कुछ भी समझ नहीं आया। उसकी हालत देखकर उसने फिर से प्रहार किया।
"देखो, अगर अब भी तुम्हारा यही हाल है, तो मैं तुमसे दूर जाने को तैयार हूँ! तुम जैसे किसी से इतना प्यार करते हुए, अचानक ऐसी बातें कहने लगे, जो तुम्हें दर्द का अंदाज़ा भी नहीं है! तुम तो सच में गाँव वाले हो! तुम्हें गाँव में ही रहना चाहिए था। तुम दिल्ली में रहने लायक नहीं हो! तुम्हारे लिए बेहतर है कि तुम वापस उस जोगी-गुड़े में चले जाओ! एक तरफ तो दिल्ली और पूरी संगीत दुनिया को मशहूर करने वाला संगीत सीखने का सपना देखते हो, और दूसरी तरफ गाँव की सोच वाले एक तुच्छ इंसान की तरह जीते हो! मुझसे दूर रहो! इतने दिनों से ऐसे विचार मन में लिए मेरे पास क्यों आते रहे? तो तुम्हें लगा कि मैं वेश्या हूँ, या क्या?..."
उसकी आवाज़ गुस्से से भर उठी थी। उसका चेहरा और नाक गुस्से से लाल हो गए थे।
हेमंत हैरान रह गया। उसने आगे कहा,
"जब तक तुम इस सवाल का जवाब नहीं दोगे, मैं तुम्हें मुझे छूने भी नहीं दूंगी!"
उसने खाली लंच बॉक्स उठाते हुए कहा, दरवाजा खोला और चली गई। दरवाजा ज़ोर से बंद हुआ और अपने आप लॉक हो गया।
वह उसे क्या जवाब दे, यह सोच रहा था। उसने दौड़कर उसे बुलाने का सोचा, लेकिन अगर वह दौड़ता भी, तो इतनी जल्दी वह लिफ्ट के नीचे चली जाती – जब तक हम नीचे पहुंचते, उसकी कार बाहर आ चुकी होती – मैं दौड़कर उसके पास पहुंचा और कन्नड़ में उसे डांटने लगा, लेकिन क्या नीचे वाली मंजिल पर रहने वाले लोग, वहां का चौकीदार, नहीं समझेंगे? – वह वहीं चुपचाप, हार मानकर बैठ गया।

वह कहती है, यह सच है – मैं उसे एक स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में नहीं देख सकती। लेकिन अगर वह स्वतंत्र व्यक्ति नहीं होती, तो क्या वह मेरी इतनी मदद कर पाती? अगर मैं उसे सिर्फ रविंद्र की पत्नी कहूं, तो वह इसे कभी स्वीकार नहीं करती। यहां तक कि जब वह उस समय विश्वविद्यालय आई थी, तब भी उसने इस बात को अस्वीकार कर दिया था। उसके नज़रिए से बात बिलकुल साफ़ है – मैं ही उलझन में हूं! लेकिन उसने हम दोनों की दोस्ती को शारीरिक संबंध में बदल दिया। यही वह हासिल करना चाहती थी।
यह विचार पहली बार उसके मन में आया और हेमंत क्रोधित हो गया। उसने मेरी मदद इसी के लिए की थी! उसके हृदय में घृणा उत्पन्न हुई। सदियों से ही स्त्री की बेबसी का फायदा उठाना एक प्रथा रही है। अब उसने मेरे साथ और क्या किया? उसने मुझ पर उसे वेश्या की तरह देखने का आरोप लगाया। लेकिन उसने तो मुझे पुरुष वेश्या की तरह इस्तेमाल किया! – हेमंत के हृदय में घृणा उत्पन्न हुई।
वहाँ सन्नाटे में, एयर-कंडीशनर की आवाज़ उसके कानों तक पहुँची। गर्मी असहनीय होती जा रही थी—उसने इसी बहाने मुझे मना किया—नहीं। उसके मन ने चेतावनी दी—ऐसे मामले में किसी को दोष देना उचित नहीं है। उसने ही शुरुआत की होगी—उसने ही पहल की होगी—यह भी सच है कि उस समय मुझे इस विषय में कोई दिलचस्पी नहीं थी! लेकिन बाद में मैं भी इसमें शामिल हो गया, इस तथ्य से इनकार करने का कोई मतलब नहीं है।
उसने अपनी घड़ी देखी और पाया कि वह दो घंटे पहले जा चुकी थी। अभ्यास न करने पर समय बर्बाद करने का एहसास होने पर उसने सितारी के तार बजाना शुरू कर दिया। उसी क्षण उसके मन में एक विचार आया – उसे उसे फोन करना चाहिए। उसे उससे कहना चाहिए – चाहे वह कितना भी गुस्सा हो जाए, मुझ पर वेश्या की तरह देखने का आरोप मत लगाना – अगर मेरे मन में ऐसे विचार होते, तो मैं तुमसे इतनी मदद नहीं मांगता। तुम्हारा अपने बारे में ऐसा सोचना यह दर्शाता है कि मैं भी इसमें नीचा हूं।
उसने फोन नंबर डायल किया। दूसरी तरफ से उसकी आवाज सुनाई दी, "हेलो..."
मैंने आपको कुछ बताने के लिए फोन किया था...
"मैं अभी काम पर हूं..." उसने कहा और रिसीवर नीचे रख दिया।
ऐसा लगा जैसे किसी ने गलती से उसे थप्पड़ मार दिया हो। उसे याद आया कि मालिक नौकरानी को दूर रखने के लिए "मैं व्यस्त हूँ" का बहाना इस्तेमाल करता था। वह मुझे चार पैसे फेंककर खिलाती है, है ना! आजकल तो वह बहुत ही मस्ती के मूड में है! उसे सबक सिखाने की ज़रूरत है! उसने उसे पहले कभी यहां से नहीं बुलाया था। उसने उसे बुलाकर कभी परेशान नहीं किया था। उसे उसे कुछ भी सिखाने की कोशिश छोड़ देनी चाहिए और खुद ही उसे निकाल देना चाहिए।
उसे याद आया – उसका पैसा बैंगलोर के एक बैंक में है। वसंत विहार के पास वाली शाखा में जो ब्याज जमा हो रहा है, वो मैंने देखा तक नहीं। करीब दस महीने का ब्याज – पंद्रह हज़ार, यानी हर महीने डेढ़ हज़ार, जमा हो गया होगा। उसे निकाले बिना और उसे दिए बिना, उसके साथ फिर से साधारण प्रेम संबंध संभव नहीं है। प्रेम के लिए नहीं, बल्कि इस बात के संकेत के रूप में कि प्रेम समाप्त हो गया है! इसके बाद, उसे यहाँ उसकी सहेली के घर बैठकर सितार नहीं बजाना चाहिए। अगर वो सितार लेकर बाहर भी जाए, तो ये दरवाज़ा अपने आप बंद हो जाएगा। उसे रिक्शा लेकर घर जाना चाहिए – लेकिन नहीं। जब वो शीतल के साथ रात को आएगी, तो मुझे वहां न देखकर उसका चेहरा उतर आएगा। फिर स्वाभाविक रूप से शीतल पूछेगी। उससे हमारे रिश्ते के बारे में क्यों बात करूं? उसे बिना बताए क्यों भाग जाऊं? रात को, उसके साथ कार में जाते हुए, वो उसे साफ-साफ बता देता है। उसने इतने लंबे समय तक उससे प्रेम किया है – इतना एहसान किया है – उसे बदले में चोरी करके क्यों छोड़ देना चाहिए?

रात पौने आठ बजे घंटी बजी। जब उसने दरवाजा खोला तो वहाँ केवल शीतल थी। उसने उसके चेहरे की ओर देखा और पूछा,
क्यों? निराश हैं?
यह उनका सामान्य अनुभव था कि कांति की अनुपस्थिति में शीतल हमेशा हमारे रिश्ते के बारे में कुछ बहुत ही संवेदनशील सवाल पूछती थी। कांति को भी पता था कि शीतल के मन में क्या चल रहा है।
उसने कहा,
इसमें निराशा की क्या बात है? उसे कुछ काम तो करना ही होगा। मैं रिक्शा से चला जाऊंगा।
उसने शीतल को अपनी भावनाएं नहीं दिखाईं - न केवल गुस्सा, बल्कि कांति यहां अपना अधिकार जताने नहीं आई थी!
"काम नहीं कर सकती - मेरा सिर बहुत दुख रहा है," वह कह रही थी! "गर्मी की वजह से ही होगा।"
"यह भी संभव है," उन्होंने सितार को कार के टंक में रखते हुए कहा।
शीतल उसके पीछे खड़ी हो गई और उसने पूछा,
हेमंत, हम सब दोस्त हैं। कम से कम मैं तो यही सोचता हूँ! कांति के मना करने के बाद तुम इतनी जल्दी क्यों चले गए? क्या तुम्हें नहीं लगती कि तुम्हें मुझसे भी थोड़ी देर बात करनी चाहिए?
नहीं, ऐसा नहीं है। आप दिन भर के काम से थक गए होंगे!
"किसी मित्र से बातचीत करना भी एक तरह का आराम है, है ना! मैंने आपको पहले भी बताया था - सम्मानपूर्वक बात करना दूरी का संकेत है! मैं आप सभी से एक-एक करके बात कर रहा हूँ..."
"माफ़ करना, शीतल। तुम बैठ जाओ—मैं तुम्हारे लिए चाय बनाती हूँ—अगर तुम इस समय चाय पियोगी तो तुम्हें नींद नहीं आएगी, है ना?"
"अगर आपको नींद आ रही है, तो आप दस कप चाय पी सकते हैं, और आपको नींद आ जाएगी—और अगर आपको नींद नहीं आ रही है, तो आप शराब, व्हिस्की या नींद की गोलियां भी पी सकते हैं, लेकिन आपको नींद नहीं आएगी। मुझे भी आपके हाथों से चाय पीने का मन कर रहा है—लेकिन अभी नहीं। आप यहीं बैठिए, देखते हैं!" उसने सोफे पर बैठते हुए कहा।
वह भी पास ही बैठा था।
उन्होंने दोस्ताना लहजे में पूछताछ की।
क्या दफ्तर में बहुत काम है?
"ऑफिस में ऑफिस का काम। वहाँ से शाम को फैक्ट्री का काम!" उसने उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा, "कांति हर चीज़ को इसी नज़रिए से देखता है। लेकिन जब बात जीवनसाथी की आती है, तो पल भर के लिए सबको नज़रअंदाज़ करना पड़ता है, है ना? शरीर और बुद्धि... दिमाग थक जाता है!" उसने उसका हाथ छोड़े बिना कहा।
उसे बुरा लगने के डर से उसने अपना हाथ उसके हाथ में ही रहने दिया। उसकी निगाहें सामने बिछी कालीन पर टिकी हुई थीं।
कुछ क्षण बाद उसने पूछा,
क्या आपसे दोस्ती करने के लिए संगीत का ज्ञान होना ज़रूरी है? मैंने ये सवाल क्यों पूछा, मुझे बताओ? मैंने भी संगीत के बारे में अपना ज्ञान बढ़ाने की बहुत कोशिश की, पर कामयाब नहीं हो पाया! रागों को पहचानने में भी मुझे बहुत दिक्कत हुई। लेकिन अगर कोई मुझे किसी राग का नाम बताकर तीस बार सुनाए, फिर इकतीसवीं बार सुनाकर उस राग का नाम पूछे, तब भी मैं नहीं बता पाऊँगा।
"अगर दोस्ती न होती, तो क्या मैं तुम्हारे घर पर इतने घंटे रुकता? क्या मैं तुम्हारी रसोई, तुम्हारे घर और तुम्हारे फ्रिज का खुलकर इस्तेमाल करता?"

"तो फिर तुम इतना रूखा व्यवहार क्यों कर रहे हो? अगर तुम फिर से सम्मान दिखाने का नाटक करोगे, तो मेरी तरफ देखो—" उसने कहा और उसके गाल पर एक थप्पड़ मार दिया।
उसने उसका हाथ छोड़ते हुए और उठते हुए कहा, "मैं फिर कभी ऐसी गलती नहीं करूंगा," और बोला, "मुझे अब जाना होगा... मैं सुबह निकल रहा हूँ, है ना? माँ शाम को मेरा इंतज़ार कर रही होगी..."
चलो... मैं तुम्हें छोड़ देता हूं..."
"दिनभर काम करने के बाद तुम बहुत थक गए हो! चिंता मत करो। मैं एक रिक्शा लेकर चलता हूँ..." उसने कहा और अपना सितार लेकर बाहर चला गया।

■

रात 9:15 बजे जब वह रिक्शा से घर जा रहा था, तो उसे यह एहसास हुआ कि कांति के साथ उसका रिश्ता खत्म हो गया है। साथ ही, उसे दुख और राहत का भी एहसास हो रहा था।
जब वह घर पहुँचा, तो उसके पिता अपना भोजन कर चुके थे। उनके रात के खाने में दो रोटी के टुकड़े, दूध और ऊपर से एक फल था। उसकी माँ ने भी उतना ही खाया था। लेकिन अंबू जब वह घर आ गया था, तो वह खाना बनाएगी और उसका इंतज़ार करेगी। हालाँकि, उसके पिता रात साढ़े नौ बजे सोने जा रहे थे। उनके देर से घर आने के ख्याल से उसका दिल दुख रहा था।
जब वह खाने के लिए तैयार हो गया, तो उसकी माँ ने उसे खाने की मेज पर एक कुर्सी पर बैठाया और इस विषय को उठाया।
"कर्नाटक के एक परिवार की एक लड़की है। उसके पिता रेलवे में उच्च पद पर हैं। सेवानिवृत्ति के बाद वे भी स्थायी रूप से दिल्ली में बस गए हैं। लड़की कॉलेज में अर्थशास्त्र की लेक्चरर है। उसने पीएचडी की थीसिस पूरी कर ली है। उसकी उम्र पैंतीस से चालीस वर्ष के बीच है। उसे शास्त्रीय संगीत में भी बहुत रुचि है। वह थोड़ा-बहुत गाती भी है। वे लोग हमारे परिवार के बारे में सब कुछ जानते हैं। मैंने खुद उससे बात की। मैंने उससे कहा कि तुम एक साल बाद संगीत कार्यक्रम दोगी। उसने भी कहा – उन्हें जितना पैसा चाहिए लेने दो – मेरी भी तनख्वाह है – मैं इसे हम दोनों में बाँट सकती हूं – मुझे कोई आपत्ति नहीं है। ऐसा लगता है कि उसके ससुराल वालों के साथ भी उसके अच्छे संबंध हैं। परिवार के सभी लोग सभ्य हैं। आपको पहले लड़की को देख लेना चाहिए और फिर जो चाहें करना चाहिए।"
वह सिर झुकाए और मुँह बंद करके खाना खा रहा था। उसे यह भी पता था कि उसकी माँ चाहती है कि उसका बेटा शादी करके घर में बहू लाए। यह पहली जगह नहीं थी जहाँ उसकी माँ उसे लाई थी; लेकिन अब तक जब वह कहता था, "मैं अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो पा रहा हूँ - मुझे कैसी शादी मिल रही है!", तो उसकी माँ भी अवाक रह जाती थी। लेकिन इस बार, लड़की ही जवाब थी! क्या उसकी माँ ने जानबूझकर ऐसी लड़की चुनी थी? वह यह कैसे समझ सकता था? क्योंकि मैं भला कैसे जान सकता हूँ कि एक माँ क्या सोचती है? जब आप किसी के साथ रहें और उससे चार घंटे बात करें, तभी आप समझ पाएंगे? उसने कभी उससे दिल खोलकर बात नहीं की - उसके पिता तो हमारी मौजूदगी को भी मुश्किल से बर्दाश्त करते हैं! कम से कम मैं इस घर को ऐसी जगह तो मानता हूँ जहाँ अच्छा खाना और रहने की व्यवस्था है, है ना?
उन्हें अपने अंतिम एकालाप पर शर्मिंदगी महसूस हुई।
बिस्तर पर लेटे हुए उसे फोन पर कही गई उसकी बदतमीज़ी भरी बातें फिर याद आ गईं। फिर उसे याद आया कि उसके मन में सबसे पहला ख्याल यही आया था कि वह उससे रिश्ता तोड़ दे। तो अब अगर वह बेइज़्ज़ती दिखाए तो उसे इतना बुरा क्यों लगना चाहिए? उसे यह क्यों नहीं सोचना चाहिए कि वह मेरे दिए निर्देशों का पालन कर रही है?

एक तरफ तो इस विचार से मुझे अच्छा लगा, लेकिन दूसरी तरफ मन में एक टीस भी उठी, मानो मैं कुछ अनमोल खो रहा हूँ। बाद में मैंने इस पर विचार किया – इतने लंबे समय से मैंने जिन स्त्री सुखों का अनुभव किया था, वे ही मुझे यह पीड़ा दे रहे थे! उसने साफ-साफ कह दिया है कि अगर हमारी दोस्ती में शारीरिक संबंध नहीं रहा, तो कुछ भी नहीं बचेगा – मैं इस बात से भी इनकार नहीं कर सकता! हमें इस रिश्ते को पूरी तरह से खत्म कर देना चाहिए।
सुबह जब मैं चेहरा धो रही थी, तभी मेरे पिताजी के कमरे में फोन की घंटी बजी। मुझे याद आया कि वे इस समय टहलने के लिए बाहर जाते हैं - वे फोन का जवाब देने के लिए बैठक में आए।
फोन का रिसीवर उठाने से पहले ही मुझे लगा कि वह मुझे कॉल कर रही है, और यह सच था।
उसने कहा,
देखो, तुम्हारे पिताजी बगल वाले कमरे में होंगे। कुछ मत कहना – बस मेरी बात सुनो। मैं पूरी रात बेचैन रही। मुझे यकीन है कि तुम भी नहीं सोई होगी। हम एक-दूसरे के बिना नहीं रह सकते! कल मैं तुमसे नाराज़ हो गई थी। लेकिन वो तुम्हारे लिए मेरे प्यार की वजह से ही तो था, है ना? जब तुमने कल शाम मुझे फ़ोन किया था, तो मैंने कहा था कि मैं काम पर हूँ, है ना? अगले छह महीनों के भीतर, मैं एक मास्टर प्लान बना रही थी कि कैसे मेरे हेमंत का नाम न केवल भारत में बल्कि पूरी दुनिया में फैलेगा। प्रक्रिया शुरू हो चुकी है! बाकी की बातें मैं तुम्हें दोपहर में बताऊँगी। दोपहर में आना... मैं इंतज़ार करूँगी... ज़रूर!
उसने कोई जवाब नहीं दिया। उसने आगे कहा,
"इतने जिद्दी? ठीक है! अगर तुम दोपहर को तय समय पर तय जगह पर नहीं आए, तो मैं तुम्हारे गुरुजी के घर आऊँगी। वरना, मैं सीधे वसंत विहार आऊँगी और तुम्हारी माँ के सामने तुम्हारा हाथ पकड़कर तुम्हें दरवाजे तक घसीट कर लाऊँगी! अब हाँ कह रहे हो या नहीं?..."
जब उसने फिर भी जवाब नहीं दिया, तो उसने रिसीवर नीचे रख दिया।

■

लेकिन स्नान करने और अपनी माँ द्वारा दिए गए भोजन को खाने के बाद, गुरुजी के घर जाते समय वह सोचने लगा - अगर दोपहर में हमेशा की तरह कांति से मुलाकात नहीं हुई तो जीवन का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा! गुरुजी के घर पर सितार बजाते समय वह बार-बार घड़ी की ओर देख रहा था।
जब वे उसके साथ ग्रेटर कैलाश की ओर चल रहे थे, हेमंत ने पिछले दिन के विषय को नहीं उठाया। खाना खाते समय, उसने उत्साह से कहा,
क्या सच में? भारत सरकार ने हरिशंकर को सांस्कृतिक सचिवालय का सलाहकार नियुक्त किया है!
तो फिर क्या हुआ?
"मुझे लगता है आप अखबार नहीं पढ़ते! सरकार संगीत, साहित्य, नृत्य, नाटक और चित्रकला के माध्यम से संस्कृति और नैतिकता को बढ़ावा देने के लिए संगठनों और संस्थानों को वित्तीय सहायता प्रदान करती है, और इस संदर्भ में, हमारे कलाकारों के विदेशी कार्यक्रमों का निर्णय करते समय उनकी सिफारिशें विशेष रूप से महत्वपूर्ण होती हैं!"
"लेकिन सरकार ने अचानक विश्वविद्यालय में काम करने वाले लोगों को कैसे नियुक्त कर दिया?"
"इस पद के लिए उन्हें ऐसे ही किसी व्यक्ति की ज़रूरत है, है ना? उन्हें गाना आता है। उन्होंने इस विषय पर लेख लिखे हैं। उन्होंने साहित्य भी पढ़ा है, उन्हें नृत्य की भी अच्छी जानकारी है। विश्वविद्यालय में भारतीय संस्कृति के प्रोफेसर - और कौन मिल सकता है? क्या यह किसी राजनेता से बेहतर नहीं है?"

"सच है," हेमंत ने कहा।
``मेरे मन में एक विचार आया है..." कांति ने आगे कहा, ``मैं हरिशंकर को इतने बड़े पद पर नियुक्ति मिलने की खुशी में एक पार्टी देने जा रहा हूँ। दिल्ली के सभी सांस्कृतिक जगत के बड़े-बड़े लोगों को निमंत्रण भेजा जाएगा। मैं उनके सामने हरिशंकर को फूलों का गुलदस्ता देकर और शॉल ओढ़ाकर उनका अभिनंदन करूँगा। उस अवसर पर उनकी प्रशंसा में भाषण दिए जाएँगे - उसके बाद खूब पेय पदार्थ, स्वादिष्ट भोजन, मिठाई परोसी जाएगी - मैं कार्यक्रम की खबर प्रेस में देकर इसका खूब प्रचार करूँगा। इससे उनके मन में मेरे लिए एक विशेष स्थान बन जाएगा। अगर अभी नहीं तो मुझे पहले से ही पहचान प्राप्त है - जिसे जानबूझकर बढ़ाया जा सकता है। क्यों, आप जानते हैं? मैं उनकी उपस्थिति में आपके सितार वादन का एक कार्यक्रम आयोजित करूँगा और यह सुनिश्चित करूँगा कि इसकी समीक्षा सभी प्रमुख समाचार पत्रों में प्रकाशित हो। मैं आपको रेडियो पर एक प्रथम श्रेणी के कलाकार के रूप में पहचान दिलाऊँगा। मैं यह सुनिश्चित करूँगा कि आपके सितार वादन के रिकॉर्ड और कैसेट विभिन्न कंपनियों द्वारा जारी किए जाएं। मैं उन्हें देश और विदेश में बड़ी मात्रा में बेचूंगा। मैं आपके लिए विदेश जाकर प्रदर्शन करने का बाज़ार भी तैयार करूँगा – मैं भारत में मीडिया के माध्यम से इसका प्रचार करूँगा और भारत में आपकी प्रतिष्ठा बढ़ाऊँगा! मैं यह सब आज से एक साल के भीतर करूँगा! अगर आप चाहें, तो आज की तारीख, महीना और साल लिख लीजिए! एक साल के भीतर, मैं आपका मानदेय रवि शंकर-अमजद अली खान तक पहुँचा दूँगा!
हेमंत को एमबीए की पढ़ाई के दौरान और बैंगलोर में रेजिडेंट मैनेजर के रूप में काम करते समय अपनाई गई रणनीतियां याद आ रही थीं। उन्होंने एक नए उत्पाद को एक सप्ताह के भीतर पूरे देश में पहुंचाने के तरीकों पर कई किताबें भी पढ़ी थीं। उन्होंने आईआईएम में अमेरिकी विद्वान रस्क का व्याख्यान भी सुना था।
कांति ने न तो वह व्याख्यान सुना और न ही वह पुस्तक पढ़ी – फिर भी उनकी बुद्धि ने उस विषय पर कितनी व्यापकता से विचार किया है!
हेमंत सोच में डूबा हुआ था। उसे संगीत जगत में पहचान मिलने की पूरी उम्मीद थी! वह भी शीर्ष कलाकारों की श्रेणी में शामिल होने का सपना देख रहा था। कभी-कभी उसे भी लगता था कि उसमें इतनी कलपनाशीलता है और वह इसके लिए तैयारी कर रहा है, जिससे उसका आत्मविश्वास बढ़ता था – कभी-कभी उसका मन विचारों में खो जाता था।
फिर भी, वे इस बात से सहमत नहीं थे कि संगीत जैसी गतिशील कला विधा के संदर्भ में ऐसा होना चाहिए। उन्हें उम्मीद थी कि संगीत सभा में आए श्रोता अपने संगीत प्रेमी मित्रों को इसके बारे में बताएंगे और अगले कार्यक्रम के लिए खुद टिकट खरीदेंगे। इसके अलावा, उनका मानना था कि अन्य तरीकों से प्रसिद्धि पाना शुद्ध कलात्मक रुचि के लिए हानिकारक है।
उन्होंने कांति से कहा,
मैंने आपको इसके बारे में एक अलग संदर्भ में बताया था... अब मैं इसे अपने संदर्भ में बता रहा हूँ। जल्दबाजी करने की कोई जरूरत नहीं है। मैं धीरे-धीरे बड़ा हो जाऊंगा!..."
"कल तुम एक महान कलाकार बन जाओगे - मुझे पता है तुममें इतनी क्षमता है! तुम कहते हो कि अगर तुम अपना नाम पूरे भारत में इस तरह फैलाना चाहते हो, तो कम से कम बीस साल लगेंगे! तुम कहते हो कि मैं ट्रेन या बस से नहीं जाऊंगा - मैं काशी यात्रा बैलगाड़ी से करूंगा, तो यह तो जिद्दीपन है! तुम अभी चालीस साल के हो... जब तुम पूरे भारत में मशहूर हो जाओगे, तब तुम साठ साल के हो जाओगे। उस समय तुम्हारा शरीर भी थक चुका होगा। तब तुम्हारे उत्साही श्रोता तुम्हारी असली कला को कैसे सुन पाएँगे? अगर तुम मीडिया का फायदा उठाकर

एक साल के अंदर उन तक पहुँच जाते हो, तो इसमें क्या बुराई है? इसके लिए तुम्हें अपना चेहरा छिपाने या किसी की बेबसी स्वीकार करने की ज़रूरत नहीं है। हर कलाकार को शुरुआती दौर में किसी की मदद की ज़रूरत होती है। तुम्हारे मामले में वह मदद मेरी है। इसके लिए मुझे क्या करना चाहिए, यही मेरा सवाल है... इस पर ध्यान मत दो। मैं ऐसा कुछ भी पागलपन भरा या कुटिल काम नहीं करूँगा जिससे तुम्हारी स्थिति हिल जाए। मैं भी अपनी स्थिति को हिलने नहीं दूँगा।"
उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि किस मुद्दे पर उनका विरोध किया जाए।
कुछ देर बाद जब उसने कुछ कहने के लिए मुंह खोला, तो उसने उसे थपथपाया और कहा,
"यह हो गया! इसके बाद, आपको किसी प्रसिद्ध तबला वादक के साथ जोड़ी बनानी चाहिए। बनारस के विजय मिश्रा के बारे में आपका क्या विचार है?"
लेकिन वह...
देखो... लेन-देन की जिम्मेदारी मुझ पर छोड़ दो, देखते हैं! हम उसे यहाँ बुला लेंगे, या तुम वहाँ जाओ। तुम दोनों प्रतिदिन सात-आठ घंटे साथ में रियाज़ का अभ्यास करो। जब तक कि तुम दोनों एक-दूसरे की कला से भलीभांति परिचित न हो जाओ!

■

हरिशंकर का अभिनंदन समारोह एक बड़ी सफ़लता साबित हुआ। दिल्ली के राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक जगत से जुड़े 150 चुनिंदा लोग समारोह में उपस्थित थे। इसके अलावा, प्रसिद्ध कलाकार, सरकारी संस्कृति विभाग के उच्च अधिकारी, आलोचक और प्रमुख समाचार पत्रों के प्रतिनिधि, रेडियो और टीवी प्रतिनिधि, साथ ही चीन, अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी, इटली और अन्य देशों के प्रतिनिधि भी कार्यक्रम में आमंत्रित थे। हरिशंकर के कॉलेज के दोस्त और अन्य लोग भी आए। संक्षेप में, दिल्ली के सांस्कृतिक जीवन का सार वहां एकत्रित हुआ था। इनमें से कई लोग अपनी पत्नियों के साथ आए थे।
इतने सारे लोगों के नंगे पैर घूमने के बावजूद, सटारी की मधुर ध्वनि कानों में गूंज रही थी। कालीन दीवार से दीवार तक फैला हुआ था।
कांति ने यह पार्टी फाइव-स्टार होटल रोज़-पेंटा में आयोजित की थी। इसके पीछे एक बहुत ही निजी कारण था। उसे यह गहरा एहसास था कि बहल की संगति में उसका आत्मसम्मान ठेस पहुंची है। इसलिए उसने जानबूझकर यह भव्य पार्टी वहीं आयोजित की थी। अगर वह किसी और कारण से भी रोज़-पेंटा जाती, तो उसे डर रहता कि कोई उसे धोखा दे देगा। उसने इस मानसिक स्थिति से निकलने का यही तरीका खुद ही खोज निकाला था।
शीतल ने उसे अपनी ऐसी ही मानसिक स्थिति के बारे में बताया था। वह पहली बार विदेश गई थी, लंदन। उस समय उसे गोमांस और मटन में फर्क नहीं पता था। जन्म से गुजराती शाकाहारी शीतल ने वहाँ मज़ाक में गोमांस का सैंडविच खा लिया। बाद में, जब उसके मन में कुछ शंकाएँ आईं, तो उसने गोमांस का सही अर्थ पूछा। जब उसे पता चला कि यह गोमांस है, तो उसका मन, जो मांस के लिए मुश्किल से ही तैयार था, बुरी तरह हिल गया। उसे ऐसा लगा जैसे वह अपनी उँगलियाँ गले में डालकर उल्टी कर दे। लेकिन साथ ही, उसे यह भी समझ आ गया कि इसमें कोई अर्थ नहीं है। तीन दिनों तक उसका मन इसी तरह तड़पता रहा। फिर एक दिन, वह जानबूझकर उसी होटल में गई और जानबूझकर गोमांस खाया। पहला निवाला निगलना मुश्किल था। अगला निवाला थोड़ा कम मुश्किल था। अगले दिन, उसने उसका स्वाद भी चखा। उसने कांति को यह बात बताई थी।
संस्कार की शक्ति ऐसी ही होती है! यदि आप जानबूझकर एक ही काम को दो-तीन बार करें, तो सारे संस्कार मिट जाते हैं। अब अगर आप मुझसे पूछें, तो मुझे

चिकन से ज़्यादा गोमांस पसंद है।
इसी तर्क के आधार पर कांति ने रोज़-पेंटा होटल में पार्टी का आयोजन किया था। उसने बहल को भी आमंत्रित किया था। शीतल ने उसे यह बात याद भी दिलाई थी। "अगर हम उसे रोकने के लिए अन्य अधिकारियों को बुलाते हैं तो इसके परिणामों के बारे में सोचो!"
जब वह पहुंचा, तो कांति आगे बढ़ी और उससे हाथ मिलाया तथा मुख्य अतिथियों से उसका परिचय कराते हुए कहा, "अगर आप नहीं आते, तो यह पार्टी अधूरी रह जाती, यह कहने की जरूरत नहीं है।" बहल, जिसका उन दोनों से कभी कोई झगड़ा नहीं हुआ था, ने बड़े आत्मविश्वास से उसका हाथ मिलाया और कहा, "नमस्ते - आप कैसी हैं?" और उसके साथ हरिशंकर के पास गया और उतने ही आत्मविश्वास से मुस्कुराते हुए उससे हाथ मिलाया! इससे हरिशंकर के प्रति उसकी नफरत और बढ़ गई।
उन्होंने सख्त चेतावनी दी कि पूरे समारोह के दौरान हेमंत कहीं भी नजर नहीं आना चाहिए।
बड़े-बड़े अधिकारी सूट पहनकर पार्टी में आए थे। संस्थानों के प्रबंधक ज्यादातर पायजामा और जब्बा पहने हुए थे। सभी महिलाएं भारी सलवार-कमीज या साड़ियों में थीं। सभी ने विदेशी इत्र छिड़का हुआ था, जिससे उसकी खुशबू पूरे हॉल में फैल रही थी। ऊपर जगमगाते झूमर, दीवारों पर बनी तरह-तरह की आकृतियां, और हर कदम पर स्प्रिंग की तरह उछलता भारी कालीन! शेरवानी और जब्बा पहने हरिशंकर की हमेशा की तरह सफेद और काली दाढ़ी थी। एयर इंडिया की सिल्क साड़ी में गोरी और खूबसूरत हेलेन सबका ध्यान अपनी ओर खींच रही थी।
पहले से ही एक छोटा सा समारोह आयोजित किया गया था। लाउडस्पीकर के माध्यम से सभी को पास के सभा भवन में आने का अनुरोध किया गया, इसलिए सभी लोग वहाँ मुड़ गए। सभा भवन में आलीशान कुर्सियाँ थीं। सबसे पहले, भारतीय संगीत विद्यालय के प्रधानाचार्य शिवचरण पांडे मंच पर गए। हाथ में माइक लिए उन्होंने विनम्रतापूर्वक उपस्थित लोगों का स्वागत किया। उन्होंने भारतीय प्रदर्शन कला के सोहनलालजी और चित्रकथा अकादमी के कालीप्रसाद भट्टाचार्य को भी मंच पर बुलाया। तीनों दर्शकों की तालियों के बीच मंच पर आए। हेलेन भी हरिशंकर के साथ मंच पर आईं। सभी के बैठने के बाद, शिवचरण पांडे का भाषण शुरू हुआ। उनकी भाषा विशेष रूप से ऐसे अवसर के लिए तैयार की गई थी। मधुर भाषा और विशेष रूप से तैयार की गई प्रभावशाली आवाज़ के बल पर उन्होंने हरिशंकर के अद्वितीय व्यक्तित्व का परिचय देना शुरू किया। उन्होंने आश्वासन दिया कि ऐसे व्यक्ति का इतने महत्वपूर्ण स्थान पर जाना भारतीय सांस्कृतिक जीवन में एक अनूठी घटना है। उन्होंने अपने प्रभावशाली अंदाज़ में खुलकर कहा कि ऐसे व्यक्ति को सम्मानित करने वाली सुश्री कांतिजी भी उतनी ही महान हैं। उस अवसर पर उन्होंने कांति की उपलब्धियों की कहानी भी सुनाई। जब पांडेजी ने विशेष रूप से उन्हें बधाई दी, तो श्रोताओं ने काफी देर तक तालियाँ बजाईं।
इसके बाद भारतीय प्रदर्शन कला के सोहनलालजी बोलने के लिए खड़े हुए। चूंकि वे मुख्य वक्ता थे, इसलिए उनका भाषण बहुत ही प्रभावशाली था। समृद्ध भारतीय संस्कृति की प्रशंसा करते हुए उन्होंने भरतयुग, कालिदासयुग, मुगलयुग, तानसेनयुग, पुरंदरयुग का उल्लेख किया और कहा,
“अब से कला के इतिहास में इस युग को हरिशंकर युग के नाम से जाना जाएगा!”
इस वाक्य पर इतनी जोरदार तालियाँ बजीं कि मानो छत ही उड़ जाएगी।
तब भट्टाचार्यजी बोले। उन्होंने कहा,
कला के क्षेत्र में, कला संरक्षक उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि कलाकार! क्योंकि जब तक भोजन और पानी की समस्या का समाधान नहीं हो जाता, तब तक किसी

कलाकार के लिए कला के प्रति पूर्ण समर्पण संभव नहीं है। आज तक, ऐसे संरक्षक राजाओं का इतिहास में बहुत सम्मान रहा है! गणतंत्र में, सरकार चलाने वाले अधिकारी भी उतने ही महत्वपूर्ण होते हैं! जब हरिशंकर जैसा कोई व्यक्ति इतनी शक्ति प्राप्त करता है, तो उसकी महत्व राजा विक्रमादित्य से कम नहीं होता!
इस पर भी तालियां बजीं, लेकिन सोहनलाल के भाषण की तुलना में आधी ही जोरदार थीं।
कांति द्वारा दी गई चंदन की मूर्ति, माला, शॉल और नारियल स्वीकार करते हुए, हरिशंकर ने उपस्थित मित्रों, कांति जी और अपने भाषण में उनके बारे में बोलने वाले विद्वानों को धन्यवाद दिया। इसके बाद, उन्होंने भारतीय संस्कृति की महानता की प्रशंसा करते हुए एक संक्षिप्त लेकिन विद्वतापूर्ण भाषण दिया। सभी ने उनके प्रभावशाली भाषण की सराहना की। बाद में, कांति ने हरिशंकर और अपनी जीवन प्रेरणा हेलेन को यहां आने के लिए धन्यवाद दिया। वक्ताओं को धन्यवाद देने के बाद, उन्होंने सभी से भोजन कक्ष में आने और एक-दूसरे के प्रति स्नेह बढ़ाने का अनुरोध किया।
वहाँ का इंतज़ाम और भी भव्य था। स्कॉच, रॉयल सैलयूट, जॉनी वॉकर, वैलेंटाइन, व्हाइट हॉर्स, साथ ही कई तरह की वाइन, संतरे का जूस, कोक; इनके साथ दस तरह के व्यंजन परोसे गए थे। सबने पहले जी भरकर पिया और फिर शानदार भोजन का लुत्फ़ उठाया।
अगले दिन, सभी समाचार पत्रों में इस अभिनंदन समारोह की खबर और हरिशंकर को पुष्पमाला पहनाते हुए कांति की तस्वीर छपी। रातोंरात, कांति दिल्ली के सांस्कृतिक हलकों में एक प्रमुख हस्ती बन गईं! संभ्रांत महिलाओं के समूह में, 'ये कांति जी कौन हैं?' उस दिन का सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न था।
इस प्रचार का शीतल पर असर पड़ा, भले ही उसने इस बात को खुलकर न कहा हो। उसने कहा,
"कांति, हम दोनों बिजनेस पार्टनर हैं। तुमने अकेले ही इस पार्टी का आयोजन क्यों किया? क्या तुम्हें लगा कि मैं आधे खर्च देने से इनकार कर दूंगा?"
कांति समझ गई कि वह ऐसा क्यों कह रही थी। उसने जवाब दिया,
"ओह, यह तो संगीत से संबंधित कार्यक्रम था। जब आपको इसमें कोई दिलचस्पी ही नहीं है तो मैं आपसे आधी लागत कैसे स्वीकार कर सकता हूं?"
शीतल को इसका कोई जवाब नहीं सूझा। यह जानकर उसे दुख हुआ कि उसकी दोस्त अलग-अलग संगीत समूहों की सदस्य बन जाएगी और वह दिन-ब-दिन उससे दूर होती जाएगी।

■

दो बातों का हेमंत पर गहरा प्रभाव पड़ा, जिसने बिना कुछ बोले पूरीR रस्म देखी। वहाँ जमा हुए लगभग 150 लोगों ने हेलेन और हरिशंकर के रिश्ते को आसानी से स्वीकार कर लिया। हरिशंकर की पहले भी शादी हो चुकी है। यहां कितने लोगों को यह बात पता होगी? उनके करीबी दोस्त, उनका स्वागत और अभिनंदन करने वाले मुख्य वक्ता और उनके साथ वर्षों से काम कर रहे सहकर्मी तो यह बात जरूर जानते होंगे। इस बैठक की खासियत यह है कि दिल्ली में कोई भी बिना किसी रोक-टोक के जितना चाहे उतना बोल सकता है! लोग यह कैसे नहीं समझ पाए कि उन्होंने ऐसे समय में अपनी पत्नी और बच्चों को छोड़ दिया? बैठक के बाद हुई पार्टी और उसके बाद के भोजन के दौरान, क्या गिलास या प्लेटें हाथ में लिए इधर-उधर बैठते हुए हुई बातचीत में इन विषयों पर चर्चा नहीं हुई होगी?
ये सब याद करते हुए हेमंत को अचानक इस तरह के भोजन की तुलना पुरानी भोजन पंक्ति से करने का मन हुआ। सनातन विवाह की तरह, यहाँ भी भोजन पंक्ति पहले से तय होती है। भोजन समाप्त होने तक यह नहीं बदलती। लेकिन यहाँ, भोजन करते समय सभी लोग आपस में थोड़ी बातचीत कर सकते हैं, अपने

आस-पास बैठे लोगों के समूह को बदल सकते हैं और साथ ही अपना भोजन भी जारी रख सकते हैं! ऐसे में उन्हें यह भी लगा कि हेलेन-हरिशंकर के रिश्ते को बुफे संस्कृति का समर्थन मिलना स्वाभाविक ही था।
एक ओर तो उसे हंसी भी आ रही थी। उसने पहले भी ऐसी कई पार्टियां देखी थीं। उनमें हिस्सा भी लिया था। लेकिन हुलुकेरे के जोगीगुड्डा के कॉलेज के माहौल में इतने दिन बिताने के बाद, ये यादें भी धुंधली पड़ गई थीं। नौकरी छोड़ने के बाद हेमंत कई सालों बाद ऐसी पार्टी देख रहा था। फिर भी, उसका मन शराब का गिलास हाथ में लेने का नहीं कर रहा था। खाने में भी ज्यादा दिलचस्पी नहीं थी। उसका मन अब भी इस सांस्कृतिक अंतर के बारे में सोच रहा था।
इस पूरी पार्टी में – कांति ने हम पर जो पैसा खर्च किया था, वो पानी की तरह मेरे मन में कांति के लिए प्यार भर लाया। यहां आए कई लोगों ने हम दोनों को संगीत पार्टियों में देखा होगा! वे हमारी दोस्ती के बारे में जानते हैं। इसके बाद, जब हरिशंकर मुझ पर कोई विशेष कृपा करेंगे, तो सबको यह पार्टी याद आएगी और वे इस बात पर भी चर्चा करेंगे कि कांति ने इस पर इतना पैसा खर्च किया था! लेकिन उससे पहले, मुझे ज़रूरी अवसर मिलेगा और फिर मैं अपनी मेहनत से कला के क्षेत्र में काम शुरू करूंगा!
कांति ने भी इन सब बातों के बारे में जरूर सोचा होगा। क्योंकि हेमंत ने उससे पूछा था,
"इस पार्टी में कितना खर्च आएगा?"
“तुम्हें इसकी क्या ज़रूरत है? इस पर ध्यान मत दो...” उसने कहा था, फिर भी उसे पूरा यकीन था कि अगर वह इतने बड़े होटल में 150 लोगों के खाने का खर्च, खाने से पहले की ढेर सारी शराब और हॉल का किराया भी जोड़ ले, तो भी तीस हज़ार रुपये से ज़्यादा खर्च हो जाएगा। उसका दिल कृतज्ञता से भर गया।
भोजन से पहले, कांति ने हाथ में गिलास लिए सबका अभिवादन किया, मुस्कुराते हुए सबका स्वागत किया और हाथ मिलाया। वह उसके पास भी आई और धीरे से मुस्कुराई। एक ऐसी कोमल मुस्कान जिसका उसके लिए कुछ खास मतलब था! उसी समय, कोई उसके पीछे आया और उससे हाथ मिलाते हुए बोला,
"आपने बहुत ही शानदार पार्टी का आयोजन किया है, मिस कांतिजी! मैंने डॉ. प्रसादजी के साथ सहकर्मी के रूप में काम किया है। मैं भारतीय संस्कृति का पाठक हूं। मेरा नाम सचदेव है।"
हेमंत की ध्यान अब सचदेव के 'मिस कांतिजी' वाले संबोधन पर केंद्रित हो गया था। अरे बाप रे! मुझे तो पता ही नहीं था कि इसका कोई खास मतलब है! मंच से सबसे पहले बोलने वाले शिवशरण पांडे ने यह संबोधन शुरू किया। उसके बाद, हर वक्ता ने कांति को 'मिस' कहकर संबोधित किया। इसका मतलब है कि यहां मौजूद सभी लोगों ने उन्हें 'मिस' के रूप में स्वीकार कर लिया है। इसके बाद, यहां मौजूद सभी लोग उन्हें 'मिस' के रूप में ही देखेंगे। शिवशरण पांडे ने ही शायद शिवशरण पांडे को यह निर्देश दिया होगा। या फिर उन्होंने अपना परिचय देते समय 'मिस कांति' कहा होगा। उन्होंने मुझसे गुस्से में यह भी कहा था - मैं कांति हूँ - मैं श्रीमती रविंद्र नहीं हूँ, मैं स्वतंत्र हूँ! मैंने उनकी बात नहीं मानी, इसलिए वे नाराज हो गईं। अब यह भावना उनके मन में घर कर गई है! अब वे इस भावना को सामाजिक रूप से स्वीकार्य कराने के लिए संघर्ष कर रही हैं।
इस विचार से उसे राहत मिली, भले ही उसने मना कर दिया हो। जब वही तो इतनी ज़िद से खुद को 'मिस' कह रही थी, तो मुझे मना करने पर क्यों दोषी महसूस करना चाहिए?
दस मिनट बाद, उनके मन में एक अलग ही विचार आया। क्या एक बार 'श्रीमती' बनने के बाद दोबारा 'कुमारी' बनना संभव है? यह कोई ऐसा अनुबंध नहीं है जिसे एक बार करके फिर नकारा जा सके। शारीरिक रूप से तो यह असंभव है। क्या

मानसिक रूप से यह संभव है? उन्हें यह भी पता था कि कुछ देशों में विवाह बंधन टूटने के बाद भी किसी को दोबारा 'कुमारी' कहने की प्रथा है। लेकिन यह तो केवल कानून का एक हिस्सा है।
अगर इस नज़रिए से देखें तो उन्हें यह भी पता था कि किसी पुरुष के विवाहित या अविवाहित होने का संकेत देने वाला कोई विशेषण नहीं होता। लेकिन फिर उन्हें याद आया – जिन जातियों में जन्म जोड़ने की प्रथा है, उनमें उपनयन संस्कार के दौरान एक जन्म जोड़ा जाता है। दूसरा जन्म विवाह के समय जोड़ा जाता है। बाद में, भले ही पत्नी की मृत्यु हो जाए या दोनों अलग हो जाएं, उनका जन्म जोड़ा कभी अविवाहित नहीं होता! शास्त्रों के अनुसार, विवाह टूट जाने पर भी वह पुरुष कभी अविवाहित नहीं हो सकता!
दस मिनट पहले उसे जो आज़ादी महसूस हो रही थी, वह इस विचार के साथ गायब हो गई और उसका दिल फिर से भारी हो गया।

■

१२

बेवर्ली स्कूल से हर कहानी सुनने के बाद, अनुप को लगने लगा कि उसका स्कूल सबसे अच्छा है। चूंकि सभी बच्चे गांवों से आते थे, इसलिए स्कूल आने के पहले कुछ दिनों तक वे आपस में लड़ते-झगड़ते और गांव की गालियां देते थे। दूसरे साल तक, उसे पूरा यकीन हो गया था कि स्कूल परिसर में ऐसी बातें बोलना मना है। तीसरे साल तक, स्कूल के प्रति उसका गर्व इतना बढ़ गया कि उसने इस बात पर जोर दिया कि स्कूल में पढ़े किसी भी बच्चे को ऐसी गालियां नहीं देनी चाहिए!
एक तरह से, वहाँ के कपड़े सादे और सहज थे। गाँव के लोगों की तरह, छात्र और शिक्षक मिट्टी और गोबर में एक साथ काम कर रहे थे, केवल शॉर्ट्स पहने हुए थे, बनियान नहीं। चूंकि सभी के शरीर सभी को दिखाई दे रहे थे, इसलिए कोई किसी दूसरे पर ध्यान नहीं देता था। यहां सब कुछ अलग है!
अनुपाला को साफ महसूस हो रहा था कि यहां आने के बाद से उसमें बदलाव आ गया है। दिन हो या रात, किसी भी समय, बिना किसी झिझक के उसके मन में अचानक कोई इच्छा उठ उठती! किसी शांत, सुंदर बगीचे में अचानक मधुमक्खियों का झुंड प्रकट हो जाता – किस दिशा से, किस अनजान जगह से, वह समझ नहीं पाती। कॉलेज परिसर में सीधी कद-काठी वाली लड़कियां दिखतीं, छोटी, बेढंगी कद-काठी वाली लड़कियां दिखतीं, फिर भी बदसूरत चेहरों वाली लड़कियां दिखतीं, फिर भी जब वह दीवार पर लगे फिल्मी पोस्टरें देखती – तो वह बिना देखे ही आँखें बंद करके बिस्तर पर लेट जाती, फिर भी उसके मन में उलझन बनी रहती! यह कॉलेज तो बुरा है! कॉलेज में इनमें से किसी के साथ ऐसा कोई अत्याचार नहीं होता था।
लेकिन ये सब सिर्फ कॉलेज में ही नहीं होता। छुट्टियों में जब आप दिल्ली जाते हैं, तब भी वहां की लंबी लड़कियां... बाप रे! अगर इन सब से छुटकारा पाना है तो कॉलेज वापस जाना पड़ेगा। लेकिन अब जब आपकी पढ़ाई पूरी हो चुकी है, तो आप वहां कैसे जाएंगे? अगर आपको इंजीनियर बनना है तो इसी कॉलेज में पढ़ना होगा।
बेवर्ली स्कूल में अपने दोस्तों से कहानी सुनने के बाद, उसे लगने लगा कि अंगूठी की छवि को दिमाग से निकाल देना और अपनी मर्ज़ी से नग्न होना मज़ेदार होगा। फिर भी, उसके मन में वह कैबरे अभी भी था जो उसने स्कूल के दिनों में बेंगलोर के एक होटल में ओमी और जगगु के साथ देखा था। उस समय, वह किसी लड़की के नग्न रूप को देखने के लिए बेहद उत्सुक था। इन तीन सालों में मैं कितना बदल गया था! आज भी, उस कैबरे की याद मुझे पागल कर देती है! पागल! मेरा मन

करता था कि सड़क पर दिखने वाली हर लड़की को घसीट कर उसका सिर घुमा दूं।
एक दिन उसने ओमी और जगगु को अपनी स्थिति के बारे में बताया। जगगु ने कहा,
"यही होता है हॉस्टल का साधारण खाना खाने से! ज़रा सोचो हमारा क्या हाल होता है जो शुद्ध घी में पकी सब्ज़ियाँ और मक्खन के पराठे खाते हैं! पुराने दिन कितने अच्छे थे! लोग जल्दी शादी कर लेते थे। बच्चे अठारह साल की उम्र में ही अपना पहला बच्चा पैदा कर लेते थे! शिक्षा की यह लहर आई और कम उम्र में होने वाली शादियाँ हमेशा के लिए भुला दी गईं!"
"क्या तुम्हारी उम्र की लड़कियों को कोई समस्या नहीं होती?"
"ऐसा क्यों न हो? उनके माता-पिता हमेशा उन्हें कॉलेज भेजने के लिए दबाव डालते रहते हैं - अगर उन्होंने कोई गड़बड़ की, तो वे कॉलेज बंद करवा देंगे और उन्हें घर की रसोई में काम करवाएंगे! इसके अलावा, उन्हें यह भी डर है कि एक बार उनका नाम खराब हो गया, तो भविष्य में शादी करना मुश्किल हो जाएगा। अगर वे इन दोनों परेशानियों से मुक्त हो जाएं, तो यह उनके लिए बहुत अच्छा होगा!"
अनुपाल भी यह बात समझ गया था। उस दिन से, वह हर लड़की को देखकर यह जानने की कोशिश करने लगा कि क्या वह डर से घिरी हुई है या आज़ादी की उम्मीद से निडर है। लेकिन उसे कुछ भी पक्का समझ नहीं आया। यहाँ तक कि जो लड़कियाँ खुलकर बोलती थीं, उनकी बातचीत के विषय भी बस यही होते थे, "कॉलेज कैसा चल रहा है? क्या तुम नोट्स लेते हो?"
काम का यह एहसास आठ से पंद्रह दिनों के भीतर गायब हो जाता था। उस समय शिक्षा, पढ़ाई और अन्य चीज़ें ध्यान खींचने लगती थीं। यह ठीक वैसा ही था जैसे मधुमक्खियां अचानक फिर से हमला कर दें, वही स्थिति!
एक दिन उन्होंने हलुक्करे विश्वविद्यालय जाकर डोड्डप्पा को सब कुछ खुलकर बताने और उनसे कोई समाधान मांगने का फैसला किया। दो दिनों के भीतर ही उनका यह विचार प्रबल हो गया। डोडप्पा से बात करने के अलावा, वहां के अन्य शिक्षकों और छात्रों से मिलने और उस माहौल में घूमने से भी यह विचार उनके मन में जोश भर गया। उन्हें मोटरसाइकिल से वहां जाना था। वो भी जींस पहने हुए। इलेक्ट्रॉनिक इंजीनियरिंग के क्षेत्र में ये सब बातें जरूरी हैं – इसलिए सबको बताया जाना चाहिए। जब हम जहां चाहें, जब चाहें, जिस रास्ते से चाहें, जिस गति से चाहें, और जिस मंजिल तक चाहें पहुंचने की आजादी का अनुभव करने के बाद, किसी और के वाहन पर निर्भर रहना और उसका इंतजार करना – सड़क के मोड़ से पैदल चलना – अरे बाप रे! पैदल चलने के इस आदिम तरीके पर हमेशा के लिए प्रतिबंध लगा देना चाहिए! इसके बिना मानव विकास असंभव है!
हां! यह तो बहुत अच्छा विचार है! जब मैं वहां जाऊंगी, तो डोड्डप्पा और अन्य शिक्षकों के साथ इस विषय पर विस्तार से चर्चा करूंगी। नहीं तो, जब मैं वहाँ जाऊँगी, तो मुझे सभी बच्चों के सामने भाषण देने के लिए कहा जाएगा! साथ ही, इस इलेक्ट्रॉनिक युग में—इस युग की तीव्र गति को देखते हुए—हम विभागाध्यक्ष द्वारा यहां प्रथम वर्ष के बच्चों को बताई गई कुछ बातों का भी उपयोग कर सकते हैं। लेकिन विभागाध्यक्ष ने अंग्रेज़ी में बात की। वे सब कुछ कन्नड़ में कहते थे—अगर मैं कॉलेज में अंग्रेज़ी बोलने की आदत बना लूँ, तो कैसे! वहां के सभी शिक्षक—इंजीनियर और डॉक्टर भी हैं—कहते हैं कि किसी भी विषय को कन्नड़ में समझाया जा सकता है—बस कुछ नए शब्द गढ़ने होते हैं, बस! छोड़ो—बेहतर होगा कि हम अपना भाषण कन्नड़ और अंग्रेज़ी मिलाकर दें!
भाषण से पहले, जब मैं श्रोताओं से अपना परिचय दूंगा – मेरा परिचय कौन देगा? इस वर्ष छात्र सचिव कौन होगा? कोई भी क्यों नहीं! अपने भाषण में डोडप्पा

अवश्य कहेंगे –
"हमारे विद्यालय में अनूप जैसा होशियार छात्र पहले कभी नहीं था! उसने पहली कक्षा में सफलता प्राप्त की है और इसी वजह से उसने हमारे विद्यालय और शिक्षकों का नाम रोशन किया है..."
यह सोचकर उसके पूरे शरीर में सिहरन दौड़ गई।
सब कुछ वैसा ही हुआ जैसा उसने सोचा था। शनिवार की क्लास खत्म होने के बाद जब वह वहां पहुंचा तो सवा दो बज रहे थे। चूंकि अगला दिन रविवार की छुट्टी थी, इसलिए उसका भाषण शनिवार को ही तय किया गया था। अनुपाल यह भी जानता था कि उसके बाद शिंग्रे गौड़ा सबसे अच्छे वक्ता थे। उन्होंने अनुपाल के गुणों और गौरव की प्रशंसा करने में अपने भाषण कौशल का भरपूर इस्तेमाल किया। डोडप्पा, जो बाद में अध्यक्ष बने, उन्होंने भी उसकी खूब प्रशंसा की! अनुपाल ने अपने भाषण की शुरुआत यह कहकर की कि इलेक्ट्रॉनिक युग गति का युग है। उसने तीन बार उदाहरण दिया कि कैसे वह अपने कॉलेज से, जो 75 मील दूर था, खराब सड़कों पर भी बुलेट ट्रेन से एक घंटे पंद्रह मिनट में यहां आया था। उसने वहां मौजूद बच्चों को बुलेट ट्रेन की सवारी कराकर गति का अनुभव भी कराया।
इन सबके बाद, खाना खाते समय, उसे यहां आने का उद्देश्य याद आया। लेकिन इलेक्ट्रॉनिक युग और गति पर भाषण देने के बाद, गोलियों की गति से सबको प्रभावित करने के बाद, अब वह डोडप्पा के सामने अपना गाना गाना चाहता है? यही तो असली बात है! उसे शर्म महसूस हुई। इसलिए खाना खाने के बाद, वह डोडप्पा से मिला और बोला,
मैं तो बस आप सभी से मिलने आया था!...
मुझे पता ही नहीं था कि तुमने मोटरसाइकिल खरीदी है!
डोडप्पा के सवाल ने उसे उलझन में डाल दिया। उसने तो पापा को ये खबर बताई ही नहीं थी। अगर बताई होती तो पापा शुरू में ही आपत्ति जता देते। अब तो डोडप्पा अगली बार ज़रूर बताएगा। शायद वो चिट्ठी लिखकर भी बता दे। ये हमारी गलती थी – हमें गाड़ी यहां नहीं लानी चाहिए थी।
डोडप्पाच ने कहा,
देखो, मैंने देखा है कि आजकल कितने बच्चे इसे खरीद रहे हैं। इस उम्र में वे बेतहाशा रफ़्तार से गाड़ी चलाते हैं और सड़क पर निर्दोष लोगों को मार डालते हैं, अपनी जान भी खतरे में डालते हैं, इसलिए माता-पिता चिंतित हैं। ज़रूरी बात बताओ? तुमने बच्चे को जो भी दिया है, माँ को पिता को बताना चाहिए और पिता को माँ को। नहीं तो बच्चे उसका फ़ायदा नहीं उठा पाएंगे! यह उन बच्चों की नज़र में ठीक नहीं है। तुम भी जानते हो कि तुम्हारी माँ तुम्हारे पिता को नहीं बताएगी। इसलिए, ऐसे समय में तुम्हारे लिए उन्हें बताना ही सही होता। अगर तुम अपनी माँ से कुछ भी माँगो, तो अपने पिता को बताए बिना मत जाना।
"अगर मैं तुम्हें सब कुछ बता दूँगी, तो पापा मुझे कुछ नहीं देंगे!..."
"ओह, तुम्हारे पिता को विद्यार्थी की जरूरतों का पूरा ज्ञान है। जरूरत से ज्यादा पैसा मिलने पर भी बच्चे बिगड़ जाते हैं। अत्यधिक अपेक्षा ही पतन का कारण होती है!"
यही तो विश्वविद्यालय का सार है! डोडप्पा हमेशा यही कहते हैं। इसमें नया क्या है? उनके विचार में, विद्यार्थी ब्रह्मचारी होते हैं! पहले तो सभी विद्यार्थी ब्रह्मचारी कहलाते थे! उन्हें न तो दर्पण में अपना प्रतिबिंब देखना चाहिए और न ही ठहरे हुए पानी में – यही मन की बेचैनी का कारण बनता है। इसके अलावा, विद्यार्थी को कुछ शारीरिक कार्य करना चाहिए – खाने के बाद पढ़ना और सोना चाहिए – सुबह उठते ही तुरंत उठ जाना चाहिए – अन्यथा यह मन की बेचैनी को बढ़ावा देने जैसा होगा – इत्यादि! अब अगर मैं उन्हें अपने मन के विकारों के बारे में बताऊं, तो वे

मुझे यहाँ कहेंगे! – 'मोटरसाइकिल छोड़ दो – सुपर स्पीड किंग छोड़ दो – बाटिक टी-शर्ट, बेल-बॉटम पैंट, जींस, टाउजर पहनना छोड़ दो।'
"डोडप्पा, मैंने पापा को अभी तक नहीं बताया कि मैंने एक मोटरसाइकिल खरीदी है। उन्हें मत बताना। मैं उन्हें बैंगलोर जाकर बता दूंगी..."
"वह अगले शनिवार शाम को यहाँ आ रहा है। रविवार को यहाँ एक मीटिंग है। अगर मैं उसे न भी बताऊँ, तो क्या दूसरे बच्चे या शिक्षक उसे नहीं बताएँगे? वे उसे प्रशंसा के साथ बताएंगे। क्या यह सही है कि अगर आप उन्हें न बताएँ तो आप उनसे बताने की उम्मीद करें?"
अनुपम को लगा कि यहाँ आकर उसने गलती कर दी है। अब, जब उसने मैसूर में अपने दोस्तों को पत्र लिखा, तो उसे राहत महसूस हुई। उसने लिखा कि उसने चार दिन पहले एक मोटरसाइकिल खरीदी है - एक दोस्त से सेकंड हैंड कार - और उसकी माँ ने इसके पैसे दिए हैं, इसलिए अगर वह उन्हें बताएगा तो पापा कुछ नहीं कहेंगे!
अगले दिन, हवा की गति से मैसूर लौटते समय, उनके मन में यह विचार आया – अगर मम्मी की फैक्टी में बनी कमीजें सिर्फ विदेश ही भेजी जाएं तो क्या होगा? इन्हें भारत में भी बढ़ावा देना चाहिए। पतलून भी बनानी चाहिए। उन्हें यह भी याद आया कि मम्मी की फैक्टी में इसके लिए भी प्रयास किए जा रहे थे। अगर सभी छात्र डोडप्पा का अनुसरण करेंगे, तो मुम्मी की फैक्टी में बनी हुई कमीजें बिकेंगी कैसे? अगर कोई डोडप्पा के दर्शन में ही लगा रहे, तो कोई प्रगति संभव नहीं है!
इस विचार के साथ ही मेरे मन का तनाव कम हो गया और कार की गति और भी बढ़ गई।

■

पूरे कॉलेज में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति था जो इलेक्ट्रॉनिक्स के तीसरे वर्ष में पढ़ रही रश्मी सिंह को न जानता हो। पूरा कॉलेज उसे एक बेहद साहसी लड़की के रूप में जानता था जो किसी भी पुरानी परंपरा का पालन नहीं करती थी। इतना ही नहीं, वह अपने आकर्षक कद-काठी के लिए भी जानी जाती थी।
पांच फुट आठ इंच लंबी और कद-काठी के हिसाब से तंदुरुस्त लड़की। उसका चेहरा उतना खूबसूरत नहीं था। लेकिन उसकी लंबी कद-काठी और व्यक्तित्व ने पूरे कॉलेज का ध्यान अपनी ओर खींच लिया। एक दिन वो चौड़ी किनारी वाली पारंपरिक रेशमी साड़ी पहनकर आती, तो अगले दिन जींस और बनियान जैसी शर्ट पहनकर। इतनी लंबी होने के कारण वो कभी-कभी बिना किसी झिझक के मिडी ड्रेस भी पहन लेती। कभी-कभी वो शॉर्ट्स और टी-शर्ट पहनकर टेनिस खेलती। कभी-कभी वो बस बच्चों के साथ बैठकर सिगरेट पीती – बस मजे के लिए!
उनके पिता सेना में कर्नल थे। उनका हाल ही में मद्रास से तिब्बत सीमा पर तबादला हुआ था। उनकी मां, छोटा भाई और बहन दिल्ली में रहते थे।
एक दिन, जब वह अपने विभाग के नोटिस बोर्ड के पास खड़ा था, वह उसके पास आई और बोली, "हाय।" अनूप ध्यान नहीं दे रहा था। उसने उससे फिर कहा,
अनूप, मैं आपको नमस्कार कर रहा हूं!
उसने अपना सिर घुमाया और उसकी ओर देखा।
आपसे सिर्फ दो इंच छोटा होना आपको इतना आकर्षित क्यों करता है?
उन्होंने भी जवाब में कहा, "हाय।"
उसने उससे स्पष्ट रूप से पूछा,
"पूरा कॉलेज तुम्हें सुपर स्पीड किंग के नाम से जानता है। मैं देखना चाहता हूँ कि इसमें कितनी सच्चाई है!"
यह सुनकर वह खुशी से झूम उठा। उसे अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। कई दिनों से उसके मन में एक खूबसूरत लड़की के साथ डबल सीट पर बैठकर पूरी रफ्तार से मोटरसाइकिल चलाने का सपना था। लेकिन किसी भी लड़की से

'चलो' कहने की हिम्मत उसमें कभी नहीं हुई थी। ऊपर से, उसकी कक्षा की जो लड़कियां अभी-अभी कॉलेज में आई थीं, वे भी इतनी साहसी नहीं थीं। वह इतनी हिम्मत दिखा रही है, इसका मतलब है कि वह कम से कम दूसरे वर्ष की छात्रा होगी।
उसका चेहरा लाल हो गया था, फिर भी उसने जवाब दिया।
अरे, रहने दो! कभी भी!
``कभी भी क्यों? चलो अभी चलते हैं...! क्या समय हो गया है?"
अरे, आप कैसे हैं?
मुझे एक तेज़ रफ़्तार मोटरसाइकिल चलानी है! आप मुझे जितनी तेज़ी से चाहें ले जा सकते हैं! मैं अपने कमरे में जाकर जींस पहनकर वापस आ जाऊंगी। साड़ी तेज़ गति के लिए बिलकुल भी उपयुक्त पोशाक नहीं है। साड़ी तो स्थिर रहने का पहनावा है! सही है या नहीं?
"तो फिर आपको इसे पहनने की क्या जरूरत है?"
``उगाचा... कुछ बदलाव के लिए! क्या धावक बीच रास्ते में नहीं रुकते? ऐसे ही! तुम भी आओ, तरोताज़ा हो जाओ! पंद्रह मिनट में... मतलब... उम... मैं तुम्हारे हॉस्टल के मुख्य द्वार पर साढ़े तीन बजे आऊंगा। मेरी एक शर्त है! मैं किसी और को इंतज़ार नहीं करवाना चाहता। मैं सैन्य अनुशासन में पला-बढ़ा हूँ! तुम जानते ही हो ना?"
मडिकेरी रोड पर ही आप अधिकतम गति से यात्रा कर सकते हैं। बैंगलोर रोड पर बहुत ट्रैफिक है। बाकी सड़कें तो पाषाण युग की हैं! 3:30 बज रहे हैं और मडिकेरी रोड... सूरज की किरणें आपके चेहरे पर पड़ेंगी... अनुपम ने अपना चश्मा उतार लिया। उसके आने से पहले ही उसने मोटरसाइकिल में पेट्रोल भरवा लिया था और हॉस्टल के गेट पर पहुँच गया था। रश्मी, जो 3:19 बजे वहाँ पहुँची, ने अपनी घड़ी देखी और उसकी ओर भौंहें उठाकर हल्की सी मुस्कान दी। उसने जींस, एक पतली स्पोर्ट्स टी-शर्ट और बालों को उड़ने से रोकने के लिए एक मोटा रेशमी स्कार्फ पहना हुआ था। उसकी आँखों पर भी चश्मा लगा हुआ था। जैसे ही उसने इशारा किया, वह एक सधे हुए सवार की तरह पीछे की सीट पर दोनों पैरों को फैलाकर बैठ गई। फिर उसने उससे पूछा,
"क्या ये ठीक है? या मुझे तुम्हारा पेट पकड़ना चाहिए?"
"अब ठीक है..." उसने कहा। वह झट से आगे बढ़ी और बैठ गई, अपने हाथ उसकी कमर पर रख दिए।
इस महिला की उपस्थिति से वह क्षण भर के लिए बेहोश हो गया। फिर उसने गोली चला दी।
रिक्शा, स्कूटर, ट्रकों से बचते हुए, देखते ही देखते उसकी बुलेट मदिकेरी रोड पर पहुँच गई और उसने गाड़ी की रफ़्तार बढ़ा दी। बुलेट की आवाज़ सामने से आ रही पश्चिमी हवा की आवाज़ में घुलमिल गई। चार-पाँच किलोमीटर तक कुछ शहरी गाड़ियाँ चलती रहीं। जैसे ही वे खत्म हुईं, उसने रफ्तार और भी बढ़ा दी। चार-पाँच मील और आगे बढ़ने पर फैक्ट्री इलाका भी पीछे छूट गया, तब उसकी गाड़ी की रफ़्तार 100 किलोमीटर प्रति घंटे तक पहुँच गई। उसके बाद, 110, 115 - मोटरसाइकिल मानो रुक गई और आसपास के पेड़ बेहद तेज़ी से पीछे छूटते चले गए। उसे लगा जैसे वह किसी हवाई जहाज के उड़ान भरने की रफ्तार पर पहुँच गया हो। तभी उसे एहसास हुआ - उसने पहले कभी इतनी तेज़ गाड़ी नहीं चलाई थी! उस खुशी में उसने उससे पूछा,
``पसंद आया? क्या आपको पसंद आया?"
क्योंकि हवा के कारण वह उन्हें सुन नहीं पा रही थी, इसलिए उसने पूछा,
``–क्या?–क्या?"

उसी समय, उसकी बुलेट ने एक सरकारी बस, एक एम्बेसडर कार, एक फ़िएट, एक ट्रक, सब कुछ पीछे छोड़ दिया! अरे बाप रे! यह ट्रक चालक दूसरे ट्रक चालक को रास्ता नहीं दे रहा, उसने मन ही मन कोसते हुए ट्रक को ओवरटेक किया। हाईवे पर कोई छोटे गाँव नहीं होने चाहिए! कोई झीलें, नदियाँ, घाट या मोड़ नहीं होने चाहिए! सड़क एकदम सीधी होनी चाहिए! हुनसुर एक सौ बीस, तीस, पचास, यानी अड़तालीस किलोमीटर पीछे रह गया।
अब तक उसे उस रफ़्तार की आदत हो चुकी थी और उसका मन उस स्त्री के खूबसूरत शरीर की ओर मुड़ गया था जो उसे गले लगाए हुए था। इस अनुभव के चलते उसने कार की रफ्तार और भी बढ़ा दी।
वह कभी एक सौ दस या पंद्रह से ज़्यादा तेज़ नहीं चला था। अगर दोनों के बीच वज़न हो तो गाड़ी ज़्यादा स्थिर रहती है – वह इतना लंबा और गठीला है – और अगर वह उसमें एक शरीर की तरह बैठे तो संतुलन बेहतर बना रहता है।
कार पिरियापट्टन के पास पहुंची। गांव के पास, लोग, वाहन, बैलगाड़ियां, कुत्ते और मवेशी - उसकी बुलेट की गति अपने आप पचास-साठ की रफ्तार पर धीमी हो गई। गांव को पीछे छोड़ते हुए, उसने फिर से रफ्तार पकड़नी शुरू की, तभी उसने कहा,
"चलो थोड़ी देर यहीं बैठते हैं। फिर इसी गति से दोबारा चलते हैं।"
"क्यों? क्या तुम थक गई हो?" उसने उसके हाथ को अपने पेट पर मारते हुए पूछा।
"वाह! बहुत मज़ा आया! अब मुझे कहीं बैठकर उस गति के अनुभव को आत्मसात करना होगा जिसका मैंने इतने लंबे समय तक आनंद लिया है!..." उसने कहा।
उसने कुछ दूरी पर स्थित एक बड़े नीम के पेड़ के पास बुलेट कार खड़ी की, और वे दोनों पेड़ के नीचे उगी जड़ों पर बैठ गए। उसने उससे पूछा,
"क्या तुम मोटरसाइकिल नहीं चला सकते?"
नहीं।
मैं तुम्हें सिखाऊंगा...
नहीं। मैंने पापा को वचन दिया था। उन्हें दोपहिया वाहनों से बहुत डर लगता है। कहते हैं कि दोपहिया वाहन दुर्घटना में सबसे पहले चालक को चोट लगती है, फिर वाहन को। लेकिन कार के मामले में, सबसे पहले इंजन को चोट लगती है। मैं कार चलाती हूँ... एम्बेसडर, फिएट... पापा ने ही मुझे सिखाया है!
आप कितनी गति से जा रहे हैं?
"पापा ने हमें चेतावनी दी है कि गांव में चालीस से ज़्यादा और गांव के बाहर साठ से ज़्यादा तेज़ गाड़ी नहीं चलानी चाहिए! फिर भी, हमें गांव के बाहर गाड़ी चलाने का कभी मौका ही नहीं मिलता!"
"तुमने पापा से वादा किया था, तो आज तुम मेरे साथ क्यों आई हो?"
मैंने वादा किया था कि मैं गाड़ी नहीं चलाऊंगी! मैंने बाइक न चलाने का वादा नहीं किया था!" उसने आगे कहा, "आप कार में चाहे जितनी भी तेज़ चलें, आपको मोटरसाइकिल की रफ़्तार का एहसास नहीं होता! उतना मज़ा नहीं आता! एक जेट विमान छह सौ मील प्रति घंटे की रफ़्तार से उड़ता है। वहाँ भी आपको मोटरसाइकिल की रफ़्तार का एहसास नहीं होता। क्योंकि वहां आप एक बंद घेरे में होते हैं, है ना? अनूप – अब, आपने मोटरसाइकिल पर जो रफ़्तार पकड़ी!... आप... आप सचमुच सुपर स्पीड के बादशाह हैं!"
मैसूर लौटते समय, पीछे से आती सूरज की किरणें... पश्चिम से आती सुहावनी हवा... दोनों बातें करते हुए मैसूर पहुंचे गए।

■

उसके बाद, जब भी संभव होता, वे अपनी मोटरसाइकिलों पर एक छोटी सी सवारी के लिए निकल जाते। वे नीलगिरी रोड, तिरुमकुडलु-नरसिपुर रोड, बन्नूर रोड, बैंगलोर रोड जैसी किसी एक सड़क पर चालीस से पचास मील तक तेज़ गति से

गाड़ी चलाते और फिर उसी गति से लौट आते। फिर वे किसी फास्ट फूड रेस्टोरेंट की हल्की रोशनी में चुपचाप बैठ जाते और चालीस से पचास रुपये खर्च करते हुए एक कोल्ड ड्रिंक पीते। बिल का भुगतान हमेशा वह खुद करती थी। बिना कुछ कहे, उसने अपने व्यवहार से यह जता दिया था कि "अगर पेट्रोल का खर्च तुम्हारा है, तो यह खर्च मेरा है।"
एक बार उसने पूछा,
"तुम चाहे कितनी भी पैसा खर्च कर दो, क्या तुम्हारे पापा तुमसे गुस्सा नहीं होते?"
वह एक पल के लिए हिचकिचाई, यह सोचकर कि जवाब दे या न दे, और फिर बोली,
"लेकिन मैं इतना पैसा कहाँ खर्च करूँ?"
उसने इस विषय पर उससे दोबारा कोई सवाल नहीं पूछा। एक अलग संदर्भ में, उसे उससे एक जानकारी मिली - उसके पिता सेना के इंजीनियरिंग विभाग में एक अधिकारी थे।
चूंकि वह उससे दो साल आगे थी, इसलिए वह कभी-कभी उससे उसकी पढ़ाई की कठिनाइयों के बारे में पूछता था। जब उसके मन में कुछ होता, तो वह स्पष्ट रूप से जवाब देती। और जब उसके मन में कुछ नहीं होता, तो वह कहती, "मुझे जाने दो! जब हम मिलते हैं तो तुम कितना मुश्किल विषय उठाते हो!"
एक दिन उसने कहा,
मुझे अतिवादी सोच से नफरत है, बताओ वो व्यक्ति कौन है!
मुझे कैसे पता चलेगा?
अगर आप मुझे बता सकें, तो मैं समझ जाऊँगी कि आप मुझे पूरी तरह समझ गए हैं! मैं आपको आइसक्रीम खत्म होने तक का समय दूँगी! ज़रा सोचिए..."
उसने जिन चार नामों के बारे में सोचा और बताया, वे सभी गलत निकले।
जब उसने हार मान ली, तो उसने जवाब दिया,
आइंस्टीन!
वह हैरान रह गया। यह देखकर उसने आगे कहा,
"तुम्हें कैसे पता? उन्होंने ही गति की सीमा तय की थी। प्रकाश की गति तो उनसे पहले से ही ज्ञात थी। उन्होंने ही यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि कोई भी चीज़ उससे तेज़ नहीं जा सकती! क्या यह हम जैसे गति के दीवानों के सिर पर ठंडा पानी डालने जैसा नहीं है?"
अनुपाला भी यह बात समझ गया। मात्र एक लाख छियासी हजार मील प्रति सेकंड? उसे भी निराशा हुई। आइंस्टीन के सिद्धांत को गलत साबित करने के लिए कुछ तो करना ही होगा! गति सीमा बढ़ानी होगी! कितनी? उसे दृढ़ विश्वास था कि कोई ऐसी शक्ति अवश्य होगी जो दोगुनी-चार गुनी-आठ गुनी-दस गुनी—कितनी अधिक तेज़ गति प्रदान कर सके, कोई ऐसा सिद्धांत जिसे प्रतिपादित किया जा सके।
"तुम क्या सोच रहे हो?" उसने पूछा।
उसने अपने मन की बात शब्दों में पिरोकर उसे बताई।
उसने कहा,
"अरे, लेकिन इस ऊब के विज्ञान में तो वे इसे साबित करने के लिए सबूत मांगते हैं - वे एक गणितीय सूत्र दिखाने को कहते हैं! अन्यथा, वे अब तक यही सिद्धांत स्थापित कर चुके होते और आइंस्टीन का जीवन दुखमय बना देते!"

■

एक शनिवार दोपहर, हमेशा की तरह, वे गंगोत्री विश्वविद्यालय के रंगमंडपम के पास एक सीमेंट की बेंच पर अपनी मोटरसाइकिल पर बैठे थे। अचानक उसने पूछा,

"तुम्हारे कपड़े फटे-पुराने थे - वो एक घटना थी, है ना? उस समय वास्तव में क्या हुआ था?"
अनूप बहुत असमंजस में था। उसे जवाब देने में झिझक हो रही थी। उसका चेहरा लाल देखकर उसने कहा,
"मुझे आपको यह बताने की ज़रूरत नहीं है। लेकिन ज़्यादातर मामलों में, वे आपको अपने कपड़े उतारने के लिए कहते हैं। क्या आपके साथ भी ऐसा हुआ है?"
आप क्या जानते हैं?
"मेरे साथ भी रैगिंग हुई थी। मैंने लोनावला के एक गर्ल्स रेज़िडेंशियल स्कूल से प्री-डिग्री की पढ़ाई की थी। वहाँ की सीनियर लड़कियों ने भी मेरे साथ ऐसी ही रैगिंग की थी। लेकिन मैं बिलकुल भी डरी नहीं थी - मुझे शर्म भी नहीं आई। फ़िर उन्होंने मुझे मेरे कपड़े वापस दे दिए! आप इतने गुस्से में पुलिस के पास क्यों गईं?"
`` Mi ka vaitagalo–so?" उसने बिना कोई जवाब सोचे-समझे कहा।
"क्या इससे पहले कभी किसी ने तुम्हें इस तरह नहीं देखा?"
नहीं।
और आप?
`` देखो, हम दोस्त हैं। मैं तुमसे झूठ नहीं बोल सकता..." अनुपम ने उसे बैंगलोर के एक होटल में देखे गए एक कैबरे के बारे में बताया, जब वह हाई स्कूल में पढ़ता था।
"सच में? क्या तुमने कैबरे देखा?" उसने असीम उत्साह से उससे पूछा, "तुम कमाल हो!"
"इसमें किस प्रकार की महानता है?"
सच कहूँ तो, अनूप... मुझे भी बहुत दिनों से कैबरे देखने का मन था! पर वहाँ सिर्फ लड़कियाँ ही नहीं जा सकतीं, है ना? मुझे यह भी पता है कि वहाँ जाना खतरनाक होता है। क्या तुम मुझे कभी वहाँ ले जाओगे?
अनूप हिचकिचाया। एक तरफ तो वह उत्साहित भी था। उसने सोचा – इसमें क्या दिक्कत है? लेकिन एक लड़की के साथ... वो भी रश्मी जैसी...
लेकिन मैसूर में कोई कैबरे नहीं है...
"तो चलिए बेंगलोर चलते हैं..." उसने अपनी घड़ी देखते हुए कहा, "अभी 2:30 बज रहे हैं। चलिए हॉस्टल चलते हैं। कुछ पैसे लेकर तुरंत बैंगलोर चलते हैं! 6 बजे एक शो है, देखते हैं। उसके बाद हम तय कर सकते हैं कि वहीं रुकना है या मैसूर आना है..." यह कहकर वह खड़ी हो गई।
जब वह कंधे पर एक थैला और शरीर पर एक पतलून और एक कमीज़ पहने निर्धारित स्थान पर पहुँची, तो वह भी, जैसा उसने सुझाव दिया था, अपनी गाड़ी में पूरा पेट्रोल भरवाकर वहीं रुका रहा और उसके कंधे पर कपड़ों से भरा एक थैला लटका हुआ था। हमेशा की तरह, वह उसके पीछे बैठी और अपनी बाहों को उसकी कमर में कसकर लपेट लिया।
कुछ ही पलों में उसकी गाड़ी ने रफ्तार पकड़ ली और सड़क पर चल रहे वाहनों, आस-पास के पेड़ों, खेतों और गन्ने के खेतों को पीछे छोड़ते हुए, वह बेंगलुरु की ओर तेज़ी से निकल पड़ी। उसे यह देखकर भी रोमांच हुआ कि वह मन में आते ही तुरंत किसी विचार को अमल में ला देती है। उसके पेट पर किए गए स्पर्श ने उसके उत्साह को और बढ़ा दिया। हालांकि उसे पता था कि उसके पास काफी समय है, फिर भी चालान कटने के डर से उसने गाड़ी बिना कहीं रुके और बिना गति धीमी किए चलाई और अनुपमा को उसी होटल में ले गई जहाँ वह तीन-साढ़े तीन साल पहले ब्रिगेड रोड पर गई थी।
वह इमारत वहीं थी। बाहर एक बोर्ड भी लगा था जिस पर लिखा था कि कैबरे शो चल रहा है। सीमी, हेलेन, हंसा, रति आदि लड़कियों के पोस्टर लगे थे। उसने

रश्मी को कार के पास खड़ा किया और अंदर जाकर स्टेज के पास एक मेज पर दो कुर्सियाँ खरीदीं और साठ रुपये प्रति टिकट खरीदकर बाहर आया। शो साढ़े छह बजे शुरू होना था। उससे पहले कुछ खाने का मन बनाकर उसने अपनी बुलेट कार ब्रिगेड रोड स्थित उस होटल की ओर मोड़ दी जहाँ उसने पहले चिकन खाया था।
टेबल पर आमने-सामने बैठकर मेन्यू कार्ड देखते हुए अनुप को यहाँ पहले खाई हुई चिकन याद आ गई। रश्मी शुरू से ही मांसाहारी थी। लेकिन यह याद करके कि वह उसके साथ सिर्फ़ शाकाहारी खाना खाती है, अनुप का प्यार उसके लिए और भी बढ़ गया। हालाँकि उसने स्कूल के दिनों में कभी-कभार ही मांस खाया था, लेकिन कॉलेज में आने के बाद उसने कभी मांस नहीं खाया। कॉलेज में डोडप्पा अक्सर अहिंसा की बातें करते थे। नतीजतन, उसके मन में इसके प्रति आकर्षण पूरी तरह खत्म हो गया था। इसीलिए उसने यहाँ हॉस्टल में आते समय भी खुद को शीकाहारी लिखा था।
लेकिन क्या यह अन्याय नहीं है कि हम सिर्फ इस चिकन के लिए एक मशहूर होटल में आएं और रश्मी को इससे वंचित कर दें? क्या उसके हमारे प्रति प्रेम को खत्म करना हिंसा नहीं है? क्या हमें उसके लिए इतना बलिदान नहीं देना चाहिए?
"तुम क्या सोच रहे हो?" उसने पूछा।
उसने अपने विचार उससे व्यक्त किए। वह चौंक गई,
"बकवास! जो भी मन में आए, वही करो... बस! इतना सोचने के बाद भी अगर कोई फैसला नहीं ले पा रहे हो, तो खुद पर ज़बरदस्ती मत करो!..." उसने पास आए वेटर से चना पूरी और पिज्जा का ऑर्डर देते हुए कहा।
यह महसूस करते हुए कि वह लड़की उससे भी तेज है, उसके प्रति उसकी प्रशंसा और भी बढ़ गई।
कार्यक्रम शुरू होने से दस मिनट पहले, वे दोनों अंदर गए और अपनी-अपनी सीटों पर बैठ गए। ऑर्केस्ट्रा शुरू हो चुका था। अंदर हलकी रोशनी थी। उस रोशनी में लोग आते-जाते और बैठते हुए दिखाई दे रहे थे। रश्मी उत्सुकता से चारों ओर देख रही थी।
अनुप भी बेचैनी से इधर-उधर देख रहा था। साढ़े तीन साल पहले की यादें – वो पुलिस छापा – थाने में बिताया वो समय – वो अपमान – अगर कोई हमें रश्मी के साथ यहाँ देख ले तो क्या होगा? रश्मी, हालांकि, वहाँ के माहौल को बिना किसी डर के देख रही थी। अनुप खुद को समझाने लगा – तब हालात अलग थे। मैं जवान था। जब मैं स्कूल बैग लेकर आया था! उस समय का मासूम चेहरा – अब मेरी ठुड्डी पर दाढ़ी के काले बाल हैं! मेरी लंबाई भी बढ़ गई है। और तो और, मेरा शरीर भी मजबूत हो गया है! इस सैमसन फैशन की शर्ट के साथ! रश्मी की लंबाई और शरीर एक परिपक्व महिला जैसे हैं। और वैसे भी, साढ़े तीन साल बाद मुझे यहाँ कौन पहचानेगा?
तभी बेरा नाश्ते और पेय पदार्थों का ऑर्डर लेने आया। रश्मी ने कहा कि उसे कुछ नहीं चाहिए, लेकिन उसने कहा,
"यहां एक नियम है कि आपको कुछ न कुछ लेना ही होगा।"
उसने आदेश दिया,
"दो वेजिटेबल कटलेट और दो कोक–"
बियरर ने उसे अपना पचासी रुपये का नोट दिखाया। उसने चुपचाप पैसे दे दिए, हालाँकि वह जानती थी कि यह एक तरह की ज़बरदस्ती थी। जब बियरर चला गया, तो उसने अपने बैग में रखा छोटा टेप रिकॉर्डर चालू कर दिया। ऑर्केस्ट्रा के कान फाड़ देने वाले शोर के बीच, उसने उसके कान में फुसफुसाया,
क्या आपने उधर देखा? ये एक नया जोड़ा है! उनके कपड़े, उनके गहने और सबसे महत्वपूर्ण, उनके चेहरे देखिए! ये सचमुच एक नया जोड़ा है! हमारे पीछे दो

महिलाएँ हैं। एक पचास साल की है और दूसरी चालीस साल की। उनके साथ जो पुरुष हैं, वे पति हैं या दोस्त, कौन जाने!
उसने पीछे मुड़कर देखा। साढ़े तीन साल पहले जब वह आया था, तब यहाँ कोई महिला नहीं थीं। अब रश्मी अकेली महिला नहीं थी, यह देखकर उसे राहत मिली। उसने अपनी घड़ी देखी – छह बजकर पाँच मिनट हो चुके थे – और वह बहुत बेचैन हो गया। उसने झुंझलाहट में बुदबुदाया,
"इतनी जल्दी शुरुआत करने की उनमें कितनी हिम्मत है!"
उसे यह भी पता था कि सभी कुर्सियाँ भरनी हैं, हर मेज पर नाश्ता और पेय परोसे जाने हैं और टिकटों के लिए भुगतान की गई राशि एकत्र करनी है। तब तक कैबरे शुरू नहीं होगा! – इसी विचार के साथ, उसके मन में बेचैनी का कारण भी स्पष्ट हो गया – क्या होगा अगर पापा अचानक यहाँ आ जाएँ! उसने धीरे-धीरे चारों ओर देखा। एक कोने में, एक लड़की अपने बाल पीछे बाँधे खड़ी थी – बिल्कुल पापा की तरह! क्या होगा अगर पापा वहाँ हों? क्या होगा अगर उन्होंने मुझे अभी देख लिया हो?
"तुम क्या सोच रहे हो?" उसने पूछा।
वे समय की कद्र नहीं करते!
``का?–"
उसके चतुर प्रश्न से वह रोमांचित तो हुआ, लेकिन फिर उसने पीछे बंधे बालों वाले उस आदमी की ओर एक नज़र डाली – नहीं। यह पापा नहीं हैं। उनकी ऐसी दाढ़ी नहीं है। फिर उसने सोचा – पापा यहाँ हो ही नहीं सकते! इस विचार से उसे खुशी हुई और उसने अपनी नज़र उसकी ओर घुमाई और उसकी चतुर नज़र से मिल गया।
उसी समय माइक्रोफोन पर घोषणा शुरू हुई।
कला प्रेमियों का स्वागत है!... आपके लिए पेरिस, मुंबई, दिल्ली से विशेष कलाकार आए हैं...

■

जब कैबरे खत्म हुआ, तब साढ़े आठ बजे थे। होटल से निकलते समय उसने अपनी घड़ी देखी और पूछा,
अब क्या करें?
"क्या करें?" उसने पूछा।
"अब अगर हम निकलें तो 10:30 बजे तक मैसूर पहुँच जाएँगे। वहाँ पहुँचते ही तुम अपने हॉस्टल चले जाना और मैं अपने हॉस्टल! मैं बहुत थक गई हूँ!"
"तो? क्या हमें यहीं होटल का कमरा लेना चाहिए या क्या?"
यह सुनकर वह खुश हुआ, लेकिन थोड़ा डरा हुआ भी था। उसने कहा,
लेकिन आपको इस बारे में सोचना होगा! आपको अपनी मोटरसाइकिल पार्क करने के लिए एक उचित पार्किंग स्थान चाहिए। इसीलिए छोटा होटल आपके लिए उपयुक्त नहीं है। कोई भी बड़ी होटल में छोटी-मोटी पूछताछ नहीं करता। इसमें थोड़ा अधिक पैसा लगेगा। आपके पास कितना पैसा है?
``तीन सौ..."
"मेरे पास हज़ारों सवाल हैं। यहाँ सबसे अच्छा होटल कौन सा है? आप बैंगलोर में रुके थे, है ना? आपको पता होगा। अगर नहीं, तो यहाँ किसी से पूछ लीजिए।"
पास ही में, उसकी उम्र के कुछ लोग, स्टोनवाश्ड जींस पहने हुए, एक यामाहा बाइक स्टार्ट करने की कोशिश कर रहे थे। उसने उनमें से एक आदमी से सवाल किया। उन दोनों ने उसे देखा था। उसने उनकी बात तुरंत समझ ली और कहा,
``इस तरह आगे बढ़िए। महात्मा गांधी रोड पर जाइए, और अगले चौराहे पर 'रॉकी' नाम का एक होटल है। यह बहुत ही अच्छा होटल है। कोई फालतू ताम्झाम नहीं। किराया तीन सौ पचास रुपये प्लस टैक्स है। चेक-आउट का समय दोपहर

बारह बजे है। वहाँ खाने-पीने का कोई सुविधा नहीं है, बस यहाँ एक कुमी है। पार्किंग की सुविधा भी अच्छी है! वे इसके लिए दस रुपये अलग से लेते हैं – बस इतना ही!"
अनुपान ने उससे कुछ भी अतिरिक्त नहीं पूछा। उसकी प्रेमिका ने भी रश्मी की तरफ़ एक नज़र डाली, बस इतना ही। दोनों को अपने व्यवहार में आधुनिक अलगाव अच्छा लगा। इसी बारे में बात करते हुए दोनों बुलेट पर सवार होकर रॉकी होटल चले गए।
होटल मैनेजर ने श्री और श्रीमती शनमुखम के नाम और उनके द्वारा दिए गए पते, मायलापुर, मद्रास को भी लिख लिया और बिना किसी और पूछताछ के उन्हें एक कमरा दे दिया।
कमरा शानदार था। एक विशाल कमरा, जिसमें फर्श पर महंगे कालीन बिछे थे, एक बड़ा सोफा, एक चौड़ा डबल बेड, अच्छी तरह से सुसज्जित बाथरूम, मोटे पर्दे थे, और जब दरवाजा बंद होता था, तो अंदर का वातावरण एकदम शांत हो जाता था।
रश्मी जब अंदर आई तो वह दंग रह गई। हालांकि वह उत्सुक भी थी, लेकिन उलझन में थी क्योंकि उसे समझ नहीं आ रहा था कि बात कैसे शुरू करे। रश्मी, जो कुछ देर से खिड़की के बाहर खड़ी थी, मुड़ी और बोली,
मुझे नहाना है! मेरा शरीर पसीने से चिपचिपा हो गया है। मेरे नहाने के बाद, तुम भी नहा लो..."
जब वह नहाकर लौटा, तो उसने अपना टेप रिकॉर्डर निकाला और उसे बहुत धीरे से चालू किया। कैबरे ऑर्केस्ट्रा की आवाज़ उस पर साफ़ सुनाई दे रही थी। उसने उससे पूछा,
आपको संगीत कैसा लगा?
"वहाँ बहुत शोर था। यहाँ अच्छा लग रहा है...", उन्होंने कहा।
उसका शरीर संगीत की धुन पर थिरक रहा था। कुछ क्षणों तक उस सम्मोहन में रहने के बाद, उसने कहा,
ओह अनूप! मैं इसी तरह नाचती रहना चाहती हूँ...
तो नाचते रहो...
क्या आप इसे पसंद करेंगे?
"जब तुम नाचती हो तो तुम्हें अच्छा क्यों नहीं लगता? क्या तुम्हें यह पसंद है?" उसने पूछा।
``मैंने भुवनेश्वर में ओडिसी नृत्य सीखा था। मद्रास आने पर मैंने भरतनाट्यम की कक्षाएं भी लीं। मैंने इसे ठीक से नहीं सीखा। उस समय मेरे पैरों की चाल बहुत अच्छी थी। अब मुझे कुछ याद नहीं है। लेकिन एक बार जब मैंने वह सीख लिया, तो इस कैबरे में कुछ भी मुश्किल नहीं है! कुछ भी नहीं - आप खुद को इस संगीत में खो सकते हैं - आप सहजता से नृत्य कर सकते हैं - देखिए - क्या आपको यह पसंद आया?"
"अगर आपको पसंद आए तो!" उसने पूरी ईमानदारी से कहा।
यह उसके लिए बिलकुल अप्रत्याशित था। वह उत्सुकता से उसकी हरकतों को देखने लगा। ड्रेसिंग टेबल पर लगे छह फुट के दर्पण में भी उसका प्रतिबिंब दिख रहा था। वह पैदन्यास मुद्रा में थी, एक हाथ से अपने हाउसकोट का किनारा ऊपर उठा रही थी। उसके अंगों पर संगीत की लय की तरह लहरें उठ रही थीं। पहले तो उसे अपने शरीर की हरकतों को शब्दों, धुनों और लय के साथ तालमेल बिठाने में कठिनाई हुई। लेकिन पाँच मिनट के भीतर ही वह उन ध्वनियों और लय में एक हो गई। वह उसे नाचते हुए देखता रहा, अवाक।
आत्ममग्न मन से नाचते हुए, रश्मी उन्मत्त हरकतें कर रही थी, कलात्मक अभिव्यक्ति में अपने कपड़े उतार रही थी, और अपने सामने लगे दर्पण में अपने

सुडौल शरीर की सुंदरता को निहार रही थी, उसे अपनी ही आंखों में संजोकर रख रही थी।
अनुपम भी उसके नग्न शरीर को देखकर उत्साहित था। वह बड़ी-बड़ी आँखों से उसे नाचते हुए देख रहा था।
नाचते हुए उसने मदहोश होकर पूछा,
``पसंद आया?"
``अद्भुत!"
"तुम मेरी करीबी दोस्त हो। उत्तेजित होकर मुझे मत देखो! उत्तेजित अवस्था में सुंदरता का आनंद लेना संभव नहीं है। तुम्हें मेरा यह रूप कैसा लगा, बताओ, चलो देखते हैं!" यह कहते हुए वह फिर से नृत्य में मग्न हो गई और दर्पण में अपने शरीर को देखने लगी।
उसे स्त्री के शरीर का वर्णन करना नहीं आता था। लेकिन अब उसे एहसास हुआ कि यह अनिवार्य है। वह सोचते-सोचते ही कहने लगा,
वाह! मैंने आज तक किसी कैबरे डांसर का ऐसा शरीर नहीं देखा! तुम्हारी लंबाई – इतनी लंबी कौन थी वहाँ? तुम्हारा रंग – तुम्हारा कद – तुम्हारी पतली कमर – ये चिकनी जांघें – ये सुडौल शरीर –" रश्मी को पता भी नहीं चला और वो उसे कुमार व्यास महाभारत में वर्णित महिलाओं के वर्णन के बारे में बताने लगा, जो शरभन्ना मास्टर ने उसे कॉलेज में सिखाया था। उसी आधार पर उसने उसके स्तन – नितंब – हाथ – पैर – टखने – नाखून – उसके पूरे शरीर का विस्तृत वर्णन किया। ये सब सुनकर रश्मी संतुष्ट हो रही थी। इसके अलावा, उसके सामने लगा दर्पण इस बात का प्रमाण था कि उस वर्णन में कोई अतिशयोक्ति नहीं थी। संगीत की धुन पर थिरकता हुआ सुंदर शरीर – उसके पीछे वही खड़ा था।
उसकी निगाहें उसकी परछाई पर टिकी हुई थीं। उसकी आँखों में छिपे अर्थ को समझते हुए, उसने जल्दी से अपने कपड़े उतारने शुरू कर दिए। यह देखकर उसके चेहरे पर नाराजगी के भाव आ गए। उसने कहा,
यह क्या है? आप कितनी तेज़ी से दौड़ रहे हैं! धीमे हो जाइए! लय और ताल महत्वपूर्ण हैं!
उसने शर्मिंदा होकर कहा,
मैंने किसी भी तरह का नृत्य नहीं सीखा है...
इससे सीखने को क्या मिलता है? मैं आपको बताता हूँ, इस तरह कदम उठाएँ—हाँ —एक—दो—तीन—चार—"
वह भी उसके निर्देशों के अनुसार कदम बढ़ाने लगा। धीरे-धीरे संगीत उसके शरीर में समा गया। उसे भी उस लय का आनंद महसूस होने लगा। रश्मी, जो उससे सटी हुई थी, एक मूर्तिकार की तरह अपने दोनों हाथों से उसके शरीर की बनावट को महसूस करने लगी।
कैसेट का एक सिरा खत्म हो गया। कमरे में सन्नाटा छा गया। वह कैसेट का दूसरा सिरा डालने के लिए टेप रिकॉर्डर की ओर बढ़ी। लेकिन वह फिर वापस मुड़ी और उसे डबल बेड की ओर खींचते हुए बोली,
चलो... सेक्स करते हैं..."

■

उस दिन के अनुभव के बाद, उसका मन पूरी तरह से उसी में मग्न था। वह भी उसी में मग्न थी। वे पहले से कहीं ज़्यादा समय साथ बिताने लगे। उसे लगने लगा कि अकेले मोटरसाइकिल चलाना उसके लिए ठीक नहीं है। इतना ही नहीं, पूरे कॉलेज में उसके बारे में चर्चा होने लगी थी।
जीवन के उस पहले अनुभव के बाद, उसका मन बार-बार उस जगह की ओर खिंचा चला जाता था। हालाँकि उसे भी वही आकर्षण था, पर वह चाहती थी कि वह उसके शरीर की सुंदरता की पूजा करे। इसलिए, उसके बाद भी, अपनी इच्छा पूरी

करने के लिए, वह बैंगलोर जाता, वहाँ के किसी होटल में संगीत की धुन पर नाचता, और कपड़े उतारने के बाद, उनका अंतिम चरण शारीरिक संबंध होता। उससे पहले, उसके शरीर और सुंदरता के बारे में जानना भी आवश्यक था।
इस दौरान, उन दोनों ने ब्रिगेड रोड वाले कैबरे के अलावा कई अन्य कैबरे स्थलों का भी दौरा किया था। रश्मी ने वहाँ की हर कैबरे डांसर के डांस स्टेप्स तुरंत सीख लिए थे, और वह होटल की एकांत में अनुपाल को ये स्टेप्स दिखा रही थी।
अनुपम जल्द ही इन सभी सुख-सुविधाओं से ऊब गया। उसने ये बात उसे भी बताई, लेकिन उस पर कोई असर नहीं हुआ। हालाँकि वो कुछ खर्च उठा रही थी - बैंगलोर आने-जाने का किराया, पेट्रोल, होटल का किराया, कैबरे के टिकट - फिर भी अनुपम को लगने लगा कि ये सारे खर्चे बेवजह हो रहे हैं। इतना पैसा खर्च करना और इतना समय बर्बाद करना क्या वाकई ज़रूरी था, ये सवाल उसे परेशान करने लगा। उसे मोटरसाइकिल पर कहीं भी पनाह मिल सकती थी, उस एकांत गाँव से दूर जहाँ उसे रहने की ज़रूरत महसूस हो रही थी।
उसने यह सुझाव उसे भी दिया। लेकिन उसने साफ इनकार कर दिया। उसकी नज़र में, सिर्फ़ शारीरिक संबंध के लिए नज़दीक आना, जानवर से भी नीच स्तर पर उतरना था! यहाँ तक कि जानवर भी संभोग से पहले एक-दूसरे की शारीरिक सुंदरता की पूजा करते हैं! उसने अनुपाल को अपना विचार स्पष्ट कर दिया। होटल के कमरे में जाने से पहले कैबरे देखने की उसकी ज़िद से भी वह चिढ़ गया था। विश्वविद्यालय परिसर में किसी शांत पेड़ के नीचे हो या किसी रेस्तरां के एकांत कोने में, वह उससे उम्मीद करती थी कि वह लगातार उसके शरीर, उसकी बनावट, उसकी कोमल चमक, उसके रंग, उसके सीने और कूल्हों के अनुपात, उसकी जांघों के अनुपात, उसके कूल्हों, उसकी जांघों, उसके स्तनों, उसकी उंगलियों की कोमलता, उसके नाखूनों की चिकनाई की प्रशंसा करे। वह भी इससे थक चुका था। लेकिन यह जानते हुए कि इसके बिना उसकी उम्मीदें पूरी करना असंभव था, वह इस रस्म को बड़े उत्साह से निभा रहा था।
बैंगलोर में अपना पहला कैबरे देखने और होटल में ठहरने के बाद से चार महीने बीत चुके थे। इन चार महीनों में, उन्होंने कैबरे को दस बार और देखा था। एक दिन, जब वे दोनों ललित महल होटल के बगीचे में बैठे थे, तब उसने कहा,
"कैबरे नृत्य कार्यक्रम में भाग लेने की मेरी प्रबल इच्छा है! मैंने ऐसा करने का फैसला कर लिया है!"
यह सुनकर वह बेहद हैरान रह गया। उसने कहा,
तुम क्या कह रहे हो!
"इसमें चौंकाने वाली क्या बात है?" उसने उसके चेहरे को घूरते हुए पूछा।
यह जानते हुए भी कि युवा लड़कियां इस पेशे में प्रवेश करती हैं—"
``आसान लड़कियां, या आसान कारोबार?"
"क्या फर्क है?" उसने बिना ज्यादा सोचे समझे कहा।
"मैंने कुछ लड़कियों को डांस प्रोग्राम के बाद ग्राहकों को अपने पते के कार्ड देने के लिए मनाते देखा है। लेकिन मैं कैबरे डांसर नहीं बनना चाहती - मैं वैसी नहीं हूँ, अगर इतने दिनों बाद भी आपको यह बात समझ नहीं आई है, तो यह आपकी मूर्खता है।"
"सच में नहीं। लेकिन इतने सारे लोगों के सामने अपने शरीर को दिखाना..."
जैसे कि उसने पहले ही इस बारे में सोच लिया हो, उसने कहा।
"अगर इतने सारे लोगों के सामने कपड़े उतारना बुरा है, तो इतने सारे लोगों का उसे देखना भी बुरा है क्या? इतनी बार कैबरे देखने में आप कैसे अच्छे हो सकते हैं? वैसे भी, होटल में मैंने जो कैबरे किया था, उसे देखने में भी आप अच्छे नहीं थे, है ना?"
मुझे मत बताओ। हम दोस्त हैं!..."

"तो क्या दोस्तों के साथ होने पर ही नग्न होना ठीक है!" उसने व्यंग्यपूर्वक कहा।
वह कुछ भी नहीं बता पाया।
"जिस तरह एक गायक किसी सभा में अपनी गायन प्रतिभा का प्रदर्शन करता है, उसी तरह भरतनाट्यम्-ओडिसी नर्तक अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करते हैं, इसलिए मैंने इस कला रूप से प्यार करने वाले प्रशंसकों को अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया, तो फिर क्या गलत हुआ?"
"आप कहते हैं कि वहां आने वाले लोग कला प्रेमी नहीं हैं..." उनकी आवाज ऊंची हो गई।
"भरतनाट्यम् देखने आने वाले भी कला के सच्चे प्रेमी नहीं होते! तुम मेरे साथ कैबरे देखने कितनी बार आए, क्या कला के प्रति प्रेम के कारण या सिर्फ मनोरंजन के लिए?" उनकी आवाज़ में भी तीखापन आ गया।
वह हिचकिचाया, उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। अंत में उसने कहा, चाहे कुछ भी हो जाए, मैं तुम्हें कैबरे डांसर नहीं बनने दूँगा! तुम इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग के छात्र हो!..."
आपको किसने कहा कि मुझे भी अपनी पढ़ाई छोड़कर उसी पेशे में जाना चाहिए? मुझे उन लड़कियों की तरह वहाँ जाकर रोज़ी-रोटी कमाने की ज़रूरत नहीं है। मेरे पिता कोई साधारण फौज़ी अधिकारी नहीं हैं! वे एक सैन्य इंजीनियर हैं! क्या आप इसका मतलब समझते हैं? अगर मैं उनसे हर महीने पाँच हज़ार रुपये भी माँगूँ, तो वे भेज देंगे! इसीलिए मैं वहाँ जब तक चाहूँगी नाचूँगी – अगर मुझे ऊब महसूस हुई, तो मैं छोड़ दूँगी। मैं आपको यह इसलिए बता रही हूँ क्योंकि आप मेरे दोस्त हैं! आपको इस बारे में इस क्षेत्र के किसी व्यक्ति से बात करनी चाहिए और फैसला करना चाहिए। मैं यह ज़िद नहीं कर रही कि मुझे इसके लिए एक निश्चित रकम चाहिए। मुझे उनसे प्रशिक्षण की भी ज़रूरत नहीं है। मैं हर दिन अपने कमरे में टेप रिकॉर्डर के साथ अभ्यास करती हूँ। आप भी परसों रॉकी देखने गए थे, क्या आपने देखा? हो सकता है आपने सूक्ष्म अंतर पर ध्यान न दिया हो – लेकिन मैं समझती हूँ। अगर मैं सच में चाहूँ, तो मैं दो दिनों में तैयारी करके प्रदर्शन कर सकती हूँ!
"लेकिन ये पागलपन नहीं है। ये बात तुम्हारे दिमाग में कहाँ से आई?"
“कुछ न होना ही काफी नहीं है” जैसे शब्दों का प्रयोग न करें। मुझे खुद बताइए, मेरे जितनी लंबाई, मेरे जैसी कद-काठी, रंग-रूप और चमक वाली कौन है? इतना सुंदर शरीर छिपाना क्या अन्याय नहीं है? इसके अलावा, इस शरीर की सुंदरता कब तक बनी रहेगी? एक चित्रकार अपनी कला को हज़ार साल तक प्रदर्शित कर सकता है। लेकिन शरीर की सुंदरता तो जवानी तक ही दिखाई देती है। अब मुझे एक सवाल का जवाब दीजिए - क्या आप मेरे साथ चलेंगे या नहीं?”
"मैं नहीं आऊंगा! तुम जहां जाना चाहो जाओ..." उसने कहा और खड़ा हो गया।
"क्या तुम जाग रहे हो?" उसने उसका हाथ पकड़ते हुए पूछा।
"यहाँ न तो रिक्शा है और न ही परिवहन का कोई अन्य साधन, इसलिए मैं तुम्हें अपने साथ ले जाना अपना कर्तव्य समझता हूँ। अगर दिन का समय होता, तो मैं तुमसे इसका कोई लेना-देना नहीं समझता और चला जाता!"
इसकी कोई जरूरत नहीं है! अगर तुम्हारे दिल में इतना अहंकार है, तो अलविदा! तुम्हें मेरे बारे में चिंता करने की जरूरत नहीं है। मैं यह सब संभाल सकता हूँ।
"हाँ!" उसने अपना हाथ पीछे खींचते हुए जवाब दिया।
वह मुड़ा और सीढ़ियों से नीचे उतरकर बुलेट कार तक गया, कार स्टार्ट की और तेजी से गांव लौट आया।
अगले दिन वह कॉलेज में कहीं नहीं दिखी। नोटिस बोर्ड पर ही नहीं, लेडीज़-जेंडर्स हॉस्टल में, वैनटीन में, बरामदे में – वह अपनी क्लास में भी नहीं थी। सिर्फ़ इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग ही नहीं, बल्कि पूरे कॉलेज ने देखा कि वह अकेली घूम रही

था। चूंकि वह कमरे में अकेला रहता था, इसलिए किसी और के साथ उसके बारे में पूछताछ करने का कोई कारण नहीं था।
फिर अगले दिन उसने तीसरी कक्षा में पढ़ रही जयंती से पूछा। उसने आश्चर्य से कहा,
"तुम्हें यह कैसे नहीं पता? वह कह रही थी कि उसकी चाची की तबीयत बिगड़ गई है। उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं है, इसलिए रश्मी मद्रास चली गई है..."
"जी? मुझे नहीं पता..." उसने आश्चर्य जताते हुए कहा।
"वह आपको बिना बताए जल्दबाजी में चली गई होगी क्योंकि उसे एक अत्यावश्यक टेलीग्राम मिला था। उसने वार्डन और प्रिंसिपल को पंद्रह दिन की छुट्टी के लिए आवेदन पहले ही दे दिया है।"
उसे यह भी पता था कि वह बैंगलोर में है और अगर उसे याद आ जाए तो उसे ढूंढना बहुत आसान होगा। उसे यह भी पता था कि ये कैबरे डांसर अलग-अलग जगहों पर एक ही समय में अलग-अलग नामों से नाचती हैं। उसे यह भी पता था कि इन सभी कैबरे होटलों के मालिक सिर्फ दो ही थे, दामोदरन नायर और चंद्रन कुट्टी, और वे अच्छे दोस्त थे। उसे यह भी पता था कि मुंबई, दिल्ली और मद्रास में भी उनके होटल थे और वही लड़कियां उन्हें हर जगह ले जाती थीं। उन्हें यह जानकारी वहां के चौकीदार से मिली थी। उन्हें यह जानकारी हसीना नाम की एक कैबरे डांसर से भी मिली थी। बाद में, रश्मी उससे कुछ देर अकेले में बात कर रही थी। तो, उसी समय वह इसके लिए तैयार हो रही थी, तो! अब हमें क्या करना चाहिए? उसने इस विषय को उठाने की कोशिश की, लेकिन वह अब भी बेचैन हो रहा था। क्या उसे इतने सारे लोगों के सामने उसे नग्न नाचते हुए देखना चाहिए? इसके बजाय, वह चाकू उठाएगा और उस पर चिल्लाएगा, "मैंने तुम्हारी इज्जत के लिए तुम्हें मार डाला।"
चाहे उसने कितनी भी कोशिश की हो, 'उसका जो भी हो' का ख्याल उसे संतुष्ट नहीं कर पा रहा था। उसकी याद आते ही उसका नग्न शरीर बार-बार उसकी आँखों के सामने आ रहा था। लेकिन उसके मन में यह बात पक्की बैठी हुई थी कि उसे उससे अकेले में ही मिलना चाहिए। उसे लग रहा था कि अगर कोई और उसे देख ले तो यह उसकी बेइज्जती होगी। तभी उसके मन में एक सवाल उठा - क्या मैं सच में उससे प्यार नहीं करता?
इन दिनों वे एक-दूसरे को दोस्त ही कहते रहे थे। प्यार या शादी का ख्याल उनके मन में कभी आया ही नहीं था। उस समय तो ये शब्द उसके मन में भी नहीं आए थे। लेकिन अब, जब भी वह उठता या बैठता, उसे ये याद आ जाता था। उसे लगता था कि उसके शरीर को उसके अलावा किसी और को देखने की इजाज़त नहीं होनी चाहिए। क्या यही प्यार नहीं है? वह उसे ढूंढना चाहता था, उसका हाथ थामना चाहता था और उससे कहना चाहता था, "मैं तुमसे प्यार करता हूँ - चलो शादी कर लेते हैं - लेकिन तुम ये पागलपन वाला विचार छोड़ दो।" लेकिन उसका दिल बैंगलोर जाने से इनकार कर रहा था। क्या होगा अगर वह ये सब करे और उसे ढूंढ ले और वो उसे "बेवकूफ भावुक इंसान" कहकर उसका मज़ाक उड़ाए? या क्या होगा अगर वो कहे, "मैं हज़ारों लोगों के सामने अपना शरीर दिखा दूँगी! अगर तुम मुझसे सच में प्यार करते हो, तो तुम्हें ये स्वीकार करना होगा - तभी मैं शादी के लिए तैयार हो जाऊँगी -" तब वो क्या करेगा?
आखिर प्यार होता क्या है? क्या यह मेरी वर्तमान मनःस्थिति है?
कॉलेज में कक्षाएं चल रही थीं और समय किसी तरह बीत रहा था। लेकिन फिर भी उसकी यादें और विचार उसके मन में बार-बार आते रहते थे। उसे अकेले रहना नामुमकिन लगता था।
एक दिन वह अपनी मोटरसाइकिल लेकर सरस्वतीपुर गया। जगगु और ओमी शाम की चाय और नाश्ता कर रहे थे।

वह अंदर गया और उन दोनों के सामने रखी बेंत की कुर्सी पर बैठ गया, लेकिन दोनों में से किसी ने कुछ नहीं कहा। उसकी मौजूदगी को पूरी तरह से नजरअंदाज़ करते हुए, दोनों चुपचाप नमकीन खा रहे थे। उन्हें क्या हो गया था कि वे इतने अकड़ गए थे, यह सोचकर वह चुपचाप बैठा रहा। लेकिन दोनों चुप रहे। इस अपमान को सहने के बजाय, उसके मन में ख्याल आया, क्यों न यहाँ से चला जाऊं, लेकिन उसने खुद को रोक लिया।
कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद, उन्होंने पूछा,
"रे, तुम इतने चुप क्यों हो?"
दोनों में से किसी ने कुछ नहीं कहा। उसने वही सवाल दोबारा पूछा और जोर देकर कहा, 'तुम्हें जवाब देना ही होगा', जब जगगु ने उससे पूछा।
अरे यार, तुम्हें ये पसंद आया क्या?
"तुम्हारा क्या मतलब है?" अब अनुप असमंजस में पड़ गया।
अरे, लड़की मिल जाने के बाद तुम अपने दोस्तों से इतना दूर क्यों भाग रहे हो? स्वार्थी! रश्मी तुम्हारे साथ हो या हम तुम्हें देख लें, तुम अनदेखा करने का नाटक करते हो! अगर हम तुमसे कुछ पूछते हैं, तो तुम बस जैसे मन में आए वैसे ही जवाब देते हो! तुम्हें अपना परिचय देने की भी तमीज़ नहीं है! अरे, हमें समझ नहीं आता कि तुम रात-रात भर उसके साथ गायब क्यों हो जाते हो? क्यों? क्या तुम्हें डर था कि हम भी हिस्सा मांग लेंगे? स्वार्थी! अब जब वो गांव चली गई है, तो मुझे लगता है तुम यहां टाइम पास करने आए हो!
अनुप को उनकी तरफ देखने में भी शर्म आ रही थी। उनके पास गाड़ियाँ भी थीं— और उन्हें चलाने का मुझसे कहीं ज़्यादा अनुभव था। लेकिन उसे याद आया कि उसने रश्मी को कभी अपने साथ आने के लिए आमंत्रित नहीं किया था क्योंकि उसे डर था कि कहीं वह उसकी गाड़ी में न बैठ जाए।
उसने कहा,
माफ़ कीजिए! ओह, मेरा ऐसा कोई इरादा नहीं था। लेकिन उसे दूसरे लड़कों से मिलना-जुलना पसंद नहीं है, है ना! यह शर्त तो उसी ने मुझ पर रखी थी!
कौन जाने उन दोनों ने उसके बेहद उदास चेहरे को देखकर क्या सोचा होगा! उन्होंने तुरंत पूछा,
``सच? प्रॉमिस?"
भगवान की कसम! माँ की कसम!" अनुप की आवाज़ जोश से भरी हुई थी। उसने ओमी का हाथ अपने हाथ में लिया और वही बात दोहराई। वह यह भी जानता था कि जगगु के दिल को पिघलाने से ज़्यादा आसान ओमी का दिल पिघलाना था।
ओमी ने कहा,
"ठीक है! जब आप माँ के वादे की बात करते हैं, तो आपको उस पर विश्वास करना होगा! चलो, अपनी कुर्सी खींचो," उसने नमकीन की थाली आगे बढ़ाते हुए कहा।
अनुपम् ने झटपट कुर्सी को पास खींच लिया और अभी भी गुड़िया की तरह बैठे जगगु के कंधे पर हाथ रखकर थाली से नमकीन का एक मुट्ठी भर हिस्सा उठा लिया।
``तुम अपने दोस्तों के साथ भी नहीं बांटते! तुम स्वार्थी बदमाश हो! हम ऐसे नहीं हैं!..." अब जगगु ने भी अपना मुंह खोल दिया।
"अरे, चले जाओ बेटे! तुम तो बस चाय-नमक बाँटने के लिए ये सब कर रहे हो! चुप रहो... मुझे सब पता है!..." अनुपना ने उसे डाँटा।
रात भर उनसे बातचीत करने, खाना खाने और हास्टल पहुंचने के बाद, उसका मन काफी शांत हो गया था। उस रात उसे थोड़ी नींद भी आ गई।

■

दिसंबर में, मैसूर प्रेस एसोसिएशन ने रवींद्र के भाषण का आयोजन किया था। जब वे वहाँ पहुँचे, तो उनकी मुलाकात इंजीनियरिंग कॉलेज के प्रिंसिपल से हुई। इसके बाद, वे विभागाध्यक्ष से मिले और उनसे काफी देर तक बातचीत की। उस दौरान, अन्य प्रोफेसर भी बातचीत में शामिल हुए। नाश्ता और कॉफी परोसी गई। उन्होंने आज के तकनीकी पाठ्यक्रमों, छात्रों के रवैये और दान पर आधारित सीटों के बारे में और जानकारी ली। साथ ही, उन्होंने अपने बेटे की शिक्षा और उसके व्यवहार के बारे में भी पूछताछ की। उन्होंने लड़कों के छात्रावास के वार्डन हनुमंथप्पा से भी जानकारी ली।
अनुप के कॉलेज से तीन बजे निकलने के बाद, वह अपनी मोटरसाइकिल की डबल सीट पर बैठा और उस होटल की ओर चल पड़ा जहाँ वह ठहरा हुआ था। वहाँ दोनों ने बातचीत शुरू की।
बोलते हुए रविंद्र ने कहा,
"देखो, तुम तो कॉलेज से पढ़े-लिखे लड़के हो! तुम्हें इस गोली की क्या ज़रूरत थी?"
आपको अन्य कारखानों का दौरा करना होगा और मशीनों को देखना होगा..."
"मैसूर में इलेक्ट्रॉनिक मशीनों वाली एक भी फैक्ट्री नहीं है। अगर मैकेनिकल इंजीनियरिंग के छात्रों को इसकी ज़रूरत भी पड़ती है, तो उनके लिए अंतिम वर्ष में एक यात्रा निर्धारित की जाती है। आपके विभागाध्यक्ष ने मुझे यही बताया था।"
अनुप का चेहरा उतर गया।
``धूप में कॉलेज जाना..."
रविंद्र ने बीच में ही टोकते हुए कहा,
"कॉलेज और हॉस्टल एक ही परिसर में हैं - क्या उस दूरी को तय करने के लिए आपको मोटरसाइकिल की जरूरत है?"
अगर कभी उसका मन गांव जाने का करता... तो वह ऐसे ही एक-दो कमजोर बहाने बना लेता, लेकिन अनुप में उन्हें कहने की हिम्मत नहीं होती थी। जब वह इसी सवाल में उलझा हुआ था, तभी रविंद्र ने पूछा,
"आपने इसे कब लिया था?"
प्रश्न से मुक्ति पाकर प्रसन्न होकर उसने उत्तर दिया,
जुलाई में...
``जुलाई! –हम्म – तो पाँच महीने हो गए! एक सौ पचास दिन! नवरात्रि की छुट्टियों में तुम पंद्रह दिन दिल्ली गए थे... तो बाकी बचे एक सौ पैंतीस दिनों में तुमने सोलह हज़ार छह सौ किलोमीटर गाड़ी चलाई! मतलब औसतन एक दिन...' रवींद्र ने अपनी जेब से कागज़ का एक टुकड़ा निकालते हुए हिसाब लगाया और कहा,
``... तुमने औसतन एक सौ तेईस किलोमीटर गाड़ी चलाई! मुझे पता है कि बच्चे तेज़ गाड़ी चलाने के दीवाने होते हैं। तुम्हारी उम्र के बच्चे इसके खतरों को नहीं समझते। मोटरसाइकिल की कीमत, उसमें पेट्रोल भरवाने का खर्च – क्या ये सब ज़रूरी था? इतने खर्च में तो एक गरीब आदमी की पढ़ाई हो सकती थी। तुम तो कॉलेज पढ़े-लिखे लड़के हो! ऐसे विचार तुम्हारे मन में आने चाहिए। इसके विपरीत, तुम इतनी जल्दी इतने खर्चों में डूब गए – तो फिर तुममें और दूसरे बच्चों में क्या फर्क है?"
उस समय अनुप के मन में कुछ और ही विचार चल रहे थे। पापा ने मोटरसाइकिल से आते समय स्पीडोमीटर देख लिया था। मेरी गलती थी – मुझे स्पीडोमीटर को डिस्कनेक्ट कर देना चाहिए था। इससे किसी को पता ही नहीं चलता कि गाड़ी कितनी तेज़ चल रही है! लेकिन फिर मैं अपने दोस्तों को कैसे प्रभावित करता? अब वह दूसरे बच्चों को अपना स्पीडोमीटर दिखा रहा था और कह रहा था – मैंने इसे गाड़ी चलाने के लिए खरीदा है! तुम्हारे जैसे घर में कंबल में लपेटकर रखने के लिए नहीं!

पिताजी ने आगे कहा,
मैं आपसे यह नहीं पूछूंगी कि आप दिल्ली से कितने पैसे मांग रहे हैं और क्यों। मुझे इसमें कोई दिलचस्पी नहीं है। लेकिन अगर आप इसी गलत रास्ते पर चलते रहे तो मैं क्या करूंगी? मैं आपके साथ ही रह रही हूं। यह मेरी ज़िम्मेदारी है कि आपकी पढ़ाई ठीक चल रही है या नहीं। सिर्फ अच्छे नंबर लाना ही काफी नहीं है – आपके प्रोफेसरों ने आपको बताया है कि आपको समय-समय पर आकर अपने बच्चे को देखना चाहिए। मैं आपको कुछ नया नहीं बताऊंगी। आप जो भी करें, याद रखें कि आप कॉलेज के छात्र हैं! वहां के अपने शिक्षकों को भी न भूलें!
बाद में, रविंद्र ने इस बारे में कुछ नहीं कहा। उन्होंने छात्रावास में उपलब्ध भोजन के बारे में पूछताछ की। उन्होंने अनुपशी को पढ़ाई के साथ-साथ अन्य चीजें पढ़ने की आदत डालने की सलाह दी। कन्नड़ में भी अच्छी किताबें प्रकाशित हो रही हैं। यहाँ के विश्वविद्यालय ने भी अच्छी किताबें प्रकाशित की हैं, इत्यादि। उन्होंने अनुपशी को यह भी बताया कि उसे महीने में कम से कम दो किताबें खरीदनी चाहिए और अनुपशी को सौ रुपये दिए। उसी समय, विश्वविद्यालय से उनका एक मित्र उनसे मिलने आया था। अनुपशी ने उनका परिचय अनुपशी से कराया और उनसे अनुरोध किया कि 'उन्हें अपने पुस्तकालय और पुस्तक अनुभाग में ले चलें'। अनुपशी इस बात पर सहमत हो गए।
अनूप कॉलेज परिसर लौट रहा था, तभी उसने गेट के पास स्पीड ब्रेकर पर बुलेट की रफ्तार धीमी कर दी, तभी सामने से आ रहे बी.वी.के. सर ने उसे रोक दिया और कहा,
मुझे पता ही नहीं था कि आप 'इंडियन ट्रिब्यून' के संपादक के बेटे हैं! मुझे संस्कृति पर लिखे उनके लेख बहुत पसंद आए! आज दोपहर उनसे हमारी एक घंटे की शानदार बातचीत हुई! हम सभी को लगता है कि इस साल के समारोह में उन्हें मुख्य अतिथि होना चाहिए। विभागाध्यक्ष ने भी बाद में यही बात कही।
महोदय से क्या कहें, यह न जानते हुए उसने बस मुस्कुरा दिया। फिर उसने भी अपना स्कूटर घुमाया और गेट से बाहर निकल गया।
अनूप अपने कमरे में आया और कुर्सी पर बैठ गया। मैंने पापा को ज़रूर बताया होगा कि मैं सुपर स्पीड क्रिंग हूँ। उन्होंने मुझे बताया होगा कि मैं हमेशा रश्मिला को अपने साथ ले जाता हूँ। एम.वी.आर. तो बिलकुल देहाती इलाका है! जब एक लड़का और एक लड़की साथ दिखते हैं, तो चश्मे में उनकी आँखें आलू के आकार की हो जाती हैं! उसकी बात सुनकर पापा ने स्पीडोमीटर पर ध्यान दिया और फिर मुझे नैतिकता पर लंबा-चौड़ा भाषण दिया!
अब पूरा कॉलेज मुझे सुपर स्पीड किंग मानता है। इसलिए स्पीडोमीटर दिखाकर इसे साबित करने की कोई ज़रूरत नहीं है। इसके बाद, मैं स्पीडोमीटर को हफ्ते में सिर्फ तीन दिन ही चालू रखूंगा। अगली बार जब पापा आएंगे, तो उन्हें अपने आप पता चल जाएगा। लेकिन उन्हें पता चल गया है कि मैं रश्मी के साथ सफर कर रहा हूं! अब मैं क्या करूं? जाने दो! उन्होंने यह सवाल भी साफ-साफ नहीं पूछा। अगर उन्होंने पूछा होता, तो हम कह सकते थे,
"यह तो बहुत बूढ़े लोगों का कॉलेज है! एक दिन एक लड़की लिफ्ट मांग रही थी - अगर उसने उसे लिफ्ट दे दी, तो क्या बड़ी बात है! क्या मुझे उस समय बस मुंह फुलाकर चले जाना चाहिए था?" इस विचार से उसे कुछ राहत मिली।

■

लगभग एक महीने बाद, रश्मी अचानक उसके सामने आ गई। वो भी सुबह करीब 7:30 बजे। वो ठीक उसी समय आई जब वो नाश्ता करने बाहर जा रहा था। उसका रूममेट कंतराज पहले ही नाश्ता करने बाहर जा चुका था। हालांकि दोनों एक ही कमरे में थे, लेकिन 'हाय-हाय' कहने के अलावा उनके बीच कोई अंतरंगता नहीं थी।

उनसे हाथ मिलाते हुए उसने कहा,
लगता है आपने अभी तक नाश्ता नहीं किया है। चलिए – आखिरी डबल सीट आपके साथ चल रही है – चलिए कहीं बाहर चलते हैं। आज मैं भी मैसूर छोड़ रहा हूँ। मैं कॉलेज की बाकी औपचारिकताएँ पूरी करने और अपना सामान हॉस्टल ले जाने आया था।
अनूप उसे देखकर हैरान तो हुआ, लेकिन पढ़ाई छोड़ने पर उसे आश्चर्य नहीं हुआ। उसने मान लिया था कि वह अब तक कॉलेज छोड़ चुकी होगी।
फिर भी, जैसे ही उसने उसे अपने सामने देखा, उसका मन एक बार फिर उसके आकर्षण से मोहित हो गया। भले ही उसे यह एहसास था कि उसने सैकड़ों लोगों के सामने अपना नग्न शरीर प्रदर्शित किया होगा, फिर भी वह उसके आकर्षण से खुद को मुक्त नहीं कर सका। उसने बिना किसी संकोच के पूछा,
"तुम इतने समय से कहाँ थे?"
मैं यही तो कह रहा हूँ – जल्दी आओ – मुझे आज शाम तक बैंगलोर पहुँचना है। जल्दी आओ –"
अपने जूते पहनकर और कमरे के बाहर बरामदे में रखी गोलियां लेकर वह उसके साथ चली गया। हमेशा की तरह, वह उसके पीछे वाली सीट पर बैठी थी, उसकी बाहें उसके पेट के चारों ओर कसकर लिपटी हुई थीं। उसके इस करीबी स्पर्श से उसका दिल धड़कने लगा। हद/दाग सर्कल के पास होटल के बाहर परिसर में एक पेड़ के नीचे एक आरामदायक मेज पर बैठने के बाद, उसने उसे पूरी कहानी विस्तार से बताना शुरू कर दिया।
"मैसूर छोड़ने से पहले मैं आपको सब कुछ बताना चाहता था, इसलिए मैं आपसे मिलने आया था—क्योंकि आपकी वजह से ही मुझे कैबरे देखने का मौका मिला था, है ना?"
फिर उसने सच बताया:
उस दिन, अनुपसी से बहस के बाद, वह बैंगलोर चली गई। बस स्टैंड से वह गांधीनगर के एक कैबरे हॉल तक पैदल गई। वहाँ उसकी मुलाकात हॉल के मालिक दामोदरन से हुई। उसने उसे अपनी बात बताई। दामोदरन ने एक-दो बार पेशेवर अंदाज़ में उसकी ओर देखा और कहा,
"हम बाहर से लड़कियां नहीं लेते। हमें अपनी लड़कियों पर ज्यादा भरोसा है! अगर कुछ गड़बड़ हो जाए या पुलिस छापा मारे, तो उन्हें पता है कि क्या करना है। हम नई, अनजान लड़कियों पर कैसे भरोसा कर सकते हैं?"
उसने कहा,
"क्यों? क्या मेरा शरीर तुम्हारी लड़कियों से ज्यादा खूबसूरत है, इसलिए तुम्हें जलन हो रही है?"
"आसुया का क्या होगा? इसके विपरीत, अगर वह बहुत अच्छी रही, तो कार्यक्रम के बाद अराजकता की संभावना है। वह जिम्मेदारी कौन उठाएगा? हमें इतनी खूबसूरत लड़कियां नहीं चाहिए।"
रश्मी ने उससे काफी देर तक बहस की – उसने कसम खाई कि वह उसे धमकी नहीं देगी – और अंत में निक्सन ने उससे कहा,
मुझे अपना शरीर बेचने की ज़रूरत नहीं है – मैं ऐसा नहीं करूँगी। मैं तो कला के रूप में इसकी ओर आकर्षित हुई थी!
"तो जाओ शास्त्रीय नृत्य सीखो! तुम यहाँ क्या कर रहे हो?"
उसने तर्क दिया,
"तो फिर आप एक कला प्रदर्शनी, एक कलाकार के रूप में विज्ञापन क्यों देते हैं?"
अंततः वह उसे कैबरे डांसर के रूप में रखने के लिए सहमत हो गया। फिर भी, उसने कहा,

"अगर आपके परिवार के सदस्य हम पर परिवार की प्रतिष्ठा को धूमिल करने का आरोप लगाते हैं, तो इसकी जिम्मेदारी किसकी होगी?"
"अगर आप चाहें तो मैं लिख सकती हूं, 'यह मेरी जिम्मेदारी है!'" उसने जवाब दिया।
आखिरकार वह मान गया। उसने एक रिकॉर्ड चलाया और उसे नाचना सिखाया। उसने पूछा,
आपने कहाँ से पढ़ाई की?
"यहाँ आपके कार्यक्रम देखकर!" उसने जवाब दिया।
"अगर मैं तुम्हें एक दिन की ट्रेनिंग भी दूं, तो भी काफी है!" उसने संतुष्टि से कहा।
अगले ही दिन वह कार्यक्रम में भाग लेने के लिए तैयार हो गई। उसका पहला नृत्य बेहद सफल रहा। 'जैक्लिन जैक्लिन' की आवाज़ गूंजी - ज़ोरदार तालियाँ बजीं - रश्मी जब पूरी सच्चाई बता रही थी, तभी वेटर ब्रेड और टोस्ट लेकर आया। उसकी निगाहें अनूप पर टिकी हुई थीं। उसके चेहरे से साफ था कि वह ख्यालों में खोया हुआ था। उसने उससे पूछा,
क्या तुम नाराज़ हो? अगर हो, तो मुझे आने दो। मैं तुम्हें अपने विचार बताती हूँ – मुझे वहाँ खुलकर नाचने में बहुत मज़ा आया। वहाँ के कपड़ों को डिज़ाइन करने में कितना ध्यान दिया जाता है! वे इस बात का पूरा ख्याल रखते हैं कि शरीर और सुंदरता दिखाने का ज़रा सा भी मौका न छूटे! वे इस बारे में कलात्मक रूप से बहुत सोचते हैं! मुझे इतना मज़ा आया कि मैं हर दिन चार जगहों पर नियमित समय पर नाचने जाती थी। इसके अलावा, मुझे अपने कमरे में रहना बहुत उबाऊ लगता था।
उसने व्यंग्यात्मक लहजे में पूछा,
"लेकिन बाद में दर्शकों ने आपको परेशान नहीं किया? उन्होंने आपका पता नहीं पूछा?"
"मैं दर्शकों के साथ ज्यादा घुलती-मिलती नहीं थी। मैं नृत्य के दौरान मेकअप भी करती थी ताकि बाहर मुझे कोई पहचान न सके। दामोदरन ने खुद वहां के हर कर्मचारी को चेतावनी दी थी कि किसी को भी यह न बताएं कि मैं कहां रहती हूं।"
"क्या आपके माता-पिता ने जांच नहीं की?"
"मैंने इसे अच्छे से संभाला। मैं उन्हें हर हफ्ते पत्र लिखकर कक्षाओं, परीक्षाओं और टेस्ट के बारे में जानकारी देता था।"
"मैसूर छोड़ने के बाद आप कहाँ जाएँगे?"
मैं यही तो आपको बताने आया था। मैं बैंगलोर के अपोलो होटल में ठहरा हुआ था। क्या आपने भी इसे देखा है? कितना आलीशान होटल है! सुबह और दोपहर का समय वहाँ बिताना बहुत मुश्किल था। एक दिन, मैं अकेले बैठकर नाश्ता कर रहा था और आपके बारे में सोच रहा था! तभी चालीस साल का एक आदमी मेज के पास आया और बहुत ही विनम्रता से बोला, 'क्या हम यहां बैठें?'
मुझे भी किसी से बात करने की इच्छा थी। उन्हें देखकर ऐसा लगा जैसे वे भी कोई कार्यकारी अधिकारी हों। जैसे ही मैंने उन्हें बैठने की अनुमति दी, वे विनम्रता से बैठ गए। बेंगलुरु की टैक्सियों के बारे में बातचीत करने के बाद, उन्होंने मुझे अपना कार्ड दिया और कहा, "मेरा नाम आर.बी. गजवानी है। मैं होराइजन कंपनी में पार्टनर और मैनेजर हूं। हमारी शाखाएं बेंगलुरु, दिल्ली और मुंबई में हैं। हमारी योजना तीन साल में पूरे देश में विस्तार करने की है।"
मैंने कार्ड देखा। तीन शहरों के पते, फोन और टेलेक्स नंबर दिए हुए थे। उन्होंने आगे बताया – एक ऑफर है। अगर आप हमारी कंपनी में मॉडल के तौर पर काम करती हैं, तो मैं गारंटी देता हूं कि आपको आज से दस गुना ज़्यादा पैसे मिलेंगे। हम भारत में विभिन्न कपड़ा कंपनियों, दोपहिया वाहन कंपनियों और एयरलाइन कंपनियों के विज्ञापन का काम संभालते हैं।

मैंने थोड़े गुस्से में जवाब दिया - मुझे पैसे की जरूरत नहीं है।
उन्होंने अपनी आवाज़ और भी धीमी करते हुए कहा – मिस! कल मैंने आपको फ्लोर शो में देखा – सच कहूँ तो – मैं तो अवाक रह गया! आपकी सुंदरता तो मानो स्वर्गिक है! आप इतनी अलौकिक सुंदरता को कैसे छुपा सकती हैं? मेरी बात सुनिए – आपको न सिर्फ मिस इंडिया, बल्कि मिस वर्ल्ड बनने का भी मौका मिल सकता है! मैं इस होटल में दो दिन और रुक रहा हूँ। आप इस बारे में सोचें और मुझे बताएँ। अगर बाद में भी आपका मन करे, तो हमारे तीनों कार्यालयों में से किसी से भी संपर्क कर लें। एक मामूली कैमरा टेस्ट और मूवी टेस्ट हो गया, और काम पूरा हो गया! चलिए चलते हैं – इतना कहकर वे चले गए।
"तो अब तुम मॉडल बनने जा रही हो?" अनुपना ने पूछा।
वह थोड़ी देर रुकी, जैम से ढके टोस्ट को खाती रही, और फिर बोली,
पहले तो मुझे यकीन ही नहीं था। फिर मुझे ख्याल आया, अगर मैं यहीं नाचती रही, तो मेरी खूबसूरती सिर्फ कुछ सौ लोगों तक ही पहुंचेगी। लेकिन अगर मैं मॉडल बन गई, तो लीखों—शायद अरबों—लोग मेरी खूबसूरती का लुत्फ उठा सकेंगे!
"अगले ही दिन मैं उनके साथ मुंबई चली गई। वहां पहुँचकर मुझे एक और बात का एहसास हुआ – कैबरे में परफॉर्म करते समय मुझे अपनी खूबसूरती नज़र नहीं आती थी। लेकिन यहाँ के कैमरे मुझे अलग-अलग कोणों से मेरे शरीर की खूबसूरती दिखा रहे थे! यह देखकर मैं दंग रह गई! सौदा पक्का हो गया। बेशक, मैंने मासिक वेतन के बजाय हर आइटम के लिए पैसे लेने का भी फैसला किया।"
"लेकिन कैबरे कलाकारों ने जाने के लिए कैसे सहमति दी?"
"यहाँ भी मैं कोई वेतनभोगी नौकर नहीं था। मैंने दामोदरन से विनती की कि वह न जाए, इसलिए वह पैसे बढ़ाने के लिए राजी हो गया। लेकिन मुझे भी रिहा कर दिया गया क्योंकि कुछ नहीं किया गया - अलविदा।"
"तो फिर तुमने घर पर क्या कहा?"
मैंने मुंबई से सीधे घर फोन किया और कहा, 'देखते हैं तुम्हारी बेटी का क्या होता है!'
तो?
"वे यह सुनकर आश्चर्यचकित रह गए कि मैंने इतना कुछ कैसे सीख लिया! मेरी माँ ने कहा-"
चाय का ऑर्डर लेने और बेरा जाने के बाद, अनुपान ने उससे पूछा,
आप मुंबई कब जा रहे हैं?
कल सुबह।
कौन जाने हम फिर कब मिलेंगे! चलो आज रात रॉकी में ही रुकते हैं...
उसकी तीखी निगाहें उसके चेहरे पर टिकी हुई थीं।
चाय आ गई। चाय की एक घूंट लेते हुए उसने कहा,
"तुम मुझसे इसलिए नफरत करते हो क्योंकि मैं दिखावा करती हूँ। मैं ऐसे आदमी के साथ सोना नहीं चाहती..."
अनूप चुप रहा।
उन्होंने आगे कहा,
"तुम अब भी मेरे दोस्त हो। इसीलिए मैं तुमसे मिलने आया था।"

■

अनुपम उस पर बहुत गुस्सा था। अपनी जान की परवाह किए बिना, मैंने उस पर बहुत तेज गति से गोली चला दी! मैंने पापा की सलाह मानी थी! अब मेरा पूरा शरीर आग की तरह जल रहा है और वह जा चुकी है!
एक दिन वह ओमी-जग्गू के घर गया। चाय-नाश्ता करते समय कॉलेज की लड़कियों का विषय उठा। मोटे तौर पर कहें तो, कौन सी लड़कियां आसानी से

वश में हो जाती हैं, यही चचा का विषय था। तभी एक व्यावहारिक प्रश्न उठा, लड़कियां तो वश में हो सकती हैं, लेकिन जग्गु का क्या? जग्गु ने अचानक पूछा,
"अनुप, तुम रश्मी के साथ कहां जा रहे थे?"
अनुपना ने पल भर में खुद को संभालते हुए कहा,
"हम तो बस टहलने जा रहे थे, इसलिए जगह की कोई समस्या नहीं थी।"
चलो चलें! मैं तुम्हारी गोली की कसम खाता हूँ!
ओमी ने यह भी कहा,
"दोस्तों को धोखा देना ठीक नहीं है! मुझे बताओ असल में क्या हुआ था!"
अनूप के चेहरे से शर्मिंदगी के भाव गायब हो गए और उनकी जगह मुस्कान आ गई। यह सोचकर कि हजारों लोगों के सामने अपनी बेटी की प्रतिष्ठा के उजागर होने की चिंता क्यों करनी चाहिए, उन्होंने खुलकर और विस्तार से सब कुछ समझाना शुरू कर दिया। उन्होंने अपनी अहमियत बढ़ाने के लिए भी पूरी कोशिश की।
सब कुछ सुनते हुए, दोनों के मन में अनूप के लिए विशेष सम्मान था। साथ ही, उन्हें इस बात पर गुस्सा भी आ रहा था कि उसने इतनी महत्वपूर्ण बात उनसे छिपा ली थी। लेकिन अनूप ने कहा,
“अब तुम क्या करोगे, रे? तुमने कसम खाई थी कि तुम अपने सबसे करीबी दोस्तों – अरोरा और सभरवाल – को भी नहीं बताओगे।”
तो उसने उसे अपनी दोस्ती के बारे में बता दिया था! दोनों को थोड़ा अच्छा लगा। खाना खत्म करने और दोबारा बातचीत करने के बाद, ओमी ने कहा,
"तो फिर, जो लड़की गति की दीवानी है, वह इसे जल्दी ही सही कर लेगी!"
इस पर अनुप ने एक व्याख्याता के लहजे में कहा,
अरे वाह, रफ्तार तो बहुत तेज है! जो लड़की रफ्तार का अनुभव करने के लिए तैयार है, वही तेज लड़की है!
उसी बातचीत से मसाला पान खाने की तीव्र इच्छा जाग उठी। यह सोचकर कि दो कारें निकालने से समूह बंट जाएगा, तीनों अनूप की बुलेट में निकल पड़े। जाते समय अनुप ने कहा,
"तुम्हारी यामाहा में मेरी बुलेट की तरह तीन लोगों को ले जाने की ताकत नहीं है!"
इस बात पर बहस चल रही थी कि यामाहा और बुलेट में से कौन सी कार बेहतर है।
चंद्रमोहन के पास पान विक्रेता से एक खास जर्दा विदा लेकर, तीनों ने मिलकर यादवगिरि के सामने चालुवाम्बा पार्क की ओर रुख किया। थोड़ी देर पान चबाने और माउथवॉश करने के बाद, जग्गु ने कहा,
"चाचा जी, हमें भी कैबरे दिखाने ले चलिए!"
"अरे, इसका क्या फायदा? पैसे लुटाओ, वरना टिकट मिल जाएंगे। थोड़ा जल्दी जाओ, वरना पास में ही सीट मिल जाएगी!"
"यह कैसे? तुम स्कूल में भी हमारे नेता थे - अब भी तुम्हें ही नेतृत्व करना चाहिए!"
अनूप ने पहल की और विवरणों पर काम करना शुरू कर दिया। जब पैसे का सवाल उठा, तो अनुप ने कहा,
"हर कार के लिए पेट्रोल के अस्सी रुपये, टिकट और खाने के लिए कम से कम सौ रुपये, अगर कोई नर्तकी सफल होती है तो उसका पैसा, होटल में ठहरने का खर्च - इन सब बातों का जिक्र तो छोड़ ही दीजिए, लेकिन हमें सात से आठ सौ रुपये हाथ में चाहिए!"
`इतना पैसा? फिर तो हमारे लिए यह नामुमकिन है!..."
"पांच सौ रुपये के लिए रो रहे हो? तुम किस तरह के व्यापारियों के बच्चे हो?" अनुपना ने पूछा।

"पापा, पचास-साठ रुपये भी जुटाना नामुमकिन है! क्या आपको पता है हमारे पिताओं ने कैसे इंतज़ाम किया है? भैया खाना बनाते हैं, जगगु के पिता घर के सारे बिल खुद भरते हैं। सिर्फ़ कॉलेज की फीस की रसीदें हैं। अगर आप उन्हें किताब की वजह बता दें, तो वो किताब ले आते हैं! वो हर बच्चे को सौ रुपये जेब खर्च के तौर पर देते हैं - लेकिन उसमें पेट्रोल का खर्च भी शामिल होता है!"
ओह, हाँ! मुझे आश्चर्य है कि मुझे कब कोई गर्लफ्रेंड मिलेगी, क्या आप मुझे अपने घर पर दो घंटे का समय देंगी?..."
अनूप की बातें सुनते ही जगगु को गहरा सदमा लगा।
ओमी ने उत्तर दिया,
"अरे, ये तो डरावना है, है ना? वो हमारी जासूसी कर रहा है! हमें भी गुस्सा आ रहा है। लेकिन वो हमारा साथ नहीं छोड़ रहा।"
अब तो जगगु के कदम भी रुक गएं।
अनुपना ने पूछा,
"तो कैबरे की क्या हुआ?"
"एक और डर है। क्या होगा अगर पापा वहां आ जाएं जब हम वहां हों?"
"अबू हम छोटे बच्चे नहीं रहे कि उनसे डरें!..."
"नहीं, रे। अगर वे कैबरे देखने भी आ जाएं तो क्या होगा?"
"जाओ, रे! घर पर पत्नी है तो कोई क्यों आएगा?" अनुप ने सच्चाई से कहा, लेकिन उसे अपने पिता की उम्र के उन आदमियों की भी याद आ गई जिन्हें उसने वहाँ देखा था।
"अरे, उस दिन मम्मी-पापा का हमारे घर में उस बात पर झगड़ा हो गया था—" जगगु ने अपने घर में छुट्टियों के दौरान हुई घटना की कहानी सुनाई। फिर उसने अनुप से पूछा, "और अगर तुम्हारे पापा आ जाएं तो क्या होगा?"
"यह असंभव है! वे विश्वविद्यालय के सिद्धांतों में विश्वास करते हैं। मैंने आपको विश्वविद्यालय के बारे में बताया था!"
``बस यही तो बात है, रे! लेकिन तुम्हारी मम्मी तो दिल्ली में हैं। तुम्हारे पापा तो रोज़ कैबरे देखते होंगे!..."
अनूप का गुस्सा भड़क उठा। उस क्रोध में उसने कहा,
मेरे पिताजी एक शिक्षित बुद्धिजीवी हैं! वे पैसे के लिए कुछ भी करने वाले व्यवसायी नहीं हैं... वे तो व्यवसायी भी नहीं हैं..."
जगगु को भी गुस्सा आ गया। उसने यह भी कहा,
"व्यापारियों को अपशब्द मत कहो! तुम्हारी मम्मी भी व्यापार करती हैं। क्या मैंने नहीं कहा था कि वो हर रोज कैबरे जाती हैं?"
लेकिन अब अनूप का गुस्सा बेकाबू हो गया था। उसने थोड़ा थूकते हुए कहा,
"क्या तुम अपने मम्मी-पापा का नाम रखते हो?" और टैड टैड बगीचे से बाहर आया, बुलेट स्टार्ट की और हॉस्टल की ओर चल पड़ा।
जैसे ही वह छात्रावास के पास पहुँचा, उसने मन ही मन सोचा – उन्हें बस यहीं नहीं रुकना चाहिए था। उन्हें उसे दो घूंसे मारने चाहिए थे – चलो, सरस्वतीपुर तक इस गतिरोध को तोड़ते हुए आगे बढ़ते हैं!

■

जब कांतराज सुबह 11:30 बजे हॉस्टल पहुंचा, तो उसने नींद में ही कमरे का दरवाजा खोल दिया। अनुप ने जब मेज की बत्ती जलाई, तो उसने मेज पर एक पैकेट पड़ा देखा। सबसे ऊपर डोडप्पा का पत्र था। बिना कपड़े बदले ही अनुप ने लंबा पत्र पढ़ना शुरू कर दिया। शुरुआत में चार वाक्य थे जिनसे उसे अच्छा लगा, जैसे "तुम अपनी मर्जी से आए थे - हमें अच्छा लगा"। बाद में उसने लिखा था:
अपने भाषण में आपने इलेक्ट्रॉनिक्स से ज़्यादा गति की प्रशंसा की! आप तो ऐसे तेज़ धावक बन गए हैं जो पाँच-छह महीनों में पंद्रह से सोलह हज़ार किलोमीटर की

दूरी तय कर लेते हैं! आपको उम्र में गांते के प्रांते यह दीवानगी मैं समझ सकता हूं। यहाँ रहते हुए आपने उपनिषदों के भोजन, जीवन, विज्ञान और आनंद के बारे में भी सुना होगा। क्या आप बिना यह समझे अपनी सारी ऊर्जा और चेतना मोटरसाइकिल की गति बढ़ाने में लगा देंगे? क्या आप पंच तत्वों का अर्थ समझेंगे और उससे आनंद प्राप्त करेंगे या नहीं?
लंबे पत्र के अंत में उन्होंने लिखा,
"शंकरमूर्ति का मानना है कि छुट्टियां शुरू होते ही हमें यहां एक प्रौद्योगिकी विभाग शुरू कर देना चाहिए।"
अनुपम चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते गुस्सा हो गया। लगता है पापा ने सब कुछ उसमें लिख दिया है! अब तो डोडप्पा मुझे वेदांत बता रहे हैं! यही तो उनका पुराना तरीका है।
मुझे याद आया कि मैंने कपड़े बदले और बिस्तर पर लेट गई - ओमी और जगगु अभी भी नियम तोड़ रहे होंगे! असल में, यह अच्छी सजा थी, ओमी ठीक है - उसे जाने दो! डोडप्पा भी यही कहता रहता है - खूब चलो!
उसे पापा पर गुस्सा आ गया, क्योंकि उसे लगा कि पापा ने डोडप्पा को सब कुछ बता दिया है। जगगु ने कहा, "वे भी कैबरे देखने जा रहे होंगे!" मम्मी और पापा के बीच शायद इस बात पर झगड़ा हुआ होगा। कौन जाने, इन बड़े आदमियों के बारे में किसी को कुछ नहीं बता सकते-"
सुबह जब वह तैयार हो रहा था, जगगु और ओमी उसके कमरे में आए। जगगु ने पूछा,
"क्यों, रे? तुमने हमें रात में क्यों छोड़ दिया?"
अनुपा भी सुलह के मूड में थे। उन्होंने कहा,
"पापा से कुछ भी कहो - लेकिन अगर तुमने मेरी मम्मी से कुछ भी कहा तो मैं बर्दाश्त नहीं कर सकती!"
``मुझे भी पता है, रे! तुम सभी व्यापारियों को एक ही तराजू में तौल रहे थे, इसलिए मैंने तुम्हें याद दिलाया, बस इतना ही, सच है या नहीं, ओमी?"
``गॉड-प्रॉमिस!"
उस क्षण सारा झगड़ा खत्म हो गया, क्योंकि अनुपाल को झगड़े की कोई भी बात याद नहीं थी।

■

साधारण उपदेशों से बेहद ऊब जाने के बावजूद, डोडप्पा का पत्र कुछ समय तक उनके मन में बना रहा। उन्होंने अन्नमय कोष, प्राणमय कोष आदि का हवाला देकर कई भाषण प्रतियोगिताएँ जीती थीं। डोडप्पा और अन्य शिक्षकों को भी उनके भाषण इसी संदर्भ के कारण पसंद आते थे।
अब उसे याद आया कि स्कूल में उसका मन इतना बेचैन नहीं रहता था। गांधी, पटेल, सावरकर, घोष, विश्वेश्वरैया की जीवनियाँ किसी न किसी रूप में उसके कानों तक पहुँचती रहती थीं। इसके अलावा, कुछ काम भी होते थे जैसे आज यह इमारत बनाओ, कल वह करो। इसीलिए रात को सोते ही उसे नींद आ जाती थी।
इस तरह के विचार दो दिनों तक मन में घूमते रहे। फिर उनमें दूसरे विचार भी मिल गए। जैसे ही जगगु-ओमी ने कैबरे का विषय उठाया, उसने कहा,
"नहीं, इसके बाद मैंने सब कुछ त्याग दिया है! मैं कॉलेज के दिनों की तरह ही जीवन जीऊँगी!"
जगगु ने हताशा में कहा,
"तो फिर तुम्हें वहीं रहना चाहिए! तुम यहाँ क्यों आए हो?"
मैं विश्वेश्वरैया जैसा बनना चाहता हूँ, इसीलिए!
आपका क्या मतलब है?
"क्या तुमने विश्वेश्वरैया के बारे में नहीं सुना?" अनूप गुस्से में बोला।
"वह बहुत बड़ा नाम है! वह हमारे लिए एक आदर्श हो सकता है!"

क्या बस इतना ही? हम सब एक जैसे ही हो जाएंगे। एक दिन कैबरे देखने में क्या हर्ज है? कॉलेज में पढ़ाई के दौरान उन्होंने भी तो देखा ही होगा!
"यह असंभव है! वे इतने गरीब थे..."
आपका क्या मतलब है? क्या अमीर लोग बड़े नहीं होते? तो फिर नेहरू के माता-पिता कैसे बड़े हुए?
अनूप जानता था कि इस मुद्दे पर कितनी बार बहस की जा सकती है। लेकिन जगगु ने उसे बीच में ही रोक दिया और अपना मुद्दा उठाया।
अंततः, दोस्तों के आग्रह के कारण तीनों एक कैबरे देखने गए।
अनूप अगले हफ्ते के लिए बेताब था। उसे सच में एक गर्लफ्रेंड चाहिए थी! अगर वह हफ्ते में एक बार उससे मिल पाता, तो बाद में वह चैन से पढ़ाई कर पाता।
अब उसे लड़कियों के साथ भी ज़्यादा अनुभव हो गया था। गाँव और आस-पास के गाँवों की लड़कियाँ, और प्रथम वर्ष की छात्राएँ, शर्मीली होती हैं - अगर आप देखें कि कौन मोटरबाइक पर तेज़ दौड़ने को तैयार है, तो आपको निश्चित रूप से कोई न कोई मिल ही जाएगी।
उसने दस महिलाओं से पूछा, जिनमें से सात मान गईं। उनमें से तीन उसकी कमर के दोनों ओर पैर लपेटकर बैठने को तैयार हो गईं। गोलियां चलना बंद होते ही उनमें से दो ने उसे धन्यवाद दिया और चली गईं।
पुडुचेरी की रहने वाली अनीता, जो इलेक्ट्रॉनिक्स में दूसरे वर्ष की छात्रा थी, उसकी सलाह पर आधी बाजू की टी-शर्ट और जींस पहनकर सवारी के लिए आई थी। जब उसने गति बढ़ाई, तो उसने उसे और कसकर गले लगा लिया। जब वे दोनों मदिकेरी रोड पर 60वें किलोमीटर के निशान के पास एक छोटे से ढाबे पर बैठे, तो उसने उसे एक प्रमाण पत्र भी दिया।
"सचमुच एक सुपर स्पीड-किंग है, है ना!"
इस तरह आठ दिन बीत गए।
फिर एक दिन, गांव के बाहर घनी झाड़ियाँ देखकर, उसने गोली रोक दी और उसे एक सुनसान जगह पर ले गया जिसकी उसने पहले से ही जाँच कर ली थी।
"मुझे डर लग रहा है—" उसने धीरे से कहा। कुछ देर बाद उसने पूछा, "क्या तुम मुझसे शादी करने का वादा करोगे?"
अनूप इस तरह के शब्दों में उलझना नहीं चाहता था। काला रंग— उभरे हुए दांत —और वह समझ गया था कि यह कोई जादुई युवती नहीं है। "बाद में देखते हैं—" उसने बात टाल दी।
वापसी के रास्ते में, उसकी पीठ पर बैठी अनीता कह रही थी,
"तेज़ गाड़ी मत चलाओ यार! जोखिम क्यों लेना!"

■

उन्हें इस बात का जरा भी अंदाजा नहीं था कि उनका लक्ष्य इतनी जल्दी हासिल हो जाएगा।
जब वह रश्मी को हॉस्टल में छोड़कर अपने कमरे में लौट रहा था, तो उसे डोडप्पा की कही हुई एक बात बार-बार याद आ रही थी। डोडप्पा ने ब्रह्मचर्य को पढ़ाई-लिखाई से जोड़ा था। यह पहली बार नहीं था जब उसका ब्रह्मचर्य टूटा था। रश्मी के साथ ऐसा कई बार हो चुका था। फिर भी, बिना किसी झंझट के उसे जो खुशी मिली थी, वह कुछ अलग ही थी।
रश्मी के जाने के बाद, अनूप का मन कभी-कभी इतना बेचैन हो जाता था कि वह पढ़ने के लिए किताब आँखों के सामने रख लेता था और रश्मी के विभिन्न रूप उसकी आँखों के सामने नाचने लगते थे! आज उसने अपने मन पर काबू पाया और खाना खाने के बाद अपनी मेज-कुर्सी पर बैठकर पढ़ाई करने लगा। उसने कुछ बिंदुओं पर नोट्स बनाए - कुछ सूत्रों का अध्ययन किया। कांतराज नेहमा की तरह पढ़ते-पढ़ते सो गया, लेकिन अनूप रात 12:30 से 1 बजे तक जागा रहा। पढ़ते

समय उसका मन बहुत स्थिर था - डोडप्पा कहते हैं, यह गलत है! ब्रह्मचर्य के चरम विचार में मन को बेचैन करने के बजाय, शरीर की ज़रूरतों का सम्मान करते हुए चुपचाप पढ़ाई करना गलत क्यों है?
मुझे लगा कि वह अनीता को लेकर मैसूर से साठ-सत्तर मील दूर गोलियों से बचने के लिए भाग रहा है। लेकिन जल्द ही यह उबाऊ हो गया। वह भी मान गई।
एक शाम वह उसे मैसूर से पैंतीस किलोमीटर दूर आदर्श के भीतर जंगल में एक खुली जगह पर ले गयी। यह जगह उन दोनों को सुविधाजनक लगी। वे दो बार बैंगलोर भी गए और होटलों में ठहरे। चूंकि उन्हें बुलेट की जगह बस से जाना पड़ता था और साधारण होटलों में रुकना पड़ता था, इसलिए खर्च भी काफी ज्यादा होता था। उसके सुझाव पर, अनीता चौड़े बॉर्डर वाली साड़ी, कुमकुम और डेढ़ रुपये का मंगलसूत्र पहनकर आती थी। इससे नवविवाहित जोड़े को किसी भी होटल में कमरा आसानी से मिल जाता था। उन्होंने एक बार मैसूर में भी इसी तरह कमरा लिया था।
रश्मी की तुलना में अनीता एक सीधी-सादी लड़की थी, रश्मी जो कुछ भी चाहती थी, ले लेती थी और उसे दे देती थी। उसने कभी उससे दस पैसे का उपहार मिलने की उम्मीद नहीं की थी। इसी तरह, वह दस पैसे खर्च करने से भी नहीं डरती थी।
शुरुआत में, अनूप को लगा कि रश्मी नहीं, बल्कि यही उसके लिए सही प्रेमिका है। हालांकि, ढाई महीने के भीतर ही उसे लगने लगा कि अगर उसे रंजनी का प्यार मिल जाता, जो उससे कहीं बेहतर थी, तो बेहतर होता। यही सोचकर उसने रंजनी और दूसरी खूबसूरत लड़कियों को बुलेट पर घुमाना शुरू कर दिया। अनीता भी कुछ ऐसी ही थी। इसलिए, उसे यह भी समझ आ गया कि जलदबाजी करने की कोई जरूरत नहीं है। उसे यह भी पता था कि अगर उसने जल्दबाजी की, तो उसे अच्छी लड़कियां नहीं मिलेंगी।
लेकिन एक दिन अनीता ने इस विषय को उठाया,
अनुप, क्या तुम्हें हमारी पहली मुलाकात याद है? उस दिन मैंने तुमसे शादी के बारे में पूछा था। तब तुमने इस विषय को टाल दिया था। उसके बाद तुमने कभी इस बारे में बात नहीं की। मैंने भी दोबारा नहीं पूछा। अब मुझे लगता है कि किसी लड़की का किसी लड़के से शादी के बारे में पूछना अपमानजनक है। इसके अलावा, मेरे मन में एक और विचार है - विद्यार्थी जीवन की दोस्ती को जीवन भर का साथी मान लेना ठीक नहीं है। शिक्षा पूरी करने और अपनी आजीविका शुरू करने के बाद, आप कमोबेश यह तय करे लेते हैं कि आपको किस तरह का जीवनसाथी चाहिए। इसलिए, अभी शादी के बारे में सोचना मूर्खता है। फिर भी, जब तक हम इस कॉलेज में हैं, तब तक सच्चे दोस्त बने रहें। तुम्हारा क्या विचार है?
"तुम ऐसा क्यों पूछ रही हो?" वह उसकी बात समझ गया था, लेकिन उसने जानबूझकर यह सवाल पूछा।
मैंने तुम्हें आसानी से वश में कर लिया है, इसलिए मेरी दोस्ती को हल्के में मत लेना! और दोस्त बनाने की उम्मीद मत रखना। तुम्हें मेरी बातें बेतुकी लग सकती हैं, लेकिन मैं इसे बर्दाश्त नहीं कर सकती! अगर इसके बाद तुमने किसी और लड़की को लिफ्ट दी, तो हमारा रिश्ता वहीं खत्म हो जाएगा, समझ लो! मेरी भी इज्जत है!
बकवास! मैं वर्ग संघ के बारे में थोड़ी बात करना चाहता था, इसलिए..."
"देखो! मुझे इस कॉलेज की पूरी जानकारी है! कॉलेज में हर कोई जानता है कि तुम और रश्मी बुलेट पर किस तरह घूमते थे! फिर भी मैंने तुम्हारी दोस्ती स्वीकार कर ली - लेकिन रश्मी के यहां से चले जाने के बाद!..." यह कहते हुए उसकी आँखों में आँसू भर आए।

"देखो, अनीता - तुम कुछ गलत समझ रही हो -" उसने अपना बचाव करने की कोशिश की। लेकिन वह सामने रखी आइसक्रीम आधी खाकर चली गई।
अगले दिन जब वह कॉलेज में उससे मिला और उसे मनाने की कोशिश की, तो उसे भी लगा कि उसने कुछ गलत किया है।

■

एक शाम, पैंतीसवें मील के पत्थर के पास पगडंडी पर तीस-पैंतीस कदम चलने के बाद, वे एक छोटे से खुले स्थान पर पहुँचे। चूंकि यह उनका रोज़ाना का रास्ता था, इसलिए अंधेरे में भी वे कहीं ठोकर नहीं खाए। इस सब अनुभव के बाद, अनुप अपने साथ एक प्लास्टिक की तह वाली चटाई भी लेकर चल रहा था।
जब काफी अंधेरा हो गया, तब वे दोनों मोटरसाइकिल के पास पहुँचे, जहाँ एक पचपन वर्षीय ग्रामीण इंतज़ार कर रहा था। अनूप की टॉर्च की रोशनी में उसकी आकृति ने उनका ध्यान खींचा। साढ़े पाँच फीट लंबा, दुबला-पतला, सांवला रंग, कभी अच्छी रही लेकिन अब फटी-पुरानी हो चुकी एक झाड़ीनुमा जैकेट, मजदूरों द्वारा पहनी जाने वाली शॉर्ट्स, और हाथ में जलती हुई बीड़ी।
एक पल के लिए अनूप की धड़कन रुक गई। लेकिन उसने तुरंत खुद को संभाला और ऊंची आवाज में पूछा,
कौन?
"तुम कौन हो, पवन? ये लोग तो जैसे ब्याज लेकर आते हैं! क्या यह कोई धार्मिक विद्यालय है?"
"हम तो बस टहलने आए थे! तुम कौन हो, सवाल पूछने वाले?" अनुपान ने आखिरकार होश में आकर पूछा।
"मैसूर शेचा रन ही हे! मैं चौकीदार हूँ! हमारे शेच पर आओ..." उसने गोली के हैंडल को कसकर पकड़ते हुए कहा।
अनीता ने अंग्रेजी में पूछा क्योंकि उसे कन्नड़ समझ नहीं आती थी।
``काय म्हानाटोय को?"
अनुपना ने समझाया। यह सुनकर उसने कहा,
"उसे चार पैसे दे दो। ज्यादा बवाल मत करो!"
अनुपान ने अपनी पिछली जेब से पांच रुपये का नोट निकाला और उससे कहा,
इसे ले लो...
अनूप की टॉर्च की रोशनी में नोट देखकर चौकीदार ने कहा,
"सिर्फ पांच? इसका क्या मतलब है! आपको मुझे कम से कम पचास देने होंगे - अगर नहीं, तो फिर आगे बढ़िए..."
अनूप को जैसे ही यह एहसास हुआ कि यह पैसों का मामला है, उसे हिम्मत मिल गई। उसने कहा,
पचास? ये किस लिए? तुमने कौन सी लड़की पटाई?
``मुझे पचास दो, तो लड़की को भी दे दो! मैसूर से कश्यप तक बहती हुई एंटोस नदी! क्या मुस्कान है, हाय-बाय!'
``ठीक है, ठीक है! इसे आज ले लो - बाद में देखते हैं..." अनुपना ने उसके हाथ में एक और दस रुपये का नोट थमाते हुए कहा।
जैसे ही वह मोटरसाइकिल की ओर मुड़ा, उस आदमी ने दबी आवाज़ में उससे कहा,
मेरा नाम मदप्पा है, अंदर जाओ ना? मेरी कुटिया वहीं है जिसके नीचे हीरा है! अगर तुम जल्दी करो, तो तुम चट पहुँच जाओगे, देखो! पूर्व झील ही! सपिति ही के कटोरे में सेफेद पत्ता, देखो! यह असेली ध्यान नहीं है! शीम पाँच बजे आना, मेरे सारे काम करने वाले जा चुके होते हैं!
दस किलोमीटर तक मोटरसाइकिल चलाने के बाद भी अनीता का डर कम नहीं हुआ था। एक पुल के पास कार रोककर, अनुपान ने frowning हुए उसे समझाया,

"डरने की कोई जरूरत नहीं है, अनीता! ये गांव वाले ऐसे काम मामूली पैसों के लिए करते हैं।"
उन्होंने यह भी कहा,
"एक ही जगह पर एक ही बात दोहराना हमारे लिए गलत है।"
"इसके बाद हमें वहां नहीं जाना चाहिए। उससे पहले, क्या वहां कोई सरकारी जंगल नहीं है? चलो फिर वहां चलते हैं... ठीक है? क्या वे यूकेलिप्टस के पेड़ नहीं हैं?"
"मुझे नहीं लगता कि इस तरह बाहर जाना सही है, अगर संभव हो तो होटल में रहना हमेशा बेहतर होता है!" उसने स्पष्ट रूप से कहा।
यह सोचकर कि ऐसे भयभीत समय में कुछ भी कहने का कोई फायदा नहीं है, उसने गोली चला दी।
अगली सुबह जब वह जागा, तो उसके मन में एक विचार आया। मडप्पा की बेटी कैसी होगी? वह बार-बार यही सोच रहा था - वह गोरी है, इस काली बालों वाली लड़की जैसी नहीं! मुझे उसे एक बार देखना ही होगा! दोपहर तक यह विचार और भी पक्का हो गया। अनीता से मिलते ही उसने उससे कहा,
मुझे अपने दोस्तों के साथ कुछ काम है। मैं आज शाम आपसे नहीं मिल पाऊंगा।
शाम के 5:30 बज रहे थे जब वह उस जगह पहुंचा जहाँ वह कल गया था। उसने बुलेट को लॉक किया और अपने नियमित स्थान की ओर चलने लगा। वह पहले कभी दिन के उजाले में वहाँ नहीं गया था। अब उसे सब कुछ साफ़ दिखाई दे रहा था। वहाँ नीचे सब कुछ काटा जा रहा था। एक तरफ नारियल भी तोड़े जा रहे थे। नीचे एक बोरवेल दिखाई दे रहा था। पास में ही एक पंप शेड रहा होगा। पास ही एक झोपड़ी भी दिखाई दे रही थी।
वह उस दिशा में चलने लगा। आसपास कोई नहीं था। नहीं—ऐसा लग रहा था जैसे कोई हो। हाँ—एक औरत—नहीं। यह तो एक जवान लड़की लग रही है! यह मडप्पा की बेटी ही होगी!
उसने जोर से पुकारा,
``मादप्पा–"
उस आवाज को सुनकर युवती का ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो गया। झोपड़ी से बाहर आया एक आदमी भी उसे देखने लगा। जी हाँ – यह मडप्पा ही था!
मडप्पा अनुपम की ओर देखने लगा। अनुपम ने उसे याद दिलाया,
"हम कल शाम मिले थे... मोटरसाइकिल पर... याद है?"
मदप्पा ने उसे पहचान लिया। उन्होंने मुस्कुराते हुए अनुप का स्वागत किया। इस दौरान अनुप की निगाहें उस युवती पर टिकी हुई थीं। वह लगभग बाईस वर्ष की रही होगी। उसका शरीर सुगठित था, चेहरा आकर्षक था और रंग गोरा था—अब धूप में रहने के कारण थोड़ा सांवला हो गया था।
मदप्पा ने मुस्कुराते हुए कहा,
क्या यह आरामदायक है? डोकेबाज़, आप भी चलें!
अनुपाला बाहर खड़ा रहा और खुद झोपड़ी के अंदर चला गया। दो मिनट बाद, वह फिर बाहर आया और अनुपाला को झोपड़ी के अंदर ले गया। अंदर, एक तरफ चूल्हा था। पास में दो-तीन एल्युमीनियम के बर्तन रखे थे। दरवाज़े के सामने एक चटाई बिछी हुई थी। मडप्पा ने अनुपाला को उस चटाई पर बैठाया और उसे बताया,
"वो बुढ़िया! उसे इस साल डेट पर जाने के लिए पूछना ही पड़ेगा, बेवकूफ!"
यह कहते हुए उसने अपना हाथ फैला दिया।
अनूप को यह स्पष्ट था कि वह सोलह वर्ष की नहीं थी। लेकिन इस पर चर्चा करने के बजाय, उसने पूछा,
कितना?

"क्या तुमने मुझे कल नहीं बताया था?" उसने पाँच उंगलियाँ ऊपर उठाते हुए कहा।
"क्या तुमने मुझे कल पंद्रह नहीं दिए थे? आज पैंतीस ले लो," अनुपान ने अपनी जेब में हाथ डालते हुए कहा।
"कल तो बीता हुआ कल था! इसे आज क्यों खरीदा जाए?" मडप्पा ने विरोध किया।
अंततः, चालीस रुपये में सौदा टूट गया - फिर मडप्पा ने लड़की को बुलाया,
``मादेवी–"
महादेवी के आते ही मडप्पा ने कहा, "आइए, आप निश्चिंत हो जाइए! डरने की कोई वजह नहीं है - मैं आपकी गाड़ी के पास ही हूं।" यह कहकर मडप्पा वहाँ से चले गए।
अनुपा को उससे कभी-कभार होने वाली बातचीत से सच्चाई पता चली – उसकी अभी शादी नहीं हुई थी। मदप्पा शराब की बुरी आदी थी। इसलिए उसने अनुपा को चेतावनी दी – अब से उसे सारा पैसा मुदप्पा को नहीं देना चाहिए।
वापस आकर उसने बुलेट स्टार्ट की और गाँव की ओर चल पड़ा। वह सोचता रहा – इतनी सलीकेदार रश्मी और खूबसूरत लेकिन अशिक्षित अनीता के साथ रहने के बाद मैं इस महादेवी का साथ कैसे बर्दाश्त कर पाऊंगा? यही सवाल अब मेरे मन में आता है! उसकी मौजूदगी में तो ये सवाल कभी आया ही नहीं था, आखिर क्यों? कुछ हुआ – हो गया। इसके बाद मैं यहाँ नहीं आना चाहता।
अगले दिन जब मैं उठी, तो मैंने मन ही मन सोचा – मैं वहाँ जाना नहीं चाहती, इसलिए कोई कड़ा वादा करने की ज़रूरत नहीं है। मैं ज़्यादा कुछ नहीं करना चाहती, मैंने बस तय किया कि काम हो गया। ऐसा क्यों – महादेवी भले ही अशिक्षित और कम पढ़ी-लिखी हो – लेकिन इस मामले में वो खास तो है ही! ये अनीता कहती है – मेरे अलावा किसी और को मोटरसाइकिल या साइकिल पर नहीं ले जाना चाहिए! भला कौन हमेशा के लिए उससे बंधेगा? इसके बजाय, कभी-कभार महादेवी के पास जाओ, बस काम हो गया!

■

१३

परशुरामगौड़ा तालुका के तहसीलदार बनकर आए और उन्होंने हलुकेरे गांव के सभी ग्रामीणों से सरकार को आवेदन देने को कहा। हालांकि आज विद्याशाला को दी गई जमीन पहले सोदगौड़ा की थी, लेकिन उन्होंने इसका इस्तेमाल खुद नहीं किया था। पूरा गांव शिंदी के पेड़ों की शाखाओं का इस्तेमाल चटाई बुनने के लिए करता था। वे इन पेड़ों को काटकर घर भी बनाते थे। इसके अलावा, पहाड़ों और जोगीगुड्डा से बहकर आने वाला बारिश का पानी गांव के तालाब में जमा होता था। आज यहां आए अन्नय्या ने विद्याशाला नाम से एक निजी शिक्षण संस्थान बनाया है और पास में ही एक बांध बनवाकर उसमें जमा पानी से नारियल का बाग सींच रहे हैं! इस वजह से ग्रामीणों को शिंदी के पेड़ों की शाखाएं नहीं मिल पा रही हैं और गांव के तालाब में पानी भी जमा होना बंद हो गया है – नतीजतन, ग्रामीणों को भुखमरी आदि का सामना करना पड़ रहा है।
यह महज एक साधारण आवेदन नहीं था। चूंकि तालुका के अधिकारी और जिला सांसद इसके पीछे थे, इसलिए आवेदन पर तुरंत कार्रवाई की गई। जल्द ही स्कूल को एक नोटिस भेजा गया। अन्नाय्या ने नोटिस का जवाब दिया। उसमें उन्होंने विधिवत सूचित किया कि नारियल से होने वाली आय गरीब छात्रों पर खर्च की जा रही है और बांध के निर्माण से पहले सरकारी अधिकारियों से पूर्व अनुमति ली गई थी।
सरकार ने जवाब दिया कि विद्यालय निर्माण से पहले ग्रामीणों की अनुमति नहीं ली गई थी, जिसके कारण विद्यालय ठीक से नहीं बन पाया। इसी प्रकार, पहले एक

छोटा बांध बनाने की अनुमति लेने के बाद, अब यहां एक बड़ा बांध बना दिया गया है - पहाड़ों से बहकर आने वाली मिट्टी का उपयोग यहां बांधों को भरने के लिए भी किया जाता है - इसके अलावा, इस संगठन ने नारियल के पेड़ लगाने से पहले राजस्व विभाग से अनुमति न लेकर सरकार को धोखा दिया है।
इस नए आरोप को देखकर अन्नाइया चिंतित हो गए। उन्होंने जवाब भेजा कि संगठन ने नारियल के पेड़ लगाने से पहले सरकार से अनुमति ली थी। सरकार ने तुरंत उनसे वे दस्तावेज जमा करने को कहा।
यह स्पष्ट था कि इन सबके पीछे परशुराम गौड़ा का हाथ था। उनकी इच्छा थी कि उन्हें वह ज़मीन वापस मिल जाए जो उनके दादा ने उन्हें उपहार में दी थी। उनकी महत्वाकांक्षा उस ज़मीन पर स्थित शिक्षण संस्थान का मालिक बनने की थी। उन्होंने ग्रामीणों को भड़काया और इस काम को आगे बढ़ाया। उन्होंने जानबूझकर ग्रामीणों के मन में कॉलेज के प्रति द्वेष की भावना पैदा की और उसे हवा दी। इसके अलावा, वडेरय्या की पत्नी ने भी हर जगह यह बात फैलाई कि अन्ना गौड़ा ने उनके पति को पुलिस के हवाले कर दिया और उन्हें प्रताड़ित किया। एक बार तो वह स्कूल आकर यह मांग भी करने लगी - 'तुम्हारी वजह से हमें पुलिस को सात सौ रुपये देने पड़े, हमें वापस दे दो।' तब भी अन्ना ने उन्हें कई तरह से समझाया - 'पुलिस विभाग में मेरे जान-पहचान के लोग हैं - मैं तुम्हें तुम्हारा पैसा दिलवा दूंगा! लेकिन मेरे लिए वह पैसा देना उचित नहीं होगा।'
लेकिन वह यह बात बिलकुल नहीं समझ पाई। उसे पक्का यकीन था कि अन्नाइया कोई बहाना बना रहा है ताकि उसे पैसे न देने पड़ें। इतना ही नहीं, जब उसने उसे पुलिस के पास जाने को कहा, तो वडेरैया कांप रहा था। इस डर के मारे वह मन ही मन पुलिस पर इलजाम लगाने की हिम्मत नहीं कर पा रहा था। इसलिए उसने 'जोगप्पा की कसम' खाई और अन्नाइया पर इलजाम लगा दिया। यह सब देखने और सुनने वाले ग्रामीणों की नजरों में अन्नाइया का गुनाह साफ था। उन्हें लगा कि उसके गुस्से को सहने से बेहतर यही होगा कि उसे एक थप्पड़ मार दिया जाए, क्योंकि अन्नाइया ने कहा था कि वह उनके गांव के परशुराम गौड़ा जैसा बड़ा सरकारी अधिकारी बन गया है।
अब स्कूल को राजस्व विभाग से भी नोटिस मिला है - पहले स्कूल शुरू करने की अनुमति दी गई थी, लेकिन संगठन ने एक और स्कूल, मशीन शॉप, गौशाला, होन्नाट्टी परिवार के लिए घर आदि के निर्माण से पहले सरकार से कोई अनुमति नहीं ली। इस अनाधिकृत निर्माण को क्यों नहीं गिराया जा रहा है?
अब अन्नाय्या को दृढ़ विश्वास हो गया था कि जब तक यह मामला पूरी तरह से सुलझ नहीं जाता, उन्हें मन की शांति नहीं मिलेगी। उन्होंने शंकरमूर्ति, चंद्रशेखर, शरभन्ना, सोमशेखरचार्य और रामचंद्र से इस विषय पर विस्तार से चर्चा की। इस चर्चा से तीन मत सामने आए। शंकरमूर्ति और चंद्रशेखर का मत था कि उन्हें एक उपयुक्त वकील उपलब्ध कराकर अदालत का दरवाजा खटखटाना चाहिए। शरभन्ना और सोमशेखर ने कहा कि कम से कम डीडीटीआई हमारे स्कूल से प्रभावित है - अगर वे उनसे मिलें, तो वे मंत्री स्तर पर कुछ करेंगे। सभी इस विचार से सहमत थे। अन्नाय्या ने रामचंद्र से इस पर अपनी राय देने को कहा।
होन्नाटी के संगीत और रियाज़ के लिए बने घर में रहने वाले और अपना अधिकांश समय ध्यान में बिताने वाले रामचंद्र ने कहा,
"यह ग्रामीणों के मन को बदलने का सवाल है। आइए हम गांव में एक मंडप बनाएं और उसमें बैठकर उपवास करें और सत्याग्रह का पालन करें। सत्याग्रह में जो शक्ति है, वह न तो दरबार में है और न ही किसी मंत्री में! मैं भी अंतिम उपवास करने को तैयार हूं!"
वे सभी सत्याग्रह से भली-भांति परिचित थे। उन्होंने गांधीजी की जीवनी और विभिन्न मुद्दों पर उनके विचार पढ़े थे। लेकिन उन्हें इस बात का संदेह था कि क्या वे उन

रॉस्तों पर चलकर सफल हो पाएंगे। जब गांधीजी उपवास शुरू करते थे, तो देश भर के हजारों लोग उनका साथ देते थे। देश में इसके अलावा कोई और खबर नहीं होती थी। यहां तक कि अखबारों में भी उतनी ही महत्वपूर्ण खबरें छपती थीं! इन सबका संयुक्त प्रभाव ब्रिटिश सरकार पर अवश्य ही पड़ रहा था। हमारे लिए यह कैसे संभव है? क्या आज हमारे पास गांधीजी जैसी आंतरिक शक्ति है? राजनीति में सफलता पाने की होड़ में नेताओं ने नेता के पद का दुरुपयोग करके उसकी अहमियत को ही खत्म कर दिया है!
अन्य लोगों को सत्याग्रह निरर्थक लगता था। लेकिन रामचंद्र ऐसा नहीं मानते थे। उनका सुबह और शाम का अधिकांश समय ध्यान में व्यतीत होता था। दूसरों के विपरीत, वे विद्यालय की अन्य गतिविधियों में भाग नहीं लेते थे। उन्होंने कहा,
हमें आत्म-शुद्धि के लिए उपवास करना चाहिए! सफलता मिलेगी या असफलता, यह सवाल कहां से आया?
यदि बात केवल आत्म-शुद्धि की है, तो हलुकेरे गांव में मंडप क्यों बनवाया जाए? आप अपने जैसे बंद घर में बैठकर भी उपवास और ध्यान कर सकते हैं!
"गांव वालों पर असर डालने के लिए ऐसा करना जरूरी है। लेकिन हमें अपनी जीत या हार का आकलन इस आधार पर क्यों करना चाहिए? शिक्षक इतने सारे बच्चों को ज्ञान दे रहे हैं। वह ज्ञान उनमें से कुछ ही तक पहुंचता है। इसमें शिक्षक की जीत या हार का सवाल ही क्या उठता है?"
हालांकि सभी को दृढ़ विश्वास था कि ऐसी बहस से कुछ भी हासिल नहीं होगा, फिर भी वे रामचंद्र को पूरी तरह से अस्वीकार करने में सहज महसूस नहीं कर रहे थे। अंत में, शंकरमूर्ति ने कहा,
"गांधीजी ने भी इसे मार्ग को अंतिम उपाय के रूप में देखा था। हमें अन्य दो मार्गों को भी आजमाना चाहिए। यदि वे कारगर नहीं होते, तो हम इस तीसरे मार्ग पर विचार कर सकते हैं।"
यह विचार सभी को पसंद आया।
तय कार्यक्रम के अनुसार, अन्नाय्या ने जिला कलेक्टर से मुलाकात की। डी.डी.टी.आई. रंगापुत्तप्पा पिछड़ी जाति में जन्मे थे और अत्यंत अभावग्रस्त परिस्थितियों में शिक्षा प्राप्त करने के बाद आगे बढ़े थे। उनका मानना था कि हर पांच मील पर एक विद्यालय जैसी संस्था होनी चाहिए। उन्होंने अन्नाय्या द्वारा लाई गई पूरी फाइल देखी और कहा,
चलिए डी.सी. कार्यालय चलते हैं और आगे की पूछताछ करते हैं। मुझे लगता है कि कोई साधारण अधिकारी यह सब नहीं कर पाएगा। ऐसा भी नहीं है कि हमें यहां पूरी सच्चाई मिल जाएगी। क्योंकि अधिकारी आसानी से सच नहीं बताते!
दरअसल, जब वे दोनों डी.सी. साहब से मिलने गए, तो उन्होंने ऐसा दिखाया जैसे उन्हें कुछ पता ही नहीं है। जब वे अपने दफ्तर लौटे, तो रंगपुत्तप्पा ने इस काम के लिए अपने टाइपिस्ट को फिर से भेजा। क्योंकि उन्हें याद था कि डी.सी. का पी.ए. इसी टाइपिस्ट का रिश्तेदार था।
कुछ घंटों बाद लौटी टाइपिस्ट मुनिराजा खबर लेकर आई।
मेरे चचेरे भाई को भी कुछ पक्का पता नहीं है। लेकिन खबर यह है कि ए.सी. खुद निर्देश दे रहे हैं और सब कुछ करवा रहे हैं। डी.सी. का भी इसमें पूरा समर्थन है। आप यहां कुछ भी कर लें, उसका कोई फायदा नहीं होगा। अगर मंत्री स्तर पर कुछ होता है, तो वह होकर रहेगा," मेरे चचेरे भाई ने कहा।
अब अन्नाय्या की बारी थी यह सोचने की कि उनके साथ या संगठन के साथ ऐसा क्या हुआ था जिससे मंत्री स्तर पर आक्रोश और असंतोष पैदा हुआ। वह यह भी समझते थे कि यही परशुराम गौड़ा की शान थी। कुछ देर सोचने के बाद डी.डी.पी.आई. ने कहा,

पहले जब आपके कॉलेज का ज़िक्र आया था, तब डॉ.पी. आइ. ने आपके कॉलेज आने की इच्छा जताई थी। उस समय उन्होंने सब कुछ छोड़कर निष्ठापूर्वक शिक्षा देने वाले शिक्षकों के प्रति सम्मान व्यक्त किया था और कहा था, "ऐसे शिक्षक हर स्कूल में कैसे मिल सकते हैं? क्या राजनीति में लिप्त शिक्षक निष्ठापूर्वक यह काम करेंगे? मैं आपको एक पत्र दूंगा। अगर आप इसे उनके पीए को दिखाएंगे, तो आप उनसे मिल सकेंगे। अगर आप चाहें, तो इस अवसर का लाभ उठाकर अपनी सभा में उन्हें बुला लें। इस तरह आप मंत्रियों के माध्यम से अपने परशुराम गौड़ा को भी फटकार लगा सकते हैं। इसके अलावा कोई और उपाय नहीं है।"
अन्नाय्या ने स्वयं उन दिनों को याद किया जब वे सरकारी नौकरी में प्रधानाध्यापक थे। बढ़ते बच्चों के सामने नासमझ मंत्रियों के निरर्थक भाषण देना शिक्षकों के सबसे बड़े पापों में से एक है! नैलाजा ने कॉलेज में दो बार डीडीपीआई को भी बुलाया था। लेकिन बस इतना ही। अन्य अवसरों पर, उन्होंने छात्रों के हितों को ध्यान में रखते हुए ही व्याख्याताओं को बुलाया था, जाति, धर्म, नौकरी, पेशा, समूह या संप्रदाय पर विचार किए बिना। तब भी, उन्होंने उन विचारकों, लेखकों और कलाकारों को नहीं बुलाया था जो संवेदनशील छात्रों के दिमाग को दूषित कर रहे थे, जबकि उस समय इन वक्ताओं की पूरी तरह से जांच करना संभव था।
उन्होंने तय किया कि अगर मंत्री जी आने को तैयार हों तो वे उन्हें आमंत्रित करेंगे - किसी भी तरह से उनका अभिनंदन करने के लिए नहीं। उन्होंने डीपीआई के लिए एक पत्र लिया और रंगपुत्तप्पा को विदाई दी।

■

शिक्षा मंत्री से मिलने बेंगलुरु गए अन्नायाह, रविंद्र के घर पर रुके थे। उन्होंने रविंद्र को वडेरया परिवार द्वारा पुलिसकर्मियों को रिश्वत देने और उन पर अत्याचार करने के बारे में बताया था; लेकिन उन्हें इसके पीछे की सच्चाई का पता नहीं था। उन्होंने भी वहाँ हर बात की गहराई से जाँच नहीं की।
अब, सभी फाइलों को ध्यानपूर्वक पढ़ने के बाद, उन्होंने कहा,
"आप चाहें तो शिक्षा मंत्री से मिल सकते हैं। लेकिन मुझे नहीं लगता कि इससे कोई फायदा होगा। ऐसा लगता है कि हमारे पास अदालत जाने के अलावा कोई और रास्ता नहीं बचा है।"
आपको क्यों लगता है कि मंत्री काम नहीं करेंगे?
"तुम पहले जाओ, फिर वापस आना! अगर मेरा अनुमान गलत भी हुआ तो मुझे खुशी होगी!"
योजना के अनुसार, अन्नय्या मिलने गए। लेकिन कई समस्याओं के कारण वे मंत्री से मिल नहीं सके। वे वापस आए और रविंद्र को सारी सच्चाई बताई। रविंद्र ने तुरंत अपने एक परिचित विधायक को फोन किया। उनके प्रयासों से अगले ही दिन मंत्री से मिलने का समय मिल गया। अन्नय्या निर्धारित समय पर विधानसभा पहुंचे। उन्हें मंत्री के बैठने की सही जगह ढूंढने में कुछ समय लग गया।
मंत्री के सहायक ने डायरी देखी और कहा,
जी हाँ! आपको अपॉइंटमेंट मिल गया है। लेकिन अब पार्टी के लोग दिल्ली से आ गए हैं। मैंने अभी-अभी इडली-वड़े-कॉफी अंदर भेज दी है। उनके जाने के बाद मैं आपको बुलाऊंगी। आप बैठ जाइए...
लगभग डेढ़ घंटे इंतजार करने के बाद उन्हें अंदर जाने की अनुमति मिली। अंदर आकर उन्होंने अभिवादन किया और बैठ गए। अन्य लोगों की तरह, यह मंत्री भी ग्रामीण पृष्ठभूमि से आते प्रतीत हो रहे थे। उन्होंने खादी की कमीज और धोती पहनी हुई थी। उन्होंने अपनी खादी की टोपी मेज पर रखी हुई थी।
अन्नाय्या ने उन्हें संक्षेप में अपने संगठन के बारे में बताया। उन्होंने हाल की समस्याओं के बारे में भी बताया और कहा कि इन समस्याओं के पीछे परशुराम

गौड़ा का हाथ था। अन्नाय्या ने फाइल उनके सामने रख दी। मंत्री ने बिना देख ही कहा,
"राजस्व विभाग परेशानी खड़ी कर रहा है, इसलिए आपने जानकारी दी! अब हम और क्या कर सकते हैं?"
"हो सकता है मेरी जानकारी गलत हो! अगर आप राजस्व मंत्री से मिलकर इस बारे में बात करें, तो सारी परेशानी खत्म हो जाएगी।"
"अरे वाह, वाह, वाह! क्या आप मुझसे किसी दूसरे विभाग के मंत्री के बारे में शिकायत कर रहे हैं?" मंत्री भड़क उठे।
"कोई और रास्ता नहीं है! वरना मैं इस पूरे मामले को आधिकारिक स्तर पर ही खत्म कर देता!" अन्नाय्या ने शांत भाव से उत्तर दिया।
मंत्री जी कुछ क्षणों के लिए सोच में डूब गए। फिर उन्होंने अपने सहायक को राजस्व विभाग के मंत्री से फोन जोड़ने को कहा। फोन की घंटी बजते ही उन्होंने बोलना शुरू कर दिया। यह समझते हुए कि उनकी कन्नड़ भाषा फोन मशीन से आगे नहीं जा पाएगी, वे कुछ देर तक बोलते रहे, बीच-बीच में 'ऐ शि-ऐ शि' कहते रहे। बीच-बीच में वे आश्चर्य से 'क्या?' आदि कहते रहे। उनकी भौंहें तन गईं और आखें चौड़ी हो गईं।
अन्नाय्या, जो उनके चेहरों पर ध्यान दे रहा था, समझ गया कि वे क्या बात कर रहे हैं। लगभग पच्चीस मिनट तक फोन पर विस्तार से बात करने के बाद, उसने अपने कानों से पसीना पोंछा और कहा, "ठीक है, मैं कर देता हूँ।" उसने रिसीवर नीचे रख दिया।
फिर भी, उन्होंने कुछ देर पंखे को देखा और फिर पूछा,
आपके संगठन के पास कुल कितनी जगह है?
अन्नाय्या ने फिर उल्लेख किया कि सौद्रगौड़ा ने उन्हें एक सौ बीस एकड़ जमीन दी थी।
मंत्री जी ने बोलना शुरू किया,
आप जानते हैं कि देश में भूमिहीनता की समस्या कितनी गंभीर है, है ना? मुख्यमंत्री ने परसों क्या कहा था? इस देश के हर भूमिहीन व्यक्ति को जमीन मिलनी चाहिए, इसीलिए उन्होंने परसों अपने भाषण में यह बात कही थी... यही हमारा भी आदर्श वाक्य है! तो फिर आपके स्कूल को इतनी जमीन की क्या जरूरत है? जितनी जमीन की जरूरत है उतनी रखिए और बाकी सारी जमीन सरकार को दे दीजिए। हम उसे गरीबों में बांट देंगे। वरना सरकार चलाने का क्या मकसद!
अन्नाय्या ने फिर कहा,
आपने हमारे स्कूल को ठीक से नहीं समझा! वहाँ चार सौ छात्र पढ़ते हैं। उनमें से तीन सौ छात्रावास में रहते हैं। उनमें से डेढ़ सौ ही छात्रावास का शुल्क दे पाते हैं। वो भी अपने खेतों में उगाई गई चना, चावल आदि से। बाकी बच्चे तो और भी गरीब हैं। सभी बच्चे स्कूल के लिए पैसे कमाने के लिए काम करते हैं। अगर यह ज़मीन नहीं होगी, तो उन गरीब बच्चों को दो कटोरी चना कहाँ से मिलेगा?
``सरकारी अनुदान ले लें, है ना? हमारा सामाजिक सेवा विभाग किसलिए है?"
``हमारे संगठन का लक्ष्य गांधीवादी सिद्धांतों के अनुसार स्कूलों का संचालन करना है। स्कूल आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने चाहिए। इसके लिए महात्माजी का मानना था कि स्कूलों के पास अपनी जमीन होनी चाहिए..."
यह सुनकर मंत्री जी नाराज हो गए।
"वाह, हाँ! आप मुझे गांधीवाद पर भाषण देने वाले हैं! आपने यह कहाँ से लिखा? गांधीवाद की तरह, हमने गरीबों की मदद करने का फैसला किया है! हमारे पास गरीब बच्चों को कलम और पेंसिल देने और गरीब महिलाओं को कपड़े और चोली देने की योजना है! और आप सरकारी अनुदान लेने से इनकार करते हैं? मैं देख लेता हूँ, अब मुझे समझ में आया कि आप सरकारी मदद के बिना स्कूल कैसे

चलाते हैं – आप साधारण छात्रों को तैयार नहीं कर रहे हैं! आप नक्सलवादी तैयार कर रहे हैं!...”
शोरगुल से भ्रमित होकर पीए ने झट से दरवाज़ा खोल दिया।
``शिक्षा पर गांधीजी के विचार इन पुस्तकों में प्रकट होते हैं। हमें इन्हें अवश्य पढ़ना चाहिए। न केवल सत्ता का विकेंद्रीकरण होना चाहिए, बल्कि समाज में उत्तरदायित्व का भी बंटवारा होना चाहिए - प्रत्येक व्यक्ति को उत्तेरदायित्व लेना चाहिए।"
यह सुनने से पहले मंत्री ने कहा,
अरे वाह, वाह, वाह! आप तो अराजकता फ़ैलाने की कोशिश कर रहे हैं!
लेकिन जब तक हमारी पार्टी सत्ता में है, ऐसा नहीं होगा! मुझे पता है कि तुम और तुम्हारा अखबारवाला देश को डुबाने की कोशिश कर रहे हो! गृह मंत्री सब कुछ संभाल लेंगे!
जब मंत्री चिल्ला रहे थे, तभी खादी के वस्त्र पहने दस-बारह नेता एक साथ कक्ष में दाखिल हुए। नेताओं को देखते ही मंत्री खड़े हो गए और उनसे हाथ मिलाकर बोले,
"आपको नामांकित किया गया था, है ना? मैं क्या कह रहा था? आपने पार्टी की सेवा की है, और देर-सवेर आपको उच्च कमान का समर्थन मिलेगा!"
मंत्री के सहायक ने अन्नाय्या को जाने का इशारा किया। अन्नाय्या ने अपनी फाइल ली, छाता खोला और टिब्यून कार्यालय की ओर चल दिए।
वह रविंद्र के कमरे में एक कुर्सी पर बैठ गया और बोला,
"आपने पहले ही कहा था कि यह काम नहीं करेगा। ऐसा कैसे?"
``वहां क्या हुआ?..."
सब कुछ सुनने के बाद, रविंद्र ने कहा,
क्या आपको रामनगर के पास ग्रेनाइट की तस्करी की घटना याद है? उस मामले में बीजापुर के लोगों का गुलामों की तरह शोषण किया जा रहा था? उन सभी मामलों में परशुराम गौड़ा ही रिकॉर्ड मैनेजर थे। हमने ही तो इस मामले को उजागर किया था, है ना? इसीलिए अब वे हमें नक्सलवादी कह रहे हैं! उन सभी मामलों में राजस्व मंत्री की सीधी भूमिका थी। इसीलिए वे इस मामले में उनकी मदद कर रहे हैं। परशुराम गौड़ा तब तक चुप नहीं बैठेंगे जब तक वे विश्वविद्यालय की एक सौ बीस एकड़ जमीन में से सौ एकड़ जमीन छीन नहीं लेते! उन्होंने उसी स्वार्थी कारण से वहां तबादला करवाया है और राजस्व मंत्री ने भी उसी कारण से इसमें मदद की है। इसके अलावा, जोगी-गुड्डा और उसके आसपास लौह अयस्क का भंडार है, है ना? सही व्यक्ति को ठेका देकर मंत्री वहां भी करोड़ों रुपये का कमीशन कमा सकते हैं। इन सभी मामलों में भी परशुराम गौड़ा को आसानी से आठ से दस लाख रुपये मिल जाएंगे!
अन्नाय्या यह सब सुनकर हैरान रह गया। भला उसे यह सब कैसे पता नहीं चला? ज़ाहिर है, क्योंकि रविंद्र पेशे से पत्रकार है, तो वह अलग-अलग जगहों पर घटित घटनाओं का सटीक वर्णन कर सकता है, है ना!
दोनों ने कुछ देर सोचा। एक तरीका था मुख्यमंत्री से सीधे मिलकर उन्हें भावी सरकार की बदनामी से अवगत कराना। लेकिन रविंद्र यह भी जानता था कि इस सब की जड़ ग्रेनाइट कांड में थी! और उस कांड में मुख्यमंत्री का हाथ था। आज भी, मुख्यमंत्री की जानकारी के बिना यह सब संभव नहीं था!
दोपहर तक एक और समाधान सुझाया गया। दोनों ने इस पर चर्चा की, और तब भी वही रास्ता सही लगा। एस. एन. पाटिल, उच्च न्यायालय के एक वरिष्ठ वकील थे। वे अक्सर टिब्यून में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली और उसके खतरों जैसे विषयों पर लेख लिखते थे। उनके लेख न केवल बैंगलोर में बल्कि देश के सभी हिस्सों में प्रकाशित होते थे। कई बार उन्होंने सरकार विरोधी विचार भी खुलकर व्यक्त किए। रविंद्र भी जानते थे कि इस संबंध में उनके मन में एक गहरी इच्छा थी। एक महीने

पहले, रवींद्र गोखले संस्थान में एक गणतंत्र राज्य में वकीलों की स्थिति पर भाषण देने गए थे। जब भी इंदिरा गांधी ने संविधान को तोड़-मरोड़ कर पेश किया, तो छागला, पालखीवाला, सिंहवी आदि जैसे वकीलों ने अपने भाषणों के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय में दिए गए अपने तर्कों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया था।
जैसे ही रविंद्र को ये सब याद आया, उसे सही रास्ता मिल जाने की खुशी हुई। उसने अपनी घड़ी देखी – चार बज रहे थे। शायद वे अभी तक अदालत से घर नहीं लौटे होंगे। उसने फैसला किया कि वह एक घंटे बाद उनके घर फोन करेगा। उसका मन पाटिल के ख्यालों में डूबा हुआ था।
पाटिल को वहां मुंबईवाला के नाम से जाना जाता था। वे हर मौके पर मुंबई बार का जिक्र करते थे। वहां की परंपरा, वहां के एक से अधिक उत्कृष्ट वकील, उनके काम करने का तरीका और उनके व्यक्तिगत मामलों का जिक्र वे अपने भाषण में बार-बार करते थे। यहां तक कि अदालत में बहस करते समय भी वे मुंबई अदालतों के फैसलों का इस्तेमाल लीलाओं की तरह करते थे। आज भी रविंद्र को पता था कि मुंबई से उनके कई संबंध हैं। उन्हें इस बात पर बहुत गर्व भी था और वे दप्तारी, पालखीवाला, गुप्ते, नरीमन, जेठमलानी, छागला, खंडेलवाल, पुलिसवाला, सोराबजी, चितालै जैसे उत्कृष्ट वकीलों की सूची देते थे।
"अरे, हमारे कर्नाटक उच्च न्यायालय ने कम से कम एक भी ऐसा सशक्त वकील क्यों नहीं दिया जो इस नाम के योग्य हो!..."
यह पाटिल मूल रूप से बेलगाम के पास एक गाँव के रहने वाले थे। उन्होंने मुंबई में कानून की पढ़ाई की थी। राज्यों के भाषाई विभाजन के बाद, उन्होंने कर्नाटक को अपना अधिकार क्षेत्र बनाया। पुराने मैसूर के वकील उनकी आलोचना करते हुए कहते थे, "वे अभी तक महाराष्ट्र के गुलाम नहीं बने हैं!"
पाटिल ने शाम पांच बजे फोन उठाया। रविंद्र द्वारा स्कूल और समस्या के बारे में संक्षेप में बताने के बाद, उन्होंने कहा,
आप ऐसा कीजिए—अपने दोस्त को आठ बजे ले आइए—चलिए दफ्तर में बैठकर शांति से बात करते हैं—"
रविंद्र ने घर पर फोन किया और अन्नाय्या को अपने अखबार के दफ्तर बुलाया, और दोनों शेषाद्रिपुर में पाताल के दफ्तर गए। उनके कमरे में बैठकर आधे घंटे तक देश की मौजूदा स्थिति पर चर्चा करने के बाद, उन्होंने पूछा,
तुम्हारे दोस्त की क्या समस्या है?
रवींद्र ने कॉलेज के बारे में सारी जानकारी दी। बाद में, जब उन्होंने ग्रेनाइट की तस्करी का मुद्दा उठाया, तो पाटिल ने कहा,
मुझे पता है। मैंने इसे पढ़ा है। उत्कृष्ट रिपोर्ट! विधानसभा में विपक्षी दल ने भी इस पर खूब हंगामा किया। लेकिन कुछ नहीं हुआ! यही हमारे गणतंत्र का हाल है!
सब कुछ सुनने के बाद, वकील पाटिल ने अन्नाय्या के हाथ से फाइल ले ली और कहा,
"मुझे लगता है कि मुझे पहले आपके स्कूल को व्यक्तिगत रूप से देखना चाहिए। फिर मैं देखूंगा कि क्या किया जा सकता है!"
"तुम कब खाली हो? मैं तुम्हें ले चलूंगा।"
यह यहाँ से कितनी दूर है?
एक सौ बीस मील।
"परसों रविवार है। चलो सुबह आठ बजे निकलते हैं और शाम छह बजे तक वापस आ जाते हैं।"
ठीक है। मैं सुबह 7:45 बजे गाड़ी ले आऊंगा।
"आपकी कार? आप खुद चलाते हैं? नहीं। मेरे पास ड्राइवर है। चलिए चलते हैं और आराम से वापस आते हैं!"
अन्नाय्या अगले दिन बस से रवाना हो गया।

रविवार को जब रवींद्र को इस बारे में पता चला, तब वह पाटिल परिवार के साथ था। उनके पास वातानुकूलित मर्सिडीज़ थी। तो, अगर वे अपनी साधारण फिएट में आने से इनकार कर रहे थे, तो वे उनसे यात्रा का खर्च कैसे मांग सकते थे?
वहाँ पहुँचकर पाटिल वकील ने हर चीज़ का बहुत ध्यान से निरीक्षण किया, वहाँ के ब्रह्मचारी शिक्षकों से बात की, बच्चों द्वारा निर्मित इमारतों को देखा, सौद्रगौड़ा के दान पत्र को ध्यान से पढ़ा, छात्रावास की व्यवस्था देखी, स्वयं वहाँ भोजन किया, बांध द्वारा रोके गए पानी और उस पानी पर उगने वाले नारियल के बागों को देखा। उन्होंने ज़िला अधिकारियों और अन्य लोगों द्वारा दिए गए प्रशंसा पत्रों के नमूने भी लिए।
शाम 4:30 बजे जब वह जा रहा था, तो उसने अन्नाय्या से कहा,
इसमें कोई शक नहीं कि सरकार के नापाक इरादे इस तरह एक के बाद एक अवैध नोटिस भेजकर उजागर हो रहे हैं। वे हमें परेशान कर रहे हैं – इसे रोकना होगा – इसलिए आइए एक याचिका दायर करें। यह स्वीकार हो जाएगी। उसके बाद, अगर वे फिर कुछ भेजते हैं, तो हम मामला अदालत में ले जाएंगे। मैं आपको समय-समय पर बताता रहूंगा कि दस्तावेज़ मुझे सौंपना और अदालती फीस भरना आपका काम है। आपको मेरी फीस, कार्यालय खर्च, वाहन खर्च के लिए एक पैसा भी लाने की ज़रूरत नहीं है! यह मेरी शिक्षण संस्थान के प्रति सेवा है! आप अच्छा काम कर रहे हैं –"

■

याचिका दायर करने के बाद सरकार की ओर से नोटिसों का सिलसिला पूरी तरह रुक गया। पूरा स्कूल पहरेदार बन गया। छात्रों को यह बात ज़्यादा समझ नहीं आई। लेकिन शिक्षक अपने स्कूल के सुरक्षित हो जाने से बहुत खुश थे!
जल्द ही, हमें एक खबर मिली: हलुकेरे गाँव में जल्द ही एक सरकारी हाई स्कूल खोला जाएगा! इसके अलावा, यह भी खबर थी कि बिदारली से हलुकेरे तक की सड़क को तारकोल से पक्का किया जाएगा और उस पर नियमित रूप से बसें चलेंगी। हालांकि यह खबर अच्छी थी, लेकिन यह भी सबको पता था कि हलुकेरे में एक नया स्कूल खोला जाएगा, जिसका मतलब था कि कॉलेज को बढ़ावा दिया जा रहा है।
अन्नाय्या भी इस खबर से एक हफ्ते तक परेशान रहे। लेकिन फिर उन्होंने दूसरों को बताना शुरू कर दिया।
बस एक बात – और ज़्यादा स्कूल खुलने दीजिए! जितने ज़्यादा स्कूल खुलेंगे, यहाँ के छात्रों के लिए उतना ही अच्छा होगा, है ना? साथ ही, एक बात मत भूलिए। गाँव के लोग बेवकूफ़ नहीं हैं! वे अपने बच्चों को उन जगहों पर भेजते हैं जहाँ अच्छी शिक्षा मिलती है। सरकार नए स्कूल खोल सकती है – वह उनका खर्च उठाएगी! लेकिन उसे वफादार शिक्षक कहाँ से मिलेंगे? हमारे छात्र सिर्फ़ हलुकेरे से नहीं आते। हलुकेरे से आने वाले छात्रों की संख्या दस प्रतिशत भी नहीं है। हमें डरने की क्या ज़रूरत है?
पंद्रह से बीस दिनों के भीतर हलुकेरे विद्यालय का उद्घाटन समारोह आयोजित किया गया। विद्यालय की नींव गाँव के गोशाला में रखी गई। नींव का खुदापन राजस्व मंत्री ने करवाया। मुख्यमंत्री अध्यक्ष के रूप में उपस्थित थे। समारोह का उद्घाटन शिक्षा मंत्री ने किया। वित्त मंत्री ने अपना आशीर्वाद दिया। इस कार्यक्रम के लिए पूरे तालुका से बड़ी संख्या में लोग एकत्रित हुए थे। अन्नाया और उनके शिक्षकों को जानबूझकर कार्यक्रम से बाहर रखा गया था। दस हज़ार से अधिक लोगों को मिठाई और ढोड़ परोसा गया। मीठी ढोड़ बड़े-बड़े चूल्हों में पकाई गई थी। टक भरकर पत्रावली मंगाई गई थी। मंत्री और अन्य गणमान्य व्यक्तियों को परशुरामगौड़ा के घर पर मिश्रित भोजन दिया गया। चूंकि उस क्षेत्र में हलुमत संप्रदाय की बड़ी आबादी थी, इसलिए कर्नाटक भर से हलुमत संप्रदाय के मंत्रियों

और सरकारी अधिकारियों को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था। इस पूरे समारोह के बीच 'देश की नेता - इंदिरा माता' का एक बड़ा पोस्टर प्रमुखता से प्रदर्शित किया गया था।
परशुराम गौड़न ने स्वागत भाषण दिया। इसमें उन्होंने अपने दादा की उदारता का उपहास किया और उन 'सामाजिक बुराइयों' का भी ज़िक्र किया जिन्होंने बिना नाम लिए अपने स्वार्थों के लिए इसका दुरुपयोग किया। उन्होंने नवस्थापित विद्यालय की विशेषताओं के बारे में बताया। उन्होंने कहा, "बच्चों का विकास कैसे होना चाहिए? पढ़ाई के साथ-साथ बच्चों को खेलकूद की भी ज़रूरत होती है। क्या बैडमिंटन, टेनिस, क्रिकेट, फुटबॉल, वॉलीबॉल, दौड़ आदि में केवल शहर के बच्चे ही हिस्सा लें? और क्या हमारे गांवों के बच्चे केवल गोबर, कीचड़, मिट्टी, पत्थर आदि में ही मेहनत करें? हमें ऐसा विद्यालय नहीं चाहिए जो शिक्षा के नाम पर गांधी-विवेकनंद का हवाला देकर गांव के बच्चों को ग्रामीण बना दे! इसीलिए हमने अपने विद्यालय की योजना में जवाहरलाल नेहरू क्रिकेट ग्राउंड, मोतीलाल नेहरू टेनिस कोर्ट, कमला नेहरू बैडमिंटन कोर्ट, इंदिरा गांधी फुटबॉल ग्राउंड, संजय गांधी स्विमिंग पूल की योजना बनाई है!"
परशुराम गौड़ा द्वारा सभी मंत्रियों की प्रशंसा करते हुए भाषण समाप्त करने के बाद, शिक्षा मंत्री ने अपना भाषण दिया। उन्होंने घोषणा की कि ग्रीष्मकाल समाप्त होते ही नया विद्यालय खोल दिया जाएगा। उन्होंने यह भी कहा कि कक्षा 1 से 12 तक की कक्षाएं एक साथ शुरू की जाएंगी। उन्होंने आश्वासन दिया कि इस उद्देश्य के लिए आवश्यकतानुसार सरकारी शिक्षकों को यहां स्थानांतरित किया जाएगा। भवन का निर्माण पूरा होने तक, कक्षाएं गांव में ग्राम पंचायत जैसे अन्य सरकारी भवनों में लगेंगी; निम्न जाति के छात्रों के लिए निःशुल्क छात्रावासों की व्यवस्था की जाएगी, आदि।
इसके बाद बोलने वाले वित्त मंत्री ने इस विद्यालय के लिए एक करोड़ रुपये के दान की घोषणा की और जोरदार तालियों के बीच कहा कि वे इतने महान कार्य को कभी भी धनहीन नहीं होने देंगे। उन्होंने तुरंत अपनी प्रतिबद्धता दिखाते हुए कहा कि वे इसके लिए मुख्यमंत्री को मना लेंगे। मुख्यमंत्री ने भी कहा-
"सरकार के सहयोग के बिना कोई भी संस्था आगे नहीं बढ़ सकती - संतुलन बनाए रखना संभव नहीं है। जनता का मतलब सरकार है - जब सरकार को जनता की सरकार कहा जाता है, तो सरकार ने हर मामले पर ध्यान दिया है, तो फिर गलती क्या हुई? समाजवाद का और क्या अर्थ है?"
जब उनका लंबा भाषण आधा ही हुआ था, तब तक उनके सामने बैठे लोग, गर्म भोजन से थके हुए, नींद से ऊंघने लगे थे। इसी बीच, नींद से वंचित लोग लेटकर खर्राटे लेने लगे।

■

गर्मी की छुट्टियां खत्म होते ही सभी छात्र अपने-अपने गृहनगर लौट गए, विश्वविद्यालय के छात्रावास में केवल दस या पंद्रह बच्चे ही रह गए जिनका कोई करीबी नहीं था।
हलुकेरे क्षेत्र के राजनेता घर-घर जाकर अभिभावकों को यह बात बताने लगे,
उस घटिया स्कूल में पढ़कर तुम्हारे बच्चे भी तुम्हारी तरह ही गांववाले बनकर कीचड़ में लोटते रहेंगे! अगर तुम अपने बच्चों को इस नए स्कूल में भेजोगे तो तुम्हारा बेटा भी तहसीलदार बनकर गलियों में आवारागर्दी करेगा! वो इंजीनियर बनेगा!
वही लोग छात्रों से मिलने लगे और उन्हें बताने लगे,
"अरे, तुम लड़के! क्या तुम कुली बनने जा रहे हो या कुछ और? तुम्हें फुटबॉल और टेनिस सीखना चाहिए और ओलंपिक में जाना चाहिए!"

परिणामस्वरूप, कुछ बच्चों को अचानक महसूस हुआ कि उनके साथ घोर अन्याय हो रहा है और उन्हें कुचला जा रहा है! अत्यधिक दबाव में आकर उन्होंने इस बारे में अपने अन्य दोस्तों से बात की और पाया कि उन्हें भी ऐसा ही महसूस हो रहा था। हालांकि, इन बच्चों ने अपने माता-पिता से आग्रह किया,
मैं चाहूं तो मर सकता हूं - लेकिन मैं उस स्कूल में नहीं जाऊंगा!
फिर, राजनेताओं के शब्दों से पहले से ही परेशान दाइयों ने बच्चों को बताना शुरू किया,
"मेरे बच्चे! अगर तुम पढ़ाई नहीं भी करोगे तो कोई बात नहीं! मैं तुम्हें उस स्कूल में नहीं भेजूंगी—मैं तुम्हारे पिता को बता दूंगी—"
बच्चों के बजाय, प्रत्येक बच्चे के माता-पिता संकाय में आने लगे और शिक्षकों को बताने लगे,
हमारा बच्चा दूसरे स्कूल में जाना चाहता है - हमें उसका प्रमाण पत्र दे दीजिए।
अंततः, एक दिन सभी शिक्षक अन्नय्या के कमरे में एकत्रित हुए। शरभन्ना ने तिरस्कारपूर्वक कहा,
"बेचारे बच्चे! हमने उनके लिए कितना कुछ कुर्बान किया है—"
यह बात सभी शिक्षकों के मन में आई थी। लेकिन किसी ने भी इसे ज़ाहिर नहीं किया। सबके चेहरे उदास थे। शंकरमूर्ति बहुत क्रोधित थे।
"लेकिन हलुकेरे के नए स्कूल में इन बच्चों की शिक्षा कैसे बेहतर होगी?"
"अगर माता-पिता को यह पता होता, तो वे ऐसा व्यवहार क्यों करते? वे परशुराम गौड़ा की चालों में क्यों फंस जाते?" सोमशेखरचार्य ने कहा।
कुछ समय तक इस अनिश्चितता में रहने के बाद, नारायणय्या ने अंततः कहा,
"क्यों न हम घर-घर जाकर बच्चों और उनके माता-पिता की रुचियों के बारे में समझाएं?"
यह सुझाव सबको अच्छा लगा। लेकिन इतने लंबे समय तक पूरी निष्ठा से काम करने के बावजूद, यह मोड़ आ गया, जिससे वे असंतुष्ट हो गए।
शंकरमूर्ति ने कहा,
हमें इससे कुछ भी उम्मीद नहीं है। तो फिर हमें घर-घर जाकर भीख क्यों मांगनी चाहिए?
अन्नाय्या, जो इतनी देर तक चुपचाप यह सब सुन रही थी, बोली,
"रामचंद्रैया ने कुछ क्यों नहीं कहा?"
रामचंद्रैया, जो अपने लिए बने घर में रहते थे और अपना अधिकांश समय ध्यान में व्यतीत करते थे, ज्यादा बोलने की आदत नहीं रखते थे। वे तभी अपनी राय देते थे जब कोई उनसे विशेष रूप से कुछ पूछता था। अब भी, जब अन्नाया ने उनसे पूछा, तो उन्होंने कहा,
"छात्रों या उनके अभिभावकों से कृतज्ञता की अपेक्षा करना उचित नहीं है। हमें त्याग की भावना भी मन में नहीं रखनी चाहिए। साथ ही, यह सोचना भी उचित नहीं है कि हमें ऐसा क्यों होना चाहिए। हम आत्म-शुद्धि के लिए वही करते हैं जो हमें करना पड़ता है!"
सभी का मानना था कि रामचंद्र का वेदांत थोड़ा अतिवादी था। लेकिन सभी यह भी समझते थे कि वर्तमान स्थिति में कोई दूसरा विकल्प नहीं था। अब अन्नाया ने कहा,
मैं भी रामचंद्र मास्टर द्वारा दिखाए गए मार्ग को सही मानता हूं। बच्चे अपने नजरिए से अच्छे और बुरे को नहीं समझते। अगर माता-पिता को यह ज्ञान होता, तो हमारा देश इस हालत में क्यों होता? मुझे लगता है, जैसा कि नारायणय्या ने कहा, हमारे लिए घर-घर जाकर जांच करना बेहतर होगा! क्या यह संभव है कि हम अपने बच्चों को अपनी आँखों के सामने गलत रास्ते पर जाते हुए चुपचाप देखते रहें?
अंततः, उसी मार्ग का अनुसरण करने का निर्णय लिया गया। छात्रों की एक सूची ली गई और उन्हें गांवों के अनुसार विभाजित किया गया। प्रत्येक शिक्षक को एक

अनुभाग सौंपा गया। तदनुसार, प्रत्येक शिक्षक अलग-अलग दिशाओं में गया।
जब शिक्षकों ने छात्रों और अभिभावकों से मुलाकात की और उनसे सवाल पूछना शुरू किया, तो अभिभावकों ने कहा,
"क्या यह सरकारी स्कूल नहीं है? अगर आप वहां पढ़ाई करेंगे, तो मुझे लगता है कि वे आपको सरकार में नौकरी दिला देंगे!"
"यह किसने कहा?"
क्या मंत्री झूठ बोलते हैं? क्या विधायक झूठ बोलते हैं?
क्या सरकार के पास सभी को देने के लिए कोई नौकरी है? इसके बजाय, हमें अपना खुद का व्यवसाय शुरू करना चाहिए और जीविका कमानी चाहिए, ताकि हम उन्हें अपने कॉलेज में सब कुछ सिखा सकें!
लेकिन माता-पिता आत्मनिर्भरता के इस सिद्धांत को अच्छी तरह से नहीं समझ पाए। शिक्षक, जो इतने लंबे समय से एक ही लक्ष्य के साथ आगे बढ़ रहे थे, इस झटके से निराश हो गए। जब उन्होंने बच्चों को यह बात समझाई, तो बच्चे उन्हें लंबे समय तक स्नेह से देखते रहे और कोई जवाब नहीं देते थे - अगर वे ज्यादा जोर देते, तो वे कहते,
"विद्यालय में क्रिकेट कहाँ है, महोदय?"
"लेकिन क्या हमारे पास अन्य स्वदेशी खेल नहीं हैं? एक ऐसा खेल जिसे ग्यारह लोग खेलते हैं और पूरे देश को उसमें हाथ बटाना पड़ता है, हमारे जैसे देश के लिए बेकार है!"
बच्चे कहते हैं,
लेकिन इंग्लैंड जैसा गरीब देश कौन सा है?
कुछ बच्चे कहते हैं,
"यहाँ न बसें हैं, न सिनेमाघर, न होटल – कुछ भी नहीं! बिगड़े हुए बच्चों के लिए स्कूल ठीक है – लेकिन क्या हम बिगड़े हुए बच्चे हैं?"
हालांकि कुछ बच्चों को उनके माता-पिता द्वारा भेजा गया था, फिर भी बच्चे आने के लिए अनिच्छुक थे।
लगभग दो सप्ताह बाद जब शिक्षक विद्यालय लौटे तो उन्हें जिला अधिकारियों की ओर से एक नोटिस मिला।
हमें शिकायत मिली है कि आप अपने विद्यालय में उन छात्रों को विद्यालय छोड़ने का प्रमाण पत्र जारी कर रहे हैं जो विद्यालय छोड़ना चाहते हैं। यह बुनियादी मानवाधिकारों के खिलाफ है।
नीचे दिए गए हस्ताक्षर पुत्तरंगप्पा के बजाय किसी अन्य मुनिस्वामी के थे। यानी, पुत्तरंगप्पा का तबादला हो गया था। सभी शिक्षक आपस में मिले और अपने अनुभव साझा किए, एक-दूसरे के अनुभव सुने, और चर्चा के लिए अन्नाय्या के कमरे में एक बैठक हुई। अंत में, यह निर्णय लिया गया कि जिन छात्रों ने स्कूल छोड़ने का प्रमाण पत्र मांगा है, उन्हें वह दिया जाएगा।

■

ग्रीष्म ऋतु समाप्त होकर जब नया साल शुरू हुआ, तो कॉलेज की पचास बच्चों वाली कक्षा में पाँच-छह बच्चे ही रह गए। वे बच्चे भी, जिनके पास कोई और विकल्प नहीं था! इस अवसर का लाभ उठाकर, परगाँव से आए बिगड़े हुए बच्चे भी भाग गए थे। छात्रों की अनुपस्थिति के कारण कॉलेज का पूरा परिसर वीरान लगने लगा। यहाँ तक कि शिक्षक भी असमंजस में थे क्योंकि कोई भी उनकी वफादारी और सेवा को स्वीकार नहीं कर रहा था।
अन्य शिक्षकों की तरह, अन्नाइया भी अंदर से बहुत परेशान था। लेकिन वह शांत रहा, क्योंकि वह जानता था कि अगर उसने अपनी भावनाएं दूसरों को दिखाईं, तो वे और भी ज़्यादा नाराज़ हो जाएंगे। वह दूसरों से कहता रहा,

"हमारे स्कूल का रिज़ल्ट 80 प्रतिशत रहता था, है ना? इस साल, आइए 100 प्रतिशत हासिल करने की कोशिश करें। संयोग से, जो बच्चे स्कूल छोड़कर चले गए थे, वे स्वतः ही वापस आ जाएंगे।"
सोमशेखर ने कहा, "जो लोग पहले ही जा चुके हैं, उन्हें वापस क्यों लाया जाए?"
"ऐसा क्यों? हमें खुद को क्रोध के अधीन क्यों करना चाहिए?" उसने सोमशेखर को समझाया।
बच्चों की कम संख्या के कारण शिक्षकों और छात्रावास के रसोइयों का काम कम था, फिर भी इतने कम बच्चों के साथ खेती, पशुपालन और अन्य काम करना मुश्किल था। प्रत्येक छात्र दिन में केवल तीन घंटे ही काम कर सकता था। इससे अधिक काम करवाना उनके व्यक्तित्व विकास के लिए हानिकारक था। इसके अलावा, अन्नाया को यह भी चिंता होने लगी कि अनाथ बच्चों से, जिनका कोई अन्य पृष्ठभूमि नहीं थी, काम करवाना कितना उचित था।
स्कूल शुरू हुए एक महीना हो चुका था। प्रत्येक कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या के बारे में जिला कलेक्टर को सूचित करना आवश्यक था। सूचना भेजने के आठ दिनों के भीतर ही उन्हें एक पत्र प्राप्त हुआ, जिसमें लिखा था, "यद्यपि यह सत्य है कि आपके संस्थान को सरकार से कोई सहायता नहीं मिलती, फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक कक्षा में कम से कम चालीस बच्चे होने का नियम आपके स्कूल पर लागू नहीं होता। आपके स्कूल को दी गई सरकारी मान्यता रद्द क्यों नहीं कर दी जाती?"
अन्नाय्या पहले सरकारी नौकरी कर चुके थे, इसलिए उन्हें सरकारी कानूनों की भी जानकारी थी। वे यह भी जानते थे कि अगर छात्रों की संख्या की समस्या तीन साल तक जारी रही, तो स्कूल बंद करना पड़ेगा। इसके अलावा, यह भी कहा जा सकता है कि हमारे स्कूल की यह स्थिति इसलिए पैदा हुई है क्योंकि सरकार ने जानबूझकर सरकारी नियम का उल्लंघन करते हुए एक घटिया स्कूल शुरू किया है, जबकि नियम यह है कि स्कूल एक निश्चित जनसंख्या वाले क्षेत्रों में ही होने चाहिए। कोई भी इस तरह का जवाब नहीं दे पाएगा क्योंकि उन्होंने सरकारी मदद नहीं ली है, और अगर कोई पूछे भी तो वे कह सकते हैं, 'इसीलिए वे छात्रों पर ठीक से ध्यान दे पाते हैं।' पाटिल वकीलों की मदद से अदालत भी जा सकते हैं।
लेकिन अन्नाय्या इन सब बातों से प्रेरित हुए थे। शिक्षा के क्षेत्र में राजनीति का कोई स्थान नहीं होना चाहिए, यह सोचकर उन्होंने सरकारी नौकरी छोड़ दी और एक विश्वविद्यालय की स्थापना की। वे भली-भांति समझते थे कि राजनीति की छाया में रहकर किसी लक्ष्य के साथ काम करना संभव नहीं है। उन्हें इस बात का दुख था कि एक बार फिर उन्हें उसी राजनीतिक दलदल में फंसना पड़ेगा।
लेकिन अन्य शिक्षक अंत तक लड़ने के लिए दृढ़ थे। पाटिल ने अपने वकील की सलाह पर बैंगलोर जाकर जिला कलेक्टर को अपना जवाब देने का निर्णय लिया। तदनुसार, अन्नाइया अगले ही दिन बैंगलोर के लिए रवाना हो गए।
वकील ने कहा,
उनकी यह सूचना तो हमारे मुकदमे को ही लाभ पहुँचाएगी! इसलिए मामले को लेकर चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं है। फिर भी, उनका स्कूल बंद करना मुश्किल है! छात्रों की कमी तो आपको ज़रूर खलेगी। क्या आपने सोचा है कि अगर यह स्थिति बनी रही तो आप क्या करेंगे? आपके खेतों में काम करने के लिए पर्याप्त बच्चे नहीं हैं। तो शिक्षकों का वेतन देने के लिए आपको पर्याप्त आय कहाँ से मिलेगी?
कॉलेज लौटते ही अन्नाइया का मन विचारों में खो गया। इसके बाद परशुराम गौड़ा क्या करेंगे? उनका पहला काम होगा किसी तरह स्कूल बंद करवाना। इसमें सफल होते ही वे अपने दादा द्वारा दी गई ज़मीन हथियाने की कोशिश करेंगे। कॉलेज को मना करते ही उनका काम शायद और भी आसान हो जाएगा!

क्या इस देश में सब कुछ राजनीति से तय होगा? कल बातचीत के दौरान वकील पाटिल भी व्यंग्यात्मक लहजे में बोल रहे थे।
भ्रष्टाचार का दोषी है या नहीं, यह भी चुनाव में तय होता है, अदालत में नहीं! चुनाव जीतने के बाद यही लोग बेशर्मी से यह कहते फिरते हैं कि जनता ने मुझे निर्दोष घोषित कर दिया है! अगर आप भी राजनीति का सहारा नहीं लेंगे, तो आपके संगठन का टिकना मुश्किल हो जाएगा!
गलियों से दिल्ली तक कैंसर की तरह फैल चुकी राजनीति की याद भी अन्ना को अंदर से झकझोर देने वाली थी। क्या अपने संस्थान को राजनीति से बचाने और कम से कम कुछ छात्रों को बाहर की गंदी राजनीति से दूर रखने का सपना देखना एक गलती थी?
अन्नाय्या के जवाब के बाद, जिला कलेक्टर की ओर से कोई सूचना या पत्र नहीं आया। पाटिल ने कहा था कि अगर कोई सूचना या पत्र आता तो बेहतर अच्छा होता, इसलिए सभी को इस बात का अफसोस थी कि पत्र नहीं आया। लेकिन उस संतोष के पीछे एक खालीपन सा मंडरा रहा था।

■

महाविद्यालय के अविवाहित शिक्षक जीवन का अर्थ समझने के लिए वहाँ आए थे। यद्यपि वहां के छह शिक्षकों को सरकारी नियमों के अनुसार वेतन मिलता था, फिर भी वे अपने काम के प्रति समर्पित थे। हालाँकि इन विवाहित शिक्षकों ने हलकेरे और आसपास के गाँवों में अपना घर बना लिया था, फिर भी उनका पूरा दिन प्रतिदिन साइकिल से महाविद्यालय आने-जाने और छात्रों को पढ़ाने के अलावा अन्य काम करने में व्यतीत होता था। वे बच्चों के साथ भोजन भी करते थे। यह महज़ एक सुविधा नहीं थी – बल्कि शिक्षक और बच्चों के बीच संबंध बनाने की एक सोची-समझी व्यवस्था थी।
इन शिक्षकों को इस विद्यालय के बाहर अपना पेट भरने की समस्या का सामना करना पड़ रहा था। शायद यह समस्या हल हो जाए, लेकिन क्या वे वहाँ अपनी इच्छानुसार काम कर पाएंगे? यह सवाल भी उन्हें बहुत परेशान कर रहा था। यहाँ के ब्रह्मचारी शिक्षक यहाँ इसलिए कार्यरत थे क्योंकि भगवा वस्त्र पहनकर हिमालय जाने की बजाय वे समाज के लिए अपना जीवन समर्पित करना चाहते थे। उनका खान-पान भी सात्विक और उचित था। हाल ही में महाविद्यालय में शामिल हुए ब्रह्मचारी रामचंद्र हैं, जो चार साल पहले आए थे।
रामचंद्र ने उन्हें आने-जाने के लिए कहा था।
मैं छात्रों को अवश्य पढ़ाऊंगा! लेकिन इसके अलावा मैं कोई और काम नहीं करूंगा। बाकी का समय मैं ध्यान में व्यतीत करूंगा!
अन्नाया ने भी उन्हें ऐसा करने की अनुमति दे दी थी।
लेकिन वहां मौजूद अन्य लोगों को रामचंद्र की अत्यधिक ध्यान साधना पसंद नहीं आई। उन्होंने तो आपत्ति भी जताई।
"उस ध्यान का क्या लाभ जो समाज के लिए उपयोगी ही न हो?"
अन्नाय्या ने भी उन्हें स्पष्ट रूप से बताया था,
मुझे भी यह समझ नहीं आ रहा। लेकिन गलती से भी यह सवाल मास्टर रामचंद्र से मत पूछिए! उन्हें बुरा लगेगा। उन्हें अपने अनुभव के अनुसार चलने दीजिए। आपके सवाल से उनके मन में अपने मार्ग को लेकर संदेह पैदा हो जाएगा! किसी के भी मार्ग में इस तरह की बाधा डालना ठीक नहीं है। रामचंद्र सचमुच ध्यान में लीन हैं। वे बीच में झपकी तो बिलकुल नहीं लेते!
यहां तक कि वेतन पर बच्चों को पढ़ाने वाले शिक्षक भी निराश थे। उनके लिए कोई दूसरी नौकरी पाना और अपने परिवार का भरण-पोषण करने लायक वेतन पाना मुश्किल नहीं था। लेकिन वर्षों से स्कूल के साथ उनका एक अटूट रिश्ता बन चुका था, इसलिए उनके लिए यह नौकरी छोड़कर कहीं और जाना आसान नहीं था।

हालांकि अन्नाइया दूसरों को प्रोत्साहन दे रहा था, फिर भी वह स्वयं निराश होता जा रहा था। समाज के सभ्य होने तक ऐसे विद्यालय चलाना संभव नहीं है; लेकिन क्या समाज को सभ्य बनाने के लिए ऐसे विद्यालय आवश्यक नहीं हैं?

■

रविंद्र ने विद्याशाला, ग्रेनाइट के अवैध निर्यात और सरकार द्वारा एक आदर्शवादी शैक्षणिक संस्थान के उत्पीड़न पर लंबे लेखों की एक श्रृंखला लिखी और उन्हें अपने अखबार के सभी संस्करणों में प्रकाशित किया।
हर जगह तीखी प्रतिक्रिया हुई। अखबारों के दफ्तरों में पाठकों के सैकड़ों पत्र पहुंचे। विपक्षी दल ने इस मामले को लेकर खूब हंगामा मचाया। हालांकि कुछ पत्र लेख के खिलाफ थे, लेकिन अधिकांश पत्र सरकार-विरोधी थे। लेकिन जल्द ही अखबारों को कोई और विषय मिल गया और यह मुद्दा फिर से पीछे छूट गया।
लेख प्रकाशित होने के बाद, रविंद्र को पूरे देश से पचास से साठ पत्र मिले जिनमें कॉलेज के बारे में विशिष्ट जानकारी मांगी गई थी। उन सभी पत्रों में यह लिखा था, "हमें पता ही नहीं था कि भारत में ऐसा कोई स्कूल है! हमें उस स्कूल के बारे में बताइए, हम अपने बच्चे को उस स्कूल में भेजना चाहते हैं।"
रविंद्र ने वे सभी पत्र अन्नय्या को दे दिए। उन्हें देखकर अन्नय्या और शिक्षकों का उत्साह फिर से बढ़ने लगा। अदालती काम से बैंगलोर गए अन्नय्या ने वह पत्र वकील पाटिल को भी दिखाया।
पाटिल ने जैसे ही वे पत्र पढ़े, उनके मन में एक नया विचार आया। उन्होंने कहा, आपको ऐसी नीति बनानी चाहिए कि हम पूरे देश से विद्यार्थियों को लें। हमें जितने बच्चों की आवश्यकता होगी, उतने बच्चे आएंगे! बच्चों की कोई कमी नहीं होगी! लेकिन अगर हम दूसरे राज्यों से बच्चों को लाते हैं, तो हमें उन्हें अंग्रेजी में पढ़ाना होगा!
"तो फिर दे दो! इससे तुम्हारी प्रतिज्ञा पर क्या फ़र्क पड़ेगा?"
"छात्र की प्राथमिक शिक्षा उसकी मातृभाषा में ही दी जानी चाहिए – तभी उसकी रचनात्मक क्षमता का विकास होगा – यही शिक्षा का मूल सिद्धांत है!"
"आप यह कैसे भूल सकते हैं कि आपके स्कूल को बंद करने का समय आ गया है?"
अन्नाय्या चुप रहे।
अधिवक्ता पाटिल ने आगे कहा,
उदाहरण के तौर पर, अपने देश के विभिन्न क्षेत्रों से सौ लोगों को लीजिए। वकील, न्यायाधीश, वैज्ञानिक, इंजीनियर, अधिकारी, डॉक्टर – आप जिस भी क्षेत्र से चाहें, लोगों को ले लीजिए। पता लगाइए कि उनमें से कितने लोग अपनी मातृभाषा में शिक्षित हैं और कितने लोग अंग्रेजी में शिक्षित हैं! उनमें से अधिकांश लोग अंग्रेजी में ही शिक्षित होंगे!
अन्नय्या एक पल के लिए चुप हो गई।
पाटिल ने आगे कहा,
आप और आपके शिक्षकों का लक्ष्य स्वतंत्र भारत को उज्ज्वल नागरिक देना है। क्या विवेकानंद भी यही नहीं कहते? तो फिर हमें उन विद्यार्थियों को क्यों नहीं पढ़ाना चाहिए जिन्हें पर्याप्त भोजन मिल रहा है? क्या नेहरू गरीब थे? क्या सुभाष बोस गरीब परिवार से थे? क्या गांधीजी का जन्म भोजन की कमी वाले परिवार में हुआ था? वे बच्चे भी होंगे - ये बच्चे भी। आपको उन दोनों में समान मूल्यों का संचार करना चाहिए! आप एक और काम कर सकते हैं। अमीर बच्चों के माता-पिता से धन लेकर गरीब विद्यार्थियों पर खर्च करें! अन्यथा, समाजवाद और क्या कहता है? क्या आध्यात्मिकता प्राप्त संन्यासी यह भेद करता है कि वह केवल गरीबों को ही आशीर्वाद देगा - अमीरों को नहीं? आज हमारे राजनेता इस धारणा पर काम कर रहे हैं कि जो भी पैसा कमाता है वह पाप के मार्ग पर चल रहा है!

इसलिए, मैं कहता हूं - आज गांधीजी को एक नए दृष्टिकोण से जानना आवश्यक है! विवेकानंद का विचार गांधी के विचार से कहीं अधिक व्यापक है... यह अधिक विस्तृत है।

■

एक सुबह, वकील पाटिल अपनी मर्सिडीज में रविंद्र को साथ लेकर हलुक्केरे पहुंचे। विश्वविद्यालय के प्रति उनका लालच भी बढ़ गया था। वे न केवल राजनेताओं को अदालत में घसीटना चाहते थे, बल्कि हर संभव क्षेत्र में उन्हें बदनाम भी करना चाहते थे। लेकिन इसके लिए सीधे राजनीति में उतरना उनके स्वभाव में नहीं था।
वह इस विचार से ग्रस्त था कि यह विद्यालय राज्य के किसी विशेष क्षेत्र के गरीबों का विद्यालय न होकर पूरे देश का प्रसिद्ध विद्यालय क्यों होना चाहिए। अपनी सभी पेशेवर तर्कशक्ति का उपयोग करते हुए, उसने साहसपूर्वक इस मुद्दे को अन्नाया और अन्य शिक्षकों के सामने प्रस्तुत किया। अंत में, उसने कहा,
आप मेरी बातों पर थोड़ा और शांति से विचार करें। फिर मुझे बताएं। संस्था की चिंता न करें। सब कुछ मुझ पर छोड़ दें! स्कूल का नाम मिजोरम से खंडला और लद्दाख से विवेकानंद स्मारक तक ले जाने की जिम्मेदारी मेरी है! मेरा मतलब है, मैं आपको बताऊंगा कि क्या करना है - आपको उसे अमल में लाना होगा।
यह सुनकर शिक्षक उत्साहित हो गए। यह दृश्य निश्चित रूप से एक छोटे से स्कूल में शिक्षक होने से कहीं अधिक उत्साहवर्धक था। कुछ लोगों को लगा कि शिक्षा का माध्यम बदलना उनके लिए एक चुनौती होगी, लेकिन अगर वे थोड़े से प्रयास से इसे हासिल कर लेते, तो उन्हें इस पर गर्व भी महसूस हुआ। इतना ही नहीं, कुछ लोगों ने तो कल्पना में भी अपने उन शिष्यों को देखा जो पाटिल की तरह महान डॉक्टर, इंजीनियर और वकील बन चुके थे, यहां आकर अपना आभार व्यक्त करते हुए। संन्यासियों को भी अच्छा लगा क्योंकि उन्हें अपने जीवन में कुछ करने का अवसर मिला था। सभी समझ गए थे कि वे अमीर बच्चों से लिया गया पैसा गरीब बच्चों पर खर्च करने जा रहे हैं। अंत में, सर्वसम्मति से वकील पाटिल को उनके आने-जाने के बारे में एक पत्र लिखा गया।
पाटिल ने संस्थान के लक्ष्यों और नीतियों में संशोधन किया। पाटिल को संस्थान का अध्यक्ष बनाया गया। अन्नाइया कार्यकारी अध्यक्ष बने। शंकरमूर्ति और अन्य तपस्वी सदस्य थे। रविंद्र भी पहले की तरह सदस्य बने रहे। परशुराम गौड़ा का नाम पदाधिकारियों की सूची से पूरी तरह हटा दिया गया।
देश के सभी प्रमुख समाचार पत्रों में विज्ञापन प्रकाशित हुए, जिनमें कहा गया था कि किसी भी भारतीय छात्र को ऐसे स्कूल में प्रवेश दिया जाएगा, जो अंग्रेजी में शिक्षा प्रदान करता है, जहां शिक्षक समर्पण के साथ पढ़ाते हैं, आधुनिक प्रयोगशालाएं हैं, एक सुसज्जित पुस्तकालय है, शहर से दूर एक स्थान पर स्थित है, आश्रम जैसी आवास व्यवस्था है, और नैतिक और आध्यात्मिक विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
गर्मी की छुट्टियां खत्म होते ही स्कूल शुरू हो गया, मैसूर-बैंगलोर-बीजापुर ही नहीं, बल्कि मुंबई-कानपुर-अहमदाबाद और अन्य क्षेत्रों से भी बच्चे स्कूल में दाखिला लेने आ गए। इन एक सौ बीस नए बच्चों के लिए हर कक्षा में उनकी मातृभाषा के साथ-साथ अंग्रेजी में भी शिक्षा देने की व्यवस्था की गई थी। दूर-दूर से कई लोग स्कूल देखने आए। वे अन्नय्या और अन्य तपस्वियों के तपस्वी स्वभाव से प्रभावित हुए। लेकिन स्कूल की इमारतें बहुत जर्जर थीं, इसलिए उन्होंने आपत्ति जताई। अन्नय्या का जवाब, "यदि संभव हो तो हम नई इमारतें बनवाएंगे," उन्हें रास नहीं आया। उन्होंने पूछा, "हमारे बच्चों के लिए इसका क्या फायदा?"
अन्नाय्या और अन्य शिक्षकों को यह सुनकर बहुत दुख हुआ कि उन्होंने, उनके अन्य शिक्षकों और उनके छात्रों ने मिलकर मिट्टी के प्लास्टर से पूरी तरह से इमारतें बनाई थीं। उनका दिल बैठ गया।

■

१४

सवारी के साथ ट्रेन से यात्रा करते समय, हेमंत का मन पच्चीस साल पहले देखी गई काशी की छवि से भर गया था।

भारत के अन्य प्राचीन गांवों की तरह, बनारस भी छोटी-छोटी गलियों और सड़कों से बसा हुआ गांव था। अगर कोई रास्ता भटक जाता, तो इस भूलभुलैयां से निकलने का रास्ता सिर्फ स्थानीय लोग ही बता सकते थे! आप जिस भी गली या सड़क पर जाते, आपको कम से कम चार या पांच मंदिर जरूर मिल जाते! कई घरों में मंदिर थे और उनमें भजन, कीर्तन और पुराण लगातार बजते रहते थे। काशी, जो आज भी जीवंत है, अतीत को संजोए हुए है! हेमंत के मन में जोगीगुड्डा की याद भी ताजा हो गई।

जोगीगुड्डा से बैंगलोर आने के बाद, उन्हें बदलते समय की गति का एहसास होने लगा था। उन्हें लगा कि अब वे समय के दायरे में सिमट गए हैं। इसी के तहत वे अब बनारस जा रहे थे – लेकिन काशी जाने का यह रास्ता नहीं था!

लेकिन कोई दूसरा उपाय नहीं था। विजय मिश्रा अपने पूरे परिवार को छोड़कर दो महीने दिल्ली में रहने को तैयार नहीं थे। हेमंत अच्छी तरह जानते थे कि काशी में रहने वाले लोग अपने गांव को अपनी जान से भी ज्यादा प्यार करते हैं। "बाकी सब लोग काशी आते हैं और मर जाते हैं – कम से कम वे यही उम्मीद तो रखते हैं! अगर मैं काशी छोड़कर दो महीने दिल्ली में रहूं और अचानक वहीं मर जाऊं, तो न सिर्फ काशी में मरने का पुण्य खो दूंगा, बल्कि दिल्ली में जान गंवाने का पाप भी लग जाएगा!" उन्होंने मुस्कुराते हुए यह बात कहकर दिल्ली आने से परहेज किया था। हरिशंकर की सिफारिश के कारण वे कांति की चुनौती को पूरी तरह टाल नहीं सके। हरिशंकर ने होन्नाटी को उन्हें दो महीने के लिए यहां भेजने को कहा था।

पहले पाँच हज़ार रुपये अग्रिम दिए जाएँगे, फिर पाँच हज़ार रुपये नकद, और अगले साल चाहे वह कोई भी कार्यक्रम प्रस्तुत करें, उनके साथ विजय मिश्रा ही संगत करेंगे। कार्यक्रम के दौरान या बाद में मिश्रा कहते – मुझे ऐसे सितार वादक के साथ संगत करने का अवसर मिला, मैं कितना भाग्यशाली हूं! इत्यादि –! इसके बदले में होन्नाटी पूरा कार्यक्रम विजय मिश्रा को दे देते। उन्होंने बिना किसी आपत्ति के सभी बिंदुओं पर सहमति जताई। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि यह सुनिश्चित करना दोनों की ज़िम्मेदारी है कि ये सभी बातें हरिशंकर तक न पहुँचें। कांति ने स्वयं इस पूरे समझौते को अंतिम रूप दिया था।

शुरू में हेमंत को यह सब अजीब लगा। लेकिन कांति ने उसे मना लिया।

"एक बार जब आप पैसे लेना शुरू कर देते हैं और हर गांव में कार्यक्रम आयोजित करते हैं, तो यह एक व्यवसाय बन जाता है। तो क्यों न इसे और अधिक व्यवस्थित और लाभदायक बनाया जाए? इसमें निवेश के तौर पर थोड़ा पैसा खर्च करने में क्या हर्ज है?"

हेमंत भी अवाक रह गया।

वह काशी स्टेशन पर उतरा और बाहर आया। बाहर भारी भीड़ थी। खड़े होने की भी जगह नहीं थी, रिक्शा लोगों से भरे हुए थे। जिस शांति की उसने कल्पना की थी, वह वहां दूर-दूर तक नहीं थी!

विजय मिश्रा के सुझाव पर, उन्होंने एक रिक्शा लिया और कबीर चौराहे तक गईं। मिश्रा ने कहा था,

"हमारा घर कबीर चौराहा के पास है। हम आपके लिए वहाँ एक कमरा आरक्षित कर देंगे। उसी इमारत में एक विधवा परगांव से आने वाले यात्रियों को भोजन

परोसती है। वह आपके खाने-पीने का भी इंतजाम कर देगी।"
सूर्योदय होते ही मुंह में पत्ता लिए विजय मिश्रा ने हेमंत का उत्साहपूर्वक स्वागत किया।
"आपको काशी शहर कैसा लगा? क्या आप पहले भी यहाँ आ चुके हैं?"
"यह गांव पहले कितना शांत हुआ करता था! अब तो यह दिल्ली से भी ज्यादा व्यस्त हो गया है!"
समय बदल गया है, है ना! यह हमारे कमलापति त्रिपाठी की कृपा है!
आपका क्या मतलब है?
"ये लोग भी हमारे काशी से हैं। हमारा गाँव पिछड़ा हुआ है - ये लोग तो ज़िद करके यहाँ डीज़ल रेलवे फ़ैक्टरी शुरू कर देंगे, ये तो सुधरेंगे। यहाँ की आबादी अचानक बढ़ गई। अगर इतनी छोटी-छोटी गलियों से इतने सारे लोग निकल आएं तो क्या होगा? काशी जैसे गांव में इस तरह का उद्योग और व्यापार शुरू करना बिलकुल गलत है। ऐसे गाँव में तो विश्वविद्यालय या कॉलेज स्थापित होना चाहिए! मदनमोहन मालवीय-संपर्णंद जी ये बात समझते थे। त्रिपाठी जी में इतनी समझदारी नहीं थी।"
हेमंत को भी यह बात समझ आ गई थी।
उनका कमरा ठीक सामने था। अपना सामान वहाँ छोड़ने, ठंडे पानी से नहाने और कपड़े बदलने के बाद, विजय मिश्रा ने कहा,
``हमारे पास साठ दिन हैं। उसके बाद, चाहे तबलाजी साथी कितना भी जटिल क्यों न हो, आपको भ्रमित नहीं होना चाहिए – यह हरिशंकर की चेतावनी है। मैंने भी इसे स्वीकार कर लिया है। क्या हमें आज से शुरू करना चाहिए, या आज आराम करना चाहिए?"
``आराम की कोई जरूरत नहीं है। वैसे भी, मुझे समय बर्बाद करना पसंद नहीं है–"
सितार और तबला वादक मंच पर आए। दोनों को सुर में मिलाने के बाद उन्होंने शुरुआत से बजाना शुरू किया। दस मिनट के भीतर ही हेमंत को एहसास हो गया कि विजय मिश्रा को कितनी गहरी जानकारी है। जब उन्हें उलझन होने लगी, तो उन्होंने विजय से पहले गाने और फिर संगत करने को कहा। हेमंत को एक-दो घंटे में ही समझ आ गया कि नियाज़, जो इतने लंबे समय से उनके साथ संगत कर रहे थे, मिश्रा के ज्ञान का सौवां हिस्सा भी नहीं जानते थे!
तीन घंटे खेलने के बाद मिश्रा ने कहा,
"आज हमारे घर पर खाना खा लो। दोपहर में थोड़ी देर आराम कर लेना। शाम को फिर से साथ बैठेंगे।"
विजय मिश्रा की उम्र चालीस के आसपास थी। उनका चेहरा मंदिर की मूर्तियों के चेहरों की तरह तराशा हुआ था। लगातार पत्ते खाने की आदत के कारण उनके होंठ लाल थे। उनकी साधना के बारे में सुनकर होन्नाटी भावुक हो उठी!
विजय, पिछली पीढ़ी के प्रसिद्ध तबला वादक विश्वेश्वर मिश्रा के दत्तक पुत्र थे। वे उनकी पुत्री के पुत्र भी थे। हेमंत यह भी जानते थे कि संगीत जगत के दिग्गज आज भी विश्वेश्वर मिश्रा के नाम का आदर करते हैं, जो अपने जीवनकाल में कई किंवदंतियों के नायक बन गए थे। उन्होंने विजय को इस भावना से गोद लिया था कि उनकी वंश परंपरा आगे बढ़े - कोई तो हो जो उनकी कला को आगे बढ़ाए - और इन कारणों से भी बढ़कर, उनके तबला वादन का कोई उत्तराधिकारी हो। विजय ने होन्नाटी को एक बड़ा लकड़ी का तख्ता दिखाया जिसे उन्होंने बड़े आदर से संभाल कर रखा था। यह सागौन की लकड़ी का मोटा तख्ता था, इतना मोटा कि इस पर गोद रखकर बैठा जा सकता था। बैठने के लिए इस्तेमाल होने वाला मध्य भाग पापड़ जितना मोटा था, और उस जगह पर एक छेद बन गया था!
विजय कह रहा था,

मेरे दादाजी जानते थे कि मुझे तबला बजाने में रुचि है। मैं अपनी माँ के छह बच्चों में से तीसरा था। जब मैं नौ साल का था तब उन्होंने मुझे गोद लिया था। उन्होंने मुझे इस चटाई पर बिठाया और मुझे ना धी धी ना- ना तिन तिन ना के बोल सिखाए। उसके बाद, मैं पच्चीस साल की उम्र तक हर दिन दस से बारह घंटे तबला बजाता रहा! हिसाब लगाइए - सोलह साल! हर दिन दस से बारह घंटे! देखिए, लगातार बजाने से चटाई कितनी घिस गई है!

होन्नाटी ने भय और श्रद्धा से सिर झुकाया। महान विद्वान गुरु, जो मन को आकार देते हैं, जो तबले की ध्वनि को इच्छित ढंग से, इच्छित लय में, इच्छित प्रभाव के साथ संचालित करते हैं, और जो अपने युग को खुलकर व्यक्त करके शिष्य को तैयार करते हैं!

``दादाजी अक्सर कार्यक्रमों के लिए दूर-दराज के गांवों में जाते थे। तब भी मेरी रियाज़ जारी रहती थी। ऐसे समय में मैं दादी की देखरेख में रहती थी। दादी तो दादाजी से भी ज्यादा सख़्त थीं! वह तबले के सारे सुर सुनती और याद कर लेती थीं। वह मुझे इसी कमरे में बंद कर देतीं, दरवाज़ा बंद कर देतीं और अंदर ही घर के काम करतीं। अगर मैं तबले बजाने में कोई गलती कर देती, तो वह दौड़कर आतीं और इतना गुस्सा करतीं कि मैं डर के मारे भाग जाती! चाहे मैं कितनी भी कोशिश करूँ कि दादाजी को न बताऊँ, वह उन्हें मेरी हर गलती के बारे में विस्तार से बता देतीं, बिना उनकी तारीफ़ किए! फिर मुझे दादाजी के सामने अपनी गलती सुधारनी पड़ती और सौ बार दोहराना पड़ता! वह खुद मेरे सामने डग्गा लेकर बैठ जाते। वह डग्गा और तबला बजाकर मेरी गलती सुधारते..."

हेमंत उसकी बातें ध्यान से सुन रहा था।

होन्नाटी जी, जब मैं पच्चीस साल का था, तब उन्हें पूरा यकीन हो गया कि मेरी शिक्षा पूरी हो चुकी है। जब तक उन्हें पूरी तरह से यकीन नहीं हो गया, उन्होंने मुझे घर से बाहर खेलने नहीं दिया। उन्होंने किसी को भी यह नहीं बताया कि उनका गोद लिया हुआ बेटा घर पर सीख रहा है और तैयारी कर रहा है। हालांकि, आखिरी दो सालों में, बनारस आने वाले हर बड़े सितार-सरोद-सुरबहार वादक को वे अपने घर बुलाते और उनसे बहुत जटिल धुनें बजाने को कहकर मुझे प्रशिक्षण देते। इस तरह, पहली ही मुलाकात में उन्होंने विजय मिश्रा को अखिल भारतीय स्तर का तबला वादक बताकर मेरा परिचय कराया! और छह महीने के भीतर ही उन्होंने विश्वनाथ के चरणों में देह त्याग दिया – उन्हें लगा कि उनका जीवन-कर्तव्य पूरा हो गया है, या पता नहीं क्या!

अंतिम वाक्य बोलते समय उनकी आवाज़ भावनाओं से भर गई थी।

विजय मिश्रा के कुल पाँच बच्चे थे। दो बेटे और तीन बेटियाँ। वह अपने परिवार की कला को अपने दो बच्चों में से कम से कम एक को सिखाने के लिए संघर्ष कर रहे थे। लेकिन बच्चे ध्यान नहीं दे रहे थे। जब वे पूछने लगे, "हम जो चाहें सीखेंगे - आप हम पर अपना ज्ञान क्यों थोप रहे हैं?", तो मिश्रा असहाय हो गए। पहले, दोनों इंजीनियर बनने के लिए नृत्य करते थे - लेकिन उन्हें दाखिला नहीं मिला। फिर उन्होंने व्यापार करने का सोचा - लेकिन उनकी सारी पूंजी बर्बाद हो गई! अब दोनों ट्रैवल एजेंसी शुरू करने के लिए इधर-उधर भाग रहे थे। मिश्रा जानते थे कि इससे भी कुछ खास हासिल नहीं होगा।

उसने कहना शुरू किया,

एक पिता को अपने बाईस से चौबीस साल के बच्चों को दिन में दो बार खाना खिलाना पड़ता है – और उन्हें अतिरिक्त खर्चों के लिए पैसे भी देने पड़ते हैं! उन्हें घर का बना खाना, चाय-पानी पसंद नहीं आता। छोटे होटल उन्हें रास नहीं आते – वे उनमें हीन भावना महसूस करते हैं। वे वातानुकूलित होटलों में जाना चाहते हैं। वहाँ जाकर उन्हें तीस-चालीस रुपये का मामूली भत्ता मिलता है! अगर मैं पैसे देने से मना कर दूं, तो वे अपनी माँ के सामने मुझे पागल और गंदा कहते हैं! वे

असहनीय हो जाते हैं और माँ मुझसे पैसे वसूल करती है। वे अपने रब-रबुन को भी इस तरह फिजूलखर्ची करने के लिए पैसे देते थे!
हेमंत ने यह भी देखा था कि कलाकार भारतीय कला की पारंपरिक कलाओं में अत्यंत कुशल हो जाते हैं। मिश्रा स्वयं इसका एक अच्छा उदाहरण थे। लेकिन आज, उन्होंने उस परंपरा के टूटने के कई उदाहरण भी देखे।
"तो आपकी शादी किस साल हुई थी?"
क्या मैंने आपको नहीं बताया था – मुझे पच्चीस साल की उम्र तक इसी कमरे में बंद रखा गया था। मेरी शादी सोलह साल की उम्र में हुई – मेरी पत्नी अठारह साल की उम्र में घर आई – मैं उन्नीस साल की उम्र में पिता बन गया। फिर भी मैं दिन भर इसी कमरे में बंद रहता था। मेरी पत्नी मेरी नानी के साथ घर के कामों में व्यस्त रहती थी। खाने के समय, मेरी नानी इसी कमरे में बचपन से खाना खाती थीं। मुझे रात में एक घंटे के लिए बाहर जाने की इजाज़त थी। जब मैं घर आता, तो अपने दादाजी के साथ खाना खाता और रात को अपनी पत्नी के साथ सो जाता! मैं दिन भर उससे बात नहीं करता था – बिलकुल नहीं। इसी तरह मेरे तीन बच्चे हुए। जिस दिन मेरी पत्नी ने बच्चे को जन्म दिया, उस दिन भी मुझे पढ़ाई से छुट्टी नहीं मिली! यह अनुशासन पच्चीस साल की उम्र में मेरे पहले कार्यक्रम के बाद खत्म हुआ। तब तक, मेरी पत्नी का सारा ध्यान बच्चों पर ही था!
मिश्रा दिल खोलकर हंसे और बोले, विजय मिश्रा बातूनी थे। हेमंत भी जानते थे कि यह बनारस की एक विशेषता है। दिल्ली में यूरोपीय प्रभाव के कारण, चाहे हम कितनी भी खुलकर बातें करें, हमेशा यह दबाव बना रहता था कि "यह निजी मामला है - हमें इस बारे में बात नहीं करनी चाहिए।" यहाँ भी, शुरुआत में कुछ समय तक थोड़ी पाबंदी तो थी, लेकिन धीरे-धीरे रिश्ते में खुलापन आ गया और ये पाबंदियाँ कम होती गईं। इसके बाद हेमंत को एहसास हुआ कि खुलकर बात करना विजय मिश्रा का स्वभाव था। दादाजी के अनुशासन के कारण, विजय हेमंत को प्रशिक्षण देने में कोई झिझक नहीं दिखाते थे। हेमंत अगर कोई गलती कर देते तो गुस्सा हो जाते - वे गलती सुधारते और बार-बार उनसे सुधारातें। लेकिन, बातचीत के दौरान वे खुलकर बातें भी करते थे।
एक दिन मिश्रा ने कहा,
"तुम यहाँ बीस दिन से हो। क्या तुम अकेले रहते-रहते ऊब नहीं गए हो?"
"अकेला कहाँ है? मैं सुबह से शाम तक तुम्हारे साथ हूँ। रात को सोने से पहले तक, मैं दिन भर में सीखी हुई धुनों और लय का ध्यान करता हूँ।"
"मेरा मतलब वो नहीं था—" उसने जानबूझकर हंसते हुए कहा।
हेमंत समझ गया था कि वह क्या कहना चाह रहा है, लेकिन वह चुप रहा।
मिश्रा ने दोबारा पूछा,
क्या आपको डर है कि कांतिजी को पता चल जाएगा? मैं कसम खाता हूँ – मैं इस बारे में किसी से कुछ नहीं कहूँगा! मैं हरिशंकर को भी कुछ नहीं बताऊँगा। मैं आपको एक अच्छा घर दिखाऊँगा। अगर आप चाहें तो मैं भी आपके साथ आ जाऊँगा। कलाकार ने कहा है कि यह सब ज़रूरी है! वरना प्रेरणा कहाँ से आएगी?
विजय के आखिरी वाक्य से हेमंत को आश्चर्य नहीं हुआ, लेकिन हेमंत को इस बात पर गुस्सा आया कि विजय ने ऐसे बात की जैसे उसे हेमंत और कांति के रिश्ते की पूरी जानकारी हो। कांति ने विजय से लेन-देन के बारे में विस्तार से बात की थी। क्या विजय ने इस बात से यह अंदाजा लगा लिया होगा? अगर उसने रिश्ते को ठीक से नहीं समझाया था, तो ऐसे संदेह पैदा होना स्वाभाविक था। बाद में, उसे एहसास हुआ कि विजय ने शुरू से ही हरिशंकर का जिक्र सिर्फ एक बार किया था।
उसने विजय से पूछा,
आप डॉ. हरिश्नवीर प्रसाद को कितना जानते हैं?

"अरे! तुम्हें पता नहीं?" मिश्रा ने अपनी आवाज़ इतनी धीमी कर ली कि केवल हेमंत ही सुन सके, "मैं पहली बार उस वेश्या के पास गया था, वो उसके साथ था! मैं 15 साल का था और 16 साल का होने वाला था। उसका घर भी यहीं पास में है। मैं रात को टहलने जाया करता था, है ना? उस समय मैं उसके साथ था। उस समय वो इंटरमीडिएट में पढ़ रहा था। वो पढ़ाई में बहुत होशियार था..."
क्या वह मूल रूप से बनारस से है?
आप पूछेंगे, यह क्या है? क्या यह संभव है कि भारतीय संस्कृति की सभी शाखाएँ इतनी गतिशील हों? संस्कृत, वेदांत, संगीत, नृत्य, नाटक, ठुमरी, चैती – बताइए, भारत के किस गाँव में यह सब इतनी जीवंतता से मौजूद है? हरिशंकर सचमुच बहुत बुद्धिमान हैं! उन्होंने किताबें भी लिखी हैं। इसीलिए तो उन्हें इतने महत्वपूर्ण पद पर नियुक्त किया गया है!
होन्नाटी लंबे समय से हरिशंकर के बारे में कुछ जानना चाहता था। अब जब यह विषय समाप्त हो गया था, तो उसने पूछने का अवसर पाकर यह बात समझ ली।
"लोग कहते हैं कि डॉ. हरिशंकर की पहले शादी हो चुकी है। क्या यह सच है?"
सचमुच? वो बनारस में ही है। वो ललितपुर में अपनी मां के घर में रहती है। उसकी एक बेटी है। मेरी शादी सोलह साल की उम्र में हुई थी - उसकी शादी अठारह साल की उम्र में हुई थी। अगर आप चाहें तो चलिए उनके घर चलते हैं, जैसे हम घूमने निकले हों। आप भी उसे देख लेंगे। वो बहुत अच्छी औरत है। देखने में बेहद खूबसूरत है - खूबसूरती का मतलब क्या होता है? खुद अन्नपूर्णेश्वरी मां! मैं आपको बताऊँ, वो क्या खाना बनाती है! और तो और, उसके हाथ बड़े-बड़े हैं! खाना बनाते-बनाते उसका वजन बढ़ने लगा, बर्तन में खाना दुगुना, चौगुना, यहाँ तक कि आठ गुना हो जाता था! ऐसी पत्नी को यहां छोड़कर दिल्ली में होटल तोड़ना उसका दुर्भाग्य है!
लेकिन ऐसा क्यों है?
मैं क्या कहूँ! उसे तो पहले से ही अलग-अलग महिलाओं में दिलचस्पी है। उसमें महिलाओं को आकर्षित करने की शक्ति भी है! मुझे ही देख लीजिए! जब विजय मिश्रा तबला बजाते हैं, तो सामने बैठे दर्शक रोमांचित हो जाते हैं – सीधे बैठ जाते हैं! आप भी यह जानते हैं, है ना? आप भी मानेंगे कि मैं उससे ज़्यादा सुंदर हूँ! फिर भी, मैं आपको बताता हूँ, आज तक कोई महिला मेरे पास नहीं आई – मेरे आकर्षण में नहीं फँसी। वह आपकी तरह कलाकार नहीं है – वह मेरे जितना सुंदर भी नहीं है! फिर भी, एक के बाद एक महिलाएँ उससे प्यार करती रहती हैं! इसे क्या कहते हैं? किस्मत! तबला वादक से प्यार करना मुश्किल है! चाहे कुछ भी हो जाए, हम तो साथी हैं! – मुख्य कलाकार नहीं! जब आप सितार वादक कहेंगे, तो कितनी महिलाएँ आपका अनुसरण करेंगी!" उसने आँख मारते हुए कहा।
"तो क्या पति-पत्नी के बीच कोई रिश्ता नहीं है?" हेमंत ने विषय को वापस प्रासंगिक बनाते हुए कहा।
छी! छी! किसने बताया था ना? वो उसे दिल्ली बुलाता है – दो महीने बाद उसे भेज देता है – खुद छुट्टी लेकर घर आ जाता है। हर महीने बिना चूके उसे पैसे भेजता है। उसे इतने लंबे समय तक यहाँ रखने का उसने एक बहाना भी ढूंढ लिया है! उसके दोनों बच्चे यहीं पढ़ते हैं। उसने अपनी पत्नी को डरा दिया है कि अगर वो उन्हें हॉस्टल में रखेगा तो बच्चे बिगड़ जाएंगे। उसे भी कुछ हद तक समझ आ रहा है कि उसके पति ने उसे यहाँ क्यों रखा है। लेकिन बीच में ही यूनिवर्सिटी बदलना और दिल्ली जाना इतना आसान नहीं है। इसके अलावा, उसने उसे ये भी यकीन दिला दिया है कि बनारस यूनिवर्सिटी का स्तर दिल्ली यूनिवर्सिटी से बेहतर है। उसे अपने बच्चों से बहुत प्यार भी है – इसीलिए तो वो उनके साथ यहाँ रहती है!
होन्नाटी चुप रहे, उन्हें लगा कि इस बारे में और ज़्यादा जिज्ञासा दिखाना उचित नहीं होगा। चूंकि वे बहुत करीबी दोस्त थे, इसलिए मुझे उन्हें बताना ही था कि मैंने

गहराई से छानबीन की है! वैसे भी, मैं इस रहस्यमयी आदमी को मौका क्यों दूं?
"हमारे देश की ज़्यादातर औरतें ऐसी ही होती हैं," उन्होंने अपना सितार उठाते हुए कहा और मज़ाक उड़ाना शुरू कर दिया।
मिश्रा ने तबला अपने सामने पकड़े हुए और उसे थपथपाते हुए कहा,
ऐसा मत कहो। उस औरत को तो खास कहना चाहिए! वरना, हमारी श्रीमती! अगर ऐसा शक भी हो, तो आसमान और पाताल एक ही हैं! कांतिजी के सुझाव पर, मैं आपके लिए तैयारी करने के लिए दो औरतों के साथ दिल्ली आकर रहने के लिए राजी नहीं हुआ, अब मैं आपको वजह बताता हूँ! वहाँ हरिशंकर हैं - मैं वहाँ दो औरतों के साथ रहूँगा, तो वहाँ कोई न कोई सुरक्षा कवच तो होगा ही, वो तो उनका ग्रह है! उनके पति अब उनके लिए सहारा नहीं रहे - वो बिना सोचे समझे चिल्लाती रहती हैं कि वो भी बूढ़ी हो रही हैं! चाहे आपकी उम्र कितनी भी हो, यही उनका मूल सिद्धांत है, इस मामले में कभी किसी पुरुष पर भरोसा मत करो! -" उन्होंने कहा और पीतल के हथौड़े से तबले के डंडों पर धीरे-धीरे प्रहार करने लगे।

■

हेमंत को कांति से विस्तार से लिखे पत्र मिल रहे थे। जैसे-जैसे वह उन्हें पढ़ता, उसका दिल कांति के लिए और भी गहरा होता जाता। प्रेम की जड़ें अक्सर पत्रों में ही गहरी जम जाती हैं, कौन जानता है! ऐसे विचार, विचार आदि जो आमने-सामने बातचीत में व्यक्त नहीं होते, पत्रों में लिखते समय अपने आप आ जाते हैं और उस लगाव का सूत्र बन जाते हैं, कौन जानता है – यही उसका अनुभव था।
तुम चिट्ठियाँ क्यों नहीं लिखते? - यही शिकायत वह हर चिट्ठी में ज़ाहिर करती थी। हमें भी उसे चिट्ठियाँ लिखनी चाहिए। मुझे तुम्हारी बहुत याद आती है - मैं वहाँ जाने के दिन का बेसब्री से इंतज़ार कर रही हूँ - और ऐसी ही बातें। हेमंत भी लिख रहा था। लेकिन ऐसी साधारण चिट्ठी से उसका मन नहीं भरता था। वह दोनों की मुलाकात की कल्पना कर रही थी और पूरी चिट्ठी में उसका वर्णन कर रही थी। हालांकि, हेमंत को इनमें से कुछ भी पसंद नहीं था। वह लगातार अलग-अलग लय और विचारों में डूबा रहता था। रात में भी वह इसी बारे में सोचता रहता था। तो फिर उसे इतना लिखने का समय कैसे मिलता?
फिर भी, वह उसे एक पत्र लिखकर उसकी दूरदर्शिता के लिए आभार और प्रशंसा व्यक्त कर सकता था। लेकिन वह यह भी समझता था कि यदि वह इन भावनाओं को बार-बार व्यक्त करता रहेगा और उन्हें अपने दिल में नहीं रखेगा, तो वे अपना भावनात्मक आकर्षण खो देंगी और नीरस हो जाएंगी।
एक बार कांति का एक पत्र आया,
क्या मैं दो-तीन दिन के लिए वहां आ-जा सकता हूँ?
पत्र पढ़कर वह भी बेचैन हो गया। लेकिन उसे समझ आ गया कि जिस कमरे में वह रह रहा है, वहाँ उसे दिन-रात का एकांत नहीं मिल पाएगा। साथ ही, उसे लगा कि दिल्ली के लोग किसी न किसी तरह उसके-मेरे रिश्ते को समझ ही जाएंगे! अगर हमें यहाँ विजय मिश्रा को ऐसी बातें बता दें, तो खबर पूरे भारत में फैलने में देर नहीं लगेगी! इसके बजाय, क्या हम खुद दो दिन के लिए दिल्ली चले जाएँ? लेकिन वह अपनी पढ़ाई में कोई रुकावट नहीं डालना चाहता था। सब कुछ सोच-विचार करने के बाद उसने उसे बताया कि उसे नहीं आना चाहिए।
एक दिन, दोपहर के नाश्ते के बाद, वह मिश्रा के घर गया। जब वह सितार बजा रहा था, तभी विजय, जिसने अभी-अभी अपना चेहरा धोया था, ने उसका ध्यान एक स्थानीय समाचार पत्र के एक पृष्ठ की ओर दिलाया। उसने कहा,
उस तस्वीर के नीचे की खबर पढ़िए-"
हेमंत ने हिंदी अखबार में छपी खबर से नज़रें हटा लीं। पुष्पलता त्रिपाठी नाम की एक कॉलेज छात्रा ने बाथरूम में अपने ऊपर केरोसिन डालकर आग लगा ली थी। पूरा शरीर जल जाने के बाद दर्द असहनीय हो गया और वह चीखने लगी। दरवाजा

अंदर से बंद था इसलिए उसे तोड़कर अंदर ले जाया गया। पड़ोसियों की मदद से उसे अस्पताल ले जाया गया और मरते समय वह बार-बार कह रही थी, "मैंने यह नहीं किया।" इस बारे में एक विस्तृत समाचार रिपोर्ट छपी थी।
हेमंत खबर पढ़कर दुखी हो गए। मिश्रा ने कहा,
यह कैसी खबर है?
"अपमान का डर! और क्या!"
कुछ तो गड़बड़ हुई होगी! कई दिन बीत चुके होंगे! मैं त्रिपाठी परिवार को जानती हूँ, बहुत मेहनती परिवार है। उन्हें अपनी बेटी को कॉलेज नहीं भेजना चाहिए था। यही उनकी गलती है। इसी वजह से मैंने अपनी बेटियों को कॉलेज का रास्ता भी नहीं दिखाया। मैट्रिक पास करते ही उनकी शादी हो गई और वे आज़ाद हो गईं! आपको क्या लगती है?
मुझे मन कर रहा था कि कहूँ कि तुमने किया है, यह भी सही नहीं है। लेकिन किसी कारणवश, मुझे ऐसा कहने का मन नहीं हुआ।
त्रिपाठी परिवार कितना शानदार है! वैदिक काल से ही एक उज्ज्वल परंपरा वाला परिवार!
हेमंत को महसूस हो रहा था कि उस दिन वह तबला बजाने पर पूरी तरह ध्यान नहीं दे रहा था। होन्नाटी भी बेचैन था। बजाते समय उसका ध्यान कभी-कभी तस्वीर पर चला जाता था।
तस्वीर से साफ था कि लड़की की उम्र पंद्रह या सोलह साल थी। मरते समय वह कह रही थी, "मैंने यह नहीं किया!" इसका क्या मतलब है? क्या पोस्टमार्टम के बाद भी सब कुछ अस्पष्ट ही रहेगा?
अगले दिन, उनका ध्यान स्वतः ही अखबार के उस हिस्से पर गया। वहाँ इसके बारे में कोई खबर नहीं थी।
मिश्रा ने कहा,
"बेचारे माता-पिता क्या करेंगे? उन्होंने अखबार मालिकों से ज़रूर गुहार लगाई होगी कि वे इसके बारे में कुछ भी न छापें।"

■

दो महीने पूरे होने में अब पाँच दिन बचे थे। मिश्रा ने हेमंत को लय पर अपनी महारत के बारे में कई तरह से बताया था और उसके साथ अभ्यास भी किया था। उन्होंने हेमंत को संगीत के विशाल ज्ञान वाले दर्शकों के सामने प्रदर्शन करने के लिए सर्कस में करतब दिखाने का विशेष प्रशिक्षण भी दिया था।
होनंती खुद इस कलाबाजी के तमाशे को कभी समझ नहीं पाया था। इससे उसे गुस्सा आता था – उसने शुरू से ही तय कर लिया था कि वह कभी इस स्तर तक नहीं गिरेगा। लेकिन जब मिश्रा ने उसे पेशेवर तौर पर इसमें प्रशिक्षित करना शुरू किया, तो हेमंत का संकल्प भी टूट गया। इसके अलावा, मिश्रा ने कहा था,
इसके अलावा, वास्तविक बैठक के दौरान, आप दर्शकों को देखकर ही कुछ तरकीबें अपने आप ही सोच लेंगे!
इन दिनों मिश्रा की पत्नी हेमंत से कभी-कभार चार वाक्य बोलने लगी थी। उसने एक बार यह भी कहा था,
"देखो, तुमने मुझे दो महीने से लगातार घर में बंद रखा है!"
हेमंत ने रविवार रात के लिए ट्रेन का रिटर्न टिकट भी बुक कराया था। बुधवार को स्थानीय अखबार में एक पूरे पन्ने की खबर छपी। खबर पढ़ते ही मिश्रा बहुत परेशान हो गए। होन्नाटी ने भी उनसे अखबार लेकर पूरी खबर पढ़ी।
यह खबर पुष्पलता त्रिपाठी की आत्महत्या के बारे में थी, जिन्होंने एक सप्ताह पहले अपने बाथरूम में खुद को आग लगा ली थी।
मरते समय पुष्पा लम्हों के होंठों पर यही शब्द थे, "मैंने ये नहीं किया।" पुलिस ने आगे की जांच की। पोस्टमार्टम रिपोर्ट के अनुसार पुष्पा लम्हे कुंवारी साबित हुईं!

तो फिर उनकी आत्महत्या का कारण क्या था? पुलिस ने गहन जांच की और इंजीनियरिंग कॉलेज के छात्र त्रिलोक प्रसाद और अजंता फोटो स्टूडियो के मालिक विश्वास श्रीवास्तव को गिरफ्तार किया। उनकी तस्वीरें भी अखबार में छपी थीं।
तस्वीरों के नीचे अन्य विवरण दिए गए थे – त्रिलोक प्रसाद, जो कॉलेज में पढ़ाई करने के बजाय अपना अधिकांश समय लड़कियों के कॉलेज में बिताता था, पुष्पलता त्रिपाठी से बात करने की कोशिश कर रहा था। वह तेज रफ्तार से स्कूटर पर आया और उसके बगल में रुका, अचानक ब्रेक लगाया – उसने पुष्पलता के गाल पर हाथ फेरा और फिर तेज रफ्तार से स्कूटर पर भाग गया – वह अभद्र बातें कहकर पुष्पलता को परेशान कर रहा था – वह उसे अपने साथ आने के लिए बुला रहा था – वह सबके सामने उसे धमकी भी दे रहा था, कह रहा था, 'अगर तुम नहीं आओगी तो इसके गंभीर परिणाम होंगे!'
पुष्पलत, जो लंबे समय से इस अत्याचार को सह रही थी, ने एक बार उसे उलटा जवाब दिया था – यहाँ तक कि उसे जूता मारने की धमकी भी दी थी। इससे त्रिलोक प्रसाद क्रोधित हो गया और उसने कुछ अलग ही किया। पिछले साल, पुष्पलत को सर्वश्रेष्ठ छात्रा का पुरस्कार मिला था और उसकी तस्वीर कॉलेज पत्रिका में छपी थी। उस समय की सभी तस्वीरें अजंता स्टूडियो के युवा फोटोग्राफर विश्वास श्रीवास्तव ने ली थीं। श्रीवास्तव और त्रिलोक प्रसीद ने मिलकर एक वेश्या की नग्न तस्वीर खींची और यह दिखावा किया कि उसकी जगह पुष्पलत का चेहरा लगा दिया गया है। इस तस्वीर की तीन फुट ऊंची प्रतियां बनाई गईं।
एक दिन फिर त्रिलोक प्रसाद ने पुष्पलता को रास्ते में रोककर फोटो दिखाकर धमकाया – अगर तुम मेरे साथ चलोगी तो ठीक है! वरना मैं यह फोटो अखबार में छपवा दूंगा! पुष्पलता डर गई और साथ ही गुस्से में भी थी। उसने धमकी दी कि वह फिर से उसे चप्पल से मारेगी। त्रिलोक जल्दी से वहां से चला गया।
जब पुष्पलता कॉलेज पहुंची तो वहां उसकी तस्वीर लगी हुई थी! लड़कियां भी वहीं खड़ी उस तस्वीर को देख रही थीं - किसी ने भी उसे हटाने की जहमत नहीं उठाई थी।
पुष्पलता इस अपमान को सहन नहीं कर सकी। वह रोने लगी। उसने किसी तरह रात गुजारी। उसके पिता, जो एक डीजल कंपनी में काम करते थे, सुबह जल्दी उठकर काम पर चले गए। बाद में, पुष्पलता, जो नहाने के लिए बाथरूम गई थी, ने अपने पूरे शरीर पर केरोसिन डालकर खुद को आग लगा ली। कॉलेज की लड़कियों की नग्न तस्वीरों की खबर पुलिस तक पहुंची और पुलिस ने बाकी जानकारी जुटाई। तस्वीरों के नेगेटिव श्रीवास्तव के पास से मिले और त्रिलोक को भी उसके बयान के आधार पर गिरफ्तार कर लिया गया। खबर का आखिरी वाक्य था,
``माना जा रहा है कि त्रिलोक प्रसाद, डॉ. हरिशंकर प्रसाद के पुत्र हैं, जिन्हें हाल ही में केंद्र सरकार में नियुक्त किया गया है।"
मिश्रा वहाँ चिंतित और चुपचाप बैठे रहे। हेमंत के मन में पुष्पलते के चेहरे की छवि बार-बार उभर रही थी, जो उन्हें एक सप्ताह पहले दी गई तस्वीर में दिखाई दे रही थी।
पांच मिनट तक सन्नाटा छाया रहा। फिर मिश्रा ने कहा,
मुझे हरिशंकर के घर जाना होगा। कौन जाने उनके परिवार ने उन्हें सूचित किया है या नहीं! त्रिलोक को उनके सिवा और कौन बचाएगा?
होन्नाटी को अब समझ नहीं आ रहा था कि क्या करे। क्या उसे भी मिश्रा के साथ जाना चाहिए? वहाँ पहुँचकर उसे क्या करना चाहिए? उसे हरिशंकर के लिए भी दुख हो रहा था। उसने मिश्रा से पूछा,
यह लड़का कितने साल का है?
``चौबीस साल का लड़का तो नौसिखिया है – वो तो हर साल पास भी नहीं होता!"

उसे यह भी नहीं पता था कि आगे क्या पूछे। मिश्रा ने अपनी चांदी की पत्ती की पेटी खोली, जल्दी से उसमें इलायची, नींबू, सुपारी, लौंग आदि मसाले मिलाकर एक पत्ती तैयार की और उसे मुंह में डालकर, अपने जूते और चप्पल पहनकर घर से निकल गया।
कौन जाने अब वो कब घर लौटेगा! लौटने के बाद भी उसका मन संगीत में नहीं लग रहा। चाहे वो कितनी भी कोशिश कर ले, करीबी दोस्त का बेटा, भले ही सीधे-सीधे हत्या का दोषी न हो, ऐसे अपराध में फँस गया है जिसके लिए उसे कम से कम आठ से दस साल की सज़ा हो सकती थी! हेमंत को अखबार में पुष्पलता का वो मासूम चेहरा याद आ गया। उस मासूम चेहरे को एक वेश्या के नग्न शरीर पर लगाने का घिनौना विचार उसके मन में कैसे आ गया? हेमंत को ये सोचकर घिन आ रही थी। उसे अपने IIT के दिन याद आ गए। वहाँ पढ़ाई का दबाव इतना ज़्यादा था कि वो कुछ सोच ही नहीं पाता था।
उन्हें थोड़ी देर के लिए सितार बजाने का मन हुआ। लेकिन उन्हें एहसास हुआ कि तबले के साथ के बिना वे अपने मन में अतीत का पूरा अनुभव नहीं कर पाएँगे।
उन्होंने सोचा कि वे अपना सितार नीचे रख दें और थोड़ी देर कहीं टहल लें। तभी विजय मिश्रा की पत्नी निर्मला देवी आईं और कमरे के दरवाजे पर खड़ी होकर बोलीं,
कुछ करने के बाद वह अपने दोस्त के बेटे को बचाने चला गया! चाहे उसने कुछ भी किया हो, वह फिर भी उसके दोस्त का बेटा ही था! लेकिन मैं कहती हूँ, अगर पिता हर दो साल में पत्नियाँ बदलता हुआ दिल्ली में रहता है, तो बेटा कैसे घर छोड़ सकता है? क्या बच्चों को अपने पिता से डरना नहीं चाहिए? अरे, वह हमारे घर भी आता था, एक चाचा से दूसरे चाचा के घर घूमता रहता था। हमारे घर में भी तीन बेटियाँ थीं! मैं बहुत उदास हो जाती थी! एक दिन वह तब आया जब वह घर पर नहीं था – मैंने मौके का फायदा उठाकर उसे चेतावनी दी – बच्चों को घर पर रहकर पढ़ाई करनी चाहिए – इस तरह घर-घर नहीं घूमना चाहिए! उस दिन से उसका यहाँ आना-जाना बंद हो गया। मैंने किया, क्या मैंने सही किया या नहीं? मुझे कहना पड़ेगा कि उस बेचारे त्रिपाठी ने भी अपनी बेटी को बहुत सलीके से पाला था!
हेमंत को समझ नहीं आया कि वह क्या कहे। उसने बस अपना सिर हिलाया।
वह एक पल के लिए रुकी और फिर बोली,
सच कहूँ तो, मैं कभी खुलकर इस तरह बात नहीं करती। पिछले दो महीनों से मैं तुम्हें रोज़ देख रही हूँ! तुम्हारा व्यवहार और बातें कितनी बेहूदा हैं! इसीलिए मैंने आज़ बात करना जारी रखा। दिल्ली में भी अच्छे लोग होंगे! लेकिन कहते हैं कि वहाँ की औरतें काशी की औरतों जैसी नहीं हैं! कहते हैं कि वहाँ इस तरह के मज़ाक नहीं चलते। क्या यह सच है?
"वहाँ भी सब कुछ चलता रहता है। कुछ लड़कियाँ अपनी चप्पलें उतार देती हैं—कुछ उन्हें अंदर ही रखती हैं!"
उसके जाने के बाद हेमंत भी अपने कमरे में लौट आया।
मिश्रा दोपहर के भोजन के लिए भी घर नहीं आया। वह शाम 4:30 बजे गया, लेकिन निर्मलादेवी ने उसे बताया कि वह नहीं आया है। अब, अपने कमरे में फिर से बैठने के बजाय, होन्नाटी का मन गाँव में घूमने का हुआ। उसे यह भी याद आया कि हालाँकि वह दो महीने से इस गाँव में है, उसने यहाँ का विश्वविद्यालय नहीं देखा है। कौन जाने चार दिन बाद यहाँ से जाने के बाद वह कब वापस आ पाएगा! यही सोचकर हेमंत घर से निकल गया।
रास्ता पूछते हुए घूमते समय, उसकी नज़र अपने घरों के बाहर बैठी आपस में बातें कर रही महिलाओं पर पड़ी। उसके मन में यह विचार आया – सदियों पुरानी कोई अनकही सुंदरता इन महिलाओं के चेहरों पर छाई हुई है! इनमें से अधिकांश

महिलाओं के चेहरे और शरीर पर धन-दौलत या गहनों का कोई निशान नहीं है! लेकिन उनके उत्साह की एक ऐसी चमक है जो गरीबी को नकारती है! हालाँकि वह उन पर और ध्यान देना चाहता था, उसने खुद को रोक लिया, यह सोचकर कि वे क्या समझेंगी।
अब उसे याद आया, मिश्रा की पत्नी के चेहरे पर भी वैसी ही चमक थी। हरिशंकर की पत्नी भी शायद वैसी ही रही होगी। इसीलिए तो वह अपने पति की सारी योजनाओं को जानते हुए भी खुश है। वह मन की शांति के लिए काशी आना चाहती थी! यहाँ रहने वालों की नज़र में यही एकमात्र सुकून है, कौन जाने! शायद वह इस मन की शांति को छोड़कर दिल्ली जाने को तैयार न हो! उसने उस पति को किसी कारण से ही ठुकराया होगा!
हेमंत को दिल्ली की औरतें याद आ गईं। लंबी, गोल-मटोल, सुगठित शरीर वाली, चेहरे पर तरह-तरह के मेकअप से सजी हुई – उन चेहरों पर कोई खूबसूरती नहीं थी, कोई मन की शांति नहीं थी – खुशी भी नहीं!
चलते-चलते सड़क खत्म हो गई। उसने एक अधेड़ उम्र की महिला से विश्वविद्यालय का रास्ता पूछा। महिला ने उसे वापस जाकर बाएँ मुड़ने को कहा। इसलिए वह वापस मुड़ गया। वह उसी सड़क पर वापस गया और आसपास पूछताछ करने के बाद विश्वविद्यालय की ओर चल पड़ा।
जब उन्होंने विश्वविद्यालय में प्रवेश किया, तो वह एक बिलकुल अलग दुनिया थी। आधुनिक इमारतें आधुनिक वाद्ययंत्रों की तरह थीं जो प्राचीन धुनों को सशक्त रूप से बजा सकती थीं। मुझे मालविया के बारे में अब तक सुनी हर बात याद आ गई, जिन्होंने प्राचीन भारतीय नींव पर निर्मित आधुनिक ज्ञान का सपना देखा था। इसका विस्तार IIT-IIM से भी बड़ा प्रतीत हो रहा था। वह प्रत्येक इमारत पर लिखे नाम पढ़ते हुए आगे बढ़ने लगे। चलते हुए उन्होंने गहरी सांस ली, मानो अपने सीने को संपूर्ण वातावरण से भर रहे हों।
कुछ दूर चलने के बाद, उसकी नज़र एक बड़े तख्ते पर पड़ी। उस पर लिखा था,
इस चांसलर को यहां से हटाओ।
प्रोफेसर शोषण करते हैं!
'छात्रों, एकजुट हो जाओ!'
लोहियावाद जिंदाबाद!
परीक्षा शुरू होने दीजिए।
छात्रों के अधिकारों को मान्यता मिलनी चाहिए!
और इसी तरह!
थोड़ा आगे जाने पर उन्हें एक विशाल मंदिर दिखाई दिया। पूछताछ करने पर उन्हें पता चला कि यह बिरला मंदिर है। वे अंदर जाना चाहते थे। वे आधुनिक बिरला मंदिरों की अनुशासन, स्वच्छता और साफ-सफाई आदि से भी परिचित थे। उन्होंने दिल्ली, हैदराबाद आदि गांवों में ऐसे मंदिर देखे थे। यहाँ भी यह मंदिर साफ-सुथरा था। दीवारों पर वही संस्कृत श्लोक लिखे हुए थे। न तो भाटजी का कर्कश जाप था, न जलते दीपक से धुआँ निकल रहा था, न तीर्थयात्रा के प्रसाद की चिपचिपाहट थी, न भक्तों की भीड़ सिर उठाकर सिर उठा रही थी, न बाहर चप्पलें चोरी होने का डर था।
जब वह मंदिर में दाखिल हुआ, तो उसे जोगीबेट्टा की याद सता गई। भगवान को प्रणाम करने के बाद, वह बाहर पत्थर की चौकी पर बैठ गया। अचानक, उसके मन में काशी-विश्वेश्वर मंदिर का ख्याल आया। क्या पता वह मंदिर, जिसे औरंगजेब ने नष्ट कर दिया था और दस मील दूर से दिखाई देने वाली एक भव्य मस्जिद के साये में दब गया था, धीरे-धीरे लोगों के मन से मिट जाए और उसकी जगह यह बिरला मंदिर आ जाए? वह आधे घंटे तक वहां बैठा रहा, उस छोटे से मंदिर की गंदगी, वहां की भीड़भाड़, यहां के भव्य मंदिर, शांति और स्वच्छता के

बारे में सोचता रहा। फिर अचानक उसे यह एहसास हुआ - आखिर असली काशी तो यहीं है! पत्थर की निगाहें चुपचाप मस्जिद पर टिकी हैं - इसके बाद, हम यहाँ चार दिन के लिए हैं, तब तक हमें हर सुबह गंगा में स्नान करना चाहिए और विश्वेश्वर के दर्शन करने चाहिए!
वह उठा, अपना बैग लौटाया, अपनी चप्पलें लीं, उन्हें पहना और बाहर निकल गया। कुछ दूर चलने के बाद, उसने सामने से एक जुलूस आते देखा। डेढ़ से दो सौ छात्र उत्साहपूर्वक नारे लगा रहे थे।
``जो हमसे टकराएगा–मिट्टीमें मिल जायेगा–"
``नकली पुलिस–ही–हा–"
न्याय, न्याय, न्याय
"छोड़ो त्रिलोक प्रसाद-छोड़ो-"
``अजंता स्टूडियो-इंजाबाद-इंजाबाद-"
एस.पी. वर्मा को बर्खास्त किया जाना चाहिए।
``हमारी लड़ाई – न्याय की लड़ाई –"
कल के बनारस बंद को सफल बनाएं-"
हेमंत ने मुंबई में भी ऐसे ही जुलूस देखे थे। वहां मजदूर नारे लगाने के बजाय जोश से चिल्ला रहे थे और मुट्ठियां हवा में उछाल रहे थीं आज भी होन्नाटी सड़क के एक किनारे खड़े होकर अपने सामने से गुजर रहे जुलूस को देख रहे थे।
जुलूस के आगे दो बड़ी तस्वीरें रखी हुई थीं। उन पर गेंदे के फूलों की मालाएं चढ़ाई गई थीं। एक तस्वीर में चेहरा डॉ. हरिशंकर से मिलता-जुलता लग रहा था – यानी यह त्रिलोक प्रसाद ही होंगे। दूसरी तस्वीर अजंता स्टूडियो के विश्वास श्रीवास्तव की थी।
हेमंत पीछे मुड़ा। विश्वविद्यालय के गेट से निकलते समय उसने हर जगह अगले दिन होने वाले बनारस बंद के आह्वान वाले पोस्टर देखे। छात्र संघ ने सभी दुकानदारों, व्यापारियों, ड्राइवरों और सरकारी कर्मचारियों से बनारस बंद को सफल बनाने में सहयोग करने की अपील की थी। उन्होंने यह भी चेतावनी दी थी कि बंद का विरोध करने वालों के साथ जो भी कुछ होगा, उसके लिए समिति जिम्मेदार नहीं होगी!
जब वह अपने कमरे में लौटा, तो 7:30 बज रहे थे। हरिशंकर मिश्रा के घर के बाहर बरामदे में बैठा सुगंधित ताम्बुल खाने में मग्न था। हेमंत को देखते ही मिश्रा ने उसे पुकारा,
``होन्नत्तीजी..."
हेमंत के वहां पहुंचते ही हरिशंकरन ने भी उनका स्वागत किया और कहा,
"वाह! हम पवित्र नगरी काशी में मिल रहे हैं, यह एक आशीर्वाद है!" उन्होंने कहा और जहां बैठे थे वहीं से हेमंत से हाथ मिलाया। हेमंत उनके सामने बैठे थे। हरिशंकर ने कहा, "विजय आपके बारे में बात कर रहा था! वह कह रहा था कि भारत का कोई भी तबला वादक आपके सामने अपनी पूंछ नहीं हिला पाएगा! बधाई हो!"
हरिशंकर के चेहरे पर हमेशा की तरह भाव थे। न चिंता, न डर, न अपमान – किसी भी तरह की कोई झलक नहीं थी। उन्होंने हेमंत से कहा,
अरे, तुम तो पान खाते भी नहीं! फिर तुम किस तरह के कलाकार हो! पान तो हर जगह मिलता है। लेकिन बनारसी पान जैसा अच्छा पान कहीं नहीं मिलता! बताओ, समझोगे क्या? ये तो बहुत ही बारीक बात है! इसे तो सिर्फ वही लोग समझेंगे जो खास पान खाते हैं।
हेमंत ने कुछ नहीं कहा। उसने दोबारा पूछा,
आप क्या कहते हैं? आप दिल्ली के लिए कब रवाना होंगे?

"गाड़ी रविवार रात के लिए बुक हो चुकी है।" होन्नाटी ने जितना हो सका उतना जवाब दिया और पूछा, "आप कब पहुंचे?"
``मैं कल हवाई जहाज़ से आया था!..." हरिशंकर कुछ पल चुप रहे। फिर बोले, ``तुम्हें सब पता है - तो छिपाने के लिए क्या है? मुझे कल दोपहर फोन आया - मैं तुरंत निकल गया। आज मुझे मेरा बेटा ज़मानत पर वापस मिल गया!" उन्होंने यह सब हिंदी की जगह अंग्रेजी में कहा। हेमंत समझ गया - भाषा में यह बदलाव इसलिए किया गया था ताकि विजय की पत्नी समझ न पाए...
"ऐसी घटनाएं केवल उसी माहौल में होती हैं जहाँ यौन अभिविन्यास को दबाने की परंपरा रही हो! उस लड़की के लिए मेरा दिल दुखता है। लेकिन क्या इसमें उसके माता-पिता की गलती नहीं है जिन्होंने उसे इस तरह पाला-पोसा? इसके अलावा, ऐसा क्या सबूत मिल सकता है जिससे यह पक्का साबित हो जाए कि मेरा बेटा उसकी मौत के लिए ज़िम्मेदार है? कोई और कारण भी हो सकता है! उसका कोई और मामला भी हो सकता है! मुझे लगता है कि यह ज़रूरी है कि ऐसी घटनाएं ऐसे समाज में न हों जहाँ युवा बिना किसी डर के एक साथ बड़े होते हैं। आपका क्या कहना है?"
होन्नाटी को एहसास हुआ कि वह उससे सहमति की उम्मीद कर रहा था। इससे पहले कि वह कुछ कह पाता, मिश्रा ने अपनी टूटी-फूटी अंग्रेजी में कहा,
"कल का बनारस बंद सफल रहा, बस काम हो गया! फिर पुलिस सफेद टोपी पहनकर मामले को खत्म कर देगी। मुझे पता है! छात्रों के प्रकोप को सहते हुए किसी भी पुलिस अधिकारी के लिए इस गांव में सम्मान से रहना संभव नहीं है! आखिर उनकी भी बहनें, पत्नियां, बेटियां और बच्चे हैं ना!"
तीन दिनों तक बनारस में दुकानों के सामने के दरवाजे बंद रहे। छात्र खुले दरवाजों को जला देने के इरादे से इंतजार कर रहे थे। लेकिन साड़ी की दुकानदार अपने एजेंटों को दशाश्वमेध घाट, विश्वेश्वर मंदिर और गांव भर में फैली धर्मशालाओं में भेज रहे थे, ताकि देश भर से आने वाले तीर्थयात्रियों में से ग्राहकों को ढूंढकर उन्हें पिछले दरवाजों से दुकानों में लाया जा सके। रेस्तरां और होटलों में भी यही हाल था। लेकिन साइकिल रिक्शा और ऑटो रिक्शा पूरी तरह से बंद थे।
होन्नाटी ने दशाश्वमेध घाट पर गंगा में स्नान किया और विश्वेश्वर की पूजा की। इसके बाद, उन्होंने काशी महाराज के महल में जाने के लिए एक नाम तय किया।
जैसे ही नाव घाट से दूर धारा में आगे बढ़ने लगी, ऐसा लगा मानो अंगोली के घाट दिव्य वाद्ययंत्रों के घर हों। गंगा नीचे निरंतर संगीत की तरह बह रही थी। भारत के किसी अन्य गाँव में घाटों की ऐसी कतार नहीं देखने को मिलेगी! – जी हाँ! राग को इसी तरह बजाना चाहिए! यही गंगा के प्रवाह की गंभीरता है और घाटों का यह ढांचा उस प्रवाह को दर्शाता है – बागेश्री राग मेरे मन में भर गया। सच्चा संगीत तो तबले को मौन रखकर गंभीर राग की लय को दर्शाना है! सर्कस-जादूगरी के करतब दिखाते हुए तबला या किसी अन्य वाद्ययंत्र को बजाना सच्चा संगीत नहीं है! शुद्ध संगीत में ये सब बातें कब शुरू हुईं? क्या ये तबले के जन्म के बाद ही शुरू हुईं? मूल संगत वाद्ययंत्र ध्रुपद का पखावज या मृदंगम रहे होंगे।
हेमंत ने दो महीने तक तबला संगत का अभ्यास किया ताकि अनजान प्रशंसकों को प्रभावित कर सकें – ओह! हमने कुछ भी सही नहीं किया! लेकिन आज, अगर हम इस क्षेत्र में अपनी छाप छोड़ना चाहते हैं और लाखों प्रशंसकों को मोहित करना चाहते हैं, तो इसके अलावा कोई और उपाय नहीं है! – हेमंत यह सोचकर उदास हो गए।
जैसे-जैसे नाविक नाव चलाता गया, उसने प्रत्येक घाट का नाम, उसे बनवाने वाले का नाम, घाट का ऐतिहासिक और पौराणिक महत्व आदि विस्तार से बताया। वह महसूस कर सकता था कि दूर से शांत दिखने वाली गंगा मध्य में कितनी तेज़ी से बह रही थी। यही वह संगीत था जो वह चाहता था! यही वह संगीत था जो वह

चाहता था, बिना किसी अन्य संगत के इतना प्रबल प्रवाह! दाईं ओर घाटों की लंबी कतार का इस प्रवाह से कोई संबंध प्रतीत नहीं होता था।
रामनगर महल को देखते हुए भी उनका मन संगीत और संगत के बारे में सोचते हुए मग्न था। नाव से लौटते समय सीधा जाना असंभव था और उन्हें टेढ़े-मेढ़े रास्ते से जाना पड़ा। अन्य घाटों का दृश्य फिर से स्पष्ट होने लगा।
कुछ देर बाद, घाट पर लकड़ी के दो ढेर धीमी गति से जलते हुए दिखाई दिए। हेमंत ने नाविक से पूछा,
"यह किस तरह का जाल है?"
"यह हरिश्चंद्र घाट है! काशी में मरने वाले हिंदुओं का अंतिम संस्कार यहीं किया जाता है। वे कहते हैं कि उन्हें काशी आकर मरना चाहिए, है ना? वे कहते हैं कि वे इस घाट पर अंतिम संस्कार करवाना चाहते हैं!"
"क्या राजा हरिश्चंद्र ने यह घाट बनवाया था?"
``अरे महोदय! क्या आपको हरिश्चंद्र-तारामती की कहानी नहीं पता? हरिश्चंद्र यहाँ डोम्बा के लिए काम करता था और उसकी पत्नी अपने मृत पुत्र को यहाँ दफ़नाने के लिए लाई थी..." नवादा उसकी अज्ञानता पर स्वाभाविक रूप से क्रोधित प्रतीत हुआ।
अब हेमंत को भी पूरी कहानी याद आ गई। हरिश्चंद्र ने तारामती का विरोध इसलिए किया था क्योंकि उसके पास अंतिम संस्कार का शुल्क चुकाने के लिए पैसे नहीं थे।
हेमंत स्वयं बेचैन हो गया। उसने नवादा से कहा,
"मुझे उस घाट पर ले चलो, देखते हैं।"
"बिना किसी कारण के मसाना मत जाइए, महोदय! क्या आपको पता नहीं है?" नाविक ने चेतावनी दी।
"नहीं, ऐसा नहीं है। मैं यहाँ से जहाँ उतरा था, वह जगह पास है। मेरे लिए यही सुविधाजनक है।"
नाविक ने घाट पर नाव रोक दी।
श्मशान घाट में दो शव जल रहे थे। दो और शव वहाँ लाए जा रहे थे। उनके साथ आए लोगों की 'श्री राम सत्य है - राम नाम नित्य है' का जाप करते हुए आवाज़ें पूरे स्थान में गूंज रही थीं। जलते हुए शवों की विशिष्ट गंध वहाँ के वातावरण में फैली हुई थी। उन्हें याद आया कि हाई स्कूल में संस्कृत के शिक्षक कहा करते थे कि ऐसे वातावरण में रहने के कारण जीवन छोटा होता है। उन्हें हरिश्चंद्र की कहानी के अन्य विवरण भी याद आए।
"हे मेरे स्वामी, यदि मेरे पास धन होता, तो क्या मैं उसे अपने इकलौते बेटे के अंतिम संस्कार के लिए नहीं दे देता?"
"हे मेरी स्वामिनी, मैं एक सेवक हूं। मेरे स्वामी को नियमानुसार राजा को कर देना पड़ता है! इसलिए, बिना पैसे के यहां अंतिम संस्कार करना बिलकुल असंभव है! आप यह कहकर पाप की मालकिन क्यों बन रही हैं कि आपके पास कुछ नहीं है? आपके गले में चमकता हुआ मंगलसूत्र है - इसे बेचकर यहां कर चुका दीजिए!"
यह वाक्य सुनकर तारामती स्तब्ध और भयभीत हो जाती है। उसका मंगलसूत्र केवल उसका पति ही देखेगा – अगर कोई और इसे देख ले तो यह उसकी पवित्रता में कमजोरी का संकेत होगा! हे भगवान! काशीनाथ! राज्य तो चला गया – मैं किसी तरह एक भिखारी की दासी बनकर जी रही हूँ – मैंने अपना पुत्र भी खो दिया है – इन सभी आघातों को सहते हुए मैं पवित्रता के विनाश का दर्द कैसे सहन करूंगी? अब जीने का क्या अर्थ है? मैं भी इस शव के साथ राख हो जाऊंगी।
आज भी तारामती की हालत याद करके होन्नाटी का मन भावभंगिमाओं से भर उठता है। कुछ देर तक वह उसी भाव में सीढ़ियों पर बैठा रहा। अपनी पवित्रता का

अनुभव करने के बावजूद, वह अपनी पवित्रता खोने के ख्याल मात्र से ही अपनी जान देने को तैयार था!
पति की असीम निष्ठा! पत्नी की परम पवित्रता और निष्ठा! ये दोनों निष्ठाएँ श्मशान घाट में अपने पुत्र के पार्थिव शरीर के सामने एक साथ खड़ी थीं – ऐसा दृश्य था! दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू थे! उनके सामने जलती चिता, पास में चल रही दूसरी चिता की तैयारी, अपनों का शोक – इन सबके बावजूद हेमंत का मन हरिश्चंद्र-तारामती के इस दृश्य पर केंद्रित था।
कौन जाने कितनी देर से वह उस अवस्था में बैठा था! अचानक ऊपर किसी ने उसे कन्नड़ बोलते सुना। उसने ऊपर देखा। वहाँ इमारत पर लगे एक काले बोर्ड पर 'कर्नाटक धर्मशाला' लिखा हुआ बोर्ड धुएँ से भरे वातावरण में भी स्पष्ट दिखाई दे रहा था। उसने यह भी सुना था कि काशी में विभिन्न क्षेत्रों, जातियों और जनजातियों के बच्चों के लिए एक धर्मशाला है। जैसे ही कन्नड़ भाषा उसके कानों में पड़ी और बोर्ड उसके सामने दिखाई दिया, उसका मन जोगीबेट्टा-हालुकेरे-विद्याशाला की ओर दौड़ गया। फिर अन्नाइयाह—फिर रविंद्र की याद—बैंगलोर में उनके घर के वे दिन—फिर कांति की याद—उसके साथ पहला शारीरिक संपर्क—उसकी पहल—उसका नग्न शरीर—उस समय उसका मंगलसूत्र भी उसकी नज़र में आया था—फिर उस मंगलसूत्र से उसके सीने पर बना घाव।
सामने की दो चिताओं की लपटें अब शांत हो चुकी थीं। तीसरी चिता की लपटें अब आकाश की ओर उठ रही थीं। 'श्री राम सत्य है - राम नाम नित्य है' के जाप के साथ एक और शव वहाँ आ रहा था। एक और चिता बनाई जा रही थी।
वहां बैठना उनके लिए असहनीय हो गया। वे सीढ़ियाँ चढ़कर कर्नाटक धर्मशाला पहुंचे और वहां से कबीर चौराहा का पता पूछकर उस दिशा में चल पड़े।
उसे बार-बार याद आ रहा था – हाल ही में कांति ने अपना मंगलसूत्र उतार दिया था। अब वह खुद को कुंवारी बता रही थी –

■

हरिशंकर भी रविवार शाम को उसी ट्रेन से दिल्ली के लिए रवाना हुए। दोनों एक ही डिब्बे में थे। हरिशंकर को गर्व महसूस हो रहा था क्योंकि काम सफल हो गया था। बनारस बंद के डर से पुलिस ने बी शीट जारी करने पर सहमति जताई थी। वे भी बेबस रह गए। लेकिन साथ ही, अगर ऐसे मामले में दोषी को तुरंत निर्दोष घोषित कर दिया जाता है, तो पत्रकार चुप नहीं बैठेंगे। समाज के कुछ नेता भी आपत्ति जताए बिना चुप नहीं रहेंगे। इसलिए, यह कहना ही समझदारी है कि 'जांच अभी जारी है' और पुलिस ने भी यही कहा।
हेमंत सोचता रहा कि अगर ऐसी घटना दिल्ली जैसे शहर में हुई होती और छात्रों का एक समूह उस गुंडे का साथ देता, तो महिला मुक्ति संगठन उस जली हुई लड़की के साथ खड़े होते। कम से कम कुछ बुद्धिजीवी, जो पुरुष और स्त्री के बीच भेद नहीं समझते, उस गुंडे का समर्थन करने वालों के खिलाफ खड़े होते।
ट्रेन ने रफ्तार पकड़ ली। तीन दिनों से हेमंत को परेशान कर रहा सवाल फिर से उसे सताने लगा। तबले के साथ रियाज़ के दो महीने उसके दिमाग से गायब हो गए थे, और उसकी जगह हरिश्चंद्र-तारामती की कहानी का मंगलसूत्र वाला हिस्सा उसके मन में बस गया था। उसने मिश्रा द्वारा दी गई असली बनारसी विद्या में से एक को निकालकर अपने मुंह में रख लिया। उसके बगल में बैठे हरिशंकर बोलने लगे,
"ऐसा लगता है कि आप बहुत गंभीर सोच में डूबे हुए हैं!"
"कुछ नहीं! काशी का असर तो हर किसी पर पड़ता है, है ना?"
`` बिलकुल सही! काशी भारतीय संस्कृति का केंद्र है! किसी ने इस तथ्य को दोहराया, जिससे हम काशी निवासी खुश हैं! लेकिन आपको वास्तव में किस तरह का प्रभाव महसूस हुआ?"

“ठीक-ठीक यहाँ कहना संभव नहीं है—” हेमंत ने आगे की बातचीत टालने के इरादे से कहा। लेकिन अंदर ही अंदर यह सवाल पूछने का दबाव बढ़ता जा रहा था। उसने स्पष्ट रूप से पूछा,
"आप काशी के निवासी हैं। इसके अलावा, आप भारतीय संस्कृति के विद्वान हैं! इसीलिए मैं आपसे यह प्रश्न पूछ रहा हूं..." उन्होंने कहना बंद कर दिया।
हरिशंकर ने कहा,
"पूछिए! पूछिए! अगर आपके मन में यात्रा के दौरान चर्चा करने के लिए कोई सवाल है, तो यह समय बिताने का एक शानदार तरीका है!"
होन्नाटी एक पल के लिए हिचकिचाया, यह सोचकर कि सवाल कैसे पूछा जाए। फिर उसने पूछा,
"किसी भी संस्कृति में विवाहित महिला के साथ संबंध रखना स्वीकार्य नहीं है। हमारी भारतीय संस्कृति में इसका धार्मिक विश्लेषण कैसे किया जाता है?"
हरिशंकर के चेहरे पर एक पल के लिए उदासी छा गई और फिर गायब हो गई। लेकिन बिना दिखाए, उन्होंने धीरे से मुस्कुराते हुए, मानो यह महज़ एक विद्वतापूर्ण प्रश्न हो, कहा,
हमारी पूरी संस्कृति ने ऐसे रिश्ते को स्वीकार किया है। किसी पुरुष को विवाहित स्त्री का पीछा करके उसे भ्रष्ट नहीं करना चाहिए। लेकिन अगर वह प्रेम की भीख मांगे, या स्पष्ट शब्दों में कहें तो, प्रेम की गुहार लगाए, तो पुरुष का धार्मिक कर्तव्य है कि वह उसे पूरा करे। राधा विवाहित थीं। वे कृष्ण से भी बड़ी थीं। हमारी संस्कृति में राधा-कृष्ण की प्रेम दिव्य स्तर तक पहुंच चुका है! आप यह भी जानते हैं कि हमारे पुराने नाटक, नृत्य, संगीत, कविता, सभी ललित कलाएं इसी रिश्ते से समृद्ध हुई हैं! अगर राधा-कृष्ण और उनका प्रेम अलग हो जाते, तो विरह, प्रेम आदि विभिन्न भावों को व्यक्त करने वाला नृत्य कहां से आता? आपकी भैरवी कहां से आती? राग-रागिनी के सभी चित्र कहां से आते?
"लेकिन वे कहते हैं कि राधा-कृष्ण का रिश्ता केवल मानसिक स्तर पर था, है ना?"
क्या आपको संस्कृत आती है?
``ज्यादा कुछ नहीं – हमने यह विषय इंटरमीडिएट तक पढ़ा था –"
बस इतना ही काफी है! सभी इस बात से सहमत हैं कि कवि जयदेव एक महान भक्त थे। उनकी 'गीता गोविंदा' की कोई भी पंक्ति पढ़ लीजिए! अब मुझे उनमें से कुछ पंक्तियाँ याद आ रही हैं, उन्हें सुनिए—
माली यमुना नदी के किनारे जंगल में, हल्की-हल्की हवा के बीच रहता है।
गोपीपिनपयोधर्ममर्दनचञ्चलकरयुगशालि।
Chest murarerupahitahare cube like liquid balake.
बिजली की तरह पीला रंग, जुनून का विपरीत, राजस में अच्छे कर्मों के परिणाम का प्रतीक है।
पिघल चुके वस्त्रों को हटा दें, समाप्त हो चुके उपवास को हटा दें, और ढके हुए कूल्हों को हटा दें।
यह एक आनंद का निदान है, जैसे किसी कली के गर्भगृह में छिपा खजाना, किसी फल के जन्म के समय।
कृष्ण अपने बेचैन हाथों से गोपियों के सुशोभित स्तनों को सहलाते हैं। तुम अपनी कामुकता से विरक्ति के कारण सुंदर दिखती हो। मुझे स्वयं बताओ – क्या यह केवल मानसिक भक्ति है? हेमंत जी, हमारे पूर्वजों ने 'काम' का भरपूर अनुभव किया और फिर ईश्वर की ओर मुड़े। यदि काम नहीं होगा, तो कला कहाँ होगी? कृष्ण एक महान कलाकार हैं! एक महान बांसुरी वादक-नर्तक! ऐसे महान कलाकार के प्रति आकर्षित होना – उन्हें हीरे और सोना भेंट करना – अपना धन और पूरा जीवन उनके लिए न्योछावर कर देना अतीत की बात थी और आज भी यही हील है! मुंबई और अन्य बड़े शहरों में, धनी विवाहित महिलाएं अपनी खास

सहोलेयों को बँटाती हैं – मैंने फलां-फलां प्रसिद्ध फ़िल्म कलाकार के साथ दस हजार रुपये में एक रात बिताई! ये तीस-चालीस वर्ष की महिलाएं हैं। इससे क्या पता चलता है? कलाकार ने कहा कि महिलाएं उसकी ओर आकर्षित होती हैं। यह भगवान कृष्ण के समय से चला आ रहा है! हमारे सनातन भी इसे स्वीकार करते हैं और इन रिश्तों की पूजा करते हैं!
बोलते-बोलते वह रुक गया। उसने मुंह में पत्ते का रस थूकते हुए, तेज रफ्तार कार से बाहर फेंकते हुए, अपनी जीभ को मसूड़ों पर फेरते हुए पूछा,
"अब मुझे बताइए - यह सवाल आपको क्यों परेशान कर रही था?"
हेमंत को उस समय शर्मिंदगी महसूस हुई जब उसे एहसास हुआ कि हरिशंकर ने सवाल को कांति के साथ उसके रिश्ते की ओर मोड़ दिया है। वह अपने चेहरे के भावों को छिपा नहीं सका और बोला,
"मैंने आपसे पूछा है।"
आप एक कलाकार हैं! एक सच्चे कलाकार के मन में ऐसे प्रश्न नहीं उठने चाहिए। यहां तक कि कृष्ण, जो हजारों गोपियों के बीच सितार बजाते थे, उन्होंने भी यह नहीं सोचा कि वे जो कर रहे हैं वह सही है या गलत। आपको भी वैसा ही रहना चाहिए। आपकी निष्ठा आवश्यक है, और वह आपकी कला के प्रति है! बनारस में रहते हुए हमारे विजय मिश्रा के साथ बजाना कितना आनंददायक था, है ना? मैं आपको बता दूं – बनारस बाजा की ध्वनि की बराबरी कोई दूसरा वाद्ययंत्र नहीं कर सकता। सितार की कोमलता और बनारस बाजा के तबले का मेल बहुत ही सुंदर था! बाद में भी, यदि संभव हो, तो बनारस बाजा के तबले को अपने वाद्य यंत्र के रूप में रखें।
ट्रेन धीरे-धीरे चलने लगी। होन्नाती ने बाहर झाँका। इलाहाबाद स्टेशन आ गया था। ट्रेन रुकते ही दो और यात्री डिब्बे में दाखिल हुए। "मैं अब सोने जा रहा हूँ" कहते हुए हरिशंकर ने अपना टूटा हुआ तख्ता बिछाया और उस पर अपने सूटकेस से निकाली हुई चादर फैला दी। होन्नाती ने भी अपना सितार कोने में करीने से रखा और सो गया। ट्रेन फिर से चलने लगी। बाकी दोनों यात्रियों ने भी अपने बिस्तर बिछाए और बत्तियाँ बंद कर दीं। ट्रेन ने रफ्तार पकड़ ली थी। उसमें तनाव साफ महसूस हो रहा था।
हरिशंकर की व्याख्या एक ओर तो काफी विश्वसनीय थी। उन्होंने इसके लिए राधा-कृष्ण-गोपी का उदाहरण भी चतुराई से दिया था। राधा एक विवाहित महिला थीं और कृष्ण एक मनमोहक बांसुरी वादक! हेमंत ने संगीत जगत में भी ऐसे कई उदाहरण सुने थे। लेकिन साथ ही, श्मशान घाट में फैली दाह संस्कार की विशिष्ट गंध से घिरे होने के कारण, तारामती के मंगलसूत्र की स्मृति भी उनके मन पर असीम बल डाल रही थी।
तारामती राधे से कहीं अधिक प्रतिष्ठित महिला हैं। लेकिन तारामती भारतीय कला जगत में राधे के समान स्थान क्यों नहीं पा सकीं? कला जगत में उन्हें राधे के स्थान का हज़ारवां हिस्सा भी क्यों नहीं मिला? कोई गायिका अपने भावों को गायन के माध्यम से क्यों नहीं व्यक्त करती? कोई नर्तकी अपने भावों को नृत्य के माध्यम से क्यों नहीं व्यक्त करती?

■

हेमंत के मन में कोई कसक नहीं थी और वह आज भी कांति से पहले की तरह ही प्यार करता था। लेकिन एक दिन, उसके मन में इस रिश्ते को लेकर सैकड़ों सवाल उठने लगे। इतना ही नहीं, वह कांति को ये बात बता भी नहीं पा रहा था। उसे शक होता तो वो गुस्सा हो जाती, ये उसका अनुभव था।
अब तक उनका बंगला भी बनकर तैयार हो चुका था। बस कुछ काम बाकी था, जैसे पेंटिंग करना, मोज़ेक टाइल्स को पॉलिश करना और मास्टर बेडरूम और

लिविंग रूम में एयर कंडीशनर लगाना। घर में एक नया फोन भी आ चुका था। ये छोटे-मोटे काम पूरे हो जाने के बाद, वह रहने के लिए तैयार थीं।
संगीत सत्र भी एक महीने में शुरू होने वाला था। हेमंत की पहली सभा उसी समय होनी थी। तीन दिन बाद मुंबई में और फिर उसके तीन दिन बाद कलकत्ता में सभा आयोजित करने का निर्णय लिया गया। सारी व्यवस्था हरिशंकर ने कर ली थी। तारीखें तय हो चुकी थीं और विजय मिश्रा को भी सूचित कर दिया गया था। अब जब मृत्यु का भय टल चुका था, तब होन्नाटी के लिए हेमंत के घर पर रियाज़ करना संभव था। लेकिन सभा को सुविधाजनक बनाने के लिए, कांति ने शीतल के घर पर रियाज़ करने की परंपरा को बरकरार रखा था। कांति की इच्छा थी कि हेमंत अपनी पहली सभा से पंद्रह दिन पहले उनके घर - नए घर - में रुकें और रियाज़ करें, और वह उन्हें पहले कार्यक्रम के लिए अपनी कार से हॉल तक ले जाएं। इसी बात को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने घर के ठेकेदार से घर का निर्माण जल्दी पूरा करके सौंपने का आग्रह किया था।
एक शाम नौ बजे, वह शीतल के घर से कांति की कार में घर लौटा, वसंत विहार स्थित अपने घर से आधा फर्लांग दूर उतरा और बैठक में फोन के पास एक नोट पाया। उसके पिता लॉन में शतपोवली बुन रहे थे। उसकी माँ ने उसे देखकर बताया,
``आपके लिए एक संदेश है, देखिए!..."

उसने पत्र पढ़ा। यह उसके पिता की लिखावट थी।
श्री रविंद्र, बैंगलोर स्थित इंडियन ट्रिब्यून के रेजिडेंट एडिटर, मोती बाग स्थित इंडियन ट्रिब्यून के गेस्ट हाउस में पहुँच गए हैं – उनका फोन नंबर निम्नलिखित है –
हेमंत नोट देखकर एक पल के लिए उत्साहित हो गया। दो साल हो गए थे हमारी मुलाकात के! हाल ही में हमारी चिट्ठी-पत्री पहले जैसी नहीं रही थी। उसने तुरंत दिए गए नंबर पर डायल किया। फोन पर रविंद्र था। उसने कहा,
सभी रेजिडेंट एडिटर्स की एक मीटिंग थी। मुझे यहां आए तीन दिन हो गए हैं। मैं कल सुबह की फ्लाइट से वापस जा रहा हूँ। मैं आपका पता भूल गया था। आपका सरनेम तो अनोखा है, है ना! इसलिए मैंने डायरेक्टरी में देखा। मुझे आपका नंबर मिल गया। क्या आपसे मिलना संभव है? तुरंत आ जाइए - यहीं खाना खा लेते हैं। खाते-खाते बातें कर लेते हैं।
हेमंत तुरंत तैयार हो गया और रविंद्र द्वारा दिए जाने वाले भाषण के लिए रवाना हो गया।
उनसे मिले हुए बहुत समय हो गया! हमें उन्हें संगीत में हुई अपनी प्रगति के बारे में बताना चाहिए। उन्हें भी संगीत में रुचि है - वे सब कुछ सुनकर खुश होंगे! यह सोचते ही उन्हें कांति के साथ अपने संबंध की याद आ गई और खुशी की जगह डर ने ले ली।
चूंकि रात के 9:30 बज रहे थे, सड़क पर यातायात धीमा हो गया था। रिक्शा तेज़ गति से चल रहा था। एक किलोमीटर की दूरी तय करते-करते उसका दिल ज़ोर से धड़कने लगा था।
रेजिडेंट एडिटर होने के नाते, रविंद्र किसी काम से दिल्ली आते-जाते रहते होंगे। वे अक्सर दिल्ली आते थे। उनकी अपनी पत्नी से कभी मुलाकात नहीं हुई। हालांकि उनका आपस में कोई रिश्ता नहीं था, फिर भी मैं उनकी पत्नी से अपने रिश्ते को दरकिनार रखते हुए उनके सामने बैठकर जोगीबेटा, विद्याशाला, बैंगलोर गांव, अन्नय्या और उनके सहकर्मियों के बारे में हंसी-मजाक करते हुए बातें करता था... उन्हें अपने विदेशीपन से घृणा होती थी।

शायद रविंद्र को इस बारे में कुछ पता ही नहीं है। अगर पता होता, तो क्या वो मुझे इतने प्यार से मिलने बुलाते? अखबार वाले तो हमेशा बातें करते रहते हैं! उनमें पत्रकार भी हैं। सब पिछले तीन दिनों से साथ हैं। दिल्ली में संगीत और साहित्य की खबरें सबको पता हैं। उन्हें हरिशंकर की नियुक्ति के बारे में ज़रूर पता होगा। जब मिलेंगे, तो उनके बारे में पूछेंगे। मेरे वाद्ययंत्रों के बारे में भी पूछेंगे। अगर मैंने कांति के अलावा कुछ और बतायी, तो आधा सच होगा। अपनी जान बचाने के लिए आधा सच बोलना, पूरे झूठ बोलने से भी बुरा है।
मुझे तुरंत रिक्शा बुलाकर घर जाने का मन कर रहा था। लेकिन अगर मैं उससे एक बार मिलने के लिए राजी हो जाती और फिर अब मुलाकात टालने के लिए कुछ कहती, तो उन्हें भी शक हो जाता।
जब रिक्शा रविंद्र द्वारा बताए गए पते पर पहुँचा, तब भी उसका मन एक पल के लिए दुविधा में था कि अंदर जाए या नहीं। काँटों भरे रास्ते पर कदम रखते ही, उसके मन ने उसे चेतावनी दी कि आगे बढ़ने के अलावा कोई और विकल्प नहीं है। उसने चौकीदार से रविंद्र के कमरे के बारे में और जानकारी ली।
उनकी मुलाकात को दो साल बीत चुके थे, फिर भी रविंद्र के दिल में वही स्नेह उमड़ रहा था। इन दो सालों में वह और भी परिपक्व दिखने लगा था। उसके सिर के बाल भी झड़ने लगे थे।
आपके पिताजी कहा करते थे – इसीलिए तो आप बनारस गए थे! विजय मिश्रा के साथ अभ्यास करने के लिए, है ना? मैंने उनका तबला सुना है! एक बार उनका तबला सुन लो, फिर किसी और का तबला सुनना ही नहीं चाहोगे। अब आप कब से कार्यक्रम शुरू करने वाले हैं? बैंगलोर में हिंदुस्तानी संगीत प्रेमियों का एक नया संगठन शुरू हुआ है। मैं उन लोगों को भी जानता हूँ। हम उन्हें बताकर बैंगलोर में एक कार्यक्रम आयोजित कर सकते हैं। लेकिन हमें विजय मिश्रा को संगतकार के रूप में आमंत्रित करना चाहिए!
"मुझसे भी गलती हुई! मैं इतनी जलदी में निकल गया। अगर मैं आते समय सितार लाया होता, तो मैं आपको ज़रूर सुनाता।"
आह, आपके बैंगलोर छोड़ने के बाद, मुझे कुछ दिनों तक बहुत परेशानी हुई। रात को जब मैं सोने जाती थी, तो बिलकुल नींद नहीं आती थी। मुझे आपकी सितार की धुन सुनते-सुनते नींद आने की आदत पड़ गई थी। आपको बताऊं, विलंबित आलाप सुनते हुए मुझे कितनी गहरी नींद आती है! ऐसा लगता है जैसे मेरे मन की सारी बेचैनी दूर हो गई हो और मैं एक शांत अवस्था में तैर रही हूँ! उसके बाद, मैं पूरी रात चैन से सोई! घर में आपका साथ होना भी मेरी उस गहरी नींद का कारण हो सकता है।
मैं भी कुछ दिनों के लिए फिर से आपके साथ आकर रहना चाहती हूँ। मैं विश्वविद्यालय में भी कुछ दिनों के लिए रहना चाहती हूँ। इसके अलावा, मेरा सपना है कि मैं जोगी-गुड्डा में रहूँ और एक महीने तक दिन-रात सितार बजाऊँ!
आप कभी भी बैंगलोर आ जाइए। कॉलेज में हर कोई आपको याद रखता है। आप चाहें तो जोगीबेट्टा में एक महीने तक रह भी सकते हैं – लेकिन इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि आपको मन की शांति मिलेगी। वहां का वातावरण दिन-ब-दिन बिगड़ता जा रहा है! क्या आपको यह भी पता है कि जोगीगुड्डा और उसके आसपास का पूरा इलाका मैंगनीज से बना है? उस सारी जमीन को एक कंपनी को बेचने का फैसला कर लिया गया है। परशुराम गौड़ा ने इस विचार को सरकार पर थोप दिया है। सर्वेक्षण के बाद पता चला है कि पूरा जोगीबेट्टा मैंगनीज से बना है। सिर्फ पूरा जोगीबेट्टा ही नहीं – बल्कि उसके नीचे दो सौ फीट तक शुद्ध मैंगनीज की एक परत भी पाई गई है! अब सरकार ने पूरे पहाड़ को ईरान को बेचने का फैसला कर लिया है! अगले पंद्रह से बीस वर्षों में, पूरा जोगीबेट्टा और आसपास की जमीन ईरान के पास चली जाएगी और वहां एक घाटी बन जाएगी!

"फिर जोगीबट्टा पर जगन्नाथालैंग मंदिर?"
"यदि कोई भक्त चाहे तो वह दूर कहीं जाकर अपना जीवन पुनर्जीवित कर सकता है। मंत्री भी उनके चरणों में श्रद्धांजलि अर्पित करने आएंगे!" रवींद्र का चेहरा उदासी से भर गया था।
"लेकिन क्या आसपास के लोग इतने प्राचीन मंदिर को वहां से हटाने के लिए तैयार होंगे?"
"इससे तुम्हें रोज़गार मिलेगा, इसलिए मैंने तुमसे कहा था, काम हो गया है! सब लोग तैयार रहेंगे! वरना, आज पहाड़ पर बैठे इस देवता को बीड़ी-कड़ी के लिए चार टिकला कहाँ से मिलेंगे?"
हेमंत के मन में आस्था और उपयोगिता के संबंध का विचार आने लगा। बात यह नहीं कि उपयोगिता आस्था से ही मिलेगी, बल्कि यह कि यदि उपयोगिता ही न हो तो उसमें आस्था कौन रखेगा? इस तरह सोचने का अर्थ है कि सभी भारतीय आस्थाहीन हैं! उनका मन तीन वर्षों तक जोगीनाथ की उपस्थिति में निकट रहने की अनुभूति से भर गया। दिन का प्रकाश, रात का चाँद, दीपक की रोशनी, जोगीबेटा पर संगीत साधना, जो कभी-कभी घोर अंधकार में भी चलती रहती थी, जोगीनाथ की निरंतर संगीतमय आराधना। मेरा सितार वहाँ आराधना का साधन बन गया था! जब सितार जानबूझकर तोड़ा गया, तो मुझे लगा कि किसी ने मेरी आराधना को भंग कर दिया है। उस क्षण यह भी स्पष्ट हो गया कि परशुराम गौड़ा ईश्वर को किस दृष्टि से देखते थे। उनका चेहरा पीला पड़ गया।
किसी ने दरवाजे पर दस्तक दी। रविंद्र ने दरवाजा खोला। छात्रावास का नौकर आया था। उसने पूछा,
"खाना तैयार है। क्या आप नीचे आएंगे, या मैं इसे यहाँ ले आऊं?"
"इसे यहाँ लाओ..." रविंद्र ने कहा।
बड़े टेंट के दोनों ओर बैठे हुए, वे दोनों खाने लगे। रविंद्र जम्हाई ले रहा था। होन्नाटिची ने कहा,
ऐसा लगता है कि आप आराम नहीं कर रहे हैं...
"पार्टी कल रात देर तक चली। देशभर से रेजिडेंट एडिटर इकट्ठा हुए थे, है ना? इससे खूब चर्चा हुई। अलग-अलग राज्यों की स्थिति, मंत्रालय, विपक्षी दल – ऐसे समय में कितने सारे विषय सामने आते हैं! मुझे सुबह जल्दी उठकर फिर से बैठक के लिए तैयार होना पड़ा।"
"आज तुम उनकी जगह मेरे साथ हो..."
"मुंबई-लेखनऊ-हैदराबाद-चंडीगढ़-अहमदाबाद से सभी लोग शाम की फ्लाइट से रवाना हो गए। इन सभी के लिए सुबह, दोपहर और शाम की फ्लाइटें थीं। लेकिन बेंगलुरु के लिए, सुबह की सिर्फ एक ही फ्लाइट थी! मैं उसे भी मिस कर गया, कोई और व्यवस्था नहीं थी! इसलिए मुझे यहीं रुकना पड़ा।"
"आपको सुबह जल्दी उठना पड़ेगा, है ना..." होन्नाटी ने कहा और जल्दी-जल्दी खाना शुरू कर दिया। उसे अच्छा लग रहा था क्योंकि उसे यहाँ से जल्दी निकलने का बहाना मिल गया था। उसने आगे कहा, "दरअसल, आपको हमारे घर रात के खाने पर आना चाहिए था। जैसे ही आपने फोन किया, मैं भी व्यस्त हो गया, इसलिए मुझे समय मिल गया!"
"मैं फिर आऊंगा, है ना! दिल्ली आना इतना मुश्किल नहीं है," रविंद्र ने फिर से जम्हाई लेते हुए कहा।
जाते समय होन्नाटी का मन हुआ कि वह झुककर रवींद्र के पैर छूकर प्रणाम करे। लेकिन यह सोचकर कि यह एक अस्वाभाविक भाव होगा, उसने विनम्रतापूर्वक झुकते हुए हाथ मिलाया।
रवींद्र ने अपने बाएं हाथ से उसे गले लगाया और कहा,

``अगली बार जब मैं आऊँ, तो मैं चाहता हूँ कि आप सितार बजाएँ। मैं विजय मिश्रा के साथ आपका सितार वादन सुनना चाहता हूँ! कृपया जितनी जल्दी हो सके बैंगलोर आ जाइए," रविंद्र ने उन्हें विदा करने के लिए द्वार पर आते हुए कहा। उन्होंने चौकीदार को यह बात बताई और एक रिक्शा बुलाया।
जब होन्नाटी रिक्शा में बैठकर जाने लगी, तो रविंद्र ने पूछा,
"क्या पैसों की कोई समस्या है?"
होन्नाटी के कठोर हृदय में एक झनझनाहट सी दौड़ गई। उन्होंने कहा,
मैं अपने माता-पिता के साथ रहता हूँ, है ना!..."
"तो, खाने-पीने और रहने की समस्या तो सुलझ गई, ऐसा कह सकते हैं। लेकिन एक बड़े गाँव में और भी कई खर्चे होते हैं। बाहर जाना भी एक खर्चा है - खाने के समय घर लौटना नामुमकिन है और अगर आप बाहर कुछ खाने की इच्छा जताते हैं, तो भी पैसे लगेंगे। अगर ऐसी कोई समस्या हो, तो मुझे लिख देना। संकोच मत करना। मुझे पैसों की कोई दिक्कत नहीं है," उन्होंने होन्नाटी को विदाई देते हुए कहा।
रविंद्र को अलविदा कहने के बाद मेरे मन का तनाव कम होने के बजाय और बढ़ गया। वो अक्सर दिल्ली आते हैं। कांति से उनका रिश्ता पूरी तरह खत्म हो चुका है। संगीत जगत में सबको पता है कि मैं कांति के साथ सफर करती हूँ। तो पत्रकार रविंद्र को ये कैसे पता नहीं चला? इंडियन ट्रिब्यून के लिए संगीत समीक्षा लिखने वाले सरूप शर्मा को भी पता है कि हम साथ सफर करते हैं। क्या वो कभी रविंद्र से मिले ही नहीं? कांति ने रोज पेंटा में हरिशंकर को शाही दावत दी थी – बाकी अखबारों की तरह इंडियन ट्रिब्यून भी गपशप से भरा हुआ था। उसने मंच पर कांति की एक तस्वीर भी छापी थी। उन्हें तो ये जरूर पता होगा कि कांति ने दिल्ली के संगीत जगत के संभ्रांत लोगों में अपनी धाक जमा ली है। उन्हें मेरी कांति से दोस्ती के बारे में भी जरूर पता होगा! कम से कम उन्हें इसकी असलियत तो नहीं पता होगी। हालांकि कुछ लोगों को शक जरूर हुआ होगा, लेकिन सिर्फ शीतल ही इस बारे में पक्की जानकारी रखती है!
हेमंत को थोड़ा बेहतर महसूस हुआ क्योंकि इस तर्क और विचार ने एक सुरक्षात्मक कवच का काम किया।
उसके बैंगलोर आने के बाद, मैं दिल्ली आ गया। मेरी माँ ने उसके साथ मेरे लिए संदेश भेजा था। रविंद्र यह जानता है – इसलिए उसे मेरी उससे दोस्ती में कोई और मतलब देखने की ज़रूरत नहीं है – अगर उसे पता होता, तो क्या वह मेरे साथ इतना सहज व्यवहार कर पाता? – इस विचार से उसे भी थोड़ी राहत मिली।
लेकिन जैसे ही रिक्शा डेढ़ किलोमीटर तक हवा में आगे बढ़ा, उसके दिमाग में फिर से सवाल उठने लगे कि क्या रविंद्र को इस बारे में पता था या नहीं? बिलकुल नहीं! मैंने उसे धोखा दिया है! और चाहे दूसरों को पता हो या न हो, मेरा अंतर्मन जानता है! अगर मेरा उससे शारीरिक संबंध न होता, तो शायद वह अपने पति से सुलह कर लेती, कौन जाने! उनके जीवन के दो टुकड़ों में बंट जाने के लिए मैं ही जिम्मेदार था, कौन जाने!
अपने बड़े भाई की पत्नी - अपनी सगी भाभी - के साथ किसी और स्त्री के बजाय एक रिश्ता होने का एहसास - यह एहसास उसके सीने में सीसे की गोली की तरह चुभ गया। मैंने रविंद्र को कभी महज दोस्त नहीं समझा। मैंने हमेशा उसे अपने दिल में बड़े भाई का दर्जा दिया है! आज भी मेरे दिल में वह एहसास जरा भी नहीं बदला है। बड़े भाई की पत्नी - बड़ी भाभी - माँ के समान उसका स्थान -
इस विचार मात्र से ही उसके मन में घृणा उत्पन्न हो गई।

■

जब वह घर पहुँचा तो उसके पिता सो रहे थे। उसकी माँ ने इशारे से उसे बैठक में बुलाया। हेमंत समझ गया कि उसकी माँ उससे किसी बात पर चर्चा करना चाहती

हैं।
"आप कांति के पति से मिले थे, है ना?"
उसने सिर हिलाया, इस बात को लेकर सतर्क था कि उसका अगला सवाल क्या होगा।
"ऐसा लगता है कि वह किसी गेस्टहाउस में रुका था, इसलिए उसकी मुलाकात अपनी पत्नी से नहीं हुई। क्या कांति यहाँ रहकर व्यापार में खूब पैसा नहीं कमाता? आखिर उनकी जिंदगी इस तरह क्यों मुड़ गई?"
माँ जानती है कि कांति कभी-कभी उसे फोन करती है। वह यह भी जानती है कि वह उससे कभी-कभी मिलती भी है। ऐसे समय में, अगर मैं उससे कहूँ कि मुझे कुछ नहीं पता, तो वह मेरी बात पर विश्वास नहीं करेगी।
हेमंत ने कहा,
मुझे उनके निजी मामलों के बारे में क्या पूछना चाहिए? अगर वे मुझे बता देते, तो बात कुछ और होती...
उसने इस बारे में भी कुछ नहीं कहा।
वह अपने कमरे में गया और सो गया। मन में तरह-तरह के विचारों के उथल-पुथल के कारण उसे तुरंत नींद नहीं आई। अगर रविंद्र का अपनी पत्नी के अलावा किसी और स्त्री से संबंध होता, तो शायद उसे इतना गहरा पाप का गड्ढा न पार करना पड़ता, कौन जाने!
यह पहली बार नहीं था जब उसके मन में पाप का यह भाव उत्पन्न हुआ था। लेकिन उसके सामने यह भाव कम हो जाता था। वह स्वतंत्रता की वकालत करते हुए तर्क देने लगी कि पाप और ज्ञान पूरी तरह से लुप्त हो रहे हैं। बनारस से लौटने वाले दिन भी यही हुआ था। लेकिन रवींद्र से मिलने के बाद उसे लगा कि चाहे वह दृढ़ निश्चय कर ले, यह भाव कम नहीं होगा। हरिश्चंद्र घाट पर उसके हृदय में तारामती के मंगलसूत्र की जो स्मृति उभरी थी, वह उसके मन को भीतर-बाहर तक झकझोर रही थी।
वह सुबह तड़के किसी समय आंखें खोलता और आधे घंटे के भीतर फिर जाग जाता। वह सुबह 7:30 बजे तक बिस्तर पर लेटा रहता। वह जानता था कि यह थकान सिर्फ नींद की कमी से नहीं थी। जब उसकी माँ ने धीरे से दरवाजा खोला, तो वह आलस से उठ बैठा। उसकी माँ ने पूछा,
"क्यों, रे? अच्छा नहीं है?"
"ऐसा कुछ नहीं है - बस कल रात मुझे जल्दी नींद नहीं आई," उसने बाथरूम की ओर मुड़ते हुए कहा।
उसने स्नान किया और नाश्ता किया। उसे लगा कि आज उसे शीतल के घर नहीं जाना चाहिए। अगर वह हमेशा की तरह आज भी चला गया, तो उसके मन में उठ रहे नैतिकता के प्रश्न का क्या हल निकलेगा? लेकिन उसे घर पर बैठे-बैठे वाद्य यंत्र बजाने का मन नहीं कर रहा था। अचानक उसे लगा कि वाद्य यंत्र बजाना व्यर्थ का काम है। उसने अपनी माँ से कहा कि वह रियाज़ किए बिना सो रहा है और कमरे का दरवाजा बंद कर लिया।
मैं बिस्तर पर लेट गया, लेकिन नींद का कोई नामोनिशान नहीं था। डेढ़ घंटे तक बिस्तर पर करवटें बदलने के बाद, मुझे कहीं जाने की इच्छा हुई। माँ को बताने के बाद, मैंने एक और कप चाय पी और घर से निकल गया।
उसे समझ नहीं आ रहा था कि कहाँ जाए। वह बस स्टॉप पर जाकर खड़ा हो गया। थोड़ी देर में एक बस आई। उस पर दरियागंज का बोर्ड लगा था। वह बस में चढ़ गया। उसने टिकट लिया और बैठ गया। बस उसी सड़क पर जा रही थी जिस पर वह हमेशा जाता था। अचानक उसे याद आया कि बीस-बाईस साल पहले एक दोस्त की दुर्घटना में मौत हो गई थी और वह उसके अंतिम संस्कार के लिए निगमघाट श्मशान घाट गया था। उसे पता था कि वह दरियागंज के दूसरी तरफ़

यमुना नदी के किनारे पर है। दिल्ली में ज्यादातर शवों का अंतिम संस्कार यहीं होता था। तो फिर वहाँ क्यों न जाया जाए?
यह विचार उनके मन में आया तो वे स्वयं आश्चर्यचकित रह गए। इस शहर में इतने बड़े-बड़े बगीचे हैं – राजघाट, इंडिया गेट जैसे विशाल मैदान हैं – ऐसे समय में उन्हें कब्रिस्तान जाने की क्या ज़रूरत महसूस हुई? कितना अजीब है!
इन्हीं विचारों के साथ वह दरियागंज में उतरा और श्मशान घाट की ओर चलने लगा। उसे रिक्शा लेना सुविधाजनक लगा। श्मशान घाट पहुँचकर वह आश्चर्यचकित रह गया। बीस साल पहले के श्मशान घाट और आज के श्मशान घाट में बहुत बड़ा अंतर था। यह इतना विशाल हो गया था कि इसे पहचानना मुश्किल था। ऐसे श्मशान घाट तैयार किए गए थे जिनमें एक बार में लगभग सौ शवों का अंतिम संस्कार किया जा सकता था। चिता को बारिश से बचाने के लिए उन पर छतें भी बनाई गई थीं। लोगों के बैठने के लिए सीमेंट और पत्थर की बेंचें, छाया के लिए छत, लकड़ी बेचने के लिए एक बड़ा क्षेत्र, पानी का नल...
वहाँ तीन शव जल रहे थे। एक शव 'श्री राम सत्य है - राम नाम नित्य है' का जाप करते हुए श्मशान घाट में प्रवेश कर रहा था। सामने यमुना नदी का विशाल जलप्रपात था। सब कुछ एक नज़र में देखते हुए, वह वहाँ पत्थर की चौकी पर बैठ गया। जलते हुए शव की गंध चारों ओर फैली हुई थी। उस जलने की गंध ने उसे हरिश्चंद्र घाट की याद दिला दी। इस गाँव में इसे निगमबोध कहते हैं - काशी में हरिश्चंद्र घाट - किसी अन्य गाँव में वैतरणी। दुनिया के सभी श्मशान घाट वास्तव में हरिश्चंद्र घाट हैं! आप किसी भी श्मशान घाट में बैठें, हरिश्चंद्र-तारामती की कहानी आपके मन से कभी नहीं निकलती।
किसी दुकान से कोई पुस्तक ढूंढकर हरिश्चंद्र कथा का मूल भाग पढ़ना चाहिए। कुछ समय पहले पढ़ी गई उस कथा की धुंधली यादों से उसका सही अर्थ नहीं समझा जा सकता।
जब वह विचारों में डूबा हुआ था, तभी श्मशान घाट के मुख्य द्वार से 'श्री राम सत्य है - राम नाम नित्य है' की आवाज़ सुनाई देने लगी। प्रतिदिन यहाँ ऐसे कितने शव आते होंगे? लकड़ी के दुकानदार से पूछोगे तो आसानी से समझ जाओगे। वह गहरी सोच में डूबा हुआ सो गया।
जब उसने आँखें खोलीं, तो उसके सामने चौक पर एक शव रखा हुआ था। चिता बनाने का काम चल रहा था। उसके साथ मौजूद पुजारी मंत्रों का जाप कर रहा था। उसने सफेद धोती और सफेद वस्त्र पहन रखे थे। दाढ़ी होने के कारण उसका चेहरा साफ-सुथरा लग रहा था। उसकी बाईं कलाई पर घड़ी बंधी थी। अन्य शवों पर अनुष्ठान करने वाले पुजारियों की तरह उसमें अशिक्षित लालच नहीं था। यह स्पष्ट था कि यह कोई विद्वान पुजारी होगा।
वह उठा और शव लेकर आए लोगों में से एक से पूछताछ की। उसका अनुमान सही निकला। वह आर्य समाजी था। मंत्रोच्चार करने वाले आर्य समाज आचार्य थे – वे दक्षिणा लेने और अनुष्ठान करने वालों में से नहीं थे। उसने प्रत्येक मंत्र का अर्थ विस्तार से समझाया, और यह बात समझ में आ गई।
जब सभी अनुष्ठान समाप्त हो गए और चिता की आग आसमान तक पहुँच गई, तो आचार्य ने सभी को जाने की अनुमति दे दी। सभी लोग वहाँ से जाने लगे।
होन्नाटी अपनी सीट से उठे और उनके पास जाकर बोले,
"आचार्यजी, मेरा एक प्रश्न है। आपको देखकर मुझे लगा कि आप इसका उत्तर देंगे, इसलिए मैं आपके पास आया हूँ।"
"ज़रूर! हमारा करोल बाग में एक कार्यालय है। आप कभी भी वहाँ आ सकते हैं! हम वहाँ खूब बातें कर सकते हैं..."
लेकिन कब्रिस्तान में पूछे जाने वाले कुछ सवालों का अर्थ समझना ज़्यादा ज़रूरी है! है ना? अगर आपको कोई समस्या हो, तो मैं कार्यालय आने के लिए भी तैयार

हूँ...
उसने एक पल के लिए हेमंत के प्रलय को देखा। फिर उसने कहा,
ठीक है! यहाँ पूछिए। लेकिन यह मत सोचिएगा कि मुझे सब कुछ पता है!" फिर मेज़बान की ओर मुड़कर उन्होंने कहा, "देखिए, भटनागर जी, मैं इन सज्जनों से थोड़ी देर बात करना चाहता हूँ। मैं बाद में रिक्शा से वापस आ जाऊँगा।"
"क्यों नहीं? हमारा ड्राइवर गाड़ी के पास आपका इंतज़ार कर रहा होगा।"
"नहीं...नहीं! आपको घर जाने के लिए कार चाहिए, है ना?"
"ठीक है - मैं बाद में कार वापस भेज दूंगा..."
नहीं! ऐसे समय में आपको कार की जरूरत पड़ेगी। आप जाइए - मैं रिक्शा से आ जाऊंगा!
भटनागर और अन्य लोगों के चले जाने के बाद, वे दोनों वहाँ पत्थर की बेंच पर बैठ गए। उनके सामने पड़ा शव जल रहा था। हॉन्नाटी ने स्पष्ट रूप से उनसे अपना प्रश्न पूछा,
मैं एक संगीतकार हूँ। मैं सितार बजाता हूँ। एक सवाल मेरे मन को परेशान कर रहा है। क्या किसी विवाहित स्त्री के साथ यौन संबंध रखना पाप नहीं है? जब मैंने यह सवाल एक विद्वान से पूछा, तो उन्होंने कहा - बलात्कार पाप है, लेकिन अगर वह आपके पास आए, तो मना करना भी गलत है। अपनी बात साबित करने के लिए उन्होंने राधा-कृष्ण के प्रेम प्रसंग का उदाहरण दिया। राधा, जो विवाहित और उम्र में बड़ी हैं, और कृष्ण, जो उम्र में छोटे हैं, के बीच के संबंध को जयदेव जैसे संत-भक्त ने आगे बढ़ाया है! मैं खुद इस उदाहरण का खंडन नहीं कर पाया हूँ - लेकिन मुझे लगता है कि इसमें कुछ गलत है। इसके बारे में और क्या कहा जा सकता है?
यह एक जाना-पहचाना सवाल रहा होगा, आचार्यजी ने धीरे से मुस्कुराते हुए कहा। उनकी उम्र भी लगभग उन्हीं के बराबर थी – यानी बयालीस वर्ष। दाढ़ी मुंडवाए आचार्यजी स्पष्ट रूप से बोलने लगे।
हम कृष्ण के बारे में किन मूल ग्रंथों से जानते हैं? महाभारत, हरिवंश, भागवत और विष्णु पुराण में राधा का कोई उल्लेख नहीं है। उनकी रचना हाल ही में हुई है। यह समझना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि उनकी रचना किसने की, कब की और किस भावना से की। इसी प्रकार, कृष्ण का सोलह हजार स्त्रियों के साथ संबंध भी हाल ही की रचना है। यह सत्य है कि मूल कथा में कृष्ण गाय चराने वाले लड़कों के साथ पले-बढ़े। एक छोटा, साहसी लड़का, जो सुंदर बांसुरी बजाता था। सभी ग्वालों की तरह, वनवासियों की तरह, सभी किसानों की तरह, वह समूह नृत्य किया करता था। अब हम इसे जनपद नृत्य कहते हैं, है ना? वह बचपन में बहुत सुंदर नृत्य करता था, गायों को खाने आने वाले जंगली जानवरों को चतुराई से भगा देता था। ऐसे लड़के से प्रेम न हो भला? सभी ग्वाले और उनके परिवार उसे पसंद करते थे। स्त्रियाँ भी उसे पसंद करती थीं। अगर आप किसी ऐसे लड़के को देखें जो हर किसी को अपना मामा, मामा, मौसी या चाची मानता है, तो क्या आपको उससे स्नेह नहीं होता, भले ही वह आपसे खून के रिश्ते से जुड़ा न हो? मैं पूछता हूँ, क्या यह सच है या नहीं?
बिल्कुल सही!
यह एक ऐतिहासिक तथ्य है! इसके बाद, इस देश के अधिकांश हिस्सों पर नवाबों और शाहों का शासन रहा। आपने पढ़ा होगा कि उनके अधिकांश राजा स्त्रियों के प्रति आसक्त थे। डेल कार्नेगी नामक लेखक ने अपनी पुस्तक "लिटिल नोन फैक्ट्स ऑफ वेल-नोन पीपल" में इस बारे में लिखा है। इसमें उल्लेख है कि हैदराबाद के निज़ाम ने अपने हरम में पाँच सौ स्त्रियाँ रखी थीं। क्या आपने फतेहपुर सिकरी में अकबर का महल देखा है?
मुझे याद है कि मैं कांति के साथ आगरा-फतेहपुर-सिकरी घूमने गया था।

वहाँ, अकबर अपने खाली समय में अपने अन्य अधिकारियों के साथ सारिपात खेला करते थे – इसके लिए रंग-बिरंगी टाइलों से बना एक भव्य सारिपात प्रांगण है – याद है? वहाँ, सोंगता की जगह रंग-बिरंगे कपड़े पहने दासियाँ खेल में शामिल होती थीं और जैसे ही दान आता, ये लड़कियाँ एक खाने से दूसरे खाने में चली जाती थीं। अकबर की सीट और उनके अन्य खिलाड़ियों की सीट में अंतर होता था। अकबर ऊँची सीट पर बैठते थे। सम्राट के साथ खेलते समय, दूसरों को हमेशा हार माननी पड़ती थी! सम्राट को हराना सिंहासन का अपमान माना जाता था! यानी, अंततः आठ दासियाँ अकबर के दरबार में प्रवेश करती थीं। सम्राट का पसंदीदा सरदार जिसे सारिपात खेलने का अवसर मिलता था, उसे सोंगता की जगह आठ लड़कियों के साथ सम्राट को देखना पड़ता था। आप खुद ही अनुमान लगा सकते हैं कि इस तरह सम्राट ने अपने हरम में कितनी स्त्रियाँ जमा की होंगी। इस तरह, युवा और वृद्ध नवाब वेश्यालयों से अपनी ताकत के अनुसार लड़कियाँ इकट्ठा करते थे! इन स्त्रियों की रक्षा के लिए, बलवान युवकों को चुना जाता था और उन्हें सांडों की तरह नपुंसक बना दिया जाता था। ताकि वेश्यालयों की औरतें इन आदमियों का फ़ायदा न उठा सकें!"
हेमंत ध्यान से सुन रहा था।
जब राजा और अधिकारी इस तरह व्यवहार करते हैं, तो आम लोगों का मन कैसे काम करेगा? हर किसी के मन में यह लालसा भरी आशा होती है कि उन्हें भी वही शांति मिले जो उनके सम्राट को मिलती है। उस समय के हिंदुओं में एक प्रकार का अपमान व्याप्त था। हरिकथादास, जो गाँव-गाँव जाकर कीर्तन और उपदेश देते थे, ने इस अपमान के प्रति कम से कम प्रतीकात्मक रूप से प्रतिकार के रूप में कृष्ण की सोलह हजार गोपियों की रचना की। आप अपने सुलतान के बारे में क्या कहते हैं? उसके पास सौ पत्नियों का वेश्यालय है? – उसने पाँचे सौ पत्नियाँ रखी हैं? हमारे भगवान को देखिए! उन्होंने सोलह हजार स्त्रियों से विवाह किया था! हमें दिखाइए कि सुलतान सोलह हजार पत्नियों के साथ कहाँ है, चलिए देखते हैं! – हरिकथादास का यह प्रश्न मुस्लिम समुदाय के लिए अनुत्तरित रहा, जो उपवास कर रहा था और अशिक्षित था, और वह भी कृष्ण की महानता को स्वीकार करता था! हरिकथादास ने कृष्ण को एक ही समय में सोलह हजार स्त्रियों के साथ प्रेम संबंध रखने की शक्ति भी प्रदान की। इन सभी गोपियों के प्रतिनिधि के रूप में, राधा का चरित्र दिन-प्रतिदिन विकसित होता रहा। ऐसा कहा जाता है कि राधा नाम ब्रह्मांड पुराण या ब्रह्मवर्तत पुराण में मिलता है। हालांकि, इस चरित्र का विकास इसी काल में हुआ। वह परिपक्व है - कृष्ण से भी बड़ी। हिंदू धर्म में अपने से बड़ी स्त्री के साथ यौन संबंध बनाना बिलकुल भी उचित नहीं है। हिंदुओं का मानना है कि अपने से बड़ी स्त्री के साथ यौन संबंध बनाने से आयु कम हो जाती है और छोटी स्त्री के साथ यौन संबंध बनाने से आयु बढ़ जाती है। यह बात वैज्ञानिक है या अवैज्ञानिक, यह यहां प्रश्न का विषय नहीं है।
बच्चे का सूरज, प्रेतबाधित धुआँ और बूढ़ी औरत का ताड़ का पानी
रात में दूध पीना और कुछ न खाना उसकी उम्र को दिन-ब-दिन कम करता जा रहा है।
पुराना सूरज, यज्ञ की अग्नि का धुआँ, युवती, शुद्ध जल
रात में दूध न पीने से जीवन और बुद्धि में दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती है।
सुबह की धूप में तपना, शव का धुआँ साँस लेना, वृद्ध स्त्री के साथ यौन संबंध बनाना, गंदा पानी पीना, रात को दही-चावल खाना – ये वो कारण हैं जिनसे जीवन प्रतिदिन छोटा होता जाता है। इसके विपरीत, शाम की धूप में बैठना, यज्ञ का धुआँ साँस लेना, युवा स्त्री के साथ यौन संबंध बनाना, शुद्ध जल पीना, रात को दही-चावल खाना – ये वो कारण हैं जिनसे जीवन प्रतिदिन बढ़ता जाता है – यही इसका अर्थ है। उन सुलतानों की रुचियों को ध्यान में रखते हुए कृष्ण के वृद्ध स्त्री के साथ

प्रेम प्रसंगों का वर्णन किया गया है! मुझे एक और उदाहरण याद आता है जिसमें आपसे बड़ी उम्र की स्त्री के साथ यौन संबंध बनाने की बात कही गई है...
एक क्षण के लिए उसकी निगाहें सामने चिता पर पड़े शव पर टिक गईं, जिसका आकार आग से मिटता जा रहा था। फिर वह उसकी ओर मुड़ा और बोलने लगा,
``प्रेतधूमश्च आयुक्षिना – लेकिन आप यहाँ बैठकर इस प्रश्न का उत्तर जानना चाहते हैं, है ना? आपकी इच्छा का भी कुछ अर्थ है! रहने दीजिए। आप ओडिपस नाटक की कहानी जानते हैं, है ना?"
``हां। मुझे पता है..." होन्नाटी ने जवाब दिया।
"देवता ने यह दृष्टि दी थी कि तुम्हारा पुत्र तुम्हें मार डालेगा और तुम्हारी पत्नी, यानी अपनी माता से विवाह करेगा। इसलिए राजा ने पुत्र को किसी और के हवाले कर दिया। लेकिन उसने पुत्र को मारने के बजाय किसी और के हवाले कर दिया। पुत्र बड़ा हुआ - उसने अपने बूढ़े पिता को मार डाला - और अपनी पत्नी, यानी अपनी माता से विवाह कर लिया। इस कहानी में दो बिंदुओं पर विचार करना आवश्यक है। भारत में कौन सी स्त्री अपने पति के हत्यारे से विवाह करेगी? साथ ही, उसने अपने से कम से कम बीस वर्ष बड़ी स्त्री से विवाह कैसे किया? वह एक ऐसे युवक से विवाह करने के लिए कैसे राजी हो गई जिसने अभी-अभी संबंध शुरू किया था? यह कहानी भारत में असंभव है। यह संबंध ग्रीस और आसपास के रेगिस्तानों की संस्कृतियों में स्वीकार्य था। भारतीय संस्कृति में अपने से बड़ी स्त्री को पत्नी या प्रेमिका के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता था। बड़ी राधा का छोटे कृष्ण के साथ प्रेम प्रसंग भारतीय संस्कृति में बिलकुल भी प्रचलित नहीं है।" "जयदेव जैसे कवि पर इस भिन्न संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अलंकरण और कल्पना की शक्ति कविता की दृष्टि से बहुत सुंदर हो सकती है। लेकिन कृष्ण के संदर्भ में इसका उपयोग करके उन्होंने एक ऐतिहासिक चरित्र के साथ अन्याय किया है, इसमें कोई संदेह नहीं है!"
"क्या आप कृष्ण को एक ऐतिहासिक व्यक्ति मानते हैं? भगवान तो नहीं मानते?"
वे एक ऐतिहासिक व्यक्ति थे - महान आध्यात्मिक साधना करने वाले पहले महान राष्ट्रवादी! बाद में, कुछ लोगों ने उन्हें देवता बना दिया। उन्होंने उन पर जादू-टोना, तंत्र-मंत्र और चमत्कार करके उनकी ऐतिहासिक शक्ति को नष्ट कर दिया। बाद में, नवाबों, सुलतानों और सम्राटों की संस्कृति में, उन्हीं सुलतानों की तरह, उन्होंने उन्हें सोलह हजार महिलाओं के वेश्यालय का मालिक बना दिया और फिर उन्हें आज़ाद कर दिया! हम अपने इतिहास को अपने पतन या उत्थान की तरह ही चित्रित करते हैं! हम इसी से अपने देवताओं का भी निर्माण करते हैं!
उन्होंने बोलना बंद कर दिया।
मेरे सामने पड़े शव पर मौजूद चर्बी दीपक की तरह जल रही थी और धीरे-धीरे बुझ रही थी।
होन्नाटी की निगाहें उस पर एक पल के लिए टिकी रहीं। फिर उन्होंने पूछा,
"क्या आपका मतलब यह है कि इस अवधि के दौरान विकसित नृत्य, गीयन, नाटक और साहित्य की सामग्री इतनी निम्न स्तर की है?"
"आप खुद बताइए - इसमें आपको और कौन-कौन सी उच्च कोटि की भावनाएं, विचार और संवेदनाएं व्यक्त होती नज़र आती हैं?"
होन्नाटी सोच में डूबा हुआ था। उसे उनके प्रश्न का खंडन करने के लिए कोई उदाहरण सूझ नहीं रहा था। उसकी निगाहें एक बार फिर उसके सामने जलती हुई चिता पर टिकी हुई थीं।
उसने घड़ी देखी, खड़ा हुआ और बोला,
"मुझे अब जाना होगा। आपसे बात करके अच्छा लगा। आप कभी भी आ सकते हैं। मुझे आपसे बात करके खुशी होगी। यह हमारे कार्यालय का पता है—" उन्होंने पत्ता कार्ड देते हुए कहा।

लेकिन फिर भी उसका वहां से हिलने का मन नहीं हुआ। "तुम बैठ जाओ—मैं जा रहा हूँ—" कहते हुए वह वहां से चला गया।

■

वह वहाँ एक घंटे तक बैठा रहा। उसे भूख लगी थी, लेकिन वह उठा नहीं। अपने विचारों को शांत करने के लिए यही सही जगह थी – यहाँ से वह कहीं भी जाता, उसकी सोचने की शक्ति मंद पड़ जाती। उसने फाटक के बाहर एक छोटी सी दुकान से दो केले और चार बिस्कुट खरीदे, उन्हें पेट भर खाया, वहाँ के नल से पानी पिया और फिर से पत्थर की बेंच पर बैठ गया। जिस शव को पुजारियों ने अग्नि मंत्र दिया था, उसका कोई नामोनिशान नहीं था। एक नया शव आ चुका था – उसे भी कोने वाले चौक पर जलाने की तैयारी चल रही थी। सूर्य पश्चिम की ओर अस्त हो रहा था। यमुना नदी अपनी किरणों के कारण और भी विशाल प्रतीत हो रही थी।

यमुना नदी पर पड़ती किरणों को देखते-देखते उन्हें नींद आ गई। गहरी नींद!

जब वह जागा तो सुबह के 4:30 बज रहे थे। एक शव सहित भारी भीड़ जोर-जोर से जप कर रही थी, "श्री राम ही सत्य हैं - राम नाम शाश्वत है।"

पास ही में एक गोसावी पुराने हारमोनियम पर बेसुरी धुन में एक गीत गा रहे थे, जिसके बोल कुछ इस तरह थे, "जीवन के चार दिन होते हैं - हर पल हज़ार नट यहां आते हैं - हज़ार नट यहाँ से चले जाते हैं।" लेकिन इस गीत के भाव ने हेमंत के हृदय को छू लिया। वह भी वही हारमोनियम लेकर इस गीत को और अधिक प्रभावी ढंग से बजाना चाहते थे। उनके बगल में बैठकर उन्होंने हारमोनियम मांगा, और हेमंत ने भी बड़ी उत्सुकता से उन्हें दे दिया।

हेमंत ने धुन को अपनी इच्छानुसार समायोजित किया और उसी भैरवी राग में वही गीत गाना शुरू कर दिया, अपनी गायकी का प्रदर्शन करते हुए और आनंदपूर्वक आलाप बजाते हुए। बीच-बीच में सारेगम की ध्वनि और विभिन्न प्रकार के वाद्ययंत्रों की छटा बिखेरते हुए!

हेमंत के वादन और गायन से प्रभावित होकर गोसावी उनकी प्रशंसा करते हुए कह रहे थे, "बहुत बढ़िया! बहुत बढ़िया!" इससे हेमंत और भी उत्साह से गाने लगे। वे कविता को विभिन्न तरीकों से और भी रोमांचक बनाने का प्रयास कर रहे थे।

वह करीब बीस मिनट से गा रहा था। अंत्येष्टि के लिए आए तीस-चालीस लोग उसके चारों ओर खड़े होकर गाना सुन रहे थे।

हेमंत ने गाना खत्म करके हारमोनियम एक तरफ रख दिया, तभी उसे अचानक यह एहसास हुआ कि गोसावी गाने के भाव को ईमानदारी से व्यक्त कर रहा था, लेकिन भाव के बजाय उसने केवल धुन और लय की प्रतिभा का प्रदर्शन किया! और यह उसकी जगह नहीं है।

हेमंत को अपने इस फिजूलखर्ची पर शर्मिंदगी महसूस हुई। वह झटपट उठा और निकल गया। दरियागंज के पास कुछ देर इंतजार करने के बाद उसे एक बस मिल गई। घर की ओर चलते हुए उसका मन कुछ हलका महसूस कर रहा था।

वह करीब छह बजे घर पहुँचा। उसके पिता हमेशा की तरह टहलने गए हुए थे। इस दौरान कांति ने तीन बार आवाज़ लगाई। हालांकि उसकी मां ने उसे यह बताया, फिर भी वह चुप रहा। हाथ-पैर धोकर बाहर आने के बाद उसने अपनी मां से कहा,

मुझे भूख लगी है। मुझे कुछ खाने को दो..."

मां ने उसके सामने दही-पोहा-पुडिंग की चटनी और एक कटा हुआ सेब रख दिया। उसने पोहा खाना शुरू कर दिया।

स्वयं माँ ने कहा,

उनके पति दिल्ली आए थे – जब आपने कहा कि आप उनसे मिले थे, तो बेचारी महिला उनके बारे में जानने के लिए उत्सुक होगी! क्यों नहीं – बाबा, आपको खुद

पति-पत्नी के बीच की दूरी कम करने के लिए कुछ करना चाहिए! वह यहाँ भी है – और यहाँ भी! आप इसे किस तरह की दुनिया कहेंगे?
हेमंत ने कुछ नहीं कहा। अपनी माँ द्वारा लाई गई चाय पीने के बाद, वह लाउंज में गया और उसकी फैक्ट्री के फोन पर डायल किया। जब उसने उसकी आवाज़ पहचानी, तो उसने कहा,
मैं 7:30 बजे वहाँ पहुँच जाऊँगा। मैं आपसे आधे घंटे बात करना चाहता हूँ। चलिए बाहर चलते हैं और बात करते हैं..."
उसने सोचा था कि इस बार शीतल उसके साथ होगी। कांति ने कन्नड़ में पूछा,
"आज दोपहर तुम कहाँ गए थे?"
क्या मुझे यही कहने के लिए यहां आना पड़ा है?
मैं तब तक फ़ोन नहीं काटूंगा जब तक आप मुझे यह नहीं बता देते..."
उसकी माँ बैठक में थी। वह उसे यह नहीं बताना चाहता था कि वह सारा दिन कब्रिस्तान में था। उसने कहा,
``गुरुजी के घर चलते हैं!"
"झूठे! मैं तुम्हें ढूंढने ही वहाँ गई थी। तुम्हारी माँ ने भी मुझे बताया था कि तुम सितार घर पर ही छोड़ आए हो!" उसने कहा।
"चलिए बात करते हैं - अलविदा -" उसने कहा और रिसीवर नीचे रख दिया।
उसने बताया कि जैसे ही वह कार में बैठा, उसने दरवाजा बंद किया और इंडिया गेट की ओर गाड़ी चला दी।
"ठेकेदार कल शाम तक पेंटिंग का काम पूरा कर देगा और घर की चाबियां सौंप देगा! फर्नीचर का काम भी हो चुका है। फर्नीचर विक्रेता ने कहा कि पेंटिंग का काम खत्म होते ही दो घंटे में फर्नीचर लगा दिया जाएगा। उसके बाद, हम मेरे घर पर मिलेंगे! शीतल को भी धन्यवाद देना चाहिए! अरे हाँ! तुम आज दोपहर कहाँ गए थे?" उसने अपना हाथ उसकी गोद में रखते हुए कहा।
"सुबह से शाम तक, निगमबोध घाट घूमने के लिए सबसे अच्छी जगह है..."
"क्यों? क्या कोई मर गया, दोस्त हो या दुश्मन? मुझे और किसी चीज़ से डर नहीं लगता... लेकिन मुझे लाशों से और लाशों को जलाने से बहुत डर लगता है!"
उसे लगा कि यह सच है। उसने अपना सिर घुमाया और उसकी ओर देखा।
स्ट्रीटलाइट में उसका चेहरा और शरीर कोमल और दयालु लग रहे थे। उसने अभी बोलने का विचार त्याग दिया और गाड़ी के रुकने का इंतज़ार करने लगा।
उसने कहा,
तुम कुछ कहने वाले थे, है ना? लेकिन तुम कुछ नहीं कह रहे हो!..."
"गाड़ी रुकने पर बात करते हैं। गाड़ी चलाते समय ध्यान भटकना ठीक नहीं है!" उसने कहा।
उसने इंडिया गेट परिसर में सड़क से कुछ दूरी पर कार रोकी और उसके पास जाकर उसकी गर्दन में बाहें डाल दीं। कार का नीला शीशा और चारों ओर का सन्नाटा –
उसकी अंतरंगता को बढ़ावा दिए बिना, उसने सीधे बोलना शुरू कर दिया।
``रवींद्र दिल्ली आए थे। उन्होंने गेस्ट हाउस से फोन किया था। कल रात उनसे मुलाकात हुई और हमने साथ में खाना खाया। उनसे मिलने के बाद, उनके प्रति मेरे बड़े भाई जैसे भाव और भी प्रबल हो गए। आज पूरे दिन श्मशान घाट में बैठे-बैठे मैं उन्हीं के बारे में सोचता रहा। जब तक हमारे बीच शारीरिक संबंध पूरी तरह से टूट नहीं जाते, तब तक हमारे बीच स्नेह संभव नहीं है। जो हो गया सो हो गया। कम से कम इसके बाद तो हमें यह रिश्ता तोड़ देना चाहिए! जहाँ तक मेरा सवाल है, यह रिश्ता तो पहले ही टूट चुका है!..."
हेमंत की स्पष्ट बातों को सुनकर वह अवाक रह गई। हालांकि हेमंत पहले भी कई बार इस तरह बोल चुका था, लेकिन उसने कभी इतने स्पष्ट शब्दों में बात नहीं की

थी। उसने कहा, "कल जब वह रवींद्र से मिला, तो उसे फिर से वही झटका लगा!"
कुछ क्षण खामोशी में बीत गए।
उसने अपने भटकते मन को काबू में रखा। वह स्टीयरिंग व्हील पर सिर रखकर थोड़ी देर बैठना चाहती थी। लेकिन ऐसा करना गुनाह कबूल करने जैसा होता। यह पहली बार नहीं है जब वह इस तरह बातें कर रहा है! मैं उसे पहले भी कई बार सड़क पर ले जा चुकी हूँ!...
उसने आत्मविश्वास से उसकी ओर मुड़कर कहा,
"अगर तुमने मुझे इस तरह अपमानित न किया होता, तो क्या तुम्हें ऐसा लगता कि तुममें किसी तरह की हिम्मत की कमी है?"
इस झटके से वह थोड़ा हिल गया। लेकिन उसने जल्दी ही खुद को संभाला और कहा,
मुझे पता है कि अगर मैं तुम्हारा अपमान करता हूँ, तो मेरा भी अपमान होगा! यह दुविधा मेरे मन में पहले भी कई बार उठ चुकी है। लेकिन इस बार यह निर्णायक रूप से सामने आई है! हम दोनों को मिलकर इसे खत्म करना होगा, इसीलिए मैं आज तुमसे मिलने आया हूँ!
आप आधुनिक भारत के नागरिक हैं, है ना? मैं भी हूँ। मैं भी एक स्वतंत्र व्यक्ति हूँ – हमने इस बारे में पहले भी बात की है! हाँ, सही कहा ना?
वह असमंजस में है और कहता है, "हाँ!"
"देखो ये—" उसने दोनों हाथों से उसका चेहरा अपनी ओर घुमाते हुए कहा, "मैं तुम्हारा दर्द भी समझती हूँ। मैंने रविंद्र को तलाक नहीं दिया—शायद तुम्हें इसी बात से दुख हो रहा है। मैं कल अर्जी दाखिल कर दूंगी और छह महीने में तलाक मिलने के बाद आज़ाद हो जाऊंगी। तब कम से कम तुम मुझे एक स्वतंत्र व्यक्ति तो मानोगे, या नहीं?"
"रवींद्र की पत्नी होने के बावजूद, मुझे आपको एक स्वतंत्र व्यक्ति मानने में कोई आपत्ति नहीं है। आज भी मैं आपको एक स्वतंत्र व्यक्ति ही मानता हूँ! लेकिन मेरा हृदय आपके साथ शारीरिक संबंध बनाने के लिए तैयार नहीं है। इसमें तलाक का कोई सवाल ही नहीं उठता।"
"तो भले ही मेरा तलाक हो गया हो, फिर भी आप मुझे रविंद्र की पूर्व पत्नी ही मानते हैं, है ना?" उसने कड़वाहट से पूछा।
कुछ देर सोचने के बाद हेमंत ने कहा,
"यह सच है। रविंद्र की पत्नी होने के अलावा मेरे लिए आपसे कोई रिश्ता रखना नामुमकिन है। हमारी पहली नज़दीकी मुलाकात के दौरान, आपके गले में लटके मंगलसूत्र ने मेरे शरीर पर एक निशान छोड़ दिया था। आज न तो वह निशान है और न ही आपके गले में मंगलसूत्र। फिर भी, वह याद मेरे लिए गुनाह बन गई है और मेरे दिल को जला रही है। आज आप अपना मंगलसूत्र उतारकर खुद को मिस कहती हैं। कल आप अनूप के सामने भी खुद को कुंवारी कहेंगी। लेकिन मेरे दिल में, किसी दूसरी औरत के साथ, और वह भी आपके बड़े भाई की पत्नी के साथ, शारीरिक संबंध बनाने का गुनाह जल रहा है!"
उसे भी उसके शब्दों की चुभन महसूस हुई। इसका उपाय बताते हुए उसने जोर से हंसते हुए कहा,
"हेमंत, तुम नाटक कर रहे हो—और इसे छुपाने की अक्ल भी नहीं है! इतनी कड़वाहट से बोलने के बावजूद भी तुम मुझे एकवचन में संबोधित करते हो!" उसने आवेग में आकर अपने होंठ उसके होंठों से दबाते हुए कहा।
हेमंत पत्थर की तरह वहीं बैठा रहा, कोई प्रोत्साहन नहीं दिया। यह महसूस करते हुए भी उसने अपने होंठ दबाए रखे। फिर भी, जब वह नहीं माना तो उसे अपमानित महसूस हुआ और वह पीछे हट गई।
हेमंत ने शांत भाव से कहा,

"एकवचन संबोधन की व्याख्या उसी तरह करने का कोई कारण नहीं है। घर पर हम अपनी मां, बहन और दादी को एकवचन में ही पुकारते हैं। मैं अब भी तुम्हारे लिए भी सरल स्नेह रखना चाहता हूं।"
उसे ऐसा लगा जैसे उसके साथ पूरी तरह से धोखा हुआ हो। उसने मेरा पूरा फायदा उठाया! कभी-कभी मुझे उसकी आवाज़ सुनाई देती थी। लेकिन वह पहले कभी इतना आक्रामक नहीं हुआ था। जितना वह चाहता था उतना फायदा उठाने के बाद, अब उसे अपनी मां, दादी और बहन की याद आने लगी! एक पल के लिए, उसे लगा जैसे वह खुद पर से नियंत्रण खो रही हो। उसके दिल में छिपा हुआ अज्ञात दुख उसके गले में अटक गया। दुख, या अपमान? क्यों नहीं—इसके सामने मानसिक कमज़ोरी दिखाना। ठीक नहीं—उसने अपने मन को चेतावनी दी।
फिर उसने गंभीरता से कहा,
आपने मुझे ये बात दो साल पहले क्यों नहीं बताई? ये सब मेरी तरफ से है—गलत मत समझिएगा—मैं और कुछ नहीं कहना चाहता। बाकी बातें तो बहुत मामूली हैं! ये बात अब कहना, जब मेरी भावनाएं इतनी गहरी हैं, मेरी उम्मीदें इतनी ऊंची हैं, तो ये कहना है—आपने मुझे ये बात पहले क्यों नहीं बताई? खैर—छोड़िए—अब जब मैं समझ गया हूं कि आप अचानक इतने उग्र क्यों हो गए हैं, तो क्या आप मुझे बताएंगे?
मैंने ये सब जानबूझकर नहीं किया। मैंने बनारस के हरिश्चंद्र घाट पर शव को जलते हुए देखा – तभी मुझे हरिश्चंद्र-तारामती की वो कहानी याद आई जिसमें श्मशान घाट के सामने शैव का अंतिम संस्कार किया गया था। उस कहानी में उसका मंगलसूत्र – छोड़ो उसे। बाकी बातें ज़्यादा माएने नहीं रखतीं। कल जब मैं रविंद्र से मिला, तो अचानक मैंने तुम दोनों की तुलना हरिश्चंद्र-तारामती से कर दी। तुम्हें अंदाजा भी नहीं है कि आज श्मशान घाट में मैंने कितना दर्द सहा है। मैं सच कहता हूं – मैंने ये सब बिना सोचे-समझे नहीं किया!" उसने मना किया, लेकिन उसकी आवाज़ में उदासी झलक रही थी।
ठीक है! मुझे यह भी पता है कि भीख मांगने से प्यार नहीं मिलता! मुझे उस तरह का प्यार भी नहीं चाहिए। मेरा दरवाज़ा तुम्हारे लिए हमेशा खुला है। लेकिन अगर तुम बार-बार उसी तरह की मानसिक क्रूरता दिखाकर मेरे दिमाग से खेलते रहोगे, तो मैं इसे बर्दाश्त नहीं करूंगी! मैंने जानबूझकर जलदबाजी में घर बनवाया था! ठीक है! मैंने अपना मन कठोर कर लिया है – मैं इसे बर्दाश्त कर लूंगी –" उसने कहा और कार स्टार्ट कर दी।
वह तुरंत जाने को तैयार नहीं था। लेकिन वह यह भी नहीं कह सका, "चलिए थोड़ी देर रुककर बात करते हैं।" अगर वह उससे पूछती कि उसे और क्या कहना बाकी है, तो वह क्या कहती?
इतने समय में, वह गाड़ी को सड़क पर ले आई थी। शायद यह उनकी आखिरी मुलाकात होगी, इस विचार से उसका मन व्याकुल था। गाड़ी अकबर रोड पर चल रही थी। उसकी निगाहें सामने सड़क पर टिकी हुई थीं। उसे लगा जैसे वह उसकी ओर मुड़कर कुछ कहेगी। लेकिन उसने उसकी ओर देखा तक नहीं। उसका दिल दुख से भर गया।
जैसे ही कार वसंत विहार बस स्टॉप पर रुकी, वह बाहर निकला और बोला,
फिर मिलेंगे...
उसने इस पर कुछ नहीं कहा। उसने उस समय उसकी तरफ देखा तक नहीं। उसने तुरंत कार स्टार्ट की और तेज़ी से चली गई। पल भर में उसकी कार सड़क पर मौजूद अन्य वाहनों में मिल गई।

■

खाना खाने के बाद बिस्तर पर लेटते ही उसे हलकापन महसूस हुआ। वरना, वह उससे और कैसी प्रतिक्रिया की उम्मीद कर सकता था? कुछ ही पलों में वह गहरी

नींद में सो गया। उसे धुंधला सा याद था कि नींद में उसने दो बार अपना बिस्तर बदला था। जब वह जागा, तो खिड़की के पर्दों से कमरे में रोशनी आ रही थी।
मां की दी हुई चाय पीने के बाद उसके मन में यह सवाल उठा कि अब आगे क्या करे। इसके बाद उसने शीतल के घर जाना बंद कर दिया। कांति का स्नेह भी पूरी तरह टूट चुका था! - इस विचार से वह बहुत दुखी हुआ। वही तो उसे दिल्ली लाई थी - संगीत जगत में इस मुकाम तक पहुंचाने का श्रेय उसी को जाता है। मैं उसके स्नेह को कैसे ठुकरा सकता था? लेकिन वह सिर्फ दोस्ती के लिए तैयार नहीं है - अब मैं क्या करूं? मन से तो उसने खुद को संभाला, लेकिन दिल का दर्द शांत नहीं हुआ।
उसे याद आया कि कल उसने उससे पूछा था – तुमने मेरे लिए इतना सब कुछ किया और फिर ऐसा बर्ताव क्यों किया? यह याद आते ही वह ज़मीन पर गिर पड़ा। लेकिन उसने कहा, इसमें क्या बुराई है? यह सोचते हुए उसका दिमाग हिसाब-किताब में लग गया। अगर एक हज़ार रुपये प्रति माह भी लें, तो बाईस महीनों के लिए बाईस हज़ार रुपये – क्या इसमें पांच हज़ार रुपये – बनारस जाने में लगे तीन हज़ार रुपये – हरिशंकर के मनोरंजन पर खर्च हुए तीस हज़ार रुपये भी जोड़ दें? अगर इसमें दूसरे खर्चे भी जोड़ दें, तो हिसाब लगभग सत्तर हज़ार रुपये हो जाता है। उसने यह निष्कर्ष निकाला कि उसे बैंक में जमा अपनी सावधि जमा से सत्तर हज़ार रुपये निकालकर उसे दे देने चाहिए।

■

शीतल के घर की अव्यवस्था से तो कांति को न सिर्फ चिढ़ थी, बल्कि अपने स्वतंत्र घर में रहने की उसकी इच्छा भी प्रबल थी। वह अपने कारोबारी दोस्तों को अपने घर बुलाकर भव्य पार्टियां देना चाहती थी, जहां वे सब मंत्रमुग्ध हो जाएं। अगर हाल ही में दिल्ली के सांस्कृतिक परिदृश्य में उसे जो स्थान मिल रहा है, उसके अनुरूप उसका घर न होता तो भला कौन उसे स्वीकार करता? हर परिस्थिति में अपने भाई का पता बताने वाली उस स्वतंत्र व्यक्तित्व वाली महिला को भला कौन स्वीकार कर सकता है?
हेमंत के अचानक बदले हुए व्यवहार से उसकी अपने घर पर उससे मिलने की इच्छा चकनाचूर हो गई। उसने खुद को समझाया कि किसी के जीवन से किसी दूसरे के जीवन पर कोई असर नहीं पड़ता—ऐसा रिश्ता उस शाम की पार्टी पर खर्च किए गए पैसों के लायक था!
उसने एक गढ़वाली महिला को काम पर रखा था जो घर के सारे काम करती थी और दोनों दिन नाश्ता भी बनाती थी। चूंकि वह दो-तीन और घरों में काम कर रही थी, इसलिए वह उसे सिखाने में समय बर्बाद नहीं करना चाहती थी। नए घर में सारी व्यवस्थाएं करने के बाद, जिस दिन उसे जाना था, उससे दो दिन पहले ही उसने उससे अपने रिश्ते की बुनियाद ही बदलने को कहा! पूरे दिन एक ही सवाल उसे परेशान करता रहा, आखिर मुझे अभी नए घर में क्यों जाना चाहिए?
लेकिन अगले ही दिन उसने खुद को संयमित कर लिया। उसने खुद को चेतावनी दी – मैं एक नए घर में रहने जा रही हूँ, सिर्फ अपने लिए – किसी और के लिए नहीं!
शीतल के साथ नया घर खरीदने में एक हफ़्ता बीत गया। अगले एक-दो दिन घर को नई चीज़ों से सजाने में लगे। उसके बाद, चारों ओर से उसे घोर अकेलापन घेर लिया। हमें धोखा दिया गया – हम पर नैतिक भ्रष्टाचार का निराधार आरोप लगाया गया – तुम मेरी भाभी की जगह पर हो, यानी मेरी मां की जगह पर – तुमने मुझे दो साल तक पाप के दलदल में धकेल दिया – यही उसका इशारा था! हालांकि उसने ये सब साफ़-साफ़ नहीं कहा, लेकिन उसका इरादा यही था! अगर ये सच भी है कि मैंने पहल की, तो क्या उसने भी अगले दो साल तक उतनी ही शिद्दत से पहल नहीं

की? तो, अगर ऐसे रिश्ते में पुरुष ने पहल की, तो क्या ये माफ़ करने योग्य है; और अगर महिला ने पहल की, तो क्या ये पाप है?
उसके मन में एक बार फिर एक सवाल उठ खड़ा हुआ – मैं इस आदमी के साथ इतनी उलझ क्यों गई? दिल्ली में मुझे कोई दूसरा प्रेमी क्यों नहीं मिला? क्या मैं उसके संगीत से मोहित हो गई थी?
एक दिन वो सोचती रही – हाँ – मैं उसके सितार की ओर आकर्षित हो रही थी। इसमें क्या खास बात है? हमें सितार क्यों नहीं सीखना चाहिए? इससे मन को सुकून मिलेगा। और तो और, संगीत के क्षेत्र में आज जो मुकाम हमें मिल रहा है, उसे भी एक नया आयाम मिलेगा! उसने एम.टेक, एमबीए आदि की डिग्रियाँ हासिल कीं और सारा ज्ञान संगीत की धुन पर बर्बाद कर दिया। मैं बिना किसी डिग्री के अपना कारोबार अच्छे से चला रही हूँ! अगर मैं दिन में दो-तीन घंटे सितार को दूँ, तो क्या मैं दो-तीन साल में सितार की तैयारी नहीं कर पाऊँगी? पिछले एक महीने से इस विजय मिश्रा के साथ अभ्यास करने के बाद, क्या मैं एक दिन दिल्ली के रोज़ पेटा होटल के एक छोटे से हॉल में प्रतिष्ठित संगीत प्रेमियों के सामने सितार कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं कर पाऊँगी? टीवी, रेडियो, कैसेट – हरिशंकर भी इस मामले में हमारी मदद कर सकते हैं!
वह तीन दिन तक इसी दिवास्वप्न में डूबी रही। चौथे दिन, दोपहर का भोजन करने के बाद जब वह सो रही थी, तो उसने एक सपना देखा। सपने में वह बड़ी खूबसूरती से सितार बजा रही थी और हेमंत उसे हाथ पकड़कर सितार के बारे में निर्देश दे रहा था। वह ठीक उसी समय जाग उठी जब वह सोच रही थी कि सितार बजाना महत्वपूर्ण नहीं है – एक-दूसरे का हाथ पकड़कर बैठना कितना आनंददायक है। तीन दिन से उसके दिल में बसी खुशी पूरी तरह से नष्ट हो गई। उसके मन ने उसे स्पष्ट रूप से बताया – सितार सीखना असंभव है!
उस शाम शीतल अपने घर गई और कांति अपने घर। शाम को टीवी देखते हुए कांति को लगा कि शीतल का अकेलापन कुछ हद तक कम हो गया है। क्या उसे इस अकेलेपन से बचने के लिए संगीत जगत की जानी-मानी हस्तियों को पार्टी देनी चाहिए? बाद में उसे याद आया कि शीतल हमेशा पार्टियों के बारे में कहा करती थी,
"पार्टियां तो बस पैसे बर्बाद करने का खेल हैं! लोग आते हैं, खाते-पीते हैं और पेट भर लेते हैं! जब तक कोई और अपने घर पर पार्टी नहीं करता, हम अपने घर पर रहते हैं और वे अपने घर पर! ये कैसी कंपनी है?"
शीतल की बात भी सच थी। उसे अनुप की बहुत याद आ रही थी। काश, वह यहाँ होता! तो यह अकेलापन न रहता। उसमें भी दिल्ली का आकर्षण है। लेकिन गाँव के स्कूल में पढ़ने के कारण उसे मैसूर के इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला लेना पड़ा! बैंगलोर के स्कूल में वह कितनी अच्छी अंग्रेजी बोलता था! उस गांधी स्कूल में जाने के बाद उसकी अंग्रेजी कितनी बिगड़ गई! कहते हैं मातृभाषा! कहते हैं क्षेत्रीय भाषा! कहते हैं वह कन्नड़ भी बहुत अच्छी बोलता है! लेकिन यहाँ के इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला लेने का कोई फायदा नहीं हुआ! दिल्ली आने पर हेमंत का स्नेह मिलेगा, ये सब उसकी सारी उम्मीदें अब बेकार साबित हो गईं।
दरअसल, अनुप के लिए अपने मन में होन्नाटी मास्टर की जगह हेमंत अंकल की छवि बनाना मुश्किल नहीं था। उसे यह समझाना आसान था कि अगर मम्मी को बिना किसी अपेक्षा के मदद करने वाला अंकल न होता, तो मम्मी इतनी बड़ी न हो पातीं। इसके अलावा, उसे यह भी समझाया जा सकता था कि मम्मी की निजी जिंदगी पर ध्यान देने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि वह उसकी सारी इच्छाएं पूरी करती हैं। दिल्ली के उच्च वर्ग में बच्चों का अपने माता-पिता के प्रेमी-प्रेमिकाओं का मजाक उड़ाना आम बात थी। लड़कों का अपनी मां की तारीफ

करते हुए यह कहना भी आम था, 'मम्मी, अपने बालों को रंगना मत - सुपरस्टार चंदन कुमार तुम्हें अपने साथ ले जाएगा!'
अनूप की तो बात ही छोड़िए, जिसने गांव के स्कूल में पढ़ाई की – हेमंत, जिसने दिल्ली, पटना और मुंबई जैसे बड़े शहरों में पढ़ाई की है और एम.टेक. और एमबीए किया है। उसे भाभी-देवर कहा जा रहा है! ये कैसी पिछड़ी सोच है! या फिर काम पूरा करने के बाद पीछे हटना स्वार्थ है?
एक तरफ़ तो उसका पूरा शरीर उसके प्रति घृणा से तड़प रहा था, लेकिन रात को गहरी नींद में उसके दृढ़, कोमल आलिंगन की याद उसे और भी अधिक पीड़ा दे रही थी।

■

एक दोपहर, कांति घर लौटी। नौकरानी द्वारा तैयार किया गया खाना थाली में फैलाकर अकेले खाना खाते हुए, उसके मन में यह ख्याल आया - काश हमारा रिश्ता पहले जैसा हो पाता, इस बार हम दोनों खाना खत्म करके एक-दूसरे की बाहों में सुकून पाते!
जैसे ही उसने अपना खाना खत्म किया और प्लेट समेटी, दरवाज़े पर लगी जापानी घंटी एक लहर की तरह बज उठी। इस समय कौन आ सकता है? घंटी चमक रही थी। उसने दरवाज़े पर लगे शीशे से अंदर देखा। हेमंत बाहर खड़ा था—अरे बाप रे! उसके दिमाग में तरह-तरह के विचार चल रहे थे। एक पल के लिए उसे ख्याल आया कि उसे दरवाजा खोलकर उसे अंदर खींच लेना चाहिए और कसकर गले लगा लेना चाहिए! एक क्षण में उसे लगा कि उसे दरवाजा खोलना ही नहीं चाहिए – वह थोड़ी देर घंटी बजाता रहेगा और फिर यह सोचकर चला जाएगा कि मैं घर पर नहीं हूँ! लेकिन अब तक तो उसने बाहर खड़ी कार देख ही ली होगी। इसके अलावा, उसे तो सोने वालों की आवाज से पता चल ही गया होगा कि मैं यहाँ आकर खड़ी हूँ। अगर मैं दरवाजा नहीं खोलती, तो वह सोचेगा कि मैं कमजोर हूँ। मुझे उससे इतना डर क्यों लग रहा है?
उसने दरवाजा खोला और उससे वही कहा जो उसने अभी पहले कहा था,
``ओह! तुम्ही? या... प्लीज कम इन... "
वह अंदर आया। उसे समझ नहीं आ रहा था कि कहाँ बैठे। उसने उससे कहा,
मुझे पूरा यकीन था कि इस बार मैं तुमसे घर पर ही मिलूंगा, इसलिए मैं घर आ गया..."
"मैं समझ गई!" उसने हैरानी से कहा। उसकी आवाज में कड़वाहट साफ झलक रही थी।
आगे क्या कहना है, यह न जानते हुए उसने चारों ओर देखा और बरामदे में रखी एक साधारण कुर्सी पर बैठ गया।
वह भी बिना कुछ बोले वहीं खड़ी रही।
कुछ पल खामोशी में बीत गए। उसने अपने हाथ में पकड़े चमड़े के थैले की ज़िप खोली, उसमें से प्लास्टिक की थैली में लिपटा एक मोटा बंडल निकाला, उसे उसके सामने रखा और कहा,
वह इसे देने आया था।
"अगर आप चाहें तो इसे अपने दोस्तों के साथ साझा करने में संकोच न करें। मुझे आजकल संगीत में कोई दिलचस्पी नहीं रही है!"
उसे उसकी बात समझ नहीं आई। उसने फिर कहा,
"ये आपके हैं। इन्हें दोस्तों के साथ बांटने की कोई जरूरत नहीं है।"
उसने हाथ बढ़ाया और वह टुकड़ा ले लिया।
"मैं जा रहा हूँ। फिर मिलेंगे..." उसने कहा और खड़ा हो गया।
उसके जाने के बाद भी वह काफी देर तक वहीं खड़ी रही। फिर वह दरवाज़े से अंदर आई। उसने उसके दिए हुए बंडल को देखा—उसमें सौ-सौ रुपये के नोटों के

सात बंडल थे। साथ ही दस रुँपये के नोटों का एक बंडल भी था—लेन-देन के उसके अनुभव ने उसे बताया—कुल इकहत्तर हजार रुपये! उसके साथ एक नोट भी था।
उसने पत्र पढ़ा।
प्रिय कांति, आपने मेरी ज़रूरत के समय मेरी मदद की। आपकी इस कृपा का बदला किसी भी हालत में नहीं चुकाया जा सकता। जब मैंने सतारी कार्यक्रम शुरू किए थे, तब मैंने ये पैसे आपको लौटाने का सोचा था – यही मैंने खुद से वादा किया था। अब मैंने सोचा, अगर नहीं भी लौटा पा रही हूँ, तो मेरे बैंक में पैसे हैं – मुझे ये आपको दे देने चाहिए। कृपया इसे स्वीकार कीजिए...
इससे रिश्ता पूरी तरह से टूट गया है!
उसे ऐसा लगा जैसे उसके शरीर से सारी ऊर्जा निकल गई हो। किसी तरह उसने लाउंज में सोफे पर बैठने की कोशिश की। उसका दिमाग पूरी तरह से खाली था। कौन जाने कितनी देर से वह इस तरह बैठी थी! धीरे-धीरे उसे होश आया। उसकी आँखों में आँसू भर आए। अब उसे ठीक-ठीक पता चल गया था कि वह कहाँ है।
कुछ और समय इसी तरह बीत गया।
अब तक वह काफी हद तक ठीक हो चुकी थी। उसके दिमाग में धीरे-धीरे इस दौरान हुई घटनाएँ याद आने लगीं। उसे खुद पर शर्म आ रही थी, यह याद करके कि उसके साथ अन्याय हुआ था। उसने मदद के नाम पर जो पैसे लिए थे, बस वही लौटा दिए थे! मुझे इसके लिए इतनी बेताब क्यों होना चाहिए?
वह फिर बाहर आई। बाहर बरामदे में जमीन पर नोटों का एक बंडल पड़ा था। उसने उसे उठाया। उसने शयनकक्ष में नवनिर्मित मजबूत तिजोरी का दरवाज़ा खोला और बंडल को अंदर रख दिया। उसने दरवाजा फिर से बंद किया और निर्धारित नंबर घुमाकर उसे लॉक किया और बाहर का दरवाजा भी बंद कर दिया।
ऊँची एड़ी के जूते पहने गाड़ी चलाते हुए उसने सोचा, उसने बैंगलोर बैंक में जमा किए गए पैसों में से इकहत्तर हज़ार रुँपये निकाल लिए हैं – अब वहाँ 29 हज़ार रुपये बचे हैं। कार्यक्रम में 21 दिन बाकी हैं – तब तक इतना पैसा काफी है! भले ही कार्यक्रमों का मानदेय विजय मिश्रा को जाए, टीवी और ऑल इंडिया रेडियो को तो पैसा मिलता ही रहेगा! एक साल बाद तो पैसों की बारिश होगी! मैंने ये सब सोच लिया है! मेरी योजना है कि विजय मिश्रा से मिलूँ और सभी गाँवों में कार्यक्रम तय करूँ! और ये इकहत्तर हज़ार रुपये मेरे मुँह पर फेंक दिए गए! ठीक है! मैं भी देख लूँगी! मैं इस अपमान को बर्दाश्त नहीं करूँगी और चुप नहीं रहूँगी!

■

१५

उस दिन, हमेशा की तरह, अनूप मदिकेरी रोड पर 35वें मील के पत्थर पर लगी बाड़ को पार करके पपहाउस पर महादेवी से मिलने वापस आया। जब मदन्ना अपनी मोटरसाइकिल के हैंडल पर हाथ रखे खड़ी थी, तो अनूप को लगा कि मदन्ना किसी मुसीबत में हो सकती है।
मदन्ना ने कहा,
``क्या शानदार काम था, पिताजी! जो लोग चले गए हैं, उनके सामने मुझे कितनी शर्म आती है?'
अनुपाल इस बात से क्रोधित हो गया कि वह उसे एकवचन में संबोधित कर रहा था। वह कहना चाहता था, "अपना मुँह बंद रखो," लेकिन उसने खुद को रोका और पूछा,
मैंने क्या किया?

"क्यों, रैन? तुम अभी-अभी गई और वापस आई हो, है ना? उसने मना कर दिया था?"
क्या?
"पोटुशी को नमस्कार कहकर?"
अनूप की छाती धड़कने लगी। जब भी ऐसा कुछ होता है, तो सारा दोष पुरुषों पर ही मढ़ा जाता है – सब यही सोचते हैं कि महिलाओं का कोई दोष नहीं है! उसने कहा।
नहीं!
``क्या, रैन? वह पोटुशी है, क्या यह झूठ है?'
उसके मुंह से बीड़ी की घिनौनी बदबू अनूप की नाक में घुस गई। अनूप ने पूछा,
"तो फिर उसने मुझे क्यों नहीं बताया?"
``तुम... तुम..." मदन्ना एक पल के लिए हिचकिचाई और बोली, ``मैंने तुम्हें नहीं बताया... लेकिन उसने मुझे नहीं बताया! औरत! मुझे तुम्हें बताने में शर्म आ रही है!–"
अनूप ने सोचा, शायद यह सच हो! फिर उसने सोचा, शर्म की क्या बात है? वह तो और भी बहुत सी बातें कहती रहती है! लगता है वह बस पैसे कमाने की कोशिश कर रही है!
उसने कहा, उसके चेहरे पर चार मुक्के मारकर खुद को छुड़ाने के बारे में सोचते हुए।
"अगर वह गर्भवती हो तो मुझे क्या करना चाहिए?"
"अरे यार, तुम क्या बात कर रहे हो? तुम्हारे पेट में दर्द है, अब मुझे क्या करना चाहिए?"
"यदि मैं हर बार इतनी राशि का भुगतान करता हूं और लेन-देन पूरा करने में विफल रहता हूं तो मेरी क्या जिम्मेदारी होगी?"
मैंने तुम्हें पैसे तुम्हारी उस इच्छा को पूरा करने के लिए दिए थे! पेट बढ़ाने के लिए नहीं! अब तुम उससे शादी कर सकते हो..."
"किसी और ने उसका पेट बड़ा किया होगा! मैंने इसे बड़ा क्यों किया?"
“क्यों, क्यों? बूढ़े आदमी को बाज़ार का ठेला समझते हो क्या!” मन्ना की आवाज़ तेज़ हो गई। वह अनूप के पास आया और उसकी छड़ी छीन ली। उसी समय, उसने पीछे से किसी के आने की आवाज़ सुनी। अनूप ने पीछे मुड़कर देखा। मन्ना की तरह ही चार आदमी उसकी ओर आ रहे थे। चारों पास आकर अनूप के चारों ओर खड़े हो गए। फिर उनमें से एक ने मन्ना की ओर मुड़कर सवाल करना शुरू कर दिया।
``क्या हुआ, रंगा? क्या हुआ? ये बच्चा कौन है?"
उन पाँचों के मुँह से आती बीड़ी की दुर्गंध अनुपाल को घेरने लगी और उसका पेट खराब होने लगा। उसे एहसास हुआ कि उन सबने जानबूझकर उसे घेर लिया है। फिल्मों की तरह, वे सब उसे अलग-अलग दिशाओं में लात-घूंसे मारते हुए एक सौ बीस किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से गोली की तरह दौड़ाने लगे।
मदन्ना ने उस आदमी से कहा,
``मैं क्या कहूँ, गिरन्ना! भायेर छोड़ने के बाद, यह लड़का चुपके से मेरे घर में घुस आया और मेरी मादेवी से शादी कर ली और उसे मोटा कर दिया! अब, अगर तुम शादी की बात करते हो, तो मेरा मतलब है, किसी ने बाज़ार से उसकी चर्बी चुरा ली, मैं क्या करूँ!"
"अरे! उसने अपनी सास को धोखा दिया? अरे, वह भोली बच्ची! उसने उसके साथ ऐसा किया?" चारों में से एक ने अपने चेहरे पर नैतिकता का पर्दा डालते हुए कहा। फिर, मानो उसे थोड़ा-बहुत दंडित करने के लिए तैयार हो, उसने अपनी खाकी पैंट

के ऊपर लिपटी हुई लुंगी उठाई और उसे आधा मोड़कर अपनी कमर पर बांध लिया।
"उस बेचारे बच्चे के बारे में आपका क्या ख्याल है?" दूसरे ने पूछा। खाकी शॉर्ट्स के ऊपर लुंगी न होने के कारण उन्हें मोड़ने का कोई सवाल ही नहीं था।
तीसरा व्यक्ति भी सीना तानकर खड़ा था, मानो वह लड़ाई के लिए तैयार हो।
चौथे व्यक्ति ने भावुक होकर कहा,
अरे, तुमने माँ की पीठ पीछे, अपने हाथ की हथेली पर लगे घावों से बच्चे की रक्षा कैसे की, अरे, तुमने! क्या हुआ, अरे, ये क्या!
अनूप को यहाँ से जल्द से जल्द भागने की तीव्र इच्छा हुई। वह तेजी से वहाँ से भागा, जीन की जेब से चाबी निकाली और बुलेट को जोर से लात मारी। लेकिन उसी समय, वे चारों दौड़ते हुए आए और उसका गला पकड़ लिया। अनूप जमीन पर गिर पड़ा। बुलेट भी जमीन पर गिर गया। वे तीनों अनूप पर टूट पड़े। उनमें से एक, गिरानी ने कहा,
``–क्या तुम भाग रहे हो! इसे उठाओ! चलो इसे बांध देते हैं-"
उनकी सलाह पर उन तीनों ने उसे उठा लिया। उनमें से एक ने अपने थैले से रस्सी निकाली। तीनों ने मिलकर उसके दोनों हाथ कसकर बांध दिए और 'चलो - चलो -' कहते हुए उसे मदन्ना की झोपड़ी की ओर ले जाने लगे। अनूपा को लगा कि महादेवी के सामने उसे बांधकर वे उसका अपमान करेंगे। हालांकि वह पैसे ले रही थी, महादेवी हमेशा उससे प्यार से बात करती थी। 'कम से कम हफ्ते में एक बार तो तुम यहाँ आ जाओ! नहीं तो मेरा जीवन दुखमय हो जाएगा, बागा!' वह कहती थी। जब मैं चला जाता था, तो वह मेरे गायब होने तक दरवाजे पर इंतजार करती थी। क्या वह मेरा अपमान सहन करेगी? नहीं।
इस विचार से उसे थोड़ा बेहतर महसूस हुआ।
अब अंधेरा होने लगा था। पहाड़ी से नीचे देखने पर पंपहाउस और महादेवी की झोपड़ी धुंधली-धुंधली दिखाई दे रही थी।
लेकिन वे चारों उसे वहाँ नहीं ले गए, बल्कि उसे दाहिनी ओर घुमाकर वहाँ मौजूद कटहल के पेड़ के पास ले गए और उसके हाथों में बंधी रस्सियों से उसके पैरों को पेड़ से बाँध दिया। गिरान्ना ने अपनी कमीज़ की जेब से बीड़ी का एक गट्ठा निकाला और उनमें से प्रत्येक को एक-एक बीड़ी दी। सभी बीड़ियों को एक ही तीली से जलाकर उसने अपनी बीड़ी उतार ली।
अनूप के हाथों में जहां रस्सी बंधी थी, वहां जलन हो रही थी। रस्सी उसके पैरों को भी काट रही थी। सामने की महादेवी कुटिया और पंपहाउस धीरे-धीरे अंधेरे में गायब हो रहे थे। अगले पांच मिनट में वे पूरी तरह अंधेरे में अदृश्य हो जाएंगे! अगर वे मुझे बाद में मार कर फेंक भी दें, तो किसी को पता भी नहीं चलेगा!
अनूप ने उनसे कहा,
"मुझे जाने दो! तुमने मुझे इस तरह क्यों बांध रखा है? अगर तुम चाहो तो मदन्ना और मैं बात करके तय कर सकते हैं कि क्या करना है।"
"मदन्ना से बात करनी है? तो बोलो! मदन्ना, बाबा, आप क्या कह रहे हैं?" लुंगी में लिपटे उस आदमी ने कहा।
``मैं क्या कहूं? आप ही बताइए, कि—" मदन्ना ने सब कुछ उस पर सौंप दिया।
उन पांचों ने अपनी लंबी-लंबी आँखों से एक-दूसरे को देखा।
फिर गिराना उसके पास आया। अनूप के चेहरे को देखकर उसने कहा,
'तुमने इतने अच्छे लड़के को बर्बाद कर दिया, बदमाश!'
मैं नहीं! मदन्ना मुझे पंचास रुपये में उसके पास ले जाती थी!
"मैं तुम्हें बताता हूं, कन्नान्ना, ईश्वर की कृपा से! मुझे इस तरह का काम क्यों करना चाहिए? अगर मैं इस तरह का काम करूंगा, तो धरती मां मुझे खा जाएगी!" उसने अपने दोनों गालों पर हाथ मारते हुए कहा।

"अरे बाप! अगर तुमने दोबारा ऐसा कहा तो तुम उस भले इंसान को जान से लोगे, कमीने! क्या तुम्हारा बाप अपनी बेटी से कोई काम करवाएगा? तुमने अपने पहले बच्चे को बर्बाद कर दिया और अब अपने बाप को बदमाश कहते हो!" गिराना ने डांटते हुए कहा।
अब तक पूरी तरह अंधेरा हो चुका था। एक-दूसरे का चेहरा देखना भी संभव नहीं था। अंत में, तीनों में से एक ने कहा,
"चलो, गिराना, अब बताओ तुम्हें क्या कहना है और मैं मुक्त हो जाऊंगा!" वह जाने की जल्दी में था।
जैसे ही गिरन्ना ने ``हाँ" कहा, मदन्ना ने कहा,
"कुत्ते के खून से सने कपड़े को कुत्ते के गले में बांधा जा सकता है! उसे उससे शादी करने दो और उससे वादा करने दो कि वह उसके गर्भ में पल रहे बच्चे की देखभाल करेगा! ये कैसी सोच है, मेरी प्यारी!"
अनूप के पेट में एक गहरा गड्ढा सा महसूस हो रहा था। वह एक धूर्त था जो अपने बेटे के पैसे से अपनी शराब की लत पूरी करता था! उसने खुद को कितनी मुश्किल स्थिति में डाल लिया था! अगर वह मौन जाए और अभी भाग जाए तो क्या होगा? लेकिन अगर वह शादी होने तक उसे यहीं रोक ले तो क्या होगा?
"तो फिर तुम्हारा क्या मतलब है?" गिराना ने पूछा।
"तुम्हें घर पर अपने माता-पिता से पूछना होगा! नहीं तो वे तुम्हें घर में घुसने नहीं देंगे!" अनूप ने जवाब दिया।
"क्या तुम अपनी माँ से पूछोगे? अगर कोई इस तरह का पेट उगा ले और फिर तुम्हारी माँ को घर आकर उसे खाने के लिए कहे, तो तुम क्या करोगे, भाई?"
जो व्यक्ति देर से आ रहा था उसने फिर कहा,
"अब इन सब बातों का क्या मतलब है? बताओ तुम क्या कहना चाहते हो, बिगगी!"
कुछ पल खामोशी में बीत गए। गिराना ने सोचने का नाटक करते हुए कहा,
"मुझे पच्चीस हजार रुपये दे दो, बस इतना ही काफी है! मैं तुम्हें तुरंत जाने दूंगा। तुम बच्चे का पेट पाल सकते हो - उसकी शादी करवा सकते हो - तुम तो एक निकम्मे हो, क्या तुम नहीं चाहते कि वह भी ऐसा ही करे?"
अनूप को अब समझ आ गया था कि यह सब पैसे हड़पने की साजिश है। वह उन्हें ज्यादा से ज्यादा पांच सौ—एक हज़ार दे सकता था। अगर वह मोटरसाइकिल बेच भी देता, तो उसे पंद्रह हज़ार मिल जाते! उसने कुछ कहने और यहाँ से निकलने का फैसला किया। उसे याद आया कि उसकी जेब में साढ़े तीन सौ रुपये हैं। उसे भागने की कोशिश नहीं करनी चाहिए थी! अब अगर वह कहता कि बाकी पैसे बाद में लाएगा, तो वे उस पर विश्वास नहीं करते!
वह बिना कुछ बोले वहीं खड़ा रहा।
गिरानाच ने फिर कहा,
"जी हाँ! आप इसी व्यक्ति से बात कर रहे हैं, मदन्ना!"
"पैन लाज गेली, क्या वह वापस आएगी, भाई?"
उसी समय, थोड़ी दूरी से किसी की आवाज़ सुनाई दी, "ए मदन्ना—ओह ए मदन्ना —"। सबके कान खड़े हो गए। वही आवाज़ फिर सुनाई दी। मदन्ना डरकर चिल्लाया,
"मुझे लगता है कि हमारा ऋणदाता आ गया है!"
गिरान्ना ने कहा,
"आप वहां जाइए और जो कहना चाहते हो कहिए..."
अनुपना ने बिना किसी झिझक के चिल्लाकर कहा,
``हेल्प! प्लीज हेल्प! हेल्प मी..."
मालिक की आवाज आई,
यह कौन है? यह कहां है?...

कटहल के पेड़ के पास! कृपया मदद करें...
जैसे ही स्थिति बिगड़ने लगी, वे चारों वहां से चले गए।
मदन्ना ने उनसे कहा,
अरे, भागो मत! चलो साहूकारों के सरदार से न्याय मांगते हैं..."
साहूकार के उसी दिशा से आने की आवाज़ सुनाई देने लगी। अँधेरे में नज़रें साहूकार की धुंधली, छोटी सी आकृति पर टिकी रहीं। पास आने पर उन्होंने देखा कि साहूकार ने पैंट और बटन वाली कमीज़ पहनी हुई थी और उसका शरीर गठीला था – उसकी उम्र लगभग पैंतालीस वर्ष रही होगी।
जैसे ही वे करीब पहुंचे, उन्होंने एक व्यक्ति को पेड़ से बंधा हुआ भी देखा। उन्होंने पूछा,
यह क्या है?
"मैं चोर नहीं हूँ! मदन्ना और इन चारों ने मुझे पकड़ लिया है और बांध दिया है," अनूप ने दयनीय स्वर में कहा।
"वो मोटरसाइकिल कहाँ है? क्या वो तुम्हारी है?" उसने पूछा।
हां...
"अरे! इन्हें अकेला छोड़ दो! यहाँ क्या हो रहा है?" मालिकों ने ऊँची आवाज़ में पूछा।
उसने मदन्ना की बेटी का पेट फाड़ दिया है! उसने उसे बांधकर कहा है, 'उससे शादी कर लो! हे न्यायाधीश, हे साहूकार!'
"यह क्या है?" उसने अनुप से अंग्रेजी में पूछा।
"यह झूठ है! उसके पिता उसके लिए किराने का सामान लाते हैं! मुझे नहीं पता कि वह किससे गर्भवती हुई!..."
तुम कौन हो? तुम यहाँ क्या कर रहे हो?
"इंजीनियरिंग कॉलेज का छात्र..." अनुपम ने तुरंत अपनी ज़बान रोक ली। उसके अंतर्मन ने उसे आगाह किया कि इससे अधिक जानकारी देना खतरनाक होगा।
मुझे लगा था कि तुम मोटरसाइकिल पर उसके पास आ रहे हो!
यह सुनकर अनूप अवाक रह गया। उसने कुछ पल तक उसे घूरा और फिर बोला,
"माता-पिता पढ़ाई के लिए पैसे भेजते हैं और तुम मजे के लिए ये सब करते हो?"
फिर उसने मदन्ना की ओर मुड़कर चिल्लाकर कहा,
"अरे मूर्ख! अगर मैं तुम्हें खेत की देखभाल के लिए वेतन दूं, तो क्या तुम शेखी बघारोगे? अगर पुलिस को पता चल गया, तो मैं आग बबूली हो जाऊंगी! अपनी बेटी को लेकर आज ही यहां से निकल जाओ! तुम कौन होते हो यहां दादागिरी करने आए हो?"
उन चारों में से किसी ने कुछ नहीं कहा।
"यह कौन है?" उसने मदन्ना से फिर पूछा।
"हमारे गांव के जी! जेधल्ली के-" मदन्ना ने उत्तर दिया।
"आप कौन हैं, महोदय? आपका नाम क्या है?" उसने दोबारा पूछा।
किसी ने कुछ नहीं कहा। वे आगे बढ़े और अनूप के हाथ-पैर छोड़ दिए। अब, किसी तरह, अनूप की आत्मा में फिर से जान आ गई।
अब साहूकार चिल्लाने लगे हैं।
मदिकेरी से मैसूर लौटते समय, मैं बागान देखने के लिए यहाँ से थोड़ा हटकर आया था, इसलिए यह सब यहीं हुआ! अगर आप अभी यहाँ से चले जाते हैं, तो ठीक है! नहीं तो, फिर आपका क्या हाल होगा..."
अनूप को एहसास हो गया था कि अगर वह जल्द से जल्द यहाँ से नहीं निकला तो साहूकार उससे और भी गहराई से पूछताछ करेंगे। वह अंधेरे में भाग निकला, उनकी चीख-पुकार से बचते हुए। उसे अपने पैरों में पहने जूतों और शरीर पर पहनी जींस पर गर्व महसूस हो रहा था। बुलेट की चाबी अभी भी लगी हुई थी।

उसने बुलेट को कुछ दूर तक दौड़ाया। साहूकारों की चीखें अभी भी दूर से सुनाई दे रही थीं। जैसे ही उसने कार को लात मारी, कार स्टार्ट हो गई – वाह! बुलेट, मतलब बुलेट! उसे अपनी कार पर गर्व महसूस हुआ। पल भर में उसका खोया हुआ आत्मविश्वास लौट आया। कार ने रफ़्तार पकड़ ली। अस्सी-नब्बे-सौ – अब उसे पकड़ने कौन आएगा? अगर साहूकारों की कार आ गई तो? लेकिन बुलेट की रफ़्तार से तो कार दौड़ ही नहीं सकती! महादेवी कह रही थी – साहूकार मैसूर से हैं। उनकी वहाँ कपड़े की दुकान है – सिर्फ रेशमी कपड़े! वे अभी भी वहीं खड़े होकर चिल्ला रहे होंगे! उनकी कार मेरी बुलेट की रफ्तार का मुकाबला नहीं कर सकती!
मैसूर नज़दीक था। अब वह भोजन के लिए छात्रावास नहीं जाना चाहता था। वह कुछ देर अकेले रहना चाहता था। वह कभी-कभार शाही भोज में जाया करता था। अब भी, उसने वहीं अपना ध्यान भटकाया। उसने पहले स्कॉच और मसालेदार भजी मंगवाई और बाद में खाना मंगवाने का फैसला किया। उससे पहले ही उसने बर्फ़ के साथ ठंडा पानी मंगवाया। उसका गला सूख रहा था।
स्कॉच के चार घूंट पीने के बाद, उसका बिखरा हुआ मन कुछ हद तक शांत हुआ। उसने पूरी घटनी को फिर से याद किया। अगर साहूकार समय पर नहीं आता तो क्या होता? बूढ़ा आदमी पच्चीस हज़ार रुपये मांग रहा था! अगर वह बात को खींचता रहता, तो कौन जाने कहाँ तक पहुंच जाता! क्या होता अगर वह कहता कि शुरुआत में ही अपनी जेब से साढ़े तीन सौ रुपये देने पर वह छूट जाएगा और बाकी बाद में चुका देगा? क्या होता अगर वह उनमें से किसी एक को अपने साथ ले जाता और रास्ते में छोड़ देता? या उसे सीधे पुलिस स्टेशन ले जाता?
ओह! ओह! पुलिस के पास जाना ठीक नहीं होता। अगर मामला पुलिस के पास जाता, तो वे और गहराई से जांच शुरू कर देते! बिलकुल नहीं—
लेकिन साहूकार के आने से पहले की अपनी हालत को याद करके उसकी आत्मा कांप रही थी।
उस बेचारी लड़की की सास तो हराम निकली! एक समय था जब उसने अपनी बच्ची के लिए मनचाहा पैसा दिया था! अनीता वहाँ थी - और अभी भी है! मैंने उस गाँव की बच्ची को इतना पैसा क्यों दिया! वह मन ही मन सोचने लगा।
वो अनीता से थोड़ी ज़्यादा समझदार है, बस इतना ही – ये तो मुझे पहली बार जाने से पहले ही पता था! तो फिर मैं वहाँ क्यों गई? मुझे ठीक-ठीक वजह समझ नहीं आती। बस अनीता से ऊब गई थी – कुछ बदलाव के लिए – या फिर कोई दूसरा इंतज़ाम होना हमेशा अच्छा होता है! और तो और, अनीता की मौजूदगी, वो भी शाम 7:30 बजे के बाद, गाँव के बाहर जंगल में कहीं – काँटे-पत्थर-चींटियाँ-मक्खियाँ – होटल में कमरा मिलना मुश्किल! लेकिन जब तक मुझे कमरा नहीं मिल जाता और मैं वहाँ झूठे नाम से चेक-इन नहीं कर लेती, तब तक डर बना रहता है! लेकिन मदन्ना की झोपड़ी में कोई डर नहीं – कोई दबाव नहीं – इन सबके बावजूद, अगर महादेवी में अपना अलग आकर्षण न होता, तो हम वहाँ तक जाते ही नहीं – उसने मुझे ये क्यों नहीं बताया कि वो गर्भवती है? क्या ये सारा मामला झूठ था या फिर उसने न्याय की भावना से कुछ नहीं कहा क्योंकि उसे पता था कि मैं गर्भनिरोधक इस्तेमाल कर रही थी, जबकि वो इसके लिए ज़िम्मेदार नहीं थी? शायद मदन्ना ने उसे गलत समझा क्योंकि वह अपने पिता को यह सब बताने में शर्म महसूस कर रही थी और चुप रही?
यह मदन्ना! पैसा लेने के बाद इसकी कोई ज़िम्मेदारी नहीं रहती, यह बदमाश व्यापार के बुनियादी सिद्धांतों का भी पालन नहीं करता!
उसके सामने रखा गिलास खाली था। बेरा आगे बढ़ा और खड़ा हो गया।
वह सबको सब कुछ बताना चाहता था – लेकिन जानता था कि यह मुमकिन नहीं था। चाहे कुछ भी हो जाए, यह मानना समझदारी नहीं थी कि उसने एक वेश्या को

पैसे दिए थे। अगर उसकी प्रेमिका उसके पीछे आई होती तो मामला बिल्कुल अलग होता! इसीलिए उसने जगगु या ओमी से इस बारे में बात तक नहीं की।
अगले दिन, कॉलेज में अनीता को देखते ही वह बेचैन हो गया। उसने मन ही मन ठान लिया कि अब से वह मदिकेरी रोड पर कभी अकेले या अनीता के साथ नहीं जाएगा।
उस शाम, वह उसे अपने साथ तिरुमाकुदल रोड ले गया। अगली शाम, वह ओमी-जग्गु के घर गया, उनके साथ खाना खाया और बातचीत की। हालाँकि, उसके बाद कटहल के पेड़ से बंधे रहने का सारा अपमान गायब हो गया।

■

चार दिन बीत गए।
पाँचवें दिन सुबह ग्यारह बजे, वह कक्षा में बैठा था। प्रोफेसर गंभीरता से पढ़ा रहे थे। उसी समय, कॉलेज का चपरासी उनके लिए एक नोट लेकर आया। उसे पढ़कर प्रोफेसर ने अनूप को बुलाया। जैसे ही वह खड़ा हुआ, उसने कहा,
"किसी ने आपको फोन किया था। मैं अब आपको जाने देता हूँ—लेकिन उन्हें चेतावनी दे देना कि अब से जब तक कक्षाएं चल रही हों, वे आपको फोन न करें! समझ गए!"
अनुपाल को बिलकुल भी अंदाज़ा नहीं था कि उससे मिलने कौन आया है। तीस साल का एक आदमी गलियारे में खड़ा था। खादी की पैंट और बटन वाली कमीज, ऊँची एड़ी के जूते, पतली मूंछें, हाथ में हेलमेट और आँखों पर चश्मा - अनुपाल तुरंत समझ गया कि वह नई पीढ़ी का राजनेता है। उसकी लंबाई लगभग साढ़े छह फीट थी। लगातार सिगरेट पीने से उसके होंठ रंगे हुए थे - उसने कहा,
``क्या? क्या आप अनूप रविंद्र हैं?"
अनूप उसे पहचान नहीं पा रहा था, इसलिए वह उसे घूरता रहा। आगंतुक ने अनूप का हाथ ऐसे पकड़ा जैसे वह उसका पुराना दोस्त हो और बोला, "मुझे पहचान नहीं पा रहे? मुझे याद करो! फिर से कोशिश करो।" वह उसे कॉलेज के मुख्य द्वार तक ले गया। वहाँ एक मोटरसाइकिल खड़ी थी। उसने अनूप को डबल सीट पर बैठने को कहा और कार स्टार्ट कर दी।
कौन जाने अनूप ने क्या सोचा होगा! उसने कहा,
मैं आपको नहीं जानता। तो मुझे आपके पीछे क्यों बैठना चाहिए?
"फिर अपनी मोटरसाइकिल - एमसीटी 3465 - ले लो, बस इतना ही?"
"कहां जाऊं? मैं तुम्हारे साथ क्यों आऊं? तुम कौन होते हो मुझे बुलाने वाले? मैं नहीं आ रहा, जाओ—" अनुपम ने सीधे-सीधे उसका निमंत्रण ठुकरा दिया।
उसी समय, कुछ दूरी पर इंतजार कर रहा एक अन्य व्यक्ति उन दोनों की ओर दौड़ा और इस तरह खड़ा हो गया कि अनूप भाग न सके। पहले आगंतुक ने बेफिक्री भरे लहजे में कहा,
सुनो, मैं कौन हूँ? मैं सिंगरावल्ली समूह ग्राम पंचायत का अध्यक्ष हूँ! हमारे समूह के सभी गाँवों के लोगों की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। तुमने मदन्ना के बच्चे का पालन-पोषण किया है, तुमने ही किया है! तुमने पच्चीस हज़ार का समझौता किया और चोर की तरह भाग गए! क्योंकि तुमने गोबर खाया, बेचारे मदन्ना को उसके साहूकार ने नौकरी से निकाल दिया! मैं बेचारे मदन्ना और उसके गर्भवती बच्चे के साथ हुए अन्याय को उजागर करने आया हूँ! बिना संकोच किए पचास हज़ार रुपये दे दो और मुक्त हो जाओ! वरना, क्या तुम्हें पता है इस महाविद्यालय में तुम्हारा क्या होगा? यह मत भूलो कि प्रबंधन समिति के गुरुप्पा गौड़ा हमारे बीच ही हैं!
पास में खड़ा एक और आदमी उसकी हर बात पर हाँ में हाँ मिला रहा था।
अनूप की गर्दन पर पसीने की एक पतली लकीर उभर आई। उस दिन पच्चीस हज़ार की बात हुई थी - आज वही आंकड़ा पचास हज़ार तक पहुंच गया! उसने खुद को संभाला - हमें भी डरने की ज़रूरत नहीं है! फिर यही रास्ता है - उसके

दिमाग ने बिजली की तेज़ी से फैसला किया - मुझे इसके बारे में कुछ नहीं पता - ये लोग ब्लैकमेल करके पैसे वसूलने आए हैं! वह ऐसा रुख अपनाना चाहता था!
उसने अपनी आवाज ऊंची कर दी।
"क्या, हाँ! क्या तुम कॉलेज आकर गुंडागर्दी करोगे?" उसने पूछा और मुड़कर कॉलेज की ओर चलने लगा।
दूसरे आदमी ने अचानक अनूप को कसकर पकड़ लिया। सतर्क अनूप ने उसकी कलाई पर अपने दांत गड़ा दिए और जैसे ही उसकी पकड़ ढीली हुई, वह गेट की ओर भागा और वहां मौजूद छात्रों को पुकारा।
``हेलप! प्लीज हेलप!-"
बच्चे दौड़ते हुए उसकी ओर आए। उन्हें आते देख उसने कहा, "ये कॉलेज में गुंडागर्दी करने आए हैं," और चेयरमैन को दो घूंसे मारे। बच्चों को अपने चारों ओर जमा देखकर दूसरा आदमी अवाक रह गया।
अध्यक्ष ने अनुपक की ओर देखा, कुछ सोचा और चुपचाप चाबी अपनी जेब में रखकर मोटरसाइकिल पर बैठ गया। दूसरा आदमी भी पीछे की सीट पर बैठ गया। मोटरसाइकिल एक अच्छी-अच्छी आवाज़ के साथ चल पड़ी।
आस-पास जमा हुए बच्चों ने अनूप से पूछा,
``क्या हुआ, अनूप? क्यों?"
अनूप, जो वहां खेड़ होकर दुश्मन के भाग जाने पर खुशी मना रहा था, अब इस सवाल का जवाब देने में मुश्किल महसूस कर रहा था।
"ओह, निकम्मा ग्राम नेता साला को ब्लैकमेल करने आया है!" अनूप ने तिरस्कारपूर्वक कहा।
"लेकिन ब्लैकमेल क्यों?" मैकेनिकल विभाग के जयराज ने पूछा।
अनुप ने उसे टालते हुए कहा, "ब्लैकमेल करने का विशिष्ट कारण क्या है?"
"हाँ। वे अक्सर कॉलेज के छात्रों को डराने के लिए यौन कांड को अंजाम देते हैं!" जयराज के सहपाठी हनुमंथप्पा ने कहा।
"ये सब बकवास है!" अनूप ने चारों ओर देखते हुए कहा।
"सीधी बात पर आओ, अस्सा!"
"बताओ तुमने क्या किया, बेटा!" दूसरे बच्चों ने कहा।
``जितने चाहें उतने गुंडे आ जाएं! हम आपकी मदद करेंगे! वरना छात्रों की एकता कहां जाएगी?"
"मुझे सच बताओ! हम भी जानते हैं!" जयराज ने कहा।
अनुपान ने मन बना लिया – किसी भी हालत में हमें यहाँ कुछ नहीं कहना चाहिए! उसने कहा,
ब्लैकमेलिंग का मतलब है बिना किसी आधार के किसी से जबरदस्ती पैसे वसूलना! आज हमने उनका पुरजोर विरोध किया है, ताकि वे दूसरे बच्चों को ब्लैकमेल करने की हिम्मत न करें! यही मुख्य बात है!
यह सुनकर बच्चों में भी वीरता का भाव जागा। सबने एक साथ अनुप का हौसला बढ़ाते हुए कहा, "हम तुम्हारे साथ हैं - चिंता मत करो, दोस्त!" उन्होंने हाल ही में रिलीज़ हुई मुंबई की फिल्म "एक आवाज़" में भी नायक के दोस्तों को इसी तरह उसका हौसला बढ़ाते देखा था। लेकिन अनुपम ने आगे जो किया, उससे सबका ध्यान उसी फिल्म के नायक अमित कुमार के संवाद बोलने के अंदाज़ पर चला गया।
इस चेयरमैन का नाम क्या है? उन्होंने हमें बताया भी नहीं और हमने पूछा भी नहीं – अब वो आगे क्या करेंगे? अनूप ये सोचकर बेचैन हो रहा था। अनूप – कॉलेज का स्पीड किंग! – अगर कॉलेज को पता चल गया कि वो किसी वेश्या की तरफ गोली की रफ्तार से दौड़ रहा था तो क्या होगा?

अनुपना ने भी अपनी अगली चाल तय कर ली – मुझे कुछ नहीं पता – ये लोग पैसे के लिए ऐसा कर रहे हैं – मैंने उस नेता को इसी वजह से मारा था – अगर ज़रूरत पड़ी तो मैं इसके लिए पाँच बच्चों की गवाही भी दे सकती हूँ – मार पड़ने के बाद मुझे भागना पड़ा – उसी गुस्से में आकर उसने मुझ पर झूठे आरोप लगाए हैं!
अपनी सुरक्षा के लिए मानसिक व्यवस्था करते ही अनूप गहरी नींद में सो गया।
अगले दिन, वह सुबह दस बजे तैयार हुआ और हॉस्टल के प्रतीक्षालय की ओर भागा, लेकिन वहाँ नाश्ते का समय समाप्त हो चुका था। वह कम से कम तीसरी कक्षा में तो पहुँचना चाहता था, साथ में एक ठंडी शरबत और इडली चाट भी खाना चाहता था, इसलिए वह दौड़ पड़ा। तीसरी कक्षा शुरू हुई। उसके मन में थोड़ी हिम्मत आ गई थी। उसने मन ही मन ठान लिया - अगर कोई चिट्ठी भेजेगा भी, तो बेकार नहीं जाएगी! लेकिन कोई चिट्ठी नहीं आई। बेचारा डरपोक! उसने शाम को अनीता के साथ ऊटी जाने का फैसला किया। लेकिन उसने मना कर दिया क्योंकि अगले दिन उसकी परीक्षा थी। उसने कहा कि परीक्षा से उसे डर लगता है! अगर उसे उम्मीद से एक भी नंबर कम मिला, तो उसकी आँखों में आँसू आ जाते हैं! अंकों के प्रति उसका आकर्षण वैसा ही है जैसा महिलाओं का गहनों के प्रति! आखिरकार, वह हॉस्टल के बैडमिंटन कोर्ट में चला गया।
उस रात मैं हमेशा की तरह तय समय पर सो गया।
अगले दिन, वह जल्दी उठा, सब कुछ तैयार किया और पौने नौ बजे कक्षा में चला गया। जब रेवन्ना, जो उसकी कक्षा में थी, उसके पास आई और पूछा,
"क्या आप कॉलेज के मुख्य द्वार पर गए थे?"
नहीं। क्यों?
रेवन्ना भी परगाँव से था। हालाँकि वह चित्रदुर्ग का रहने वाला था, लेकिन वह हॉस्टल के बजाय अपने चाचा के घर में रहता था और हर दिन साइकिल से कॉलेज जाता था। उसने कहा,
``सत्याग्रह के लिए द्वार के पास पचपन लोग बैठे हैं। तख्तियां लगाई गई हैं - किस तरह की लड़की गर्भवती हुई है - स्पीड किंग अनूप रविंद्र को उससे शादी करनी चाहिए - सफेद कागज पर बड़े लाल अक्षरों में लिखा है और टांग दिया गया है!"
अनूप का सिर मानो ज़मीन पर गिर जाएगा। उसे लगा जैसे वो बेहोश हो जाएगा। वो उठकर बैठ गया और चारों ओर देखा, लेकिन पंद्रह-बीस और छात्र उसके आसपास जमा हो गए थे। किसी ने उसकी तरफ इशारा नहीं किया, कुछ कहा नहीं, न ही कोई संकेत दिया। उनमें से आधे गाँव के थे। तो वे सत्याग्रह के बारे में ज़रूर जानते होंगे, ये तो पक्का है!
अब उसे क्या करना चाहिए? अनूप का सिर चकरा रहा था। चेयरमैन के बेटे ने उसे एक ऐसे जाल में फंसा दिया था जिसकी उसने कल्पना भी नहीं की थी!
उसी समय प्रोफेसर भी वहाँ आ गए। कक्षा के बाहर गलियारे में बच्चों का ऐसा समूह खड़ा था कि उनके सिर चकरा रहे थे। प्रोफेसर एन. एल. अपने गुस्से के लिए जाने जाते थे। इसीलिए सभी चुपचाप कक्षा में चले गए। क्या करें, यह न जानते हुए अनुपाही कक्षा में दाखिल हुई। चूंकि एन. एल. गाँव से आए थे, इसलिए वह जानती थी कि उन्होंने भी सत्याग्रह और पोस्टर देखे होंगे। इसलिए, एक तरफ तो उसे कक्षा में बैठने से डर लग रहा था, दूसरी तरफ बाहर खड़े अन्य बच्चों का सामना करने से भी डर लग रहा था। क्या उन्हें यह कहकर चुप कराया जा सकता है कि "यह मेरा निजी मामला है"? फिर हमारे कॉलेज के दरवाजे पर उस सत्याग्रह का क्या कारण है?
जब प्रोफेसर ने बाकी लोगों के साथ उसका नाम पुकारा, तो उसने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। उन्होंने उसी गति से अगले नाम पुकारे और जल्द से जल्द अध्ययन का अगला भाग पढ़ाना शुरू कर दिया। अनुपाना ने एक हल्की सी आह भरी।

सर पढ़ा रहे थे। अनुप का मन द्वार के पास चल रहे सत्याग्रह और वहाँ लगे खंभे के बारे में सोच में डूबा हुआ था। क्या वहाँ अभी भी नारे लग रहे होंगे? कॉलेज की इमारत, दफ्तर, यूनियन रूम, पुस्तकालय, सिविल विभाग - यह कमरा भी इन सबके पश्चिम में ही है। लाउडस्पीकर - हाँ। लगता है कुछ शोर सुनाई दे रहा है। क्या वे चिल्ला रहे हैं?
नहीं तो इंजीनियरिंग पढ़ने का क्या फायदा? क्यों न मैं अपनी माँ के कपड़ों का कारोबार ही बढ़ा लूँ? सभी मारवाड़ी इतना ही कारोबार करते हैं! उन्होंने इंजीनियरिंग या एमबीए कहाँ से किया? वे यहाँ से सीधे हॉस्टल जाते, अपना सामान पैक करते और इस छोटे से गेट से निकल जाते। उन्हें वहाँ बैठकर जितना चाहे बड़बड़ाने दो!
लेकिन जल्द ही उन्हें अपने पलायनवादी विचारों पर शर्म महसूस हुई। उन्हें डोडप्पा द्वारा सुनाई गई एक कहानी याद आई। महाभारत में एक जगह है, जहाँ विदुर दुर्योधन से कहते हैं, चाहे कुल के लिए किसी व्यक्ति का बलिदान करना पड़े, तो वह अवश्य करना चाहिए – चाहे गाँव के लिए पूरे कुल का बलिदान करना पड़े – चाहे देश के लिए पूरे गाँव का बलिदान करना पड़े, तो वह अवश्य करना चाहिए! लेकिन आत्मा द्वारा प्राप्त सत्य के लिए व्यक्ति को संपूर्ण संसार त्यागने के लिए तैयार रहना चाहिए। आधुनिक विश्व के परिप्रेक्ष्य से गांधीजी का यही तात्पर्य था, कि यदि किसी को अपनी आत्मा में यह महसूस हो कि यह सत्य नहीं है, तो उसे इसे ज़ुबान से कहना चाहिए! यही सत्याग्रह की वास्तविक शक्ति है – यह शक्ति भारतीयों के मन में बढ़नी चाहिए! – हाँ – मुझे याद आ गया।
परिवार की खातिर किसी पुरुष को छोड़ दो। गांव की खातिर पूरे कबीले को छोड़ दो।
गांव का अर्थ एक काउंटी से है। अपने भले के लिए धरती छोड़ दो।
डोडप्पा ने यह श्लोक याद कर रखा था। मैंने भी इसे वाद-विवाद में कई बार इस्तेमाल किया था। मैं इस कॉलेज वाद-विवाद में भाग क्यों नहीं लेता? अगर मैं भाग लेता हूँ और ये चार वास्तविक उद्धरण देता हूँ, तो पहला अंक कहीं नहीं जाएगा!
वहाँ मौजूद उन पचास लोगों को गूगा चूसने दो – यहाँ का सिद्धांत तो तुम जानते ही हो – मुझे इसके बारे में कुछ नहीं पता, वह हाथ हिलाते हुए कहता। क्या उन्होंने महादेवी के साथ मेरी तस्वीर खींची होगी? इसके बजाय, मैं पुलिस में शिकायत करता कि वे मुझे पैसे के लिए इस तरह परेशान कर रहे हैं? कम से कम पुलिस तो उन्हें जानती है। मैंने पिताजी को बताया और उनसे बैंगलोर से फोन करवाया, यह कहते हुए कि उन्होंने अपना तम्बू समेटकर लगा दिया है, या फिर वे ऐसे ही बैठे हैं, कौन जाने!
तभी विभाग का पुलिसकर्मी अंदर आया—उसके हाथ में एक नोट था—लेकिन इस समय, चाहे कोई भी उसे बुलाए, उसे नहीं जाना चाहिए—जबकि वह खुद को चेतावनी दे रहा था, प्रोफ़ेसर ने कहा।
अनुप रविंद्र, प्रधानाचार्य ने आपको बुलाया है..."
अनुप एक पल के लिए असमंजस में पड़ गया। फिर उसने खुद से कहा – मैं अपने दिल की बात कहने को तैयार हूँ! मुझे डरने की क्या ज़रूरत है? भले ही मुझे कॉलेज से निकाल दिया जाए, मेरी माँ का कपड़ों का व्यवसाय है! मैंने उसी पर ध्यान केंद्रित किया है कि मैं देश-विदेश में अच्छा व्यवसाय करके जितना चाहूँ उतना पैसा कमाऊँगा!
इस विचार से उसका आत्मविश्वास डगमगा गया। उसने अपनी फाइल उठाई और गर्दन अकड़कर कक्षा से बाहर निकल गया।
अध्यक्ष प्रधानाचार्य के कक्ष के बाहर सोफे पर बैठे थे। उनके साथ दो और लोग थे। लेकिन ऐसा लग रहा था कि वे जानबूझकर आए थे। अध्यक्ष के चम्मच दिखाई दे

रहे थे! उन्होंने उन्हें तिरस्कार भरी नज़रों से देखा और आत्मविश्वास से अंदर जाकर प्रधानाचार्य से विनम्रतापूर्वक कहा,
``गुड मॉर्निंग, सर..."
प्रधानाचार्य के चेहरे पर नाराज़गी थी। उन्होंने उसे बैठने के लिए नहीं कहा। उन्होंने एक पल के लिए उसके चेहरे को देखा और पूछा,
क्या बात है?..."
"सर, बाहर बैठे गुंडे को अंदर बुलाइए और उससे पूछिए कि आप मुझसे क्या पूछना चाहते हैं! मुझे कोई गुप्त पूछताछ नहीं चाहिए!..."
प्रधानाचार्य ने घंटी बजाई और अंदर आए चपरासी को बाहर बैठे सिंगरावल्ली के पुट्टेगौड़ा परिवार को अंदर आने के लिए कहा। पुट्टेगौड़ा परिवार ने प्रधानाचार्य की अनुमति की परवाह किए बिना अंदर आकर, इसे अपना अधिकार समझते हुए, वहाँ कुर्सी पर बैठ गए। यह देखकर अनुप की नज़र प्रधानाचार्य के चेहरे पर असंतोष की लकीरों पर पड़ी। प्रधानाचार्य के कुछ कहने से पहले ही उसने कहा,
"सर, मैं समझता हूं कि आपका समय कीमती है। इसलिए इसे बर्बाद करना उचित नहीं है। मैकेनिकल विभाग के जयराज-हनुमंतप्पा और तीन-चार अन्य लड़के गवाह के तौर पर यहाँ मौजूद हैं - उन्हें बुलाइए। चार दिन पहले, जब क्लास चल रही थी, उसने मुझे एक नोट भेजा और मुझे बुलाया - मुझे ब्लैकमेल करने की कोशिश की। वह पचीस हजार रुपये मांग रहा था। उस समय उसके साथ एक गुंडा भी था। मैंने उन दोनों को मार डाला। उसने यह सब गुस्से में किया!"
"क्या?" प्रधानाचार्य ने पुट्टेगौड़ा की ओर मुड़ते हुए पूछा।
"वह अंगूर के बाग में आया और उसने बाग मालिक की बेटी को गर्भवती कर दिया..."
अनुप ने उसे वहीं रोककर कहना शुरू किया,
मैं आपको वो भी बताता हूं, साहब! छह दिन पहले, मैं टाइम पास के लिए मोटरसाइकिल पर घूमने निकला था। मैंने शौच के लिए मोटरसाइकिल वहीं खड़ी की और अदोशाल चला गया। जब मैं एक पेड़ के नीचे बैठा था, तभी चार आदमी आए और मुझे धमकाने लगे और मुझसे पैसे मांगने लगे। उनका कहना था कि मैं चोरी करने आया हूँ। अगर मैंने मना किया, तो उन्होंने मुझे पेड़ से बांधकर जान से मारने की धमकी दी। मेरी जेब में एक हजार रुपये थे। तभी बाग के मालिक आ गए। उनके सामने मैंने वहाँ के रखवाले की बेटी पर हाथ उठा दिया, तो वे मुझे डांटने लगे। मालिकों ने उन पर चिल्लाया और मुझे छोड़ दिया। वह उनका ही एक गुंडा है। अगर वह चाहे तो पुलिस में शिकायत दर्ज करा ले। मैं अदालत में अपना बचाव करूंगा!
पुट्टेगौड़ा ने यह भी कहा,
"तब से वह गर्भवती है, इसलिए मैं एक मेडिकल सर्टिफिकेट भी तैयार करवा लूंगा!"
अनुप ने उतने ही दृढ़ स्वर में कहा, "अदालत मुझसे पूछेगी कि मैं उस मेडिकल जांच से इनकार क्यों करूं? जब मैं कहता हूं कि मैंने कुछ नहीं किया, तो मुझे किस बात का डर है?"
प्रधानाचार्य इस बात से परेशान थे कि सत्याग्रह को कैसे रोका जाए, जो राहगीरों का ध्यान आकर्षित कर रहा था। उन्होंने पुट्टेगौड़ा की ओर मुड़कर कहा,
मैं इस बात में नहीं पड़ना चाहता कि आरोप सही है या गलत। यह एक निजी शिकायत है। अगर आपके साथ अन्याय हुआ है, तो आपको पुलिस में शिकायत करनी चाहिए, अन्यथा अदालत जाइए!..."
"महोदय, आपको कुछ तो तय करना होगा! आज हमारे देश के ग्रामीण लोगों का शोषण करके धनवान बने लोगों को प्रायश्चित के रूप में गरीबों को कुछ देना ही होगा!..."

"तुम्हारा क्या मतलब है?" प्रधानाचार्य ने पूछा।
"उनसे पचास हजार रुपये मांगो। मैं उन्हें इसके लिए मना सकता हूँ!"
प्रधानाचार्य बहुत क्रोधित थे। अनूप का कहना है कि वह उन्हें ब्लैकमेल करने आया था, और प्रधानाचार्य को भी इस बात का पूरा यकीन था। उन्होंने कहा,
"देखिए, अगर आप चाहें तो अदालत जा सकते हैं! लेकिन हमारे संस्थान के सामने इस तरह का हंगामा करना ठीक नहीं है - मैं इसे बर्दाश्त नहीं करूँगा! अगर आप सीधे नहीं जाते हैं, तो मुझे पुलिस को बुलाना पड़ेगा!"
"इंजीनियरों को प्रशिक्षित करने वाला कॉलेज गरीबों के जीवन को कैसे समझ सकता है! महोदय, कृपया गंभीरता से विचार करें..."
"ये क्या बकवास कर रहे हो! पहले तुम यहाँ से जाओ! नहीं तो मुझे पुलिस बुलानी पड़ेगी!" प्रधानाचार्य की आवाज़ अब तेज़ हो गई।
"हम आपके परिसर में नहीं बैठे थे! अगर हम सरकार के परिसर में बैठकर सत्याग्रह करते, तो आपको मना करने का क्या अधिकार होता?" पुट्टेगौड़ा ने पलटवार किया।
"यह हमारे कॉलेज का प्रवेश द्वार है!..."
आपका क्या कहना है? यह हमारा कॉलेज है! समिति सदस्य गुरप्पा हमारे हैं! वे हमारी पार्टी से हैं!
प्रधानाचार्य भी एक क्षण के लिए गंभीर हो गए। प्रधानाचार्य को यह भी पता था कि समिति सदस्य गुरप्पा शिंदी के काम से कडापा-बल्लारी-कुरनूल-अनंतपुर आदि स्थानों पर जाया करते थे। उन्हें लगा कि ऐसे लोगों को समिति सदस्य नहीं बनाया जाना चाहिए, लेकिन यह उनके हाथ में नहीं था। यह जानते हुए कि गुरप्पा अब गांव में नहीं हैं, उन्होंने कहा,
"चाहे कुछ भी हो जाए, हर तरह से हमारे कॉलेज की देखभाल करना मेरी जिम्मेदारी है।" और उन्होंने पीए को फोन करके पुलिस से संपर्क करने को कहा।
जब पुलिस पहुंची तो सत्याग्रह में बैठे सभी लोग डर गए। उनमें से पुट्टेगौड़ा कुछ देर तक पुलिस से बहस करते रहे और कहते रहे, "यह सरकारी ज़मीन है - इसका कॉलेज से क्या लेना-देना है?..." लेकिन पुलिस ने कहा, "प्रिंसिपल से शिकायत मिली है - इससे कैंपस की शांति भंग होगी। जिसके साथ अन्याय हुआ है, वह हमसे शिकायत दर्ज कराएं - हम मामले की जांच करेंगे।"
अंततः, जब पुलिस ने लाठीचार्ज करने के लिए अपनी लाठियाँ उठाईं, तो सत्याग्रह में बैठे लोग उठकर भागने लगे। 'अरे... भागो मत...' पुट्टेगौड़ा चिल्लाने लगा, लेकिन सब भागने लगे। पुट्टेगौड़ा मोटरसाइकिल पर उनके पास आया और बोला,
"क्या तुम भाग रहे हो? देखो, चलो सब मिलकर टाउन हॉल चलते हैं। वहाँ बैठक करते हैं—तब तुम्हें तुम्हारे लंच के पैसे मिल जाएँगे।"
फिर, "भ्रष्ट प्रोफेसरों पर धिक्कार हो," "अनुप रविंद्र पर धिक्कार हो," "गरीब लड़कियों को धोखा देने वालों पर धिक्कार हो," "पुट्टेगौड़ा की विजय हो," जैसे नारे लगाते हुए पूरी भीड़ टाउन हॉल की ओर चल पड़ी।

■

जब पुलिस उन सबको ले गई, तो अनूप की जिंदगी में हलचल मच गई। आधे घंटे बाद, उसे चिंता सताने लगी कि कहीं ये लोग उसके खिलाफ पुलिस में शिकायत न दर्ज करा दें। अगर ऐसा हुआ तो ये मानना पड़ेगा कि हम हर बार पिता को दस रुपये और बेटी को चालीस रुपये दे रहे थे! साथ ही, मुझे ये भी कहना पड़ेगा कि मैं हर बार गर्भनिरोधक का इस्तेमाल कर रही थी, इसलिए उसकी गर्भावस्था के लिए मैं जिम्मेदार नहीं हूं। लेकिन अगर वे मेडिकल जांच पर जोर दें, तो क्या मुझे मान जाना चाहिए या नहीं? क्या मुझे तुरंत किसी वकील से सलाह लेनी चाहिए? लेकिन किसके पास जाऊं? अभी तक तो वकील से मिलने का सवाल ही नहीं उठा है।

उसने तुरंत अपनी मोटरसाइकिल निकाली और अदालत की ओर चल पड़ा। अदालत परिसर में काले कोट पहने कई वकील घूम रहे थे। कुछ देर तक अनूप असमंजस में रहा। उसे इनमें से किससे बात करनी चाहिए? उसे कितना सच बताना चाहिए? फिर उसने तीस साल के एक वकील से संपर्क किया जो काले कोट में स्कूटर चला रहा था।
मुझे एक मामले पर कुछ सलाह चाहिए...
स्कूटर का इंजन बंद करते हुए उसने पूछा,
क्या बात है?...
यह काम कुछ हद तक निजी है...
"चलिए फिर वहीं चलते हैं..." वकील ने कहा और उसे अदालत के सामने वाले बगीचे में ले गया। वहां बेंच पर बैठने के बाद, अनुपम ने उसे दो सौ रुपये दिए और यह सोचकर कि उसे वकील से कुछ भी नहीं छिपाना चाहिए, उसने अब तक मदन्ना, महादेवी, वहां के बगीचे आदि के बारे में सब कुछ विस्तार से बता दिया। उसने बस इतना नहीं बताया कि वह पिछली यात्रा में अनीता के साथ वहाँ गया था।
सब कुछ सुनने के बाद, युवा वकील ने आत्मविश्वास से कहा,
"अगर कोई वेश्या गर्भवती हो जाती है, तो ग्राहक की कोई ज़िम्मेदारी नहीं होती। इसलिए, यह साबित करना ज़रूरी है कि वह वेश्यावृत्ति में शामिल थी। साथ ही, ऐसा कोई कानून नहीं है जो यह कहता हो कि शारीरिक संबंध होने मात्र से शादी कर लेनी चाहिए। यहां तक कि चिकित्सीय जांच से भी यह साबित हो सकता है कि कोई बच्चा उसका नहीं है, लेकिन यह साबित नहीं हो सकता कि वह बच्चा उसका ही है। आपके मामले में, चूंकि आप गर्भनिरोधक का इस्तेमाल कर रही हैं, इसलिए इसकी संभावना 99 प्रतिशत नहीं है। क्या आप भारतीय गर्भनिरोधक इस्तेमाल कर रही थीं या आयातित?"
``इंपोर्टेड..."
``तो फिर सौ प्रतिशत नहीं! डरो मत। अब तक जो हुआ है, उसे देखकर लगता है कि वे पुलिस के पास नहीं जाएंगे। क्योंकि उनका मकसद पुलिस को धमकाना नहीं है! उनका एकमात्र उद्देश्य ब्लैकमेल करके पैसा वसूलना है! डरने की कोई वजह नहीं है। अगर मन करे तो मुझसे मिलो। ज़रूरत पड़ने पर हम अपने वरिष्ठों से भी सलाह ले सकते हैं—" उन्होंने अपनी जेब से एक कार्ड निकाला, ``इसे संभाल कर रखना। अगर पुलिस तुम्हें परेशान करे तो मुझे फोन करना—मैं तुरंत दौड़कर आऊंगा!—यहां कोई मुगल नहीं है—यह लोकतंत्र है! अन्याय के खिलाफ लड़ने का अधिकार सभी को है। इसीलिए तो हम यहां मदद के लिए हैं, है ना!"
अनूप अकड़ी हुई गर्दन के साथ बुलेट चलाते हुए हॉस्टल पहुंचा। सब लोग खाना खा रहे थे। जैसे ही उसके दोस्तों ने उसे देखा, वे उसके चारों ओर जमा हो गए और पूछने लगे, "क्या हुआ?"
"मेरे पास अपनी खुद की गोली है! मेरे हाथ में सोने की घड़ी है! अगर मैं तुम्हें ब्लैकमेल करूँ, तो मुझे उम्मीद है कि तुम पैसे दे दोगे! तुम जानते हो कि इंजीनियरिंग कॉलेज के बच्चे अमीर परिवारों से आते हैं, मेरे चाचा!" अनुपना ने ऊँची आवाज़ में कहा - इतनी ऊँची कि बिना पूछे भी सुन सकती थी।
कंप्यूटर के अंतिम वर्ष के छात्र अहमद्मियन ने कहा,
"अब आपको पता चल गया होगा कि अगर आप इसे अपने दोस्तों को दिए बिना अकेले खाएंगे तो आपको पेट दर्द होगा, है ना?"
यह सुनकर अनूप को गुस्सा आ गया। गुस्से में आकर उसने कहा,
"अगर तुम इसे चुराना भी चाहो, तो याद रखना, तुम असली मल नहीं खाओगे!"
लेकिन तब इस बारे में किसी ने खुलकर बात नहीं की।

■

शाम साढ़े चार बजे लैब का काम खत्म करते समय, उसने अनीता को सामने से आते देखा। अनीता की नजरें मिलते ही अनूप एक पल के लिए असमंजस में पड़ गया। फिर तुरंत ही उसने खुद को संभाला और अनीता के पास जाकर बोला,
तुम कहाँ थे? मैं तुम्हें ढूंढ रहा था..."
वह बिना कुछ कहे उसके चेहरे को देख रही थी।
उन्होंने आगे कहा,
"क्या आपने गांव के गुंडों की अक्ल देखी है?"
श्रीमान अनुप – अगर आप सच बोलेंगे तो मैं आपका कुछ सम्मान करूंगा!
आपका क्या मतलब है? मैं किस बारे में झूठ बोल रहा हूँ?..."
"मुझे बताओ तुम क्या कह रहे हो!" उसने तीखे स्वर में कहा।
उसे ऐसा लग रहा था जैसे किसी को उसे गिराना ही होगा। वह उससे नाराज़ भी था। उसने ऊंची आवाज़ में पूछा,
आप क्या कह रहे हैं?
बरामदे में बैठे दूसरे लड़के-लड़कियों ने उन्हें देख लिया। इसलिए उसने अपनी आवाज़ धीमी करके उससे कहा,
``यहाँ नहीं... चलो वहाँ चलते हैं..."
बाहर एक बड़े पेड़ के नीचे जाकर उसने सीधे पूछा,
"आपने कहा था कि सुबह का सत्याग्रह पैसे वसूलने के लिए किया जा रहा था, किसी ने मुझे बताया था। क्या आप कह रहे हैं कि इसमें जरा भी सच्चाई नहीं है?"
"इस सवाल से आपका क्या मतलब है? आपको क्या लगता है कि मेरा क्या मतलब है?" अनुपान ने नैतिक आक्रोश दिखाते हुए पूछा।
मुझे वह जगह पता है जहां आप पर इस धंधे का आरोप लगाया गया था। हम वहाँ गए थे... उस समय पचास साल का एक आदमी आपकी बुलेट का हैंडल पकड़े खड़ा था... फिर उसने आपसे कन्नड़ में बात की। मुझे लगा कि उस समय मैं उसका मतलब समझ गया था - लेकिन मुझे उसका सटीक अर्थ समझ नहीं आया था। अब मुझे सब याद आ रहा है, सब कुछ याद है! मुझे लगता है कि आप बाद में उसे ढूंढने गए थे। आज सुबह सत्याग्रह में बैठे एक व्यक्ति से जब मैंने पूछताछ की, तो उसने उस जगह का विस्तृत विवरण दिया। चलिए उस जगह चलते हैं। मैं खुद पूछताछ करूंगा...
उसका चेहरा साफ हो गया। वह इस मामले में दूसरों को बेवकूफ बनाने के लिए कुछ भी कह सकता था – लेकिन वह पहले ही उस बात का जिक्र कर चुकी थी! यह सोचकर कि अगर वह अब चुप रहा तो उसे सारा दोष अपने ऊपर लेना पड़ेगा, उसने कहा,
"वो लोग किसी भी बात पर तुम्हें ब्लैकमेल करने से नहीं हिचकिचाते! अगर तुम वहां जाकर अपने नाम के बड़े-बड़े पोस्टर लगा दो तो क्या करोगे? मुझे भी बताओ, तुम्हें वो जगह और वो सड़क ज़रूर याद होगी। अगर अब भी शक है तो रुक जाओ। मैं मोटरसाइकिल लेकर आता हूँ। चलो वहाँ चलते हैं और तुम्हें ले आते हैं। आज सुबह पुलिस ने उनकी पिटाई की है, इसलिए वो गुस्से में हैं। अगर उन्हें हमारे खिलाफ कुछ करना है, तो करने दो..."
लेकिन अब वह डर गई थी। यह सोचते हुए कि उसे इस मामले में क्यों शामिल होना चाहिए, उसने कहा,
मैं वहां नहीं आऊंगी। लेकिन मैं यह भी स्वीकार नहीं करूंगी कि तुमने कुछ नहीं किया!..." और वह चली गई।
वह उसी दिशा में देखता रहा जिधर वह गई थी। यहाँ तक कि प्रधानाचार्य ने भी उसकी बात पर विश्वास कर लिया! लेकिन वह तो स्पष्ट रूप से अविश्वास के साथ चली गई! बदमाश!

लेकिन चाहे उसे कितनी भी डांट पड़ी हो, उसके दिल में बसी निराशा ही झलक रही थी। उसी उदास मन से वह हॉस्टल की ओर चल पड़ा। चूंकि यह उसका पाँचवाँ सेमेस्टर और तीसरा साल था, इसलिए इस साल उसे अलग कमरा मिला था। पास ही बने शेड में उसकी मोटरसाइकिल रखने की जगह भी थी।
वह अपने कमरे में दाखिल हुआ और सोफे पर लेट गया। उसके अंदर गुस्सा उबल रहा था – गंदे लोग! गंदा देश! यहां न्याय जैसी कोई चीज नहीं है! निष्पक्ष व्यवहार का कोई मूल्य नहीं है! उस अमेरिकी फिल्म में माफिया गिरोह – उसका नाम क्या था? मुझे याद नहीं आ रहा – और इन लोगों में क्या फर्क है?
कुछ समय बाद, मुझे कहीं जाने का मन हुआ। नहीं, बिल्कुल नहीं। अब जब मैं उससे मिल चुकी थी, तो मुझे लगा कि वह मुझसे 1760 सवाल पूछेगा और मुझे अपने साथ चलने के लिए मजबूर करेगा! उस बकवास की कोई ज़रूरत नहीं है।
रात के खाने के बाद, वह अपने कमरे में आया, दरवाजा बंद किया और सो गया। अनीता की बातों से जो दर्द हुआ था, वह अब कम हो चुका था। उसने अपनी जेब में हाथ डाला और वकील द्वारा दिया गया कार्ड निकाला। 'यशवंत कुमार - एम.ए.एल., एल.बी. -' चालाक है! उसने कहा था, यही सच है! जो अदालत में टिक नहीं पाते, वही ब्लैकमेल के जाल में फंस जाते हैं! वकील के दिए वादे को बार-बार याद करते हुए वह सो गया।
अचानक रात में मेरी नींद खुली, और कोई दरवाज़ा खटखटा रहा था। अनुप ने घड़ी देखी – सुबह के एक बज रहे थे। खटखटाहट बहुत हल्की थी। उसी समय, कोई धीरे से पुकार रहा था।
``अनुप! अनुप..."
लेकिन अनुप उस आवाज को पहचान नहीं पाया। उसने पूछा,
यह कौन है?...
``दरवाजा खोलो... एक संदेश है..."
अनुपम उठा और दरवाजा खोला। दरवाजे पर खड़ा व्यक्ति एक अजनबी था। उसकी उम्र लगभग तीस वर्ष थी। उसने जींस और आधी लंबाई का बुश कोट पहना हुआ था और उसकी मूंछें थीं। उसने अनुपम से कहा, 'अंदर मत आओ, अंदर आओ' और खुद अंदर चला गया। अनुपम बुरी तरह डर गया था। इससे पहले कि वह पूछ पाता कि वह कौन है, उसी वर्दी में दो और आदमी अंदर आ गए। अंदर आते ही वे उस पर टूट पड़े और उनमें से एक ने उसका मुंह पकड़ लिया ताकि अनुपम चीख न सके। बाकी दोनों ने जबरदस्ती उसके दोनों हाथ पीछे की ओर मोड़ दिए और उन्हें अपने साथ लाई रस्सी से बांध दिया। उन्होंने उसके मुंह में एक रबर की गेंद ठूंस दी और उसकी पीठ पर जोर से घूंसे मारे। उन्होंने अपने जूतों के तलवों से उसकी जांघों और पिंडलियों पर जोर से मीरा। अनुपम को उस पर दया आ रही थी, उसे लग रहा था कि वह मर जाएगा। उसे जोर से चीखने का मन कर रहा था, लेकिन मुंह में फंसी गेंद के कारण सांस लेना मुश्किल हो रहा था। पीठ-कंधे-बांहें-छाती-पेट-जांघें-कमर-कान की लोब-तीनों पर एक-एक करके वार हो रहे थे। अनुप को ऐसा दर्द हो रहा था मानो उसकी हड्डियाँ टूट गई हों। यह सोचकर उसका मानसिक संतुलन बिगड़ रहा था कि वे उसकी जान लेने आए हैं—उसके पास इससे बचने का कोई रास्ता नहीं था।
उसने देखते ही देखते अपना मानसिक संतुलन खो दिया।
जब उन्हें होश आया, तो मठ से पानी उनके चेहरे पर छिड़का जा रहा था। उन्होंने पंखा भी चला दिया था। अनुप के होश में आने की पुष्टि करने के बाद, उनमें से एक ने कहा,
"देखो! अगर अगले पंद्रह दिनों के भीतर हमें पचास हजार रुपये और आज के दो हजार रुपये का खर्च नहीं मिला, तो हम मान लेंगे कि तुम कभी अपनी माँ के गर्भ से पैदा ही नहीं हुए! समझे? देखो..." उसने अपनी जेब से चाकू निकालते हुए,

बटन दबाते हुए और उसकी चमकती हुई धार को अपनी गर्दन के चारों ओर घुमाते हुए कहा।
"मैं आज ही उसे खत्म करने वाला था... लेकिन मैं तुम्हें पंद्रह दिन का और समय देता हूँ! अगर तुमने इस समय के भीतर भुगतान कर दिया, तो तुम सुरक्षित हो! नहीं तो..." उन्होंने चाकू की धार फिर से दिखाते हुए कहा। फिर उन्होंने उसके दोनों पैर कसकर बाँध दिए और चेतावनी दी, "अगर तुम चिल्लाए, तो सावधान रहना!" उन्होंने उसे ज़मीन पर पटक दिया, लैंप और पंखा बंद कर दिया, दरवाज़ा बाहर से बंद कर दिया और सब लोग चले गए।
अनूप के कानों में घंटियाँ बज रही थीं। जब उसने छात्रावास की पिछली दीवार पर किसी के चढ़ने और दूसरी तरफ कूदकर भागने की आवाज़ सुनी तो उसे थोड़ी राहत मिली। कॉलेज परिसर की दीवार कई जगहों से ढह गई थी। रात की सुरक्षा के लिए दो लोग तैनात थे। लेकिन वे कभी भी पूरी रात जागते नहीं थे। वे पूरी रात सोते थे और कभी-कभार सीटी बजाकर अपना कर्तव्य निभाते थे!
अनूप के मुंह में फंसी रबर की गेंद उसके दांतों के अंदरूनी हिस्से में मजबूती से चिपक गई थी। अगर किसी ने उसे उंगली से न निकाला होता, तो वह हमेशा के लिए वहीं अटकी रहती! अगर वे उसके हाथ-पैर छुड़ाने की कोशिश करते, तो उसकी खाल उतर जाती। अगर सुबह किसी ने ध्यान दिया होता और दरवाजा खोला होता, तो सब ठीक होता! - वरना, एक-दो-तीन दिन में - मैं यहीं मर जाता, वरना - मेरी पीठ में ऐसा दर्द हो रहा था जैसे चार-पांच हड्डियां टूट गई हों - अगर हड्डियां सच में टूट गई होतीं, तो मेरे अंदर संक्रमण हो जाता - यह सोचकर ही उसे रोना आ रहा था। चेयरमैन भी उन्हीं में से एक है! अगर वह वापस आकर मेरा गला भी काट दे, तो किसी को पता नहीं चलेगा - कौन जाने उस समय क्या समय रहा होगा -
अनूप के मन में यह भावना घर कर गई कि इस क्षण स्वयं को बचाना उसके लिए अत्यंत आवश्यक है। उसने गेंद को बाहर फेंकने की कोशिश की, लेकिन गेंद उतनी ही बड़ी होकर फिर से उसके मुंह में भर गई। उसने अपने शरीर की सारी शक्ति समेट ली और गेंद के उस हिस्से को काटने लगा जो उसके दांतों के पास था। इससे गेंद छोटी हो गई और वह अपनी जीभ हिलाने में सक्षम हो गया। फिर, अपनी जीभ से गेंद को घुमाते हुए और अपने दांतों से उसके और भी छोटे टुकड़े निकालते हुए, वह और भी छोटे टुकड़े निकालने में सफल रहा। उसने रबर के टुकड़ों को थूककर अपना मुंह खोला। वह जोर-जोर से पुकारने लगा, अगले कमरे में पंचलिंगप्पी और इस कमरे में जयदेव का नाम पुकार रहा था। नींद के मामले में वे दोनों कुंभकर्ण के अवतार थे। लेकिन चूंकि कोई और इलाज नहीं था, इसलिए वह अपनी पीठ के दर्द और गले की खराश को नजरअंदाज करते हुए पुकारता रहा।
अंततः, जयदेव जाग उठा। उसने चिल्लाकर पूछा,
क्या, अनूप?
अनूप ने उसे स्थिति का कुछ अंदाजा दिया। वह उठा और दरवाजा खोलने लगा, तभी उसे पता चला कि उसका दरवाजा बाहर से बंद है। उसने बगल वाले कमरे में रहने वाले नंजेश गौड़ा को आवाज़ दी और जगाया। नंजेश गौड़ा तुरंत जाग गया। उसका दरवाजा भी बंद था। उसने बगल वाले कमरे में रहने वाले कृष्णराज अरास को आवाज दी और जगाया। लेकिन उसका कमरा बंद नहीं था। वह बाहर आया और सबके दरवाजे खोल दिए। सब अनूप के कमरे में आ गए। उन्हें लगा कि यह सब चोरी का मामला होगा। जयदेव-अरीस ने उसके हाथ-पैर खोल दिए और उसे उठाया। उसने भी खड़े होने की कोशिश की। लेकिन पीठ, कमर और पैरों में दर्द के कारण वह खड़े-खड़े गिर गया। सबने उससे पूछा कि क्या हुआ था। उसने सब कुछ बता दिया।

"अगर कॉलेज परिसर में ऐसी घटना हो रही है, तो छात्रों की जान कैसे सुरक्षित रहेगी? कॉलेज के चारों ओर की दीवारें ऊंची की जानी चाहिए - गश्त के लिए एक चौकीदार को स्टन गन के साथ तैनात किया जाना चाहिए! कल सभी कॉलेज के छात्र हड़ताल पर चले जाएं -" पंचलिंगगौड़ा ने प्रस्ताव रखा। वे मैसूर में छात्रों के एक तरह से नेता थे।
"मैसूर के सभी छात्रों को हड़ताल पर चले जाना चाहिए..." जयदेव ने तुरंत सहमति जताई।
इसी बीच, दर्द असहनीय होने पर अनुप रोने लगा। जयदेव ने कहा,
हमें क्या करना चाहिए? मुझे लगता है हमें डॉक्टर को बुलाना चाहिए..."
"यह पुलिस का मामला है। हमें पहले पुलिस को सूचित करना होगा... उसके बाद वे डॉक्टर को बुलाएंगे। हमें पहले प्रधानाचार्य को सूचित करना चाहिए!" नंजागौड़ा ने सुझाव दिया।
पंचलिंगगौड़ा और अरास् ने अनुप की गोली ली और वार्डन के पास गए। गोली चलाते हुए पंचलिंगगौड़ा ने कहा,
``यह छोटा लड़का कुछ देर तक गोली मांगते समय अपनी नखरेबाजी का प्रदर्शन करता था! अब यह उसके हाथ में कैसे आ गई!"
“वह इस गोली की वजह से मुसीबत में है। गाड़ी मिलना भी एक तरह की बात है। क्या यह हीरे या माणिक मिलने जैसा नहीं है? बिलकुल सही! अगर आपको कोई रत्न या गाड़ी न मिले तो बहुत परेशानी होती है! मेरे दादाजी इस बारे में बहुत अच्छी तरह बात करते हैं! वे महाराज को इस बारे में सलाह देते थे। अनुप को ले जाकर उसका कार्ड दिखाना चाहिए! साथ ही, उसे गाड़ी का नंबर और खरीदने की तारीख वगैरह भी बता देनी चाहिए, ताकि –” अरास ने खुद ही इसका पूरा हल निकाल लिया।
वार्डन जाग गया। उसने पूरी कहानी सुनी। उसने एक पल सोचा कि क्या इस असमय समय में प्रधानाचार्य को जगाना चाहिए या नहीं। उसने पूछा,
"क्यों न हम उन्हें कल सुबह बता दें?"
"पुलिस को सूचना दिए बिना डॉक्टर को नहीं बुलाया जा सकता। अगर सुबह तक अनुप को कुछ हो जाता है, तो कौन जिम्मेदार होगा?"
इस पर कोई प्रतिक्रिया न मिलने पर वार्डन ने प्रधानाचार्य को बुलाया। प्रधानाचार्य तुरंत आ गए। आते ही उन्होंने अनुप के मुंह से सारी सच्चाई सुन ली। फिर उन्होंने दफ्तर खोलकर उस इलाके के पुलिस स्टेशन में फोन किया, लेकिन किसी ने फोन नहीं उठाया। कई बार कोशिश करने के बाद, दूसरी तरफ से किसी ने रिसीवर उठाया और जम्हाई लेते हुए 'हैलो' कहा। जब प्रधानाचार्य ने सब कुछ बताया, तो उस आदमी ने कहा,
लेकिन किसी को दिलचस्पी नहीं है! आप किसे मनाएंगे?
प्रधानाचार्य ने नियंत्रण कक्ष को फोन किया। उन्होंने उन्हें फिर से बताया,
इसकी सूचना अपने स्थानीय पुलिस स्टेशन को दें...
प्रधानाचार्य ने उसे सब कुछ बताया। यह सुनने के बाद उसने कहा,
"लेकिन हम क्या करेंगे, महोदय?"
कोई और विकल्प न होने पर उन्होंने एसपी को फोन किया और उन्हें जगाया।
पंद्रह मिनट में ऐसपी दो कांस्टेबलों के साथ आ गए। उन्होंने अनुप की बात फिर ध्यान से सुनी। अनुप के दोस्तों से उन्हें पता चला कि बगल के कैमरे भी बंद हैं। फिर उन्होंने पंचनामा कराने का काम सब-इंस्पेक्टरों को सौंपकर अनुप को अपनी कार में अस्पताल ले गए। अनुप को परीक्षा कक्ष में छोड़ने के बाद प्रधीनाचार्य और वार्डन आपस में बातचीत करने लगे।
इसमें कोई शक नहीं कि पुट्टेगौड़ा ने ही इस मामले को अंजाम दिया है! यह वाकई ब्लैकमेल का मामला है। मैं उसे जरूर पकड़ूंगा। अगर हम उसके हुलिए को देखें

तो ये गुंडे मैसूर के लगते हैं! इन्हें पकड़ना मुश्किल नहीं है। इनके नॉम पुट्टगौड़ा से ही पता चल जाएंगे...
डॉक्टर पूरी जांच के बाद बाहर आए और बोले,
"हमें कुल हड्डी रोग विशेषज्ञ की रिपोर्ट से पक्का पता चल जाएगा - हमने पूरी जांच कर ली है। मुझे लगता है कि हड्डियां ज्यादा क्षतिग्रस्त नहीं हैं। मांसपेशियों में बहुत दर्द है। इससे सूजन भी आ गई है। इसके अलावा, इसका मरीज के मानसिक स्वास्थ्य पर ज्यादा असर पड़ा है। फिलहाल हम उसे दर्द निवारक दवाएं दे रहे हैं और वार्ड में सुलाकर रख रहे हैं।"
मरीज पर दोबारा हमला होने से बचाने के लिए एसपी ने सैनिक को उसके साथ वहीं छोड़ दिया और वहां से चले गए।

■

रविंद्र उस शाम जल्दी ही अपने दफ्तर से निकल गए थे क्योंकि उन्हें एक नाटक देखना था। नाटक खेत्म होने के बाद वे घर गए और सो गए। सुबह चाय पीते समय उन्होंने अखबार खोला और तीसरे पन्ने पर खबर देखी – मैसूर के एक इंजीनियरिंग कॉलेज के छात्र द्वारा किए गए अत्याचारों के खिलाफ़ एक गांव की लड़की के समर्थन में पचास गांवों का सत्याग्रह! जैसे ही उन्होंने अखबार से नजर हटाई, उनकी नजर अनूप रविंद्र पर पड़ी – जो पांचवें सेमेस्टर का छात्र था। रिपोर्टर ने न केवल सीधी-सादी खबर दी थी, बल्कि सत्याग्रह में भाग लेने वाले कुछ लोगों से बात करके विस्तृत जानकारी भी दी थी। अनूप, जिसे इंजीनियरिंग कॉलेज में लगातार तेजतर्रार छात्र के रूप में पेश किया जा रहा था, की छवि उस खबर में लंबे समय से बनी हुई थी। ट्रिब्यून के अलावा, डेक्कन हेराल्ड, हिंदू और अन्य अखबारों ने भी कुछ भिन्नताओं के साथ इस खबर को छापा था। स्थानीय कन्नड़ अखबारों ने भी संक्षेप में इस खबर को प्रकाशित किया था।
अगर आग नहीं होगी तो धुआं भी नहीं होगा – रवींद्र ने सोचा। उसका मन गुस्से से भरा हुआ था। कॉलेज छोड़ने के बाद भी सब कुछ पहले जैसा ही था। बिना जरूरत के खरीदी हुई मोटरसाइकिल, इतने महंगे कपड़े – इन अतिरिक्त खर्चों के लिए दिल्ली से पैसा आया होगा। कांति पर भी उसका गुस्सा भड़क उठा। कॉलेज की फीस, हॉस्टल का खर्च, किताबें और नोटबुक, चालीस रुपये महीना, क्या इतना काफी है? फिर इस फालतू धंधे के लिए पैसे बचते ही नहीं। बंदर जैसी बुद्धि वाले बच्चों को इतना पैसा दे दो, फिर क्या होगा! क्या यही उसका जन्मजात स्वभाव है या क्या? कॉलेज के दिनों को छोड़ दें तो, यह दीपक हाई स्कूल में पढ़ते हुए ही कैबरे देखने चला गया था! उसे घिन आ रही थी, गुस्सा आ रहा था – और साथ ही उसे यह भी लग रहा था कि उसे इसकी और जांच करनी चाहिए या खुद जाकर देखना चाहिए। फिर उसने सोचा, क्यों जाऊं? अगर वह सोचता तो कुछ तो करके पता लगाता!
यह सोचते हुए रविंद्र ने दाढ़ी बनाना और नहाना पूरा किया। उसी समय गृहिणी आ गईं। जब वह चावल और दाल पकाने का चूल्हा गैस पर रख रहा था, तभी फोन की घंटी बजी। मैसूर इंजीनियरिंग कॉलेज के प्रधानाचार्य फोन पर थे। उन्होंने कहा, ``खबर सभी अखबारों में छप चुकी है। आपको भी समझ आ गई होगी। वे सत्याग्रह के बहाने पचास हजार रुपये मांग रहे हैं। लगता है यह ब्लैकमेल का मामला है–`` बाद में उन्होंने यह भी बताया कि वे अस्पताल में हैं।–``अब चिंता की कोई बात नहीं है। उन्हें पुलिस सुरक्षा दी गई है। अस्थि चिकित्सक अभी तक नहीं आए हैं। वे आधे घंटे में आ जाएंगे। आपको भी तुरंत निकल जाना चाहिए–``
रविंद्र का गुस्सा पल भर में शांत हो गया। उसे अनूप की सेहत को लेकर बेहद चिंता होने लगी। चाहे कुछ भी हो जाए - ब्लैकमेल करना गलत है! उसने तुरंत कहा,

मैं दस-पंद्रह मिनट में निकल जाऊंगा। मैं सीधे अस्पताल जाऊंगा और आपसे बाद में मिलूंगा। क्या मैसूर एसपी से संपर्क करने की कोई आवश्यकता है?... धन्यवाद..."
दस मिनट के भीतर ही उसने दो कपड़े एक बैग में पैक किए, दफ्तर में फोन किया, नौकरानी के पति को रात के लिए बिस्तर पर आने को कहा, उसे घर के बाहर वाले कमरे की चाबी दी और अपनी कार में बैठकर निकल गया। वह बैंक गया, कुछ पैसे निकाले और मैसूर के लिए रवाना हो गया।
जब गाड़ी हाईवे पर पहुँची, तो उसका दिमाग फिर से सोचने लगा। उन लोगों ने अनुपाल को ब्लैकमेल के लिए क्यों चुना होगा? उसके पास गोली है – तो उसके पास बहुत पैसा होगा और उसे खर्च करना आसान होगा, है ना? कोई भी ऐसे जाल में नहीं फँसेगा जब तक कि उसे पृष्ठभूमि का पता न हो।
जब वह अस्पताल पहुंचा तो दोपहर के 1 बज रहे थे। अनूप जनरल वार्ड में एक तकिये पर गहरी नींद में सो रहा था। उसके बगल में एक कुर्सी पर एक पुलिसकर्मी बैठा था। दो छात्र पलंग के किनारे बैठे धीमी आवाज़ में आपस में बातें कर रहे थे। दोनों छात्रों ने तुरंत अनूप के पिता को पहचान लिया, जिन्होंने उनके कॉलेज में भाषण दिया था। वे दोनों खड़े हो गए और रविंद्र के बैठने के लिए जगह बनाई। उनमें से एक ने कहा,
"एक्स-रे करवा लिए गए हैं। हड्डियों को कोई नुकसान नहीं हुआ है। पिटाई बेवकूफी भरी है। ये तो उन लोगों का काम है जिन्हें गुंडागर्दी का अनुभव है! लेकिन बहुत दर्द हो रहा है," उन्होंने कहा। इंजेक्शन इसलिए दिया गया ताकि दर्द कम हो जाए और नींद आ जाए। इसके अलावा चिंता की कोई बात नहीं है।"
रविंद्र को थोड़ा बेहतर महसूस हुआ। वह लड़के के पास बैठ गया और अनूप की कलाई अपने हाथ में पकड़ ली। उसकी उंगली अनूप की नब्ज़ पर थी। उंगली से नब्ज़ महसूस हो रही थी, बस इतना ही। रविंद्र को चिकित्सा के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। फिर भी, वह चुपचाप बैठा रहा, अपना सारा ध्यान अनूप की नब्ज़ पर केंद्रित किए हुए, जिसे वह अपनी उंगली से महसूस कर पा रहा था।
अनूप गहरी सांस ले रहा था।
रविंद्र ने अपना हाथ तीन-चार बार अपने सिर पर फिराया। फिर उसने अनूप की पीठ पर से कमीज़ धीरे से ऊपर उठाई। उसकी पीठ पर पड़ी काली-नीली धारियों को देखकर उसकी आँखों में आँसू भर आए। कुछ दिखाई न देने के कारण उसने कमीज़ वापस नीचे खींच दी।
"आपने मुझे खाने के लिए क्या दिया?" उसने पूछा।
"उसने इडली खा ली है। अब हॉस्टल से खाना आएगा। डॉक्टर ने भी उसे जो चाहे खाने की इजाजत दे दी है।"
बच्चों ने आगे बताया कि सुरक्षा कारणों से उस दिन कोई भी कक्षा में नहीं गया था। उन्होंने यह भी कहा कि इसके बाद मैसूर के सभी कॉलेज बंद रहेंगे।
सब कुछ सुनने के बाद, रविंद्र एक तरफ तो खुश हुआ, यह सोचकर कि अनूप सचमुच निर्दोष होगा, लेकिन फिर उसने सोचा, क्या इन छात्रों के पास अपनी असंतुष्टि व्यक्त करने का कोई और तरीका नहीं है? हमारे देश में सरकारी कर्मचारी, छात्र, व्यापारी, अधिकारी, पेशेवर -
आईपीएस से जुड़े एस.पी. बरुआ ने भी रविंद्र से अच्छी बातचीत की। उन्होंने कहा, आपका बेटा वाकई बहादुर है! वह अन्याय के खिलाफ हार नहीं मानता! ढाई साल पहले लड़कों ने उसके साथ रैगिंग की थी, और तब भी उसने उनका विरोध किया था, है ना? दरअसल, हमें थोड़ा सोच-विचार करके उसे कल से ही पुलिस सुरक्षा दे देनी चाहिए थी। मुझे इस बात का बहुत दुख है। लेकिन मुझे जरा भी अंदाजा नहीं था कि वह हॉस्टल में घुसकर ऐसा कुछ करेगा। मैंने सब-इंस्पेक्टरों को भेज दिया

है। वे पुट्टगौड़ा को कभी भी पकड़ लेंगे। हम इस पर कड़ी कारवाई करेंगे – आप चिंता न करें –"
यह सुनकर रविंद्र को अच्छा लगा। उसे लगा कि यह पुलिस अधिकारी कर्तव्यनिष्ठ, ईमानदार और सुसंस्कृत है। इसके अलावा, उसे अनूप की घंटी बजने वाली घटना के बारे में भी पता था। -मैं भूल गया था-
एसपी ने आगे कहा,
"इसमें कोई शक नहीं कि वे भाड़े के गुंडे थे। उन्हें ढूंढने के लिए दो लोगों को तैनात भी किया गया है।"
अनुप के पिता के आने से प्रधानाचार्य को थोड़ी राहत मिली। उन्होंने रविंद्र को कॉलेज की दीवार दिखाई। वह कुछ जगहों से टूट रही थी। उन्होंने दीवार दिखाते हुए कहा,
``पूरी दीवार की मरम्मत करना और उस पर तार लपेटना ज़रूरी है। लेकिन संगठन के पास पैसे नहीं हैं। इस संबंध में एक आपातकालीन बैठक बुलाने का निर्णय लिया गया है। आप कम से कम दो दिन यहीं रुकिए। अनुप के कमरे में रहिए, अन्यथा मैं आपके लिए संगठन का अतिथि कक्ष उपलब्ध करा दूंगा।" इसके बाद उन्होंने बताया कि कैसे रविंद्र का भाषण आज भी सभी को याद है।
अनुप के कमरे में जाकर हाथ-पैर धोने के बाद, रविंद्र ने अनुप की बुलेट कार के स्पीडोमीटर पर नज़र डाली। ढाई साल में कार पचास हज़ार किलोमीटर चल चुकी थी। हालाँकि वह इस तथ्य को हाल की घटना से सीधे तौर पर नहीं जोड़ सका, फिर भी रविंद्र गंभीर हो गया। उसने कमरा बंद किया और अस्पताल चला गया।
जब वह वहाँ पहुँचा, तो दो और बच्चे भी आ चुके थे। अनुप जाग चुका था। वह सोफे पर लेटा हुआ था। अपने पिता को देखते ही उसके चेहरे पर उलझन और झिझक के भाव आ गए। हालाँकि, रविंद्र ने बिना कुछ कहे पूछा, 'क्या तुमने पुट्टगौड़ा को पकड़ लिया?' वगैरह, फिर आधे घंटे बच्चों से बातें कीं और उसके बाद डॉक्टर के पास चला गया। डॉक्टर ने भी बताया कि हड्डियों में दोबारा चोट नहीं आई है, चोट और सूजन तीन-चार दिनों में ठीक हो जाएगी और फिर उसे घर ले जाने में कोई दिक्कत नहीं होगी। उन्होंने पुलिस को भी सूचना दे दी थी। सब कुछ सुनकर रविंद्र वहाँ से चला गया और अनुप के लिए कुछ फल लेकर अस्पताल वापस आया।
जब वह पहुंचा, तब तक अन्नय्या आ चुकी थीं। रविंद्र ने देखा कि अन्नय्या अनुप का सिर अपनी गोद में लिए हुए थीं और एक माँ की तरह अपने बच्चे को प्यार से सहलाते हुए उसके कान के निचले हिस्से को धीरे-धीरे थपथपा रही थीं। अनुप का चेहरा शांत था।
रविंद्र ने पूछा,
``अन्नायहि... तुम कैसे आए? तुम्हें कैसे समझ आया?"
मैंने अखबार में पढ़ा... मैंने सोचा, मुझे खुद जाकर देखना होगा कि क्या होता है! मैंने तुरंत अपनी साइकिल ली और निकल पड़ा। मैंने तुरंत अगली बस पकड़ी। मैं रिक्शा से कॉलेज गया और मुझे कल रात की घटना के बारे में पता चला। मैंने वही रिक्शा लिया और यहाँ आ गया। सुनो! गाँव के लोग ब्लैकमेल करने में शहर के लोगों जितने माहिर नहीं होते!..."
रविंद्र को एक बार फिर से यह एहसास हुआ – अन्नय्या स्वभाव से ही मातृत्व भाव रखती है! वरना वह इतने सारे विद्यार्थियों की बलि कैसे दे सकती थी! तभी उसके मन में यह बात आई – मैंने अनुप को अपने करीब क्यों नहीं लाया? कहते हैं कि किशोरावस्था में पहुंच चुके बच्चे और पिता के बीच एक निश्चित दूरी अपने आप बन जाती है, और यह बात सच लगती है। किशोरावस्था में पहुंच चुके बच्चे से पिता की अपेक्षाएँ भी बहुत अधिक होती हैं, या कौन जाने!

तभी एक आदमी जींस, सबनम और बुश शर्ट पहने वहाँ आया। पहली नज़र में ही स्पष्ट हो गया कि यह व्यक्ति किसी अखबार से जुड़ा होगा। उसकी उम्र तीस के आसपास थी। ऐसा लग रहा था जैसे उसने उसे कहीं देखा हो। जब रविंद्र याद करने की कोशिश कर रहा था, तभी वह व्यक्ति पास आया और पूछा,
"आपको क्या पता, महोदय? मैं चिदानंद-कोलर में था। मुझे यहाँ आए हुए बीस दिन हो गए हैं।"
रवींद्र को एहसास हुआ कि यह उनके ही अखबार का रिपोर्टर है। चिदानंद ने आगे कहा,
"कल जब मैंने रिपोर्ट भेजी थी, तब मुझे यह एहसास नहीं था कि अनूप आपका बेटा है। मुझे कल रात हमले के बारे में पता चला, इसलिए मैं अस्पताल गई - वहीं मुझे पता चला! मैंने आज सुबह रिपोर्ट भेजी। मैंने आपको फोन करने की बहुत कोशिश की - लेकिन घर पर किसी ने फोन नहीं उठाया।"
यह जानते हुए कि उससे बात करके उसे और अधिक जानकारी मिल सकती है, रविंद्र ने उससे संक्षेप में सवाल किया, यह सोचते हुए कि वह अनूप और उसके दोस्तों के सामने इस बारे में चर्चा नहीं करना चाहता, और अलविदा कहते हुए कहा, "मैं तुमसे थोड़ी देर में फिर मिलूंगा।"
उस रात अस्पताल के पास स्थित दीसोप्रकाश होटल में अन्नाय्या के साथ खाना खाते हुए रविंद्र ने सोचा – मारपीट का मामला अलग है – सत्याग्रह का मामला अलग है और ब्लैकमेल का मामला भी अलग है। लेकिन हमें इन तीनों के पीछे की सच्चाई को गहराई से समझना होगा! उसने अन्नाय्या को अपने मन की बात बताई। इसके पीछे और क्या कारण हो सकते हैं?
"देखते हैं..." खाना खाने के बाद, रविंद्र अन्नाया को लेकर टेलीफोन बूथ की ओर चलने लगा। जैसे ही उसे ऑफिस का फोन नंबर मिला, उसने शांतामूर्ति को फोन किया। रविंद्र की आवाज सुनते ही शांतामूर्ति ने कहा,
"सर, आपके बेटे के बारे में खबर मिली है... हम भी आपसे संपर्क करने की कोशिश कर रहे थे..."
मैं मैसूर से बोल रही हूँ। हमें इस खबर की गहराई से पड़ताल करनी होगी। शशिरेखा को भी साथ ले आइए। हम गाँव जाना चाहते हैं। हमें महिलाओं से बात करके जानकारी हासिल करना चाहते हैं। आप दोनों जल्द से जल्द अस्पताल आ जाइए। लेकिन मेरे बेटे को आपके आने का मकसद समझ नहीं आना चाहिए। आपके आने तक मैं जितनी हो सके उतनी कच्ची खबरें जुटा लूँगी।
अन्नय्या और रवीन्द्र छात्रावास लौट आये।
अगली सुबह, वह एसपी के घर गया और पुट्टेगौड़ा का सही पता और मद्दन्ना और उसकी बेटी महादेवी के रहने की जगह के बारे में जानकारी प्राप्त की। उसने बताया कि पुट्टेगौड़ा डर के मारे कहीं छिपा हुआ है और गुंडे भी उसे पकड़ नहीं पाए हैं। एसपी ने रविंद्र को अपनी पत्नी से मिलवाया। उन्होंने चाय भी मंगवाई।
रविंद्र नौ बजे अस्पताल पहुंचा। अनूप की हालत कल से थोड़ी बेहतर थी। अब वह पीठ के बल लेट सकता था। लंगड़ाते हुए... वह बाथरूम गया। पुलिस कांस्टेबल अभी भी कुर्सी पर बैठा था।
रविंद्र के वहाँ पहुँचते ही, पाँच-दस मिनट के भीतर शांतामूर्ति और शशिरेखा भी वहाँ पहुँच गए। शशिरेखा ने गाँव के अस्पताल में काम करने वाली दाई का वेश धारण किया हुआ था। कमरे से बाहर आकर उन्हें पते और जिन मुद्दों के बारे में उन्हें जानकारी चाहिए थी, उनके बारे में बताने के बाद रविंद्र ने पूछा,
"तुम कैसे जाओगे? क्या तुम मुझे गाड़ी दोगे? क्या मैं तुम्हारे साथ आऊं? या तुम अनूप की गोली खाओगे?"
"आपको आने की कोई ज़रूरत नहीं है। तीन-चार घंटे का काम क्यों बर्बाद करना? अगर आप कार से जाओगे तो गाँव वाले इसे बड़ी बात समझेंगे। बुलेट से भी उतना

हो मज़ा आता है!" शांतमूर्ति ने कहा।
वे तीनों कार से हॉस्टल पहुंचे। मोटरसाइकिल की चाबी शांतामूर्ति को देते हुए उन्होंने एक बार फिर पूछा,
``मुझे सच बताओ – क्या मुझे आना चाहिए? अगर नहीं, तो अपने साथ एक या दो पुलिसकर्मी ले आओ –"
"चिंता मत करो। वह सातों लोकों से खबर पता लगा लेगी! वह दिल और पेट में घुसकर खबर निकालने में माहिर है! अगर ऐसा न होता, तो क्या तुम मेरे गले लगकर मुझे मंगलसूत्र बांधने के लिए मजबूर करते?" उसने कहा।
शशिरेखा के चेहरे पर एक प्यारी सी मुस्कान थी। उसने उन दोनों को अलविदा कहा और उनसे कहा कि चाहे कितनी भी देर हो जाए, वे हॉस्टल या अस्पताल में उससे मिलें।
रवींद्र के अन्नायाह के साथ अस्पताल पहुंचने के कुछ ही देर बाद चिदानंद भी वहां पहुंच गया। वह खबर लेकर आया था।
पुत्तेगौड़ा अभी तक पकड़ा नहीं गया है। खबर है कि वह पास के किसी गांव में छिपा हुआ है। सब-इंस्पेक्टर जानकारी जुटा रहा है - क्या आपने इस अखबार का मध्य पृष्ठ देखा है? उन्होंने पेशेवर मर्यादा का पालन किए बिना लेख लिखा है! उनका इरादा हम पर हमला करना और सरकार की दाढ़ी छूना है। बेशक, उस अखबार की यह बेतुकी नीति तो सभी जानते हैं! फिर भी -"
रविंद्र को वह अखबार भी ज्ञात था जो उसने दिया था। यह अखबार बैंगलोर से प्रकाशित होता था और इसके अन्य शहरों में भी संस्करण निकलते थे। रविंद्र ने बीच का पन्ना निकाला और पढ़ा। उसमें 'पत्रकार और जन ईमानदारी' शीर्षक से एक लेख था। यह गौतम नारायण द्वारा लिखा गया था। रविंद्र जानता था कि वह इस अखबार के बैंगलोर संस्करण का मुख्य संवाददाता था। लेख पढ़े बिना भी रविंद्र जानता था कि इसमें किसी भी मुद्दे को कैसे उठाया जाएगा। उस अखबार की यह प्रथा थी कि जब भी मौका मिलता या वे मौका बनाते, 'इंडियन ट्रिब्यून' में व्यक्त विचारों और नीतियों की आलोचना करते और ऐसा करने में खुद को बहुत ईमानदार दिखाने का प्रयास करते। सत्ताधारी दल की चापलूसी करना और सरकार विरोधी अखबारों की आलोचना करना उस अखबार का मूलमंत्र बन गया था। क्योंकि उस अखबार के मालिकों का देश भर में सीमेंट, कागज, कपड़ा, स्कूटर, कार जैसी वस्तुओं का व्यापार और उद्योग था। उनका सीधा-सादा धंधा इस अखबार के माध्यम से समय-समय पर सरकार को खुश करना और अपने व्यवसायों के लिए लाइसेंस प्राप्त करना था। गौतम के ऐसे लेख उस अखबार के सभी संस्करणों में प्रकाशित होते थे। चूंकि उस अखबार के मालिकों की उसमें दिलचस्पी थी, इसलिए वह जल्दी ही मशहूर हो गया।
रवींद्र बिना कुछ कहे दूसरी तरफ़ देखने लगा।
"...ये कहावत कि जो खुद कांच के घरों में रहते हैं, उन्हें दूसरों पर पत्थर नहीं फेंकने चाहिए, पत्रकारों पर विशेष रूप से लागू होती है। सार्वजनिक जीवन और व्यक्तियों की आलोचना करने के पत्रकार के अधिकार से कोई इनकार नहीं करता। लेकिन एक पत्रकार को अपनी कलम की शक्ति का प्रयोग राष्ट्र के सामने आने वाली समस्याओं को हल करने के लिए करना चाहिए, न कि व्यक्तिगत ईर्ष्या के लिए। हमारा एक साथी पत्रकार, हमारा अच्छा दोस्त है। मैंने कुछ मुद्दों पर उसकी आलोचना की है। उसने कई बार इंदिरा गांधी के अपने बेटे के प्रति प्रेम की स्पष्ट और तीखी आलोचना की है। उसने उन पर अपने बिगड़े हुए बेटे संजय गांधी को राजनीति में लाकर प्रधानमंत्री बनाने की साजिश रचने का आरोप लगाया है। उसने यह सवाल भी उठाया है, 'क्या यह एक परिवार का एकाधिकार है?' इस संदर्भ में, कल प्रकाशित खबर विशेष रूप से महत्वपूर्ण है! इस पत्रकार के बेटे ने एक गांव की लड़की का यौन उत्पीड़न किया है और अब उसके गर्भवती होने पर

उससे हाथ मिला रहा है! जब गांव वालों ने इस मुद्दे पर सत्याग्रह किया, तो हमारे पत्रकार दोस्तों ने अपनी स्थिति और प्रतिष्ठा का दुरुपयोग करते हुए पुलिस की मदद से सत्याग्रह को भंग कर दिया! - एक बात हमें याद रखनी चाहिए, बड़े हो रहे बच्चे थोड़ी मौज-मस्ती करते हैं।" इसके अलावा, इस बात का कोई सबूत नहीं है कि संजय गांधी ने ऐसा कुछ किया था - स्वतंत्र भारत में हर किसी को भारत का प्रधानमंत्री बनने का सपना देखने का अधिकार है - तो संजय गांधी क्यों नहीं?' इत्यादि।

हाँ – ये तो गौतम का खास अंदाज़ है! मौका मिलते ही उसने इसे फेंक दिया! उसने झूठ भी बोला, लेकिन मैं कैसे साबित करूँ कि मैंने अपने पद का किसी भी तरह से दुरुपयोग नहीं किया? जब ये गौतम मेरे सामने आता है, तो दौड़कर मेरे सामने झुक जाता है।
"आप हमारे शिक्षक हैं! हमें अभी आपसे बहुत कुछ सीखना है," वह गुस्से में बोलने लगता है।
"महोदय, आप इस पर अपना बयान क्यों नहीं देते? हम सबूतों के साथ उनके हर दावे का खंडन कर सकते हैं। उन्होंने इस लेख में हमले के बारे में एक शब्द भी नहीं लिखा। उन्होंने आज के अखबार में भी यह खबर नहीं दी। मैं उनके मैसूर संवाददाता को जानता हूँ। वह अस्पताल आए होंगे और सारी खबरें इकट्ठा करके भेजी होंगी, यह तो पक्की है। लेकिन उन्होंने इसे छापा नहीं।"
इस पर रविंद्र ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। "शाम तक इंतजार करते हैं" कहते हुए उन्होंने लेख अन्नय्या को पढ़ने के लिए दे दिया।
काफी देर हो चुकी थी। शशिरेखा और शांतामूर्ति अभी तक नहीं लौटे थे। रविंद्र अब उनके बारे में चिंतित था। पुट्टेगौड़ा तो एक कट्टर राजनीतिज्ञ हैं! क्या उन्होंने इन दोनों को धोखा दिया होगा? वह दस बार एसपी को सूचित करना चाहता था, लेकिन उसने कुछ और समय तक उनका इंतजार करने का फैसला किया। इसलिए वह और अन्नायाह शाम को बाहर निकले बिना हॉस्टल में ही रहे।
शाम आठ बजे गोली चलने की आवाज सुनाई दी। शशिरेखा और शांतामूर्ति अंदर आए। उनके चेहरों से साफ पता चल रहा था कि वे बहुत परेशान थे, लेकिन खबर सुनकर खुशी भी झलक रही थी। कमरे का दरवाजा बंद करके कुर्सियों पर बैठते हुए शांतामूर्ति ने कहा,
शानदार सबूत मिले! उसने हमें सब कुछ बताया। सब-इंस्पेक्टर लंकापप्पा पुट्टेगौड़ा को गिरफ्तार करने गए थे, है ना? लंकापप्पा ने खुद पुट्टेगौड़ा को निर्देश दिया था कि अगर तुम अब हमारे हाथ लगे तो उस लड़के की पिटाई के लिए तुम्हें ज़रूर सज़ा मिलेगी! बरुआ एक सख्त आदमी है – उस पर किसी भी तरह का दबाव डालना नामुमकिन है! आखिरकार पुट्टेगौड़ा ने बेंगलुरु जाने और गृह मंत्री के ज़रिए सीधे सपा पर राजनीतिक दबाव डालने का फैसला किया। अगर वह मैसूर से जाता तो उसे अवांछित लोगों से मिलना पड़ता, इसलिए वह के.आर. नगर, होल नरसिपुर, चन्नरायपट्टन आदि होते हुए मोटरसाइकिल से बेंगलुरु गया। हालांकि, वह यहीं पास के एक गांव में छिपा हुआ है, इसलिए खबर फैल गई है! – पूरी स्थिति को देखते हुए लगता है कि सपा का तबादला हो जाएगा। इस साल पुट्टेगौड़ा को विधायक का टिकट ज़रूर मिलेगा!`
"क्या आप उस लड़की से मिले जो अन्याय से घिरी हुई थी?" रविंद्रन ने पूछा।
शशिरेखा ने कहना शुरू किया,
पांच दिन पहले बागीन मालिकों ने बाप-बेटी को यह कहकर निकाल दिया था, "तुम हमारी ज़मीन पर क्या कर रहे हो?" अब वे दोनों पुत्तेगौड़ा के गाँव सिंगारवल्ली से पाँच मील दूर जेदिहल्ली में अपनी एक एकड़ बंजर ज़मीन पर बनी एक झोपड़ी में रहते हैं। मदन्ना को भी नहीं पता कि यहां असल में क्या हो रहा

है - यहाँ तक कि उस लड़की को भी नहीं। मुदन्ना का एक दोस्त है जिसका नाम गिरन्ना है। उसने ही सबसे पहले मदन्ना को ब्लैकमेल करने की तकनीक सिखाई थी। उसके मार्गदर्शन में मदन्ना ने पहले पच्चीस हज़ार रुपये मांगे। उसने सोचा कि अगर वह पच्चीस हज़ार कहेगा तो उसे कम से कम पाँच हज़ार तो मिल ही जाएँगे। लेकिन उसी समय साहूकार आए और उन दोनों को नौकरी से निकाल दिया। यह कहकर कि उनके पास खाने को कुछ नहीं है, मदन्ना पुत्तेगौड़ा के पास गया। पुत्तेगौड़ा ने पच्चीस हज़ार रुपये को पचास हज़ार रुपये में बदल दिया और सत्याग्रह शुरू कर दिया। अगर उसे पचास हज़ार रुपये मिल भी जाते, तो कौन जाने वह असल में मदन्ना को कितना देता! कुल मिलाकर, आगे की सभी घटनाओं के लिए पुत्तेगौड़ा ही ज़िम्मेदार है। मैंने इस विषय पर मदन्ना से बात की है और उनकी जानकारी के बिना उनकी बातचीत की ऑडियो टेप बना ली है।
"क्या तुम उस लड़की से मिले?"
हां। मैंने उससे भी बात की। उसे इसके बारे में ज़्यादा कुछ नहीं पता। उसके पिता ने उसे कुछ नहीं बताया। यह सच है कि वह गर्भवती है। लगभग दो या ढाई महीने हो गए होंगे। वह मुझे यह भी नहीं बता पा रही। जब मैंने उससे पूछा कि पिता कौन है, तो वह बता नहीं पाई। लेकिन वह कहती है कि वह मोटरसाइकिल वाला लड़का नहीं है! तुम्हें कैसे पता? जब मैंने पूछा, तो उसने कहा, वे रबर का इस्तेमाल करते थे - मैंने उसकी बातचीत रिकॉर्ड भी कर ली है। लेकिन कुल मिलाकर, उसे मोटरसाइकिल वाले लड़कों से खास लगाव था। जब मैंने पूछा क्यों, तो उसने कहा - वे हम जैसे नहीं हैं! वे फिल्मी हीरो की तरह कूल हैं! उन्हें पैसे की भी परवाह नहीं! जैसे ही उसने हमारी बुलेट की आवाज़ सुनी, वह जोश में बोली - यह उनकी गाड़ी है! हमने उसे बताया - यह उनकी गाड़ी नहीं है! लेकिन उसने कहा - मुझे बेवकूफ मत बनाओ! मुझे यह भी नहीं पता? मैं अभी वहीं से आई हूँ! कुल मिलाकर, ऐसा लग रहा था कि वह उससे अपना जीवन छीनने को तैयार है! इस रिश्ते में एक तरह का आंतरिक प्रेम भी झलक रहा था। यह गोली भी शायद इसी से जुड़ी है! मैंने उससे पूछा, अब तुम गर्भवती हो – इसका क्या करोगी? उसने कहा – हॉस्पिटल के डॉक्टर ने दो सौ रुपये मांगे हैं – मुझे डर लग रहा है – क्या दर्द होता है? – उसने मुझसे पूछा! –"
शशिरेखा और शांतामूर्ति बहुत थके हुए थे। उन्होंने घड़ी देखी तो पाया कि नौ बज चुके थे। दिन भर की मेहनत के बाद उन्हें अच्छे भोजन और गहरी नींद की ज़रूरत थी, यह समझते हुए रविंद्र ने उनसे कहा,
ये तौलिया ले लो। इस पंक्ति के बिलकुल आखिर में एक बाथरूम है – जाओ, फ्रेश हो जाओ और जल्दी वापस आ जाओ। देर हुई तो खाना नहीं मिलेगा। चलो खाते हुए बातें करते हैं।
वे चारों कार में बैठकर चले गए। रविंद्र ने सोचा कि पुट्टेगौड़ा और सब-इंस्पेक्टर को जिस योजना के बारे में पता चला था, उसके बारे में तुरंत स्पेशल इंस्पेक्टर को बता देना उचित होगा। शांतामूर्ति, शशिरेखा और अन्नय्या ने भी यही कहा। रविंद्र ने कार को स्पेशल इंस्पेक्टर के घर की ओर मोड़ दिया। वे क्लब या कहीं और नहीं जा रहे थे – रविंद्र जानता था कि उनका ठिकाना कार्यालय और घर ही है।
घर के गेट पर चौकीदार खड़ा था। अंदर, बगीचे के पास, एसपी की पत्नी शतपावली पहने खड़ी थीं। बरुआ ने सुबह रविंद्र का परिचय अपनी पत्नी से कराया था। पत्नी ने रविंद्र को पहचान लिया, जिसने बाकी तीनों को कार में बिठाकर आगे चला गया था, और 'नमस्ते' कहा।
रविंद्र ने कहा,
"माफ़ कीजिए - मैं गलत समय पर आ गया। लेकिन मुझे आपको कुछ ज़रूरी खबर देनी थी।"

"सर, वह दोपहर 1 बजे बैंगलोर के लिए रवाना हुए थे। उनका तबादला हो गया था..." उसने जवाब दिया।
"स्थानांतरण?" रविंद्र ने उलझन में पूछा।
हां। बारह बजे तबादले का आदेश फोन पर आया। उन्होंने तुरंत एडिशनल एसपी को फीस देने और जाने को कहा। आप उनका स्वभाव तो जानते ही हैं, है ना? उन्होंने फोन होलड पर रखा, एडिशनल एसपी को फोन किया और फीस देकर घर आए, सूटकेस उठाया और बैंगलोर के लिए निकल गए। तबादला बीच में ही हो गया! बच्चों का स्कूल - सब कुछ आधा-अधूरा रह गया! ये सब झंझट है!
"क्या आपको पता है कि यहाँ कौन आ रहा है?"
"पक्का नहीं कह सकते। अभी यह तय नहीं हुआ है कि आपातकालीन स्थानांतरण के बाद कौन आएगा। लेकिन हमें यह घर छोड़ना ही पड़ेगा।"
उनका अभिवादन करने के बाद, रविंद्र कार के स्टीयरिंग व्हील पर बैठ गया। कार के चलने के बाद से ही शांतामूर्ति और शशिरेखा पीछे की सीट की लाइट जलाकर गौतम नारायण का लेख पढ़ रही थीं। अब रविंद्र ने देखा कि वे आखिरी पैराग्राफ पढ़ रही थीं।
उसने कहा,
"शांतामुथी, तुम्हारा अनुमान बिल्कुल सही था!"
क्या?
"एसपी का तबादला दोपहर 12 बजे फोन पर ही हो गया! वे तो दोपहर 1 बजे ही बैंगलोर के लिए रवाना हो गए।"
"इसमें हैरानी की कोई बात नहीं है..." शांतामूर्ति ने कहा। लेकिन उनके चेहरे पर चिंता झलक रही थी।
बाद में, खाना खाते समय उन्होंने कहा,
“गौतम, इस आलसी कुत्ते को ऐसे मत छोड़ो! मैं इसके जवाब में एक सनसनीखेज़ लेख लिखूंगा! मैं विस्तार से बताऊंगा कि कैसे यह नेता अपनी बेटी को धंधे में लगाने वाले एक आलसी आदमी के साथ मिलकर गुंडों की मदद से उसे ब्लैकमेल करता है और कैसे उसने एसपी का तबादला भी करवा दिया। मैं गौतम के लेख की धज्जियां उड़ा दूंगा। मेरे पास कई तस्वीरें हैं! मेरे पास टेप भी हैं। मैं इसे तारीख और समय का पूरा जिक्र करते हुए लिखूंगा। कल मैं मैसूर में चार घंटे घूमूंगा, मुझे बहुत सारी जानकारी मिलेगी! एसपी का तबादला हुआ था, है ना? गौतम की महान नायिका इंदिरा गांधी हैं – यही उनका तरीका है! ये चेतावनी देने का तरीका कि अगर तुम मेरी मर्जी नहीं मानोगे तो तुम चैन से नहीं जी पाओगे! उनकी पार्टी की राज्य सरकारें उनके तरीके को अपना रही हैं –!”
शांतमूर्ति की आवाज़ काफी ऊंची थी। चूंकि 9:30 बज चुके थे, होटल में भीड़ कम थी। इसीलिए उनकी आवाज़ दूसरों तक नहीं पहुंच रही थी। फिर भी, शशिरेखा ने उन्हें अपनी आवाज़ धीमी करने का सुझाव दिया। रविंद्र को भी लगा कि इस तरह का लेख लिखना उचित होगा।
लेकिन शशिरेखा ने तुरंत चेतावनी दी,
लेकिन अपने लेख में आपको कहीं न कहीं एक बात का ज़िक्र ज़रूर करना चाहिए – कम से कम इशारे में ही सही, कि अनुपचा और उस लड़की के बीच यौन संबंध थे। वरना गौतम आगे की जाँच करेगा और अपने मसाले डालकर उस लेख को बड़े शीर्षक से प्रकाशित कर देगा! पुट्टगौड़ा उसे ज़रूरी सामग्री मुहैया करा देगा।
रविंद्र ने कहा,
"मैंने एसपी को फोन करके सत्याग्रह भंग करवाया, इसलिए उन्होंने लिखा - यह भी सरासर झूठ है। मैंने फोन नहीं किया था।"
शशिरेखा के सुझाव पर शांतामूर्ति चुप हो गए। थोड़ी देर बाद उन्होंने रविंद्र से कहा,

"महोदय, इस बारे में सोचिए और मुझे बताइए। अगर आप लिखने को कहेंगे तो मैं लिखूंगा; अगर आप मना करेंगे तो मैं नहीं लिखूंगा।"
छाछ वाले चावल खाते हुए उन्होंने फिर कहा,
क्या आपको गौतम के लेख का सार समझ आया? उन्होंने अखबार के संपादक के फोन कॉल से प्रभावित होकर यह लेख लिखा। उनकी पार्टी चिल्ला रही है कि हम गरीबों के दुश्मन हैं - हम उनके खिलाफ इस तरह से काम करते हैं! वह एसपी के खिलाफ शोर मचाएंगे। उन्होंने गौतम से बात करने के बाद ही यह योजना बनाई होगी! या हो सकता है कि उन्होंने गौतम द्वारा दी गई खबर को भीख मांगने के लिए इस्तेमाल किया हो! दूसरा अनुमान अधिक तर्कसंगत है। क्योंकि वह आलसी व्यक्ति हैं। वह जमीनी स्तर पर काम करने के लिए बिल्कुल भी तैयार नहीं हैं!
खाना खाने के बाद, अपने सामने रखे पत्ते को खाते हुए उसने कहा,
``लिखना है या नहीं, इसका फैसला बाद में किया जा सकता है - कल मैं यहीं रुकूंगा और जैसे-जैसे खबरें आती रहेंगी, उन्हें इकट्ठा करता रहूंगा। मैं इस पूरे मामले को अधूरा नहीं छोड़ सकता। जब पन्ना आधा भरा हो तो उसे छोड़ना कैसे संभव है?"
रवींद्र शांतामूर्ति के इस स्वभाव से पहले से ही वाकिफ थे। किसी विषय की गहराई में छानबीन करने को कहा जाए तो वे किसी भी खतरे की परवाह नहीं करते थे। जन्मजात पत्रकार! लेकिन मैसूर के चिदानंद का स्वभाव ऐसा नहीं है। वे तो आधिकारिक तौर पर प्राप्त और दूसरों द्वारा दी गई सामान्य खबरें भेजकर ही चैन से सो जाते हैं!

■

रात में, रविंद्र अपने हॉस्टल के कमरे में बिस्तर पर बैठकर रिकॉर्ड किए गए टेप सुन रहा था। अन्नय्या भी जाग रही थी। कैसेट को ध्यान से सुनते हुए, एक महत्वपूर्ण बात उसके मन में आई: वे दोनों एक-दूसरे को देख रहे थे।
सब कुछ सुनने के बाद रविंद्र ने कहा,
``ऐकेलसं ना?"
अन्नांय्या ने शॉल को अपने शरीर के चारों ओर लपेटते हुए कहा,
हां! अगर आप सुनेंगे तो!
दोनों ने दीपक बुझाया और सो गए। रविंद्र को नींद नहीं आ रही थी। वह अब भी दुविधा में था कि शांतामूर्ति को लेख लिखने की अनुमति दे या मना कर दे। लेख लिखते समय अनुप की अक्षमता को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता था, और अगर किया भी जाता, तो गौतम उसे और भी तोड़-मरोड़ कर पेश कर देता। क्या होगा अगर वह सीधे-सीधे कह दे कि वह लेख लिखना ही नहीं चाहता? इस विचार से उसे कुछ राहत मिली।
कुछ देर बाद अन्नाय्या ने कहा,
मैं कल सुबह अनुपश्री से थोड़ी बात कर लूंगा...
"तुमने कॉलेज में तीन साल तक इसे अपने पास रखा और जितना चाहो उतना बात की, है ना? उससे पहले तो वह नग्न महिलाओं को देखने जाता था - अब तो वह एक कदम और आगे बढ़ गया है! उसे कोई नहीं बदल सकता!"
अन्नाय्या चुप रहे। रविंद्र सोच रहे थे – अब राजनीति कहाँ जा रही है? सिर्फ़ राजनीति ही नहीं, देश का जीवन! क्या किसी पत्रकार के जीवन से जुड़े एक संवेदनशील मामले का इस तरह सार्वजनिक रूप से इस्तेमाल करना उचित है?
क्या इसका मतलब यह है कि इंदिरा गांधी के अपने बेटे के प्रति प्रेम पर आपत्ति जताने का किसी को अधिकार नहीं है?
गौतम द्वारा लिखा गया एक वाक्य बिल्कुल सच है - जो लोग कांच के घरों में रहते हैं उन्हें दूसरों के घरों पर पत्थर नहीं फेंकने चाहिए।

लेकिन मैं किसी के घर पर पत्थर फेंकने नहीं गया था। मैंने इस विचार का विरोध किया कि सार्वजनिक पद और उससे मिलने वाले विशेषाधिकार वंशानुगत होते हैं। मैंने सरकारी धन को सरकारी खातों में जमा करने के बजाय निजी उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल करने की प्रवृत्ति की आलोचना की। एक सार्वजनिक व्यक्ति को पूरी तरह से बेदाग होना चाहिए - यही अखबार की मांग है।
तब मुझे महात्मा गांधी याद आए। उस बुजुर्ग व्यक्ति के पास छिपाने के लिए कुछ नहीं था। तो भला ऐसा व्यक्ति अखबारों से क्यों डरेगा? इसी कारण पत्रकारों को खरीदने के लिए सरकारी धन खर्च करने की कोई आवश्यकता नहीं थी।
अन्नाय्या हल्की खर्राटे ले रहा था। कुछ देर बाद रविंद्र भी सो गया।
सुबह, उसके जागने से पहले ही अन्नय्या नहा चुका थी। रविंद्र ने भी जल्दी से नहाना खत्म किया और कहा,
मैं बैंगलोर के लिए निकल गया। दो दिन हो गए, मैं ऑफिस नहीं गया! तुम भी आ जाओ। वहाँ से तुम अपने गाँव जाओगे..."
“नहीं, अनुपाशी, मुझे थोड़ी देर बात करनी है। मैं बाद में जाऊंगा!” उसने जवाब दिया।
जाते समय उसने अन्नाय्या को अस्पताल में छोड़ा, अनूप को अलविदा कहा और जाने से पहले उसे दवा और पानी के लिए तीन सौ रुपये दिए।
जब वह होटल पहुंचा तो शांतामूर्ति और शशिरेखा जाग रहे थे। उसने कहा,
"शांतामूर्ति, मैं बैंगलोर जा रहा हूँ। तुम यहीं रहो, ज़रूरी जानकारी जुटाओ और अपनी पसंद का एक लेख लिखो। हम उसे छाप देंगे। अपनी दोनों कैसेट ले लो! नीचे आओ। चलो नाश्ता करते हैं।"

■

अनूप अभी भी अस्पताल में था, लेकिन उसके शरीर का सुन्नपन कुछ हद तक कम हो गया था। उसके शरीर पर पड़े काले-नीले निशान अब गायब हो चुके थे। लेकिन डॉक्टरों की अनुमति मिलने तक उसे अस्पताल में ही रहना था। अन्नाय्या खुद होटल गया और इडली-डोसा लेकर आया। उसने अनूप को इडली-डोसा खिलाया और खुद भी नाश्ता किया। डॉक्टरों के सुबह के राउंड के बाद, वे उसे बाहर ले गए और एक पेड़ के नीचे बैठा दिया।
पहले उसने अभी-अभी हुई घटना के बारे में थोड़ा समझाया। अनुपा उसे बड़े चाव से सुन रहा था। अंत में उसने उसे कुछ सुझाव दिया।
अनूप, मैंने तुम्हारे बारे में बहुत सोचा! अब तुम्हारी उम्र बीस साल हो गई है। पहले जब कोई लड़का अठारह या उन्नीस साल का होता था, तो उसकी पत्नी घर आ जाती थी। इसमें कोई बुराई नहीं है। सबका अपना-अपना स्वभाव होता है! जिस लड़की को पसंद करो, उससे शादी कर लो। अगर तुम एक छोटा सा घर बना लोगे, तो तुम अपनी मोटरसाइकिल के खर्च में ही गुजारा कर पाओगे। मैं तुम्हारे माता-पिता से कहूंगा कि वे तुम्हें हर महीने थोड़ा और पैसा भेजें। इससे तुम अपनी पढ़ाई पर भी ध्यान दे पाओगे। यह विचार मुझे हर तरह से सही लगता है!
अनूप का चेहरा पूरी तरह काला पड़ गया था। उसने कहा,
“आप ऐसा क्यों कह रहे हैं, डोडप्पा?”
"क्या मैंने तुम्हें पहले ही नहीं बताया था? यह तो सबका स्वभाव है..."
आप भी पुट्टेगौड़ा के शब्दों पर विश्वास करते हैं।
नहीं। लेकिन मैंने उस लड़की—महादेवी—को कहते सुना! जहाँ आग नहीं होती, वहाँ धुआँ भी नहीं होता, यह सच है। तुम बैंगलोर में कोई नृत्य देखने जा रहे थे, इसलिए तुम्हारे पिता ने तुम्हें कॉलेज भेज दिया। लेकिन उसका क्या फायदा? अब तुमने अगला कदम उठाने का अभ्यास कर लिया है!
अनुपाची बेहद मुश्किल स्थिति में था, मानो किसी ने उसे जाल में फंसा लिया हो। जब उसे एहसास हुआ कि अब कोई रास्ता नहीं है, तो वह और भी निराश हो गया।

उसने पूछा,
"क्या पापा को इस बारे में पता है?"
"हाँ, फिर! मैं अकेले आपको कैसे समझ सकता हूँ?"
तो, पापा ने शादी का प्रस्ताव भेजा है! अनूप की समझदारी ने उसे चेतावनी दी – वह हमेशा के लिए शादी जैसे रिश्ते में नहीं फंसना चाहता था। उसने दृढ़ता से कहा,
आप कुछ भी कह लें, मैं शादी नहीं करूंगी! बकवास!
इसमें भला क्या बकवास है? शारीरिक इच्छाओं की संतुष्टि भी गृहस्थ जीवन का एक हिस्सा है!
अनूप ने कुछ नहीं कहा। वह मन ही मन सोचने लगा।
उन्होंने उसे किसी भी तरह से जल्दबाजी नहीं करवाई।
बहुत सोच-विचार के बाद उन्होंने कहा,
` डोडप्पा, मुझे सच बताओ?..."
मनुष्य को हमेशा सच बोलना चाहिए!
"यह सच है कि देह का धर्म होता है। लेकिन कौन सिर्फ इसी कारण से शादी के बंधन में बंधना चाहेगा और अपनी आजादी गंवाएगा? मैंने तय कर लिया था कि इसके बाद मैं महादेवी जैसी बेकार लड़कियों के पास नहीं जाऊंगा। चिंता मत करो..."
इसका क्या मतलब है?
"तो अब से मैं बेकार लड़कियों की तरफ देखूंगा भी नहीं! मैं तुमसे वादा करता हूँ कि अगर तुम चाहो तो..." उसने उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा।
अन्नय्या को यह बात समझ नहीं आई कि अनुपना ने शब्दों को कितनी चतुराई से चुना था। अनुपना ने जानबूझकर शब्दों को इस तरह चुना था ताकि अन्नय्या को इसका पता न चले।
अन्नाय्या के चेहरे पर संतुष्टि का भाव देखकर अनुपान ने हल्की सी आह भरी। उसने फिर कहा,
मैंने वादा किया था, इसलिए पापा को भी बता देना। ताकि बाद में वो बेवजह मेरा सिर न खा जाएं!
हालांकि अन्नाय्या के मन में मौजूद सभी शंकाएं दूर नहीं हुईं, फिर भी उसे थोड़ा बेहतर महसूस हुआ। इससे कुछ भी पूरी तरह साबित नहीं हुआ, इसलिए उसके मन में तिरस्कार दिखाने का विचार आया, लेकिन फिर उसने सोचा कि तिरस्कार दिखाने के बाद उसे आगे क्या करना चाहिए?
उन्होंने अनूप से कहा,
"इस छुट्टी के दौरान विश्वविद्यालय आ जाना। वहाँ की नीति भी अब बदल गई है!..." और वे बस स्टैंड की ओर चल पड़े।
डोडप्पा के जाने के आधे घंटे बाद, ड्यूटी पर मौजूद नर्स आई और बोली,
डॉक्टर ने आपको छुट्टी दे दी है। अब आप जा सकते हैं। यहां हस्ताक्षर कर दीजिए, चलिए देखते हैं!
अनुपाल भी अस्पताल में रहकर थक गया था। उसने अपना सामान समेटा और निकल गया। पिछली शाम से उसका कोई भी दोस्त अस्पताल नहीं आया था। पुलिस स्टेशन भी कल शाम से खाली था। उसने एक रिक्शा लिया और हॉस्टल लौट आया। कॉलेज में कक्षाएं चल रही थीं, इसलिए हॉस्टल के पास के कमरों में कोई नहीं था। उसने कमरे का दरवाजा खोला और पलंग पर बैठ गया। कुछ देर बाद वह ऊब गया। उसका मन भी कक्षा में जाकर बैठने का कर रहा था। लेकिन अगर वह अभी जाता, तो सबकी नज़र उस पर पड़ जाती। इसलिए उसने कल सुबह से हमेशा की तरह सभी कक्षाओं में जाने का फैसला किया।

दोपहर में जब वह लंच के लिए गया, तो सब लोग वहाँ मौजूद थे। एक-दो लोगों ने नमस्ते कहा। लेकिन अनूप को वह सामान्य आत्मीयता महसूस नहीं हुई। उसके बगल वाले कमरों से नांजेगौड़ा, जयदेव और पंचलिंगप्पा भी वहाँ थे। लेकिन उन्होंने ऐसा दिखाया जैसे वे उसकी तरफ देख ही नहीं रहे हों। अरास ने उसे बताया था कि शुरुआत में वे सभी दो-तीन बार अस्पताल आए थे। अरास ने उसे यह भी बताया था कि उस पर हुए हमले के विरोध में कॉलेज एक दिन के लिए बंद रहा था। यह सब याद करके, अनूप कृतज्ञतापूर्वक उनके पास गया और, क्योंकि उसका दाहिना हाथ अकड़ा हुआ था, उसने अपना बायाँ हाथ आगे बढ़ाया और कहा,
``थैंक यू, बडस!"
पंचलिंगप्पा को दाहिना हाथ भी अकड़ा हुआ था। उन्होंने पूछा,
किसलिए?
``हड़ताल को इतनी अच्छी तरह से आयोजित करने के लिए!"
अनूप के जवाब पर नांजेगौड़ा ने हैरानी ज़ताई।
वाह! तो बायां हाथ आगे बढ़ रहा है, देखो! – बर्तन धोने वाला हाथ! ओह, वाह –"
अनूप असमंजस में था। उसने घबराकर कहा,
"ओह, मेरा दाहिना हाथ भी दुख रहा है - तुम्हारा भी दुख रहा है -"
``हाँ! बुद्धि एक वास्तविक चीज़ है, इसे कहो!" नांजेगौड़ा ने कहा।
अब तक नांजेगौड़ा कभी लड़ने नहीं आया था। हालांकि वह उससे बहुत करीबी नहीं था, लेकिन उसका रवैया शत्रुतापूर्ण भी नहीं था। इसलिए, भले ही उसने मना कर दिया, अनूप हैरान था। यह सोचकर कि अगर वह अब चुप रहा तो यह पीछे हटने जैसा होगी, अनूप ने पूछा,
"सोमवार की हड़ताल की व्यवस्था क्या कहती है?"
"कौन सा सोमवार? किस तरह की हड़ताल?" जयदेव ने पलटकर पूछा।
मैसूर के सभी कॉलेजों में हड़ताल!
``क्यों? कॉलेज की सभी लड़कियां हड़ताल पर क्यों जाएं?" नांजेगौड़ा ने बीच में पूछा, ``आप गांव की बेचारी लड़कियों को बर्बाद कर देंगे और कॉलेज के सभी छात्र आपका साथ देंगे?"
अरास ने कहा था कि इस कॉलेज में हड़ताल करवाने की पहल नांजेगौड़ा ने की थी। अब अचानक उनका व्यवहार बदल गया है! ऐसा क्यों हुआ? अनूप असमंजस में था। स्थिति जाने बिना बातचीत को आगे बढ़ाने का कोई फायदा न समझते हुए, वह चुपचाप अपनी सीट पर लौट गया और खाना खाने लगा।
रात के खाने के बाद, वह अरास के कमरे में गया और दरवाजा बंद करके पूछा,
"नांजे गौड़ा, तुम ऐसा व्यवहार क्यों कर रहे हो?"
मेरी अभी क्लास है। मुझे जाना होगा। शाम को मिलते हैं।
"फिर मिलेंगे," अरास ने कहा।
अनूप दोपहर में भी क्लास नहीं गया।
शाम को अरास अनूप को ढूंढते हुए उसके कमरे में आया और बोला,
``यहां नहीं! चलो कहीं और चलते हैं—चलिए—"
उसने गोली निकाली और अनूप को पीठ में डालकर सेंट पीटर पार्लर चला गया। उसने दोनों के लिए एक-एक बियर मंगवाई और कहा,
क्या आपने आज का अखबार नहीं पढ़ा? बरुआ का तबादला कल दोपहर फोन पर ही हो गया। पुट्टेगौड़ा - जिसने आपको उसे पिटवाया था, वो बेंगलुरु गया और मंत्रियों को ये तबादला करवाने के लिए कहा, ऐसा कहते हैं! वो कल शाम मैसूर में था - आज भी मैसूर में है, ऐसा कहते हैं! उसने एसपी को भी उठा लिया! पुलिस विभाग के सभी लोग उससे नफरत करते हैं। उसने कल रात सभी कॉलेजों के नेताओं को एक शानदार दावत दी, ऐसा कहते हैं! उन्हें जितनी शाही सलामी

चाहिए थी, मटन, चिकन, बिरयानी और ऊपर से 'एवरेस्ट पीक' आइसक्रीम, एक हाथ जितनी ऊंची और छह अलग-अलग फ्लेवर वाली! इसके अलावा, उसने बच्चों को ताना मारा - "अगर बौने के बेटे ने हमारी बेटी को बर्बाद कर दिया, तो तुम उसका साथ क्यों देते हो? असल में, उसे उससे शादी कर लेनी चाहिए थी!" लेकिन हम अपनी बेटी को ब्रामना जैसे नीच जाति वाले को नहीं देंगे! वेदों का पाठ करने और भीख मांगने वाली जाति में अपनी बेटी को देना हमारे लिए अपमान की बात है! इसलिए हमने शादी के बजाय पचास हजार रुपये मांगे। इसमें क्या गलत है?'
आधे से ज़्यादा छात्र नेता वहीं पर उनसे सहमत हो गए। जयदेव उनकी जाति का नहीं है। लेकिन उसे तुम्हारे लिए भी कोई हमदर्दी नहीं है। क्योंकि तुम उसकी जाति के हो कहाँ से? अब, सभी कॉलेजों में हड़तालें अभी खत्म नहीं हुई हैं – हमारे नेताओं को लगता है कि हमारे कॉलेज में जो हुआ वो भी ठीक नहीं था! हमारे कॉलेज कमेटी के अध्यक्ष गुरप्पा भी कह रहे हैं – किस कॉलेज परिसर में ऐसी दीवार होती है? किसी निकम्मे बच्चे ने किसी बच्चे को बिगाड़ दिया और उसके भाई-बहनों ने उसे पीट दिया, तो हम सात-आठ लाख रुपये क्यों खर्च करें? तो, पुट्टगौड़ा भी गुरप्पा से मिले हैं, इसका यही मतलब है!"
अनूप की संतुष्टि और स्थिरता चकनाचूर हो गई। अब उसे और भी बातें याद आने लगीं। कल पुलिस चली गई, और उसके बाद कोई नहीं आया – इसका मतलब है कि अब हमें कोई पुलिस सुरक्षा नहीं मिलेगी! पुट्टगौड़ा अभी भी पचास हजार रुपये का मामला छोड़ने को तैयार नहीं है!
जैसे ही उसने बीयर का मग उठाया और एक घूंट लिया, अरास ने कहा,
``यह अतिरिक्त एसपी बरुआ जैसा नहीं है – वह तो दोनों तरफ पैर जमाए बैठा है, ऐसा कह सकते हैं!"
अनूप का मन विचारों में डूबा हुआ था – अगर उसने बीयर की जगह व्हिस्की मंगाई होती तो बेहतर होता! लेकिन उसने कहा कि इसे पीने के बाद उसे इसकी आदत हो गई।
रात को जब उसने कमरे का दरवाजा बंद किया और बिस्तर पर लेटा, तो उसका दिल डर से भर गया। उसने अभी-अभी एसपी का तबादला किया था! उसे वह रात याद आ गई जब वह आया था और चाकू दिखाकर पचास हजार रुपये मांगे थे। क्या पता वे फिर रात को कमरे में घुस आए? चाहे आवाज कितनी भी जानी-पहचानी क्यों न हो, उसने आधी रात को दरवाजा न खोलने का फैसला किया था। पंचलिंगप्पा, नाजेगौड़ा – कोई भी उसकी रक्षा के लिए नहीं दौड़ेगा! सब लोग पुट्टगौड़ा गए थे! अगर उन्होंने किसी एक गार्ड को घायल कर दिया होता, तो दरवाज़ा गिर जाता! फिर वे अंदर आए और उसे चाकू से मार डाला! – अनूप डर से कांप रहा था। उसने सोचा – जब तक यह मामला सुलझ नहीं जाता, तब तक इस कमरे में अकेले सोना उसके लिए बुद्धिमानी नहीं होगी!
लेकिन कहां जाऊं? क्या मुझे अरास से पूछना चाहिए? नहीं। वो भी हॉस्टल है। मैं वहां हूँ, तो वे भी वहीं आएँगे!
काफी देर तक उसका मन अंदर ही अंदर बेचैन होता रहा। अचानक उसे जगगु और ओमी की याद आ गई। हां, यही ठीक रहेगा। वह यहां किसी को कुछ बताना नहीं चाहता था। क्योंकि यहां कुंडी वाली चाबी थी, उसे पता भी नहीं चलता कि बाहर से ताला लगा है या नहीं। वह गोली यहीं रखेगा। रात के खाने के बाद वह वहां पैदल जाएगा, बस या रिक्शा लेगा। सुबह जल्दी उठकर निकल जाएगा। अगर उसे एक महीना भी ऐसे ही गुज़ारना पड़े, तो काफी होगा!
यह फैसला लेने के बाद उसे थोड़ा बेहतर महसूस हुआ। फिर उसे याद आया – न तो जगगु और न ही ओमी उससे अस्पताल में मिलने आए थे। वे क्यों नहीं आए? क्या ऐसा हो सकता है कि उन्हें कुछ पता ही न हो? ऐसा कैसे हो सकता है? या

शायद वे गाँव में हों न हों? वे दोनों बचपन से मेरे घनिष्ठ मित्र थे! बाकी सब तो अभी-अभी दोस्त बने हैं। वे क्यों नहीं आए?
अनुपम ने अपनी कमीज़ और पैंट पहनी। उसने घड़ी देखी – रात के ग्यारह बज चुके थे। कुछ देर सोचने के बाद उसने गोली निकाली और कमरे को ताला लगा दिया।
जग्गू और ओमी को बुलेट की आवाज़ से पता चला कि अनुप आ गया है। मज़दूर सो गया था। ओमी ने दरवाज़ा खोला। उसने अनुप से पूछताछ की, जो बाहर बुलेट का इंतज़ार करने के बाद अंदर आया था।
``कैसे हो? हाऊ आर यू?"
मैं यहाँ सोने आया हूँ। चलिए गाड़ी अंदर ले चलते हैं...
जग्गू कार को अंदर ले गया। तीनों हॉल में बैठ गए। ओमी ने पूछा,
अरे यार, असल में हुआ क्या था? हम सब हड़ताल पर चले गए थे। कोई कॉलेज नहीं गया!
अनुपम ने पूरी सच्चाई बताई और अंत में कहा,
ऐसी स्थिति में, मेरे लिए कुछ दिनों तक अकेले कमरे में सोना ठीक नहीं है। इसलिए मैंने कुछ दिनों के लिए तुम्हारे साथ सोने का फैसला किया है! मैं इस रास्ते से आऊँगा ताकि किसी को पता न चले। मैं गोली नहीं लाऊँगा!
उनके चेहरों पर भय की लहर दौड़ गई। वे दोनों कुछ क्षण चुपचाप बैठे रहे। अनुपम, चुप्पी से विचलित होकर, पूछा,
``का, रे?"
"यह सच है, लेकिन गुंडे तो पहले से ही सबको ढूंढ रहे हैं! क्या होगा अगर वे यहां भी आ जाएं और दरवाजा तोड़कर अंदर घुस जाएं?" जग्गू ने मजाक में पूछा।
उनमें यहां आने की हिम्मत नहीं होगी। क्योंकि हम तीन लोग यहां हैं। इसके अलावा, डर भी है..."
लेकिन मान लीजिए कि वे प्रवेश कर गए..."
तो क्या हुआ? हम तीनों ही ताकतवर हैं! हम बिना लड़े हार नहीं मानेंगे। क्या अमिताभ बच्चन एक ही मुक्के से चार गुंडों को नहीं गिरा देते?
"लेकिन अगर हमारे पिताजी को इसके बारे में पता चल गया, तो वो मुसीबत में पड़ जाएंगे!"
"पंचायत में क्या खराबी है?"
"अरे, तुम तो उनका स्वभाव भी जानते हो! तुम इस झंझट में क्यों पड़ रहे हो, इसीलिए तो वे चिल्ला रहे हैं। मम्मी ने रोते हुए मुझसे कहा था कि ऐसे झंझट में मत पड़ो! जब तुम कहते हो कि तुम एक आदर्श बेटे हो, तो तुम्हें अपने माता-पिता को दुख नहीं पहुंचाना चाहिए - है ना?"
"क्यों? क्या आपके माता-पिता आपको मुसीबत में फंसे दोस्त की मदद न करने के लिए कहते हैं?"
"अच्छा, अच्छा... चलो चलते हैं! नहीं तो किसी को पता ही नहीं चलेगा कि तुम आज यहाँ आए हो। लेकिन अगर तुम कहोगे कि तुम नहीं हो, तो सबको पता चल जाएगा कि तुम यहाँ हो! क्योंकि सबको पता है कि तुम हमारे साथ घनिष्ठ मित्रता रखते हो। अब सो जाओ - बहुत देर हो गई है -" जग्गू ने जम्हाई लेते हुए कहा।
ओमी के कमरे में एक अतिरिक्त पलंग था। जब जग्गू के पिता घर से बाहर होते थे, तो जग्गू उन्हें अपना कमरा दे देता था और खुद ओमी के कमरे में पलंग पर सो जाता था। इससे पहले, अनुप भी कई रातें उसी पलंग पर सो चुका था। अब, उस कमरे में सोने के बाद, उसने धीमी आवाज़ में ओमी से पूछा,
"जग्गू अपने पिता से इतना क्यों डरता है? क्या वह सचमुच डरता है, या वह मेरी मदद न करने के लिए सिर्फ बहाने बना रहा है?"
ओमी ने हल्के-फुल्के अंदाज़ में यह भी कहा,

``बात सिर्फ इतनी ही नहीं है, रे... तुम पर हमला हुआ था, है ना? जगगु के पिता उस सुबह यहाँ आए थे। हमने उन्हें सारी सच्चाई बताई, हड़ताल चल रही थी, वो भी उसी दिन यहीं थे। उन्होंने हमें बताया... तुम दोनों अनूप से दूर रहो, ये लालची गुंडे एक आदमी से पैसे नहीं लेते, उसके करीबी दोस्त से पैसे माँगते हैं! अगर उन्हें लगता है कि हम लाखों-करोड़ों रुपये का लेन-देन करते हैं, तो वे हममें से किसी एक को अगवा कर लेंगे और हमसे भी पैसे माँगेंगे! इसलिए मैं तुमसे कहता हूँ, अनूप से दूर रहो! मैं तुम्हें बताता हूँ कि हमारे उत्तर प्रदेश में ये डाकू क्या करते हैं! वहाँ के अमीर लोग कभी-कभार डाकुओं को पैसे देते हैं और तभी वे चैन से जी पाते हैं!"
"तो तुम दोनों अस्पताल भी नहीं आए?"
इस पर ओमी ने कुछ नहीं कहा। इससे अनूप को वह बात समझ आ गई जो वह समझना चाहता था। फिर ओमी ने कहा,
यह महत्वपूर्ण है कि किसी को पता न चले कि हम घनिष्ठ मित्र हैं! दूर रहकर हम आपकी अधिक मदद कर सकते हैं – चिंता मत करो! हम दोस्त हैं!
अनुपाला के दोनों पिता गुस्से में थे। वह जानता था कि वे अच्छे दोस्त हैं। वह यह भी जानता था कि अगर वह अभी उठकर जाना भी चाहे, तो कमरे में अकेले सोने पर उसे नींद नहीं आएगी। पुट्टेगौड़ा जानता है कि उसे अस्पताल से छुट्टी मिल चुकी है! अब उसे पुलिस का भी डर नहीं है! इसमें कोई शक नहीं कि वे आज रात कमरे का दरवाजा तोड़कर अंदर घुसेंगे! क्या वे पंद्रह दिन का समय मिलने तक इंतजार करेंगे? आज उनं पंद्रह दिनों में से चार दिन बीत चुके हैं।
फिर भी, वह गहरी नींद में सो गया। अस्पताल में भी उसे चैन की नींद नहीं आई थी। इसलिए उसने खुद को गहरी नींद में डूबने दिया।
अगले दिन, उसके दिल में एक अजीब सी बेचैनी होने लगी। उसे अपने कमरे में अकेले रहने से डर लग रहा था! उसे डाइनिंग हॉल में, क्लासरूम में और दूसरे बच्चों के साथ तो डर नहीं लगता था, लेकिन कमरे में अकेले रहना उसके लिए बहुत मायने रखता था—नहीं तो, अगर गुंडे कमरे में घुस आए तो क्या करेंगे? मैं अपने पास एक चाकू भी रखूंगा। अगर उन्होंने मेरे हाथ में चाकू देखा, तो क्या वे भी डर के मारे भाग नहीं जाएँगे? लेकिन अगर तीन-चार खूंखार गुंडे अंदर आ गए, तो मैं अकेले उनका सामना कैसे करूंगा? सिर्फ चाकू से क्या होगा? अगर मैं अपने पास एक रिवॉल्वर रखूं तो क्या होगा? इस विचार ने उसे थोड़ा आश्वस्त किया। उसने एक पुलिसवाले से रिवॉल्वर खरीदने का तरीका पूछा। उसे पता चला कि एसपी की इजाज़त के बिना रिवॉल्वर नहीं रखी जा सकती। इसके अलावा, इसकी कीमत सात-आठ हज़ार रुपये थी। आठ हज़ार रुपये तो नामुमकिन थे—लेकिन नया एसपी इजाज़त नहीं देगा, यह तो पक्का था!
उसी शाम, मेरी मुलाकात वीरेश से हुई, जो आखिरी कक्षा में पढ़ रहा था। वह भी अनुसूचित जाति कोटा के तहत सीट पाने वाले छात्रों में से एक था। वह गाँव में एक कमरे में रहता था और अपना खाना खुद बनाता था। अनुप उसे अच्छी तरह जानता था। अब, उससे मिलते ही उसने पूछा कि क्या अनुप कुछ दिनों के लिए उसके कमरे में आकर सो सकता है। वीरेशी बिना किसी आनाकानी के मान गया। उसके कमरे में बिस्तर नहीं था। वहाँ सिर्फ चटाई पर एक कंबल था। लेकिन अनुप को वहाँ आराम महसूस हुआ - यहाँ तो जगगु-ओमी के घर से भी ज़्यादा शांति थी!
वह नहीं चाहता था कि किसी को पता चले कि वह कहाँ सो रहा है, इसलिए वह रात में वीरेश के घर जाने के लिए रिक्शा लेता था और सुबह जल्दी उठकर हॉस्टल तक पैदल जाता था।
अगले दिन, कॉलेज पुस्तकालय में कागज़ात देखते समय, उन्हें 'इंडियन ट्रिब्यून' में शांतामूर्ति द्वारा लिखा गया एक लंबा लेख मिला। इसमें उन्होंने बताया था कि कैसे राजनेता पैसे निकलवाने के लिए ब्लैकमेल का सहारा लेते हैं, और पुट्टेगौड़ा मामले

का पूरा ब्यौरा दिया था। अपने पिता द्वारा संपादित उस अखबार में वह लंबा लेख पढ़ते हुए उन्हें ऐसा लगा मानो उनके सारे अनुभव उनके सामने लौट आए हों। उस लेख में पुट्टेगौड़ा ने यह भी लिखा था कि मंत्री ने एस.पी. बरुआ का तबादला कर दिया था। उन्होंने यह भी लिखा था कि उन्होंने छात्र नेताओं को लूटकर और उन्हें शराब की मिली-जुली पार्टी देकर हड़ताल भंग करवाई थी। उन्होंने यह भी लिखा था कि उस पार्टी के दौरान पुट्टेगौड़ा ने छात्रों के मन में जातिवाद का ज़हरीला बीज बो दिया था। इसी लेख में शांतामूर्ति ने हमें अतीत में घटे ग्रेनाइट मामले की याद दिलाई थी और अंत में लिखा थी, "उस मामले में राजस्व मंत्री को भी इंडियन टिब्यून की वजह से करोड़ों रुपये का नुकसान हुआ था, इसलिए वे पुट्टेगौड़ा को आगे लाकर इंडियन टिब्यून के संपादकों से बदला ले रहे हैं!" अंत में उन्होंने लिखा था, "हमारे पास इस लेख में लगाए गए हर आरोप को साबित करने के लिए पुख्ता सबूत हैं!"
वह शानदार लेख पढ़कर अनूप को थोड़ी तसल्ली हुई। पूरे लेख में उसके एक भी मामले का ज़िक्र नहीं हुआ! पापा का अख़बारे! उन्होंने खुद ही देखा होगा! इस सोच से उसके दिल में पापा के लिए प्यार जाग उठा। वह दिन भर खुश रहा। लेकिन रात होते ही उसे फिर डर लगने लगा। अब सात दिन बीत चुके थे। आठ दिन और बचे थे। आगे क्या? अगर उसके गुंडे उस पर हमला करके उसे चाकू मार दें तो? अब तो पुलिस भी उसके साथ है! सब-इंस्पेक्टर- उसका नाम क्या है?- हम्म- लंकाप्पा! क्या सी.आई.डी. भेजकर यह पता लगाना मुश्किल है कि मैं रात में कहाँ सोता हूँ? या अगर कोई दिन में मुझे चाकू मारकर भाग जाए तो? तब लंकाप्पा कुछ दिनों तक हत्यारों को ढूंढने का नाटक करता रहेगा! चाहे आगे कुछ भी हो जाए- मेरी जान खतरे में रहेगी, है ना?
पापा को ये बात याद क्यों नहीं आई? हमारे जाने के बाद उन्होंने मुझसे दोबारा पूछा तक नहीं। वो अपने पिता पर गुस्सा हो गए। उन्हें फोन करके पूछना चाहिए थी! वो बाहर गए और टेलीफोन बूथ से उनसे संपर्क किया।
उन्होंने कहा,
एसपी का तबादला हो जाने के बावजूद, मैंने आईजी से बात कर ली है। मैंने मैसूर के एडिशनल एसपी को भी भरोसा दिलाया है कि अगर किसी को कुछ हुआ तो पुट्टेगौड़ा ही ज़िम्मेदार होगा! इसके परिणामस्वरूप, मुझे पूरा यकीन है कि अब से पुट्टेगौड़ा इतनी दूर नहीं जाएगा। फिर भी, आपको सावधान रहना चाहिए। मोटरसाइकिल और साइकिल बेच दीजिए। छात्रों का इस तरह घूमना ठीक नहीं है! अगर आप सिर्फ अपनी पढ़ाई, अच्छे दोस्तों और कॉलेज पर ध्यान देते, तो इनमें से कुछ भी नहीं होता! मुझे इस मामले की पूरी जानकारी है! हमारे पत्रकारों को पूरी कहानी पता है। वहां का चौकीदार – उसकी बेटी और बाकी सब कुछ आपके एक लड़की के साथ वहां जाने के बाद ही हुआ, है ना?
अनुपम को समझ नहीं आ रहा था कि क्या जवाब दे।
रविंद्र ने आगे कहा,
"जब तुम पर हमला हुआ था, तब मैंने चुप रहकर कुछ नहीं कहा। मुझे यह भी पता चला कि डोड्डप्पा ने तुम्हें शादी करने की सलाह दी थी। शादी कर लो। जब तक तुम्हारी पढ़ाई पूरी नहीं हो जाती और तुम्हें नौकरी नहीं मिल जाती, तब तक तुम्हारी और तुम्हारी पत्नी की देखभाल करना मेरी ज़िम्मेदारी है। मैं तुम्हारे परिवार के लिए पर्याप्त धन भेजूंगा।"
"तुम्हें यह किसने बताया?..." अनुपना ने बीच में ही पूछा।
चुप रहो! झूठ मत बोलो! उस लड़की ने कहा, मैंने वो टेप खुद सुना है! मैं तो पक्की जानकारी के बिना अनपढ़ भाषा भी नहीं बोलती! अगर तुम्हें मैसूर में रहने से डर लगता है, तो यहाँ आ जाओ – मैं तुम्हें यहां के किसी कॉलेज में दाखिला दिला दूँगी!

उन्हें थोड़ी राहत महसूस हुई, यह सोचकर कि अगर वे मैसूर छोड़कर बैंगलोर में अपने घर पर ही रहें, तो पुट्टगौड़ा कुछ नहीं कर पाएगा और पूरा कॉलेज भी महादेवी कांड की बदनामी से बच जाएगा। इसी संतुष्टि के साथ वे कॉलेज गए। उन्हें लगने लगा कि मैसूर एक छोटा सा गाँव है और यह कॉलेज उस गाँव का स्कूल। लेकिन अगर हम ऐसे ही चले गए, तो क्या सब हमें कायर नहीं कहेंगे? कहेंगे ना? मुझे इस बात की चिंता क्यों करनी चाहिए कि मेरे जाने के बाद कोई क्या कहेगा?
दोपहर के भोजन के बाद, वह कक्षा में बैठ गया और अपने पिता की कही हर बात को विस्तार से याद करने लगा। उन्हें पता चल गया था कि मैं अनीता के साथ जा रहा हूँ! उनके पास महादेवी के भाषण की ऑडियो टेप भी थी! तो फिर उनमें और पुलिस में क्या फर्क था? एक पिता के रूप में उनकी खासियत क्या थी? शर्म और गुस्से की लहर उसके मन में उठ उठी। उसे मैसूर छोड़ना होगा और अपने घर में अपनी सारी आज़ादी खोनी होगी! यह विचार अनुप को भी डरा रहा था। उसने मन ही मन ठान लिया, चाहे कुछ भी हो जाए, वह काम करेगा - चाहे हत्या ही क्यों न हो! लेकिन मैं उनके चंगुल में नहीं रहूँगा!
क्लास खत्म करके कमरे में लौटते समय अचानक उसके सामने एक विचार आया। इतने दिनों बाद भी उसने मम्मी को ज़रा भी नहीं बताया था! चाहे हालात कितने भी मुश्किल क्यों न हों, मम्मी उनसे निकलने का कोई न कोई रास्ता ज़रूर निकाल लेती हैं! वो मुझसे कितना प्यार करती हैं!
उसने अपनी घड़ी देखी – वह इस समय कारखाने में होगी। शीतल आंटी भी उसके साथ होंगी। अभी फोन मत करना।
रात के खाने के बाद, अपने दोस्त के घर सोने से पहले, उसने एक रिक्शा लिया और डाकघर गया और वहाँ से उसने दिल्ली में घर फोन किया। मम्मी घर पर थीं। उसने फोन पर उन्हें गुंडों, डाकुओं और उनके हमले के बारे में बताया और कहा,
"अगर आपको इस मामले में और जानकारी चाहिए, तो इंडियन ट्रिब्यून में एक बड़ा लेख छपा है, उसे पढ़ लीजिए। मैं पापा के अखबार और राजस्व विभाग के बीच चल रहे झगड़े का शिकार हो गई हूँ! जब मैं पापा से पूछती हूँ, तो वे कहते हैं, मैसूर छोड़कर बैंगलोर आ जाओ और मेरे साथ रहो। तुम अखबार पढ़ो। मैं तुम्हें दोबारा कब फोन करूँगा?"
लेकिन तब तक तुम कैसे गुजारा करोगे? मुझे तुम्हारी चिंता है, बेटे!
मैं सावधानी बरत रहा हूँ, मम्मी! मैं रात को किसी को बिना बताए अपने दोस्त के कमरे में सोता हूँ!
मुझे एक नंबर दीजिए। मैं कल सुबह आठ बजे उस नंबर पर कॉल करूँगा। अगर नहीं, तो आप ही कर दीजिए!
माँ से फोन पर बात करने के बाद उसे बहुत अच्छा लगा। अब वो ज़रूर कुछ करेगी। जहां प्यार है, वहां राह भी है! उस रात वीरेश के कमरे में उसे गहरी नींद आ गई।
उसने सुबह आठ बजे अपनी माँ को फोन किया। वह उसका इंतजार कर रही थी। उसने तुरंत कहा,
मैंने लेख पढ़ा। ये गुंडे नहीं हैं – ये राजनीति में शामिल लोगों जैसे लगते हैं। पूरे देश की राजनीति चलाने के लिए इन्हें पैसे चाहिए। तो फिर इन्हें ग्रेनाइट बेचने दो, अगर संगमरमर नहीं तो! ये उस पैसे का क्या करेंगे? हमें खुद पुट्टगौड़ा से बात करनी चाहिए। मैं अभी एयरपोर्ट के लिए निकल रहा हूँ। बेंगलुरु के लिए ग्यारह बजे की फ्लाइट है। मैं बेंगलुरु से टैक्सी से चार-साढ़े चार बजे तक मैसूर पहुँच जाऊँगा। मैं सीधे आपके हॉस्टल आऊँगा। मेरे लिए एक अच्छे होटल में कमरा बुक करवा देना। कानकॉर्ड नाम का होटल। तुम भी रात को मेरे साथ वहीं रुकना। और देखो!

बिलकुल भी चिंता मत करो! ये कोई बड़ी समस्या नहीं है। इससे निकलना मुश्किल नहीं है!
उसे बहुत राहत महसूस हुई। हालाँकि उसे समझ नहीं आ रहा था कि मम्मी क्या करेंगी, लेकिन उसे पूरा यकीन था कि वह इस मामले को पूरी तरह सुलझा लेंगी। ऐसे समय में उनके साथ एक दिन बिताना कितना अच्छा था! मम्मी के प्रति उसका सम्मान और भी बढ़ गया। इसी उत्साह में उसने होटल पैराडाइज़ में दो पलंगों वाला एक कमरा बुक कर लिया।
जब वो बेंगलोर से आया, तो मम्मी ने उसके लिए एक लग्ज़री टैक्सी का इंतजाम किया था। कमरे में आते ही मम्मी ने दरवाजे और खिड़कियाँ ध्यान से जाँचीं। उसने एक बैग में कपड़े लिए और मम्मी के साथ टैक्सी में बैठ गया। मम्मी टैक्सी में बैठीं और कॉलेज परिसर का चक्कर लगाया। फिर टैक्सी पैराडाइज होटल की तरफ चल पड़ी।
अपनी भव्य ऊँचाई, गोल, अलंकृत स्तंभों, विशाल कमरों और संगमरमर के भरपूर उपयोग के साथ, पैराडाइज़ होटल उसे किसी शाही महल जैसा लगा। उसके चेहरे पर संतोष का भाव फैल गया।
कमरे में प्रवेश करते ही अनुपन ने पूछा,
"माँ, आपको यह कैसा लगा?"
मैं आपको कुछ नहीं बताऊंगी – आप खुद देख लीजिएगा! कल सुबह हम जल्दी उठेंगे, तैयार होंगे और सुबह आठ बजे से पहले पुट्टेगौड़ा के घर जाकर बातें करेंगे! आपने जिस गाँव का ज़िक्र किया था, उसका नाम क्या था? सिंगरवाली?
"सिंगारवल्ली!" अनुपना की मां ने उसके उच्चारण को सुधारा।
``हाँ – यही तो बात है! ये कन्नड़ भाषा! सच कहूँ तो, दक्षिण भारतीय नाम कितने अजीब होते हैं! मैं तुम्हें बताता हूँ कि जब कोई टैक्सी उसके घर के सामने रुके तो क्या कहना! तुम चुपचाप देखते रहो! अरे, ये तो मेरी नज़र में कोई समस्या नहीं है! ब्लैकमेल करना – डर दिखाकर पैसे वसूलना उत्तर भारत की खासियत है! और दिल्ली उसकी राजधानी है! चिंता मत करो! बाकी सब कैसे हैं? कॉलेज में क्या चल रहा है? तुमने मुझे ये नहीं बताया कि तुम्हारी कितनी गर्लफ्रेंड हैं! मैंने बुलेट का स्पीडोमीटर चेक किया – मुझे लगता है तुमने उसे बहुत तेज़ चलाया है!"
अनुपान ने उसकी बातें ध्यान से सुनीं। उसके शब्दों में प्रशंसा झलक रही थी, इसलिए उसने कहा,
नहीं, मम्मी! आप गुस्सा हो जाएंगी, इसलिए मैं किसी को नहीं ले जा रहा!
नहीं? ये तो स्वाभाविक नहीं है! ठीक है, लेकिन सावधान रहना, बस! वरना, आज और कल की ये लड़कियाँ तुम्हारे पीछे बैठकर स्पीड का मज़ा लेंगी, तुम्हारे पैसों से चना-भटूरा खाएँगी, आइसक्रीम खाएँगी और फिर हाथ हिलाकर तुम्हारा मज़ाक उड़ाते हुए चली जाएँगी! कौन जाने तुम्हारे मैसूर जैसे गाँव में क्या होता है - लेकिन हमारी दिल्ली की लड़कियाँ तब तक नहीं जीतीं जब तक उनकी जेबें पूरी तरह खाली न हो जाएँ! बाद में, आपस में बातें करते हुए, वे बैठकर हँसती हैं और कहती हैं कि मैंने फलाँ-फलाँ बेवकूफ के साथ मज़े किए!
मम्मी की बातों में कोई दुर्भावना नहीं थी, न ही कोई अनुचित नैतिक अहंकार। उन्होंने ऐसे बात की जैसे कोई अपने बराबर के दोस्त से बात करता है! वह खुश हुआ। उसने मम्मी को प्रशंसा भरी नजरों से देखा। फिर उसने पूछा,
"माँ, क्या आप मर रही हैं?"
नहीं। क्यों, रे?
“जब मैं गर्मी की छुट्टियों में आया था, तब तुम्हारे कान के पास एक सफेद बाल दिख रहा था। अब वो भी नहीं है! तुम्हारे बाल बिलकुल तुम्हारी दादी के बालों जैसे हैं – ऐसे बाल जो कभी सफेद नहीं होते! माँ! मुझे तुम पर बहुत गर्व है, मैं तुम्हें बता नहीं सकता!” उसने उसका हाथ सहलाते हुए कहा।

वह भी खुश थी।
नहीं तो टैक्सी मिल जाएगी - हम यहाँ होटल में बैठे क्या करेंगे? - वे दोनों शाम को वृंदावन गार्डन गए।
वह सुबह जल्दी उठी और तैयार हुई। एक बिना आस्तीन का ब्लाउज, एक नीली, विदेशी, मुलायम साड़ी जो उसके सुडौल शरीर की सुंदरता को और बढ़ा रही थी, ऊँची एड़ी के जूते - व्यावसायिक महिलाओं की तरह बहुत सारे गहने पहनने के बजाय, उसने गले में एक चेन, हाथों में दो चूड़ियाँ और कानों में हीरे की बालियाँ पहनीं और एक बड़ा पर्स ले रखा था। वह भी जींस, सफेद शर्ट और काउबाय जूते पहनकर तैयार हुई।
वह ठीक सात बजे रवाना हुआ और आठ-दस बजे सिंगारवल्लली पहुंचा। पूछताछ करने के बाद जब उसकी टैक्सी पुट्टेगौड़ा के घर के सामने रुकी, तो पुट्टेगौड़ी बहुत परेशान हो गया। वह जल्दी से अपने साधारण, संकरे घर से बाहर आया। मलयाली शैली की लुंगी पहने पुट्टेगौड़ा अभी भी अपने दांत साफ कर रहा था।
वह यह नहीं समझ पाया कि टैक्सी में उसके पास आई महिला कौन थी। इस पर कांति ने हिंदी शैली की कन्नड़ में पूछा,
"तुम पुट्टेगौड़ा हो, है ना?"
उसने टूथब्रश को मुंह से ऐसे निकाला जैसे उसने कुछ गलत किया हो और कहा,
जी हाँ! मैं ही हूँ मैडम!..."
क्या आपको अंदर बैठना ठीक लगेगा? अगर नहीं, तो आप बाहर आ जाइए - चलिए टैक्सी में बैठकर बात करते हैं! टैक्सी में जगह है। अगर आप चाहें, तो चलिए मैसूर चलते हैं और बात करते हैं..."
तब तक, गंदे कपड़ों में दस-बारह बच्चे, तीन-चार पुरुष और एक-दो महिलाएं टैक्सी के आसपास जमा हो गए थे। पुरुषों ने गंदी खाकी पैंट और फटी हुई गंदी बनियान पहन रखी थी। सबके मुंह से बीड़ी की गंध आ रही थी। महिलाएं गांव के बाहर एक कुएं से पानी लेने गई थीं। टैक्सी देखते ही वे भी वहीं रुक गईं।
पुट्टेगौड़ा ने कहा,
अंतरिक्ष में क्या खराबी है? आओ... आओ! अंदर आओ..."
कांति और अनूप उसके घर में दाखिल हुए। अंदर आते ही उसने उन्हें बाईं ओर के कमरे में बैठा दिया। तुरंत ही पता चल गया कि यह उसका दफ्तर था। एक लकड़ी की मेज, एक कुर्सी और सामने वाली दीवार से लगी एक लंबी बेंच। मेज पर एक-दो कन्नड़ अखबार और कुछ पुराने साप्ताहिक पत्रिकाएँ रखी थीं। पुट्टेगौड़ा ने उन्हें बार-बार बैठने के लिए कहा।
कांति ने अपने रूमाल से बेंच पर जमी धूल साफ की, ताकि दोनों बैठ सकें, और वे दोनों बेंच पर बैठ गए। पुत्तेगौड़ा जल्दी से अंदर गया, टूथपेस्ट और साबुन धोकर वापस आया। जब वह लौटा, तब तक उसने खादी की कमीज और पैंट पहन ली थी और अपने बाल भी संवार लिए थे। घर के बाहर, गाँव के और भी लोग टैक्सी के पास उत्सुकता से जमा हो रहे थे।
पुत्तेगौड़ा, अभी भी इस बात को लेकर असमंजस में था कि उसे उनके सामने वाली कुर्सी पर बैठना चाहिए या नहीं, वह खड़ा हुआ और पूछा,
मैंने आपको पहचान लिया, है ना!
मैं दिल्ली से हूं! मुझे कन्नड़ ठीक से नहीं आती। मैं मुश्किल से ही बोल पाती हूँ। मैं वहां एक गारमेंट फैक्ट्री चलाती हूँ। मैं रेडीमेड गारमेंट्स विदेशों में भी भेजती हूँ। ये मेरा बेटा अनूप है। मुझे पता चला कि आपने उससे चुनाव कोष के लिए पैसे मांगे थे। अगर आप किसी छात्र से पैसे मांगते, तो वो कहाँ देता? वहीं, अगर आपने मुझसे पैसे मांगे होते, तो मैं इंतज़ाम कर देती। जब चुनाव नज़दीक आते थे, तो हम दिल्ली की सभी महिला उद्यमियों से पैसे इकट्ठा करके मैडमों को देते थे। मैं उन्हें व्यक्तिगत रूप से जानती भी हूँ। मैं हमारी महिला उद्यमी संघ की सचिव हूँ।

इसलिए ज़्यादातर समय मैं ही अटेंचो को पैसे देता हूँ, उसे देता हूँ और चाय लाता हूँ। अरे, हम चुनाव की कठिनाइयों को जानते हैं! लेकिन आपने एक छोटे बच्चे से पैसे क्यों मांगे?
पुत्तेगौड़ा अब बहुत असमंजस में था। उसके मन में झिझक और भय भी था। कांति ने पूछा,
आप दिल्ली कब आए थे?
पुट्टेगौड़ा ने कुछ नहीं कहा।
अगले चुनाव में टिकट के काम के लिए आपको दिल्ली आना पड़ेगा, है ना? उस समय आपको मुझसे पहले मिलना चाहिए। उससे पहले, हमारे अनूप से मिल लीजिए, ताकि आपको मेरा पता और फ़ोन नंबर पता चल जाए!"
"महोदया... क्या आप चाय पीना चाहेंगी? रुकिए... मैं आपको ऐसा करने के लिए कह रहा हूँ..." पुट्टेगौड़ा ने अपने मन में उमड़ रहे भ्रम, भय और आनंद को दबाते हुए पूछा।
नहीं। हमने चाय पी ली है। इसे दोबारा पीना हमारी सेहत के लिए अच्छा नहीं होगा। इसे ड्राइवर को दे दीजिए!
पुट्टेगौड़ा चाय को अलविदा कहने के लिए अंदर गया। जब वह बाहर आया, तो उसने उससे कहा,
क्या आप खिड़की बंद कर देंगे?...
उसने खिड़की बंद कर ली, ताकि गाँव वाले जो उसमें से झाँक रहे थे, उन्हें देख न सके। उसने अपना बड़ा पर्स खोला और उसमें से दो सौ रुपये के नोटों का एक बंडल निकाला और उसे अपने सामने रख लिया। फिर उसने कहा,
इसे लीजिए। चुनाव के दौरान ज़रूर आइएगा। मैं आपकी मदद ज़रूर करूंगा। हम दिल्ली में रहने वाले लोग हैं! हम वहां चुनाव के लिए चंदा भी देते हैं। हमारा सारा काम वहीं से होता है! आखिर आप हमारे कर्नाटक से ही तो हैं! हम चाहते हैं कि आप भी राजनीति में आगे आएं – दिल्ली पहुंचें। हम आपकी भी पूरी मदद करेंगे!
यहां पुत्तेगौड़ा असमंजस में पड़ गया। उसने एक नज़र में ही समझ लिया कि उसके सामने बीस हज़ार रुपये हैं - क्या उसे इतनी छोटी रकम से निपटना चाहिए या नहीं? फिर भी, उसने नोटों का बंडल उठा लिया। उसने तुरंत कहा,
अब खिड़की खोल दो। हवा अंदर आने दो। वैसे भी, यहाँ ज्यादा रोशनी नहीं है..."
"हम क्या करें, महोदया? हमारे गांव में चौबीसों घंटे बिजली नहीं रहती। तो हमें पंखा कहां से मिलेगा?"
कांति ने अचानक पूछा,
आपकी उम्र कितनी है?
पुत्तेगौड़ा उसकी तिरछी निगाहों और पूछे गए प्रश्न के कारण झिझक गया। वह उसके प्रश्न का अर्थ नहीं समझ पाया। उसने उलझन में जवाब दिया,
पैंतीस साल–"
"तो तुम अभी भी जवान हो! तुममें बहुत ताकत है! तुम्हें दिल्ली में राजनीति में ज़रूर सफलता हासिल करनी चाहिए! हम तुम्हारी हर ज़रूरत में मदद करने के लिए मौजूद हैं!" उसने मनमोहक मुस्कान के साथ कहा।
तो आपका मतलब है कि संसद के लिए खड़े हो जाओ?
"आप खुद ही सोचिए। आप चाहे जिस पद पर हों, आपको तुरंत मंत्री पद मिल जाएगा, वहां तक पहुंचने के लिए आपको कड़ी मेहनत करनी होगी! आप कहते हैं कि भले ही आप राज्य में एक शक्तिशाली मंत्री बने रहें, फिर भी दिल्ली में आपका प्रभाव रहेगा!" उन्होंने कहा।
अब उनका चेहरा विनम्रता और आज्ञाकारिता से भर उठा।
वह चुपचाप खड़ी हुई और बोली,

“ऐसा मत सोचिए कि मैंने ये पैसे डर के मारे दिए! मैं मैडम से मिला और उन्हें अपनी समस्याओं के बारे में बताया, कि हमारा काम मजबूरी में चल रहा है। लेकिन मुझे लगा कि आप राजनीति में अपनी जगह बनाने के लिए काफी शक्तिशाली हैं। अगर आप जैसे लोगों की मदद करेंगे, तो कर्नाटक आगे बढ़ेगा! मुझे लगता है मैडम भी आपकी तरफ ध्यान देंगी। खैर, जब आप दिल्ली आएं, तो मुझसे जरूर मिलें। धन्यवाद...”
यह कहकर उसने उसका दाहिना हाथ अपने हाथ में लिया और तीन बार हिलाया। यह पहली बार था जब उसने किसी महिला से हाथ मिलाया था। और वह भी इतनी आकर्षक और आधुनिक महिला से! उसके चेहरे का रंग उड़ गया। उसके माथे पर पसीना आ गया। उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे, वह बस यही कहता रहा, 'धन्यवाद महोदया- धन्यवाद महोदया-'। उसे यह सोचकर सीना गर्व से फूल गया कि गाँव वाले खिड़की से यह सब देख रहे हैं।
जब वह बाहर आई, तो उसने सबसे पहले अनुप को टैक्सी में बैठने के लिए कहा। फिर वह खुद भी बैठ गई। पुट्टगौड़ा ने विनम्रता से टैक्सी का दरवाजा बंद कर दिया। टैक्सी के जाने तक वह बार-बार धन्यवाद कहता रहा।
टैक्सी चली गई। गाँव पार करने के बाद, अनुप कुछ कहने ही वाला था कि उसने उसे रोककर कहा,
``नॉट नाऊ!"
दस बजे होटल पहुँचकर अनुप ने कहा,
"माँ! हम उससे डरते थे, है ना?"
नहीं, बेटा! हमने उसे खरीद लिया है! अब से वह हमसे डरेगा! वह टैक्सी ड्राइवर की तरह हमारी बात मानेगा। क्या सीख रहे हो बेवकूफ? तुम्हें धंधे के गुर नहीं पता!
"लेकिन क्या बीस हजार अभी भी बहुत ज्यादा नहीं हैं?"
नहीं। इसे पूर्व-निवेश कहा जा सकता है! मैं अपना कारोबार भी बढ़ाना चाहता हूँ। मुझे बैंगलोर में एक बड़ी दुकान चाहिए। एसपी का इतना प्रभाव है कि वह किसी बड़े नेता के ज़रिए तबादला करवा सकता है, इसलिए उसकी मदद से बैंगलोर में रणनीतिक स्थान पर जगह मिलना आसान है। इसके अलावा, चूंकि यह राजनीति में नया कार्यकर्ता है, इसलिए इसकी लागत भी कम है!
■
शाम को, जब वह अकेले एक लग्जरी टैक्सी में बैंगलोर जा रही थी, तो उसका गुस्सा उसके पति पर भड़क उठा – यानी अनुप के पिता पर – जी हाँ। यह सिर्फ भावनाओं का मामला नहीं है – यह एक सच्चाई है। अब, इसी क्षण, उसे उससे मिलना चाहिए और उसे चेतावनी देनी चाहिए – अगर तुम अपने बेटे का भला नहीं कर सकते, तो उसे छोड़ दो – कम से कम उसके साथ कुछ बुरा तो मत करो!
मदुर से गुज़रते हुए उसने सोचा कि पहले किसी अच्छे होटल में कमरा बुक कर ले और फिर उसे घर पर फ़ोन करे। बदमाश! दिल्ली आता भी है तो पेप्पर के गेस्ट हाउस में तीन-चार दिन रुकता है और फिर चला जाता है! फ़ोन करने की तमीज़ तक नहीं! क्या मुझे उसके घर जाकर उसके साथ रुकना चाहिए?
लेकिन जैसे ही टैक्सी चन्नारेपट्टन से आगे बढ़ी, उसके मन में ख्याल आया – उसे सीधे उसके घर जाकर रात वहीं बितानी चाहिए। मुझे पता है तुम दिल्ली आकर गेस्ट हाउस में रुकते हो! लेकिन मैं तुम्हारे जैसी नहीं हूँ – मैं तुम्हारे – उम्म – अपने घर बिना तुम्हें बताए आ गई हूँ! मुझे अब भी अपने घर, अपने परिवार के इस एहसास पर यकीन है! लेकिन तुम्हें नहीं है – तुम्हें उसे यह दिखाना चाहिए और उसे गुस्सा दिलाना चाहिए! घर जाने से पहले बाहर खाना खा लो। कौन जाने वहाँ घर पर क्या इंतज़ाम हैं। और वैसे भी, मैं उसका खाना क्यों खाऊँ?
उसने ड्राइवर को पैसे दिए और होटल में खाना खाया। तब तक रात के 9:30 बज चुके थे। यह सोचकर कि वह अब तक घर आ गया होगा, उसने उससे मल्लेश्वरम

जाने के लिए टैक्सी लेने को कहा।
घर की बत्तियाँ जल रही थीं। हालाँकि उसने मना किया था, फिर भी उसका दिल खुशी से भर गया था। फिर उसने सोचा—
क्या कहूँ? मैंने अपने बेटे की समस्या सफलतापूर्वक हल कर दी है। अब मुझे यहाँ क्यों आना पड़ा?
क्यों? अनुप की समस्या हल हो जाने के बाद, आप उसके साथ दोबारा कुछ भी बुरा नहीं करना चाहेंगे, तो मैं आपको क्यों न बताऊं? मेरे अलावा और कौन आपको यह बताएगा?
वह टैक्सी से बाहर निकली। वह दरवाज़े पर गई और घंटी बजाई।
उसने दरवाजा खोला और आश्चर्यचकित रह गया। उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। उसने कहा,
आपको परेशान करने के लिए क्षमा करें! सूटकेस टैक्सी में है...
उन्हें सदमे से उबरने में कुछ पल लगे। फिर, खुद को संभालते हुए उन्होंने कहा,
``गेट इट इन-"
जैसा उसने केहा था, टैक्सी ड्राइवर हवाई यात्रा के लिए उपयुक्त सैमसोनाइट सूटकेस लेकर आया और उसे बरामदे में रख दिया। उसने ड्राइवर से सुबह आठ बजे आने को कहा। अपने ऊँची एड़ी के जूते जूते के स्टैंड पर छोड़कर, वह सूटकेस लेकर अंदर आई और सोफे पर बैठ गई, सूटकेस को अपने बगल में फर्श पर रख दिया।
वही पुराना सोफा सेट! बहुत गंदा है। पिछले कुछ दिनों से इसके कवर पर पानी नहीं पड़ा है! उसकी नज़रें हॉल में इधर-उधर घूम रही थीं। हर दिन कोई न कोई फर्श साफ करता है - शायद पोंछता है -
उसने उसे दालान में बिठाया और रसोई की ओर भागा। वह चिल्लाई,
``रवि, मैंने खाना खा लिया है! मेरे लिए कुछ मत करो!"
उसने इस बारे में कुछ नहीं कहा। वह गुस्सा हो गई। क्या वह मुझे दोष दे रहा है या क्या?
कुछ क्षण बाद, उसने रसोई से चिल्लाकर कहा,
सचमुच?
हां... बिलकुल!
फिर सन्नाटा छा गया। रसोई से थालियों और कटोरियों की आवाज़ आ रही थी। रसोइए ने सुबह जो खाना बनाकर फ्रिज में रखा था, उसे शाम को गर्म करके खा लिया गया होगा। जी हां - अनुपान ने यही कहा था। जीरा-काली मिर्च-धनिया-करी-नींबू की स्वादिष्ट खुशबू सचमुच आ रही है! भला उसे ऐसे रसोइए से क्या परेशानी होगी जो इतना स्वादिष्ट खाना बनाता हो! उसका तापमान धीरे-धीरे बढ़ने लगा।
उसके सामने चायदानी पर तीन-चार दैनिक समाचार पत्र, साप्ताहिक पत्रिकाएँ और पत्रिकाएँ रखी थीं। ये सब कबाड़ उसके घर में शुरू से पड़ा था! वह सारे अखबारों को देख रहा था! अपना गुस्सा दबाने के लिए उसने सामने रखा एक अखबार उठाया और उसके पन्ने पलटने लगी। हालाँकि, उसके कान उसकी हरकतों पर लगे हुए थे।
उसने अपना खाना खत्म किया – मेज़ लगाई – अपने बेडरूम में गया – वहाँ से वह हॉल में आया। उसने चुपके से उसकी तरफ़ देखा। उसके हाथ में धोबी की दी हुई चादर और कंबल था। वह हॉल के पास स्थित अनूप के बेडरूम में गया। उसने पलंग पर कंबल और चादर बिछाई और वापस हॉल में आकर उससे अंग्रेजी में कहा,
आप थके हुए लग रहे हैं... आराम कर लीजिए..."
वह मुझे अलग कमरे में सुलाता है! वह चुपचाप बैठकर खाना खाते समय हर बात के बारे में सोचता रहता है!

उसने तीखे स्वर में कहा,
मैं आपसे बात करना चाहती थी, इसीलिए आई हूँ! मुझे कुछ बहुत ज़रूरी बात कहनी है! आपने ध्यान दिया कि मैं थकी हुई हूँ, इसके लिए धन्यवाद! अगर मुझे आराम करना होता, तो मैं किसी आलीशान होटल में रुक जाती! मैं अनुपम के बारे में बात करना चाहती थी, इसीलिए आई हूँ..."
वह बिना कुछ कहे अपने सामने वाली कुर्सी पर बैठ गया।
बोलने की शुरुआत करने के ख्याल से ही वह असहज हो गई। लेकिन फिर उसने सोचा, मैंने कितनी महत्वपूर्ण बातचीत और कितने सौदे सफलतापूर्वक संभाले हैं! मैंने तो अपनी बातों से बड़ी-बड़ी पार्टियों का मजा किरकिरा कर दिया है! खुद पर भरोसा जुटाकर उसने बोलना शुरू किया।
मैं हाल ही में मैसूर से आई हूँ। मेरी मुलाकात राजनेता पुट्टेगौड़ा से हुई और मैंने यह पक्का फैसला कर लिया है कि वह अब कभी भी अपनी मनमानी नहीं करेंगे! मेरे बेटे की जो भी समस्याएँ होंगी, मैं उनका ख्याल रखूँगी। आपको उसकी चिंता करने की ज़रूरत नहीं है। लेकिन उसके लिए नई समस्याएँ खड़ी मत कीजिए! मुझ पर और मेरे बेटे पर दया कीजिए! मैंने आपसे पहले भी कुछ नहीं माँगा है और इसके बाद भी कुछ नहीं माँगूँगी। अगर आप चाहें, तो मैं आपके साथ हाथ मिला लूँगी!..."
मैं इस मामले के लिए कैसे जिम्मेदार हो सकता हूँ? आप किस बारे में बात कर रहे हैं!
उसने अपने बड़े पर्स से अखबार का एक पन्ना निकालकर उसके सामने रख दिया और कहा,
"तुम्हारा अखबार! ये लेख तुमने खुद लिखा है! इसमें किसी ग्रेनाइट मामले का जिक्र है। पता नहीं क्यों, तुम राजस्व मंत्री के गुस्से का शिकार हो गए हो और इसका शिकार मेरा - तुम्हारा भी, कहो! - बेटा है! इस लेख का आखिरी पैराग्राफ पढ़ो!"
रविंद्र का चेहरा उत्तेजित हो गया। फिर भी, उसने शांत भाव से कहा,
यह संबंध कैसे बना, यह एक अलग सवाल है। इससे पहले, आपका बेटा चौकीदार की बेटी के पास गया था - और उससे पहले, वह शाम को एक और लड़की के साथ वहाँ गया था, इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता! मेरे पत्रकारों ने इस बारे में सारी जानकारी जुटा ली है। संबंधित लोगों के बयान भी रिकॉर्ड किए गए हैं। चौकीदार की बेटी के गर्भवती होने के बाद सारा बवाल शुरू हुआ। मैंने शांतामूर्ति को साफ-साफ कहा था - जांच के दौरान जो भी जानकारी सामने आए, उसे प्रकाशित करें। इसके अलावा, मैंने उनसे यह भी कहा था कि चूंकि यह मेरे बेटे से संबंधित है, इसलिए मैं लेख प्रकाशित होने से पहले नहीं पढ़ूंगी। इसीलिए मैंने लाखों अन्य पाठकों के साथ लेख पढ़ा है। यह सच है कि उन्होंने सच लिखा है, लेकिन उन्होंने अनुप के बारे में सच्चाई छिपा दी है! लेख पढ़ने के बाद मैंने उन्हें फोन किया और गुस्सा किया। मेरा स्पष्ट मत है कि सच्चाई को छुपाकर उन्होंने पत्रकारिता के पेशे के साथ विश्वासघात किया है। अगर आप चाहें, तो मैं आपको उनका फोन नंबर दे दूंगी - आप उनसे बात कर लीजिए! "रुको, मैं तुम्हें असली टेप देता हूँ..." उसने कैमरे में जाते हुए कहा और कुछ ही पलों में टेप ले आया। उसके पास एक छोटा टेप रिकॉर्डर भी था।
रविंद्र ने आगे कहा,
इस पूरे मामले में उसकी मोटरसाइकिल की भी बड़ी भूमिका है! उसने पहले मुझसे मोटरसाइकिल मांगी थी। मैंने उसे मना कर दिया था। लेकिन फिर आपने उसे इसके लिए पैसे दे दिए! मैं उसे उतना पैसा देता हूँ जितना उसे चाहिए। और तो और, आप उसे उतना पैसा देते रहते हैं जितना वह चाहता है! अगर उसके पास इतना पैसा नहीं होता, तो वह क्या करता? मेरा मानना है कि एक विद्यार्थी को

ब्रह्मचर्य आश्रम का पालन करना चाहिए। इसीलिए मैंने उसे विश्वविद्यालय भेजा। उस गुस्से के कारण आप दुनिया छोड़कर दिल्ली चले गए! यह तो आपका सवाल है! मैं इसके बारे में कभी नहीं पूछूंगा। मैं स्वीकार करता हूँ कि मुझे ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं है। लेकिन मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि बच्चे को नुकसान न पहुँचाएँ! कृपया...!
उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। कुछ ही क्षणों में वह उठा और अपनी बात कहकर अपने कमरे की ओर चला गया।
जैसे ही वह बैठी, उसने देखा कि उसने पलंग पर चादर ओढ़ ली थी और मच्छरदानी लगा दी थी। लाइट भी बंद थी और उसके कमरे में अंधेरा छा गया था।
वह वहाँ एक हारे हुए इंसान की तरह बैठी थी। उसके घर आए मेहमान का ठीक से स्वागत करने की भी तमीज़ नहीं है! वह हर बात के लिए मुझे ही दोषी ठहरा रहा है! तुम्हारी वजह से हमारा बेटा बिगड़ रहा है - और इसके बजाय, तुम्हारा अपना व्यवसाय शुरू करना गलत है, मैं उसे यह कहना चाहती हूँ। हम यहाँ आए, यही हमारी गलती थी...
उसने टेप रिकॉर्डर और दोनों कैसेट लीं और अनुप के बेडरूम में चली गई, जिसका उसने इशारा किया था। चादरें बिछाने के बाद, वह सूटकेस अंदर ले गई। उसने अपनी साड़ी उतारकर नाइटी पहनी और टेप रिकॉर्डर चालू कर दिया।
वह काफी देर तक टेप सुनती रही। बातचीत बीच-बीच में रुक जाती। फिर अचानक दो-तीन लोग बोलने लगते। कन्नड़! और वो भी देहाती कन्नड़! ये कन्नड़ तो बिलकुल देहाती थी! इसीलिए तो उसे देहाती भाषा भी समझ नहीं आ रही थी। वह कैसेट सुन रही थी और बीच-बीच में टेप चला रही थी। दूसरी कैसेट में दो महिलाओं की आवाज़ थी। -हम्म- ये तो चौकीदार की बेटी की आवाज़ होगी। उसे उस आवाज़ से एक अजीब सा आकर्षण महसूस हुआ।
लड़की के शब्दों से अनुप के प्रति उसका आकर्षण स्पष्ट झलक रहा था। क्या उसे सब कुछ छोड़कर अनुप जैसी लड़की के प्रति आकर्षित होना चाहिए? पल भर में उसका मन क्रोध से भर गया। उसे तो बराबरी का व्यवहार करना चाहिए!
लड़की अपने भाव व्यक्त कर रही थी। शायद उसे अनुप का नाम भी नहीं पता था। वह उसे मोटरसाइकिल वाले लड़के के रूप में संबोधित कर रही थी। वह यह बात पूरे यकीन से कह रही थी क्योंकि अनूप के जाने के बाद अब कुछ ही दिन बचे थे! - उसने ऐसा नहीं कहा था! -
वो कह रही थी कि उसे हर बार चालीस रुपये मिलते हैं और उसके पिता को दस रुपये – ये तो एक पिज्जा की कीमत भी नहीं है! कितना सस्ता! वो इतनी कंजूस लड़की के पास क्यों जा रहा है? उसे अंदर ही अंदर बुरा लग रहा था।
ये इंटरव्यू किसने लिया होगा? कोई न कोई तो उसके दफ्तर में रहा होगा! सुनते-सुनते कांति का मन हेमंत की यादों में खो गया। आखिरकार, पागलपन उसे अपने वश में कर ही चुका था! लेकिन उससे पहले, उसके साथ बिताए पलों की याद मात्र से ही वह रोमांचित हो उठी थी। कितना समय बीत गया था जब मैंने अपना शरीर उसकी बाहों में सौंप दिया था! हेमंत की आवाज़ ने मुझे उससे दूर कर दिया था! कहते हैं, दोस्त भाई होता है! कहते हैं, भाई की पत्नी माँ का स्थान होती है! ये कैसा पागलपन है! फिर पंजाबी लोग अपने बड़े भाई की मृत्यु के बाद उसकी पत्नी से शादी करके साथ कैसे रहते हैं? चादर ओढ़े इन जोड़ों के भी बच्चे होते हैं! ये हेमंत के दिमाग की उपज तो नहीं है, ये पागलपन कहां से आ गया, कौन जाने!
हेमंत इसी असर से दूर चला गया। वो मुझे अपने करीब तक नहीं आने देता! ये तो ऐसी ऊर्जा है जो हमारे साथ घर लौटी पत्नी को भी दूर भगा देती है! वो कुछ देर तक कमरे का दरवाजा खुला रखकर सोई। फिर भी वो अंदर नहीं आया। क्या उसे नींद आ गई होगी? ये कैसे मुमकिन है? ये तो सिर्फ दिखावा है! अगर मैं उसके कमरे में जाकर उसके बगल में सो जाऊं तो क्या होगा? अगर मैं उसकी गर्दन में

हाथ डालकर कहूँ, "रावे, इतना गुस्सा मत करो! तुम मेरे पोते हो और मैं तुम्हारी पत्नी-" और उसे दुलारने आऊं तो क्या होगा?
ये सोचते हुए वो उठ बैठी। लेकिन फिर उसे इसी घर में हुई पिछली घटना याद आ गई। अगर वो पहल भी करती, तो वो उसका अपमान कर सकता था! उसे खुद से घृणा होने लगी। वो फिर से बिस्तर पर लेट गई। हालांकि, उसका मन विचारों में खोया हुआ था।
हेमंत दूर चला गया। ऐसा नहीं है कि कोई दूसरा आदमी करीब नहीं आ सकता। लेकिन हर कोई एक अस्थायी गुप्त रिश्ता चाहता है! उनमें से कोई भी हमेशा के लिए वफादार और निष्ठावान रहने को तैयार नहीं है। अपनी इच्छा को ज़ाहिर करने में छिपी झिझक! मैं किस तरह की वेश्या हूँ जो ऐसे रिश्तों को मंजूरी दूँ? मैं ऐसे सुझावों को नज़रअंदाज़ कर दूंगी, अपनी इज़्ज़त बचाऊँगी, और पार्टी खत्म होने के बाद अकेले घर जाऊँगी और एक और गिलास शराब पी लूँगी ताकि सो सकूँ!
वह देर से उठी क्योंकि उसे देर से नींद आई थी। जब वह उठी, तो खिड़की से सूरज की किरणें घर में आ रही थीं। वह झंझट में जाग उठी। नहाने और तरोताज़ा होने के बाद, वह बाहर आई और देखा कि उसने चायदानी में चाय रख दी है। हालाँकि उसे घिन आ रही थी, फिर भी उसे जाने का इतना दुख क्यों था? वह अपनी साड़ी को ढकते हुए एक कुर्सी पर बैठ गई और बोली,
धन्यवाद...
उन्होंने पूछा,
"आपने कहा कि आप पुट्टेगौड़ा के लिए व्यवस्था करने के बाद आए थे, है ना? आपने क्या किया? उसने इतनी रकम मांगी और आपने उसे दे दी?"
आपको ऐसा क्यों लगता है?
"मैं जानता हूँ कि व्यवसायी और पेशेवर कैसे सोचते हैं! क्या आप कैसेट सुन सकते हैं? अनूप जिस रास्ते पर चल रहा है उसे समझने के लिए हमें और क्या सबूत चाहिए?"
लेकिन अब उसका गुस्सा भी भड़क उठा। हालाँकि मैंने उसे शांत रहने के लिए कहा था, फिर भी वह पूरी रात इसके बारे में सोचती रही और दिन दहाड़े मुझ पर हमला करने की कोशिश की! गुस्से से कांपते हुए उसके हाथ में पकड़ी प्याली और तश्तरी टूटने लगी। उसके हाथ में पकड़ी प्याली और तश्तरी ज़ोर से चायदानी से टकराई और वह खड़ी हो गई। उसी समय, बाहर एक टैक्सी के आने और रुकने की आवाज़ सुनाई दी।
फर्श पर गिरी चाय को नजरअंदाज करते हुए उसने तीखे स्वर में कहा,
``हाँ! मुझे भी पता है कि मेरा बेटा किस राह पर जा रहा है! मेरा बेटा एक आदमी है! तुम्हारे जैसे मूर्ख नहीं!..."
वह जल्दी से कमरे में गई और अपना सूटकेस और पर्स लेकर बाहर आई। वह टैक्सी में बैठी और एयरपोर्ट ले जाने के लिए टैक्सी मांगी।

■

अनुपान ने पुट्टेगौड़ा के चेहरे पर वह भाव भी देखा था जब उसने अपनी माँ द्वारा दिए गए पैसे स्वीकार किए थे, ठीक वैसे ही जैसे एक बूढ़े, खूंखार कुत्ते का चेहरा रोटी का टुकड़ा देखकर नरम पड़ जाता है। फिर भी, उसे डर था कि अगर पुट्टेगौड़ा की सलाह के बिना गुंडे उस पर हमला कर दें तो वह क्या करेगा। इसीलिए, हालांकि वह दिन में कॉलेज में बेखौफ घूमता था, रात को सोने के लिए वीरेश के कमरे में जाता था।
मम्मी के जाने के पाँचवें दिन पुट्टेगौड़ा उसे ढूंढते हुए छात्रावास आया। अपनी चारपाई पर बैठकर सिगरेट पीते हुए उसने कहा,
देखते हैं इसके बाद तुम्हारे रास्ते में कौन आता है! अगर कोई ऐसा आया तो मुझे बताना... मैं उसकी खाल उतारूँ दूंगा!..."

इस समय, उसने अनूप की माँ के व्यवसाय के बारे में और अधिक पूछताछ शुरू कर दी, कि वह कितना बड़ा था, अनूप और मैडम की जान-पहचान कैसे हुई, आदि। अनूप ने सावधानीपूर्वक उसे थोड़ी-थोड़ा बताया और कहा,
मुझे भी ज्यादा जानकारी नहीं है! हमारी मां बहुत सख्त हैं। अगर हम उनसे कुछ पूछते हैं, तो वो कहती हैं - तुम छात्र हो - व्यापार में क्या करना चाहते हो? शुरू से ही प्रधानमंत्री का परिवार हमारे दोस्तों जैसा रहा है!..."
पुट्टगौड़ा एक और आश्वासन लेकर चले गए।
उस दिन से अनूप रात को भी अपने कमरे में ही सोने लगा।
एक हफ्ते के अंदर ही सब लोग इसे भूल गए। नांजेगौड़ा और पंचलिंगेगौड़ा भी उससे ऐसे बात करने लगे जैसे कुछ हुआ ही न हो। अनूप को समझ आ गया था कि यह सब भी पुट्टगौड़ा के कहने पर ही हो रहा है।
लेकिन अनीता ने उससे बात करना बिलकुल बंद कर दिया। आमने-सामने आने पर भी वह अपना चेहरा दूसरी तरफ मोड़ लेती, मानो उसे जानती ही न हो। हालांकि अनूप के मन में उससे दोबारा बात करने और दोस्ती कायम रखने का ख्याल था, लेकिन वह सतर्क था, क्योंकि वह जानता था कि अगर अनीता ने उसे बुरी तरह डांटा तो अपमान बहुत तकलीफदेह होगा।
कुछ दिनों बाद, उसे धीरे-धीरे इसकी तीव्रता महसूस होने लगी।
हाल ही में, वह बुलेट को पहले की तरह ही तेज़ गति से चला रहा था – लेकिन इसमें उसे मज़ा नहीं आ रहा था। उसे यह भी महसूस हो रहा था कि चाहे वह कितनी भी तेज़ गति से जाए, कोई उसे सुपर स्पीड किंग नहीं कहता था। चूंकि उसके पास यह उपाधि नहीं थी, इसलिए लड़कियां भी उसके पास नहीं आ रही थीं। वह समय-समय पर बेचैन हो जाता था, उसे लगता था कि उनके बीच का आकर्षण धीरे-धीरे कम होता जा रहा है।
एक दिन, इंस्ट्रूमेंटेशन विभाग के शिवराज उनसे मिले। अनूप जानता था कि वह अपने विभाग के हीरो हैं। उन्होंने अमेरिका के कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय से एम.एस. की डिग्री पूरी करने के बाद भारत आए थे। उन्हें वहाँ आसानी से नौकरी मिल सकती थी! उनके प्रोफेसरों ने उनसे कहा था, "भारत मत जाओ - मैं तुम्हें यहाँ अच्छी तनख्वाह वाली नौकरी दिला दूँगा!" लेकिन विदेश जाने के लिए उन्हें जो छात्रवृत्ति मिली थी, उसकी शर्त यह थी कि उन्हें उसके बाद तीन साल भारत में काम करना होगा। उन्होंने इसमें भी कोई रास्ता निकालने की कोशिश की, लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। यहाँ आए हुए उन्हें डेढ़ साल हो चुका था। वह अगले डेढ़ साल के हर दिन को गिनते हुए यहाँ रहे। वह अपने आस-पास जमा हुए छात्रों को अमेरिकी जीवन शैली, सड़कों, स्वतंत्रता और कारों के बारे में अथक रूप से बताते रहे।
उस कॉलेज के कई अन्य प्रोफेसर अमेरिका जा चुके थे, लेकिन उनमें से किसी ने भी बच्चों के साथ इतने उत्साह से घंटों तक अमेरिका के बारे में बात नहीं की।
शिवराज का छात्रों के साथ व्यवहार अमेरिकी खुलेपन जैसा था। वे छात्रों के साथ बेझिझक बार में चले जाते थे। व्हिस्की पीते हुए वे बच्चों को उपदेश देते थे - शराब पीना बुरा नहीं है - हद से ज्यादा पीना बुरा है! बच्चे भी उनकी बातों को दिल से समझते थे। अगर कोई अमेरिका जाना चाहता है, तो उसे कौन सा रास्ता अपनाना चाहिए? अगर कोई वहाँ किसी विश्वविद्यालय में दाखिला लेना चाहता है, तो उसे क्या करना चाहिए? अगर पैसे कम पड़ें, तो वहाँ पैसे कैसे जुटाए जा सकते हैं? छात्रों के ऐसे सवालों के उनके पास पुख्ता जवाब होते थे। उनकी बोलने की शैली भी पूरी तरह अमेरिकी थी।
इन सब के परिणामस्वरूप, बच्चों के दिलों में उनके सामने अमेरिका में होने का अहसास भर गया।
एक दिन उसने अनुपम होने का नाटक किया और उसे पास बुलाकर पूछा,

"सुपर-स्पीड किंग अनुप, है ना?"
यह सुनकर अनुप प्रसन्न भी हुआ और थोड़ा झिझका भी। उसने उत्तर दिया,
"कुछ बच्चे ऐसा कहते हैं, महोदय!"
देखो, अनुप! मुझसे बात करते समय मुझे सर मत कहो! मुझे गुस्सा आ जाता है! गुलाम अपने मालिक को ऐसे ही बुलाता है! मुझे मेरे पहले नाम से बुलाओ! मैंने अपने पासपोर्ट में अपना उपनाम रोज़ रखा है। अमेरिका में, मैं अपने गाइडों को जॉन कहता था। कभी-कभी, अगर मैं या कोई भी भारतीय छात्र मुझे मिस्टर वेल कह देता, तो उन्हें गुस्सा आ जाता था। वह वाद्य यंत्र में विश्व प्रसिद्ध थे! एक असमिया जो सिर्फ सलाह देकर एक हफ्ते में लाखों डॉलर कमाते थे! अगर हम गलती से भी 'सर' कह देते, तो वे कहते - देखो, मुझे सर की उपाधि ब्रिटिश सरकार ने नहीं दी, मैं स्वतंत्र अमेरिका का एक स्वतंत्र नागरिक हूँ!..."
शिवराज की उम्र अभी तीस के आसपास थी। वह अभी अविवाहित थे। मौसम के अनुसार वे आसानी से और आकर्षक ढंग से अपने कपड़े बदल लेते थे। अनुपम खुश था कि उसने अपना परिचय दिया। कॉलेज में किसी भी प्रोफेसर से उसकी इतनी घनिष्ठता नहीं हुई थी - लेकिन शिवराज से बहुत कम समय में ही उसकी घनिष्ठता हो गई थी। अनुपम ने कहा, 'चलो, मैं चाय लाता हूँ' और उसे बाथरूम में ले गया।
चाय पीते समय उन्होंने उससे पूछा,
"आपने अब तक कितनी अधिकतम गति प्राप्त की है?"
एक सौ बीस।
उसने सिर हिलाया और कहा,
इस देश में इतनी रफ़्तार तो वाकई सराहनीय है! यहाँ हालात कैसे हैं, बताइए? यहाँ बहुत से लोग हैं जो तेज़ चल सकते हैं। लेकिन कई ऐसी चीज़ें हैं जो उन्हें किसी न किसी कारण से रोक देती हैं, उनकी रफ़्तार धीमी कर देती हैं और उन्हें बैलगाड़ी की रफ़्तार पर ला खड़ा करती हैं! यहाँ की सड़कों की हालत देखिए, बीच-बीच में आने वाले मवेशी, कुत्ते, गधे और लोग! धीमी गति से चलने वाली साइकिलों, बैलगाड़ियों, हाथगाड़ियों, रिक्शाओं और बसों के बीच से आगे बढ़ना वाकई भयानक है! ऐसी स्थिति में आप कितनी तेज़ चल सकते हैं? अमेरिका की सड़कें - आने-जाने के लिए तीन लेन! कोई चौराहे नहीं - कोई मोड़ नहीं! कोई उतार-चढ़ाव नहीं! अगर सामने पहाड़ भी हो, तो वो खोदकर बनाई गई एक खूबसूरत सुरंग जैसा लगता है... सिर्फ़ जब समुद्र सामने आ जाए, तभी रुकना पड़ता है!
शिवराज जब अमेरिका की सड़कों, वहां की रफ्तार और आधुनिक वाहनों के बारे में बता रहे थे, तो अनुप का मुंह खुला रह गया। उसका मन एक ऐसे वाहन के बारे में सोचने में मग्न था जो बिना किसी रुकावट के डेढ़ से दो सौ मील प्रति घंटे की रफ्तार से दौड़ सके।
उन्होंने पूछा,
"लेकिन वहां तो सिर्फ कारें ही हैं, है ना? मोटरसाइकिलें?"
"यहां तो किशोरावस्था के शुरुआती दौर में भी बच्चे मोटरसाइकिल का इस्तेमाल करते हैं!"
अगले दिन, अनुप खुद उन्हें अपनी मोटरसाइकिल पर भोजघर ले गया। जब वे आराम से बीयर पी रहे थे, तब उसने पूछा,
"कुछ दिन पहले आपके खिलाफ़ ब्लैकमेल का मामला चला था, है ना? पेट दर्द की वजह से ही मुझे इसके बारे में पता चला। क्या यह सच है?"
हां!
क्या आप जानते हैं कि हमारे देश को अंदर से कौन सी असली बीमारी सता रही है? ये पेट दर्द! आपको ये पेट दर्द क्यों हो रहा है? मुझे समझ नहीं आता कि

आपको क्या हो रहा है! अगर सबको सब कुछ मिलने लगे तो किसी को जलन नहीं होगी। अमेरिका में दोस्ती विपरीत लिंग के व्यक्ति से मानी जाती है। अगर लड़के-लड़के या लड़की-लड़की के बीच दोस्ती हो तो उसे अप्राकृतिक समझा जाता है। अगर पुरुष और स्त्री साथ हों तो उसे ज़्यादा स्वाभाविक माना जाता है। वहाँ आप किसी भी लड़की से पूछ सकते हैं कि क्या वो आज शाम मेरे साथ आएगी! आप उसका हाथ पकड़कर उसे अपने साथ ले जा सकते हैं - अगले दिन उसे चूम सकते हैं - अगर वो तीसरे दिन आने को तैयार हो तो आप उसके साथ शारीरिक संबंध भी बना सकते हैं। एक-दूसरे के कमरे में जाना या कार से कहीं दूर जाना, कार पार्क करके पिछली सीट पर साथ रहना - ये सब वहाँ आम बातें हैं। नतीजतन, यहाँ होने वाली यौन हिंसा की घटनाएँ वहाँ नहीं होतीं। वहाँ कोई भी लड़की किसी भी समय अकेले घूम सकती है। छात्र भी अपनी पढ़ाई पर पूरी तरह ध्यान देते हैं। देश के सभी लोग काम पर ध्यान केंद्रित करते हैं। अगर मन को व्याकुल करने वाली यौन इच्छा से मुक्ति का कोई रास्ता हो, तो सामाजिक जीवन शांतिपूर्ण बना रहता है! उनका समाज इसी मूलभूत सत्य पर आधारित है! हमने ऐसी नीति अपनाई है जो इस भावना को दबाती है – इसीलिए हमारा समाज पिछड़ गया है!..."
यह सुनकर अनूप पूरी तरह से भावुक हो गया। उसे एहसास हुआ कि यही सामाजिक जीवन का परम सत्य है। अगर यहाँ समाज में भी ऐसी ही स्वतंत्रता होती, तो मैं उस महादेवी के पास क्यों जाता? तब वह भी महापतिव्रता का वेश धारण करके मुझ जैसे दुकानदार पर ग्राहक न होने का आरोप नहीं लगा पाती। कॉलेज में इतनी सारी लड़कियाँ हैं - काश मैं जब चाहूँ, जिस लड़की के साथ चाहूँ जा पाता!
शिवराज कह रहे थे,
वहाँ लड़के-लड़कियाँ कक्षा में एक-दूसरे के बगल में बैठते हैं - एक ही कमरे में रहते हैं - चाहें तो कमरे बदल सकते हैं - साथी भी बदल सकते हैं। वहाँ के नियमों के अनुसार, यौन संबंध दो वयस्कों के बीच आपसी सहमति का मामला है - इसके बारे में बात करना भी असभ्य माना जाता है। वहाँ, एक लड़के और एक लड़की के बिना शादी किए साथ रहने में कोई बुराई नहीं है!
अनूप का मन इस बुनियादी सवाल के इर्द-गिर्द घूमने लगा। कॉलेज में डोड्डप्पा ब्रह्मचर्य पर बहुत ज़ोर देते थे! जीवन भर ब्रह्मचर्य का पालन करके उन्होंने कौन-कौन सी महान उपलब्धियाँ हासिल कीं? हमारा देश, जो ब्रह्मचर्य को लेकर इतना शोर मचाता है, अमेरिका जितनी प्रगति क्यों नहीं कर पाया? जिस तरह यहाँ हर कोई अमेरिका में शिक्षा पाने के लिए तत्पर है, वहाँ से कोई कॉलेज क्यों नहीं आया?
उस दिन से अनूप के मन में कई सवाल उठने लगे। इस देश का कोई मतलब नहीं! यह तो घुटन पैदा करने वाला और जान लेने वाला देश है! उसने ठान लिया कि वह अपनी पढ़ाई पूरी होने तक डेढ़ साल यहीं रहेगा। उसके बाद आगे की पढ़ाई के लिए अमेरिका जाएगा! - TOEFL परीक्षा कैसे पास करें, उसका प्रश्न पत्र कैसा होता है, आदि जैसे सवालों के जवाब के लिए वह शिवराज से मार्गदर्शन लेगा। अब वह शिवराज के घमंडी समूह से भी परिचित हो चुका था। हर कोई अमेरिका जाने का सपना देख रहा था! अब तक उनके कुछ रिश्तेदार भी अमेरिका में बस चुके थे। इसी वजह से उसके लिए आदर्श भी तैयार थे। अनूप को भी उन बच्चों से अपने आप ही सारी जानकारी मिलने लगी।
शिवराज का इंस्ट्रूमेंट टेक्नोलॉजी विभाग बहुत उन्नत था। उन्हें लगने लगा कि उनका इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग बहुत देहाती है। क्योंकि वहाँ कोई भी प्रोफेसर शिवराज जितना प्रेरणादायक नहीं था। वहाँ थेराडा विभागाध्यक्ष थीं, इसलिए कुछ भी पूछने की जरूरत ही नहीं थी!

१६

एग्जीक्यूटिव सेक्शन में खिड़की वाली सीट पर बैठी, बादलों से तीन फीट ऊपर उड़ती हुई, कांति का दिल अपने बेटे के लिए प्यार से भरा हुआ था। वह उसके साथ एक और दिन बिताना चाहती थी। उसके सिवा हमारा और कौन है? उससे बात करना कितना अच्छा लगता है! वह कैसे कहता था, "मम्मी, आप कितनी स्मार्ट लग रही हैं, है ना!" वह अब भी अपने बालों में हाथ फेरता है और उन्हें बिखेरता है - उसका बचपन का स्वभाव अब भी वैसा ही है! उसमें मेरे लिए कितना प्यार है! उसका लंबा, मजबूत शरीर उसकी आँखों के सामने था। वह अपनी बंद आँखों के सामने उसे बार-बार याद कर रही थी। कुछ देर बाद, वह गहरी नींद में सो गई। "मैडम, आपका नाश्ता-" हवा में उड़ने वाली सुंदरी की आवाज़ ने उसे जगाया।

जैसे ही उसने कुर्सी के बगल में रखी छोटी फोल्डिंग टेबल पर नाश्ता करना शुरू किया, अनुपम के लिए उसका प्यार फिर से जाग उठा। फिर, वह भावना जो कंपनी के मुनाफे की गणना करते समय उसके मन में धुंधली सी उठी थी - पहली बार - अब स्पष्ट रूप से सामने आ गई। वही भावना जो लगभग साढ़े पाँच साल पहले पहली बार उसके मन में उठी थी और तब से हर साल कंपनी के वार्षिक खातों की गणना करते समय उसके मन में आती रही थी, अब उसे और भी स्पष्ट रूप से महसूस हुई।

शीतल और मैं दोस्त हैं। इस व्यवसाय का मूल विचार उसी का है। इसे सिर्फ़ एक विचार कहना काफ़ी नहीं होगा, बल्कि यह विचार उसे अपने दफ्तर में आया था – मैं भी ठीक उसी समय वहाँ मौजूद थी – उसने मुझे बताया – और मैंने इस पर गंभीरता से कड़ी मेहनत की। पापा ने भी उसका साथ दिया – जगह का इंतज़ाम किया – और यहाँ तक कि बैंक से लोन भी दिलवाया। पापा की मदद के बिना यह सब संभव नहीं हो पाता। शीतल ने इस व्यवसाय में सिर्फ़ मूल विचार, थोड़ी सी पूंजी और लाइसेंस लगाया है। हालाँकि, हम दोनों मुनाफ़े का आधा-आधा हिस्सा बाँटते हैं। मैं पूरे व्यवसाय की देखरेख करती हूँ – वह मेरे वेतन और इमारत के किराए के लिए थोड़ा पैसा अलग रखती है। लेकिन पूरा व्यवसाय मैं ही संभालती हूँ। वह सरकारी कर्मचारी है – कानून के अनुसार उसे निजी व्यवसाय चलाने की अनुमति नहीं है!

फिर भी, मैं उसे पूरा हिसाब-किताब बहुत ईमानदारी से दिखाता हूँ और बिना किसी पूर्व सूचना के उसे मुनाफ़े का आधा हिस्सा दे देता हूँ। लेकिन वह हर शाम एक घंटे के लिए आती है ताकि यह देख सके कि मैं हिसाब-किताब में कोई बदलाव तो नहीं कर रहा हूँ!

आप कितने साल तक अपनी मेहनत से कमाए गए पैसे का आधा हिस्सा इस तरह उसकी जेब में डालते रहेंगे?

ये विचार, जो साढ़े पाँच साल पहले उसके मन में पनपे थे और पिछले ढाई सालों में पूरी तरह स्पष्ट हो गए थे, अब साफ तौर पर साकार हो चुके थे। पिछले ढाई सालों में, जितनी बार उसने अपनी तनख्वाह बढ़ाने की बात कही, शीतल ने उसे बीच में ही टोकते हुए कहा, 'कैसी तनख्वाह और हम दोनों के बीच कैसा समझौता!' यहाँ तक कि जब उसने इमारत का किराया बढ़ाने की बात कही, तब भी शीतल ने इसी तरह बात खत्म कर दी!

ब्यूटी क्वीन द्वारा परोसी गई चाय पीते हुए उसने मन ही मन सोचा - वह खुद उस दफ्तर में है, तो यहाँ काम कैसे हो जाता है? हर काम की दरें तय हैं। बस एक निश्चित जगह पर लोगों को भुगतान कर दो और काम हो जाएगा!

एक समय की बात है, शीतलन की चर्चा हो रही थी।
"मैं इसी विभाग में काम करता हूँ, इसलिए किसी को मत बताना! वरना मुझे मुसीबत में पड़ना पड़ेगा! पता नहीं कब भ्रष्टाचार विरोधी लोगों को किसी के पीठ पीछे लगा दिया जाएगा।"
तो मेरे कारोबार में उसकी क्या भूमिका है? यह सच है कि उसने शुरुआत में रिश्वत देकर कुछ फाइलें आगे बढ़ाईं। लेकिन पिछले तीन-चार सालों से, सभी अधिकारियों से मिलना-जुलना मैं ही करता रहा हूं। रिश्वत देने की चालाकी भरी बातें करके लाइसेंस भी मैंने ही हासिल किए हैं। तो उसका काम क्या है?
कांति ने खिड़की से बाहर देखा। बादल छंट चुके थे। नीचे धूसर ज़मीन पर पानी चमक रहा था।
कांति ने सोचा – उसका कोई बच्चा नहीं है! इतने सारे पैसों का वो क्या करेगी? उसने एक बार शीतल से यही सवाल इशारों में पूछा था। लेकिन शीतल ने कभी इसका सीधा जवाब नहीं दिया था। अगर उसका अनूप जैसा बेटा होता, तो वो और भी ज़्यादा उत्साह से पैसे कमाती!
कांति को याद आया – शुरुआती दिनों में, जब अनुप छुट्टियों में दिल्ली आता था, शीतल उसे खूब प्यार करती, अपने घर ले जाती, प्यार से रसगुल्ला खिलाती, नए कपड़े खरीदती। जब उसने इंजीनियरिंग कॉलेज जाना शुरू किया, तो शीतल ने ये सब बंद कर दिया। इसमें कोई शक नहीं कि वह इस बात से ईर्ष्या करती है कि मेरा बेटा अनुप जैसा है!
दो दिन बाद, हमेशा की तरह, शाम को, जब सब लोग चले गए, तो कांति ने स्पष्ट रूप से इस विषय को उठाया।
शीतल, मैं तुमसे कंपनी के बारे में बात करना चाहता था। चलो अभी बात करते हैं और इस पर कोई फैसला लेते हैं।
"यह क्या है?" शीतल ने सहज भाव से पूछा।
"पहला मुद्दा मेरी तनख्वाह का है। हमने कारोबार की शुरुआत में ही मेरी तनख्वाह तय कर ली थी। इतने सालों बाद भी उसी तनख्वाह को जारी रखना हमारे लिए सही नहीं है।"
"क्या आपको ऐसा लगता है? तो चलिए इसे बढ़ा देते हैं..." शीतल ने सरलता से कहा।
"यह सिर्फ वेतन बढ़ाने का सवाल नहीं है, यार! उसे कुछ हिसाब-किताब और गणित की भी जरूरत है, है ना?"
शीतल को ठीक से समझ नहीं आ रहा था कि कांति क्या कहने वाला है, इसलिए उसने पूछा,
ऐसा कैसे?
आप सुबह दस बजे दफ्तर जाते हैं और शाम पांच बजे तक वहीं काम करते हैं। हफ्ते में साढ़े पांच दिन काम। साल में बारह दिन की आकस्मिक छुट्टी! साथ ही एक महीने की अर्जित छुट्टी, पंद्रह दिन की चिकित्सा छुट्टी! मुझे इनमें से कोई सुविधा नहीं मिलती। मैं सुबह साढ़े सात बजे से रात साढ़े आठ बजे तक काम करता हूँ!..."
आपका क्या मतलब है?
आपको कितना वेतन मिलता है?
"अगर हम सरकारी प्रणाली के माध्यम से वेतन निकालना शुरू कर दें, तो कुछ भी नहीं बचेगा!"
अब शीतल को कांति के शब्दों का अर्थ समझ आ गया।
आपकी मूल तनख्वाह है – मान लीजिए चार हज़ार। इसके अलावा, आपको मकान किराया, चिकित्सा भत्ता, वार्षिक वेतन वृद्धि, पदोन्नति, सेवानिवृत्ति के बाद पेंशन – ये सब भी जोड़ना होगा। इसके अलावा, हर महीने कम से कम दस से पंद्रह हज़ार

की अतिरिक्त आय भी होती है, जिसकी गणना अलग से करनी होगी! इसे नकारें नहीं। मुझे पता है कि आपके खाते में हर नौकरी की क्या दर है। मेरा मतलब है, अगर आप सब कुछ जोड़ें, तो आपको अपनी नौकरी से हर महीने कम से कम बीस हज़ार रुपये मिलते हैं। दिन में छह घंटे, सप्ताह में साढ़े पाँच दिन और साल में साढ़े दस महीने काम करके! आप यह भी जानते हैं कि मैं कितना काम करता हूँ और कितनी ज़िम्मेदारी लेता हूँ। मेरी तनख्वाह बीस हज़ार रुपये प्रति माह तय करना उचित होगा! अगर आप चाहें, तो आप भी मेरी तरह सुबह साढ़े आठ बजे से रात साढ़े आठ बजे तक काम कर सकते हैं। आप दोनों में से कोई भी तनख्वाह का एक पैसा भी नहीं चाहता!
"लेकिन मेरी नौकरी?"
अपनी नौकरी छोड़ दो...
शीतल हैरान रह गई। उसकी साथी! बचपन की दोस्त! एक पल के लिए उसे लगा – क्या वो मज़ाक कर रही है? लेकिन कांति की आवाज में गंभीरता थी।
"यदि आपको इतना वेतन मिलता, तो वर्ष के अंत में कंपनी का लाभ कितना होता?"
``तुम कब तक रुकोगे? क्या कंपनी के फायदे के लिए मेरा शोषण करना सही है? अगर नहीं, तो फ़ायदा क्या है? हम इसे आपस में बाँट लेंगे!..."
``इतनी छोटी कंपनी के लिए..."
``यह सवाल कंपनी के छोटे या बड़े होने का नहीं है। आप ही बताइए – न्याय क्या होता है? अगर आप चाहें तो सरकार से मिलने वाली सुविधाओं के संदर्भ में ही बात करें! हर कंपनी के पास समय-समय पर इमारत का किराया बढ़ाने की सुविधा होती है। सही है या गलत? दिल्ली के इस इलाके में अभी क्या दरें हैं? ऐसा कीजिए – कल सुबह जल्दी आइए। चलिए चार जगहों का दौरा करते हैं और कोई फैसला लेते हैं। यह मत सोचिए कि मैं यह सब पैसों के लिए कह रहा हूँ – हमें लेन-देन देखना होगा – सही है या गलत?"
शीतल चुप रही।
कांति ने कुछ देर तक उसके चेहरे को देखा। फिर उसने कहा,
शीतल, मैं तुम्हें पहले ही एक बात बता दूं... हमारी दोस्ती अलग है और यह रिश्ता भी अलग है! हम जुड़वां बहनों की तरह हैं! अब हम दोनों समझदार हो गए हैं। इसके बाद भी हमें पहले की तरह ही प्यार करना चाहिए!..."
"आप ऐसा क्यों कह रहे हैं, महोदय?" शीतल ने पूछा।
मुझे हमारे प्यार की वास्तविकता याद आ गई—"
"–याद करने का समय आ गया है, है ना? यह सार्थक है! बहुत खूब! तुम तो समझदार हो! इसके बाद मुझे भी समझदारी सीखनी चाहिए!" शीतल उठी और घड़ी की ओर देखकर बोली, "ओह! आज तो मुझे देर हो गई!..."
कांति भी चली गई। दोनों ने चौकीदार से अपनी कारों को लॉक करने के लिए कहा और फिर उन्हें लेकर निकल गए।

■

अगले दिन, ऑफिस से निकलने के बाद, शीतल का हमेशा की तरह फैक्ट्री जाने का मन नहीं हुआ। कांति सिर्फ एक व्यावहारिक सहयोगी ही नहीं थी, बल्कि उसकी भावनात्मक सहयोगी भी बन गई थी। शीतल को कल रात 8:30 बजे उस रिश्ते में आई दरार का एहसास हो गया था। उफ़ – यह दूरी उसके मन में हमेशा से थी – उसने कल बस इतना ही कहा था! वह एयरपोर्ट पर इधर-उधर भटकने लायक नहीं थी – मैंने ही उसे यह विचार दिया था – मार्गदर्शन किया था – मजबूती से उसके साथ खड़ी रही थी! आज वह मुझे साझेदारी का हिसाब बताने आ रही है! आने दो उसे! मैं, जो करोड़ों – नहीं, अरबों रुपये के व्यापारिक मामलों को

संभालूंगी हूँ! मेरे साथ यह छल? मैं चुप नहीं बैठूंगी, जब तक मुझे मौका नहीं मिला और मैं उसे भगा नहीं दिया!
शाम को शीतल इसी दृढ़ निश्चय के साथ दफ्तर से सीधे घर लौटी। सूरज अभी डूबा नहीं था। पश्चिम दिशा की खिड़की से आती सूरज की किरणें पूरे घर में फैल रही थीं। उसे गहरी अनुभूति हुई – साढ़े पाँच साल हो गए इस दृश्य को देखे हुए! पिछले साढ़े पाँच सालों में मैं कभी रात 8:30-9:00 बजे से पहले घर नहीं लौटी। कारखाने में बैठकर हिसाब-किताब देखना – काम चाहे कितना भी बारीक क्यों न हो – प्रबंधन हमारे बस की बात नहीं! यह कहने का क्या मतलब कि मैंने वहाँ इतने घंटे काम किया – मेरा शरीर थक गया? विचार, दिशा, पर्यवेक्षण, कंपनी – एक चेयरमैन कितने घंटे काम करता है? क्या एक ही व्यक्ति दस कंपनियों का चेयरमैन नहीं होता?
एक दोस्त होने के नाते, मैंने उसे रियायतें दीं – यही मेरी गलती थी। वह मेरे बगल में बराबरी के स्तर पर बैठती थी, तो क्या कुत्ते को सिंहासन में हिस्सा मांगने का हक है, बस यही बात थी! मेरी तनख्वाह, मुझे मिलने वाली सुख-सुविधाएं, मेरी कमाई – उसे ये सब गिनने का अधिकार किसने दिया?
इस अचेतन अवस्था में शीतल ने रसोई की मेज पर लगे बटन को ज़ोर से दबा दिया – और तुरंत ही दीवार में छिपी मेज ज़ोरदार धमाके के साथ बाहर आ गई। सौभाग्य से, उसने अपना पैर एक तरफ कर लिया था, इसलिए मेज उसके पैर से नहीं टकराई।
चाय और बिस्कुट लेकर सोफे पर बैठे-बैठे मैंने टीवी चालू किया। टीवी पर किसी को सितार बजाते देख शीतल को हेमंत की याद आ गई। एक दोस्त होने के नाते मैंने कई तरह से उसका राज़ छुपाया है! कितनी कृतघ्न!
रात को उसे काफी देर तक नींद नहीं आई। उसके अंदर गुस्सा उबल रहा था। पलंग की आवाज़ से भी उसे बेचैनी हो रही थी। ओह! मैं इतनी बेचैन और चिंतित क्यों हूँ? आज तक तो मैं कभी किसी वजह से बेचैन नहीं हुई। ये ठीक नहीं है।
सुबह चाय पीते समय फोन की घंटी बजी। उसने फोन उठाया और पूछा कि मैं कल शाम कारखाने क्यों नहीं आया! उसका अनुमान सही निकला।
माया कांति की आवाज़ पर झूम रही थी। उसी लहजे में, जिस लहजे में वे कॉलेज के दिनों में बात करती थीं, उसने पूछा,
``क्यों? तुम कल क्यों नहीं आए? लगता है मुझे कोई नया बॉयफ्रेंड मिल गया है जिसे मैं नहीं जानती!"
मैं असली नाटक नहीं कर सकती – मैं यह कहना चाहती थी, लेकिन उसे याद आया कि बुरी बातें बोलने में कोई समझदारी नहीं होती। लेकिन उसे कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या कहे। तीस-चालीस सेकंड खामोशी में बीत गए। कांति ने फिर पूछा,
"बोलिए! ये ठीक नहीं है, है ना?"
"ऐसा कुछ नहीं है। दफ्तर में ही बहुत काम था। हम नौ बजे के बाद निकले। कल, जब तक एक काम पूरा नहीं हो गया, हम नहीं निकल पाए, ऊपर से आदेश था। सरकारी नौकरी तो काम है ही नहीं - लोग सोचते हैं कि वहाँ तो बस मुफ्त का पैसा मिलता है! लेकिन जो लोग समय देखे बिना काम करते हैं, वही इसके सुख-दुख जानते हैं!" - शीतल अपने जवाब से संतुष्ट थी। सोचने के बाद, क्या सच में इतना साफ बोलने की ज़रूरत थी? उसे व्यापार का पहला नियम याद आया: कभी भी भावनाओं को अपने ऊपर हावी न होने दो। उसके वरिष्ठों ने भी उसे यही बात कही थी।
किसी भी फाइल को देखने के बाद कम से कम तीन दिनों के लिए अलग रख देना चाहिए। सरकार पर देरी के लिए चाहे कितनी भी आलोचना क्यों न हो, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इसके पीछे यही कारण है।

कांति ने कहा,
हर पेशे और नौकरी में सुख-दुख होते हैं। आप अपनी जिम्मेदारियों को बखूबी निभाते हैं, इसीलिए आपको इतने अच्छे पद पर नियुक्त किया गया है! मुझे आपके काम पर बहुत गर्व है!
शीतल के मन में कांति की बातों का अर्थ समझ में आ गया। लेकिन उसने कुछ नहीं कहा। "कंपनी का क्या कहना है? सब ठीक है?" और "मुझे आज सुबह ऑफिस जाना है - बाद में बात करते हैं" जैसी मामूली पूछताछ करने के बाद उसने रिसीवर वापस रख दिया।
उन्हें बीस हज़ार रुपये प्रति माह वेतन देना संभव नहीं है। भवन का किराया बढ़ाने का विचार एक तरह से उचित है – फिर भी, कांति को बाज़ार दर पर वेतन नहीं दिया जाना चाहिए। बीस हज़ार रुपये का वेतन बहुत ज़्यादा था – तो क्या वह पंद्रह हज़ार रुपये के लिए तैयार होगी? पैसों के मामले में भी वह कोई कमज़ोर नहीं है! इतने लंबे समय तक चुप रहना, यह तो हद ही हो गई!
ऑफिस में रोज़ाना की तरह काम करते हुए शीतल सोच रही थी। उसने रेडीमेड कपड़ों का कारोबार न सिर्फ़ विदेशों में बल्कि अपने देश में भी बढ़ाने का फ़ैसला किया है। खबरें हैं कि भारत में भी इन कपड़ों की अच्छी मांग है। इसका मतलब है कि कारोबार और उससे होने वाला सालाना मुनाफ़ा दोगुना हो जाएगा। जब वह सारा काम खुद कर रही है, तो मुनाफ़े का आधा हिस्सा किसी और को क्यों दे? अब कांति के दिमाग में यह बात आई! चार दिन पहले वह अपनी बेटी से मिलने मैसूर गई थी। अब उसे उम्मीद नज़र आ रही है कि वह अपने बेटे को साझेदारी देकर सारा मुनाफ़ा खुद रख लेगी!
हाँ! उसके बात करने के तरीके को देखो तो पता चलता है कि वह उन दोनों के बीच की साझेदारी तोड़ना चाहती है! अगर तुम उसकी तनख्वाह बढ़ाओगे तो तुम्हें कोई खास फ़ायदा नहीं होगा। अगर तुम कुछ कहोगे तो वो कहेगी – तुम्हें भी मेरी तरह यहां पूरे समय काम करना चाहिए –
शीतल तीन दिनों से सोच रही थी।
अगर मैं सचमुच अपनी सरकारी नौकरी छोड़ दूं तो क्या होगा? अगर नहीं, तो इसके बाद मुझे देश में कंपनी को आगे बढ़ाना होगा। मुझे उत्पादन पर ध्यान देना होगा और बिक्री प्रणाली को समझने के लिए देश भर में यात्रा करनी होगी – मुझे व्यवसाय को इस हद तक बढ़ाना होगा कि हर व्यक्ति के पास हर साल पंद्रह से बीस लाख रुपये बच सकें!
इस विचार ने उसे उत्साहित कर दिया। शाम तक उसका उत्साह बना रहा। दफ्तर से निकलने के बाद वह कारखाने जाती – कुछ दिनों तक दोनों को रात दस बजे तक काम करना पड़ता – सरकारी नौकरी छोड़कर – इसलिए वह कांति को बताती थी।
शाम 4:30 बजे, लाइसेंस के लिए आवेदन करने वाले एक मारवाड़ी दल से एक संदेश आया - उन्होंने उसे शाम 6 बजे 'धवलगिरी' में चाय पर आमंत्रित किया था। यह मुलाकात उसकी मेज पर पड़ी एक पुरानी फाइल से संबंधित एक लेन-देन के सिलसिले में थी।
वह अपनी कार से धवलगिरी गई। वहाँ एक एजेंट उसका इंतज़ार कर रहा था। ऐसे लेन-देन करवाना उसका काम था। वह बहुत भरोसेमंद आदमी था! बातें करने के बजाय, उसने चुपके से अपने अटैची से नोटों का बंडल निकालकर उसके पर्स में रख दिया, ताकि लेन-देन पूरा हो जाए। लेकिन इतनी जल्दी लेन-देन पूरा करने में मज़ा क्या था? उन्हें आपस में बातें करनी चाहिए थीं - उसे उसके काम और हुनर के बारे में बताना चाहिए था - हालाँकि वह जानता था कि वही उसका वर्णन कर रही है, फिर भी वह हमेशा यह जानने के लिए उत्सुक रहती थी कि वह उसकी खूबियों का वर्णन करने के लिए किन शब्दों का इस्तेमाल करेगा। इस बातचीत के

ज़रिए उसे भारत के अन्य हिस्सों में उद्योगों और व्यवसायों की स्थिति के बारे में जानकारी मिलती। साथ ही, उसे भी नई सरकारी नीतियों के बारे में पता चलता! दोनों जानते थे कि कोई भी पूरी सच्चाई नहीं बता रहा है। फिर भी, दोनों को सुनना अच्छा लगता था। एक तरफ़, बातें करते हुए उन्हें वहाँ के स्वादिष्ट और लज़ीज़ खाने का भी स्वाद लेना चाहिए था! हालाँकि शीतल को वज़न कम होने का डर था, फिर भी उसने ऐसी पार्टियों में जाने से कभी मना नहीं किया। बाद में, अगर वह इस बारे में सोचती, तो अगले दिन दोपहर में बिना चीनी और दूध वाली चाय के साथ केवल दो बिस्कुट खाने के लिए तैयार थी!
उस दिन बातचीत के दौरान एजेंट गुलाटी ने कहा,
“महोदया, मुझे पता है कि आपको और कोई परेशानी नहीं है। फिर भी, मैं आपका मानदेय – यों कहें राजसी रकम – लेकर आया हूँ...” बोलते हुए उन्होंने उंगलियों से उन्हें संख्या दिखाई। एक बार उंगली दिखाते ही उन्होंने पाँच हज़ार, दो बार दिखाते ही दस हज़ार बता दिए। उन्हें पता था कि हमारे स्तर पर पैसों का लेन-देन कभी हज़ार से ज़्यादा नहीं होता। उनसे ऊपर के अधिकारियों की तनख्वाह उनसे कहीं ज़्यादा थी। सबसे बड़ा हिस्सा मंत्रियों के पास चुनाव निधि के नाम पर जमा होता था। मंत्रियों को चाहे जितना भी पैसा दिया जाए, असली काम तो हम ही करेंगे, है ना? इसके अलावा, हम पेशेवर लोग “मंत्रियों को देने के बाद दोबारा क्यों दें” जैसी बातें भी नहीं करते। फाइलों को इस तरह से संभालना कि किसी को शक न हो। संसद में सवाल न उठें, इसके लिए इंतज़ाम करना, फाइलों को पत्रकारों से बचाना – ये सब हम ही करते हैं! मंत्री आज यहाँ हैं, कल नहीं। शायद ये सरकार चली जाए और दूसरी सरकार आ जाए। लेकिन हम यहीं रहेंगे!
लेकिन ये गुलाटी तो हर रोज किसी न किसी सरकारी अधिकारी के साथ खाना खाकर खूब तगड़ा हो गया है! जी हां – उसका शरीर भी मोटा हो गया है! तो फिर वो बिस्तर पर बिलकुल नाकाम होगा! – ये सोचकर वो ज़ोर से हंस पड़ी। लेकिन किसी तरह उसने अपना ध्यान सामने रखे खाने पर केंद्रित कर लिया।
लगभग डेढ़ घंटे तक खाने-पीने और बातचीत करने के बाद उन्होंने कहा,
"महोदया, हमारी अच्छी समझ बन गई है - मैं लाया हूँ -" उसने एक हाथ की पाँच उंगलियां दिखाते हुए कहा, उन्हें एक बार मोड़ा और फिर खोल दिया। फिर उसने उनका पर्स खोला, अखबार में लिपटे नोटों का एक बंडल रखा और चेन वापस लगा दी।
उसने फटकार भरे स्वर में पूछा,
"मेरे कुछ कहने से पहले ही तुम क्यों रुक गए?"
उन्होंने हलकी मुस्कान के साथ कहा,
मुझे ऐसा होटल पसंद है जहाँ बिना बुलाए कोई पास न आए। इसी वजह से मुझे धौलागिरी होटल पसंद है!
जब वह कार लेकर घर लौटी, तो दोपहर का उसका फैसला पूरी तरह बदल चुका था। अब कारखाने जाने के बजाय, उसे घर जाकर इस मुद्दे पर हर पहलू से विचार करना चाहिए था। सोचते-सोचते उसने कार को ग्रेटर कैलाश की ओर मोड़ दिया। सड़क पर वाहनों की भीड़, डीजल का धुआँ, शोर – इन सबके बीच एक ही याद उसके मन में बार-बार गूंज रही थी।
दासबाबू उनके दफ्तर में उनके बॉस थे। वे कुछ साल पहले सेवानिवृत्त हो चुके थे। सेवानिवृत्ति के छह महीने बाद उनकी मुलाकात उनसे एक बार हुई थी। उनकी पत्नी भी उनके साथ थीं। दासबाबू का स्वास्थ्य काफ़ी बिगड़ चुका था। वे ऐसे दिख रहे थे मानो दिल का दौरा पड़ने से अस्पताल में भर्ती हों, उनका चेहरा इतना बिगड़ गया था कि देखकर लग रहा था जैसे उन्हें दिल का दौरा पड़ा हो।
शीतल ने पूछा था,
``दासबाबू, क्या हुआ? क्या आपकी तबीयत ठीक नहीं है?"

इस पर उन्होंने उत्तर दिया,
कुछ नहीं हुआ। मैं ठीक हूँ। आप कैसे हैं? आप भी ठीक होंगे, बताइए!
"लेकिन फिर तुम ऐसे क्यों दिखते हो?"
"मैं बूढ़ा हो रहा हूँ! सेवानिवृत्ति बुढ़ापे में पहुँचने जैसा है!" उन्होंने हंसते हुए कहा।
लेकिन उनकी पत्नी ने कहा,
"क्या मैं तुम्हें सच बताऊं, शीतल गुप्ता?"
शीतल भी उनसे अच्छी तरह परिचित थी। इसके अलावा, वह स्वभाव से बहुत बातूनी भी थी। उसने आगे कहा,
``लोग कुर्सी पर बैठे-बैठे ही सिर झुकाकर 'साहब-साहब' कहते हैं! उन्हें होटलों में ले जाते हैं! अच्छे होटलों में ले जाकर उनका खूब सत्कार करते हैं। लेकिन रिटायर होते ही अगले दिन सब कुछ बंद हो जाता है! सामने वाले घर की नौकरानी भी ठीक से बोल नहीं पाती। वे पाँच सितारा होटलों में जाना बंद कर देते हैं! अगर हम जाने का फैसला भी कर लें, तो इतना सारा बिल हमें खुद चुकाना पड़ता है – फिर खाने का स्वाद कैसा होगा? हमारे पास करोड़ों रुपये हों, तब भी क्या हमें दूसरों से सम्मान मिलने की संतुष्टि मिलेगी? यही हमारे मालिक की बीमारी है! वह अपनी पत्नी के बनाए दाल-चावल-सब्जी से ऊब चुके हैं! शीतल, तुम्हें उन्हें कभी अपने साथ ले जाना चाहिए – कोई न कोई तुम्हें ले तो जाएगा ही, है ना? – कभी न कभी तो!"
अब उस घटना को याद करते हुए शीतल को दासबाबू की पत्नी के शब्द और भी स्पष्ट रूप से याद आने लगे।
शीतल ने अपने फ्लैट का ताला खोला और अंदर चली गई। उसके मन में कई विचार चल रहे थे।
अभी बारह साल का काम बाकी है। कांति के अनुमान के अनुसार - अनुमान क्या है? मैंने उसे एक बार बताया था - दस से पंद्रह हजार की मासिक आय! पूछने की जरूरत नहीं। पैसा अपने आप आता है। साथ ही मासिक वेतन, अन्य सरकारी नौकरियों में रियायतें, और नौकरी छूटने के बाद भी मिलने वाली पेंशन। इसके अलावा, आपको सम्मान भी मिलेगा! आपको यह सब छोड़ना होगा - अपनी पेंशन खोनी होगी और इस उम्र में गांव-गांव भटकना होगा - सरकारी अधिकारियों के सामने दांत पीसने होंगे - उन्हें बड़े-बड़े होटलों में पार्टियां देनी होंगी! भला कौन ये सब चाहेगा? नौकरी छोड़ने का कोई फायदा नहीं! अगर बदले में वह कारखाना और साझेदारी चली जाए, तो जाने दो!
लेकिन जब मैं सुबह उठा, तो मैं यही सोचता रहा – मैंने ही उसे ये विचार दिया – मैंने ही उसकी मदद की – लाइसेंस दिलवाया – ऑर्डर दिलवाए – मैंने ही उसे काम सिखाया – क्या अब मुझे सब कुछ छोड़ देना चाहिए? शीतल गुस्सा हो गई – बदमाश! उसकी मुझसे कभी नहीं बनी। यहाँ तक कि जब हम एक ही बिस्तर पर सोते थे, मैं उसके होंठों को ऐसे चूमता था जैसे वो मेरी ही हो, लेकिन फिर भी वो ठंडी रहती थी! उसने मुझे दूर रखा। फिर भी, ये सब भूलकर, मैंने डेढ़ साल से ज़्यादा समय तक उसके लिए उस सितार वादक से मिलने का इंतज़ाम किया! उसे ऐसे नहीं छोड़ा जा सकता! मैं अपनी नौकरी नहीं छोड़ूंगा और मैं तुम्हें पंद्रह हज़ार रुपये प्रति माह देने को भी तैयार नहीं हूँ! अब तुम क्या करोगे?
मन का आवेग शांत होने के बाद शीतल की बुद्धि काम करने लगी। ऐसा कदम उठाने से पहले उसने ज़रूर बहुत सोचा होगा! यह उसका एकमात्र विचार नहीं रहा होगा। वह देहरादून गई होगी और अपने बूढ़े पिता से इस बारे में बात की होगी। उस बूढ़े ने उससे कहा होगा, "तुम यह कहोगी तो वह वह कहेगी" और इसी तरह आगे भी!
ये सोचते-सोचते शीतल को अपनी स्थिति की गंभीर कमजोरी का एहसास हो गया। भले ही वो कांति की फ़ैक्ट्री में साझेदार थी, लेकिन सरकारी नौकरी में रहते हुए

ऐसा करना कानून के खिलाफ था! हम वहाँ तभी तक रह सकते हैं जब तक कोई चाहे! हम कुछ नहीं कर सकते। हम अदालत भी नहीं जा सकते। इसके विपरीत, वो इस मुद्दे पर मुझ पर और मेरी सरकारी नौकरी पर दबाव डाल सकती है! वो मेरे काम पर लाठीचार्ज कर सकती है – वो आयकर और भ्रष्टाचार-विरोधी विभागों को मेरे पीछे लगा सकती है!
कांति को भी ये सब पता है – उसके पिता ने उसे सब कुछ बताया होगा! इसीलिए तो उसने वेतन वृद्धि का मुद्दा इतने स्पष्ट शब्दों में उठाया! मैं उसे किसी भी तरह से नुकसान नहीं पहुंचा सकता। वो मुझसे ऊपर के अधिकारियों को जानती है। मैंने ही उनसे उनका परिचय कराया है। जान-पहचान का सवाल ही क्या उठता है! फलां-फलां नौकरी के लिए फलां-फलां व्यक्ति का इतना वेतन है – इतना पैसा खर्च करके वो आसानी से लाइसेंस ले सकती है – चाहे तो काम करवा सकती है!
शीतल के मन में बेबसी छा गई। उसकी मुट्ठियाँ भींच गईं। निराशा से उसकी आँखों में आँसू भर आए, जिससे उसके सामने की सोफा एक पल के लिए गायब सा हो गया। फिर एक ज़ोरदार सिसकी... और फिर लगातार रोना...

■

१७

इंडियन ट्रिब्यून के वित्तीय प्रबंधक, खेतरी को बैंगलोर आना पड़ा। इस खेतरी का काम समय-समय पर उन सभी गांवों का दौरा करना था जहां अखबार प्रकाशित होता था, और संग्रह और व्यय, चल रहे कार्यों, अपेक्षित व्यय आदि की समीक्षा करना और तदनुसार सलाह देना था। हालांकि इस अधिकारी का संपादक से कोई सीधा संबंध नहीं था, फिर भी उनके दौरे के दौरान संपादक का गांव में उपस्थित होना आवश्यक था। क्योंकि छपे हुए अक्षरों के आकार से लेकर विज्ञापनों और समाचारों की मात्रा तक, कई मामलों में निर्णय उन्हीं पर निर्भर करते थे। बाहरी दुनिया में संपादक का पद भले ही बड़ा था, लेकिन आंतरिक व्यवस्था में वित्तीय प्रबंधक का पद अत्यंत महत्वपूर्ण था।
दरअसल, खेतरी डेढ़-दो महीने पहले ही बैंगलोर जा चुके थे। इसलिए, न केवल रविंद्र, बल्कि वहां दफ्तर में हर कोई इस बात से हैरान था कि वह इतनी जल्दी वापस आ रहे हैं।
खेतरी सुबह की फ्लाइट से पहुंचे। पहुंचते ही उन्होंने रविंद्र से कहा,
"शाम के लिए कोई काम मत छोड़ो। मेरे लिए समय निकालो। चलो बाहर खाना खाने चलते हैं। कंपनी के गेस्ट हाउस में नहीं। कोई न कोई तुम्हें परेशान कर देगा..."
उसके बाद, उन्होंने पूरा दिन कागज की स्थिति और नए लाए गए प्रिंटिंग उपकरणों का निरीक्षण करने में बिताया।
अगर आप इस नजरिए से देखें तो खेतरी, रविंद्र के लिए बिलकुल भी अनजान नहीं था। दोनों ने कई बार दिल खोलकर बातें की थीं, कई बार साथ में खाना खाने गए थे - यहां तक कि साथ में ड्रिंक्स भी पी थीं।
इसलिए, हालांकि रविंद्र को साथ में खाए गए उनके शाम के भोजन में कुछ खास नहीं लगा, लेकिन उसका मन उसे चेतावनी दे रहा था कि बात सिर्फ इतनी ही नहीं थी।
खेतरी एक मारवाड़ी था। वह मालिकों का दूर का रिश्तेदार था। रविंद्र का यह भी अनुभव था कि मालिक किसी भी लेन-देन के संबंध में स्वयं कुछ नहीं कहते थे। वे किसी न किसी को भेजकर मालिकों का संदेश पहुंचाते थे, फायदे की सिफारिश करते थे, साझेदारी की सलाह लेते थे या दबाव डालते थे। मालिकों ने अलग-अलग क्षेत्रों के लिए अलग-अलग लोगों को नियुक्त किया हुआ था। अखबारों के क्षेत्र में

इस तरह काम करने वाला व्यक्ति खेतरी था। मालिकों के अन्य उद्योगों और व्यवसायों के लिए उन्होंने अलग-अलग लोगों को नियुक्त किया हुआ था।
खेतरी ने हार्वर्ड से एमबीए किया था। दूसरों के मन को समझने की उनकी मानसिक क्षमता असाधारण थी। इसके अलावा, कठिनतम निर्णय लेने और उन्हें लागू करने के लिए आवश्यक दृढ़ता भी उनके स्वभाव का हिस्सा बन चुकी थी। और उन्होंने यह सब महज बत्तीस वर्ष की आयु में हासिल कर लिया था।
शाम को वह रविंद्र के पास आया और बोला,
चलिए, आपकी गाड़ी में चलते हैं। कंपनी की गाड़ी क्यों? ड्राइवर को इंतज़ार भी नहीं करवाना चाहते – और वैसे भी, आप कोई आम पत्रकार नहीं हैं! इसीलिए मुझे आपके साथ आने में कोई झिझक नहीं है!" वह हँसे। गाड़ी चलने के बाद भी उन्होंने यही बात दोहराई, "हम पिछली बार 'इनवादसर मीनार' गए थे, है ना? चलिए वहीं चलते हैं, या कोई नया होटल खुला है?" इसके बाद वे दिल्ली की राजनीति, दूसरे अखबारों और अन्य शहरों के संस्करणों के बारे में बातें करते हुए होटल पहुँचे।
उन दोनों को एक खाली मेज मिल गई और वे वहाँ कुर्सियों पर बैठ गए। चूंकि वहाँ के लोग धीमी आवाज़ में बात कर रहे थे, इसलिए वे दोनों भी आपस में धीमी आवाज़ में बात करने लगे।
खेतरी को भोजन से पहले शराब पीने की आदत थी, लेकिन वह कभी भी हद से ज़्यादा नहीं पीते थे। उन्हें डर था कि अगर उन्होंने ज़्यादा शराब पी ली तो उनका पेट फूल जाएगा और उनका शरीर बेढंगा हो जाएगा। उनका मानना था कि अगर उन्हें अपने व्यवसाय में सफल होना है तो उनका शरीर भी सुडौल होना चाहिए।
दो घूंट पीने के बाद किसान काम पर लग गया।
देखो रवि! मैं तुम्हें पहले ही बता रहा हूँ – मेरी बात का गलत मतलब मत निकालना। तुम्हारे जैसे आदर्शवादी संपादकों के लिए मेरे मन में हमेशा से गहरा सम्मान रहा है! मैं मूल रूप से अमेरिकी स्वभाव का हूँ! हर कोई स्वतंत्रता और आजादी चाहता है! मेरा दृढ़ मत है कि जब तक यह लाइसेंसिंग का मुद्दा बना रहेगा, देश हर मामले में पिछड़ा रहेगा। मैं अपने इस मत को आंकड़ों से साबित कर सकता हूँ। आज हर जगह राजनीति करने के लिए आजादी छीनी जा रही है! खैर! मुझे तुम्हारे जैसे संपादकों को ये सब बताने की जरूरत नहीं है! मैं कहना चाहता था – सरकार ने हमें मिलने वाला अखबार का कोटा कम कर दिया है! कभी-कभी दिल्ली स्थित हमारे कार्यालय के खिलाफ किसी नगरपालिका कानून के तहत मामला दर्ज किया जाता है! विदेश मंत्रालय ने मुंबई स्थित कार्यालय के खिलाफ किसी आपत्ति के आधार पर मामला दर्ज किया है! अहमदाबाद और इलाहाबाद स्थित कार्यालयों में भी तीन-चार मामले चल रहे हैं! इन सब के बीच अखबार चलाना एक बहुत बड़ा सवाल है। हमने पिछले दो महीनों से अपने लंदन-न्यूयॉर्क संवाददाताओं को वेतन के लिए कोई विदेशी मुद्रा नहीं दी है! हम यह भी साफ-साफ नहीं कह रहे हैं कि हम उन्हें नहीं देंगे। वे वहाँ कैसे गुजारा करेंगे? हम फैक्स बिल का भुगतान कहाँ से करेंगे? पिछले दो महीनों से हमें सरकार का एक भी विज्ञापन नहीं मिला है। नतीजा यह हुआ है कि बड़ी-बड़ी कंपनियों ने भी हमें विज्ञापन देना बंद कर दिया है! ऐसे में हम अखबार कैसे चला सकते हैं? आप ही बताइए! वित्त प्रबंधक होने के नाते, यह मेरी सबसे बड़ी परेशानी है। मैं तो यह नौकरी छोड़ने और कोई अच्छी नौकरी ढूंढने के बारे में भी सोच रहा हूँ। क्योंकि इस स्थिति में, सरकार की अनुमति के बिना कोई भी अखबार चलाना मुश्किल है! उफ़..." उन्होंने हथेली से हवा पकड़ने का नाटक करते हुए कहा।
रविंद्र को आगे कुछ कहने की ज़रूरत नहीं थी। केंद्र और कर्नाटक में एक ही पार्टी की सरकार है। अगर आप राज्य सरकार में भ्रष्टाचारियों का पता भी लगा लें, तो वे अपने दिल्ली के अखबार को खाना-पानी काटकर बंद कर सकते हैं, और अगर

आप केंद्र सरकार की आलोचना करें, तो यहां की सरकार आपको परेशान करने के तरीके ढूंढने लगती है! यह तो निश्चित है कि राज्य सरकार के पास आपको परेशान करने के उतने तरीके नहीं हैं जितने केंद्र सरकार के पास हैं! चूंकि रविंद्र राज्य की राजधानी में थे, इसलिए उन्हें केंद्र सरकार की गलतियों पर खुलकर बोलने का ज्यादा मौका नहीं मिला।
उन्होंने स्पष्ट रूप से यह प्रश्न खेतरी के शब्दों के संदर्भ को जानने के इरादे से पूछा था।
"बैंगलोर संस्करण के किस लेख ने दिल्ली की अदालत में असुविधा पैदा की है? क्योंकि हम कभी भी केंद्र सरकार का नाम नहीं लेते! अगर हम इसके बाद दिल्ली से संबंधित लेख छापना बंद कर दें तो क्या होगा?"
"बिल्कुल सही! आपने ग्रेनाइट मामले को उठाया। आपकी रिपोर्ट बहुत अच्छी थी! फिर विवेकानंद विद्यालय पर आपका लंबा लेख भी बहुत अच्छा था। हाल ही में, एक इंजीनियरिंग छात्र को ब्लैकमेल किए जाने की कहानी भी बढ़िया थी। क्या यहाँ कोई राजस्व मंत्री है? उसे केंद्रीय मंत्रिमंडल में लाने की योजना चल रही है! वह भ्रष्ट हो सकता है - लेकिन बहुत चालाक है! राष्ट्राध्यक्ष को लगता है कि पार्टी के चुनाव कोष प्रबंधन के लिए केंद्र में ऐसे व्यक्ति का होना अच्छा है। क्या यहाँ कोई पहाड़ है? - मैंगनीज जैसे खनिजों से भरपूर पहाड़! उसके सौदे चल रहे हैं! आपका राजस्व मंत्री केंद्र सरकार की सहमति से इस सौदे का फैसला कर रहा है! उसे यह भी पता है कि आपका संवाददाता भी उसी राह पर है और वहां घात लगाए बैठा है। इसीलिए उसने हमें सावधान रहने की चेतावनी दी है।"
"हमारे अखबार की मुख्य विशेषता सरकार में व्याप्त भ्रष्टाचार को उजागर करना और जनता के सामने प्रस्तुत करना है। इसीलिए हमारे अखबार को बढ़ावा दिया गया है। अगर हम ऐसा नहीं करेंगे, तो एसपीएके के अन्य अखबारों और हमारे अखबार में क्या अंतर रह जाएगा? इससे अखबार की बिक्री पर निश्चित रूप से असर पड़ेगा और इसकी प्रतिष्ठा का क्या होगा?" रविंद्र ने पूछा।
``वाह! बहुत बढ़िया सवाल! दोनों को संतुलित करना ही तो हमारी कला है!`` खेतरी ने कहा। उसके चेहरे पर एक चतुर मुस्कान थी।
खाना खाते समय रविंद्र का मन ट्रिब्यून के मालिकों की पृष्ठभूमि के बारे में सोचने में मग्न था।
गांधी युग में 'इंडियन ट्रिब्यून' के मूल स्वामी रांका गांधी थे। उन्होंने स्वतंत्रता से पूर्व इस समाचार पत्र की शुरुआत देशी की सेवा और अंग्रेजों के विरुद्ध जनमत तैयार करने के उद्देश्य से की थी। उस समय अंग्रेजों ने इस समाचार पत्र को दबाने के कई प्रयास किए थे। लेकिन लाइसेंस रद्द करना और सरकारी समस्याओं का सामना करना उनकी परंपरा नहीं थी। इसी कारण समाचार पत्र न केवल चलता रहा, बल्कि समाज में अपना एक विशेष स्थान और सम्मान भी अर्जित किया। माखनलाल न केवल देशभक्त थे, बल्कि एक कुशल व्यवसायी भी थे। स्वतंत्रता के बाद उन्होंने इस समाचार पत्र को अपना मुख्य व्यवसाय बना लिया। मुंबई से प्रकाशित होने वाला 'इंडियन ट्रिब्यून' दिल्ली और अहमदाबाद से भी प्रकाशित होने लगा। स्वतंत्रता के बाद भी इस समाचार पत्र का निडर स्वरूप वही रहा। नेहरू भी, जो अंग्रेजों की तरह ही कानून से प्रेम करते थे, इस समाचार पत्र को ज्यादा दबा नहीं सके। इस दौरान समाचार पत्र लखनऊ, जयपुर, हैदराबाद और मद्रास से भी नियमित रूप से प्रकाशित होने लगा। ट्रिब्यून में प्रकाशित प्रत्येक लेख को न केवल भारत में, बल्कि भारत के बाहर भी प्रामाणिक माना जाने लगा।
माखनलाल रांका अपने अखबार के संपादक का चयन करने में भी बहुत सावधानी बरतते थे। आदर्श और निष्पक्ष व्यवहार उनकी प्रमुख ताकत बन गए थे। उन्होंने अपने संपादकों के अधिकारों में कभी दखल नहीं दिया। उन्होंने स्वयं कभी कलम नहीं उठाई। लेकिन वे देश की प्रतिभाओं को अपने अखबार की ओर आकर्षित

कर रहे थे। यह स्वतंत्रता के बाद का युग था – इसीलिए कई पत्रकार गांधीवादी युग से प्रभावित थे। इसी कारण अखबार की गुणवत्ता बिना किसी विशेष प्रयास के अच्छी बनी रही।
इस दौरान माखनलाल का व्यापारिक जुनून शांत नहीं रहा। उन्होंने मुंबई में एक कपड़ा कारखाना शुरू किया। जब उन्होंने देखा कि यह सफल हो रहा है, तो उन्होंने औरंगाबाद में एक सीमेंट कारखाना शुरू किया। इस समय तक उनके दोनों बेटे वयस्क हो चुके थे। वे उद्योग में अपना हाथ आजमाना चाहते थे, इसलिए उन्होंने बिहार में एक पत्थर की खदान और कानपुर में एक टायर कारखाना शुरू किया। बीस वर्ष की आयु में ही दोनों बेटों ने अपनी व्यावहारिक बुद्धिमत्ता का परिचय दिया। इसलिए, दोनों का विवाह बड़े उद्योगपतियों की बेटियों से कराने का प्रस्ताव रखा गया। दोनों का विवाह हो गया। कमल और जसवंत शक्तिशाली उद्योगपति बन गए जो किसी भी क्षण पचास करोड़ रुपये जुटा सकते थे। तीन उद्योगपतियों ने माखनलाल रांका की तीनों बेटियों से बहुएं बनाने की मांग की और उन्हें अपनी बहुएं बना लिया।
जब बच्चे व्यापार और उद्योग में बड़े होने लगे, तब माखनलाल साठ वर्ष के हो चुके थे। उनका मन अब धर्म और तीर्थयात्रा की ओर मुड़ गया। सत्य, सामाजिक न्याय और आचरण की पवित्रता उनके मन में भरने लगी। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान उन्हें इंग्लैंड जाने का अवसर मिला, लेकिन उन्होंने यह कहते हुए इस अवसर को ठुकरा दिया, "मैं उन लोगों की भूमि पर कदम नहीं रखूंगा जो हम पर शासन करते हैं।" स्वतंत्रता के बाद, नेहरू सूट पहनकर लंदन गए, जिसका उन्होंने कड़ा विरोध किया था। यहां तक कि जब सर्वपल्ली राधाकृष्णन अपनी आंखों के इलाज के लिए लंदन गए, तब भी उनकी प्रतिक्रिया यही थी।
"सर्वपल्ली एक विद्वान हैं! अपनी कमजोर दृष्टि का इलाज कराने के लिए वे और कहाँ जाएँगे?"
लेकिन जब लंदन में विश्व स्तरीय पत्रकारों का सम्मेलन आयोजित हुआ और उन्हें उद्घाटन के लिए आमंत्रित किया गया, तो वे चले गए। वहां जाकर वे कुछ दिनों तक रुके और लंदन की हर छोटी-बड़ी गली का भ्रमण किया। बाद में उन्होंने वहाँ के अन्य महत्वपूर्ण गाँवों का भी दौरा किया। वहाँ के राजनेताओं, उनके व्यवहार, जनता की जागरूकता और समाचार पत्रों की निडरता को तीन महीने तक देखने के बाद, वे वापस लौटे और कहा,
"जब तक हम अंग्रेजों के इन गुणों का पालन नहीं करेंगे, तब तक हम खुद पर ठीक से शासन नहीं कर पाएंगे!"
उसके बाद, उन्होंने अपना सारा समय अपने अखबार को समर्पित करने का फैसला किया। उन्हें यह विश्वास होने लगा कि उनके अखबार का उद्देश्य यह विचार फैलाना है कि किसी व्यक्ति का धर्म समाज और उसके व्यवहार में व्यक्त होता है - और केवल धर्म के बारे में बात करने का कोई मतलब नहीं है।
इसी समय, राष्ट्रीय नायक के घर में जो बदलाव हो रहे थे, वही बदलाव इंदिरा गांधी के घर में भी शुरू हो गए। नेहरू चाहे लोकतंत्र के कितने भी बड़े समर्थक क्यों न हों, उन्होंने अपनी बेटी इंदिरा गांधी को अपना उत्तराधिकारी मानकर पाला-पोसा था और किसी और को मौका नहीं दिया था। सत्ता पर पूर्ण नियंत्रण हासिल करने के बाद उन्होंने शासन करने का तरीका पूरी तरह बदल दिया। उन्होंने निर्दयतापूर्वक ऐसे सिद्धांत लागू किए कि सार्वजनिक जीवन के योग्य केवल वही लोग हैं जो उनके प्रति, उनके परिवार के प्रति वफादार हों। साथ ही, उन्होंने अपने खास लोगों के माध्यम से ऐसा माहौल बनाना शुरू कर दिया कि उनके बाद उनके दूसरे बेटे संजय ही उत्तराधिकारी बनेंगे।
उनकी चालों को भली-भांति जानते हुए, 'ट्रिब्यून' देश का पहला ऐसा अखबार था जिसने उन्हें जनता के सामने उजागर किया। मीखनलाल का मानना था कि वंशवाद

का विरोध करना हमारा धर्म है। लेकिन इस समय तक भारत में राजनीतिक विचारधारा बदल चुकी थी। शासकों का यह रवैया था कि जब तक हम विरोधियों को खत्म नहीं कर देते, तब तक हम अपने लक्ष्य हासिल नहीं कर सकते। उन्होंने लाइसेंस, कर और ऐसी ही अन्य चीजों पर नए कानून बनाना शुरू कर दिया और 'ट्रिब्यून' की नींव हिला दी।
इसके लिए उन्होंने माखनलाल के बेटों के कपड़ा व्यवसाय, सीमेंट कारखाने, पत्थर की खदान, टायर कारखाने आदि को नष्ट करने का प्रयास शुरू कर दिया। अपने राजनीतिक एजेंटों के माध्यम से उन्होंने मुंबई के रांका कपड़ा मिल में दो हजार श्रमिकों की हड़ताल आयोजित की। जहां अन्य मिल मालिकों ने माखनलाल पर आपत्ति जताते हुए कहा, "आप श्रमिकों को अधिक वेतन और रियायतें देकर यहां के औद्योगिक वातावरण में असंतुलन पैदा कर रहे हैं!" वहीं उन्होंने इन मिल श्रमिकों को यह कहकर उकसाया, "हम आपका वेतन और बढ़ाएंगे - देश के प्रधानमंत्री हमारे साथ हैं।" संतुष्ट श्रमिकों के मन में इस तरह की नफरत पनपने लगी, क्योंकि माखनलाल का मतलब खून का प्यासा शेर होता था। मध्य प्रदेश, राजस्थान और पंजाब में सरकारी बसें और अन्य वाहन रांका टायरों का इस्तेमाल कर रहे थे। सरकारी दबाव के कारण, इन ऑर्डरों का मिलना बंद हो गया। रांका टायरों का इस्तेमाल करने वाले निजी वाहनों को भी लाइसेंस के मामले में परेशान किया जाने लगा। औरंगाबाद में उत्पादित रांका सीमेंट को घटिया गुणवत्ता का बताकर उसके इस्तेमाल पर प्रतिबंध लगा दिया गया।
कंवर और जसवंत सिर झुकाकर बैठ गए। उन्होंने इस बारे में अपने ससुराल वालों से बात की। उन्होंने अपनी भाभीयों से भी बात की। उन्होंने अपनी मां से भी बात की। अंत में, दोनों अपने पिता के पास गए और उनके चरणों में जमीन पर बैठ गए।
कंवर ने कहा,
"पिताजी, आपका समय समाप्त हो गया है। क्यों न आप सब कुछ हमें सौंपकर भगवान की सेवा में विश्राम करें? हर साल दिवाली के मध्य में लक्ष्मी पूजा के दिन, आप सभी खातों की जांच करें और यदि हमने पूरी संपत्ति में से पंद्रह प्रतिशत लाभ नहीं कमाया है, तो हमें सूचित करें! हम इसे व्यर्थ नहीं जाने देंगे। हम यह भी जानते हैं कि आपने इसे बनाने में कितना प्रयास किया है! हम लाभ का वह प्रतिशत आपके निर्णयानुसार रांका ट्रस्ट को दे देंगे। आप इसे अपनी इच्छानुसार दान और तीर्थयात्राओं पर खर्च कर सकते हैं।"
बड़े रैक ने भी बड़े बेटे की बात पर ध्यान दिया। उन्होंने जवाब दिया,
मुझे दान-पुण्य करने की कोई बाध्यता नहीं है जिसका फल मृत्यु के बाद मिले। मैं अपना धार्मिक कार्य केवल अपने 'इंडियन ट्रिब्यून' के संचालन के माध्यम से ही पूरा करूँगा! मैं ट्रिब्यून की पूरी जिम्मेदारी लूँगी। मैं आपके नाम से अन्य सभी व्यवसाय चलाऊंगा। यदि कोई आपको परेशान करने का प्रयास करे, तो आप कह सकते हैं, 'हमारा ट्रिब्यून से कोई लेना-देना नहीं है' और चले जाइए! मैं ट्रिब्यून के पहले पृष्ठ पर भी स्पष्ट कर दूँगा कि हमारा इससे कोई संबंध नहीं है!
"पिताजी, आपका समाधान भले ही कानूनी हो, लेकिन अवसरवादी चोर इसे स्वीकार नहीं करेंगे। डाकू या ब्लैकमेलर मासूम बच्चों का अपहरण करके पैसे मांगते हैं। पैसे न मिलने पर वे उन्हें बेरहमी से जान से मारने की धमकी देते हैं! इसमें उन बच्चों का क्या दोष है? लेकिन अगर आप ऐसा कहेंगे तो वे सुनेंगे कहां? ये चोर सिर्फ एक ही बात जानते हैं। अगर आप उन पर दबाव डालेंगे तो वे आपको रुला देंगे! साधारण डाकुओं को तो इतनी जानकारी होती है! फिर सरकार, जो अपने नियंत्रण में शिक्षित अधिकारियों से सलाह लेती है, उसे तो और भी बहुत कुछ पता होता है!" जसवंत ने कहा।

अब पिता भी सोचने लगे। बच्चों की बातों का खंडन करना संभव नहीं था। उन्होंने एक ट्रस्ट बनाने का विचार किया, जिसमें रंका का नाम पूरी तरह से हटा दिया जाए और अखबार को उसी ट्रस्ट से चलाया जाए - यानी खुद पूरी तरह से अलग हो जाएं। माखनलाल भी इस बात से परेशान थे कि जिस संस्था को उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई लड़कर प्रसिद्धि दिलाई थी, उसे इस तरह दान कर दिया जाए। उन्हें यह भी एहसास हुआ कि अगर उन्होंने सभी अन्य उद्योगों को छोड़कर सिर्फ अखबार को ही रखा, तो वे सरकार के खिलाफ लड़ाई में एक साल से ज्यादा टिक नहीं पाएंगे।
दोनों बच्चों ने सहमति के अनुसार कहा,
"पिताजी, क्या हमें पता नहीं कि आपने ट्रिब्यून में कितना निवेश किया है? भला कौन अपने घर के सामने एक विशाल बैरगद का पेड़ और उसकी छांव नहीं चाहेगा? लेकिन अगर उसी पेड़ की जड़ें घर की नींव में घुसकर घर को गिराने लगें, तो पेड़ को काटने के अलावा कोई चारा नहीं बचेगा। चलिए, पूरा 'ट्रिब्यून' ही बेच देते हैं। कोई और संस्था अखबार खरीद लेगी और उससे मिलने वाले पैसों से हम कोई और व्यवसाय शुरू कर सकते हैं..."
लेकिन ट्रिब्यून का नया मालिक ट्रिब्यून को सरकार का मुखपत्र बनाकर और अधिक लाइसेंस प्राप्त करेगा...
"इसकी समस्या यही है - एक बार बिक जाने के बाद, हम इसके बारे में ज्यादा सोचना नहीं चाहते!"
माखनलाल रंका कुछ देर के लिए बच्चों की बात समझ गए। फिर भी, वे अपना अखबार दूसरों को सौंपने को तैयार नहीं थे। इस देश में हजारों लोग कपड़ा कारखाने चलाते हैं, सैकड़ों लोग सीमेंट, टायर और वाहन ब्लेड जैसी चीजें बनाकर करोड़ों रुपये कमाते हैं – लेकिन 'ट्रिब्यून' को जन्म देने वाला और इसे इतना आगे बढ़ाने वाला मैं अकेला ही हूं!
क्या अब मुझे वही 'ट्रिब्यून' छोड़ देना चाहिए? उन्होंने सोचा, हमें अपने बच्चों को बताना चाहिए - यह देश नहीं है! तुम्हें किसी दूसरे देश में जाकर व्यापार करना चाहिए जहां कानून का राज हो।
लेकिन मेरे बच्चे उस देश को क्यों छोड़ें जिसके लिए मैंने 'ट्रिब्यून' के समर्थन से स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ी और विदेशी बन जाएं? क्या यह देश किसी एक व्यक्ति या परिवार की निजी संपत्ति है, या कुछ और?
उन्होंने बच्चों को स्पष्ट शब्दों में बताया,
अखबार बेचना नामुमकिन है। कोई और तरीका ढूंढो। सरकारी वाहनों और सरकारी खरीदारों पर निर्भर मत रहो। उतना ही माल बनाओ जितना तुम खुद बेच सको। कपड़ा मिलों में तालाबंदी शुरू कर दो-तीन महीने में सभी मजदूर समझ जाएंगे कि अगर उन्हें वेतन नहीं मिला तो प्रधानमंत्री उन्हें, उनकी पत्नियों और बच्चों को खाना नहीं खाने देंगे!" और हमेशा की तरह, वह उठे और टहलने चले गए।
फिर दोनों बेटे आपस में विचार-विमर्श और विचारों का आदान-प्रदान करने लगे। उन्होंने फिर अपने ससुर और साले से सलाह ली। दो-तीन दिन बाद वे अपने पिता के पास लौट गए।
"पिताजी, हम आपकी भावनाओं का अनादर नहीं करना चाहते। यदि हम, आपके बच्चे होने के नाते, 'ट्रिब्यून' की प्रतिष्ठा को बनाए नहीं रख सकते, तो हमारे अस्तित्व का क्या अर्थ है? अब हमें बीच का रास्ता निकालना होगा। तीन महीने तक 'ट्रिब्यून' किसी भी सरकार के विरुद्ध कोई विशेष समाचार प्रकाशित नहीं करेगा। इस दौरान हम सरकार से बातचीत करेंगे और अपने अन्य सभी व्यवसायों को एक निश्चित स्तर पर लाएंगे। उसके बाद आप फिर से अपने स्वतंत्र मार्ग पर चल सकते हैं।"

यह सलाह उन्हें भी व्यावहारिक लगी। लेकिन वे यह सब संपादकों को कैसे बताते? इतने वर्षों में उन्होंने प्रधान संपादक से कभी एक शब्द भी नहीं कहा था, 'यह करो या वह करो, वह मत करो।' नियुक्ति करते समय उन्होंने 'टिब्यून' के उद्देश्य और नीतियों को स्पष्ट किया ताकि कोई हस्तक्षेप न हो। उस समय के प्रधान संपादक मोहन जुलगांवकर न केवल आदर्शवादी थे, बल्कि उन्हें व्यवसाय की भी अच्छी समझ थी। इसलिए, अगर माखनलाल हिचकिचाते और सिर्फ 'हाँ' कह देते, तो वे तुरंत उनकी नाराजगी को पहचान लेते और 'चलिए इसे इस तरह करते हैं' कहकर उनकी समस्या का समाधान कर देते। वे यह भी समझते थे कि अखबार के जीवित रहने पर ही हम अपनी लड़ाई लड़ सकते हैं।
कनवाल और जसवंत ने 'टिब्यून' की ओर से प्रधानमंत्री के पास एक चतुर मध्यस्थ भेजा। उसने तीन महीने तक 'टिब्यून' का अवलोकन भी किया। यह देखकर कि 'टिब्यून' एक ऐसे कुत्ते की तरह चल रहा था जो केवल अपना पेट भर रहा था, न भौंक रहा था, न काट रहा था और न ही चोरों को पकड़ रहा था, उसने रांका-उद्योग समूह पर आई समस्याओं को दूर कर दिया। इसे कुछ सरकारी विज्ञापन भी मिलने लगे। परिणामस्वरूप, अन्य व्यापारियों ने भी अपने विज्ञापन देने शुरू कर दिए। मुंबई की कपड़ा फैक्टरी में चल रही हड़ताल समाप्त हो गई। उन तीन महीनों के दौरान अखबार में सरकार के खिलाफ एक भी खबर प्रकाशित नहीं हुई। फिर भी, समाचार संकलन का काम जारी था।
इस दौरान माखनलाल को अखबार पढ़ना एक सजा जैसा लगने लगा था। यहां तक कि उसके दोस्त भी पूछने लगे थे, "तुम्हारा अखबार इतना सस्ता क्यों है?" अखबार के वितरण प्रबंधक ने आंकड़े पेश किए जिनसे पता चला कि अखबार की बिक्री घट रही थी।
निर्धारित समय बीतने के बाद, टिब्यून फिर से पहले की तरह सक्रिय हो गया। उन्होंने भारत में अखबारों के कारोबार को किस तरह कुचला जा रहा है, इस विषय पर एक लंबा लेख प्रकाशित किया। यह लेख तुरंत विदेशी अखबारों में भी छप गया। इस लेख के कारण सरकार टिब्यून पर तुरंत कोई आपत्ति नहीं उठा सकी। सरकार टिब्यून को और परेशान करने के तरीकों के बारे में सोचने लगी।
खाना खाते समय, रविंद्र ने अखबार के कारोबार में आए बदलावों को गहराई से महसूस किया। उसके बाद, रांका ने भी वही तरीके अपनाने शुरू कर दिए। वह प्रधानमंत्री से व्यक्तिगत रूप से मिलते और उनके प्रति वफ़ादारी का दिखावा करते। अगर प्रधानमंत्री उनसे कुछ पूछतीं, तो वह कहते, 'मैं संपादकों के काम पर ध्यान नहीं देता। वे कभी-कभार उत्तेजित हो जाते हैं। मैं देख लूंगा! आप चिंता न करें।' ऐसी किसी घटना के बाद, टिब्यून फिर से नरम पड़ जाता। इस दौरान, अमेरिका की विदेश नीति और पाकिस्तान के अहंकार पर कई तीखे संपादकीय लिखे गए। दो-ढाई महीने बाद, वह फिर से सरकार के किसी भ्रष्ट आचरण के खिलाफ हंगामा खड़ा कर देते।
दो-तीन बार ऐसा होने के बाद प्रधानमंत्री को माखनलाल की तरकीब याद आ गई। उन्होंने फिर से टिब्यून को परेशान करना शुरू कर दिया। यह एक अहम मुद्दा था कि संवाददाता या संपादक दिल्ली जाते हैं या सरकार और टिब्यून के बीच किस स्तर पर लड़ाई चल रही है! शीर्ष स्तर पर चल रही इन हरकतों को नज़रअंदाज़ करते हुए चुपचाप काम करते रहना किसी के लिए मुमकिन नहीं था। इन सबके बावजूद, रविंद्र उन कर्मचारियों को लेकर चिंतित थे जो किसी के उकसावे पर तुच्छ स्वार्थवश हड़ताल पर चले गए थे और मशीनरी व उपकरण को नुकसान पहुंचा रहे थे। उन्हें और उनके जैसे कुछ संपादकों को इस बात की चिंता सता रही थी कि उनके मन में न्याय की भावना कब जागेगी।
खेतरी ने बीच में पूछा,
"क्या आप कभी मीन्स नहीं खाते?"

मैंने ऐसा कभी नहीं किया।
मैं मारवाड़ी हूं। वैष्णव संप्रदाय से हूं। जैन धर्म का भी प्रभाव है। लेकिन मैं आपको बता दूं, अमेरिका में अगर आप शाकाहारी होने पर अड़े रहते हैं, तो क्या आप जानते हैं कि आपको कितनी परेशानी उठानी पड़ती है? मुझे भी शुरुआत में मांसाहारी भोजन से दिक्कत हुई थी। लेकिन बाद में धीरे-धीरे मुझे इसकी आदत हो गई।
यहां तक कि रविंद्र ने भी महसूस किया था कि स्थिति पूरी तरह बदल गई थी। अगर कोई खास घटना घटती, तो प्रधान संपादक खुद दूसरे संपादकों से संपर्क करके उन्हें बताते थे।
कुछ दिन इंतजार करो... लेकिन कहानी को खत्म मत करो..."
लेकिन इस बार प्रबंधन विभाग से एक व्यक्ति आया है! यह भी रांका के बेटों का ही विचार था। उन्होंने खेतरी को पूरे रांका-इंडस्ट्री समूह के वित्त का निरीक्षण करने के लिए नियुक्त किया था। चूंकि 'ट्रिब्यून' भी इसका हिस्सा था, इसलिए खेतरी स्वयं मिलने आए थे।
बूढ़े माखनलाल को खेतरी की नियुक्ति का असली मतलब समझ नहीं आया था। खेतरी ने खुद सभी संपादकों से मुलाकात की और उनसे स्पष्ट रूप से बात की। उनका कहना था कि अगर अखबार को बचाना है तो उन्हें आपस में समझौता करना होगा।
हम इस कहानी को उच्च वर्ग के लोगों तक कैसे पहुंचाएं? कौन पहुंचाएगा? क्या हमें यह कहना चाहिए कि 'ट्रिब्यून' की स्वतंत्रता के दिन समाप्त हो रहे हैं?
उसी समय, खाना लाने आए वेटर ने पूछा,
"सर, मिठाई कहाँ है?..."

■

इसके बाद भी खेतरी बेंगलुरु में ही ठहरे रहे। उन्होंने गेस्ट हाउस से रविंद्र को बताया कि वे मुख्यमंत्री से मिलने गए हैं। रविंद्र ने शांतामूर्ति को फोन किया। उन्होंने उन्हें सारी घटना बताई और फिर कहा,
``यह पता लगाना जरूरी है कि खेतरी किसलिए आया है! लेकिन इस मामले में गोपनीयता बेहद जरूरी है। शशिरेखा को भी इस बारे में कुछ पता न चलने दें!"
रात के खाने के बाद, रविंद्र सोने की तैयारी कर रहा था तभी फोन की घंटी बजी। यह सोचकर कि शांतामूर्ति को कोई खबर मिली होगी, उसने रिसीवर उठाया - फोन पर तलवारों की आवाज़ सुनाई दी।
गोपीकृष्ण तलवार इंडियन ट्रिब्यून के प्रधान संपादक थे। उन्हें दिल्ली से एक फोन आया था।
"हाय रविजी! मुझे आपको एक महत्वपूर्ण खबर बतानी है... लेकिन उससे पहले, बताइए, खेतरी बैंगलोर में क्या कर रहा है?"
"मुझे पता चला है कि वह आज सुबह मुख्यमंत्री कार्यालय गए थे। उन्होंने गेस्ट हाउस में नाश्ता भी नहीं किया। मुझे नहीं पता कि वह शाम तक कहां थे। वह अपनी ऑफिस की गाड़ी लिए बिना ही चले गए।"
आपकी जानकारी अधूरी है। मैं आपको डेढ़ हजार मील दूर से बता रहा हूँ। सुनिए! वहाँ मैंगनीज का विशाल भंडार है, है ना? ...हम्म... जोगनाथ पर्वत श्रृंखला! वह वहाँ गए हैं। आपके कर्नाटक के राजस्व मंत्री ने गाड़ी का इंतजाम किया होगा। अब तक खनन विशेषज्ञ वहाँ पहुँच चुके होंगे और अपनी रिपोर्ट भी दे चुके होंगे। रांकाजी के बच्चे एक और खदान शुरू करने की कोशिश कर रहे हैं। रांकाजी का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। उनकी याददाश्त भी कमजोर हो गई है। जब वे स्तब्ध होते हैं, तो वे "मेरा मंच - मेरे मंच की स्वतंत्रता और पवित्रता" आदि की बातें करते हैं। ऐसे समय में वे कभी-कभी मुझे फोन भी करते हैं। लेकिन ये सब पुरानी यादें हैं। उन्हें वर्तमान का कोई बोध नहीं है। बच्चों ने "मंच" अपने हाथों में ले लिया है, यही

आज की वास्तविकता है! मैं माखनलाल पर किसी बात का दोष नहीं लगाना चाहता। क्योंकि वे हमारी बातों को पूरी तरह समझने और उन पर विचार करने की स्थिति में नहीं हैं।
रविंद्र ने तलवार को यह भी बताया कि उसने पिछले दिन खेतरी से क्या बात की थी।
उन्होंने इस मुद्दे पर प्रधानमंत्री से जरूर बात की होगी! उनकी अनुमति के बिना राज्य के मंत्री इतने बड़े मामले पर ध्यान नहीं देंगे! अगर विपक्षी दल हंगामा करते हैं, तो उस समय केंद्र को समर्थन की जरूरत होती है! खैर, पिछले हफ्ते खेतरी मुझसे इसी तरह बात कर रहे थे। मैं चुपचाप उनकी बात नहीं सुनता रहा और उनसे बहस की – रांकाजी ने तो पहले ही 'ट्रिब्यून' के लक्ष्य और नीतियां तय कर ली हैं। महात्मा गांधी, राजजी, वल्लभभाई, जवाहिरलाल प्रधानमंत्री बनने से पहले, इन लक्ष्यों और नीतियों की प्रशंसा कर चुके हैं और इनकी सराहना कर चुके हैं। ट्रिब्यून ने देश-विदेश में सम्मान का स्थान भी हासिल किया है! 'ट्रिब्यून' के लक्ष्यों और नीतियों में जरा सा भी बदलाव होने से इसके करोड़ों पाठकों की भावनाओं को ठेस पहुंचेगी! इसमें पहले काम कर चुके पत्रकार और आज काम कर रहे पत्रकार भी इससे दुखी होंगे। मैं इस संबंध में माखनलाल रांकाजी से बात करना चाहता हूं। इस पर उन्होंने कहा, "जी हां! आपकी बात सही है, लेकिन अखबार का अस्तित्व तो जरूरी है!" आप यह भी जानते हैं कि खेतरी कभी कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं करते – लेकिन कठोरता को स्पष्टता से व्यक्त करते हैं। कुल मिलाकर, मुझे यह अहसास हुआ है कि रांकाजी के दोनों पुत्रों ने अपने पिता के व्यक्तित्व को पूरी तरह से अपना लिया है। अब केवल रांकाजी का शरीर ही शेष है – और वह भी अधिक समय तक नहीं टिकेगा।"
रविंद्र उनकी कही हर बात को ध्यान से सुन रहा था।
उन्होंने आगे कहा,
मैंने इसके बाद क्या करना है, इस बारे में भी सोचा है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि प्रधान संपादक का पद मालिकों की इच्छा पर निर्भर करता है। मुझे वह सुरक्षा नहीं मिलती जो अन्य पत्रकारों को मिलती है। वे मुझे कभी भी निकाल सकते हैं, बस इस महीने का वेतन हाथ में देकर। इससे पहले, मेरे लिए इस्तीफा देकर चले जाना ही बेहतर होगा। मैंने इस संबंध में अपनी पत्नी से भी बात की है। मुझे पैसों की कोई समस्या नहीं है। मेरे बेटे के पास नौकरी है, मेरी बेटी की शादी हो चुकी है - मेरी पत्नी भी जय हिंद कॉलेज में रीडर हैं। उनका अपना घर है। मैं आसानी से महीने में दो हजार कमा सकता हूँ। लेकिन वह 'ट्रिब्यून' के प्रधान संपादक की पत्नी होने के नाते समाज में मिलने वाले सम्मान को छोड़ने को तैयार नहीं हैं! इसके अलावा, उन्होंने बहुत तर्क दिए हैं - लेकिन मैं उनकी बात नहीं सुनूंगा। इसके बाद, मैं रंकाजी से एक बार फिर बात करूंगा। बेशक, ऐसा मौका मिलने की संभावना भी कम है। वह ऐसी मुलाकात की अनुमति नहीं देंगी। तब मेरा इरादा और भी मजबूत हो जाएगा। मैं दिल्ली में रहना चाहता हूँ। मैं किसी विदेशी अखबार में संवाददाता के तौर पर काम करना चाहता हूँ। पाँच-छह हज़ार रुपये प्रति माह आसानी से मिल जाएंगे। उसके बाद, हम अपना खुद का स्वतंत्र साप्ताहिक अखबार शुरू करेंगे। कोई साफ़-सुथरा, चमकदार कागज नहीं, साधारण अखबार, खेल-सिनेमा-पहेलियाँ- कोई और खास आकर्षण नहीं। हमें उसी लगन से काम करना चाहिए जिससे हम अब तक करते आए हैं—और हमें इसी लगन से काम करते रहना चाहिए—अंदर की खबरें जुटाने के लिए। मुझे आपको यह बताने की ज़रूरत नहीं है कि ये खबरें कैसे मिलेंगी! जो लोग 'ट्रिब्यून' को खबरें देते हैं, वही लोग हमें भी खबरें देंगे। अगर कोई मामला उठता है, तो कुछ वकील बिना फीस लिए हमारा साथ देंगे। मैंने अभी तक सबसे बात नहीं की है—लेकिन जल्द ही बात करूंगा। शुरुआत में पचास हज़ार प्रतियाँ भी बिक जाएँ तो कोई बात नहीं! बाद में

डेढ़ लाख तक पहुंचना आसान है। 'ट्रिब्यून' के पाठक हो हमारे नए साप्ताहिक अखबार के पाठक होंगे।—हेलो—क्या आप सुन रहे हैं?
``ऐकतोय... बोला..."
अगर आप दुविधा में हैं, तो हां कह दीजिए! मैं इतने लंबे समय से अकेले ही बात कर रहा हूं!..."
"यह तो बहुत रोमांचक है!" रविंद्र ने कहा।
अब मैं ये सब बातें आपसे इसलिए कर रहा हूँ क्योंकि आप भी मेरी ही तरह स्वभाव के हैं। मैं आप पर कोई दबाव नहीं डालना चाहता – लेकिन अगर आप भी इस्तीफा देकर दिल्ली आ जाएँ, तो मुझे लगेगा कि मेरी ताकत बढ़ गई है! मैं आपको हर महीने चार-पाँच हज़ार रुपये कमाने में भी मदद करूँगा। आप मुझसे बारह साल छोटे हैं। मुझे लगता है दिल्ली दफ्तर से दो-तीन और लोग भी आ जाएँगे। अगर हम पाँच-छह लोग भी हो जाएँ, तो काफी होगा! यमुना के उस पार जगह मिल सकती है। थोड़ी दूर है – लेकिन इतनी भी बुरी नहीं होगी। मैं आपको तीन दिन में फोन करूँगा। अभी किसी को इसके बारे में मत बताना..." शुभ रात्रि कहकर उन्होंने फोन रख दिया।
ट्रिब्यून परिवार में सभी जानते थे कि माखनलालजी का स्वास्थ्य देर-सवेर पूरी तरह बिगड़ जाएगा या उनका अंत हो जाएगा - उसके बाद हमारी आजादी छिन जाएगी। वे सभी न केवल आदर्शवादी थे, बल्कि इस बात पर भी जोर देते थे, 'क्या उस बूढ़े ने गडगंज का पैसा इकट्ठा नहीं किया था? शहद निकालने वाली ने तो उसका हाथ चाटा था, तो फिर क्या गड़बड़ हुई? आज उसके सिवा कौन राज करेगा?' ट्रिब्यून में भी कुछ लोग इसी तरह की बातें करते थे। कुछ लोग खुद को भाग्यशाली मानते थे कि उन्होंने नेताओं से हाथ मिला लिया और अपने बच्चे के लिए इंजीनियरिंग या मेडिकल में घर, जमीन या सीट हासिल कर ली। लेकिन तलवार तो गांधी युग में हद से ज्यादा मेहनत करने वाला आदमी था! मैडम ने कई बार उसे मनाने की कोशिश की, लेकिन उसने कोई जवाब नहीं दिया। जब उसने सब कुछ ठुकरा दिया - जमीन, पैसा, दामाद के लिए नौकरी - तो मैडम ने यह खबर घर तक पहुंचा दी और पति-पत्नी के बीच झगड़ा करवा दिया! क्या ये सब बातें मैडम के दिमाग में आती हैं, या उनके वरिष्ठ अधिकारी उन्हें ये सब बातें बताते हैं?
तलवार को पहले से ही अंदाजा था कि रांकाजी के बिगड़ते स्वास्थ्य के कारण उसे भी इस स्थिति का सामना करना पड़ेगा, इसलिए उसने मन ही मन सारी तैयारियां कर ली थीं। रविंद्र भी आने वाले बदलाव का सामना करने के लिए तैयार था। लेकिन उसे इस बात का जरा भी अंदाजा नहीं था कि हालात इतनी जल्दी बदल जाएंगे।
जहां एक ओर राजनीति से जुड़ी खबरें ढूंढने में कठिनाई हो रही थी, वहीं दूसरी ओर प्रत्येक मंत्री अपने-अपने तरीके से पत्रकारों को खुश करने की कोशिश कर रहा था। ऐसे में, भले ही वह अप्रत्यक्ष रूप से आने वाली किसी भी नई खबर को हाथ न लगाए, लेकिन अपने सहयोगियों से भी यही उम्मीद करना गलत था, रविंद्र भी इस बात को दृढ़ता से मानते थे।
अगर मैं यह नौकरी छोड़ दूं तो क्या होगा? लेकिन उसके बाद मैं क्या करूँगी? इस जीवन के अलावा हमारे पास और कौन सा जीवन है?

■

जैसा कि उन्होंने फोन पर कहा था, तलवार ने रविंद्र पर कोई दबाव नहीं डाला। उसने नैतिक दबाव भी नहीं डाला। बीस दिन बाद, एक रात, उसने फिर फोन किया।
अब मैंने मन बना लिया है। कल मैं रंकाजी को अपना त्यागपत्र भेज रहा हूँ। मुझे उनसे मिलने का मौका नहीं मिला है। मैंने एक नया साप्ताहिक अखबार शुरू करने का निश्चय कर लिया है। अगर आप इसमें शामिल होना चाहते हैं, तो मेरे

घर के पते पर पत्र लिखें। या मुझे फोन करें। आप भी लगभग पचास के करीब हैं। इस उम्र में ऐसा निर्णय लेने से पहले चार बार सोचना चाहिए। मैं आप पर ज्यादा दबाव नहीं डालूंगा। भले ही आप स्वयं शामिल न हों, मुझे पूरा विश्वास है कि मुझे आपका सहयोग मिलेगा!
तलवार ने संपादक की स्वतंत्रता पर हमले के कारण इंडियन टिब्यून के प्रधान संपादक पद से इस्तीफा दे दिया, यह खबर अगले दिन सभी समाचार पत्रों में प्रमुखता से छपी। खेतरी ने स्वयं अपने समाचार पत्र को यह खबर प्रकाशित न करने की सलाह देने के लिए फोन किया। लेकिन रविंद्र सहमत नहीं हुए। उन्होंने कहा,
"देखिए, हमारे टेलीप्रिंटर पर यूनिवर्सिटी ऑफ यूनिवर्सिटी की एक खबर छपी है। अगर यह खबर कल सभी अखबारों में छप जाए और मैं इसे अपने अखबार में प्रकाशित न करूं, तो यह विश्वसनीय कैसे होगी?"
उन्होंने कहा, "सिर्फ संपादकों को ही इसकी चिंता करने की जरूरत नहीं है। प्रबंधन को भी इसकी चिंता करने की जरूरत है!"
सत्य विश्वसनीयता का आधार है। एक संपादक सत्य को लेकर विशेष रूप से चिंतित रहता है। जीवन भर जिस अखबार के लिए काम करने वाले व्यक्ति के इस्तीफे की खबर भी न देना एक स्वतंत्र वातावरण का संकेत नहीं है। इससे हमारे अखबार में काम करने वाले सभी लोग दुखी होंगे!
तो क्या? क्या इस मुद्दे पर सत्याग्रह या कुछ और होगा?
"हो सकता है कि इस मुद्दे पर तत्काल सत्याग्रह न हो – लेकिन उनके दिलों में आक्रोश अवश्य रहेगा।"
ठीक है! मैं अभी मज़दूरों के साथ कोई समस्या नहीं चाहता। लेकिन यह खबर मत फैलाइए कि तलवारों से आजादी पर हमला हुआ, इसलिए मैंने इस्तीफा दे दिया। अगर आप चाहें तो बस यही खबर फैला दीजिए कि मैंने इस्तीफा दे दिया है।
"यह संयुक्त राष्ट्र की खबर है। अगर हम इसे नहीं छापेंगे तो दूसरे इसे जरूर छापेंगे। आप इसे कैसे रोकेंगे?"
"दूसरे अखबार ऐसा क्यों नहीं करते - हमारे अखबार में तो नहीं -"
"तो, आपकी विश्वसनीयता-" रविंद्र ने वही मुद्दा दोबारा उठाया।
लेकिन अब खेतरी ने कहा, "ठीक है!" और रिसीवर नीचे रख दिया।
अन्य सभी समाचार पत्रों की तरह, बेंगलुरु स्थित इंडियन टिब्यून ने भी तलवार के इस्तीफे की खबर छापी। अगले दिन, टिब्यून के प्रतिद्वंद्वी समाचार पत्रों ने इस विषय पर विशेष रिपोर्ट प्रकाशित करना शुरू कर दिया।
तलवार ने बुजुर्ग माखनलाल रांका के स्वास्थ्य, उनके दोनों बेटों की कारोबार में रुचि, सरकार के दबाव, कंवर और जसवंत रांका की खनन व्यवसाय में फिर से प्रवेश करने की आकांक्षा – इन सब बातों के साथ-साथ खेतरी के दबाव, उन्हें बुजुर्ग रांकाजी से मिलने न दिए जाने, उनके साथ हुए दुर्व्यवहार – इन सभी मुद्दों पर विस्तार से साक्षात्कार दिया था। इसे पढ़कर रविंद्र को थोड़ी तसल्ली हुई। लेकिन यह मन की तसल्ली का सिर्फ एक हिस्सा था। वह समझ गया था कि इससे कुछ हासिल नहीं होगा। अखबार की बिक्री पर इसका क्या असर पड़ेगा – यह तो तय था, लेकिन खेतरी भी इस कारोबार को समझता था। वह और उसका मालिक अखबार को बिलकुल भी मुनाफे वाला व्यवसाय नहीं मानते थे!
एक दिन, रविंद्र शांतामूर्ति और शशिरेखा के साथ बैठे और इस विषय पर विस्तार से चर्चा की। अपनी खुशी, निराशा और दुख व्यक्त करने के अलावा उनका कोई और योगदान नहीं रहा। शांतामूर्ति और शशिरेखा ने हाल ही में अपना घर बनवाया था। इसलिए, उनके पास अपनी नौकरी छोड़ने के अलावा आजीविका का कोई और साधन नहीं था।

हालांकि, रवींद्र अपनी नौकरी छोड़कर तलवार के साप्ताहिक अखबार में शामिल होना चाहता था, जैसा कि उसने सुझाव दिया था। रविंद्र को कलम की स्वतंत्रता और शक्ति के बारे में समझाने के लिए किसी की आवश्यकता नहीं थी।
लगभग एक सप्ताह के भीतर, इस नौकरी को छोड़कर दिल्ली जाने का उनका विचार और भी मजबूत हो गया। जब उन्होंने अपना यह विचार शांतामूर्ति को बताया, तो उन्होंने कहा:
"सर, मुझे लगता है कि आपका निर्णय एक अन्य दृष्टिकोण से भी सही है। वैसे भी, आपकी पत्नी दिल्ली में हैं। निजी व्यवसाय होने के कारण उन्हें आर्थिक रूप से कोई परेशानी नहीं है। इसका मतलब यह है कि सब कुछ केवल आपके वेतन पर निर्भर नहीं करता। आपका बेटा भी एक साल में अपनी शिक्षा पूरी कर लेगा।"
रवींद्र ने शांतामूर्ति को अपने जीवन की कहानी स्पष्ट रूप से नहीं बताई थी। उन्होंने कहा था,
"उसने अपने पिता के सुझाव पर दिल्ली में एक छोटा व्यवसाय शुरू किया है - मैंने कुछ दिनों तक यह देखने का फैसला किया है कि सब कुछ ठीक चल रहा है या नहीं और फिर मेरा भी वहां तबादला हो जाएगा।"
शांतामूर्ति चाहे कितने ही भरोसेमंद सहकर्मी क्यों न हों, वे ऐसी खबर बर्दाश्त नहीं कर सके। अगर उन्हें समझ आ जाती, तो वे सहानुभूति दिखाते।
``देखो! हमारे संपादक के पास खोने के लिए कुछ नहीं है – लेकिन उनकी पत्नी पैसे कमाने दिल्ली जा रही हैं! –" वह अपने सभी दोस्तों और अपनी पत्नी को यही बताने लगे होंगे। तो इस खबर को सब तक पहुंचने में कितना समय लगेगा? इसी कारण रविंद्र ने उन्हें अपने जीवन के बारे में एक शानदार विचार दिया था। आज भी रविंद्र ने उनकी बातों का जवाब दिया,
यह भी सच है-"
लेकिन शांतामूर्ति ने जिस बात की याद दिलाई, उससे उनके सामने एक अजीब समस्या खड़ी हो गई। हमने सब कुछ गुप्त रखा है। जब वह बैंगलोर आती है, तो घर आती है। कोई उससे यह नहीं पूछता कि वह दिल्ली में कहाँ रहती है। दिल्ली में उसके सहकर्मियों को भी नहीं पता कि वह दिल्ली में है।
अगर इसके बाद हमें दिल्ली में स्थायी रूप से रहना है, तो पंचायत में ही रहना होगा! इसके बाद दिल्ली में हमारे सहकर्मी भी यह बात समझ जाएंगे। हम दोनों के मन में इस बात को कोई संदेह नहीं था कि हम साथ नहीं रह पाएंगे। फिर भी, यह तलाकशुदा रिश्ते जैसा तो नहीं था! अगर हम बिना तलाक लिए एक ही गांव में अलग-अलग रहते हैं, तो इसे कैसे छुपाया जा सकता है? हालांकि, तलाक का ख्याल उनके मन में आया ही नहीं। माता-पिता के अलग होने पर बच्चे के मन पर क्या असर पड़ेगा, इस बारे में सोचने का भी कोई मतलब नहीं था। वह अब छोटा बच्चा नहीं है। जो मैंने छुपाया है, उसकी मां ने उसे कभी न कभी बता ही दिया होगा!
तो फिर पति-पत्नी को अपने टूटे हुए रिश्ते को दूसरों से क्यों छिपाकर रखना चाहिए? उसे इस सवाल का कोई जवाब नहीं सूझ रहा था—फिर भी उसके मन का एक कोना दिल्ली जाकर वहां रहने के उसके फैसले का पूरी तरह विरोध कर रहा था।
इस दौरान प्रबंधन ने एक नए संपादक की नियुक्ति की। उनका नाम राज मल्होत्रा था। बीस साल पहले वे 'ट्रिब्यून' में भी काम कर चुके थे। उनकी एक खास खूबी नेहरू परिवार के प्रति उनकी श्रद्धा थी। उन्होंने नेहरू पर दो किताबें लिखी थीं और दिल्ली के उच्च वर्गों में अपनी पैठ बना ली थी। वे किसी भी विषय पर ऐसे बोलते थे मानो स्वयं एक महान इतिहासकार हों। ``अगर नेहरू भारतीय राजनीति में न आते, तो भारत और दुनिया की स्थिति कितनी दयनीय होती - नेहरू के समर्थन के बिना टीटो, नासिर, क्रास्नो का राजनीतिक अस्तित्व ही न होता -

अमेरिका - रूस - शीत युद्ध के दौरान पूरी दुनिया को बचाने वाले महान राजनीतिज्ञ - गांधीजी के सरल विचारों को स्पष्ट रूप से खारिज किए बिना धर्मनिरपेक्षता के बीज को वैज्ञानिक और आधुनिक रूप देकर देश में बोने वाले क्रांतिकारी विचारक -" आदि।
हाल ही में किसी ने उनसे पूछा, "आप आजकल क्या लिख रहे हैं?" और उनका जवाब था,
मैं महोदया पर एक विश्वसनीय पुस्तक लिख रहा हूँ। एक प्रामाणिक जीवनी! सामग्री जुटाने का काम पूरा हो चुका है। संसद पुस्तकालय और 'तीन मूर्ति' के पुस्तकालय का दौरा भी हो चुका है। अब मुझे महोदया से चार बार मिलना है, प्रत्येक मुलाकात दो घंटे की होगी। एक लंबा साक्षात्कार करना है। उस राष्ट्रमंडल बैठक में जाने के बाद, मुझे उनसे मिलने का समय लेना है— इत्यादि!
जब यह खबर आई कि राज मलहोत्रा टिब्यून के प्रधान संपादक बन गए हैं, तो यह समझना आसान था कि इंडियन टिब्यून किस दिशा में आगे बढ़ेगा। फिर भी मलहोत्रा इस मामले में भी चतुर थे। अखबार का कार्यभार संभालने के बाद उन्होंने तुरंत सरकार की प्रशंसा करना शुरू नहीं किया। अपने पहले ही लेख में उन्होंने उस तानाशाही, भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद की कड़ी आलोचना की जो पूरे देश में कैंसर की तरह फैल चुका था। अंतिम अनुच्छेद में उन्होंने प्रधानमंत्री को चेतावनी दी:
अगर उन्होंने सही समय पर सही कदम उठाकर इन तीनों को नष्ट नहीं किया, तो इतिहास उन्हें कभी माफ़ नहीं करेगा!
पूरे लेख का लहज़ा कैंसर से भी ज़्यादा भयावह था, जिसमें कहा गया था कि इसका इलाज सिर्फ़ प्रधानमंत्री ही कर सकते हैं। इसके बाद भी दिल्ली से छपने वाले संपादकीय और मध्यपृष्ठों के लेख इसी तरह लिखे गए। देश में चाहे कुछ भी हो जाए, प्रधानमंत्री को ही देखना चाहिए, यही निर्देश था! देश में चाहे कुछ भी गलत हो जाए, प्रधानमंत्री को ही उस गलती को सुधारना चाहिए, यही आदेश था!
ऐसा करते हुए, उन्होंने देश के हर कोने में होने वाली छोटी-मोटी समस्याओं के लिए सरकारी दफ्तरों में समय की बर्बादी और सरकारी अधिकारियों की सुस्ती को जिम्मेदार ठहराया। उन्होंने कहा, "प्रधानमंत्री, जो खुद एक बेहतरीन खिलाड़ी हैं, फिर भी खेलों पर ध्यान क्यों नहीं देते?" इस तरह के लेख रविवार के अखबारों में छपने लगे। उन्होंने अपने एक लेख की शुरुआत में यह भी कहा था, "मैं सरकार की कभी भी आलोचना कर सकता हूँ - एक सच्चे पत्रकार के लिए सरकार से दोस्ती करना नामुमकिन है।" जब भी लेख में किसी भी संदर्भ में विपक्षी दल का जिक्र होता, वे बिना चूके लिखते,
हे भगवान! हमारे देश में एक मजबूत विपक्षी दल क्यों नहीं बनाते? क्या आप भूल गए हैं कि एक लोकतांत्रिक राष्ट्र को एक अनुशासित विपक्षी दल की आवश्यकता होती है?' और फिर उन्होंने सभी विपक्षी नेताओं को 'दूरदर्शी नहीं, नासमझ और फूट डालने वाला' कहकर अपनी बात मनवा ली। उन्होंने एक लेख में लिखा था, "इस देश को वास्तव में एक स्वतंत्र दल की सरकार की जरूरत है। लेकिन ऐसा दल अभी तक अस्तित्व में ही नहीं आया है!"

■

अखबार की मौजूदा स्थिति को देखते हुए, रविंद्र को स्थानीय संपादक के रूप में बने रहने का कोई मतलब नजर नहीं आया।
राष्ट्रीय स्तर की खबरें अखबारों में छप रही थीं। दिल्ली से स्पष्ट निर्देश थे कि राज्य स्तर की ऐसी खबरें न छापी जाएं, क्योंकि इससे राज्य सरकार को परेशानी हो सकती है। यहां तक कि अगर विपक्षी दल ऐसी कोई खबर उठाते भी हैं, तो उसे दबा देना चाहिए और उसे सातवें-आठवें पृष्ठ पर "विपक्ष का क्या कहना है"

पुस्तिका के साथ छापना चाहिए - साथ ही इस संबंध में सरकार का बयान भी प्रकाशित किया जाना चाहिए।
जल्द ही अखबार की बिक्री बीस हजार कम हो गई। लेकिन अखबार को सरकारी विज्ञापन इतने मिलने लगे कि नुकसान का कोई असर नहीं हुआ। रांका और उनके बेटों ने, जिन्होंने मैंगनीज के भंडार खरीदे थे, जोगीगुड्डा को मुट्ठी भर चने की कीमत पर प्राप्त किया था।
ऐसे माहौल में, रवींद्र के लिए वेतन पर 'टिब्यून' के लिए काम करना असहनीय था। उन्हें यह महसूस होने लगा था कि वे भी एक अनैतिक व्यवस्था का हिस्सा हैं, जिससे वे लगातार बेचैन होते जा रहे थे। समाज में घटित घटनाओं को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने के बजाय, वे उन्हें तोड़-मरोड़ कर पेश करते थे, उनके लाभकारी पहलुओं को बढ़ा-चढ़ाकर बताते थे, परेशानी पैदा करने वाले पहलुओं को दबा देते थे, विपक्षी दल की छोटी-मोटी खामियों को हज़ार गुना बढ़ा देते थे और कुछ खबरों को तो पूरी तरह से दबा देते थे।
मासिक वेतन पर 'टिब्यून' में काम करने के बजाय, तलवार के नए साप्ताहिक अखबार में काम करना अधिक शांतिपूर्ण होगा - यह भावना रविंद्र के मन में घर करने लगी। लेकिन - दिल्ली जाना और वहीं रहना -! अगर तलवार का साप्ताहिक अखबार दिल्ली की जगह किसी और गाँव में होता, तो इतना सोचने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती।

■

संकाय की कार्यकारी समिति की बैठक थी। इसके लिए जब पाटिल वकीलों के साथ अपनी कार में जा रहे थे, तो उन्होंने रविंद्र से पूछा,
"क्या! उसने तुम्हारा अखबार खरीद लिया, है ना? वो भी जनता के पैसे से?"
रवींद्र ने पाटिल को सारी सच्चाई बता दी। जब ट्रेन टिपटूर पहुँची, तो उसने अपनी समस्या पाटिल के सामने रखी। इस पर उसने कहा,
“अगर आपके पास करोड़ों रुपये की पूंजी नहीं है, तो आप अखबार कैसे शुरू करेंगे? मुझे लगता है, मैंने सोचा था, मुझे इसे लिखना होगा – इस संतुष्टि के बिना, मैं छोटे अखबारों या साप्ताहिकों में कुछ भी हासिल नहीं कर पाऊंगा!”
कार्यकारी बैठक के बाद, पाटिल अपनी कार से बेंगलोर लौट गए, और बाद में, अन्नाय्या से बात करते समय, रविंद्र ने उसी विषय को उठाया। अन्नाय्या ने कहा,
मैंने यह भी देखा कि आपके अखबार में काफी बदलाव आ गया है। शंकरमूर्ति-चंद्रशेखर भी यही बात कह रहे थे...
यह कहकर अन्नाय्या कुछ क्षण चुप रहे। फिर उन्होंने कहा,
गांधीजी के देहांत के बाद सभी गांधीवादियों ने क्या किया? नेहरू परिवार की राजनीति का सामना करना असंभव समझते हुए, उनमें से कई ने ग्राम पुनर्निर्माण का अपना मार्ग अपनाया। मुझे विश्वास है कि देर-सवेर लोग हम जैसे लोगों के प्रयासों का महत्व समझेंगे। हम इसी विश्वास के साथ यह विद्यालय चला रहे हैं। तलवार एक नया साप्ताहिक अखबार निकाल रहे हैं, यह बहुत अच्छी बात है। लेकिन मुझे नहीं लगता कि इससे कोई फायदा होगा। टिब्यून इतने वर्षों तक सरकार और भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ता रहा, है ना? उससे क्या हासिल हुआ? क्या भ्रष्टाचार हर महीने और हर साल बढ़ा या घटा? अब उसी भ्रष्टाचार ने आपके टिब्यून को खरीद लिया है। आपका शुरू किया हुआ नया साप्ताहिक अखबार उससे अलग कैसे होगा? अगर विदेश में कोई मंत्री रिश्वत लेता है, तो आसपास के घरों की पत्नियां मंत्री की पत्नी से बात नहीं करतीं। स्कूल में, दूसरे बच्चे भ्रष्ट मंत्री के बेटे का मजाक उड़ाते हैं - इतना कि बच्चे स्कूल जाना ही छोड़ देते हैं! चूंकि वहां पूरे समाज का नैतिक स्तर इतना ऊंचा है, इसलिए अखबारों में छपी बातों का महत्व है। लेकिन यहां क्या स्थिति है? जैसे ही समाज के बड़े-बुजुर्गों को पता चलता है कि कोई मंत्री या अधिकारी भ्रष्ट है, वे अपनी बेटियों को उसके बेटे से और

अपनी बेटियों को अपने बेटों से शादी कराने के लिए बेताब हो जाते हैं! अगर कोई मंत्री या अधिकारी बेदाग हो, तो कितने लोग उसके साथ ऐसा रिश्ता बनाने के लिए आगे आएंगे? बताइए-"
रविंद्र को यह मुद्दा विशेष रूप से महत्वपूर्ण लगा। मंत्री का भ्रष्टाचार चाहे जितना भी उजागर हो जाए, लोग फिर भी उसे ही वोट देते हैं! सिर्फ इसलिए कि वह हमारी जाति का है! या इसलिए कि हमें उससे किसी न किसी तरह का लाभ मिलने वाला है! अगर कोई रिश्वतखोर हाथ चाट ले तो इसमें क्या बुराई है? सब यही कह रहे हैं! सबने इसे स्वीकार किया है। तो फिर हम रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद और ऐसी ही अन्य चीजों को नैतिक अपराध कैसे कह सकते हैं? इसके विपरीत, इन लोगों को अखबारों में खूब प्रचार मिलता है और चुनावों में उन्हें इसका फायदा भी मिलता है।
कुछ देर बाद अन्नाय्या ने कहा,
इसीलिए मैं कहता हूं कि इस भ्रष्ट सत्ता को राजनीति के माध्यम से हराना संभव नहीं है। क्योंकि ये राजनेता जनता पर निर्भर हैं। इन्होंने एक ऐसी सोच बना रखी है कि पवित्र जीवन और भ्रष्ट जीवन में कोई अंतर नहीं है। हमारा गणतंत्र है - जैसा जनमानस, वैसे ही शासक! भ्रष्टाचार के आरोप लगने पर ये कहते हैं - जनता की अदालत में हम निर्दोष हैं - हम आपकी अदालत नहीं मानते - हम जनता की अदालत मानते हैं! फिर से समाज पर चुनाव थोपे जाते हैं और यही भ्रष्ट लोग विपक्ष को हराकर दोबारा चुने जाते हैं! इस बारे में आपका क्या कहना है? क्या हमें इस कारण लोकतांत्रिक शासन को नकार देना चाहिए?
रवींद्र ने कुछ नहीं कहा। अन्नाइया कोई नई बात नहीं कह रहा था। लेकिन उसके भाषण से भ्रष्ट समाज की जो समग्र तस्वीर उभरी, वह पहले कभी नहीं देखी गई थी।
क्या इस देश के लोग हमेशा से भ्रष्ट थे? अपने भाग्य के लिए कोई दृढ़ निश्चय किए बिना, यह देश एक के बाद एक शासकों के हाथों में जाता रहा। पुराने आक्रमणकारी भी धीरे-धीरे यहाँ के भ्रष्टाचार में लिप्त हो गए और नए आक्रमणकारियों के सामने बेबस हो गए! यदि हमारे महाराजा, हमारे नवाब-सुलतान भ्रष्ट न होते, तो मुट्ठी भर अंग्रेज इतने बड़े देश पर शासन कैसे कर पाते?
अन्नाय्याचा ने कहा,
अखबार चलाना एक तरह से राजनीति ही है! मेरा मानना है कि अगर हम देश का निर्माण करना चाहते हैं, तो हमें ऐसे स्कूल चलाने चाहिए। आज की पीढ़ी को सुधारना हमारे बस में नहीं है, लेकिन हम कम से कम अगली पीढ़ी को तो सुधार ही सकते हैं!
"लेकिन भले ही उन्होंने कहा था कि वे स्कूल चलाना चाहते हैं, राजनीति आड़े आ गई, है ना? परशुराम गौड़ा, राजस्व मंत्री, मुख्यमंत्री - और अब खुद प्रधानमंत्री!"
अब आप उस बोझ से मुक्त हो गए हैं, है ना? पहले मैं क्या सोचता था? मैं गांव के बच्चों के लिए भोजन, वस्त्र, चरित्र निर्माण और आश्रय की बात करता रहता था, मुझे लगता था कि यह सब व्यर्थ है। लेकिन परशुराम गौड़ा मामले के कारण, पूरे देश से बच्चे यहां आने लगे – और मुझे एहसास हुआ कि हमें भी इसी तरह अपने काम का विस्तार करना चाहिए! बड़े अधिकारी, उद्योगपति, विभिन्न पेशेवर – वे आसानी से अपने बच्चों को अलग-अलग स्कूलों में भेज सकते थे। फिर भी, उन्होंने बच्चों के चरित्र को अधिक महत्वपूर्ण समझा, इसलिए उन्होंने अपने बच्चों को हमारे स्कूल में भेजा। इसका असर जरूर पड़ेगा! इस उम्र में अच्छे चरित्र का विकास होता है, इसलिए इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वे किस क्षेत्र में रहते हैं! वे तन, मन और आत्मा से शुद्ध होकर काम करेंगे! ऐसे लोग अपने सहकर्मियों और अधीनस्थों पर जरूर प्रभाव डालेंगे! इसलिए मेरी बात सुनो – पत्रिका के पीछे भागने के बजाय, आपको स्कूल के क्षेत्र में उतरना चाहिए। आप एक साल तक

हमारे स्कूल में पूर्णकालिक काम करो। फिर भारत के किसी भी कोने में, जहाँ आप चाहें, इसी तरह का एक और स्कूल शुरू करो!
वही सपना रविंद्र की आँखों के सामने तैरने लगा। अन्नायाह कहते हैं, यह सच है। जितनी ज़रूरत है उतनी पत्रिकाएँ सामने आ रही हैं! - वे संसद और विधानसभा में फैली अराजकता को रोज़ाना समाज के सामने पेश कर रही हैं। लेकिन नतीजा? शासक अपनी बुलंद आवाज़ और मिलने वाले बहुमत के दबाव में विपक्षी दलों की आवाज़ को दबा देते हैं! हमें ऐसे लोगों की ज़रूरत है जो बहुमत के दबाव और मुखरता से दबकर चुप रहकर अपने चरित्र का संतुलन बनाए रखें! विपक्षी दल कितने ईमानदार हैं?
बैंगलोर जाने के बाद भी वे एक सप्ताह तक इसी विचार में डूबे रहे। बाद में उन्होंने दिल्ली को अपना इस्तीफा भेज दिया। उसमें उन्होंने लिखा – मैं अपने पद से इस्तीफा दे रहा हूँ क्योंकि सरकारी अखबार 'ट्रिब्यून' के संपादक के रूप में मुझ पर जानबूझकर दबाव डाला जा रहा है, जो सरकार और सत्ताधारी दल के हाथों की कठपुतली बन चुका है। नियमों के अनुसार, मैं तीन महीने का वेतन देने को तैयार हूँ या यूं कहें कि मैं वहाँ तीन महीने काम करने को तैयार हूँ।
लेकिन अधिकारियों ने बिना किसी हिचकिचाहट के उनका इस्तीफा स्वीकार कर लिया और तुरंत उनका भविष्य निधि फंड बैंगलोर के एक बैंक में भेज दिया और राशि का चेक भेजकर उन्हें रिहा कर दिया! इसके बाद, रविंद्र को तीन दिनों के भीतर घर खाली करना पड़ा। अपना आधा सामान शांतामूर्ति के घर और आधा अन्य दोस्तों के घरों में रखने के बाद, उन्होंने शांतामूर्ति को कार बेचने की जिम्मेदारी सौंपी और अपने कपड़े और चिथड़े लेकर विश्वविद्यालय के लिए निकल पड़े। जाते समय उन्होंने शांतामूर्ति को चेतावनी दी - अपने दिए हुए इस्तीफे का महिमामंडन मत करना - यह खबर किसी भी अखबार में मत छपने देना - क्योंकि उनका दृढ़ निश्चय होता जा रहा था कि इस तरह के हंगामे और गड़बड़ी से कुछ भी हासिल नहीं होगा।

■

रवींद्र को स्कूल में रहते हुए पंद्रह दिन हो गए थे। एक दिन होन्नाटी भी वहाँ आया। वह सीधे अन्नय्या के कमरे में गया। अन्नय्या उसे देखकर खुश हुआ। उसे यहाँ से बैंगलोर गए चार साल हो गए थे। बैंगलोर में रहते हुए वह दो बार यहाँ आया था। लेकिन बैंगलोर से दिल्ली आने के बाद पिछले तीन सालों में वह एक बार भी यहाँ नहीं आया था। उसने किसी को अपने बारे में नहीं बताया था। अब वह अचानक आ गया! उसके बाकी रूप को देखकर ऐसा नहीं लगता कि वह दिल्ली से आया है। उसने साफ-सुथरा, लेकिन पुराना पजामा और कमीज पहनी हुई थी। हालाँकि उसकी दाढ़ी थी, लेकिन धूप में चलने से उसका चेहरा झुलस गया था। तेल और पानी की कमी के कारण उसके बाल रूखे थे - वैसे, ऐसा कहने का कोई कारण नहीं है! अब यह आदमी भी लगभग चौवालीस या पैंतालीस साल का होगा। उसके पास सितार नहीं था! उसके कंधे पर एक थैला था - बस इतना ही उसके पास था।
उन्होंने कहा, "बिदारली गेट से सड़क की हालत में सुधार हुआ है! मैंने कई कारों को आते-जाते देखा।"
"पूरी दुनिया बदल रही है! तुम कहाँ से आए? तुम कहाँ थे? तुम्हारी कोई खबर नहीं है!" अन्नाय्या ने पूछा।
मैं एक साल पहले दिल्ली छोड़कर चला गया था। मैं ऐसे ही घूमता रहता था। बाद में मैं मथुरा के श्रीहरि संगीत विद्यालय गया। वह विद्यालय एक साधु चलाते हैं। वहाँ भी अच्छे कलाकार हैं! लेकिन मुझे वहाँ भी ऊब महसूस होने लगी। संगीत को बढ़ावा देने से क्या हासिल होगा? मैं कुछ वास्तविक काम करना चाहता था। मैं शरभन्ना-शंकरमूर्ति और अन्य जैसे छात्रों को पढ़ाना चाहता था – मैं यहाँ रहकर स्कूल का बाकी काम करना चाहता हूँ, इसलिए मैं यहाँ आया हूँ। क्या मेरे लिए

स्कूल में दाखिला संभव है? यहाँ का माँहौल भी बदला हुआ लगतों है। छात्र अलग दिखते हैं – ईंट-सीमेंट की इमारतें बन रही हैं!
अन्नाय्या ने कॉलेज की पूरी कहानी सुनाई।
आप जोगीगुड्डा में रह रहे थे, वह तो बस एक बहाना था। अब सब कुछ साफ हो गया है। यह सिर्फ परशुराम गौड़ा की साज़िश नहीं थी। राजस्व मंत्री, यहां के मुख्यमंत्री और देश के प्रधानमंत्री इसके पीछे हैं। पूरे भारत का भ्रष्टाचार हमारे जोगीगुड्डा को घेर चुका है! आपको भी सब पता होगा, बताइए! आप यहां खुशी से रहिए – विश्वविद्यालय के लिए जो भी काम कर सकते हैं, कीजिए। अगर आपके मन में कोई नया विचार हो, तो मुझे बताइए--"
अन्नाइया ने शंकरमूर्ति, सोमशेखराचार्य, चंद्रशेखर और शरभन्ना को संदेश भेजकर आमंत्रित किया। होन्नाटी को देखकर वे भी प्रसन्न हुए। उन्हें यह जानकर संतोष हुआ कि वह भी संगीत छोड़कर उन्हीं की तरह छात्रों को पढ़ाने जा रहे हैं। सोमशेखराचार्य ने भी कहा,
मैंने पहले भी कहा था, एक दिन होन्नाटी यहाँ आएगा और हमारी तरह ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए बच्चों को पढ़ाना जारी रखेगा! किसी व्यक्ति को देखते ही आप उसके आंतरिक स्वभाव को तुरंत समझ जाते हैं!
होन्नाटी के रहने की व्यवस्था कहाँ की जाए, यह सवाल कुछ समय तक अनसुलझा रहा। अनुप की पहल पर होन्नाटी के लिए बनाया गया छोटा सा घर, जो आज भी संगीत विद्यालय के नाम से जाना जाता है, अब रामचंद्र मास्तार का था। रामचंद्र मास्तार, जो स्कूल के व्याख्यान के बाद सारा दिन ध्यान में लीन रहते थे, उन्हें वहाँ से कोई भी हटाना नहीं चाहता था। इसके अलावा, होन्नाटी को अब शांत और एकांत वातावरण की आवश्यकता भी नहीं थी।
उसी समय रविंद्र भी वहाँ पहुँच गया। होन्नाटी को देखकर वह भी आश्चर्यचकित रह गया। रविंद्र को यह जानकर विशेष प्रसन्नता हुई कि होन्नाटी यहाँ स्थायी रूप से कामगार के रूप में रहने आया है। अगर हम स्कूल खोलने का फैसला करते हैं, तो होन्नाटी उसका सबसे मजबूत स्तंभ बन सकता है! बातचीत फिर से शुरू हो गई।
"हमें उन्हें तुरंत कहां छोड़ देना चाहिए?"
रविंद्र ने जल्दी से कहा,
"मेरे कमरे में जगह है! होन्नाटीज़ को वहीं रहने दो। मैं उनसे भी उतनी ही बातें कर सकता हूँ।"
अन्नाय्या भी यह बात समझ गया था। वह हेमंत के लिए भी अपने कमरे का इंतज़ाम कर सकता था। लेकिन उसका कमरा सिर्फ़ उसका नहीं था। वह तो लगभग एक सरकारी दफ्तर जैसा था! इसलिए वहां हमेशा कोई न कोई आता-जाता रहता था।
रविंद्र ने होन्नाटी का बैग उठाया और चला गया। लेकिन होन्नाटी, असमंजस में पड़कर पीछे हट गई और बोली,
"नहीं, नहीं! आप इतनी परेशानी क्यों उठा रहे हैं?"
“क्या समस्या है? मुझे भी वही कंपनी मिल जाएगी! मैं बाकी सब की तरह चुप नहीं रह सकता! अरे, मैं पत्रकार हूँ! हमें बात करनी चाहिए—” उसने कहा और चलने लगा। लेकिन अब होन्नाटी के पास उसके पीछे जाने के अलावा कोई चारा नहीं था।
■
बातचीत के दौरान, रविंद्र ने होन्नाटी को बताया कि उन्होंने इस्तीफा दे दिया है और यहां आ गए हैं। होन्नाटी ने पिछले एक साल में अखबार नहीं पढ़ा था। फिर भी, एमबीए कर चुके होन्नाटी के लिए कृषि के बारे में सीखना मुश्किल नहीं था। हालांकि यह सच है कि व्यापार, अर्थशास्त्र और अर्थशास्त्र में नैतिकता व्यक्तिगत विशेषताओं पर निर्भर करती है, लेकिन इनपुट-आउटपुट की भाषा में, जहां सभी ज्ञान की आवश्यकता होती है, यह अपरिहार्य है कि व्यक्तिगत नैतिकता की भी

कुछ सीमाएँ होंगी! उन्हें यह भी याद आया कि उन्होंने बेंगलुरु में अपनी निजी नौकरी छोड़ते समय इन सभी बातों पर समग्र रूप से विचार किया था।
इस समय रविंद्र को होन्नाटी में कुछ बदलाव महसूस हुआ। होन्नाटी सीधे नज़रें मिलाने से क्यों बच रहा था और बोल क्यों नहीं रहा था? मानो उसने कुछ बहुत बड़ा खो दिया हो, वह सिर झुकाकर, नज़रें चुराकर और लड़खड़ाते हुए बोल रहा था। देश के सर्वश्रेष्ठ संस्थानों से एम.टेक और एम.बी.ए. जैसी डिग्रियाँ प्राप्त करने के बाद भी वह इस तरह नज़रें क्यों चुराकर बोल रहा था? होन्नाटी, जिसने कम उम्र में ही अच्छी-खासी तनख्वाह और सुख-सुविधाओं वाली नौकरी छोड़ दी और संगीत की पढ़ाई शुरू की - बाद में मुंबई, जोगीगुड्डा, बेंगलोर - हाँ, ऐसा ज़रूर हुआ होगा!
जब आप बेंगलोर में थे, तो आपने मुझे संगीत के लिए अपने घर में रखा था - तबला संगत की व्यवस्था की थी - लेकिन मैंने बीच में ही संगीत छोड़ दिया - "ऐसा कुछ तो उनके दिमाग में रहा होगा!"
रविंद्र ने पूछा,
"आपने अचानक संगीत क्यों छोड़ दिया? हमारी मुलाकात दिल्ली में हुई थी, और आप बनारस गए थे। आप कुछ बड़ी बैठकों की तैयारी भी कर रहे थे, है ना?"
"मैंने संगीत को अचानक नहीं छोड़ा। मैंने इसे धीरे-धीरे छोड़ा। मैंने उस क्षेत्र को सम्मान के कारण छोड़ा जिसमें आपने हर तरह से मेरी मदद की थी!" यह कहते हुए हेमंत का चेहरा उदास था।
आपको ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि मैंने आपकी कोई मदद की! मैंने आपकी किस काम में मदद की? आप कुछ दिनों के लिए अपने भाई के घर रुके थे। उस समय मुझे आपका साथ भी मिला - बस इतना ही। लेकिन मैं आपको बता भी नहीं सकती कि उस समय मैं कितनी खुश थी। हर दिन आपके सितार की धुन सुनते हुए सोना कितना बड़ा सौभाग्य था! आपने उस संगीत को छोड़ दिया जिसके लिए आप इतने जुनूनी थे! इसके पीछे कोई न कोई कारण जरूर होगा। मुझे यकीन है कि आप जैसे विचारक बिना सोचे-समझे ऐसा फैसला नहीं लेंगे। अगर इससे आपको कोई परेशानी है, तो मुझे मत बताइए...
इसमें कुछ कहने की ज़रूरत नहीं है। क्या मैंने आपको दिल्ली में होने वाली दूसरी बड़ी सभाओं और उनसे होने वाले आर्थिक लाभ के बारे में नहीं बताया था? इस क्षेत्र में भी प्रचार और लेन-देन की ज़रूरत होती है। विजय मिश्रा जैसा महान कलाकार! कला के नज़रिए से, पूरे भारत में उनके स्तर का दूसरा कलाकार मिलना मुश्किल है! लेकिन मानवीय दृष्टिकोण से, उनमें एक छोटी-सी व्यावसायिक सोच भी है! यह सब देखकर मैं थक गया था, फिर धीरे-धीरे संगीत में मेरी रुचि बढ़ी। अगर मुझे व्यापार करना होता, तो मैं अपने एम.टेक. एमबीए की मदद से आसानी से सौ गुना ज़्यादा मुनाफा कमा सकता था! मैंने वह सब छोड़ दिया और इस क्षेत्र में आ गया। अगर मुझे यहाँ भी वही हिसाब-किताब करना है, तो इसमें क्या हर्ज है? इसी बारे में सोचते हुए मेरी मुलाकात एक बैरागी से हुई। यानी, हमारे अन्नाइय्या-शंकरमूर्ति जैसे। वे एक महान संगीतकार थे। बिना पैसे की उम्मीद किए, वे मथुरा में एक संगीत विद्यालय चलाते हैं। सभाओं से मिलने वाला पैसा वे इसी संगीत विद्यालय में लगाते हैं। कुछ पैसे बच्चों की मदद में भी लगाते हैं। इसके साथ ही, मेरा संपर्क ध्यान, उपनिषद और अन्य आध्यात्मिक विषयों से भी हुआ। मैं वहाँ कुछ दिन रहा, लेकिन उससे भी ऊब गया, इसलिए यहाँ आ गया। ऐसा नहीं है कि मैंने संगीत पूरी तरह छोड़ दिया। लेकिन मुझे यह एहसास नहीं था कि जीवन का पूरा अर्थ इसमें ही निहित है! इसके बारे में मैं आपको बाद में बताऊँगा..."
ये सब कहते हुए भी, रविंद्र को महसूस हो रहा था कि हेमंत अपनी आँखों से नहीं बोल रहा है। चलो चलते हैं - धीरे-धीरे पता चल जाएगा कि वह ऐसा व्यवहार क्यों कर रहा है - उसका दिमाग इतना संकीर्ण क्यों हो गया है।

■

उस रात दोनों एक ही कमरे में सोए। रविंद्र को जल्दी ही नींद आ गई। लेकिन दो दिन की ट्रेन यात्रा और उसके बाद बस यात्रा की सारी भागदौड़ के बावजूद, होन्नाटी को नींद नहीं आई।

उन्हें पता था कि रविंद्र का कॉलेज से गहरा संबंध है और वे समय-समय पर बैठकों के लिए आते-जाते रहते हैं। लेकिन उन्होंने कभी नहीं सोचा था कि वे अपनी नौकरी छोड़कर यहाँ रहने आ जाएँगे और उन्हें यहाँ पहले ही दिन अपने कमरे में सोना पड़ेगा। उन्हें अंधेरे में चुपचाप उठकर अपना बैग उठाने और बिना कोई आवाज़ किए निकल जाने की तीव्र इच्छा हुई।

होन्नाटी एकदम से उठ बैठी। चारों ओर सन्नाटा पसरा हुआ था। उह—दीवार के सहारे सो रहे रविंद्र की हल्की सी आवाज़, दरवाज़े की आवाज़—अगर उन्हें सुनाई भी देती, तो वे सोचते कि मैं बाथरूम जा रही हूँ और अपना बिस्तर ठीक करके वापस सो जाते!—

होन्नाटी चाहे कितनी भी देर वहाँ बैठा रहता, उठना नामुमकिन था। उसे लगता था कि बिना कुछ कहे यहाँ से निकलना नामुमकिन है। माता-पिता को बिना बताए घर छोड़ना मुमकिन था। लेकिन यहाँ से ऐसे ही निकलना नामुमकिन क्यों था? छी – क्या हमें यहाँ आना ही नहीं था? घर छोड़ना इतना आसान कैसे था? इतनी शिक्षा पाने के बाद मैंने संगीत के लिए नौकरी छोड़ दी, उस समय उसे जो पीड़ा हुई वह असहनीय थी। जब मैं दिल्ली गई, तो उसने इस उम्मीद में एक शब्द भी नहीं कहा कि "मैं कम से कम इस कला में शीर्ष पर तो पहुँच ही जाऊँगी!" अगर मैंने उसे उस समय कहा होता कि "मुझे अब संगीत में कोई दिलचस्पी नहीं है – मैं संगीत छोड़ रही हूँ", तो क्या वह इसे इस अर्थ में नहीं लेता कि मेरी जान को कोई खतरा नहीं है? इतने वर्षों के अभ्यास के बाद – अब जब विजय मिश्रा के साथ कार्यक्रम की तारीखें तय हो चुकी हैं, तो क्या वह हैरानी से मुझसे कारण नहीं पूछता? फिर भी, उसके प्रति मेरी नफरत संगीत के प्रति नफरत में बदल गई – मुझे ऐसा नहीं होने देना चाहिए था। मुझे अपने मन पर काबू रखना चाहिए था – लेकिन मैं नहीं रख सका! दिल्ली छोड़ने का दबाव अंदर ही अंदर बढ़ता जा रहा था।

पाप ने मुझे जकड़ रखा था, और वह जरा भी दूर नहीं हुआ। कोई और रास्ता नहीं बचा था, इसलिए मैंने दिल्ली छोड़कर हरिद्वार चला गया। हिमालय से उतरी गंगा में स्नान करने के बाद भी, मेरे मन में बैठा पाप दूर होने को तैयार नहीं था। उसी समय मैंने सोचा, अगर माया द्वारा निर्मित भारत की राजधानी इंद्रप्रस्थ दिल्ली गंगा के किनारे बसी होती, तो उसकी पवित्रता नष्ट हो जाती और वह सड़क बन जाती।

दस दिनों तक मैंने गंगा में स्नान किया, दुकानों से रोटियाँ खाईं और गंगा के किनारे बैठकर मनुष्य और उससे उत्पन्न होने वाले पापों के बीच के संबंध पर चिंतन किया। फिर मैंने सोचा कि बद्रीनारायण क्यों न जाया जाए। मैंने ऋषिकेश से बस पकड़ी और बद्रीनारायण के लिए रवाना हो गया।

बद्री के एक धर्मशाला में कंबल ओढ़कर बैठे हुए, अलकनंदा नदी के किनारे टहलते हुए, गर्म झरनों में डुबकी लगाते हुए और नर और नारायण पर्वतों की बर्फ से ढकी चोटियों को निहारते हुए - पता नहीं क्यों - ऐसा लगा मानो मेरे शरीर से चिपका हुआ पाप ढीला हो गया हो।

एक दिन, जब मैं धर्मशाला में कंबल ओढ़कर बैठा था, तभी मेरे कानों में रुद्र वीणा की ध्वनि सुनाई दी। जी हाँ – मंदिर के लाउडस्पीकर से। पहाड़ों से घिरे बद्री क्षेत्र में गूंजती हुई वो ध्वनि – कैसेट? रिकॉर्ड? जी हाँ – ये भैरव हैं! भैरव जो गहरी नींद में सोए जानवरों को धीरे से जगाते हैं! नहीं – कैसेट नहीं। कोई बजा रहा है –

हम कंबल ओढ़कर मंदिर पहुँचे। जब हमें एक शांत जगह मिली, तो हमने एक बैरागी को रुद्रावी बजाते हुए देखा। हमारे सामने एक माइक्रोफोन रखा था। हमारे साथ कोई वाद्य यंत्र नहीं थी। इसका अर्थ था कि ईश्वर की सेवा जारी थी।

जब मैंने मंदिर में पंडित जी से इस बारे में पूछा, तो उन्होंने कहा,
ये मथुरा के ओंकार बाबा हैं। वे गर्मियों में एक महीने के लिए यहां भगवान की सेवा करने आते हैं।
उन्होंने आगे बताया कि ओमकार बाबा, जो पूरे देश में संगीत कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं, अपनी सारी कमाई मथुरा के एक संगीत विद्यालय पर खर्च करते हैं। वहां गरीब छात्रों के रहने और खाने की व्यवस्था भी की गई है।
मैं ओंकार बाबा के सामने बैठ गया। उनकी उम्र लगभग साठ वर्ष थी, दाढ़ी-मूंछ थी और उनके बाल गर्दन के चारों ओर घुंघराले थे।
वहाँ किसी को भी शास्त्रीय संगीत में रुचि नहीं थी। मंदिर के कर्मचारी अपने-अपने काम में व्यस्त थे और भक्त एवं आगंतुक अपनी भक्तिमय भाव में डूबे हुए थे तथा ठंड का आनंद ले रहे थे। परन्तु ओंकार बाबा देवताओं को अपनी संगीतमय सेवा अर्पित करने में तल्लीन थे। यह सचमुच शुद्ध संगीत है!
मैं इस भैरव राग को कैसे बजाता? मैं राग को और कहाँ तक विस्तारित कर सकता था? संगीत कार्यक्रम में आकर मैं और क्या कर सकता था? हे भगवान! ओंकार बाबा का राग विस्तार करने का तरीका अपर्याप्त है। वे राग के हर पहलू की सुंदरता को प्रदर्शित करने में असफल रहते हैं। कला केवल ईश्वर भक्ति से परिपूर्ण नहीं होती। इसके लिए हिमालय और गंगा के तट आवश्यक नहीं हैं। उन्हें कला के प्रति समर्पण चाहिए!
तो मैं यहां क्यों आया? मैं संगीत उद्योग में कुछ हासिल करने के लिए यहाँ नहीं आया। तो मुझे क्यों परेशान होना चाहिए?
भैरव ने वादन समाप्त करते ही सामने देखा और मुझे पाया। श्रोताओं को उत्सुकता से देखते ही उनकी आँखें चमक उठीं और राग पूरा किए बिना ही उन्होंने आगे वादन शुरू कर दिया। अब उनका वादन उनके अंतर्मुखी स्वभाव से बाहर आ चुका था और प्रशंसा बटोर रहा था। जब वे त्रिताल समा राग पर पहुँचे, जिसे मैंने थोड़ा घुमाकर प्रस्तुत किया था, तो उनके चेहरे पर जीत की खुशी स्पष्ट झलक रही थी।
उसके बाद, उससे मेरी जान-पहचान अच्छी तरह से गहरी हो गई, उसने मुझे मंदिर की धर्मशाला में एक कमरा भी दिलवा दिया। बातचीत के दौरान उसने मुझे अपने बारे में बताया। मैंने भी उसका नाम लिए बिना उसे सब कुछ बता दिया।
सब कुछ सुनने के बाद उन्होंने कहा,
"हो सकता है कि संगीत के प्रति उस महिला के प्रेम ने उसे संगीतकार बना दिया हो। अगर हम अपने दिल में इस भावना को मजबूत करें कि हम भगवान के लिए संगीत बजा रहे हैं, तो ऐसा नहीं होगा।"
यह सुनकर ऐसा लगा मानो कोई रास्ता मिल गया हो। मुझे आज भी याद है – अलकनंदा नदी के किनारे-किनारे ब्रह्मकपालका की ओर टहलते हुए, उन्होंने मुझसे पूछा और मैंने भी उनके ओंकार संगीत विद्यालय में जाकर रहने की इच्छा व्यक्त की।
मथुरा में पहले तीन महीने काम करने में बीते। मेरी जिम्मेदारियों में से एक संगठन में आने वाले पैसों का सही ढंग से प्रबंधन करना था।
एक दिन, जब मैं कुछ हिसाब-किताब कर रहा था, बाबा पास की कक्षा के बच्चों को 'मत जाओ, राधे अकेले जमुना के तिर–' सिखा रहे थे। 'राधे' का उच्चारण अलग-अलग तरीकों से सुनकर मेरे मन में यह सवाल आया कि क्या कृष्ण पर कभी किसी दूसरी स्त्री के साथ यौन संबंध बनाने का आरोप नहीं लगा था? हालाँकि कांति मुझसे उम्र में छोटी थीं, लेकिन उनकी उपलब्धियाँ मुझसे कहीं अधिक थीं – हमारा रिश्ता कुछ ऐसा ही था।
मुझे हर तरह की चीज़ों से घृणा हो रही थी, और जब मैंने दोपहर में बाबा से इसके बारे में पूछा, तो उन्होंने कहा,

"आपको ऐसा इसलिए लगता है क्योंकि आप इसे भौतिक स्तर से देखते हैं। अगर आप इसे आत्मा और परम आत्मा के दृष्टिकोण से देखें, तो आपको घृणा नहीं होगी। उस अर्थ में, हम सब राधा हैं। इसीलिए मैं कहता हूँ, संगीत में आध्यात्मिकता का स्पर्श आवश्यक है!"
"तो फिर वे इस रिश्ते को कृष्ण के मित्र के रूप में मानते हुए क्यों नहीं गाते और नाचते?"
ओंकार बाबा क्रोधित हो गए और बोले,
आप ये क्या बात कर रहे हैं! क्या आपको लगता है कि हमारे कृष्ण किसी ट्रांसजेंडर के साथ छेड़छाड़ कर रहे थे?
ईस तरह बहस करने से मन दूषित हो जाएगा, इसलिए मैंने बहस से परहेज़ किया। लेकिन मेरे मन में संगीत के प्रति गहरी घृणा उत्पन्न होने लगी - केवल संगीत के प्रति ही नहीं, बल्कि सभी कलाओं के प्रति। क्या सभी कलाओं का मूल स्वभाव भावनाओं को भड़काना और उत्तेजित करना, मन के कोने-कोने में प्रवेश करना और विभिन्न प्रकार की भावनात्मक संवेदनाओं को जगाना है - जिससे नैतिकता और मन की शांति नष्ट हो जाती है? फिर इससे मन को शांति कैसे मिल सकती है? उनकी लंबी और नियमित सांसों से यह स्पष्ट था कि रविंद्र गहरी नींद में सो रहे थे। मैंने सब कुछ छोड़कर यहाँ क्यों आया? उस समय मुझे कैसा महसूस हुआ?
ऐसी कोई कला नहीं है जो पापों को धोकर मन को शुद्ध कर सके। मुझे दृढ़ विश्वास था कि यह शक्ति कर्म योग में निहित है और फिर मुझे कॉलेज की याद आ गई। उस समय भी, मुझे स्वतंत्र रूप से कुछ भी करने का मन नहीं हुआ। मैं क्यों करूँ? वैसे भी, इसके बाद मुझे यहाँ से जाना ही होगा।

■

जब मैं सोई, तब भोर हो चुकी थी। जब होन्नाटी सुबह उठी, तब तक स्कूल शुरू हो चुका था। रविंद्र कमरे में नहीं था। मुझे बिस्तर से उठने का मन नहीं कर रहा था। संगीत में मेरी रुचि पूरी तरह से खत्म हो चुकी थी। मुझे किसी और चीज़ में कोई दिलचस्पी नहीं थी। मुझे अचानक याद आया, इसीलिए तो मैं यहां आई थी - उसी की वजह से संगीत में मेरी यह अरुचि पैदा हुई थी। उसके प्रति मेरा गुस्सा भड़क उठा। उसने मेरी हर चीज़ बर्बाद कर दी। मैं उस समय बैंगलोर में रहती थी - उसने मेरे माता-पिता को अलविदा कहने का बहाना बनाकर मुझे बैंगलोर से दिल्ली ले आई। वहाँ ले जाकर उसने मुझे पूरी तरह से तबाह कर दिया! मैं चुपचाप ट्रेन से दिल्ली गई और सीधे उसके घर जाकर उसका गला घोंट दिया।
वह उठा और चेहरा धोने के लिए बाथरूम में गया, लेकिन उसके मन में उसकी हत्या का ख्याल आते ही उसे खुद से घृणा होने लगी। यह कहने का क्या फायदा कि वह बस गिर गई थी? क्या मैं यह कह सकता हूँ कि इसमें मेरी कोई गलती नहीं थी? अगले डेढ़ साल तक मैं लंपट बन गया था, इस बात से इनकार करने का क्या फायदा? रवींद्र के बारे में जो अपराधबोध मुझे आज सता रहा है, वह उन डेढ़ सालों में मेरे मन में क्यों नहीं आया? इस सवाल के साथ ही उसके मन में खुद के लिए नफरत कई गुना बढ़ गई।
स्नान करने के बाद, वह छात्रावास के डॉरमेटरी में गया। वहाँ उसके लिए रखा नाश्ता खाते समय वह आश्चर्यचकित रह गया। पूरी-भाजी! और तो और, उसमें इस्तेमाल की गई सामग्रियाँ आस-पास के गाँवों से नहीं लाई गई थीं! यह अच्छी आर्थिक स्थिति वाले माता-पिता के बच्चों का छात्रावास था! अब यहाँ बैंगलोर में विशेष शिक्षा प्राप्त रसोइये रखे गए थे। रात को खाना खाते समय होन्नाट्टी को इस बात का एहसास नहीं हुआ था। उसने रविंद्र से इस कॉलेज पर आई विपत्तियों के बारे में सुना था। अन्नाय्या ने भी उसे सब कुछ बताया था और यह भी बताया था कि उसने इसके लिए क्या किया था। फिर भी, होन्नाट्टी को इसका सही अर्थ समझ नहीं आया था। शाम को स्कूल खत्म होने के बाद, उसे देखना चाहिए कि अब स्कूल में

किस तरह के बच्चे पढ़ रहे हैं। उसे गाँव में हाल ही में खुले सरकारी स्कूल को भी देखना चाहिए।
जब वह कमरे में लौटा तो रविंद्र भी वहीं था। उसने कहा,
मुझे नहीं लगता कि मैं यात्रा के दौरान सोया था!
होन्नाटी इस पर बस हंस पड़ा। उसे लगा कि बातचीत के दौरान उसका जाना ठीक नहीं होगा, इसलिए वह चटाई पर बैठ गया। रविंद्र बोलने लगा,
मैंने आपको बताया था ना कि मैं एक नई जगह पर इसी तरह का एक और स्कूल शुरू करने की सोच रहा हूँ? कोई मुझे बैंगलोर के पास बैनरघट्टा के दूसरी तरफ चालीस एकड़ ज़मीन देने को तैयार है। उनकी बस एक ही शर्त है कि स्कूल का नाम उनकी माँ के नाम पर रखा जाए। क्या हमारे पाटिल वकील नहीं हैं? उन्होंने ही इस दानदाता को ढूँढा है। हम सब एक जगह बैठकर क्या करें? मैं सुबह से यही सोच रहा हूँ। पहले हमें एक संस्था पंजीकृत करानी चाहिए। फिर हमें ज़मीन स्वीकार करनी चाहिए। चलो हम दोनों वहाँ एक झोपड़ी बनाते हैं और वहीं रहने लगते हैं। चलो सीमेंट की चादरों से एक छोटी सी इमारत बनाते हैं और पहली कक्षा शुरू करते हैं। अगर हम ईमानदारी से काम करें, तो भारत के कोने-कोने से माता-पिता अपने बच्चों को हमारे स्कूल में भेजेंगे। संस्था का विस्तार करना बहुत मुश्किल नहीं है। आप मेरे साथ रहिए। हम जितना चाहें उतना काम कर सकते हैं। अगर हम एक की जगह दो हों, तो हम बात कर सकते हैं, चर्चा कर सकते हैं और फैसले ले सकते हैं। इसके अलावा, हमें अकेलापन भी महसूस नहीं होगा। हम दोनों एक-दूसरे को पहले से जानते हैं। साथ मिलकर काम करना मज़ेदार होगा!
आज भी रविंद्र का उस पर विश्वास देखकर होन्नाटी का हृदय आनंद से भर गया। फिर, मानो उसका सिर पारा से भर गया हो। उसे लगा कि उसके साथ जीवन भर रहना मृत्यु तक पाप और अज्ञानता की पीड़ा को पल-पल सहते हुए जीने के समान होगा!
रविंद्र ने आगे कहा,
"तुम अब भी इसके बारे में सोचती हो - तुम कल यहाँ आई थी! मैं इस तरह के काम में लंबे समय तक रह सकती हूँ, मुझे इससे बहुत लगाव है, बस तभी तुम आती हो!"
रविंद्र के निमंत्रण ने होन्नाटी को असहज कर दिया। किसी भी स्थापित संगठन में काम करते-करते ऊब जाना स्वाभाविक है। यहाँ तो रविंद्र स्वयं एक नया संगठन शुरू करने का निमंत्रण दे रहे थे!
क्या हमें उनका हाथ कसकर पकड़ना चाहिए - अहम् - उनके पैर थामकर उन्हें पूरी सच्चाई बता देनी चाहिए और उनसे माफ़ी मांगनी चाहिए - अहम् - कि हम उनके दिए दंड को भुगत लें - उन्हें बता दें कि हम इस पाप और ज्ञान के कारण पिछले एक साल से भटक रहे हैं और उनसे विनती करें कि "बड़े भाई को छोटे भाई को उसकी गलतियों के लिए दंडित करने का अधिकार है"? उनके सामने सब कुछ बताते समय, एकतरफ़ा चित्रण नहीं होगा - हम उन्हें अकेला पापी नहीं बना रहे हैं, है ना! - हमें उन्हें यह बात ध्यान में रखकर बतानी चाहिए। भले ही हम इसके बाद किसी को बताए बिना चले जाएं, हमारे दिल की जलन कम नहीं होगी। अगर मैं अपनी गलती मान लूं और उनकी कही बातों के कारण यहां से चला जाऊं, तो मुझे दंड भुगतने का संतोष अवश्य मिलेगा!
उसने तय किया कि वह रविंद्र को सब कुछ बता देगा और आगे जो भी होगा उसका सामना करेगा। उसी उत्साह के साथ उसने चप्पल पहनी और वहाँ से निकल गया। वह होन्नाटी परिवार के लिए विशेष रूप से बनाए गए उस घर को देखना चाहता था, जो इलाके के बिलकुल आखिरी छोर पर, एक ऐसी जगह पर बना था जहां बिलकुल भी यातायात नहीं था। बैलगाड़ी से बनी चौखट से गुजरते हुए उसने ऊपर देखा। जी हाँ! अनूप नाम के एक छात्र ने उसमें विशेष रुचि दिखाई थी

और एक नक्शा तैयार किया था – उसने पहल करके निर्माण कार्य भी देखा था। होन्नाटी परिवार को अनुप से विशेष लगाव था, एक कारण तो यह था कि वह रविंद्र का बेटा था और दूसरा कारण उसका उत्साही स्वभाव और काम के प्रति उसकी विशेष लगन थी! उसने इतनी कम उम्र में कितने उत्साह से यह घर बनाया था!
अनुप को देखे हुए कितने साल हो गए! कांति बता रही थी कि वो मैसूर के एक इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ रहा है। अब हमारा उससे रिश्ता कितना अजीब हो गया है! उसके माता-पिता के साथ हमारा रिश्ता सरल और पवित्र था, उसके साथ भी हमारा रिश्ता उतना ही पवित्र था। अब उससे हमारा रिश्ता कैसा है? मैं उसकी माँ हूँ - उफ़! मेरा मन बार-बार उसी बात पर लौट आता है - चाहे मैं वर्तमान और भविष्य को भुला दूँ, अतीत से जुड़ा यह रिश्ता मुझे हमेशा सताता रहेगा!
उसने अजीबोगरीब ढंग से बने घर को देखा और जोगीबेट्टा की ओर चलने लगा। कुछ दूर चलने के बाद – अरे! उसके सिर के चारों ओर अनगिनत मक्खियाँ भिनभिना रही थीं! उसने सोचा कि इस जगह की सारी यादें फिर से जागृत हो गई होंगी, इसीलिए तो ये प्रकट हुई हैं। ये कहाँ छिपी हुई थीं? जैसे ही इन्हें किसी व्यक्ति का सिर दिखता है, ये उसके चारों ओर चक्कर लगाने लगती हैं और उसका पीछा करने लगती हैं! जब ये किसी खास जगह पर पहुँचती हैं, तो एकदम गायब हो जाती हैं और जब फिर से वहाँ कदम रखती हैं, तो फिर से प्रकट हो जाती हैं! – ज़रूर पिछले जन्म के पाप होंगे, है ना!

पिछले जन्मों के पापों का फल इस जन्म में भुगतना पड़ेगा – यानी इस जन्म में हमें जो कुछ भी भुगतना पड़ेगा, उस पर हमारा कोई अधिकार नहीं है? हमें अपने कर्मों पर तो अधिकार है, है ना? ऐसा लगता है कि जब हम हाथ हिलाते हैं तो मक्खियाँ काफ़ी दूर चली गई हैं – लेकिन इससे पहले कि हम हाथ नीचे करें, वे फिर से हमारे सिर के चारों ओर चक्कर लगाने लगती हैं – बिना एक-दूसरे से टकराए – अपनी मर्जी से – भले ही हमने उन्हें पाँच-छह बार भगाया हो, वे उसी तरह हमारे सिर के चारों ओर चक्कर लगाती रहीं।
काफ़ी चढ़ाई चढ़ने के बाद वह रुका और दूर तक देखने लगा। दूर सीमेंट की चादरों से बनी कुछ बस्तियाँ दिखाई दे रही थीं। पास ही पाँच-छह—जी हाँ, छह—टक खड़े थे। कुल अन्नाइया कह रहा था, और उसे याद आया—यह सारा इलाका, यह पहाड़ी, और सौ मीटर तक ज़मीन के नीचे जो भी मैंगनीज मिलेगा, उसे ट्रकों से ट्रिपटूर भेजा जाएगा, वहाँ से रेलगाड़ी से मैंगलोर और फिर वहाँ से बड़े जहाज़ों से ईरान भेजा जाएगा, जो पेट्रोल से समृद्ध हो चुका है! अगर परिवहन का खर्च वहन नहीं किया जा सकता, तो यहाँ तक विचार किया गया है कि यहाँ एक कारखाना स्थापित करके केवल लोहे का निर्यात किया जाए। वह देश उस कारखाने के लिए आवश्यक पूंजी देने को भी तैयार है!
अभी भी बहुत गर्मी थी। होन्नाटी को पहाड़ पर चढ़ने का मन हुआ। उसे याद आया कि जब वह यहाँ रहता था, तो उसे यहाँ के हर पत्थर में संगीत महसूस होता था – उसे ऐसा लगता था कि यहाँ की हवा भी संगीत की आवाज़ सुन सकती है। यह महसूस करते हुए कि अगर वह इस भावना में धीरे-धीरे कदम बढ़ाएगा, तो उतरते समय अंधेरा हो जाएगा, उसने तेज़ी से कदम बढ़ाना शुरू कर दिया।
पर्वत पर चढ़ाई शुरू होने से पहले एक मेहराब दिखाई दिया। वह नया लग रहा था। वहाँ से ऊपर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनाई गई होंगी। मेहराब पर श्री जोगनाथेश्वर लिखा हुआ था। उसके नीचे उतने ही बड़े अक्षरों में लिखा था, 'हलुकरे के दिवंगत मैजबान सौद्रगौड़ा के पोते परशुराम गौड़ा की सेवा के प्रति कृतज्ञता में–'
जैसे ही मैं सीढ़ियाँ चढ़ी, चारों ओर वही पेड़ थे—पत्थर जो सूरज की रोशनी में चमक रहे थे और आपस में टकराने पर 'धप-धप' की आवाज़ कर रहे थे! तेज़ हवा

जो मेरे कानों को भेद रहा था!—यहाँ वह जगह थी! यहाँ वह जगह थी जहाँ मैंने सितार तोड़ा था और उसका खोल फेंक दिया था!
होन्नाटी पूरी तरह से जोगिगुड्डा की चोटी तक फैला हुआ था। जोगिनथा मंदिर के सामने – लेकिन मंदिर में प्रवेश द्वार से ठीक पहले, एक विशाल मेहराब के नीचे – एक फर्श भी बिछाया गया था। उस पर लिखा था, "कर्नाटक के माननीय मुख्यमंत्री और माननीय राजस्व मंत्री वेंकप्पा ने कृपापूर्वक इस जोगिबेट्टा का दौरा किया और हलुकेरे के दिवंगत स्वामी सौद्रगौड़ा के पोते परशुरामगौड़ा की सेवा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए इसे जनता को भेंट किया है।" इत्यादि। पूरा पाठ बड़े अक्षरों में लिखा गया था।
अब होन्नाटी को समझ आया – यह महज़ एक मेहराब नहीं था। यह एक द्वार भी था। वह द्वार बंद था। इसलिए किसी के अंदर जाने का तो सवाल ही नहीं था! उसकी चाबी किसके पास होगी? वडेरय्या के पास या परशुरामगौड़ा के पास? होन्नाटी चार साल पहले यहाँ से चले गए थे – उसके बाद यहाँ कौन आएगा? मंदिर के द्वार पर गोदरेज का नया पीतल का ताला लगा हुआ था। अगर किसी भक्त को जोगीनाथ के दर्शन करने होते, तो उसे हलुकेरे जाकर परशुरामगौड़ा से चाबी लेनी पड़ती – ओह – चानाराइपट्टन, तहसीलदार परशुरामगौड़ा को मुहर लगी लिखित अर्जी देनी पड़ती, वहाँ से हलुकेरे आना पड़ता, वडेरय्या को साथ लेकर जोगीबेट्टा पर चढ़ना पड़ता, वडेरय्या की मौजूदगी में दोनों ताले खोलने पड़ते, दर्शन करने पड़ते – फिर तालुका अदालत में वापस जाकर चाबी लौटानी पड़ती – वाह! इसे कहते हैं सरकारीकरण! अहेम – परशुरामीकरण!
होन्नाटी द्वार के बाहर खड़ा हुआ, अपनी आँखें बंद कीं और मन ही मन हाथ जोड़कर जोगनाथ के शिवलिंग को अपने सामने ले आया।
वह चला गया। मैंने संगीत के लिए सब कुछ त्याग कर कई साल बिताए – क्या यह सब एक भ्रम था? इस कला ने मुझे क्यों दिया? जब मैंने सब कुछ त्याग कर इस कला को अपनाया, तब मेरी क्या अपेक्षाएँ थीं?
बल्कि, यह स्कूल वास्तविक है, अन्नय्या और उनके अन्य साथियों का आदर्शवाद महज़ भ्रम नहीं है। यहाँ तक कि रविंद्र भी उनमें से एक है! क्या वह सचमुच संगीत की ओर आकृष्ट है, जो ऐसे रिश्ते को खराब कर सकता है? नहीं! उसका स्वभाव ही ऐसा नहीं है कि वह संगीत को सर्वोपरि माने।
सूरज डूबने लगा था। होन्नाटी ने अपनी गति बढ़ा दी। रात में ऐसी सड़क पर सांप और बिच्छू आसानी से मिल जाते हैं – इसलिए हमें यहाँ से जल्दी निकलकर बस्ती की ओर चलना चाहिए! उसके मन ने उसे आगाह किया, उसे रविंद्र को सब कुछ नहीं बताना चाहिए! इसमें कोई शक नहीं कि जब उसे सब पता चलेगा तो उसे दुख होगा। मेरे किए पाप के लिए उसे दुख क्यों होना चाहिए? मैं जानता हूँ कि उसका अपनी पत्नी से कोई संबंध नहीं है। वह मुझसे सच्चा प्यार करता है! अगर सच्चाई जानने के बाद उसका मानवता पर से विश्वास टूट जाए तो क्या होगा? अब वह एक नया संस्थान शुरू करने की सोच रहा है जो बच्चों में अच्छे संस्कार डालेगा। अगर उसमें ज़रूरी मानवीय प्रेम न हो तो क्या होगा? पत्नी की वजह से उसे जो भी सदमा लगा हो, लगने दो – लेकिन वह अपने दोस्त के इस तरह के व्यवहार से होने वाले इस दर्द को नहीं सहना चाहता! मैं पापी हूँ – मैं इतने समय से इसी पाप से ग्रस्त हूँ, लेकिन मुझे क्या हक है कि मैं उस व्यक्ति को सब कुछ बताऊँ जिसने कोई पाप नहीं किया और उसे दुख पहुँचाऊँ?
जब वह यह सोच रहा था, तभी उसका इंतजार कर रही मक्खियाँ लयबद्ध तरीके से उसके सिर के चारों ओर मंडराने लगीं।

■

अन्नाइयाह अन्य सहकर्मियों के साथ चर्चा में मग्न थी। यह स्पष्ट नहीं था कि संकाय में होन्नाटी को क्या काम सौंपा जाए।

"हमारे पास बाकी सभी व्यवस्थाएं हैं - बस संगीत की व्यवस्था नहीं है। हमें प्रत्येक कक्षा में दो घंटे संगीत पढ़ाना चाहिए और उन बच्चों को पढ़ाना जारी रखना चाहिए जो इसमें रुचि रखते हैं। ऐसा करने से हम उनकी प्रतिभा का पूरा उपयोग कर पाएंगे और साथ ही उन्हें अपनी पसंद का काम करने का आनंद भी मिलेगा!"
विद्यालय का हारमोनियम टूट गया है। सबसे पहले हमें इसे ठीक करके वापस लाना होगा।
लेकिन होन्नाटी ने कहा-
मैं संगीत को छोड़कर कुछ भी पढ़ाने के लिए तैयार हूँ—मैं कुछ भी करने के लिए तैयार हूं!
यह सुनकर सब हैरान रह गए। लेकिन सबने सावधानी बरती कि उन्हें उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई काम न सौंपा जाए। इसके अलावा, किसी ने भी उन पर आने वाले दिन से काम शुरू करने का दबाव नहीं डाला।
सबको पूरा यकीन था कि अगर उसे कुछ दिनों के लिए अकेला छोड़ दिया जाए, तो वह कोई न कोई काम ज़रूर कर लेगा। अब नए भवन बनाने का काम भी था। सबको लगा कि उन्हें उस काम की ज़िम्मेदारी सौंपी जा सकती है। उन्हें कुछ कक्षाओं में पढ़ाने का काम भी दिया जा सकता था।
बैनरबेटा से आगे की ज़मीन के दस्तावेज़ों को जल्द से जल्द पूरा करना ज़रूरी था, इसलिए उससे पहले संगठन का पंजीकरण कराना आवश्यक था। रविंद्र इसी काम के लिए बेंगलुरु जा रहे थे। होन्नाटी ने अभी तक उन्हें कोई पक्का जवाब नहीं दिया था। उन्होंने मीघम से कहा, "मुझे पक्का नहीं पता कि मैं कर्नाटक में रहूँ या बाहर। मुझे सोचने के लिए कुछ और समय चाहिए!" चूंकि पाटिल के वकीलों को बेलगाम जाना था, इसलिए रविंद्र ने उनकी मदद से ज़मीन के दस्तावेज़ों को पूरा करने का फैसला किया और बेंगलुरु जाने का निश्चय किया। वह चाहते थे कि अन्नाय्या भी उनके साथ चलें। इसलिए, दोनों ने सोमवार सुबह जल्दी निकलने का फैसला किया था।
शुक्रवार शाम को रविंद्र के नाम से एक मोटा लिफाफा आया। पता स्पष्ट रूप से नहीं लिखा था। उस पर केवल टिब्यून के संपादक और बैंगलोर का पता लिखा था। बैंगलोर से किसी ने लिफाफे को यहाँ भेजा था। उस पर लाल स्याही से 'निजी' लिखा था और उसके नीचे दो लाइनें खींची हुई थीं। लिफाफे पर भेजने वाले का कोई निशान नहीं था।
रविंद्र ने लिफाफा खोला और अंदर देखा। उसमें एक टाइप किया हुआ कागज़ था। पत्र पर न तो तारीख थी, न पता, और न ही हस्ताक्षर। इसके बजाय, केवल "आपका शुभचिंतक" लिखा था।
यह पत्र सीधे रविंद्र को संबोधित था। सरकारी अदालत में कई अनैतिक गतिविधियों की जांच करने में रुचि रखने वाले इतने बड़े संपादक को अपने मित्र और उनकी पत्नी के बीच के संबंधों और वहां चल रही बेईमानी के बारे में जरूर पता होगा। विडंबना यह है कि 'शुभकामनाएं' देने वाले पत्र लेखक ने व्यंग्यों से भरपूर होकर आगरा और शिमला के उन होटलों के बारे में विस्तृत जानकारी दी, जहां वे ठहरे थे, उनके नाम और तारीखें बताईं, यह भी बताया कि कैसे उनकी पत्नी की मित्र शीतल गुप्ता ने उन्हें अपना फ्लैट इस्तेमाल करने दिया, कैसे कांति ने अपने सितार वादक मित्र के हितों को ध्यान में रखते हुए रोज पेंटा में हरिशंकर के लिए तीस हजार रुपये खर्च करके एक पार्टी दी - यहां तारीख भी दी गई थी। पत्र में प्रत्येक स्थान से एक व्यक्ति का उल्लेख किया गया था - जिनसे और अधिक जानकारी प्राप्त की जा सकती थी।
अंततः इसे लिख लिया गया,
आपको यह बताने की ज़रूरत नहीं है कि आप जांच-पड़ताल में कितने कुशल हैं! आपका काम आसान बनाने के लिए, पत्र में जानबूझकर सभी विवरण विस्तार से

दिए गए हैं। अगर आपको सच्चाई जानने में दिलचस्पी नहीं है, तो कौन क्या कहेगा! आपको अपनी पत्नी को जो चाहे वैसी आज़ादी देने का पूरा अधिकार है!
रविंद्र तुरंत समझ गया कि यह पत्र केंद्र सरकार द्वारा अपने खुफिया विभाग के माध्यम से कांति की मानसिक सेहत बिगाड़ने के लिए भेजा गया था। कांति को संगीत में हमेशा से रुचि थी। वह दिल्ली के संगीत जगत में सक्रिय रही होगी। वह शायद वहां कहीं गई भी होगी। वह कौन है? उसका नाम क्या है? - हरिशंकर। वह भी इसी क्षेत्र में सक्रिय होगा। उसे अखबार में यह नाम पढ़ने की याद आई। कांति ने शायद कभी इस हरिशंकर को पार्टी दी होगी। उसने यह भी सुना था कि इन सभी अलग-अलग घटनाओं को एक कहानी में पिरोकर संबंधित लोगों को पीड़ा पहुंचाना आजकल की राजनीति का हिस्सा है।
उसके चेहरे पर हलकी सी मुस्कान आ गई। उसका मन कर रहा था कि वह यह पत्र होन्नाटी को दिखाए, जो उसके सामने चटाई पर बैठकर स्कूल की लाइब्रेरी से एक किताब पढ़ रहा था, और सरकार की आलोचना करे। लेकिन यह याद करके कि पत्र में वास्तव में होन्नाटी पर ही आरोप लगाया गया था, वह चुप रहा। उसे ये सब बातें बताकर परेशान करने का क्या फायदा, यह सोचकर वह उठा, चप्पल पहनी और टहलने के लिए बाहर चला गया।
बाहर थोड़ी दूर चलने के बाद मुझे लगा कि यह सरकार का काम नहीं हो सकता। क्योंकि नौकरी छोड़े हुए दो महीने हो चुके थे। इस काम के लिए सरकार की एक शाखा है, तो उन्हें पता होना चाहिए था कि मैं अब नौकरी पर नहीं हूँ। इसके अलावा, ट्रिब्यून अब पूरी तरह से सरकारी अखबार बन चुका है। रांका और उसके बेटों का जो काम था, वह भी हो चुका है। इसलिए, अखबार के आंतरिक मामलों की जांच के लिए नियुक्त सीआईडी को सरकार ने हटा दिया होगा। इसका मतलब है कि इस पत्र में 'शुभचिंतक' कोई और ही है। हालाँकि मुझे ऐसे गुमनाम पत्र पर भरोसा करना ठीक नहीं लगा, लेकिन मैं यह भी जानता था कि कई मामलों में ऐसे पत्र रहस्यों और खुलासों की ओर ले जाते हैं।
सभी बस्तियों से दूर एक तटबंध पर बैठे हुए, उन्होंने एक बार फिर अपनी जेब से पत्र निकाला और उसे देखा। एक बार फिर, धीरे-धीरे उसमें लिखे प्रत्येक वाक्य को पढ़ते हुए, तिथियों और स्थानों के विवरण, आगरा और शिमला के होटलों के नाम, शीतल वर्मा और उनके कार्यस्थल आदि को देखते हुए, उन्हें लगा कि इनमें से कुछ घटनाएँ तो अवश्य सत्य होंगी। किसी ने सब कुछ बारीकी से देखकर ही यह पत्र लिखा होगा। यदि आप दिल्ली जाकर थोड़ी छानबीन करें, तो सब कुछ सत्यापित करना आसान है। क्यों नहीं?
लेकिन एक तरफ तो उसका मन चकनाचूर हो गया था। कांति ऐसा व्यवहार कैसे कर सकती थी? उसे शादी के बाद दोनों के बीच का घनिष्ठ और मधुर रिश्ता याद आ गया। धीरे-धीरे वह मिठास फीकी पड़ गई और वह मुझसे नफ़रत करने लगी। उसे मिलने वाला पैसा अपर्याप्त लगने लगा। उसे ट्रेन में सेकंड-थर्ड क्लास में सफर करने में हीन भावना महसूस होने लगी। इसीलिए उसने अपना खुद का व्यवसाय शुरू किया और एग्जीक्यूटिव क्लास में सफर करने लायक बन गई और उसे इसका फल भी मिला! दोनों का रिश्ता कभी टूटा नहीं।
फिर भी... वो अभी भी किसी और आदमी के साथ है।
उसका दिल उदासी से भर गया। अगर उसने ऐसा करने के बजाय तलाक लेकर दोबारा शादी कर ली होती, तो शायद वह इतनी दुखी न होती। उसने चिट्ठी से नज़रें हटाकर नीचे देखा।
पत्र से स्पष्ट था कि वह होन्नाटी के साथ लगभग डेढ़ साल से रिश्ते में थी। अब वह होन्नाटी से नाराज़ था। हाँ! उसकी ओर देखे बिना बोलने के तरीके और संगीत छोड़ने के उसके तरीके को देखते हुए, इस पत्र की बातों को पूरी तरह से नकारा

नहीं जा सकता। रवींद्र ने ऐसी आवाज़ में कहा जो केवल उसी के मुंह से सुनी जा सकती थी।
`कृतघ्न!'
मैं अब कमरे में जाकर उसके सामने यह पत्र रख दूंगा और उससे पूछूंगा,
"मुझे सच बताओ! क्या यह सब सच है? मुझसे झूठ मत बोलो! मैं दिल्ली जाकर सब कुछ पता लगा सकता हूँ।"
ये सोचते हुए, जब मैं उठा, चप्पल पहनी और अपने कमरे में लौटा, तो मेरे मन में आया, 'उसके सामने चिट्ठी फेंककर मैं क्या पुण्य कमाऊंगा? होन्नाटी से ये कहने का क्या मतलब है, 'तुमने मेरी चीज़ ले ली,' जबकि वो मेरी है ही नहीं?' ये सोचते ही उसके कदम लड़खड़ा गए। समझ न आने पर वह फिर से उसी जगह बैठ गया। उसके दिमाग का सारा गुस्सा पिघल गया और उसकी आंखों से आँसुओं के रूप में बह निकला। उसके व्यभिचार को तो बर्दाश्त किया जा सकता है; लेकिन क्या होन्नाटी को ऐसा करना चाहिए? ये सोचते ही वह फूट-फूटकर रोने लगा।
कुछ देर मन को शांत करने के बाद, उन्होंने रुमाल से अपनी आंखें और चेहरा पोंछा। उन्हें छींक आई और वे तब तक खाली जगह को घूरते रहे जब तक उनका मन शांत नहीं हो गया। दूर से अनुपानम होन्नाट्टी के लिए बनी एक इमारत दिखाई दे रही थी। रामचंद्र मास्टर दरवाजा खोलकर अंदर जा रहे थे। रामचंद्र मास्टर, जो यहां किसी भी चीज़ पर ध्यान दिए बिना अपनी ध्यान साधना में इतने मग्न थे, यहां क्यों रुके रहे? वे यहाँ से चले क्यों नहीं गए और ध्यान के अगले स्तर पर पहुंचे किसी गुरु की खोज क्यों नहीं कर ली? एक बात तो निश्चित है – रामचंद्र मास्टर किसी भी परिस्थिति में अपने मन को विचलित नहीं होने देते। यहां किसी ने भी उन्हें क्रोधित नहीं देखा है। क्या यह शक्ति ध्यान से आती है? तो फिर हमें भी ध्यान क्यों नहीं करना चाहिए?
बहुत सोच-विचार के बाद उसने एक फैसला लिया। दिल्ली जाने से पहले इस बारे में किसी से बात करने का कोई फायदा नहीं था। और तब भी, उसे इस बारे में सोचना होगा और तय करना होगा कि बात करनी है या नहीं।

■

द्वितीय श्रेणी के डिब्बे में यात्रा करते हुए, रविंद्र ने पहले आगरा में उतरकर यह पता लगाने का फैसला किया कि क्या होन्नाटी और कांति किसी दिन शीशमहल होटल में एक ही कमरे में रुके थे। लेकिन ऐसी स्थिति में, कोई भी अपना असली नाम और पता नहीं बताने को तैयार था। इसलिए, उसने सोचा कि केवल यही संभव है कि यह देखा जाए कि क्या पत्र होन्नाटी के पत्र से मिलते-जुलते हैं। लेकिन अगर वह तीन साल पुराने रजिस्टर मांगता, तो कोई भी उसे नहीं देता। पुराने रजिस्टर कोठी के किसी कमरे में रखे गए होंगे। होटल मालिक की अनुमति के बिना उस कमरे की चाबी मिलना संभव नहीं था। इसलिए, प्रबंधक भी मदद नहीं कर सकता था। उसे यह भी लगा कि वे उस पर भरोसा नहीं करेंगे, यह सोचकर कि 'कुछ गड़बड़ लग रही है - क्यों इसमें उलझें'। अगर हम शिमला के होटल में भी पूछताछ करने जाते, तो भी यही होता - पुलिस के सहयोग के बिना ऐसी पूछतीछ नहीं की जा सकती। अगर मैं सारा मामला किसी निजी जासूस को सौंप दूं और उससे जांच करने को कहूं... तो इसमें कम से कम छह से आठ हजार रुपये का खर्चा आएगा! और इसका क्या कारण है? चाहे मैं उससे कह दूं कि उसका मुझसे कोई लेना-देना नहीं है, उसके बाद वह कैसा भी व्यवहार करे, मुझे उस पर ध्यान क्यों देना चाहिए?
इस विचार ने उसका सारा उत्साह खत्म कर दिया। उत्तर दिशा की ओर जा रही ट्रेन की खिड़की से बाहर के नज़ारे देखते हुए कुछ देर बैठने के बाद, उसे एक बात स्पष्ट हो गई – उसे उसका इम्तिहान लेने की कोई ज़रूरत नहीं थी। न ही उसका ऐसा कोई इरादा था। लेकिन होन्नाटी? होन्नाटी ने ऐसा व्यवहार क्यों किया? अगर

उसे पता चल गया तो क्या होगा? अगले स्टेशन पर उतरकर बैंगलोर वापस क्यों नहीं लौट जाती?
अगला स्टेशन डेढ़ घंटे बाद आया, फिर भी वह ट्रेन से नहीं उतरा। दिल्ली पहुंचकर उसने स्टेशन के पास एक सस्ते होटल में कमरा लिया, नहाया, मैनेजर से टेलीफोन डायरेक्टरी माँगी और शीतल गुप्ता नाम की महिला का पता ढूँढ़ने लगा। उसे ग्रेटर कैलाश अपार्टमेंट का पता मिला। बाद में उसे याद आया कि शादी के शुरुआती दिनों में कांति चार-पाँच दोस्तों का ज़िक्र किया करता था, और उनमें शीतल का नाम भी था। बचपन की गहरी दोस्ती के बिना ऐसे मामलों में किसी से मदद लेना मुमकिन नहीं था। इसके अलावा, उसके दफ्तर का पता भी मेल खा रहा था। क्या उसे शीतल से दफ्तर में मिलना चाहिए या घर पर? दफ्तर में मिलना आसान नहीं था – और होना भी नहीं चाहिए था। घर पर मिलना बेहतर होगा! उसने घड़ी देखी। दोपहर के तीन बज रहे थे। उसने थोड़ी देर आराम किया, फिर उठा, कपड़े बदले, मैनेजर के पास गया और शीतल के घर का नंबर डायल किया।
हेलो, कौन बोल रहा है?
मेरा नाम रविंद्र है। मैं बैंगलोर से आया हूँ। मैं 'ट्रिब्यून' का संपादक था। मैं आपसे मिलने आया हूं..."
"ओह!" वह एक पल के लिए रुकी, फिर बोली, "हमारा काम क्या है? हम सरकारी कर्मचारी हैं! अखबार वाले हमसे नहीं मिल सकते। मैं आपसे नहीं मिलना चाहती!"
"यहां अखबार के काम का कोई जिक्र नहीं है। मैंने वह नौकरी छोड़ दी है। अब मैं यहां अपने निजी काम से आया हूं। मैं आपसे मिलना चाहता था और किसी महत्वपूर्ण बात पर चर्चा करना चाहता था। हमारी शादी में आपकी मुलाकात हुई थी। क्या आपको याद है कि मैं कौन हूं? या आप भूल गए हैं?"
हां। मुझे याद आ गया! क्या वे हमारे कांति के मेज़बान नहीं हैं?
हां।
"भाई! तुमने मुझे यह बात पहले क्यों नहीं बताई? और आने से पहले फोन करने की क्या ज़रूरत थी? तुम्हें सीधे घर आकर घंटी बजानी चाहिए थी।"
मैंने यह देखने के लिए फोन किया था कि आप घर पर हैं या नहीं।
"चलिए! बिलकुल चलिए। अब छह बज गए हैं। हम यहीं रात का खाना खाएंगे। अगर आप जाने वाले हैं, तो मैं चुप नहीं रहना चाहती," उसने स्नेहपूर्वक कहा।
उसे पक्का पता है कि कांति से उसका कोई लेना-देना नहीं है। अगर वह इतनी दोस्ताना है कि रोज़ अपने घर की चाबी देती है, तो उसने ज़रूर उसे अपने जीवन के बारे में बताया होगा। इसके अलावा, वह अपनी सहेली को भी रोज़ चाबी देती थी – इसका मतलब है कि उसका कोई पति नहीं है। उसने दोबारा डायरेक्टरी निकाली और उसमें देखा – मिस शीतल। उसने बस पकड़ी और ग्रेटर कैलाश की ओर चल पड़ा। वहाँ पहुंचकर शीतल का फ्लैट ढूंढना ज़्यादा मुश्किल नहीं था। एक समृद्ध इलाके में आलीशान फ्लैट। नीचे सभी के लिए कार पार्क करने की काफ़ी जगह थी। अपार्टमेंट के पास खाकी वर्दी में एक हट्टा-कट्टा चौकीदार खड़ा था। जब उसने शीतल से उसके काम के बारे में पूछा, तो उसने उससे पूछा कि वह क्या कर रहा है और लिफ्ट की ओर इशारा किया।
चौथी मंज़िल।
चौथी मंज़िल पर एस. गुप्ता के नाम की घंटी बजते ही खुल गई। शीतल ने हाथ बढ़ाकर और स्नेहपूर्वक हाथ मिलाकर उसका स्वागत किया।
"नमस्कार! तुमसे मिले हुए पच्चीस साल हो गए! लेकिन तुममें ज़रा भी बदलाव नहीं आया। हम्म। तुम्हारे सिर के बाल थोड़े कम हो गए हैं! बेशक—पुरुषों की नज़र में, यह बुद्धिमत्ता की निशानी भी है! चलो! आज मेरी कुटिया तुम्हारे चरणों की धूल से पवित्र हो गई है!"

रविंद्र उसके पीछे-पीछे लाउंज में गया। आलीशान कालीन, ठंडी एयर कंडीशानिंग, भारी सोफा सेट, घर में बिखरी हुई विदेशी वस्तुएं – सब कुछ स्पष्ट था! ऐसे अकाउंट डिपार्टमेंट में नौकरी के साथ, इसमें कोई संदेह नहीं कि वेतन और सुविधाएं भी बहुत अच्छी होंगी।
जब वह सोफे पर बैठ गया, तो उसने कहा,
मैंने पास के एक होटल से शाकाहारी खाना भेजने को कहा है। अगर आप कभी घर आएं और मैं रसोई में रोटियां पका रही होऊं, तो कोई बातचीत नहीं होगी! खाना आने तक आप क्या खाएंगे? क्या फ्रिज में पर्याप्त सामान है, या आपको कुछ और खरीदना पड़ेगा? संकोच करने की कोई बात नहीं है। हालांकि मैं इसे खुद इस्तेमाल नहीं करती, लेकिन मैंने आप जैसे खास दोस्तों के लिए कुछ चुनिंदा आयातित वाइन रखी हैं! अगर मुझे कुछ ही बार खरीदना पड़े, तो सिर्फ फ्रेंच वाइन ही चलेगी!
"आज नहीं। मुझे ठंडा पानी दे दो या कम से कम एक कोक ही दे दो।"
दस-पंद्रह मिनट एक-दूसरे से सवाल-जवाब करते हुए बीत गए। रविंद्र जानता था कि जब तक वह इस विषय पर बात शुरू नहीं करेगा, कुछ भी पता नहीं चलेगा। किसी के बारे में गहराई से छानबीन करके जानकारी निकालना उसके लिए कोई नई बात नहीं थी। फिर भी, उसे अपनी पत्नी के बचपन की दोस्त से उसके चरित्र के बारे में जानकारी निकालना मुश्किल लग रहा था। लेकिन उसने यह सोचकर पूछताछ शुरू कर दी कि यह भी कारोबार का ही एक हिस्सा है।
"मैं आपसे एक विषय पर बात करने आया हूँ। शायद आपको इस विषय पर बात करने में झिझक हो। लेकिन मुझे माफ़ कर दीजिए! मैं ईश्वर की कसम खाता हूँ कि आपसे जो कुछ भी सीखूंगा, वह किसी और को नहीं बताऊंगा। मुझ पर भरोसी रखिए। यह पत्र!" उसने अपनी जेब से पत्र निकालकर उसे देते हुए कहा।
शीतल ने पत्र पढ़ना शुरू किया। चारों दीवारों पर लटके खूबसूरत दीपों की रोशनी में उसके काले बालों की जड़ों में मौजूद बारीक सफेद बाल सफि दिखाई दे रहे थे। जैसे-जैसे वह हर पंक्ति पढ़ती, उसकी भौहें आश्चर्य से ऊपर उठतीं और फिर नीचे झुक जातीं।
पूरा पत्र पढ़ने के बाद, उसने उसे धीरे-धीरे दोबारा पढ़ना शुरू किया। फिर उसने बीच में कहा,
"कोई शरारत कर रहा है! आप गुमनाम पत्रों को इतनी अहमियत क्यों देते हैं?"
हम इस बात पर ज़ोर कैसे दे सकते हैं कि खबर देने वाला व्यक्ति अपना नाम और पता बताए? इसके बजाय, मैं आपसे एक सीधा सवाल पूछता हूँ, इसका जवाब दीजिए। इसमें कहा गया है कि आप डेढ़ साल से अपने फ्लैट की चाबी होन्नाटी को दे रहे थे। क्या यह सच है? सच बताइएं - आपको जवाब न देने का अधिकार है। अगर आप चुप रहते हैं, तो मैं मान लूंगा कि आप कुछ छिपाने की कोशिश कर रहे हैं, यह बात आप भी जानते हैं!
"तुम मुझे क्यों मुसीबत में डाल रहे हो? कांति तो मेरी बचपन की दोस्त है।"
"इसके बिना कोई भी आपको आपके घर की चाबी नहीं देगा!"
मैंने चाबी अपने दोस्त को दे दी थी, तो वो मेरे घर का इस्तेमाल सेक्स के लिए कर रहा था – मुझे माफ़ करना! क्या तुम्हें लगता है कि वो नज़दीकी बढ़ाने के लिए ऐसा कर रहा था? मेरे दिमाग में कभी ये बात आई ही नहीं। तुम्हें दिल्ली की गर्मी तो पता ही है ना? यहाँ एयर कंडीशनिंग है, तो होन्नाटी के साथ रियाज़ करना सहने लायक होगा, इसलिए कांति ने फ्लैट की चाबी माँगी – मैं ये भी समझ गई थी, तो मैंने उसे डुप्लीकेट चाबी दे दी। इतनी गर्मी में रिक्शा में सितार लाना बेचारे लोगों के लिए झंझट था, इसलिए वो उन्हें अपनी एयर कंडीशन वाली कार में यहाँ छोड़ रही थी – ये भी सच है। लेकिन मैं उन्हें कैसे बताऊँ कि वो घर में क्या कर रहे थे?

दिलली के ऊंचे तबके में रहने वाले किसी को ऐसे सवाल नहीं उठते। किसी ने गुमनाम चिट्ठी लिखी थी, तो तुम भी क्यों परेशान हो गईं?
"मैंने सोचा, इसके पीछे कोई और कारण जरूर होगा। क्या वह होन्नाटी छोड़ने के बाद यहीं रुकी थी, या वह जा रही थी? अगर ऐसा है, तो वह कितने समय तक रुकी?"
मुझे यह कैसे पता चलेगा?
"तो नीचे चौकीदार को पता चल जाएगा!" रविंद्र की निगाहें उसके चेहरे पर टिकी हुई थीं। उसके कान उसकी आवाज़ में आए सूक्ष्म बदलावों को भी सुन रहे थे।
"जब मुझे इस बारे में कोई संदेह ही नहीं है तो मैं उससे सवाल क्यों करूँ? अगर मैं उस दोस्त के बारे में चौकीदार से ऐसे सवाल पूछूं जिसे मैंने फ्लैट की चाबी दी थी, तो मेरी क्या इज्जत रहेगी?"
वह चुप रहा, क्योंकि उसे लगा कि इस बारे में उससे और पूछताछ करना उचित नहीं होगा। उसने आगे पूछा,
इस पत्र में आगरा और शिमला के होटलों के नाम और तारीखें दी गई हैं - क्या आपने वहां कोई पूछताछ की? पत्रकारों के लिए यह कोई मुश्किल काम नहीं है! खासकर इंडियन ट्रिब्यून के लोगों के लिए!
"ऐसी जगह पर कौन अपना असली नाम और असली पता देता है! उन्होंने शायद टैक्स बचाने के लिए कंपनी के नाम से बुकिंग और बिलिंग की होगी!"
वाह! उसने तुरंत कहा, सराहना करते हुए, "यह ट्रिब्यून के संपादकों की असली बुद्धिमत्ता है! वरना वे इतनी बड़ी-बड़ी बातें क्यों गढ़ते हैं!" उसका चेहरा प्रशंसा से भरा हुआ था।
उसी समय घंटी बजी। खाना आ गया था। जैसे ही उसने दरवाजा खोला, होटल वाले ने उसके सामने एक बड़ा टिफिन बैग रख दिया। उसने उसे लिया और कहा, 'मैं खाली डिब्बा कल ले आऊंगी। अब पैसे ले लो।' उसने डिब्बा रख दिया। उसने अपने पर्स में रखा सौ रुपये का नोट उसे दे दिया और कहा कि बाकी पैसे रख लो। वह अंदर आई और उसे हाथ धोने को कहा। जब वह आया, तो वह उसे अपने साथ रसोई में ले गई। बटन दबाकर मेज़ खींचने के बाद, उसने आयातित व्यंजनों से भरा डिब्बा खोला। अंदर के सभी व्यंजन इतने गर्म थे कि उनमें से भाप निकल रही थी। हालांकि, सलाद और दही अलग कमरे में रखे थे, इसलिए वे ठंडे हो गए थे। दाल, पालक-पनीर, आलू-मटर, तंदूरी रोटी, बासमती चावल के साथ सफेद चावल, सब्जी पुलाव, अचार, पकौड़े, खीर, रसगुल्ला, सभी व्यंजन भरपूर मात्रा में थे।
उसने कहा,
मैंने कहा था कि यह एक ही भोजन होगा। लेकिन उन्हें पता था कि यह दो भोजन होंगे।
खाना खाते समय उसने पूछा,
"वह होन्नाटी की ओर आकर्षित क्यों होगी?"
उसने तंदूरी सब्जी का एक टुकड़ा अपने मुंह में डाला, उसे घूरकर देखा और मुस्कुराते हुए कहा,
"यह तो कानूनी आडंबर का मामला है! क्या शब्दों के जाल में फंसाने की आपकी यही योजना है?"
"अरे! मैंने तो कुछ नहीं माँगा। तुम मुझे इतना करीबी दोस्त कहते हो, फिर भी कैसे नहीं समझ सकते?" उसकी आवाज़ स्नेह से भरी हुई थी।
“तुम पत्रकार कितने मूर्ख हो!” अब वह भी गुस्से से भर उठी। “मुझे तुम पत्रकारों से बहुत डर लगता है! तुमने कहीं टेप रिकॉर्डर छिपा रखा होगा और मेरी हर बात रिकॉर्ड कर रहे होगे! तुम लोग अपनी कमीज की जेब में या अपनी पैंट के किनारे में एक छोटा सा टेप रिकॉर्डर क्यों नहीं रखते?”

"अगर तुम चाहो तो देख सकती हो!" उसने खड़े होकर अपनी कमीज़ और पैंट की जेबें खोलीं और उसे दिखाईं। वह बेकाबू होकर हंस पड़ी। वह भी हंस पड़ा, क्योंकि उसे कुछ पता ही नहीं था।
उसने कहा,
तुम तो बिलकुल मासूम हो। मैंने ये देखा है। जाने दो। गाने के प्रति प्रेम अपने आप गायक के प्रति प्रेम में बदल जाता है। ऐसे पुरुष भी होते हैं जो ऐसे गायक पर मनचाहा पैसा खर्च करते हैं, है ना? तो अगर कोई महिला किसी गायक पर पैसा खर्च करती है तो इसमें क्या बुराई है? अगर मुझसे पूछो तो मुझे ये नखरेबाज़ शास्त्रीय संगीत बिलकुल पसंद नहीं है। मैंने तुम्हें पहले ही साफ़-साफ बता दिया है – मुझे नहीं पता उन दोनों का क्या रिश्ता था, मैंने अपनी आँखों से कुछ नहीं देखा! संगीत के प्रति प्रेम के कारण ही उसने हरिशंकर की पार्टी पर तीस-पैंतीस हजार रुपये खर्च किए होंगे!
उसे समझ नहीं आ रहा था कि आगे क्या पूछे। उसे यह भी एहसास हो गया था कि चाहे वह कितने भी सवाल पूछे, वह उसे कुछ भी समझने नहीं देगी। अब वह जानना चाहता था कि दोनों दोस्त आपस में कैसे संबंधित हैं... लेकिन वह यह भी जानता था कि उससे पूछने पर उसे कोई सही जवाब नहीं मिलेगा। उसने बात का रुख उसकी सेवा की ओर मोड़ दिया। रात के खाने के बाद, वह एक घंटे तक लाउंज में बैठा रहा और उसे अलविदा कहा। उसने यह भी पूछा कि वह कहाँ पहुंचा है। उसने उसे लॉज का नाम बताया। फिर उसने कहा,
"अगर आपके पास समय हो तो ज़रूर आइएगा। हम इस विषय के बिना भी बहुत सारी बातें कर सकते हैं। मैं शाम छह बजे के बाद खाली हूँ। अगर आप पहले कॉल करेंगे तो आपको निराशा नहीं होगी," उसने अपना कार्ड देते हुए कहा।
लिफ्ट से उतरते ही उन्हें चौकीदार से बात करने का मन हुआ। वे सोच रहे थे कि अभी बात करें या कल दिन में, तभी लिफ्ट रुकी और दरवाजा खुला। चौकीदार लिफ्ट के बाहर खड़ा था, मानो उनका इंतज़ार कर रहा हो। उन्होंने उसे सलाम किया और कहा, "सलाम साहब।"
रविंद्र ने इस अवसर को न चूकते हुए अपनी जेब में हाथ डाला और उसे दस रुपये का नोट देते हुए कहा,
आप कहाँ रहते हैं?
दस रुपये पाकर कृतज्ञतापूर्वक उसने अपना सिर झुकाया और कहा,
"चौकीदार का कमरा यहीं पीछे की तरफ़ है।"
रविंद्र ने चारों ओर देखा। खाली कारों के अलावा वहाँ कोई और नहीं था। उसने पूछा,
क्या यहाँ 24 घंटे की ड्यूटी है?
जी हाँ, महोदय! मैं रात को गेट बंद करके यहीं सोता हूँ। दिन में एक घंटे की झपकी लेता हूं। लेकिन उस समय मेरी पत्नी यहीं होती है। ऊपर वाला हमारी जानकारी के बिना बाहर नहीं जाएगा, और बाहर वाला अंदर नहीं आएगा!
"बहुत बढ़िया! आपका गाँव कौन सा है?"
``गढवाल।"
वाह! यह तो एक पवित्र भूमि है! लोग कहते हैं कि दिल्ली का दूध तो आपके गांव के पानी के बराबर भी नहीं है!
"महोदय! आप बिलकुल सही कह रहे हैं, आपको देखिए! इस गरीबी से त्रस्त दिल्ली में क्या गड़बड़ है! अपने गांव में बुढ़ापे में शांति से रहना, चार पैसे की गठरी के साथ, यही हमारा सपना है, आपको देखिए!" अब उनके चेहरे पर भाव उभर आए थे।
भाई, मुझे आपसे कुछ पूछना था! क्या ये महोदया शीतल गुप्ता जी हैं? एक आदमी उनके घर सितार बजाने आता था। करीब एक साल पहले की बात है। क्या आपको

याद है?
"ऐसा क्या हुआ था जो मुझे याद नहीं है? हर दिन एक महिला उन्हें कार में लेकर आती थी। मुझे कार का नंबर भी याद है... डीएलएच तीन हजार छह सौ सत्तावन।"
"क्या वह हर दिन सितार लाता था?"
हां।
"क्या वो महिला ऊपर तक गई और उन्हें वहीं छोड़ दिया?"
हां।
वे वहां से कब नीचे उतरेंगे?
``तीन... साढ़े तीन बजे। कभी-कभी चार बजे..." बोलते-बोलते वह थोड़ा सतर्क हो गया और बोला, ``महोदय, मुझे भी ठीक से याद नहीं है। कभी-कभी मैं दोपहर में घर जाकर सो जाता था!"
"सच बताओ! तुम्हें एक साल पुहले की बातें कितनी अच्छी तरह याद हैं? यहाँ से नई दिल्ली जाने वाली बस कहाँ मिलेगी?"
"महोदय, सवा दस बज रहे हैं, है ना? अब बस मिलने की संभावना बहुत कम है। आपको कनॉट प्लेस से बस मिल जाएगी," उसने बस स्टॉप की ओर इशारा करते हुए कहा।
जब टैक्सी लॉज लौटी, तो रविंद्र ने सोचा कि शीतल ने ही यह गुमनाम पत्र भेजा होगा! आखिर इन दोनों दोस्तों के बीच दूरियां क्यों पैदा हुईं?
उन्हें इस बात में कोई संदेह नहीं था कि पत्र सच था, और इसीलिए इसे किसी ने नहीं भेजा था।

■

रविंद्र लॉज में अपने कमरे में पलंग पर लेटा हुआ था। दो घंटे जागने के बाद भी उसे उठने का मन नहीं कर रहा था। अब जागने के बाद वह क्या करे? जिस काम के लिए वह दिल्ली आया था, वह तो खत्म हो चुका था। अगर आज उसे ट्रेन का टिकट मिल जाए, तो दस-पंद्रह रुपये रिश्वत देकर टिकट लेना आसान होगा।
अगर ऐसा नहीं हुआ, तो मैं दिल्ली आ गया... क्या होता अगर मैं उससे भी मिल जाता? मैं उससे क्यों मिलता? मैं पहले भी कई बार आया हूं और उससे मिले बिना ही वापस चला गया हूं। लेकिन इस बार कहानी अलग है। क्या होता अगर मैं उससे मिल जाता और उसे यह पत्र दिखा देता? अगर मैं उसे दिखाऊँगा, तो वह ज़रूर हंगामा करेगी और कहेगी, "क्या तुम एक गुमनाम पत्र के आधार पर मुझ पर ऐसे गंदे आरोप लगा रहे हो?"
वह सुबह नौ बजे बिना कुछ बोले उठ गया। उसने दाढ़ी बनाई और नहाया। उसने डायरेक्टरी में नाम ढूंढा। उसने फोन नंबर भी खोज लिया। पौने दस बजे उसने ऑफिस का नंबर डायल किया। आवाज़ उसी की थी।
मैं रविंद्र हूं। मैं दिल्ली से बोल रहा हूं। मैं आपसे पांच मिनट बात करना चाहता हूं।
उसे कोई ज़वाब नहीं मिला। क्या उसने हमारी बात सुनी या नहीं? या यहां के फ़ोन अचानक बंद हो जाते हैं? उसने फिर वही बात दोहराई।
अभी-अभी दूर से एक आवाज आई:
मैं दफ्तर में निजी मामलों पर बात नहीं करता। ठीक है। अगर आप दोपहर एक बजे घर आएं तो हम बात कर सकते हैं। मेरे माता-पिता के घर पर नहीं। मेरा अपना घर है। पता लिख लीजिए। मैं एक से दो बजे तक घर पर रहता हूं। उसके बाद मुझे मंत्रालय में काम होता है।
रविंद्र ने पास के एक छोटे से होटल में रोटी और चाय ली। फिर वह पास के रेलवे स्टेशन गया, प्लेटफार्म का टिकट खरीदा और अंदर एक पत्थर की बेंच पर बैठ गया। आती-जाती ट्रेनें, मालगाड़ियाँ, इंजन, ट्रेनों का इंतज़ार करते अनगिनत यात्री, प्लेटफार्म पर भीड़ में सोते लोग, चूल्हे जलाकर खाना पकाते लोग – अपने ज्ञान

का दायरा बढ़ाने के लिए, हर दिन कम से कम एक घंटा रेलवे स्टेशन पर बैठना ज़रूरी है!
सुबह 11:30 बजे, वह स्टेशन के प्रतीक्षालय में गया और अपना भोजन समाप्त किया। वहाँ से उसने बस पकड़ी और उसके घर की ओर चल पड़ा। नई दिल्ली में पता ढूँढना ज़्यादा मुश्किल नहीं था, इसलिए उसे घर तुरंत मिल गया। वहाँ एक बोर्ड लगा था जिस पर बड़े अक्षरों में उसका नाम लिखा था। सामने वाले बरामदे में एक काली, वातानुकूलित कार खड़ी थी - वही नंबर - DLH 3,657 - जो चौकीदार ने दिया था। वह गढ़वाली चौकीदार का नाम पूछना भूल गया। एक पल के लिए उसकी नज़र कार पर टिक गई। फिर वह सतर्क हो गया। वह ज़रूर अपनी कार के अंदर से मुझे देख रही होगी।
वह दरवाजे पर गया और घंटी बजाई। कुछ ही क्षणों में दरवाजा खुल गया। वह दरवाज़े पर खड़ी थी। उसके चेहरे पर कोई भाव नहीं था। तुम मुझसे अपने असली रूप में मिलने आए हो - बात करना तुम्हारा कर्तव्य है। यह उसके चेहरे पर स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था। दरवाजा खुला है। अगर चाहो तो अंदर आ जाओ। मैं तुम्हारा आरती से स्वागत नहीं करूँगी!
वह अंदर गया। बरामदे में तीन-चार कुर्सियाँ थीं। यह व्यवस्था केवल उन लोगों के लिए थी जो एक-दूसरे को जानते थे। वह वहाँ एक कुर्सी पर बैठ गया। अंदर कोई खाना बना रहा होगा। हाँ। कुछ हिलने-डुलने की आवाज़ आई। ऐसा लग रहा था कि मालकिन के लिए गरमा गरम चपातियाँ बन रही हैं। अंदर से आ रही आवाज़ से परेशान न होने के लिए उसने बरामदे का अंदर वाला दरवाज़ा बंद कर लिया और एक कुर्सी पर बैठ गई।
कमरे में सन्नाटा छा गया। उसने उसके चेहरे पर छिपी विकृत सत्ता और दूसरे को दबाने के लिए उसकी खामोशी के चालाकी भरे इस्तेमाल को भांप लिया था। उसने अपने साथ लाया हुआ चमड़े का थैला खोला और उसमें से गुमनाम पत्र निकालकर उसके सामने रख दिया। उसने पत्र को हाथ में लिया और उसे खोलकर देखने लगी। फिर, पत्र को उसकी गोद में फेंककर, उसने अपना आकर्षक पर्स खोला और उसमें से एक पत्र निकालकर उसके सामने रख दिया।
हां। इसे देखिए, पढ़िए और बताइए कि यह उसी पत्र की प्रतिलिपि है या नहीं!
उसने देखा। वाकई यह उसी पत्र की प्रति थी जो उसे मिला था। उसने पत्र वापस अपने पर्स में रख लिया और फिर बैठ गई। मन ही मन सोच रही थी कि इस पर क्या कहे।
उसके हाथ में मौजूद पत्र की प्रति देखकर उसे अभी भी गहरा सदमा लगा था। उसने कहा,
मुझे यह पत्र नहीं मिला। यह देहरादून में मेरे पिता के पते पर भेजा गया था। उन्होंने इसे यहाँ भेजा था। उन्हें उच्च पद पर काम करने का अनुभव है। उन्हें यह भी पता है कि गुमनाम पत्र कायरों का हथियार होते हैं। उन्होंने मुझसे इस बारे में लिखित में पूछा तक नहीं। इसके बजाय, उन्होंने मुझे फोन किया - यह आपके किसी सहकर्मी का काम होगा जिसका आपसे झगड़ा है। पता लगाओ कि यह कौन है और सावधान रहो। लेकिन पत्र मिलते ही आप मुझसे पूछताछ करने आ गए, है ना?
"अनाम पत्र हमेशा झूठे नहीं होते। इसका मतलब सिर्फ इतना है कि लेखक अपना नाम उजागर नहीं करना चाहता। मुझे सच बताओ कि पत्र में लिखी बातें सच हैं या झूठ!" उसने उसकी ओर देखते हुए पूछा।
वह पल भर के लिए स्तब्ध रह गई। वह मुझे दुविधा में फंसाने आया है! उसने जो जवाब सोचे थे और जो हिम्मत जुटाई थी, सब गायब हो गई। उसके माथे, नाक और भौंहों से पसीने की बूँदें बहने लगीं। उसने खुद से कहा - मुझे किसी ऐसे व्यक्ति को जवाब देने की कोई ज़रूरत नहीं है जो मुझसे सवाल पूछ रहा है, खासकर उस गुमनाम चिट्ठी पर भरोसा करके।

"मैं सिर्फ सच जानना चाहता हूं। पूरी जांच-पड़ताल के बिना मैं किसी बात पर विश्वास नहीं करता। मैंने बाकी सब कुछ जांच लिया है। मैंने यह भी पता लगा लिया है कि वह आगरा-शिमला में किस नाम से उतरा था, अब यह साबित करना आपकी ज़िम्मेदारी है कि यह सब झूठ है!" उन्होंने कड़े स्वर में कहा।
"जो पति घर आने पर अपनी पत्नी को दूसरे कमरे में सुलाता है ताकि रिश्ता पूरी तरह से टूट न जाए, उसे इस तरह की जिरह का कोई अधिकार नहीं है!" उसने जवाब दिया।
वह एक पल के लिए असमंजस में पड़ गया। फिर उसने कहा,
"मुझे वह साल और महीना याद है जब तुम घर आए थे। लेकिन उससे पहले, तुम होन्नाटी के साथ लंबे समय से रिश्ते में थे। फिर भी, तुम घर इसलिए आए ताकि उनका रिश्ता न टूटे?"
वह उसकी कंपकंपी को साफ महसूस कर सकता था। अब उसके गले से पसीना टपक रहा था। उसने अपनी बची हुई हिम्मत जुटाई और चीख पड़ी,
मैंने भी जांच-पड़ताल की है! क्या मुझे नहीं पता कि तुम्हारा अपनी पीए के साथ अफ़ेयर चल रहा है? मुझे पता है कि तलाक के बाद तुम उससे शादी करने की साजिश रच रहे हो! मैं तुम्हारे जैसे व्यक्ति से कोई रिश्ता नहीं रखना चाहती जो मुझ पर बेवजह आरोप लगाता है! मैं तलाक को ताक पर रख दूंगी - उससे शादी कर लूंगी। तुम कभी अपनी पत्नी और बच्चों का भरण-पोषण करने के लायक नहीं थे। मैं तुमसे नाममात्र का भी रिश्ता नहीं रखना चाहती।
वह झटपट उठी और दरवाजा खोलते हुए अंदर चली गई।

■

उसे इस बात पर ज़रा भी हैरानी नहीं हुई कि उसने मीटिंग खत्म कर दी थी। बस स्टॉप की ओर चलते हुए वह सोचने लगा – आखिर यह सब करने की ज़रूरत ही क्या थी? वह सब कुछ समझ चुका था। फिर उसके सामने जाकर बहस बढ़ाने का क्या मतलब था? लेकिन बस से उतरकर लॉज की ओर चलते हुए उसने सोचा – यह कड़वा था, पर जो हुआ सो हुआ, और यही होना था। कभी न कभी तो ऐसा होना ही था और अब उसे पूरी तरह से राहत मिलेगी। यह कहने के बाद कि मुझे सब कुछ पता है, वह अब किसी भ्रम में नहीं रहेगी – न ही मैं।
अपने कमरे में पहुंचकर वह पलंग पर लेट गया। उसे तुरंत नींद आ गई। एक घंटे बाद जब वह उठा, तो सोचने लगा, "अब दिल्ली में रहकर मैं क्या करूँ?" सवा चार बज रहे थे। मुझे आज ही गाड़ी बुक करानी थी। वह उठा। पास की एक चाय की दुकान पर उसने समोसा और चाय पी, लेकिन उठने का मन नहीं हुआ। कॉलेज जाने में उसकी रुचि खत्म हो गई थी। उसे लगने लगा था कि चाहे वह कहीं भी रहे या कहीं भी जाए, कोई फर्क नहीं पड़ता।
कॉलेज में आखिर है क्या? बन्नुरबेटा के आगे नया स्कूल बन जाए तो क्या होगा? उसका मन निराशा से भर गया था। रिश्वत देकर टिकट खरीदने की जल्दी क्यों करे? दिल्ली में ही क्यों न रुक जाए? उसे कहीं जाकर बैठ जाने का मन कर रहा था। कहां जाए? उसे पास का रेलवे स्टेशन याद आया। अपना प्लेटफ़ॉर्म टिकट निकालकर वह बीच वाले प्लेटफ़ार्म पर एक पत्थर की बेंच के पास गया। वहां बैठे यात्रियों को थोड़ा हटने के लिए कहकर वह बैठ गया।
शाम के 4:30 बज रहे थे। कई ट्रेनें जा रही थीं और कई आ रही थीं। हर ट्रेन के आसपास लोगों की भीड़ जमा हो रही थी। लोहे की सीढ़ियों पर लोगों की आवाजाही तेज़ हो रही थी। पत्थर की बेंचों पर बैठे लोग भी एक-एक करके उठ खड़े हुए। अब पैर फैलाकर बैठने के लिए पर्याप्त जगह थी।
वह शाम आठ बजे तक वहीं रहा। फिर रेलवे कैंटीन में खाना खाने के बाद वह लॉज में आया और पलंग पर सो गया। उसे भी ऐसा ही महसूस हुआ जैसे उसका मन शून्यता में डूब गया हो। कुछ करने को नहीं – कोई विचार नहीं – किसी से

मिलना नहीं – किसी से बात नहीं – मन की ऐसी ही एक शांत अवस्था ने उसके मन को घेर लिया था।
कुछ देर बाद वह सो गया।
मैं सुबह बहुत देर से उठा। नहाने, चाय पीने और नाश्ता करने के बाद भी मेरा मन उसी स्थिति में था। मुझे आज ही जाना था। टिकट खरीदने का मन नहीं कर रहा था। मैं उस लॉज में कब तक बैठा रहूँगा, बिना किसी काम के पैसे खर्च करता रहूँगा? हालाँकि यह बात मेरे मन में आई, फिर भी मुझे उठकर ट्रेन का टिकट खरीदने का मन नहीं हुआ। रेलवे स्टेशन पर पत्थर की बेंच ही मेरे लिए आराम करने की एकमात्र जगह थी।
दोपहर बाद मुझे फिर से यह ख्याल आया – वह इतने सालों से मुझसे दूर रह रही थी। उसका रहन-सहन, काम करने का तरीका, व्यवहार, यात्रा करना, उसके दोस्त और परिवार सब कुछ मुझसे बिलकुल अलग थे – वह मुझसे गहरी नफरत करती थी। ऐसे में, उससे पूर्णता की उम्मीद करना क्या मूर्खता नहीं है? ऐसा दुनिया में कई जगहों पर होता है। इसका एक उदाहरण हमारे आस-पास ही हुआ – बस! इसे इतना गंभीरता से लेने की क्या ज़रूरत है?
लेकिन खाना खाते समय सब कुछ स्पष्ट हो गया। हमारी परेशानी का कारण कांति का व्यवहार नहीं, बल्कि होन्नाटी का पतन था! जी हाँ—भले ही हमारी प्रतिक्रिया उलटी थी—सचमुच! हमने एक अच्छी तनख्वाह वाली नौकरी छोड़ दी थी और खुद को होन्नाटी के प्रति समर्पित कर दिया था, जो एक विशेष उद्देश्य से तपस्या कर रहा था—अब जीवन में विश्वास करने के लिए क्या बचा है? जब जीवन-विश्वास की नींव ही नष्ट हो गई, तो चरित्रवान छात्र-नागरिक तैयार करने के लिए स्कूल बनाना अर्थहीन हो गया। जीवन क्रूरता, धन, प्रसिद्धि, यौन भोग-अधिकारों के बारे में है! हम जो कुछ भी करते हैं—वह इसी के लिए करते हैं! ऐसे संसार में कौन किसी का सम्मान करेगा?
इस विचार से मन थोड़ा हलका हुआ, मानो आंतरिक उथल-पुथल का उत्तर मिल गया हो। लेकिन फिर वही खालीपन का एहसास! ओह! यही जागरूकता हमें बार-बार खालीपन के एहसास में डुबो देती है! जब पूरा समाज, पूरा क्षेत्र, पूरा देश ऐसी स्थिति में पहुंच गया है, तो मन में बसा खालीपन का एहसास कैसे दूर होगा? मन ने अपनी सुरक्षा के लिए जो कृत्रिम आवरण बना रखा है – इसके बाद तो इसके साथ जीना ही एकमात्र उपाय बचता है!
लेकिन फिर अन्नाय्या ऐसे कैसे रह सकते हैं? क्या उनके मन में खालीपन नहीं है? उनके द्वारा स्थापित कॉलेज में भी इतनी सारी चीजें घट रही हैं! उनका विश्वास कैसे बरकरार रह सकता है? क्या मुझे भी वहां मन की शांति मिलेगी?
इस विचार से उसे कुछ देर के लिए अच्छा लगा। लेकिन फिर उसके मन में आया, क्यों नहीं – अब तो होन्नाटी भी आकर वहीं रहने लगा है! उसे अन्नाय्या को सब कुछ बताकर और उसके मन में कड़वाहट पैदा करके होन्नाटी को बेबुनियाद साबित नहीं करना चाहिए! लेकिन एक बात पक्की थी – चाहे कुछ भी हो जाए, उसे इस बात का ध्यान रखना होगा कि यह बात किसी और तक न पहुंचे। इसके लिए उसे बहुत मानसिक शक्ति की आवश्यकता होगी!
इस विचार से उसके मन में एक हलका सा उत्साह का भाव उत्पन्न हुआ। जब वह इस भाव में डूब रहा था, तभी उसकी नजरें कहीं और मिलीं।
जब मैं जागा, तो मुझे एहसास हुआ कि मैं ठीक से सोया नहीं था। मुझे एक तरह की सुस्ती महसूस हो रही थी।
अब इस गांव में हमारा क्या काम है? हमें यहां से निकलकर अपने गांव जाना चाहिए।
आपके गांव में कहां जाने की बात कर रहे हैं? विश्वविद्यालय? लेकिन वह तो आपका गांव नहीं है। तो फिर बसवनपुर? आप वहां जा सकते हैं और पड़ोसियों

द्वारा हड़पी गई गौशाला को वापस ले सकते हैं और उसी जगह पर एक छोटा सा मिट्टी का घर बना सकते हैं। इसमें क्या दिक्कत है?
राजशेखर, कृष्णा गौड़ा, जयप्पा गौड़ा - एक-एक करके सब याद आ गए। बागान के नए मालिक ने तो उसे जान से मारने की ठान ली थी! शाहला का पैसा लेने के मामले में वह कितना बेबस था! उनमें से मेरा अपना कौन था? वहाँ क्यों जाऊँ? उस गाँव ने मुझे सिर्फ़ एक ही चीज़ दी थी! अन्नय्या जैसा दोस्त!
उस घटना को कई साल बीत गए हैं - लेकिन तब से मैंने कभी अपने गाँव का दौरा नहीं किया। मैंने रामभट्ट को मंदिर का द्वार बनाने में मदद की थी। एक महीने बाद, उनका पत्र आया - द्वार का काम पूरा होने के बाद, उन्होंने मुझे पूजा में आमंत्रित किया, लेकिन मैं नहीं गया। उन्होंने कहा कि आप बचे हुए पैसों से पूजा कर सकते हैं, इसलिए मैं उन्हें यह कहने के लिए स्वतंत्र था। मैंने उनसे कहा कि मेरे पास अभी आने का समय नहीं है - जब समय मिलेगा तब आऊंगा, लेकिन क्या यही एकमात्र कारण था न जाने का?
उसके बाद, वह अक्सर हलुकेरे कॉलेज जाया करते थे - लेकिन बीच में रुके बिना सीधे बसवनपुर क्यों नहीं चले गए? भले ही वह गाँव अब राजशेखर, जयप्पा गौड़ा और कृष्ण गौड़ा के शासन में है, रामभट्ट वहां हैं - वहाँ एक मंदिर है - वह वहाँ भी जा सकते थे। चोरी हुई सरस्वती की मूर्ति, जो उन्हें अपनी दादी के चेहरे की याद दिलाती है - पता नहीं बाद में उसका क्या हुआ! मैंने भी इसकी आगे जांच नहीं की। हमारे देश के अखबार बस यही करते हैं - इससे ज़्यादा कुछ नहीं!
जब भी उन्हें गांव की याद आती, तो उन्हें रामभट्ट की याद आ जाती। उनका अटूट विश्वास! यह अजीब लग सकता है, इतना अटूट विश्वास! फिर भी, उनकी आस्था महान थी, यह हमें मानना ही पड़ेगा! वे गांव भागकर नहीं गए, इसलिए जब वे अपने बेटे के पास गए, तो उनके सपने में भगवान की मूर्ति प्रकट हुई और उनसे कहा, 'तुम्हारे पूर्वजों को भोजन मिल रहा था - तुमने भी भोजन मिलने तक मेरी पूजा की! अब जब तुम्हें भोजन नहीं मिल रहा है, तो क्या तुम गांव छोड़कर चले गए? क्या यही तुम्हारी भक्ति है!' वे कहते थे कि अगर वे बिना पूजा किए भोजन करने बैठते, तो उन्हें भोजन में सफेद कीड़े और मल दिखाई देता! वे फिर से गांव लौट आए। वे अपने बेटे द्वारा भेजे गए पैसों को अपने भोजन पर खर्च करते थे। उनका आत्मसम्मान इतना प्रबल था कि वे सरकार से मिलने वाली वृद्धावस्था पेंशन भी ठुकरा देते थे!
ये यादें उसे परेशान कर रही थीं। उसे कम से कम एक बार गाँव ज़रूर जाना था। वह कुछ देर तक उनके घर जाकर उनके द्वारा पकाए और उगाए गए भोजन को खाने के सुखद विचार में डूबा रहा।
दोपहर से पहले, वह उठा और पास के एक छोटे से होटल में चाय पीने चला गया। बगल वाली सीट पर कोई भाजी खाते हुए अंग्रेजी पत्रिका पढ़ रहा था। रविंद्र के होटल मालिक की नज़र उस पर पड़ी - कच्चा कागज, घटिया छपाई - पत्रिका का शीर्षक था "द फैक्ट"। यह साप्ताहिक लग रही थी। या - उम्म - ठीक नहीं लग रही थी। लेकिन यह नई तो लग रही थी, यह पक्का था। वह थोड़ा उत्सुकता से झुककर उसे देखने लगा। हाँ - यह साप्ताहिक थी। तीसरा अंक - बिलकुल नया लग रहा था! लेकिन इसे किसने प्रकाशित किया था? संपादक - गोपीकृष्ण तलवार! कीमत - डेढ़ रुपये।
अरे वाह! तलवार ने साप्ताहिक पत्रिका शुरू की? मैं तो बहुत उत्साहित था! मेरा पड़ोसी पढ़ रहा था – वह भी तिरछी नज़र से जितना पढ़ सकता था, पढ़ने लगा। वह बहुत ध्यान से पढ़ रहा था। पहले पन्ने पर इंडियन ट्रिब्यून के उतार-चढ़ाव पर लेख छपे थे। पहला पैराग्राफ पढ़ते ही मुझे समझ आ गया – यही तो तलवार की असली शैली है! ट्रिब्यून के संपादकीय अक्सर इसी शैली में होते थे। कभी-कभी वे

बीच में लंबे लेख भी लिखते थे। बहुत समय बाद, रवींद्र तलवार की कलम से रूबरू होकर बेहद खुश हुआ।
अखबार पढ़ रहे सज्जन चाय और भाजी खत्म करते ही उठ खड़े हुए। रविंद्र ने बिना समय बर्बाद किए उनसे पूछा,
मुझे इसकी एक प्रति चाहिए थी। यह आपको कहाँ से मिली?
क्या आपको नहीं पता? यह साप्ताहिक पत्रिका न्यूज़स्टैंड पर नहीं मिलती। देखा गया है कि सरकारी गुंडे उन स्टालों पर हमला करते हैं और इस पत्रिका के साथ-साथ अन्य पत्रिकाओं को भी जला देते हैं। प्रेस की स्वतंत्रता की वकालत करने वाले कुछ कॉलेज छात्र इसे इस तरह बेचते हैं कि किसी को पता ही न चले।
इसे किसी विशिष्ट स्थान के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता। मैंने यह अंक रेलवे स्टेशन के टिकट काउंटर पर एक कॉलेज छात्र से खरीदा था।
जल्दी-जल्दी चाय खत्म करके रविंद्र ने पैसे चुकाए और चला गया। टिकट काउंटर पर कोई नहीं था। बाहर आकर उसने स्कूटर स्टैंड और आसपास का जायजा लिया। फिर वह प्लेटफ़ॉर्म टिकट लेकर अंदर गया और वहां भी देखा। आखिरकार उसे कुछ सूझा और वह अखबार की दुकान पर गया। वहां भी उसे अखबार नहीं मिला। दुकानदार ने पूछा,
आप क्या चाहते हैं?
``यही तो सच है!" रविंद्र ने हल्के से पूछा।
दुकानदार ने उसे गौर से देखा। फिर, फैशे पर कहीं और से एक नंबर निकालकर उसे देते हुए कहा,
``दो रुपये..."
``डेढ़ रुपये, ठीक है ना?"
"भाई, क्या तुम्हें पता है कि इसे बेचने में हम कितना जोखिम उठा रहे हैं?"
अंततः, दो रुपये देकर उसने वह पत्रिका हाथ में ली और पास के रेलवे स्टेशन के प्रतीक्षालय में जाकर पंखे के नीचे बैठ गया और उसे पढ़ने लगा। उसने आधा पढ़ा हुआ लेख पूरा पढ़ने के लिए दूसरा पृष्ठ खोला। लेख का शीर्षक था, "स्वतंत्रता - बच्चे की हत्या के तरीके और एक माँ के विषैले स्तन"। इसमें उन तरीकों की सूची थी जिनसे सरकार उस अखबार को परेशान कर रही थी, जिसे प्रेस की स्वतंत्रता पर हमले के बाद अखबार छोड़ने वाले कुछ लोगों ने शुरू किया था।
'द फैक्ट' का पहला अंक छपते ही सरकार सतर्क हो गई और लक्ष्मी नगर स्थित उस छोटे से मकान के मालिक को परेशान करना शुरू कर दिया, जहां से यह अंक प्रकाशित हुआ था। हालांकि उन्होंने सहकारी समिति से मकान बनवाने के लिए लिए गए ऋण को किश्तों में चुकाने का फैसला किया था, लेकिन उन पर पूरी रकम एक ही किश्त में चुकाने का दबाव डाला गया। मकान मालिक ने अब सरकार के खिलाफ अदालत में भी केस कर दिया है। इसके तुरंत बाद, घर की बिजली यह कहकर काट दी गई कि घर की वायरिंग घटिया क्वालिटी की है। इसके बावजूद, मकान मालिक ने इस मुद्दे पर अदालत में केस कर दिया कि 'पहले संबंधित अधिकारियों ने यह कहकर बिजली दी थी कि व्यवस्था सही है'। जब दोनों मामलों में पैसे खत्म हो रहे थे, तभी कुछ लोग उनसे मिले और उन पर दबाव डालने लगे कि 'आप इस झंझट में क्यों पड़ना चाहते हैं? अखबार वालों को घर से निकाल दीजिए, सब ठीक हो जाएगा'। जिस प्रिंटिंग प्रेस में छपाई का काम चल रहा है, उसकी बिजली दिन में कम से कम चार-पांच बार काटी जाती है। उन्होंने यह भी आपत्ति जताई कि रिहायशी इलाके में प्रिंटिंग प्रेस चलाना गैरकानूनी है! प्रिंटिंग प्रेस के मालिक ने भी इस सवाल पर अदालत में याचिका दायर की है कि, 'अगर आपने पिछले छह वर्षों से आपत्ति नहीं जताई है, तो अब आप आपत्ति कैसे जता सकते हैं?' निगम ने उन्हें छह साल पहले अनुमति दी थी। वहां ऐसी अन्य आपत्तियों की एक सूची भी दी गई थी।

रवींद्र ने पूरे साप्ताहिक अखबार पर सरसरी नज़र डाली। उसमें एक मंत्री के भ्रष्टाचार की कहानी बयां करने वाला आंकड़ों से युक्त एक लेख था। इसमें यह भी स्पष्ट रूप से दिखाया गया था कि सरकार बिना किसी को सोचने-समझने और आलोचना करने का मौका दिए, मनचाहे कानून बना लेती है और राष्ट्रपति की मुहर भी उन पर लग जाती है - इन सभी मामलों में गणतंत्रात्मक शासन प्रणाली कमजोर होती जा रही है। यह लेख प्रसिद्ध न्यायविद सी. वाई. ने लिखा था।
रविंद्र ने आखिरी पन्ने के निचले हिस्से पर नज़र डाली। वहाँ लक्ष्मी नगर का पता लिखा था। कोई फ़ोन नंबर नहीं था। यह स्पष्ट था कि ऐसी स्थिति में सरकार उसे फ़ोन नंबर देने में आनाकानी करेगी, चाहे वह कितनी भी माँग करे।
उसने सीधे लक्ष्मी नगर जाकर तलवार को बधाई देने का फ़ैसला किया। उसने अपनी घड़ी देखी, छह बज रहे थे। वह इस समय तक कार्यालय में अवश्य पहुंच जाएगा। वह रात दस बजे तक वहाँ अवश्य पहुंच जाएगा।
जब उसने पूछताछ की, तो उसे पता चला कि कनॉट प्लेस से लक्ष्मी नगर के लिए बस मिल सकती है। अगर वह आईटीओ से आगे जाता, तो उसे यह भी पता चला कि यमुना पुल से होकर जाने वाली सभी बसें वहीं से निकलती हैं।
पता मिलने के बाद जब वह वहाँ पहुंचा तो सात बज रहे थे। यह एक ऐसी बस्ती थी जहाँ कभी खुली सीवर व्यवस्था हुआ करती थी, लेकिन अब कंक्रीट के मकानों के निर्माण के कारण यह एक कॉलोनी बन गई थी। खुले सीवरों से गंदा पानी बह रहा था। बस्ती में इतने लोग ठसाठस भर गए थे कि छोटे-छोटे घरों में जगह नहीं बची थी। कई लोग सड़कों पर बाहर थे। ऐसा लग रहा था कि इस बस्ती को हाल ही में नगर निगम में शामिल किया गया है।
वह एक छोटे से घर के पास रुका। दरवाजे पर 'द फैक्ट' अखबार का अंग्रेजी बोर्ड लगा हुआ था। अंदर से देखने पर घर बाहर से दिखने की तुलना में बड़ा लग रहा था। दरवाजे के ठीक बगल में एक खुला नाला बह रहा था। अंदर जाने पर सामने एक खाली जगह थी और उसके बगल में एक कमरा था। अंदर तीन और कमरे थे। सभी कमरों में हलकी बिजली की रोशनी थी। एक तरफ़ के कमरे से पुराने टाइपराइटर की आवाज आ रही थी। बाकी दो कमरों से कॉलेज के छात्रों के आपस में बातचीत करने की आवाज सुनाई दे रही थी।
रवींद्र उस कमरे में दाखिल हुआ जहां से टाइपराइटर की आवाज़ आ रही थी। तलवार! एक जर्जर मेज़ पर एक पुराना टाइपराइटर और बैठने के लिए उतनी ही पुरानी कुर्सी! टाइपराइटर के बगल में कुछ पन्ने रखे थे। ऐसा लग रहा था जैसे टाइपराइटर पर शॉर्टहैंड और लॉन्गहैंड का मिलाजुला इस्तेमाल किया गया हो। ये पन्ने आंकड़ों से भरे थे। तलवार उन पन्नों में जानकारी, अर्थ, विचार और भावनाएं जोड़कर एक जीवंत लेख तैयार कर रहा था। उसका ध्यान कहीं और नहीं था। उसे दूर के कमरों का शोर भी सुनाई नहीं दे रहा था। उसने मन ही मन तय कर लिया था कि अगर उसे किसी के पास खड़े होने का आभास हुआ, तो वो बच्चे ही होंगे, इस आभास को उसने एक निश्चित दूरी पर रखा था। दीवार के पास एक चटाई पर कुछ किताबें कतार में रखी थीं, जैसे पंचवर्षीय योजनाओं का विवरण और 'भारत में कौन क्या है', जो हर पत्रिका के दफ्तर में होनी ही चाहिए। उसके लिए तो कोई मेज़ भी नहीं थी।
रविंद्र समझ गया कि कमरे में बातें कर रहे बच्चे कॉलेज के छात्र होंगे। वे इस साप्ताहिक पत्रिका में मदद करने के इरादे से यहाँ इकट्ठा हुए होंगे। वे एक-दूसरे से कुछ पूछ रहे थे, कुछ शब्द और वर्तनी की गलतियाँ। बीच-बीच में वे प्रूफ़ चेक करते समय इस्तेमाल होने वाले चिह्नों के बारे में भी पूछ रहे थे। ऐसे बच्चे इतनी जल्दी काम कैसे कर लेते हैं? तलवार से बात करने के बाद आप अंदर जाकर उन बच्चों की भी मदद कर सकते हैं।

पांच-दस मिनट बीत जाने के बाद भी तलवार ने सिर नहीं उठाया। फिर उसने टाइपराइटर का कागज़ बदला। रवींद्र, जो उसके देखने का इंतज़ार कर रहा था, निराश हो गया। साथ ही, उसे यह भी यकीन हो गया कि लेख पूरा होने तक वह उसकी तरफ नहीं देखेगा।
कम से कम वह बच्चों की मदद करना चाहता था, इसलिए वह उस कमरे में गया जहाँ बच्चे थे। फ़र्श पर एक सोफा बिछा हुआ था और उस पर चार-पाँच छोटे बच्चे बैठे थे। वे सभी लगभग सत्रह-अठारह से बाईस-तेईस वर्ष के थे। कमरे में एक पुरानी ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी रखी थी। जैसे ही वह अंदर गया, सबकी निगाहें उस पर टिक गईं। उसने अपना परिचय दिया और कहा,
``तालारजी का लेखन कार्य अंदर चल रहा है। प्रूफरीडिंग भी चल रही है, है ना? इसे यहाँ दे दो—मैं देख लेता हूँ—"
प्रमाणों की जाँच करते समय वह थोड़ा लड़खड़ाता हुआ भी प्रतीत हुआ। हाल ही में उसे यह आदत नहीं थी। फिर भी, उसकी गति इन बच्चों की तुलना में कहीं बेहतर थी।
काम कम से कम एक घंटे से चल रहा होगा। तलवार के कमरे में टाइपराइटर की आवाज़ बंद हो गई। ऐसा लगा जैसे वे कागज़ बदल रहे हों। आवाज़ बंद हुए पांच मिनट हो गए थे।
वह हाथ में कागज़ लिए उठा और तलवार वाले कमरे में चला गया। वह वहाँ सिगरेट पीते हुए बैठा था, उसका शरीर और चेहरा दोनों ही तनावमुक्त थे। उसे देखकर उसके चेहरे पर आश्चर्य और खुशी छा गई। वह झट से खड़ा हुआ और उसे अपनी कुर्सी देते हुए बोला,
``रविजी! आइए! मुझे पूरा यकीन था कि आप आएंगे। मेरा अंतर्मन कह रहा था। आइए, यहां बैठिए—" उन्होंने कुर्सी को आगे खींचते हुए कहा।
``अरे! तुम बैठ जाओ – बड़े वाले! – मैं यहीं बैठ जाता हूँ –" रवींद्र ने कहा।
लेकिन उनकी बात सुने बिना ही उन्होंने उसका हाथ पकड़ लिया और उसे जबरदस्ती कुर्सी पर बैठाते हुए कहा,
यह कोई छोटा-बड़ा सवाल नहीं है। टाइपराइटर पर काम करने वाले व्यक्ति को इसी कुर्सी पर बैठना चाहिए। अगर आप घुटने टेककर ज़मीन पर बैठेंगे तो टाइप करना मुश्किल होगा। मैंने आपको कुर्सी पर बैठने को कहा था – इसका मतलब है काम शुरू करना! अब बताइए – आप कब आए थे? सूटकेस कहाँ है?
"हम नई दिल्ली स्टेशन के पास सुरजीत लॉज में उतरे।"
"जी हाँ। आपको हमारा सही पता नहीं पता था। चलिए, मैं आपको दिखाता हूँ –" उन्होंने उसे अगले कमरे में ले जाते हुए कहा, "मज़दूरों को यहीं रहना होगा। नहीं तो काम नहीं होगा। क्या वह बिस्तर वहाँ है? वह मेरी है। क्या वहाँ मच्छरदानी है? उसे दीवार पर लगी कीलों से बाँधा जा सकता है। यह लिपटा हुआ है, यह हमारे सैनी का बिस्तर है। वह छब्बीस साल का युवक है, जिसका नाम मोहनलाल सैनी है। सौभाग्य से! वह अविवाहित है! वह सिगरेट नहीं पीता। वह तीन साल पहले ट्रिब्यून में आया था। वह मुझे अपना गुरु मानता है। वरना, शिष्यों का शोषण करना – यहाँ तक कि उन छात्रों का भी जो उसका बहुत सम्मान करते हैं – क्या यह एक शिक्षक का काम नहीं है? तो क्या हुआ? मैंने ट्रिब्यून में अपनी अच्छी तनख्वाह वाली नौकरी छोड़ दी और यहाँ आ गया। मैंने उसीका स्वागत करते हुए कहा, "आओ, प्रिय शिष्य! यही तुम्हारा उद्धार है!" वह अपना काम अच्छे से करता है। वह सातों पाताल लोकों में छिपी खबरें लाने में बहुत चतुर और बहादुर है! यह मेरा बिस्तर है, है ना? आज से तुम इस पर सो सकते हो। कल लॉज जाना और अपना सूटकेस ले आना, सब ठीक रहेगा। अगर तुम अभी जल्दी भी करोगे, तो वे तुम्हें एक रात का किराया नहीं देंगे! मुझे घर जाकर सोना है – मैं तुम्हें कल सब कुछ बताऊँगा! – चलो वहाँ चलते हैं –"

यह कहकर वे उसे टाइपराइटर वाले कमरे में वापस ले आए। फिर मेज के एक कोने से चार-पाँच कागज़ निकालकर उसे देते हुए बोले, "ये मोहनलाल के दिए हुए नोट्स हैं। हमारी न्यायपालिका पर सरकार का हमला कब शुरू हुआ, प्रधानमंत्री, अन्य सत्ताधारी मंत्रियों और अन्य राजनेताओं ने न्यायिक निर्णयों पर कब और क्या आलोचना की, जो हमारे लिए प्रतिकूल थे, ये सब इसमें तारीख के अनुसार लिखा है। इसी तरह, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति में कुछ लोगों की वरिष्ठता को नज़रअंदाज़ किया गया है, उनके कौन से सरकार विरोधी निर्णय इस चूक के लिए ज़िम्मेदार हैं – ये सभी विवरण इन नोट्स में हैं। मोहन ने इन्हें तैयार किया है। अगर आप इनका इस्तेमाल करके कोई लेख तैयार कर लें, तो उसे कल सुबह छपाई के लिए भेजा जा सकता है।" मोहन यही काम करने वाला था। लेकिन जब उसे पता चला कि उसे एक बड़ी खबर मिलने वाली है, तो वह आज शाम जल्दी से चंडीगढ़ के लिए निकल गया। अब उसे आने में कम से कम दो दिन लगेंगे। मैं भी इसे घर ले जाता – लेकिन घर में टाइपराइटर की आवाज़ नहीं होनी चाहिए – मैं आपको इसके बारे में कल बताऊंगा – मुझे अब घर जाना होगा। आपने अभी तक खाना नहीं खाया है। कोने पर स्थित होटल में आपको दाल-रोटी-आलू मिल जाएंगे। मैं आपको बता देता हूँ, आइए। अपना खाना-रात का खाना-रात का खाना, जो चाहें ले लीजिए। मुझे बती दीजिए कि मैं इसे आपके खाते में लिख दूं।

"इसकी कोई जरूरत नहीं है। मेरे पास पैसे हैं," रविंद्र ने हिचकिचाते हुए कहा।

"अगर आपके पास पैसे हैं, तो उन्हें खर्च मत करो - उन्हें सही तरीके से बचाओ! आपको उनकी ज़रूरत पड़ेगी! अब वहीं खा लो - वहीं खा लो, इसीलिए तो मैं कहता हूँ, समझे? वह स्वच्छता के प्रति सजग है। वह ध्यान रखता है कि सब्जियों या दालों में मक्खियाँ न गिरें। मैं भी इसी तरह बस पकड़ूँगा। रुको –" उसने कहा और बच्चों के कमरे में चला गया। उसने जाँचे हुए प्रूफ पेपर इकट्ठा किए और बच्चों से कहा, "आज का काम हो गया। अब आप जा सकते हैं। कल शाम को वापस आना। मैं आज रात घर पर इसे फिर से देख लूँगा। कौन जाने?" – उसने कहा और रविंद्र का उनसे फिर से परिचय कराया, "उसने ट्रिब्यून के लक्ष्यों और नीतियों को आत्मसात कर लिया है। जब प्रेस की स्वतंत्रता पर हमला हुआ, तो उसने ट्रिब्यून से इस्तीफा भी दे दिया और अब वह बैंगलोर से "द फैक्ट" के संपादक का पदभार संभालने आया है!"

रविंद्र को यह देखकर शर्मिंदगी महसूस हुई कि उसने उसे अपने अखबार का हिस्सा समझ लिया था, जबकि उसने विरोध में एक शब्द भी नहीं कहा था। बच्चे अपने-अपने घर चले गए। उन्होंने दफ्तर का दरवाजा बंद कर दिया और चाबी रविंद्र को दे दी। बाद में, उन्होंने उसे वह होटल दिखाया जहाँ वे खाना खाने जा रहे थे और वहाँ अपना परिचय दिया। वे उन बच्चों के बारे में भी बात कर रहे थे जो मदद के लिए आने वाले थे।

"ये दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के छात्र हैं। ये उत्साहपूर्वक मदद करने आते हैं। लेखन से संबंधित किसी भी काम में इनका कोई उपयोग नहीं है। जो लोग मदद के लिए आगे आते हैं, मैं उन्हें मना नहीं करना चाहता। लेखन के अलावा, ये छात्र कई अन्य कामों में भी बहुत मददगार होते हैं। आमतौर पर पचास छात्र इस तरह मदद करते हैं। कल बात करते हैं। टाइपराइटर का रिबन पुराना है। मैं कल आकर नया ले आऊंगा।" उन्होंने कहा और बिना कोई आपत्ति जताए जल्दी से बस स्टॉप की ओर चल दिए।

रात के खाने के बाद, रविंद्र ने अपने दिए हुए नोट्स से सराय में चारों ओर नज़र डाली। इस विषय पर पुराने ट्रिब्यून में भी एक लेख लिखा जा सकता था। इस बीच उसने भी एक बार इस बारे में सोचा था। यह स्पष्ट था कि सैनी ने भी कई महत्वपूर्ण बिंदु एकत्र किए थे। उन्हें देखते हुए, लेख की शुरुआत और उसकी रूपरेखा

उसके मन में आकार लेने लगा। उसने कागज़ को टाइपराइटर में डाला और काम शुरू कर दिया। पुराना टाइपराइटर, पुराना रिबन। पिछले कई वर्षों में, उसने अपने हाथों से काम करने की आदत छोड़ दी थी - वह केवल बोलकर लिखवाने का आदी था - लेकिन चूंकि वह लगभग बीस वर्षों से इसका आदी था, इसलिए दस से पंद्रह मिनट के भीतर उसकी उंगलियां टाइपराइटर पर सुचारू रूप से चलने लगीं। उसके बाद, पांच से दस मिनट के भीतर गति भी बढ़ गई। अनजाने में, तलवार की तरह, उसने यह भी ठान लिया कि लेख पूरा होने तक वह अपना सिर नहीं उठाएगा। सेनी द्वारा एकत्रित जानकारी, उसकी विशिष्ट व्यंग्य, कभी-कभी नाटकीयता - रविंद्र का लेख आकार लेने लगा, इस बात का ध्यान रखते हुए कि पाठक इसे पढ़ने के बाद बीच में न छोड़ दें। कभी-कभी, सबटाइटल भी अपने आप दिखाई देने लगते थे।
लेख तीन घंटे में पूरा हो गया। फिर उसने तुरंत उसे शुरू से अंत तक पढ़ा। एक भी गलती नहीं थी - यहाँ तक कि पूर्ण विराम या अल्पविराम भी नहीं! इतने त्रुटिहीन लेख को प्रिंटर के पास भेजने में कोई समस्या नहीं थी! रविंद्र का मन संतुष्ट हो गया। उसने लेख के सभी पन्ने समेटे, पिन से लगाए और बेडरूम में चला गया। मच्छरदानी छोड़कर वह बिस्तर पर लेट गया। एक अलग ही तरह की संतुष्टि! शाम से सब कुछ कुचल देने वाला खालीपन का एहसास कहीं गायब हो गया था।
चायु की दुकान में यह पत्रिका देखना, स्टेशन से इसे खरीदना, फिर पता ढूंढकर यहां आना – यह सब कुछ अचानक ही हो गया। लेकिन इससे उसके मूड में कितना गहरा बदलाव आया! – वह गहरी नींद में सो गया।
जब वह सुबह देर से उठा, तो ठंडे पानी से नहाने तक नौ बज चुके थे। वह नाश्ता करने के बारे में सोच ही रहा था कि तलवार आ गया। वही खादी की पैंट, वही खादी की कमीज, बाएं हाथ में जलती हुई सिगरेट। आते ही उसने कहा,
आपने नाश्ता नहीं किया है - जाइए - पहले नाश्ता कीजिए और वापस आइए। केचप और डबल रोटी परोसी जाएगी। साथ में एक केला खाना न भूलें और फिर चाय पीजिए।
नाश्ते से लौटते ही तलवार ने उत्साह और खुशी से उसका हाथ पकड़ा और कहा,
``बेहतरीन लेखन! ऐसी प्रतिभा की ज़रूरत है! ऐसे लेखन कौशल वाले लोग कहाँ हैं? अगर हों भी, तो वे हमारे लिए क्यों लिखेंगे जब उन्हें पता है कि उन्हें कोई पैसा नहीं मिलेगा? हमारा मोहन भी उत्साही है - उसे अपने काम पर पूरा भरोसा है। लेकिन वह बहुत भावुक हो जाता है। भले ही उद्देश्य नेक हो, लेखन में भावना और जोश कैसे आएगा? इसके अलावा, वह अभी युवा है।"
फिर उन्होंने कहा,
"क्या आपने वह अंक देखा है? संपादक के तौर पर मेरा नाम लिया जाने लगा है। अब उस नाम को हटाना उचित नहीं होगा। मैंने संपादक- रविंद्र, प्रधान संपादक- तलवार, मुख्य संवाददाता- मोहनलाल सेनी जैसे नामों को शामिल करने के बारे में सोचा है।"
``लेकिन मैं नहीं चाहता—" रविंद्र ने कहा। लेकिन मैं अब भी उन्हें स्पष्ट रूप से यह नहीं बता सका कि मैंने अभी तक यह तय नहीं किया है कि मैं आपके अखबार में छपना चाहता हूं या नहीं।
ध्यान न देते हुए तलवार ने बोलना जारी रखा,
आज हम एक कुर्सी लाएंगे। आप संपादक की ज़िम्मेदारी संभालिए। बाहरी ज़िम्मेदारियाँ मैं देखूंगा। मैं प्रचार-प्रसार, धन जुटाने, सरकार द्वारा खड़ी की गई मुश्किलों का हल निकालने आदि का ध्यान रखूंगा। साप्ताहिक पत्रिका नियमित रूप से प्रकाशित होनी चाहिए – इसकी भाषा अच्छी होनी चाहिए – इसमें कोई टाइपिंग त्रुटि नहीं होनी चाहिए। इसमें नैतिक आक्रोश का कोई स्वर नहीं होना चाहिए। सार्वजनिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक – सभी क्षेत्रों में स्वतंत्र सोच होनी चाहिए।

इसके लिए आपको पूरी स्वतंत्रता है! शुरुआत में कुछ आंधेक कठिनाइयाँ होंगी। पाठक भी इसे समझते हैं। इसके बारे में चिंता मत कीजिए!
वह इसका किसी भी तरह से विरोध नहीं कर सका। हमारे पास और क्या रास्ता है? रात में लेख पूरा करने पर मुझे जो खुशी मिली, वैसी खुशी और क्या दे सकता है? अगर मुझे एक नया स्कूल भी शुरू करके चलाना पड़े, तो भी मुझे यह खुशी नहीं मिलेगी। मेरी सोच ऐसी नहीं है – बस यही है!
वे कह रहे थे,
यह चौबीसों घंटे की नौकरी है। वह भी यहीं सोता है – तुम भी यहीं रहो। असल में, मुझे भी यहीं रहना चाहिए। लेकिन मैं तुम्हें बताता हूँ कि मेरे साथ क्या हुआ – शायद तुम्हें पता नहीं होगा। मेरी पत्नी को यह बिलकुल पसंद नहीं आया कि मैंने ट्रिब्यून छोड़ दिया। मैंने तुम्हें फोन पर बताया था – हमें पैसों की कोई समस्या नहीं है, इसीलिए! लेकिन उसे इस बात का दुख था कि समाज में एक बड़े संपादक की पत्नी के रूप में उसका जो रुतबा था, वह खो गया! उसने मुझे समझाने की हर संभव कोशिश की। उसने कहा कि मुझे कुछ नहीं आता! दुनिया में कौन सी औरत सोचती है कि उसके पति को कुछ आता है! जब मैंने नौकरी छोड़ी और एक नया साप्ताहिक अखबार शुरू किया, तो वह एकदम चुप हो गई। उसके बाद, पुलिस दो बार मेरे घर आई। उन्होंने मेरे घर की हर जगह तलाशी ली क्योंकि मैंने सरकारी कागजात छिपा रखे थे – वो भी बहुत ज़रूरी। इस घटना से उसे बहुत अपमान महसूस हुआ। उसे लगा जैसे पड़ोसियों और आस-पड़ोस में उसकी इज्जत मिट्टी में मिल गई हो। उसकी हालत अब – वह अवसाद से पीड़ित है। उसने अपनी हालत मनोचिकित्सक को बताई। उन्होंने मुझे सलाह दी कि मुझे रात को घर पर ही सोना चाहिए। घर में एक टाइपराइटर भी है। घर बैठे कुछ लेखन कार्य किया जा सकता है। लेकिन उस शोर से भी उसे बहुत असहजता होती है। इसीलिए मनोचिकित्सक ने मुझे वह भी न करने की सलाह दी है। मुझे लगता है कि वह इस स्थिति का फायदा उठा रही है और ज़्यादा नखरे कर रही है! मैंने मनोचिकित्सक को भी यही बताया। इस पर उन्होंने कहा - इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता - लेकिन आपको उन्हें यह नहीं बताना चाहिए। इससे बीमारी के और बिगड़ने की संभावना बढ़ जाती है।
"इतना सब कुछ हो जाने के बाद भी पत्रिका तो चलनी ही चाहिए। इस पर इतना ज़ोर क्यों दिया जा रहा है?" रविंद्र ने पूछा।
"क्यों? आप भी तो पत्रकार हैं – आप ही बताइए!"
रविंद्र सोचने लगा। उसने घड़ी देखी – दस बज रहे थे। उसने कहा,
"तुम अभी लॉज जाओ और अपना सूटकेस ले आओ। अगर देर हुई तो वो तुमसे एक दिन का किराया वसूल लेगा।"
रविंद्र भी यह बात समझ गया। वह उठ खड़ा हुआ। कुछ याद आने पर उसने पूछा,
"क्या आप आज ही लेख को छपाई के लिए भेज देंगे?"
"जी हाँ। चलिए अब चलते हैं। प्रिंटिंग प्रेस यहीं पीछे है।"
"उस लेख पर सैनी का नाम लिखिए। उन्होंने बड़ी मेहनत से जानकारी जुटाई है!"
मुझे लगता है कि हमें उन दोनों का नाम रख देना चाहिए...
नहीं। नाम इतना महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण यह है कि विषय लोगों तक पहुंचे। उनकी उम्र भी कम है।
"आप सचमुच एक पत्रकार हैं!" यह कहते हुए तलवार के चेहरे पर संतुष्टि भरी मुस्कान फैल गई।

■

१८

बी.ई. के अंतिम वर्ष में दाखिला लेने से पहले ही, अनुप ने अमेरिका के विश्वविद्यालयों में प्रवेश के लिए आवश्यक टीओईएफएल परीक्षा दी और उसमें सफल रहा। अनुप शिवराज द्वारा अमेरिका जाने के इच्छुक छात्रों के समूह को दिए जा रहे मार्गदर्शन को ध्यान से सुन रहा था। उसने तुरंत उनकी सलाह पर अमल करना शुरू कर दिया। बी.ई. पास करना कोई बड़ी बात नहीं है – लेकिन उससे पहले, इस परीक्षा को पास करना निश्चित रूप से आपकी जिंदगी बदल देगा। इस भावना में डूबे अनुपम ने टीओईएफएल के परिणाम पता चलते ही शिवराज और अमेरिका जाने के इच्छुक अन्य छात्रों के लिए स्कॉच पार्टी का आयोजन किया था। अब, जिस धरती पर वह चल रहा था, उसके अलावा सब कुछ अमेरिकी हो गया था। मन, कल्पना, सपने, भावनाएं, भाषा, विचार और उच्चारण – सब कुछ अमेरिकी हो गया था।
उसके इस बदलाव के बाद, कोई भी भारतीय लड़की उसका ध्यान आकर्षित नहीं कर पाती थी। यहाँ किसी भी लड़की को देखकर उसके मन में कोई भावना जागृत नहीं होती थी। उसे पूरा यकीन था कि इस दमनकारी समाज में पीड़ित लड़कियाँ उसके बगल में खड़े होने के भी लायक नहीं हैं।
हाल ही में, उसने किसी लड़की से बात नहीं की थी, न ही किसी को अपनी बुलेट में घुमाया था। उसे सुपर स्पीड किंग कहलाने की कोई कदर नहीं थी। यहाँ की सुपर स्पीड कैसी! असली स्पीड तो वहाँ है! वहाँ की सड़कें शीशे की तरह चमकती हैं! अटलांटिक से प्रशांत महासागर तक की सड़कें! एक भी गड्ढा नहीं, कोई मोड़ नहीं, लोगों-जानवरों-हाथगाड़ियों-बैलगाड़ियों की कोई समस्या नहीं! तो वहाँ तेज़ रफ़्तार गाड़ी के लिए क्या रुकावट हो सकती है? अब, अमेरिका जाने की बातें करने वालों को छोड़कर, वह किसी से भी छोटी-मोटी बात करने से भी बचता था। ऐसे ग्रामीणों से वह क्या बात करता? उनका कोई भविष्य नहीं, कोई तरक्की नहीं, कोई आकांक्षा नहीं, आसमान छूने का कोई सपना नहीं! छी! ये लोग तो थूकने लायक भी नहीं! उसके दिल में दबी नफ़रत दिन-ब-दिन गहरी होती जा रही थी। जब कुछ दृढ़ निश्चयी बच्चे इकट्ठा हुए और सब इस विषय पर बात कर रहे थे, तो वह भी अपनी नफ़रत ज़ाहिर कर रहा था।
जग्गु और ओमी से उसकी दोस्ती भी टूट चुकी थी। दोनों ही टीओईएफएल परीक्षा में फेल हो गए थे। इसके अलावा, पट्टेगौड़ा का व्यवहार, जब उसने रात में उन पर हमला होने पर उनसे मदद मांगी थी, ने उसे अपनी दोस्ती पर दोबारा सोचने पर मजबूर कर दिया था। क्या दोस्ती सिर्फ खुशियां बांटने के बारे में है? इससे उसके मन में एक नैतिक सवाल भी उठ खड़ा हुआ था। वह जानता था कि भले ही अनुपान ने उनसे पूरी तरह बात करना बंद न किया हो, फिर भी रिश्ता बहुत गहरा नहीं होगा।
अमेरिका की यात्रा के संबंध में उसने अपनी माँ के बारे में सोचा तक नहीं था। अब तक किसी भी विषय पर उससे असहमति का कोई सवाल ही नहीं था। इसलिए, उसे पूरा विश्वास था कि उसकी माँ भी उसकी अमेरिका यात्रा से उतनी ही खुश होगी जितना वह खुद था। जब उसे TOEFL परीक्षा के परिणाम मिले, तो उसने टेलीग्राफ कार्यालय से बड़ी उत्सुकता से अपनी माँ को फोन किया, और वह काफी असमंजस में पड़ गई। उसने पूछा,
"अरे, लेकिन... अभी-अभी TOEFL का क्या हुआ? मैंने तुम्हें कहाँ बैठने के लिए कहा था?"
"मैंने तुम्हें बताया नहीं था ना, मम्मी... कि तुम्हें वो परीक्षा देनी ही होगी... वरना तुम्हें वहाँ किसी भी विश्वविद्यालय में दाखिला नहीं मिलेगा, है ना?"
लेकिन क्या वह बी.ई. के बाद की परीक्षा नहीं है?
"लेकिन मुझे पहले मौका मिला, है ना अच्छी बात? जैसे ही मुझे बी.ई. के नतीजे मिलेंगे, मैं वहां के किसी भी विश्वविद्यालय में आवेदन कर सकूंगा हूँ!..."

आप वहां क्यों जाना चाहते हैं? आपने अभी-अभी अपनी परीक्षाएँ समाप्त की हैं, यहाँ आकर कारोबार देखिए। मैंने यहाँ के आंतरिक बाज़ार में अपनी पकड़ बनाने के लिए कितनी मेहनत की है! अगर आप भी यहाँ आकर बस जाते हैं, तो आप हर साल पचास लाख का मुनाफा कमा सकते हैं! इसके लिए भिखारी बनकर वहाँ क्यों जाना चाहते हैं?
माँ! वहाँ हालात अलग हैं! वहाँ तो आसमान ही तुम्हारी तरक्की की सीमा तय कर सकता है! यहाँ तो तुम लाखों की बात कर रही हो! वहाँ तो अरबों-खरबों लोगों को भी मौका मिलता है। मुझे यह गरीब देश नहीं चाहिए!
आपका क्या मतलब है? शिक्षा प्राप्त करने के बाद आप यहाँ नहीं आएंगे?
उसने उसके प्रश्न में भय, क्रोध और निराशा को महसूस किया। वह सतर्क हो गया।
मैं ऐसा क्यों कह रहा हूँ, माँ? मैं तो वहाँ सीखने गया था। और ज्ञान प्राप्त करने के बाद मुझे वापस आना पड़ा!..."
"देखो! मैं भी यहाँ जो हो रहा है देख रही हूँ। जो लोग वहाँ पढ़ने जाते हैं, वे वापस आने को तैयार नहीं होते। मैं तुम्हें वहाँ नहीं भेजूँगी! अगर तुम चाहो तो यहाँ दो-तीन साल का एमबीए या कोई और कोर्स कर लो! समझदारी से काम लो! पहले अपनी बी.ई. की पढ़ाई ठीक से करो!" उसने उसे बीच में ही रोकते हुए स्पष्ट रूप से कहा।
वह निराश था, लेकिन उसे पूरा यकीन था कि वह उसे मनाने में ज़रूर कामयाब होगा। ज़्यादा से ज़्यादा, उसे थोड़ी और बहस करनी होगी और फिर वह ज़रूर वापस आ जाएगी, इसलिए उसे बस उसे मनाना होगा – बस इतना ही! वह उसका हाथ थामकर उसे 'भगवान का वादा' करेगा – वह वहाँ से एमएस भी नहीं करेगा – वह मार्केटिंग टेक्निक या एमबीए करेगा, इसलिए वह कहेगा, वह इंटरनेशनल मार्केटिंग स्पेशलाइजेशन करेगा, उसके कपड़े दुनिया के हर देश में पहुँचेंगे, वह ऐसा करेगा – आप उत्पाद देखिए – मैं मार्केटिंग देखूँगा, इसलिए उसने कहा, बस! यह जल्द ही तैयार हो जाएगा।
उन्हें एक बात पक्के तौर पर पता थी – मम्मी की सहमति के बिना वे अमेरिका नहीं जा सकते थे! भला इसके लिए तीन-चार लाख रुपये कौन देगा? इसके लिए वे दिल्ली तक गए। लेकिन बात उनकी उम्मीदों पर खरी नहीं उतरी। जितना वे ज़िद करते, मामला उतना ही गरमाता चला गया। आखिर में मम्मी ने रोते हुए कहा,
"बेटा! तुम ऐसा क्यों कर रहे हो यार? इस दुनिया में तुम्हारे सिवा मेरा और कौन है? अगर तुम उस गरीब अमेरिका में जाकर रहने लगोगे, तो इतनी मेहनत से खड़ा किया हुआ सारा कारोबार तुम कहाँ करोगे?"
इसीलिए तो मैं तुम्हें बता रहा हूँ! मैं ज़रूर आऊँगा—भगवान की कसम—क्योंकि! —"
"लोग कहते हैं कि जब आप उस देश में जाते हैं, तो वहां के लोगों को कोई याद नहीं रखता!" उसने बीच में ही टोकते हुए कहा।
अंततः, वह हताशा में मैसूर लौट आया।
आगे क्या हुआ? एक दिन उनके नाम से एक पैकेट आया। पते में अनुप रविंद्र, इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग, बी.ई. अंतिम वर्ष आदि लिखा था। इसके अलावा, उसमें 'निजी' भी लिखा था।
उसने लिफ़ाफ़ा खोला। अंदर टाइप किया हुआ एक कागज था। उस पर कोई तारीख नहीं थी – न ही किसी के हस्ताक्षर थे। गांव का नाम भी नहीं था। नाम उसके पिता के नाम पर था – जैसे ही उसने पत्र पढ़ा, उसे लगा मानो कोई उसकी सांस रोक रहा हो।
उस पत्र में उन्होंने अपनी मां और सितार वादक होन्नाटी के रिश्ते के बारे में विस्तार से लिखा था। होन्नाटी के भविष्य के लिए उनकी मां ने हरिशंकर को जो पार्टी दी

था, जिसमें तीस से पैंतीस हजार रुपये खर्च हुए थे, आगरा और शिमला के होटलों में उनके साथ ठहरना, डेढ़ साल तक हर दोपहर शीतल आंटी के घर पर समय बिताना - यह सारी जानकारी पत्र लेखक ने तारीख, समय, होटलों के नाम आदि के साथ विस्तार से दी थी।
अनुपम खुद को संभाल नहीं पा रहा था। मेरी माँ! और होन्नाटी मास्टर? यकीन करना मुश्किल था! उसके कान खड़े हो गए। उसके अंदर गुस्से की लहर दौड़ गई और उसकी आँखों में गर्म आँसू भर आए। अगर वो अभी यहाँ होती, तो वो उसे इतनी ज़ोर से थप्पड़ मारता कि उसके दाँत टूट जाते! अपने उग्र हृदय को दबाते हुए उसने पत्र को मोड़कर अपनी जेब में रख लिया। यह महसूस करते हुए कि उसका कक्षा में बैठकर सर के व्याख्यान पर ध्यान देने का मन नहीं है, वह अपने कमरे में गया, कपड़े बदले और पलंग पर लेट गया। ऐसा लग रहा था जैसे उसका सिर सुन्न हो गया हो।
इस तरह कितना समय बीत गया है?
उसने चिट्ठी दोबारा निकाली और ध्यान से पढ़ी... हम्म... तारीखें, मिलने की जगह, शिमला-आगरा के होटल, उसके वहाँ जाने की तारीखें सब लिखी हैं। शीतल आंटी ने उन्हें डेढ़ साल के लिए अपना घर दिया था - तो वे इतने करीब थे? आंटी तलाकशुदा हैं - उन्हें ऐसे रिश्ते को बढ़ावा क्यों देना चाहिए? उसे इसमें शामिल हर किसी से गहरी नफरत महसूस हुई। और होन्नाटी मास्टर! कॉलेज में डोडप्पा भी उसकी तारीफ करते हुए उसे बड़ा आदमी कहते थे! मैंने तो उसके वाद्य यंत्र के लिए घर भी बनवाया था! बदमाश! मुझे उसे एक ज़ोरदार लात मारकर तोड़ देना चाहिए! अब वो कहाँ है, मुझे पता लगाना होगा - मुझे उसे नहीं छोड़ना चाहिए।
कुछ देर बाद, जब मैंने उस पत्र को दोबारा देखा, तो मुझे एहसास हुआ कि वह गुमनाम था। क्या यह सब किसी की सनक नहीं हो सकती? कॉलेज में भी ऐसा ही होता है। अगर आप किसी से सहमत नहीं होते, तो आप उन्हें दुख पहुंचाने के लिए गुमनाम पत्र भेजते हैं। यह भी वैसा ही क्यों नहीं हो सकता?
इस विचार के साथ ही उसका दिमाग लगभग थम सा गया। हाँ, ऐसा ही होना चाहिए! मेरी माँ ऐसी नहीं हो सकती! होन्नाटी मास्टर का ऐसा व्यवहार करना असंभव है! - इस विचार के पुष्ट होते ही, दस मिनट के भीतर उसका दिमाग इस कदर थम गया कि वह कक्षा में भी चला गया।
दोपहर का खाना खाते समय मुझे एहसास हुआ कि यह पापा को लिखा गया पत्र था। उन्हें भी इसकी एक प्रति मिली होगी, वे क्या करते? बाद में मुझे याद आया कि मम्मी और पापा के बीच दूरियाँ आ गई थीं, छह-सात साल हो गए थे। मम्मी की दूरियाँ मेरे स्कूल की वजह से थीं। उन्हें कॉलेज से सख्त नफरत थी। वे चाहती थीं कि मैं कोडाईकनाल के किसी स्कूल में पढ़ूँ। इसी तरह उन्होंने खुद पैसे कमाना शुरू किया था। अगर वे पैसे नहीं कमातीं, तो मुझे इतना पैसा खर्च करने की इजाज़त कौन देता? फिर मुझे पापा से मिलने वाले पैसों में कंजूसी करनी पड़ती, इतना टूथपेस्ट इस्तेमाल करना पड़ता और एक गरीब की तरह जीना पड़ता। पापा के दिल में मम्मी के लिए कृतज्ञता का भाव जागा। बाद में मुझे पक्का यकीन हो गया कि मम्मी के किसी दुश्मन ने यह शरारत की है, इसमें कोई शक नहीं – मेरी मम्मी का ऐसा व्यवहार करना नामुमकिन है!
एक पल के लिए मेरा मन किया कि मैं उस पत्र को फाड़ डालूँ – लेकिन मुझे लगा कि जब सभी छात्र खाना खा रहे हों तो उसे फाड़ना ठीक नहीं होगा। दोपहर में, कार्यशाला में काम करते समय, मैंने अपनी जेब से नैपकिन निकालने के लिए हाथ डाला और पत्र मुझसे छू गया। अनजाने में ही सही, मेरे मन के एक कोने ने मुझे पत्र न फाड़ने की सलाह दी।
मेरी मुलाकात शिवराज से कार्यशाला में हुई। उन्हें देखते ही उन्होंने उत्साहपूर्वक कहा,

"अब आपको अमेरिका के विश्वविद्यालयों से पत्राचार शुरू करना होगा। मुझे अब तक के सभी परिणाम बताइए और मैं आपको जून में अंतिम परिणाम आने के बाद अंकों की सूची भेज दूँगा। आपको सितंबर तक वहाँ पहुँच जाना चाहिए!"
अनुप के हृदय में शिविराज के प्रति विशेष आदर का भाव था। उसने कृतज्ञतापूर्वक कही,
धन्यवाद! धन्यवाद, शिवा!
अमेरिका जाने की इच्छा चाहे कितनी भी प्रबल क्यों न हो, मम्मी की सहमति के बिना इसका कोई मतलब नहीं! मैं तो बस इसी काम के लिए दिल्ली आई थी, मैंने भगवान से वादा किया था, चाहे कितनी ही कोशिश की हो, मैं तैयार नहीं थी! यहीं रहो – काम संभालो, वे कहते हैं!
इसी बीच, मोर्चे से आए नितिन ने कहा,
"हम आज शाम जयंत के कमरे में इकट्ठा होंगे। शिव भी आ रहा है।"
लेकिन शिव, जिससे अभी-अभी मुलाकात हुई थी, ने उसे क्यों नहीं बताया? जाने दो! वो तो मूडी आदमी है - उसने खुद को समझाया। जयंत का घर निजी था। वहाँ मिलने का मतलब था ड्रिंक्स तो होंगी ही! और तो और, इसमें कोई झंझट भी नहीं था। ड्रिंक्स लाना जयंत की ज़िम्मेदारी थी - फिर सब अपना-अपना हिस्सा देंगे और चले जाएँगे! यही तरीका शिव ने सुझाया था। बार से कहीं ज़्यादा सस्ता था, अनुप का भी यही अनुभव था। अमेरिकी तरीका! वहाँ का ये तरीका कितना बढ़िया है! चाहे दो दोस्त हों या दोस्त और गर्लफ्रेंड। होटल में खाने के बाद सबका बिल अलग-अलग आएगा! अगर साथ रहना चाहते हो तो बता दो! शिव कितना बढ़िया कहता है! हमें साथ जाना चाहिए, एक-दूसरे का साथ देने के लिए! एक-दूसरे को बिगाड़ने के लिए नहीं! सच में कितना बढ़िया देश है! अनुप को भी ये एहसास हुआ। अगर उसने अपने भले के लिए ऐसे देश जाने का फैसला किया है, तो मम्मी कहती हैं कि इस घटिया देश में रहो और एक और डिग्री ले लो! मम्मी के प्रति उसका गुस्सा भड़क उठा।
जयंत के कमरे में जमा सभी लोग अमेरिका जाने के लिए उत्सुक बच्चे थे। शिव ने जब अपना गिलास उठाकर सबको चीयर किया, तो बच्चों ने भी उनका उत्साहवर्धन किया। फिर सबने खाना शुरू किया। शिव बता रहे थे कि अमेरिका में छात्र रहते हुए उन्होंने सहायक व्याख्याता के रूप में कैसे काम किया। सभी लोग उनके चारों ओर अपनी कुर्सियाँ खींचकर बैठ गए और श्रद्धापूर्वक उनके अनुभव सुनने लगे। जब जगह कम पड़ गई, तो कुछ लोग एक-एक करके अपनी सीटों पर बैठ गए। खूब खाने-पीने के बाद शिव की जीभ और भी ज्यादा गलने लगी और श्रोता भी उतने ही मग्न हो गए।
लेकिन उस स्थिति में भी, अनुप का ध्यान उसकी जेब में पड़े गुमनाम पत्र पर ही केंद्रित था। उसका मन लगातार एक ही बात पर अटका हुआ था।
उसने अपने प्रेमी के संगीत करियर को सफल बनाने के लिए पार्टी पर तीस हज़ार खर्च कर दिए! उसने कहा, पाँच सितारा होटल में पार्टी, इतनी शान-शौकत, इतना खर्चा! उसके दिमाग में यही बात घूमने लगी। ऊपर से आगरा-शिमला के होटलों का खर्च! क्या गर्मियों में यह कम नहीं होता? बदमाश! वह छोटी सी बात पर इतना पैसा खर्च कर देती है! और वह कहती है कि उसका अपना बेटा अमेरिका पढ़ने जा रहा है, लेकिन वह खुद मना करती है!
"ओह! यह अन्याय बर्दाश्त नहीं किया जा सकता! हमें उसे यह स्वीकार करवाने के लिए कुछ करना होगा! हमें सिर्फ एक साल का खर्च ही नहीं, बल्कि दो साल का खर्च वसूलना होगा," उसने एक ही बार में गिलास खाली कर दिया।
"क्या वहाँ महिला लेक्चरर हैं या नहीं? वे छात्रों के साथ कैसा व्यवहार करती हैं— मेरा मतलब है, पुरुष छात्रों के साथ?" जयंत, शिव से पूछ रहा था।

अनूप झटपट उठा और पेशाब करने का बहाना बनाकर वहां से चला गया। उसने अपने कमरे से गोली ली और टेलीग्राफ ऑफिस जाकर दिल्ली फोन किया। जैसे ही उसने फोन उठाया, उसने कहा,
मुझे आपसे कुछ बहुत ज़रूरी बात करनी है। इसके लिए मैं दिल्ली आ रहा हूँ। कृपया मुझे जल्दी से हवाई जहाज़ का टिकट भेज दीजिए!
"आप तीन हफ्ते पहले आए और चले गए, है ना? आप मुझसे किस बारे में बात करना चाहते हैं?"
"फोन पर नहीं, मैं आपसे आमने-सामने बात करना चाहता हूँ!"
"ओह, मैं भी आपसे मिलना चाहता हूँ। लेकिन हर बार तीन-चार हज़ार रुपये लगते हैं!"
"क्यों? जब आप कहते हैं कि आप बच्चे पर पैसा खर्च करना चाहते हैं, तो क्या आपको उस पैसे का हिसाब देना पड़ता है?"
अनूप की बातें सुनकर कांति का चेहरा चमक उठा। उसने पहले कभी ऐसा जवाब नहीं दिया था। पैसों की कीमत को लेकर चाहे वह कितनी भी बहस करती, अनूप हमेशा बच्चे की तरह गुस्सा करके अपना मकसद पूरा कर लेता था। लेकिन इस बार, उसकी बातों से उसकी आँखों में आंसू आ गए। उसने जवाब दिया,
"अगर ज़रूरत पड़ी तो मैं तुम्हें टिकट भेज दूंगा - लेकिन तुम अपनी माँ से कैसे बात करोगे, तुम्हारे तौर-तरीके इतने बुरे हैं!"
अरे बाप रे! –" बात खत्म होते ही उसने फोन काट दिया। फिर वह बुलेट कार से जयंत के घर पर पार्टी में दाखिल हुआ।
उसके खाते में दिल्ली जाने के लिए हवाई टिकट खरीदने लायक पैसे थे। लेकिन वह जानता था कि अगर उसने ये पैसे खर्च कर दिए तो उसकी मां को भी पता चल जाएगा, इसलिए वह बाकी खर्चों का भुगतान भी मां से ही करवाता था। आज भी, उसकी मां अपनी ट्रैवल एजेंसी को फोन करती थी – वे अपनी मैसूर शाखा को सूचित करते थे। फिर मैसूर शाखा से कोई व्यक्ति उसे ढूंढते हुए आता और उसे टिकट सौंप देता था।
इस बार भी वही हुआ। अगले दिन, जब वह कक्षा में था, एजेंसी का आदमी आया और जब वह कक्षा से बाहर आया, तो उसने विनम्रतापूर्वक पूछा,
आपका टिकट आ गया है। आप कौन सी उड़ान आरक्षित करना चाहेंगे?
"कल की उड़ान," उसने आदेश दिया और वापस कक्षा में चला गया।

■

जैसे ही विमान उत्तर की ओर उड़ने लगा, अनूप के मन में विचार आने लगे – इस समय मम्मी से बात कैसे शुरू की जाए? लेकिन उसका इरादा क्या था? अमेरिका जाने की अनुमति लेना, या कुछ और? उसके दिमाग में भी कुछ स्पष्ट नहीं था। आखिरकार, उसने तय किया कि पहले देखेगा कि असल में क्या हो रहा है और फिर उसी के आधार पर अपना व्यवहार तय करेगा! उसी समय, एयर होस्टेस द्वारा लाया गया नाश्ता खाते हुए, उसके मन में ख्याल आया कि अमेरिकी एयर होस्टेस उससे कहीं ज्यादा आकर्षक होंगी!
जब वह दिल्ली पहुंचा तो शाम के छह बज रहे थे। उसने हवाई अड्डे से फैक्ट्री में फोन किया। उसने कहा,
घर वापस आ जाओ। मैं भी यहाँ से आ रहा हूँ..."
जब वह टैक्सी से घर पहुँचा, तो वह गैरेज में अपनी कार पार्क कर रही थी। उसका चेहरा उदास था। लेकिन उसने उस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। जैसे ही उसने दरवाजा खोला, उसने पूछा,
"क्या मैं आपके लिए चाय लाऊं? क्या आप कुछ खाने वाले हैं?"
"नहीं। सब कुछ विमान में ही हुआ..." उन्होंने कहा।

“लेकिन मुझे चाय चाहिए। रसोइया सात बजे आएगा। मैं खुद बना लूंगी।” वह अपनी घड़ी देखते हुए रसोई में चली गई। हमेशा की तरह, वह भी उसके पीछे रसोई में गुंया और “मैं चाय बनाता हूं” जैसा कुछ कहे बिना ही बैठक में बैठ गया। लगभग पांच मिनट बाद, वह हाथ में एक कप चाय और दो बिस्कुट लेकर बैठक में वापस आई और बोली,
तुम क्या कह रहे हो, बेटे? तुम तो अचानक से उड़ते हुए आ गए!..."
वह असमंजस में था। उसे अभी भी ठीक से समझ नहीं आ रहा था कि शुरुआत कैसे करे। उसने अपनी जेब में हाथ डाला, पत्र निकाला, उसे उसके सामने रखा और कहा,
इस पत्र को देखिए...
अपने हाथ में पकड़ी प्याली और तश्तरी को चायदानी पर रखते हुए, उसने पत्र खोला और उसे पढ़ा। पहला वाक्य देखते ही वह चौंक उठी,
क्या आपको इसका उत्तर मांगने का अधिकार है?
उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। वह उसके चेहरे को देखता रहा। एक पल के लिए उसे डर लगा कि उसकी आँखें उसे जलाकर राख कर देंगी। अपनी नज़र उससे हटाए बिना, उसने फिर कहा,
"तुमने तीन हजार रुपये खर्च किए और कॉलेज छोड़कर सिर्फ यही पूछने के लिए यहाँ आए?"
"तुम अपने बच्चे पर किए गए खर्चों का इतना अच्छा हिसाब रखती हो! अपने प्रेमी पर खर्च करते समय तो तुम बहुत उदार थीं, है ना..." उसने अनजाने में ही कह दिया।
–बदमाश! जब तुमने चौकीदार की घटिया बच्ची को गर्भवती किया और हंगामा किया, तो मैंने बीस हजार खर्च करके तुम्हारी जान बचाई! अपनी माँ के बारे में बोलते समय अपनी ज़बान पर काबू रखना सीखो!" ये कहते हुए उसकी आवाज़ इतनी ऊंची हो गई थी कि वह कर्कश हो गई थी।
उसके शब्दों से उसे अपमानित महसूस हुआ। वह पहले हुई घटना का इस्तेमाल अपने फायदे के लिए करके उसे नीचा दिखा रही थी – लेकिन उसे समझ नहीं आ रहा था कि उसे चुप कराने के लिए क्या कहे। चुप रहना और कुछ न कहना तो हार मान लेने जैसा था! कुछ तो कहना ही था – कुछ तो करना ही था –
वह झट से खड़ा हुआ और अपना दाहिना हाथ उठाकर उसने तेजी से उसके चेहरे पर थप्पड़ मार दिया।
इस अप्रत्याशित झटके से वह स्तब्ध रह गई और गिर पड़ी।
वह अपने कमरे में पलंग पर सो रही थी। उसका मूड अभी पूरी तरह ठीक नहीं हुआ था। रसोइया हमेशा की तरह तय समय पर आई और दाल, चावल, सब्ज़ियाँ और रायता बनाकर खाने की मेज़ पर रख दिया, यह कहते हुए कि उसे देर हो रही है।
पंद्रह दिन पहले, जब उसके पति ने आकर उससे जवाब मांगा, तो वह गुस्से से भड़क उठी और सोचने लगी, "मुझे कौन सवाल कर रहा है?" लेकिन यह तो मेरा बेटा है! क्या वह मुझसे जवाब माँग रहा है? जवाब मांगने के बाद भी वह चुप नहीं रहता! क्या उसे मुझ पर हाथ उठाना चाहिए? क्या उसके पास मेरे पति से ज़्यादा अधिकार है?
मेरे दिल में एक के बाद एक दर्द बढ़ता जा रहा था - मैं अपने पति के बिना तो जी सकती थी - लेकिन अपने बच्चे के बिना कैसे जी सकती थी?
ये मेरा बेटा है जो मेरे दिए हुए पैसे खर्च कर देता है, चौकीदार की बेटी के पास चला जाता है और फिर मेरे ही पैसों से उस झंझट से निकल जाता है! क्या उसे मेरी किसी गर्लफ्रेंड के लिए मुझे थप्पड़ मारना चाहिए? लेकिन मैं चुप क्यों रही? मैंने भी उसे दो थप्पड़ मारे—अरे, ये कैसे मुमकिन है? वो मुझसे छह-आठ इंच लंबा है!

और ताकतवर भी है! एक थप्पड़ से उसका सिर कैसे घूम सकता है! नहीं तो, वो मुझे ऐसे ही थप्पड़ मारता! बदमाश! क्या हमें अपनी मीताओं का सम्मान करना चाहिए या नहीं? क्या कॉलेजों में यही सिखाया जाता है?
उसके दिल में उठने की कोई इच्छा नहीं बची थी। उसे ऐसा लग रहा था मानो उसका सहारा देने वाला कोई नहीं है – दुनिया में उसके जैसी कोई है ही नहीं, यह भावना उसके दिल को अंधेरे की तरह घेर रही थी। उसे डर था कि वह खड़ी भी नहीं हो पाएगी – और अगर खड़ी भी हुई तो गिर जाएगी। उसे ऐसा लग रहा था मानो वह किसी खाली जगह में अकेली तैर रही हो और आसपास कोई भी जीवित प्राणी दिखाई न दे, वह एक भ्रूण जैसी हो गई थी।
यह काम नहीं करेगा। हमें किसी ठोस चीज़ को पकड़ना होगा – लेकिन अनंत आकाश में ऐसी कोई ठोस वस्तु नहीं है –
वह बस गिर गई थी। रसोइए ने जाते समय दरवाजा खींच दिया था, इसलिए वह अपने आप बंद हो गया था। इसलिए तुरंत उठकर उसे बंद करने की कोई जरूरत नहीं थी।
उसके खाली दिमाग में धीरे-धीरे गुस्सा भर गया। किस पर? उसे पकड़कर कुचल देना चाहिए! लेकिन किस पर? अपने पति पर? अनुपाल पर? उस गुमनाम पत्र लिखने वाले पर – और कौन? शीतल पर? उसकी मुट्ठी भींच गई। उसके मन में इतना गुस्सा था कि उसे लगा जैसे उसे खुद को कड़ी सजा देनी चाहिए! लेकिन कुछ ही पलों में, हेमंत पर पूरी ताकत से टूट पड़ने का ख्याल गायब हो गया।
बदमाश! कायर तो आधे रास्ते से ही भाग गया! अगर वह मुझे छोड़कर न जाता, तो दुनिया में किसी से डरने की ज़रूरत ही नहीं होती। वह मेरा दोस्त है—मेरा दोस्त—उस विषय पर मुझसे कुछ भी पूछने का किसी को हक नहीं—मैंने हिम्मत करके उसे कहा, 'निकल जाओ!' कायर! भाग गया! घर पर मेरे माता-पिता को बिना बताए भाग गया! उन्होंने मुझे फोन करके पूछा भी था! कायर—कायर! एम.टेक—एम.बी.ए., कहते हो! वह ठीक से नौकरी करने लायक नहीं है—उसमें अपना खुद का व्यवसाय चलाने की ताकत भी नहीं है! उसने अखिल भारतीय स्तर से संगीत के क्षेत्र में अपना करियर शुरू किया था, इसलिए मैंने सारी व्यवस्था की थी, लेकिन वह सब कुछ छोड़कर चोर की तरह भाग गया!—मैं ऐसे कायर को क्यों याद रखूँ? अगर वह फिर से लार टपकाते हुए दरवाजे पर भी आए, तो उसे खड़ा नहीं होने देना चाहिए! 'निकल जाओ, निकम्मे!'—इसलिए, उसे तुरंत बाहर निकाल देना चाहिए।
अब उसका शरीर थोड़ा अधिक चुस्त महसूस कर रहा था। वह उठी। उसने कपड़े बदले, घर में पहनने वाला गाउन पहना, हाथ-पैर और चेहरा धोया और तरोताज़ा हो गई। वह मेज़ पर गई और देखा कि रसोइए ने भी अपना हिस्सा पका लिया था।
वो कहाँ चला गया? उसे शर्म आ रही होगी! या शायद वो डर गया होगा! वो सोच रहा होगा कि अब अपना चेहरा कैसे दिखाए! अपने चाचा के सामने तो बिलकुल नहीं। वो वहाँ नहीं जाएगा। उसे समझ आ गया होगा कि रजनी उसे बिना कुछ कहे बहुत दूर ले गई है। वो संदीप या खन्ना के साथ जाकर 'चुजी' में चना भटोरा खा रहा होगा!
उसे बहुत भूख लग रही थी। उसने अपनी थाली खाने से भर ली।
मेज लगाने के बाद उसने घड़ी देखी – ग्यारह बज चुके थे। वह अभी तक नहीं आया! उसे आने दो, वह सच में है! उसने मुझे मारा, मैं उसे और भी ज़ोर से मारूँगी और उसके बाद ही बताऊँगी कि आगे क्या कहना है! मैं उसे सिखाऊँगी कि अपनी माँ के सामने क्या बोलना है और कैसे व्यवहार करना है! तुम कहती हो कि पिता ने तो अपने बेटे को ठीक से व्यवहार करना भी नहीं सिखाया! तुम कहती हो कि जो बच्चा गाँव के गरीब स्कूल में गाँव के बच्चों के साथ पला-बढ़ा हो, उसे अच्छे शिष्टाचार कैसे पता होंगे!

उसने सिंगापुर से मंगवाए डेढ़ हज़ार रुपये के विदेशी इलेक्ट्रिक टूथब्रश पर टूथपेस्ट लगाया, उसे चालू किया और शीशे के सामने खड़ी हो गई। उसने अपनी चमकीली आँखों से अपने सफेद, चमकदार दाँतों को निहारा, जो उसके सुंदर गुलाबी मसूड़ों के बीच से साफ दिखाई दे रहे थे। पैंतालीस साल वाकई एक वयस्क उम्र है! जवींनी का चरम! उसकी निगाहें संतुष्टि से अपने गालों की गुलाबी चमक पर टिक गईं। हेमंत के प्रति उसका गुस्सा फिर से उमड़ आया। दाँत साफ करने के बाद उसने अपने चेहरे पर उले का तेल मला और फिर अपने बेडरूम की ओर चल पड़ी। इस बदमाश की वजह से मैं समय पर सो भी नहीं पाती!...
उसी समय, दरवाजे की घंटी बजी और जापानी घंटी की मधुर ध्वनि पूरे घर में गूंज उठी। अंदर आओ! मुझे थोड़ी झिझक हुई! लेकिन झिझक किसकी है? उसकी या मेरी? इस विचार से वह सतर्क हो गई। घंटी फिर बजी - क्या पता वह किसी दोस्त के घर चला गया हो क्योंकि उसने दरवाजा नहीं खोला?
अब तक बारह घंटियों में से तीन बज चुकी थीं। तो ऐसा लगता है कि गुस्सा थोड़ा शांत हो गया है!
उसने दरवाजा खोला। हाँ – मुझे अपना चेहरा दिखाने में शर्म आती है, इसलिए मैं नज़रें फेर लेती हूँ! जैसे कोई अध्यापक देर से आने वाले विद्यार्थी से कहता है, वैसे ही उसने उससे कहा, 'अंदर आ जाओ–'। वह अंदर आया और अपने जूते उतारने लगा। वह अंदर मुड़ी। जैसे ही वह अंदर आया, उसने उससे कहा,
खाना मेज पर लगा है – खा लो। फिर बर्तन बाल्टी में डालो, मेज ढक दो और सो जाओ –"
उसने कुछ नहीं कहा। वह खाने के लिए मेज पर भी नहीं गया। उसने उसे फिर से चेतावनी दी।
"अगर तुम्हें भूख लगी है, तो तुम अपना खाना खुद खा सकती हो! यहाँ कोई नौकर नहीं है—" और वह अपने कमरे की ओर चल पड़ी।
वह उसके पीछे गया।
वह मुड़ी और उससे बोली,
मैं अब थक गया हूँ। मुझे किसी की परेशानी नहीं चाहिए..."
"मुझे माफ़ कर दो, मम्मी! भगवान कसम! सच में माफ़ कर दो! मुझे बहुत-बहुत अफ़सोस है!..." उसने नीचे देखते हुए कहा।
अब उसे थप्पड़ मारो – नहीं। अगर मैं उसे नहीं मारूंगा, तो मैं उस पर हावी हो जाऊंगा!
माँ! मुझे माफ़ कर दीजिए! कसम से – मुझे नहीं पता मैंने क्या किया! पिछले चार-पाँच दिनों से मुझे सर्दी-बुखार से बहुत तकलीफ हो रही थी। मैंने मैसूर के डॉक्टर को भी दिखाया। पता नहीं, उस गाँव के घटिया डॉक्टर ने मुझे क्या दवा दे दी! मैंने सच में कुछ नहीं किया, माँ!
``माँ भी हो, तुम्हें उसके निजी मामलों में दखल नहीं देना चाहिए, ये तो तुम्हारी उदारता भी नहीं है! तुम किस तरह की बी.ई. की पढ़ाई कर रहे हो? और अमेरिका जाकर भी क्या कामयाबी हासिल करोगे? उस गांव के गांधी स्कूल में पढ़ने के बाद तुम्हारी सारी सोच बासी हो गई है!
"मैंने भी यही सोचा था, माँ! मेरी माँ जो मेरे लिए इतना सब कुछ करती है! उसके साथ जो भी हो, यह उसकी निजी ज़िंदगी है – मुझे इस पर ध्यान नहीं देना चाहिए! मुझे यह समझ आ गया है, माँ! मैंने यह भी सोचा कि जब उसे मेरे पापा जैसा पति मिल जाएगा तो वह और क्या करेगी। अगर आप चाहें तो इसे देख लें –" यह कहते हुए उसने वह पत्र निकाला जिसे माँ ने कुछ देर पहले ज़मीन पर फेंक दिया था और वापस अपनी जेब में रख लिया था, और उसने माँ के सामने ही उस पत्र को अनगिनत टुकड़ों में फाड़ दिया।
उसके सामने टुकड़े फेंकते हुए उसने उससे कहा,

"सच में, माँ? मुझे भी उस पत्र पर विश्वास नहीं हुआ - इसके बाद तो बिलकुल नहीं होगा। इसके बाद मैं आपके निजी मामलों पर ध्यान नहीं दूँगा। उस दवा की वजह से जो भी हुआ, सो हुआ! अगर आप अब भी देखना चाहती हैं, तो अपना हाथ यहाँ रखिए! कान की लोब पर नस कैसे फूल रही है..." उसने उसकी उंगलियों को कान की लोब पर ज़ोर से दबाते हुए पूछा, "सच में है या नहीं... आप बताइए..."
उसने अपनी उंगलियों को छूते हुए यह भी कहा,
घास पर, बेटे! सीप के तने में! जाओ... जेवन कारून घे...
एक आज्ञाकारी बच्चे की तरह, उसने खाने की मेज से प्लेट उठाई और खाना खाने के बाद, मेज को ठीक किया, अपने कमरे में गया और सो गया।

■

उसने एक बार फिर ठान लिया कि शीतल को सबक सिखाना ही होगा, जिसने उस पर इतना कठोर हमला किया था। इतना सब करने के बाद भी क्या हुआ था? मम्मी-पापा को उसकी बात पर यकीन नहीं हुआ। उसका अपने पति कहे जाने वाले आदमी से पहले कभी कोई रिश्ता नहीं था और अब भी नहीं है। दूसरे शब्दों में कहें तो, उसके पत्र से वहाँ कुछ भी नहीं बदला था। अनूप के नज़रिए से, सब ठीक ही हुआ। भले ही वह एक लाड़ली माँ है, लेकिन उसकी भी एक निजी ज़िंदगी है और हमें उस पर ध्यान देने की ज़रूरत नहीं है, इस पत्र ने उसे भी यही सबक सिखाया। अब ये लड़की आगे क्या करेगी?
लेकिन मैं उसे ऐसे नहीं छोड़ूंगा! उसका घर, उसके घर में रखा विदेशी सामान, कुछ दोस्तों द्वारा चुकाए गए बिजली के बिल, उसका सोना, उसका लॉकर, उसके शेयर, बैंक खाते, निजी तौर पर ब्याज पर दिया गया पैसा – मैं इन सब चीजों की एक लंबी सूची बनाऊंगा और उसकी एक प्रति विदेशी खाते, वित्तीय खाते, आयकर कार्यालय, सीबीआई – सभी को भेजूंगा। उसकी तरह गुमनाम पत्र! मैं उन्हें उसके कार्यालय के बगल वाले पोस्ट बॉक्स से डालूंगा। उसके घर पर छापा मारे बिना कोई न कोई खाता नहीं बचेगा। अगर तुमने इस बात पर मुकदमा किया कि यह सब तुम्हारी तनख्वाह में कैसे आया, तो तुम्हारी नौकरी चली जाएगी – तुम्हें लंबे समय तक जेल जाना पड़ेगा! अगर तुम्हें सजा नहीं भी मिली, तो भी तुम्हें दस साल जेल में रहना पड़ेगा – यह दर्दनाक होगा – तुम्हें सोने से पहले हर रात चार-चार गोलियां खानी पड़ेंगी! वाह!
इस विचार से उसे इतनी खुशी मिली कि उस रात वह काफी देर तक सो नहीं पाई। वह सुबह देर से उठी। तब तक अनूप जाग चुका था और तैयार था। मम्मी को देखते ही उसने कहा,
``मेरा कॉलेज डूब रहा है, मम्मी! मैं ग्यारहवें विमान से जा रहा हूँ..."
"लेकिन आप यहाँ क्यों आए?"
“ये क्या है, मम्मी! मैंने कल रात माफी मांग ली थी, है ना? मैं आपको बताता हूँ कि TOEFL परीक्षा कितनी कठिन है! मुश्किल से दस प्रतिशत छात्र ही इसे पास कर पाते हैं। मैंने तो पहली ही कोशिश में परीक्षा पास कर ली। मेरे सारे प्रोफेसर मेरी पीठ थपथपा रहे हैं और मुझे आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं! मुझे मत रोकिए, ठीक है? मैं आपका प्यारा अनूप हूँ, है ना? अच्छा बेटा! आप मेरी अच्छी माँ हैं, है ना?” वह गले लगाने के लिए उनके पास आया और उनका हाथ थाम लिया।
उसने अपनी हंसी को दबा लिया। फिर उसने कहा, मानो उसे पहले से चेतावनी दी गई हो,
ठीक है! कितने पैसे? तीन लाख रुपये, है ना? अच्छा... मैं इंतज़ाम कर देता हूँ!..."
अनुपम अत्यंत प्रसन्न हुआ। “माँ! आप सचमुच बहुत अच्छी हैं!” उसने माँ के दोनों हाथ अपने हाथों में लेते हुए कहा। फिर वह झुककर उनके चरणों में बिना छुए प्रणाम करते हुए बोला,

"मैंने ब्रेड और टोस्ट बना लिया है, आपको मुझे एयरपोर्ट तक ले जाने की ज़रूरत नहीं है! मैं टैक्सी ले लूंगा..." उसने अपना ब्रीफ़केस उठाते हुए कहा।
उसे कारखाने जाने की जल्दी थी। आज उसे मंत्रालय जाना था। नहाने के बाद, रसोइया एक गिलास फलों का रस और डिब्बे वाली कॉफ़ी लेकर आई और उसके तैयार होने तक इंतज़ार करती रही। कांति खाना पकाने, पानी भरने, कपड़े धोने और सफाई का सारा काम खत्म होने के बाद ही घर आकर खाना खाती थी। हाल ही में उसने नाश्ता करना छोड़ दिया था। उसकी आदत थी कि वह नहाते समय हर दिन अपना वज़न देखती थी और अगर कुछ ग्राम वज़न बढ़ जाता था, तो वह उस दिन एक पका हुआ खीरा खा लेती थी और पोली को छुट्टी दे देती थी।
कारखाने जाकर प्रबंधक से जितनी बात करनी थी, करने के बाद उसने गाड़ी मंत्रालय की ओर मोड़ी, लेकिन उसका मन कहीं और ही सोच रहा था। उसे पूरा यकीन था कि गुमनाम चिट्ठी के चलते किसी विभाग के लोग उसके घर पर छापा मारेंगे। फिर उसकी नौकरी चली जाएगी, उस पर मुकदमा चलेगा, उसे सज़ा मिलेगी। अगर इनमें से कुछ भी नहीं हुआ, तो भी वे उसकी सारी दौलत छीन लेंगे, उसे बहुत तकलीफ़ देंगे और किसी मामूली विभाग में किसी बेकार पद पर उसका तबादला कर देंगे। उसे यह जानना मुश्किल नहीं है कि इन सभी गुमनाम चिट्ठियों के पीछे मेरा हाथ है। फिर वह अपने विभाग में सबको सच बता देगी और कहेगी कि मैं उसकी दोस्त हूँ और उसने मेरे साथ ऐसा बर्ताव किया है! तो देखिए, वह कितनी भरोसेमंद है? उसे पूरा यकीन था कि उनका मुझ पर से भरोसा टूट जाएगा और वे कल मुझे किसी भी तरह का सहयोग देने से इनकार कर देंगे! या फिर वह किसी विभाग के साथ मिलकर मेरे कारखाने पर छापा मार सकती है! वह मुझे जेल में डाल सकती है! वह मेरे मज़दूरों को हड़ताल पर जाने के लिए उकसा सकती है! और उसे पूरा यकीन था कि सभी सरकारी कर्मचारी उसकी मदद करेंगे। उस समय मुझ जैसे छोटे उद्यमी की मदद कौन करेगा?
सरकारी कर्मचारियों और स्वतंत्र महिला व्यापारियों के बीच की जंग में कौन जीतेगा? शीतल ने एक बार कहा था कि सरकारी कर्मचारी पूरी सरकार, पूरे मंत्रिमंडल को गिरा सकते हैं।

■

१९

कॉलेज के अध्यक्ष के रूप में अपने पहले वर्ष में पाटिल को समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। अपने भाषण में, अन्नय्या ने उनके प्रति अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए पाटिल की तुलना कृष्ण से की, जिन्होंने संकट के समय पांडवों का साथ दिया था, और छात्रों और शिक्षकों ने तालियाँ बजाकर उनका अभिनंदन किया।
पाटिल संकाय की कार्यकारी समिति के अध्यक्ष थे और अन्नाइया कार्यकारी अध्यक्ष थे। चूंकि पाटिल ने संस्थान के लिए धन जुटाने की जिम्मेदारी संभाली थी, इसलिए अन्नाईया ने भी अपनी इच्छा अनुसार छात्रों को पढ़ाना शुरू कर दिया।
अपने वकीली करियर की शुरुआत में, पाटिल बॉम्बे हाई कोर्ट में वकालत करते थे। आज भी उनके वहां के मुवक्किलों से अच्छे संबंध हैं। वे महत्वपूर्ण मुकदमों के दौरान उनसे मिलने जाते थे। इन यात्राओं के दौरान, वे अपने मुवक्किलों और वकीलों को संस्थान के बारे में प्रभावी ढंग से जानकारी देते थे और अच्छा दान इकट्ठा करते थे। थोड़े ही समय में उन्होंने संस्थान के लिए लाखों रुपये जुटा लिए।
ऐसी ही यात्रा के दौरान, उनकी मुलाकात प्रसिद्ध वस्त्र व्यापारी मोतीलाल जसलाल ज़वेरी से हुई। पाटिल ने उनके मातृ प्रेम का सहारा लिया और उनके नाम पर एक भवन का निर्माण करवाया। महाविद्यालय परिसर और वहाँ के तपस्वी

शिक्षकों से मिलने के बाद, ज़वेरी भवन निर्माण के लिए सहमत हो गए। उन्होंने केवल यह सुझाव दिया कि भवन का नाम मातुश्री हंसबेन जसलाल ज़वेरी के नाम पर रखा जाए। उन्होंने यह शर्त भी रखी कि वास्तुकार और ठेकेदार मुंबई से ही होने चाहिए।
भवन का नक्शा देखते ही सभी शिक्षक प्रसन्न हो गए। छह महीने के भीतर ही शिलान्यास समारोह संपन्न हुआ। जल्द ही सीमेंट, स्टील और टाइलों से बनी एक खूबसूरत इमारत बनकर तैयार हो गई! कन्नड़ माध्यम के साथ-साथ अंग्रेजी माध्यम की कक्षाएं भी शुरू हो गईं। शिक्षकों को कक्षाओं की तैयारी करके जाना पड़ता था, जिससे उन्हें पदोन्नति का सुख मिला। दूसरे गांवों से आए छात्र धाराप्रवाह अंग्रेजी बोलने लगे। शिक्षक भी उनसे ध्यानपूर्वक बात करते थे।
नए साल की कक्षाएं शुरू होने से तीन-चार महीने पहले, पाटिल ने मुंबई, पुणे, अहमदाबाद, हैदराबाद आदि जैसे महत्वपूर्ण शहरों में प्रकाशित होने वाले समाचार पत्रों में कॉलेज का व्यापक विज्ञापन दिया। इसमें उन शिक्षकों का उल्लेख किया गया था जो सेवा भावना के साथ शिक्षा प्रदान करेंगे, इस तरह से कि यह ध्यान आकर्षित करे।
इस विज्ञापन को जबरदस्त प्रतिक्रिया मिली और देशभर से पत्र आने लगे। इन पत्रों के जवाब में आकर्षक डिज़ाइन वाले रंगीन ब्रोशर भेजे गए। जल्द ही प्रवेश अस्वीकार करने का समय आ गया। देशभर से इंजीनियरों, डॉक्टरों, व्यापारियों, उद्योगपतियों और अधिकारियों ने अपने बच्चों के लिए पत्र लिखे थे।
सभी अभिभावकों की एक ही शिकायत थी। छात्रावास की हालत अच्छी नहीं थी। पाटिल ने उन्हें आर्थिक समस्या बताई और भवन निर्माण के लिए उनसे पैसे लेना शुरू कर दिया। जल्द ही आठ लाख रुपये जमा हो गए। भवन निर्माण के लिए बैंगलोर के एक वास्तुकार-ठेकेदार को नियुक्त किया गया।
इस नई स्थिति में समिति के पदाधिकारियों में थोड़ा बदलाव आया। पाटिल अध्यक्ष थे और अन्नाय्या कार्यकारी अध्यक्ष। अन्य नामों को देखकर अन्नाय्या ने पूछा,
"हमारी समिति में इतने सारे नाम क्यों हैं?"
हमारे दुश्मन साधारण नहीं हैं! राजस्व मंत्री-मुख्यमंत्री! इसीलिए हमें अपनी समिति में समान शक्ति वाले लोगों की आवश्यकता है! ज़वेरी-चेट्टियार प्रधानमंत्री के खेमे के लोग हैं! हमारा पत्र ऐसा होना चाहिए कि परशुराम गौड़ा तो दूर, कोई भी हमें तिरछी नज़र से देखने की हिम्मत न करे!
बदलते परिवेश में, अन्नाय्या को हाल ही में अजीब सी बेचैनी महसूस हो रही थी। अब तक वहां के छात्रों और अभिभावकों ने कभी किसी बात की शिकायत नहीं की थी। लेकिन अब छात्र छोटी-छोटी बातों पर बड़बड़ाने लगे थे। उनकी शिकायतें थीं, हर हफ्ते आइसक्रीम क्यों नहीं परोसी जाती? यहाँ की सहकारी दुकान में कोका-कोला क्यों नहीं रखा जाता? चपातियाँ ठीक से बनाने वाला रसोइया क्यों नहीं रखा जाता? सब्जियों में पनीर क्यों नहीं मिलाया जाता?
अभिभावकों को भी यही उम्मीद थी। बच्चों को फलों का रस क्यों नहीं मिल रहा है? क्रिकेट सिखाने की कोई व्यवस्था क्यों नहीं है?
कॉलेज के ब्रह्मचारी शिक्षकों को भी यह महसूस हो रहा था कि कुछ तो गड़बड़ है। जब ये बच्चे उन मूल्यों के प्रति उदासीन हैं जिन पर हम विश्वास करते हैं, तो अपना जीवन इन बच्चों को पढ़ाने में समर्पित करने का क्या फायदा? हाल ही में, हम अन्नाय्या को ये सब खुलकर बता भी नहीं पा रहे थे। क्योंकि उन्हें लगता था कि अन्नाय्या अपने व्यवहार के आधार पर पाटिल की ओर झुक रहा है।
शंकरमूर्ति ने ब्रह्मचारी शिक्षकों से चर्चा करने के बाद कहा,
"मेरा एक और सवाल है। जब बड़े शहरों में बड़े स्कूल और अन्य सुविधाएं मौजूद हैं, तो माता-पिता अपने बच्चों को इतनी दूर क्यों रखते हैं? अगर हम हर बच्चे से

व्यक्तिगत रूप से संपर्क करके पूछताछ करें, तो हमें निश्चित रूप से जवाब मिल जाएंगे।"
यह बात सबको समझ आ गई थी। जांच के दौरान उन्हें जो जानकारी मिली, वह यह थी: अफीम और हेरोइन का डर, घर में माता-पिता के बीच झगड़े और दोनों के काम करने के कारण जिम्मेदारी से बचने की प्रवृत्ति।

■

हालांकि अन्य ब्रह्मचारी शिक्षक चिंतन में लीन थे, लेकिन मास्टर रामचंद्र के चेहरे पर असुविधा का कोई संकेत नहीं था। बच्चों को पढ़ाने के अलावा, ध्यान में समय बिताने की उनकी दिनचर्या अभी भी पहले जैसी ही थी।
लेकिन एक दिन वह अन्नाय्या के कमरे में गया और उसके सामने कंबल पर बैठकर बोला,
मैंने जाने का फैसला कर लिया है।
"क्यों?" अनाया ने डरते हुए पूछा।
"यहां ध्यान करना संभव नहीं है। मन को एकाग्र करने के लिए बहुत प्रयास करना पड़ता है।"
"लेकिन आपका कमरा तो बिलकुल आखिरी छोर पर है। क्या आपको वहां भी निर्माण कार्य का शोर सुनाई देता है?"
``यह बाहरी आवाज़ों का सवाल नहीं है। प्रायश्चित के लिए एक पवित्र भूमि आवश्यक है। मुझे इसके लिए कहीं जाना होगा..." इतना कहकर वह चला गया।
रामचंद्र मास्टर के चले जाने की खबर सभी शिक्षकों के लिए एक बड़ा झटका थी। जहां अन्य शिक्षक रामचंद्र मास्टर की शांति से ईर्ष्या करते थे, वहीं उनके जाने की खबर फैल चुकी थी। जब शरभन्ना उनसे मिलीं और इस विषय पर और बात करने लगीं, तो उन्होंने कुछ भी जवाब नहीं दिया। उनका मन यहाँ एकाग्र नहीं हो रहा था, वे बस यही कहते रहे,
शरभन्ना ने पूछा,
"लेकिन तुम कहाँ जा रहे हो?"
मुझे नहीं पता। इसके बाद मुझे रहने के लिए कोई जगह ढूंढनी पड़ेगी।
कुछ दिनों बाद, रामचंद्र मास्टर ने अन्नय्या से दोबारा मुलाकात की और उनसे कहा,
मैंने आपको इसलिए बताया था ताकि आपके लिए दूसरा शिक्षक ढूंढना सुविधाजनक हो। तीन सप्ताह बीत चुके हैं। जिस दिन आप मुझे अनुमति देंगे, मैं चला जाऊंगा।
इस घटना के बाद एक शाम, अन्नय्या ने सभी ब्रह्मचारी शिक्षकों को अपने कमरे में बुलाया। यह समझते हुए कि यह समस्या केवल रामचंद्र गुरु की ही नहीं, बल्कि सबकी है, ढाई घंटे तक चर्चा हुई। अंत में, अन्नय्या ने कहा,
उन्होंने इतने वर्षों तक महाविद्यालय की सेवा की है। हमें यह भी नहीं पता कि अब वे कहाँ जाएँगे। यहाँ की परिस्थितियों में बदलाव आने के बावजूद भी उन्होंने नि:शुल्क पढ़ाना जारी रखा। आइए, हम अपनी संस्था की ओर से उन्हें कम से कम दस हजार रुपये भेंट करें। आइए, हम उनके बलिदान और सेवा को याद करने के लिए एक सभा आयोजित करें और कृतज्ञता व्यक्त करते हुए उन्हें शॉल में लपेटकर विदाई दें!...
इस सुझाव को सभी ने सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया।
हालांकि, सभी शिक्षकों के मन में एक विचार आया। जब संस्था की आर्थिक स्थिति इतनी सुधर चुकी थी, तो बिना वेतन लिए काम करने का क्या मतलब था? लेकिन किसी ने भी खुलकर यह बात नहीं कही। एक और सवाल उन्हें फिर से परेशान करने लगा। अगर हम जीवन भर बिना वेतन लिए यहां मुफ्त में काम करते रहे, और अगर रामचंद्र मास्टर की तरह किसी कारणवश हमें भी यहां से जाना पड़ा, तो

बुढ़ापे में हमारा क्या होगा? जब अन्य नव नियुक्त शिक्षक आपस में भविष्य निधि, वेतन वृद्धि आदि पर चर्चा कर रहे थे, तो इन शिक्षकों को शक होने लगा कि कहीं उनके विचार गलत तो नहीं थे।
हालांकि, रामचंद्र मास्टर ने पैसे लेने से साफ इनकार कर दिया।
"मैं यहां ध्यान लगाने के लिए एक उपयुक्त स्थान के रूप में आया था... मैं अपनी आवश्यकता के अनुसार थोड़ा कर्म भी कर रहा था। बदले में, आपने मुझे प्रेम दिया, मुझे और क्या चाहिए?" यह उनका उत्तर था।
नए शिक्षक सफ़ारी पोशाक पहनकर कार्यालय पहुंचे। रामचंद्र मास्टर ने विदाई समारोह आयोजित करने का विचार सुना। लेकिन वास्तव में, एक दिन वे बिना किसी को बताए चले गए। वे संस्थान की चटाइयाँ, कंबल, बर्तन और पुस्तकालय की पुस्तकें उनके संबंधित स्थानों पर रखकर चले गए।
हम सबको धोखा देकर चले जाने पर सब उससे नाराज़ थे। लेकिन जब गुस्सा शांत हुआ, तब हमें एहसास हुआ कि वह अपने स्वभाव के अनुसार ही व्यवहार कर रहा था।

■

उस वर्ष के अंत तक, संकाय के पहले छात्र स्कूल छोड़ चुके थे, और पूरा स्कूल विभिन्न आर्थिक समूहों के छात्रों का केंद्र बन गया था। इससे शिक्षकों को काफ़ी सुविधा तो मिली, लेकिन अन्नाया और अन्य शिक्षकों को ऐसा महसूस हुआ जैसे उन्हें उनके मूल स्थान से उखाड़ दिया गया हो।
विद्यालय की आर्थिक स्थिति अब बहुत अच्छी थी। सीमेंट से बनी बड़ी-बड़ी इमारतें एक साफ-सुथरे परिसर से घिरी हुई थीं, और बच्चों के लिए टेनिस, क्रिकेट, फुटबॉल, टेबल टेनिस, बैडमिंटन जैसे खेल उपलब्ध थे। परिसर इतना घना था कि न केवल जानवर बल्कि मनुष्य भी अंदर नहीं जा सकते थे। यहां तक कि अगर कर्नाटक के मुख्यमंत्री परशुराम गौड़ा भी आ जाते, तो भी वे एक फुट जगह भी नहीं घेर पाते; चारों ओर से सख्त सुरक्षा व्यवस्था की गई थी!
अब बड़े-बड़े व्यापारी, मंत्री और सेना अधिकारी उस स्कूल में दाखिला पाने के लिए संघर्ष कर रहे थे। इसके लिए बड़े-बड़े नामों की सिफारिशें लाई जा रही थीं। अब तो राजस्व विभाग के मंत्री के पोते ने भी वहां आवेदन कर दिया था!
रामचंद्र मास्टर के जाने के बाद से बेचैन रहे अन्नय्या, छात्रों के अंतिम बैच के चले जाने के बाद से पूरी तरह से व्याकुल हो गए थे।
यह सच है कि परशुराम गौड़ा ने गलत किया – लेकिन हमने क्या किया? हमने इतना संघर्ष किया ताकि सौद्रगौड़ा द्वारा दी गई भूमि परशुराम गौड़ा या सरकार का कब्जा न हो जाए। लेकिन क्या आज का विद्यालय सौद्रगौड़ा की इच्छाओं या गांधीजी के सपनों के अनुरूप है? दूसरे शब्दों में, हमने भी सौद्रगौड़ा के साथ विश्वासघात किया! भले ही यह सच हो कि बिना सोचे-समझे शुरू किया गया सरकारी विद्यालय खुल गया है, क्या पूर्व विवेकानंद विद्याशाला अभी भी यहाँ मौजूद है?

■

इस विचार पर मनन करते हुए अन्नाय्या के मन में एक विचार आया। अगले वर्ष विद्यालय में प्रवेश के समय, दो-तिहाई विद्यार्थियों को हमेशा की तरह दाखिला दिया जाएगा, लेकिन एक-तिहाई विद्यार्थी गाँव के जरूरतमंद बच्चों में से होंगे। अधिमानतः, वे उसी क्षेत्र के गरीब बच्चे होंगे, जैसा कि सौद्रगौड़ा से वादा किया गया था। इन गरीब बच्चों से एक पैसा भी नहीं लिया जाएगा - सारा खर्च अन्य विद्यार्थियों से वसूला जाएगा। इस तरह, हमें अन्नाय्या और सौद्रगौड़ा से प्राप्त दान का कुछ हद तक लाभ मिलेगा।
इस विचार से थोड़ा संतुष्ट होने के बाद, उन्होंने आगे की बातों पर विचार करना शुरू किया। सभी बच्चों को एक जैसी वर्दी दी जाएगी। बच्चों को कपड़ों के चुनाव

के आधार पर यह पता नहीं चलना चाहिए कि कौन गरीब है और कौन अमीर। गरीबों को यह नहीं पता चलना चाहिए कि हम यहाँ गरीब बच्चों की मदद कर रहे हैं। उन्हें यह बात समझने से रोकने की जिम्मेदारी यहाँ के अधिकारियों की होगी। छात्रों के मन में देनदार और लेनदार जैसे विचार नहीं आने चाहिए...
अन्नय्या ने सभी ब्रह्मचारियों को अपने कमरे में बुलाया और अपने मन के विचार उन्हें बताए। सब कुछ सुनकर उन्हें भी ऐसा लगा जैसे उनकी आत्माएं जागृत हो उठी हों। कुछ ने तो यह सुझाव भी दिया कि यह अनुपात आधा-आधा होना चाहिए। कुछ ने भावुक होकर कहा कि यदि प्रत्येक धनी माता-पिता अपने बच्चे के साथ एक गरीब विद्यार्थी को भी शिक्षित करें, तो उन्हें भी शिक्षा प्रदान करने का पुण्य प्राप्त होगा। डॉ. चंद्रशेखर ने भी इस बात का समर्थन किया।
सभी ब्रह्मचारी शिक्षकों को लगा कि उन्होंने जो निर्णय लिया था, उसे लागू करने के लिए उन्हें केवल बैठक की औपचारिकताओं को पूरा करना होगा। उन्हें इसकी आवश्यकता भी महसूस नहीं हुई। लेकिन अन्नय्या संगठन के नियमों को तोड़ने के लिए तैयार नहीं थे। उन्होंने कहा,
सबसे पहले मैं बैंगलोर जाऊंगा और चेयरमैन को सब कुछ बताऊंगा। फिर मैं एक बैठक करूंगा, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि सब कुछ ठीक है – उस समय किसी को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए –"
"जो लोग ऐसे अच्छे विचारों का विरोध करते हैं, वे हमारे संगठन की समिति में रहने के योग्य नहीं हैं! इसके अलावा, हमें उनकी सहमति पर क्यों निर्भर रहना चाहिए? अंतिम निर्णय हमारा क्यों नहीं होना चाहिए?" सोमशेखराचार्य ने कहा, जो अब तक बहुत कम बोलते थे।
लेकिन हम यह क्यों मान लें कि वे अभी इसका विरोध करेंगे? अगला शैक्षणिक सत्र शुरू होने में अभी बहुत समय है – तब तक हम सबको इस बात के लिए मना लेंगे –" यह कहते हुए अन्नाय्या को संगठन के वे सदस्य याद आए जो बड़े शहरों में अपने-अपने व्यवसायों में व्यस्त थे। उन्हें अपने महाविद्यालय के लिए कई धनी लोगों से, अपने माता-पिता के लिए श्राद्ध करने वालों से, और स्वयं के लिए श्राद्ध करने वालों से दान मिलता था। कभी-कभी, अचानक, एक बड़ी राशि का चेक आता और उसके साथ एक पत्र होता जिसमें लिखा होता, 'हम पद्म भूषण गिरिधारी लाल अग्रवाल की सलाह पर यह दान भेज रहे हैं!' इतने बड़े और उदार लोग इतनी अच्छी सलाह को क्यों ठुकराएंगे? इन उदार लोगों के समर्थन से इस योजना को लागू करने में क्या समस्या है? अन्नाय्या के विचारों ने अन्य ब्रह्मचारियों को भी आश्वस्त कर दिया।
लेकिन जब अन्नाइया बैंगलोर गए और संगठन के अध्यक्ष, एडवोकेट पाटिल से मिले और उनके सामने अपने विचार रखे, तो उन्होंने हैरानी जताई,
बहुत दिलचस्प!
अन्नाय्या पाटिल, जो उन्हें पिछले पांच वर्षों से जानते थे, इस बयान से क्षण भर के लिए भ्रमित हो गए। पाटिल, जो एक वकील थे और सुप्रीम कोर्ट में कई मामलों में जीत हासिल कर चुके थे, उनके लिए अपने विरोधी वकील को स्नेहपूर्वक 'मेरे विद्वान मित्र' कहना पेशे का हिस्सा था।
पाटिल ने बड़े उत्साह से अन्नाय्या से पूछा, "वाह! यह विचार आपको कैसे आया?" और इसी तरह के कई सवाल पूछे, फिर कमरे में 180 डिग्री घूमने वाली अपनी कुर्सी पर बैठे हुए उन्होंने अपने बाएँ हाथ की दो उंगलियों से अपने बालों के सिरों को घुमाते हुए कहा,
"आप जो कह रहे हैं वह नैतिक रूप से सही है। लेकिन इसका एक पहलू ऐसा भी है जो नैतिक रूप से अस्वीकार्य है। क्या उन माता-पिता पर 100 प्रतिशत कर लगाना उचित है जो अपने बच्चों को आपके संस्थान में शिक्षा दिलाने की उम्मीद रखते हैं?"

आप इसे कर क्यों कहते हैं? उनके पास भुगतान करने की क्षमता है। क्या वे हमारी सेवाएं मुफ्त में नहीं लेते? आपको अपने किसी और भाई को सहारा देना चाहिए - हमारी सेवाएं तो आपके लिए ही हैं, है ना! मुझे नहीं लगता कि हमें उन्हें सारी बातें बताने की ज़रूरत है। हम उन्हें यह क्यों बताएं कि हम यहां किसी को मुफ्त में पढ़ाते हैं? यहां के बच्चे देहरादून, उदमंडल, कोडाइकनाल के स्कूलों में पढ़ने वाले प्रत्येक छात्र के खर्च के आधे से भी कम में अपना जीवन यापन करते हैं। इसलिए अब, भले ही उन्हें दुगुना खर्च करना पड़े, अगर एक बच्चे को भी मुफ्त शिक्षा मिल जाए, तो उन्हें ज्यादा खर्च नहीं करना पड़ेगा!
"हां, देखिए, उन्हें बिना बताए पैसे दान करना उनके साथ धोखा करने जैसा है!"
तो चलिए उन्हें भी बता देते हैं—इसे न्यूजलेटर में छाप देते हैं—यह हमारे मिशन स्टेटमेंट का हिस्सा है, इसलिए—"
अगर इसके परिणामस्वरूप वे अपने बच्चों को भेजना बंद कर दें तो क्या होगा?
"वे इसे बंद क्यों करेंगे? यहाँ त्याग की भावना वाले ब्रह्मचारी पढ़ाते हैं - वे यह भी जानते हैं कि अन्य स्कूलों में यह नैतिक भावना नहीं है!"
"यह तो दिलचस्प बात है!" यह कहते हुए उन्होंने चर्चा को बीच में ही रोक दिया और कुर्सी को इधर-उधर खिसकाया, फिर कुर्सी को वापस अपनी जगह पर लाकर अन्नय्या की ओर देखते हुए बोले, "सेवा, ब्रह्मचर्य और त्याग जैसे शब्द आपके विचारों में गहराई से समाए हुए हैं! ऐसा लगता है जैसे आप मानते हैं कि त्याग के बिना सेवा संभव ही नहीं है! आप हमारी पारंपरिक भारतीय मान्यताओं में विश्वास करते हैं! लेकिन आजकल सेवा का अर्थ यह नहीं रह गया है। इसका अर्थ है कि हमें जो काम सौंपा गया है, हम उसे ठीक से करेंगे - बदले में आप हमें बताई गई राशि का भुगतान करेंगे - हम तयशुदा काम के प्रति वफादार भी रहेंगे - इसका मतलब है कि हम इसके बदले कोई लाभ नहीं चाहते - ऐसा तो कोई कहता ही नहीं! यह कैसी मोटर सेवा है? इसका मतलब यह नहीं है कि हम आपको मुफ्त में ले जाएंगे। हम बस तय समय पर चलाएंगे, बीच में नहीं रोकेंगे - आपको सुरक्षित रूप से तय स्थान तक पहुंचाएंगे - बस यही इसका अर्थ है! यह तो आपको ये सारी सुविधाएं देने का शुल्क है! अगर आप सहमत हैं, तो आइए - अगर नहीं, तो जाइए! यह अर्थ तो व्यापार पर आधारित है।" इसलिए, सर्वोत्तम सेवा प्रदान करके आप सर्वोत्तम लाभ भी प्राप्त कर सकते हैं। ऐसे में त्याग और ब्रह्मचर्य की क्या आवश्यकता है?"
``–यह सच नहीं है। हमारे स्कूल की विशेषता–" अन्नाय्या के बोलने का लहजा थोड़ा अटपटा था।
देखिए, अन्ना गौड़ा! मैं आधुनिक अभिभावकों और हमारे संस्थानों के संरक्षकों की सोच को भलीभांति जानती हूँ। वे एक ऐसा संस्थान चाहते हैं जो पेशेवर ढंग से और ईमानदारी से चलाया जाए। वे इस बात पर बिलकुल भी जोर नहीं देते कि इसे संन्यासियों या ब्रह्मचारियों द्वारा चलाया जाए। यद्यपि मैं आपका सम्मान करती हूँ, हम अन्य अभिभावकों से भी यही अपेक्षा नहीं कर सकते।
अब अन्नाया को ऐसा लग रहा था मानो उसका दिमाग सुन्न हो गया हो।
वकील ने आगे कहा,
"जैसा कि आप कहते हैं, चलिए आधे बच्चों को गांवों से लेते हैं। लेकिन क्या ये बच्चे पृष्ठभूमि, आत्मविश्वास, बुद्धि और प्रतिभा के मामले में पैसे देने वाले बच्चों के बराबर हो सकते हैं? पैसे देने वाले बच्चे आधे घंटे के भीतर ही इन बच्चों को देखते रह जाएंगे। मिलते ही वे एक-दूसरे को जान लेंगे और उनके नाम, गांव, उनके पिता क्या करते हैं, आदि के बारे में सवाल पूछेंगे। तब उन बच्चों में अहंकार और इन बच्चों में हीन भावना का भाव आना तय है। अमीर बच्चों को यह भी पता चल जाएगा कि ये बच्चे उनके पैसों से खाना खा रहे हैं। तब इस संस्था का कुरुक्षेत्र बनने में देर नहीं लगेगी। तब आप क्या करेंगे?"

"इस तरह के भेदभाव को रोकना ही हमारी संस्था का उद्देश्य है - यह हमारा कर्तव्य भी है। मैं इस बारे में अपने शिक्षकों से बात करता हूं - वे बच्चों को भी ऐसा ही करने के लिए प्रेरित करेंगे।"
"लेकिन क्या बच्चों के माता-पिता इस बात से सहमत होंगे?"
"इसे स्वीकार न करने के पीछे क्या कारण था?"
"वे सहमत क्यों होंगे? अगर उनमें से कोई भी अदालत में जाकर कहता है कि यह सब अन्याय है, तो आपका मामला बर्बाद हो जाएगा!"
"अगर उन्हें हमारी नीति पसंद नहीं है, तो उन्हें अपने बच्चों को वापस बुला लेना चाहिए। अदालत जाने की क्या ज़रूरत है? हम संगठन के लिए किसी भी प्रकार की सरकारी सहायता नहीं लेते हैं।"
“जब यह कहा जाता है कि सभी को खर्च साझा करना चाहिए, तो सभी को हिसाब-किताब देखने का अधिकार है। उन्हें हमारे बेटे पर थोपे गए अतिरिक्त खर्चों को अस्वीकार करने का भी अधिकार है। यह सब बकवास छोड़ो – तुम अपना काम करो। कल एक महत्वपूर्ण मामला है... मैं उस काम में व्यस्त हूं...”, पाटिल ने कहा, घंटी बजाई और अपने सहायक वकील को फाइल लेकर अंदर आने को कहा।
लेकिन अब, निरुपया ने खड़े होकर अन्नय्या से पूछा,
तो हम दोबारा कब मिलेंगे?
"कल मैं पूरे दिन व्यस्त रहूंगा। शाम को क्लब में चुनाव है। मुझे परसों दिल्ली जाना है। मुझे सुबह जल्दी निकलना होगा, अपना काम खत्म करना होगा और रात को बेंगलुरु के लिए निकलना होगा। एयरलाइन ने मुझ पर कोई एहसान नहीं किया। कर्नाटक के सांसद इसके लिए क्या करते हैं? अब इस विषय पर और क्या कहा जा सकता है?" उन्होंने साफ तौर पर दिखा दिया कि उन्हें इस विषय पर दोबारा चर्चा करने में कोई दिलचस्पी नहीं है।
लेकिन अब अन्नाय्या को लगा कि उसके और राष्ट्रपति के बीच एक बहुत बड़ी अदृश्य दीवार खड़ी है। उसने इसे पहले कभी नहीं तोड़ा था। सच कहें तो, उसे पहले कभी इस बारे में इतनी चर्चा करने का मौका नहीं मिला था। दोनों एक-दूसरे को समझते थे। इसके बाद भी, कुछ स्पष्टीकरण हुए – लेकिन बुनियादी मुद्दों पर कभी कोई असहमति नहीं हुई, जहाँ तक संभव हो, हर बात की बारीकियों को समझना ज़रूरी था।
वे खड़े हुए और बोले,
ठीक है तो... मैं जा रहा हूँ...
वकील पाटिल ने भी इस पर खेद व्यक्त करते हुए कहा,
क्षमा कीजिए, मुझे जल्दी है। यह एक ऐसा मामला है जिसमें मुझे स्वयं उपस्थित होना होगा-"
ब्रह्मचारी गुरुओं को जब पता चला कि पाताल उनके विचार के विरुद्ध हैं, तो वे बहुत क्रोधित हो गए। सोमशेखराचार्य और नारायणप्पा भी क्रोधित हो गए। लेकिन अन्नया ने उन्हें शांत किया। सात-आठ दिनों तक उनकी चर्चा का एकमात्र विषय यही रहा। उन्होंने तय किया कि वे दृढ़ रहेंगे और हार नहीं मानेंगे। शेखरमूर्ति के इस विचार को सभी ने स्वीकार कर लिया गया, “चाहे कुछ भी हो जाए, अगले महीने बैठक होगी। उस समय हम अपनी योजना उनके सामने रखेंगे और अपनी बात पर अड़े रहेंगे।”
वार्षिक उत्सव की सुबह या अगले दिन आम सदस्यों की बैठक आयोजित करना एक सामान्य प्रथा थी। लेकिन हर साल सभी सदस्य उस बैठक में नहीं आते थे। अध्यक्ष, कार्यकारी अध्यक्ष, कोषाध्यक्ष और ज़वेरी जैसे एक-दो महत्वपूर्ण सदस्यों द्वारा उठाए गए मुद्दों पर सभी ने सहमति में सिर हिलाया। उस बैठक में ज़वेरी का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा गया, जिन्होंने अपनी माता के नाम पर पूरी इमारत का निर्माण करवाया था। यद्यपि पाटिल अध्यक्ष थे, फिर भी अगला मुद्दा तभी उठाया

जाता था जब ज़वेरी हर मुद्दे पर अपनी सहमति में सिर हिलाते थे। उनका प्रभाव सेवानिवृत्त उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सुकुमारन नायर से भी अधिक था। यद्यपि वे केवल एक करोड़पति और विदेशी कपड़ा कारखानों के मालिक-अधिकारी थे, फिर भी बैठक में यह आभास स्पष्ट रूप से हुआ कि वे स्वयं खादी के कपड़े पहनते थे। वे खादी की अवधारणा को समझते थे और उसे इस विश्वास के साथ प्रस्तुत करते थे कि पाटिल सहित सभी लोग इसे स्वीकार करेंगे।
इस वर्ष की बैठक में हैदराबाद के नेमारेड्डी और मुंबई के दिग्घे मौन बैठे रहे। ज़ावेरी ने एजेंडा के एक महत्वपूर्ण मुद्दे पर चर्चा शुरू की। पाटिल इस बात से नाराज़ थे कि इस मुद्दे को उनके बिना एजेंडा में शामिल किया गया। फिर भी, वे चुप रहे।
जैसे ही यह मुद्दा उठा, ज़ावेरी ने पूछा,
यह बिलकुल सच है कि गांवों का उत्थान होना चाहिए। प्रधानमंत्री जी के चैंबर ऑफ कॉमर्स में आने पर भी मैंने यही बात कही थी। मुंबई-बैंगलोर-अहमदाबाद क्षेत्र में कारखाने लगाने के बजाय, उन्हें गांवों में विकसित किया जाना चाहिए। इसका मतलब है कि सरकार को वहां बिजली, अच्छी सड़कें, टेलीफोन और रेलवे की व्यवस्था करनी चाहिए – यानी हमें उन क्षेत्रों में भी कारखाने लगाने चाहिए! सच कहूं तो, मुझे आपको यह बताने की ज़रूरत नहीं है कि हमारे इस स्कूल से आसपास के क्षेत्र को कितना लाभ हुआ है। दूध, सब्जियों आदि की कीमतें बढ़ गई हैं। इसके अलावा, यहां के सभी मज़दूर इसी क्षेत्र के हैं। फिर भी, यह कहना सही नहीं है कि सारा लाभ इन्हीं गांवों को मिलना चाहिए। मैं भी गांवों के उत्थान के पक्ष में हूं। मैंने स्वयं इस विषय पर महात्मा गांधी के सभी विचारों को पढ़ा और उनका अध्ययन किया है।
सेवानिवृत्त न्यायाधीश ने कहा,
"अन्नायी, अगर हम स्कूलों को वैसे ही चलाने का फैसला करते हैं जैसा तुम सोचती हो, तो पचास प्रतिशत बच्चों को अंग्रेजी में शिक्षा देना संभव नहीं होगा। हमें इस बारे में गंभीरता से सोचना चाहिए। भले ही हम अंग्रेजों को देश से निकाल दें, आज तो यह हमारे देश की संपर्क भाषा है! हम इसे भूल नहीं सकते।"
ज़वेरी ने फिर कहा,
"ऐसा कोई दूसरा देश नहीं है जहाँ इतना अन्याय हो। किसी दूसरे देश में इतने अन्यायपूर्ण कर नहीं हैं! यहाँ तो ज़्यादा पैसा कमाना पाप बन गया है! देखिए, वहाँ से गरीबी दूर कीजिए! गरीबों के नाम पर काम करने वालों के साथ अन्याय होता है। इसके अलावा, आप उस नागरिक पर 100 प्रतिशत कर लगाएंगे जो सरकारी करों में से चार पैसे बचाकर अपने बच्चे को अच्छी शिक्षा देने की कोशिश करता है? यह तो उस गाय के खुर काटने जैसा है जो अत्यधिक आशा से आश्रय देती है! मैं गरीबों की सेवा करने की आपकी इच्छा की सराहना करता हूँ, हे नारायण! इसके लिए मैंने आपके लिए एक अलग ही भव्य योजना बनाई है! मेरी एक चाची थीं - जन्म से ही अपंग, बेचारी! उन्होंने अपना पूरा जीवन गरीबी में बिताया। वह हमारे घर में रहती थीं। मेरी दादी ने उनके लिए जो पैसे बचाए थे, वे अभी भी पड़े हैं। उन पर काफी ब्याज भी जमा हो गया है। मैं उस चाची के नाम पर विकलांग बच्चों के लिए एक स्कूल शुरू करना चाहता हूँ। अमीरों के विकलांग बच्चों के लिए तो कुछ व्यवस्था होनी चाहिए, लेकिन गरीबों के विकलांग बच्चों का क्या?" मैं उन्हें पूंजी दूंगा... बाकी व्यवस्थाएं आप देख लीजिए। चलिए, केवल गरीब विकलांग बच्चों को ही शामिल करते हैं। चलिए, उन्हें नहलाते हैं - चलिए, उन्हें किसी तरह का व्यवसाय शुरू करवाते हैं... चलिए, उन्हें अपने पैरों पर खड़ा करते हैं..."
इस पर सभी ने उत्साहपूर्वक सहमति जताई। न्यायाधीश ने तो यहां तक सिद्धांत प्रस्तावित किया कि 'विकलांग नारायण की सेवा करना एक गरीब नारायण की सेवा करने से बेहतर है'।

"इसमें कोई शक नहीं कि दिव्यांग बच्चों के लिए स्कूल शुरू करना बहुत जरूरी है। हम इस एक सौ बीस एकड़ जमीन के एक तरफ एक स्कूल शुरू करेंगे..."
दिघे और रेड्डी ने अन्नय्या के भाषण को बाधित किया,
नहीं-नहीं! हम इसके खिलाफ हैं। अगर यहां रखे गए बच्चों को हर सुबह, दोपहर और शाम इस दृश्य के सामने रखा जाए, ताकि उनकी शारीरिक शक्ति और बुद्धि का विकास हो सके, तो क्या इससे उनका उत्साह कम नहीं हो जाएगा? उन्हें कहीं और ले जाओ...!
राष्ट्रपति और न्यायाधीशों ने इस मामले को विचारणीय पाया, लेकिन वे चुप रहे। ज़ावेरी, जिसने बचपन से ही अपनी चाची की विकलांगता देखी थी, यह नहीं समझ पा रहा था कि कौन सही है।
अन्नाय्या ने कहा,
यह ठीक नहीं है। हम सब सिद्धार्थ का उदाहरण जानते हैं। उन्हें जाने दीजिए। सब कुछ अलग होगा। हमने इस क्षेत्र में शिक्षा का प्रसार करने और आत्मनिर्भरता बढ़ाने के उद्देश्य से इस विद्यालय की शुरुआत की थी। इसके लिए हम सबने ब्रह्मचर्य का पालन करने और काम करने की शपथ ली थी। हमने सोद्रगौड़ा परिवार को भी यही बात बताई थी, जिन्होंने यह भूमि दान की थी, और उन्हें भी भूमि दान करने के लिए राज़ी किया था। यह नहीं बदलना चाहिए। दूसरों की मदद करना हमारा काम नहीं है। अपने लक्ष्य को पूरा करने के बजाय, हम सभी ब्रह्मचारी यह सोचते हैं कि हम अमीरों के बच्चों को और भी अमीर बना रहे हैं!
अन्नाय्या के आखिरी वाक्य ने ज़ावेरी का धैर्य पूरी तरह तोड़ दिया। उसने अचानक कहा,
"अगर ऐसा है तो आप यहां रहकर सेवा क्यों करते हैं?"
"संगठन के साथ हमारा रिश्ता इतना सतही नहीं है कि हम सिर्फ चार पैसे लेकर इसे तोड़ दें!" अन्नाय्या ने जोर से कहा।
"नई समिति के आने पर आपने कभी वेतन नहीं लिया?" ज़ावेरी ने पूछा।
"कभी नहीं!" अन्नाय्या ने उत्तर दिया।
"इसे देखो - नए पैमाने के अनुसार इन सबका हिसाब लगाओ और सबका बकाया चुकाकर सबको रिहा कर दो!" ज़ावेरी ने फैसला किया।
न्यायाधीश ने कहा,
"यह कानून के खिलाफ होगा। उन्होंने इसे स्वेच्छा से लिखा था, इसलिए उस समय वार्षिक खीते बिलकुल सही थे।"
अगर ऐसा है तो उन्हें ग्रेच्युटी या प्रोविडेंट फंड के नाम पर पैसे दे दीजिए। मेरी किसी भी फैक्ट्री में काम करने वाला कोई भी मजदूर कभी खाली हाथ नहीं लौटा! एक उद्योगपति को हमेशा उदार होना चाहिए, मैंने आज तक इस नियम का कड़ाई से पालन किया है!
लेकिन अब पाटिल को एहसास हो गया था कि मामला हाथ से निकल रहा है। उन्होंने कहा,
``अन्नाया और उनके सहयोगी अपनी नौकरी छोड़ने की बात नहीं कर रहे हैं..."
"हममें से कोई भी यह नहीं समझता कि हम सेवक हैं!" अन्नाय्या ने ज़ावेरी और पाटिल को संबोधित करते हुए कहा।
कुछ याद करते हुए ज़ावेरी ने कहा,
इस संदर्भ में मुझे आपसे एक बात कहनी है। कुछ अभिभावकों ने मुझे यह बताया है, इसलिए मैं इसे यहाँ बता रहा हूँ। हालाँकि अविवाहित शिक्षक बच्चों को नैतिकता तो सिखा सकते हैं, लेकिन वे उन्हें तेज़ी से विकसित हो रहे ज्ञान से वंचित कर सकते हैं। इसके बाद, शिक्षकों की नियुक्ति करते समय स्नातकोत्तर डिग्री अनिवार्य कर देनी चाहिए। ये अविवाहित शिक्षक गाँवों के बच्चों को ए-ए-ई-ई तो

पढ़ा सकते हैं! वे इंजीनियरिंग और आईआईटी में दाखिला लेने वाले बच्चों का मार्गदर्शन नहीं कर सकते। यह कहने के लिए क्षमा चाहता हूँ!..."
आखिरी वाक्य सुनकर अन्नाय्या का धैर्य भी टूट गया। "अगर ऐसा है तो अपने बच्चों को साथ ले चलो! हम गांव के बच्चों को उनकी मातृभाषा में अक्षर सिखाएंगे।" वह कुछ ऐसा कहना चाहता था, लेकिन उसने खुद को रोक लिया।
ज़वेरी की नाक और कान लाल हो गए थे। यह देखकर पाटिल ने अन्नाय्या को चुप रहने का इशारा किया। ज़वेरी अपने खादी के रुमाल से अपना चेहरा और गर्दन पोंछने लगा।
बैठक के बाद, पाटिल ने अन्नाय्या से अलग से मुलाकात की और कहा,
"आपने मुझसे बिना पूछे सबको पत्र लिख दिया और इस मुद्दे को एजेंडा में शामिल कर दिया। सौ प्रतिशत टैक्स के लिए कौन सहमत होगा? जैसा कि आप कहते हैं, अगर आपने हर कक्षा में दस बच्चे लिए होते, तो योग्यता को बहाना बनाकर सबको आसानी से समझाया जा सकता था। मैं तो यही कहता।"
"लेकिन क्या इस स्कूल में गांव के बच्चों के लिए एक निश्चित स्तर की योग्यता हासिल करना संभव है? एक बात तो तय है, अब हम पूरी तरह से निराश हो चुके हैं!" अन्नाय्या ने कहा।
"इस बारे में बाद में बात करेंगे..." पाटिल ने भी इस विषय को छोड़ दिया।
अन्नाय्या ने अगले दिन के समारोह तक अपने ब्रह्मचारी साथियों को इस बारे में कुछ नहीं बताया। फिर भी, उन्हें यह महसूस होने लगा था कि अकेले सब कुछ सहना मुश्किल हो रहा है।

■

२०

होन्नाटी को उसकी माँ का एक पत्र मिला, जिसमें उसे जल्द से जल्द आने के लिए कहा गया था। पत्र में इसके अलावा और कोई विषय नहीं था। इसमें यह भी नहीं पूछा गया था कि वह बिना बताए क्यों चला गया था। इसमें यह भी नहीं बताया गया थी कि उसे कैसे पता चला कि वह अब कॉलेज में है। "जल्दी दिल्ली आ जाओ... मुझे तुमसे एक ज़रूरी बात करनी है—तुम्हारे पिता और मैं वैसे ही हैं जैसे हम इस उम्र में हुआ करते थे—" पत्र में बस इतना ही लिखा था।
पत्र पढ़ते ही होन्नाटी का मन अपने माता-पिता, विशेषकर अपनी माँ की यादों से उदास हो गया। बिना बताए वह घर छोड़कर चला गया। उसके बाद भी उसने उन्हें अपने ठिकाने के बारे में नहीं बताया। आखिर बताता क्या था? अगर वह एक जगह रहकर कुछ कर भी रहा होता, तो बताने का सवाल ही नहीं उठता! दिल्ली छोड़ने के समय उसके मन में जो अपराधबोध और पछतावा था, वह समय के साथ कम हो गया था। लेकिन जब कॉलेज में उसकी मुलाकात रविंद्र से हुई और उसे एक ही कमरे में रहना पड़ा, तो वह भावना फिर से तीव्र हो गई। लेकिन अचानक वह दिल्ली के लिए निकल गया। उसने अन्नाय्या को एक पत्र लिखकर बताया था कि वह वहाँ एक अखबार में काम कर रहा है। उसने उस अखबार की एक प्रति भी भेजी थी। हेमंत को राजनीति और उसमें व्याप्त भ्रष्टाचार के बारे में कोई विशेष जानकारी नहीं थी। उसने कई साल पहले अखबार पढ़ना छोड़ दिया था। फिर भी, उसे रविंद्र के इस्तीफे के बारे में पता था और यह भी कि आज वह बिना वेतन की उम्मीद किए एक निडर अखबार में काम कर रहा है। इसी वजह से उसके दिल का दर्द बढ़ता जा रहा था।
उसी पत्र में मेरी माँ के आने की खबर थी। मैं उस पत्र को ठीक से पढ़ भी नहीं पाया था।

उसने अन्नाय्या को अपनी माँ के पत्र के बारे में बताया और बैंगलोर जाकर दिल्ली जाने वाली ट्रेन पकड़ी। उस समय आरक्षण मिलना असंभव था, इसलिए उसने टी.सी. को बताया कि वह नियमित यात्री है और ट्रेन के डिब्बे में प्रवेश कर गया। टी.सी. ने तुरंत उसके लिए एक बर्थ का इंतजाम कर दिया और बीस रुपये मांगे। अंत में, उसने हेमंत द्वारा दिए गए पंद्रह रुपये स्वीकार कर लिए।
न जाने क्यों, देखते ही देखते हेमंत को ऐसा लगने लगा कि उसने कम से कम पंद्रह रुपये रिश्वत दी है। वह खुद भी इससे हैरान था। इसमें कुछ नया नहीं था। यात्रा करते समय उसने पहले भी कई बार इसी तरह सीट हासिल की थी। जब दस-पंद्रह रुपये में बर्थ मिलने का पूरा भरोसा था, तो स्टेशन पर आठ-दस दिन पहले जाकर सात-आठ घंटे लाइन में क्यों लगना? अब तक तो उसकी यही सोच थी। उसे कभी यह भी नहीं लगा कि वह कुछ गलत कर रहा है। वह यह भी जानता था कि रेलवे कर्मचारी इस उद्देश्य के लिए कुछ बर्थ खाली रखते हैं। तो फिर यह एहसास उसे आज ही क्यों परेशान कर रहा था?...
रात हो चुकी थी। अब टेलीकॉम ट्रेन बदल चुकी थी। नई टेलीकॉम ट्रेन नए यात्रियों को बता रही थी कि अभी जगह नहीं है—और उनमें से जो जानबूझकर दांत पीस रहे थे, उनसे कह रही थी—"बाद में देखेंगे।"
इस दृश्य को, जिसे हेमंत ने कई बार देखा था, देखते हुए सोचा – कितना बड़ा देश है! उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ! इतने बड़े देश में रिश्वत के बिना कुछ नहीं होता! पूरा देश रिश्वत के दलदल में सड़ रहा है! कुछ देर तक इसी सोच में डूबे रहने के कारण – उसके मन में अपने पापों का बोझ मिट गया, क्योंकि वह अपने चारों ओर फैले अथाह पाप के सागर को देख रहा था।
सुबह के दस बजे वह रिक्शा से घर पहुँचा। उसके पिता मेज पर बैठकर अपना रोज़ का खाना खा रहे थे। जैसे ही उसने उन्हें देखा, उसने औपचारिक रूप से पूछताछ की,
ठीक है?
उन्होंने बिना किसी पूछताछ के पूछे गए सवालों का भी जवाब नहीं दिया, जैसे कि आप कहाँ से आए हैं या कहाँ के रहने वाले हैं। मानो कोई उम्मीद ही न हो, खाना खाने के बाद वे हाथ धोने के लिए बेसिन के पास गए। हाथ धोने के बाद उन्होंने अपने मुँह से मास्क निकाला और उसे धोया, और अपनी पत्नी से 'मैं आ रहा हूँ' कहकर गाड़ी स्टार्ट कर दी। हेमंत को यह भी एहसास हुआ कि वे किसी लेख की तैयारी के लिए या फिर बस मजे के लिए भारतीय अर्थशास्त्र संस्थान की लाइब्रेरी में गए थे।
जब वह नहाकर लौटा तो उसकी माँ ने कुछ और मधुमक्खी के छत्ते बना दिए थे। उसने खाना खाते समय इस विषय को उठाया।
आपका पत्र मिल गया। मैं तुरंत रवाना हो गया।
मैंने तुम्हारे पिता को बिना बताए तुम्हें एक पत्र लिखा था। जब मैंने पत्र डाक में डाला, तो मैंने सोचा – मैंने अभी-अभी एक पत्र लिखा है! फिर मैंने सोचा, कम से कम तुमसे मिल तो लूँगी। अरे, तुम मुझे बिना बताए जा रही हो! मुझे पत्र लिख देना चाहिए था!
"तुम्हें मेरा पता कैसे पता चला?"
आपको इतना पक्का कैसे पता चला? मैंने तो इसे अनुमान के आधार पर लिखा था..."
अपनी माँ के हाथ का बना खाना खाते हुए उसे मन में शांति का अनुभव हुआ। इस भोजन को खाते हुए उसने अपने मन को लंबे समय से घेरे हुए पापों और अज्ञानता के नाश होते हुए महसूस किया। फिर भी, उसकी बातों से वह बेचैन था। पत्र लिखने और उसे फोन करने के पीछे ज़रूर कोई खास वजह होगी! उसने पूछा।
तो? यहाँ क्या खबर है?

पहले खा लो। इतनी लंबी यात्रा! न नींद अच्छी आई, न खाना ठीक रहा!
खाना खाने के बाद, उसकी माँ ने उसके सामने एक बटुआ रखा और कहा,
इसे पढ़ें...
हेमंत ने लिफ़ाफा खोला और देखा। अंदर एक कागज का टुकड़ा था। भेजने वाले का नाम नहीं था, पता नहीं था – पत्र के अंत में हस्ताक्षर भी नहीं थे। पत्र की शुरुआत रविंद्र को संबोधित करते हुए हुई थी – कांति के साथ उसके रिश्ते के बारे में एक पत्र – यह एक टाइप किए हुए पत्र की प्रति थी। रोजपंता में बड़ी पार्टी, शीतल के घर पर उसका रियाज़, आगरा और शिमला के होटलों के नाम – तारीखें –
उसे सब कुछ समझने में आधा घंटा लग गया। उसने पूरा पत्र एक बार फिर ध्यान से पढ़ा। यह स्पष्ट था कि किसी अज्ञात व्यक्ति ने रवींद्र को टाइप किए हुए पत्र में सारी जानकारी दी थी और उसकी एक प्रति यहाँ भेजी थी। पता उसके पिता के नाम का था। इसलिए उसने पूरा पत्र अवश्य पढ़ा होगा। हालाँकि, उसकी माँ ने उसे यहाँ इसलिए बुलाया होगा क्योंकि उन्हें पत्र पर विश्वास नहीं हुआ था।
जब वह पत्र पढ़ रहा था, उसकी माँ उसके पास नहीं आई। वह रसोई में ही खड़ी रही ताकि उसे असहज महसूस न हो। वह भी झिझक रहा था। थोड़ी देर बाद उसने सोचा, जब उसे सब कुछ पता है तो झिझक क्यों? और वह अपनी माँ के पास गया। उसने पूछा,
"पापा ने क्या कहा?"
"तुम बिना बताए चली गई, मुझे कभी यह ख्याल भी नहीं आया कि इसके पीछे कोई कारण हो सकता है," उसने कहा।
उसके चेहरे पर करुणा के भाव थे। वह कुछ पल वहीं खड़ा रहा। फिर उसकी माँ ने कहा,
``कैसा ससुर है! डी. डी. के. मूर्ति का बेटा उसका पति है! उसने उसे छोड़कर यहाँ पैसे कमाने के लिए रहना शुरू कर दिया – तो उसकी हैसियत क्या है, उसे बताने की कोई ज़रूरत नहीं! यह हमारा दुर्भाग्य है कि हमारे बेटे की मौत उसकी भूख के कारण हुई!"
उसकी मां के शब्दों से उसे खुशी मिली। फिर भी, उसने कहा,
फिर भी, दोनों हाथों से ताली बजाते हुए...
ये कहते हुए उन्हें रविंद्र की याद आ गई। उन्हें ये चिट्ठी अब तक मिल गई होगी। मैं उनसे माफी मांगना तो चाहता था, पर खुद को रोक लिया ताकि उन्हें दुख न हो। किसी ने शरारत में ये किया होगा। किसने किया होगा?
मां ने आगे कहा,
मैंने यह भी सुना था कि शादी से पहले वह वेश्या थी। अब तो वह अपने पति से दूर रहती है! अगर वह सुख-सुविधाओं से भरी रहती तो समझदार नहीं बनती! और क्या हुआ? तैयार हो जाओ - मैं तुम्हारी शादी करवा दूंगा। मैं तुम्हें अपना सारा सोना दे दूंगा। अगर तुम इसे बेचकर बैंक में जमा कर दो, तो तुम्हें हर महीने आसानी से चार हज़ार मिल जाएंगे। इतने में परिवार चलाना मुश्किल नहीं होगा। मैं अपना जीवन अकेले नहीं गुजारूंगा! ऐसे रिश्ते जब तक चलते हैं, तब तक तो अच्छे लगते हैं। उसके बाद तुम भूत की तरह अकेली हो जाओगी! इसीलिए शादी कर लेनी चाहिए।
उनकी मां के शब्दों ने उनके दिल को झकझोर दिया। उन्होंने कहा,
"सच में क्या हुआ था, बताओ? मैंने अब तक किसी को नहीं बताया। मैंने कभी किसी ऐसे व्यक्ति से मुलाकात नहीं की जिसने मुझे इस तरह बताया हो—" उसने उसका हाथ पकड़ा और उसे बैठक में सोफ़े पर बिठाया और कहने लगा, "मैं किसी को नहीं बताऊंगा—अप्पा को भी नहीं—इसलिए मेरे सिर पर हाथ रखकर शपथ लो—" कांति के साथ अपने रिश्ते की सारी बातें बताने के बाद, उसने रवींद्र

के लिए अपनी भावनाओं, उस पर उसकी प्रतिक्रिया, उसके मन में उठे संघर्ष, उसके सारे पैसे लौटाने, उसके मन में उठे पाप—प्रज्ञापाई के लिए बद्री की यात्रा—के बारे में बताया। दोपहर के 4:30 बज चुके थे। माँ की आँखें लाल थीं और उनका चेहरा कठोर हो गया था।
अंत में उन्होंने कहा,
मुझे नहीं लगता कि मैंने किसी और के साथ अन्याय किया है। लेकिन मुझे न केवल रवींद्र के साथ विश्वासघात करने का, बल्कि उसके भाई के साथ विश्वासघात करने का भी पछतावा है। उसके स्नेह को महज मित्रता कहना मेरे लिए नामुमकिन है। मुझे इसी बात का पछतावा है..."
उसी समय, गेट के पास एक कार की आवाज सुनाई दी। आवाज पहचानकर मां गेट खोलने के लिए दौड़ी।
अपनी माँ के सामने खुलकर बात करने और उनके साथ एक ऐसा रिश्ता बनाने की संतुष्टि उसे मिली जो पहले कभी नहीं बना था। उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि वह अपने जीवन में कभी अपनी माँ के साथ इतनी घनिष्ठता का अनुभव करेगा।
पिताजी ने कार को गैराज में पार्क करने के बाद अंदर प्रवेश किया। माँ ने उनके सामने चाय, बिस्कुट और सेब के टुकड़े रखे। उन्होंने भी अपनी चाय का प्याला उठा लिया।
उन्होंने पूछताछ की,
"क्या आप सोये?"
फिर उन्होंने काफी देर तक इस बारे में बात की कि हमारी रेलगाड़ियों में एयर कंडीशनिंग होनी चाहिए, यहाँ कितनी धूल है, पूरी रेलगाड़ी चलाने में कितना खर्च आएगा, हमारे देश का मध्यम वर्ग इस बोझ को उठाने में सक्षम नहीं है, उसका आर्थिक उत्थान कितना ज़रूरी है... इत्यादि। पुस्तकालय जाते समय उन्हें शायद एहसास हो गया होगा कि सुबह निकलते समय उन्होंने अपने बेटे से ठीक से बात नहीं की थी। लेकिन अब वे रेलगाड़ी के अर्थशास्त्र के बारे में बात कर रहे थे!
उसी समय उनके मन में यह विचार आया, क्या अपनी मां के बगल में बैठकर, उनके सामने बैठकर वही बात कहना संभव है जो उन्होंने कही थी?
इसके बाद भी, उनसे बातचीत करते समय उन्होंने उस पत्र का ज़िक्र तक नहीं किया। उन्होंने भी ऐसा दिखाया जैसे उन्हें कुछ पता ही न हो।

■

उसकी मां ने उसे दो-तीन बार और उससे शादी करने के लिए कहा, लेकिन उसने इनकार कर दिया और कहा,
"एक बार ऐसा हो गया, तो यह सच है। मैं आपसे वादा करता हूं कि मैं फिर कभी किसी महिला के साथ यौन संबंध नहीं बनाऊंगा।"
मैंने इसके लिए मना कर दिया। एक महिला को आत्मविश्वास महसूस करने के लिए पति की और एक पति को पत्नी की जरूरत होती है!
"मैं इस बारे में सोचूंगा और आपको बाद में बताऊंगा... अभी इस बारे में बात नहीं करते..." उसने विषय बदलते हुए कहा।
हृदय में अपराधबोध का बोझ लिए वह बद्री से हिमालय, मथुरा और विद्याशाला तक का लंबा सफर तय कर चुका था। फिर भी, उसके हृदय में अपराधबोध जरा भी कम नहीं हुआ था। जीवन में गलती हो जाए तो क्या उसका प्रायश्चित नहीं होता? क्या उससे छुटकारा नहीं मिलता?
सुबह 9:30 बजे दोपहर का भोजन करने के बाद, अप्पा पुस्तकालय जाते थे। उसके बाद वे अपनी माँ के साथ भोजन करते थे। इस समय वे अपनी माँ का विशेष ध्यान रखते थे। उनका स्वास्थ्य अब पहले जैसा नहीं रहा था। उन्हें इस हालत में और कितने साल जीना पड़ेगा? क्या मुझे शादी कर लेनी चाहिए, भले ही सिर्फ़ उनकी देखभाल के लिए ही सही? यह विचार उनके मन में दो बार आया।

कभी-कभी वह सोचते थे – मैंने अपने पूरे जीवन में क्या हासिल किया? जो लोग मेरे साथ एमबीए कर चुके हैं, वे आज आसानी से बारह से पंद्रह हजार रुपये प्रति माह कमाते हैं! सितार वादक होते हुए भी मैं कुछ खास हासिल नहीं कर पाया। यही मेरी मानसिक स्थिति भी थी! उनका मन आत्म-आलोचना में डूब जाता था।
एक बार वह बस से निगमबोध श्मशान घाट गया। वहां एक बेंच पर बैठे-बैठे उसे याद आया कि वह पहले भी यहां अपराधबोध के कारण आया था। श्मशान घाट में बैठने के बाद भी उसके दिल की जलन कम नहीं हुई, कब्रिस्तान की कड़ाके की ठंड भी उसे शांत नहीं कर पाई, यहां तक कि संगीत में खो जाने और कुछ पल कल्पनाओं की दुनिया में चले जाने पर भी यह भावना पूरी तरह दब नहीं पाई। क्या हम कभी इससे मुक्त नहीं हो पाएंगे? कुछ देर वहां बैठने के बाद उसने दो शवों पर अपनी निगाहें गड़ा दीं और चला गया। घर जाने के लिए बस स्टॉप पर खड़े होते हुए उसके मन में यह विचार आया – क्या इतने बड़े देश में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो मुझे जानता हो और मुझे सही रास्ता दिखा सके?

■

फिर एक दिन, समय बिताने के लिए, वह अखबार का परिशिष्ट पढ़ रहे थे। उनकी नजर 'द रिमेनिंग गांधीयन' शीर्षक वाले एक लेख पर पड़ी। उन्होंने लेख पढ़ना शुरू कर दिया।
उस लेख में जयप्रकाश नारायण का एक सजीव चित्रण किया गया था। साथ ही उनकी तस्वीर भी दी गई थी। लेख में लिखा था –
आज के दौर में गांधीजी के सिद्धांतों का पालन करने वाले एकमात्र नायक जे. पी. हैं। हालांकि जे. पी. स्वयं विनोबा को अपना गुरु मानते हैं, लेकिन पूरा देश जानता है कि यह उनकी उदारता है। राजसी सत्ता और राज दरबार के महात्मा बनने के बाद नैतिक स्वतंत्रता कहां रह जाती है? विनोबा के विचारों ने गांधीवाद का मार्ग त्याग दिया है और पुरोहिती का मार्ग अपना लिया है – यह एक कड़वा सच है। जे. पी. के स्वभाव की विशेषता एक गहरा मानवीय हृदय है। वे कभी भी ऐसा व्यवहार नहीं करते जिससे उनकी नैतिकता दूसरों द्वारा दबाई जाए। उनके स्वभाव में मानवीय क्रोध है। वे पश्चाताप करने और उसे व्यक्त करने में स्पष्ट हैं। कई बार उनकी आंखों में आंसू आ जाते हैं। वे किसी एक चीज़ को परम सत्य नहीं मानते। इसलिए उनके विचार और ज्ञान निरंतर बदलते रहते हैं। यदि वे अपनी समाजवादी पार्टी में शामिल न होते, तो नेहरू के बाद वे निश्चित रूप से देश के प्रधानमंत्री बनते। हालांकि उनके आलोचक कहते हैं कि उन्होंने समय-समय पर स्वयं को बदलते रहने के कारण यह अवसर खो दिया, लेकिन इस बात का कोई मतलब नहीं है। मैंने, जिसने कामराज योजना देखी है, हमेशा इस बात पर संदेह किया है कि सत्ता का अनुभव प्राप्त करने के बाद नेहरू जे.पी. को यह अवसर देते या नहीं। जे. पी. प्रधानमंत्री बनकर महान नहीं बन गए, और न ही प्रधानमंत्री न बनकर छोटे हो गए! उनकी लगातार इस दुविधा के लिए आलोचना की जाती है। उनके मामले में भी यही सवाल पूछा जाता है, 'अगर आप ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहते थे, तो आपने शादी क्यों की?' लेकिन यही सवाल रामकृष्ण परमहंस से भी पूछा गया था।
लेख पढ़ने के बाद हेमंत काफी देर तक तस्वीर को देखता रहा। यह आदमी किसी आम इंसान जैसा लग रहा था! उसने जे.पी. का नाम पहले भी सुना था, लेकिन उसके बारे में ज्यादा कुछ नहीं जानता था। उसने पिछले कुछ सालों से अखबार भी नहीं पढ़े थे। उसने पूरा लेख एक बार फिर पढ़ा।
जब शाम को उसके पिता घर आए, तो उसने वह लेख उनके सामने रख दिया। उसे देखकर उन्होंने उत्तर दिया,
"यह कल के अखबार से एक दिन पहले का अखबार है। मैंने इसे उसी दिन पढ़ा। यह एक संपूर्ण लेख नहीं है। इसमें और भी कई बिंदु जोड़े जाने चाहिए थे। कम से कम इसमें चंबल घाटी में डाकुओं के आत्मसमर्पण का कोई जिक्र नहीं है।"

इसका क्या मतलब है?
"तुम्हें नहीं पता?" अब आश्चर्यचकित होने की बारी उसके पिता की थी।
"मैंने पिछले कुछ वर्षों से अखबार पढ़ना पूरी तरह से बंद कर दिया था।"
चंबल घाटी में बड़े जमींदारों के शोषण की शिकार गरीब किसान डाकू बन रहे थे और हत्या एवं लूटपाट कर रहे थे। सैकड़ों मील के इस इलाके में जमींदार बेखौफ घूम नहीं सकते थे। यहां तक कि उनकी सुरक्षा के लिए आए पुलिस और सरकारी अधिकारी भी मारे जाते थे। इन डाकुओं का यहां पूर्ण वर्चस्व था। समाज भी उनके साथ था। जब केंद्र सरकार इन डाकुओं के सामने घुटने टेकने को तैयार थी, तब जेपी आगे आए। उन्होंने पैदल चलकर इन सभी इलाकों का दौरा किया, उनसे बात की, उन्हें धर्म परिवर्तन कराया और परिणामस्वरूप, इन डाकुओं ने आत्मसमर्पण कर दिया।
"तो अब भारत में कोई डाकू नहीं बचा है?"
"यह दुर्भाग्यपूर्ण है। यदि सरकार भूमि सुधार अधिनियम को लागू करने और यहाँ के गरीब किसानों को भूमि देने में सफल हो जाती, तो डाकुओं के गिरोह दोबारा नहीं पनपते। लेकिन जब पुलिस, सरकारी अधिकारी और पूरा समाज ही भ्रष्ट है, तो जे.पी. अकेले क्या करेंगे?"
जे. पी., जिन्होंने इतनी विपरीत परिस्थितियों में अपराध के खिलाफ लड़ाई लड़ी! अगले दिन, पुस्तकालय में बैठकर, उन्होंने जे. पी. के बारे में जितना कुछ भी पढ़ सकते थे, पढ़ा। वे बुद्ध से भी आकर्षित थे, इसलिए उन्होंने उनकी जीवनी भी पढ़ी। अचानक उनके मन में ख्याल आया, क्यों न पटना जाकर जेपी से व्यक्तिगत रूप से मुलाकात की जाए?
चूंकि उसने अचानक जाने का फैसला किया था, इसलिए कोई आरक्षण नहीं था। उसने पहले कभी भी पंद्रह-बीस रुपये रिश्वत देकर सीट पाने के प्रलोभन का विरोध नहीं किया था। उसने अनारक्षित डिब्बे में घुसकर सीट पाने का फैसला किया और एक खास जगह पर खड़ा हो गया। ट्रेन आते ही वह अंदर गया और देखा कि लाल कपड़े पहने आठ-दस आदमियों ने सभी सीटें घेर रखी थीं। वह गुस्से से भर कर वहीं बैठ गया।
जैसे ही दूसरे यात्री अंदर आए, कुली हर सीट के लिए पाँच रुपये माँगने लगे। यात्री भी खुशी-खुशी अपनी-अपनी सीटों पर बैठ गए। भीड़ बढ़ती गई। चार सीटों पर छह-सात लोग बैठ गए। कुली अब खड़े हो गए और हर व्यक्ति से पाँच रुपये वसूलने लगे। जिन्होंने पैसे देने से इनकार किया, उन्हें कुलियों ने पीट दिया। हालाँकि कुलियों की संख्या यात्रियों से कम थी, फिर भी यात्री बिना किसी झिझक के पैसे दे रहे थे।
जब हमाल ने होन्नाटी से पैसे मांगना शुरू किया, तो होन्नाटी ने कहा,
``किस तरह का पैसा? मैंने अपनी जगह मेहनत से बनाई है..."
"क्या आप इन सबसे बड़े हैं?"
मुझे बाकियों के बारे में नहीं पता। मैं भुगतान नहीं करूँगा-"
नहीं?
नहीं–"
हमाल ने हेमंत का कॉलर पकड़कर उसे खींचते हुए चिल्लाया।
एक सीट के लिए पाँच रुपये!
वहां खड़े एक यात्री ने इस अवसर का लाभ उठाते हुए हेमंत की सीट हथिया ली। उसके चेहरे पर खुशी झलक रही थी। बाकी यात्री उसे ऐसे देख रहे थे मानो किसी मूर्ख को देख रहे हों। कुली भी खांसते और थूकते हुए दूसरी तरफ मुड़ गया।
हेमंत की आत्मा चकनाचूर हो गई थी, लेकिन यह घाव ठीक नहीं हो सकता था। उसकी उंगलियां, जो बचपन में पेंसिल और कलम के तार बजाती थीं और बाद के

वर्षों में सितारों के तार बजाती थीं, और उसके हाथ, जो बचपन से ही भारी बोझ उठाने से कठोर हो गए थे!
अंततः ट्रेन चल पड़ी। अगले स्टेशन पर किराया चुकाने के बाद, सभी कुली उतर गए।

■

कदम कुआपट्टी स्थित प्रभादेवी द्वारा संचालित महिला चरखा समिति के भवन में गए और जे.पी. के बारे में पूछताछ की, तो पता चला कि वह पटना में नहीं हैं, लेकिन दो दिनों में आ रहे हैं।
क्या हम उनके आने के बाद उनसे मिल पाएंगे? और अगर मिल भी गए, तो क्या उनके पास हमारी समस्याओं को समझने के लिए पर्याप्त समय होगा?
होन्नाटी ने पास के एक होटल में कमरा लिया और अपना सामान वहाँ रख दिया। बाद में, जे.पी. के घर के पास तैनात चौकीदार से भी उसका घनिष्ठ संबंध बन गया।
तीसरे दिन जब हेमंत वहाँ गया, तो वहाँ बहुत भीड़भाड़ थी। चौकीदार ने कहा,
"बाबूजी आ गए हैं। दोपहर तीन बजे आना। वह उनका विश्राम समय है। मैं उस समय आपसे उनकी मुलाकात का इंतजाम कर दूंगा।"
यह सुनकर हेमंत का दिल उत्साह से भर गया। एक ओर तो वह खुद भी आश्चर्यचकित था। कुछ दिन पहले तक हम जेपी का नाम तक नहीं जानते थे, और आज उनसे मिलना ही जीवन का उद्देश्य है, और हमें ऐसा महसूस हो रहा है!
जब वह 2:30 बजे चला गया, तो चौकीदार ने कहा,
मैंने उन्हें तुम्हारे बारे में बता दिया है। तीन बजे ऊपर जाना। मैं किसी और को अंदर नहीं आने दूंगी।
तीन बजे हेमंत ने बंद दरवाजे पर हल्की सी दस्तक दी। अंदर से एक आवाज आई,
``आईये–"
वह दरवाजे से अंदर गया। जे. पी. एक साधारण कुर्सी के पास खड़ा था। साधारण खादी का पजामा, बाथरोब, थका हुआ चेहरा। वह आगे बढ़ा और होन्नाटी का हाथ पकड़ लिया। उसकी पीठ थपथपाते हुए, उसने उसे अपने सामने वाली कुर्सी पर बैठाया और पूछा,
आप किस गांव से हैं? आपको मेरे लिए दो दिन इंतजार करना पड़ा?
हेमंत भावुक होकर बोलने लगे। उन्होंने संक्षेप में अपनी पृष्ठभूमि, शिक्षा, संगीत के प्रति प्रेम, विवेकानंद विद्यालय में बिताए समय, रवींद्र-कांति की घटना, मथुरा-बद्री में अपने प्रवास के बारे में बताया और साथ ही जे.पी. के सामने किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा उनके पिता को भेजा गया एक पत्र भी रख दिया।
"रवींद्र नवप्रकाशित पत्रिका 'द फैक्ट' के संपादक हैं, है ना?"
हेमंत का सिर झुक गया।
``हाँ–"
मैंने उनसे मुलाकात की और उनसे पूछा—"
घड़ी की ओर देखते हुए उसने उत्तर दिया,
मैं अभी कुछ नहीं कह सकता। कल सुबह छह बजे आना, तब बात करते हैं। तुम कहां उतरे थे?
पास में ही एक होटल है-"
"यहाँ से चले जाओ। तुम पैसे क्यों बर्बाद कर रहे हो?"
अगर नहीं, तो आपको अभी भुगतान करना होगा-"
"ठीक है। ये पत्र। कल सुबह मिलते हैं।"
जब वह सुबह छह बजने में पांच मिनट पहले वहाँ पहुँचा, तो जे. पी. नहा चुका था। उसने पूछा,
चाय?

"पहले यह एक आदत थी - लेकिन जब मैं जोगीबेटा पर रहने लगा, तो मैंने इसे छोड़ दिया।"
उन्होंने यह भी कहा, "हम ऐसी छोटी-छोटी चीजों पर निर्भर रहकर अपनी आजादी खो रहे हैं..."
वे आमने-सामने बैठे थे, जैसे वे एक दिन पहले बैठे थे, और उन्होंने कहा,
"आपको लगा कि रविंद्र को बिना बताए यह बात बताकर उसे परेशान नहीं करना चाहिए, ठीक है। लेकिन चूंकि उसे भी चिट्ठी मिल गई है, तो अब यह कोई मुद्दा नहीं है। मुझे लगता है कि आपको उससे मिलना चाहिए और माफी मांगनी चाहिए। आपकी एक और जिम्मेदारी भी है। आपको इस सब के लिए सिर्फ उसे ही दोष नहीं देना चाहिए।"
उन्होंने आगे कहा,
``पाप, पुण्य और पापों का प्रायश्चित, ये सब धार्मिक आस्था के विषय हैं। एक बार गलती हो जाने पर उसे दोहराना नहीं चाहिए। आपने बहुत पश्चाताप भी किया है। अब आगे का रास्ता देखिए। आपका अपना अनुभव है कि संगीत कार्यक्रम करके पैसा तो कमाया जा सकता है, लेकिन उसमें संतोष नहीं मिलता। क्या यह सही है?"
हां।
तो मैं एक उपाय सुझाता हूँ। आप भी इस पर विचार कीजिए। फिर तय कीजिए कि क्या करना है। हमारे देश में आप जहाँ भी जाएँगे, स्टेशन, ठेले, मंदिर, मेले, हर जगह आपको विकलांग लोग भीख मांगते घूमते नज़र आएंगे। क्या आप उनमें से कम से कम कुछ को भीख मांगना छोड़ने और आत्मसम्मान के साथ जीने की शिक्षा देंगे? आपके पास इतनी शिक्षा है, इतना अनुभव है! यह आपके लिए असंभव नहीं है। एक बार जब आप इस काम में लग जाएँगे, तो आपके दिल का अपराधबोध कहीं गायब हो जाएगा!
हेमंत का दिल उत्साह से भर गया था।
हम शुरुआत कैसे करें? हम किस गांव से शुरुआत करें?
``इतना जल्दबाजी में फैसला लेने की कोई जरूरत नहीं है। कुछ देर सोच-विचार कर लीजिए। इसे तभी शुरू कीजिए जब आपका दिल पूरी तरह सहमत हो। लेकिन तीन बातें याद रखिए – सरकारी मदद मत लीजिए। लाभ या प्रसिद्धि की उम्मीद मत रखिए – ताकि ऐसी उम्मीदें रखने पर भी कोई आपके संगठन पर हमला न करे। अपना काम किसी मध्यम आकार के गांव से शुरू कीजिए। अगर कोई बिना किसी शर्त के दान देता है, तो उसे जरूर स्वीकार कीजिए। शुरुआत में, हम आपके लिए दो साल तक अपनी सभी सेवा टीमों से हर महीने पचास रुपये की व्यवस्था करेंगे..."
मेरे पास पैसे हैं। कम से कम बीस हजार...
यह एक मज़ाक था। आपको पैसे इकट्ठा करके काम पर नहीं जाना चाहिए। आपको काम करते रहना चाहिए – केवल उतना ही पैसा इकट्ठा करें जितना आपको ज़रूरत है। पैसा अपने आप जमा हो जाएगा। दान देने वाले लोग होते हैं। उन्हें आश्वस्त होना चाहिए कि उनके द्वारा दिया गया पैसा सही ढंग से इस्तेमाल किया जाएगा – बस इतना ही! यह सब धीरे-धीरे होता है – लेकिन निश्चित रूप से। सिर्फ इसलिए कि आपके पास पैसा है, सीमेंट-कंक्रीट की इमारत में स्कूल शुरू न करें। संस्था की नींव मज़बूत होना ज़्यादा ज़रूरी है।
तभी चार लोग अंदर आए। जे. पी. ने उनका स्वागत किया। बिना ज्यादा सोचे समझे, होन्नाटी को एहसास हुआ कि उनसे बात करना उनके कीमती समय की बर्बादी होगी। उन्होंने पूछा,
"आप यहां कब तक रहने वाले हैं?"

मैं कल शाम को ट्रेन से मुंबई जा रहा हूँ। आपने मेरे बहनोई को पत्र लिखकर बताया था कि मुझे पत्र मिल जाएगा। मैं तुरंत जवाब भेजूँगा। आप उनसे यह भी पता कर सकते हैं कि मैं कब और कहाँ रहूँगा।
"मैं जा रहा हूं..." होन्नाटी ने कहा और खड़ा हो गया।
जे.पी. भी खड़े हो गए।
उन्होंने उन्हें प्रणाम किया और अभिवादन किया। उन्होंने उन्हें स्नेहपूर्वक गले लगाया। फिर, दरवाजे पर आकर उन्होंने उन्हें विदाई दी।
जब वह दिल्ली में अपने घर लौटा, तो उसने 'द फैक्ट' के पुराने अंक निकाले और उनमें से हर एक को पढ़ा। अब उसे कुछ अंदाज़ा हो गया था कि रविंद्र को कितने विरोध का सामना करना पड़ रहा था। जे.पी. की मौजूदगी में, रविंद्र से मिलने और माफी मांगने की इच्छा उसके मन में घर कर गई थी। दिल्ली पहुंचने के बाद, किसी कारणवश, यह विचार कुछ समय के लिए टल गया। हालांकि, चौथे दिन, इस भावना के साथ कि अगर वह उससे माफी नहीं मांग सका, तो वह जीवन में कुछ भी नहीं कर पाएगा, उसने बस पकड़ी। आईटीओ के पास बस बदलकर लेक्ष्मी नगर पहुंचने पर, उसे 'द फैक्ट' में छपा पता मिल गया।
जब वह अंदर आया, तो छब्बीस या सत्ताईस साल का एक युवक एक कोने में बैठा पुराने अखबारों में कुछ ढूंढ रहा था। दाहिने कोने में, रविंद्र एक मेज पर बैठा टाइपराइटर पर काम कर रहा था। विश्वविद्यालय में जब वह उससे मिला था, तब की तुलना में अब वह दुबला हो गया था। उसके कपड़े और जूते बिल्कुल उपेक्षित लग रहे थे। उसके बाल भी काफी बढ़ गए थे।
होन्नाटी दरवाजे पर खड़े होकर उन्हें देख रहे थे। वे अपना लेख लिख रहे थे। उन्होंने एक पल सोचने के लिए अपना सिर उठाया। दरवाजे पर किसी के होने का आभास होते ही उन्होंने उधर देखा। होन्नाटी को देखते ही उनके चेहरे पर हैरानी छा गई। उनका चेहरा गंभीर हो गया, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि आगे क्या कहें।
होन्नाटी ने स्वयं कहा,
मैं आपसे मिलने के लिए ही आपका पता ढूंढने आया था...
वह उनके सामने वाली कुर्सी पर बैठ गया।
रविंद्र ने पूछा,
आप कब आए?
इन सब के बावजूद, रविंद्र के प्रति होन्नाटी का सम्मान और भी बढ़ गया, क्योंकि रविंद्र ने अपना संयम नहीं खोया।
“मैं आपसे एक विषय पर बात करने और अपना तनाव कम करने आया हूँ...” उसने टाइप किया हुआ गुमनाम पत्र उनके सामने रखते हुए कहा और कमरे का दरवाजा बंद कर दिया। जब वह कुर्सी पर वापस बैठा, तो रविंद्र पत्र और लिफाफे पर लिखे पते को देख रहा था।
जब यह पत्र आया, तो मेरी माँ ने मुझे फोन किया। मैंने कॉलेज में ही आपके पैर पकड़कर माफी मांगने का फैसला किया था। लेकिन मैंने कुछ नहीं कहा, यह सोचकर कि मुझे आपको दुख नहीं पहुंचाना चाहिए। मैं आपकी आँखों में आँखें डालकर सीधे बात भी नहीं कर पाई। सच कहूँ तो, आपके पैर पकड़ना शायद नाटकीय लगे, लेकिन मेरा दिल आपके पैरों को हज़ार बार छू चुका है!
फिर उन्होंने बहुत संक्षिप्त और सांकेतिक शब्दों में बताया कि बैंगलोर से दिल्ली जाने के बाद क्रांति के साथ क्या हुआ। उन्होंने अपने अपराधबोध, बद्री-मथुरा की यात्रा, विश्वविद्यालय में अपने प्रवास, जे.पी. के आगमन और उनके द्वारा दी गई सलाह के बारे में भी विस्तार से बताया।
सब कुछ सुनते हुए रविंद्र के चेहरे पर सावधानी और तटस्थता का भाव था। होन्नाटी इसे महसूस कर सकता था। सब कुछ बताने के बाद उसने कहा,

जब से मैं जे. पी. से मिला हूं, मुझे एक बात समझ आ गई है। मैंने अपराध किया है! हालाँकि मैं इसके लिए पूरी तरह से ज़िम्मेदार नहीं हूँ, लेकिन मेरे सहयोग के बिना यह नहीं होता; पर जीवन भर पछताने का क्या फ़ायदा? बेहतर है कि मैं अगले जन्म में कुछ करके इस गलती को भुला दूँ। इसके लिए मुझे आपकी मदद और सलाह चाहिए। यह हमारे घर का फ़ोन नंबर है। अगर आपको सुविधा हो, तो उस समय मुझे फ़ोन कर लीजिएगा... मैं आपसे मिलूँगा। मैं आपसे अपने अगले काम के बारे में थोड़ी बात करना चाहता हूँ।
जब वह वहां से बाहर आया, तो होन्नाटी को थोड़ी राहत महसूस हुई। उसने सोचा कि वे उसे ज़रूर माफ़ कर देंगे – उसी समय, उसके मन में एक और आवाज़ आई – यह असंभव है! अगर वे उसे माफ़ नहीं करते तो क्या होगा?
उनकी मां ने पटना यात्रा के बारे में पूछा। होन्नाटी जब से वहां पहुंचा था, तब से ही उनके सवाल को टालता आ रहा था। उस दिन खाना खाते समय, उनकी मां ने फिर वही सवाल पूछा। उसने फिर से सवाल को टालते हुए कहा, "मैं आपको बाद में बताऊंगा।"
मन ही मन, अगर रविंद्र ने माफ़ नहीं किया, तो वो कैसे कर सकता है? यह सवाल उसे लगातार परेशान कर रहा था। भले ही वो माफ़ न करे, उसे इस विश्वास के साथ जीना चाहिए कि वो उसे एक दिन, न एक दिन, अपनी मृत्यु तक माफ़ कर देगा। उसे काम पर लग जाना चाहिए – चाहे वो अपने मन को कितना भी समझाने की कोशिश करे, उसका सारा ध्यान फ़ोन पर ही लगा रहता था। वृद्धाश्रम में जब फ़ोन बजता, तो उसे शायद ही कभी घंटी सुनाई देती – शायद ही कभी कोई कॉल आती। जब फ़ोन बजता, तो वो दौड़कर आता, यह सोचकर कि ज़रूर उसके लिए होगा – जब वो अपनी माँ या पिताजी को फ़ोन पर बात करते देखता, तो मुँह फुलाकर चला जाता।
दो दिन इसी तरह बीत गए।
तीसरी सुबह जब वह नहा रहा था, उसकी माँ ने उसे पुकारा,
आपका फोन बज रहा है... रविंद्र बोल रहे हैं...
उसने चिल्लाकर यह भी कहा,
मैं आपसे बात करना चाहता हूँ—फोन मत काटना, मुझे बताओ—'
उसने जल्दी से चार कप पानी डाला, अपने शरीर से साबुन धोया और खुद को ठीक से सुखाए बिना फोन की ओर भागा।
मैं रविंद्र हेमंत हूं। मैं चाय की दुकान से बोल रहा हूँ। हमारे दफ्तर में फोन नहीं है। कृपया सरकार! क्या आप यहाँ आएँगे? मैं आपसे थोड़ी देर बात करना चाहता हूँ..."
"चलो चलें! हम एक घंटे में वहाँ पहुँच जाएँगे..." होन्नाटी ने असीम उत्साह के साथ कहा।
"क्या मैं फोन रख दूं?" रविंद्र ने फोन काट दिया।
होन्नाटी का मन असमंजस में था। रविंद्र ने उसे पहले कभी हेमंत नहीं कहा था, न ही कभी या-जा कहकर पुकारा था। लेकिन आज उसने उसे एक अनोखे अंदाज में हेमंत कहकर संबोधित किया था!
उसने जल्दी से अपने कपड़े पहने। माँ के बार-बार कहने के बावजूद, वह बिना खाना खाए ही निकल गया। वह बस का इंतज़ार करके समय बर्बाद नहीं करना चाहता था - उसने सोचा कि रिक्शा से जाने में पंद्रह-बीस रुपये लगेंगे, लेकिन उसने एक रिक्शा पकड़ लिया।
जब वह वहाँ पहुँचा, तो रविंद्र अंदर के कमरे में बैठकर प्रमाणों की जाँच कर रहा था। कार्यालय में और कोई नहीं आया था। हेमंत उसके सामने काउंटर पर बैठ गया।
रविंद्र ने कहा,

"तुम एक बहुत बड़ा और ज़रूरी काम अपने हाथ में ले रहे हो। इस काम के लिए मेरी तरफ से यही भेंट है..." उन्होंने अपनी जेब से दो सौ रुपये निकालकर हेमंत को देते हुए कहा। फिर उन्होंने आगे कहा, "मैंने कुछ पैसे जमा रखे हैं। मैं इसी तरह कुछ और पैसे दे सकता हूँ। लेकिन मुझे तो ब्याज से ही गुज़ारा करना है। इसके अलावा, ज़रूरत पड़ने पर हमारे अखबार से भी मदद लेनी पड़ती है। इस काम के अलावा मुझे ज़िंदगी में किसी और चीज़ में सुकून नहीं मिलता। तुम किस गाँव से शुरुआत करने वाले हो?"
मैंने अभी तक इस बारे में पूरी तरह से विचार नहीं किया है।
"कर्नाटक के अलावा आपको किसी और गाँव का पता ही नहीं है। आप सीधे कॉलेज जाइए और अन्नाय्या को जेपी के साथ हुई सारी बातें बता दीजिए। आपको अन्नाय्या को अपने गुनाह या दूसरी बातें बताने की ज़रूरत नहीं है। उस इलाके के आम लोग अन्नाय्या का सम्मान करते हैं। उनकी मदद से वहाँ के लोग भी आपके काम में सहयोग देंगे। जेपी ने कहा था कि सरकारी मदद मत लीजिए, यह बिलकुल सही है, भले ही आप सरकारी मदद न लें, फिर भी आपको सरकार की तरफ से समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। हमें इससे बचने का कोई रास्ता निकालना चाहिए। मुझे लगता है कि आपको अपना काम बिदारली या हमारे बसावनपुर से शुरू करना चाहिए, वैसे हमारे बसावनपुर में काम के लिहाज़ से कुछ खास नहीं है! यह मेरे दादा-दादी का गाँव है। अगर वे आज ज़िंदा होते, तो वे इस काम के लिए अपनी ज़मीन ज़रूर दे देते! आपको इस बारे में भी अन्नाय्या की सलाह लेनी चाहिए।"

■

२१

ट्रेन सुबह 5 बजे मद्रास स्टेशन पहुंची, तब तक अनूप चेहरा धोकर, बाल संवारकर और कपड़े बदलकर तैयार हो चुका था। ट्रेन रुकते ही वह प्लेटफार्म पर कूदा और रिक्शा स्टैंड की ओर भागा। जब रिक्शा जैमिनी सर्कल के पास अमेरिकी वाणिज्य दूतावास के मुख्य द्वार पर पहुंचा, तो वहां कोई नहीं था। हम बहुत जल्दी आ गए थे, क्या आपको लगता है कि शिव ने हमारे मन में डर पैदा किया था? उसने कहा था, 'कतार सुबह 4 बजे से शुरू होती है। वे हर दिन सीमित संख्या में ही वीजा देते हैं, अगर तब तक आपका नंबर नहीं आया, तो आपको अगली सुबह फिर आना पड़ेगा। गेट सुबह 8 बजे खुलता है। कार्यालय सुबह 9 बजे खुलता है।'
अनुपम ने अपनी घड़ी देखी – पांच बजकर बीस मिनट हुए थे। वह वहीं खड़ा रहा, नंबर एक होने की खुशी से झूम रहा था।
हल्की रोशनी होने लगी। दस-पंद्रह मिनट बीत गए। उसे शौचालय जाने की इच्छा हुई और वह इधर-उधर देखने लगा। उसे अभी भी कतार नहीं दिखी। वह जैमिनी सर्कल के पास एक होटल में जाने की सोच रहा था तभी एक राहगीर वहाँ आया। अनूप को देखकर उसने कहा,
आप वहां किस बात का इंतजार कर रहे हैं? वहां तो लंबी कतार लगी है...
उसने हाथ हिलाया, अनूप उस दिशा में दौड़ा और उसका सीना धंस गया। उसी समय, वहाँ आधा फर्लांग लंबी कतार लग गई थी। इसके अलावा, कई कारें और रिक्शा आ रहे थे और वहाँ नए लोगों को उतार रहे थे। वे लोग दौड़ रहे थे और कतार के पीछे खड़े हो रहे थे। उनमें से कुछ कतार के बीच में घुसने की कोशिश कर रहे थे - आखिर कतार में खड़े लोगों का सब्र कब खत्म हो गया था और वे उन्हें क्यों कह रहे थे?
``जंटलमन, कम इन द क्यू–"

यह देखकर अनूपा भी कतार में दौड़कर खड़ा हो गया। उसके आगे एक सौ दस लोग खड़े थे। पाँच-छह मिनट बाद, उसने अचानक देखा कि उसके पीछे पचपन लोग खड़े हैं। कतार में और भी लोग खड़े थे।
मैंने सोचा, इतने सारे लोग अमेरिका क्यों जा रहे हैं?
उसने कतार में खड़े लोगों को देखा। रेशमी साड़ियों में महिलाएं, धूप से झुलसे चेहरे वाली लंबी साड़ियों में अनपढ़ महिलाएं, उच्च वर्ग के पुरुष, गरीब लोग, उसकी उम्र के लड़के-लड़कियां – शायद वे भी उसकी तरह आगे की पढ़ाई के लिए जा रहे थे। तमिल, मलयाली, तेलुगु, कन्नड़ – उनमें से कुछ अपने साथ थर्मस में कॉफी लाए थे। मद्रास की उमस भरी गर्मी से थके-हारे लोग पानी पीने के लिए संघर्ष कर रहे थे। लगभग हर कोई अपने बैग से ज़रूरी दस्तावेज़ निकाल रहा था और बार-बार उनकी जांच कर रहा था।
अनूप का पड़ोसी सामने बैठे व्यक्ति से तमिल में बात कर रहा था,
"देखो अमेरिकी सरकार को कितने मजे आ रहे हैं इतने सारे भारतीयों को चूहों की तरह सड़क किनारे रखने में!"
दूसरी तरफ खड़े व्यक्ति ने कहा,
बिलकुल सही! उनका मज़ाक उड़ाया जाना चाहिए!..."
"वीज़ा पाने के लिए वे कितनी परेशानी उठाते हैं! आपकी संपत्ति कितनी है? आपका स्थायी रोज़गार क्या है? आपके पास आयकर प्रमाणपत्र है या नहीं? आपकी पत्नी और बच्चे कहाँ हैं? वे क्या करते हैं? एक-दो! जब आप कहते हैं कि आप रिश्तेदारों से मिलने जा रहे हैं, तो उन्हें इन सब बातों के बारे में पूछताछ करने का क्या अधिकार है?"
इसीलिए रूस अमेरिका से इतना नाराज़ है! रूस ने दस हाइड्रोजन बम गिराए, ताकि अमेरिका को अक्ल आ जाए! चाहे कुछ भी हो जाए—हमें तो साम्यवाद ही चाहते हैं—"
उसी समय, एक आदमी साइकिल पर कॉफ़ी लेकर आया। सबने उसे बुलाया और कॉफ़ी खरीदने लगे। एक बड़ा स्टील का ड्रम, लगभग दो दर्जन छोटे गिलास और साइकिल के कैरियर पर कॉफ़ी डालने के लिए पानी की एक बालटी, ग्राहक के ऑर्डर के अनुसार तेज़ी से कॉफ़ी पहुंचाने के लिए तैयार थे। अनूप के तमिल पड़ोसी ने दूसरी तरफ़ से आए उस आदमी से कहा,
"वाह! कॉफी आ गई! मेरा सिर दर्द करने लगा था।"
"नहीं पापा, मैं कॉफ़ी पीऊंगी! सुबह कॉफ़ी के बिना मैं बाथरूम नहीं जा सकती... और मुझे तुरंत बाद जाना पड़ता है। अब हम कहाँ जाएंगे?"
``मेरा भी यही सवाल है। सड़क के उस पार एक गली है..."
नहीं-नहीं! अगर पुलिस इसे देख ले तो क्या होगा?
"अमेरिकी दूतावास ने हमें सुबह-सुबह कितनी बार सड़क किनारे खड़ा किया है! आखिर उन्होंने यहां शौचालय की व्यवस्था क्यों की?"
"एक शौचालय का क्या हुआ? इतने लोगों के लिए कम से कम दस शौचालय चाहिए!"
"देखो तो सही, ये लोग कितना मज़ा कर रहे हैं! भारतीय लोग हैं, है ना? ये लोग सड़कों पर क्यों नहीं उतरते? वे कहते हैं! लेकिन मैं कहता हूं, भारतीय सरकार इस बारे में क्या कर रही है? अपने नागरिकों के साथ ऐसा बर्ताव होते देख भी, वे बस अनदेखा कर रहे हैं, है ना?"
"सच है! क्या राष्ट्रीय सम्मान जैसी कोई चीज होती है या नहीं? क्या इसे अखबार में फटकार के साथ छपना चाहिए, चाहे यह सच हो या नहीं?"
उसी समय, पीछे से किसी ने "इडली-वड़ा, इडली-वड़ा" कहते हुए आवाज़ लगाई। सभी का ध्यान उसकी हाथगाड़ी पर रखे सूखे इडली-वड़े के पत्तों पर गया। पेट्रोल,

डीज़ल, पेशाब आदि की तेज़ गंध इडली-वड़ा और गर्म कॉफ़ी की खुशबू के साथ मिल गई।
अनुपाल को भी कॉफ़ी पीने का मन हुआ। लेकिन जैसे ही रिक्शा यहाँ पहुँचा, उसे शौचालय जाने की तीव्र इच्छा हुई। इसलिए उसने अपनी उस इच्छा को दबा लिया। उसने घड़ी देखी। अब लगभग छह बज रहे थे। बाहरी द्वार दो घंटे बाद खुलेगा। जैसा कि शिव ने कहा था, अंदर शौचालय थे। लेकिन जब इतने सारे लोग अंदर घुसेंगे, तो क्या वहाँ कोई नंबर होगा? इसके अलावा, कौन जाने अंदर आने के बाद वे किस क्रम में अपना नाम पुकारेंगे! कौन जाने उन्हें शौचालय जाने का समय मिलेगा या नहीं!
कुछ देर सोचने के बाद, उसने अपने पीछे खड़े चालीस साल के व्यक्ति (संभवतः एक मलयाली) को अपनी समस्या समझाई और कहा,
"क्या आप कृपया मेरी सीट रोक कर रखेंगे? मैं अभी जेमिनी सर्कल के एक होटल में वापस आ रहा हूँ..."
उसने कहा,
अरे नौजवान! मुझे लगता है तुम्हें पता नहीं है। आजकल अगर तुम जेमिनी सर्कल के किसी भी होटल में जाओगे, तो वे कहते हैं – हमने यहाँ अमेरिका जाने वालों के लिए शौचालय नहीं बनवाए हैं! जाओ और बनवा लो – मुझे लगता है तुम यहाँ पहली बार आए हो! मैं तो कई बार आ चुका हूँ! क्या वे इडली-वड़ा-कॉफ़ी बेचने नहीं आते? किसी को ऐसा मोबाइल शौचालय शुरू करना चाहिए! वे उसे कतार में खड़े हर व्यक्ति के पास ले जाकर लगा देंगे! यहाँ खूब धंधा चलेगा! हर कोई दस रुपये भी देगा! हर दिन आसानी से एक हजार रुपये की बचत हो जाएगी!
अनुपम ने उम्मीद के मुताबिक मुस्कुराया नहीं। उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या करे। क्या वह रिक्शा लेकर जेमिनी सर्कल के आगे वाले चौक में किसी होटल में चला जाए? लेकिन उस मलयाली व्यक्ति ने इस विचार का विरोध किया और कहा,
मैं आपकी सीट रोककर रखने की ज़हमत नहीं उठाऊंगा। लेकिन जब आप पहुंचेंगे, तो मेरे पीछे खड़े लोग दंगा करेंगे। मान लीजिए, उस दौरान वे गेट खोलकर हमें अंदर आने दें और आपसे कहें, 'आप देर से आए हैं, हम आपको अंदर नहीं आने देंगे,' तो आप क्या करेंगे?
अनूप चुप रहा। तभी हवा का एक झोंका आया। इडली-वड़ा के ठेले पर लगे पलीसे के पत्ते और नाश्ते के बाद ग्राहकों द्वारा छोड़े गए पत्ते हवा में उड़ने लगे। कतार में खड़े लोगों की रेशमी साड़ियाँ और भारी पैंट उन पत्तों से चिपकने लगीं। वहाँ अफरा-तफ़री मच गई। कतार टूट गई। कुछ लोग कतार में शामिल हो गए और जलदबाजी में दोबारा कतार बन गई, जिससे लड़ाई शुरू हो गई। उनमें से एक ने कतार में सबसे पहले शामिल हुए व्यक्ति से कहा,
"तुम छुपकर घुसे? तुम अमेरिका जाने के लायक नहीं हो..."
इस पर उन्होंने उत्तर दिया,
मुझे ऐसा मत बताओ! मैं तीन बार अमेरिका जा चुका हूँ—"
यहाँ अनूप की स्थिति और भी कठिन होती जा रही थी। एक पल के लिए उसने सोचा - उसे अमेरिका नहीं जाना चाहिए! पहले इस समस्या से छुटकारा पाओ, बस इतना ही काफी है! शिवराज ने उसे यहाँ इतनी परेशानी के बारे में क्यों नहीं बताया? अगर उसे पहले से पता होता, तो वह अपने साथ एक दोस्त को ले आता। कम से कम यह सब गड़बड़ तो नहीं होती! अब जब उसने कतार में खड़े सभी लोगों को देखा, तो उसे लगा कि हर कोई उसी की तरह मुश्किल में है।
कुछ देर और इसी तरह बीत गई। सबने एक साथ फर्श पर कागज या रुमाल बिछाया और बैठ गए। उसने भी रुमाल बिछाया और उस पर बैठ गया।
ठीक आठ बजे, चौकीदार ने बाहरी द्वार खोला और पासपोर्ट फोटो की जाँच करने के बाद सभी को अंदर जाने दिया। सभी जल्दी से खड़े हो गए, परिसर में पेड़ों की

शांत छाया थी। वहाँ से वीज़ा कार्यालय जाने के लिए कोई कतार नहीं थी। अनुपा भी पच्चीसवें नंबर के कमरे में दाखिल हुए। उन्होंने वहाँ एक खिड़की पर अपने सभी दस्तावेज़ जमा किए और अपनी बारी आने का इंतज़ार करते हुए एक कुर्सी पर बैठ गए। फिर उन्होंने दिया गया नंबर लिया और अंदर शौचालय के सामने खड़े हो गए।
वह वहाँ से ऐसे निकला मानो किसी बड़ी मुसीबत से बच निकला हो। उसके सामने शीतल पेय और बिस्कुट बेचने वाली एक दुकान थी। उसने कुछ खरीदा और शांत हुआ, फिर सामने वाली कुर्सी पर बैठ गया और अपनी बारी का इंतजार करने लगा।
इसी बीच उसने घड़ी देखी। नौ बजने में अभी भी पैंतीस मिनट बाकी थे। लेकिन अब उसे बेहद ऊबा महसूस हो रही थी क्योंकि समय बहुत तेज़ी से बीत रहा था। शिवराज और अमेरिका जा चुके छात्रों द्वारा दिए गए विस्तृत निर्देशों को पढ़ने के बाद, वह सोचने लगा कि यहाँ वह चतुराई से उनके सवालों का जवाब कैसे दे। उसने आसपास देखा - उस दिन का एक भी अखबार नहीं था। तभी उसकी नज़र वहाँ बैठे एक व्यक्ति के हाथ में मौजूद अखबार पर पड़ी। उसने अखबार माँगा और उसे पढ़ने लगा।
चलते-चलते उनकी नजर बीच वाले पन्ने पर पड़ी, जहां पाठकों के पत्र छपे थे। वहां बैंगलोर के राममूर्ति नाम के एक व्यक्ति का पत्र प्रकाशित था—यह उसी महीने की 4 तारीख को प्रकाशित मदुरै के सुब्रह्मण्यम के पत्र का उत्तर था। विषय: पत्र लेखक ने लिखा था, "मद्रास में अमेरिकी वाणिज्य दूतावास के सामने सुबह तीन-चार बजे एक लंबी कतार लग जाती है, जो डेढ़ से दो फर्लांग लंबी होती है।"
मैंने भी दो बार वीज़ा लेने के लिए इतनी लंबी कतार का सामना किया है। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि श्री सुब्रमण्यम के सभी आरोप सही हैं। हर कार्यालय का एक निश्चित कार्य समय होता है। इस कार्यालय का काम सुबह नौ बजे शुरू होता है। फिर भी वे आठ बजे ही लोगों के लिए अंदर वातानुकूलित हॉल में बैठने की व्यवस्था कर देते हैं। वे भारतीयों को असुविधा पहुंचाने के लिए सुबह तीन बजे या चार बजे भी अपना कार्यालय नहीं खोलते! भारतीय उस समय से ही कतार में लगना शुरू कर देते हैं, तो क्या सुब्रमण्यम का मतलब यह है कि उन्हें कार्यालय उस समय खोलना चाहिए? असल बात तो यह है कि यहाँ इतनी भीड़ होती है कि कोई दूसरा दूतावास ऐसा नहीं है। यह समस्या भारतीय नागरिकों की आत्मसम्मान की भावना के बिना अमेरिका जाने की जल्दबाज़ी के कारण पैदा होती है। अगर उन्हें यकीन होता कि किसी कारण से उस देश में गया हर भारतीय तय समय पर लौट आएगा, तो वे सभी को डाक से वीज़ा भेज देते, इसमें कोई शक नहीं! श्री सुब्रह्मण्यम को इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि दूतावास के सामने लगी ऐसी कतारें अमेरिका के अहंकार को नहीं दर्शातीं, बल्कि हमारे भारतीयों की बेबसी की कहानी बयां करती हैं।
अनुपान ने पत्र को दो-तीन बार पढ़ा। हालाँकि उसने मना कर दिया था, फिर भी उसके दिमाग में बहुत कुछ चल रहा था। सुबह से लेकर अब तक की सारी घटनाएँ एक पल में उसके दिमाग में कौंध गईं। लेकिन इसके अलावा उसे कुछ और याद नहीं आया। उसने अखबार उसके मालिक को लौटा दिया, एक कुर्सी पर रुमाल बिछाकर बैठने की जगह आरक्षित कर ली और सामने वाली दुकान से कुछ और बिस्कुट ले आया।
बिस्कुट और कोक की बोतल खत्म करते ही उनके मन में यह ख्याल आया – ये लोग तो कुछ भी लिख देते हैं! इसमें भारतीय नागरिक के आत्मसम्मान का सवाल ही कहाँ से आ गया? अगर हमें कोई अच्छा अवसर मिले तो हम वहाँ क्यों जाते हैं? आज बैंगलोर में तमिल, तेलुगु और मारवाड़ी लोग क्यों रहते हैं? क्या अमेरिका में रहने वाले लोग कभी यूरोप से नहीं आए थे? वे वहाँ इसलिए गए क्योंकि उन्हें

अवसर मिला था। यूरोप के बाकी देशों ने आत्मसम्मान का सवाल ही क्यों पूछा? ऑस्ट्रेलिया में रहने वाले सभी लोग किस देश के हैं? कौन जाने ये राममूर्ति कौन है! हमें मुस्कुराते हुए एक पत्र लिखना चाहिए – नाम बदलकर हनुमानमूर्ति ही रख देना चाहिए! उन्होंने कहा, बेशक, शिव ने हमें इस विवाद के बारे में बताया था!
जब उसका नंबर पुकारा गया, तो उसकी छाती धड़कने लगी, लेकिन उसके चेहरे पर कोई भाव नहीं था।
बिना दिखावा किए, उसने आत्मविश्वास से खिड़की के पास जाकर फुसफुसाते हुए उसे खोल दिया।
उन्होंने कहा, "गुमानिंग–"
बुलेटप्रूफ खिड़की के पास बैठा श्वेत कर्मचारी अपने एक कागज को फिर से देखने लगा। फिर उसने उससे पूछा,
"अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद आप भारत क्यों लौटेंगे?"
अनुपना, जो इतना सरल प्रश्न पूछे जाने पर प्रसन्न हुई, ने कहा,
मेरी मां का अमेरिका को निर्यात करने वाला एक व्यवसाय है। मैं अमेरिका इस इरादे से गई थी कि वहां अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद भारत आकर अपना खुद का घरेलू व्यवसाय चलाऊंगी! अन्यथा, मुझे वहां जाने में कोई दिलचस्पी नहीं है। मैंने अपनी मां के व्यवसाय के दस्तावेज संलग्न कर दिए हैं...
अंदर बैठे व्यक्ति ने एक बार फिर सभी दस्तावेजों को ध्यान से देखा। उसके चेहरे को एक बार फिर देखते हुए उसने कहा,
"चार बजे आइए और अपना वीजा ले लीजिए..." और उसने माइक्रोफोन में अगला नंबर डायल किया।
अनूप बड़े उत्साह और विश्व चैंपियन के अंदाज के साथ बाहर आया और इलाके के सबसे अच्छे होटलों के बारे में पूछताछ करने लगा।

■

हालाँकि उन्होंने तस्वीरों, फ़ोटो और फ़िल्मों में अमेरिका के कई अनूठे पहलू देखे थे, लेकिन जब वे जम्मू-कश्मीर के हवाई अड्डे से बाहर निकले, तो सामने फैले विशाल नज़ारे और तेज़ रफ़्तार से दौड़ती गाड़ियों को देखकर दंग रह गए। वे चौड़ी, विशाल सड़कें, जिनके किनारे बने घर दिखाई नहीं देते, पेड़ इस तरह से उगे हैं - इन सड़कों पर गाड़ी चलाना सचमुच एक अलग ही आनंद है! हर सड़क कितनी चौड़ी है! तीन-चार गाड़ियाँ आराम से गुज़र सकती हैं और एक साथ तीन-चार गाड़ियाँ आ-जा सकती हैं, इतनी चौड़ी सड़क! इन सड़कों को देखकर ही इंसान की आज़ादी का असली मतलब समझ में आ जाता है!
उसने ध्यान से देखा – एक भी मोटरसाइकिल उसकी नज़र में नहीं आई। क्या उसे मोटरसाइकिल खरीदनी चाहिए या कार? वह जानता था कि इस देश में छात्र, मजदूर और आम लोग भी कार रखते हैं। उसने मैसूर में कार चलाना सीखा था। दिल्ली में उसने अपनी मां की कार भी चलाई थी; लेकिन फिर भी मोटरसाइकिलों के प्रति उसका प्रेम कम नहीं हुआ था।
शिवराज ने न्यूयॉर्क में एक कन्नड़ परिवार के साथ उनके रहने का इंतज़ाम किया था। वहाँ तीन दिन रहने के बाद, उन्होंने बस से फिलाडेल्फिया के लिए प्रस्थान किया, जहाँ उनका विश्वविद्यालय था। बड़ी खिड़कियों से दोनों ओर के नज़ारों के साथ खुली सड़कों को देखते हुए, उन्हें दृढ़ निश्चय हुआ कि इस देश में कार रखना कितनी सही है!
विश्वविद्यालय में आवश्यक उपचार पूरा करने के बाद, उन्हें किराए पर रहने के लिए एक अलग कमरा दिया गया। यह एक छोटा, आरामदायक दो कमरों का मकान था जिसमें एक अलग बाथरूम और रसोईघर था।
यह सब व्यवस्था हो जाने के बाद, उसने दिल्ली फोन किया।

"माँ, मैंने एक टेलीग्राम भेजा था जिसमें लिखा था कि मैं न्यूयॉर्क में सुरक्षित पहुँच गया हूँ - क्या आपको मिला? यहाँ सब ठीक है। यहाँ की ठंड! आपको खुद अनुभव करना होगा! रहने के लिए फ्लैट ढूंढने में बहुत परेशानी हुई। लेकिन यह स्कूल से बहुत दूर है। कम से कम आठ मील दूर है। यह ऐसा देश नहीं है जहाँ बसें वगैरह चलती हों। अगर मैंने अभी गाड़ी नहीं ली, तो मैं क्लास नहीं जा पाऊँगा!"
दूसरे बच्चे क्या कर रहे हैं?
"माँ, मेरी तुलना उनसे मत करो! क्या कॉनकॉर्ड कंपनी की मिस कांति का बेटा किसी धर्मशाला में रहते हुए पैदल ही घूमेगा? क्या उसे एमबीए की पढ़ाई करते हुए इसी देश में अपने व्यवसाय की नींव नहीं रखनी चाहिए? अगर मैं किसी धर्मशाला में रहूँ तो मेरी क्या छवि बनेगी? अगर मेरे पास अपना फ़ोन और पता न हो तो मैं अपनी व्यवसाय कैसे चलाऊंगा?"
वह अवाक् रह गई। "अगर आप कुछ नहीं भी कहेंगे, तो भी कम से कम छह हजार डॉलर का खर्चा आएगा। अपने बैंक को कहिए कि इसे टेलेक्स के जरिए ट्रांसफर कर दें—" उसने उसकी बात मान ली।
वहाँ की सड़कों पर अपनी नई कार चलाते हुए उसे अवर्णनीय आनंद का अनुभव हुआ – मानो वह हवा में तैर रहा हो – छी – उड़ रहा हो। यूनियन टर्न पाइक पर गाड़ी चलाते समय उसे स्टीयरिंग व्हील को छूने की भी ज़रूरत नहीं पड़ी – कितनी सीधी सड़क थी! कोई साइड रोड नहीं – कोई कुत्ते-बिल्ली-लोग-साइकिल-हाथगाड़ी-बैलगाड़ी नहीं! चाहे वह कितनी भी गति बढ़ा दे, कार ज़रा भी नहीं हिलती! अगर मैं अपनी छुट्टियों में सीधे कैलिफ़ोर्निया जाऊँ और उसी गति से फ्लोरिडा होते हुए वापस आऊँ, तो मुझे भी ड्राइव से कुछ आनंद और संतुष्टि मिलेगी! वाह! कितना बढ़िया पेट्रोल है! वास्तव में, पेट्रोल की कीमत से पता चलता है कि कोई देश कितना प्रगति कर रहा है। क्या मुझे इस विषय पर एक सेमिनार पेपर लिखना चाहिए? मुझे माइक से पूछना चाहिए।
"मैं माइकल ब्राइटन हूँ। मुझे माइक कहिए।" पहली मुलाकात में प्रोफ़ेसर ने अपना परिचय इसी तरह दिया। भारत के किसी कॉलेज में चार साल भी बिता लें, तो भी किसी शिक्षक से इतनी आत्मीयता नहीं हो सकती! शिवा को छोड़कर, मैसूर के किसी कॉलेज में मुझे उनके जैसा कोई प्रोफ़ेसर नहीं मिला। माइक तो शोध पत्र प्रकाशित करते ही रहते हैं! समानता के बिना ज्ञान के क्षेत्र में भी प्रगति करना मुश्किल है। जी हाँ, इस विषय पर एक संगोष्ठी आयोजित की जानी चाहिए और वहाँ पढ़े गए सभी शोध पत्रों को मैसूर के सभी भ्रष्ट प्रोफ़ेसरों को भेजा जाना चाहिए! शिवा को छोड़कर, बाकी सभी प्रोफेसर सचमुच भ्रष्ट हैं!
तीन दिन बाद जब हमारी माइक से दोबारा मुलाकात हुई, तो उसने कहा,
मैं तुम्हें अनु कहकर बुलाऊँगा। जितना छोटा नाम लेकर बुलाओगे, उतना ही अपनापन महसूस होगा। क्या तुम्हें यहाँ बोरियत नहीं होती? कोई गर्लफ्रेंड है या नहीं? इस देश में सब कुछ तुम्हारी काम करने की क्षमता पर निर्भर करता है। अगर तुम यहीं रहोगे, तो कोई तुमसे पूछेगा भी नहीं! तुम समझदार हो। पहले एक गर्लफ्रेंड बना लो। वरना, तुम्हें घर की याद सताने लगेगी!" वह हँसा। फिर उसने पूछा, 'मैं तुम्हें एक विषय देता हूँ – क्या तुम संदर्भ सूची तैयार करके अपने साथ लाओगे? टाइपिंग के लिए अपनी गर्लफ्रेंड का इस्तेमाल करो। क्या किसी ने तुम्हें बताया नहीं कि इस देश में आने से पहले टाइपिंग ज़रूरी है?"
ये प्रोफेसर तो झटपट काम निपटा देते हैं और हंसी-मजाक करके माहौल को खुशनुमा बनाए रखते हैं। वरना, मैसूर के प्रोफेसरों के उन मुस्कुराते चेहरों का क्या हाल! अगर देश को तरक्की करनी है तो ये मुस्कुराता हुआ स्वभाव ज़रूरी है! अब से जब भी मैं मैसूर जाऊँगा, तो उन मुस्कुराते हुए प्रोफेसरों के मुँह पर थूक दूँगा! एक लड़के ने एक लड़की से बात की, और ऐसा लग रहा है जैसे उसकी

अपनी बेटी की इज्जत मिट्टी में मिल गई हो! कॉलेज के नियमों के खिलाफ है कि लड़के-लड़कियाँ क्लास में एक-दूसरे के बगल में बैठें!
उसे तुरंत एहसास हो गया कि अगर वह थोड़ा होशियार हो तो अमेरिका में गर्लफ्रेंड बनाना मुश्किल नहीं है। उसने पंद्रह दिनों में गर्लफ्रेंड बना ली। वह उससे दो सेमेस्टर आगे थी। इतना ही नहीं, वह एमबीए नहीं कर रही थी – वह इंजीनियरिंग में एमएस कर रही थी। मारिया मेक्सिको की थी। वह स्पेनिश लड़की थी। उसकी मातृभाषा अंग्रेजी नहीं थी। वह अंग्रेजी का उच्चारण 't' की जगह 'ट' की तरह करती थी। इस उच्चारण के कारण उसके व्यक्तित्व में एक तरह का मर्दानापन झलकता था। जब उसने नई कार खरीदी तो वह उसके साथ भी गई थी। उसने उसे ड्राइविंग के बारे में कुछ महत्वपूर्ण बातें बताकर लाइसेंस बनवाने में भी मदद की। वैसे भी ड्राइविंग बहुत पसंद थी। इसके अलावा, उसने यह भी अनुभव किया कि अगर आपके पास अपनी कार है, तो किसी भी लड़की को डिनर पर ले जाना आसान है। अगर आपके पास कार नहीं है, तो इस देश में रहना नामुमकिन है, यह अनुभव उसे हो रहा था। अगर आपके पास कार और अपना अपार्टमेंट है, तो इस देश में गर्लफ्रेंड बनाना आसान है। इस देश में एक सिंगल बेड भी दो लोगों के लिए काफी होता है। भले ही इसकी चौड़ाई थोड़ी कम हो, लेकिन क्या रोमांटिक जोड़ों को वास्तव में इसकी जरूरत है?
यह सोचकर उसके चेहरे पर मुस्कान आ गई।
मारिया कद में छोटी और थोड़ी गोल-मटोल थी। एक आम अमेरिकी लंबी और गठीली लड़की से दोस्ती करना चाहेगा। इस देश में, किसी सहेली के साथ बाहर जाने पर ज़रा भी शर्म नहीं आती। अगर कोई किसी को अपने अपार्टमेंट में ले जाता है, तो कोई वहाँ देखता भी नहीं या कोई फालतू पूछताछ नहीं करता। हे भारत माता! आप एक ब्रह्मचारी माँ हैं! सबकी देखभाल करना आपका कर्तव्य है! लेकिन क्या आपने कभी सोचा है कि जो लोग इस बंधन में बंधे हैं उनका क्या हाल होगा?

■

२२

उस रात, रात के नौ बजे, अखबार का काम खत्म करने के बाद, तलवार पटेलनगर स्थित अपने घर गए, तभी उनकी पत्नी ने उनसे पूछा,
"तुम कहाँ चले गए थे? तुम्हारे अखबार के दफ्तर में एक भी फोन नहीं है! अगर मैंने कोई संदेश भेजा, तो तुम वहाँ नहीं थे! तुम कहाँ चले गए थे? तुम्हें कोई जानता भी नहीं था। दफ्तर के अलावा तुम और क्या करते हो?"
तलवार अपनी पत्नी की मानसिक स्थिति को भली-भांति समझते थे। उन्हें पता था कि जब उनकी मानसिक स्थिति बिगड़ती थी, तो वे उन पर गुस्सा करने लगती थीं। मनोचिकित्सक ने यह भी बताया कि उनकी मानसिक बीमारी का कारण ट्रिब्यून में अपनी प्रतिष्ठित नौकरी छोड़ना था। इसके साथ ही, फैक्ट टीवी चैनल पर काम करने से समस्या और बढ़ गई थी। डॉक्टर ने कहा, "यह एक मानसिक बीमारी है। सही और गलत का संबंध बुद्धि से होता है। मन इन बातों को बिल्कुल नहीं समझता।"
फिर भी, तलवार को आश्चर्य हुआ - अगर वह इतनी अच्छी तरह से शिक्षित थीं, उनके पास पीएचडी थी, वह एक पाठक के रूप में काम करती थीं, और छात्रों को न्याय और अन्याय के बारे में पढ़ाती थीं - अगर वह दिमाग को सही दिशा में मार्गदर्शन नहीं कर सकती थीं, तो इतनी महान बुद्धिमत्ता का क्या उपयोग था?
उसके मन में जो भी चल रहा था, वह डॉक्टर की सलाह के अनुसार उसके साथ बेहद धैर्य से पेश आ रहा था। डॉक्टर ने उसे बताया था,

"जब वे ऐसी मानसिक स्थिति में हों तो उन्हें उपदेश न दें - इससे वे हीन भावना में डूब जाएंगे। उनसे किसी भी बात पर चर्चा न करें - उस समय वे केवल अपनी मानसिक बीमारी से घिरे होते हैं। यदि आप ऐसे समय में चर्चा करेंगे, तो इससे उनका गुस्सा और बढ़ जाएगा।"
तलवार ने अपने मन पर नियंत्रण रखा और डॉक्टर की सलाह का पालन किया, इस उम्मीद में कि डॉक्टर का इलाज देर-सवेर सफल होगा।
"बाहर थोड़ा काम चल रहा था। क्या हुआ?" उसने पूछा।
"क्या हुआ? सब कुछ खत्म हो गया! तुम्हारी पत्नी को ज़रा भी परवाह नहीं! तुम सुबह से शाम तक इधर-उधर भटकते रहे! क्या तुम्हें लगता था कि घर सिर्फ सोने की जगह है? एक लड़का यहाँ और एक लड़की वहाँ - दोनों मुसीबत में हैं, इसीलिए उन्होंने फोन किया था।"
`किस तरह का संकट?"
उन्हें नौकरी से इसलिए निकाल दिया गया क्योंकि उन्होंने अपने बेटे को स्कूल ले जाने के लिए सरकारी गाड़ी का इस्तेमाल किया! और इसलिए भी क्योंकि उन्होंने कलकत्ता में अपने दामाद की दुकान का हिसाब-किताब ठीक से नहीं रखा; और इसलिए भी क्योंकि उन्होंने लोहे जैसी आवश्यक वस्तुओं की कीमतें मनमाने ढंग से बढ़ा दीं, इसलिए दुकान पर छापा मारा गया और सारे दस्तावेज़ ज़ब्त कर लिए गए! इतना ही नहीं, उन्हें गिरफ्तार करके ले भी गए! वह घटना सुबह आठ बजे हुई और दुकान पर यह घटना दस बजे! बकुले ने तीन बार फोन किया—उसके बाद अब वह अपने पति को बचाने के लिए वकील ढूंढने में जुटी हैं—"
मुरादाबाद और कलकत्ता में एक ही समय में बेटे और दामाद के खिलाफ कार्रवाई की गई। बेटा आईएएस अधिकारी था। वह अपनी बेदाग छवि के लिए जाना जाता था। उस पर अपने बेटे को स्कूल ले जाने के लिए सरकारी वाहन का इस्तेमाल करने का आरोप लगा! दामाद भी व्यापार में पूरी ईमानदारी से काम कर रहा था और उचित लाभ प्राप्त कर रहा था। इसका मतलब बिलकुल स्पष्ट था। ये दिल्ली सरकार द्वारा हम पर दबाव डालने के लिए उठाए गए कदम हैं!
उन्होंने तुरंत फोन से कलकत्ता से संपर्क किया। फोन पर एक लड़की थी।
"पापा, आप कहाँ चले गए थे? अगर आप यहां आ जाते तो मुझे थोड़ा अच्छा लगता। मैंने यहाँ एक वकील नियुक्त किया है। उन्होंने कहा है कि वे कल सुबह अदालत में जमानत याचिका दायर करेंगे। अब राजेंद्र को लॉकअप में रखा गया है। उन्होंने आज तक कोई गलती नहीं की है।" बोलते-बोलते वह रोने लगी।
"हम कल सुबह निकल रहे हैं, बेटा। अगर पहली फ्लाइट में सीट मिल गई तो ठीक है—नहीं तो दूसरी फ्लाइट से आ जाएँगे—" बोलते-बोलते उनकी आवाज़ भी भारी हो गई।
"प्लीज़ पापा, पहली फ्लाइट में आ जाइए। मैंने आपको सौ रुपये रिश्वत के तौर पर दिए हैं, और आपको पहली फ्लाइट में सीट मिल जाएगी! सिद्धांत के नाम पर देर मत कीजिए। मम्मी को भी साथ ले आइए।"
तुरंत ही तलवार ने मुरादाबाद को फोन किया। लेकिन लड़के ने जवाब दिया।
फोन मत करना, ऐसे समय में सभी फोन टैप किए जाते हैं। सावधान रहना! उन्होंने मुझे निलंबित कर दिया है। उन्होंने फतवा जारी किया है कि मैं सरकारी अनुमति के बिना गांव से बाहर न जाऊं। बाकुले ने भी फोन किया था। तुम उससे मिलने जाओ। वापस आते समय ट्रेन से यहां भी आना—" हालांकि उनकी आवाज में उदासी थी, फिर भी वे शांत भाव से बोल रहे थे।
ऐसे समय में, वे सोच रहे थे कि वे यह कैसे भूल सकते हैं कि सरकार चुपके से बलि का बकरा बनाए गए व्यक्ति के फोन कॉल सुन रही थी। लेकिन राहुल नहीं भूले। वह आईएएस अधिकारी हैं - इसलिए वह भूल नहीं सकते!

दोनों को सुबह 6 बजे की फ्लाइट में सीट मिल गई। यह लड़की द्वारा सुझाए गए रूट की वजह से ही संभव हो पाया। दोपहर 1 बजे जमानत याचिका मंजूर हो गई और बकुले के पति को शाम 4:30 बजे रिहा कर दिया गया। साथ ही उन पर कुछ शर्तें भी लगाई गईं, जैसे कि हर दिन पुलिस स्टेशन आना-जाना और कलकत्ता से बाहर न जाना। जब उनके पति बाहर आए, तो बकुले ने उनका हाथ पकड़कर रोना शुरू कर दिया। उनकी दो साल की बेटी भी रोने लगी। उनकी पत्नी खुश थी और वह भी रोने लगी। दोनों की आंखों में आंसू भर आए।
इकट्ठे हुए दोस्तों को विदाई देने के बाद, सभी अपने-अपने घर लौट गए। फिर तलवार ने अपने दामाद से पूछा,
क्या हुआ?
वे चाहे जिस भी अदालत में जाएं, मेरे खिलाफ कुछ भी साबित नहीं कर पाएंगे। मेरा हिसाब-किताब बिलकुल साफ है - मैं सभी टैक्स समय पर भर रहा हूं। बिक्री कर राज्य सरकार का मामला है। मुझे समझ नहीं आता कि केंद्र सरकार की पुलिस क्यों आई। ऐसा लगता है कि उनका एकमात्र मकसद मुझे अपमानित करना है। वे शायद मेरे खिलाफ केस दर्ज करके मेरा बिजनेस परमिट रद्द करवाना चाहते हैं।
"शायद-" फिर उसे कुछ याद आया और उसने कहा, "कल पूछताछ के दौरान उस आदमी ने मुझसे दो बार पूछा, 'क्या तुम्हारे ससुर ने तुम्हें ये सब बातें सिखाई हैं?' तो मैंने पूछा। फिर उसने एक बार कहा, 'तुम्हारे ससुर की परछाईं शनि ग्रह की तरह तुम्हारा पीछा कर रही है! तुम्हारा नाम क्यों लिया जा रहा है? मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा।"
इस पर पत्नी ने अपनी तीखी निगाहें उस पर डालीं। उसकी निगाहों में छिपे क्रोध को केवल तलवारें ही समझ सकती थीं। बकुला अपने पति से कह रही थी,
"तुम नहाकर आओ, चलो देखते हैं! किसी ने खाना नहीं खाया है, दाल और सब्जियां तैयार हैं। चलो गरमा गरम फुलके बनाते हैं..."
राजेंद्र नहाने चला गया। तलवार की नज़र मेज़ पर रखे अख़बार पर पड़ी। उसने दिन भर अख़बार नहीं देखा था। यहाँ तक कि हवाई जहाज़ में उसके सामने अख़बार रखा होने पर भी, उस समय उसे उसे देखने की इच्छा नहीं हुई थी।
अखबार देखते-देखते उनकी नजर तीसरे पन्ने पर छपी एक खबर पर पड़ी। राजेंद्र के बारे में यह खबर एक खास तरीके से "असामाजिक व्यापारी" के रूप में छपी थी। इसमें उन पर जनता के साथ विश्वासघात करने, मुनाफाखोरी करने और लोहे की कृत्रिम कमी पैदा करने का आरोप लगाया गया था। इस लेख को इस तरह लिखा गया था कि इसे पढ़ते ही आम लोगों के मन में इस व्यापारी के प्रति नफरत पैदा हो जाए।
राजेंद्र पाल कोई बड़ा व्यापारी नहीं थे। वे कोई थोक व्यापारी भी नहीं थे जो कृत्रिम कमी पैदा करते हों। वेलिंगटन रोड पर सैकड़ों दुकानों में उनकी एक ही दुकान थी। ऐसी खबर को इतना बड़ा मुद्दा क्यों बना दिया गया? तलवार को उस घटिया पत्रकारिता से घृणा हुई जो बिना किसी भी खबर की जांच किए उसे बेशर्मी से छाप देती थी।
कुछ समय बाद जब सब कुछ व्यवस्थित हो गया, तो तलवार ने टेलीग्राम द्वारा रविंद्र को सूचित किया कि वह कलकत्ता पहुंच गया है। अगले दिन, राजेंद्र अपने वकील के साथ संबंधित अधिकारियों से मिले और अपना व्यवसाय शुरू करने की अनुमति मांगी। तलवार भी उनके साथ गए। इसके बाद, अपनी पहचान बताए बिना, वे राजेंद्र के आस-पास के दुकानदारों से मिले।
वहाँ का दुकानदार कुह रहा था,
मैं आपको बताता हूं व्यापारियों के साथ पर्दे के पीछे क्या चल रहा है! सत्ताधारी पार्टी सारा पैसा चाहती है, इसलिए वे हम पर दबाव डाल रहे हैं। उन्हें एक रुपया

देने के बाद, अगर हम विपक्षी पार्टी को एक पैसा भी दे देते हैं तो वे हमसे नाराज़ हो जाते हैं! अरे, हम राजेंद्र पालना को इतने सालों से जानते हैं। उनका स्वभाव है कि वे बिना किसी परेशानी के अपना कारोबार करते हैं। वे पढ़े-लिखे और सभ्य हैं! उन जैसे व्यक्ति को इतना कुछ सहना पड़ा - इसका मतलब है कि इसके पीछे कोई और कारण ज़रूर होगा!
एक अज्ञात व्यक्ति ने कहा,
"उसके ससुर सरकार के खिलाफ लिखते हैं, है ना? इसीलिए सरकार ने ऐसा किया। अगर मुंह खोलना ही है तो नाक क्यों नहीं बंद कर लेते?"
जब वे बाहर गए, तो बाकुले ने घर पर अपनी मां को भी वही बात बताई।
मेरे पिता को इतनी बड़ी नौकरी क्यों छोड़नी चाहिए और सरकार से झगड़ा क्यों करना चाहिए?
मां को भी अपनी भावनाओं को व्यक्त करने का मौका मिला। उसने अपनी बेटी को अपने दिल की हर बात बता दी।
अब तुम उन्हें चार ज्ञानवर्धक बातें बताओ!
दोनों ट्रेन से मुरादाबाद के लिए रवाना हुए। यात्रा के दौरान दोनों में से कोई भी एक-दूसरे से बात नहीं करना चाहता था। उसका मूड खराब हो गया था। वह खिड़की से बाहर देखती बैठी थी। वह भी कुछ समय से अपने ही विचारों में खोया हुआ था। लेकिन उसका मूड याद करके उसने मन ही मन कहा,
आपको क्या लगता है?
"अगर तुम इस खिड़की से कूद जाओगे, तो सब मर जाओगे!" उसने जवाब दिया। उसकी आवाज़ में गुस्सा नहीं था - बल्कि गंभीरता थी।
"क्या तुमने दवा ली?" उसने पूछा।
"क्या आपको लगता है कि दवा लेने के बाद मेरी सारी समस्याएं हल हो जाएंगी? मेरा नाम मत लो, देखते हैं! बस मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो!" उसकी आवाज़ तेज़ हो गई।
आस-पास के यात्री सुन लेते, इसलिए तलवार इस बारे में चुप रहा।
मुरादाबाद लौटने के बाद राहुल ने कहा, "आप जानते हैं कि अधिकारी कैसे होते हैं? वे रोज़ मेरे घर आते हैं - मुझसे मिलते हैं - मेरे साथ काम करते हैं! लेकिन जब मुझे बताया गया कि सरकार ने मुझे नाराज़ कर दिया है, तो डर के मारे कोई मुझसे मिलने नहीं आया! जिस तरह सरकार ने आपके बेटे के रूप में मुझे नाराज़ किया है, उन्हें डर है कि जब मुझे उनके दोस्त के रूप में बुलाया जाता है तो हमारे साथ भी ऐसा ही होगा! देश के नेता भी जनता के मन में यही भावना पैदा करना चाहते हैं! मुझे यकीन है कि मैंने कुछ भी गलत नहीं किया है। पूरे देश में दहशत का माहौल है - क्या यह डर नहीं है कि मजिस्ट्रेट की शक्ति का दुरुपयोग करके कोई डाकू मेरे बच्चे को सड़क से उठा ले जाएगा? - क्या उसे सुरक्षित रूप से स्कूल नहीं जाना चाहिए? - मैं अदालत को यह भी बता सकता हूं कि मैंने इसके लिए सरकारी वाहन का इस्तेमाल किया था। लेकिन हमारे अधिकारी कल हमारे पास आएंगे - उन्हें यह एहसास भी नहीं है कि हमें एक-दूसरे को इसके बारे में याद दिलाते रहना चाहिए! उन्हें जाने दो - बकुले से क्या खबर है?"
उन्होंने उसे सब कुछ बताया जो हुआ था। सब कुछ सुनने के बाद उसने कहा,
अगर आप इसे इस नज़रिए से देखें तो इसमें कुछ भी नया नहीं है। हर जगह यही माहौल है। आपने 'ट्रिब्यून' में अपनी नौकरी छोड़ी और एक नया अखबार शुरू किया, यह आपका सवाल है। मैं इसके बारे में आपको क्या बता सकता हूं? मुझे भी यह अधिकार नहीं है। आपने मुझे अच्छी शिक्षा दी – अच्छे संस्कार दिए – मैं इसके लिए आभारी हूं। मुझे आपके आदर्शों पर गर्व भी है। इस नौकरी से इस्तीफा देना मुश्किल नहीं है। अगर मैं इस नौकरी में काम करता, अगर मैं किसी निजी कंपनी में काम करता, तो मुझे दुगनी तनख्वाह मिलती और पूरे परिवार को फोन

और कार जैसी विलासिता मिलती! लेकिन आज का माहौल ऐसा है कि बड़े-बड़े व्यापारी भी सरकार के नापसंद व्यक्ति को नौकरी देने से कतराते हैं – चाहे उसकी योग्यता कितनी भी हो! इसीलिए सवाल उठता है – क्या किया जाए?
तलवार को समझ नहीं आ रहा था कि बच्चे को कैसे शांत करे और इस मुसीबत से निकाले। उसने एक उपाय सोचा – बच्चे को कहना चाहिए, मेरा अपने पिता से कोई रिश्ता नहीं है। अगर आपको उनसे कोई मतभेद है, तो उन्हें गिरफ्तार कर लीजिए और उन्हें मनचाही सज़ा दीजिए – लेकिन यह सब किसे बताए? क्योंकि जब वह उन्हें इस तरह परेशान कर रहा है, तब भी वे साफ-साफ नहीं बोलते! जब उनसे पूछा जाता है कि वे उन्हें क्यों परेशान कर रहे हैं, तो सब जवाब देते हैं – यह ऊपर से आदेश है!
यह सच था कि वह अपने बेटे को सरकारी वाहन से स्कूल ले गए थे। लेकिन सभी सरकारी कर्मचारी अपनी पत्नियों को बाजार ले जाने और बच्चों को स्कूल छोड़ने के लिए सरकारी वाहनों का इस्तेमाल करते हैं। दूसरों की तुलना में, वह सरकारी वाहनों का इस्तेमाल बहुत कम करते थे। चुनाव के दौरान तो उनकी पार्टी भी मनचाहे सरकारी वाहनों और पेट्रोल का इस्तेमाल करती है।
बेटे ने अपने पिता को अपनी स्थिति के बारे में बताया, लेकिन उसने उन्हें यह या वह करने के लिए नहीं कहा।
उन्होंने पूछा,
"अगर वे निलंबन की बात भी करते हैं, तो भी कानून के अनुसार उन्हें अपने वेतन का पचहत्तर प्रतिशत भुगतान करना होगा, है ना?"
यह सिर्फ अस्तित्व का सवाल नहीं है। असली सवाल यह है कि जब मैं कहूंगा कि मुझे निलंबित कर दिया गया है, तो दूसरे लोग मेरे साथ कैसा व्यवहार करेंगे..."
लेकिन आप जानते हैं कि आपने कुछ भी गलत नहीं किया है। तो आप इसके बारे में क्या करने वाले हैं? बस घर पर बैठेंगे और इस पर ध्यान देने के बजाय कुछ पढ़ेंगे?
बेटे ने अपने पिता की सलाह मान ली। फिर भी, वह पूरी तरह संतुष्ट नहीं था। वह यह भी जानता था कि गांधी जी के मार्ग पर चलने वाले सत्याग्रही की तरह बोलने वाले उसके पिता, उसके अपमान की पीड़ा को नहीं समझेंगे।
बहू बिना कुछ बोले ही अपने ससुराल वालों के सामने अपनी नाराजगी जाहिर कर रही थी। उसकी पत्नी को बिना कुछ बोले अपनी नाराजगी जाहिर करने का यह तरीका पसंद आ रहा था।
शाम को तलवार ने बच्चे को समझाया,
तुम हमारे इकलौते बेटे हो। यहाँ रहने के बजाय दिल्ली आ जाओ। तुम तीनों को किसी चीज की कमी नहीं होगी। दिल्ली में आज जितनी कमाई कर रहे हो, उतनी ही कमाई यहां भी आसानी से हो जाएगी। और यहाँ की नौकरी से इस्तीफा भी मत देना। यहाँ कुछ बेहतरीन वकील हैं जो ऐसे मामले उठाते हैं और बिना फीस लिए सरकार से लड़ते हैं। उन्होंने न सिर्फ हमारे देश में बल्कि विदेशों में भी ख्याति अर्जित की है। मैं उनमें से कुछ को जानता हूँ। वे मेरे काम का सम्मान भी करते हैं। मैं उनसे जरूर बात करूँगा। अगर वे तुम्हें सजा देते हैं, तो हम सुप्रीम कोर्ट जाकर लड़ सकते हैं। इसके लिए तुम्हें कोई पैसा खर्च करने की जरूरत नहीं है। सारी जिम्मेदारी मेरी है।
वे सुबह की ट्रेन से दिल्ली के लिए रवाना हुए। प्रथम श्रेणी के डिब्बे में उन दोनों के अलावा कोई और नहीं था। पत्नी पर पिछली रात ली गई दवा का असर अभी भी था। ट्रेन छूटने के ढाई घंटे बाद, पौने नौ या साढ़े नौ बजे, वह पूरी तरह से जाग उठी।
चाय खत्म करने के बाद, उन्होंने जानबूझकर उससे बोलने को कहा।

"क्या आपने देखा है कि सरकार किस तरह से अपनी शक्ति का दुरुपयोग गलत तरीके से करती है?"
उसने कुछ नहीं कहा। उसकी चुप्पी में छिपी घृणा को वह स्पष्ट रूप से महसूस कर सकता था। अगर वह उससे नाराज़ थी, तो ठीक है – लेकिन कम से कम अब वह उस सरकार से नाराज़ होगी जिसने उसके दोनों बच्चों के साथ एक ही समय में अन्याय किया था और इससे उसे समझ आएगा कि दूसरे देश किस तरह के अन्याय का सामना कर रहे हैं। उसे यही उम्मीद थी। इसलिए उसने एक बार फिर पूछा,
"अब आपको समझ आ गया होगा कि वे अपनी शक्ति का दुरुपयोग कैसे कर रहे हैं, है ना?"
वह अचानक उछल पड़ी और बोली,
इसके लिए भी ताकत की जरूरत होती है! और अधिकार मौजूद है, बस उसका इस्तेमाल करना होता है! हर कोई ऐसा नहीं कर सकता!
बाथको के व्यवहार से वे स्तब्ध रह गए, वह इतनी ज़ोर से चीख रही थी कि उसकी आवाज़ आसपास की झोपड़ियों में भी सुनाई दे रही थी। हालाँकि दोनों बच्चों के साथ घटी घटना के कारण उसकी मानसिक स्थिति का बिगड़ना स्वाभाविक था, फिर भी वे उसकी इस प्रतिक्रिया से क्रोधित थे।
वह क्रोधित हो गया और बोला,
सत्ता और अधिकार का उचित उपयोग होना चाहिए। विपक्ष की एक भी आवाज़ नहीं सुनी जानी चाहिए – जनता की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रतिबंधित होनी चाहिए – यह क्रूरता का चरम युग है।
उसने उसकी बात काट दी और फिर से चीख पड़ी।
चुप रहो! क्या तुम ही अकेले समझदार हो? तुम ही अकेले देशभक्त हो, इसलिए बकवास मत करो! वह एक महान शक्ति का अवतार है! क्या कोई पत्रकार भी ऐसा नहीं था जिसने उसे सृजन, प्रतिष्ठा और लय का साक्षात रूप कहा हो? क्या तुम खुद को उससे ज्यादा बुद्धिमान समझते हो? महाकाली का विरोध करने वाला कोई नहीं बचेगा! हे थेराद्य - तुम्हें खुद को नष्ट करने की आजादी है! लेकिन अगर तुम अपने बच्चों को देश भेजते हो, तो यह मत भूलो कि तुम्हें रौरव में नरक में जाना होगा!" और उसने अपने पति के चेहरे पर एक थप्पड़ मारा।
अप्रत्याशित घटना देखकर तलवार सदमे से आंखें बंद कर लीं। थोड़ी देर बाद उन्होंने आंखें खोलीं और पाया कि उनकी पत्नी खिड़की से बाहर देख रही थी। एक पल के लिए उनके मन में उसके प्रति क्रोध उमड़ आया। देश में हो रहे अत्याचारों और अन्याय का समर्थन उनकी पत्नी कर रही थी, जो उनके बगल में बैठी थी।
कुछ ही क्षणों में उसने अपने गुस्से पर काबू पा लिया। उसकी मानसिक स्थिति को याद करके उसने कुछ नहीं कहा।
अगले दिन, उसने दिल्ली में उसका इलाज कर रहे मनोचिकित्सक से इस असामान्यता के बारे में पूछा और उसे ट्रेन में हुई घटना के बारे में भी बताया।
डॉक्टर कुछ पल चुप रहे और फिर बोले,
यह सिर्फ आपकी पत्नी की बात नहीं है। देश की अधिकांश शिक्षित महिलाएं – यहां तक कि साक्षर महिलाएं भी, जो अखबार पढ़ सकती हैं – उनमें खुद को देखती हैं। उन्हें इस बात की खुशी है कि एक महिला प्रधानमंत्री बनी है। जो महिलाएं उनमें संतोषी माता, दुर्गा माता, भवानी माता आदि देखती हैं, उन्हें पूरा यकीन है कि वे कुछ गलत नहीं कर सकतीं! उनके समर्थकों ने भारत के गांवों की महिलाओं के मन में उनकी यही छवि बनाई है। क्या यहीं से ये कहावत नहीं आई कि भारत इंदिरा है – इंदिरा भारत है या उनकी तुलना भारत माता से की जाती है? छोड़िए, मैं इसका इलाज करूंगा, मैं रोगी के मन की सोच बदलने की कोशिश भी करूंगा। लेकिन कुछ समय के लिए – कितने महीने, यह आज नहीं कहा जा सकता –

आपको उनकी इच्छा के अनुसार काम करना चाहिए। पहले उन्हें यह विश्वास दिलाना जरूरी है कि मेरे पति भी मेरे बारे में सोचते हैं। फिर उनकी सोच बदलने की कोशिश कीजिए।
"आपका क्या मतलब है?" तलवार को समझ नहीं आया कि डॉक्टर क्या कहना चाह रहे थे।
साफ़-साफ़ कहूँ तो, आज आपने इंदिरा गांधी से जो कुछ भी कहा, उन्हें लगता है कि आपने वो सब खुद से कहा है! आपने इंदिरा गांधी का जानबूझकर विरोध किया ताकि उन्हें ठेस पहुँचे और परिणामस्वरूप उनके बच्चों को भी दुख पहुंचे – इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि उनके मन में ये विचार आ रहे हैं। इसलिए, मैं कहूँगा कि आप मेरे साथ-साथ अपने नए अखबार से भी दूर रहें। उन्हें स्पष्ट कर दें कि आपने सब कुछ छोड़ दिया है। आपने कहा कि उन्होंने टेन में हाथ उठाए और आवाज़ उठाई। अगर हम इसे अभी गंभीरता से नहीं लेते हैं, तो –"

■

अब तलवार का मन नैतिक निष्ठा की भावना में डूब गया था। मैंने अपना जीवन मुख्य रूप से अपनी पत्नी और बच्चों के लिए व्यतीत किया था। कम से कम अब, मैं उस सत्य के लिए क्यों न जी सकूँ जिसे मैं सत्य मानता हूँ?
उस रात मुरादाबाद से एक फोन आया। लड़के ने कुछ खास नहीं कहा। दोनों को पता था कि फोन टैप किया जा रहा है। अब उसने फोन पर कहा,
पिताजी, मुझे अच्छी तरह पता है कि माँ की सेहत ठीक नहीं है। लगता है उन्होंने इसे बहुत गंभीरता से ले लिया है - आप सब जानते हैं, मुझे बताइए! ऐसा लगता है कि उन्हें इस बात का दुख है कि कोई उनकी परवाह नहीं करता। नीरजा को भी यही महसूस हुआ। कहते हैं कि जब बच्चे बड़े होकर घर से चले जाते हैं, तो औरतें इससे परेशान होती हैं। अगर कोई और वजह हो, तो मुझे आप पर नज़र रखने दीजिए!..."
यह सुनकर तलवार बेचैन हो गया। क्या वह हमें कोई संकेत दे रही है, या हम पर दबाव डाल रही है? वह उसके बगल में गहरी नींद में सो रही थी, मानो उसने नींद की गोली खा ली हो। नींद की कमी से बेचैन तलवार के मन में कई आध्यात्मिक प्रश्न उठे - जीवन क्या है? संसार का अर्थ क्या है? पति-पत्नी के रिश्ते का सच्चा दायरा क्या है? तभी उसे भारतीय दर्शन में सुने हुए उत्तर याद आए, जैसे कि "यह सब भ्रम है"।
उस सुबह बाकुले का एक पत्र भी आया। लगभग नौ दिन पहले लिखा गया था। इतनी देर क्यों? पता और डाक टिकट तो ठीक थे। जब मैंने लिफाफे को ध्यान से देखा, तो ऐसा लगा जैसे किसी ने उसे खोलकर दोबारा बंद कर दिया हो। तो यह सेंसर किया गया था! हमें इसका विरोध करना चाहिए। मानवाधिकारों के इस उल्लंघन को सभी अखबारों में दिखाया जाना चाहिए। न केवल यहाँ, बल्कि विदेशों के अखबारों में भी – यह पत्र मेरी पत्नी को दिखाया जाना चाहिए, 'देखो तुम्हारे बेटे के पत्रों को कैसे सेंसर किया जाता है!' तो! मैंने बाद में सोचा, 'तुम्हारा यह कठोर व्यवहार मेरे बच्चों के लिए मुसीबत खड़ी कर रहा है।' तो वह चिल्लाई, 'क्या हुआ अगर?'
बेटी ने पत्र में वही लिखा था जो बेटे ने फोन पर इशारों-इशारों में कहा था। ``उसने अपनी मां की सेहत को लेकर चिंता जताई थी। उसे लगता है कि आप उसकी उपेक्षा कर रहे हैं। मैंने उसे दो महीने यहीं रहने के लिए भी कहा था। लेकिन वह रुकने को तैयार नहीं हुई क्योंकि कॉलेज की छुट्टियां नहीं हैं। उसने यह भी कहा कि अगर कॉलेज का कोर्स न होता तो उसे फांसी लगाकर मरना पड़ता। आप उसका ख्याल रखिए। अगर उसे कुछ हो जाता है तो हमारे पास कौन है? उनका कारोबार तो पहले की तरह चल रहा है।"

अगले दो वाक्यों को इस तरह से काट दिया गया था कि एक भी अक्षर दिखाई न दे। ऐसा लग रहा था कि उसने पुलिस द्वारा किए गए उत्पीड़न के बारे में कुछ लिखा था और फिर उसे मिटा दिया था।
बेटी ने पत्र में अपनी माँ के बारे में बड़े स्नेह से लिखा था। उसने इस बात का दुख भी व्यक्त किया था कि अब उसके पास सहारा देने वाला कोई नहीं है। लेकिन वह मेरे दिल के दर्द को कैसे नहीं समझ सकती थी? एक पिता अपने बच्चों को अपने मन की बात उस तरह नहीं बता सकता जिस तरह एक माँ सब कुछ पीछे छोड़कर उन्हें न जाने क्या-क्या कह सकती है। अगर वह इस सारे दर्द से गुज़रने के बजाय मर गई होती, तो मैं अपना काम करने के लिए स्वतंत्र होती।
आजादी से पहले के दौर में, इसी भारत की कई महिलाओं ने अपने डर, चिंताओं और दुविधाओं को दबाकर अपने पतियों को स्वतंत्रता संग्राम में भेजा, उन्हें जेल जाने दिया और ब्रिटिश सरकार द्वारा थोपी गई कठिनाइयों को सहते हुए उनके साथ खड़ी रहीं। वो सदाचारी नारीत्व अब कहाँ चला गया? उनमें से कुछ महिलाएं आज भी जीवित हैं। उनके पति जो उस समय जेल गए थे, अब मंत्री बन चुके हैं। अगर ये पति आज की बुराई की ताकतों से लड़ना चाहें, तो यही महिलाएं डरकर उनका विरोध करेंगी!
यह देश कहाँ से आया है? नैतिक उत्थान और पतन के मामले में पुरुष और स्त्री में कोई अंतर नहीं है! उत्थान के समय दोनों का उत्थान होता है और पतन के समय दोनों एक ही गति से जमीन पर गिरते हैं! यहाँ इन दोनों में क्या अंतर है?
एक तरह से देखा जाए तो रविंद्र स्वतंत्र हैं। उनकी पत्नी ने उन्हें पूरी तरह से आज़ाद कर दिया है!
जब उसने घर की पूरी स्थिति और अपने मन में चल रहे संघर्ष को रवींद्र को खुलकर बताया, तो रवींद्र भी यह समझ नहीं पा रहा था कि क्या कहे। लेकिन दो दिन सोचने के बाद उसने कहा,
डॉक्टर हमें बता रहे हैं, यह सुनकर अच्छा लगा। आप दो महीने घर पर ही रहें। हो सके तो समय-समय पर हमें मार्गदर्शन देते रहें। अगर अभी नहीं तो मोहन बाकी सारी व्यवस्थाएं संभाल रहा है। उसकी जिम्मेदारी थोड़ी और बढ़ाई जा सकती है।
"मुझे भी लगता है कि मुझे तुम्हारी तरह पूरी तरह स्वतंत्र होना चाहिए।"
"इस मामले में यह संभव नहीं है। मैं आपको यह बात बता रहा हूँ, भले ही मुझे पता है कि आपका प्रायश्चित और आपकी गुमनामी हमारे अखबार के लिए हानिकारक है।"
इसके बाद तलवार पंद्रह दिनों तक घर पर ही रहे। नए संस्करण से उनका नाम हटा दिया गया। केवल संपादक रविंद्र और प्रबंधक मोहनलाल सैनी का ही उल्लेख किया गया। स्वाभाविक रूप से, दिल्ली के समाचार जगत में इस पर काफी चर्चा हुई। सरकारी अधिकारियों ने भी इसकी जांच शुरू कर दी।
एक सप्ताह बाद, तलवार को निमंत्रण मिला। यह पद 'द इंडियन वॉइस' के वाशिंगटन संवाददाता के इस्तीफे के बाद खाली हुआ था। 'द इंडियन वॉइस' एक बहुत बड़े प्रसार वाला और हमेशा राजनेताओं की चापलूसी करने वाला अखबार था। अगर तलवार यह जिम्मेदारी स्वीकार करते, तो उन्हें मोटी तनख्वाह और कई सुख-सुविधाएं मिलतीं। साथ ही, उन्हें स्वतंत्रता का भी आश्वासन दिया गया था। तलवार को पूरा यकीन था कि इस निमंत्रण के पीछे सरकार का हाथ है। यह उन्हें रिश्वत देने की एक सरल चाल थी।
फिर भी, उन्होंने एक सप्ताह तक इस बारे में सोचा। फिर एक दिन उन्होंने रविंद्र और सैनी से इस बारे में चर्चा की और कहा,
नहीं, मैंने कुछ दिनों के लिए 'द फैक्ट' से दूर रहने का फैसला किया है। अब, इस निमंत्रण को स्वीकार करते हुए, मैं अमेरिका जा रहा हूँ। मैं यह काम एक साल के लिए करूँगा। मेरे निजी खर्च बहुत कम हैं। अगर मैं कुछ न भी कहूँ, तो भी मैं हर

महीने कम से कम एक हज़ार डॉलर बचा लूंगा। मैं वह आपको भेज दूंगा। इसके अलावा, मैं विदेशी अखबारों को भारत में ही रही हर घटना की जानकारी देता रहूंगा। मैं उन्हें आज यह नहीं बता रहा हूँ कि मैं सिर्फ एक साल के लिए जा रहा हूँ।
यह दोनों तरफ से लागू होता है, है ना?"
नहीं। मैं अकेले जा रही हूँ। मुझे भी थोड़ी राहत चाहिए। वैसे तो वह कॉलेज की दिनचर्या का खूब आनंद ले रही है। उस समय तो उसे अवसाद बिल्कुल नहीं होता। उसे यह परेशानी तभी होती है जब वह अपने पति को देखती है!
उन्होंने संबंधित अधिकारियों से मुलाकात की और नई नौकरी के लिए अपनी सहमति दे दी। तीसरे दिन उनके बेटे ने उन्हें फोन करके बताया कि सरकार ने उनके खिलाफ़ लगे आरोप वापस ले लिए हैं। दामाद ने उन्हें यह भी सूचित किया कि पुलिस को पूरा यकीन हो गया है कि उनकी दुकान में किसी तरह की गड़बड़ी नहीं हुई थी!

■

२३

गद्दार! निकम्मा! वो भाग गया क्योंकि उसमें मेरे जैसे प्यार को सहने की ताकत नहीं थी! उसने तो अपने दिल को तरोताज़ा करने के लिए मेरे सारे खर्चे भी चुका दिए। लेकिन उसे ज़िंदगी में एक दिन ज़रूर एहसास होगा कि उसने क्या खोया है। अगर वो दोबारा मेरे दरवाज़े पर आया, तो मैं उसे घर की दहलीज पार नहीं करने दूंगी!
कांति अपने मन को शांत करने की पूरी कोशिश कर रही थी। फिर भी, इतने बड़े और आलीशान घर में अकेले सोते हुए, हेमंत की याद उसे सताती रहती थी। उसे यह भी गहरा एहसास था कि हेमंत के साथ बिताए पल रविंद्र की मौजूदगी में बिताए पलों जितने भावुक नहीं थे। उसे लगता था कि परिपक्वता के दौर में हेमंत के साथ जो करीबी रिश्ता बना था, वह कहीं ज़्यादा गहरा था, और इसी वजह से अब उसे जो दर्द सहना पड़ रहा था, वह भी कहीं ज़्यादा तीव्र था।
उसने अपने सलीके से सजाए गए बेडरूम में कई रातें बिना सोए बिताईं। इतने बड़े घर में अकेले रहने का ख्याल उसे बेचैन कर देता था और वह नींद की गोली लेना चाहती थी, लेकिन उसे यह भी पता था कि यह एक आदत बन जाएगी और उसके शरीर और मन पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगी।
कांति को याद आया कि शीतल सोने से पहले हर रात थोड़ी सी शराब पीती थी। उसने भी शराब पीना शुरू कर दिया। एक हफ्ते तक उसे इससे आराम मिला। लेकिन शराब का कोई खास असर न देखकर उसने व्हिस्की पीना शुरू कर दिया। पहले दिन एक चम्मच व्हिस्की और एक गिलास पानी पीने के बाद उसे काफी अच्छा महसूस हुआ। उसने खुद को चेतावनी दी कि चाहे कुछ भी हो जाए, उसे व्हिस्की की मात्रा नहीं बढ़ानी है!
पूरा दिन कारखाने के काम में बीत जाता था। रविवार को भी घर पर बैठे-बैठे वह ऊब जाती थी। इसलिए उसने रविवार को भी दफ्तर के लेखा-जोखा संबंधी दस्तावेज देखना शुरू कर दिया।
जब कारखाना खूब फल-फूल रहा था, तब कई और घटनाएं भी घट रही थीं। उसने अपने बेटे द्वारा किसी सफाईकर्मी के बेटे के साथ मचाई गई गड़बड़ को ठीक किया। उसने शीतल को, जो बिना काम किए सिर्फ ऐश-आराम कर रही थी, सबक सिखाया - उसने एक गुमनाम पत्र भी भेजा - अगर वह नहीं तो कौन? - उसका पति आया और उसने हद ही पार कर दी - उसे जाने दो! लेकिन बेटा आया और उसने उसे थप्पड़ मार दिया, उसकी माँ ने मुझसे मेरी माँ का देहरादून वाला फ़ोन

नंबर माँगा और उससे शिकायत की, 'तुम्हारी बेटी ने मेरे बेटे की ज़िंदगी बर्बाद कर दी' - मैं चुप कैसे रह सकती थी? मैंने उसकी माँ से फ़ोन पर बहस की, मैंने क्या ग़लत किया था?
मैंने अनुप को चाहे जितना समझाया, उसने मेरी बात सुने बिना ही अमेरिका के लिए प्रस्थान कर दिया।
क्या इसमें कोई आश्चर्य की बात है कि इन सब के परिणामस्वरूप, प्रतिदिन सेवन की जाने वाली व्हिस्की की मात्रा में वृद्धि हुई है?
बाकी कारोबार अच्छा चल रहा था। अब वह देश में भी अपना कारोबार बढ़ाने की योजना बना रही थी। इसी सोच के साथ, अगर वह खुद एक बार देश भर का दौरा कर ले या इस काम के लिए किसी योग्य व्यक्ति को नियुक्त कर ले, तो विदेशी देशों के साथ व्यापार करने में कोई रुकावट नहीं रहेगी। हालांकि, कारोबार अभी के मुकाबले दुगुना हो जाएगा। वाह! अगर वह ऐसा कर ले, तो चाहे वह दिन-रात काम करे, समय ही नहीं बचेगा!
लेकिन कारोबार के इतने विस्तार का क्या करें? हर साल होने वाली लाखों-करोड़ों की कमाई का क्या करें? इस सवाल से उनका उत्साह कम होता जा रहा था। उनके दिल में बसी यह उम्मीद भी टूट रही थी कि अनुप कभी न कभी जरूर आएगा और उस कारोबार पर ध्यान देगा जिसे उनकी प्यारी माँ ने इतनी मेहनत से खड़ा किया था।
जब वो अमेरिका गए थे, तो वहाँ के इलाक़े, सड़कों और गाड़ियों के बारे में बहुत सारे पत्र लिखते थे। फिर वो छुट्टियों में यहाँ आए। लेकिन उस समय भी वो यहाँ की सड़कों, धूल और पिछड़ेपन की लगातार आलोचना करते रहे। अनुप, जो दिल्ली को पिछड़ा गाँव कहते हैं, उन्हें यहाँ का कौन सा दूसरा गाँव पसंद आएगा? बताइए!
अगले साल उसने उसे फोन किया और उससे कहा,
अपनी पढ़ाई जल्दी खत्म करो और चले जाओ...
इस पर उन्होंने उत्तर दिया,
मुझे तो बड़ी-बड़ी कंपनियों से नौकरी के ऑफ़र मिलने लगे हैं। सिर्फ़ किताबी शिक्षा से क्या होगा? माँ, अलग-अलग कामों में अनुभव हासिल करना भी ज़रूरी है! ये तो तुम्हारा कारोबार है! तकनीकी ज्ञान नहीं, डिग्री नहीं – ऐसे में तो तुम्हें ही ये कारोबार संभालना है! तो सोचो इसका क्या फ़ायदा होगा! और इतनी पढ़ाई के साथ मैं इस पर ध्यान कैसे केंद्रित करूँ? अभी मैं यहाँ अंतरराष्ट्रीय कारोबार में विशेषज्ञता हासिल कर रही हूँ। मैं जापानी और अमेरिकी कारोबार की समानताओं और अंतरों पर एक शोधपत्र तैयार कर रही हूँ! मैं ऐसा काम करूँगी जो मेरे ज्ञान, अनुभव और पढ़ाई को चुनौती दे! माँ, अंतरराष्ट्रीय कारोबार अरबों डॉलर का निवेश है! सौ अनपढ़, ग्रामीण लोगों के साथ इसे शुरू करना कोई बेकार का कारोबार नहीं है!
क्या आपको पता है कि अनपढ़ लोगों से काम करवाने पर भी कितने लाख रुपये का लाभ होता है?
चाहे इसकी कीमत कितनी भी हो, यह रुपयों में ही है, है ना? अगर आप दस रुपये डालते हैं, तो यहाँ एक डॉलर होता है! इसमें कोई शक नहीं कि इसकी कीमत ग्यारह रुपये, अठारह रुपये, बीस रुपये, तीस रुपये होगी। क्योंकि इससे साफ पता चलता है कि भारत में कितना आर्थिक कुप्रबंधन चल रहा है!
वह चुप रही, यह सोचकर कि अगर वे फोन पर बात करते रहे तो हजारों रुपये का बिल बन जाएगा, लेकिन उसकी बातों से साफ था कि शिक्षा पूरी करने के बाद भारत आकर व्यापार करने की उसकी कोई इच्छा नहीं थी। आखिर अमेरिका का आकर्षण क्या है! इसके बाद, अकेलेपन और तन्हाई का एहसास उसके मन में डर पैदा करने लगा।

एक दिन अनुपम के प्रांते उसका गुस्सा भड़क उठा। उसे तो उस गरीब गांधी स्कूल में ही रहना चाहिए था। मैंने उसे वहां से निकाला, उसे घुमाया-फिराया, इंजीनियरिंग की शिक्षा दी – मैंने उस पर इतना पैसा खर्च किया! और आज वही मेरे कारोबार को बेकार बताता है? उसे इससे मिलने वाले पैसे से नफरत है।
जब वह इसी सोच में डूबी हुई थी, एक सुबह उसके मन में एक विचार आया – हम शादी क्यों न कर लें? इतनी सारी पत्नियाँ – हाँ। इतनी सारी तलाकशुदा पत्नियाँ – हां! साथी विवाह – उसे रविवार के अखबार में विज्ञापन देना चाहिए – एक गोरी, सुंदर, पतली उद्योगपति महिला की तलाश है, सालाना – क्या पचास-साठ पत्र नहीं आएंगे? इस तरह का व्यवसाय शुरू करके इसे इस स्तर तक बढ़ाने के बाद, उद्योगपतियों के परिवारों से भी पत्र आने लगेंगे। विज्ञापन में शास्त्रीय संगीत का ज्ञान – गृहकार्य में कुशल होने का भी उल्लेख किया जाना चाहिए। हालाँकि, उम्र का विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया जाना चाहिए।
वह इसी सोच में डूबी आईने के सामने खड़ी थी। कानों के आसपास इक्का-दुक्का सफेद बाल—हां—थोड़े ज़्यादा ही दिख रहे थे। लेकिन हमारी उम्र की दूसरी औरतें तो सफेद हो चुकी हैं! मेरे मामले में तो यह खानदानी लक्षण है—इसी बीच, उसका ध्यान आँखों के नीचे के काले घेरों और हल्की झुर्रियों पर गया जो दिखने लगी थीं। आप कह सकते हैं कि ये मुश्किल से ही नेज़र आती हैं!—उसने खुद से कहा। वह तुरंत बाथरूम गई और तराजू पर खड़ी हो गई। नहाते समय हर दिन अपना वज़न करना उसकी आदत बन गई थी। चाहे वह आजकल कितना भी कम खा रही हो, उसका वज़न बढ़ ही रहा था! क्या यह उम्र की वजह से है या व्हिस्की की वजह से? अगर वह अपना खाना और कम कर दे, तो न सिर्फ वह कमज़ोर हो जाएगी, बल्कि उसके गाल और दांत लटक जाएंगे और वह बूढ़ी दिखने लगेगी!
शादी के ख्यालों में एक हफ्ता बीत गया और यह सोचकर हैरानी होती रही कि अखबार में विज्ञापन देने के बाद कौन किससे जवाब देगा, उनमें से चुनाव कैसे करेगी। लेकिन 'शादी का प्रस्ताव देने वाला सिर्फ पैसे के लिए शादी करके उसे नज़रअंदाज़ क्यों नहीं कर देता?' यह सवाल उसे परेशान करता रहा और शादी की उसकी उत्सुकता फीकी पड़ गई। अगले हफ्ते तक वह यही सोचती रही कि सिर्फ पैसे के लिए शादी करने वाले आदमी को कैसे पहचाने। उसने कुछ दिन अमेरिका फोन करके उस एहसानफरामोश आदमी को अपनी शादी के बारे में बताने के बारे में भी सोचा, कि वह कितना खुश होगा। तब तो वह शादी कर ही सकती थी – अब तो उसके कानों तक सिर्फ यही खबर पहुंचेगी कि हम शादी कर रहे हैं, तो फिर हम आराम से बैठ जाएं तो क्या फर्क पड़ता है?
एक दिन, उसने इसी इरादे से उसके फोन नंबर पर कॉल करना शुरू कर दिया – लेकिन तभी उसे कुछ याद आया और उसने फोन काट दिया।

■

सरकारी व्यापार कार्यालय से अपना व्यवसाय लाइसेंस नवीनीकृत कराने के बाद वह अपनी कार की ओर जा रही थी, तभी एक कार उसके पीछे आकर रुक गई और उसके जाने का इंतज़ार करने लगी। उसकी नज़र कार चला रहे व्यक्ति पर पड़ी – घने भूरे बाल, लंबी, सलीके से संवारी दाढ़ी, कॉलर वाली खादी कमीज़ पर नेहरू जैकेट – अरे वाह! हमने इस व्यक्ति को कहीं देखा है!
उसने भी उसे पहचान लिया होगा। उसने खिड़की से हाथ हिलाकर "हाय-" कहा। उसने भी उसे पहचान लिया था, लेकिन उसका नाम याद नहीं था। उसने बताया कि वह अपनी कार वहाँ से निकालकर खड़ी कर उसके लिए इंतज़ार करने लगी थी। उसने भी कार स्टार्ट की, लॉक किया और उसकी तरफ आने लगा। अब वह उसे पहचान चुकी थी।
वह नीचे झुकी और उससे हाथ मिलाते हुए बोली,

``नमस्कारजी! मैं आपको भूला नहीं हूँ, क्या आप भूले नहीं हैं? अब आप मुझे मेरा नाम बताइए, पाहु पटकन!'
उसने उसका हाथ अपनी चौड़ी हथेली में लिया और बिना एक पल भी संकोच किए कहा,
``यदि मैं उन कांटिजियों के नाम भूल जाऊं जो अपने अस्तित्व से पूरे क्षेत्र को रोशन करते हैं, तो मेरे जीवित रहने की क्या लाभ?"
उसने पूछा,
"व्यापार मंत्रालय में सांस्कृतिक सलाहकार की क्या भूमिका थी?"
"संस्कृति का प्रसार व्यावसायिक माध्यमों के माध्यम से होता है, है ना! ओह, हाँ! आपका वो सितार बजाने वाला दोस्त - आप उसकी कला को निखारने में मदद कर रहे थे, है ना? उसका क्या हाल है? मुझे तो उसका नाम भी सुनाई नहीं दे रहा!"
"ओह! इस बारे में कुछ न कहना ही बेहतर होगा!" उसने जवाब दिया।
“वाह, मैं तो यही कहूंगा! तुम भाग्यशाली हो! तुम इन कलाकारों का महत्व समझते हो, कि तुम उन्हें दूर रख सकते हो। लेकिन मुझे भी तो रोज़ी-रोटी कमानी है! कुछ भी करना नामुमकिन है। तो तुम मेरी हालत समझ सकते हो! ओह, हाँ! तुमसे मिले हुए काफी समय हो गया है ना? अभी वाणिज्य मंत्रालय में मेरी एक महत्वपूर्ण मुलाकात है। चलो किसी शाम मिलते हैं और एक-दूसरे के सुख-दुख पूछते हैं?”
उसने अभी भी उसका हाथ नहीं छोड़ा था।
उसने अपना हाथ छोड़ दिया और कहा,
क्यों नहीं? चलिए आज ही मिलते हैं। ये रहा मेरा पता - मैं करीब सात बजे घर पर रहूंगा।
"ज़रूर," उसने कहा और उसके द्वारा दिया गया कार्ड अपनी जेब में रखकर अलविदा कहते हुए चला गया।
वह कुछ देर तक उसकी पीठ के बल खड़ी आकृति को देखती रही।
फैक्टी की ओर गाड़ी चलाते हुए उसे एहसास हुआ कि उसने आज तक किसी भी पुरुष को शाम की बातचीत के लिए अपने घर नहीं बुलाया था। व्यापार से जुड़ी पार्टियां और बैठकें बाहर होटलों में आयोजित की जाती थीं। अगर कोई बहुत खास व्यक्ति होता, तो 'रोज़ पेंटा' में। उसे अपनी मर्जी से खाने-पीने की पूरी आजादी थी। लेकिन उनमें से किसी ने भी उसे शराब पीने के लिए मजबूर नहीं किया था। लेकिन आज उसने हरिशंकर को अपने घर बुलाया - उसके चेहरे पर आत्म-घृणा की मुस्कान आ गई।
जब वह दोपहर के भोजन के लिए घर गई, तो उसने रसोइए से उन दोनों के लिए रात का खाना बनाने और कुछ नाश्ता लाने के लिए कहा।
शाम को जब वह घर पहुँची, तो रसोइया ने सारा खाना मेज पर लगा दिया और दस मिनट के भीतर चला गया। आधे घंटे बाद हरिशंकर आ गए। उनके आते ही उसने कार बरामदे में खड़ी की और उनका स्वागत करने के लिए आगे बढ़ी। उनसे हाथ मिलाने के बाद, उसने उन्हें बैठक में रखे आलीशान सोफे पर बैठाया और खुद कुछ दूरी पर बैठ गई। वहाँ, अपनी सारी व्यावसायिक कुशलता का इस्तेमाल करते हुए, वे अंतरंग बातचीत करने लगे - हरिशंकर ने भी चतुराई से बातचीत का रुख मोड़ने में मदद की।
कुछ समय बाद उसने पूछा,
चलो बताओ... तुम क्या लेना चाहोगे?
"मेरे लिए कुछ भी वर्जित नहीं है! आपको जो भी पसंद हो, मैं वही करूँगा। आपने क्या रखा है?"
``यह फ्रेंच वाइन है, चिवास रीगल–"
"शिव का वास हो।"

जब वह अंदर से बर्फ, पानी, गिलास और शिवाज़ रीगल लेकर आई, तो उसने उन दोनों के लिए गिलास तैयार किए। 'चीयर्स-' कहते हुए, दोनों ने अपने गिलास उठाए।
उसने गौर किया कि वह अपने गिलास में और उसके गिलास में भी ज़्यादा डाल रहा था। लेकिन उसने इस बात का कोई संकेत दिए बिना अपनी बातचीत जारी रखी। उसने पूछा,
"आपको शिव इतने पसंद क्यों हैं?"
“पीना क्यों? मन का तनाव कम करने और मन को मुक्त करने के लिए, है ना? यह मित्रों की उपस्थिति में मन को खोलने का एक साधन है। मेरा अनुभव यह है कि शिवाज़ जितना असर कोई और भारतीय पेय नहीं कर सकता! आपका क्या विचार है? और आप इतनी देर तक क्यों बैठी रहीं? पास बैठकर खुलकर बातचीत की जा सकती है – क्या यह सच है या नहीं?” वह उसके करीब आते हुए बोला।
वह पूरी तरह होश में थी। वह जानबूझकर हमें ज़रूरत से ज़्यादा दे रहा था और खुद बहुत कम ले रहा था! उसे भी बेहतर महसूस हो रहा था। उसने बहुत परेशान होने का नाटक करते हुए पूछा,
अब बोलो! तुमने कहा था कि अगर हम पास बैठें तो तुम खुलकर बात कर सकते हो, है ना? तुम क्या कहना चाहते थे?
"मुझे बताओ? इस दुनिया की रचना के बाद से, किसी भी इंसान को अपने भाग्य में ऐसा सौभाग्यशाली क्षण कभी नहीं मिला!"
``क्या? तुम्हारा क्या मतलब है?” उसने आश्चर्य भरे चेहरे से पूछा।
जैसे कोई ग़ज़ल सुना रहा हो, उसने उसकी आँखों में देखते हुए कहा,
इस दुनिया में और कौन इतना भाग्यशाली है कि उसे इतनी परिपक्व और सुंदरी के साथ रहने का मौका मिले?
कांति ने हरिशंकर के बारे में कई कहानियां सुनी थीं, जो महिलाओं को रिझाने की अपनी कला के लिए मशहूर थे। अब जब उन्होंने उन्हें बताया, तो ये किसी ग़ज़ल की दो पंक्तियाँ ही होंगी – निश्चित रूप से ये वो पंक्तियां नहीं थीं जो उनके मन में थीं। कौन जाने इससे पहले उन्होंने और कितने लोगों को ये कहानियां सुनाई होंगी! बेशक, आप कह सकती हैं कि यह पहली बार है जब हम किसी पुरुष के साथ प्यार से पेश आ रहे हैं! – हमने भी ऐसी ही किसी कविता की कुछ पंक्तियाँ सुनी होंगी – लेकिन उन्हें एक भी पंक्ति याद नहीं आई। उन्होंने बस इतना कहा,
"यह नजरिए की बात है..."
उसने उसके इशारे को समझ लिया। उसके बाद, दोनों के गिलास वहीं पड़े रहे। वह उठी और उसका हाथ पकड़कर उसे अपने बेडरूम में ले गई। अब उसकी आवाज़ और भी खिल उठी थी। वह बड़े ही मनमोहक अंदाज़ में उसके अंगों का वर्णन करने लगा – वह भी खुद को यकीन दिलाने लगी कि इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है, यह उसका सच्चा वर्णन है।
जब सब गहरी नींद में सो रहे थे, वे मेज पर आमने-सामने बैठकर खाना खा रहे थे। उसने उससे आश्वासन की उम्मीद में पूछा,
सच कहूं तो, आपको मुझमें क्या पसंद है?
“आपको क्या पसंद आया?” उन्होंने कहा, मानो वे किसी गहन सिद्धांत को विचारपूर्वक व्यक्त कर रहे हों, “इस देश ने हज़ारों वर्षों से महिलाओं को कमज़ोर और असहाय कहकर दबाया है! मेरा मानना है कि यहाँ की हर महिला छिपी हुई शक्ति का विशाल भंडार है। फिर भी, अगर मैं लाखों, बल्कि अरबों महिलाओं को देखूं, तो मुझे आप जैसी एक भी नहीं मिलेगी! स्वतंत्र रूप से व्यवसाय शुरू करना, उसे इतने बड़े पैमाने पर विस्तारित करना, कला और संस्कृति पर दिल खोलकर खर्च करना – धनवान होने पर भी कितने लोगों में यह सांस्कृतिक जागरूकता होती है? क्या मैं भाग्यशाली नहीं हूँ कि मुझे आप जैसी महिला मिली? आज मैं सचमुच

आभारी हूं! – क्या आपने गौर किया? यह सिर्फ़ सुंदरता का सवाल नहीं है! बेशक, मैंने ऐसी परिपक्व, सौम्य और शालीन सुंदरता कहीं और नहीं देखी, यह सच है! लेकिन मुझे जो बात और भी खास लगती है, वह है आपका आत्मविश्वास और कला और संस्कृति को पोषित करने वाली आपकी उदारता।"
उसका हृदय कृतज्ञता से भर गया था। काफी देर तक वह वहीं बैठी रही, उसकी आँखें आधी बंद थीं, वह अपने विचारों में मग्न थी, उसका हाथ अभी भी उसके हाथ में था।

■

उसके बाद, वे सप्ताह में दो या तीन बार मिलने लगे। बाकी दिनों में, वे शाम छह बजे के बाद अपने फोन पर बातें करते थे। हर शाम, छह बजे के बाद, हरिशंकर अपने दफ्तर में बैठकर कुछ न कुछ पढ़ते रहते थे। वे उस समय अपना लेखन कार्य भी करते थे। उसी समय, वह उन्हें फोन करती थीं। उनकी बातचीत की कुशलता हर कदम पर झलकती थी। हरिशंकर भी उनकी इस कुशलता की प्रशंसा करते थे।
शारीरिक मुलाकात के दौरान भी, शारीरिक सुख के साथ-साथ उनकी बातों का आनंद भी उन्हें मंत्रमुग्ध कर देता था। भले ही वे आमने-सामने नहीं मिले थे, फिर भी उनसे बातचीत करते समय उन्हें वही आनंद महसूस होता था।
उन्हें लंबे समय से ऐसा कोई दोस्त नहीं मिला था जिससे वे दिल खोलकर बातें कर सकें। इसीलिए वे उनसे दिल खोलकर बातें कर रही थीं। एक दिन उन्होंने उन्हें अपने पति, उनके व्यवहार और यह बताया कि वे आज दिल्ली के एक अखबार के संपादक हैं। इस पर हरिशंकर ने टिप्पणी की,
"इसलिए, अगर कल मुझे कड़ी आलोचना का सामना करना पड़े तो आश्चर्यचकित मत होना!"
"इतना डरो मत! अगर ऐसा कुछ हुआ तो मैं खुलकर तुम्हारे साथ खड़ी रहूंगी!" उसने मुस्कुराते हुए जवाब दिया। यह कहते हुए उसके मन में अपने पति के प्रति नफरत और हरिशंकर के प्रति प्रेम धीरे-धीरे बढ़ता गया।
एक दिन उसने हेमंत होन्नाटी के बारे में भी उसे बताया। उसने हेमंत होन्नाटी द्वारा उठाए गए नैतिक मुद्दों और उनसे उत्पन्न परेशानियों के बारे में भी बात की। इस पर हरिशंकर ने कहा,
"इन कलाकारों को अपना पूरा जीवन अपने गुरु से प्राप्त पूंजी पर ही व्यतीत करना चाहिए! वे इस जीवनकाल में आधुनिक कला में कदम रखने में सक्षम नहीं होंगे!"
वह भी हरिशंकर की टिप्पणी से बहुत प्रभावित हुई। उन्होंने आगे कहा,
"उसने ज़रूर कोई नाटक रचा होगा क्योंकि वह इतनी स्वतंत्र और गंभीर महिला के साथ रहना बर्दाश्त नहीं कर सकता था!"
वह भी इस बात से शत प्रतिशत सहमत थी।
एक बार तो उसने अनूप का जिक्र भी उसके सामने कर दिया था। इस पर हरिशंकर ने कहा,
मैं एक अलग काम के लिए अमेरिका जा रहा हूँ, इसलिए उनसे ज़रूर मिलूँगा। अगर उन्हें रेडीमेड कपड़ों का कारोबार पसंद नहीं आता, तो वे इलेक्ट्रॉनिक्स का कारोबार शुरू कर लें। दुनिया के छहों महाद्वीपों में उनके विस्तार की अपार संभावनाएं हैं! मैं भी धर्मोपदेशक हूँ। भले ही आप मुझे न बताएं, मुझे कारोबार का काफी अनुभव है। लाइसेंस लेना बिल्कुल भी मुश्किल नहीं है। मैं उन्हें मना लूंगा।
उसके वादे से भी वह शांत हो गई।
उन्होंने उसे यह सुझाव भी दिया,
आप हर शाम घर पर बैठकर क्या करते हैं? दिल्ली में संगीत के इतने सारे कार्यक्रम होते हैं। मैं आपको इसके बाद उनके बारे में बताऊंगी। आपको उनसे

निमंत्रण मिलेंगे। आगे बढ़िए, आप कला और संस्कृति के संरक्षक हैं! उस निकम्मे इंसान ने आपको छोड़ दिया, तो आप कला को क्यों छोड़ दें?
इस सुझाव ने उन्हें नई ऊर्जा दी। वे फिर से संगीत सभाओं में जाने लगीं। डॉ. हरिशंकर प्रसाद का नाम हर जगह गूंज रहा था। हरिशंकर स्वयं उन्हें आदरपूर्वक सबसे "मिस कांतिजी! प्रमुख वस्त्र निर्यातक!" कहकर परिचय कराते थे। कुछ लोगों से उनका परिचय कराते समय वे "कला और संस्कृति के महान संरक्षक" नामक पुस्तिका भी देते थे। उन्हें लगने लगा कि दिल्ली के उच्च वर्ग में उन्हें फिर से अपना स्थान मिल गया है।
एक बार उसने उससे पूछा,
हरि, तुम हेलेन को कभी कहीं नहीं लाते। क्यों? अगर तुम मुझे बताना चाहते हो, तो बताओ। कोई दबाव नहीं है।
“तुम्हारे अलावा मैं और किसके सामने अपने दिल की बात कहूँ?” उसने कहा, और फिर धीरे से बोला, “यह सच है कि वह भारतीय संस्कृति से आकर्षित थी, लेकिन उसके खून में अमेरिकी-यूरोपीय संस्कृति बसी है। अब वह इन सब से ऊब चुकी है, वह कहती है। इसके अलावा, उसका स्वभाव बेहद ईर्ष्यालु है! अगर मैं तुम्हारे जैसी खूबसूरत चेहरे वाली महिला को नमस्कार भी करूँ, तो वह साँप की तरह फुफकारती है! मैं कैसे सोच सकता था कि अमेरिका में जन्मी और पली-बढ़ी लड़की ऐसी होगी?”
"आखिर मैं तुम्हारी तरफ़ आकर्षित क्यों हुआ?"
इन लोगों में कोई गहरी भावना नहीं है। इनके लिए सब कुछ सतही है। आकर्षित होने में कभी देर नहीं होती और दूर हो जाने में तो और भी जल्दी होती है! क्या तुम्हारे और मेरे बीच का रिश्ता इतनी जल्दी शुरू होकर इतनी जल्दी खत्म भी हो जाएगा? तुम्हारा बेटा अमेरिकी लड़कियों से दोस्ती करता है, तो क्या तुमने उसे बताया? उसे सावधान रहना चाहिए। ये एक उदाहरण है, अगर तुम चाहो तो उसे बता सकती हो...
उसे भी एक साथ बच्चे के लिए चिंता और हेलेन के लिए नफरत का भाव महसूस हो रहा था।

■

एक दिन रात करीब नौ बजे, कांति के बिस्तर पर आराम करते समय, हरिशंकर ने उसे एक सुझाव दिया,
काशी में भारतीय कला प्रतिष्ठान नाम से एक संस्था स्थापित करने की योजना है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य भारतीय संस्कृति का संरक्षण करना और भारत-विदेश के उच्च कोटि के कलाकारों द्वारा कार्यक्रम आयोजित करना है। सभी उच्च कोटि के कलाकारों ने इस संस्था के लिए अपना समर्थन व्यक्त किया है। मैंने इसके लिए सरकार से पर्याप्त आर्थिक सहायता प्राप्त करने का भी निर्णय लिया है। फिर भी, यह एक स्वतंत्र संस्था बनी रहेगी। यह संस्था सार्वजनिक जीवन में विशेष स्थान रखने वाले कलाकारों और कलाकारों के संरक्षकों द्वारा संचालित की जाएगी। काशी के महाराजा ने पांच लाख रुपये देने की सहमति दी है। उन्हें संस्था के मुख्य संरक्षक के रूप में सर्वोच्च स्थान देने का निर्णय लिया गया है। कुछ अन्य लोग भी एक-एक लाख रुपये देकर संस्था के संरक्षक बनने के लिए आगे आए हैं। संभावना है कि सर्वोच्च संरक्षक को आजीवन अध्यक्ष बनाया जाएगा।
वह ध्यान से सुन रही थी।
उसने जारी रखा,
"यदि आप पहले संरक्षक बनते हैं, तो मैं आपको संगठन का आजीवन अध्यक्ष बना दूंगा। इससे समाज में आपका रुतबा और भी बढ़ जाएगा। मैं आपको अभी बता रहा हूं कि काशी के महाराज कभी भी बैठक में नहीं आएंगे।"

यह सुनकर उसका दिमाग सुन्न पड़ गया। काशी – यानी पूरे भारत में! लेकिन एक लाख तो बहुत बड़ी रकम है! इसके अलावा, अगर यह संस्थान दिल्ली में होता, तो हमारे गाँव की प्रतिष्ठा और बढ़ जाती। उसे सोचने के लिए कहते हुए, वह जल्दी से सो गया और गहरी नींद में डूब गया। वह भी अपना सिर उसकी छाती पर रखकर लेटी-लेटी सोचने लगी।
अखिल भारतीय स्तर की संस्था – काशी एक गाँव की तरह है – कला के क्षेत्र में काशी दिल्ली से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। फिर भी...
उसकी धीमी साँसें एक पल के लिए रुक गईं और वह जाग गया। उसने उससे पूछा,
"क्या पच्चीस हजार काफ़ी नहीं होंगे?"
“अगर आप कुछ न भी दें, तो भी कोई पूछने नहीं आएगा! अध्यक्ष बनने का मौका सिर्फ संरक्षकों को ही मिलता है। अगर संरक्षकों में आपका नाम सबसे पहले होगा, तो मेरे लिए आपका नाम भी आगे बढ़ाना आसान हो जाएगा, बस मैं यही कह रहा हूँ, बाद में कोई यह न कहे कि मैंने कोई चाल चली थी...” उसने बड़बड़ाते हुए कहा, मानो वह आधी नींद में हो।
एक अखिल भारतीय स्तर का संगठन... काशी के महाराज इसके मुख्य संरक्षक हैं... लेकिन वे किसी भी बैठक में नहीं आते... देश के सभी बड़े कलाकार, कला समीक्षक, कला प्रेमी विनम्रतापूर्वक उनका अनुसरण करते हैं! एक लाख रुपये कोई बड़ी रकम नहीं है। क्या उन्होंने उस अभागी लड़की को अमेरिका भेजने के लिए ढाई लाख रुपये खर्च नहीं किए थे? इसके अलावा, उन्होंने कार के लिए इससे भी अधिक भुगतान किया था!
हरिशंकर ने फिर कभी इस विषय को नहीं उठाया। एक दिन उसने पूछताछ की, भारतीय कला जगत ने कितनी प्रगति की है?
काशी के महाराजा ने मुझे बुलाया था। उन्होंने मुझे महल में बुलाया। वे अपने ऊँचे सिंहासन पर बैठे थे। मैं नीचे एक छोटी सी कुर्सी पर बैठा था। महाराजा ने अपने दीवानजी को इशारा किया। वे अंदर गए और पलक झपकते ही चांदी की थाली में नोटों का एक बंडल रखकर महाराजा के सामने रख दिया। जैसे ही महाराजा ने उसे छुआ, दीवानजी ने पूरी थाली मुझे दे दी! कुछ भी कहो! राजपरिवार का रहन-सहन शान-शौकत से भरा है! कोई और अमीर उनकी मदद के लिए आगे नहीं आएगा! बिरला, कयानी, डालमिया, रुइया, रांका, सब संरक्षक बनने को तैयार हैं। ये सब काशी के महाराजा से कई गुना ज़्यादा अमीर होंगे! लेकिन कोई भी उनसे ज़्यादा दान देकर उनकी हैसियत कम करने को तैयार नहीं था! उन्होंने कहा, अभी रहने दो – जब आप भविष्य में कोई इमारत वगैरह बनवाएंगे, तब हम और पैसे देंगे!
उसका दिल खुशी से उबलने लगा। बिरला, कयानी, डालमिया, रुइया और रांका भी! लेकिन उसने पूछा,
"जब इतने सारे लोग मौजूद हैं तो मैं कार्यकारी राष्ट्रपति कैसे बन सकता हूँ?"
"क्यों नहीं? मैं तो वहाँ आवश्यक कार्य करने के लिए ही हूँ!"
"लेकिन क्या उन सभी की वजह से मुझे मीटिंग में असहज महसूस नहीं होगा?"
"डरने की कोई बात नहीं है। वे खुद कभी ऐसी बैठकों में नहीं आते। उनके चैरिटी विभाग से कोई सचिव आएगा। वे वेतनभोगी नौकर होंगे और आप खुद मालिक होंगे! इस तरह, आपका प्रभाव बना रहेगा।"
उसने मन बना लिया और उसे अगली शाम अवश्य घर आने को कहा। जब वह आया, तो उसने एक लाख रुपये एक छोटी चांदी की थाली में रखे और स्वयं उसे सौंप दिए।
इसे स्वीकार करते हुए और अपने पास रखते हुए उन्होंने कहा,

"यह ठीक है... लेकिन मुझे लगता है कि आपको इसे छूने और सहमति देने के बाद, और दीवानजी को ऊँचे सिंहासन पर बैठने का इशारा करने के बाद ही मुझे पैसे दे देने चाहिए थे।"
क्या आप हमसे मजाक कर रहे हैं?
"मैंने ये बात मज़ाक में नहीं कही। आपके चेहरे की खूबसूरती आप पर जंचती है..." उन्होंने आगे कहा।
उसका हृदय गर्व से भर गया था।

■

इस घटना के बाद वह उससे सप्ताह में एक बार मिलता था। लेकिन फिर एक सप्ताह बीत गया, दस-पंद्रह दिन बीत गए, और तीसरे सप्ताह के बाद भी वह नहीं आया। जब उसने बीच में फोन पर उससे संपर्क करने की कोशिश की, तो उसने कहा,
अब मुझे जल्दी है... मुझे कल सुबह त्रिवेंद्रम जाना है... वहां से लौटने के बाद आपसे मिलूंगा..."
इसके बाद भी उसने कई बार फोन किया। हर बार, उसका सचिव कोई न कोई बहाना बनाता, जैसे "महोदय बैठक में हैं - सम्मेलन में हैं - चर्चा में हैं - निर्देश दे रहे हैं - मंत्रालय गए हैं"। इससे उसे जल्दी ही समझ आ गया कि उन्हें ऐसे निर्देश दिए गए थे।
एक लाख रुपये! नकद! मैंने उसे अपने हाथों से दिए! चेक भी नहीं! उसका दिल बैठ गया!
उसे याद आया कि उसने उससे नकद पैसे नहीं मांगे थे। उसने उसे काशी महाराज की कहानी सुनाई थी, लेकिन मैंने उसे चेक से भुगतान क्यों नहीं किया? तभी उसके मन में यह सवाल आया – क्या लोगों को धोखा देने के लिए ही उसने ये सब किया था?
उन्होंने बिरला, डालमिया, कयानी – सभी के चैरिटी विभागों से फोन पर संपर्क किया। उन्होंने कहा –
"हमें इसके बारे में कुछ नहीं पता—बड़े अधिकारियों का क्या हुआ, हमें नहीं पता।"
काशी को फोन करके पूछताछ करें – लेकिन किसे फोन करें?
दो दिनों के भीतर ही उसे स्पष्ट रूप से एहसास हो गया कि उसके साथ पूरी तरह से धोखा हुआ है। अगर उसने चेक दे दिया होता तो क्या होता? – लेकिन वह जानता था कि मैं खातों में दर्ज न होने वाले पैसों से धार्मिक अनुष्ठान करती हूँ! वह यह भी जानता है कि मैं इसकी शिकायत नहीं कर सकती! अगर मैं शिकायत करने जाऊँगी, तो मुझसे ही सवाल किया जाएगा।
"देखो, इतना बड़ा कारोबार! तुमने नकद भुगतान कैसे किया? मुझे चेक क्यों नहीं दिया?"
उसकी पहली प्रतिक्रिया तो उसके धोखे पर गुस्सा थी। फिर उसे दुख हुआ कि उसने दोस्ती का दिखावा करके ऐसा बर्ताव किया – उसने सोचा कि उसका कोई करीबी नहीं है। वह उसके दफ्तर में घुसकर उससे पूछना चाहती थी, 'तुमने ऐसा क्यों किया?' लेकिन बाद में ऐसा सोचने का क्या फायदा? उसका मन निराश हो चुका था। बात लाखों रुपयों की नहीं थी। उसने तो अपनी मासिक तनख्वाह में से टैक्स चुकाने के बाद बचे पैसे पाने के लिए खुद ही हालात बदले थे। अगर उसने पैसों की सख्त जरूरत बताकर पैसे मांगे होते, तो बात कुछ और होती! क्या हेमंत ने ऐसा नहीं किया था?
लेकिन हेमंत ने हिसाब-किताब रखा और सारा पैसा लौटा दिया। हाँ, इस मामले में मैं हेमंत का सम्मान करता हूँ। लेकिन फिर भी, वह एक पत्थर दिल इंसान है जो बहाने बनाकर बीच में ही पल्ला झाड़ लेता है!

एक बार उसके मन में यह विचार आया, क्यों न हेलेन से बात की जाए? उसके धोखे के बारे में नहीं। तब तो उसे हमारे रिश्ते के बारे में भी बताना पड़ेगा। फिर भी, अगर हम अनौपचारिक रूप से मिलें, तो वह उसके बारे में और अधिक जान पाएगी।
उसने फ़ोन किया था,
"हाय हेलेन प्रसाद! मैं कांति हूँ। क्या आपको याद है? मैंने कुछ समय पहले रोजपेटा में एक पार्टी दी थी। मैंने दो साल से गायन कार्यक्रमों में जाना बंद कर दिया था। हाल ही में मैंने फिर से जाना शुरू किया है। लेकिन आप कहीं नज़र नहीं आईं, इसलिए मैंने आपको फोन किया। क्यों न हम कभी दोपहर के भोजन पर मिलें? हम मेरे घर पर मिल सकते हैं। क्या आप मुझे पता दे सकती हैं?"
हेलेन भी घर पर अकेले बैठे-बैठे ऊब गई थी। वह तुरंत आने के लिए तैयार हो गई। कांति ने रसोइए से कुछ खास बनाने को भी कहा।
हेलेन को रिक्शा से घर आते देख कांति डर गई। जॉन के साथ और हरि के साथ शुरुआती दिनों में हेलेन कितनी जीवंत थी! उस समय वह जवान रही होगी - सत्ताईस या अट्ठाईस साल की। अब वह तैंतीस या चौंतीस साल की होगी। लेकिन वह किसी बीमारी से ग्रसित सी हो गई थी। उसकी कभी की चमक अब फीकी पड़ गई थी। उसकी आंखों की चमक भी गायब हो गई थी। वह किसी तरह की गंदी पैंट और आधी लंबाई की टी-शर्ट पहने आई थी। पिछले कुछ महीनों से उसके बाल भी ठीक से नहीं कटे थे।
कांति ने उनका स्वागत करते हुए कहा, "हाय हेलेन! आपका स्वागत है।"
उसने मुस्कुराते हुए कांति का हाथ अपने हाथ में लिया और कहा,
मुझे तुम्हारी याद आ रही है—हां—मुझे तुम्हारी बहुत याद आ रही है! मुझे आमंत्रित करने के लिए मैं तुम्हारा आभारी हूँ—भोजन मेरे लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं है—मैंने तो खाना भी छोड़ दिया है—मतलब—भोजन मेरे लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं है। लोगों के साथ रहना—खुले दिल से बातें करना महत्वपूर्ण है! क्या यह सच है या नहीं?
हेलेन सोफे पर बैठी थी। इन दिनों वह केवल जरूरत पड़ने पर ही हिंदी बोलती थी। यह स्पष्ट हो गया था कि उसके अंग्रेजी लहजे को भारतीय आसानी से समझ लेंगे। कांति ने पूछा,
"थोड़ी वाइन कैसी रहेगी?"
ठीक है! धन्यवाद...
दोनों सोफे पर अगल-बगल बैठ गए और एक-दूसरे से सवाल-जवाब करने लगे।
कांति ने पूछा,
"भारत, तुम कैसी हो? तुम्हें अमेरिका की बहुत याद आ रही होगी, है ना?"
"बहुत ज़्यादा—बहुत ज़्यादा!"
"जब से तुम यहां आए हो, तब से तुम वहां एक बार भी नहीं गए हो?"
आप कैसे जाएंगे? मैं भी जाना चाहता हूँ। लेकिन उसके लिए मुझे वीज़ा चाहिए। कोई मुझे स्पॉन्सर करे तो अच्छा होगा। वरना मेरे पास हज़ारों डॉलर हैं, तो मुझे दिखानी पड़ेगा। मेरे पास कुछ भी नहीं है..."
"तो आपने वहां अपनी नागरिकता त्याग दी?"
"यह मेरे जीवन का सबसे बड़ा झटका था!"
"क्यों नहीं? आपको भारत पसंद नहीं है?"
``कांति, तुम्हारे सवाल का जवाब देने के लिए, मुझे कुछ निजी बातें करनी होंगी – चलो चलते हैं! चलो मजे से बातें करते हैं... दोपहर का खाना खाते हैं – मैं तुम्हारी दोपहर क्यों खराब करूं?"
"हेलेन, हम एक-दूसरे के सुख-दुख जानकर अपनी दोपहर क्यों बर्बाद करें? चलो, खाते हुए बातें करते हैं—"

खाना खाते-खाते वह कहने लगी,
जॉन के साथ रहते हुए मुझे हरिशंकर से प्यार हो गया – आप जानते ही हैं! मुझे पूरा यकीन था कि मुझे उनके जैसा पुरुष कहीं और नहीं मिलेगा – उनकी मौजूदगी में मुझे किसी चीज की कमी नहीं होगी! बेशक, बाद में मुझे एहसास हुआ कि यह एक पागलपन था! हरिशंकर शादी नहीं करना चाहते थे। लेकिन उस समय मैं अपनी जिद पर अड़ी थी, मैं इतने लंबे समय तक बिना शादी किए नहीं रह सकती थी। उन्होंने मेरे पास मौजूद एक लाख रुपये अपनी पत्नी को दे दिए और फिर मुझसे शादी कर ली। यहाँ के वीजा का सवाल उठा। इसके लिए उन्होंने वहाँ की नागरिकता त्याग दी और यहाँ की नागरिकता स्वीकार कर ली। उन्होंने इसके लिए बहुत मेहनत की।
"तो अगली समस्या क्या थी?"
ऐसी कोई समस्या नहीं है। मेरे और उनके बीच सत्रह साल का उम्र का अंतर है – यह तो आपको पता ही होगा। लेकिन मैंने इस बारे में ज्यादा बात नहीं की। पर जल्द ही मुझे एक बात समझ आ गई, कि वह किसी एक महिला के प्रति वफादार नहीं रह सकते! अपनी इस नौकरी के प्रति भी नहीं! इस नौकरी की वजह से उनका पत्नियों और बेटियों से ज्यादा संपर्क होने लगा – उनकी तरक्की हो रही थी, ऐसे में वह मेरे प्रति वफादार कैसे रह सकते हैं? इसके अलावा, उन्होंने अपनी पहली पत्नी और बच्चों से रिश्ता नहीं तोड़ा। अगर आप उनसे पूछें, तो वह कहते हैं – उसने पैसे देकर आपसे शादी करने की इजाजत दी है, बस! तलाक नहीं हुआ है!
तो तुम चुप हो?
मैं क्या करूँ? क्या मैं तुम्हारा देश छोड़ दूँ? मैं तुम्हें लगातार धमकी दे रहा हूँ। यह भी आसान नहीं है। मुझे वहाँ की नागरिकता के लिए फिर से आवेदन करना होगा और वहाँ पहुँचने के बाद मुझे नौकरी ढूंढनी होगी। मैं अभी यह सब नहीं करना चाहता; लेकिन, कांति, क्या मैं तुमसे एक मदद माँग सकता हूँ? क्या तुम मेरी मदद करोगे?
अगर संभव हुआ तो मैं इसे जरूर करूंगा!
"और कुछ नहीं। कृपया मुझे अमेरिका जाने में मदद करें!"
कांति भी सोचने लगा।
"लेकिन मैं कैसे मदद कर सकता हूँ?"
"मैं अभी ठीक-ठीक नहीं कह सकती। लेकिन अगर आज मुझे कोई ऐसा मिल जाए जो कहे, 'तुम जाओ—मैं तुम्हारा पीछा कर रहा हूँ—' तो मैं उसे पाना चाहूँगी! अगर मेरा आंतरिक संकल्प जागृत हो जाए, तो मैं खुद कुछ भी कर सकती हूँ! क्या तुम मेरे दोस्त बनोगे?" आखिरी सवाल पूछते हुए उसकी आँखों में आँसू भर आए।
कांति उठी, उसके पास आई और स्नेहपूर्वक उसकी पीठ पर हाथ रखकर बोली,
चिंता मत करो – मैं तुम्हारे साथ हूँ!
इसके बाद हेलेन ने कुछ नहीं कहा। कांति भी समझ गया था कि हेलेन, जिसने पहली मुलाकात में इतनी बातें की थीं और अब चुप थी, काश उसका मूड ठीक न होता।
हरिशंकर के प्रति उसके हृदय में क्रोध उमड़ पड़ा। उसे हरिशंकर को नष्ट करने के लिए कुछ करना ही था! लेकिन वह क्या कर सकती थी?
उसने हेलेन से पूछा,
कलाकारों के साथ उनके संबंध कैसे हैं?
वह कलाकारों से कमीशन लेता है। देश-विदेश के कलाकारों के लिए कार्यक्रम आयोजित करना उसके हाथ में है। इसका इस्तेमाल करके वह उन कलाकारों से ऐसे बयान भी दिलवाता है, जैसे "देवीजी के इस राज्य में कला का स्थान इतना

ऊंचा कभी नहीं रहा।" चाहे कुछ भी कहो! भारत के कलाकार राज दरबार की मानसिकता से जरा भी स्वतंत्र नहीं हो पाए हैं!
उसे दृढ़ता से महसूस हुआ कि उसे इस संदर्भ में अपने धोखे का भी उल्लेख करना चाहिए, लेकिन उसने खुद को संयमित कर लिया।

■

उस शाम 4:30 बजे, वह कारखाने में बैठकर हिसाब-किताब कर रही थी। वातानुकूलित कमरे में बैठकर अपनी नोटबुक देखते हुए, उसे अपनी छाती के बाईं ओर दर्द महसूस हुआ। वह सोच ही रही थी कि यह किस तरह का दर्द है, तभी उसे लगा कि दर्द उसकी बाईं बांह में फैल गया है और पूरी बांह में दौड़ गया है। पल भर में उसका पूरा शरीर पसीने से भीग गया।
क्या यह दिल का दौरा नहीं है?
उसने घंटी बजाई। चपरासी महेंद्र अंदर आया। उसने उससे कहा,
ओम प्रकाश को फोन करो – मुझे दिल का दौरा पड़ गया है –
वह भाग गया। वह धीरे से नीचे बिछे भारी कालीन पर बैठ गई और लेट गई। मैनेजर ओमप्रकाश अंदर आया और उसके माथे को छुआ, फिर पीछे वाली गली से मेज पर रखे फोन से डॉक्टर सिंहवी को बुलाया। डॉक्टर तुरंत आ गए। उन्होंने वहीं पर प्रारंभिक जांच की – वह सब समझ गई। उसे याद आया कि दिल का दौरा पड़ने पर मन को शांत रखना चाहिए – हिलना-डुलना नहीं चाहिए, आदि, इसलिए उसने खुद को संयमित रखा और चुपचाप लेट गई।
एक स्ट्रेचर लाया गया और उसे एम्बुलेंस में आपातकालीन कक्ष में ले जाया गया।
उसका यह अनुमान सही निकला कि उसे दिल का दौरा पड़ रहा है। उसकी स्वयं की देखभाल और समय पर मिली चिकित्सा सहायता ने उसकी जान बचाई - बस इतना ही! गहन चिकित्सा इकाई में तीन सप्ताह के जबरन आराम के बाद, डॉक्टर ने उसे घर भेजते समय कहा,
खान-पान के बारे में आपको कुछ खास बताने की जरूरत नहीं है। इस मामले में आप काफी संतुलित हैं। लेकिन अपने मन पर किसी तरह का दबाव न आने दें। कारोबार में तो हमेशा दबाव रहता ही है! फिर भी कोशिश करते रहिए। ध्यान और योग का अभ्यास भी कई लोगों के लिए फायदेमंद होता है। दो महीने तक गाड़ी भी न चलाएं। अगले हफ्ते वापस आइए और निकल जाइए...
खबर मिलते ही मेरी मां देहरादून से दौड़ती हुई आ गईं। निरंजन और रजनी भी आ गए।
सास ने पूछा,
"वह इतनी मेहनत कर रही थी कि उसे आराम करने का समय ही नहीं मिल रहा था - क्या आप ध्यान नहीं दे रहे थे?"
बहू ने उत्तर दिया,
"क्या करें? वे आजकल हमारे घर आना बंद कर चुके हैं!"
मां ने अपनी बेटी को दो-तीन महीने आराम करने के लिए देहरादून बुलाया। लेकिन कांति ने कहा,
"नहीं, महोदय! अगर मैं इतने लंबे समय के लिए चला जाऊं, तो कारखाने का क्या होगा?"
रक्तचाप की समस्या के कारण वह दिलली की गर्मी में ज्यादा देर तक नहीं रह सकीं, इसलिए दो-तीन सप्ताह रहने के बाद वह देहरादून लौट आईं।
इस घटना के बाद, कांति को लगा जैसे वह पूरी तरह बदल गई हो। अस्पताल में आराम करते समय उसने कारोबार बढ़ाने का विचार त्याग दिया था। उसे इसके परिणामों का भी एहसास हो गया था। वह जानती थी कि विस्तार के बिना कोई भी कारोबार टिक नहीं सकता। उसने यह भी देखा कि अगर उसने कारोबार को ऐसे ही चलाने का फैसला किया, तो उसे चार-पांच साल में ही इसे बंद करना पड़ेगा।

हर तरफ प्रतिस्पर्धा है, नए उद्यमी आगे आ रहे हैं, ऐसे में इस प्रतिस्पर्धा में टिके रहने के लिए कुछ बदलाव और विस्तार ज़रूरी हैं। हम इसमें जल्दबाजी नहीं कर सकते। अगर वह अमेरिका से आकर अपनी ज़िम्मेदारी निभाए, तभी इस कारोबार का भविष्य है। – लेकिन क्या वह ऐसा करेगा? अगर उसे पता चले कि उसकी माँ को दिल का दौरा पड़ा है, तो शायद वह अपना इरादा बदल दे!
अस्पताल से घर आने के बाद उसने मुझे एक बार फोन किया। उसने कहा, मैंने दो बार फ़ोन किया, लेकिन किसी ने उठाया नहीं। मुझे लगा कि आप कहीं गांव चली गई होंगी। और मैंने कहा, माँ, क्या आपके गांव में फोन रिकॉर्डर नहीं मिलता? कितना सुविधाजनक होता! मैं खुद लाने वाली थी—लेकिन मुझे नहीं लगता कि मैं इतनी दूर आ पाऊंगी—"
``का?"
"अब मैं नौकरी ढूंढने की कोशिश कर रहा हूँ। एक बार जब आप अपनी शिक्षा पूरी कर लेते हैं और इस देश को छोड़ देते हैं, तो यहाँ दोबारा मौका मिलना मुश्किल हो जाता है। दोबारा नौकरी पाना - ग्रीन कार्ड पाना - हर तरह की समस्याएँ हैं।"
``अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद वहां क्यों रुकूं? मुझे हाल ही में यहां दिल का दौरा पड़ा था। मैं तीन सप्ताह तक नर्सिंग होम में रहा – मैं परसों घर लौटा हूं –"
यह सुनकर वह चौंक गया।
``अब आप कैसी हैं, माँ? मुझे आपकी चिंता हो रही है—"
यह सुनकर उसे बहुत राहत मिली। चिंता करने का कोई कारण नहीं था – उसे पूरा विश्वास था कि वह भारत लौट आएगा। इस दुनिया में कोई तो है जो हमारे खून के रिश्ते, हमारी जिंदगियों की परवाह करता है।
``माँ, मेरी बात सुनो। तुम इस देश में एक ही बार आती हो। क्या सरकार इलाज के लिए विदेशी मुद्रा नहीं देती? तुमने निर्यात करके विदेशी मुद्रा कमाई है! अगर वे तुम्हारी सेहत के लिए देने को तैयार नहीं हैं, तो फ़िर आने का क्या फायदा? उनसे बहस करो। क्या तुम्हें पता है कि यहां निदान और उपचार कितने उन्नत हैं? सब कुछ कंप्यूटर पर होता है। वहाँ इस तरह की प्रगति होने में आसानी से सौ साल और लग जाएंगे!"
सुनो मेरी जान! मैं अब ठीक हूँ। मेरी असली समस्या अकेलापन है! मुझे इस बात की चिंता है कि जिस व्यवसाय को मैंने जन्म दिया और नाम कमाया, उसका क्या होगा। तुम्हारे सिवा मेरा सहारा कौन है? तुम इधर आओ। इस व्यवसाय को इतना आगे बढ़ाओ कि यह दुनिया का नंबर एक कपड़ा व्यवसाय बन जाए! –" उसकी आवाज़ भारी हो गई।
माँ, मुझे कितनी बार बताना पड़ेगा? वहाँ दस रुपये का नोट यहाँ एक डॉलर के बराबर है। उस कमज़ोर मुद्रा से कितना पैसा कमाया जा सकता है? और तो और, वहाँ बुनियादी ज़रूरतें पूरी करना भी मुश्किल है! आखिर इंसान को इतनी मेहनत क्यों करनी पड़ती है? क्या तुम अपने बेटे से प्यार करती हो या नहीं? क्या तुम चाहती हो कि वह तरक्की करे, अपनी मर्ज़ी से खुशहाल ज़िंदगी जिए या नहीं? मुझे बताओ—"
उसने उसकी दलीलों पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। एक ओर तो उसे बेहद गुस्सा भी आ रहा था। तभी उसे डॉक्टर की सलाह याद आई - तुम्हें इतना गुस्सा नहीं करना चाहिए।
अकेलेपन का एहसास दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा था। जब वह दिन भर का काम खत्म करके घर लौटती, तो वहाँ उसका इंतज़ार करने वाला कोई नहीं होता – यह विचार लगातार उसके मन में घूमता रहता था। हेमंत ऐसा व्यवहार क्यों करता है? अगर वह देश का शीर्ष सितार वादक बन जाता और मेरे साथ रहता, तो क्या उसे सौभाग्य प्राप्त नहीं होता?

मैंने रावेंद्र के बारे में शायद ही कभी सोचा हो। मुझमें कुछ नया शुरू करने और उसे खुद आगे बढ़ाने की ताकत नहीं है – लेकिन मैंने एक व्यवसाय शुरू किया और उसे इतना आगे बढ़ाया। उसने मुझे क्यों दूर धकेल दिया? मैं अकेले ही बेंगलुरु अपने घर गई थी। लेकिन उसने मुझे छुआ तक नहीं! अगर यह क्रूरता नहीं है, तो और क्या है? महिलाओं की आज़ादी का दुश्मन! अब वह अपनी पत्रिका चला रहा है, आप कहते हैं! प्रधानमंत्री का विरोध करता है और सोचता है कि पूरे देश का नैतिक नेतृत्व उसी के हाथ में है! यह तो सिर पर चोट मारकर पहाड़ तोड़ने की सरासर मूर्खता है!
वह अपनी सेहत की जांच कराने के लिए हर हफ्ते डॉक्टर के पास आती थी।
इस तरह एक महीना बीत गया।
डॉक्टर ने बताया कि,
अब आपका स्वास्थ्य काफी बेहतर है। अब आप वजन उठाने या सीढ़ियाँ चढ़ने के अलावा सब कुछ कर सकते हैं। घर से कारखाने तक कार ले जाने में कोई दिक्कत नहीं है। लेकिन इसे अन्य जगहों पर न ले जाएं। यहाँ कोई भी कहीं से भी सड़क पर आ सकता है। बेवजह तनाव न लें...
एक महीने बाद उनकी हालत में और सुधार हुआ। उस जांच के बाद उन्होंने कहा,
वाह! इसके बाद तो आप भूल ही जाएँगे कि आपको कभी ऐसा दौरा पड़ा था! बस थोड़ा सावधान रहना – बस इतना ही!
एक दिन, उसके घर के पीछे वाले पार्क से लाउडस्पीकर की आवाज़ सुनाई देने लगी। पहले तो कुछ देर तक सिर्फ़ ओंकार की आवाज़ ही सुनाई दी। फिर एक भजन बजने लगा। उसके बाद घोषणा हुई कि ध्यानंद महाराज का प्रवचन तुरंत शुरू होगा।
कांति को याद आया कि डॉक्टर ने उसे ध्यान और योग करने की सलाह दी थी। अब उसके पास समय भी था। उसने रसोइए को दरवाजा बंद करने का निर्देश दिया और खुद निकलकर घर के पीछे वाले पार्क की ओर चल पड़ी।
वहां भव्य मंडप में बहुत से लोग जमा थे। उनमें से अधिकतर पचास वर्ष से अधिक आयु के थे। कुछ युवा लड़के-लड़कियाँ भी थीं। वह अंदर गई और एक तरफ़ बेंच पर बैठ गई। थोड़ी देर में ही उसके पैर, जांघें, घुटने और कमर में दर्द होने लगा क्योंकि उसे ज़मीन पर बैठने की आदत नहीं थी। जैसे ही उसने अपनी जगह बदली, उसने अपने बगल में बैठी बुजुर्ग महिला से ध्यानंद महाराज के बारे में पूछा और उन्हें बताने लगी,
"क्या दिव्य प्रकाश है, मैं आपको बता दूं! आप स्वयं देख लीजिए। वे जाति-वंश भेद नहीं मानते। बौद्ध-जैन-हिंदू-सिख-मुस्लिम-सभी धर्मों ने योग-ध्यान सिखाया है-हम इसका सार सिखाते हैं, वे कहते हैं-आप भी सुनेंगे! मैंने उनका प्रवचन पहले नौ बार सुना है। यह दसवीं बार है! उनके प्रवचन करोल बाग, मॉडल टाउन, राजौरी गार्डन, पटेल नगर में हर जगह होते थे। मैं भी हर जगह जाता हूं। वे भी हर जगह यही बात कहते हैं। योग की महानता-आप सुनेंगे-आप भी समझेंगे-क्या प्रकाश है, मैं आपको बता दूं-"
यह महाराज मूल रूप से हरियाणा के हैं। उनकी दाढ़ी सफेद चांदी के तारों जैसी दिखती है।
जैसे ही महिला का भावुक वर्णन जारी रहा, पोडियम पर बैठे किसी व्यक्ति ने खड़े होकर चिल्लाया,
"बोलो सद्गुरु ध्यानानंद महाराज की जय"
सभी लोग खड़े हो गए। ध्यानंद महाराज मंच पर आसीन हुए। उनके पीछे एक शिष्य भी था। उनके बगल में बैठी वृद्ध महिला ने कहा कि महाराज का व्यक्तित्व भी वैसा ही है। उन्होंने उसी तरह बोलना शुरू किया जैसा उस महिला ने कहा था।

मेरा पैतृक गाँव कुरुक्षेत्र है। योगराज कृष्ण ने वहाँ भगवद् गीता नामक योग का उपदेश दिया था। मैं आज अपने प्रवचन में भी यही बात कह रहा हूँ।
पड़ोस में रहने वाली बूढ़ी औरत ने झट से कहा,
``देखो! क्या मैंने नहीं कहा था?–"
महाराज कह रहे थे,
मन में हमेशा से ही उथल-पुथल और बेचैनी रही है। हमें यह देखना चाहिए कि हम इस पर काबू पाकर कैसे जी सकते हैं। योग के आठ सिद्धांतों में आसन, प्राणायाम-प्रत्याहार, ध्यान-धारणा में प्रत्याहार सबसे महत्वपूर्ण है। चाहे हम रेलवे स्टेशन पर बेंच पर बैठे हों या कनॉट प्लेस की सड़क पर चल रहे हों, इंद्रियों और बुद्धि के बीच संबंध तोड़ने की शक्ति प्राप्त करना आवश्यक है। यदि हम अपने मन को इस तथ्य पर स्थिर रखने में सफल हो जाते हैं कि भले ही हम एक के बाद एक धुआं उगलते ट्रकों और लॉरियों को चलते हुए देखें, वे हमारी बुद्धि को प्रभावित न करें, तो हमें मन की शांति प्राप्त होगी। यदि हम इसे अपने मन में एक स्थायी आदत बना लेते हैं, तो जीवन में कोई भी बात हमें विचलित नहीं कर पाएगी, और परिणामस्वरूप, हमारे मन से घृणा भी दूर हो जाएगी। क्रोध और घृणा ही हमारे दुखों के मुख्य कारण हैं।
कांति प्रवचन सुनते-सुनते पूरी तरह लीन हो गई। ज़मीन पर बैठने से उसके पैरों, पीठ और कमर में जो दर्द हो रहा था, वह अब बिलकुल भी महसूस नहीं हो रहा था।
उपदेश के बाद, उनके शिष्य ने घोषणा की,
"महाराज का प्रवचन कल ग्रेटर कैलाश में होगा। जो लोग ध्यान में रुचि रखते हैं, कृपया इस नंबर पर संपर्क करें—नंबर नोट कर लें—इस क्षेत्र के लोगों के लिए ग्रीन पार्क में ध्यान की व्यवस्था की गई है।"
कांति ने भी ध्यान सीखने के लिए ग्रीन पार्क जाने का फैसला किया। पड़ोस में रहने वाली बुढ़िया कह रही थी,
कल मैं ग्रेटर कैलाश में प्रवचन सुनने जा रहा हूँ। हमारे घर से बस नंबर 530 वहाँ जाती है।
कांति पूरी रात महाराज के ग्रेटर कैलाश स्थित प्रवचन में जाने की इच्छा रखती रही। सुबह कारखाने जाते समय भी उसके मन में यही विचार था। लेकिन वह कैसे जाती? डॉक्टर ने कारखाने के अलावा कहीं और जाने की अनुमति देने से इनकार कर दिया था। यह सिर्फ दूरी का सवाल नहीं था - उनका कहना था कि सड़क पर अन्य वाहनों की भीड़, तेज़ रफ्तार से आने वाले लोग, उसके मन पर तनाव डालेंगे। अगर हम शांत मन से और बिना किसी तनाव के गाड़ी चलाएं तो क्या समस्या है? आना-जाना ठीक है। इससे यह भी पता चलेगा कि हम अपने मन पर तनाव डाले बिना कितना जी सकते हैं।
शाम के समय ग्रेटर कैलाश जाते हुए उसे सब कुछ अलग सा लग रहा था। उसने खुद से कहा था कि पहले आसु-पास वालों को जाने दो, फिर वह आगे बढ़ेगी। पीछे से गाड़ियाँ आगे निकल जाएँ, तो भी वह धीरे-धीरे चलेगी, अपनी गति नहीं बढ़ाएगी। उन गाड़ियों का रुकने का बिंदु और मेरी गाड़ी का रुकने का बिंदु अलग-अलग हैं – हमें जल्दी करने की कोई ज़रूरत नहीं है – इस सोच के साथ गाड़ी चलाते हुए उसे परम स्वतंत्रता का अनुभव हो रहा था।
ग्रेटर कैलाश परिसर में प्रवेश करते ही पुरानी यादें ताजा हो गईं। एक ज़माने में, यह हर दोपहर आने की पसंदीदा जगह हुआ करती थी! हेमंत – उनके साथ बिताए पल – उन्हें भूल जाओ – उनसे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण थे मेरे बचपन के दोस्त के साथ बिताए दिन – हाँ! बचपन का दोस्त –! गुमनाम चिट्ठियाँ लिखना – ये यादें उसके मन को बेचैन कर रही थीं। उसने कार को मैदान के पास पार्क किया और कुछ पलों के लिए आँखें बंद कर लीं। शीतल की यादें उसके मन को बेचैन कर

रहा थी – ये ठीक नहीं है – मन को शांत रखना चाहिए – पर इतना आसान नहीं – ओह! हम इतनी सारी यादों से घिरे ग्रेटर कैलाश आना नहीं चाहते थे।
फिर भी, उसने कार का इंजन बंद किया और चाबी लेकर नीचे उतरी। उस दिन भी महाराज उसी विषय पर बात कर रहे थे। उसे लगा कि आज उसे कल से ज़्यादा समझ आ रही है। उसने ग्रीन पार्क जाकर ध्यान सीखने का फैसला किया था। अगर वह सुबह उठने के बाद नहाकर ध्यान करती – अगर उसने ध्यान को अपनी आदत बना लिया होता, तो शायद उसे दिल का दौरा न पड़ता, या कौन जाने! –
अचानक उसकी आँखों में चमक आ गई – शीतल उसके सामने खड़ी थी। उनकी आँखें मिलीं और दोनों के चेहरे शर्म से लाल हो गए। लेकिन दोनों में से किसी ने भी शर्मिंदगी से पीछे मुड़कर नहीं देखा। जब वे करीब आईं, शीतल ने कांति के कंधे पर हाथ रखा और कहा,
"कांति, हम दोनों को अतीत की बातें याद नहीं करनी चाहिए! लेकिन एक बात मुझे बताती है, जब से तुमने यह जीवन छोड़ा है, मुझे एक तरह का खालीपन महसूस होने लगा है! मुझे यकीन है कि तुम भी ऐसा ही महसूस करती हो। क्रोध और नाराजगी उचित नहीं हैं। तुमने सद्गुरु के प्रवचन कितनी बार सुने हैं? मैंने आठ बार सुने हैं। तुम्हें कैसा लगा?"
कांति ने स्नेहपूर्वक यह भी कहा,
"मुझे दिल का दौरा भी पड़ा था। मैं तीन सप्ताह तक घर में ही बंद रहा। इतने दिनों बाद, आखिरकार आज इतनी लंबी ड्राइव के बाद मैं घर से बाहर निकला।"
"तुमने मुझे फोन क्यों नहीं किया? क्या तुम्हें लगा कि शीतल मर गई है? उस समय तो तुमने ऐसा ही सोचा होगा—लेकिन—क्या तुमने मुझे बताया नहीं? चलो हम दोनों बीच की सारी बातें भूल जाते हैं—चलिए, मेरे घर चलते हैं!"
ऐसा प्रतीत हो रहा थी कि कांति को आंतरिक स्तर से भी समर्थन मिल रहा था।

■

अगले दिन, दोनों ने ग्रीन पार्क के नंबर पर योग के बारे में पूछताछ की। वहाँ उन्हें पता चला कि महाराज तीन दिन में राजस्थान जा रहे हैं। जाने से पहले, उन्होंने कुछ विशेष शिष्यों को चुना था जिन्हें ध्यान और योग का उचित प्रशिक्षण प्राप्त था, ताकि वे दिल्ली में भक्तों को योग सिखा सकें। यदि वे तुरंत फॉर्म भर दें, तो उन्हें वहां के बैच में सीट मिल सकती है। किसी भी प्रकार की फीस या पैसे देने की आवश्यकता नहीं थी। सद्गुरु और उनके शिष्य पैसे का इस्तेमाल तक नहीं करते थे। एक सेवानिवृत्त मेजर जनरल ने अपने घर पर योग कक्षाएं आयोजित करने की अनुमति दी थी।
वे दोनों झटपट गए और फॉर्म भर दिए। चौथे दिन सुबह 6 बजे शीतल अपनी कार से कांति के घर पहुंची और फिर कांति को अपने साथ सेवानिवृत्त मेजर जनरल अहलूवालिया के घर ले गई।
वहां करीब चालीस लोग जमा थे। उनमें से अधिकतर मध्यम आयु वर्ग और उससे अधिक उम्र के थे। उनमें महिलाएं और पुरुष दोनों थे। व्यापारी, सरकारी अधिकारी, उद्योगपति, हर तरह के लोग वहां मौजूद थे।
सद्गुरु महाराज के विशेष शिष्य रामचंद्र ब्रह्मचारी आगे आए और उन्होंने योग और ध्यान का संक्षिप्त परिचय दिया। उन्होंने मानव शरीर, मन और बुद्धि की स्थिति के बारे में भी जानकारी दी। अंत में उन्होंने कहा,
आज से शुरू मत करो। मैंने जो कहा है उस पर विचार करो। सभी को आठ पृष्ठों की एक पुस्तिका दी जाएगी। उसे भी कल पढ़ लेना। कल से हम शुरू करेंगे—"
कांति वहाँ पहुंचने के बाद से ही रामचंद्र ब्रह्मचारी पर ध्यान दे रहे थे। उनकी उम्र लगभग पैंतीस वर्ष थी। उन्हें विषय का इतना स्पष्ट ज्ञान था। इतने सारे लोगों के बीच भी उनका चेहरा ऐसा था मानो वे आत्म-विश्लेषी हों, उनकी गंभीर निगाहें

अंतर्मन या उनकी भौहों के बीच टिकी हों। उनके अंग्रेजी और कभी-कभार बोले गए हिंदी वाक्यों के बीच-बीच में आने वाले संस्कृत श्लोकों से ऐसा प्रतीत होता था कि वे दक्षिण भारत से होंगे।
घर आकर और ऑफिस में फ्रूट जूस लेकर जाने के बाद भी कांति को लगता रहा कि उसने उसे कहीं देखा है। बैंगलोर में? लेकिन किस संदर्भ में?
अगले दिन, उन्होंने पंद्रह मिनट तक प्राणायाम सिखाया और कक्षा समाप्त करते हुए कहा, "मैं कल भी प्राणायाम करूंगा।"
फिर वह उनके पास गई और कन्नड़ में पूछा,
मैंने तुम्हें कहीं देखा है। लेकिन कहाँ? मुझे याद नहीं आ रहा..."
अपनी भौहों के बीच से निगाहें उसकी ओर घुमाते हुए उसने कहा,
"आप अनूप की मां हैं, है ना? मैं पहले हलुकेरे के कॉलेज में थी। आप वहां दो-तीन बार आई थीं।"
फिर से वही याद! उसका जीवन दुखमय हो गया था। इससे उसका दिल दुख रहा था। उसे कल से यहां नहीं आना चाहिए!
उन्होंने आगे जांच की,
"अनूप अब कहाँ है? क्या वह ठीक है? उसने होन्नाटी मास्टर्स के लिए एक घर बनवाया था - लेकिन मुझे उसमें रहने का मौका मिला। मैं वहां ध्यान कर रहा था। बहुत ही प्रतिभाशाली लड़का!"
वह सोचने लगी – क्या वह जानबूझकर मुझे उसकी याद दिलाने की कोशिश कर रहा है? लेकिन उसका चेहरा तो ऐसा नहीं लगता। वह ऐसा आदमी नहीं लगता जिसे फालतू की बातें करना पसंद हो। अनूप की माँ होने के नाते, वह इतना तो कह ही रहा है!
उसने अंग्रेजी में कहा,
"मुझे दिल का दौरा पड़ा था। डॉक्टर ने मुझे ध्यान करने की सलाह दी। इसीलिए मैं यहां आया हूं।"
उन्होंने अंग्रेजी में भी जवाब दिया।
``ध्यान करना सीखो। यह बहुत उपयोगी साबित होगा..."
तभी सात-आठ लोग उससे बात करने के लिए उसके आसपास जमा हो गए। वह भी पीछे हट गई और शीतल से बातचीत करने लगी।

■

उसने रामचंद्र ब्रह्मचारी से दूर रहने का फैसला किया था, जो उसे उसके अतीत की याद दिलाते थे, लेकिन किसी कारणवश, उनसे बात करने का मौका बार-बार आता रहता था। दूसरों की तरह, वह भी उनके सामने बैठकर ध्यान सीख रही थी। उसे शीतल के साथ हॉल में जाना पड़ता, उनके बताए अनुसार सांस लेनी पड़ती और यथासंभव लंबे समय तक ध्यान में लीन रहना पड़ता – उसे उनसे सवाल पूछने पड़ते और सामने आने वाली किसी भी छोटी-मोटी समस्या का समाधान करना पड़ता।
पहले दिन उसने बात का विषय बदल दिया और अंग्रेज़ी में बात करने लगी, और उसके बाद से वह कभी उससे आमने-सामने नहीं मिला। उसके इस रूखे व्यवहार के कारण उसे उस पर भरोसा होने लगा। इसलिए, समय-समय पर वह भी उससे बात करने लगी और थोड़ी-बहुत चर्चा करने लगी।
एक दिन वे दोनों समय से पहले पहुँच गए, और बाकी लोग भी धीरे-धीरे आने लगे। ध्यान कक्षा के आयोजक नरेंद्र सिंह उन दोनों के पास गए और धीमी आवाज़ में बोले,
``कोई समस्या है..."
"क्या समस्या है?" कांति ने पूछा।

"अहलूवालिया साहब यह घर किराए पर दे रहे हैं और अपने फामहाउस में जा रहे हैं। हमें ध्यान के लिए कोई दूसरी जगह ढूंढनी होगी..."
"अगर आप चाहें तो इसे मेरे घर ले आईए; लेकिन मेरा घर ग्रेटर कैलाश में है..." शीतल ने उत्सुकता से कहा।
"यह काफी नहीं होगा। इस इलाके के लोग इतनी दूर कैसे आ सकते हैं? इसके बजाय, हमें ग्रीन पार्क, यूसुफ सराय, हौज़ खास, सफदरजंग डेवलपमेंट में जगह चाहिए। क्योंकि सभी लोग इसी इलाके के हैं।"
शीतल ने इतनी जल्दी अपना घर देने की पेशकश कैसे कर दी! या उसने इतनी जल्दी तैयारी इसलिए की क्योंकि उसे लगा कि इतना बड़ा अंतर है और वे मना कर देंगे? छे: – हमारी यह सोच गलत है – हमें इसे बदलना होगा – हमें इसे जानबूझकर बदलना होगा! रामचंद्र ब्रह्मचारी ने भी यही कहा था।
उसने कहा,
"मेरा घर पास ही है। लेकिन हॉल इतना बड़ा नहीं है। अगर आप चाहें तो आकर देख सकते हैं।"
जल्द ही उनके घर में ध्यान की कक्षाएं शुरू हो गईं। इन दिनों में उन्होंने कभी यह नहीं पूछा था कि रामचंद्र ब्रह्मचारी कहाँ रहते हैं और कहाँ भोजन करते हैं। अब उन्हें यह भी समझ आ गया था। उनके रहने और खाने के बारे में कोई निश्चित योजना नहीं थी। तब उन्होंने सुझाव दिया,
"आपको सुबह और शाम की क्लास लेने के लिए यहां आना पड़ता है। तो आप यहीं क्यों नहीं रुक जाते? चूंकि यहां खाना बनाने के लिए एक महिला है, तो यह भी कोई समस्या नहीं है।"
वह उनकी सुबह की कक्षाओं के दौरान घर पर रहती थीं। वह उन कक्षाओं में भी उपस्थित होती थीं। हालांकि, शाम को वह कार्यालय में होती थीं। उन्हें रामचंद्र ब्रह्मचारी की शांत उपस्थिति भी लाभकारी लगती थी, जो दिन भर घर पर ही रहते थे। ध्यान सिखाने, छात्रों की समस्याओं का समाधान करने और स्वयं ध्यान में लीन रहने के अलावा, उन्हें किसी और चीज़ में रुचि नहीं थी। उन्हें चाय या कॉफी पीने की आदत नहीं थी। उनका एकमात्र आहार सुबह एक गिलास दूध और सुबह-शाम का भोजन होता था। भोजन के मामले में उनकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं थी। उन्हें कम नमक और काली मिर्च से ही बेहतर लगता था, बस!
उन्होंने उसे इंतज़ार न कराने के लिए भी कहा था। दोनों बार, उनकी थाली मेज पर बड़ी रखी होती थी – वे जब भी मौका मिलता, खा लेते थे। एक हफ्ते बाद, उसे एहसास हुआ कि उन्होंने उसे ऐसा इसलिए कहा था ताकि उसे कोई परेशानी न हो। आखिरकार, उसने उनसे कहा,
मुझे आपसे कोई समस्या नहीं दिखती। बल्कि, अगर हम साथ में खाना खाएंगे तो दो निवाले और खा लेंगे!
फिर वे उसके साथ भोजन करने बैठ गए।
वह हमेशा अपने ही विचारों में खोया रहता था। उसकी निगाहें उसकी भौहों के बीचोंबीच टिकी रहती थीं, उसका चेहरा अंतर्मुखी रहता था, और वह कभी किसी और चीज के बारे में बात नहीं करता था।
एक बार जब उसने उससे उसके जीवन के बारे में पूछा, तो उसने कहा,
मुझे अपने पिता को देखने की याद नहीं है। मैंने उन्हें कभी नहीं देखा। जब मैं अपनी माँ के गर्भ में थी, तभी उनका निधन हो गया था। मेरी माँ का भी कुछ समय बाद निधन हो गया। मेरी बड़ी बहन ने मेरा पालन-पोषण किया और मुझे कुछ शिक्षा दी। वह मुझसे सोलह साल बड़ी हैं। मुझे बचपन से ही ध्यान का शौक था – बस इतना ही!
लेकिन मैंने कितनी ही बार उनसे ध्यान के बारे में पूछा, वे बिना थके जवाब देते रहे। उन्हें किसी और विषय में कोई दिलचस्पी नहीं थी। वे सीखने आने वाले हर

व्यक्ति, चाहे वह युवा हो या वृद्ध, से आदरपूर्वक बात करते थे। वहाँ चौदह-पंद्रह वर्ष के कुछ बच्चे भी थे। वे हर उम्र की महिलाओं को माताजी कहकर पुकारते थे। वे किसी को नाम से नहीं पुकारते थे। वे जिनसे बात करना चाहते थे, उनकी ओर मुड़कर उन्हें 'माताजी-आप-' कहकर संबोधित करते थे। वे कांति को भी 'माताजी' कहकर ही संबोधित करते थे।
पांच-छह महीने बीत जाने के बाद भी, उन्हें उनके द्वारा 'माताजी' कहकर सम्मानपूर्वक संबोधित किए जाने में कठिनाई होती थी। लेकिन इसका कोई इलाज नहीं था। वे महिलाओं को किसी और उपाधि से संबोधित करना नहीं जानते थे। यहाँ तक कि अगर वह या रसोइया उन्हें पानी या दूध का गिलास भी देते, तो वे उसे बड़ी विनम्रता से ग्रहण करते, मानो किसी मंदिर से प्रसाद ग्रहण कर रहे हों। हालाँकि उन्हें लगता था कि ध्यान सिखाने वाले गुरु ही उनके गुरु हैं, फिर भी वे दोनों हाथों में विनम्रता से गिलास लेते हुए कहती थीं कि गुरुत्व का अहसास भी उन तक नहीं पहुँच पाता।
हर सुबह शीतल कांति के घर ध्यान की कक्षा में आती थी। तीन महीने तक कक्षा में अध्ययन करने के बाद, सभी से अपेक्षा की जाती थी कि वे अपने घर पर ध्यान करें। यदि किसी को कोई समस्या होती, तो रामचंद्र ब्रह्मचारी उसके सभी संदेह दूर कर देते। लेकिन शीतल के लिए कांति के घर प्रतिदिन कम से कम एक बार आना दुर्भाग्यपूर्ण माना जाता था। वे दोनों कारखाने के बारे में खुलकर बातें करती थीं। कांति ने उसे कारखाने से बहुत बुरे तरीके से निकाल दिया था। वे गुमनाम पत्र लिखकर बदला भी लेती थीं, जानबूझकर उस घटना को भुलाकर, और फिर बातचीत में मग्न हो जाती थीं। वे दोनों एक-दूसरे को ध्यान के अपने अनुभवों के बारे में बताती थीं।
अब कांति की हालत में काफी सुधार हो गया था। उसके मन की अस्थिरता काफी हद तक कम हो गई थी। शीतल की अनिद्रा की शिकायत भी कम हो गई थी और उसने हाल ही में रात में शराब पीना बंद कर दिया था।
कभी-कभी उनकी बातचीत ध्यान गुरु रामचंद्र ब्रह्मचारी की ओर मुड़ जाती थी। शुरू में शीतल उनकी सभी पत्नियों और लड़कियों को माताजी कहकर पुकारने की आदत का मजाक उड़ाती थी। एक बार उसने कहा,
"वे अपनी सभी पत्नियों और बेटियों को 'माताजी' कहकर पुकारते हैं - तो फिर महिलाएं उन्हें क्या कहकर पुकारें?"
दोनों ने 'गुरुजी', 'ब्रह्मचारी' आदि उपाधियों पर व्यंग्यात्मक चर्चा की। अंत में, शीतल ने सुझाव दिया,
``माँ को संबोधित करने का सही तरीका है बेताजी!"
इस पर दोनों दिल खोलकर हँसे।
उसके बाद, जब भी वे अकेले होते, अगर उन्हें उनके बारे में बात करनी होती, तो वे उन्हें "बेटाजी" कहकर बुलाते थे। लेकिन उनके सामने, वे दोनों गंभीर रहते थे।
एक बार शीतल ने कांति से कहा,
"क्या होगा यदि मेरा यह बेटा वास्तव में आपका बेटा होता, या आपका भतीजा ऐसा संन्यासी होता?"
कांति सचमुच सोच रही थी। अगर सच में ऐसा होता, तो हम क्या सोचते? उसके लिए इसकी कल्पना करना भी असंभव था। शीतलाच ने कहा,
मैंने कहीं पढ़ा था कि हम भारतीय सैनिकों और संन्यासियों का बहुत सम्मान करते हैं। हम चाहें तो उनके चरणों में भी प्रणाम करते हैं। लेकिन अगर हमारा बेटा सेना में भर्ती हो जाता है, तो हम उसे रोक देते हैं! और अगर वह संन्यासी बनने का फैसला करता है, तो हम आत्महत्या करने की धमकी तक दे देते हैं।
पहले तो कांति को यह बात अजीब लगी, लेकिन कुछ देर सोचने के बाद वह भी इसे नकार नहीं सकी।

लेकिन इस बातचीत का कांति के मन पर अनजाने में ही असर हुआ – उसके मन में रामचंद्र ब्रह्मचारी के प्रति स्नेह जागृत हो गया। क्या हर बार बच्चे का जन्म अपनी कोख से ही होना चाहिए? क्या गर्भनाल का जुड़ाव होना आवश्यक है? उसने शीतल से अपने मन की बात कही।
शीतल ने यह भी कहा,
मैं भी यही सोचती हूँ। लेकिन उन्हें इस तरह बेपरवाह और हमारी भावनाओं को पूरी तरह अनदेखा करते देखना बहुत दुखद है – और दूसरी बात यह है कि भले ही मेरे मन में उनके लिए स्नेह हो, लेकिन मेरे दिल में उनके लिए प्रोत्साहन का एक शब्द भी नहीं है! यह एक तरह का बेपरवाह स्नेह है!
एक महीने बाद, कांति की रसोइया कुमाऊं स्थित अपने घर चली गई। काम करने के लिए कोई और नहीं मिल सका। कांति चाहे कितनी भी मना करती, रामचंद्र ब्रह्मचारी ने बिना सुने रसोई का सारा काम अपने हाथ में ले लिया और खुद ही करने लगा।
वह कई बुनियादी व्यंजन बना सकता था। जब उसने उससे पूछा, "तुमने खाना बनाना कहाँ से सीखा?", तो उसने जवाब दिया,
"मेरी मां ने मुझे बहुत छोटी उम्र में यह सिखाया था। मुझे कभी-कभी अपनी बहन के घर पर इसे बनाना पड़ता था। जब मैं दिल्ली आई, तो मैं गुरुवर्यों के लिए इसे खुद बनाया करती थी।"
इसी बीच, एक दिन कांति को बुखार हो गया। डॉक्टर ने उसे फ्लू बताया और दवा दी। फिर भी बुखार कम नहीं हुआ। बाद में पता चला कि उसे टाइफाइड हो गया है। डॉक्टर ने उसे नर्सिंग होम में रखने की सलाह दी। उस समय ब्रह्मचारी स्वयं उसकी देखभाल कर रहे थे - समय पर दवा देना, चम्मच से जौ का पानी और फलों का रस पिलाना और बुखार बढ़ने पर माथे पर ठंडे पानी की पट्टियाँ लगाना। बुखार उतरने के बाद डॉक्टर ने उसे घर जाने की अनुमति दे दी। इसके बाद भी उन्होंने चुपचाप दवा देने और खान-पान का ध्यान रखने का काम संभाल लिया। नर्सिंग होम में और घर लौटने के बाद भी कारखाने के अधिकारी और कर्मचारी उससे मिलने आते थे। लेकिन उनमें से किसी ने भी आगे बढ़कर ऐसी सेवा नहीं की। शीतल ने भी तीन दिन की छुट्टी ली थी। उसके बाद वह हर सुबह और शाम आती-जाती रहती थी। हालांकि, उसकी देखभाल की पूरी जिम्मेदारी ब्रह्मचारी पर थी।
एक रात, बुखार उतरने के बाद, कांति की नींद खुली। अपनी जगह से हिले बिना, उसने अपनी आँखें खोलीं और देखा कि वह सामने वाली दीवार के सहारे अपने बिस्तर पर ध्यान में लीन बैठा है।
उसे बहुत बुरा लगा – मैंने ऐसे व्यक्ति की ध्यान साधना भंग कर दी थी और पिछले पंद्रह दिनों से उसे अपनी सेवा में व्यस्त रखा था! उससे पहले, मैंने उससे एक सप्ताह तक खाना बनवाया था – यह हमारी गलती थी –
सोफे पर लेटे हुए उसे चक्कर आने लगे। वह लेटना चाहती थी, लेकिन मन ही मन सोचने लगी, "हमें इन हरकतों से उसकी ध्यान साधना में खलल नहीं डालना चाहिए!" उसे डर था कि अगर उसने अपनी पलकें भी हिलाईं, तो उस हरकत की तरंगें उसके मन तक पहुँचकर उसकी ध्यान साधना को भंग कर देंगी। उसने अपनी आँखें बंद कर लीं और शांत लेटी रही।
रात के लिए एक नर्स रख सकते थे, क्योंकि उसकी देखभाल करने वाला कोई नहीं था। शीतल यह सुनिश्चित कर लेती। अब वह उनकी दयालुता से अभिभूत महसूस कर रही थी। वह इस स्थिति से कैसे बाहर निकले?
जब वह घर लौटी, तो उसने देखा कि उसका वज़न कितना कम हो गया है! जब उसने आईने में देखा, तो उसका चेहरा भी पतला हो गया था। उसके गालों, माथे, आँखों और आँखों के आसपास झुर्रियाँ साफ़ दिखाई दे रही थीं। उसके सिर के

बाल भी कम हो गए थे। इतना ही नहीं, वे सफ़ेद भी होने लगे थे। अगर कोई उसे देखता, तो उसे 'माँ' तक नहीं कहता, दादी कहना तो दूर की बात है!
एक बार शीतल ने सुझाव दिया,
"ग्रेटर कैलाश क्षेत्र में भी कुछ लोगों ने ध्यान में रुचि दिखाई है। कम से कम पचास लोग आसानी से आ सकते हैं। ब्रह्मचारी व्यक्ति शाम 6:30 बजे तक अपने घर पर कक्षा ले सकते हैं। यहां तक कि जो लोग शाम को आते हैं, उनसे भी सुबह आने का अनुरोध किया जाएगा।"
कांति ने इसे ध्यान के प्रसार के दृष्टिकोण से भी समझा। एक सप्ताह के भीतर ही एक नई कक्षा शुरू हो गई। शामों को कांति को अकेले रहना पड़ता था। शीतल, जो इतने दिनों से शामों को उनसे मिलने आती थीं, अब अपने घर पर कक्षा का आनंद ले रही थीं। जब वह घर जातीं, तो घर पर भी कोई नहीं होता था। ब्रह्मचारी भी नहीं। भले ही वे स्वभाव से उदासीन थे और अपने कमरों में ध्यान कर रहे थे, कांति को इस बात से संतोष था कि घर पर कोई तो है।
रसोइया अभी तक नहीं लौटी थी। वह खाना बनाने की ज़िम्मेदारी एक अविवाहित व्यक्ति पर नहीं डालना चाहती थी। उसने चार जगहों पर जाकर सौ रुपये जुटाए और एक और रसोइया रख ली।
वह शाम के समय शीतल पर अक्सर गुस्सा करने लगी थी। उसके कोई बच्चे भी नहीं थे – कोई अन्य करीबी रिश्तेदार भी नहीं। क्या होगा अगर वह ब्रह्मचारी को पूरी तरह से अपने वश में कर ले और उसे हमेशा के लिए अपने पास रख ले? क्या होगा अगर वह उससे कह दे कि यहाँ केवल वही लोग आएं जो ध्यान सीखना चाहते हैं – मैं ब्रह्मचारियों को वहाँ नहीं भेजूंगी? तभी उसे याद आया कि शीतल के साथ उसका रिश्ता एक बार टूटने की कगार पर पहुँच गया था! अब इसे किसी भी तरह से दोबारा टूटने नहीं देना है।
शीतल मेरी बहुत करीबी दोस्त है, और दूसरी तरफ, वो मेरी प्रतिद्वंदी भी है! काश उसमें ये प्रतिस्पर्धात्मक स्वभाव न होता! उसका स्वभाव तो बिलकुल पारा जैसा है!
लगभग चार महीने बाद, एक दिन अमेरिका से फोन आया। उसने काफी समय से उसे फोन नहीं किया था। ध्यान की कक्षा शुरू होने के बाद से उसने उस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया था। वह सोच रही थी कि उस बेटे से क्या कहे जो उसकी खुशी-दुख की परवाह नहीं करता और देश छोड़ने के बाद वापस लौटने का जिक्र तक नहीं करता। बीमारी से ठीक होने के बाद से ही उसे अपने दिल में यह महसूस होता था कि ब्रह्मचारी उसका बेटा है।
अनूप ने कहा,
``हाय माँ! कैसी हो? तुमने मुझे काफी समय से फोन नहीं किया!"
आपने ऐसा क्यों नहीं किया?
आप कैसी हैं? मेरे पास आपको बताने के लिए एक खुशखबरी है। आपकी बहू का चयन हो गया है। आपको शादी में जरूर आना चाहिए!
अनूप की शादी की खबर सुनकर वह बहुत खुश हुई। उसने सात-आठ महीने पहले फोन किया था और एक लड़की ने फोन उठाया था।
``अरे, गेलुय के बाहर अनुप..."
आप कौन हैं?
उसका दोस्त।
``गर्ल फ्रेंड``
``क्यों? आपकी आवाज़ से तो पता नहीं चल रहा? आप कौन हैं? भारतीय हैं क्या?"
यह महसूस करते हुए कि इस जिरह से उन्हें अपमानित होना पड़ेगा, कांता ने रिसीवर नीचे रख दिया था।
अगली सुबह, अमेरिका में उस रात के बाद, अनुपम ने फ़ोन किया था।

“माँ, क्यों आपने बुलाया था? देखो, आजकल तुम्हें तमीज़ नहीं है। जब तुम्हें मेरी दोस्त के साथ ठीक से बर्ताव नहीं करना चाहिए, तो मुझसे सवाल क्यों पूछ रही हो? वो बहुत गुस्से में है, मैं तुम्हें बता दूँ! “तुम्हारे देश के लोगों में कोई तमीज़ नहीं है – तो फिर वो तुम्हारी माँ क्यों नहीं हो सकती!” ये कहकर वो बहुत चिल्लाई। इसलिए मैं तुम्हें बता रही हूँ, तुम्हारा दिलली एकदम गाँव जैसा है!”
कांति ने भी अपनी आवाज़ बुलंद करते हुए पूछा,
"मैंने इतना पैसा खर्च करके तुम्हें वहां भेजा, पढ़ाई करने के लिए या मेरी प्रेमिका के साथ मौज-मस्ती करने के लिए?"
"अगर आप मेरी प्रगति देखना चाहते हैं, तो मैं आपको अपने नवीनतम ग्रेड कार्ड की एक प्रति भेज दूंगा। क्या आप मुझसे सिर्फ इसलिए जवाब मांग रहे हैं क्योंकि आपने पैसे दिए हैं? यह आर्थिक अत्याचार है! यहां कोई भी माता-पिता मुझे सिर्फ इसलिए इस तरह दबाव नहीं डालते क्योंकि उन्होंने मुझे पैसे दिए हैं! आपको मेरी दोस्ती में दखल देने का कोई अधिकार नहीं है!"
इस फोन कॉल के बाद, उसके लिए उसकी भावनाएँ चकनाचूर हो गई थीं। अगर वह इसी तरह का व्यवहार करता रहा, तो कल उसे कोई अच्छी लड़की कैसे मिलेगी? यहाँ तक कि जिसने उसे लड़की दी थी, वह भी उस लड़के पर सवाल उठाएगी!
अब जब वह आपकी बहू बन चुकी है, तो उसे एहसास हुआ कि फोन पर उसे यह बात बताने के बाद उसके भारत आने की संभावना 100 प्रतिशत खत्म हो गई थी। फिर भी, उसने पूछताछ की,
यह कहाँ है?
``मूल रूप से भारत की रहने वाली। वह मेरी कॉलेज की सहपाठी थी। उसका नाम रश्मी सिंह था। वह मुझसे तीन साल बड़ी थी। उसने बीच में ही पढ़ाई छोड़ दी और मॉडल बनने के लिए मुंबई चली गई। क्या गजब का फिगर था! अमेरिका की कोई भी गोरी लड़की उसके सामने फीकी लगती है! वह मिस इंडिया चुनी गई। वह मियामी बीच में मिस यूनिवर्स प्रतियोगिता के लिए यहां आई थी। वह रनर-अप रही। लेकिन अमेरिका की विज्ञापन कंपनियां उसके फिगर की दीवानी हैं! उसने यहां विज्ञापन जगत में तहलका मचा दिया है! – मम्मी – मम्मी! क्या आप सुन रही हैं?"
``हूं... बोल..."
"माँ, मुझे पता है आपको यह पसंद नहीं है। लेकिन सब कुछ सुनो - अब वह साझेदारी में एक विज्ञापन कंपनी चला रही है। उसने खूब पैसा कमाया है! क्या आप जानती हैं कि उसका व्यापारिक दिमाग कितना तेज है? उसने यहां एक गोरे आदमी से शादी की थी। अब उसका उससे तलाक हो गया है।"
"ओह! क्या आपको लगता है कि आपको भारत में पत्नी नहीं मिलती?"
देखो, मम्मी! मुझे पता था कि तुम यही सवाल पूछोगी। अब मैंने यहाँ एक कंपनी में काम करना शुरू कर दिया है। बहुत बढ़िया नौकरी है! मुझे चेतावनी दी गई थी – वीज़ा सिर्फ़ पढ़ाई के लिए दिया गया है – नौकरी मिलने के बाद बसने के लिए नहीं – अगर तुम्हारे साथ अच्छे संबंध नहीं रहे, तो मैं तुम्हें उठाकर भारत के हवाई जहाज़ में बिठा दूंगी! लेकिन अगर मैं यहाँ किसी ग्रीन कार्ड वाली औरत से शादी कर लूँ, तो वो मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। भारत में तुम्हारी किसी भी लड़की में इतनी ताकत नहीं है कि मुझे अमेरिका का ग्रीन कार्ड दिलवा सके! लेकिन रश्मी में वो ताकत है!
"लेकिन वो तुमसे उम्र में बड़ी है, है ना?"
``हाँ – वो मुझसे तीन साल बड़ी है! तो फिर गड़बड़ क्या हुई? ये तो भारत का पुराना नियम है! असल में, अपने से ज़्यादा परिपक्व महिला की मौजूदगी में आप ज़्यादा आत्मविश्वास महसूस करते हैं। ये मेरा अपना अनुभव है। मैंने कई सहेलियों के साथ ऐसा अनुभव किया है! मैंने एक बड़े कागज़ पर हर लड़की का नाम, कद,

उम्र, उसके साथ बिताए दिन – उसे दिए गए नंबरों का एक तालिका बनाइए! उसमें बाकी लड़कियों को बीस से पैंतालीस तक नंबर मिल रहे हैं। और रश्मी? माँ – उसे अस्सी नंबर मिले! मैं आपका बेटा हूँ! बहुत सख्त परीक्षक! उसने मेरी मदद करने के लिए ही इस शादी के लिए हाँ कहा! वो कितनी दयालु है! अच्छा, क्या आप शादी में आ रही हैं या वहीं से मुझे आशीर्वाद देंगी? क्योंकि अगर आपने कल शादी का सर्टिफिकेट जमा कर दिया, तो इस देश के लोग कुछ नहीं कर पाएंगे!"
तो क्या आपकी शादी कल है?
``होय, मम्मी–"
"उसकी शादी पहले एक गोरे आदमी से हुई थी, है ना? वह शादी भी ग्रीन कार्ड पाने के लिए ही हुई थी, है ना?"
``माँ, हमें दूसरों के निजी मामलों पर इतना ध्यान क्यों देना चाहिए?–"
उसने उसे सिर्फ बताने के लिए फोन किया था—आमंत्रित करने के लिए नहीं—लेकिन उसे अंदर ही अंदर रोने जैसा महसूस हो रहा था, इसलिए वह उसके सामने अपनी कमजोरी नहीं दिखाना चाहती थी, इसलिए उसने रिसीवर पर हाथ रखा और आह भरी, जिससे उसके दिल का तनाव कम हो गया।
``माँ, क्या आप मुझे सुन पा रही हैं? भारत में फ़ोन की धुड़कन कॉल के बीच में ही रुक जाती है – दिल भी बीच में ही रुक जाता है – माँ, आपके देश को आगे बढ़ने में कम से कम सौ साल लगेंगे! बेशक, तब तक हम अमेरिकावासी न केवल सूर्य पर, बल्कि आसपास के ग्रहों और उपग्रहों पर भी राज कर रहे होंगे!..."
बेल-अनुप, ओह, मुझे टाइफाइड हो गया था, मुझे तीन सप्ताह तक नर्सिंग होम में रखा गया था - मैं अभी भी कमजोर महसूस करती हूं। लेकिन तुम ऐसे हो जैसे यहां कोई है ही नहीं-"
"टायफाइड एक ऐसी बीमारी है जो पानी और भोजन के ज़रिए फैलती है। मम्मी, यहाँ हर खाने-पीने की चीज़ को बिना अच्छी तरह जांचे बेचा नहीं जाता! ऐसी बीमारियाँ यहाँ बिलकुल नहीं फैलतीं – यहाँ तो बीमारियों को पनपने ही नहीं दिया जाता। मैं यहाँ से आपके लिए कुछ बहुत असरदार गोलियाँ भेज रही हूँ – इन्हें ले लेना।"
यह हमारी भावनाओं को नहीं समझता।
"ठीक है माँ! मैं अब फोन रख देता हूँ। अंतरराष्ट्रीय कॉल की दरें बहुत बढ़ गई हैं," उसने कहा और फोन काट दिया।
लेकिन अब, चूंकि वह उसकी आवाज़ नहीं सुन पा रहा था, वह बेकाबू होकर रोने लगी। रोते-रोते उसका सीना फटने जैसा महसूस हो रहा था। यह ठीक नहीं है। हमें रोना नहीं चाहिए - डॉक्टर ने तो यही कहा था। लेकिन हम अपनी जान बचाने के लिए क्या कर सकते हैं? उसकी शादी कल है! अगर मैं आज मर गई और उसे इसका कारण पता चल गया, तो उसे सबक मिलेगा! लेकिन जब मैं मर जाऊंगी, तो किसी को सबक मिलेगा और मुझे पता चलेगा कि मेरे साथ क्या होगा।
उस रात, अपनी कक्षाएं समाप्त करने के बाद ब्रह्मचारी शीतल के घर से लौटने पर, उसने उसे सब कुछ बताने और अपने मन को हलका करने का फैसला किया। इससे उसे थोड़ा सुकून मिलेगा। इन दिनों में उसने उससे कुछ भी नहीं पूछा था।
रात के खाने के दौरान, उसने स्वयं ही इस विषय को उठाया।
"अनुप होशियार है, चालाक है, यह सच है! लेकिन..." उसने अब तक की सारी बातें बताते हुए कहा कि उसने ग्रीन कार्ड के लिए उससे शादी करने का फैसला किया था।
पूरी बात सुनकर रामचंद्र ब्रह्मचारी के चेहरे पर करुणा झलक रही थी। सब कुछ सुनने के बाद उन्होंने कहा,
"यही उस देश की संस्कृति का स्वरूप है।"

अगले दिन, रात के खाने पर, उसने मुझे बताया,
दिन में थोड़ा और समय ध्यान लगाने में बिताएँ। इसमें एक और चरण है – मैं आपको वह सिखाऊँगा। अपने बच्चे को ही अपना इकलौता पुत्र मानने के बजाय, यह भावना विकसित करने का प्रयास करें कि सभी जीवित प्राणी आपके बच्चे हैं। इससे आपके मन में उत्पन्न होने वाली निराशा और हताशा की भावना कम हो जाएगी। धीरे-धीरे, यह पूरी तरह से दूर हो जाएगी।
उसे लगा जैसे उसे एक नया रास्ता दिख गया हो। उसने आगे कहा,
"बीमारी से उबरने के बाद से आपकी ध्यान साधना पहले जैसी अच्छी नहीं रही है। इसलिए, आपको अधिक ध्यान करके अपनी मानसिक शक्ति को पुनः प्राप्त करना चाहिए।"
अगले दिन, उसने शीतल को फोन किया और उसे शाम को थोड़ी देर के लिए मिलने के लिए बुलाया। तदनुसार, शीतल एयर कंट्रोलर के कार्यालय में कांति से मिलने आई और शीतल को अनुप की शादी, उसका फोन नंबर और रामचंद्र ब्रह्मचारी के साथ हुई बातचीत के बारे में बताया।
सब कुछ सुनने के बाद शीतल ने कांति से धीरे से कहा,
"कांति, इन सब बातों को दिल पर मत लो। तुम्हें भी अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिए। ब्रह्मचारी ने जो कहा है, वह भी बिलकुल सही है! मैं भी तो सही हूँ, है ना? अगर तुम चाहो तो मुझे अपनी बेटी समझ लो। अगर सच में तुम्हारा बेटा होता तो वह तुम्हें इस तरह छोड़कर नहीं जाती – लड़कियों में प्यार ज़्यादा होता है।"
शीतल की बातें सुनकर कांति बहुत भावुक हो गई। वह उठी, शीतल के पास आई और भावुक होकर बोली,
"तुम मेरी बेटी नहीं हो - तुम मेरी माँ हो!"
अगले दिन शीतल मिलने आई। उस समय उसने कांति को कुछ सलाह दी।
देखो, मुझे तुम्हारी आमदनी और संपत्ति के बारे में कुछ भी कहने का कोई अधिकार नहीं है – फिर भी मैं तुम्हें अपने विचार बताऊँगी। इसमें कोई शक नहीं कि अनुप इसके बाद अमेरिका से यहाँ नहीं आएगा। अगर तुम्हें कुछ हो जाता है, तो सरकार तुम्हारी संपत्ति वहाँ नहीं जाने देगी। इसके अलावा, तुम यह संपत्ति उस लड़के को क्यों दोगी जो तुम्हारी भावनाओं का सम्मान किए बिना तुम्हें जूते की तरह समझता है? तुम्हें अपनी वसीयत तैयार कर लेनी चाहिए। तुम्हारे जाने के बाद, तुम्हारी सारी संपत्ति ध्यान-योग-ट्रस्ट नामक एक ट्रस्ट में उसे मिल जाएगी। इसके लिए केवल रामचंद्र ब्रह्मचारी ही एकमात्र ट्रस्टी रहेंगे। तुम्हारा घर उनका कार्यालय बन जाएगा। ब्रह्मचारी तुम्हारा एक-एक पैसा केवल ध्यान-योग पर ही खर्च करेंगे। वसीयत बनाने के बाद तुम्हें भी तसल्ली मिलेगी।
कांति यह सब सुनकर स्तब्ध रह गई। लेकिन उसने तुरंत सोचा, यही करना सही होगा। एक ओर तो उसे राहत महसूस हुई। मरने के बाद हमारे पैसे का इससे बेहतर उपयोग और क्या हो सकता है?
चार दिनों तक, उसका यही संकल्प और भी प्रबल होता चला गया। उस बदमाश कार्त्या को एक पैसा भी नहीं देना चाहिए! इस भावना और विचार का बोझ सहन न कर पाने के कारण, एक दिन उसने ब्रह्मचारी पर अपना सारा गुस्सा निकाल दिया।
सब कुछ चुपचाप सुनने के बाद भी वे उत्साहित नहीं हुए। उन्होंने पूछा,
"ध्यान और योग सिखाने के लिए हमें पैसे और इमारत की क्या ज़रूरत है? अगर सीखने वाले और सिखाने वाले हों, तो बस इतना ही काफी है!"
उसने कहा,
अगर सिर्फ बच्चे और शिक्षक ही हों तो क्या स्कूल शुरू होगा? मंदिर क्यों बनाएँ? क्या इसीलिए तो प्रवेश करते ही श्रद्धा उत्पन्न होनी चाहिए? ध्यान और योग के लिए उपयुक्त भवन होना अच्छा है। किसी के घर के हॉल को ध्यान कक्ष में कैसे बदला

जा सकता है? मैं यहाँ की बीच वाली दीवार हटाकर संगमरमर की दीवारें बनवाऊँगा और एक भव्य ध्यान मंदिर बनाऊँगा!
उन्होंने इस बारे में कुछ नहीं कहा। उनके स्वभाव को जानते हुए, वह भी चुप रही। शायद वे तुरंत सहमत न हों। लेकिन धीरे-धीरे मैं उन्हें मना लूँगी। ज़रूरत पड़ी तो मैं शीतल से भी उन्हें बता दूंगी।

■

एक दिन, उनके कार्यालय में सचिवालय से एक फोन आया।
"महोदया, मैं बहलसाहेब के पीए से बात कर रहा हूँ। आपको आज उनसे मिलने आना होगा। दोपहर तीन बजे। क्या यह संभव है? मैं आज के उनके कार्यक्रम की योजना बना रहा हूँ।"
बहल के इस संदेश पर उसके कुछ कहने का तो सवाल ही नहीं था। उसका विदेशी व्यापार से गहरा संबंध था। आज्ञापालन में ज़रा सी भी चूक होती तो लाइसेंस रद्द कर दिया जाता! तब तो हर कोई जानता था कि वह किसी मामूली नियम का बहाना बनाकर कारखाने पर कब्ज़ा कर सकता है और उसे जेल में डील सकता है। कांति भी यह बात जानता था। इसलिए, बिना एक पल भी संकोच किए उसने घोषणा कर दी कि वह आ रही है।
लेकिन बहल ने आपको क्यों फोन किया होगा? दिल का दौरा पड़ने के बाद—और खासकर जब से घर को योग और ध्यान कक्षा में बदल दिया गया था—उन्होंने अपने साथियों, छोटे व्यवसाय मालिकों से पूरी तरह से संपर्क तोड़ दिया था। अन्यथा, इसके पीछे का कारण स्पष्ट होता।
हमारी तरह, उन्होंने भी अन्य छोटे-बड़े उद्यमियों को फोन करके संदेश भेजा होगा कि आखिर ये सब क्यों किया जा रहा है? जब आप तय समय पर कार्यालय जाएंगे तो आपको अपने आप समझ आ जाएगा।
सवा तीन बजे वह उनके पीए रूम में दाखिल हुई। बहल के चारों पीए उसे अच्छी तरह से जानते थे। चारों आपस में पंजाबी में बात कर रहे थे। यानी बहल ऑफिस में नहीं थे।
उसे देखते ही वे सब चुप हो गए। उनमें से एक, जिसका नाम किशनलाल था, ने आदरपूर्वक उससे कहा,
"महोदया, इस कमरे में आइए। सोफे पर बैठिए। महोदय वित्त मंत्री से मिलने गए हैं। क्या आप चाय या कॉफी लेना चाहेंगी? या कोई ठंडा पेय?"
वह अंदर गई और देखा। जैसा उसने सोचा था, वहाँ सात-आठ और लोग बैठे थे। शाह हुसैन वहाँ पाकिस्तान को माल भेज रहे थे। जैसे ही उन्होंने उसे पहचाना, उन्होंने विनम्रतापूर्वक उसका अभिवादन किया। अमृतचंद्र जैन नाम का एक सोने के आभूषण निर्यातक भी उसका परिचित था। जैसे ही उसने उसे देखा, वह उठा, उसके बगल में बैठ गया और बातचीत शुरू कर दी।
``क्या, कांतिजी! मैंने आपको इतने दिनों से नहीं देखा!"
बातचीत के दौरान, यह विषय भी सामने आया कि बहल ने संदेश क्यों भेजा होगा। जैन ने कहा,
"बेशक, यह तो सिर्फ़ मेरा अनुमान है - चुनाव के लिए धन जुटाने के लिए!"
बहल सवा चार बजे लौटा। सार्वजनिक सेवाकर्मी एक-एक करके लोगों को अंदर भेजने लगे। साढ़े पाँच बजे कांति की बारी आई। उसे देखते ही बहल ने कहा,
"मां, मां, इधर आओ, कांतिजी! तुम्हें देखे हुए कितने दिन हो गए! क्या तुमने मुझे बिना संदेश भेजे न आने का फैसला कर लिया है, या क्या बात है?"
वह जहां बैठा था वहीं से उसने अपना हाथ बढ़ाया। उसे बड़ी मेज पर झुककर उससे हाथ मिलाना पड़ा। उसने कोमल, मनमोहक मुस्कान के साथ कहा,
"व्यस्त लोगों को बेवजह परेशान करना अच्छा नहीं है। सच है या नहीं?"

आप ऐसे क्यों दिख रहे हैं? आपके बाल झड़ गए हैं – सफ़ेद भी हो गए हैं। आपकी सेहत भी बिगड़ गई है! क्या आप ठीक नहीं थे? हाल ही में एक ऐसी दवा खोजी गई है जो आपके सिर के गंजेपन वाली जगह पर भी बाल उगा देगी! यह अभी तक यहाँ नहीं आई है – लेकिन फ्रांस और जर्मनी के बाज़ार में आ चुकी है। क्यों न आप इसे ऑर्डर करके मंगवा लें?
वह उसकी बेबाकी से नाराज़ थी। लेकिन चेहरे पर दिखाए बिना उसने कहा,
एक निश्चित उम्र में, गंजापन और सफ़ेद बाल एक विशेष सुंदरता प्रदान करते हैं!
"यह बात महिलाओं पर लागू नहीं होती। और खासकर उच्च समाज की खूबसूरत महिलाओं पर तो बिलकुल भी नहीं! अच्छा, बैठ जाइए। मैं आपको बताता हूँ कि मैंने आपको यहाँ क्यों बुलाया है। इसे हम दोनों के बीच ही रहने दीजिए। किसी और को पता न चलने दीजिए। विपक्षी दल और पत्रकार ऐसी खबरों के पीछे कुत्तों की तरह पड़े रहते हैं! हम चुनाव के लिए चंदा इकट्ठा कर रहे हैं। आपको दिल खोलकर उनकी मदद करनी चाहिए।"
चुनाव? लेकिन हवा तो चल ही नहीं रही है। अखबारों में भी कोई खबर नहीं है...
"बस यही है! महोदया, योजना यह है कि अचानक चुनाव की घोषणा करके विपक्षी दलों को भ्रमित कर दिया जाए! बताइए, आपका नंबर क्या है?"
"तुम ही बताओ। तुम्हें तो पता ही है कि मैं कोई खास इंसान नहीं हूँ!"
सरकार को आपके सभी व्यापारिक लाभ खातों की जानकारी है। हमें ऊपर से आदेश मिले हैं कि सभी गणनाओं के बाद हमें कितना पैसा वसूलना है। इस मामले में मुझे जरा भी आजादी नहीं है। आप मुझे दो लाख रुपये दीजिए..."
"दो लाख?" कांति डर गया।
क्यों? सरकार ने आपको इतना बड़ा व्यापारिक अवसर दिया – अगर आपने उस सरकार को इतना कुछ दे दिया तो क्या हुआ? अगर आप गरीबी मिटाना चाहते हैं, तो इस सरकार को वापस आना चाहिए। क्या आप 'गरीबी मिटाना' नहीं समझते? अगर हम अपनी सारी कमाई अपने पास रख लें, तो क्या वह भगवान के दरबार में भी काफी होगी? ठीक है! और हमें नकदी चाहिए। क्या एक हफ्ता काफी नहीं है?
उसे एहसास हुआ कि यह एक आदेश था, भले ही भाषा नरम थी। उसने इसे फिर से कहा,
"अच्छा तो फिर! अभी और भी बहुत से लोग इंतज़ार कर रहे हैं। हम एक हफ्ते में फिर मिलेंगे, ठीक है?"
जैसे ही वह लिफ्ट से नीचे उतरी, उसने बदले हुए हालातों के अंतर को स्पष्ट रूप से महसूस किया।
पिछले चुनाव के दौरान, इसी बहल ने यह अनुरोध किया था। उनके चेहरे पर हिचकिचाहट थी। सारा काम उन्होंने नाराज़गी से किया था। उस समय उन्होंने मुझे दिए गए दस हज़ार रुपये के लिए बड़ी विनम्रता से धन्यवाद दिया था। लेकिन अब ऐसा नहीं है। उनके हर हावभाव में सत्ता का अहंकार साफ झलकता है। यहाँ तक कि अगर वे कोई बात यूँ ही कह देते हैं, तो वह भी आदेश जैसा लगता है! हर व्यक्ति को इकट्ठा करने के बहाने उन्होंने दो लाख रुपये लाने का आदेश दिया था – वो भी नकद में!
महज पांच साल में कितना बड़ा बदलाव!
जैसे ही मैं लिफ्ट से बाहर निकली और अपनी कार की ओर चलने लगी, मैंने सोचा, मैं इस अत्याचार के आगे क्यों झुकूँ? अगर मैंने पैसे नहीं दिए तो वे क्या करेंगे? वह अपने ही विचारों से हैरान थी। क्या यह काम करने का विचार उसके मन में ध्यान और योग के कारण आया था, या किसी और वजह से?
वह दिन भर यही सोच रही थी।
शीतल से मिलते ही उसने उसे सारी सच्चाई बता दी। अंत में उसने कहा,

मैं उसे पैसे नहीं दूंगा। उसे जो चाहे करने दो। उसे मेरी फैक्ट्री और कारोबार बंद करने दो! मेरे पास अपने लिए काफी है, बस इतना ही!..."
लेकिन शीतल ने कहा,
``कांति, बहल को सिर्फ अपराधी मत समझो! उसने क्या गलत किया? वह तो एक कर्तव्यनिष्ठ अधिकारी है, बस! मैं ऊपर से आए आदेशों का पालन कर रहा हूं। मैं अपने खाते में जमा भी कर रहा हूँ। तुम कहते हो कि कोई कारखाना नहीं, कोई उद्योग नहीं, कोई पैसा नहीं? तो फिर आयकर विभाग आएगा और छापा मारेगा। वे तुम्हारा घर, दरवाजा, पैसा, सोना, सिक्के सब ज़ब्त कर लेंगे। वे इस साल का, पिछले साल का, उससे पहले के साल का शुक्लकाष्ठा वसूलेंगे, या फिर वे तुमसे दस गुना जुर्माना वसूलेंगे, वे तुम्हें जेल भेज देंगे! अगर तुम अब तक की सारी कमाई लेकर सड़कों पर भिखारी भी बन जाओ, तब भी कुछ न कुछ तो बचेगा ही! तुम्हें उनके कानूनों का पता नहीं है, वे खुद को कैसे फांसी पर लटकाते हैं, यह मुझे पता है। मेरी बात सुनो। जब से मैंने ध्यान करना शुरू किया है, मैंने भी रिश्वत नहीं ली है। लेकिन अगर मैं ऐसा व्यवहार करने लगूं, तो न सिर्फ दफ्तर में, बल्कि पूरे सचिवालय में, मैं अधिकारियों की नज़र में आ जाऊँगा। फिर वे सब मिलकर मेरे खिलाफ साज़िश रचेंगे और भ्रष्टाचार के आरोप में मुझे नौकरी से निकाल देंगे और जेल भेज देंगे! भला ये सब कौन चाहेगा? दफ्तर का काम दफ्तर में और घर पर मन की शांति! इन दोनों को मिलाकर उलझन क्यों पैदा करनी?

■

२४

सरकार की तमाम मुश्किलों के बावजूद, साप्ताहिक अखबार का प्रसार रविंद्र और सैनी के लिए संतोषजनक था। अखबार की गुणवत्ता घटिया थी, छपाई खराब थी और कभी-कभी भाषा भी स्पष्ट नहीं होती थी। फिर भी, इसमें पाठकों की चाहत की जानकारी मौजूद थी। वे ऐसी खबरें पढ़ सकते थे जो अन्य अखबारों में प्रकाशित नहीं होती थीं और जिन्हें सरकार दबा रही थी।
उन्होंने शुरू से ही तय कर लिया था कि वे विज्ञापन नहीं लेंगे। हर व्यापारी, दुकानदार, निर्माता - यहाँ तक कि गली में बैठा छोटा चायवाला भी जानता था कि अगर उन्होंने सरकार विरोधी अखबार में विज्ञापन दिया तो सरकार नाराज़ हो जाएगी और उनका धंधा चौपट हो जाएगा। इसलिए विज्ञापन मिलना आसान नहीं था। अतः हर अंक में एक बयान छपता था, "चूंकि हम विज्ञापनों के बिना अखबार चलाने पर अड़े हैं, इसलिए हमें इस अखबार की कीमत ऊंची रखनी ही पड़ेगी..."
अन्य पत्रिकाएँ बेचने वाले एजेंट 'द फैक्ट' को छूते तक नहीं थे। कुछ खुदरा विक्रेता कुछ अंक अधिक कमीशन पर बेचते थे। कई बार चार रुपये का अंक पाँच या छह रुपये में बिक जाता था। कभी-कभी लोग उसी अंक को काला बाजार में सात रुपये तक में खरीद लेते थे।
कुल मिलाकर, इस साप्ताहिक पत्रिका का देश के बड़े शहरों में व्यापक प्रसार था। रविंद्र ने एक बार एक छोटी सी चाल चली। हालाँकि टिब्यून के मालिक बदल गए थे, लेकिन वहां काम करने वाले अधिकांश लोग अब भी उनके करीबी दोस्त थे। उन्होंने चुपके से दिल्ली के संपादक - कंसार - से मुलाकात की और उनके माध्यम से रविंद्र ने उनसे एक संपादकीय लिखवाया। यह संपादकीय टिब्यून के सभी संस्करणों में 'पीटी पत्रकारिता और सरकार' के नाम से प्रकाशित हुआ। इसमें लिखा था -
"पीली पत्रकारिता उन लोगों का धंधा है जिनमें नैतिक बल नहीं है। उनके खिलाफ अदालत में मुकदमे दायर किए जाने चाहिए-" आदि बातें शुरू में बहुत ही कड़े शब्दों में कही गई थीं। फिर इसे इस प्रकार लिखा गया:

लेकिन अगर सरकार इन्हें दूसरे तरीकों से प्रतिबंधित करने की कोशिश करती है, तो ये अखबार सरकार के काम को बड़े पैमाने पर बढ़ावा देकर अपनी अहमियत खुद बढ़ा लेते हैं। एक पुरानी कहावत है – कुत्ते के भौंकने से दुनिया खत्म नहीं हो जाती। सरकार के लिए इन अखबारों को नज़रअंदाज करना ही बेहतर है! भले ही पाठक समझदार न हों, लेकिन उन्हें पत्रकारिता पर भरोसा नहीं है। यहां तक कि गांव के बस स्टेशनों पर कुछ पाठक, पिछड़े रेल यात्री भी इन अखबारों को पढ़कर कोई नुकसान नहीं पहुंचाएंगे। जो सरकार अपने खिलाफ लिखने वाले अखबारों को नजरअंदाज करती है, उसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी सहिष्णुता का प्रमाण पत्र मिल जाता है...
उस पूरे लेख में 'तथ्य' का एक बार भी जिक्र नहीं था।
इस संपादकीय का अपेक्षित प्रभाव पड़ा। प्रकाशन के तीन सप्ताह बाद भी 'द फैक्ट' को सरकार की ओर से कोई परेशानी नहीं हुई। पुराने झगड़े भी थम गए। सैनी ने प्रमुख समाचार एजेंटों से संपर्क किया और उनसे 'द फैक्ट' की कुछ प्रतियां मुफ्त में वितरित करने का अनुरोध किया, यह कहते हुए कि सरकार का कुटिल रवैया हाल ही में बदल गया है। इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ा। विक्रेताओं से भी 'द फैक्ट' की मांग बढ़ने लगी।
तलवार हर महीने अमेरिका से 'द फैक्ट' के लिए एक हज़ार डॉलर या दस हज़ार रुपये भेजा करते थे। ज़ाहिर है, इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता था कि सरकार को इसकी भनक न लगे। तलवार यह पैसा अमेरिका के एक व्यापारी को देते थे। दिल्ली का एक व्यापारी रवींद्र या सैनी को दस हज़ार रुपये लाकर देता था। चार युवा और उत्साही उप-संपादक नियुक्त किए गए, जिनमें से दो को दो हज़ार और दो को डेढ़ हज़ार रुपये का वेतन मिलता था। बाकी के तीन हज़ार रुपये पेट्रोल पर खर्च हो जाते थे। किसी ने हमें यह नहीं बताया कि उन्हें वेतन मिल रहा है। वे कहते थे कि वे यहां बिना वेतन के काम कर रहे हैं क्योंकि उन्हें काम का अनुभव चाहिए। रवींद्र और सैनी के अलावा, तलवार से आने वाले पैसे के बारे में किसी को पता नहीं था।
इसके अलावा, तलवार ने रविंद्र को अमेरिकी अखबार 'द सन' में दिल्ली संवाददाता की नौकरी दिलवा दी थी। उनका काम भारत की प्रमुख खबरों पर संक्षिप्त रिपोर्ट लिखना और भेजना था। इसके लिए उन्हें हर महीने चार सौ डॉलर मिलते थे। चार हजार रुपये से रविंद्र का दैनिक जीवन सुचारू रूप से चल रहा था। फिर भी वह अखबार के दफ्तर में ही सोता था। इससे उसे काम पर आने-जाने में लगने वाला समय और पैसा दोनों बच जाता था। इसी वजह से वह दिन-रात 24 घंटे अखबार पर काम कर पाता था।
'द फैक्ट' पत्रिका के अंक भी तलवार को भेजे जा रहे थे। वाशिंगटन पोस्ट के दिल्ली संवाददाता बिना किसी झंझट के यह काम कर रहे थे। जब वे अंक तलवार के कार्यालय भेजते, तो तलवार उन्हें ले लेते थे।
उन्होंने रविंद्र को पत्र भी लिखे। दिल्ली में इस अखबार से पच्चीस लोग जुड़े हुए थे। तलवार रविंद्र का पत्र उनमें से किसी एक के पते पर भेज देते थे, और वे लोग लिफाफा खोले बिना ही पत्र रविंद्र तक पहुंचा देते थे।
दरअसल, इन पत्रों में कोई गुप्त खबर नहीं थी। लेकिन यह संभावना थी कि 'तथ्यों' से संबंधित किसी भी दस्तावेज को सरकार के भीतर नष्ट कर दिया जाएगा।
वहां जाने के बाद मैंने एक महीने तक तलवारों से लिखा।
मुझे लगता है कि भारतीय अखबार विदेशों में अपने संवाददाता रखते हैं, यह सिर्फ दिखावा है। हम यहां क्या करते हैं? हम टीवी देखते हैं - यहां के अखबार पढ़ते हैं - विदेश विभाग के अधिकारी प्रेस क्लब में दिन में दो बार अखबार बांटते हैं - हम उन्हें ले लेते हैं। हम उनमें अपने देश से संबंधित खबरों को चिह्नित करते हैं, कभी-कभी अपने देशों के राजदूतों के कार्यालयों में जाते हैं, अपनी सरकार और यहां की

सरकार के बीच की खबरों को किसी दूसरी भाषा में अपने भारतीय अखबार को भेजते हैं, जिसे वे भारतीय अखबार में प्रकाशित करना चाहते हैं। हमारे लिए यहां से कोई खबर इकट्ठा करके भेजना बिलकुल असंभव है। भारत में विदेशी अखबारों के संवाददाताओं को वहां पहुंचते ही वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा अपॉइंटमेंट नहीं दिया जाता। उन्हें इस बात में बिलकुल भी दिलचस्पी नहीं होती कि भारतीय अखबारों में क्या प्रकाशित होगा। लेकिने हमारे साथ मामला बिलकुल उलटा है। अगर यहां हमारे बारे में कुछ भी लिखा जाता है, तो वे खुद को भाग्यशाली समझते हैं!
भारत में विदेशी पत्रकारों के पास खूब पैसा है। उन्हें यहां से यही संदेश मिलता है कि चाहे कितना भी पैसा खर्च करो, खबर तो मिलनी ही चाहिए! इसके अलावा, यहाँ उनका एक डॉलर दस रुपये के बराबर है। इसीलिए वे आसानी से किसी भारतीय पत्रकार को दस हज़ार रुपये देकर सबसे महत्वपूर्ण खबर खरीद लेते हैं और उसे सबसे पहले प्रकाशित करने का यश भी बटोर लेते हैं! इसके विपरीत, वहाँ दस रुपये खर्च करके और यहाँ एक डॉलर कमाकर – यानी एक कप कॉफी की कीमत! – वो किसी को क्या खबर देगा? यहाँ खबर बेचने वाले पत्रकारों की कमी नहीं है – लेकिन उनका धंधा दस से बीस हज़ार डॉलर का है! इतने में हमें एक या दो लाख रुपये कहाँ से मिलेंगे? इन सब के बावजूद, भारत में उस खबर का क्या महत्व है? यहां के भारतीय पत्रकार अपनी कार भी नहीं रख सकते। उनके पास शिकागो, लॉस एंजिलस, सिएटल, डलास जाने के लिए भी पैसे नहीं हैं। हालाँकि, मुझे यहां जो वेतन मिलता है, वह वहाँ के प्रधान संपादक के वेतन से दोगुना है, फिर भी यहाँ किसी इस्पात कारखाने के मजदूर के वेतन से कम है। उन्हें हर महीने मेरी तनख्वाह यहां भेजने के लिए रिज़र्व बैंक से अनुमति लेनी पड़ती है – अगर वे इसमें देरी करते हैं, तो मेरे लिए यहाँ घर का किराया देना भी मुश्किल हो जाता है!...'
एक अन्य पत्र में उन्होंने लिखा:
मैं आपको अपने दिल की बात बताने के लिए लिख रहा हूँ। लेकिन मुझे बहुत खेद है कि मैं आपकी पत्रिका के लिए कुछ नहीं लिख सकता। आप मेरे पत्रों के किसी भी हिस्से को थोड़ा-बहुत बदलकर अपने अखबार में इस्तेमाल कर सकते हैं। आप चाहें तो हमारे अमेरिकी संवाददाता या किसी अमेरिकी अखबार का नोट भी जोड़ सकते हैं। इंडियन वॉइस के पाठकों को मेरा नाम पता नहीं चलना चाहिए, बस इतना ही!...
वहाँ जाने के दो महीने बाद उसका एक पत्र आया। उसमें लिखा था,
वाशिंगटन के पास माउंट वर्नोन नाम का एक गाँव है। जॉर्ज वाशिंगटन फिलाडेल्फिया से आकर राष्ट्रपति पद छोड़ने के बाद जिस घर और खेत में रहे थे, वह यहीं पर है। मैं वहाँ जा चुका हूँ। उनका घर, अस्तबल, घोड़ागाड़ियाँ, रसोईघर और घर - सब कुछ उसी रूप में संरक्षित है। मैं वहाँ की कुछ तस्वीरें अलग से डाक से भेज रहा हूँ।
—यहाँ मैं आपको एक ऐसी बात बताना चाहता हूँ जिसने मुझे झकझोर दिया। हालाँकि हमने जॉर्ज वाशिंगटन के बारे में बहुत कुछ लिखा है, फिर भी हमें उनकी जीवनी के एक पहलू पर बार-बार ध्यान देना चाहिए और अन्य पहलुओं की ओर भी ध्यान दिलाना चाहिए। यदि वाशिंगटन ने डेलावेयर युद्ध में पहल न की होती, तो निस्संदेह, वैज्ञानिक सैन्य शिक्षा से वंचित अमेरिकी, अंग्रेजों से हार जाते। अमेरिका की स्वतंत्रता केवल एक सपना बनकर रह जाती।
इस कृतज्ञता को व्यक्त करने के लिए, वहाँ के लोगों ने उन्हें अपना पहला राष्ट्रपति चुना। वह एक ऐसा समय था और ऐसे लोग थे जो गणतंत्रात्मक शासन के महत्व को नहीं जानते थे। इसलिए, अधिकांश लोग वाशिंगटन को राजा बनाना चाहते थे। उन्होंने जयकारे भी लगाए। लेकिन वाशिंगटन ने उन्हें समझाया,

"क्या तुम पागल हो गए हो? क्या तुमने ब्रिटिश राजा को अस्वीकार करके एक और राजा बनाया?"
उनके कुछ दोस्तों ने आवाज उठाई कि उन्हें आजीवन राष्ट्रपति बना दिया जाना चाहिए। इस पर भी उन्होंने चेतावनी दी।
"आप जो कह रहे हैं, उसे आप समझ नहीं रहे हैं। जो भी जीवित रहते हुए उस कुर्सी पर बैठेगा, वह न केवल स्वयं तानाशाह बन जाएगा, बल्कि वह वंशानुगत उत्तराधिकार के माध्यम से यह भी सुनिश्चित करेगा कि वह अपने ही परिवार में सत्ता पर काबिज रहे।"
जैसे ही उनका कार्यकाल समाप्त हुआ, उन्होंने दूसरे राष्ट्रपति के चुनाव की मांग की और कहा,
"अगर नए राष्ट्रपति को मेरी सलाह की जरूरत पड़ी, तो मैं अपने गांव के घर से बाहर आऊंगा, जितनी जरूरत होगी उतनी मदद करूंगा और फिर वापस गांव चला जाऊंगा!"
उसके बाद वह इस घर में रहने लगा।
जब मैं यहाँ आया और यह पढ़ा, तो मैं अवाक रह गया। अमेरिका को उसका पहला राष्ट्रपति मिला, वह कितना महान था!
हमें स्वतंत्र भारत का पहला नेतृत्व पंडितजी के रूप में मिला। शिक्षित और सुसंस्कृत होना तो ठीक है – लेकिन यह भी सच है कि वे अपनी मृत्यु तक सत्ता की कुर्सी पर डटे रहे! सर्वविदित है कि 1962 में चीनी आक्रमण पंडितजी की लापरवाही का परिणाम था। पश्चिम के किसी भी गणतंत्रवादी देश में, ऐसे लापरवाह प्रधानमंत्री को दो घंटे भी कुर्सी पर बैठने की अनुमति नहीं दी जाती! उनके दोबारा चुने जाने का तो सवाल ही नहीं उठता! लेकिन हमारे साथ क्या हुआ? गांवों और बस्तियों में पोस्टर लगाए गए। नारे लगाए गए – जुलूस भी निकाले गए। चीन ने पंडितजी को धमकी दी – चीनी लोग भरोसे के लायक नहीं हैं – इत्यादि। यह सुनिश्चित करने का पूरा ध्यान रखा गया कि जनता का ध्यान गणतंत्र की जिम्मेदारी से हटाकर दूसरी दिशा में भटकाया जाए। कामराज ने योजना बनाई और अपने लक्ष्य को हासिल किया कि प्रधानमंत्री पद के लिए उनसे बड़ा कोई नहीं होना चाहिए – केवल उनकी बेटी ही उनसे बड़ी होनी चाहिए। अब उनकी बेटी भी यह सुनिश्चित करने की कोशिश कर रही है कि उनका सिंहासन उनके बेटे को मिले!
भारत के प्रधानमंत्री ने ऐसा कानून क्यों नहीं बनाया कि वे केवल एक या दो बार ही पद धारण करें? जब भी कोई यह मुद्दा उठाता है, तो यह तर्क दिया जाता है कि "हम ब्रिटिश शैली के गणतंत्र हैं - वहाँ ऐसा कोई कानून नहीं है।" हमें अपने गणतंत्र में कुछ अच्छी अमेरिकी बातों को क्यों नहीं अपनाना चाहिए? पुत्र-पुत्री प्रेम, पुत्र से सब कुछ प्राप्त करना, "आत्मा वै पुत्र नमःस्राव" भारतीय मानसिकता की विशेषता है। हालांकि, पश्चिमी देशों ने स्वयं को इससे काफी हद तक मुक्त कर लिया है - यही कारण है कि यहाँ लोकतांत्रिक शासन की जड़ें मजबूत हुई हैं। हमारे देश में एकमात्र राजनेता जिन्होंने इस मायने में स्वयं को स्वतंत्र रखा, वे थे लाल-बहादुर शास्त्री! लेकिन हमारा दुर्भाग्य - उनका असमय निधन हो गया।
रविंद्र को दृढ़ विश्वास था कि उन्हें भी जॉर्ज वाशिंगटन की जीवनी पढ़नी चाहिए।
दो दिन बाद, तलवार अपने द्वारा भेजी गई तस्वीरों के साथ पहुंचे। एक भारतीय संवाददाता माउंट वर्नन गए और उनके मन में ये विचार आया – रविंद्र ने तलवार का पूरा पत्र 'द फैक्ट' में उसी रूप में प्रकाशित कर दिया। प्रकाशन के चार दिन बाद, दो पुलिस अधिकारी उनके कार्यालय आए। उन्होंने कहा,
"हमें कुछ मामलों की जांच करनी है - कृपया पुलिस स्टेशन आएं।"
इस समय तक, रविंद्र को ऐसे मामलों में कानून के प्रावधानों की काफी जानकारी हो चुकी थी। उनकी पत्रिका में विशेष रुचि रखने वाले वकीलों ने उन्हें संबंधित

कानूनों की मूल पुस्तकें पढ़कर सुनाई थीं और उनकी बारीकियों को भी समझाया था। पुलिस, नगरपालिका और कर विभाग ने सरकार को बिना किसी शुल्क के उनकी ओर से कानूनी कार्रवाई करने के लिए मनाने का प्रयास किया।
रविंद्र ने उत्तर दिया, "अभी भी यही हाल है।"
"आपको मुझसे क्या आपत्ति है? आप मुझे किस संदर्भ में बुला रहे हैं? मुझे सब कुछ लिखित में दीजिए। तब मैं देखूंगा कि क्या करना है।"
पुलिस अधिकारियों का शुरुआती उत्साह फीका पड़ गया। वे रविंद्र के जवाब से नाराज़ हो गए। उन्होंने अखबार दिखाते हुए पूछा,
"आपने इसमें राष्ट्रीय वास्तुकार नेहरूजी के बारे में प्रकाशित किया है, है ना? वह लेख किसने लिखा था?"
"मुझे आपको यह बताने की ज़रूरत नहीं है। हमें भी अपने व्यवसाय के कुछ रहस्य रखने पड़ते हैं, है ना?"
"तो आप जो चाहें झूठ छाप सकते हैं?"
"अगर आप किसी भी पुस्तकालय में जॉर्ज वाशिंगटन की जीवनी पढ़ेंगे, तो आपको सच्चाई समझ आ जाएगी। हमने जो लेख प्रकाशित किया है, उसमें झूठ का एक अंश भी नहीं है। जो लोग नियमित रूप से अखबार पढ़ते हैं, वे समझ जाएंगे कि नेहरू के बारे में उसमें जो कुछ भी लिखा है, वह भी सच है।"
उन दोनों में से एक ने कहा,
"किसी राष्ट्रीय नायक के बारे में ऐसी बात छापना राष्ट्रीय शक्ति पर हमला करने जैसा है। यह राष्ट्रविरोधी कृत्य है। इस मामले में आप पर मुकदमा चलाया जा सकता है। आपको गिरफ्तार भी किया जा सकता है। क्या आप यह जानते हैं?"
"मैं अपने वकीलों को फोन करूंगा—कानून के बारे में आप जो भी बात करना चाहें, उन्हें बता दीजिए," उन्होंने कहा और टाइपराइटर पर कागज रखना शुरू कर दिया।
वे दोनों बिना किसी झिझक के चले गए।
तलवार ने एक अन्य पत्र में लिखा था,
जब आप अपने देश से बाहर आकर इस गणतंत्र देश में रहते हैं और अपने वतन के बारे में सोचते हैं, तो इसके कई पहलू आपके मन में आते हैं। लेकिन विदेश में कितने समय तक रहना चाहिए? यहाँ रहते हुए भी चिंतन किया जा सकता है। अगर आप सचमुच कोई संघर्ष करना चाहते हैं, तो उसे अपनी ही धरती पर लड़ना होगा। कई बार मेरा मन करता है कि मैं यह नौकरी छोड़ दूं और दिल्ली-मुंबई-बैंगलोर-मद्रास जैसे महत्वपूर्ण शहरों में जाकर नई-नई खबरें हासिल करूं।
यहां आने के बाद से मेरा मन अक्सर पति-पत्नी के रिश्ते और उनके बीच के प्रेम के आधार के बारे में सोचता रहता है। बेटे और बेटी के पत्र समय-समय पर आते रहते हैं, हालांकि कोई खुलकर अपनी भावनाएं व्यक्त नहीं करता, फिर भी उन पत्रों से एक बात स्पष्ट हो जाती है। हाल ही में मेरी पत्नी का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा है। वह अपने कॉलेज के दोस्तों, पड़ोसियों और रिश्तेदारों को यह बताकर खुश है कि उसका पति अमेरिका में है और एक प्रतिष्ठित अखबार में उच्च पद पर कार्यरत है। लेकिन यहीं पर मैं इस आध्यात्मिक प्रश्न में उलझ जाता हूँ कि क्या किसी महिला की खुशी के लिए विदेश जाना उचित है!
रविंद्र तलवार की मनोस्थिति का कुछ हद तक अंदाजा लगा सकता था, लेकिन उसे पूरी तरह समझ नहीं पाया। ऐसे समय में उसे खुद पर ही जलन होती थी। जैसे ही उसे एहसास हुआ कि उसकी अपेक्षाएँ और मानसिकता अलग हैं, तलवार अपने रास्ते चली गई। उसने तलवार का आभार व्यक्त किया कि उसने उसे बचा लिया।
लेकिन कभी-कभी उनका मन करता कि वे दफ्तर में सोएँ और होटल में खाना खाएँ। चाहे वे कितने ही बहादुर योद्धा क्यों न हों, उन्हें अपना घर और अपनी दुनिया चाहिए थी – ऐसे विचारों के लिए उनके मन में कोई जगह नहीं थी। इससे

पहले कि ये विचार उनके दिमाग में आकार ले पाता, उप संपादक प्रकाश मौर्य उनके सामने एक नया सवाल रख देते। ऐसे मौकों पर, वे वित्त सचिवालय के वित्त शोधकर्ताओं में से एक, बोधिराज द्वारा गुप्त रूप से भेजे गए दो पन्नों के आँकड़ों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करते और खुद को उस घोटाले से जुड़े किसी मामले को सही ढंग से प्रस्तुत करने का काम सौंप देते। इस तरह, जब उन्हें अपने बारे में सोचने का मौका नहीं मिलता था, तो उन्हें राहत मिलती थी।

■

चुनाव हुए। सड़कों पर, गलियों में, दीवारों पर, पेड़ों के तनों पर, भूसे के टुकड़ों पर, सिनेमाघरों की स्लाइडों पर इंदिरा गांधी की तस्वीरों वाले और नीचे 'गरीबी उन्मूलन' का नारा छपे हुए कितने पोस्टर लगे थे? कोई भी पत्रकार उनकी सही संख्या पता नहीं लगा पाया है। फिर वही सरकार सत्ता में आ गई।
अब उनका आत्मविश्वास और भी बढ़ गया था। जैसे-जैसे उनका अधिकार बढ़ता गया, वैसे-वैसे उनकी बहरापन भी बढ़ती गई। सरकार में इस बात की आशंका भी बढ़ती गई कि असली पीली पत्रिकाएँ क्या कमाल करेंगी।
इसके परिणामस्वरूप, रविंद्र की फिल्म "द फैक्ट" को थोड़ा आराम करने का समय मिल गया।
रविंद्र की हालत बिगड़ती चली गई। बुखार, खांसी या जुकाम जैसे कोई बाहरी लक्षण नहीं थे। उसे सिर्फ कमजोरी और चक्कर आ रहे थे। एक दिन, कुर्सी से उठकर बाथरूम जाते समय वह रास्ते में ही गिर पड़ा। जब उसे होश आया तो प्रकाश उसके सिर पर पानी छिड़क रहा था और फूंक मार रहा था। लक्ष्मी नगर में क्लिनिक चलाने वाले और रविंद्र की पत्रिका में रुचि रखने वाले डॉक्टर चौधरी तुरंत वहां पहुंचे और उसकी हालत देखी। अपने ज्ञान के दो-तीन अन्य डॉक्टरों को उसकी हालत दिखाने और उनसे चर्चा करने के बाद, उन्होंने रविंद्र को बताया,
रवींद्र जी, आप बिना आराम किए काम कर रहे हैं, इसीलिए आप कमजोर हो गए हैं। हम यह भी देखते हैं कि आप कैसे रहते हैं और कितना काम करते हैं। इसके साथ ही, आप पर कई तरह के दबाव और जिम्मेदारियां भी हैं! आपको कम से कम एक महीने के लिए इन सब से दूर कहीं जाकर आराम करना चाहिए। उसके बाद, रहने के लिए एक कमरा बना लें। घर में रहकर लंबे समय तक काम करना ठीक नहीं है।
सैनी ने यह भी कहा,
``आप डॉक्टर की बात ध्यान से सुनिए। इस मामले के दो और अंक तैयार हैं। साथ ही, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के मामले के नोट्स भी तैयार हैं। बीमा कंपनी में हुए घोटाले पर मैं सभी से चर्चा करने के बाद लेख तैयार करूंगी। आपके आने तक मैं कहीं नहीं जाऊँगी। एक महीने तक नहीं – आप तीन सप्ताह के लिए बाहर जाइए। तब तक मैं आपके लिए यहाँ एक छोटा सा घर ढूंढ लूंगी। हम दोपहर में थोड़ा आराम भी कर सकते हैं। अगर हमें बच्चा हुआ, तो आपको भी अच्छा खाना मिलेगा। हमें दोपहर का खाना भी मिलेगा। अब तो हमारा साप्ताहिक काम इतना बढ़ गया है!"
लेकिन सवाल यह था कि कहाँ जाना है।
सैनी ने कहा,
"मेरा एक दोस्त मसूरी में रहता है। वह हमारे 'फैक्ट' पत्रिका का पाठक है। उससे बात करके व्यवस्था करना आसान है।"
रविंद्र भी अपना मन बदलना चाहता था। पर कहाँ जाए, यह तय नहीं था। उसे लगा कि मसूरी में वह ऊब जाएगा, जहाँ वह किसी को नहीं जानता था, इसलिए उसने यह विचार छोड़ दिया। फिर अचानक उसके मन में आया, क्यों न हेमंत के सेवाश्रम में जाकर देख लूं? अन्नाइया, शंकरमूर्ति, शरभन्ना, चंद्रशेखर - सब लोग अब वहीं हैं, उसने कहा। हेमंत के पत्र समय-समय पर आते रहते थे - पर रविंद्र समय की

कमी के कारण जवाब नहीं देता था। अगर वह वहाँ जाता, तो सबके साथ दो शानदार सप्ताह बिताता! इस विचार मात्र से ही वह उत्साहित हो गया। सैनी ने तुरंत बैंगलोर के लिए स्लीपर ट्रेन में आरक्षण करा लिया।

■

२५

चन्नरायपट्टन और टिप्पुर के बीच सड़क से आधा मील दूर बिदारली गाँव स्थित था। बिदारली, हलुकेरे, जोगीबेट्टा अतनी, शिद्दलहल्ली आदि जाने वाले यात्रियों को बिदारली गेट पर उतरना पड़ता था। यही कारण था कि चाहे कितनी भी तेज़ एक्सप्रेस बसें हों, वे वहाँ रुकती ही थीं। इसी वजह से वहाँ चार छोटी दुकानें और तीन होटल बने हुए थे। हाल ही में वहाँ एक हस्तनिर्मित भट्टी की दुकान भी खोली गई है। वेंकटेश्वर वाइन शॉप भी शुरू हो गई है। बिदारली में पंचक्रोशी में साप्ताहिक बाजार लगता था। लेकिन हाल ही में, आने-जाने वालों की सुविधा के लिए, पिछले चार वर्षों से हर सोमवार को बिदारली गेट पर भी बाजार लगने लगा है। इसी वजह से इस क्षेत्र का महत्व और भी बढ़ गया है। बाजार के दिनों में सुविधा के लिए यहाँ दो कुएँ खुदवाए गए हैं और उनमें हैंडपंप भी लगाए गए हैं।
हेमंत विकलांग बच्चों के लिए एक स्कूल खोलने का सपना लेकर कॉलेज आया था। इसके बारे में सब कुछ सुनने के बाद, अन्नय्या और अन्य ब्रह्मचारियों ने इसमें कोई खास दिलचस्पी नहीं दिखाई। उन्होंने निराशा व्यक्त करते हुए कहा, "हमारे पास न तो धन है, न ही दान देने की इच्छा है, विकलांग बच्चों के लिए कौन दान देगा?"
लेकिन हेमंत ने कहा,
"ऐसा नहीं है। अगर यह स्पष्ट हो जाए कि हमने जो पैसा दिया है उसका सही इस्तेमाल हो रहा है, तो आज भी कोई भारतीय दान देने के लिए आगे आएगा। मेरे पास भी बीस हजार रुपये हैं। लेकिन उन्हें खर्च नहीं करना चाहिए। बिना किसी सहायता के शुरू हुए सेवा संगठन ज़्यादा रचनात्मक काम करते हैं," जे. पी. ने कहा। "अन्नाय्या, इस मामले में आपकी बात अनमोल है। आप शुरुआत में मदद कीजिए। मैं काम करूंगा। लेकिन आपका मार्गदर्शन ज़रूरी है।"
हेमंत के बार-बार आग्रह करने पर अन्नाय्या भी मदद करने के लिए राजी हो गए। बाज़ार से आधा फर्लांग दूर, बिदरली के उद्दुरिया समुदाय की तीस से पैंतीस गुंठा बंजर भूमि पड़ी थी। एक मुट्ठी खोदने पर भी उसमें से सफेद-भूरी मिट्टी ही निकलती थी। इसलिए वहाँ कुछ भी उगाना संभव नहीं था, लेकिन अन्नाय्या ने उद्दुरिया समुदाय से मुलाकात की और उनसे अनुरोध किया कि वे उस भूमि को अपने धार्मिक कार्यों के लिए दान कर दें।
उद्दुरया ने प्रश्न पूछा,
"क्या तुमने सौद्रा गौड़ा द्वारा दी गई भूमि को आपस में नहीं बाँटा था?"
अन्नाय्या ने उद्दुरया को कॉलेज की पूरी कहानी सुनाई।
उद्दुरिया ने तुरंत ज़मीन देने की कोई इच्छा नहीं दिखाई। चार-छह भूखंड बनवाने और दो-चार प्रतिष्ठित लोगों से बात करने के बाद ही उन्होंने ज़मीन देने की इच्छा जताई। सबसे पहले उन्होंने 'अनाथ सेवाश्रम' नाम से एक संस्था पंजीकृत करवाई और बाद में उसी संस्था के नाम से दान पत्र तैयार करवाया। बिदरली गांव के लोग भी इस बात को लेकर उत्सुक थे कि उनके गांव में लंगड़ों के लिए एक स्कूल शुरू किया जा रहा है। हेमंत, अन्नाइया और अन्य लोग उसी गांव में रुके और किसी के घर भोजन करते समय उन्होंने गांव वालों को ज़मीन, अनाज और श्रम दान के बारे में बताया और वहां की ज़मीन को बराबर करने का काम शुरू किया। शिंगल, नारियल के पत्ते, लकड़ी और बांस दान में लेकर उन्होंने एक झोपड़ी बनाई और उस पर छत डाली। गांव के हर धनी व्यक्ति ने एक दिन का खर्च उठाने की इच्छा

जताई। यानी पांच औंस बेसन, आधा औंस मसूर दाल, मुट्ठी भर इमेचे, मुट्ठी भर हरा धनिया आदि।
इसी दौरान शिद्दलहल्ली के पुत्तसिंगरप्पा का निधन हो गया। अन्नय्या ने उनके पुत्र से मुलाकात की और आश्रम के लिए दान में एक दुधारू गाय प्राप्त की। उसी स्थान के एक कोने में एक विद्यालय भी बनवाया गया।
पिछले पाँच वर्षों से बिदारली गेट पर एक लंगड़ा आदमी रहता था। वह एक पैर से ही पैदा हुआ था। संतुलन बनाने के लिए वह दोनों हाथों को ज़मीन के समानांतर फैलाकर वहाँ आने वाली हर बस में चढ़ जाता और बड़ी विनम्रता से विनती करता, "अम्मा-अप्पा-लंगड़े को दान दे दीजिए।" वहाँ के सभी यात्री उसकी मौजूदगी के आदी हो चुके थे। वे उसे पाँच-दस पैसे देने के भी आदी हो गए थे। हर सोमवार को बाजार के दिन, सभी दुकानदार खुशी-खुशी उसे दस पैसे दे देते थे। वहां आने वाले गाँव वाले भी इस लगभग पच्चीस वर्षीय लंगड़े आदमी को कुछ न कुछ दे देते थे। एक पैर, एक छोटे हाथ और एक अच्छे हाथ के सहारे तीन टांगों वाले जानवर की तरह चलने वाले इस लंगड़े आदमी पर सभी को दया आती थी। वह लोगों को बुलाने के लिए आधुनिक फिल्मों के भक्ति गीत भी गाता था।
वह सुबह होटल के ठीक सामने वाले हिस्से में इडली और सांभर खाता था, दोपहर में उपमा और दही-चावल खाता था और शाम को चावल की थाली। रात को वह वहीं होटल के दरवाजे पर कंबल ओढ़कर आराम से सो जाता था।
एक दिन, उसे देखते हुए, होन्नाटी के मन में यह विचार आया, "हमारे विकलांग सेवा केंद्र में आने वाला पहला छात्र यही क्यों नहीं होना चाहिए?"
वह तुरंत लांगड़ा से मिला और उससे पूछा कि क्या वह उसके संगठन के बारे में कुछ जानता है। लांगड़ा को सुनकर ही सब कुछ पता था। हेमंत ने उसे बताया, फिर आप हमारे संस्थान में आइए। हम आपको वहाँ नौकरी दिलवा देंगे। हम आपको काम करना भी सिखाएंगे। आपको कम से कम आठ रुपये प्रतिदिन मिलेंगे। हम आपको पढ़ना-लिखना भी सिखाएंगे। अगर आप इसमें अच्छे हैं, तो हम आपको एस.एस.एल.सी. से बी.ए. तक की शिक्षा देंगे – आप बताइए।
"मुझे यह मार्ग क्यों सीखना चाहिए? क्या मैं बिगड़ा हुआ बच्चा बन गया हूँ या कुछ और? मैं नहीं सीखना चाहता—" उसने बिना एक पल भी हिचकिचाए कहा।
"ऐसा कोई शास्त्र नहीं है जो कहता हो कि सड़कों का संचालन केवल कोष्टी जाति के लोग ही करें। क्या गौड़ जाति के लोगों ने भी गेट पर होटल नहीं खोल दिए? और तुम भीख मांगते हो - क्या तुम भिखारियों की जाति में पैदा हुए हो? तुम किस जाति से हो?"
इस सवाल ने उन्हें उलझन में डाल दिया। इसके बाद भी, होन्नाटी यही कहते रहे कि ऐसा नहीं है कि किसी खास जाति के लोगों को ही कोई खास काम करना चाहिए – जाति और जातिवाद बहुत पुरानी बातें हैं – इत्यादि। अगले दिन उन्होंने कहा,
``भीख मांगकर भोजन प्राप्त करना मनुष्य के लिए उचित नहीं है – प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सामर्थ्य के अनुसार काम करके अपना भोजन प्राप्त करना चाहिए –"
"अगर भगवान चाहते कि मैं बीज खाऊं, तो वे मुझे दो पैर, दो हाथ और एक मजबूत पीठ देते—"
क्या जिनके हाथ-पैर हैं उन्हें सम्मान से भोजन करना चाहिए और दूसरों को नहीं? अरे, जो भी काम कर सको करो। लकड़ी काटने के लिए कुल्हाड़ी मत उठाओ या ज़मीन खोदने के लिए फावड़ा मत चलाओ। बूढ़े को जाने दो – चलो, हम तुम्हें पढ़ना-लिखना सिखा देंगे। वह तुम्हारे हाथ-पैरों को आड़े नहीं आने देगा, है ना? परीक्षा में अच्छे अंक लाओ – तुम्हें सरकारी नौकरी मिल जाएगी, क्यों नहीं, देखो! अरे, मुझे मुफ्त में जीने दो – मैं तुम्हें खिलाऊंगा –"
लेकिन लंगड़े आदमी को इनमें से कुछ भी समझ नहीं आया।

अगले दिन जब होन्नाटी वहां गया, तो उसने एक लंगड़े आदमी को बस में भीख मांगते हुए पाया। वहां मौजूद एक दुकानदार मल्लाप्पा ने पूछा,
"तुम लंगड़े व्यक्ति के लिए भीख मत मांगो, हम उन्हें चलना सिखाते हैं, इसलिए वे चल रहे हैं, है ना?"
``हाँ–"
"वह आठ रुपये के लिए पूरे दिन काम करने को क्यों तैयार होगा? क्या आपको पता है कि वह यहां हर दिन कितना कमाता है?"
कितना?
उसे बीस से ज़्यादा मिलते हैं! बाज़ार के दिनों में तो उसे आसानी से पचास रुपये मिल जाते हैं। वो यहां सभी दुकानदारों को एक ही तरह का चिल्लर बेचता है - उसे हर रुपये पर पांच पैसे का मुनाफ़ा होता है। क्या ये कोई नई शराब की दुकान है? उसने उसे पांच हज़ार रुपये की मूल राशि दी है! उसने हर महीने सौ रुपये पर दो रुपये देने का फ़ैसला किया है! कितना हुआ होगा? खुद हिसाब लगा लो! ये तो दिमाग़ी बात नहीं है, ये तो पागलपन है! उसने इस अपोहिज को बचाने का ठान लिया था - है ना?
होन्नाटी यह सब सुनकर हैरान रह गया। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि उसका विचार इतना व्यर्थ होगा। उस लंगड़े आदमी से मिलने के बाद तो उसकी इस बारे में बात करने की सारी इच्छा ही खत्म हो गई। ज़्यादातर विकलांग बच्चे भीख मांगते हैं। कुछ जगहों पर तो दादाजी ऐसे विकलांग बच्चों से भीख मंगवाते हैं, उन्हें पेट भर खाना खिलाते हैं और खुद अमीर बन जाते हैं। जब उन्हें खिलाने का इतना आसान तरीका है तो भला कौन मेहनत करना चाहेगा? अन्नाय्या के कॉलेज जाने के बाद से वह इस बारे में किसी से बात भी नहीं कर पाता।
पूरी रात सोचने के बाद, सुबह उसे एक अलग रास्ता दिखाई दिया। चाहे कितनी भी परेशानी हो, मैंने उसके मन में यह बात पक्की कर दी थी कि भीख मांगने से बेहतर है पैसा कमाना – इसमें गर्व की बात थी, और मैं उसे तब तक नहीं रोकूंगा जब तक मैं उसे मना न लूं। सुबह वह बस स्टैंड गया और लंगड़े आदमी से कहा,
आज हमारे आश्रम में रात्रिभोज के लिए आइए, आज हमारे गुरुजी का त्योहार है।
दोपहर में, जब लंगड़ा आदमी बिच्छू का पंजा लेकर आया, तो होन्नाटी ने उसे खाना खिलाया। पहले उसने उसे जितना हो सके चने की दाल की खीर खिलाई। फिर उसने उसे पका हुआ बेसन और गाढ़ा दही खिलाया। लंगड़ा आदमी, जो हर दिन होटल में खाना खाता था, उसे यह खाना बहुत स्वादिष्ट लगा! तब होन्नाटी ने उससे कहा,
हर रात यहाँ खाना खाने आओ। यहाँ दही भी खूब मिलता है। रात यहीं रुको और सुबह उठते ही बस स्टैंड चले जाना! यहाँ गर्मी है। होटल के दरवाजे पर ठंडी हवा में क्यों सो रहे हो?
लंगड़े आदमी को यह बात तुरंत समझ आ गई। इससे उसके खाने पर पैसे की बचत हुई और उसे सोने के लिए एक गर्म जगह भी मिल गई!
लंगड़े व्यक्ति की माँ का निधन तब हो गया था जब वह बहुत छोटा था। आठ वर्ष की आयु में उसके पिता ने उसे भीख माँगना सिखाया – उसके बाद उसे पेट भरने के लिए कहीं न कहीं भीख मांगनी पड़ी और उसे हलियार के बस स्टैंड पर छोड़ दिया। लंगड़े व्यक्ति ने वहाँ दो वर्ष और चिक्का-नायकानहल्ली में तीन वर्ष बिताए। उसके बाद, बिदारल्ली गेट पर कोई भिखारी न देखकर, उसने स्थायी रूप से यही स्थान चुन लिया।
हेमंत ने उससे उसका नाम पूछा। उसने उत्तर दिया,
लंगड़ा–"
जो चलने में कठिनाई महसूस करता है, वह लंगड़ा है। भला यह तुम्हारा नाम कैसे हो सकता है? क्या तुम्हारा कोई और नाम नहीं है?

नहीं।
"क्या आपको नहीं लगता कि आपका कोई नाम होना चाहिए? पुट्टप्पा, नंजुंदप्पा, चंद्रप्पा, कलप्पा-"
शरमाते हुए मुस्कुराते हुए उसने कहा,
मुझे अपने नाम का क्यों करना चाहिए?
होन्नाटी ने कहा।
"दूसरों को जो कहना है कहने दो—मैं तुम्हें लंगड़ा नहीं कहूंगा। मैं तुम्हें क्या कहूं? अगर तुमने कुछ नहीं कहा, तो मैं तुम्हें राजप्पा कहूंगा—"
क्या मैं 'राजप्पा' कहने के लिए अपने हाथों में सोने की अंगूठियां पहनता हूँ?
"यह राजप्पा कौन है?"
``करिगट्टा के पाटिल राजप्पा... वह हमेशा मुझे पावली देते हैं!"
यह बहुत अच्छा होगा!
तो!–"
अच्छे लोगों के नाम हमेशा याद रखना। अब से तुम राजप्पा हो! अगर मैं तुम्हें राजप्पा कहूँ, तो तुम कहोगे ओ–"
इस तरह विकलांग सेवा ग्राम में उन्हें राजप्पा कहकर पुकारा जाने लगा। बस स्टैंड पर अपाहिज और आश्रम में राजप्पा। होन्नाटी हर शाम राजप्पा को मुंबई-दिल्ली-बैंगलोर की अलग-अलग कहानियां सुनाने लगे और उन्हें रात में भगवान की स्तुति करना भी सिखाने लगे। उन्होंने कॉलेज से एक पुराना हारमोनियम लिया और राजप्पा को उसकी धुन पर गाने सिखाने लगे। लेकिन उसके बाद उन्होंने राजप्पा को कभी भीख मांगने से मना नहीं किया।
लेकिन एक दिन दोपहर में राजप्पा आश्रम लौटे और बोले,
मैं अब वहां नहीं जाऊंगी!
``का, रे?"
मुझे कुछ उपयोगी बात बताओ-"
लेकिन क्यों?
मुझे शर्म आ रही है—"
फिर एक दिन, होन्नाटी की मुलाकात करिगट्टा के राजप्पा पाटिल से हुई। उन्हें अपनी बुनियादी जानकारी देने के बाद, उन्होंने उनसे अनुरोध किया,
"आपको बिदारली गेट तक जाना चाहिए और हमारे आश्रम को देखना चाहिए, फिर आगे बढ़ें-"
उसी सप्ताह राजप्पा पाटिल आश्रम में दर्शन करने आए। लंगड़े आदमी को देखते ही उन्होंने पूछताछ की,
"क्यों, रे? क्या तुम्हें हाल ही में बस स्टैंड पर नहीं देखा गया?"
उसने जवाब दिया,
इसके बाद मैं कभी भीख नहीं मांगूंगा!
यह सुनकर वे चौंक गए।
होन्नाटी पाटिल को अपने कमरे में ले गया, उसे सब कुछ बताया और कहा,
"आगे पांच वर्षों में, मैं उसे प्राथमिक विद्यालय (एस.एस.एल.सी.) तक तैयार कर दूँगा। फिर हम उसके लिए नौकरी का इंतजाम करेंगे। तब तक, अच्छा होगा कि आप उसके खाने-पीने और हर साल दो जोड़ी कपड़ों का इंतजाम कर दें। आप समय-समय पर आकर देख सकते हैं कि आपके खर्चे सही ढंग से इस्तेमाल हो रहे हैं या नहीं। पहले एक साल की जिम्मेदारी लें। उसके बाद, अगर आप संतुष्ट हों, तो अगले साल के खर्चों का ध्यान रखें। और अगर आपको ऐसे और भी विकलांग बच्चे भीख मांगते दिखें, तो मुझे बताएँ।"
राजप्पा पाटिल भी इस बात पर सहमत हो गए। उन्होंने प्रत्येक फसल के लिए तीन बोरी बेसन, आधी बोरी दालें, मुट्ठी भर मिर्च और पचास रुपये देने पर सहमति

जताई।
पहले वर्ष में आठ दिव्यांग बच्चों को भर्ती किया गया। वे प्रत्येक दिव्यांग बच्चे के खर्चों को वहन करने के लिए दानदाता खोजने में सफल रहे। हालांकि होन्नाटी को इस क्षेत्र में कोई अनुभव नहीं था, फिर भी वे अपने काम के प्रति समर्पित थे।
वह स्वयं सुबह जल्दी उठकर पानी गर्म करते थे। नहाते समय, कपड़े पहनाते समय और स्वयं कुछ भी करने में असमर्थ विकलांगों को भोजन कराते समय, वे उनमें यह भावना जगाने का प्रयास करते थे कि शारीरिक सीमाओं के बावजूद उन्हें कुछ न कुछ करना चाहिए।
अन्नाइया, जो पहले कभी-कभार ही वहाँ आते थे, जल्द ही वहीं बस गए। उनके बाद सोमशेखराचार्य और शंकरमूर्ति भी वहाँ आए। यह बात सबकी नज़र में आ गई थी कि यहाँ काम करने के लिए एक अलग तरह की शिक्षा की ज़रूरत है। सोमशेखराचार्य और शंकरमूर्ति ने सिकंदराबाद जाकर उस तरह की शिक्षा प्राप्त करने और फिर उसे दूसरों को देने का फैसला किया।
तीसरे वर्ष में विद्यार्थियों की संख्या बढ़कर अठारह हो गई। संस्था की आर्थिक स्थिति पूरी तरह से सुधर नहीं पाई थी। सभी दानदाता तय समय पर अनाज और धन दान नहीं कर रहे थे। कुछ ने शुरू में उत्साहपूर्वक सहमति दी, लेकिन जब उन्होंने वास्तव में दान दिया, तो वे हिचकिचा रहे थे। हालांकि, होन्नाटी और अन्नाय्या ने ठान लिया था कि वे किसी भी परिस्थिति में सरकार से कोई सब्सिडी नहीं लेंगे।
``अगर कोई लाभ है, तो संभावना है कि स्वार्थी लोग किसी न किसी तरह का दबाव बनाकर संगठन में प्रवेश कर जाएंगे और सरकार भी इसमें भूमिका निभाएगी। यहां, अगर हम विकलांगों की सेवा छोड़ देते हैं, तो और कोई विकल्प नहीं बचता। तो सरकारी मदद लेने में क्या समस्या है?" शंकरमूर्ति ने यह मुद्दा उठाया। लेकिन अन्नाया भी सरकार के नाम से ही घबरा गए थे। इसलिए उन्होंने कहा,
दान-पुण्य और धर्म जैसे कार्य जनता को स्वयं करने चाहिए। इसके लिए हमें जनता के बीच जाकर उन्हें दान-पुण्य करने के लिए प्रेरित करना चाहिए। यह सरकार का काम नहीं होना चाहिए। इस फसल के मौसम में, आइए हम स्वयं बैलगाड़ी लेकर आसपास के गांवों में घूमें और अनाज एकत्र करें।
योजना के अनुसार, अन्नय्या हेमंत के साथ पंचक्रोशी के उन गांवों में भी गए जहाँ फसल कटाई हो रही थी। बेहद साधारण परिस्थितियों वाले किसानों ने एक सौंफ से लेकर दो से चार पाली तक अनाज दान किया। अगले वर्ष आराम से जीवन यापन के लिए पर्याप्त अनाज एकत्र हो गया। इसी दौरान, विकलांग महाविद्यालय में तेरह और विकलांग छात्रों को दाखिला दिया गया।
अन्नाया और अन्य ब्रह्मचारियों को इस जर्जर विद्याश्रम के माध्यम से जीवन का अर्थ पुनः मिलने लगा। विद्याश्रम का स्वरूप पूरी तरह बदल जाने के बाद, उन्हें वहां काम करने में कोई संतोष नहीं मिला।
एक बार ज़ावेरी ने यह बात सभी शिक्षकों के सामने कह दी थी।
हमें वफादारी चाहिए, मुफ्त शिक्षा नहीं। अध्यापन भी एक पेशा है और इसे बेचने में कोई बुराई नहीं है। अगर हम एक तरफ लोहा दान करने लगें तो लोहे का कारोबार कैसे चलेगा? हमें अत्याधुनिक शिक्षा, प्रौद्योगिकी, प्रयोगशालाएं और एक अच्छी लाइब्रेरी चाहिए – आपको इन चुनौतियों का सामना करना ही होगा।
पाटिल ने भी यही बात कही थी। ब्रह्मचारियों को दृढ़ विश्वास था कि इस विद्यालय में उनके और उनके मूल्यों के लिए कोई स्थान नहीं है। बैठक में यह भी निर्णय लिया गया कि विद्यालय के प्रधानाचार्य के पद पर आधुनिक सोच वाले और एमए, एम.एड. या पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त व्यक्ति को नियुक्त किया जाना चाहिए।
अन्नाय्या के सामने एक बड़ा सवाल था: जब ऐसा प्रधानाचार्य आएगा तो यहाँ उसकी क्या भूमिका होगी?

इसीलिए अन्नाइया, सोमशेखराचार्य और शंकरशास्त्री होन्नाट्टी आश्रम में आए थे, जिसकी स्थापना लगभग इसी समय हुई थी। लेकिन शरभन्ना और नारायणप्पा के विचार अलग थे। वे इस बात से नाराज़ थे कि समाज के उच्च वर्ग ने गाँव की संपत्ति से चलने वाले एक आदर्श विद्यालय को किस प्रकार व्यवस्थित रूप से लूटा और बर्बाद किया था। जब विद्यालय द्वारा गाँव में सुधार और शिक्षा प्रदान करने के विचार को विफल कर दिया गया, तो उनका स्वभाव बदल गया। उन्हें लगने लगा कि जिस व्यवस्था ने यह धंधा रचा है, उसे ही धंधा रचकर नष्ट कर देना चाहिए। उन्हें लगने लगा कि ऐसी व्यवस्था से आने वाले बच्चों को शिक्षा देना पाप है, और उन्होंने कक्षा में आपस में बात करते हुए पढ़ाना बंद कर दिया। वे कक्षा में जाकर बच्चों से बहुत कठिन प्रश्न पूछते और यदि बच्चे उत्तर नहीं देते, तो वे उन पर क्रोधित हो जाते। इस पर बच्चों ने भी यही कहना शुरू कर दिया।
"आप हमसे नाराज़ क्यों हैं? आपको तो यहाँ हमें वो सिखाने के लिए नियुक्त किया गया था जो हम नहीं जानते!"
जैसे ही इस घटना की खबर अन्नाय्या के कानों तक पहुंची, उसने उन दोनों को अपने कमरे में बुलाया। उसने समझाया,
हमें भी यह व्यवस्था पसंद नहीं है। लेकिन अपना गुस्सा बच्चों पर क्यों निकालें? बच्चे तो बच्चे ही होते हैं, चाहे वे कोई भी हों। क्रोध से कुछ भी हासिल नहीं होगा। नफ़रत से कोई भला नहीं होगा...
लेकिन इसका उन दोनों पर कोई असर नहीं हुआ।
वहाँ के कुछ छात्रों ने भी अपने माता-पिता को इस बारे में सूचित किया था। माता-पिता ने पाटिल के वकीलों को टेलीग्राम भेजा। उन्होंने पाटिल को बुलाया। राष्ट्रपति पाटिल कॉलेज आए और उन दोनों से पूछताछ की। तब उन्होंने जवाब दिया,
"तुम वही लुटेरे हो जिन्होंने दिन दहाड़े हमारे स्कूल को लूटा!..."
राष्ट्रपति ने चेतावनी भी दी
हमारे पास आपको बर्खास्त करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होगा।
"क्या आप हमें, जो बिना वेतन के काम करते हैं, नौकरी से निकालने से डरते हैं?"
उसी दिन, वे दोनों अन्नाया से मिले और कहा,
"हम इस स्कूल में नहीं रह सकते। हम जा रहे हैं। हम तब तक नहीं रुकेंगे जब तक हम किसी भी तरह से इस स्कूल पर दोबारा कब्ज़ा नहीं कर लेते!" और वे चले गए।
सोमशेखराचार्य और शंकरमूर्ति सिकंदराबाद गए और वहां से आवश्यक शिक्षा लेकर विकलांग बच्चों को पढ़ाना शुरू किया। लेकिन फिर उन्हें एहसास हुआ कि वे उतना काम नहीं कर सकते जितना होन्नाट्टी कर रहे थे। उन्हें लगा कि वे यहां अपना योगदान तो दे सकते हैं, लेकिन उनकी पूरी क्षमता का उपयोग नहीं हो रहा था। अगर हम किसी छोटे से गांव या वन बस्ती में एक स्कूल और एक सेवा केंद्र स्थापित कर दें, तो हमें संतोष होगा कि हमने कुछ अच्छा काम किया है। अन्नाया ने भी उनके इस विचार का समर्थन किया। उन्होंने यह भी कहा कि कोडगु में रहने वाली वन-शहरी बस्तियों में भी ऐसे काम की जरूरत है। वहां जाने का फैसला करके वे दोनों आवश्यक प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए सिकंदराबाद वापस लौट आए।

■

लेकिन होन्नाटी एक घंटे भी चैन से नहीं बैठ सकते थे। उनका दिन सुबह 4:30 बजे शुरू होता था। खुद को तैयार करने के बाद, वे विकलांगों को उनकी सुबह की दिनचर्या में मदद करते, उनकी बुनियादी साफ-सफाई करते, उन्हें नहलाते और फिर उनके लिए प्रार्थना करते। उसके बाद, वे सभी को छाछ का एक कटोरा देते और उन्हें कुछ घंटों के लिए अपनी पीठ पर बिठाते, टोकरी बुनवाते – जो भी काम वे कर सकते थे। नाश्ते में नाचनी की रोटी होती, थोड़ी-बहुत शिक्षा दी जाती और

दोपहर के भोजन में नाचनी की उकाड़ी होती। इसके साथ छाछ और चावल भी दिए जाते थे। फिर पढ़ाई, फिर काम। पूरे रसोईघर की देखरेख के लिए एक आदमी नियुक्त किया गया था। होन्नाटी हर चीज पर नजर रखते थे। कभी-कभी, जरूरत पड़ने पर, वे खुद भी काम करते थे।
अन्नाइया संब पर नजर रख रहा था। हाल ही में वह खुद भी पहले की तरह काम नहीं कर पा रहा था। भले ही कोई और बीमारी न हो, बुढ़ापा ही इसका कारण था। होन्नाटी ने भी उसे प्यार से यही चेतावनी दी थी।
"कहीं मत जाओ – यहीं रहो और हर जगह ध्यान दो–"
खबर आई थी कि शरभन्ना और नारायणप्पा आंध्र प्रदेश चले गए हैं और नक्सलवादी बन गए हैं। यह भी कहा जा रहा था कि अब वे हथियार चलाने, आग लगाने और विस्फोट करने में माहिर हो गए हैं। यह भी समझा गया कि अब उनका आंदोलन उन लोगों के बीच है जो इस सिद्धांत में विश्वास रखते हैं कि 'इस देश में हिंसा के बिना बदलाव संभव नहीं है'। उनकी यह भावना कि हम तब तक चुप नहीं बैठेंगे जब तक स्कूल और छात्रावास पर बम से हमला न हो जाए - अन्नाय्या तक भी पहुँच गई थी। यह सुनकर अन्नाय्या सोचने लगे। इस दिव्यांग कल्याण गृह को भी लोगों की ज़रूरत है - विद्रोह के विचार लेकर यहाँ से चले जाने के बजाय यहाँ काम करने में क्या समस्या थी?
फसल कटाई के दिनों में, होन्नाट्टी स्वयं पंचक्रोशी के चारों ओर अनाज इकट्ठा करने के लिए यात्रा किया करते थे। इस दौरान, उन्हें अपने आसपास के लोगों की नई समस्याओं का एहसास हुआ। कभी-कभी वे सोचते थे, मैं अपने रक्त में निहित उदारता का सहारा लेकर धन और अनाज प्राप्त करता हूँ और अपना दिव्यांग सेवा केंद्र चलाता हूँ - लेकिन वास्तव में मैं इन लोगों के लिए क्या करता हूँ? उन्होंने यह भावना जे.पी.आर. को एक पत्र में व्यक्त की थी। उसी पत्र में उन्होंने लिखा था,
"मैं चाहता हूं कि आप सभी यहां आएं और इस संगठन को देखें जो आपकी प्रेरणा से संचालित होता है।"
लगभग एक महीने बाद, जे.पी. की ओर से एक पत्र आया।
मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपने कम समय में संगठन में इतनी प्रगति की है। मैं अब नवनिर्माण आंदोलन के काम में पूरी तरह से लीन हूँ। मेरी सेहत भी कुछ ठीक नहीं है। आप जैसे गाँवों से काम करने वालों को एक बात नहीं भूलनी चाहिए। आपकी सेवा किसी एक काम तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि पूरे गाँव के विकास का दृष्टिकोण होना चाहिए। चाहे आप आश्रम, स्कूल, अस्पताल, व्यवसाय – कुछ भी शुरू करें, यह सुनिश्चित करें कि उस क्षेत्र के ग्रामीण उसमें भाग लें। उनमें जागरूकता पैदा करना और भी महत्वपूर्ण है। उन्हें यह समझना चाहिए कि उनका असली हित क्या है – यही आपका लक्ष्य भी होना चाहिए। आपको अपने काम की संतुष्टि इस तरह नहीं जतानी चाहिए कि "मैं इतना तो कर ही रहा हूँ! मुझे और क्या चाहिए!" आपका आश्रम आपके पूरे क्षेत्र के उत्थान का आरंभ होना चाहिए।
होन्नाटी ने जे.पी. का पत्र अन्नाय्या को दिखाया। विवेकानंद विद्याशाला के पीछे अन्नाय्या का मूल विचार भी यही था। तो फिर हमसे गलती कहां हुई? उन्होंने होन्नाटी से कहा,
"आज भी ऐसे लोग ज़रूर होंगे जो आदर्शों के सपने देखते हुए जीते हैं। चलिए कुछ और दिलचस्प लोगों को साथ लेते हैं। मैं सेवाश्रम के सभी कामों की देखरेख करूंगा। आप भी, जैसा कि जे. पी. ने कहा है, अन्य कार्यों पर अधिक ध्यान दें। जब भी मुझे समय मिलेगा, मैं आपके साथ गांवों का दौरा भी करूंगा।"
सेवाश्रम के कार्यों में लीन हेमंत को ऐसा लगा मानो उनका पुनर्जन्म हो गया हो। पाप का वह बोध, जिसने कभी उनके पूरे व्यक्तित्व को ढक रखा था, अब उनके मन से विलीन हो गया था। अब उन्हें ऐसी महसूस हो रहा था कि किसी समय पाप

करने वाला व्यक्ति वे नहीं बल्कि कोई और थीं। उन्हें यह आभास हो रहा था कि यद्यपि वे बचपन में कैरा-चिचा चुराने वाले बालक थे, एक अर्थ में वे वही थे, दूसरे अर्थ में वे नहीं थे।
एक दिन उसने अपनी माँ को एक लंबा पत्र लिखा। उसमें उसने उन दोनों के बीच आए बदलावों के बारे में लिखा। उस पत्र में उसने अंत में लिखा,
मैं तुमसे मिलना चाहता हूँ। लेकिन अभी मेरे पास बिलकुल समय नहीं है। दिल्ली में तुम्हारे सिवा मेरा कोई और काम नहीं है। अगर हम दिल्ली से संपर्क किए बिना कोई काम कर सकें, तभी इस देश को बचाया जा सकता है! तुम दोनों कुछ दिनों के लिए यहाँ आकर क्यों नहीं रुक जाते? बैंगलोर से टिपटूर के लिए बसें और ट्रेनें चलती हैं। इस तरह तुम्हें ज्यादा परेशानी नहीं होगी। आते समय मेरा सितार लाना।
आखिरी वाक्य लिखते समय वह खुद भी हैरान रह गया।
वह किसी काम से पास के एक गाँव में गया था। तीन दिन बाद जब वह आश्रम लौटा, तो उसके माता-पिता एक दिन पहले ही वहाँ पहुँच चुके थे। उनके लिए मेहमानों के लिए बनाई गई एक झोपड़ी में सभी व्यवस्थाएँ कर दी गई थीं। अन्नय्या और अन्य लोगों ने उसकी बहुत अच्छी देखभाल की थी।
हालांकि हेमंत के माता-पिता ने वहां की गोबर से सनी मिट्टी, खुरदरी दीवारों और खाने-पीने की चीजों से कोई असंतोष नहीं दिखाया, हेमंत ने महसूस किया कि उन्हें कई तरह की असुविधा हो रही थी। फिर भी, वह उन दोनों से मिलकर खुश था। उसके आने से पहले ही उसकी माँ सभी दिव्यांगजनों से बातचीत करने लगी थी। उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि शारीरिक अक्षमता के बावजूद वे किसी तरह का व्यवसाय करने के लिए संघर्ष कर रहे थे। उनके द्वारा बनाई गई चीजों को देखकर उनका दिल खुशी से भर गया!
हेमंत ने अपनी मां से कहा,
"अप्पा को यहाँ कुछ परेशानी हो रही होगी। यहाँ कुछ बढ़ईगिरी का सामान पड़ा है। क्या मैं उनके लिए एक छोटा सा बिस्तर बना दूँ?"
"अगर आप कर सकते हैं, तो कर दीजिए, बाबा! यहाँ असली समस्या शौचालय की है। उन्होंने पिछले चालीस सालों से भारतीय शैली के शौचालय का इस्तेमाल नहीं किया है। उनका कहना है कि उनके घुटनों, जांघों और पीठ में दर्द होता है। उन्होंने कुछ इंतज़ाम कर लिए हैं, इसलिए कोई समस्या नहीं है," उन्होंने कहा।
सत्यवतीबाई को एक ओर तो अपने बेटे की प्रतिकूल परिस्थितियों पर दुख था, वहीं दूसरी ओर उन्हें इस बात का गर्व भी था कि वह सचमुच अपने जीवन को सार्थक बना रहा था। वह दिव्यांग बच्चों की देखभाल भी कर रहा था। बच्चे उसे अप्पाजी और अन्नाया को अजोबा कहकर पुकारते थे। यह देखकर उन्होंने सोचा - ऐसा उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था - गाँधीजी का आश्रम तो ऐसा ही होगा!
बड़े होन्नाट्टी ने अन्नाय्या और हेमंत से इस क्षेत्र के ग्रामीण जीवन के बारे में सीखा। सब कुछ सुनते हुए उन्होंने एक बार कहा,
"अगर हम पूरे क्षेत्र का आर्थिक विश्लेषण कर सकें तो अच्छा होगा। क्या हमें यहाँ चार-छह ऐसे बच्चे नहीं मिल सकते जो गणित और सांख्यिकी समझते हों? अगर हमें वे मिल गए, तो मैं तीन महीने में पूरी रिपोर्ट तैयार कर दूंगा। क्या यहाँ कोई कॉलेज नहीं है? वहाँ अर्थशास्त्र पढ़ाने वाले लोग तो होंगे ही! क्या हम उन्हें नहीं बुला सकते?"
हेमंत की एक अलग झोपड़ी थी। उसने अपने माता-पिता द्वारा दिल्ली से लाए गए सितार को वहीं रखा था। उसके माता-पिता को आए एक सप्ताह हो चुका था। जब सबने खाना खा लिया और सो गए, तब हेमंत को सितार की याद आई।
उन्होंने अलमारी से सितार निकाला। उन्होंने उसके कोनों में जमी धूल साफ की। एक छोटे से डिब्बे में कीलें थीं। उसमें कुछ तार भी थे। सितार की खूंटियां कसी हुई थीं। सितार को ट्यून करने में आधा घंटा लगा। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या

बजाएं। तभी उनका ध्यान अपने आप बागेश्री की ओर गया। कुछ सुर दोबारा ट्यून करने के बाद उन्होंने बागेश्री का आलाप बजाना शुरू किया। पहले तो उनकी उंगलियां सही जगह पर नहीं थीं। इसीलिए ऐसा लग रहा था जैसे वो कोशिश कर रहे हों। लेकिन जल्द ही उनकी उंगलियां मन में ताल मिलाने लगीं। पहले तो बागेश्री, जो कोशिश कर रही थीं, जल्द ही उनके इशारों पर चलने लगीं। भला भूलना कैसे मुमकिन है? - इस विश्वास से उनके चेहरे पर हल्की सी मुस्कान आ गई। वो सितार बजाने में और भी मग्न हो गए।
राग बजाते हुए उन्हें एक और बात स्पष्ट रूप से महसूस हुई। उन्होंने बागेश्री राग पहले भी कई बार बजाया होगा – लेकिन आज यह कुछ अधिक अर्थपूर्ण प्रतीत हो रहा था। इसमें निहित भक्ति का भी एक विशेष महत्व था! करुणा से उत्पन्न भक्ति! पाप की गहराई में डूबे लोगों को ऊपर उठाने वाली कृपा, पाप और पुण्य से परे की असाधारण अनुभूति, सभी को एक समान प्रेम करने वाला समभाव – ऐसे उदात्त भाव उनके भीतर उमड़ रहे थे! बागेश्री राग में ये भावनाएँ हमने पहले क्यों नहीं देखीं? इस विचार से वे चकित थे।
वह लगभग दो घंटे से बागेश्री बजा रहा था। कई धुनें और सुर बार-बार दोहराए जा रहे थे। वह अलग-अलग भावों को समझने के लिए उन हिस्सों को बार-बार बजा रहा था।
उन्होंने सितार बजाना बंद कर दिया और चारों ओर छाए सन्नाटे में खो गए, सोचने लगे – इससे पहले तो हम इसी राग को केवल तकनीकी रूप से बजा रहे थे। आज हमारा मन प्रत्येक स्वर और प्रत्येक ध्वनि के अनकहे अर्थ को महसूस कर रहा है।
वह कुछ देर तक उसी तरह बैठा रहा। फिर उसने सटारी को पलंग पर रखकर पलंग बिछाया। सोने से पहले वह पेशाब करने के लिए बाहर आया और आश्चर्यचकित रह गया।
उसकी मां उसकी झोपड़ी के दरवाजे पर बैठी थी।
उन्होंने पूछा,
"माँ, आप यहाँ अकेली क्यों बैठी हैं? आप अंदर क्यों नहीं आईं?"
"तुम तो जैसे बेसुध होकर बजा रहे थे। फिर क्यों परेशान हो रहे हो? इसलिए मैं यहीं बैठी रही। जब भी मौका मिले बजाते रहो यार! मुझे भी इसे सुनने का बहुत मन कर रहा है!" उसने कहा।

■

२६

एक दिन, जब शीतल दफ्तर में काम में व्यस्त थी, तभी उसके एक सहकर्मी ने इंटरकॉम पर उससे संपर्क किया और पूछा,
``क्या? आपको खबर समझ नहीं आई? प्रधानमंत्री को लोकसभा से हटा दिया गया है – इलाहाबाद उच्च न्यायालय का फैसला!"
"क्या?" उसे इस खबर पर यकीन करना मुश्किल लग रहा था।
पांच मिनट के भीतर ही सचिवालय में खबर फैल गई। चपरासी से लेकर टाइपिस्ट अधिकारी तक, हर कोई चार-छह के समूहों में खड़ा था। किसी को भी अंदाज़ा नहीं था कि आगे क्या होगा। हर कोई अपने दोस्तों और रिश्तेदारों को खबर देने के लिए फोन कर रहा था। एक भी फोन खाली नहीं था। आखिरकार, जैसे ही उसे मौका मिला, उसने कांति को फोन किया और उसे खबर दी।
“क्या? तो अब सरकार का क्या होगा?” कांति की आवाज़ में डर झलक रहा था। धीरे-धीरे उसकी आवाज़ धीमी हो गई।
“सरकार का क्या होगा? एक नई सरकार चुनी जाएगी। देश का क्या होगा! क्या पूरा देश एक ही सरकार पर निर्भर करेगा?”

कांति ने इस पर कुछ नहीं कहा। दो अन्य अधिकारी भी शीतल के केबिन में दाखिल हुए। जैसे ही उसने रिसीवर नीचे रखा, उन्होंने भी उत्तेजित होकर पूछा,
"क्या आपने खबर सुनी?"
जब शीतल शाम को घर लौटी, तो ध्यान के लिए केवल बारह लोग ही आए थे। वे भी ध्यान में नहीं लगे हुए थे। वे आपस में एक ही विषय पर बातें कर रहे थे, 'इंदिराजी ने इस्तीफा दे दिया'। एक-दो लोगों ने कहा, 'चलो ध्यान करते हैं - इस विषय की क्या जरूरत है?' लेकिन बाकी लोगों ने ध्यान नहीं दिया।
लेकिन सात बजे भी ब्रह्मचारी का कोई अता-पता नहीं था। वो क्यों नहीं आए? वो तो अपनी दिनचर्या में मग्न रहते थे, राजनीति में उनकी कोई दिलचस्पी नहीं थी। ऐसी बातों का उनकी मानसिक शक्ति पर कोई असर नहीं पड़ना चाहिए था। शायद इलाके में हुए दंगों की वजह से वो वहाँ नहीं पहुंच पाए। शीतल ने कांति के घर फोन किया, लेकिन किसी ने फोन नहीं उठाया। कारखाने में भी कोई नहीं था। शीतल हैरान रह गई। उसने खिड़की से बाहर देखा – बसें और रिक्शा हमेशा की तरह चल रहे थे। उसने वहाँ जमा लोगों से कहा कि आज क्लास नहीं है और अपनी कार लेकर निकल पड़ी।
वह कांति के घर गई और देखा कि दरवाजा बंद था। कारखाना भी बंद था। यह कारखाना बंद करने का समय नहीं था। जब उसने चौकीदार से पूछताछ की, तो उसने कहा,
"मैडम को दिल का दौरा पड़ा है। उन्हें नर्सिंग होम में भर्ती कराया गया है।"
किस घर में?
"इसे पिछली खेप में रखा गया था - देखो, यह पीछे वाली गली में है... इसे उसी घर में रखा गया है।"
इस खबर से शीतल चिंतित हो गई। एक और दिल का दौरा! वह अस्पताल गई। उसे पता चला कि उसे कमरा नंबर 307 में रखा गया है। वह लिफ्ट से ऊपर गई और कमरे का आधा खुला दरवाजा खोला – बिस्तर खाली था। ब्रह्मचारी खिड़की के पास एक कुर्सी पर ध्यान में बैठे थे। उन्होंने ध्यान नहीं दिया था कि शीतल अंदर आ गई है। वह भी उनका ध्यान आकर्षित करना चाहती थी, इसलिए वह वहीं खड़ी रही। आठ-दस मिनट बीत गए – लेकिन उन्होंने शीतल पर कोई ध्यान नहीं दिया। उसे याद आया – यह उनका सामान्य स्वभाव है। जब कोई शारीरिक आवश्यकता होती है, तो वे बाहर आते हैं – बाकी समय वे ध्यानमग्न रहते हैं। अब, चूंकि उनसे कांति के बारे में पूछना आवश्यक था, इसलिए उसने आवाज लगाई।
महाराज—"
जब उसने दोबारा आवाज़ दी, तो उसके चेहरे पर बदलाव दिखाई दिया। वह पूरी तरह से बाहर आया और उसकी ओर देखा। उसके चेहरे पर चिंता देखकर उसने कहा,
“मां को दिल का दौरा पड़ा है। उन्हें गहन चिकित्सा इकाई में रखा गया है। किसी को भी वहां जाने की अनुमति नहीं है।” उनके चेहरे पर दर्द साफ झलक रहा था।
वह अंदर एक और कुर्सी पर बैठ गई। डॉक्टर से मिलने और पूछताछ करने के इरादे से वह उठी और बाहर आ गई। गलियारे में उसकी मुलाकात फैक्ट्री मैनेजर से हुई। उसके चेहरे पर भी चिंता झलक रही थी। उसे देखकर उसे भी थोड़ी राहत मिली। उसने कहा,
"ऑक्सीजन चढ़ा दी गई है। अगले 24 घंटों तक कुछ नहीं कहा जा सकता," डॉक्टर ने कहा। "यह अस्पताल अत्याधुनिक सुविधाओं से लैस है। यहां के डॉक्टर भी विशेषज्ञ हैं। कोई न कोई हमेशा निगरानी में रहता है।"
उस रात शीतल कमरा नंबर 307 में रुकी। उसने ब्रह्मचारी को रात में घर जाने को कहा। उसने उसे घर से निरंजन को फोन करके सूचित करने को भी कहा। उसने मैनेजर को भी घर जाकर सुबह आने को कहा।

मैनेजर ने ठीक है कह दियाँ, लेकिन वह नहीं गया। उसके चेहरे पर चिंता कम नहीं हुई थी। जब उसने उसे समझाने की कोशिश की, तो उसने कहा,
"महोदया, आप हमारी कंपनी की स्थिति जानती हैं। उनके बच्चे अमेरिका में हैं - उनके आने की कोई संभावना नहीं है। अगर वे ठीक होकर घर लौट भी आते हैं, तो क्या वे फैक्ट्री चला पाएंगे? 150 लोगों के पेट भरने का सवाल है। मुझे भी कोई और नौकरी ढूंढनी पड़ेगी! इतने सालों तक एक ही जगह काम करने के बाद, मेरी ज़िंदगी भी दांव पर लगी है, है ना?"
शीतल ने इस दृष्टिकोण से कभी इस बारे में नहीं सोचा था।
मैनेजर के जाने के बाद, वह इस बारे में सोचने लगी। पुरानी यादें ताज़ा हो गईं। उन्होंने कितने उत्साह से यह व्यवसाय शुरू किया था! व्यवसाय को धीरे-धीरे आगे बढ़ाते हुए और उसे एक निश्चित स्तर तक पहुंचाते हुए, उन्होंने बचपन की दोस्ती को भी भुलाकर पूरी कंपनी को अपने नाम कर लिया! बेशक, बाद में मैंने एक गुमनाम पत्र भी लिखा – लेकिन क्या उन्हें यह एहसास नहीं था कि एक दिन हम इस तरह खत्म हो जाएँगे? उन्हें क्या हो गया था कि एक हफ्ते के अंदर ही कंपनी ढहने लगेगी। उसके बाद, एक हफ्ते के अंदर ही सारा काम ठप्प हो जाएगा! अनजाने में ही उनके मन में एक अजीब सी संतुष्टि फैल गई। डेढ़ घंटे के अंदर ही उन्होंने खुद से कहा – ओह! मैं ध्यान लगा रही हूँ! ऐसे विचार मेरे मन में नहीं आने चाहिए! लेकिन इससे उनका मन पूरी तरह शांत नहीं हुआ।
वह सुबह तक वहीं रही।
उसने सुबह फिर से कांति के स्वास्थ्य के बारे में पूछा। उसे जवाब मिल गया,
बस इतना ही। न कम, न ज़्यादा–"
ब्रह्मचारी के आते ही उसने स्नान किया और जाने की व्यवस्था करके घर के लिए रवाना हो गई। जाते समय उसने ब्रह्मचारी से पूछा,
"क्या आज तुम्हारी क्लास थी?"
"मैंने अभी-अभी इसे खत्म किया है—" हालांकि वह शांत रहने की कोशिश कर रहा था, लेकिन उसके चेहरे पर हल्की सी शिकन दिखाई दे रही थी।
घर लौटते समय, स्नान करते हुए, ध्यान करते हुए और नाश्ता करते हुए, उसे कुछ याद आया। कांति ने अक्सर उससे कहा था कि चूंकि उसका बेटा उसकी बात नहीं सुनता, इसलिए वह अपना घर ब्रह्मचारियों को दे देगी और उनसे कहेगी कि बैंक में जमा दस लाख रुपये के ब्याज से उसके घर में एक ध्यान मंदिर बनवा दें – वह इसी तरह वसीयत लिखेगी। लेकिन कौन जानता है कि उसने वसीयत लिखी थी या नहीं! शायद इसी वजह से ब्रह्मचारी बेचैन थे? ऐसा हो सकता है। इसके बाद वे और कहाँ जाते? कांति की हालत में थोड़ा सुधार हुआ था, इसलिए उसे इस विषय पर उससे बात करनी चाहिए – कारखाने के बारे में नहीं।
फोन आने के आधे घंटे के भीतर निरंजन और रजनी अस्पताल पहुँच गए। मुरीज गहन चिकित्सा इकाई में था, इसलिए कुछ भी करने का कोई सवाल ही नहीं था। डॉक्टर से एक घंटे बात करने के बाद वे घर लौट आए। उन्होंने रात में देहरादून में भी फोन किया। इससे मुझे समझ आया कि मेरी माँ अगले दिन आ जाएँगी।
इस तरह पांच दिन बीत गए। जब उसकी हालत में थोड़ा सुधार हुआ, तो उसे उसके कमरा नंबर तीन सौ सात में ले जाया गया और सुला दिया गया। जब शीतल ने डॉक्टर से पूछा, तो उसने कहा,
आपको कम से कम एक महीने तक यहीं रहना होगा। आपके बेहद करीबी लोगों के अलावा, बाकी लोगों को आने की अनुमति न दें। स्वास्थ्य संबंधी खतरा अभी भी पूरी तरह से खत्म नहीं हुआ है।
रीत में शीतल वहीं सो रही थी। वह सुबह घर जाती, वहाँ से दफ्तर जाती और शाम को अस्पताल लौट आती। जब वह नहीं होती, तो ब्रह्मचारी वहां रहता। उसकी माँ को उच्च रक्तचाप की समस्या थी, इसलिए उसकी मदद का कोई सवाल ही नहीं

था। उसके पिता की तबीयत ख़राब थी, इसलिए वे देहरादून से नहीं आए थे। रात में शीतल जबरदस्ती अपनी माँ को घर भेज देती थी।
कांति को अभी भी बोलने की इजाज़त नहीं थी। वह लेटी हुई मानो ध्यान में लीन हो। शीतल भी पंद्रह दिन की छुट्टी लेकर अस्पताल में रहना चाहती थी। लेकिन स्थिति अजीब हो गई थी क्योंकि सरकार ने आपातकाल घोषित कर दिया था। प्रधानमंत्री इलाहाबाद फैसले के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट गए थे और उन्होंने घोषणा की थी कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले को कुचलकर पूरे देश को संकट में डाल दिया गया है, इसलिए वे आपातकाल घोषित कर रहे हैं। अब सभी निरंकुश शक्तियां एकजुट हो गई थीं।
इस आपातकाल के दौरान, देश भर में लाखों लोगों को रातोंरात जेल में डाल दिया गया। हमारे विरुद्ध बोलने, लिखने या छापने वाले किसी भी व्यक्ति को जेल भेजने का फतवा जारी किया गया। हमारे निरंकुश शासन को समर्थन देने के लिए ऐसे कानून बनाए गए कि किसी भी सरकारी और अर्ध-सरकारी कार्यालय में एक मिनट भी देर से आना और अपनी कुर्सी से न उठना गैरकानूनी हो गया, और यह सब सार्वजनिक रूप से किया गया। किसी को भी वरिष्ठ अधिकारी की अनुमति के बिना छुट्टी लेने की इजाजत नहीं थी।
ऐसी स्थिति में शीतल के लिए अपनी सहेली की देखभाल के लिए बचाई हुई छुट्टी लेना नामुमकिन हो गया। इसी वजह से, "यह सहेली कौन है? तुम्हारा उससे क्या रिश्ता है कि वह छुट्टी लेकर सेवा कर रही है?" जैसे सवाल उठने लगे और यह तय करना मुश्किल हो गया कि वह किस तरफ जाए। इसी वजह से सबके मन में डर बैठ गया था। चाहे आंखें खुली हों या बंद, सबको यह महसूस होता था कि कोई काली परछाई उन्हें निगलने के लिए मंडरा रही है। वे जहां भी जाते, उनका मन डर से भरा रहता था। उनके मन में यह डर बना रहता था कि पुलिस लगातार उनका पीछा कर रही है। पूरा दफ्तर डर से कांप रहा था, इस आशंका से कि कहीं कोई सरकारी जासूस उनके आसपास तो नहीं छिपा है।
लेकिन कुछ ही हफ्तों में माहौल धीरे-धीरे शांत होने लगा। क्योंकि अब कोई भी ऐसा अखबार नहीं बचा था जो विपक्ष के भाषण छाप रहा हो, और न ही कोई विपक्षी नेता बचा था। सभी को जेल में डाल दिया गया था। तो अब डरने की क्या बात थी?
फिर भी, नौकर पूरी तरह से साहसी नहीं थे। उनका मानना था कि यदि वे अपने वरिष्ठों के आदेशों का पालन करते रहेंगे और उन्हें प्रणाम करते रहेंगे, तो वे सुरक्षित रहेंगे।
शीतल कांति से उसकी वसीयत के बारे में बात करने के लिए सही मौके का इंतज़ार कर रही थी। कांति की सेहत अब काफी बेहतर थी। शीतल कमरा नंबर 307 में उसका सहारा दे रही थी, धीरे-धीरे उसके चार कदम चल रही थी और उसे हर सुबह-शाम दो घंटे आराम कुर्सी पर बिठाती थी। कांति ने इस बार देहरादून आराम करने जाने का फैसला किया था। डॉक्टर ने उसे रोज़ाना अखबार पढ़ने की इजाज़त दे दी थी।
एक बार कांति ने शीतल से पूछा,
"ये क्या है? अखबार में लिखा है कि आपातकाल है - चीन और पाकिस्तान... दोनों ने एक साथ हमला कर दिया है, या क्या हुआ है?"
"यह सच नहीं है..." शीतल ने संक्षेप में स्थिति स्पष्ट की।
कांति ने इस पर कुछ नहीं कहा। थोड़ी देर बाद, उसने अचानक कहा,
शीतल, तुम्हें शायद यह विरोधाभासी लगे – रविंद्र, क्या अनुप के पापा इसी गाँव में नहीं रहते? मैं उनसे मिलना चाहता हूँ – क्या मैं उन्हें फोन कर सकता हूँ? अगर मैं संदेश भेजूँ तो क्या वे आएँगे?

"आप दोनों का आपस में अच्छा तालमेल होना हमेशा ही अच्छा है! आप चाहे कुछ भी करें, वह आपका पति है—आपके बच्चे का पिता है—"
अरे! इस विचार को इतना विस्तार देने की कोई ज़रूरत नहीं है। तुम वहाँ चुपचाप लेटे हुए थे, है ना? उस समय कुछ न कुछ तो तुम्हारे दिमाग में आ ही जाता। उस समय मैंने सोचा, चलो फिर मिलते हैं, ठीक है?
"आप संदेश भेज सकते हैं—" शीतल एक पल रुकी और फिर बोली, "वह पत्रिका शुरू से ही सरकार के खिलाफ थी! इसीलिए शायद आपातकाल के पहले दिन ही उन्हें जेल में डाल दिया गया था! अब तो वह पत्रिका है ही नहीं। लेकिन उसकी जांच की जा सकती है। वैसे, आप कहते हैं कि स्वतंत्र रूप से जांच करना भी खतरनाक है!"
तब शीतल ने कहा,
भगवान की कृपा से आप एक बड़े संकट से बच गए। फिर भी ये आपका दूसरा दिल का दौरा है! आप कह रहे थे कि आप घर पर ध्यान मंदिर बनवाएंगे और दस लाख के ब्याज से बची हुई रकम खर्च करेंगे। लेकिन क्या आपने ऐसी कोई वसीयत बनाई थी? क्या आपने ये बात ब्रह्मचारी को बताई थी या नहीं?
इस पर कांति ने कुछ नहीं कहा। शीतल ने आगे कहा,
अगर आपने अभी तक ऐसा नहीं किया है, तो अभी कर लीजिए। भारद्वाज और उनके साथी आपके कानूनी मामलों को देख रहे हैं, है ना? उस समय वरिष्ठ भारद्वाज ही देख रहे थे, है ना? आप उन्हें यहाँ बुला लीजिए। अगर आप चाहें, तो मैं भी बुला लूँगा। ब्रह्मचारियों ने आप पर भरोसा जताया है। आप भी उनके लिए बच्चों जैसे हैं। उन्हें अकेला मत छोड़िए। इसके अलावा, वे आपका पैसा अपने ऊपर खर्च नहीं करेंगे! वे इसे केवल ध्यान और योग को बढ़ावा देने पर खर्च करेंगे, जिससे सभी को मन की शांति मिलेगी!..."
कांति ने सिर हिलाया मानो सब कुछ स्पष्ट हो। लेकिन उसने कुछ नहीं कहा।
अगले दिन शीतल ने रविंद्र से संपर्क करने की कोशिश की। पहले तो उसने खुद वहां जाने का सोचा। लेकिन जोखिम को भांपते हुए, वह अपने एक परिचित पत्रकार से उसके घर पर मिली और उससे पूछा, जिस पर उसने जवाब दिया,
``रवींद्रजी सौ साल जिएंगे, देखो! मुझे तो उनके बारे में खबर आज सुबह ही मिली और अब तुम पूछ रही हो!" और उसने अंदर से कहीं से एक कागज का टुकड़ा निकाला और उसे दे दिया।
``इस लेख का सातवां भाग पढ़ें..."
यह बहुत बारीक अक्षरों में छपा एक कागज का टुकड़ा था। इसे केवल चश्मे से पढ़ना असंभव था। इसके लिए आवर्धक लेंस की आवश्यकता थी। शीतल ने इसे बड़ी मुश्किल से पढ़ा।
रवींद्र अपने पुराने मित्र हेमंत होन्नाटी के दिव्यांगजन गृह में विश्राम करने गए थे, तभी उन्हें, पुराने गांधीवादी सामाजिक कार्यकर्ता अन्नाया, हेमंत होन्नाटी और उनके माता-पिता के साथ, जो उनसे मिलने दिल्ली से आए थे, आधी रात को कर्नाटक पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया, एक वैन में ले जाकर बैंगलोर की एक जेल में रख दिया गया – इकत्तीस दिव्यांग बच्चे भूख से मर रहे हैं –"
इस खबर के तुरंत बाद निम्नलिखित पाठ छपा: 'मोरारजी देसाई सोहना विश्राम गृह में -' इत्यादि।
तनाव से दुख रही अपनी आँखों को बंद करते हुए उसने पूछा,
यह कौन सा अखबार है?
नाम देखिए – 'आसमान की आवाज़'। चाहे कुछ भी हो जाए, समाचार खोजने और उसे प्रकाशित करने का दबाव कभी कम नहीं होता। यह अखबार खरीदा नहीं जा सकता। अगर आप इसे चाहते हैं, तो मुझे बताइए। फिर, किसी मित्र या रिश्तेदार के शुभ समाचार पत्र की तरह, यह अचानक कभी भी आपके घर पहुंच जाएगा।

कभी-कभी तो दरवाजे की दरार से भी मिल जाएगा। लेकिन कब आएगा, यह निश्चित नहीं है – इसकी सदस्यता इतनी ज़्यादा नहीं है। आप दस रुपये से लेकर दस हज़ार रुपये तक दान कर सकते हैं। इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि पैसा आप तक पहुंचेगा। आपका नाम इसमें नहीं होगा। हो सकता है मैं आपका पैसा रख लूँ! ऐसे अखबार पूरे भारत में प्रकाशित होते हैं। अगर आप और भी ताज़ा खबरें चाहते हैं, तो वॉयस ऑफ अमेरिका, बीबीसी, वॉयस ऑफ ऑस्ट्रेलिया सुनिए। और अंत में, पाकिस्तान रेडियो सुनिए।
शीतल ने अपना घर का पता बताया और अपने पर्स से एक हजार रुपये निकाले। उसने अखबार अपने पर्स में ही रखकर वहां से प्रस्थान किया।
अगले दिन, कमरे का दरवाजा बंद करने के बाद, शीतल ने कांति को गुप्त अखबार के बारे में बताया और अखबार को बारीक अक्षरों में उसके सामने रखते हुए उसे पढ़ने के लिए कहा।
"सातवां आइटम पढ़ो—" लेकिन चश्मा पहने होने के बावजूद भी कांति उसे पढ़ नहीं पाई।
अंततः शीतल ने स्वयं वह खबर पढ़ी। लेकिन बाद में उसे लगा कि उसे पूरी खबर नहीं पढ़नी चाहिए थी। उसे यह भी डर था कि उसमें होन्नाटी का जिक्र और आज उनके बीच अच्छे संबंध होने की बात कांति के मन पर बुरा असर डालेगी। लेकिन कांति शांत दिखीं। उन्होंने कुछ नहीं कहा।
उस शाम शीतल ने उसे एक बार फिर वसीयत की याद दिलाई। उसे रोकते हुए कांति ने कहा,
"फिर से ऐसा मत कहना। मुझे सब पता है। भारद्वाज कंपनी के एस. पी. भारद्वाज को कल फोन करके बुला देना।"
हालांकि उसकी सहेली को थोड़ी तकलीफ हुई, शीतल खुश थी कि उसने अपना कर्तव्य पूरा कर लिया था। अगले दिन जब वह नासुगबु होम पहुंची, तो उसे गेट पर फैक्ट्री मैनेजर मिला। उसका चेहरा बहुत प्रसन्न था। उसने शीतल से कहा,
"महोदया, ऐसा लगता है कि उनकी हालत में सुधार हो रहा है। वकील भारद्वाज आज सुबह 9:30 बजे आए थे। दोनों ने एक घंटे तक खूब बातें कीं। वे शाम को भी आए थे। अभी दस मिनट पहले ही गए हैं। जब मैं रिसेप्शन काउंटर पर बैठी थी, तब वे बंद कमरे में निजी बातचीत कर रहे थे।"
यह सुनकर शीतल भी संतुष्ट हो गई। मृत्यु तो हर किसी को आनी ही है। लेकिन उसे अपनी सहेली पर गर्व महसूस हुआ जिसने इस बात का ध्यान रखा कि उसकी रुचि का नेक काम उसकी मृत्यु के बाद भी जारी रहेगा। कमरे में प्रवेश करते समय उसने इस विषय को दोबारा नहीं उठाया। अपनी संपत्ति, वह दान करेगी - इस बारे में अधिक विस्तार से बताना उचित नहीं होगा -
उसने कांति से पूछा,
"अब आपकी सेहत में सुधार हो रहा है। डॉक्टर भी यही कह रहे हैं। क्या मैं अनूप को फोन करके बुला लूँ? यह सच है कि पिछली बार जब मैंने उसे फोन किया था तो वह नहीं आया था। लेकिन उस समय एक ज़रूरी वजह थी। वह दोबारा अमेरिका नहीं जा पाता। अब ऐसी बात नहीं है। कम से कम फोन करके पूछने में क्या हर्ज है? मैं उसे आने के लिए कहूँगी भी नहीं। मैं बस इतना कह दूँगी कि मम्मी को दिल का दौरा पड़ा है।"
कांति कुछ देर तक वहीं लेटी सोचती रही। फिर उसने कहा,
"आपातकाल घोषित कर दिया गया है, है ना? आपने कहा कि वे बिना किसी कारण के लोगों को गिरफ्तार कर जेल में डाल रहे हैं? उसे यहाँ आकर मुसीबत में नहीं पड़ना चाहिए। जब यहाँ स्थिति सामान्य हो जाए तो उसे वापस बुला लेते हैं।"

■

कांति की हालत में अब काफी सुधार हो चुका था। डॉक्टर भी कह रहे थे, "अब ज्यादा चिंता करने की जरूरत नहीं है।" फिर भी, उन्होंने सुझाव दिया कि वह कुछ और दिन अस्पताल में ही रहें। लेकिन एक दिन सुबह पाँच बजे अचानक उनके सीने में तेज दर्द होने लगा और जब तक शीतल नर्स को डॉक्टर के पास भेजती, तब तक उनकी मृत्यु हो चुकी थी। दौड़कर आए डॉक्टर ने उन्हें यही बताया।
शीतल शोक से व्याकुल हो गई। शव का सिर सीने से लगाकर वह धीरे-धीरे रोने लगी। रोने की तीव्र इच्छा शांत होते ही उसे अपना अगला कर्तव्य याद आ गया। उसे यह बात गहराई से महसूस हुई कि चाहे वह उसकी कितनी ही करीबी दोस्त क्यों न हो, इन अंतिम संस्कारों में वह उसके किसी काम की नहीं थी।
उसने निरंजन को फोन किया और उसे आमंत्रित किया। शीतल जानता था कि उसकी पत्नी ने उसके और उसके माता-पिता और बहनों के बीच बहुत बड़ा मतभेद पैदा कर दिया है। यह खबर तुरंत देहरादून को बतानी थी। लेकिन उसने कहा,
हमें थोड़ा सोचना पड़ेगा। हम दोनों बूढ़े हो चुके हैं, है ना!..."
"लेकिन उन्हें देर-सवेर समझ ही आएगा, है ना?"
शीतल को कांति के पति की याद आ गई। रिश्ता चाहे जैसा भी हो, शव का अंतिम संस्कार करने का अधिकार पति को ही होता है। वह जेल में है। उससे संपर्क करना नामुमकिन है। अगर वह गृह मंत्रालय से संपर्क करे तो क्या होगा? लेकिन वह यह अच्छी तरह जानती थी कि जब उसे ऐसा मौका मिलेगा, तो वही सरकार उसके पीछे जांच का जाल बुनना शुरू कर देगी।
उसने निरंजन से पूछा कि क्या उसे अनुप से संपर्क करना चाहिए। अनुप को भी यह उचित लगा। जब शीतल अपनी कार से कांति के घर पहुँची, तो ब्रह्मचारियों की पहली कक्षा चल रही थी। कांति के शयनकक्ष में रखी डायरी में अनुप का टेलीफोन नंबर मिला। जब उसने नंबर डायल किया, तो उसे जवाब मिला...
“अनुप ने आठ महीने पहले यहाँ से अपनी नौकरी छोड़ दी थी,” उसने फोन नंबर देते हुए कहा। जैसे ही उसने नंबर डायल किया, उसे जवाब मिल गया।
वह यहाँ केवल एक महीने के लिए थे – आप उनसे इस नंबर पर संपर्क कर सकते हैं –"
चार बार कोशिश करने के बाद आखिरकार उनका फोन लग गया। खबर सुनकर वे स्तब्ध रह गए।
"अरे! ये सब कैसे हुआ? तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया?"
"तुम्हारी माँ ने मुझे यह नहीं बताया। शायद उन्होंने सोचा होगा, 'परेशान होने की क्या जरूरत है?' अब हम आगे क्या करें? बच्चे को आकर आग जलानी चाहिए, जैसा कि यहाँ रिवाज है!"
“मौसी, ये तो सच में आपका ही है! लेकिन कल सुबह मुझे कंपनी के एक बहुत ज़रूरी काम से ब्राज़ील जाना है। तीन सौ मिलियन डॉलर का कॉन्ट्रेक्ट है! ऐसे समय में मेरी माँ का निधन हो गया – मुझे जाना ही होगा, अगर मैं कहूँगी तो वे कहेंगे कि कंपनी को ऐसा मौका दोबारा नहीं मिलेगा। उनसे कहिए कि मेरी माँ का अंतिम संस्कार टाल दें!” “मौसी, मैं इस मीटिंग के बाद तुरंत आ जाऊँगी।” “मौसी- मम्मी- मेरी माँ! मेरी इकलौती माँ!” “मौसी- मैं आपको बता नहीं सकती कि मेरे साथ क्या हो रहा है –” शीतल को लगा कि उसकी आवाज़ आँसुओं से भर गई है।
उसने मुझे बताया।
"रहने दो बेटा! तुम्हें अपने मन की शांति खुद बनानी चाहिए। तुम्हें अपना घर का फोन नंबर तो पता ही है। मेरा नंबर भी लिख लो। हम सब कुछ यहीं सुलझा लेंगे।"
वह बाहर आईं और कक्षा में उपस्थित ब्रह्मचारी छात्रों को यह खबर सुनाई। खबर सुनकर वे व्याकुल हो गए। उनकी आँखों में आँसू भर आए। ध्यान में लीन सभी छात्रों को जगाकर उन्होंने यह खबर सुनाई और वे सभी अपने-अपने घर जाने लगे।

निरंजन ने काफी देर तक सोचा और फिर कहा,
"देहरादून मत बुलाओ। वे चौंक जाएंगे। मैं खुद रात में वहां जाऊंगा, उन्हें व्यक्तिगत रूप से बताऊंगा, उन्हें संतुष्ट करूंगा और वापस ले आऊंगा। अब हम खुद ही अंतिम संस्कार कर लेते हैं और निश्चिंत हो जाते हैं।"
पुत्र नहीं आएगा – अब पुत्र की जगह कौन लेगा और अग्नि प्रज्वलित करेगा? शीतल ने ब्रह्मचारी से पूछा। उन्होंने यह भी कहा,
``दिल की भावनाएं विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं, मैंने अपनी मां के स्थान पर उनका ध्यान रखा है। मैं उनका अंतिम संस्कार करूंगा!"
कारखाने के कुछ लोग और ध्यान के लिए एकत्रित हुए कुछ लोग शव को निगमबोध श्मशान घाट ले गए।
इसके बाद की सभी रस्में स्थानीय पेशेवरों द्वारा संपन्न की गईं। उनके साथ आए लोगों ने "श्री राम सत्य है - राम नाम नित्य है" के नारे लगाते हुए शव को वैन से बाहर निकाला।
एक घंटे के भीतर, सभी अनुष्ठान समाप्त हो गए और सिर मुंडवा चुके ब्रह्मचारी पुरुषों ने कांति के शरीर को आग लगा दी।
शीतल ने उनसे कहा,
"उस घर में योग और ध्यान का निरंतर अभ्यास किया जाना चाहिए। यही कांतिजी की इच्छा थी। अन्य गतिविधियां विशेष रूप से महत्वपूर्ण नहीं हैं।"
इसलिए, अन्य अनुष्ठानों के चलते भी, ब्रह्मचारी वहाँ योग और ध्यान की कक्षाएं जारी रखते रहे। शीतल ने सबको बताया,
"जल्द ही यह स्थान ध्यान मंदिर बन जाएगा। एक दिन हमें इसके लिए एक बोर्ड तैयार करना चाहिए।"
कुछ लोगों ने सुझाव दिया – इसका नाम कांतिमाता ध्यान केंद्र रखने में क्या समस्या है? उन्हें भी ध्यान में रुचि थी। उनकी एक बड़ी सी तस्वीर बनाकर सामने लगाने में क्या दिक्कत है?
लेकिन यह उत्साह ब्रह्मचारी को प्रसन्न नहीं कर सका। उसने समझाया,
``कृतज्ञता व्यक्त करना ध्यान करने से भिन्न है! ध्यान का मुख्य उद्देश्य धीरे-धीरे ध्यान की अवस्था में प्रवेश करना है। ऐसे समय में, अपने सामने कोई तस्वीर रखना उचित नहीं है। यहां तक कि रामकृष्ण की तस्वीर लगाना भी वर्जित माना जाता है।"
यह सुनकर सब लोग चुप हो गए।
कांति के माता-पिता आ गए, रजनी जरूरत के अनुसार तुरंत मौके पर पहुंची और प्रसवोत्तर की अन्य सभी रस्में पूरी की गईं।
तब से चार दिन बीत चुके होंगे। कांति के माता-पिता देहरादून के लिए रवाना हो चुके थे। सुबह के आठ बज रहे थे। ध्यान की कक्षा चल रही थी। एक आलीशान वातानुकूलित बेंज कार घर के सामने आकर रुकी। उसकी नंबर प्लेट पर 'रोस्पेटा' लिखा था। जैसे ही ड्राइवर ने विनम्रता से दरवाजा खोला, अंदर बैठा व्यक्ति नीचे उतरा और घर के अंदर चला गया। वह व्यक्ति वहां ध्यान करते हुए लोगों को देखकर आश्चर्यचकित रह गया। ध्यान देख रहे ब्रह्मचारी भिक्षुओं की नजर दरवाजे पर पड़ी। पहले तो वे उसे पहचान नहीं पाए। लेकिन कुछ ही क्षणों में उन्होंने उसे पहचान लिया। वे उसके पास गए और बोले,
``अनूप, तुम कब आए? मां..."
बोलते समय वह लड़खड़ा गया। वे ध्यान में बैठे लोगों को परेशान नहीं करना चाहते थे, इसलिए वे उसे दूसरे कमरे में ले गए।
क्लास खत्म होने और सबके चले जाने के बाद, अनुपान ने पूछा,
यह सब क्या है?
ब्रह्मचारी ने कहा,

"यह एक ध्यान कक्षा है। माँ को इससे बहुत लगाव था। उन्होंने वसीयत छोड़ी थी कि यहाँ हमेशा ध्यान का अभ्यास होना चाहिए।"
"उसने मुझसे कुछ नहीं कहा! उसने फोन पर भी कुछ नहीं कहा।"
ब्रह्मचारी को यह बात भी बुरी तरह महसूस हुई कि उसे ऐसा नहीं कहना चाहिए था। लेकिन फिर उसने सोचा, कोई बात क्यों छुपानी? ध्यान के लिए तो यह ठीक नहीं है।
बाद में, अनुप उनसे मम्मी की सेहत के बारे में पूछने लगा। उन्होंने भी उसे सब कुछ बताना शुरू कर दिया। मम्मी कितने दिन अस्पताल में रहीं, उन्हें कितनी तकलीफ हुई, आदि।
कुछ देर सुनने के बाद उन्होंने कहा,
मैं जा रहा हूं। मुझे कुछ काम करना है। व्यावसायिक मामले हैं!
ब्रह्मचारी ने शीतल को फोन किया और बताया कि अनूप आया था और किसी काम से बाहर गया है। यह सुनकर शीतल को भी थोड़ी राहत मिली। उसे ऑफिस जाना था। जब अनूप ने पूछा, तो शीतल ने उससे अपना ऑफिस नंबर मांगा और ऑफिस चली गई। फिर भी, उसके मन में वही विचार चल रहा था। अनूप आ गया है, अच्छा हुआ - अब हमें वकीलों से मिलना है और सब कुछ ठीक से निपटाना है, ताकि काम स्थायी हो जाए।
उन्हें अनूप से मिलने की भी तीव्र इच्छा थी। हमारे कोई बच्चे नहीं हैं। क्या इस दोस्त का बेटा हमारे बेटे जैसा नहीं है?
उसने उसके कार्यालय में फोन किया और कहा,
“आंटी, मैं शाम को आपके घर आऊंगा। क्या यह ठीक रहेगा? मैंने रोज़ पेंटा होटल के कमरा नंबर 518 में चेक-इन कर लिया है। मैं अभी भारद्वाज के वकील के कार्यालय से आया हूं। मेरा विमान रात 12:30 बजे उतरा। अब सोने का समय हो गया है, 2 बज गए हैं। ऊपर से जेट लैग भी है! अब मुझे चार घंटे चैन से सोना है। मैंने आपको कहा था कि मुझे फोन भी मत करना,” उसने कहा और रिसीवर रख दिया।
उसने यह भी सोचा - मैं वकीलों से मिलने आई हूँ, इसलिए मैं व्यावसायिक मूड में हूं, ऐसा कह सकते हैं! उदासी की पहली अनुभूति अब शांत हो गई लगती है।
वह शाम छह बजे उसके घर आया। जी हाँ, उसे एहसास हुआ कि यह पहला अनूप नहीं था। एक नौजवान जिसने अमेरिका से एमबीए किया था! उसके नाखूनों में काम करने की लगन थी।
"आंटी, जब मैंने आपको देखा, तो मुझे ऐसा लगा जैसे मैं अपनी माँ को देख रहा हूँ, देखिए! आपके अलावा, पूरे दिल्ली में - अहम् - पूरे देश में, मेरे जैसा कौन है?" उसने उनकी छड़ी पकड़ते हुए और उनके बंगले में बैठते हुए कहा।
"बेटा, तुम होटल में क्यों रुके थे? क्या वह तुम्हारी मम्मी का घर नहीं था? क्या वह मेरा घर नहीं था?"
मुझे पता था कि उस घर में अफरा-तफरी मची होगी। खाना बनाने की क्या ज़रूरत? अगर आप होटल में रुकते हैं, तो वे सब कुछ संभाल लेंगे। वे फ़ोन का कनेक्शन भी लगा देंगे। वरना उनका क्या फायदा?
फिर उन्हें अपनी मां की याद आ गई और वे व्याकुल हो गए। तभी राष्ट्रीय आपातकाल का मुद्दा उठा। इस पर उन्होंने तीखी प्रतिक्रिया देते हुए कहा,
"ये क्या हो रहा है! अमेरिका में ये स्थिति एक पल भी नहीं टिकेगी—" उन्होंने विस्तार से बताया कि कैसे वे अपने साथ 'चिवस रीगल' की तीन बोतलें लाए थे, कैसे सीमा शुल्क अधिकारी ने उनमें से एक बोतल छीन ली, और कैसे विरोध करने पर उसने जोर देकर कहा, "हम आपकी कमीज-पैंट-सूट-टाई पर भी सीमा शुल्क लगाएंगे।"
फिर उन्होंने इस विषय को उठाया,

"आंटी, मुझे आपसे कुछ पूछना है। मैं अभी इसलिए बता रहा हूँ ताकि आपको सोचने का समय मिल जाए। आप हमारी गारमेंट कंपनी में पार्टनर थीं। इसलिए आपको वहाँ के कारोबार की अच्छी जानकारी होगी। क्या आप वहाँ प्रबंधन की ज़िम्मेदारी स्वीकार करेंगी? अगर आप चाहें तो हर महीने वेतन ले लें – नहीं तो पार्टनरशिप ले लें। लेकिन मुझे नहीं लगता कि हमें कंपनी को इस हालत में छोड़ना चाहिए। अब जब मैं अमेरिका में हूँ – वहाँ कंपनी को व्यापक बाज़ार मिल सकता है।"
उसे अनूप के प्रति घृणा का भाव महसूस हुआ। फिर भी, उसने अपना संयम बनाए रखते हुए मौन धारण किया। उसने आगे कहा,
आप सोचिए। मैं अपने एक दोस्त से मिलना चाहता हूँ। मैं कल वापस आऊँगा। मैं—" और चला गया।
उसी समय ब्रह्मचारी आ गया। शाम की कक्षा के लोग भी आने लगे। कक्षा समाप्त होने और सबके चले जाने के बाद, ब्रह्मचारी सुबह फिर आया और अनुप के जाते ही उसने उसे उसके कानों में डाल दिया। उसने आगे कहा,
उन्होंने पूछा, "मम्मी ने घर ध्यान मंदिर के लिए दे दिया है, तो आपको किसने बताया?" मैंने कहा, "यह हमारा अनुमान है।" उन्होंने पूछा, "अनुमान या आशा?" मुझे कुछ समझ नहीं आया। उन्होंने आगे कहा, "मैंने वकील के पास वसीयत देखी है। उसमें ऐसा कुछ नहीं लिखा है।"
ब्रह्मचारी को बोलते सुनकर वह चौंक गई। क्या वह उसे थप्पड़ मार रहा था, या उसने गलत अनुमान लगाया था? उसने अपनी घड़ी देखी। साढ़े आठ बज रहे थे। वकील नौ बजे तक दफ्तर में रहते हैं। उसने फोन करके पूछताछ की।
आप जानती हैं कि कांति और मैं कितने करीब थे। उस दिन आप नासाऊ स्थित घर दो बार आईं और गईं। क्या मैं उस समय तैयार की गई वसीयत का विवरण जान सकती हूँ? उनका बेटा भी अमेरिका से आया था। आप उससे भी मिली थीं, है ना?
``बताइए! यह एक बहुत ही सरल वसीयत है। इसका पाठ इस प्रकार है – मैंने अपने पिता के पैसों से अपना घर बनवाया है – बाकी सब कुछ मैंने अपनी मेहनत से कमाया है – पिछले बारह वर्षों से मेरा अपने पति से कोई संबंध नहीं रहा है – मेरी मृत्यु के बाद, मेरे पति का इस संपत्ति में से एक पैसा भी पाने का कोई अधिकार नहीं है – सब कुछ मेरे बेटे को मिलना चाहिए – नीचे हस्ताक्षर हैं। मैंने उनके बताए पाठ को टाइपराइटर पर टाइप किया और उन्होंने एक गवाह के सामने हस्ताक्षर किए। उन्हें अपने पति की चिंता थी। मैं उनके बेटे के कल्याण का ध्यान रखूंगी। आपको किसी बात की चिंता करने की जरूरत नहीं है –"
शीतल को ऐसा लगा जैसे वह ज़मीन पर गिर रही हो। वकीलों द्वारा बताए गए संदेश को ब्रह्मचारी को ठीक से समझाने में उसे आधा घंटा लग गया।
उन्होंने सब कुछ सुना। वे बस से कांति के घर जाकर सोना चाहते थे। वे बस स्टैंड के लिए निकल पड़े।
उस रात शीतल सो नहीं सकी। उसे अपनी मृत सहेली के प्रति घृणा और क्रोध का भाव था। अगर नरक जैसी कोई जगह होती, तो उसे वहीं जाना पड़ता।
आधी रात के बाद, वह थोड़ी शांत हुई। मैं उसकी दौलत और घर को लेकर अपनी मानसिक शांति क्यों खो रहा था—जो पैसा उसने खुद कमाया था, वही उसने अपने बेटे को दे दिया था? चाहे वह कितना भी समझाए, उसका मन पूरी तरह शांत नहीं हुआ। सुबह उसे एहसास हुआ—हमारे कर्मों का फल हमें मिलता है! वह कहती थी कि वह अपने बेटे को कुछ नहीं देगी, इसलिए मैं कुछ सुझाव देने गया।
सुबह सात बजे दरवाजे की घंटी बजी। उसने दरवाजा खोला। दरवाजे पर ब्रह्मचारी व्यक्ति खड़ा था। उसके हाथ में कपड़े का थैला था जिसमें दो सफेद कपड़े थे। उसने मन ही मन आह भरी।

उसने उनसे कहा,
महाराज, आपके पास जीने के लिए सौ साल हैं! मैं आपको फ़ोन करने ही वाला था। मैंने कल रात इस बारे में बहुत सोचा। मरे हुए लोगों के बारे में सोचने का कोई फायदा नहीं। अपना काम करना बेहतर है! आप अंदर आइए।
जब वे अंदर आए, तो उसने उन्हें सोफ़े पर बैठाया और कहा,
मैं दो लाख रुपये दूंगा। मैं ध्यान में रुचि रखने वालों से चंदा इकट्ठा करूंगा, लाइसेंस-परमिट के काम के लिए आने वालों से भी पैसे लूंगा। आइए डी.डी.ए. से कहें कि ध्यान केंद्र के लिए जगह का इंतजाम करें। आपके लिए अलग इमारत बनवाने की पूरी जिम्मेदारी मेरी है! जब तक यह काम पूरा नहीं हो जाता, आप मेरे घर पर ही रहिए – कहीं मत जाइए।
"माताजी, मैं भी रात भर सोचता रहा। महाराज ने मुझे ध्यान के मार्ग पर कुछ कदम आगे बढ़ाया। लेकिन वे यश के बंधन में जकड़े हुए हैं। उन्होंने मुझे अपने नाम से ध्यान फैलाने का आदेश देकर छोड़ दिया। जब कांतीमाताजी ने कहा कि वे मुझे दस लाख रुपये और एक घर देंगी, तो मैं भी उसमें जकड़ गया। लेकिन उन्होंने ही मुझे उससे मुक्त किया। बंधन भ्रम है और उससे मुक्ति भी भ्रम है! कृपा के बिना साधक क्या कर सकता है? मैं कांतीमाताजी का पूर्ण ऋणी हूँ। अनूपा एक समय मेरा शिष्य था। अगर वह न आता, तो कौन जानता है कि मैं कितने और दिन इस भ्रम में जकड़ा रहता! मुझे कोई केंद्र नहीं चाहिए। मैं स्वयं का विकास करना चाहता हूँ। मैं आपको कांतीमाताजी के घर की चाबी देने आया हूँ – मुझे अपना आशीर्वाद दीजिए –" उन्होंने चाबी उनके चरणों में रखते हुए कहा और अंत्येष्टि के लिए मुंडाए गए अपने सिर को उनके चरणों में रखकर प्रणाम किया।
शीतल अवाक् रह गई। वह एक शब्द भी बोलना नहीं चाहती थी।
ब्रह्मचारी व्यक्ति उठा, थैला उठाया और दरवाजे से बाहर चला गया। वह उसे थोड़ी देर रुकने के लिए कहना चाहता था, लेकिन उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला, इसलिए वह वहीं बैठी रही।
■

२७

बिना कोई कारण बताए या आगे पूछताछ की अनुमति दिए, वैन टिपटूर की ओर तेज़ी से बढ़ने लगी; वे सभी सातों डरे हुए थे। रविंद्र को यह एहसास अवश्य हुआ होगा कि देश में आपातकाल घोषित करने के बाद, अपनी कुर्सी खोने के डर से, उसके विरुद्ध विचार फैलाने वाले समाचार पत्र के संपादक के रूप में उसके खिलाफ कार्रवाई करना सर्वशक्तिमानता का संकेत था, लेकिन उसे इस बात का एहसास नहीं था कि हेमंत, सोमशेखराचार्य, अन्नय्या, शंकरमूर्ति और हेमंत के माता-पिता, जो बिना किसी परेशानी के बच्चे से मिलने आए थे और विकलांग बच्चों की सेवा करते थे, उनकी सर्वशक्तिमानता से कितना डरेंगे।
आधी रात के एक या डेढ़ घंटे बाद का समय रहा होगा – आश्रम के दरवाजों पर ज़ोर-ज़ोर से दस्तक की आवाज़ से सब जाग गए। आधी नींद में, इससे पहले कि मैं पूछ पाता, 'कौन है?', वे चिल्लाए, 'दरवाजा खोलो'। जैसे ही दरवाज़ा खुला, उन्होंने सबका नाम पूछा, 'क्या आप रविंद्र हैं? क्या आप हेमंत होन्नाटी हैं? क्या आप अन्नय्या हैं?' और वैन में चढ़ने लगे। 'मैं पेशाब करने आया हूँ' कहने के बाद भी उन्होंने मुझे जाने नहीं दिया, कहते हुए, 'मैं वैन को सड़क पर रोक दूंगा – वहीं कर लो' और वैन तेज़ गति से चलने लगी।
रात के अंधेरे में एक काली वैन तेजी से दौड़ रही थी। टिपटूर तक छह मील का रास्ता—ये हमें कहाँ ले जा रहे हैं? टिपटूर, यां ज़िला मुख्यालय, या कहीं और? दस बंदूकधारी सैनिकों ने उन्हें घेर लिया। दो सब-इंस्पेक्टर ड्राइवर के बगल में बैठे थे।

उनको सिगरेटों और सोनेकों की बीड़ियों का धुआँ वैन में भर गया। इस गंध से हेमंत की माँ सत्यवतीबाई को उल्टी आने लगी। बड़ी होन्नाटी चिल्लाई,
``टिगर दबाना बंद करो, चलो देखते हैं! उसे उल्टी हो रही है – गाड़ी रोको। पानी लाओ और गाड़ी साफ करो –"
पचास साल पुरानी कार के शोर में उसकी आवाज किसी को सुनाई नहीं दी। उसने फिर से चिल्लाया। आखिरकार, रविंद्र ने वही बात दोहराई, तभी आगे की सीट पर बैठे सब-इंस्पेक्टर ने कार रोक दी। सब-इंस्पेक्टर ने गहरी सांस ली।
"अगर ज़रूरत पड़े तो नीचे लेटकर उल्टी कर लो। वैन धोना पुलिस का काम नहीं है।"
रविंद्र ने भी चिल्लाकर पूछा,
"तो फिर आपको काम क्या है? आप हमें गिरफ्तार क्यों कर रहे हैं? वारंट कहां है?"
"क्या मुसीबत है! वहाँ जाओ तो वारंट मांगना, वे कहते हैं! ठीक से सोने भी नहीं देते! अरे! सिगरेट मत पियो, रे—" एक सब-इंस्पेक्टर ने कहा, ``नहीं तो तुम्हें वैन खुद ही साफ करनी पड़ेगी!" दोनों सब-इंस्पेक्टरों ने फिर से सिगरेट जलाई और वैन दोबारा चलने लगी।
वे यह भी जानते थे कि आपातकाल घोषित करने के बाद, वह अपने विरोधियों को गिरफ्तार करके जेल में डाल रही थी। लेकिन जो बात किसी को नहीं पता थी, वह यह थी कि वह अपनी कुर्सी के लिए किस तरह का खतरा पैदा कर सकती थी?
वैन टिपटूर रेलवे गेट पार कर गई। रविंद्र बाहर देख रहा था। गाँव बाईं ओर था और दाईं ओर की सड़क तुमकुर-बेंगलुरु की ओर जा रही थी। जैसे ही वैन ने यातायात नियमों का उल्लंघन करते हुए बीच में दाईं ओर मोड़ लिया, उसने अगले सब-इंस्पेक्टर से पूछा,
``क्या? मुझे लगता है, बैंगलोर की जेल में!"
देखो, हमसे कुछ मत पूछो। अगर तुम्हें शौचालय जाना है या पेशाब करना है, तो हम सिर्फ तुम्हें जाने की इजाज़त दे सकते हैं! यह आपातकालीन स्थिति है, मत भूलो! मैं तुम्हें एक सिगरेट देता हूँ, देखो–"
क्या ऐसा हो सकता है कि नक्सलवादियों का मार्ग अपनाने वाले शारभन्ना और नारायणप्पा का इसमें कुछ हाथ हो? क्या ऐसा हो सकता है कि वे हमारे बारे में सोच रहे हों? यह सवाल शंकरमूर्ति और सोमशेखराचार्य के मन में उठ रहा था। जैसे ही उन्होंने आपस में इस बारे में बात की, दोनों को इसका जवाब मिल गया।
जैसे ही वैन हाईवे पर एक निश्चित गति से चलने लगी, सभी पुलिसकर्मी ऊंघने लगे। अंदर की रोशनी उन्हें परेशान कर रही थी, इसलिए ड्राइवर ने अंदर की रोशनी भी बंद कर दी। आगे की पंक्ति में बैठे बड़े होन्नाटी उठे और रविंद्र के पास आए। रविंद्र के बगल में बैठे हेमंत अपने पिता का इरादा समझ गए और उनके बगल वाली सीट पर बैठ गए। होन्नाटी रविंद्र के बगल में बैठ गए और अंग्रेजी में इतनी धीमी आवाज़ में बोले कि केवल रविंद्र ही सुन सके,
सब जानते हैं कि हेमंत ने जे.पी. के मार्गदर्शन में ही इस दिव्यांग सेवा केंद्र की शुरुआत की थी। वहाँ जे.पी. की तस्वीर भी लगी है। इसके अलावा, हेमंत गाँव-गाँव जाकर जे.पी. के विचारों का प्रचार करते थे। अगर उनके मन में थोड़ी भी समझदारी है, तो उसे जगाने वाला देश में सिर्फ एक ही व्यक्ति है – वो हैं जे.पी.! हेमंत को गिरफ्तार करना भले ही बेबुनियाद लगे, लेकिन यही वजह है। पर हमें, पति-पत्नी को, क्यों गिरफ्तार किया गया?
``मैं भी यही सोच रहा था। सेवा क्षेत्र में इस तरह अचानक हंगामा खड़ा करना ठीक नहीं लगता। उन्होंने बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया, जो देश के विकास के लिए खतरनाक है, इसलिए आपने इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इकोनॉमिक्स में एक विस्तृत लेख लिखा, है ना? उसी के आधार पर विपक्षी दल ने संसद में उनके खिलाफ

जमकर आलोचना की। मुझे लगता है कि इसीलिए आपके मन में खुद को लेकर गलत धारणा है," रविंद्र ने कहा।
"यह संभव है" कहते हुए होन्नाटी को वह लेख फिर याद आ गया। साथ ही, उन्हें और भी बहुत कुछ याद आया। सिर्फ़ यही लेख नहीं, उन्होंने भारतीय रिज़र्व बैंक की बैठकों में आंकड़ों के साथ यह मुद्दा उठाया था कि संजीवनी आदि जैसे नामों का इस्तेमाल करके राजनीतिक लाभ के लिए हंगामा खड़ा करना देश की अर्थव्यवस्था पर बहुत बुरा असर डाल रहा है। उन्हें यह भी याद आया कि इसी कारण वे राज्यपाल नहीं बन पाए थे। हालाँकि उन्होंने अपने कार्यकाल में नियमों का पालन करते हुए सरकार के विरुद्ध कुछ नहीं लिखा था, लेकिन सेवानिवृत्ति के बाद, जब उन्हें एक आम नागरिक के रूप में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मिली, तो उन्होंने अपने शोध लेखों को और अधिक स्पष्ट रूप से लिखना शुरू किया और उन्हें अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान भी मिलने लगी। रविंद्र सही कह रहे हैं। हम संयोग से नहीं पकड़े गए।
उन दोनों की बातें सुन रहे अन्नाय्या ने पूछा,
"उन्होंने सबको गिरफ्तार किया और फिर छोड़ दिया! अंत में क्या होगा?"
एक पल के लिए होन्नाटी और रविंद्र स्तब्ध रह गए। सैनिक भले ही असमंजस में थे, लेकिन वे कन्नड़ में अन्नय्या का प्रश्न समझ नहीं पाएंगे! कुछ देर बाद रविंद्र ने धीमी आवाज़ में अंग्रेज़ी में कहा,
इसमें कोई शक नहीं कि उसका लक्ष्य पूर्ण तानाशाही सत्ता हासिल करना है। अब, भले ही वह ऐसा सोचती हो, वह पीछे नहीं हट पाएगी। हिटलर-मुसोलिनी-स्टालिन- कोई भी उदाहरण देख लीजिए! कोई भी हमारी आलोचना न करे, हमारा विरोध न करे या हमें सत्ता छोड़ने के लिए न कहे! यहां तक कि अगर कोई बच्चा छींक दे और अपशगुन का संकेत दे, तो वह राजद्रोह के आरोप में उसका सिर कलम करने की प्रवृत्ति रखती है!
हालांकि रवींद्र और बड़े होन्नाटी बहुत धीमी आवाज़ में बोल रहे थे, लेकिन आगे की पंक्ति में बैठे हेमंत उन्हें सुन सकते थे। विकलांग बच्चे सुबह हमेशा की तरह उठते थे। आश्रम में रसोइया कारियाप्पा के अलावा कोई और नहीं था। बच्चों के चेहरे कौन धोएगा, उन्हें कौन नहलाएगा और बाकी सफ़ाई कौन करेगा? अगर कारियाप्पा खाना बनाता भी, तो इकत्तीस बच्चों के मुंह में खाना कैसे जाता? यह तो नवजात शिशु का सिर काटने जैसी मानसिकता है! क्या होगा अगर सेवाश्रम में विकलांग बच्चों को भी जेपी का एजेंट समझकर जेल में डाल दिया जाए? यह सोचकर उसकी आँखों में आंसू आ गए। उसी समय, उसकी माँ ने पूछा,
भाई, आज से बच्चे क्या करेंगे?

■

जब तक वे बैंगलोर पहुँचे और वहाँ की केंद्रीय जेल में दाखिल हुए, तब तक वे सब बेचैन हो चुके थे। अंदर जाते ही वहां लोगों की भारी भीड़ उमड़ पड़ी। वहां का माहौल ऐसा था मानो किसी स्वतंत्रता सेनानी की सभा चल रही हो। आराम के लिए दिव्यांग कल्याण गृह आए रविंद्र को पूरे देश की स्थिति का कोई अंदाजा नहीं था – किसे कहाँ रखा गया था? उन्हें पता था कि किसी को भी कभी भी गिरफ्तार किया जा सकता है, बिना कोई कारण बताए गिरफ्तारी और जेल में डालने की शक्ति का दुरुपयोग किया जा रहा है। उन्हें अखबार की स्थिति का भी अंदाजा था। हालाँकि उनकी शारीरिक और मानसिक कमजोरी अभी पूरी तरह से ठीक नहीं हुई थी, फिर भी वे भूमिगत होकर अलग-अलग खबरें जुटाकर प्रकाशित करने के लिए उत्साहित थे। उन्हें पूरा यकीन था कि अगर वे दिल्ली में होते तो गिरफ्तार हो जाते। इसीलिए अन्नय्या ने भी उन्हें न जाने की सलाह दी थी।
हमारी पत्रिका का क्या हुआ? सैनी क्या कर रहा है? उसे यह खबर कहाँ से मिली? अब वह हमें इस जेल में ले आया है!

जब मैं जेल पहुंचा, तो मुझे पता चला कि आडवाणी, वाजपेयी, दंडवते जैसे राष्ट्रीय नेताओं को भी यहीं रखा गया था। उनके लिए एक अलग अनुभाग था। कैदियों को आपस में मिलने से रोकने के लिए, उस विशाल जेल को छोटे-छोटे अनुभागों में बांटा गया था। हालाँकि, विचाराधीन कैदियों के समूह को अलग रखा गया था। प्रत्येक अनुभाग के कैदियों को दूसरे अनुभाग के लोगों से बात करने या मिलने-जुलने की मनाही थी।
आडवाणी-वाजपेयी-दंडावते को स्थान की जानकारी दे दी गई थी। लेकिन उनसे मिलना संभव नहीं था। रविंद्र ने अपना नाम और पहचान एक कागज पर लिखकर उस विभाग के एक व्यक्ति के माध्यम से उन्हें भेज दी। जब तीनों ने रविंद्र से मिलने की ज़िद की, तो अनुमति मिल गई।
उन्होंने पहले पटना में और फिर दिल्ली में वाजपेयी का साक्षात्कार लिया था। उन्हें वाजपेयी याद थे। जब उन्होंने 'तथ्य' का जिक्र किया तो बाकी दोनों को कुछ और कहने की जरूरत नहीं पड़ी। वाजपेयी ने मुस्कुराते हुए कहा,
"आप क्या करेंगे? आपातकाल घोषित किए बिना आपके 'द फैक्ट' पर प्रतिबंध लगाना संभव नहीं था! इसीलिए तो यह आपातकाल लगाया गया है!"
तीनों से हुई मुलाकात में कुछ और मुद्दे भी सामने आए। तीनों संसद के लिए सार्वजनिक लेखा संबंधी काम के सिलसिले में बेंगलुरु आए थे। हालांकि आपातकाल की आधिकारिक घोषणा रात में हुई थी, फिर भी तीनों को दोपहर 3 बजे गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें क्यों गिरफ्तार किया जा रहा है? हम संसद सदस्य हैं – हमने चाहे जो भी कहा, पुलिस ने एक ही बात कही, "हमें कुछ नहीं पता! हमें ऊपर से आदेश मिले हैं, इसीलिए हम उन्हें गिरफ्तार कर रहे हैं।" हमने पूछा कि किसके आदेश पर, लेकिन उन्होंने कुछ नहीं बताया।
तीनों ने कहा कि अब देश पहले झटके से उबर चुका है। मानो अंधेरे की आदी हो चुकी आँखों से अब हालात साफ़ होते जा रहे हैं। कई नेता भूमिगत हो चुके हैं। वफादार कार्यकर्ताओं का समर्थन प्राप्त पार्टियों ने अपने गुप्त पर्चे छापने शुरू कर दिए हैं। यह चलन भी धीरे-धीरे फैल रहा है। अब कार्यकर्ता जेल में बंद अपने पार्टी नेताओं से संपर्क साधने में कामयाब हो रहे हैं। सरकार ने जॉर्ज फर्नांडीस को एक विनाशकारी व्यक्ति के रूप में पेश करना शुरू कर दिया है...
जब जेल भर गई, तो शुरू में कैदियों को ठीक से खाना नहीं मिल रहा था। इसके लिए, राजनीतिक आंदोलन में शामिल कैदियों को रिहा कर दिया गया, जिससे काफी अफरा-तफरी मच गई। कैदियों पर खर्च करने के लिए दिया गया पैसा जेल अधिकारियों ने खा लिया। इसका एक बड़ा हिस्सा सरकार के पास भी पहुंच गया। भोजन की मांग, सत्याग्रह और अदालत जाने की धमकियों के कारण मची अफरा-तफरी के बाद, वहाँ की स्थिति अब "अमानवीय" से बदलकर "सहनीय" हो गई थी।
इस अनुभव ने जेल में बंद सभी कैदियों को ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष के दौरान हुए अपने अनुभवों की याद दिला दी। जेल में हर सुबह प्रार्थना, व्यायाम, पठन और राष्ट्र निर्माण पर चर्चा का माहौल रहता था। साथ ही, उनमें कई छोटे-बड़े समूह थे, वामपंथी-दक्षिणपंथी, कांग्रेस छोड़ने वाले, के.एम.पी. द्रविड़ विचारधारा वाले, अखिल भारतीय दृष्टिकोण वाले, लोहिया समर्थक और वे लोग जिन पर अत्याचार हुआ था। उनके बीच कई वाद-विवाद होते थे। वे सभी इस बात पर सहमत थे कि निरंकुश सत्ता को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए। लेकिन उसके बाद, वे इस बात पर बहस करने लगे कि राज्य का शासन कौन चलाएगा और कैसे, और हर कोई अपने तरीके को ही मुक्ति का मार्ग मानता था। कभी-कभी बहस इतनी बढ़ जाती थी कि उनके सामने आने वाले विरोधी विचार जेल के बाहर के एकाधिकार के बजाय गुस्से का निशाना बन जाते थे। हर कोई एक-दूसरे से कहता था, "तुम्हारे कारण ही हमारे देश का यह हाल हुआ है!"

■

उन सातों की गिरफ्तारी को पंद्रह दिन बीत चुके थे। एक दिन खबर आई कि रविंद्र का भाई उससे मिलने आया है। यह भाई कौन था? रविंद्र हैरान रह गया। कौन हो सकता है? शांतामूर्ति?

रविंद्र वार्डन के पीछे-पीछे बाहरी बैठक कक्ष में गया। अनुबंध पर हस्ताक्षर करने के बाद वह उस कमरे में गया जो सैनिक ने उसे दिखाया था और वहाँ उसने देखा – जी हाँ, शांतमूर्ति आ चुके थे। वह उठे और रविंद्र के पास आकर अपने दोनों हाथों को हथेलियों में कसकर पकड़ते हुए बोले,

मुझे लगा था कि तुम ही होगे!

"आपको कैसे पता चला कि मैं यहाँ हूँ?"

बैठ जाइए... मैं आपको बताता हूँ। एक गुप्त समाचार पत्र नेटवर्क पूरे देश में फैल गया है, जो भारत में ज़्यादा से ज़्यादा प्रमुख लोगों के बंदी होने की जानकारी दे रहा है। इसमें आपका नाम, आपकी गिरफ़्तारी का स्थान आदि भी दिया गया है। इसका एक नाम 'होन्नाटी' भी है। आप घर पर रहते थे—सितार बजाते थे—बस इतना ही। आप आराम करने के लिए कर्नाटक आए थे—आपने मुझे एक कार्ड क्यों नहीं भेजा? मैं आपसे मिलने ज़रूर आता। भारत का इकलौता असली साप्ताहिक—'द फैक्ट!' आप सही मायने में हीरो हैं!

उसे थपथपाते हुए रविंद्र ने पूछा,

"लेकिन मुझे नहीं पता कि आज 'द फैक्ट' के साथ क्या हो रहा है।"

सरकार ने दफ्तर बंद कर दिया है। मैनेजर सैनी भूमिगत हो गया है। अफवाह है कि सैनी दिल्ली, हरियाणा और पंजाब में भूमिगत अखबारों का संचालन कर रहा है। उत्तर भारत में भारी संख्या में गिरफ्तारियां हुई हैं! क्या यही भारतीय राजनीति का केंद्र नहीं है!

``कर्नाटक में स्थिति कैसी है?"

इनमें से देवराज अरास ने अपना आपा नहीं खोया। जब मैडम ने निजलिंगप्पा को जेल में डालने का आदेश जारी किया, तो उन्होंने कहा, "ऐसा मत करो। अगर ऐसा करोगे तो लोग नाराज़ हो जाएंगे, इसीलिए! उन्होंने अपने अधिकारियों और पुलिस को बताया है कि यह अधिकार चार दिनों के लिए है - फलां व्यक्ति को गिरफ्तार करो, इसलिए अगर दिल्ली से आदेश आए तो ही उसे गिरफ्तार करो - उससे पहले मुझे सूची दिखाओ!" लेकिन मैडम उनसे नाराज़ हैं, उन्होंने कहा!

शांतमूर्ति ने अपनी जेब में हाथ डाला और रविंद्र को दो कागज़ दिए। पहले कागज़ पर टाइप किया हुआ पाठ था। ऊपर और नीचे कोई हस्ताक्षर नहीं थे। उस पर लिखा पाठ था –

प्रिय मित्र, मैं इतने लंबे समय से ऐसी ही स्थिति में जी रहा हूँ और कर्तव्य की उपेक्षा का बोध कर रहा हूँ। सांसारिक मामलों में लीन रहने के कारण मैं अपने कर्तव्य में चूक गया हूँ – यही मेरी कमजोरी है! यदि मैं ऐसी स्थिति में वहाँ आऊँ, तो कृपया मुझे बताएँ कि मैं क्या कर सकता हूँ। मैं यहाँ बहुसंख्यकवाद विरोधी आंदोलन के सचिव के रूप में कार्यरत हूँ।

जैसे ही उसने पढ़ना समाप्त किया, शांतामूर्ति ने पूछा,

``तलवार?"

"वाह! पत्रकार को ऐसा ही होना चाहिए!" रविंद्र ने प्रशंसा की।

मैंने पत्र पढ़ा। मुझे लगता है कि उनके लिए वहीं रहना बेहतर है। अगर वे यहां आकर जेल में ही पहुंच जाते हैं तो आने का क्या फायदा?

"मैंने भी यही सोचा था। मैं एक पत्र लिखूंगा। इसे बाद में भेजने का इंतजाम कर लेना—" रविंद्र ने दूसरा पत्र लेते हुए कहा।

दूसरा पत्र हिंदी में था। यह एक अशिक्षित कैदी की लिखावट में लिखा गया था। हालाँकि शांतामूर्ति हिंदी जानते थे, उन्होंने यह निजी पत्र नहीं पढ़ा था। इसके

अलावा, वे देवनागरी में छपे अक्षर पढ़ सकते थे। उन्हें हस्तलेख पढ़ने में कठिनाई होती थी। फिर भी उन्होंने पत्र रविंद्र को सौंप दिया और अन्य कैदियों से बातचीत करने लगे।

``मेरे बहनोई, कांति, का दिल का दौरा पड़ने से निधन हो गया। कुछ दिनों बाद उनका बेटा आया। उसने रोज़ पेंटा से संबंध बना लिया और अपनी माँ की वसीयत के अनुसार घर और कारखाने पर कब्ज़ा कर लिया। उसने मुझसे कारखाने की देखभाल करने को कहा। लेकिन मैंने घृणा के कारण मना कर दिया। मुझे लगता है कि उसके चाचा ने भी मना कर दिया। फ़िलहाल उसने किसी को ठेका दे दिया है। मैंने उसके एक कारोबारी दोस्त से सुना है कि उसकी पत्नी जल्द ही भारत आकर कारखाने का विस्तार करेगी और वह अमेरिका में रहकर अपना कारोबार बढ़ाएगा। मुझे उम्मीद है कि आपको इसके बारे में कुछ नहीं पता होगा, इसलिए मैंने आपको पत्र लिखा है।"

इस पत्र पर न तो कोई शीर्षक था और न ही हस्ताक्षर। रविंद्र को एहसास हुआ कि हालांकि यह शीतल का पत्र था, लेकिन यह उसकी लिखावट में नहीं था।

कांति की मृत्यु दिल का दौरा पड़ने से हो गई। हालांकि वह कांति की यादों से परे था, फिर भी रविंद्र को यह खबर सुनकर गहरा दुख हुआ। उसकी शादी कब हुई थी? उसकी पत्नी कौन थी? उसे इस बारे में कुछ भी पता नहीं था। उसकी पत्नी और बेटा तो बहुत पहले ही गुजर चुके थे। अब इस मृत्यु की खबर से राहत महसूस करने की कोई जरूरत नहीं थी। उसने अपने मन को समझाने की कोशिश की, लेकिन फिर भी वह दुखी रहा।

बैठक का समय समाप्त हो गया है। शांतमूर्ति ने कहा।

मैं अगले हफ्ते आऊंगा। मेरे लिए आना मुश्किल नहीं है। मैं जेलर चेलुवराज को जानता हूं, जो राजनीतिक कैदियों और अपराधियों की रिहाई के मामले के बाद यहां आए थे। क्या आप जानते हैं कि उन्होंने निजी तौर पर क्या कहा था? चेलुवराज के पिता आजादी से पहले के समय में देश के लिए जेल गए थे। वहां के जेल अधिकारी ने उनके साथ एक अपराधी कैदी जैसा बर्ताव किया था। आजादी के बाद, वे मंत्री बने। गृह मंत्री। बाद में, मैंने उस अधिकारी को अपने सामने बुलाया और पूछा, "क्या आप मुझे पहचानते हैं?" जब वे सिर झुकाए खड़े रहे, तो उन्होंने सिर झुकाए ही खड़े रहे। चेलुवराज कहते हैं। जेल जाना मतलब मंत्री बनना, वे कहा करते थे! अगर आप मुझसे मिलना चाहते हैं, तो इसे एक कागज़ पर लिखकर बाहर कूड़ेदान में डाल दें। मैं आपसे मिलने आऊंगा। क्या आपको किसी चीज की जरूरत है? क्या आपके पास सिगरेट के लिए पैसे हैं?

"जब से मैं विकलांगों के लिए बने गृह में आया हूँ, मैंने सिगरेट पीना छोड़ दिया है...आप कैसे हैं?"

"वो मातृत्व अवकाश पर है। घर पर सो रही है! आपातकाल घोषित होने के एक घंटे के भीतर ही उसने बच्ची को जन्म दिया। बेटी हुई है! आपातकाल की वजह से ही तो उसने जन्म दिया, है ना? हम बच्ची का नाम 'इमरजेंसी' रखेंगे!" शांतामूर्ति हंस पड़ी।

``उन्हें मेरी बधाई दे देना! अगली बार हमारे लिए लड्डू और बर्फी लाना –" रवींद्र ने उन्हें विदाई दी।

शांतमूर्ति के जाने के बाद रविंद्र का दुख और बढ़ गया। वह कुछ देर अपने विभाग में इधर-उधर घूमता रहा। इस दौरान जिन लोगों से उसकी जान-पहचान हुई थी, वे उसे देखते ही उससे बातें करने लगते थे। अब वह कुछ कहना नहीं चाहता था। लेकिन इतने बड़े परिसर में उसे कोई शांत कोना नहीं मिला। वह वापस मुड़ा और सुबह की कसरत के लिए बने क्षेत्र में जाकर ज़मीन पर बैठ गया।

कुछ क्षण बाद, उसने शीतल का पत्र अपनी जेब से निकाला और उसे दोबारा पढ़ा। शीतल का कुछ पत्रकारों से संपर्क रहा होगा। वरना वह मुझे यह पत्र कैसे भेजती?

उसे मुझे यहाँ खबर बताने की क्या ज़रूरत थी? उसने मुझे कांति-हेमंत के रिश्ते के बारे में पहले ही बता दिया था। अब, कांति की मृत्यु के बाद, मुझे उसकी संपत्ति के निपटान के बारे में लिखने की क्या ज़रूरत थी! भले ही वे दोस्त थे, क्या उनके मन में एक-दूसरे के लिए कोई द्वेष था?
किसी कारणवश, उसे घोर अकेलेपन का अहसास हुआ। वह खाने की घंटी बजने तक वहीं बैठा रहा।
उस समूह के चालीस लोगों में से कई रात में खर्राटे लेते थे। पिछले दो हफ्तों में, उसे उन खर्राटों की आवाज़ सुनकर सोने की आदत हो गई थी। लेकिन उस रात, रविंद्र सो नहीं सका। यह एहसास कि उसका पिछला जीवन खो गया है और वह अकेला है, उसका पीछा नहीं छोड़ रहा था। वह सोच-विचार करने के बाद भी यह नहीं समझ पा रहा था कि राहत की हल्की अनुभूति के बजाय उसका मन दुख से क्यों भारी हो रहा है।
क्या मुझे ये चिट्ठी अन्नाय्या को दिखानी चाहिए? शायद अपने मन की बात कहने से मुझे थोड़ा हलका महसूस हो। उन पाँचों को एक कमरे में बंद कर दिया गया था। अन्नाय्या का मन कर रहा था कि वो उसे कमरे से बाहर बुलाकर चिट्ठी दिखा दे। लेकिन उसने खुद को रोक लिया। अन्नाय्या को चिट्ठी दिखाते समय उसे कहना चाहिए, 'इसे हेमंत को मत दिखाना – उसे इसके बारे में मत बताना', नहीं तो वो आसानी से दूसरों को ये खबर बता देगा। अगर वो कहता है 'उसे मत बताना', तो उसे अन्नाय्या को कोई बहाना देना चाहिए –
अंत में, कुछ देर बाद, वह उठा और बाहर गया, अपनी जेब में रखे पत्र को छोटे-छोटे टुकड़ों में फाड़ दिया और उसे केले की टोकरी में फेंक दिया।
जब वह अपने कमरे में बेहोशी की हालत में बैठा था, तब सत्यवतीबाई उसके कमरे में आई। उसे जेल के इस हिस्से के पास स्थित बरगद के पेड़ के नीचे समय बिताने की आदत हो गई थी। इसी हिस्से में होन्नाट्टी दंपति के लिए एक छोटा कमरा व्यवस्थित किया गया था।
वह आई और हेमंत की चटाई पर बैठ गई। अन्नय्या ने उससे पूछा,
"महोदय, आपका समय राष्ट्रीय नेताओं के साथ अर्थशास्त्र पर चर्चा करने में व्यतीत हो रहा है। आपका समय किस प्रकार व्यतीत हो रहा है?"
"यह महज़ समय बिताने का सवाल नहीं है। कब से मेरे मन में यह बात चल रही है, देखो! मैं यही पूछने आया हूँ। हमें यहाँ आए पंद्रह दिन हो गए हैं। पता नहीं वहाँ उन अपाहिज बच्चों का क्या हुआ होगा! लगता नहीं हेमंत जल्द ही रिहा होगा। अन्नाया भी सरकार की नज़र में खतरनाक आदमी होगा। हमारे बॉस को दिल्ली के आदेश पर जेल में बंद कर दिया गया है। लेकिन मुझे क्यों हिरासत में रखा गया है? इसके पीछे कोई कारण नहीं है। मैंने कुछ भी गलत नहीं किया है और मेरा किसी भी राजनीति से कोई लेना-देना नहीं है। अगर मैं सरकार से रिहाई की गुहार लगाऊं, तो वे मुझे रिहा कर देंगे। मैं अपाहिज बच्चों के पास जाकर उनकी देखभाल करूँगा। रसोइया कारियाप्पा अकेले क्या करेगा? अगर वहाँ खाने-पीने की कमी होगी, तो मैं जाकर उन्हें इकट्ठा करूँगा। यह सच है कि जब तक आप सब रिहा नहीं हो जाते, तब तक बच्चों को शिक्षा नहीं मिलेगी! लेकिन तब तक, मैं देख सकता हूँ कि वे बच्चे भूख या बीमारी से नहीं मरेंगे, है ना?" यदि आप सोमशेखरचार्य और शंकरमूर्ति को भी मेरे पास छोड़ दें तो बहुत अच्छा होगा!
सत्यवतीबाई की बातें सुनकर अन्नय्या का चेहरा खिल उठा। रविंद्र भी उसके चेहरे को निहार रहा था। अचानक उसके मन में अपनी दादी की याद कौंध गई।
सोमशेखरचार्य और शंकरमूर्ति भी उत्साहित थे।
"लेकिन क्या वे हमें छोड़ देंगे?" उन्होंने अपनी शंका व्यक्त की।
हेमंत ने कहा,

"माँ, यह निश्चित नहीं है कि वे उन दोनों को रिहा करेंगे या नहीं, लेकिन आपको हिरासत में रखने का कोई महत्वपूर्ण कारण नहीं है। हम अप्पा पर ध्यान देंगे। वह यहाँ आडवाणी-वाजपेयी-दंडावते के साथ अर्थशास्त्र पर चर्चा कर रहे हैं। अगले दिन उन्होंने कहा, 'मैं यहाँ आया था, अच्छा लगा।'"
रविंद्र अब भी उसके चेहरे को घूर रहा था। अगर वह उसे एक खास कोण से देखता, तो उसे पता चलता कि उसीका और लेका का चेहरा कितना मिलता-जुलता है।

■

वहाँ इतने कैदी थे कि एक-दूसरे को जानना नामुमकिन था। वहाँ एक ऐसा व्यक्ति था जो हर किसी के पास जाता और उन्हें इधर-उधर हिलने भी नहीं देता, उन्हें अपना भाषण सुनने पर मजबूर कर देता। जैसे ही वह हमारी तरफ आने लगता, बाकी कैदी भाग जाते। बहुत कम लोग उसका नाम जानते थे। कोई जानना भी नहीं चाहता था। जहाँ भी उसका ज़िक्र होता, उसे 'समाजवादी' ही कहा जाता था। पैंट, चोगा, जैकेट, वह बौद्धिक थैला जो जेल में भी हमेशा उसके कंधे पर लटका रहता था, और काली तिल और चावल के मिश्रण जैसी दाढ़ी-मूंछ जो उसकी ठुड्डी से चिपकी रहती थी!
अगर कोई उनसे मिलता या कोई चर्चा का विषय न होता, तो वे खुद ही कोई विषय बना लेते और बोलना शुरू कर देते। वे घंटों खड़े होकर देश की अर्थव्यवस्था, दक्षिण अफ्रीका की क्रांति, छुआछूत के खिलाफ आंदोलन, वेदों द्वारा चार्वाकों को धोखा देने के तरीके, परंपरा में व्यक्तियों की उपेक्षा, साहित्य में विविधतापूर्ण प्रवृत्तियों और लोहिया के गांधी और मार्क्स से कहीं अधिक समग्र विचारक होने के बारे में बताते रहते। वे सत्याग्रह, जिंदाबाद-मुर्दाबाद आदि जैसे नारे लगाने के लिए हमेशा तैयार रहते थे। इसके लिए उन्हें किसी ठोस कारण की भी आवश्यकता नहीं होती थी।
उन्हें इस बात पर गुस्सा था कि जेल में सिर्फ आरएसएस के लोग ही दाखिल हुए थे। उनका सबसे पसंदीदा आरोप यह था कि वाजपेयी-अडवानी जेल में बंद अन्य कैदियों को धार्मिक कट्टरता से प्रभावित कर रहे थे। वे सबके सामने इस बात पर ज़ोर देते थे कि उन्हें इसके खिलाफ लड़ना चाहिए। अगर कोई आपस में बात भी कर रहा होता, तो वे बीच में आकर ज़बरदस्ती अपने विचार थोप देते। एक बार उन्होंने प्रार्थना सभा में बहस छेड़ दी, "अगर सरकार हमें जेल में हमारे ब्रांड की सिगरेट नहीं दे सकती, तो हमें जेल में रखने का क्या मतलब है?" वे जेल में हर तरह की खबरें फैलाते थे। सबका मानना था कि उनकी बताई खबर को सात बार धोकर, पत्थर पर सुखाकर, हिलाकर फिर उस पर विश्वास करना चाहिए।
एक बार कुमारस्वामी ने खबर दी कि रामभट्ट नाम के एक अज्ञानी उपदेशक को जेल में डाल दिया गया है - वह किसी मंदिर का पुजारी है - उसे इसलिए पकड़ा गया क्योंकि उसने आधे घंटे तक एक पत्थर की मूर्ति के सामने 'इंदिरा गांधी मुर्दाबाद' का जाप किया और फिर 'इंदिरा गांधी मुर्दाबाद' कहा - उसे उसी विभाग के पाँचवें कमरे में रखा गया है।
सब कुछ सुनने के बाद, रविंद्र ने सोचा, "क्या यह रामभट हो सकता है, जो उसके गाँव के मंदिर का पुजारी है?" वह यह भी जानता था कि कुमारस्वामी से इस बारे में पूछने का कोई फायदा नहीं था, क्योंकि उनका रंग भी काला था। रविंद्र को पूरा यकीन था कि वह और गहराई से पूछताछ नहीं करेगा। इसीलिए वह खुद पाँचवें कमरे में चला गया।
रामभट्ट जली हुई बीड़ियों के हजारों काले निशानों और कुचले हुए कंबलों के खून के धब्बों से ढकी दीवार के पास चटाई पर सो रहा था। उसने मक्के की धोती और एक गंदी कमीज पहनी हुई थी। उसके हाथों और गर्दन की काली त्वचा झुर्रीदार थी। उसके माथे पर एक सफेद निशान था, जो एक नाम के आकार का था, वही

नाम जो उसने बचपन से रखा था, और इत्र लगाने वाली जगह की त्वचा लाल हो गई थी। उसने शायद स्नान नहीं किया था। ऐसा लग रहा था मानो उसने पिछले एक-दो दिनों से कुछ खाया-पिया भी न हो।
वे आँखें बंद करके लेटे हुए थे। कुछ लोग पास ही बिछी चटाइयों पर बैठे सिगरेट पी रहे थे और बातें कर रहे थे। कुछ लोग चिमटी से उड़ रहे धूल के कीड़ों को पकड़कर मसल रहे थे। दो-तीन धूल के कीड़े रामभट्ट की धोती के ऊपर भी उड़ रहे थे।
रविंद्र पास गया और पुकारा,
``रामभट्ट! क्या तुमने मुझे पहचाना? क्या तुमने मेरी आवाज़ पहचानी?"
उन्होंने देखा कि उनका नाम कौन पुकार रहा है, लेकिन वे उसे पहचान नहीं पाए। रविंद्र ने देखा कि उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे। वह उठकर बैठ गया और बोला,
"हालात ठीक नहीं लग रहे हैं, हसन के वरिष्ठ डॉक्टर ने कहा है कि ऑपरेशन तभी किया जाए जब यह पूरी तरह पक जाए।"
उनके बगल में चटाई पर बैठे हुए उन्होंने कहा,
"मैं रवींद्र-व्यंकटासुब्बय्या का पोता हूँ..." उसने दोनों के हाथ अपने हाथों में लेते हुए कहा।
अपने हाथों को छूते हुए उन्होंने कहा,
``रवींद्र, जी हाँ? बाबा, आपको किसने बताया कि मुझे यहाँ रखा गया है? क्या अखबार में यह भी लिखा था कि हमारे परिवार की इज्जत मिट्टी में मिल गई है?"
वह फूट-फूटकर रोने लगा। मोतियाबिंद से भरी उसकी आँखों में आँसू भर आए, जिससे उसे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। धीरे-धीरे उसका रोना चीखों में बदल गया।
रविंद्र उसे संतुष्ट करने लगा।
``रामभट-ऐसा मत करो। आराम से बैठो-कुछ नहीं हुआ-चिंता मत करो-मैं ही तो हूँ ना?-"
"ये सब कौन करने वाला है? हमारे परिवार में आज तक कोई जेल नहीं गया—हमारे सारे पूर्वज तो नरक में ही गए होंगे! मैंने क्या गलत किया? मैंने तो कोई पाप नहीं किया," वो रोते हुए बोला।
"यहाँ दो हज़ार से ज़्यादा लोग हैं! ये लोग उन लोगों को ला रहे हैं और जेलों में भर रहे हैं जिन्होंने कुछ भी गलत नहीं किया है – ये सब सरकार की गलती है, रामभट्ट! अगर हम अपराध करने पर जेल जाते हैं, तो देश नरक में जाएगा। लेकिन राजनीतिक गुंडागर्दी के खिलाफ कौन कुछ करेगा? क्या आपने सरकार, इंदिरा गांधी, आपातकाल, चुनाव में भ्रष्टाचार के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया?"
मेरे बगल में चटाई पर बैठे और लात मार रहे लोगों में से एक ने कहा,
हम सुबह से बूढ़े आदमी को यही बात समझा रहे हैं! लेकिन अगर उसके दिमाग में बैठ गया, तो कसम से! उसे परसों ही संक्रमण हुआ था और वो उसे वापस ले आया – तब से उसने पानी की एक बूंद तक नहीं पी है, लोग कहते हैं। वो सुबह उठा तक नहीं!
तभी समाजवादी कुमारस्वामी वहां पहुंचे। अन्नाइया भी उनके पीछे-पीछे आ रहे थे। रवींद्र ने अन्नाइया को अब तक समझी हुई सच्चाई बताई। उन्होंने रामभट्ट को भी इस बात के लिए राजी कर लिया।
इस जेल जैसे माहौल में हमें शर्मिंदा होने की कोई वजह नहीं है। बल्कि हमें गर्व महसूस करना चाहिए। चलिए, पहले कुछ खाना खा लेते हैं। फिर बातें करते हैं! रामभट्ट, क्या तुम मुझे जानते हो? मैं अन्नागौड़ा-हालुकेरे में एक स्कूल चलाता था – याद है ना?

"जी हाँ! मैंने सही सुना। पहले वो गरीब बच्चों को खाना और शिक्षा देते थे। अब तो उन्होंने ये सब छोड़ दिया है और सिर्फ अमीरों के बच्चों को ही शिक्षा देते हैं, ऐसा समझिए! राजशेखर बीच में यही कह रहे थे।"
खबर के गलत तरीके से फैलने को देखकर अन्नाय्या ने शांत भाव से कहा,
यह सब धोखाधड़ी की एक बड़ी कहानी है! मैं आपको बाद में शांति से समझाऊंगा। देश में लाखों लोगों को जेल में डाला गया है। मेरे पास—रवींद्र के पास—और भी बहुत से लोग हैं। इसमें कोई पाप नहीं है। आइए, रसोई में खाना बनाइए—मैं आपको खाने के लिए कहूंगा। नहीं तो, मैं आपके लिए थाली में खाना लाऊंगा। आप पहले खा लीजिए!
जेल में उसे जो अपराधबोध हो रहा था, वह थोड़ा कम हो गया था। उसने कुछ देर के लिए अपनी आँखें बंद कीं और फिर पूछा,
"यहाँ के रसोइये किस जाति के हैं?"
"जेल में कुछ भी निश्चित नहीं होता, वहां सरकारी कर्मचारी भी होते हैं..."
"तो फिर मैं उसे छूऊंगा भी नहीं," उसने अपनी आंखें फिर से बंद करते हुए और वहीं बैठे हुए कहा।
यह सुनकर आगे खड़े समाजवादी कुमारस्वामी नारे लगाने लगे।
भाटों पर धिक्कार हो! जातिवाद की निंदा हो! उस पुरोहित वर्ग पर धिक्कार हो जिसने पाँच हज़ार वर्षों तक समाज का शोषण किया है!
जैसे ही यह बात उनके कानों तक पहुँची, आलस में इधर-उधर लोट रहे लोग और चटाइयों पर बैठकर बातें कर रहे लोग जोश में उठ खड़े हुए और नारे लगाने लगे। नारे सुनते ही आस-पास के लोग भी दौड़ते हुए नारे लगाने लगे।
इस अचानक हुए दंगे से जेल अधिकारी भयभीत हो गए। उन्होंने आदेश दिए और सैकड़ों सैनिक अपनी बंदूकें लहराते हुए बाहर निकल आए। इन सब से उत्साहित होकर कुमारस्वामी में वीरता का भाव जागृत हुआ और वे और भी जोर से नारे लगाने लगे।
``भट्टाचार्यों का नाश हो, पुरोहित वर्ग का नाश हो–"
परिस्थिति में आए इस अचानक बदलाव से रविंद्र और अन्नाइया स्तब्ध रह गए। उसी समय, हांफते हुए वहां पहुंचे जेलर ने कुमारस्वामी से पूछा,
क्या? क्या हुआ?
तुरंत ही, सशस्त्र सैनिकों ने जेलर को उसकी सुरक्षा के लिए घेर लिया।
"रामभट्ट को गिरफ्तार करो, जो पाँच हज़ार वर्षों से दूसरों को कुचलने वाले साम्राज्यों का प्रतिनिधि है – उसके खिलाफ मुकदमा चलाओ – उसे बारह साल के लिए जेल भेज दो –" कुमारस्वामी ने बोलना शुरू किया – लेकिन किसी को कुछ समझ नहीं आया। जेलर इस दुविधा में था कि अगर किसी कारण से इस जेल में, जो केवल राजनीतिक कैदियों के लिए थी, दंगा भड़क जाए तो क्या होगा। तभी अन्नाय्या ने बीच में कहा, "मैं तुम्हें बताता हूँ क्या हुआ। वह यहीं बैठा है, है ना? वह हमारे गाँव के मंदिर का पुजारी है। उसने पिछले दो दिनों से कुछ नहीं खाया है। जब मैंने उसे खाना खाने के लिए बुलाया, तो उसने कहा, 'हम खुद खाना बनाते हैं! हम दूसरों का बनाया खाना नहीं खाएंगे।' इसीलिए यह दाढ़ी वाला आदमी चिल्ला रहा है। आपको उसके लिए खाना पकाने के बर्तन का इंतजाम करना चाहिए। मैं चूल्हा जलाने में उसकी मदद करूंगा वगैरह। इस बूढ़े आदमी को दूसरी जाति के लोगों का बनाया खाना खाने के लिए मजबूर करना ठीक नहीं है। मैं उसके बेटे को जानता हूँ। वह सभी जातियों के लोगों के साथ खाता-पीता है।" वह सभी होटलों में खाना खाता है। "यह पीढ़ियों का सवाल है। अगली पीढ़ी अनिवार्य रूप से बदल रही है। आपको बंदूकधारी सैनिकों के साथ इधर-उधर घूमने की क्या ज़रूरत है?"
अब जेलर की आत्मा जागृत हो उठी। उसने कहा,

"जेल में हम ऐसा कुछ नहीं कर सकते। खाना चाहें तो उसके लिए भोजन का इंतजाम करना हमारी जिम्मेदारी है। चलिए इन्हें रसोई में ले चलते हैं। हम आपकी जरूरत के हिसाब से खाना और बर्तन उपलब्ध करा देंगे। बस चूल्हे पर तीन पत्थर रख दीजिए और खाना बना लीजिए।"
कुमारस्वामी ने तुरंत घोषणा की,
"उस नौकरशाही का नाश हो जो पुरोहित वर्ग का समर्थन करती है!"
लेकिन वहां मौजूद किसी ने भी अपनी राय नहीं दी। अब तो कुमारस्वामी भी असमंजस में पड़ गए। लेकिन हार न मानते हुए उन्होंने अपना भाषण शुरू किया।
अब हमें समझ आ गया है कि देश के असली दुश्मन कौन हैं। हमें सबसे पहले नौकरशाही और पुरोहितवाद से लड़ना होगा! फिर हमें तानाशाही के खिलाफ लड़ना होगा। वैज्ञानिक सोच की जीत हो! प्रगति की जीत हो!
तब तक वहां जमा हुए लोग जा चुके थे। बंदूकधारी भी बिना ज्यादा ध्यान दिए चले गए। जेलर कुमारमूर्ति को जानता था। यह सोचकर कि उसके खिलाफ शांति भंग का मामला दर्ज किया जाना चाहिए, वह भी चला गया।
अन्नाया ने रामभट्ट की छड़ी पकड़ी और उन्हें उठने में मदद की, फिर वे रसोई की ओर चल पड़े। रविंद्र ने भी उनकी दूसरी छड़ी पकड़ी और उन्हें सहारा दिया।
रामभट्ट पच्चीस कदम चलने से पहले ही थक गए। उन्होंने धीमी आवाज़ में कहा,
"मुझे एक समस्या है। मुझे ऐसा लग रहा है कि मुझे अभी पेशाब करना है। इसलिए अगर मैं जल्दी में पेशाब करने की कोशिश करता हूँ, तो बिलकुल भी पेशाब नहीं आता। यहाँ तक कि अगर मैं चार बूँदें भी पेशाब करूँ, तो बहुत तेज जलन होती है।"
अन्नाय्या ने पूछा,
"आपको पानी पिए हुए कितना समय हो गया है?"
"मैंने इसे परसों रात खाने के समय पिया था, वह आखिरी बार था।"
"एक बाल्टी पानी ले आओ। एक-दो घंटे में सब ठीक हो जाएगा। अगर मैं दो सियार ले आता तो बेहतर होता!"
मैंने शरीर पर पानी नहीं डाला! मैं पानी कैसे पी सकता हूँ?
"हम अब वहीं जा रहे हैं, है ना? पहले, नल के नीचे सिर रखकर स्नान करो - फिर एक कप पानी पियो।"
उन्हें रसोई के सारे बर्तन दे दिए गए। चूल्हा जला दिया गया। उसी समय सैनिक आया और बोला,
आप में से रविंद्र कौन है? कोई आपसे मिलने आया है—"
लेकिन इस बार रविंद्र को पूरा यकीन था कि शांतामूर्ति आए हैं। अन्नय्या को रामभट्ट की ओर देखते देख रविंद्र सैनिक के साथ बाहर चले गए।
बेंच पर बैठी मूर्ति उसे देखते ही खड़ी हो गई। वह खबर लेकर आया था।
"जे.पी.आर. की दिल की समस्या के कारण चंडीगढ़ के एक अस्पताल में भर्ती कराया गया है। मुझे चिंता है कि कहीं उनकी जान को कुछ बुरा न हो जाए या फिर उनकी मृत्यु न हो जाए।"
``मूर्ति, दो काम करने होंगे," रविंद्र ने उसे दिव्यांगजन गृह की वास्तविकता बताई और कहा, ``अगर हम किसी तरह सत्यवतीबाई और दोनों ब्रह्मचारियों को यहाँ से निकाल सकें, तो उन बच्चों का जीवन बेहतर हो जाएगा। अन्यथा, उनके पास बस स्टैंड पर फिर से भीख मांगने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचेगा!"
"देखो, इसके अलावा क्या किया जा सकता है; और क्या नहीं?"
कुछ समय पहले हमारे गांव से एक मूर्ति चोरी होने की खबर आई थी – बाद में मैं बेसवनपुर भी गया और वापस आया – मैंने इस बारे में एक लेख भी लिखा था – याद है?

मुझे याद है चार महीने पहले एक अमेरिकी पत्रकार आए थे। उनका नाम लिंडन यॉर्क है। एक संगठन है जो सांस्कृतिक वस्तुओं की चोरी के खिलाफ़ लड़ता है। न्यूयॉर्क टाइम्स के संवाददाता के तौर पर वे उस संगठन की मदद से भारत आए थे। अखबार वालों ने उन्हें छुट्टी, वेतन, हवाई टिकट और हर तरह की सहायता दी। वे अपने साथ उन पैंतालीस मूर्तियों की तस्वीरें लाए थे जो हमारे देश से भारत गई थीं। वहां उनकी कीमत अरबों डॉलर में है! उनका काम यह पता लगाना है कि ये मूर्तियां भारत के किन मंदिरों से कब और कैसे चोरी हुईं, और इस चोरी के पीछे कौन से स्थानीय लोग और राजनीतिक अधिकारी हैं।
उत्तर प्रदेश का दौरा करने के बाद वे यहाँ आए थे। मूर्ति देखते ही उन्हें लगा कि यह किसी खास इलाके के मंदिर से चोरी हुई होगी, और तभी उन्होंने जाँच शुरू की। आपके गाँव में सरस्वती की मूर्ति देखते ही वे सीधे बैंगलोर आ गए, क्योंकि उन्हें पता था कि यह होयसला शैली की मूर्ति है। मुझसे बात करते ही मैंने उन्हें आपके लेखों की श्रृंखला की फाइल दे दी। उसे पढ़ने के बाद उन्होंने बसवनपुर जाने का फैसला किया। उन्हें वहां आगे की जांच के लिए कुन्नड़ भाषी व्यक्ति की आवश्यकता थी, इसलिए उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मैं आऊंगा। मैं तुरंत तैयार हो गया! मैंने कहा, हमें इसके लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए! हम बस से उस गाँव गए और वहाँ रुके। मंदिर के पुजारी रामभट्ट ने तस्वीर देखते ही मूर्ति को पहचान लिया। उसके बाद उन्होंने रामभट्ट से तीस-चालीस सवाल पूछे जो उन्हें अप्रासंगिक लगे। उन्होंने जवाब लिख लिए। बाद में वे उस क्षेत्र के विधायक और जिला कलेक्टर से भी मिले। विधायक जयप्पा उन पर बहुत गुस्सा हुए! लेकिन उन्होंने इसे बिलकुल भी बर्दाश्त नहीं किया। उन्होंने पहले तो सीधे सवाल किया, 'क्या आप मुंबई के हाजी लतीफ से अपने गांव में मिले थे या बैंगलोर में?' इस सवाल ने उनका चेहरा बिगाड़ दिया। उनसे पूछने का क्या ही अनोखा तरीका था! मुझे बिलकुल अंदाजा नहीं था कि वे आगे क्या पूछने वाले हैं! मैंने उनसे बहुत कुछ सीखा। यहीं से वे पट्टाडकल चले गए - उसके बाद मुझे कुछ समझ नहीं आया।
पिछले हफ्ते मेरे नाम से एक पैकेट आया। उस पर अमेरिकी डाक टिकट लगा था। जब मैंने पैकेट खोला तो उसमें लिंडन का पत्र था। उन्होंने मेरी मदद के लिए धन्यवाद दिया था, वगैरह। साथ ही न्यूयॉर्क टाइम्स के सप्लीमेंट का छह पन्नों का एक लेख भी था! यह लेख भारत में हुई पैंतालीस मूर्तियों की चोरी की जांच पर आधारित था! इसमें उन्होंने हर मूर्ति, जिस मंदिर से वह चोरी हुई थी, इस चोरी में शामिल महत्वपूर्ण राजनीतिक नेताओं, पुलिस अधिकारियों और इस लेन-देन में शामिल बड़े एजेंटों के बारे में जानकारी दी थी, सभी के फोटो भी थे। इसमें उन्होंने साफ तौर पर कहा था कि बसवनपुर की सरस्वती मूर्ति की चोरी के पीछे जयप्पा गौड़ा का हाथ था! इसी लेख में उन्होंने रामभट्ट के भाषण से समझी गई अन्य बारीकियों के बारे में भी लिखा था। यह लेख आखिरी खेप में आना चाहिए था - मैं इसे आज लाया हूं। अरे यार - ऐसे लेख पढ़ने के बाद हम कब ऐसी जांच कर पाएंगे, मैं सोचता हूँ! अब टिब्बून की बात करने का कोई मतलब नहीं है -"
शांतामूर्ति के हाथ से बटुआ लेते समय रविंद्र को ऐसा लगा जैसे उसे बहुत सारी जानकारी मिल गई हो, लेकिन वह पूरी तरह स्पष्ट नहीं थी। बटुआ एक तरफ रखते हुए उसने कहा,
आपने रामभट्ट की बात की, है ना? उन्हें भी यहाँ गिरफ्तार किया गया है। मैं उनके साथ पला-बढ़ा हूं! वे मेरे दादाजी से थोड़े छोटे होंगे। उनका राजनीति से कोई लेना-देना नहीं हो सकता – उन्हें भी आपातकाल का बहाना बनाकर गिरफ्तार किया गया है।
गिरफ्तारी-"
शांतमूर्ति ने बीच में कहा,

इस लेख ने पूरी दुनेया में बहुत भ्रम पैदा कर दिया है! लैंड्न को मदद करने वाला संगठन यूनेस्को में इस मुद्दे को उठाने जा रहा है! भारतीय सरकार को इसकी भनक जरूर लग गई होगी। नतीजतन, उन्होंने रामभट्टा से बदला लिया होगा। एक और संभावना यह है कि कल अपना पक्ष रखते हुए वे कहेंगे – "जेल से बाहर आए रामभट्टा के शब्दों पर विश्वास करके लगाए गए आरोपों का कोई मतलब नहीं है! अन्य मंदिरों से जुड़े लोगों को भी इसी तरह गिरफ्तार किया गया होगा। अगर स्थिति पहले जैसी होती, तो मैं इसे जरूर दबा देता। लेकिन अब यह संभव नहीं है, मुझे लगता है कि कोई और बात है – जयप्पा को इस लेख में कुछ समझ नहीं आया होगा! लेकिन लतीफ के इतने अड़ियल रवैये के कारण उन्होंने रामभट्टा को जेल में डलवाया होगा। क्योंकि हाजी लतीफ ने दिल्ली सरकार के साथ मिलकर कुछ ऐसे लोगों को गिरफ्तार करवाया है।"
"तो फिर इन्हें हल करना संभव नहीं है?"
"अगर उसे दिल्ली के आदेश पर गिरफ्तार किया गया है, तो यहां की सरकार कुछ नहीं कर पाएगी। इस महीने को बीतने दीजिए। इस दौरान हमें पता चल जाएगा कि सूची में उसका नाम कहां से आया। इसके अलावा, आपातकाल के दौरान पुलिस अत्यधिक गोपनीयता बरत रही है। वे आम आदमी से भी ज्यादा डरे हुए हैं।"
सिपाही ने समय समाप्त होने का संकेत दिया। शांतामूर्ति खड़े हुए और बोले,
"मैंने इतने समय में एक भी सिगरेट नहीं पी है, धिक्कार है! और क्या करूं?"

■

शांतामूर्ति को विदाई देने के बाद, रविंद्र यह देखने गया कि राममूर्ति के खाने का क्या हुआ। उसने इस बीच शायद एक निवाला ही खाया होगा। उसे यह भी नहीं पता था कि वह क्यों पकड़ा गया। उसने सोचा कि वह बाद में शांति से उसे सब कुछ बता देगा, और जल्दी से अंदर चला गया।
जब वह वहाँ पहुँचा, तो रामभट धुले हुए ताड़ के पत्ते पर चावल की बालूटी लेकर आया था। वह उस पर ताड़ के रस की बाल्टी भी ले जा रहा था। कुछ दूरी पर बैठे अन्नय्या आग्रह कर रहे थे,
"दो निवाले ले लो - मुझे तुम्हें अभी और भी बहुत कुछ बताना है..."
"तुम क्या कहना चाहते हो? बेचारी सुनती नहीं है, इसलिए जब तुम कहो तो तुम्हें कुछ खाना पड़ेगा!" उसने चावल मसलते हुए कहा।
अन्नाया ने रविंद्र को थोड़ा और आगे ले जाकर कहा,
वे ज़िद कर रहे थे, कह रहे थे, भगवान की पूजा किए बिना हम कैसे खा सकते हैं? मैंने उन्हें समझाया, एक पत्थर की पूजा करो और इस भावना से प्रणाम करो कि उसमें चन्नकेशव विराजमान हैं! उन्होंने चावल पकने तक पत्थर की पूजा की। चावल पक जाने पर वे कहने लगे, धर्म ने मुझे अपने बेटे की मेहनत का फल खाने की इजाज़त दी है - तो मैं इस पापी सरकार का खाना क्यों खाऊं? मैंने फिर समझाया, तुम यहाँ उस खाने के लिए नहीं आए थे! वे हमें ज़बरदस्ती यहाँ लाए और हमारा हक़दार खाना छीन लिया - इसलिए सरकार को हमारे पाप का बोझ उठाना पड़ेगा - अगर तुम हमें खाने के लिए बिठाते हो, तो तुम कब से इतने सारे चावल अपने सामने रखकर बैठे हो!
उनकी निगाहें रामभट्ट पर टिकी थीं। बोलते-बोलते वे चौंक गए। "ओह, ओह" कहते हुए वे रामभट्ट की ओर दौड़े। रवींद्र भी उनके पीछे दौड़ा। रामभट्ट ने उलटी कर दी थी। गले में अटके दो टुकड़ों के साथ-साथ मुंह में आधा कटा हुआ खीरा भी चावल पर गिर गया था। जब वे दोनों देख रहे थे, तभी उनके पेट से पीले-हरे रंग का तरल पदार्थ एक कटोरे भर कर चावल पर गिर पड़ा। अन्नय्या ने जाकर करुणा से कहा,
शांत हो जाओ... शांत हो जाओ..."

रामभट्ट उस सारी मेहनत से थक चुके थे। उन्होंने सांस लेने के लिए कुछ पल का समय लिया और अपनी पूरी ताकत जुटाकर कहा,
``यह चावल नहीं है! यह गोबर है! इसमें सफेद कीड़े रेंग रहे हैं! क्या तुम्हें दिखाई नहीं दे रहे? और तुम मुझसे इसे खाने को कह रहे हो?"
बात करने के लगातार प्रयास से उसकी सांस फूलने लगी थी।
अन्नाय्या ने देखा कि उसके पेट में बचा हुआ सारा तरल पदार्थ भी निकल चुका था।
"चलो, तुम्हें तुम्हारी चटाई पर सुला देते हैं - डॉक्टर को बुलाते हैं," उसने रामभट्ट को सहारा देते हुए और उसे उठाते हुए कहा। उसे अपने पाँचवें कमरे में चटाई पर सुलाने के बाद, रविंद्र ने कहा,
"आप उन्हें हवा दीजिए। मैं डॉक्टर को बुलाता हूँ। उन्हें पानी की कमी हो गई है!"
उसने सिपाही को बताया और अधिकारियों के पास भाग गया। डॉक्टर को बुलाया गया। डॉक्टर ने कहा,
मैं पंद्रह मिनट में वहाँ पहुँच जाऊँगा। मरीज़ को क्लिनिक ले आओ और उसे बेहोश कर दो।
तुरंत ही दो लोग स्ट्रेचर लेकर रवींद्र के पीछे दौड़े। जब वे पाँचवें कमरे में पहुँचे, तो अन्नय्या रामभट्ट के बगल में बैठे थे। उनके चारों ओर पाँच से पचास लोग जमा थे।
अन्नय्या ने रवींद्र से कहा,
``कोई फायदा नहीं, ज़िंदगी खत्म हो गई है–"
जो लोग आए थे उनमें से एक ने कहा,
"हम उसे वैसे भी क्लिनिक ले जाएंगे। वह मर चुका है, तो डॉक्टर को हमें बताना चाहिए, है ना?" दोनों ने रामभट्ट के शरीर को स्ट्रेचर पर रखा और चले गए। वहां जमा हुए पचास लोग उनके पीछे-पीछे गए। लेकिन सैनिकों ने उन्हें रोक लिया।
उसी समय, कहीं से आए कुमारस्वामी ने पूछा,
क्या हुआ?
अन्नाय्या ने संक्षेप में घटना का वर्णन किया। इससे पहले कि वह पूरी घटना सुन पाता, उसने घोषणा कर दी,
"उन कारागार अधिकारियों पर धिक्कार हो जो राजनीतिक कैदियों को सड़ा हुआ भोजन खिलाकर उन्हें जहर देते हैं! उस सरकार पर धिक्कार हो जो ऐसे अधिकारियों को जहर देने का आदेश देती है!"
आसपास जमा हुए अन्य कैदियों ने भी अपनी आवाज उठाई।
धत् तेरे की-'
धत् तेरे की!

******* समाप्त**

*****

sjeet

•

अनुवादक

डॉ. श्रीमती उमा विरुपाक्ष कुलकर्णी

जन्म: 1 अक्टूबर, 1950

साहित्य की शौकीन श्रीमती उमा कुलकर्णी मराठी साहित्य के क्षेत्र में एक असाधारण अनुवादक के रूप में प्रसिद्ध हैं। उनका जन्म बेलगाम में हुआ था और बेलगाम में ही स्कूली और कॉलेज की शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने पुणे के एस.एन.डी.टी. से स्नातकोत्तर की पढ़ाई की।

1982 में, डॉ. शिवराम करंत की 'तनमनचय भोव-यात' प्रकाशित हुई, जो उनकी पहली अनुवादित पुस्तक थी। प्रसिद्ध कन्नड़ लेखक डॉ. एस.एल. भैरप्पा के उपन्यास 'वंशवृक्ष' का अनुवाद करने के बाद, वे और भैरप्पा एक दूसरे के पर्याय बन गए। अब तक, कुलकर्णी भैरप्पा की 'पर्व', 'मंद्र', 'जा ओलंदुनी', 'काठ', 'परिषद', 'तन्तु' आदि का अनुवाद कर चुके हैं। इसके अलावा, आने वाले समय में भैरप्पा की अन्य रचनाएँ जैसे 'नागमंडल', 'तेलादंडा' आदि अनुवादित होकर प्रकाशित होने वाली हैं।

कुलकर्णी को 1989 में केंद्रीय साहित्य अकादमी का प्रथम अनुवाद पुरस्कार, 1990 में 'महाराष्ट्र-गौरव पुरस्कार' ('वंशवृक्ष' के लिए), 'एस. एच. मोदक पुरस्कार' ('पर्व' के लिए) और पुणे पुस्तकालय का 'वर्धपन पुरस्कार' प्राप्त हुआ है।

अपने अनुवाद कार्यों के लिए उन्हें 1997 में महाराष्ट्र फाउंडेशन का विशेष पुरस्कार और 1999 में एस.एच. मोदक पुरस्कार प्राप्त हुआ।

मराठी और कन्नड़ समुदायों के बीच साहित्यिक और सामाजिक भाईचारे को बढ़ाने में उनके योगदान के लिए उन्हें 1995 में 'वरदराज आध्या पुरस्कार' भी प्राप्त हुआ।